Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल्य : बीस रुपए

साहित्य अमृत

जुलाई २०११ • साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक • मासिक

131871

Central Library
Gurukul Kangri University
Hardwar-249404 (U.A.)

CC-0. In Public

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं पढ़ें,
औरों को भी पढ़ाएँ।

साहित्य अमृत

(मासिक)

साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक

16 वर्षों से
निरंतर प्रकाशित

संस्थापक संपादक	संपादक	पूर्व संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र	त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी	स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

साहित्य अमृत के
विशेषांकों की अनूठी शृंखला की एक और महत्त्वपूर्ण कड़ी

व्यंग्य विशेषांक
(अगस्त अंक)

प्रवेशांक के लोकार्पण का चित्र

अगस्त 1995 में प्रारंभ हुई 'साहित्य अमृत' ने अपने प्रकाशन के सोलह वर्ष पूर्ण कर लिये हैं। सत्रहवें वर्ष में प्रवेश के अवसर को और स्मरणीय व सार्थक बनाने के लिए हिंदी वाङ्मय के मूर्धन्य व्यंग्यकारों की रचनाओं के साथ अगस्त 2011 अंक **व्यंग्य विशेषांक** के रूप में प्रकाशित हो रहा है।

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित कराएँ।

4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002 • फोन : 23289777 • e-mail: sahityaamrit@gmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य अमृत

मासिक

अंक-१२ ❖ पृष्ठ ६८ आषाढ़-श्रावण, संवत्-२०६८ जुलाई २०११

संस्थापक संपादक
व. पं. विद्यानिवास मिश्र
❖
पूर्व संपादक
व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी
❖
संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी
❖
प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर
❖
परामर्शदाता (मानद)
ब्रजेंद्र त्रिपाठी
❖
कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
: २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
-मेल : sahityaamrit@gmail.com
❖
शुल्क
एक अंक —₹ २०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ २००
(संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ २५०
विदेश में
एक अंक—तीन यू.एस. डॉलर (US$3)
वार्षिक—पैंतीस यू.एस. डॉलर (US$35)
❖
शक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।
❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

आवरण : डॉ. सुरेश्वर त्रिपाठी

131871

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.A.)

इस अंक में

संपादकीय
सिविल सोसाइटी बनाम सरकार ४

प्रतिस्मृति
दुखिया / *जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज'* ९

आलेख
स्वामी विवेकानंद की पुण्य स्मृति में / *वाल्मीकि प्रसाद सिंह* १६
रामचंद्र शुक्ल : कवि के रूप में / *हर्षनंदिनी भाटिया* २७
लोकगीतों की परंपरा / *महेंद्र राजा जैन* ५०
अनध्याय के दिन / *विश्वास पाटील* ५६

कहानी
कठपुतली / *रहबान अली राकेश* १८
कछुए की चतुराई / *सुरेश ऋतुपर्ण* ३६
थोड़ा सा आकाश / *अरुण अभिषेक* ५४
पापा मैं जीना चाहती हूँ / *महेंद्र प्रजापति* ५८

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
चार कविताएँ / *कुसुमाग्रज* २१

उपन्यास-अंश
सीढ़ियाँ / *शैलेश मटियानी* २२

व्यंग्य
अक्ल का फैसला / *के.एल. गर्ग* ३०

स्मरण
बहुत कुछ रह जाता है अनकहा-अनलिखा : विश्वंभर अरुण / *रति लाल शाहीन* ३२

राम झरोखे बैठ के
अच्छे पड़ोस की पहचान / *गोपाल चतुर्वेदी* ४१

ललित निबंध
कष्टों की गड़वाट से सुविधा की सड़क तक / *गोविंद सेन* ४४

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
शुक्र की खोज / *आरपाड बरजिक* ४७

अंततः
यात्रा-दर-यात्रा / *ब्रजेंद्र त्रिपाठी* ६५

कविता
रवींद्र स्वप्निल प्रजापति १५
अखिलेश अजीज इलाहाबादी २६
रूपा सिंह ३१
संदीप नैयर ४०
राजकुमार सिंह ४५
जनार्दन मिश्र ४६

वर्ग पहेली ५९
पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ६०
साहित्यिक गतिविधियाँ ६१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

सिविल सोसाइटी बनाम सरकार, भ्रष्टाचार और भारत का प्रजातंत्र

बाबा रामदेव द्वारा काला धन देश में वापस लाने और भ्रष्टाचार के विरुद्ध रामलीला मैदान में शुरू किए गए अनशन को खत्म कराने के लिए ४ जून की आधी रात के समय सरकार के आदेश से जो दमनकारी व्यवहार पुलिस ने किया, उसकी तसवीरें और खबरें पूरे देश में तुरंत फैल गईं। सोते हुए अनशनकारियों को हड़बड़ाकर पंडाल खाली कराने की कोशिश में न समुचित सूचना दी गई और न समय दिया गया, ताकि वे अपना सामान एकत्रित कर सकते। पूरे देश से आए इन अनशनकारियों में महिलाओं की संख्या ज्यादा थी। स्वाभाविक है कि महिलाओं के साथ बच्चे भी थे। आधी रात में सो रहे अनशनकारियों पर डंडे, लाठियों और आँसू गैस से प्रहार किया गया। इतना ही नहीं, डराने के लिए पुलिस ने नकली फायरिंग भी की। आधे सोए, आधे जागे लोगों को कैसे मालूम होता कि शोर बंदूक चलने का है या और कुछ कारण है। अफरा-तफरी में तथा पुलिस की मार से लोगों को चोटें आईं; एक महिला गंभीर रूप से घायल हुई। मंच पर जहाँ बाबा कुछ अन्य समर्थकों के साथ अनशन कर रहे थे, वहाँ भी हड़बड़ी मच गई जब पुलिस बाबा को गिरफ्तार करने के लिए गई। रामदेव मंच से कूदकर गायब हो गए और पुलिस उन्हें करीब दो घंटे के बाद ही पकड़ सकी। पंडाल के सब दृश्य सभी टी.वी. चैनलों ने बार-बार दिखाए और उससे पूरे देश में रोष फैल गया कि स्वतंत्र भारत में भी सरकार निहत्थी जनता के साथ ऐसा क्रूर व्यवहार कर सकती है। पंडाल के घटनाक्रम में जाने की आवश्यकता नहीं है। पर एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न लोगों के मन में उठा कि प्रजातांत्रिक संविधान के होते हुए अपना विरोध प्रकट करने के लिए शांतिपूर्ण अनशन पर बैठे लोगों के साथ ऐसा दमनकारी व्यवहार मानव अधिकारों का उल्लंघन नहीं है क्या? उसी के अंतर्गत सरकार की असंवेदना, अक्षमता के और भी कुछ मुद्दे सामने आते हैं।

कांग्रेस के अतिरिक्त करीब-करीब सभी राजनीतिक दलों ने पूरे कांड की भर्त्सना की। यू.पी.ए. सरकार में शामिल एन.सी.पी. के अध्यक्ष शरद पवार ने अपने बयान में कहा कि जो हुआ, वह सब अनुचित था। पुलिस कार्यवाही निंदनीय है। लोगों को शांतिपूर्ण ढंग से विरोध प्रकट करने का अधिकार है और रामदेव पर दिल्ली आने पर जो रोक लगाई गई है, वह तुरंत हटा लेनी चाहिए। देश की अनेक संस्थाओं ने पूरे प्रकरण में सरकार की कड़ी आलोचना की, यहाँ तक कि श्रीमती सोनिया गांधी की अध्यक्षता वाली राष्ट्रीय परामर्शदात्री परिषद् की सदस्या अरुणा राय तथा कुछ अन्य व्यक्तियों ने भी इस कार्यवाही को गलत और अलोकतांत्रिक बताया। कांग्रेस की अध्यक्षा के नजदीकी सूत्रों द्वारा प्रचारित किया गया कि उनको इस संबंध में कुछ पता नहीं और उनसे कुछ राय-मशविरा नहीं हुआ। यह तो सरकार की जिम्मेदारी है। देश के प्रायः अंग्रेजी के सभी राष्ट्रीय दैनिक पत्रों, हिंदी तथा दूसरी भारतीय भाषाओं के समाचार-पत्रों ने संपादकीय लिखे, देश के बाहर रहनेवाले भारतीयों ने भी गहरी चिंता व्यक्त की। देश के हर भाग में प्रकाशित होनेवाले अखबारों में जन-साधारण की प्रतिक्रियाएँ आज तक आ रही हैं, जो जनता में व्याप्त आक्रोश को प्रकट करती हैं। यहाँ तक कि समाजवादी दल के अध्यक्ष ने ज्यादतियों की आलोचना की। हाँ, राष्ट्रीय जनतादल के अध्यक्ष लालूप्रसाद ने बाबा रामदेव को अपने जानेमाने लटकों के साथ भ्रष्टाचार के बखेड़े से दूर रहने की राय दी और कहा कि उन्होंने उसे कई बार समझाया। लालूजी का रुख तो समझ में आ सकता है, पर अब तृणमूल की अध्यक्ष और पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री की चुप्पी समझ में नहीं आती, क्योंकि वे तो सी.पी.एम. सरकार की ज्यादतियों की प्रखर आलोचक रही है। केंद्र सरकार से अभी उन्हें काफी वित्तीय सहायता की अपेक्षा है और कांग्रेस को भी अपने मंत्रिमंडल में सम्मिलित किया है। भ्रष्टाचार के विरोध में शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने पर इस प्रकार का अत्याचार आखिर क्यों? क्या यह सरकार और उसके मुख्य घटक, जिसके अध्यक्ष ने कुछ महीने पहले दिल्ली में अपने दल के १२५ वर्ष होने के सम्मेलन में चार सूत्री एक फॉर्मूला रखा था, उसके गंभीर कार्यान्वयन के तरीके का सूचक है?

बहरहाल, पुलिस ने अपनी कार्यवाही के औचित्य को बताने के लिए तरह-तरह के बहाने बनाने शुरू कर दिए और कुछ अखबारों द्वारा प्रचारित करने की कोशिश भी की। कहा गया कि उन्हें इजाजत योग शिक्षण के लिए दी गई थी, प्रदर्शन के लिए नहीं। फिर कहा गया कि इजाजत दो हजार लोगों के लिए माँगी थी, पर आ गए थे करीब चालीस-पचास हजार तथा और भी अधिक अनशनकारियों के आने की संभावना थी। अगर बाबा ने शर्तों की अवहेलना की तो आपने उसे पहले ही निरस्त क्यों नहीं किया? कुछ दिन पहले रामदेव दिल्ली में एक राष्ट्रीय कवि सम्मेलन करने वाले थे और जैसा सब जानते हैं कि आज तक जनता उन कविताओं का आनंद लेती है, जो भ्रष्टाचार के संबंध में हों, चाहे वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिल्ली उड़ाएँ अथवा वीर रस में रोष व्यक्त करें। जिनमें जन-भावनाएँ उभरती हैं, उनकी विशेष सराहना होती है। पर उस कवि-सम्मेलन के लिए भी इजाजत नहीं दी गई। अगर पुलिस कहती है कि उनकी शर्तों का उल्लंघन हो रहा था और कानून-व्यवस्था के ऊपर खतरा आने की संभावना थी तो धारा १४४ आप पहले लागू कर सकते थे। इतनी बड़ी तैयारियाँ दिल्ली पुलिस की आँखों सामने हो रही थीं, जिसका विवरण सब अखबारों में आ रहा था, आश्चर्य है कि सरकार को अंदाजा नहीं हो सका कि क्या होने की संभावना है, कितनी संख्या में लोग आएँगे। रोज टी.वी. पर दिखाई देता है कि रामदेव के योग में कितनी बड़ी तादाद में लोग आते हैं? क्या सरकार के सब खुफिया तंत्र हाथ-पर-हाथ धरे बैठे थे? इतना ही नहीं, महीनों से अखबारों में आ रहा था कि बाबा रामदेव ने एक मंच बनाया है और वे स्वच्छ छवि के लोगों को चुनाव लड़ाएँगे। जगह-जगह वे किरण बेदी, अरविंद केजरीलाल तथा भ्रष्टाचार-विरोधी अभियान चलानेवाले अन्य लोगों के साथ जा रहे हैं। यह टी.वी. पर दिखाई देता था और अखबारों में छपता था। हमारी जहाँ तक जानकारी है, दिल्ली में ही दो बड़ी सभाएँ और सम्मेलन उन्होंने आयोजित किए थे, जिसमें श्री जेठमलानी, स्वामी अग्निवेश जैसे बहुत से प्रसिद्ध व्यक्तियों ने भाग लिया था। अनेक धर्मों के प्रतिनिधि भी उस समय मंच पर थे। यह सब चुपचाप छिपकर तो नहीं हो रहा था। काला धन और भ्रष्टाचार के विरोध में बहुत गरम-गरम भाषण हुए और इसमें सरकार को दोषी बताया गया। सरकार रामदेव के कार्यों और मंशा से अनभिज्ञ थी, इस पर कौन विश्वास करेगा। पुलिस ने अपने बचाव में यह भी प्रचारित किया कि रामदेव के जीवन को खतरा था। आखिर किससे? यह नहीं बताया। क्या आतंकवादियों से? इसका कोई जिक्र अखबारों में नहीं आया था कि खुफिया सूत्रों ने सरकार को इस प्रकार की जानकारी दी है। दिल्ली की मुख्यमंत्री ने तो कन्नी काट ली कि कानून एवं सुरक्षा व्यवस्था की सीधी जिम्मेदारी केंद्र सरकार की है। जब बहुत आलोचना हुई, तब यकायक गृहमंत्री चिदंबरम टी.वी. पर नजर आए पुलिस की कार्यवाही को सही बताते हुए। अपने स्वभाव के विपरीत वे कुछ नम्र दिखाई दिए। उनके दल के लोग ही नहीं, उनके अहं को हम सब भी जानते हैं, उनको विश्वास है जो करते हैं, वह सब ठीक है। स्वभाव के लिए अपने दल में ही बहुत चर्चित हैं। पाठक जानते हैं कि दिग्विजय सिंह ने तो इस पर एक बवाल ही खड़ा कर दिया। जो महिला गंभीर रूप से घायल हुई, चिदंबरम ने उसके प्रति सहानुभूति प्रकट की और उसके उपचार के बारे में आश्वासन दिया। पर पुलिस के बर्बरतापूर्ण व्यवहार के बारे में यह तक नहीं कहा कि अगर कुछ ज्यादती हुई है तो हम देखेंगे। लोग कुछ आश्वस्त होते। वैसे हम समझ सकते हैं कि सुरक्षाकर्मियों के मनोबल की बात की आड़ लेकर गृहमंत्री कुछ अधिक कह नहीं सकते और यहाँ तो स्पष्ट ही है कि उस दिन जो हुआ, वह उन्हीं के आदेश और उन्हीं के मंत्रालय की सीधी देख-रेख में हुआ। जनता की निगाहों में वे अपने दायित्व से बच नहीं सकते। प्रधानमंत्री ने अपनी आदत के अनुसार चुप्पी साधी। हम जानते हैं कि वे अवश्य दुःखी हुए होंगे, जब उन्होंने टी.वी. पर निर्दोष लोगों पर पुलिस को डंडे चलाते देखा होगा; क्योंकि वे देख चुके हैं निर्दोष सिख भाइयों पर १९८४ में अत्याचार, जिसके लिए उन्हें क्षमा-याचना करनी पड़ी। किंतु एक आयोजन के उपरांत शनिवार की रात की घटना के विषय में उन्होंने कहा कि वह दुर्भाग्यपूर्ण था, पर कोई और विकल्प ही नहीं था। वैसे प्रारंभिक तथ्य बताते हैं और घटनाक्रम भी बताता है कि सरकार की पूरी तरह जिम्मेदारी है। यह हम समझ सकते हैं कि जमीन पर ऐसी स्थितियों से कैसे मुकाबला किया जाता है, इसके वे स्वयं जानकार नहीं हैं, पर उनके परामर्शदाताओं को तो जानकारी है। वे अर्थशास्त्री हैं और नीतियाँ बनाने से जूझते रहते हैं, किंतु आखिरकार देश के प्रधानमंत्री हैं।

सीधा-सादा विकल्प था रणनीति बनाने का, जो एक नया एस.पी. या जिला अधिकारी भी शायद कर लेता; पर यहाँ शायद हुक्म पुलिस को दिया गया था कि रामदेव और जो लोग काला धन व भ्रष्टाचार की बातें करते हैं, उनकी अच्छी खबर लेना। फिर पुलिस आखिर और क्या करती, अपनी अक्ल और समझ के अनुसार उसने वही किया जो मालिक चाहते थे। सीधा विकल्प था कि रात को पहले मंच को पुलिस का बड़ा दस्ता घेर लेता। मुश्किल से तीस व्यक्ति मंच पर थे, उन्हें चार-चार पुलिस के जवान घेर लेते तो वे प्रौढ़ और वृद्ध लोग क्या कर सकते थे। स्वामी रामदेव को कहते कि बाबा, हम आपको कानून के अनुसार पकड़ने आए हैं, अतः आप हमारे साथ चलिए। किसी और को साथ लेना चाहते हैं तो ले चलिए। बाबा रामदेव पूरी स्थिति देखकर हम समझते हैं कि किसी प्रकार का विरोध न करते; फिर भी, यदि कुछ विरोध होता तो आपके जवान कुशलता से उस पर काबू पा सकते थे बिना मार-पीट और भगदड़ के। बाबा को भी उनके लोगों ने गलत राय दी कि वे भाग जाएँ। हम नहीं मानते कि आज के वातावरण में उनके जीवन को कोई खतरा होता; यदि वे गिरफ्तार होते तो न केवल व्यर्थ की आलोचना से बचते, बल्कि उनका कद और ऊँचा होता और उनके समर्थकों का नैतिक साहस बढ़ता।

कहा जाता है कि करीब २० हजार जवान सशस्त्र दल सहित पुलिस की व्यवस्था करनेवालों को उपलब्ध कराए गए थे। मुखियों को आइसोलेट या अलग-थलग करने की पुरानी परंपरा है। उनके अनुयायियों को कहा जा सकता था कि बाबा गिरफ्तार हैं, उन्हें अगले दिन मजिस्ट्रेट के सामने पेश करेंगे। उन्हें उन्हीं के स्थान हरिद्वार पर ले जा रहे हैं, यह नहीं बताया तो अलग बात है, पर बताने में कोई हर्ज नहीं था। पर अधिक महत्त्वपूर्ण है कि शिविर में आनेवालों से कैसे निपटा जाए। रात को एक बज रहा था। अधिकतर लोग सो रहे थे। उनको माइक द्वारा जगाया गया। कहा गया कि अब धारा १४४ लगा दी गई है और आप लोग दो घंटे के अंदर पंडाल खाली कर दें। आप अपना सामान इकट्ठा कर लें। सबको आगाह करना चाहिए था। बसों का इंतजाम रखना चाहिए था और घोषणा की जानी चाहिए थी कि जो स्टेशन जाना चाहते हैं और जो बस अड्डे जाना चाहते हैं, दोनों की व्यवस्था है। यदि यह इंतजाम किया जाता तो रामलीला मैदान में वे भयानक दृश्य दिखाई नहीं देते। कुल मिलाकर शांतिपूर्ण ढंग से संभवतः सरकार की मंशा पूरी हो जाती। दिल्ली में प्रशासन ने '८० के दशक में अकालियों के जुलूसों और सत्याग्रह का भी कई बार सामना किया है। पर शायद न चिदंबरम और न कपिल सिब्बल ऐसा चाहते थे। वे तो सबक सिखाने के पक्षधर थे। उनका इरादा पहले से ही बन गया था। यह उनकी बातों से पता चलता है कि वे दृढ़प्रतिज्ञ हो गए थे कि बाबा रामदेव और अपरोक्ष रूप से अन्ना हजारे को भी मजा चखा दिया जाए कि आखिर हम सरकार हैं और कमजोर नहीं हैं। वैसे चाहे अन्ना हजारे अथवा बाबा रामदेव का अनशन हो, उनके कार्यों और साथियों पर तरह-तरह से छींटाकशी हो रही है। कुछ लोग देश में भ्रष्टाचार और कालाधन से चिंतित नहीं, उनकी व्यथा बढ़ जाती है जब उसकी रोकथाम की बात जोरों से उठती है। कुछ लोगों ने जब घटनाओं की तुलना मोटे रूप में जलियाँवाला बाग प्रसंग से की तो चिदंबरम साहब ने उसे शर्मनाक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा। क्या वे तुलना को तभी सही मानते जब कम-से-कम ४०० लोग शहीद हो जाते? वह जमाना अंग्रेजी के राज का था, अब स्वराज है, जनता का राज है। अधिनायकवाद नहीं है, सैनिक शासन नहीं है। तुलना भावनाओं की की गई है। जैसा नेहरू ने अपने आत्मचरित्र में लिखा है कि डायर, जिसके साथ उन्हें रेल में सफर करना पड़ा, वह शेखी बघार रहा था कि हिंदुस्तान को ऐसा सबक सिखाया जाए कि वे फिर विरोध में सिर न उठाएँ। यह बात उसने अपनी गवाही में भी जाँच कमेटी के सम्मुख कही थी। हम स्वयं इस तुलना को कुछ अच्छा नहीं मानते। किंतु घटनाओं के बाद लोगों ने गुस्से में, आक्रोश में इस प्रकार की प्रतिक्रिया की। पर इस घटना के बाद सरकार का दामन भी पाक-साफ नहीं रहा, जैसा उसके मंत्री समझते हैं। एक युवक ने हमसे कहा कि उसने पंजाब की घटनाओं की तसवीरें केवल किताबों में देखी थीं, पर रामलीला मैदान का दृश्य तो सीधा टी.वी. पर देखा, फर्क केवल इतना था कि उस समय के पुलिस अधिकारी टोप पहनते थे। जनता के प्रति व्यवहार और हेय दृष्टि में तो कोई अंतर नहीं दीख पड़ा। पाठकों को जानकर कुछ आश्चर्य हो सकता है कि चर्चिल, जो भारत की स्वतंत्रता का विरोधी था, ने डायर के रुख और आतंकित करने की नीति की ब्रिटिश पार्लियामेंट में कटु आलोचना की थी। यहाँ तक कि लॉर्ड कर्जन ने भी कुछ इसी प्रकार के विचार प्रकट किए थे। पर इस पूरे प्रकरण में शासकों के इतने विवेकहीन रूख देखकर चर्चिल की 'मेन ऑफ स्ट्रा' के हाथों में सत्ता आने के भय की याद अनायास आ ही जाती है।

पहले चार-चार मंत्री बाबा रामदेव की अगवानी के लिए जाते हैं। उच्च अधिकारियों के साथ होटल में चार घंटे बाबा रामदेव से बातचीत चलती है। कपिल सिब्बल साहब बाद में कहते हैं कि सरकार ने जब तक तय कर लिया था कि अगर वह बात नहीं मानता है तो उसको गिरफ्तार कर लिया जाएगा। इसीलिए बाबा को शायद एक सरकारी गेस्ट हाउस में बुलाया जा रहा था; पर उन्होंने कहा कि बातचीत न्यूट्रल या किसी पक्ष से संबंधित न हो, ऐसे स्थान पर होनी चाहिए और फिर इसके लिए होटल चुना गया। वैसे बातचीत करनेवाले अलगाववादी विरोधियों को, चाहे वह मिजोरम का लालडेंगा रहा हो, चाहे नागालैंड में विद्रोहियों के सरगना रहे हों, गिरफ्तार नहीं किया गया। आंध्र प्रदेश में माओवादी नेताओं को कई बार बातचीत के लिए बुलाया गया, वार्त्ता सफल न होने पर उन्हें सुरक्षित जगह में छोड़ दिया गया और कोई पकड़ने का सवाल ही नहीं उठा। यहाँ तक कि एक बार जब आंध्र में माओवादी नेता घिर गए तो सरकार ने कुछ लोगों के दबाव में आकर उन्हें बच के निकल जाने दिया। पुलिस विरोध करती रही। कश्मीरी अलगाववादी दिल्ली आकर ऊटपटाँग बातें कर, पाकिस्तानी हाई कमीशन से गुप्त मशविरा कर ठाठ से सुरक्षित वापस चले जाते हैं। यहाँ ऐसा क्या डर था, सरकार के मन में कौन सा चोर छुपा था कि बाबा रामदेव भ्रष्टाचार के विरोध में लगातार आंदोलन कर रहे थे और शांतिपूर्ण ढंग से भ्रष्टाचार और काले धन को वापस लाओ की माँग कर रहे थे, उन्हें बातचीत असफल होने पर ही हिरासत में ने लिया जाए। होटल से क्यों नहीं गिरफ्तार किया गया बाबा रामदेव को, यह भी रहस्यमय है। सरकार सहम क्यों गई? क्या चार मंत्रियों में से किसी ने उसे अनुचित कहा? अगर बाबा रामदेव वहाँ गिरफ्तार हो जाते तो अपने बचाव के लिए वे चारों मंत्रियों को तलब कर सकते थे। अदालत में गवाह के रूप में कि क्या उन्होंने वहाँ किसी कानून का उल्लंघन किया है? अच्छा हुआ चिदंबरम उनमें शामिल नहीं थे। अगर उनके अधिकारी रामदेव को वहीं तुरंत गिरफ्तार कर लेते तो कम-से-कम गृहमंत्री रामलीला मैदान के 'शर्मनाक प्रकरण' के लिए उत्तरदायी नहीं होते। उच्चतम न्यायालय ने एक जनहित याचिका दाखिल करनेवाले से कहा कि उन्होंने टी.वी. पर सब देखा है और वे स्वयं इसका संज्ञान ले रहे हैं। गृह मंत्रालय, दिल्ली के मुख्य सचिव और डी.जी.पी. को स्पष्टीकरण देने का आदेश दिया। अदालत को प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा है। मानव अधिकार आयोग और महिला अधिकार आयोग ने भी अधिकारियों से रिपोर्ट माँगी है।

उपर्युक्त घटनाओं के पहले कभी-कभी दिखता था कि बाबा रामदेव सरकार के चहेते हैं। सुबोधकांत सहाय ने राँची में एक फूडपार्क के लिए आर्थिक तथा अन्य प्रकार की सहायता की। समाचार आए कि एक नहीं, तीन-तीन आर्थिक शोध संस्थाओं को सरकार ने कहा कि भारत का कितना काला धन बाहर है, उसका आकलन करें। जानकार तो इस सबको टाल-मटोल और देरी करने की चाल मानते रहे। वित्त मंत्रालय में नए विभाग खोले गए और अधिकारियों को काला धन के मामले को देखने के लिए कहा गया। सी.बी.डी.टी. अथवा सेंट्रल बोर्ड ऑफ डायरेक्ट टैक्सेस के अध्यक्ष को हरिद्वार यह सब बताने के लिए भेजा गया। इस सब खुशामद-मलामत पर जब रामदेव मनाए नहीं जा सके तब जैसा कहा गया है, मंत्री लोग हरकत में आए। इस सबके पीछे सरकार की क्या मंशा रही, यह रहस्य के परदे में है। कहा जाता है कि यकायक अन्ना हजारे के अनशन शुरू करने पर रामदेव कुछ पीछे चले गए, यद्यपि प्रारंभ में साथ थे। कुछ मामलों में असहमति सामने आई, जब संयुक्त समिति, जो लोकपाल विधेयक की नागरिक समाज और सरकारी प्रारूपों को देखकर एक प्रारूप तैयार करेगी, यह प्रस्ताव अन्ना हजारे और उसके समर्थकों ने मंजूर कर लिया। कुछ पर्यवेक्षकों का कहना है कि सरकार ने इस मतभेद का फायदा उठाने की कोशिश की। जब अनेक स्तरों पर रामदेव से समझौते की बातचीत चल रही थी, अन्ना हजारे ने रामदेव को सचेत रहने की चेतावनी दी। तब तक मामला आगे बढ़ गया था। शायद अन्ना हजारे को तब तक स्वयं अहसास हो गया था कि संयुक्त समिति और मिलेजुले मसौदे की बात मानकर वे स्वयं सरकार के मकड़जाल में फँस गए हैं। आगे की घटनाओं से यह स्पष्ट भी होने लगा। पर बाबा रामदेव के अनशन के उद्देश्य पर उन्होंने कहा कि उसे उनका समर्थन है और वे शीघ्र दिल्ली आकर अपने अगले कदम का निर्णय करेंगे।

घटनाचक्र तेजी से चल रहा था और सरकार ने रामदेव के अनशन को जिस तरह जबरदस्ती खत्म कराया तथा दमन का जो तांडव रामलीला मैदान में आधी रात को हुआ, उसको उन्होंने प्रजातंत्र और संविधान पर कलंक बताया। उन्होंने इसके विरोध में जंतर-मंतर पर एक दिन का अनशन करने का निश्चय किया। सरकार ने उस स्थान पर पुनः अनशन की इजाजत नहीं दी। अनशन राजघाट पर हुआ और हजारों की संख्या में लोग वहाँ पहुँचे। सबकुछ शांतिपूर्ण रहा; पर अन्ना हजारे ने विरोध में जो संयुक्त समिति की बैठक हो रही थी, उसमें भाग लेने से इनकार किया। बाद में उन्होंने स्पष्ट किया कि वे और उनके सहयोगिया न समिति का बहिष्कार नहीं किया है, अगली बैठक में भाग लेंगे। अन्ना हजारे १५ जून की बैठक में सम्मिलित हुए। पर लोकपाल के प्रारूप के विषय में अनेक मुद्दों पर मतभेद पहले की तरह बने रहे। वास्तव में सरकार का रुख धीरे-धीरे सख्त होता जा रहा है। सरकार का कहना है कि वह लोकपाल बिल हर हालत में मानसून सत्र में सदन में पेश करेगी। अन्ना का कहना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि यदि लोकपाल बिल में उनके सुझावों को शामिल नहीं किया गया तो १५ अगस्त से फिर अनशन शुरू करेंगे। सम्मिलित समिति की एक और बैठक ३० जून के पहले होने की संभावना है। सुझाव मानकर और गजट नोटिफिकेशन के बाद सरकार के आश्वासन पर कि सब बातों पर बातचीत से समझौता हो सकता है, जनता में जो रोष का वातावरण बना था, वह समाप्त हो गया। यही सरकार चाहती थी। वह अब अपने ढंग से काम करेगी। सरकार के अनेकों मुँह और हाथ हैं। अन्ना हजारे को हठ का दोषी बताएगी। रामदेव के अनशन के प्रसंग के बाद हम नहीं समझते हैं कि सरकार किसी भी भाँति अन्ना हजारे को पहले की तरह दिल्ली में अनशन करने देगी। जनता का आक्रोश सुलगता रहेगा। हम कामना करते हैं कि समिति की अगली बैठक फलदायी हो और आपसी बातचीत से लोकपाल विधेयक का प्रारूप तैयार हो, जो प्रभावी हो और भ्रष्टाचार की रोकथाम कर जनता में विश्वास का वातावरण सृजित कर सके; पर इसकी संभावना कम ही दीख रही है। सरकार सिविल सोसाइटी की माँग को प्रजातंत्र विरोधी बता रही है। अभी तक तो जनसाधारण की धारणा यही है कि सरकार आँख-मिचौनी का खेल खेल रही है और इस विषय में उसकी गंभीरता पर प्रश्नचिह्न लगा है।

एक और चिंतनीय मामला है कि जैसे ही बाबा रामदेव और सरकार के बीच दरार पड़ी, तुरंत ही अखबारों में भी आया कि इन्फोर्समेंट डायरेक्टरेट, इन्कम टैक्स विभाग, सी.बी.आई., जो भी सरकारी एजेंसियाँ हैं, उनको आदेश दिया गया है कि बाबा रामदेव की जमीन की वैधता, उनकी माली हालत, पैसा कहाँ से आया—इसकी जाँच होगी। उनकी दवाइयों के विषय में जो विवाद वृंदा करात ने कुछ साल पहले उठाया था, उसको फिर देखा जाएगा। उनका दावा है कि उनकी दवाइयाँ कैंसर, डायबिटीज, दिल की बीमारी आदि में कारगर हैं, यह दावा गलत है और यह धोखाधड़ी है तथा इसकी भी जाँच होनी चाहिए। अब यह सब ४ जून के हादसे के बाद एकदम शुरू हो रहा है, वह सब सरकार की खिसियाहट और बदले की भावना को दरशाता है। इसे एक व्यक्ति और उसके कुछ साथियों का विकटमोइजेशन ही कहा जाएगा। यह सरकार के लिए अशोभनीय है। अगर बाबा इतने गलत आदमी हैं तो सरकार और ये सरकारी एजेंसियाँ अब तक चुप क्यों थीं? यह उनकी अक्षमता का प्रमाण है या उनकी मिलीभगत का? ऐसे व्यक्ति को, वित्त मंत्रालय ने इन्कम टैक्स विभाग के सबसे बड़े अधिकारी को—काले धन को स्वदेश वापस लाने और भ्रष्टाचार रोकने के लिए क्या-क्या कर रही है, यह सब समझाने के लिए क्यों भेजा? क्या यह इस आरोप को प्रमाणित नहीं करता कि ये एजेंसियाँ न्यायप्रियता और उत्तरदायित्व की भावना तथा कानून के अनुसार काम नहीं करतीं, बल्कि सरकार की कठपुतलियाँ हैं, जो सरकार के इशारे पर चलती हैं। क्या यह लोकतंत्रात्मक और संविधान के अनुसार काम करने का प्रमाण है? गलत काम करने वालों के खिलाफ उन्हें तो निरंतर संतुलित ढंग से काम करते रहना चाहिए था।

यही नहीं, जब से अन्ना हजारे और बाबा रामदेव के आंदोलन जोर पकड़ने लगे, राजनीतिक भाषा का स्तर गिरता जा रहा है। तरह-तरह की बयानबाजियाँ शुरू हुईं, आंदोलनों में भाग लेनेवाले और भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज उठानेवालों पर तरह-तरह से कीचड़ उछालने की कोशिश की जाने लगी, ताकि उनकी बात की विश्वसनीयता में कमी आए और वे लोग सफाई देने तथा वाद-विवाद में फँसे रहें, जनता का ध्यान भ्रष्टाचार पर न रहकर इस विवाद की ओर चला जाए। यही नहीं, बाबा रामदेव ठग हैं, संन्यासी नहीं और उनका सहयोगी नेपाल से अपराध करके भागा हुआ है। उधर से मंत्रियों को धोखेबाज कहा गया तो उसके खिलाफ जाँच करके कार्यवाही होनी चाहिए। इसी समय यह सब क्यों उखाड़ा जा रहा है। वैसे तो सुधी पाठक जानते हैं कि एक नेपाली, जो भारत का नागरिक नहीं था, कई बार असम से कांग्रेस के टिकट पर लोकसभा सदस्य चुना गया। सी.बी.आई. की जाँच रपट और अदालतों के आदेश भी अखबारों में देखने में आए; पर कार्यवाही आगे क्या हुई, उसका पता नहीं है। पिछला चुनाव उसने नहीं लड़ा, शायद उसका यह असर हुआ। प्रश्न उठाए जा रहे हैं कि ये लोग चुनाव क्यों नहीं लड़ते? पर उनके अनुसार चुनाव-पद्धति ही भ्रष्टाचार की जड़ है और भलामानुस बड़ी रकम के बिना चुनाव लड़ ही नहीं सकता। हमारा ध्यान असल बीमारी पर जाना चाहिए और व्यर्थ के विवाद को छोड़ना चाहिए। समस्या तो इसी से पैदा हुई कि चुने हुए लोग जनसेवा को छोड़ अपनी सेवा में लग गए। भ्रष्टाचार का जाल फैलता गया। राजनेताओं, ठेकेदारों, बड़े उद्योगपतियों, पुलिस, सरकारी अधिकारियों, मंत्रियों में साँठ-गाँठ होने के कारण जनता के धन की लूट शुरू हो गई। जनता को एहसास हुआ कि चुने हुए प्रतिनिधि अपने दायित्वों के प्रति उदासीन और अपने स्वार्थ में लिप्त हैं तथा अब राजनीति में परिवर्तन की आवश्यकता है। घर के रखवाले ही लूटमार कर रहे हैं। इसी से सिविल सोसाइटी को बल मिला। जनप्रतिनिधि अगर अपने दायित्वों को पूरा करते तो इस तरह के आंदोलनों के पैदा होने की गुंजाइश नहीं होती। सिविल सोसाइटी के जागरूक प्रबुद्ध नागरिकों का काम होता सरकार के जनहित के कामों में हाथ बँटाना, जनता और सरकार के बीच में संवाद स्थापित करना। इसलिए सरकार के लिए यह एक आत्ममंथन का विषय है।

हम नहीं मानते हैं कि अन्ना हजारे और बाबा रामदेव या इस प्रकार के अन्य लोग शत-प्रतिशत सही हैं; किंतु आवश्यकता है कि जो मुद्दे उठाए गए हैं, वे सही हैं या नहीं। उनकी नीयत पर संदेह करके मूल समस्या को गौण नहीं किया जा सकता। समस्या से निपटने की इच्छा-शक्ति तथा शीघ्रता से कार्य करने से ही सरकार पर विश्वास होगा, केवल बयानों और आश्वासनों से नहीं। चाहे अन्ना हजारे या बाबा रामदेव का आंदोलन हो आर.एस.एस. का नाम जरूर घसीटा जाएगा। यह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों तरह से भ्रम फैलाने का प्रयत्न होता है, ताकि एक संप्रदाय विशेष को तथा कुछ अन्य लोगों को अलग किया जाए। हमें न इस मामले में आर.एस.एस. या किसी राजनीतिक दल से लेना-देना है। यहाँ मामला सीधा भ्रष्टाचार की रोकथाम का है। जो भी व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से भाग लेता है तो उसमें क्या बुराई है। आर.एस.एस. ने स्पष्ट रूप से अपना समर्थन घोषित कर दिया था। उनके अपनी बैठकों के निर्णय अखबारों में आ चुके थे। चिदंबरम ने उनका जिक्र किया, मानो वे गुप्त निर्णय थे। यदि कोई दल कानून और संविधान के विपरीत काम करता है और वह अवांछनीय है, तो सरकार के पास अधिकार है उनके विरुद्ध कार्यवाही करने का, सरकार कर भी चुकी है। किंतु भ्रष्टाचार निराकरण के जनहित के मामले में, जिनमें चिल्ला-चिल्लाकर सरकार कहती है, वह भी सहमत है, तो फिर एतराज क्या है किसी के भी भाग लेने में? आग बुझाने के प्रयास में नहीं पूछा जाता है कि पानी किस तालाब से आया और लोग कहाँ के और किस स्वभाव या विचारधारा के हैं? परंतु भ्रष्टाचार के मामले में कम-से-कम भ्रम तो नहीं फैलाया जाना चाहिए। यदि नीयत और मंतव्य साफ है। सरकारें जब आरोपों के चक्रव्यूह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में घिरती हैं तो उन्हें केवल दुष्प्रचार का ही सहारा दिखाई पड़ता है। सरकार के 'डर्टी ट्रिक्स डिपार्टमेंट' सक्रिय हो जाता है। सरकार को ऐसे समय अपनी कमियाँ नहीं बल्कि सब ओर साजिश और षड्‌यंत्र ही नजर आते हैं। एक और अजीब स्थिति देखने को मिल रही है कि कांग्रेस के लोगों का स्वयं की सरकार के प्रधानमंत्री और वरिष्ठ मंत्री की खुली आलोचना—ऐसा क्यों हो रहा है? पार्टी के अंदर क्या खींचतान है? क्या कोई प्रधानमंत्री के पद पर परिवर्तन की चर्चा पार्टी में है? यदि है तो वह पार्टी का आंतरिक प्रश्न है? पर इस तरह की खुली आलोचना तो सूझ-बूझ और निर्णयात्मक क्षमता के अभाव की ओर इशारा करती है और वह प्रधानमंत्री के पद के महत्त्व को कम करती है। ऐसे में पद के महत्त्व को कम करने का विरोधी दलों को ही क्यों दोष दिया जाता है? एक महाशय, जिनका कुछ ही समय पहले प्रधानमंत्री की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा राज्यसभा की सदस्यता के लिए नामांकन हुआ, वे अपने बयान में रामदेव के प्रकरण के संबंध में कहते हैं—यदि मैं प्रधानमंत्री होता तो क्या-क्या करता आदि। शायद प्रधानमंत्री को उनसे कुछ शिक्षण प्राप्त करना चाहिए। एक राज्यमंत्री, जो प्रधानमंत्री के ऑफिस में ही मंत्री हैं, बड़े उत्साह से कहते हैं कि पार्टी सरकार के ऊपर है। किस मायने में? यह स्पष्ट नहीं। संविधान में तो पहले पार्टी का जिक्र ही नहीं था। वह जिक्र तो जब दल-बदल को रोकने का प्रावधान बना, उस समय हुआ। माना यह जाता है कि पार्टी जो वादे चुनाव घोषणा-पत्र में जनता से करती है, उसको प्रधानमंत्री और सरकार पूरा करने की चेष्टा करेंगे। किंतु संसद् के प्रति तो प्रधानमंत्री ही उत्तरदायी है, पार्टी नहीं; अतएव प्रतिदिन बैक सीट ड्राइविंग तो नहीं हो सकती। वैसे कांग्रेस का अपना पुराना अनुभव है कि प्रधानमंत्री नेहरू और कृपलानी में, जो कांग्रेस अध्यक्ष थे, इस मामले में मतभेद हुआ तो कृपलानी को जाना पड़ा। ब्रिटेन में भी यही हुआ, जब प्रधानमंत्री एटली और लेबर पार्टी के अध्यक्ष लास्की में इस विषय पर मतभेद हुआ तो लास्की को ही जाना पड़ा। पार्लियामेंटरी प्रणाली की यही परंपरा है। यह सब हास्यप्रद लगता है, जब एक ओर प्रधानमंत्री के अनुसार भ्रष्टाचार को रोकने में गठबंधन की राजनीति को बाधा बताया जाता है और दूसरी ओर पार्टी के सर्वोच्च होने की बात कही जाती है, मानो अभी भी एक ही पार्टी की सरकार हो। हम नहीं समझते कि इन व्यर्थ के विवादों की देश को जरूरत है। वैसे तो प्रधानमंत्री स्वयं कह चुके हैं कि जब चाहे राहुल गांधी के लिए पद छोड़ देंगे। दिग्विजय सिंह ने हाल ही में राहुल की प्रधानमंत्री बनने की खूबिया बयान की थीं। उनके ४१वें जन्मदिवस पर खुलकर कहा है कि अब राहुल के प्रधानमंत्री बनने का वक्त आ गया है। वैसे तो यह उनके दल का घरेलू मामला है, किंतु जनता जानना अवश्य चाहेगी कि आखिर कांग्रेस पार्टी की असली मंशा क्या है? क्योंकि अपरोक्ष में पार्टी एक महामंत्री, जो सत्ता के नजदीक हैं, अपरोक्ष रूप में प्रधानमंत्री में अविश्वास ही व्यक्त कर रहे हैं। क्या यह उनकी वास्तव में निजी राय है या हिज मास्टर्स वॉयस?

सरकार एक बात में चूक गई। वह जब अपनी मजबूती का ढिंढोरा पीट रही है और कह रही है कि कोई भी कानून चुने हुए प्रतिनिधियां द्वारा बनाया जाएगा। यह स्वयंसिद्ध है। कोई नई बात नही है। किंतु सम्मिलित समिति बनाते समय सरकार भूल गई कि चुने गए प्रतिनिधियों में विरोधी पार्टियों के सदस्य भी हैं। उनसे बिना परामर्श किए गजेट नोटिफिकेशन निकाल दिया और समिति में सिविल सोसाइटी के अलावा केवल कांग्रेस के मंत्री ही हैं। अतएव जब लोकपाल विधेयक के प्रारूप की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर पार्टियों की राय जाननी चाही तो उन्होंने इनकार कर दिया। चाहे विधान के परिवर्तन की आवश्यकता हो अथवा साधारण बहुमत से दोनों सदनों में विधेयक को पारित कराने में उनके सहयोग की आवश्यकता होगी। विरोधी दलों ने प्रणव मुखर्जी के पत्र के उत्तर में कह दिया कि जब बिल संसद् में पेश होगा तो वहीं हम अपना दृष्टिकोण और राय प्रकट करेंगे। संयुक्त समिति का प्रस्ताव इस प्रकार सरकार के गले में भी अटक गया। अन्ना हजारे और उनकी सिविल सोसाइटी के लोगों के लिए भी वह अब जी का जंजाल साबित हो रहा है। केवल गतिरोध बढ़ रहा है, कहीं किसी प्रकार की प्रगति नहीं। अब सरकार की ओर से विधिमंत्री कहते हैं कि पेनल या समिति को संविधान में संशोधन का अधिकार नहीं है, अतएव जजों को लोकपाल बिल में शामिल नहीं किया जा सकता है। उसके लिए समिति अपनी राय, जो बिल सरकार ने जजों के दायित्व और व्यवहार के बारे में बनाया है, उसके विषय में सुझाव दे सकते हैं। यहाँ भी टकराव की स्थिति बन रही है। कोई बीच का रास्ता निकलता नहीं दिखाई देता। वैसे विचित्र लगता है कि पार्टी के लोग प्रणव मुखर्जी जैसे वरिष्ठ मंत्री की आलोचना करने में नहीं चूक रहे हैं कि वे बाबा रामदेव की अगवानी करने हवाई अड्डे पर क्यों गए? यह आपसी राजनीति के दलदल में उनके कद को कम करने की साजिश भी हो सकती है। पर प्रणव मुखर्जी ने कोलकाता में कह दिया कि आपातकाल के से हालात बन रहे हैं। यह सरासर अनुचित है। पहले तो अब देश के सामने अनेकों सूत्रों से स्पष्ट है कि आपातकाल की घोषणा के समय कोई विशेष परिस्थितियाँ नहीं थीं। केवल राजनीतिक कारणों से ऐसा किया गया था। जे.पी. का आंदोलन भी भ्रष्टाचार के कारण ही प्रारंभ हुआ था। प्रणव बाबू वैसे हमेशा सोच-समझकर बोलते हैं, वे कैसे भूल गए कि अब आपातकाल की धमकी आसानी से कारगर नहीं हो सकती है। यमुना से बहुत पानी बह गया है। अब अदालतों के अधिकारों से छेड़छाड़ नहीं हो सकती है। संविधान में जो संशोधन हुए थे, वे उनसे परिचित हैं। ऐसे बयान व्यर्थ में देश में कटुता को बढ़ाते हैं, जो अत्यंत अवांछनीय हैं। अब संभवत: सरकार और सत्ता दल पूरे मामले में राय देने के लिए एक सर्वदलीय बैठक बुलाए। पर विरोधी दल इस समय कुछ परामर्श देने या अपना दृष्टिकोण प्रकट करने के पक्ष में नहीं जान पड़ते हैं। उनका स्टैंड है कि सरकार विधेयक का प्रारूप संसद् में प्रस्तुत करे, वहीं और तभी जो कहना है, करेंगे। आसार अच्छे नहीं हैं।

आज देश की माँग है सुशासन, स्वच्छ राजनीति, ईमानदारी, मजबूत और विश्वसनीय सरकार तथा जन-कल्याण की ओर उन्मुख आर्थिक विकास एवं उन्नति। इसीलिए जनता भ्रष्टाचार के रावण के अंत के लिए बेचैन है। आपसी टकराव से बचना चाहिए, यह मुद्दा दलगत राजनीति से ऊपर उठकर देखा जाना चाहिए। श्रेयस्कर होगा—देश के लिए सरकार जन-भावनाओं को ठीक से पहचाने और उसके अनुरूप सक्रिय कदम उठाए। मात्र आश्वासन काफी नहीं हैं। यह हम सबका सम्मिलित दायित्व है।

'ईश्वर-अल्ला तेरो नाम, सबको सन्मति दे भगवान्।'

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुखिया

● जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज'

मोटर बड़ी सफाई से मोड़ ली गई, नहीं तो यह बच नहीं सकती थी। उस दैन्य जर्जर शरीर के लिए एक ही धक्का बहुत था। वह गिर पड़ी—केवल गिर ही नहीं पड़ी, उसका सिर भी फट गया! उसके फटे-पुराने वस्त्र खून से लथपथ हो गए! मगर स्वयं उसे इन बातों की खबर थी या नहीं, यह वही जाने। जब उसने देखा कि अपराधी की तरह काँपता हुआ एक बहुत ही सुंदर नवयुवक उसे उठाने की चेष्टा कर रहा है, तब वह इस तरह उठ बैठी, मानो उसे कुछ हुआ ही नहीं था। युवक राजमोहन ने झटपट अपनी जेब से एक रुमाल निकालकर उसके घाव पर पट्टी बाँध दी।

अभी वह कुछ कहने ही जा रहा था कि उस भिखारिणी युवती की आँखें अपने बिखरे हुए अनाज पर जा पड़ीं। वह व्यग्र भाव से माथा ठोककर बोल उठी, "हाय! दो दिन से माई के पेट में एक दाना भी नहीं गया है। मेरे आसरे में बैठी भूख के मारे न जाने वह किस तरह तड़प रही होगी! अब घर जाकर उसे मैं क्या खिलाऊँगी!"

उसके दुर्बल हाथों में मिट्टी का एक छोटा सा बरतन था। उसी में दिन भर की माँगी हुई उसकी भीख थी। तरह-तरह के कच्चे-पक्के अन्न मिले हुए थे। घर जाकर उसी बरतन में वह उन्हें किसी तरह उबाल लेती और माँ-बेटी मिलकर अपने-अपने पेट की जलन बुझातीं। मगर मोटर के धक्के ने उसका सारे दिन की कमाई मिट्टी में मिला दी! बरतन चूर-चूर हो गया। सारे अन्न इस तरह बिखर गए कि उनका एकत्र किया जाना संभव नहीं था।

भूख के मारे तड़पती हुई अपनी बूढ़ी माँ का ध्यान आते ही वह अधीर हो उठी। बड़ी कातरता से एक बार राजमोहन की ओर देखकर वह जल्दी-जल्दी उन दानों को चुनने लगी।

उसी समय एक लाल पगड़ीवाले ने उसे धक्का देकर कहा, "उठ यहाँ से। चल, थाने में चलना होगा।"

थाना चलने की बात सुनकर वह डर के मारे काँप उठी। दैन्यभाव से सिपाही की ओर देखती हुई बोली, "मेरी माई भूख के मारे मर रही होगी, मुझे घर जाने दीजिए सरकार!"

"उठती है या बैठी-बैठी बातें बनाएगी?" निर्दयता से उस अबला का हाथ पकड़कर झिटकते हुए लाल पगड़ीवाले ने कहा, "थाने चलकर रपट लिखाए बिना कहीं जाने का नाम लिया तो जीभ पकड़कर खींच लूँगा।"

भिखारिणी डर के मारे और कुछ न कह सकी। वह अत्यंत करुण दृष्टि से राजमोहन को देखने लगी। वह बेचारा सिर झुकाए चुपचाप खड़ा था।

: दो :

थानेदार की आँखें उसी लाली में रँगी हुई थीं, जिसे देखकर मनुष्यता काँप उठती है। उसने अपनी भौंहें तानकर एक बार राजमोहन को सिर से पैर तक देखा, फिर भिखारिणी की ओर मुँह करके कड़कती हुई भाषा में कहा, "तुम्हारा नाम क्या है?"

"दुखिया!" उसने काँपते हुए कंठ से कहा।

"बाप का नाम?" कागज पर पेंसिल घसीटते हुए थानेदार साहब ने फिर उसी तरह कड़ककर पूछा।

"महरू कहार।" दुखिया की आँखों के आगे अँधेरा छा गया।

"जात?"

"कहारिन।"

"रहती कहाँ है?"

"लालूचक में, सरकार!"

"अच्छा", पेंसिल रखकर अपनी बड़ी-बड़ी मूँछों पर हाथ फेरते हुए थानेदार ने कहना शुरू किया, "अब मैं तुझसे जो-जो पूछूँ उसका ठीक-ठीक जवाब देगी?"

"हाँ, सरकार!"

"तो बताओ," थानेदार ने उसके माथे की ओर इशारा करते हुए पूछा, "यह खून कैसा बह रहा है?"

"खून?" थानेदार ने दाँत पीसकर कहा, "और हमीं से पूछती है खून? तुम्हें मालूम नहीं कि तुम्हारे माथे में पट्टी बँधी हुई है, तुम्हारे बाल और कपड़े खून से तर हैं?"

दुखिया कुछ जवाब न दे सकी। वह आँखों में आँसू भरकर दीन भाव से थानेदार की ओर देख रही थी।

थानेदार भला इस मूक कातरता को क्या जान सकता था। उसने फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी तरह पूछा, "इस तरह मेरी ओर ताकने से क्या होगा। बताओ, तुम्हारा सिर किसने फोड़ा?"

"फोड़ा तो किसी ने नहीं सरकार!" दुखिया ने हाथ जोड़कर जवाब दिया, "ठोकर खाकर अपने आप रास्ते में गिर पड़ी थी, उसी समय चोट लग गई होगी। मुझे तो कहीं पीड़ा भी नहीं होती।"

"पीड़ा कैसे होगी?" थानेदार ने आगबबूला होकर राजमोहन की ओर इशारा करते हुए कहा, "इस बाबू से कितने रुपए लेकर इस तरह की बातें कर रही है।"

"इनसे रुपए क्यों लूँगी सरकार।" दुखिया ने आश्चर्य का भाव व्यक्त करते हुए जवाब दिया, "इन्हीं बाबू ने तो मेरी जान बचा ली। दूसरा कोई होता तो आँखें बंद करके चल देता। घाव पर जो आप पट्टी देखते हैं, वह भी तो इन्हीं की बाँधी हुई है।"

"सिर इन्होंने फोड़ा तो पट्टी कौन बाँधने आता—मैं?" कहकर थानेदार ने हाथ में हंटर उठाकर उसे धमकाना शुरू किया, "अब अगर सच्ची बातें न बताएगी तो इसी हंटर से खबर ली जाएगी। बताओ, इनकी मोटर का धक्का खाकर तुम गिरी हो या नहीं?"

"नहीं, कभी नहीं, मैं अपने आप ठोकर खाकर गिर पड़ी थी, इस बाबू ने मेरी जान बचाई है।"

"फिर वही बात?" कहकर थानेदार ने उस अबला पर सड़ाक से हंटर जमा दिया। वह चीख मारकर रो पड़ी।

राजमोहन अब तक चुपचाप खड़ा-खड़ा थानेदार की सारी लीला देख रहा था। दुखिया के ऊपर ऐसा अत्याचार होते देख वह क्रोध के मारे काँप उठा। मगर बड़ी गंभीरता के साथ अपने उस भाव को दबाते हुए बोला, "क्यों साहब! आप उस बेचारी से मार-पीटकर बयान लिखवाना चाहते हैं?"

"आप इस समय चुप रहिए।" थानेदार ने उसे डपटकर उत्तर दिया, "मेरी बातों में दखल देने का आपको कोई हक नहीं है।"

"यह तो ठीक है।" राजमोहन ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "मगर इस बेचारी को झूठ-मूठ तंग करने से क्या फायदा? आपको जो कुछ पूछना हो, मुझसे क्यों नहीं पूछते?"

"इससे बयान लिखवाकर तब आपसे पूछूँगा, तब तक चुपचाप बैठे रहिए।" उसकी बातों का उत्तर देते हुए थानेदार ने एक सिपाही से कहा, "ले चलो इस हरामजादी को, कमरे में बंद करो। तब यह सीधे मुँह बात करेगी।"

एकांत कमरे में ले जाकर थानेदार ने दुखिया को हर तरह से डराया-धमकाया, खूब मारा-पीटा, कई प्रकार के लालच दिखाए; लेकिन उसने राजमोहन के विरुद्ध एक भी ऐसी बात न बताई, जिससे थानेदार की पाँचों उँगलियाँ घी में पड़ सकतीं।

थानेदार ने कहा, "देखो, तुम्हें सरकार से मुकदमा लड़ने को रुपए मिलेंगे, तुम नालिश करो।"

दुखिया ने कहा, "जिसने मेरी जान बचाई है, उसके ऊपर इलजाम लगाने के पहले मैं मर जाना पसंद करूँगी।"

थानेदार दाँत पीसकर रह गया। उसके हाथ से एक बड़ा ही अच्छा शिकार छूटा जा रहा था। वह क्रोध के मारे पागल सा हो गया। दुखिया का झोंटा पकड़कर उसे कमरे से बाहर निकालते हुए, धक्का देकर बोला, "मरना ही पसंद करती हो तो जाओ मरो।"

दुखिया बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी। तब थानेदार साहब की आँखें खुलीं। उसकी बेहोशी देखकर उनके होश भी हवा हो गए। उसके घाव से फिर उसी तरह खून का फव्वारा छूट पड़ा। उन्होंने कातर दृष्टि से राजमोहन की ओर देखकर कहा, "बाबू साहब! कसूर माफ कीजिएगा। मुझसे बड़ी भारी गुस्ताखी हो गई। किसी तरह इसकी बेहोशी दूर करके इसे यहाँ से ले जाइए। मैं नहीं जानता था कि यह इतनी कमजोर है।"

दुखिया बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी। तब थानेदार साहब की आँखें खुलीं। उसकी बेहोशी देखकर उनके होश भी हवा हो गए। उसके घाव से फिर उसी तरह खून का फव्वारा छूट पड़ा। उन्होंने कातर दृष्टि से राजमोहन की ओर देखकर कहा, "बाबू साहब! कसूर माफ कीजिएगा। मुझसे बड़ी भारी गुस्ताखी हो गई। किसी तरह इसकी बेहोशी दूर करके इसे यहाँ से ले जाइए। मैं नहीं जानता था कि यह इतनी कमजोर है।"

"नहीं तो, अभी कुछ देर और कमरे में बंद करके इसे और मारते-पीटते, क्यों?" कहकर राजमोहन ने अपने आग्नेय नेत्रों से एक बार थानेदार की ओर देखा। क्रोध के मारे युवक का खून खौला जा रहा था। लज्जा और भय के मारे थानेदार उसकी ओर आँखें उठाकर देख भी न सका।

राजमोहन दुखिया को मोटर पर बैठाकर वहाँ से चलता बना।

: तीन :

होश में आते ही दुखिया ने पूछा, "मैं कहाँ हूँ, मालिक बाबू?"

"तुम अस्पताल में हो दुक्खो!" राजमोहन ने उसके घाव की पट्टी का बंधन कसते हुए उत्तर दिया।

"यहाँ मुझे कौन ले आया? मेरी माई कहाँ है?" कहकर दुखिया बेड से उठ बैठी।

"देखो, दुक्खो! इस तरह जोर करने से तुम फिर बेहोश हो जाओगी। आज रात भर यहीं आराम करो। सवेरे मैं तुम्हें माई के पास पहुँचा दूँगा।" कहकर राजमोहन ने उसे बिस्तर पर लिटा दिया।

"रात भर?" दुखिया ने आँखों में आँसू भरकर पूछा, "रात भर में तो मेरी माँ मर ही जाएगी! उसने दो दिनों से कुछ नहीं खाया है।"

"तो तुम मुझे अपने घर का पता बता दो।" राजमोहन ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "मैं तुम्हारी माँ के खाने-पीने का सब इंतजाम कर देता हूँ।"

"हाँ, यह ठीक है, मालिक!" दुखिया ने सिसकते हुए जवाब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया, "मगर मेरे बिना तो वह मुँह में एक दाना भी नहीं डालेगी, मुझे यहाँ से ले चलिए।"

इसी समय राजमोहन का नौकर, वही जो मोटर में उसके साथ रहा करता था; दुखिया के लिए एक कटोरा गरम दूध ले आया।

राजमोहन ने उसके हाथ से कटोरा लेकर दुखिया के पास रखते हुए कहा, "अच्छा, पहले तुम यह दूध पी लो, फिर पहुँचा दूँगा।"

"नहीं बाबूजी! मुझसे इस समय कुछ खाया-पीया न जाएगा। मेरी माई वहाँ भूख के मारे मर रही होगी। मुझे उसी के पास पहुँचा दीजिए।" दुखिया अपनी माँ की उस दुःखद स्मृति में फूट-फूटकर रोने लगी।

राजमोहन को विवश होकर उसकी बात माननी पड़ी। उसे लेकर वह उसकी माँ के घर पहुँचा। वहाँ भीषण अंधकार छाया हुआ था। दुखिया ने वहाँ की नीरवता भंग करते हुए पुकारा, "माँ!" मगर माँ ने कोई जवाब नहीं दिया।

दो कदम और आगे बढ़कर उसने अधीर वाणी में पुकारा, "माँ!" मगर इस बार भी उसे कोई उत्तर न मिला। वह और भी जोर-जोर से पुकारने लगी।

उसका इस प्रकार चिल्लाना सुनकर पड़ोस के दो-चार लोग आ जुटे। वे लोग आँगन के बाहर ही खड़े होकर उसको तरह-तरह से सांत्वना देने लगे।

एक ने कहा, "अब माँ-माँ कहकर क्या चिल्ला रही हो बेटी! वह बेचारी तो आज दोपहर दिन ही में चल बसी। हम लोगों को भदुआ की बेटी ने जाकर सुनाया कि बुढ़िया मौसी आँगन में चित्त पड़ी है। जब तक हम लोग आए, बेचारी के प्राण पखेरू उड़ चुके थे। बहुत देर तक तो हम लोग तुम्हारे ही आसरे में बैठे रहे, मगर जब दिन डूबने पर हो गया, तब जाकर उसे गंगाजी में छोड़ आए। अब झूठ-मूठ रोने-कलपने से क्या होगा?"

मगर उनमें से किसी ने भी नहीं देखा कि दुखिया इस तरह झूठ-मूठ रोने-कलपने के लिए अब तक खड़ी नहीं थी। उन लोगों की आधी बातें सुनते ही वह चीख मारकर आँगन में गिर पड़ी।

चलते समय उनमें से एक दूसरे सज्जन और भी ऊँची आवाज में कहते गए, "अब रोने-धोने की कोई जरूरत नहीं बेटी! विधाता की रेख कोई नहीं मेट सकता। धीरज बाँधकर चुपचाप सो जाओ।"

पता नहीं, सांत्वना के इतने सुंदर शब्द दुखिया के कानों में पहुँचे भी या नहीं।

: चार :

राजमोहन के घर आए दुखिया को सात महीने से भी अधिक हो गए। अपने स्वभाव और कार्य से वह अपने मालिक और अपनी मालकिन को बराबर मुग्ध ही करती गई। राजमोहन तो उसे ममता और स्नेह की दृष्टि से देखते ही थे, उनकी स्त्री सुलोचना भी उसे बहुत मानने लगी थी। उसे हर तरह से खाने-पहनने का सुख दिया करती थी। जहाँ तक होता, उससे ऐसा ही काम लिया करती, जो हलका और सुखकर हो।

उसके इस सौभाग्य पर और किसी को डाह थी या नहीं, यह तो हम नहीं जानते। हाँ, लीला नाम की एक महरी उससे बहुत जला करती थी। दुखिया के पहले वही सुलोचना की खास परिचायिका थी। अब उसे रसोईघर के बरतन माँजने पड़ते हैं। दिन-रात उसके ऊपर काम का भार लदा रहता है। और दुखिया? वह केवल मालकिन की सेवा-टहल करके दिन-रात मौज किया करती है। अच्छा खाना खाती है, अच्छे-अच्छे कपड़े पहनती है। इतनी बातें क्या लीला का जी जलाने को काफी नहीं हैं।

दुखिया का स्वभाव इतना मीठा था कि वह भूलकर भी किसी का दिल दुखाना नहीं जानती थी। किसी का थोड़ा सा भी दुःख देखकर उसका कोमल हृदय मोम की तरह पिघल पड़ता था।

एक दिन उसने देखा कि लीला का बायाँ हाथ कुछ सूज गया है और वह बड़े कष्ट से बरतन माँज रही है। दुखिया से न रहा गया। वह धीरे-धीरे उसके पास पहुँचकर कोमल स्वर में बोली, "लीला जीजी! तुम्हारा हाथ सूज गया है, कष्ट हो रहा होगा। लाओ, आज मैं ही तुम्हारा काम कर दूँ।"

यद्यपि ये बातें सच्चे हृदय से की गई थीं, फिर भी लीला ने इसे व्यंग्य ही समझा। वह झल्लाकर बोल उठी, "मेरा काम तुम काहे को करोगी? मेरे क्या हाथ-पैर गल गए?"

दुखिया को इस प्रकार के तीखे उत्तर की आशा स्वप्न में भी नहीं थी। उसने फिर बड़े ही कोमल भाव से कहा, "हाथ-पैर तुम्हारे दुश्मन के भी न गलें, बहिन! तुम्हारे क्यों गलेंगे? एक दिन तुम्हें थोड़ी सी मदद कर दूँगी तो क्या मेरा अज्जत-पानी उतर जाएगा? लाओ, मैं बरतन माँज देती हूँ।" इतना कहकर लीला उसका हाथ पकड़कर झिटकती हुई बोल उठी, "यह हम सबको अच्छा नहीं लगता, दुक्खो! तुम मुझे इस घर से भगाने पर तुली हो क्या? मालकिन या मालिक देख लें तो शामत आए मेरी, तुम्हें क्या? तुम तो झमकती हुई कोठे पर चढ़ जाओगी! जाओ, मुझे चुपचाप अपना काम करने दो। मेरा जी मत जलाओ।"

"मैं तुम्हारा जी कहाँ जला रही हूँ?" दुखिया ने आश्चर्य और विषाद भरी वाणी में अपने ओठों पर एक अंगुली रखते हुए बड़ी ही कातरता से पूछा।

"इसको जी जलाना नहीं तो और क्या कहते हैं?" लीला ने आँखें गुड़ेरते हुए जवाब दिया, "तुम जैसी दिन-रात में मिलाकर पचासों बीड़ा पान चबानेवाली रानी, मुझ जैसी महरी के बरतन माँजने आवे, यह दिल्लगी नहीं तो और क्या है? तुम्हारे ये कोमल हाथ क्या इसलिए बने हैं?"

दुखिया क्षोभ के मारे और कुछ न बोल सकी। उसने समझ लिया कि लीला का दिल उसकी ओर से साफ नहीं है। अपने मन में तरह-तरह की बातें सोचती हुई वह उदास होकर वहाँ से हट गई। आज उसके जीवन की सारी शांति एकाएक सिहर उठी!

लीला ने हाथ जोड़कर कहा, "मालकिन! अब मुझे छुट्टी मिले।"

सुलोचना ने चकित होकर कहा, "क्यों लीला?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इसलिए कि इस घर में अब मेरा गुजारा न हो सकेगा?"

"ऐसी क्या बात आ पड़ी?"

"आ न पड़ी, तो एक न एक दिन आ ही पड़ेगी। आते क्या देर लगती है?"

"वही तो पूछ रही हूँ, क्या हुआ?"

"होगा क्या? जब इस घर की मालकिन ही मेरे ऊपर नाराज है, तब मैं कै घड़ी यहाँ टिक सकूँगी।" लीला ने आँखों में आँसू भरकर कहा, "किसी दिन गुस्से में आकर कुछ कहा-सुनी हो गई, तो कौन जाने पीछे मेरे ऊपर क्या बीते? इसलिए पहले ही से अपनी इज्जत-आबरू बचाकर जाऊँ, यही ठीक है।"

सुलोचना उसकी बातों का कोई मतलब न समझ सकी। उसने पूछा—

"तुम कह क्या रही हो लीला? कौन मालकिन तुमसे नाराज है? मुझसे तो तुम्हारा मतलब नहीं है?"

"आप भला मुझ दासी पर क्यों नाराज होंगी, सरकार!"

लीला ने आँसू पोंछते हुए जवाब दिया, "आप तो अपनी छोटी बहन की तरह मुझे सदा से मानती आ रही हैं।"

"फिर? तुम कह किसके बारे में रही हो?"

"जो आजकल इस घर की पटरानी बनी हुई मेरे मालिक बाबू को अपनी उँगली के इशारे पर नचा रही है, उसी के बारे में!"

सुलोचना यह उत्तर पाकर सिर से पैर तक काँप उठी। उसने आतुरता से पूछा, "साफ-साफ बताती क्यों नहीं? इस तरह पहेली-पर-पहेली गढ़े जाने से फायदा?"

"साफ-साफ क्या बताऊँ, सरकार!" उसने बिलख-बिलखकर कहना शुरू किया, "कहने की हिम्मत नहीं पड़ती। कौन जाने कहीं आप भी कुछ दूसरा ही समझ बैठें या मालिक बाबू से कह दें तो मैं गरीबिन बेमौत मारी जाऊँ।"

सुलोचना का कलेजा धड़कने लगा। ललाट पर पसीने की बूँदें पोंछती हुई वह बोली, "लीला! आज तक तुम्हें मैंने कभी कोई कड़वी बात कही है? फिर तुम डर क्यों रही हो? कसम ले लो, तुम्हारी कही हुई बातों में से एक शब्द भी अगर मैं उन्हें जानने दूँ, तुम्हें जो कुछ कहना हो, निडर होकर कह जाओ।"

"नहीं, मुझसे ये सब बातें मत कहवाइए, मैं न कह सकूँगी, हाय दैव! अपनी आँखों से यह लीला देखने को मैं जीती ही क्यों रही?" कहकर लीला ने ऐसी विकलता का नाटक किया कि सुलोचना सचमुच सिहर उठी।

उसने प्यार से लपककर लीला का हाथ पकड़ लिया और कहा, "तुम्हें बताना पड़ेगा?"

"मगर आपको किसी से न कहने का वचन देना पड़ेगा।"

"मैं पहले ही दे चुकी हूँ, फिर भी…"

"सुनने के पहले अपने हृदय को पत्थर बना लेना पड़ेगा।"

"वह अपने आप बन जाएगा, तुम कहो।"

"तो सुनिए!"

"कहो न, रुकती क्यों हो?"

"मालिक बाबू दुखिया के…"

सुलोचना थरथराकर वहीं बैठ गई। उसने बीच ही में उसे रोकर कहा, "बस इसके आगे कुछ मत कह। मैं समझ गई। तुम्हारा अनुमान ठीक हो सकता है।"

"अनुमान नहीं, यह सच्ची बात है।" लीला ने ढीठ भाव से जोर देकर कहा, "इसे आपके सिवा इस घर के सभी लोग बहुत दिनों से जानते हैं। मैं तो यह लीला देखकर मन-ही-मन आपकी दशा पर दिन-रात रोया करती हूँ। मगर कुछ कर नहीं सकती। फूँक-फूँककर पाँव धरती हूँ। वह तो मुझे अपनी राह का काँटा ही समझती है। इसलिए मैं अब इस घर में नहीं रहना चाहती। पानी में रहकर मगर से कौन बैर करे? आपका नमक खाती हूँ, आप ही की मैं पुरानी चेरी हूँ, इसलिए आपको आगाह कर दिया, अब आप जानें और आपका काम जाने। मैं जाती हूँ।"

"जाती कहाँ हो? जब तक मैं हूँ, तुम्हें कहीं नहीं जाने दूँगी", कहकर सुलोचना ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये।

लीला उसके पैरों पर लोट गई और बोली, "दुखिया मुझे यहाँ नहीं रहने देगी, सरकार! आप मुझे छुट्टी दीजिए।"

सुलोचना अपने हृदय का वेग सँभालती हुई बड़े कष्ट से बोली, "मगर सच कहो लीला! यह बात ठीक है? कहीं तुम्हें धोखा तो नहीं हो गया है? मालिक का तो स्वभाव ऐसा नहीं है!"

"इसलिए तो मैं कहती थी।" लीला ने मान भरी वाणी में कहना शुरू किया, "आप मुझसे ये सब बातें मत कहलावें। अब मैं किस तरह आपको विश्वास दिलाऊँ कि मैंने जो कुछ कहा है, उसका एक अक्षर भी झूठा नहीं हो सकता। कुछ सुनी-सुनाई बातें तो हैं नहीं। दिन-रात अपनी आँखों से देखा करती हूँ। हाँ, आपकी आँखों में जरूर धूल झोंकी जाती है।"

"मैं तुम्हें झूठी नहीं बनाती, लीला!" सुलोचना बहुत ही कष्ट से बोली, "मगर न जाने मेरा मन इसे क्यों नहीं कबूलता?"

"यह मेरा दुरभाग है, और क्या?" कहकर लीला ने एक माया भरी आह खींची और फिर कहना शुरू किया, "ना जाने आज किसका मुँह देखकर उठी हूँ! लोग चाहे जो करें, मेरे बाप का क्या बनता-बिगड़ता था, जो मैं अपने पेट में एक बात न पचा सकी। जिसके हित की कहो, वही बैरी समझ बैठे, इससे बढ़कर अभाग की बात और क्या होगी?"

इस बार सुलोचना के हृदय पर लीला के मायावी आँसू का पूरा-पूरा अधिकार हो गया। उसने प्यार से यह कहकर उसे विदा किया, "मेरे जीते जी तुम्हारे ऊपर कोई आँच न आने पाएगी, लीला! जाओ, अपना काम-धंधा देखो।"

लीला अपनी विजय की खुशी में झूमती हुई कमरे से बाहर निकल गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीला ने ढीठ भाव से जोर देकर कहा, "इसे आपके सिवा इस घर के सभी लोग बहुत दिनों से जानते हैं। मैं तो यह लीला देखकर मन-ही-मन आपकी दशा पर दिन-रात रोया करती हूँ। मगर कुछ कर नहीं सकती। फूँक-फूँककर पाँव धरती हूँ। वह तो मुझे अपनी राह का काँटा ही समझती है। इसलिए मैं अब इस घर में नहीं रहना चाहती। पानी में रहकर मगर से कौन बैर करे? आपका नमक खाती हूँ, आप ही की मैं पुरानी चेरी हूँ, इसलिए आपको आगाह कर दिया, अब आप जानें और आपका काम जाने। मैं जाती हूँ।"

: पाँच :

सुलोचना अपने पति को पहचानती थी। उसे लीला की बातों पर विश्वास भी हो रहा था और अविश्वास भी। विश्वास इसलिए कि दुखिया के ऊपर राजमोहन की बड़ी ममता थी। अविश्वास इसलिए कि वह इस प्रकार की ओछी बातों को अपनी कल्पना में भी स्थान देने को तैयार न थी। फिर भी उसके हृदय में हलचल मच गई, तरह-तरह की शंकाओं ने उसकी नारी सुलभ दुर्बलता को उत्तेजित कर दिया। वह सोचते-सोचते इसी विचारधारा में बह चली, 'कौन जाने आदमी का स्वभाव कब और किस तरह बदल जाता है? किसी के चरित्र का भीतरी स्वरूप पहचानना बड़ा ही कठिन है। प्रलोभन को देखकर फिसल जाना कोई बड़ी बात नहीं—कामिनी और कंचन पर रीझते अधिक देर नहीं लगती। दुखिया के निखरे हुए यौवन पर अगर वे चुपचाप अपने को निछावर ही कर चुके हों तो इसका पता मैं कैसे पा सकती हूँ? इसमें आश्चर्य ही क्या है? मर्द सबकुछ कर सकते हैं और वह भी तो कुछ कम रसीली नहीं है? उसकी बड़ी-बड़ी आँखें, उसका हँसमुख चेहरा, उसके बातचीत का सुंदर ढंग; सभी बातें तो मन को मोहने वाली हैं। सब संभव है—धोखे से भरी हुई इस दुनिया में इस तरह की बातें असंभव नहीं हो सकतीं। लीला की बातें झूठ नहीं हो सकतीं। उसे इतनी हिम्मत नहीं कि मेरे सामने मेरे पति के बारे में इस तरह की बेबुनियाद बातें कर जाए।'

इस प्रकार सोचते-सोचते सुलोचना जोश में आकर खड़ी हो गई। उसके हृदय में एक प्रकार का भीषण तूफान उठ खड़ा हुआ। उसी के सहारे उड़ती हुई वह सीधे दुखिया के कमरे की ओर चल पड़ी।

दीयाबत्ती जलने का समय हो गया था। उस समय दुखिया अपने कमरे ही में थी। उसने चुपचाप अपने बिस्तरे के नीचे से एक छोटी सी तसवीर निकाली। वह शीशे में मढ़ी हुई थी। दरवाजे की ओर पीठ करके वह बैठ गई, तसवीर को वह अपने हाथों पर रखे हुए थी। बहुत देर तक वह उसी अवस्था में अविचल भाव से बैठी रही। अंत में एक लंबी आह खींचकर ज्योंही उसने तसवीर के ऊपर सिर झुकाया, त्योंही पीछे से किसी ने उसकी पीठ पर ऐसी लात जमाई कि वह बेचारी पछाड़ खाकर वहीं लोटने लगी।

सुलोचना ने उसका झोंटा पकड़कर खींचते हुए कहा, "अभी तो एक ही लात खाई है! एक आध बार और इस तसवीर को चूम लो, शायद अब फिर मौका न मिले।"

सुलोचना ने तसवीर उठाकर देखी, वह उसी के पतिदेव की थी। क्रोध के मारे उसके नथने फड़क उठे, आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगीं, उसका समूचा शरीर थरथर काँपने लगा। दाँत पीसकर फिर एक लात जमाती हुई वह बोली, "बताओ, तुम्हें यह तसवीर किसने दी?"

दुखिया ने रोते हुए हाथ जोड़कर जवाब दिया, "बाबूजी के कमरे में इस तरह की कई तसवीरें थीं। वहीं से मैं चुपचाप इसे उठा लाई हूँ।"

"झूठ बोलोगी तो यहाँ से जीती न जाने दूँगी।" उस पर और भी एक लात जमाकर सुलोचना ने कहा, "डायन! यह क्यों नहीं कहती कि बाबूजी ने अपने आप भेंट की है?"

"नहीं सरकार!" दुखिया बड़ी दीनता से रोती हुई बोली, "उन्होंने नहीं दी। मैं ही इसे चुराकर अपने कमरे में ले आई हूँ! उन्हें तो मालूम भी नहीं है।"

"यह भी नहीं मालूम है कि तुम इस तसवीर को दिन-रात चूमा करती हो।" सुलोचना ने क्रोध कंपित स्वर में व्यंग्य किया।

"आज तक मैंने इसे एक बार भी नहीं चूमा है। आप ऐसी बातें क्यों कह रही हैं? मुझसे ऐसा कौन सा अपराध हो गया?" कहकर दुखिया कातर दृष्टि से अपनी स्वामिनी की ओर देखने लगी।

"झूठ बोलते शर्म नहीं आती?" सुलोचना ने दाँत पीसकर पूछा, "अभी-अभी तुम इस तसवीर को चूम नहीं रही थी?"

"नहीं, कभी नहीं।" दुखिया ने जोर से इस बात का विरोध करते हुए जवाब दिया, "मैं इस तसवीर को रोज इस तरह सिर झुकाकर प्रणाम किया करती हूँ—इसे चूमकर नहीं, इसकी पूजा करके अपने दिल को शांत किया करती हूँ।"

"क्यों?" इस बार सुलोचना की आँखें भर आईं।

"यह नहीं जानती।" कहकर दुखिया उसके चरणों पर लोट-लोटकर रोने लगी।

: छह :

सवेरे उठते ही सुलोचना ने देखा, उसके गहनों का डब्बा गायब था। दुखिया का भी कहीं पता नहीं था। उसे विश्वास हो गया कि वही उसका डब्बा चुराकर भाग गई है। बात ही बात में इस चोरी का समाचार घर के सभी लोग जान गए। चारों ओर तलाशियाँ हुईं, मगर कुछ पता न चल सका। अंत में सुलोचना ने राजमोहन से कहा, "दुखिया के सिवाय यह और किसी का काम नहीं हो सकता।"

"मालूम तो ऐसा ही होता है।" गंभीर मुद्रा बनाकर सिर खुजलाते हुए राजमोहन ने अपनी पत्नी का समर्थन किया।

"तुमने आस्तीन में साँप पाल रखा था, यह उसी का फल है। मैं भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे पहले नहीं पहचान सकी।'' सुलोचना पछतावे का भाव दिखाती हुई बोली।

''अब क्या कहती हो?'' राजमोहन परास्त होकर बोले।

''थानेदार से कह दो।''

''पुलिसवाले व्यर्थ ही घर भर के लोगों को तंग कर देंगे।''

''तंग क्या करेंगे? तुम थाने में जाकर उसका हुलिया लिखा दो।''

''क्या जाने वह भागकर रात भर में कहाँ से कहाँ चली गई हो?''

''जहाँ भी चली जाए। पुलिस से बचकर कहाँ रहेगी? तुम जाओ, अब ज्यादा देर मत करो।''

राजमोहन थाने की ओर जा ही रहे थे कि दुखिया उन्हें सामने से भागती हुई नजर आई। तेजी से मोटर दौड़ाकर उन्होंने उसे पकड़ लिया और कहा, ''गहने का डब्बा कहाँ रख आई?''

दुखिया चुपचाप सिर झुकाकर खड़ी रही।

राजमोहन ने उसे जोर से एक झटका देते हुए कहा, ''तुम्हीं से पूछ रहा हूँ। उसमें पाँच हजार के गहने थे। उस डब्बे को किस बाप के घर रख आई?''

दुखिया पत्थर की प्रतिमा बनी उसी तरह चुपचाप खड़ी रही। मगर इस बार उसके पैर के नीचे से जमीन खिसक गई, आँखों के आगे सारी चीजें धूमिल होती हुई नजर आने लगीं।

राजमोहन ने धक्के देकर उसे मोटर से टकराते हुए कहा, ''बिना हंटर खाए तुम बोलोगी नहीं। चलो थाने में, चलकर गहने चुराने का मजा चखा देता हूँ।''

थानेदार के सामने पहुँचते ही दुखिया को उसके हवाले करते हुए राजमोहन ने कहा, ''लीजिए साहब! आप इसको पहचानते हैं या नहीं?''

''नहीं साहब!'' थानेदार ने हैरानी में पड़कर पूछा, ''ये हैं कौन? इन्हें तो मैंने कभी नहीं देखा।''

''कभी नहीं देखा!'' राजमोहन विचित्र भाव से हँसता हुआ बोला, ''इसको तो आप हंटर लगा चुके हैं। याद नहीं है? आज से कुछ ही महीने पहले इसी जगह आपने बेहोश कर दिया था। अब पहचाना?''

''अच्छा!'' कहते हुए थानेदार का मुख विवर्ण हो गया। उसने फिर पूछा, ''आज क्या मामला है?''

''यही तो बताने आया हूँ।'' गला साफ करते हुए राजमोहन ने कहना शुरू किया, ''उसी दिन से यह हमारे ही घर में रहती थी। काम-धंधा करती और मजे से खाती-पीती थी। कभी इसको किसी बात की तकलीफ नहीं हुई। कल रात की बात है कि यह चुपचाप पाँच हजार के गहने चुराकर चंपत हो गई। अभी जब मैं आपके यहाँ आ रहा था तो इसे भागते हुए देखा और पकड़कर आपके यहाँ ले आया हूँ। अब चाहे जिस तरह हो, इससे पता लगाइए कि गहने का डब्बा यह कहाँ रख आई है?''

थानेदार ने कहा, ''पाँच हजार के गहने! कहाँ से गायब हुए?''

''हाँ साहब!'' राजमोहन ने कहा, ''सब सोने ही के थे, चाँदी का एक भी नहीं। पूरे पाँच हजार का माल है। मेरी स्त्री के कमरे से गायब हुए हैं।''

''चलो जी, इसे हवालात में बंद करो।'' कहकर थानेदार ने एक सिपाही को बुलाया। दुखिया हवालात में बंद कर दी गई।

थानेदार ने राजमोहन का बयान लिख लिया और कहा, ''जरूरत पड़ने पर मैं आपके घर पर भी आ सकता हूँ, अगर आप बुरा न मानिए तब!''

''नहीं साहब!'' राजमोहन ने दस-दस रुपए के दो नोट थानेदार के हाथों पर रखते हुए कहा, ''इसमें बुरा मानने की कौन सी बात है! आप जरूर आइए।''

: सात :

राजमोहन भोजन करके उठे ही थे कि नौकर ने खबर दी, ''सरकार! थानेदार साहब आए हैं।''

एक कुरता पहनकर वे चटपट नीचे उतर आए। थानेदार ने कहा, ''साहब! ऐसा चोर तो मुझे आज तक कोई नहीं मिला। मामला कुछ दूसरा ही मालूम पड़ता है।''

''क्यों? उसने क्या कहा?''

''उसने तो बिना किसी तरह की हिचकिचाहट के ही चोरी कबूल कर ली है।''

''सचमुच।''

''हाँ साहब! मैंने पूछा भी कि तुम्हारे मालिक कहीं तुम पर झूठा इलजाम तो नहीं लगा रहे हैं? तो उसी तरह आँखों में आँसू भरकर वह बोली कि मेरे सामने आप उन्हें झूठा मत बनाइए। मैंने सचमुच चोरी की है, मुझे जेल भिजवा दीजिए या फाँसी पर लटका दीजिए।''

राजमोहन का हृदय थर्रा उठा। अपने को सँभालते हुए वे बोले, ''अच्छा! और यह नहीं बताया कि डब्बा कहाँ रख आई?''

कहती है कि रात में जब मैं सड़क पर चली आ रही थी तो दो-तीन आदमियों ने मिलकर मुझसे डब्बा छीन लिया।

''तो अब क्या होगा?'' राजमोहन ने घबराकर पूछा।

''होगा क्या?'' थानेदार ने गंभीर भाव से कहा, ''मेरा तो विश्वास है कि दुखिया ने यह चोरी नहीं की है। उसका चेहरा बता रहा है कि वह बिलकुल बेकसूर है। यह काम किसी दूसरे का है। आपके यहाँ और भी कोई रहती है?''

''है, क्यों नहीं।''

''आप उसे जरा मेरे सामने तो लाइए।''

उसी समय लीला बुलाई गई। थानेदार के सामने आते-आते वह पसीने में डूब सी गई, उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। थानेदार ने एक बार उसके चेहरे पर निगाह डाली और बिना कुछ पूछे तड़ातड़ हंटर लगाना शुरू कर दिया। लीला जोर-जोर से चिल्लाने लगी। थानेदार ने उसके मुँह पर जोर से एक तमाचा मारते हुए कहा, ''जो पूछता हूँ, उसका सच-सच जवाब दे, नहीं तो खाल उतार लूँगा।''

लीला ने बिना कुछ पूछे ही कह दिया, ''हाँ सरकार! मैंने ही गहने वाला डब्बा छिपा रखा है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थानेदार ने पूछा, ''कहाँ छिपा रखा है? बता चलके।'' वह थानेदार के साथ गई और मकान के पीछेवाली एक फुलवाड़ी से डब्बा ले आई। वहीं उसने जमीन के नीचे गाड़कर छिपा रखा था।

थानेदार ने उसके हाथों में हथकड़ी डालते हुए पूछा, ''क्यों तुमने ऐसा काम किया?''

''डाह के मारे'', लीला ने रोते हुए जवाब दिया, ''केवल डाह के मारे मैंने ऐसा किया।''

''किसकी डाह से?''

''दुखिया की डाह से।''

''अच्छी बात है, अब चलो जेल में तब इस डाह का मजा पा जाओगी'', कहकर थानेदार ने अपने सिपाहियों को आज्ञा दी, इसकी कमर में रस्सा बाँधकर ले चलो।

जाते समय राजमोहन ने कहा, ''थानेदार साहब! मेरी स्त्री इससे एक मिनट के लिए मिलना चाहती है।''

''अच्छी बात है,'' कहकर थानेदार ने आज्ञा दे दी।

लीला उसी तरह बँधी-बँधाई सुलोचना के सामने खड़ी थी। सुलोचना ने आँखों में आँसू भरकर पूछा, ''वह बात भी तो तुमने डाह के मारे ही कही थी न, लीला?''

''हाँ सरकार!'' कहकर लीला रो पड़ी।

''अच्छी बात है।'' उसकी ओर से मुँह फेरते हुए सुलोचना ने कहा, ''यह उसी पाप का फल तुम्हें मिला है। जाओ, अपना मुँह काला करो, नरक में जाकर सड़ती रहो।''

दुखिया ज्यों ही हवालात के कमरे से निकली, त्यों ही सुलोचना उसके पैरों पर गिरकर रोने लगी। राजमोहन उसी जगह अपराधी की तरह सिर झुकाए चुपचाप खड़े थे।

दुखिया ने झटपट अपने पैर छुड़ाते हुए सुलोचना को गले लगा लिया और रोते ही रोते कहा, ''यह आप क्या कर रही हैं?''

''मुझे क्षमा करो, दुक्खो बहिन!'' सुलोचना उसी तरह रोती हुई बोली, ''मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया।''

''मैं इसका दंड दूँगी।'' दुखिया ने उसकी आँखों के आँसू पोंछते हुए बड़ी गंभीरता से कहा।

''दो'', कहकर सुलोचना ने सिर झुका दिया।

''यह नहीं'', उसके गले से लिपटकर दुखिया ने कहा, ''इसके दंड में मुझे वही तसवीर चाहिए।''

सुलोचना के भीगे हुए अधरों पर मुसकराहट छा गई। उसने भाव भरी आँखों से एक बार अपने पति की ओर देखा। उसी समय दुखिया भी राजमोहन के चरणों पर गिर पड़ी।

सा/अ

कविता

दो कविताएँ

● रवींद्र स्वप्निल प्रजापति

बरगद से प्यार करना

तुम एक बरगद से प्यार करोगी
उसके तने से सिर टिकाकर सोचोगी!
जिंदगी भर इसकी छाँव में गुजारना
जिंदगी बिताते हुए इसी में मिल जाना

बरगद संसार की राजनीति है
तने हैं—लड़की के प्रेमियों की तरह आस-पास
और वक्त का जंगल भी है
बरगद को प्यार करना और उसमें मिलना
तुम्हारी कल्पना का जादू है
जिसमें बहुत सी शाखाएँ टूटकर सूख गईं
किसी बरगद में मिलना एक त्रासदी है

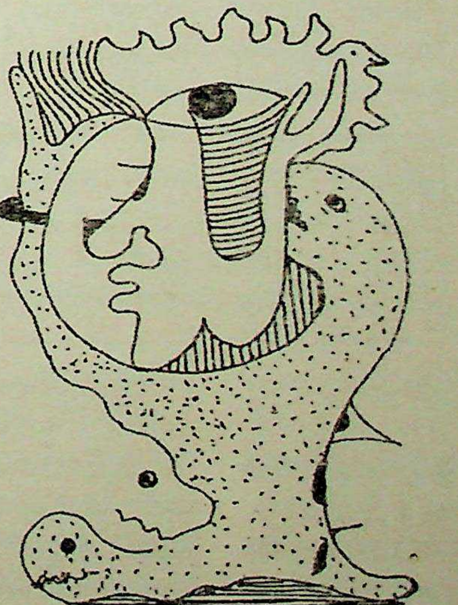

जिसे खुद बरगद पत्ती की तरह गिराता है
कभी एक-एक और कभी-कभी भरपूर। □

शाम और बरगद

शाम और बरगद फिर मिले
दु:ख के काले आँसुओं से बरगद भीग रहा था

शाम हर रोज आती
उसका रंगीन शॉल काला हो जाता

प्रेम के अभिशाप की तरह
बरगद भी भीगता है—वह भी भीगती है।

सा/अ

भोपाल
swapnil.ravi@gmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

स्वामी विवेकानंद की पुण्य स्मृति में

बाल्मीकि प्रसाद सिंह

महान् व्यक्ति कभी-कभी ही जन्म लेते हैं। लेकिन हमारे देश के लिए यह सौभाग्य की बात है कि १९वीं सदी के एक ही दशक में तीन महान् व्यक्ति भारत की धरती पर अवतरित हुए : स्वामी विवेकानंद १२ जनवरी, १८६३ को, रवींद्रनाथ टैगोर ४ मई, १८६१ को और महात्मा गांधी २ अक्तूबर, १८६९ को। भारतीय इतिहास का यह अद्‌भुत स्वर्णिम संयोग था। ये तीनों महापुरुष आधुनिक भारत में अपने-अपने क्षेत्र के उन्नायक बने : स्वामी विवेकानंद धर्म और अध्यात्म के क्षेत्र में, गुरुदेव टैगोर साहित्य में और महात्मा गांधी स्वाधीनता संग्राम एवं सार्वजनिक जीवन में। इन तीनों महापुरुषों में स्वामी विवेकानंद प्रथम नायक थे, जिन्होंने अपने समय में तथा परवर्ती काल में भारतीय चेतना को सबसे ज्यादा प्रभावित किया।

स्वामी विवेकानंद का मूल नाम नरेंद्रनाथ दत्त था। उनका जन्म १२ जनवरी, १८६३ को कलकत्ता के एक हिंदू परिवार में हुआ। वे सिर्फ ३९ वर्ष की छोटी सी उम्र लेकर आए थे, मगर इसी में उन्होंने हिंदू धर्म की सहिष्णुता को नया अर्थ दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने वेदांत दर्शन के सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार करने के लिए और भारत के कोने-कोने में उत्कृष्ट शिक्षा एवं चिकित्सा उपलब्ध कराने के लिए रामकृष्ण मिशन जैसी आदर्श संस्था की स्थापना की।

शिक्षा : स्नातकोत्तर परीक्षा में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान (राजनीति विज्ञान), पटना विश्वविद्यालय, ऑक्सफोर्ड।

वर्ष १९६४ में भारतीय प्रशासनिक सेवा में नियुक्त, 'जवाहर लाल नेहरू फेलोशिप' तथा 'क्वीन एलिजाबेथ फेलोशिप'। १९९८ में राष्ट्रपति द्वारा उत्कृष्ट लोक सेवक के रूप में 'गुलजारी लाल नंदा पुरस्कार' तथा २००३ में दलाई लामा द्वारा 'मैन ऑफ लेटरस' से सम्मानित।

भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के अपर सचिव, संस्कृति सचिव तथा गृह सचिव रहे। विश्व बैंक में भारत भूटान, बँगलादेश और श्रीलंका का प्रतिनिधित्व किया। केंद्रीय तिब्बत विश्वविद्यालय, सारनाथ के ६ वर्षों तक कुलाधिपति भी रहे।

लेखन : 'परिवर्तन की समस्या', 'पूर्वोत्तर भारत का अध्ययन', 'भारतीय संस्कृति', 'संस्कृति राज्य', 'कलाएँ और उनसे परे', 'बहुधा', '९/११ के बाद की दुनिया'।

संप्रति : सिक्किम के राज्यपाल।

स्वामी विवेकानंद के योगदान को परस्पर जुड़े तीन आयामों में देखा जाना चाहिए। पहला, उन्होंने धर्म को केंद्रीय स्थान पर प्रतिष्ठापित किया और उसे सर्वथा नया अर्थ दिया। दूसरा, उन्होंने विभिन्न संप्रदायों में आपसी सद्‌भाव पर विशेष बल दिया। और तीसरा, उनका शिक्षण आज भी पूरी तरह प्रासंगिक है।

स्वामी विवेकानंद के ही समकालीन थे, जर्मनी के सुप्रसिद्ध विचारक फ्रेडरिक नीत्शे (१८४४-१९००), जिन्होंने घोषणा की थी कि ईश्वर मर चुका है। परवर्ती विद्वानों और लेखकों ने इसी को दोहराते हुए कहा कि अब लोगों को ईश्वर में पहले जैसी दिलचस्पी नहीं रह गई है। यह कहा गया कि मानवीय प्रवृत्तियों को संचालित करने में धर्म से अधिक विज्ञान और बौद्धिकता निर्णायक भूमिका निभाती हैं। यह स्वामी विवेकानंद को स्वीकार नहीं था; इसलिए उन्होंने धर्म को बिलकुल नया अर्थ दिया।

स्वामी विवेकानंद ने यह शिक्षा प्रदान की कि ईश्वर की सेवा का वास्तविक अर्थ गरीबों की सेवा है। उन्होंने साधुओं-पंडितों, मंदिरों-मसजिदों, गिरिजाघरों, गोपाओं और सत्राओं के इस पारंपरिक विचार को पूरी तरह नकार दिया कि धार्मिक जीवन का उद्‌देश्य संन्यास के उच्चतर मूल्यों को या मोक्ष को पाना है। इसके बजाय उन्होंने निर्धन और दीन-हीन लोगों की सेवा पर ज्यादा जोर दिया। उन्होंने इस प्रत्यक्षसिद्ध सत्य को एक नया शब्द दिया, 'दरिद्र नारायण', यानी ईश्वर का निवास गरीबों और असहाय लोगों में होता है। इस 'दरिद्र नारायण' शब्द ने सभी आस्थावान स्त्री-पुरुषों में कर्तव्य की भावना जगाई कि ईश्वर की सेवा का अर्थ निर्धन-असहाय प्राणियों की सेवा है।

गौतम बुद्ध की तरह स्वामी विवेकानंद ने भी मानव के आचरण में बौद्धिकता की महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित किया। उनका मत था कि हम जो भी काम करें, वह युक्तिसंगत हो, तर्क प्रमाणित हो। मनुष्य को एक ऐसे धर्म के साथ रहना सीखना होगा, जो बौद्धिक चेतना और तार्किकता की आत्मा को प्रश्रय दे।

धर्म का पथ ऐसा टिकाऊ विश्वास का पथ होना चाहिए, जो प्रत्येक व्यक्ति के बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास पर जोर दे, चाहे वह किसी जाति, प्रजाति, समुदाय या संप्रदाय का क्यों न हो। कोई भी धर्म, जो एक आदमी को दूसरे से अलग करता हो या विशेषाधिकार या शोषण या युद्ध का समर्थन करता हो, प्रशंसनीय नहीं हो सकता।

अन्य किसी भी संत-महात्मा की तुलना में स्वामी विवेकानंद ने इस बात पर ज्यादा जोर दिया कि प्रत्येक धर्म गरीबों की सेवा करे और समाज के पिछड़े लोगों की अज्ञानता, दरिद्रता और रोगों से मुक्ति का उपाय करे। ऐसा करते समय पुरुष और स्त्री में एक मत और दूसरे मत में, एक पेशे और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे पेशे में कोई भेदभाव न करे। दरअसल, उन्होंने गरीबों की सेवा को पूजा का मान दिया। उस उच्च स्तर पर पहुँचने के बाद विभिन्न मतों के बीच आपसी सद्भाव पहली शर्त हो जाया करती है। इस प्रकार का वातावरण मानव-मानव के बीच सामंजस्य की भावना की अपेक्षा करता है। शत्रुता या वैमनस्य के शमन के लिए हमें घृणा का परित्याग करना होगा और सभी के लिए प्रेम तथा सहानुभूति जगानी होगी।

स्वामीजी की प्रार्थना थी—''मैं बार-बार जन्म लूँ और हजारों कष्टों को झेलूँ, जिससे विभिन्न जातियों-नस्लों में विद्यमान अपने दरिद्र नारायण की सेवा, उनकी पूजा कर सकूँ।''

आज किसी भी व्यक्ति का सबसे अलग, एक टापू की तरह जीना संभव नहीं रह गया है। विभिन्न मतों और विभिन्न पंथों के लोग साथ-साथ रह रहे हैं। ऐसे में जरूरी है कि लोग एक-दूसरे को समझें। उनकी जरूरतों, उनकी आकांक्षाओं को तरजीह दें और उनके धार्मिक विश्वासों तथा पद्धतियों को सम्मान दें।

स्वामीजी के आचार-विचार पर यदि हम गौर करें तो पाएँगे कि स्वामीजी अपने समय से बहुत आगे थे। उनका विचार था कि विभिन्न धर्मों-संप्रदायों के बीच संवाद हो। वे विभिन्न मतों-पंथों की अनेकरूपता को जायज मानते थे। आज तमाम विवादों और कलहों से ग्रस्त और त्रस्त विश्व के लिए स्वामीजी के विचार कितने मूल्यवान हैं, यह हम सोच सकते हैं।

स्वामी विवेकानंद ने स्पष्ट किया कि वेदांत दर्शन न तो ब्राह्मण दर्शन है, न बौद्ध, न ईसाई, न मुसलिम। यह इन सभी धर्मों का सार-तत्त्व है। ११ सितंबर, १८९३ को शिकागो के धर्म सम्मेलन में दिए गए अपने ऐतिहासिक भाषण में स्वामीजी ने स्पष्ट किया था—''ईसाइयों को न तो हिंदू या बौद्ध होने की जरूरत है, न ही हिंदुओं या बौद्धों को ईसाई बनने की जरूरत है। लेकिन प्रत्येक को दूसरों की आत्मा से जुड़ना है और अपनी व्यक्तिगत विशेषता को बरकरार रखते हुए अपनी विकास-विधि से आगे बढ़ना है।''

स्वामीजी इसे भारतीय परिप्रेक्ष्य में बहुत आवश्यक मानते थे। भारतीय जीवन-दर्शन यही है कि व्यक्ति अपने परिवेश से सर्वश्रेष्ठ तत्त्व को प्राप्त करे और उसके साथ पूरी निष्ठा से रहे। हिंदू समाज की धार्मिक अवधारणा को स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने बड़े अच्छे शब्दों में व्यक्त किया है—'जतो मत, ततो पथ', यानी जितने विचार, उतने मार्ग। स्वामीजी मानवीय आचार-विचार में अनेकन्ग को विशेष महत्त्व देते थे और उनमें एकरूपता लाने की कोशिश के बिलकुल विरुद्ध थे। वे अकसर आचार्य पुष्पदंत की ये पंक्तियाँ उद्धृत करते थे—

रुचीनां वैचित्र्यात् ऋजु-कुटिल-नाना-पथजुषाम्
नृणां एको गम्यः त्वमसि पयसाम् अर्णव इव।

(जैसे सभी नदियाँ टेढ़ा या सीधा रास्ता पकड़कर समुद्र तक पहुँचती हैं, वैसे ही रुचियों की भिन्नता के कारण लोग सरल या कठिन रास्ता भले चुन लें, मगर सबका गंतव्य एक है।)

स्वामीजी विभिन्न धार्मिक आस्थाओं में सामंजस्य स्थापित करने के पक्षधर थे और सभी को एक धर्म का अनुयायी बनाने के विरुद्ध थे। स्वामीजी कहा करते थे—''यदि सभी मानव एक ही धर्म को मानने लगें, एक ही पूजा-पद्धति को अपना लें और एक ही नैतिक स्तर का पालन करने लगें तो यह विश्व के लिए सबसे दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी, क्योंकि यह सब धार्मिक और आध्यात्मिक विकास के लिए प्राण-घातक हो जाएगा।''

स्वामीजी के आचार और विचार के दो ऐसे पहलू हैं, जो आज के भारत और विश्व के लिए बहुत उपयोगी हैं।

स्वामी विवेकानंद भारत में राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन का सूत्रपात करनेवाले महानायकों में से थे। उनके जीवन-काल में या उनके बाद स्वाधीनता संग्राम में भाग लेनेवाले तमाम भारतीयों ने उनसे प्रेरणा ली थी। रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद जैसे महापुरुषों ने लोगों को न केवल आध्यात्मिक उत्थान का मार्ग दिखाया, बल्कि उन्हें सामाजिक जीवन व्यतीत करने का तरीका भी सिखाया। गरीबों की सेवा पर ज्यादा जोर न केवल सामाजिक दायित्व का पालन है, अपितु मुक्ति का मार्ग भी है।

लोकसेवकों को प्रलोभनों से दूर रखने में हमारी असमर्थता ने भारतीय लोकतंत्र के सामने बड़ी चुनौती खड़ी कर दी है। स्वामीजी द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशन अपने स्थापना-काल से ही अपने सदस्यों की परवरिश इस तरह करता रहा है कि वे कर्तव्य-परायणता और सेवा-भावना की मिसाल बने हुए हैं। यह कैसे संभव हुआ? यह मिशन अपने प्रत्येक सदस्य के भोजन, वस्त्र, आवास और चिकित्सा संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करता है। सभी के लिए निर्धारित भोजन, वस्त्र और चिकित्सा सुविधाओं में काफी समानता है। यह अपने कार्मिकों को प्रशिक्षण और आदर्शवाद के द्वारा अभिप्रेरित (मोटिवेट) करता है। दूसरी ओर राजनीतिक पार्टियाँ हैं, जिनके पास अपने सक्रिय सदस्यों के समुचित भरण-पोषण के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। समय आ गया है कि राजनीतिक पार्टियाँ इस दिशा में रामकृष्ण मिशन से सबक लें।

आज हम ऐसी दुनिया में जी रहे हैं, जहाँ हिंसा है, घृणा है, आतंकवाद है और आत्मघाती दस्ता है। आतंकवादी अपने को नीति-संगत ठहराने के लिए धार्मिक नारों का प्रयोग करते हैं। दुनिया में बहुत से लोग हैं, जो इस बात में विश्वास करते हैं कि 'मेरा भगवान् तुम्हारे भगवान् से बड़ा है'। अगर कोई व्यक्ति गरीबों की सेवा में आस्था रखता है तो वह आतंकवादी कैसे हो सकता है। धार्मिक व्यक्ति कैसे किसी आत्मघाती दस्ते में शामिल हो सकता है।

स्वामीजी के पास ऐसे तमाम सवालों के जवाब हैं, और विभिन्न धर्मों तथा मतों के स्वतंत्र अस्तित्व के लिए समुचित तर्क भी हैं। स्वामी विवेकानंद ने विश्व धर्म सम्मेलन में बिलकुल सही कहा था—''यदि कोई सोचता है कि उसी का धर्म फले-बढ़े और दूसरों के धर्म नष्ट हो जाएँ, तो ऐसे लोगों की दुर्बुद्धि पर मुझे दया आती है। मैं उसे बताना चाहता हूँ कि बहुत जल्द ही, तमाम बाधाओं के बावजूद, प्रत्येक धर्म के बैनर पर लिखा जाएगा—'लड़ो नहीं, मदद करो', 'विनाश नहीं, सर्जना करो', 'वैमनस्य नहीं, सौहार्द और शांति'।''

स्वामी विवेकानंद देखने में सुंदर थे, विचारों में सुंदर थे और कार्यों में सुंदर थे। बिरले ही किसी व्यक्ति में सौंदर्य का यह सम्मिलन देखने को मिलता है। राई जैसा उनका छोटा सा जीवन और पहाड़ जैसा विराट् उनका कार्य पूरी मानव सभ्यता के इतिहास में प्रतिभा और कर्मठता का अद्भुत उदाहरण है।

आइए, स्वामी विवेकानंद की १५०वीं जयंती मनाते हुए हम भारत को सुदृढ़ राष्ट्र बनाने और दुनिया को रहने के लिए बेहतर जगह बनाने के लिए संकल्प-बद्ध होकर आगे बढ़ें।

राजभवन
गंगटोक-७३७१०३
सिक्किम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

कठपुतली

• रहबान अली राकेश

'चुप रह-चुप रह दैया गे-दादो दुहै छौ गैया गे
भात रान्है छौ मैया गे-चुप रह-चुप रह दैया गे
दादो छौ अनढावा तोर-दादी छौ अनढ़ैया गे
बाप पढ़ावे ला भेजतौ तोरा खढ़ैया गे
माय चाहै छौ तोहरा खातिर जल्दी से इक भैया गे···'

ओसारे पर बैठी उसकी बूढ़ी माँ गीत के अंतिम अंतरा पर खिलखिला उठी। पत्नी घूँघट काढ़कर चूल्हे के पास बैठी भात बना रही थी। सास के खिलखिला उठने से उसका लाज से छुईमुई हो जाना स्वाभाविक था। वह घूँघट के अंदर ही लजाती हुई बुदबुदाने लगी, 'धत्त! बेशर्म···खच्चर! छी! खुचखुच बच्चा! नहीं, जमाना बदल गया है, हमको भी बदलना है। उ बड़कन लोग बदलने दे तब न···।'

माँ और पत्नी की प्रतिक्रिया से बेखबर गोबरा अपनी धुन में मस्त था। वह अपनी तीन महीने की बेटी को सीने से चिपकाकर आँगन में टहलता हुआ गीत की दुनिया में मस्त था। बेटी को जब उसने गोदी में लिया था, वह जोर-जोर से रोने लगी थी। जैसे ही उसने गीत शुरू किया, बच्ची चुप होकर सो गई, मगर गोबरा का आँगन में टहलना और बच्ची को थपकी दे-देकर गीत सुनाना अभी तक जारी था।

वैसे तो उसका नाम था गोबर अली। मगर बड़े बुजुर्ग उसे अकसर गोबरा ही कहा करते। बच्चा-बुतरू और उमर में छोटों के लिए वह गोबर भैया जरूर था। गोबर अली तो सिर्फ वोटर लिस्ट में किसी ने दर्ज करा दिया था और उमर के कॉलम में पैंतीस अंकित कर दिया गया था। मगर हट्टे-कट्टे साँवले-सलोने गोबर अली की वास्तविक उमर बीस-बाईस वर्ष से अधिक नहीं थी, क्योंकि उसके वालिद रहमत अली के मुताबिक गोबरा का जन्म बहुरावा बाढ़ के दो वर्ष बाद हुआ था। बाढ़ के वर्ष तो रहमत अली के छः महीने का तीसरा बेटा कुसैन अल्ला मियाँ को प्यारा हुआ था। हुसैन जितना सुंदर और प्यारा था, उतना ही सुंदर और प्यारा नाम रखा था मौलवी साहब ने। उसकी सुंदरता और आकर्षक नाम अल्ला मियाँ को भा गया। हाँ, यह बाढ़ १९८७ में आई थी। सोनाबंग पटुवा के फुनगी तक पानी आ गया था। रास्ता, घाट सभी जलमग्न हो जाने के कारण हुसैन का डायरिया का इलाज नहीं हो पाया और···।

वो क्या कहते हैं कि दूध का जला मट्ठा फूँक-फूँककर पीता है। सो, रहमत अली भी कुछ ऐसा ही कर रहा था। अभी तो गोबरा माँ के पेट में ही था, मगर इस बार रहमत कोई ऐसी-वैसी गलती करनेवाला नहीं था। आनेवाला बच्चा चाहे बेटा हो या बेटी, वह उसे किसी भी कीमत पर खोना नहीं चाहता था। तीन बेटे और दो बेटियाँ वह पहले ही गँवा चुका है। कितने सुंदर थे वे सभी बच्चे। नाम भी कितना सुंदर रखवाया था उनका। मौलवी साहब ने किताब देखकर बाबू-बबुवान वाला नाम रखा था। मगर कोई भी बच्चा वर्ष-छह मास से अधिक टिक नहीं पाया। उनके मोहक नाम अल्ला मियाँ को ऐसा भा जाता कि फौरन उसे अपने पास बुला लेते।

इस बार रहमत सावधान था। वह अभी से ही फूँक-फूँककर कदम उठा रहा था। उसकी पत्नी जुमनी तो पति से भी ज्यादा सावधानी बरत रही थी। पीर-फकीर-ओझा-वैद्य-जंतर-मंतर, जो भी जो कुछ बतलाते, वह वैसा ही करती। यूँ कहा जाए कि संतति लोभ में दोनों दंपती कब और कैसे कठपुतली बन गए, इसका उन्हें आभास तक नहीं हो पाया। कटमौलवी बाकर ने आकर काले धागे में ताबीज बाँधकर स्वयं अपने हाथों से जुमनी के कमर में बाँधा, शुद्ध जाफरान से जंतर लिखकर सोफी साहब ने उसकी मोटी जाँघ में बाँधा, मुरगे के खून से लिखी गई ताबीज गले में लटकाई, मजार के खादिम साहब ने तरकीबें कीं, गाँव के भोलू ओझा ने भी करिया छागर लेकर चक्कर बैठाया, मस्तान तांत्रिकों ने भी अपने उपचार से मुँहमाँगा सदका और दक्षिणा बटोरा···।

ओझा का चक्कर, खादिम साहब की तरकीब, सूफी साहब व कटमौलवी बाकर के बताए उपचार के अलावा उसने टोने और टोटके का भी सहारा लिया। रहमत आधी रात को चोरी-छिपे डोम मोहल्ले में जाकर सुअर के खोभार की बत्ती चुरा ले आया और उसे सिरहाने में रखकर जमुनी को सोने की हिदायत की। डायन-जोगन की बुरी नजरों से भी बचना जरूरी था। उनके जादू-टोने को बेअसर करने के लिए जुमनी साड़ी में हरदम सूई खोंसकर रखा करती। साथ ही जुम्मा के दिन मसजिद में खीर और इतवार को विषहरी थान पर कबूतर नियमित रूप से भिजवाया करती। ऐसा करने से वह स्वयं को जिन्न बाधा, भूत-प्रेत और बुरी नजरों से सुरक्षित समझती। आनेवाले बच्चे की सुरक्षा के लिए मौलवी साहब ने जो विर्द और तस्बीह बताया था, उसे वह प्रत्येक नमाज के बाद जपना नहीं भूलती।

दिन-महीने के पूरा होते ही जुमनी को दर्द का आभास हुआ। उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुपके से ये बात अपनी सास को बताई। सास ने रहमत के कान में कुछ फुसफुसाकर कहा और रहमत गाँव की चमाईन के घर की ओर दौर पड़ा। 'तू फिकिर मत कर रहमत। इबेर ऐसा-वैसा कुछ नै होगा—भोलू भगैत का पजगोपाली सब ठीक कर देगा, मगर हम भी इबेर नाया साड़ी आर एक ठो पाठी लेकर छोड़ेंगे···।' रहमत व्यग्र होता हुआ बीच में ही बोल पड़ा, 'तू जे माँगेगी से मिलेगा—बेटा हो कि बेटी, कोनो फड़क नै पड़ता—दुआ कर कि हमरे वंश बनल रहे···।'

रहमत किसी तरह का कोई जोखिम उठाना नहीं चाहता था। उसने आस-पड़ोस में भनक तक लगने नहीं दी कि उसके घर में क्या हो रहा है। भनक लग जाती तो औरतों का हुजूम लग जाता। अब उन औरतों में किसकी नजरें कैसी होती। उनमें से कोई डैन-जोगिन न हो, इस बात की क्या गारंटी थी! प्रसूती कराने के लिए तो चमाईन दीपा और उसकी माँ ही काफी थी, फिर दूसरों को खबर करके खतरा मोल लेने की क्या जरूरत।

रहमत मन-ही-मन कबूलती और विर्द करने में खोया हुआ था। दीपा बाहर निकली और चहकती हुई बोली, 'मू मीठा करा रहमत, हो गया प्रसौती, बेटा है बेटा, काफी खाबसुंदर, अन्हीर घर में उजैत।' दीपा के स्वर कान से टकराते ही रहमत हड़बड़ा उठा। उसे भोलू ओझा की बात याद आई। लोक-लाज की परवाह किए बिना सामने रखे गोबर की ढाकी उठाकर वह जच्चा खाने की ओर दौड़ पड़ा। उसने गोबर की ढाकी से बच्चे को ढँक दिया। उसकी बूढ़ी माँ ने जुमनी को कपड़े से ढाँपते हुए बेटे को गल्ली को ओर इशारा किया। रहमत को इशारा समझने में देर न दगी। वह गली की ओर लपका और वहाँ से मासिक धर्म के दिनों वाले फटे-चिथड़े लाकर गोबर की ढाकी के ऊपर ओढ़ा दिया। अब वह आश्वस्त था कि कोई भी शक्ति ऐसी गंदी जगह पर रहनेवाले बच्चे को अपने पास नहीं बुलाएगी। तभी उसे पत्नी का खयाल आया और उसकी सुधि लेने के लिए वह अपने विश्वस्त रिश्तेदार औरतों को बुलाने के लिए जाने लगा, लेकिन माँ ने उसे तत्काल ऐसा करने से रोक दिया।

पाँच दिनों तक जुमनी जच्चाघर से बाहर नहीं निकली, न ही किसी को बच्चे के दर्शन कराए। बस सिर्फ पदमा चमाईन को ही घर के अंदर जाने की इजाजत थी। पदमा अंदर जाती, बच्चे का तेल-काजल करती, बचैती की पेड़ू और कमर ससारकर गुड़-अदरक का काढ़ा खिलाती, फिर सीधा-चावल लेकर अपने घर चली जाती। रहमत को जो निदेश मिला था, प्रसूती होते ही निदेशानुसार उसने प्रसूती घर के ओसारे की ठाट पर बेर और नागफनी की डाली लाकर टाँग दी थी, नीबू और मिरचाई को धागे से बाँधकर लटका दिया था, बीच आँगन में बाँस का खूँटा गाड़कर उस पर मौलाना बाकर की ताबीज बाँध दी थी। खादिम साहब ने जो मिट्टी दी थी उसे बचैती को सिरहाने में रखकर सोने की हिदायत भी उसने कर दी थी···।

पाँच दिनों तक जुमनी जच्चाघर से बाहर नहीं निकली, न ही किसी को बच्चे के दर्शन कराए। बस सिर्फ पदमा चमाईन को ही घर के अंदर जाने की इजाजत थी। पदमा अंदर जाती, बच्चे का तेल-काजल करती, बचैती की पेड़ू और कमर ससारकर गुड़-अदरक का काढ़ा खिलाती, फिर सीधा-चावल लेकर अपने घर चली जाती। रहमत को जो निदेश मिला था, प्रसूती होते ही निदेशानुसार उसने प्रसूती घर के ओसारे की ठाट पर बेर और नागफनी की डाली लाकर टाँग दी थी, नीबू और मिरचाई को धागे से बाँधकर लटका दिया था, बीच आँगन में बाँस का खूँटा गाड़कर उस पर मौलाना बाकर की ताबीज बाँध दी थी।

इन सब टोटकों के रहते भला भूत-प्रेत की क्या मजाल थी जो बच्चे तक पहुँच पाता। फिर भी बिट्टा-बाड़ी को बँधवाना जरूरी था। इसके लिए वह मौलवी उलफत की बात कैसे टालता। मौलवी उलफत ने काला धागा मँगाया और उस धागे से बासगीत की नामी की, रहमत से धागे की लंबाई नापने को कहा। एक सौ इक्कावन हाथ—बड़ी सावधानी से रहमत ने नापा था। मौलवी साहब ने धागा उसके हाथ से ले लिया और उसे एक बधना पानी लाने को कहा। वह फौरन पानी ले आया। उलफत साहब ने कुछ पढ़ते हुए पानी के छींटे धागे पर मारे और पुनः रहमत से धागे की लंबाई नापने को कहा। एक सौ बीस हाथ—रहमत हतप्रभ, 'बीस हाथ! यानी बीसा गया न! जिन्न बाधा-खतरनाक-मुश्किल।' मौलवी उलफत चिंतामग्न हो गए।

रहमत सहम उठा, जैसे भी हो, जिन्न के चक्कर से निजात पाना जरूरी था। वैसे खर्च तो लंबा था, मगर वंश को कायम रखने के लिए कुछ भी किया जा सकता था, भले ही रहमत का एक बीघा जमीन सुदमरना ले गया, मगर जिन्न के चक्कर से उसे मुक्ति मिल गई, बिट्टा-बाड़ी भी बाँधा चला गया। मौलवी उलफत ने घर के चारों कोने में चार काँटी ठोककर चौहद्दी बाँध दीं, जिन्न को बोतल में बंद करके उसे जलाया, फिर उसके कफन-दफन और चलीसा का खर्चा-पानी लेकर प्रस्थान कर गए।

रात को भोलू ओझा का चक्कर बैठा। भोलू ने बीच आँगन के थोड़े से भाग को गोबर-माटी से पोतकर चक्कर बैठाया। अरहुल के फूल, पान-सुपाड़ी, लड्डू, धूप-अगरबत्ती, चावल और केला इत्यादि चक्कर पे रखकर गोबर का गोइठा सुलगाया और उस पर धुमन का छिड़काव किया···चट्···चट्···चटाख करता हुआ धुमन का धुआँ और सुगंध फैलने लगी, इसके साथ ही भोलू का गोचर (ओझा का गीत) शुरू हो गया।

'आगा हमू जानत यै बिसहरी ऐतै अँगना···कि च न न (चंदन) लियै लि प तै अँगना कि च-न-न लियै···

आगा हमू जानत यै भैरवी ऐतै अँगना···कि क पू र लियै लि प तै

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अँगना कि क-पू-र लिये…''

देखते ही देखते भोलू ओझा के शिष्य की देह पर भैरवी सवार हो गई। वह झूमता हुआ सिसकारी मारने लगा, हाथ-पाँव भाँजने लगा। भोलू ने रहमत की माँ को इशारा किया। माँ हाथ जोड़कर विनती करने लगी, 'माय…हमरे बेटवा के वंस को जिंदा रख माय, गोड़ लागै छिपौ…दया कर माय…।'

'ए भगैत…कारिणी को बुला भगैत…जल्दी कर…।'

भोलू ने फौरन बच्चा और बचैती को आँगन में बुला लिया। उनके आते ही भोलू के शिष्य की देह पर सवार भैरवी नीम के पत्ते से बच्चा और बचैती को झारती बड़बड़ाने लगी, 'करिया छागर दो जोड़ा धोती, दो जोड़ कबूतर।' रहमत ने फौरन स्वीकृति में सिर हिलाया। भैरवी झूम उठी—भगैत गौबर के ढाकी बनाकर तू जीत गया गोबर यानी गोबर नाम रखना, बिझरा नाम होगा, किसी का नजर नै लगेगा, मरछिया बच्चा है, सो तेल-सीनूर पहनाकर कान छेदा देना, सात घर घुमाकर भीख भी मँगा देना और सात मास के भीतर जिसका घर में लड़की जनम ले, उस लड़की से गोबरा का ब्याह करा देना, लड़की वाला लड़की नै देगा तो उस पर बज्जर गिरेगा, गोबरा का ब्याह हो जागा तो किसी का सुहाग हो जागा, भला किसी का सुहाग कौन उजाड़ेगा, समझे…क्या समझे…समझे कि नहीं…।

भोलू ओझा को ढेर सारे आदेश देकर उसके शिष्य की देह से भैरवी चली गई और रहमत का परिवार आश्वस्त हो गया।

सुबह मोहल्ले के बच्चों को बुलाकर बसिया भात और पटुवा साग खिलाने के बाद जुमनी ने स्वयं अपने हाथ से सभी बच्चों के सिर में चुहचुह तेल और आँखों में काजल पोतकर छट्ठी की रस्म को अदा किया। रहमत के घर छट्ठी की भनक लगते ही गाँव के सोफी जी फटी-पुरानी किताब लेकर आ धमके, 'रहमत! इस बार तुम्हारे बेटे का तारीखी (ऐतिहासिक) नाम रखूँगा। ये देख, किताब में कितना अच्छा-अच्छा नाम लिखा हुआ है, पसंद कर…।

'रहने दिजये सोफीजी, इबेर आप से नै पूछा आर रातये बच्चा का नाम रख दिया, मगर आपका इनाम-सदका है, यह लिजये अउर बच्चा को दुआ दिजये, हमको किताबी नाम नै धारता है…।'

सोफी साहब ने तो अपना सदका लपक लिया, मगर रहमत को घृणा और तिरस्कार भाव से घूरता हुआ गुर्राया 'बद्दीन'। रहमत उनकी अनसुनी करता हुआ मसजिद की ओर दौड़ पड़ा, क्योंकि बच्चे की छट्ठी के चक्कर में उसकी फजिर की नमाज कजा हो गई थी।

(सा अ)

मिड् लैंड के पास
वार्ड नं. २६, अररिया-८५४३११
(बिहार)

साहित्य अमृत

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के पत्रांक ११०१४/८/९६-रा.भा. (प) द्वारा
केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/ सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/
स्वायत्त निकायों/संस्थाओं आदि के लिए
एक विशिष्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका के रूप में अनुशंसित एवं अनुमोदित।

एक अंक : बीस रुपए
वार्षिक : दो सौ पचास रुपए (२५०/-)

राजभाषा हिंदी तथा सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए संस्थाओं का सहयोग अपेक्षित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार कविताएँ

131871

मूल : **कुसुमाग्रज**
अनुवाद : **विद्या केशव चिटको**

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar 249404 (U.A.)

रीढ़

सर! पहचाना मुझे?
बारिश में भीगता आया कोई
कपड़े सने कीचड़ से और बालों में पानी
बैठा! छन भर सुस्ताया। बोला, नभ की ओर देख,
गंगा मैया पाहुन बनकर आई थीं
झोंपड़ी में रहकर लौट गई।
नैहर आई बेटी जैसी चार दीवारों में फुदकती रही
खाली हाथ वापस कैसे जाती?
घरवाली तो बच गई
दीवारें ढही, चूलहा बुझा, बरतन-भांडे जो था सब चला गया।
प्रसाद रूप बचा है नैनों में थोड़ा खारा पानी
जोरू को साथ ले सर! अब लड़ रहा हूँ
ढही दीवार खड़ी कर रहा हूँ,
कादा, कीचड़ निकाल फेंक रहा हूँ।
अपनी जेब की ओर जाते हाथ देख
वह हँसते-हँसते उठा—
बोला—सर! पैसे नहीं चाहिए।
जरा अकेलापन महसूस हुआ
घर-गृहस्थी चौपट हो गई पर
रीढ़ की हड्डी मजबूत है सर!
पीठ पर हाथ धर आशीर्वाद दें—
'लड़ते रहो!'

□

भीख

भीख आई है भीख
आँखें पोंछ! जरा देख मेरी लाडो
कुछ तो समझ
तेरे लिए लुगरी
मेरे लिए कुरता

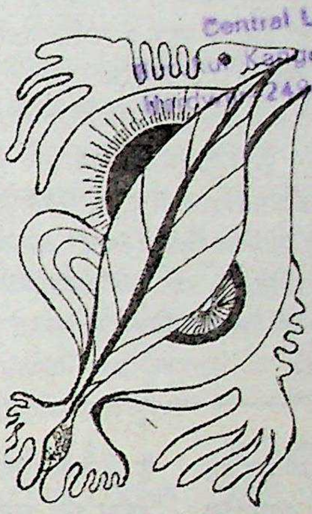

अनाज आया है, पैसा आया है
'साब' की तरफ से 'संदेसा' आया है
'उसके' खातिर भी।
अपनी झोंपड़ी पर आरी-कुल्हाड़ी का वार होना है
रास्ते पर खून की कै कर
पेट का गर्भ गिराना है
आँखें पोंछ मेरी लाडो
कुछ तो समझ
डबलरोटी आई है, बिसकुट आए हैं
किराया आया है, चूलहा आया है
कंबल आया है, गूदड़ी आई है
भलाई खातिर फूल आया है
बदौलत इसके तुझे कलेजे के टुकड़े को दूर करना है
मवाली के बोझ तले
लाडली जवान बेटी कुरबान करनी है।

□

पुतले कृतज्ञ हैं

तुम्हारे हार मिले
और सुने जयघोष मैंने
पाने की कल्पना भी नहीं थी
ऐसा सैनिकी सैल्यूट भी मिला।
सूली पर चढ़ते
गृहस्थी की होली करते
खून गिराते।
मेरा एक सुख सपना था
कि मिले
रंक को सिर छुपाने के लिए छप्पर
नंगे के तन पर हो वस्त्र
भूखे पेट के लिए भोजन
और—आजादी की सफलता।
नारे थम जाने पर
घोषणाएँ शांत हो जाने पर
दीप बुझ जाने पर
आधी रात की नीरवता में
आया गिद्धों का जत्था
और उन सपनों के एक-एक टुकड़े को
चोंच में दबाकर चला गया।

□

केक का टुकड़ा

होटल की छत से
उसने बड़े दयाभाव से
चॉकलेट केक का बड़ा टुकड़ा
फेंका राह के कुत्ते की ओर
कुत्ता लपका
होटल की दीवार में
दुबका चीकट चिथड़ों में लिपटा
वह छोरा भी
दौड़ा जी जान से
कुत्ते को पीछे छोड़
काबिज किया उसने
वह टुकड़ा
ठूँस लिया मुँह में।
छत पर खड़ा दयार्द्र दाता
हाथ का शैंपेन जाम
होंठों से लगाते बुदबुदाया—
'स्साऽऽले! ये हरामी छोरे'''

सा/अ

२६०७, आयरन फोर्ज रोड
हर्नडन
वर्जीनिया-२०१७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक उपन्यास-७

सीढ़ियाँ

● **शैलेश मटियानी**

श्री शैलेश मटियानी हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार थे, उनका जन्म १४ अक्तूबर, १९३१ को अल्मोड़ा जनपद के बाड़ेछीना गाँव में हुआ। उनकी शिक्षा हाई स्कूल तक हो पाई, परंतु हिंदी साहित्य में उनका अनन्य योगदान है। उनके तीस कहानी संग्रह, इकतीस उपन्यास तथा नौ अपूर्ण उपन्यास, तीन संस्मरण पुस्तकें, निबंधात्मक एवं वैचारिक विषयों पर बारह पुस्तकें, लोक-साहित्य पर दस पुस्तकें, बाल साहित्य की पंद्रह पुस्तकें प्रकाशित हैं। उन्होंने 'विकल्प' एवं 'जनपक्ष' पत्रिकाओं का संपादन किया। उनकी अनेक कृतियाँ पुरस्कृत हुईं तथा 'फनीश्वर नाथ रेणु पुरस्कार', 'साधना पुरस्कार', उ.प्र. हिंदी संस्थान का 'लोहिया सम्मान', केंद्रीय हिंदी निदेशालय का 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' सहित उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। उनका महाप्रयाण २४ अप्रैल, २००१ को दिल्ली में हुआ।

कंचना के कठोर स्वर से कांति अपने को खिसियाई सी महसूस कर रही थी। विशेषकर यह सबूत दे सकने में अपनी असमर्थता कि उस दिन क्यों इतना दुख नहीं हुआ था, जितना आज हुआ। कांति को कुछ सूझ नहीं रहा था। कंचना उससे उम्र में मुश्किल से दो-ढाई वर्ष ही तो बड़ी होगी। उसकी आवाज में देखे और भीगे हुए को सहज ढंग से स्वीकार कर सकने की प्रखरता है।

''तुझे नाच कौन सिखाता है, शारदा बाबू या पद्मा बहनजी?''

''कल तो उन लोगों ने मेरा सिर्फ टेस्ट ही लिया था, दीदी।'' प्रसंग बदल जाने से कांति ने एक युक्ति अनुभव की, ''वैसे उस राधा-कृष्ण-नृत्य की प्रैक्टिस तो मैंने तुम्हारे साथ भी कर रखी थी, वत्सला दीदी के साथ भी और विद्यापीठ में भी।''

''असल में तेरी पकड़ बहुत अच्छी है। ऐसी पकड़ बहुत गहरी रुचि होने पर ही आ सकती है। अगर कोई ढंग से सिखाने वाला तुझे मिल जाए तो फिर तेरे मुकाबले का इस शहर में तो कोई नहीं रह जाए।''

''बस, तुम तो बनाने लगी हो दीदी। मुझे तो अपने को देखकर खुद ही शर्म महसूस होती है।''

''अरे भई, मोरनी भी तभी शरमाती होगी अपने को देखकर, जब मोर के साथ नाचने को जी करता होगा? अच्छा छोड़, एक बात सुन। तुझे हमारी दोस्ती कबूल है या नहीं?''

''मैं तो दीदी, हमेशा तुमको चाहती रही हूँ और इज्जत भी करती रही हूँ।''

''अरे यार, छोड़ सब चूतिया पंथी की बातें। इज्जती-बेइज्जती करने वाले तो सुसरे भतेरे मिल जाएँगे। देख, तू भी अब सयानी होती जा रही है। तू कभी ऐसा महसूस नहीं करती कि कोई ऐसा भी होना चाहिए, जिससे अपने दुख-सुख की बातें की जा सकें?''

कांति कोई उत्तर नहीं दे सकी।

कंचना कहती रही—''लड़कों को तू देखती है, कैसे टोलियाँ बाँधे घूमते हैं? उनके बीच में एक-दूसरे के इरादे साफ होते हैं, बातें साफ होती हैं, इसलिए इकट्ठे सीटियाँ बजाते और ठिठोलियाँ करते हुए घूमते हैं। कोई लड़का किसी लड़की से प्यार करता है, तो दोस्त को बताते हुए घबराता नहीं। मगर हम लड़कियों में तो यह है कि कुछ करें तो बस, अपनी छाती में कब्र बनाकर रखने में जोर रहता है। डर यह कि दूसरी से कह दें, तो औरत की जात बड़ी चुगलखोर होती है। हाय-तौबा मचाते देर नहीं लगती। ···मगर कांति, तू भरोसे की लड़की है। तेरी आँखों में तो गहरापन है, उसमें तू बहुत सी बातों को समेटे रह सकती है। तू सोच रही होगी कि कंचना दीदी तो बड़ी-बूढ़ियों की सी बातें करती हैं, मगर तू भी थोड़े ही दिनों में जान जाएगी कि औरतें क्यों बहुत जल्दी ही भजन-कीर्तन की बातें करने लगती हैं। हमारे प्रोफेसर साहब कहा करते हैं कि अपने मनुष्य होने की सहज प्रवृत्तियों को दबाने के लिए ही आदमी या तो बदमाश और दुश्चरित्र हो जाता है और या भक्त, पुजारी, धर्मात्मा और समाज-सेवक बन जाता है। जो इसमें से कोई भी नहीं बन पाता है, वह जिंदगी भर घुटता और दूसरों के लिए जीता रहता है। ···प्रोफेसर साहब यह भी बताते हैं कि अकसर हम प्यार भी दूसरों के लिए कर रहे होते हैं···यानी माता-पिता के द्वारा तय कर दिए गए शख्स को प्यार करने लगना, उसे अपने माता-पिता के लिए, अपनी और अपने होने वाले बच्चों की आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा के लिए प्यार करना है।···और औरत ठीक उसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

> ···प्रोफेसर साहब यह भी बताते हैं कि अकसर हम प्यार भी दूसरों के लिए कर रहे होते हैं···यानी माता-पिता के द्वारा तय कर दिए गए शख्स को प्यार करने लगना, उसे अपने माता-पिता के लिए, अपनी और अपने होने वाले बच्चों की आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा के लिए प्यार करना है।···और औरत ठीक उसी दिन अपने अंदर-ही-अंदर बुढ़िया हो जाती है, जिस दिन उसे सिर्फ अपने लिए प्यार कर सकने की कोई उम्मीद नहीं रह जाती। दूसरों के द्वारा चुने गए पुरुष से शादी करने का मतलब ही दूसरों के लिए प्रेम का नाटक करने की स्थिति को स्वीकार कर लेना है। हाँ, उन औरतों की बात दूसरी है, जिन्हें प्रेम का नहीं, बल्कि सिर्फ अपने औरत होने का ही ज्ञान होता है। हाय राम! मैं तुझसे कैसी-कैसी बातें कहती चली जा रही हूँ।''

दिन अपने अंदर-ही-अंदर बुढ़िया हो जाती है, जिस दिन उसे सिर्फ अपने लिए प्यार कर सकने की कोई उम्मीद नहीं रह जाती। दूसरों के द्वारा चुने गए पुरुष से शादी करने का मतलब ही दूसरों के लिए प्रेम का नाटक करने की स्थिति को स्वीकार कर लेना है। हाँ, उन औरतों की बात दूसरी है, जिन्हें प्रेम का नहीं, बल्कि सिर्फ अपने औरत होने का ही ज्ञान होता है। हाय राम! मैं तुझसे कैसी-कैसी बातें कहती चली जा रही हूँ।''

कंचना ने हौले से जीभ काट ली। कांति को लगा, कंचना एकाएक बहुत आकर्षक और सुंदर दिखने लग गई है।

कांति यह भी सोचने लग गई थी, जब कंचना स्वयं ही यह अनुभव कर रही है कि जो बातें या कि जिस तरह की बातें वह कर रही है, उन्हें समझ सकने की क्षमता कांति में नहीं है, तो कहती क्यों है?

तभी कंचना ने पूछ लिया—''तुम्हारे कन्या विद्यापीठ में भी मेरे बारे में कुछ चर्चा-वर्चा करती हैं क्या मास्टरानियाँ या लड़कियाँ?''

कांति सहसा कोई उत्तर दे नहीं पाई।

''करती हैं ना? अरे, जरूर करती होंगी। ये मास्टरनियाँ नाम की औरतें जब टीचर्स-रूम में बैठती हैं ना, तब फिर इनका सारा वक्त इसी में जाया होता है न कि कौन से स्कूल की कौन सी मास्टरानी या लड़की किसके साथ प्रेम कर रही है। बल्कि विशेषकर वह बौड़म मास्टरनियाँ, जिनकी बदसूरत और गरीबी ने न उन्हें प्रेम करने का मौका दिया और न विवाह करने का—ये लो भई, गजब की जासूस होती हैं। जैस अलसेशन कुतिया को जंगल सूँघने में मजा आता होगा, उससे कम मजा ये लोग भी नहीं लेती हैं। तुम्हारे स्कूल में भी जो वह बकोतरी है ना? क्या नाम है उसका कुमारी शुक्ला—बाई गॉड वह तो सड़क पर भी चलती है तो ऐसे, जैसे पेशाब करने के लिए एकांत ढूँढ़ रही हो।'' कंचना हँसी तो कांति भी शरमीली हँसी हँस पड़ी, उसे लगा कंचन जो कई अजीब सी गूढ़ बातें करती है, उनका उत्तर दे पाना तो उसके लिए संभव नहीं है, मगर कुमारी शुक्ला के बारे में तो वह खुद कुछ बोल ही सकती है।

''मगर कंचना दीदी, कुमारी शुक्ला पढ़ाती बहुत अच्छा हैं। हमें तो वह हिंदी पढ़ाती हैं और क्या मजाल कि कोई लड़की अंग्रेजी-फारसी मिलाकर बोले या निबंध लिखे। बल्कि यहाँ तक कि वह मिस शुक्ला कह जाना भी ठीक नहीं समझती हैं। और पद्यों का अर्थ तो वो इतने बढ़िया ढंग से समझती हैं···।''

''अरे भई, असल में चाहे पुरुष हो या औरत, जिसमें खूबसूरती ज्यादा होती है, वह अपना ज्यादा समय प्रेम करने में बिता देते हैं। मगर बदसूरतों के पास अपनी इनफीरियटी को सब्स्टीट्यूट करने का एक ही रास्ता बचता है—बुद्धिमान बनने का। औसत यही ज्यादा होता है कि जिनमें खूबसूरती ज्यादा होती है, उसमें विद्वत्ता कम होती है और जिनमें विद्वत्ता ज्यादा होती है, उनमें रूप-रंग कम होता है। ऐसे सोने में सोहागा तो कम ही लोग होते हैं, जिनमें रूप और ज्ञान दोनों होते हैं। तू कुमारी शुक्ला की बात क्या करती है, मगर तूने प्रोफेसर बाजपेयी की हिंदी सुनी होती तो···।''

''आप लोगों का हिंदी पीरियड तो शायद वो ही लेते हैं।''

''अच्छा, तू भी बड़ी नटखट है। हाँ भई, मुझे तो इस बात का गर्व है कि दो वर्ष बी.ए. में और अब एम.ए. पार्ट वन में भी मैं हिंदी उन्हीं से पढ़ती आ रही हूँ। कभी-कभी बीच में डॉक्टर शर्मा या प्रोफसेर पांडेय वगैरह भी पीरियड लेते रहे तो ऐसा लगता था, जैसे घर में घोटा लगा पढ़ाने आए हों। जब तक पढ़ाने वाले में जेन्युइनिटी न हो, मौलिकता न हो, वह छात्रों को प्रभावित कर ही नहीं सकता है। इसके अलावा प्रोफेसर ए.के. विशनेट यानी आत्मीय होना चाहिए, मगर ज्यादातर प्रोफेसरों का हाल यह होता है कि छात्राओं को पढ़ाते समय किताब आगे लगाए रहते हैं और मुँह के और किसी खूबसूरत लड़की से आँखें मिलाते हुए सवाल पूछ लिया कि 'सर, मनोविज्ञान व्याख्यपरक होता है या अनुभूतिगम्य···' तो उनकी भौंहें थरथराने लगती हैं। इन लोगों को मन में सेक्स कॉम्प्लेक्स न हो, चोर न हो और गिल्टी-कॉन्शस न हो, तो छात्रा और आचार्य में पिता-पुत्री का सा संबंध होना चाहिए, का बाबा बॉक्स बीच में लटकाए रहने की कोई जरूरत ही नहीं पड़े। खैर, अभी तू तो मास्टरनियों से ही पढ़ती है। तू अगले साल इंटर क्लासेज के लिए हमारे ही कॉलेज में एडमिशन ले लेना, हाँ? भाई डिग्री क्लासेज में पढ़ने का एक ही आनंद सबसे बड़ा है। भरपूर औरतों की तरह सोचने, बोलने और महसूस करने के साथ-साथ औरत होने के उन तमाम अहसासों से युक्त रहने का सुख, बस ऐसी लड़कियों को ही मिलता है, जिन अहसासों के कारण औरतों की दुनिया इतनी छोटी हो जाती है कि मुझे तो सोचकर ही मितली आने लगती है।

''हम पढ़ी-लिखी लड़कियाँ होने को तो बाद में भी ज्यादा लोगों का यही कहना होता है कि शादी हो गई तो गृहस्थी के कूप में मेढकियों की तरह टाँगे रात-ही-रात को बुढ़िया हो जाती हैं। और शादी नहीं की तो रात-दिन दूसरों की आँखों और जीभों के बीच में ऐसे-ऐसे टेंशन बरदाश्त

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने पड़ते हैं कि शादी न करना एक गैर-कानूनी जुर्म लगने लगता है। और शादी हो नहीं पाई, तो क्लर्कों की तरह तनखा का हिसाब लगाने और मरदों की तरह एक-दूसरे की पीठ पर हाथ मारकर जी जाने वाली बातों में जिंदगी बीत जाती है। बस यही तो पाँच-छह वर्षों का स्टडी पीरियड है, इसी में एक मुक्त आकाश अपने अंदर अनुभव होता है। मुझे तो अब यही लगने लगा है, कंतो कि शादी के बाद जब तक मैं इस तरह सोचने-बोलने और महसूस करने की कोशिश करूँगी, तब मेरे पास कोई आकाश नहीं होगा। कुएँ की गोल दीवारों से टकराकर मैं नीचे गिरती रहूँगी।···बाई गॉड, प्रोफेसर उमेश कितनी सही बातें कहते हैं कि जब उड़ने के लिए खुला आकाश न हो, तो फिर तेज उड़ने की सामर्थ्य वाले पंखों को हमेशा समेटकर रखना पड़ता है। और उमेश यह भी कहते हैं कि पंखों को हमेशा-हमेशा के लिए समेटे रहने की मजबूरियों का दुख भी बड़ा होता है।···खैर देखती हूँ, मेरी किस्मत में क्या है।···अगर तू यह सोचती है कि आर्थिक और सामाजिक कारणों से तुझे भी मनोरमा दीदी की तरह अविवाहित रहना पड़ सकता है तो फिर तू जैसे-तैसे एम.ए. जरूर कर ले। जानने से उधड़ी हुई आँखों से दुख ज्यादा डाइमेंशंस में दिखाई देने लगता है, मगर यह जानने का सुख भी मामूली चीज नहीं है प्यारे।''

कंचना ने कांति की पीठ को थपथपा दिया तो वह इस हद तक महसूस नहीं कर पाई कि कंचना की सी मनस्थितियों तक पहुँच जाने के बाद उन्हीं मन:स्थितियों में बने रहने तक, हर औरत की स्थिति अर्द्धनारीश्वर की सी हो जाती है। ऐसे में, एक अनिर्णीत अस्तर पर जानने और प्रेम करने के दो छोरों पर एक साथ जुड़े हुए पुरुष के संपर्क में रहने में हर औरत एक संयुक्त भाषा बोलती है। ऐसी भाषा, जिसमें दूसरे की उपस्थिति का बोध अप्रत्यक्ष बना रहता है।

''अरे दीदी, पहले यह हाई स्कूल की नैया तो पार लगे, तब की बात तब देखी जाएगी। फिर मेरा तो आगे पढ़ना भी मुश्किल सा लगता है। पिछले साल फेल न होती तो हो सकता है, इस वर्ष इंटर जॉइन कर लेती।''

''हाँ माँ···चाचीजी बड़ी तेजी में ही गुजर कर रही हैं बेचारी। मनोरमा दीदी तो क्या भेजती होंगी? कुल सवा सौ डेढ़ सौ तो उस बेचारी को ही मिलते होंगे? मगर कंतो, तू बड़ी प्रतिभाशालिनी लड़की है। तू एम.ए. जरूर कर ले। कहीं लेक्चरर तो हो ही जाएगी। और देख, मेरा क्या है, न जाने कब इस घर से विदा हो जाना पड़े? कभी भी कुछ पैसे-वैसे की तुझे जरूरत पड़े, तो मुझसे माँग लिया करना, हाँ।'' कंचना ने प्यार से कांति के कपोलों को थपथपाते हुए कहा। कांति चुपचाप देखती रही, कंचना की आँखों में एकाएक गहरी व्यथा उभर आई थी।

कांति को अब यह भी याद आया, वह कंचना के यहाँ किस उद्देश्य से आई थी और कपड़े माँगने की अपनी तृष्णा उसे बड़ी लज्जास्पद सी लगी, उसने सोचा, 'सलवार कुरता जो कल माँ ने धोया, उसे ही पहनकर क्यों न चला जाए। मंच पर तो कल जाना होगा।'

बहुत संकोच के साथ कांति बोली, ''कंचना दीदी, मुझे एक-दो कपड़े बनवाने थे। अभी दीदी का मनीऑर्डर आया नहीं है। असल में इस बार शरदोत्सव में कला मंदिर वालों के राधाकृष्ण नृत्य में मुझे भी हिस्सा लेना है।''

''अरे, तो बेवकूफ इतनी बड़ी भूमिका काहे को बाँध रही है। क्या-क्या बनवाना चाहती है?''

''माँ तो कहती हैं, तू साड़ी-ब्लाउज में अच्छी दिखती है, और···''

''मगर तू अभी सलवार-कुरता ही पहना कर। साड़ी-ब्लाउज पहनकर खिलने में अभी तुझे वक्त लगेगा। अभी तो तू साड़ी-ब्लाउज पहनकर खूबसूरत गुड़ियारानी ज्यादा लगेगी। हालाँकि आजकल तो अब गुड़ियों की चेस्ट भी ऐक्ट्रेसों की जैसी बनाने लग गए हैं लोग···और तेरे ही कला से ही तो है, मुन्नी त्रिपाठी? वह तो बच्चों को दूध पिलाने वाली आया जैसी दिखती है। यों कोई बच्ची तो तू भी नहीं है। तेरी उम्र में तो बहुत सी लड़कियाँ बच्चों वाली औरतें बन जाती हैं। मगर तू सलवार-कुरता और चुन्नी ही पहना कर।''

कांति ने शर्म से मुँह नीचे कर लिया था।

कंचना कहती रही, ''देख उस तरह की शर्म बिलकुल बेकार होती है, जिससे अपनी परसनैलटी के विकास में बाधा पड़ती हो। प्रोफेसर उमेश कहते हैं कि लज्जा नारी का आभूषण जरूर है, मगर बहुत ज्यादा आभूषणों से भी नारी में सौंदर्य की जगह भद्दापन आ जाता है।···बल्कि सलवार-कुरते से भी तू चूड़ीदार पायजामा और कुरता पहना करे, तो और अच्छी लगे। किससे सिलवाती है तू कपड़े?''

''चिरंजी टेलर ही ज्यादातर सिलता है। फिर हम लोग कपड़े ही कितने सिलवाते हैं। बल्कि बात तो मैं कर रही हूँ, विंटर-फेस्टीवल के लिए कपड़े सिलवाने की, मगर चिरंजी टेलर अगली गरमियों से पहले तो क्या देगा?''

''हाय राम, बातें करने का तो तुझे बड़ा सलीका है, कंतो, घर तो हमारे तू कभी-कभी आती रहती है, मगर माँ के पास ही ज्यादातर बैठती थी, मैं तो तुझसे कभी यों सुंदर बातें ही नहीं कर सकी। अच्छा तू ऐसा कर, मैं थोड़ी ही देर में बाजार की ओर निकलूँगी। तू भी साथ ही चल, मैं कपड़ा भी लिया दूँगी। कल शाम तक तुझे तैयार मिल जाएँगे। ठीक है।''

कांति कह नहीं पाई।

कंचना ही बोली, ''वहाँ फिटिंग बहुत अच्छी होती है। कपड़े पहनने और ओढ़ने में तो फर्क होना ही चाहिए। यह देख, मेरा ब्लाउज कैसा सिया हुआ है।''

कंचना ने साड़ी का पल्ला नीचे चारपाई पर गिराकर अपनी दोनों बाँहों को ऊपर उठा लिया तो कांति एकटक देखती रह गई। जैसे उड़ान भरने से पहले पंख खोलती हुई चिड़िया खूबसूरत लगती है, एक अनोखा आकर्षण उभर आया था। कांति को लगा, कंधों से नीचे कमर तक का इतना दृष्टि को बाँध सा देने वाला सौंदर्य किसी औरत में उसने पहली-पहली बार देखा है।

वह इस हद तक नहीं सोच पाई कि कंचना की सी मनस्थितियों से गुजरती हुई लड़की उसके सामने बाँहें उठाते हुए भी, प्रोफेसर उमेश के सामने बाँहें उठाने की सी अनुभूति से गुजरती है।

उसे सिर्फ इतनी सी कल्पना हो आई कि अगर इस समय कंचना अपने कंधों से नीचे तक की देह को नृत्य की मुद्रा में घुमा दे, तो चाहे किसी भी तरफ को घुमाए, देखने वाले की आँखें भी अपने आप उधर को ही घूम जाएँगी।

लगता था, ऐसा आकर्षण आँखों की पुतलियों में से सूरत जैसे खींचकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बोलना तेरा भी बड़ा साफ-सुथरा है। उमेश ठीक कहते हैं कि भाषा शब्दकोशों से नहीं, अनुभूति और चिंतन से, यानी महसूस करने और फिर महसूस किए हुए को सोचने से आती है। उनका कहना है कि मैं हिंदी ले लेती, तो तूरे प्रोविंस को टॉप कर सकती थी। मैं कहती हूँ, मुझे मनोविज्ञान में टॉप करना है तो कहते हैं, कि वह भी सिर्फ भाषा-ज्ञान में ही, यानी दूसरों की लिखी हुई मनोविज्ञानिक पुस्तकें पढ़-पढ़कर मनौविज्ञान में टॉप करना होगा। उनका कहना है कि मन की आखिरी ऊँचाइयों तक पहुँचने वाले व्यक्ति दुनियाँ में शताब्दियों में जन्म लिया करते हैं।...उमेश कहते हैं कि फ्रायड की पुस्तकों का अध्ययन करने और फ्रायड की मनस्थितियों तक पहुँचने में इतना बड़ा अंतर है कि जो पढ़ने वाला है...

उन्हें अपनी सीध में तने रहने को बाध्य कर देता है और यह बंधाव सिर्फ औरत या पुरुष के अंग-विशेषों के आकर्षण में ही नहीं, पशु-पक्षियों और फूल-पत्तियों तक में होता है। एक ऐसे अनोखे कोण से उभरने का आकर्षण, जो चाकू के फल की तरह बाहर को खुलता है।

कांति ने देखा, हाथ नीचे को करते हुए स्वयं कंचना का चेहरा भी कुछ सुर्ख हो आया है। उसने पूछ लिया, "दीदी, मुझे तो दस बजे तक रिहर्सल के लिए पहुँचना है।"

कंचना ने अपनी कलाई सामने मोड़ ली। बोली, "अरे, नौ तो बज गए हैं। अच्छा, जा तू तैयार हो, मैं मुझे आवाज लगा दूँगी। मगर तुझसे तो मैंने चाय पीने के लिए भी नहीं कहा। जरा ठहर।"

चारपाई के सिरहाने की ओर लगी हुई आलमारी की ओर हाथ बढ़ाकर कंचना ने उसका पल्ला खोल लिया। फिर थोड़ा उस ओर सरक गई। कुछ मिठाई एक तश्तरी में रखी हुई थी। कांति को देते हुए बोली, "अब बहुत नखरे मत कर। एक बात हमेशा याद रखना, अपनापन माता-पिता और समाज द्वारा तय कर लिये जाने वाले रिश्तों से बाहर भी होता है। प्रोफेसर उमेश कहते हैं कि हर मनुष्य के अंदर अपने आप को प्यार करने की आम लालसा तभी विस्फोटक स्थिति तक पहुँचाती है, जब वह अपने ही प्यार को दूसरों में कटे हुए केंचुए जैसे बुलबुलाते टुकड़ों में खोजने लगता है।... वो तो यहाँ तक कहते हैं कि सेंसिटिव दृश्य हमेशा ही अपने अंदर-ही-अंदर परमाणुओं में बँटता चला जाता है और फिर निरंतर विस्फोट की प्रक्रिया से गुजरता रहता है दूसरों का प्यार। प्यार ऐसे मनुष्य के अंदर अपनी ही आँखों से खिंच-खिंचकर ऐसे प्रवेश करता है, जैसे किसी बंद कमरे में खिड़की से छनकर सूरज की किरणें पहुँचती हैं और करोड़ों परमाणु तेजी में चमकने लगते हैं।" हुश! मैं भी क्या अजीब बौड़म हूँ, प्रोफेसर उमेश की बातों का घोटा जैसा लगाती रहती हूँ। उनको तो साइकोलॉजी के प्रोफेसर की जगह साईंस का लेक्चरर होना चाहिए था।...मगर वह तो यही कहते हैं कि अणु शक्ति की प्राथमिक खोज किसी बहुत बड़ी मुहब्बत करने वाले व्यक्ति की होगी। ऐसे प्रेमी प्राणी ने जो दुनिया की नजर की पहुँच से परे रहते-रहते अपने अंदर-ही-अंदर मजबूत बनकर भर गया होगा। हूँ हँसी ये तेरे ही सयानापन आ गया है डियर। कभी तुझे मैं उमेश से जरूर मिलाऊँगी।"

कांति इस बात को ज्यादा लक्ष्य कर रही थी कि प्रोफेसर बाजपेयी से शुरू करके कंचना ने सीधे सिर्फ उमेश से कहने तक की मानसिक मात्रा में ही उससे इतनी बातें कही हैं।

कांति मुँह पोंछती हुई बोली, "दीदी और जो कुछ हो, तुम्हारी भाषा बहुत अच्छी है। तुम हमारी टीचरजी की तरह गुड हिंदी तो नहीं बोलती हो, मगर तुम्हारा एक्सप्रेशन कुछ इस तरह का है, जैसा हमारी प्रिंसिपल मिसेज चंदा में भी नहीं है।"

"बोलना तेरा भी बड़ा साफ-सुथरा है। उमेश ठीक कहते हैं कि भाषा शब्दकोशों से नहीं, अनुभूति और चिंतन से, यानी महसूस करने और फिर महसूस किए हुए को सोचने से आती है। उनका कहना है कि मैं हिंदी ले लेती, तो तूरे प्रोविंस को टॉप कर सकती थी। मैं कहती हूँ, मुझे मनोविज्ञान में टॉप करना है तो कहते हैं, कि वह भी सिर्फ भाषा-ज्ञान में ही, यानी दूसरों की लिखी हुई मनोविज्ञानिक पुस्तकें पढ़-पढ़कर मनौविज्ञान में टॉप करना होगा। उनका कहना है कि मन की आखिरी ऊँचाइयों तक पहुँचने वाले व्यक्ति दुनिया में शताब्दियों में जन्म लिया करते हैं।...उमेश कहते हैं कि फ्रायड की पुस्तकों का अध्ययन करने और फ्रायड की मनस्थितियों तक पहुँचने में इतना बड़ा अंतर है कि जो पढ़ने वाला है, जिसके पास बैठी मनस्थितियों को जन्म देने वाली जिंदगी जीने को वक्त नहीं बच सकता।...और जिसके पास वैसी जिंदगी से गुजरने की स्थितियाँ हों, उसके पास उतनी बड़ी चिंतन-शक्ति का हो पाना शताब्दियों के हाथ में है।...उनका कहना है कि ज्ञान के अपरिमित परमाणु किसी एक व्यक्ति के अंदर शताब्दियों की प्रोसेस के बाद ही एकत्रित होते हैं।...ओर सॉरी। तू कुछ भी नहीं समझ रही है क्या?"

कांति बोली, "अरे बाबा, इतनी बड़ी-बड़ी बातें समझने के लायक अभी मेरी उम्र ही कहाँ हुई है, दीदी? आप तो पूरी लेक्चरर हैं। मैं तो अब आपसे आप ही कहा करूँगी।"

"अच्छा बता रही हूँ?"

"नहीं दीदी, सच कह रही हूँ। मुझे तो बार-बार यही लग रहा है, जैसे तुम एक उपाय के आगे बोलती चली जा रही हो। काश कि मैं भी तुम्हारे साथ पढ़ती होती!"

(क्रमशः)

प्रस्तुति : श्री राकेश मटियानी
२६१-ए, मोतीलाल नेहरू नगर,
कर्नलगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गजल

चार गजलें

● अखिलेश अजीज इलाहाबादी

ताजमहल

उलफत के दीवानों का वतन ताजमहल है,
एहसास-ए-मुहब्बत का चमन ताजमहल है।
शाहजहाँ के रूमानी खयालों के जहाँ में,
मुमताज का गोरा सा बदन ताजमहल है।

दुनिया में हुस्नो-इश्क का सरताज ताज है,
हमको है जिस पर नाज वो नाज ताज है।
पत्थर भी बोलते यहाँ उर्दू जुबान में,
उर्दू का संगेमरमरी मिजाज ताज है।

रोती आँखों में हँसी आज सजाने आया,
घुटती साँसों में नई साँस बसाने आया।
है इरादे से मेरे ताजमहल शर्मिंदा,
मैं हर मोहताज को मुमताज बनाने आया।

गजल-१

मालूम नहीं किसका हुआ इससे भला है,
जब-जब भी किया होम मेरा हाथ जला है।

मैं आज भी तन्हा हूँ चला कल भी था तन्हा,
कहने को जमाना ये मेरे साथ चला है।

डूबा हूँ गमे-इश्क में मालूम नहीं है,
कब रात ढली है, कब दिन ये ढला है।

ये मेरा गमे-हिज्र है एहसासे-वस्ल भी,
आगे ये मुहब्बत का सफर यूँ भी चला है।

खुशियों के चरागों के उजालों के तले ही,
गुमनाम अँधेरों का शहर मेरा पला है।

मरने के बाद दोजखो-जन्नत फिजूल हैं,
जीते-जी जो मिल जाए वो सुख-चैन भला है।

जब तेल चुका लौ भी बुझी जाना तो 'अजीज',
अब दीया ये मिट्टी है, जलाये न जला है।

गजल-२

तुम्हीं बताओ भला किससे मैं कहाँ कम हूँ,
मेरे लिए ये बहुत है औलादे-आदम हूँ।

रगड़ के जिंदगी पत्थर से आग को खोजा,
मैं आज तक उसी जद्दोजहद पर कायम हूँ।

जमीं पर पाँव नजर में है आसमाँ मेरी,
मैं आइंस्टाइन हूँ, न्यूटन, सुनीता विलियम हूँ।

जमीं से अर्श तक परवाज है सभी मेरी,
खुदा से हटकर नई सोच में मैं हरदम हूँ।

खुशी में औरों की मैं कहकहे-हँसी भी हूँ,
'अजीज' गम में तुम्हारे मैं चश्मे-पुरनम हूँ।

गजल-3

मैंने लोगों का भरम तोड़ दिया, तोड़ दिया
सादगी मेरी खुदा छोड़ दिया, छोड़ दिया।

आदम-हब्बा की किताबों में प्यार की गोया,
इक सफा और नया जोड़ दिया, जोड़ दिया।

अपना घर देखूँ कि घर देखूँ खुदा का कहिए,
फैसला आप पर ये छोड़ दिया, छोड़ दिया।

वो इंतजार भी था वस्ल भी था और भी कुछ,
दम तसब्बुर में जहाँ तोड़ दिया, तोड़ दिया।

पहले इस शहर को पहचान दी अपनी फिर अजीज,
अजनबी बनकर शहर छोड़ दिया-छोड़ दिया।

ई-१०४३, राजेंद्र नगर,
बरेली-२४३१२२ (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामचंद्र शुक्ल : कवि के रूप में

● हर्षनंदिनी भाटिया

सुप्रसिद्ध आलोचक, निबंधकार, विचारक, इतिहासकार, कोशकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल मूलतः कवि थे। 'मनोहर छटा' शीर्षक कविता सन् १९०१ की 'सरस्वती' में प्रकाशित हो चुकी थी। तरुणावस्था में उनका सान्निध्य भारतेंदु मंडल कवि तथा आलोचक श्री प्रेमघन से हो गया था और उनसे प्रेरित होकर उन्होंने कविताएँ लिखीं। प्रारंभ में 'आनंद कादंबिनी' तथा 'सरस्वती' में प्रकाशित हुईं और बाद में 'सुधा', 'माधुरी', नागरी प्रचारिणी पत्रिका आदि में। इस प्रकार साहित्य साधना का प्रारंभ १६-१७ वर्ष की अवस्था से हो गया और वह भी ब्रजभाषा में। काव्य रचना हुई १९०१ में।

तरु मंडप के रंध्रनबिंब सो छनि-छनि आवत,
ससि किरनन रूप पुंज सरस सोभा सरसावत।
करत अलौकिक नृत्य आय निरमल जल माही,
निरखि ताहि मन मुग्ध होय घिर रहत तहाँ ही॥'

सन् १९०१ तक उनकी कोई विशेष रचना प्रसिद्ध नहीं हुई थी। प्रकाशित करने से पूर्व आचार्य द्विवेदी उनकी कविता देखना पसंद करते थे। इस आशय का एक पत्र आचार्य द्विवेदी ने दिनांक ५-६-१९०२ को श्रीधर पाठक को लिखा। कोई दो सप्ताह पूर्व मिर्जापुर के पं. रामचंद्र शुक्ल ने मुझे लिखा था कि मैं आपको ऊपर सरस्वती में एक कविता प्रकाशित कर दूँगा। उत्तर में मैंने लिखा कि निश्चित उत्तर देने से पूर्व मैं कविता को देखना चाहूँगा। संभव है कि यह व्याकरणी रामचंद्र शुक्ल हो, परंतु ऐसा मेरा अनुमान ही है। यही पं. शुक्ल आगे चलकर सुप्रसिद्ध आलोचक हुए।

इसके बाद भी उनकी फुटकर कविताएँ प्रकाशित होती रहीं, जिनमें से 'मधुस्त्रोत', 'बसंत', 'विरह', 'सतक', 'प्रेमप्रताप', 'हृदय का भाव', 'भारत और बसंत', 'आशा और उद्योग', 'पाखंड', 'प्रतिशोध', 'आमंत्रण', 'वह छवि' आदि उल्लेखनीय हैं। सन् १९०२ से १९०३ तक उनकी सामाजिक व राजनीतिक समस्याओं से संबंधित कविताएँ 'मधुस्त्रोत' शीर्षक से प्रकाशित हैं। इन कविताओं में उनका जनवादी रूप मुखरित हुआ है।

मिर्जापुर में रहते हुए उन पर वहाँ के सघन वन वृक्षों से लदी पर्वत मालाओं, टेढ़े-मेढ़े बहते नालों और लहलहाते कछारों का विशेष प्रभाव

जन्म : २८ जून, १९३२।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी. (हिंदी)।
कृतित्व : लगभग नौ पुस्तकें लोक-साहित्य एवं विभिन्न विषयों पर प्रकाशित।
सम्मान-पुरस्कार : 'सरस्वती', 'साहित्य रत्न', 'अखिल भारतीय संस्कृति पुरस्कार', 'ब्रजविभूति', 'ब्रजविभूषण', 'विद्याश्री', 'साहित्य मार्तंड' सहित अनेक पुरस्कार एवं सम्मानों से सम्मानित।
स्मृतिशेष : ८ जून, २०११

पड़ा था। वे वहाँ के एक-एक नाले से परिचित थे, यह बात मृत्यु से पूर्व उनके इन उद्गारों से स्पष्ट होती है—''मेरी हार्दिक इच्छा तो यही है कि जब मेरे प्राण निकलें तब मेरे सामने मिर्जापुर का यही भूखंड रहे। मैं यहाँ के एक-एक नाले से परिचित हूँ। यहाँ की नदियों, घाटियों, पत्थरों तथा जंगली पौधों में एक-एक को जानता हूँ।'' वाराणसी के नागरिक जीवन में रह-रहकर उन्हें अपने मिर्जापुर की स्मृतियाँ आती रहती थीं। 'हृदय के मधुर भार' में अपने उद्गार व्यक्त किए हैं—

ए हो वन बंजर कछार हरे भरे खेत, विपट विहंग।
सुनो अपना सुनावें हम।
छूटे तुम, तो भी चाह जित्त से न छूटी यह,
बसने तुम्हारे बीच फिर आवें हम।
सड़े चले आ रहे हैं गड़े अपने ही बीच,
जो कुछ बचा है उसे बचा कहाँ जावे हम।
मूल रसस्त्रोत ही हमारे वही छोड़ तुम्हें,
सूखते हृदय बरसाने कहाँ जावें हम।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा रचित सर्वाधिक चर्चित कृति 'बुद्ध चरित' महाकाव्य है, वस्तुतः यह एडविन आर्नाल्ड रचित 'लाइट ऑफ एसिया' का अनुवाद है। अंग्रेजी में उत्कृष्ट रचनाओं का अनुवाद किया जाने लगा, जैसे डेजलैंड विलेज का 'ऊजड़ ग्राम' सत्यनारायण कविरत्न। अनुवाद की परंपरा में अधिक चर्चित 'बुद्ध चरित' है। ब्रजभाषा में काव्य रचना के पीछे शुक्लजी का ब्रजभाषा प्रेम। ब्रज में राम तथा कृष्ण पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्याप्त काव्य लिखे गए हैं, अतएव बुद्ध का चरित भी ब्रजभाषा में उपलब्ध होना चाहिए और दूसरे ब्रजभाषा को आधुनिक विचारों को प्रकट करने में सक्षम होना चाहिए। इस दृष्टि से 'बुद्ध चरित' के माध्यम से ब्रजभाषा को नवीन काव्य विषय दिए और उनकी भाषा में निखार आया। प्रकृति-प्रेम सर्वत्र भरा पड़ा है—

छिटकी विमल नीलांबर में सौदामिनी मृदुता भरी,
बासित सुगंध प्रसन परिमल सौ नक्षत्रन सौ जरी।
ऊँचे उठे हिमवात की हिमराशि मनभावनी,
संचरित सैल सुवायु सीतल मंद-मंद सुहावनी॥

'बुद्ध चरित' 'लाईट ऑफ एसिया' पर आधारित है। अनुवाद नहीं भावानुवाद है। इसमें शुक्लजी की भावुकता, कल्पनाजन्य अनुभूति का अद्‌भुत सम्मिश्रण है, अतएव मौलिक काव्यकृति सा प्रतीत होता है। डॉ.

'बुद्ध चरित' करुण रस प्रधान महाकाव्य है। विविध छंदों में लिखकर ब्रजभाषा की काव्य परंपरा को अक्षुण्ण रखा गया है। 'गौतम गेह' के कुछ अंश यहाँ काव्य सरसता के उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत हैं—

सोवती संभार बिनु सोभा सर साथ गात,
आधे खुले गोरे सुकुमार मृदु ओप घर।
चीकने चिकुर कहूँ, बँधे हैं कुसुम दाम,
कारे सटकारे कहूँ लहरत लंक पर।
सोवैं थकि हास औ विलास सौ पसारि पाँय,
जैसे कलकंठ रसगीत गाए दिन भर।
पंख बीच नाए सिर आपनों लखाति तौं लौ,
जौ लौं न प्रभात आए खोलन कहत स्वर।

राजेंद्र कुमार के अनुसार—" 'बुद्ध चरित' भावानुवाद है, जिसका महत्त्व अनुवाद की दृष्टि से ही नहीं, एक सफल ब्रजभाषा काव्य के रूप में भी है। 'बुद्ध चरित' अपनी भाव प्रवणता, प्रकृति एवं मनोभावों के चित्रण की कला एवं सानुप्रासिक पदावली युक्त ब्रजभाषा के कारण मौलिक रचना के समान सरस बन गया है।" (द्विवेदी-युगीन प्राचीन काव्य-धारा)

मूल तथा अनूदित दोनों कृतियों में आठ सर्ग हैं। शुक्लजी ने यथास्थान परिवर्तन के साथ कल्पना से परिवर्द्धन भी किया है। पुस्तक के प्रारंभ में भाषापरक अध्ययन ४५ पृष्ठों में प्रस्तुत किया गया है, जिसमें ब्रज, अवधी और खड़ीबोली के स्वरूप का विस्तार से विवेचन है। बौद्धशास्त्र संबंधी शब्दों की आवश्यकतानुसार संक्षिप्त तथा विस्तृत टिप्पणियाँ दी गई हैं। यह ग्रंथ 'सूर्यकुमारी पुस्तकमाला' में प्रकाशित हुआ। शुक्लजी ने स्वयं स्वीकार किया है कि 'एक स्वतंत्र हिंदी काव्य के रूप में इसका ग्रहण हो।' (बुध चरित वक्तव्य, प्रकाशन वर्ष १९२२)

इस ग्रंथ का संपादन पं. चंद्रधरशर्मा गुलेरी ने किया और 'निवेदन' शीर्षक से टिप्पणी भी लिखी। जब इस पर पारिश्रमिक देने का मामला आया तो अनुवाद की कोटि में रख दिया गया होगा। इस संबंध में १३ मई, १९२२ को गुलेरीजी ने बाबू श्यामसुंदर दासजी को जो पत्र लिखा, उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उनकी दृष्टि में वह मात्र अनुवाद नहीं था।

"शुक्लजी के 'बुद्ध चरित' के पुरस्कार के विषय में आपने मेरा मत पूछा था। मैंने इस विषय पर विचार किया, किंतु निश्चय स्थिर करने में कुछ कठिनाई पाई, क्योंकि कविता है, कोरा अनुवाद नहीं है और लगभग मौलिक ग्रंथ है। मूल के पृष्ठ २३८ का हिंदी अनुवाद २३० पृष्ठों में हुआ है। भूमिका के लगभग ५० पृष्ठ हैं, जो अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।"

प्रकृति के केवल यथातथ्य संश्लिष्ट चित्रण में कवि प्रकृति के प्रति सीधे अपना अनुराग प्रकट करता है। प्रकृति से आचार्यजी का रागात्मक संबंध रहा है।

"अनेक प्रकार के प्राकृतिक दृश्यों को सामने प्रत्यक्ष देख हम जिन मधुर भावना का अनुभव करते हैं, यह रसात्मक ही माना जाएगा।"

मूल ग्रंथ के कुछ अंशों से मिलान कर स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार मात्र आधार लेकर भाव पल्लवन किया।

'लाइट ऑफ एसिया'—

साफ्टी दि इंडियन नाइट सिक्स ऑल दी प्लैन्स
ऐट फुल मून, इन दि मंथ ऑफ चैत्र शुद,
ह्वेन मैंगोज रेड्डेन ऐंड दि अशोका बड्स
स्वीटेन दि ब्रीज, ऐंड रामाज बर्थ डे कम्स
ऐंड ऑल दि फील्ड्स आर ग्लेड ऐंड ऑल दि टाउंस।

इस प्रकृति चित्रण को शुक्लजी के 'बुद्ध चरित' में देखिए—

निखरी रैन चैत पूनो की अति निर्मल उजियारी,
चारुहासिन खिली चाँदनी पट पर पै अति प्यारी।
अमराइन में धँसि अमियन को दरसावति बिलगाई,
सांकन में गुहि झूलि रही जौं मंद झकोरन पाई।
चुवत मधूक परसि भू जौं लो टपटप शब्द सुनावै,
ताके प्रथम पलक भारत भर में निज झलक दिखावैं।
महकति कबहुँ अशोक मंजरी, कतहूँ-कतहूँ पुर माही,
रामजन्म उत्सव के अब लौ साज हरे है नाहीं॥

एक और उदाहरण द्रष्टव्य है (बुद्ध चरित, पृ. ७५):

आइज लाइटेड विद लव फ्लेम्स एल्यूरिंग स्माइल्स
इन हाष्टन डांस विद देयर सफल साइड ऐंड लिब्स

यही 'बुद्ध चरित' में—

मद की दुति नैनन में दरसै, अधरान पै मंद तरी मुसकान
फिर नाचत मैं सुठि अंग सुठार छपै उधरैं ललचावत प्रान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. नवीन चंद सहगल ने 'बुद्ध चरित' के अंश पर निम्नलिखित मत व्यक्त किया है—'माई अंकिल रिंग फुल ऑफ माई गोल्डन बेंगिल्स पार्ट ऐंड फॉल, दि जॅस्मिन्स इन माई हेमर विदर टू डस्ट।

करके कर के कंगन औ केयूर गए मसि।
वेणी सा मुरझाय मल्लिका दास परे खसि॥

'करके' 'कर के' कंगन औ केयूर में अनुप्रास और यमक परिलक्षित होते हैं।

अंग्रेजी मुहावरों तथा अलंकारों का भी बड़ी खूबसूरती से निर्वाह किया गया है—लाइफ वर्स्ट बड्स को ब्रज में इसकी प्रकृति के अनुरूप 'खिलिकै कछु मानहुँ कंप कली' लिखा गया है।

'बुद्ध चरित' करुण रस प्रधान महाकाव्य है। विविध छंदों में लिखकर ब्रजभाषा की काव्य परंपरा को अक्षुण्ण रखा गया है। 'गौतम गेह' के कुछ अंश यहाँ काव्य सरसता के उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत हैं—

सोवती संभार बिनु सोभा सर साथ गात,
आधे खुले गोरे सुकुमार मृदु ओप घर।
चीकने चिकुर कहूँ, बँधे हैं कुसुम दाम,
कारे सटकारे कहूँ लहरत लंक पर।
सोवैं थकि हास औ विलास सौ पसारि पाँय,
जैसे कलकंठ रसगीत गाए दिन भर।
पंख बीच नाए सिर आपनों लखाति तौं लौ,
जौ लौं न प्रभात आए खोलन कहत स्वर।

आचार्य शुक्लजी ने विभिन्न नारियों के पशु-प्रेम को लक्षित कर चित्रण किया है। कोई नारी संगीत का ज्ञान रखते हुए वीणा के प्रति अत्यधिक रुचि व्यक्त करती है, तो कोई नारी मृगशावक को गोद में ले लेती है। इन कार्यकलापों का चित्रण है—

है कै परी लॉबी कोऊ बीना लै कपोल तर,
आँगरी उरुझि रहि तब ताई तार पर।
वाही रूप जैसे जब कढ़ति सो तान रही,
झूमि रस जाके झपे लोचन विशाल वर।
लैके परी कोऊ मृग शावक हिये तें लाय,
सोय गयो टूँगत कुसुम पाय जासु कर।
कुतरो कुसुम लसै कामिनी के कर बीच,
पाती लपटानी हरी हरिन अधर तर।

शुक्लजी का कवि रूप भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना आलोचक रूप।

पुलकित पुनि लखि परत लहलहे खेत मनोहर,
चुंबन सो अनुरागवती ऊषा के सुंदर।

खेतों की पुलकन का कारण ऊषा का चुंबन-स्पर्श मानकर दोनों के बीच सहज-स्नेह संबंध स्थापन किया गया है।

ब्रजभाषा के संबंध में शुक्लजी ने लिखा है, "जो भाषा साहित्य की भाषा बनकर बोलचाल की भाषा से कुछ अलग-अलग बड़ी ठसक से चल रही थी, वह ब्रज मंडल की चलती हुई भाषा के प्रवाह में डूब गई, जिससे उसमें नया जीवन आ गया है, वह निखरकर जीती-जागती भाषा के मेल में हो गई।"

मूलतः अनुवाद होने पर भी 'बुद्ध चरित' का ढंग ऐसा रखा गया है कि एक स्वतंत्र हिंदी काव्य के रूप में इसका ग्रहण हो, इसलिए अनुवादक ने अपनी ओर से कुछ आवश्यक परिवर्तन कर लिये हैं। ये परिवर्तन वस्तु संयोजन में भी दृष्टव्य हैं और भाषाभिव्यंजन में भी। उदाहरणतः अपने चरितनायक का चरित्र पूर्णतः बनाने के विचार से हिंदी अनुवाद में परिनिर्वाण के अंतर्गत गौतम बुद्ध के जीवन के अंतिम क्षणों का विवरण जोड़ दिया गया है। (वही, पृ. २८१)

शुक्लजी ने 'बुद्ध चरित' की रचना कर ब्रज भाषा को और अधिक पुष्ट तथा संपन्न बनाया।

नंदन, भारती नगर,
मैरिस रोड, अलीगढ़

इस अंक के चित्रकार

कृष्ण कुमार 'अजनबी'

कृतित्व : 'गुलदस्ता' में राधाकिशन (खंडकाव्य), रेखाचित्र संग्रह 'मेरी बोलती तसवीरें', अनूदित नाट्य 'जगन्नाथ प्रिय नाटकम्' तथा एक व्यंग्य उपन्यास (उड़िया में), अनूदित कहानी संग्रह 'अलौकिक और अन्य कहानियाँ' (हिंदी में); रेखाचित्र प्रदर्शनियाँ आयोजित तथा छत्तीसगढ़ सीडी फिल्म 'क्रिकेट खेल होंगे महाभारत' के गीत एवं संवाद लेखन के अलावा देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ एवं रेखाचित्र प्रकाशित।

संपर्क : ग्राम-पोस्ट : देवभोग,
जिला : रायपुर-४९३८९० (छ.ग.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग

अक्ल का फैसला

● के.एल. गर्ग

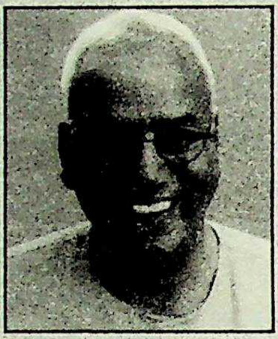

जन्म : १३ अप्रैल, १९४३, धूरी (पंजाब)।

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी, अंग्रेजी)।

प्रकाशन : 'परिधि में नाचता आदमी', 'कामरेड गिद्ध', 'पुल की धारा' *(उपन्यास)*, 'टूटते हुए संस्कार' *(कहानी-संग्रह)*, 'बूट और आदमी' *(व्यंग्य-संग्रह)* तथा पंजाबी में ५० से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। 'दैनिक अजीत' पंजाबी से पिछले पाँच वर्ष से चल रहा व्यंग्य-कॉलम 'गर्गवाणी'।

हमारी बीवी हमसे आयु में दो वर्ष बड़ी, कद में आधा फुट छोटी और अक्ल के संबंध में हमारा फैसला पिछले बीस वर्ष से यूँ का यूँ ही लटका हुआ है। जब भी हमारी अक्ल की बात चलती है तो झट से गिद्दा डालते हुए मुहावरों और लोकोक्तियों का इस्तेमाल शुरू कर देती है, 'अक्ल बगैर कुएँ खाली।'

जब अनपढ़ बीवी मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग अपने धर्मपति पर करने लग जाए तो पति महोदय की पढ़ाई-लिखाई अंधे कुएँ में पड़ने लगती है। हम भी उसके नहले पर दहला मारने के लिए मुहावरा-कोश में से मुहावरे ढूँढ़-ढूँढ़कर लाते हैं—

'अक्ल बगैर बदशक्ल', 'अक्ल बड़ी कि भैंस', 'भैंस के आगे बीन बजाना, अपने चक्षु खोना' इत्यादि-इत्यादि।

इस तरह नहले पे दहला पड़ते मुहावरे सुनकर बीवी को गुस्सा आना लाजिमी होता है। गुस्सा लाने या चढ़ाने के लिए अक्ल की तो जरूरत होती ही नहीं। बुद्धिमान कहते भी हैं कि गुस्सा आने से अक्ल तो वैसे भी मारी जाती है और अक्ल आ जाने पर गुस्सा मर जाता है। हमारे मुहावरा-प्रयोग को हमारी बीवी ज्यादा एनकरेज नहीं करती। झपट सी मारती हुई कहती है—

''बदशक्ल थी तो लाए क्यों थे? उस वक्त तो भागे गए थे टिड्डी दल इकट्ठा करके।''

''हम पैदल भागे नहीं गए थे, घोड़ी पर चढ़कर गए थे।'' हमने अपनी गलती मानते हुए कहा।

''तब सचमुच पता नहीं हमारी अक्ल पर क्या परदा पड़ गया था? नहीं तो आप जैसी चीज लाने के लिए घोड़ी पर चढ़कर, इतनी स्पीड से जाने की क्या जरूरत थी? इस वक्त तो सचमुच ही हमारी अक्ल घास चरने चली गई होगी।''

हमारे मान्यवर, इज्जतदार बारातियों को हमारी बीवी का टिड्डी दल कहना भी हमें अच्छा नहीं लगा था। बाराती बेचारे किसी का क्या लेते हैं। एक अदना सा लंच या डिनर लेकर ही हमारे जैसी जोड़ियों का मेल करवा देते हैं। लेकिन जरा गंभीरता से सोचने पर बात हमारी समझ में आ जाती है।

''बारात टिड्डी दल ही तो होगा। यदि वे सचमुच अक्लवान बाराती होते तो एकाध तो हमें शादी जैसा स्टेप लेने से रोकता। बस ससुरों को लंच या डिनर का लालच ही मार गया।''

'भैंस' शब्द पर भी हमारी बीवी को सख्त एतराज है। वह श्रीदेवी स्टाइल में झट कह देती है—

''बीवी की भैंस से तुलना करनी ही सबसे बड़ी बेअक्ली की निशानी है। कपिला गाय जैसी बीवी को भैंस कहना कहाँ की मर्दानगी है? यदि मैं भैंस हुई तो आप भला क्या हुए? भैंसे जैसी मोटी चमड़ी है, तभी तो ऐसी-ऐसी बातें कहते हो।''

अपने मुहावरों की दुर्दशा होती देखकर भला किसको परेशानी नहीं होती?

हमारी बीवी हमारी अक्ल परखने का छोटे से छोटा चांस भी हाथ से जाने नहीं देती। हमारी खरीद के लाई हुई तरकारी को, मरी हुई छिपकली की तरह उठा-उठाकर कहेगी—

''ये बैंगन लाए हो? सब के सब काने। सूँड़ देखो, इनमें कैसे बेईमान चोरों की तरह छिपे हुए हैं। ये तोरियाँ, इनमें बीस-बीस मोरियाँ। ये खरबूजे फकरौड़। अक्ल बगैर अच्छी चीजें नहीं खरीदी जातीं। सयाने ऐसे ही तो नहीं कहते न 'अक्ल बगैर कुएँ खाली'।''

''जितना चाहे चौकन्ने रहो, फिर भी ये दुकानवाले डाल ही देते हैं गंद-मंद। आँखों में दिन-दिहाड़े मिरची डालते हैं आजकल लोग।''

''मूर्खों के ही मिरची डालते हैं, अक्लवाले कब पड़ने देते हैं अपनी आँखों में मिरची-विरची। दूर क्या जाना है, अपने पड़ोसी परसे को ही देख लो, कैसी सोने जैसी तरकारी लाता है छाँटकर।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूर्ख पड़ोसी से तुलना होती देखकर हममें कमतरी का एहसास जगने लगता है।

'हम परसे से भी गए गुजरे हो गए भला?' सोच-सोचकर हमें जलन होने लगती है।

''बीवी तो फिर ढबकी लाया ना, बड़ा शनाख्ती। परसा कहाँ का पारखी हो गया?'' हम तिड़ककर कहते हैं।

''यह तो अपनी-अपनी किस्मत है। हमारी किस्मत को ही देख लो, क्या चीज मिली है हमें। बहुत दूर जाने की जरूरत नहीं, अपने घर ही झाँककर देख लो।''

''क्यों, हमें क्या कीड़े पड़े हुए हैं? दो-दो एम.ए. की हैं, तीन-तीन बच्चे पैदा कर दिए हैं और अक्ल क्या होती है?'' बीवी के पास ऐसी बातों के सैकड़ों तर्क हैं। झट कह देती है—

''गधे की पीठ पर मनों किताबें लाद देने से वह सयाना नहीं हो जाता। रही बात बाल-बच्चों की, सूर जैसे जानवर दर्जन-दर्जन बच्चे पैदा कर देते हैं, वे अक्लवान हो गए? अक्ल के घर दूर हैं जो 'अक्ल बगैर कुएँ खाली'।''

हमारा अक्ल का झगड़ा पिछले बीस वर्ष से यूँ का यूँ ही लटकता आ रहा है।

सा. अ.

स्ट्रीट ९, न्यू टाऊन,
डी.एन. मॉडल टाउन के समीप
मोगा-१४२००१
(पंजाब)

कविता

दो कविताएँ

● रूपा सिंह

: एक :

चले जाना होगा मुझे एक दिन चुपचाप
छोड़ते हुए अपनी चमकती खाल
साँसों से पुलकित अश्रुकण
कड़कड़ाती हड्डियों को गुँजाते हुए
स्पंदनों से झाड़ देने होंगे आवेग तमाम।

पृथ्वी खिल सके नारंगी के रेशे सी
इसके लिए अपनी अमरता का थोड़ा
वरदान भी छोड़ देना होगा यहीं कहीं···

लिखकर हो जाऊँगी समष्टि के बहुत करीब
पर अनकहा मौन कहाँ ढोऊँगी?
व्यक्ति तो चाहिए ही था बतियाने के लिए
वापस लौटने के लिए भी तो चाहिए थी
कोई परिचित गंध अपनी।

चली जाऊँगी मैं··· और
जाते-जाते चुपचाप खिलखिलाऊँगी मैं। □

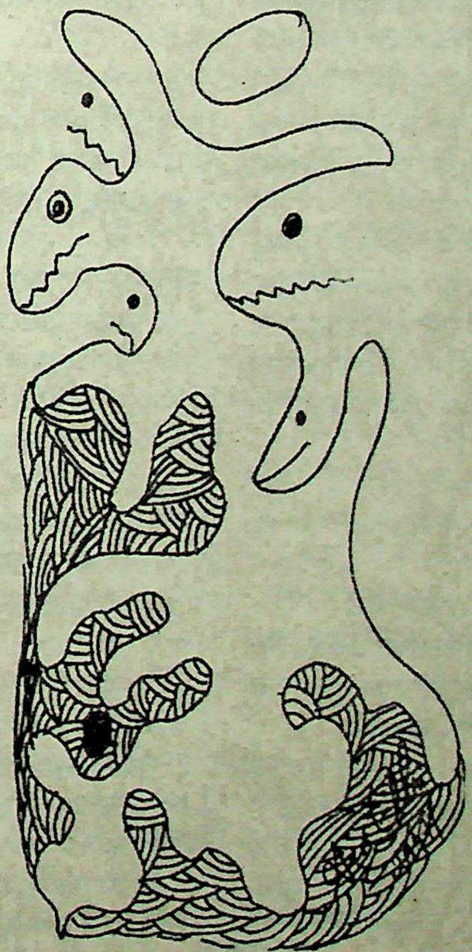

: दो :

सदियों बाद एक पुरानी परिचित सम्मोहक
आवाज रह-रह टेरती है।
निहारती हूँ आकाश, कुरेदती हूँ जमीन
ऊँचाइयों से झाँकती घुपती हूँ नींव।

लौ सी लहराती जो आवाज जो गई थी दूर
सूर्य के सात घोड़ों पर मुझे हाँककर
लाड़ से लिपटे चाँद को
रातों में भेजती हूँ मनुहार कर।

यायावरी के तमाम अभियानों से संक्रमित मैं
माचिस की डिबिया में विद्रोह की तरह सुलगती हूँ।
नहीं लौटी आज, फिर कब होगा लौटना?
फुनगियों से उतरना होगा, थामनी होंगी शाखें
देखने हैं फूल तो सींचने होंगे बीज भी
सुननी है ललकार तो देनी होगी एक पुकार भी
सदियाँ लौट आएँगी··· रखनी होगी
इतनी गुंजाइश भी।

सा. अ.

डी-१०, पालीनगर, ग्राउंड फ्लोर
नई दिल्ली-११००१५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मरण

बहुत कुछ रह जाता है अनकहा-अनलिखा : विश्वंभर अरुण

● रति लाल शाहीन

लगता नहीं कि प्रोफेसर विश्वंभर अरुण नहीं रहे! शनिवार २९ मई को वे अचानक इस दुनिया से कूच कर गए। कुछ महीने पहले नवंबर, २००९ में उनसे आखिरी मुलाकात हुई थी। तब वे सपत्नीक अपने पुत्र डॉ. आलोक के घर आए हुए थे। बोले थे, 'दिल्ली के एम्स में जब से दिल का ऑपरेशन हुआ है, तबीयत ठीक नहीं हो पाई है। बड़ी अव्यवस्था है। प्रबंधन ठीक नहीं है।' हालाँकि गाजियाबाद के प्रसिद्ध डॉक्टर, उनके ज्येष्ठ दामाद डॉ. भारद्वाज तब उनके साथ ही थे।

मेरा उनसे सन् १९६६ से पहले का परिचय रहा। इंटर कॉमर्स में हिंदी में रहीम के दोहे थे। मैं चिनाई कॉलेज, अँधेरी में निर्माणाधीन कॉलेज की पहली बैच का विद्यार्थी! प्रोफेसर एस.पी. नाईक., प्रोफेसर बी.जी. अय्यर, प्रोफेसर आजवाणी, प्रोफेसर बी.के. आचार्य, जितने भी प्रवर लेखक थे, हमारे प्राध्यापक थे। प्रोफेसर जी.जे. त्रिवेदी हमें हिंदी पढ़ाया करते। हिंदी इंटर तक हमारा अनिवार्य विषय था। साहित्येतर विद्यार्थी होने के बावजूद मेरी गहरी रुचि साहित्य में थी। विश्वंभर अरुणजी लिखित 'रहीम सतसई' मेरे पास थी। उसमें भी एक दोहे की व्याख्या कुछ त्रुटिपूर्ण थी। वही गलती हमारे प्राध्यापक त्रिवेदीजी ने भी की! कक्षा में अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए मेरी बातों का जवाब देते हुए उन्होंने कहा, 'आप प्रोफेसर रूम में मिल लीजिएगा!'

वहाँ उन्होंने अपनी गलती स्वीकार की। इधर मैंने जानकी-निवास, २४ मानपाडा, आगरा-२८२००३ के पते पर व्याख्याकार प्रोफेसर विश्वंभर अरुणजी को उनकी गलत मीमांसा की ओर ध्यान दिलाया। आशा के विपरीत, उनका उत्तर जल्दी मिला और अगले संस्करण में उसे ठीक करने का आश्वासन भी। इसके बाद तो मेरा उनसे निरंतर पत्राचार बना रहा। पत्रों में वे बेहद आत्मीय, विनम्र और मार्गदर्शी रहते।

उसके बाद उनसे जयपुर में डॉ. सत्येंद्र के घर मुलाकात हुई। दूसरे दिन भाभीजी के साथ हम आगरा पहुँचे। गाड़ी छूटने में बारह मिनट थे। मैंने कहा, 'अब तो ट्रेन मिलनी मुश्किल है!'

'तुम फालतू बकवास न करो। बस, जल्दी ऑटो में बैठो!'

तब पता चला कि उनको असंभव और असफल शब्दों से बेहद चिढ़ है। ये मनुष्य की जिजीविषा को आहत करते हैं। अनुत्साह का संचार करते हैं। ऐसा कहने और सोचनेवाले जिंदगी में आगे नहीं बढ़ पाते।

तभी पता चला, काव्य अलंकार, कबीर, सतसई आदि पर भी उनकी किताबें हैं। सन् १९६६ से १९९० तक के दैनिक हिंदुस्तान, नवभारत टाइम्स, अमर उजाला, धर्मयुग, कादंबिनी, पराग, आदि में विश्वंभर अरुणजी के लेख, कथाएँ आदि हर एक अंक में लगभग छपते रहे। एकदम जाना-पहचाना नाम! 'तिल बड़े कातिल' और 'डॉ. राम विलास शर्मा : एक व्यक्ति, एक अंकन' काफी चर्चा में रहे। लेख में अरुणजी ने लिखा था, 'नाम राम विलास शर्मा। पर राम के काम-धाम से दूर, साम्यवादी हाव-भाव लपेटे हुए और ढाई अक्षर के पी-एच.डी. की उपाधि को ओढ़े हुए ये डॉक्टर साहब अंग्रेजी साहित्य के प्रोफेसर हैं, पर सम्मानित होते हैं हिंदी के काम पर!'

निर्भीकता, उग्रता और अक्खड़ता में मैंने भाई विश्वंभर अरुणजी को उग्रजी की तरह उग्र पाया। उनके बारे में एक घटना प्रसिद्ध रही। वह सच्ची घटना यूँ है—

एक बार एक सज्जन श्री विश्वंभर अरुणजी से मिलने आए। द्वार खटखटाया। अरुणजी नीचे उतरकर आए। उनका घर दो मंजिला है। उस सज्जन से दुआ-सलाम हुई। वे बोले, 'जरा अपने पिताजी को भेज दीजिए।' अरुणजी चकराए, पिताजी को स्वर्ग से उतारकर कैसे लाएँ? बोले, 'वह तो गुजर चुके हैं।'

'मेरा मतलब है,' वह सज्जन बोले, 'विश्वंभर अरुणजी से मिलना है!'

'जी, मैं ही हूँ।'

'जी, आप···!'

'क्यों आपको कोई ऐतराज है?'

'माफ कीजिए, मैंने समझा था···!'

'कि मैं कोई बूढ़ा-टेढ़ा, दमे से खाँसता हुआ, उम्र से बीता हुआ साहित्यकार होऊँगा!'

जब कमरे में दोनों बैठ गए तो उन सज्जन ने कहा, 'इतनी उमर में आपने इतनी उच्च कोटि का समालोचना साहित्य लिख डाला! छब्बीस पुस्तकें?' अब भी वे सज्जन खुश्क ओठों पर अपनी जीभ घुमा रहे थे। संशय-असंशय के बीच थे।

'उम्र आप क्या समझते हैं? मेरे चार बच्चे हैं!'

'लेकिन आप मालूम नहीं पड़ते!'

अत्यंत आकर्षक व्यक्तित्व के धनी, बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न, चपल, तेज-तर्रार विश्वंभर अरुणजी को देखने पर उनके प्रोफेसर होने का भी भास नहीं होता।

पढ़ना और यायावरी, उनके दो प्रिय विषय रहे। सन् १९७० में जब मैं उनसे मिला, तब वे पाँच बच्चों के पिता और बत्तीस किताबों के लेखक हो चुके थे। उसके बाद तो उन्होंने पीछे कभी मुड़कर नहीं देखा। साठ से ज्यादा किताबें। खुद एम.ए.; पर उनकी किताबें बी.ए. और एम.ए. में पढ़ाई जाती रहीं।

वे नया संदेश, सरस्वती संवाद, आलोचना, साहित्य संदेश, अमर जगत् आदि साप्ताहिक-मासिक प्रकाशनों के कुशल संपादक भी रहे। उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा संचालित कई साहित्यिक कार्यक्रम उनके शब्द-ज्ञान और विनोदी वृत्ति की भी मिसाल होते। शब्दों के तो ऐसे बखिए उधेड़ते कि सुननेवाले सुनते ही रह जाते! उनकी विद्वत्ता और असीम ज्ञान से सभी दंग रह जाते।

सन् १९७० में उनसे मैंने एक लंबी बातचीत की थी। तब भी वे उदर-पीड़ा से त्रस्त रहा करते थे। उनको एक-से-एक नए स्वाद का आस्वाद लेना प्रियकर लगता। जहाँ मौका लगता, गोल-गप्पे, पैटिस, चाट का अवसर कदाचित् ही छूटता। तब वे जानकी-निवास में रहा करते थे। सेठ गली के आगे है, मानपाड़ा। वहीं है पत्थरों से चिनी इमारत 'जानकी-निवास'। 'जानकी' उनकी माताश्री का नाम है। ५ जुलाई, १९३६ में उनका जन्म हुआ। वे अकसर कहा करते, 'लिखने से मुझे आत्म-संतोष मिलता है। उससे मेरी परिचित-परिधि बढ़ती है। यूँ तो विद्यापति, सूर, मीरा आदि कवि मुझे प्रिय लगते हैं, पर सर्वाधिक प्रिय 'प्रसाद' लगते हैं।' अतिमा, अणिमा, आलोक; 'कामायनी' के सर्ग-चरित्र हैं। प्रसादजी से ही प्रेरित होकर उन्होंने अपनी पुत्रियों के नाम अतिमा, अणिमा, अमला और कामायनी रखे थे और पुत्र का आलोक! उनसे मैंने एक बार पूछा था, 'इतनी सारी शोधपूर्ण-खोजपरक पुस्तकें लिखने के बाद भी आपने पी-एच.डी. क्यों नहीं की?'

वे बोले थे, 'आप का सवाल उपगूढ़ित जरूर है, पर उसके उत्तर में अपना प्रमाद, अपनी काहिली और अपनी अयोग्यता को सामने रख दूँगा। कुछ यह भी कि मुझे अपनी किशोरावस्था में विवाहित होना पड़ा। पिताजी का स्वर्गवास, पारिवारिक दायित्व, बाद में माँ का भी बिछोह और उस पर सर्विस का अभाव! सबसे ऊपर उग्र स्वाभिमानी स्वभाव; इन्हीं सब कारणों ने मुझे पी-एच.डी. की डिग्री से वंचित रखा। वैसे इस भारी-भरकम डिग्री का मुझे कभी मोह नहीं रहा! पी-एच.डी. हो जाने पर कोई विशिष्ट गौरव मिल जाता है, ऐसा मुझे नहीं लगता। इसे कोई लोमड़ी के खट्टे अंगूर कहे, तो कह ले!'

डॉ. प्रभाकर माचवे ने तो विश्वंभर अरुण के पी-एच.डी. न करने के रहस्य से अवगुंठन ही उठा दिया है। वे लिखते हैं, 'अपने जीवन की बात देख लीजिए इनकी! ये खुद पी-एच.डी. अब तक न कर सके! एक बार फॉर्म भरा! चार वर्षों का समय वैसे ही बीत गया। दूसरी बार प्रारूप जमा कराए, वह भी कितनों के कितना कहने पर! परंतु फिर भी उस तरफ कोई झुकाव नहीं। आप कहेंगे, ऐसा क्यों होता है? अरे भाई! दूसरों को गाइड करने से, दूसरों का प्रारूप मंजूर कराने और उसकी थीसिस को पूरा कराने से अवसर मिले तब तो अपने पर विचार भी किया जा सके! न जाने कितने-कितनों का एहसान सिर पर उठा रहे हैं और चैन तब तक नहीं लेते, जब तक काम पूरा न हो जाता। इस बीच न खाने का ठीक, न नहाने का।''

विश्वंभर अरुणजी अकसर परोपकारी रहे। वास्तविक मुलाकात में तो सामनेवाले को इतना डाँट देते कि वह अगली बार इनसे न मिलने की कसम खा लेता। पर उसकी भूल को सुधारने और उसे सफलता के सोपान पर ले जाने में वे कोई कसर न बाकी रखते!

मेरे खयाल से कई लोग उनके इसी उग्र स्वभाव के कारण उनसे खिन्न मन हो जाते! मुँहफट होने से आदमी अपनों को रुष्ट ही करता है। इन सतरों के लेखक को भी बार-बार यही प्रतीति कचोटती रही। मधुरता सबको भाती है, भले ही आगे चलकर क्यों न मधुमेह का रोगी बना दे। वह गवारा होता है! पर अपनी निंदा, वह भी अपनों ही के सामने किसे रुचती है? हिंदी के जो प्रकाशन आर्थिक अभाव में साँस गिनने लग जाते, उनको बड़ी सी राशि भेज वे आजीवन सदस्य बन जाते। हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति उनका समर्पण निर्विवाद है। उनके संपादक में बाबू गुलाब राय ग्रंथावली के चार खंड संप्रति निकले हैं। पिछले दिनों जब उनसे मिला तो एक संपादक महोदय ने कबीरजी पर उनसे लेख माँगा था। बड़े व्यथित स्वरों में बोले थे, 'वहाँ आगरा में अथाह भंडार पड़ा है। स्वयं मेरी ही संपादित किताबें हैं। उन सबको दीमकें चाट रही हैं। तुम तो जानते हो, पद्म सिंह शर्मा, कमलेश, अंबालाल सुमन आदि दिग्गज लेखकों का जमघट वहाँ हुआ करता था। अब ओपन हार्ट सर्जरी होने के बाद, सीढ़ियाँ चढ़ना भी एक विपदा है। बच्चे कहते हैं, आप यहीं रहिए! जब मकान दुबारा बना देंगे, तब जाइएगा! एक-से-एक नायाब, दुर्लभ ग्रंथ वहाँ सड़ रहे हैं। सोच-सोचकर तकलीफ और बढ़ जाती है!' कबीर पर दूसरे दिन वे पाँच सौ की किताबें खरीद लाए।

मैंने देखा, वे कहीं से भी बीमार नहीं लग रहे थे। कहने पर फिर उबल पड़े, 'कौन कहता है मैं बीमार हूँ।'

सच भी था। सुबह-शाम सज-धजकर सैर के लिए जाते। चेहरे से स्वस्थ-मस्त दिखते! मेरे आने की वजह से उस दिन उनका सैर का कार्यक्रम रद्द हो गया! बोले, 'कहाँ जाना चाहते हो?'

फिर स्वयं ही बोले, 'यहीं पास में है प्रभात प्रकाशन। आसफ अली रोड पर। अपने साथी श्याम सुंदरजी से मिलने चलते हैं।'

व्यंग्यकार केशव कहिन के साथ हम प्रभात प्रकाशन में थे। बाबूजी (आद. श्याम सुंदर) ने बड़ी गर्मजोशी से हमारा स्वागत किया। वैसे बाबूजी हमेशा ऐसे ही मिलते हैं। भले ही उम्र अस्सी के पार हुई तो क्या? मिलते ही उन्होंने मुझे पहचान लिया, 'आप कुछ साल पहले भी मिले थे।'

उनकी प्रखर स्मृतिशक्ति ने उन्हें सब याद दिला दिया! भाई विश्वंभर अरुणजी को संबोधित करते हुए बोले, 'मैंने इनसे पहले ही कहा था कि इसके जैसे लेखक को साल में चार बार आना चाहिए। ये तो चार साल में एक बार आते हैं। ये दिल्ली है, राजधानी है, तिस पर ये लिक्खाड़ भी हैं।'

विश्वंभर अरुणजी ने बताया, 'जब आदरणीय श्याम सुंदरजी सस्ती, सेक्सी और अच्छी किताबें छापा करते थे तब से हम मित्र हैं।'

अरुणजी शब्दों की ब्रह्मशक्ति को लेकर एक पुस्तक लिखना चाहते थे। एक अपनी जीवनी भी। बाबूजी ने कहा, 'आप पुस्तक दीजिए। मैं यूँ चुटकी बजाते छाप दूँगा!'

वहीं शाम के छह बज चुके थे। कहीं और जाने का प्रश्न ही नहीं था! अरुणजी को चलने में कष्ट होता था। बोलने में भी उनकी जिह्वा अब कम साथ देती थी। फिर भी नमक, जो कि उनके लिए जहर था, उसका त्याग करने को वह राजी न थे। इसी बात को लेकर भाभी श्रीमती मुकेश रानी से उनका कई बार वाक्युद्ध हो जाता।

मनुष्य पहले विचारों से बेजान होता है, फिर शरीर से। उन्होंने लिख न पाने के रंज में अपने आप को निर्मुक्त छोड़ दिया। जीवन स्रोतस्विनी की लगाम को बेलगाम, बंधनरहित कर दिया और उनका शरीर आत्मा से मुक्त हो गया। उनके चले जाने से अथाह ज्ञान का एक अनआकलित भंडार, तात्कालिक संदर्भ का आगार सूख गया, जिसका विकल्प ढूँढ़े नहीं मिलेगा।

७५/सी-१८, अंकिता सोसाइटी,
सरदार पटेल नगर, जानकी देवी स्कूल रोड,
म्हाडा चार बँगला, अँधेरी पश्चिम,
मुंबई-४०००५३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभात प्रकाशन आगामी प्रमुख प्रकाशन

ISO 9001 : 2008 प्रकाशक

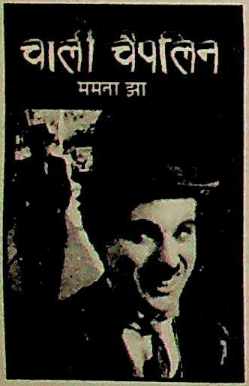

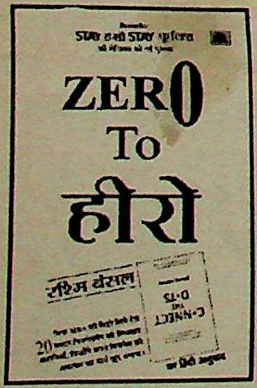

- महात्मा गांधी
  ग्राम स्वराज्य
  सत्य के साथ मेरे प्रयोग
- डॉ. राजेंद्र प्रसाद
  चंपारण में महात्मा गांधी
- ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
  जीवन वृक्ष
- एन.के. सिंह
  विवेक की सीमा : राजनीति और परिवर्तन
- मयंक छाया
  विश्व शांति गुरु दलाई लामा
- अशोक राज
  योग गुरु स्वामी रामदेव
- सं. उमा विष्णु
  गौरवशाली भारत
- जॉन एम. हंट्समैन
  विजेता धोखा नहीं देते
- रमा बीजापुरकर
  120 करोड़ भारतीयों का बाजार
- रश्मि बंसल
  Zero To हीरो
- वी. रघुनाथन
  थक मत, जीना सीख
- मॉर्गन विट्जेल
  टाटा ब्रांड की कहानी
- सं. सुशील कपूर
  विश्व के महान् भाषण
- विक्रम अकुला
  मुट्ठी भर चावल
- रोहिणी नीलकेनी
  स्टिल बॉर्न
- जूलन वर्न
  80 दिन में दुनिया की सैर
- स.ही. वात्स्यायन अज्ञेय
  अज्ञेय : रचना सागर
- नोरोनहा/सुजाता अग्रवाल
  नैनो
- आचार्य महाप्रज्ञ
  जो सहता है वही रहता है
- विनीत नायर
  पहले कर्मचारी फिर ग्राहक
- सरश्री
  जीवन रहस्य
- नितिन गडकरी
  विकास के पथ
- गौरव बंसल
  जीतना : तमाम बाधाओं के बावजूद
- **राष्ट्र ऋषि नानाजी**
- मुश्ताक शेख
  कहानी शाहरुख खान की
- शशांक जौहरी
  सुपर स्पीड कंप्यूटर कोर्स
- रशमीत कौर
  सुपर स्पीड इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स
- सं. बदरीनाथ कपूर
  स्टुडेंट अंग्रेजी-हिंदी कोश
  स्टुडेंट हिंदी-अंग्रेजी कोश
- जय शंकर मिश्र
  24×7 आनंद ही आनंद
- ममता महरोत्रा/महेश शर्मा
  शिक्षा का अधिकार (RTE)
  महिला अधिकार और मानव अधिकार
- शिवगोपाल मिश्र
  आपदा प्रबंधन
- अनुपम मिश्र
  आज भी खरे हैं तालाब
- डॉ. प्रफुल्ल विजयकर
  Predictive होम्योपैथी
- प्रेमपाल शर्मा
  घरेलू इलाज
- विनोद मल्होत्रा
  गीता में मैनेजमेंट सूत्र
- अजय कुमार उपाध्याय
  हिंद स्वराज की अनंत यात्रा
- शंभू रतन अवस्थी
  नवीकरणीय ऊर्जा
- ममता झा
  चार्ली चैप्लिन
  शेयर बाजार में सफलता कैसे पाएँ
- रस्किन बॉण्ड
  साहसिक कहानियाँ
  भारत के बच्चे
- मनु शर्मा
  द्रौपदी की आत्मकथा
- शंकर
  विवेकानंद की आत्मकथा
- रमेश पोखरियाल 'निशंक'
  प्रतिज्ञा
- ईशान महेश
  मुझे कृष्ण चाहिए
- शुभांगी भडभडे
  योगीराज संत ज्ञानेश्वर
- अशोक गुजराती
  व्यंग्य के रंग
- शिव शर्मा
  दुम की दरकार
- हरि जोशी
  नेता निर्माण उद्योग
- विजय कुमार
  कुरसी तू बड़भागिनी
- दिनकर जोशी
  चक्र से चरखे तक
  रामायण के पात्र
- सूर्यबाला
  कात्यायनी संवाद
- ऋता शुक्ल
  मृत्युगंध-जीवनगंध
- सं. अरुणा सीतेश
  बयार उस पार से
- मंजु मधुकर
  चंपई मन
- वीरबाला वर्मा
  बस इतनी सी रोशनी
- सुचित्रा भट्टाचार्य
  अंधकार बेला
- पूर्णिमा केडिया 'अन्नपूर्णा'
  सीढ़ियाँ
- हरदर्शन सहगल
  तीसरी कहानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी प्रमुख प्रकाशन

- मोजेज माइकेल
  ओ. हेनरी की श्रेष्ठ कहानियाँ
- सिरिल मैथ्यू
  इनसानियत की वापसी
- रोशन प्रेमयोगी
  एक डॉक्टरनी की कहानी
- सुरेश कांटक
  सूरज उगने से पहले
- रत्नेश्वर
  लेफ्टिनेंट हडसन
- राजेश कुमार
  दस नुक्कड़ नाटक
- दिशा गुलाटी
  सरोजनी नायडू
- टी.के. बसु
  सी.वी. रमन
- बेंजामिन फ्रैंकलिन
  आत्मकथा
- दिनकर
  मार्टिन लूथर किंग (जूनियर)
- रामप्रसाद बिस्मिल
  आत्मकथा
- दिलीप कुलकर्णी
  जे.सी. बसु
- प्रेमचंद्र स्वर्णकार
  संक्रामक बीमारियों से कैसे बचें
- रुडयार्ड किपलिंग
  द जंगल बुक
- हेलन कीलर
  मेरा जीवन
- मायाराम 'पतंग'
  विद्यालय में मनाए जानेवाले उत्सव
  हमारे विद्यालय गान
  श्रेष्ठ विद्यालय गीत
- विनोद कुमार मिश्र
  डायनासोर
- डॉ. डी.डी. शर्मा
  गणित में पाएँ 100/100
- श्यामसुंदर शर्मा/डॉ. निलय खरे
  मध्य रात्रि के सूर्य का प्रदेश : आर्कटिक
- मनोज शर्मा
  आओ, शतरंज खेलें
- कमोडोर विजय शंकर बबेले
  पति, पत्नी और नौसेना
- सं. गिरिराज शरण
  मैं विवेकानंद बोल रहा हूँ
  मैं लाजपतराय बोल रहा हूँ
  मैं अरविंद बोल रहा हूँ
  मैं सावरकर बोल रहा हूँ
  मैं गांधी बोल रहा हूँ
  मैं सुभाष बोल रहा हूँ
  मैं नेहरू बोल रहा हूँ
  मैं पटेल बोल रहा हूँ
  मैं तिलकबोल रहा हूँ
- प्रशांत गुप्ता
  मैं कलाम बोल रहा हूँ
- जयश्री
  मैं राधाकृष्णन बोल रहा हूँ
- अनिल
  मैं भगतसिंह बोल रहा हूँ
- महेश शर्मा
  कबीर दोहावली
  रसखान दोहावली
  रहीम दोहावली
  मीराबाई दोहावली
  तुलसी दोहावली
  सुरदास दोहावली
- संजय कुमार द्विवेदी
  1000 झारखंड प्रश्नोत्तरी
  1000 उत्तर प्रदेश प्रश्नोत्तरी
  1000 भारत ज्ञान प्रश्नोत्तरी
- राजेंद्र प्रसाद सिंह
  1000 महापुरुष प्रश्नोत्तरी
- बृजकिशोर प्रसाद सिंह
  1000 हिंदी वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तरी
- मोहननंद झा
  भारत के महान् संगीतज्ञ
- आशारानी व्होरा
  भारत की प्रथम महिलाएँ
- प्रमोद कुमार अग्रवाल
  जागो, ग्राहक जागो
- रवि चतुर्वेदी
  क्रिकेट की रोचक बातें
- जॉन विल्सन
  बाइबिल की कहानियाँ
- मुकेश नादान
  सिंहासन बत्तीसी
- स्वप्नदर्शी
  अरेबियन नाइट्स
- वैभव विप्लव
  किस्सा हातिमताई का
- श्रुति
  शौर्य और बलिदान की कहानियाँ
- विभोर कुमार
  रोमांचक कहानियाँ
- सत्य प्रकाश द्विवेदी
  संपूर्ण पंचांग ज्ञान
- आनंद आदीश
  आँखिन देखी, अंतर लेखी
  राष्ट्रमंत्र के हे उद्गाता!
- सं. श्रीकांत
  पीर मुहम्मद मूनिस : कलम का सत्याग्रही
- अनिल प्रकाश
  समय के सरोकार
- बाल्मीकि महतो
  अठारहवीं सदी का बिहार
- पवन
  कार्टूनों की दुनिया
- सुरेश प्रसाद
  मदांतकी
- जगदीश ममगाँई
  लोकशिल्पी दिल्ली नगर निगम
- डॉ. चंदर सोनाने
  पर्वतों का अंतःसंगीत

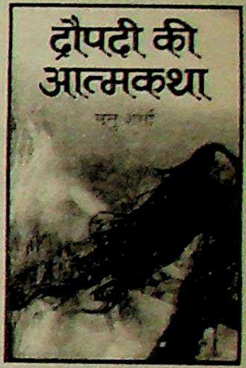

प्रभात प्रकाशन
ISO 9001 : 2008 प्रकाशक

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-2 ☎ 23289777 ✧ फैक्स : 23253233
इ-मेल : prabhatbooks@gmail.com ✧ वेबसाइट : www.prabhatbooks.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोककथा

कछुए की चतुराई

• सुरेश ऋतुपर्ण

जन्म : सन् १९४९, मथुरा (उ.प्र.)।

शिक्षा : हिंदी साहित्य में एम.ए., एम.लिट. एवं पी-एच.डी. की उपाधि।

प्रकाशन : 'अकेली गौरैया देख' *(कविता संग्रह)*, 'मुक्तिबोध की काव्य सृष्टि' *(आलोचना)*, 'हिंदी की विश्व यात्रा', 'हिंदी सब संसार', 'पं.कमला प्रसाद मिश्र की काव्य-साधना' सहित कई पुस्तकें प्रकाशित। अनेक देशों की यात्राएँ एवं दीर्घ प्रवास। त्रैमासिक पत्रिका 'हिंदी जगत' के प्रबंध संपादक।

सम्मान : विदेशों में हिंदी प्रचार कार्य के लिए 'ट्रिनीडाड हिंदी भूषण सम्मान', 'हिंदी निधि सम्मान', 'विदेश हिंदी प्रसार सम्मान' एवं 'फादर कॉमिल बुल्के सम्मान'।

संप्रति : जापान की तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑफ फॉरेन स्टडीज में प्रोफेसर।

सागर के अनंत विस्तार और गहराई में अनगिनत जलचर रहते हैं। उनकी एक अपनी ही दुनिया है, पर हमारी दुनिया की ही तरह उसमें भी हर तरह के स्वभाव वाले जीव हैं। कुछ जीव तो बहुत दयालु, विनम्र और परोपकारी हैं, तो बहुत से ऐसे जीव भी हैं, जो बड़े धूर्त, चालाक और घमंडी हैं। जैसा कि आप जानते ही होंगे कि सागर की विशालतम मछली के रूप में व्हेल मछली की बड़ी शान है। सब उसकी विशालता का सम्मान करते हैं।

एक दिन एक व्हेल मछली लहरों पर थिरकती जलक्रीड़ा कर रही थी तो सब जलचरों ने उसे रास्ता दे दिया। कोई भी उसके रास्ते में आकर चोट खाने का दुस्साहस नहीं करता था, बल्कि सभी सिर झुकाकर उसका अभिवादन करते थे। अनेक सालों तक यही क्रम चलते देखकर धीरे-धीरे व्हेल मछली को घमंड होने लगा कि सागर में उससे बड़ा और समझदार कोई नहीं है। वह धीरे-धीरे घमंडी और निर्दयी होती गई। रास्ते में आते-जाते वह किसी को भी अपनी पूँछ की चपेट में ले लेती और बेचारा जलचर कराह कर रह जाता था। कभी वह अपनी साँस के साथ जल का फौव्वारा छोड़ देती तो अच्छी से अच्छी तैराक मछली के भी हाथ-पैर फूल जाते। जब ऐसा होता तो व्हेल मछली को बड़ा मजा आता और वह अट्टहास करके हँसने लगती थी।

ऐसे ही एक दिन की बात है कि सागर के एक कोने में अनेक छोटे-छोटे जलचरों की गोष्ठी हो रही थी। सभी लोग अपने-अपने खट्टे-मीठे अनुभवों को एक-दूसरे को सुना रहे थे। सोन-मछली की मधुर आवाज में उसके अनुभवों का मजा लेने के बाद अब घोंघे की बारी थी। वह अपनी बात शुरू करने ही वाला था कि अचानक ऐसा लगा कि वहाँ सुनामी आ गई हो। पानी की लहरों में हलचल मच गई। बेचारे सभी जलचर घबराकर इधर-उधर भागने लगे। मछलियाँ तो लहरों के उतार-चढ़ाव में बड़े आराम से सुरक्षित बाहर निकल गईं, लेकिन वह घोंघा उस चक्र में फँस गया।

तभी उसने देखा कि एक विशालकाय व्हेल मछली उसकी ओर बढ़ी चली आ रही है। वस्तुतः उसके आने के कारण ही सारे पानी में खलबली मच गई थी। यदि वह सीधे-सीधे चलकर आ जाती तो कोई बात नहीं थी; लेकिन वह तो अपने घमंड में चूर होकर इठलाती हुई आ रही थी, उसके इस तरह इठलाने के कारण ही लहरों में हलचल मच गई थी। जब उसने देखा कि सभी जलचर घबराकर लदर-पदर भाग रहे हैं तो उसको इसमें बड़ा मजा आया और वह खुशी में भरकर अपनी नाक से पानी के बड़े-बड़े फौव्वारे छोड़कर मस्ती करने लगी।

घोंघे को उसका इस तरह घमंड में इठलाकर सबको परेशान करने का तरीका अच्छा नहीं लगा। उसने सोचा, 'सागर तो सबका घर है, इसलिए सबको मिल-जुलकर तथा एक-दूसरे का सम्मान करते हुए रहना चाहिए। इस तरह घमंड करके औरों को तिरस्कृत और परेशान करना अच्छी बात नहीं है।' ऐसा सोचकर उसके मन में आया कि एक अच्छे हितैषी मित्र और पड़ोसी की तरह उसे व्हेल से बात करनी चाहिए।

जब व्हेल मछली उसके बिलकुल पास आ गई तो उसने व्हेल मछली का अभिवादन करते हुए कहा, "कोन्निचिवा नमस्ते! आप कैसी हैं?"

व्हेल मछली ने सुन लिया कि घोंघा उसका अभिवादन कर रहा है, लेकिन उसने घमंड के कारण इधर-उधर ऐसे देखा मानो उसने कुछ सुना न हो और न किसी को देखा हो।

पहले घोंघे को भी यही लगा कि व्हेल मछली उसका अभिवादन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन नहीं पाई है। चूँकि वह उम्र और कद में उससे बहुत बड़ी है, इसलिए उसने सोचा कि एक बार फिर से अभिवादन कर लेना चाहिए। ऐसा सोचकर वह घूमकर उसके सामने गया और बोला, ''दीदी नमस्कार, कोन्निचिवा···नमस्ते। आप कैसी हैं?''

अब व्हेल मछली के लिए घोंघे को अनदेखा करना मुश्किल हो गया तो वह बोली, ''मैं कैसी हूँ क्या मतलब? देखते नहीं, भली-चंगी और खाती-पीती हूँ, पर मेरे सुकड़ू पहलवान! तुम अपनी सुनाओ! क्या चल रहा है। सुना है, आज तुम्हारी गोष्ठी थी, पर यहाँ तो कोई दिख ही नहीं रहा है? क्या गोष्ठी समाप्त हो गई है?''

घोंघा सब समझ गया कि व्हेल मछली ने आज जान-बूझकर उनकी गोष्ठी को उखाड़ा है। यों इसमें कोई नई बात भी नहीं थी। ऐसा तो वह अनेक बार पहले भी कर चुकी थी, बल्कि ऐसा करने में उसे मजा आता है। वह ऐसा तब भी करती थी, जब उसे सम्मान सहित कोई बुलाता था। जमे-जमाए आयोजन को उखाड़ने में उसे विशेष मजा आता है। बस वह तभी तक संतुलन में रहती है जब घड़ियाल और उसकी चमचा-पार्टी आस-पास होती है। बहरहाल, घोंघे को लग गया कि आज व्हेल मछली उनकी सभा को उखाड़ने के बाद जले पर नमक छिड़कने आई है, फिर भी उसने सौजन्यता को छोड़ना ठीक नहीं समझा। वह विनम्रता और हलकी सी मुसकराहट के साथ बोला, ''दरअसल, आपके आने का समाचार नहीं था। अन्यथा सब लोग आपके भव्य स्वागत के लिए यहीं पर मिलते। अगली बार हम आपको अध्यक्षता करने के लिए बुलाएँगे, तब सबसे मुलाकात हो जाएगी।''

व्हेल ने नाक-भौं सिकोड़कर कहा, ''अगली बार की बात अगली बार देखी जाएगी। दरअसल, मुझे तो आजकल देश-विदेश की यात्राओं से ही फुरसत नहीं रहती है। पुरस्कार-सम्मान पाते-पाते मैं थक गई हूँ, फिर भी लोग मेरा पीछा नहीं छोड़ते। क्या करूँ, स्वीकार करने ही पड़ते हैं, नहीं तो लोग कहेंगे कि मैं घमंडी हो गई हूँ।'' ऐसा कहकर व्हेल ने एक बार फिर नाक-भौं सिकोड़ते हुए होंठ बिचकाए।

घोंघे का धैर्य और सज्जनता जवाब देने लगी, क्योंकि वह जानता था कि सागर-राज्य के जितने भी पुरस्कार हैं, उन सबको हथियाने में व्हेल लगी रहती है। ऊपर से ऐसा दिखावा कि जैसे सब उसके पैरों पर पड़े रहते हैं। धूर्तता और झूठ की भी कोई सीमा होती है, वह व्हेल नहीं जानती थी।

व्हेल ने नाक-भौं सिकोड़कर कहा, ''अगली बार की बात अगली बार देखी जाएगी। दरअसल, मुझे तो आजकल देश-विदेश की यात्राओं से ही फुरसत नहीं रहती है। पुरस्कार-सम्मान पाते-पाते मैं थक गई हूँ, फिर भी लोग मेरा पीछा नहीं छोड़ते। क्या करूँ, स्वीकार करने ही पड़ते हैं, नहीं तो लोग कहेंगे कि मैं घमंडी हो गई हूँ।'' ऐसा कहकर व्हेल ने एक बार फिर नाक-भौं सिकोड़ते हुए होंठ बिचकाए।

घोंघे का धैर्य और सज्जनता जवाब देने लगी, क्योंकि वह जानता था कि सागर-राज्य के जितने भी पुरस्कार हैं, उन सबको हथियाने में व्हेल लगी रहती है। ऊपर से ऐसा दिखावा कि जैसे सब उसके पैरों पर पड़े रहते हैं। धूर्तता और झूठ की भी कोई सीमा होती है, वह व्हेल नहीं जानती थी।

घोंघे ने सोचा कि अब वापस लौटना ही ठीक रहेगा। वह 'नमस्ते' कहकर चलने को हुआ कि व्हेल ने टोक दिया, ''क्या बात है, बहुत जल्दी में हो। कुछ देर और बात करते तो अच्छा लगता।''

घोंघे ने सोचा, आज अच्छे फँसे। न रोने के रहे, न हँसने के। क्या किया जाए? तभी उसे एक बहाना सूझा। उसने कहा, ''बात यह है कि हमारे घर के पासवाले समुद्र तट पर कछुआ और केकड़े की दौड़ का प्रोग्राम है। मैं उसका निर्णायक हूँ। इसलिए मुझे अब जाना ही होगा।''

व्हेल समझ गई कि घोंघा बहाना मार रहा है। उसे और चिढ़ाने के लिए बोली, ''अरे हाँ! तुम तो अंतरराष्ट्रीय ख्याति के धावक हो। तभी निर्णायक बनाए गए हो।'' और फिर अपनी आँखें गोल करके, नथुने फुलाकर बड़ी व्यंग्यपूर्ण भाषा में कहा, ''कभी हमारे साथ भी दौड़ने का कार्यक्रम बनाओ न!''

घोंघे को उसका व्यंग्य समझते देर नहीं लगी। पता नहीं, उसे क्या सूझी कि कह गया, ''अरे, आप हमारे साथ क्यों दौड़ लगाएँगी? आपको तो घड़ियाल और ड्रैगन ही पसंद आते हैं।''

ऐसा सुनते ही व्हेल एकदम चिढ़ गई। बात यह थी कि आजकल घड़ियाल का नाम सुनते ही वह अपना आपा खा देती है। चुनौती भरे स्वर में बोली, ''अच्छा तो यह बात है। चलो इसी समय तय कर लेते हैं कि यह दौड़ कब होगी?''

बेचारा घोंघा पछताने लगा। यह किस मुसीबत को गले लगा लिया। वह यह अच्छी तरह से जानता था कि वह तो क्या, कोई और भी उससे दौड़ में नहीं जीत सकता। लेकिन उसने यह सुन रखा था कि घमंडी का सिर हमेशा नीचा होता है और हार तो मन के मानने से होती है। अब हिम्मत हारने का समय नहीं है वरन् बुद्धि-कौशल से विजय प्राप्त करने का प्रयत्न करना होगा।

घोंघे ने बड़ी विनम्रता से कहा, ''आपके साथ दौड़ने की तो मैं बात भी नहीं सोच सकता, लेकिन चूँकि आप स्वयं यह चाहती हैं तो मैं भी तैयार हूँ।''

व्हेल ऐसा उत्तर सुनने की कल्पना भी नहीं कर सकती थी। वह सोच रही थी कि घोंघा गिड़गिड़ाकर···हैं···हैं···करता चला जाएगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन यह क्या? उसने तो चुनौती स्वीकार कर ली है। व्हेल ने घमंड भरे स्वर में कहा, "ठीक है, दिन और समय तय करो।"

घोंघे ने मन-ही-मन विचार किया। कोई भी रणनीति बनाने के लिए कुछ तो समय चाहिए। उसने मन में कुछ सोचते हुए कहा, "ठीक है, आज से तीन दिन बाद 'युरा' के तट से दौड़ शुरू करेंगे।"

व्हेल ने अपनी स्वीकृति में नाक से फौव्वारा छोड़ते हुए कहा, "ठीक है, तीन दिन बाद मैं 'युरा' के तट पर पहुँच जाऊँगी। और हाँ, तुम कहीं आना न भूल जाना।" ऐसा कहकर व्हेल अपनी पूँछ मटकाती वापस लौट गई।

बेचारा घोंघा अपने घर लौट आया। वहाँ पहुँचकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसके घर के आगे उसके अनेक मित्र, सगे-संबंधियों और परिवार के लोगों की भीड़ लगी थी। सब उसे देखकर प्रसन्नता से भरकर उसकी ओर दौड़ पड़े और उसे गले लगाने लगे। घोंघा समझ नहीं पाया कि इस सबका कारण क्या है। उसने आश्चर्य से पूछा, "अरे, क्या बात है? आप सब लोग यहाँ क्या कर रहे हैं?"

तब केकड़े ने आकर बताया, "हम तुम्हारे बारे में बहुत चिंतित थे, क्योंकि सोन मछली ने गोष्ठी से लौटकर बताया था कि तुम्हारी व्हेल मछली से बहस हो रही है और उस बदमिजाज एवं घमंडी व्हेल के आक्रामक स्वभाव से हम सभी परिचित हैं। हम सोच रहे थे कि कहीं वह आज तुम्हें··· ?"

घोंघे ने हँसते हुए कहा, "आज तो मैं बचकर आ गया हूँ, लेकिन तीन दिन बाद 'युरा' के तट पर मेरी अरथी उठेगी।" सब चौंककर एक साथ बोल पड़े, "क्या··· या-या-या!" तब घोंघे ने उन्हें सारी बात बताते हुए कहा, "भला व्हेल से दौड़ कैसे जीती जा सकती है?"

यह सुनकर सभी के चेहरे उतर गए। घोंघा ठीक कहता था, कहाँ वह पहाड़ जैसी व्हेल और कहाँ यह चींटी जैसा घोंघा! पर तभी कछुए दादा ने आगे आकर सब लोगों से कहा, "भाइयो! मैं नहीं समझता कि इसमें इतना निराश होने की बात है। क्या आप भूल गए, मैंने भी खरगोश से दौड़ जीती है और वह भी तब, जब कोई यह सोच भी नहीं सकता था। व्हेल तो खरगोश से भी ज्यादा घमंडी है। यदि समझदारी और एकता से काम लें तो हम व्हेल को हरा सकते हैं।"

कछुए दादा की बात सुनकर सबमें कुछ आत्मविश्वास लौटा, लेकिन फिर भी वे लोग आश्वस्त नहीं हो पा रहे थे। सबने कहा, "दादा! आप ही हम सबमें सबसे ज्यादा बड़े और अनुभवी हैं। आप ही कोई रास्ता बताएँ।" ऐसा कहकर सब कछुए दादा की ओर देखने लगे।

कछुए दादा ने चारों ओर सिर घुमाकर अच्छी तरह से देखा कि कोई चुगलखोर तो आस-पास नहीं है और जब वे आश्वस्त हो गए तो सबको करीब बुलाकर धीरे से बोले, "देखो, सभी घोंघे एक से लगते हैं। इसलिए आप में से दो और समझदार घोंघे मेरे पास आ जाएँ।" जब दो घोंघे आगे आ गए तो कछुआ दादा पहले वाले घोंघे से बोले, "देखो, तुम हमारे साथ 'युरा' के तट पर रहना। दूसरा घोंघा 'कोदामा' और तीसरा घोंघा 'मोरी' के तट पर जाकर बैठ जाएगा। हम 'युरा' के तट से व्हेल को 'कोदामा' तक दौड़ने के लिए कहेंगे। वहाँ यह हमारा दूसरा घोंघा पहले से ही मौजूद रहेगा और व्हेल से कहेगा, 'व्हेल दीदी! आप अब आकर पहुँची हैं। मुझे तो यहाँ आए कुछ देर हो गई।' अच्छा तो अब हम 'मोरी' तट तक दौड़ लगाएँगे। फिर जब व्हेल 'मोरी' तट पर पहुँचेगी तो हमारा तीसरा घोंघा उससे यही बात कहकर 'व्हेल' को वापस 'युरा' के तट तक दौड़ने को कहेगा। वहाँ हम सब पहले से ही मौजूद होंगे और वहाँ इस घोंघे को देखकर व्हेल चक्कर में पड़ जाएगी। तब हम घोंघे को पहले आया बताकर व्हेल को हरा देंगे।"

कछुए दादा की योजना सुनकर सबके मुरझाए चेहरे खिल गए। दोनों घोंघे सोन मछली की पीठ पर बैठकर 'कोदामा' और 'मोरी' तट की ओर रवाना हो गए। बाकी के सब जलचर तीसरे दिन 'यूरा' के तट पर दौड़ की तैयारियों में व्यस्त हो गए। स्वयंसेवकों की भीड़ तैयार हो गई। सब लोग सागर तल से रंग-बिरंगी घास और काई लेकर आने लगे, ताकि उनका उपयोग झंडियों की तरह किया जा सके।

तीन दिन पलक झपकते बीत गए। तीसरे दिन सब लोग 'युरा' के तट पर इकट्ठे हो गए। सोन मछली ने भी लौटकर दोनों घोंघों के 'कोदामा' और 'मोरी' के तट पर सकुशल पहुँच जाने का समाचार दे दिया। अब घोंघा और कछुआ दादा आगे आकर खड़े हो गए और व्हेल मछली के आने का इंतजार करने लगे। कुछ लोगों का विचार था कि व्हेल मछली नहीं आएगी। उसने घोंघे से ऐसे ही मजाक किया होगा। भला दोनों की दौड़ का भी कोई मतलब है?

लेकिन तभी सबने देखा कि सागर की लहरों में तेज हलचल होने लगी। तट पर भी काफी अंदर तक पानी आ गया था। कछुआ दादा और घोंघा भी कुछ पीछे हो गए। तभी व्हेल ने अपना मुँह लहरों से निकालकर घमंड भरे स्वर में कहा, "मैं आ गई हूँ। वह पिद्दी सा घोंघा कहाँ है, जो मेरे साथ दौड़ेगा?"

कछुए दादा ने नमस्ते करते हुए कहा, "हम सब आपकी प्रतीक्षा कर रहे थे। यह घोंघा आपके साथ दौड़ने के लिए तैयार है। इस दौड़ का कार्यक्रम इस प्रकार है। आप दोनों सबसे पहले 'कोदामा' तक के तट की दौड़ लगाएँगे। फिर वहाँ से 'मोरी' तट तक जाएँगे और 'मोरी' तट के बाद यहाँ 'युरा' के तट पर वापस आएँगे। और जो भी यहाँ पहले लौट आएगा, वही विजयी होगा।"

व्हेल कछुए दादा की बात सुनकर खूब हँसी और बोली, "अरे यह तो मेरे बाएँ हाथ का खेल है। आपको ज्यादा इंतजार नहीं करना पड़ेगा। मैं इधर गई और उधर से आई। हाँ, तो मैं दौड़ के लिए तैयार हूँ।" सब लोगों ने तालियाँ बजाकर घोंघे का उत्साहवर्द्धन किया। कछुए दादा ने लाल मूँगे से बने डंडे को हिलाकर दौड़ शुरू करने का संकेत दिया। संकेत पाते ही घोंघा पानी में कूद गया और धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा।

घोंघे को पानी में उतरते देख, व्हेल मछली सरपट दौड़ गई। उसके जाते ही घोंघा चुपचाप तट पर लौट आया और कछुए दादा के पास आकर बैठ गया।

उधर कुछ ही देर में व्हेल 'कोदामा' के तट पर पहुँच गई और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहंकार भरे स्वर में जोर से बोली, ''घोंघा महाराज! मैं तो यहाँ पहुँच गई हूँ। आप कहाँ हैं?''

''अरे! आप अब यहाँ पहुँची हैं? मैं तो कुछ देर पहले ही यहाँ आ गया था। कोई बात नहीं, अब हम 'मोरी' तट की ओर दौड़ लगाएँगे।'' दूसरे घोंघे ने आत्मविश्वास के साथ कहा।

व्हेल की आँखें फटी की फटी रह गईं। यह कैसे हो सकता है? पर वह क्या कर सकती थी। वह था तो घोंघा ही। उसने फिर 'मोरी' तट की ओर मुँह किया। दूसरा घोंघा भी पानी में कूद पड़ा और कुछ दूर तक जाने के बाद चुपचाप वापस तट पर आकर लेट गया। उधर व्हेल मछली बड़े गुस्से में तैरती हुई 'मोरी' के तट पर जा पहुँची और अपने पीछे की ओर देखती हुई बोली, ''मुझे तो घोंघा कहीं दिखाई ही नहीं दे रहा है।''

तभी व्हेल मछली ने एक आवाज सुनी, ''मैं यहाँ हूँ, आपके सामने। पीछे देखने पर तो मैं आपको कभी भी दिखाई नहीं दूँगा। सामने देखिए।''

व्हेल ने अपने सामने देखा। अरे यह क्या? एक घोंघा वहाँ खड़ा उसकी ओर हाथ हिला रहा था। व्हेल का सिर चकरा गया। उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। वह दूसरी बार भी हार गई थी। अब तो केवल एक ही अवसर और बचा था।

घोंघे ने कहा, ''तो फिर अब हम वापस 'युरा' के तट तक दौड़ लगाते हैं। आप तैयार तो हैं न?'' व्हेल यह सुनते ही गुस्से से लाल हो गई। उसका चेहरा तमतमा उठा। बोली, ''हाँ, मैं तो तैयार हूँ। आपके चलने की प्रतीक्षा कर रही हूँ। आप चलें तो मैं चलूँ।'' घोंघे ने उसके गुस्से के पीछे छिपी झेंप और शर्म को पहचान लिया। मुसकराता हुआ पानी में कूद पड़ा और छपाक-छपाक करके धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा।

व्हेल ने जब उसे जाते देखा तो एक जोर की छलाँग लगाई और वह सैकड़ों गज आगे चली गई। उसका सारा शरीर गुस्से और अपमान से जल रहा था। उसकी चाल में गजब की तेजी थी। वह सोचती जा रही थी, 'अब देखती हूँ इस पिद्दी से घोंघे को। मुझसे मुकाबला करने चला है। अपनी औकात भूल गया है। अभी 'युरा' के तट पर दूध-का-दूध और पानी-का-पानी हो जाएगा। सब जान जाएँगे कि सागर की उड़न-परी कौन है। इस छटंकी घोंघे को तो मैं कहीं का नहीं छोड़ूँगी।' ऐसी बातें सोचती-कहती व्हेल मछली जल्दी ही युरा के तट पर पहुँच गई।

लेकिन यह क्या? उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। उसने कई बार अपनी आँखों को पानी से धोया। वह क्या देख रही है? सामने कछुए की पीठ पर घोंघा खड़ा था और उसके गले में विजय की माला थी। सब लोग जोर-जोर से तालियाँ बजाकर घोंघे की जय-जयकार कर रहे थे। व्हेल के सामने हार मानने के अतिरिक्त और कोई चारा ही न था। उसका सारा घमंड चूर-चूर हो गया और मुँह छिपाकर वापस लौटने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं बचा था। वह शर्म से सिर झुकाकर वापस लहरों की ओट में चली गई।

सा अ

२२१, प्रभावी अपार्टमेंट्स,
सेक्टर १०, प्लॉट नं. १०
द्वारका, नई दिल्ली-११००७५

पाठकों से निवेदन

- **आपके सक्रिय सहयोग से 'साहित्य अमृत' का प्रकाशन निरंतर हो रहा है। इसके लिए हम आपके आभारी हैं।**
- **जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो गई है, वे कृपया अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करवा लें। साथ ही अपने मित्रों-संबंधियों को भी इसकी सदस्यता ग्रहण करने हेतु प्रेरित करने की कृपा करें। सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो पत्र या पोस्ट कार्ड द्वारा भी सूचित करने की कृपा करें।**
- **सदस्यता के नवीनीकरण की सूचना देते समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।**
- **किसी अवसर विशेष से संबंधित लेख भेजते समय कृपया उसे उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि उसे समय रहते प्रकाशन-योजना में सम्मिलित किया जा सके।**
- **साहित्यिक गतिविधियों के अंतर्गत सूचना-समाचार भेजते समय कृपया कार्यक्रम का स्थान, तिथि आदि भी भेजने का कष्ट करें, ताकि पाठकों को पूरी जानकारी मिल सके।**
- **सदस्यों से अनुरोध है कि सदस्यता संबंधी अपनी किसी भी प्रकार की समस्या को दूर करने के लिए कार्यालय-दिवसों में प्रातः 10.00 से अपराह्न 3.00 बजे के मध्य 23257555 • 23276316 पर संपर्क करें।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो कविताएँ

● संदीप नैयर

जन्म : २० अगस्त, १९६९।
शिक्षा: बी.ई. (ऑनर्स) मेकैनिकल इंजीनियरिंग।
गत डेढ़ दशक से ब्रिटेन के एक संस्थान में वरिष्ठ प्रबंधक।

बचपन की बातें

बहुत याद आती हैं बचपन की बातें,
मोगरे से दिन रजनीगंधा सी रातें,
चाँद की फाँकों का धीरे से चलना,
रात के काजल को आँखों में मलना,
सवेरे की मेहँदी का टेसू खिलाना,
वो शाम का जूही को छेड़ जाना,
धूप का छज्जे से नीचे उतरना,
सूरज का पीपल की डाली पे चढ़ना,
बारिश का ओले गिराकर चिढ़ाना,
यूँ ही वक्त बीता बस हँसते-हँसाते,
तितली की सुबहें, वो जुगनू की रातें,

दीदी का लल्लू कहके सताना,
भैया का बेवजह हल्ला मचाना,
मम्मी का सौदे में पैसे बचाना,
पापा का यारों में दावत उड़ाना,
चाचू की गप्पें, वो बुआ की झिड़की,
बरगद के पीछे की भुतही खिड़की,
दादी की पूजा, वो दादू की चुटकी,
'भैया तुम रैंबो हो' कहती थी छुटकी,
वो मासूम रिश्ते वो नाजुक से नाते,
बहुत कुछ गँवाया यहाँ आते-आते,
बहुत याद आती हैं बचपन की बातें,
मोगरे से दिन रजनीगंधा सी रातें।

□

चल पकड़-पकड़

चल पकड़-पकड़ तू डगर-डगर, चल गाँव-गाँव चल नगर-नगर,
चल ढटक सोच की अगर-मगर, चल छोड़ इधर चल छोड़ उधर,
चल चाँद उड़ा, चल धूप उगा, चल शाम-शाम, चल सहर-सहर,
चल हलदी के रंग झटक चल मटक-मटक, चल सँवर-सँवर,
चल पैरों की नींद भगा, चल हाथों में तू स्वप्न पकड़,
चल हवा पे अपने खींच निशाँ, चल बादल पे तू पाँव पसर।

ले हाथों में हल, पैरों में बल, आँखों में ले स्वप्न अटल,
चल गीत बीज और प्रीत सींच, संगीत खींच भूतल-भूतल,
विश्वास गाँठ चल हाट-हाट, मुसकान बाँट निश्छल-निश्छल,
चलकर श्रृंगार दर्पण निखार, काया सँवार निर्मल-निर्मल,
लावण्य खिला तरुवर-तरुवर, भर प्रेम सुधा बादल-बादल,
क्या धर्म नीत, क्या प्रणय रीत जिस ठाँव मीत, उस ठाँव मचल।

सा/अ

१५२-ए, समता कॉलोनी,
रायपुर- ४९२०१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम झरोखे बैठ के

अच्छे पड़ोस की पहचान

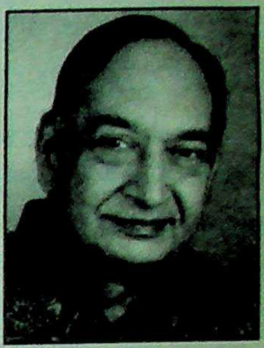

● गोपाल चतुर्वेदी

हमने जिंदगी भर कलमतोड़ मेहनत की। कलमतोड़ इसलिए कि कागद कारे करने के अभियान में अपने कई कलमों के निब दगा दे गए। ऐसे इस स्वीकारोक्ति से हमें कोई परहेज नहीं है कि कलम अपनी कमजोरी है। एक मित्र 'पारकर' जेब में सजाकर कल पधारे थे हमारे यहाँ। उन्होंने चाय पी। हम देश में बहुमत के साथ हैं, यानी डायबिटिक हैं। अपनी पत्नी को मजाक की आदत है। वह भूल जाती हैं कि कुछ मजाक जी जलाते हैं। उन्होंने जान-बूझकर अपने 'देवर' को दो महँगे रसगुल्ले चाय के साथ पेश किए। उस कम्बख्त ने आव देखा न ताव, चट कर गया। किसी डायबिटिक के सामने, उसी के घर की मिठाई खाने के जघन्य अपराध का मुकाबला नहीं है! पत्नी ने हमारी प्रशंसा की, "जब से डायबिटिक हुए हैं, मिठाई खाना तो दूर, यह उसे छूते तक नहीं हैं। अपना मिष्टान्न प्रेम अब यह दूसरे को मीठा खिलाकर पूरा करते हैं।" उनकी प्रशंसा धीरे-धीरे हिंदी फिल्मों के द्विअर्थी संवाद सी होती जा रही है। हम हैं कि सेंसर बोर्ड जैसे असहाय हैं।

अपने अंतर में असंतोष के अंगार धधक रहे थे, पर क्या कहते। हमें यकीन है। सभ्यता नाम ही उस मुखौटे का है, जो मन की बात मुँह पर न लाने के लिए इनसान ने ईजाद किया है। हम भी अपनी जीवन-संगिनी और मित्र की तरह मुसकराते रहे, मन-ही-मन यह मनाते हुए कि यह चिरकुट कल होता हो तो आज ही डायबिटिक हो जाए। हमें गंभीर आशंका है। ऐसी बद्दुआ हम घर आनेवाले हर दोस्त को दे चुके हैं। सब ऐसे ही मिठाई पर पिल पड़ते हैं। डायबिटीज आज तक किसी बदकिस्मत को नहीं हुई है। हमें शक होने लगा है। कहीं अपनी बद्दुआ में दुआ का असर तो नहीं है?

दोस्त ने रसगुल्ले ही नहीं खाए। हमारे जले पर जान-बूझकर और नमक छिड़का, "भाभी! क्या रसगुल्ले हैं! मुँह कतई मीठा हो गया है। कुछ नमकीन मिले तो चाय का आनंद आ जाए।" भाभी कहाँ चूकने वाली हैं! उन्होंने अपनी खातिरदारी की छवि और चमकाई। उनके लिए गरम पकौड़ी छनीं। हमें बढ़े कोलेस्ट्रोल से तला माल भी वर्जित है। उन्होंने दबाकर पकौड़ियाँ जपीं। हमने उन्हें कुछ भी कहे बगैर कोसा। अपने ऐसे एक अन्य भोजनभट्ट मित्र का पता हमें देने को उन्होंने पैन निकाला। रसगुल्ले-पकौड़ी से पेट भरने की तन्मय तंद्रा में वह उसे वहीं भूलकर घर सिधार गए। हमें लगा कि जिस कलम का नाम ही पार-कर है, उसे पार करने में क्या हर्ज है? तब से वह हमारी जेब की शोभा है। चूँकि मित्र और हमारी नौकरी अलग-अलग है, इसलिए इस पारकर के पकड़े जाने का खतरा भी नहीं है। यों पकड़े भी कैसे जाएँगे? हर कलम की शक्ल एक सी है। उस पर किसी का नाम तो जड़ा नहीं है।

इस विस्तृत वर्णन का लक्ष्य केवल यह इंगित करना है कि अच्छा पड़ोसी वही है जो पेटू न हो। अगर पेटू है तब भी हमें उज्र नहीं है, पर खाए तो अपने घर में खाए और कभी-कभी वहाँ सिर्फ हमें बुलाए। घनघोर मधुमेह में भी मुफ्त की मिठाई मन के लिए मुफीद होती है। हमारे डॉक्टर और परिवार की हो न हो, ऐसी अपनी मान्यता है। यों मुफ्तखोरी हमारे प्यारे मुल्क का राष्ट्रीय शौक है। देखने में आया है कि सरकार के बड़े-बड़े हाकिम चाँदी के जूते माँग-माँगकर खाते ही नहीं, पचा भी जाते हैं। उनके चेहरे की चमक से जाहिर है कि यह खुराक उनके लिए सेहतमंद है। आलम यह है कि कभी दाल-रोटी, गलती से भी खा ली तो उन्हें बदहज्मी होती है।

हम अनुभव के आधार पर कह सकते हैं कि अच्छे पड़ोस की पहचान आसान नहीं है। यह उतना ही कठिन है, जितना यह जानना कि आदर्श जीवन के मानक क्या हैं? एक बार रोज-रोज फर्म के दफ्तर में झक मारते-मारते अपन आजिज आ गए। बड़ा मन करता कि लंबी तानकर सोएँ। अपनी-अपनी कार्य-संस्कृति है। हमारा प्यारा देश अकसर अवकाश पर रहता है। हुआ यह कि लगातार तीन दिन की छुट्टी पड़ गई। इसका सुखद परिणाम निकला। पहला अवकाश का दिन तो ठीक-ठाक बीता, उसके बाद घर के छोटे-मोटे काम करते-करते अपनी नाक में दम हो गया। पप्पू कभी चिड़ियाघर देखने की जिद करता, कभी चाट खाने की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्नी को इस महँगाई के जमाने में याद आया कि बाजार जाना जरूरी है। बेडशीट और तौलियों वगैरह पर पच्चीस प्रतिशत का डिस्काउंट चल रहा है। यही मौका है कि पुरानी फटी चादरों की छुट्टी कर दी जाए। यहाँ दो वक्त के गुजारे के लाले पड़े हैं, उन्हें चद्दर-तौलियों का ध्यान आ रहा है।

इतने बड़े-बड़े मॉल बन गए हैं, वह भी इनसानी चैन के दुश्मन हैं। कहीं किसी 'सेल' की घोषणा होती है एक में तो दूसरा प्रतियोगी किसी और का ऐलान कर देता है। इनका इरादा है कि आदमी की छुट्टी इन्हीं के चक्कर लगाते-लगाते बीते। कोई यह नहीं सोचता कि निम्न मध्यवर्गीय जेब की सीमाएँ हैं, खासकर उनके लिए जो अभी भी कैश और क्रेडिट में संतुलन के पक्षधर हैं। या यों कहा जाए कि कर्ज के संक्रामक मर्ज से पूरी तरह पीड़ित नहीं हैं। वह नहीं चाहते हैं कि घर को किश्तों में अदायगी की उपभोक्ता योजना से सजाएँ और एक दिन यह नौबत आए कि वसूली के नुमाइंदे घर में घुसकर टी.वी., फ्रिज, वॉशिंग मशीन वगैरह-वगैरह उठाकर ले जाएँ। आज कुछ बाजार के रणबाँकुरे ऐसे भी हैं कि लोकलाज की चादर से पैर ही क्यों, पूरा शरीर भी बाहर आ जाए तो शर्म नहीं करते हैं। उनका उसूल है कि यदि 'क्रेडिट' है तो जीवन 'हिट' है। हमें पूरी आशंका है। अपने लख्ते जिगर पप्पू के मन में भी अभी से क्रेडिट के कीटाणु कुलबुलाने लगे हैं। वह हमें सलाह देते हैं, 'पापा! देखिए, इस दुकान में हर सामान उधार पर मिल रहा है। प्लीज, हमारे लिए ट्रैक वाली ट्रेन और रिमोट वाला जहाज ले दीजिए न।' हालात यह हुए कि तीसरे दिन तक हमें अफसोस होने लगा कि छुट्टी क्यों दी जाती है? क्या इसलिए कि कर्मचारी उससे तंग हो जाए और मनौती मनाए कि आगे से ऐसी दुर्घटना न हो।

हमारे बाप-दादा के इस पुश्तैनी घर के पास एक सेवानिवृत्त आला अफसर का बँगला है। जब वह आए थे तो एक दिन उन्होंने घंटी बजाकर हमें कृतार्थ किया और बताया, 'हम आपके नए पड़ोसी हैं। पास-पड़ोस के रहनेवालों से परिचय होना चाहिए।' इतना कहकर और कार्ड छोड़कर वह खड़े-खड़े चले गए। न उन्होंने बैठने की जहमत उठाई, न चाय पीने की। प्रथम-दृश्या, हमें वह एक अनुकरणीय पड़ोसी लगे। न आलतू-फालतू की गपशप, न चाय-पानी के रिश्ते। बस काम से काम। हमने पत्नी से कहा, 'पड़ोस का खाली प्लॉट भी आबाद हो गया है। हम लोग भी उनके यहाँ घंटी बजाने चलेंगे।'

उसके बाद हमने भी उनके यहाँ कई बार घंटी बजाई, पर हर बार उनके सेवक ने सूचना दी कि 'साहब' घर पर नहीं हैं। हमने सोचा कि फोन से अनुमति लेकर उनके दर्शन करें। फोन पर भी यही उत्तर पाया कि साहब उपलब्ध नहीं हैं।

वह तो उनके मंत्रालय के बाबू ने बताया कि बड़े साहब सामान्य मानव से अलग किस्म की नस्ल के लोग हैं। यह नस्ल अपने से बड़की कुरसी को सलाम बजाती है, बराबरी की कुरसी से दोस्ती का दिखावा कर पीठ में छुरा घोंपती है और नीचेवालों के अस्तित्व को नकारती है—'आप तो किस्मतवाले हैं कि खुद-ब-खुद देवता आपके द्वार पधारे।' उन्होंने चेताया कि इससे ज्यादा उम्मीद भी नहीं रखनी चाहिए, 'इतना ही काफी है कि ऐसा आला अफसर आज आपका पड़ोसी है और वह भी ऐसा-वैसा नहीं।' इस 'ऐसा-वैसा' से हम चकराए। यह क्या बला है! इसका कोई निहितार्थ है क्या? अपने-अपने तारीफ के अंदाज हैं, तरीके हैं। क्या पता 'ऐसा-वैसा' इस बाबू का अंदाजे-बयाँ है?

हमें याद आया। जब यह शख्सियत हमारे घर खड़े-खड़े पधारी थी तो यह पतलून-बुशर्ट धारण किए थी। हमें तब भी समझ में नहीं आया था, आज भी अपनी सीमित बुद्धि के परे हैं। बुशर्ट की जेब में कौन वज्र मूर्ख रुमाल सजाता है और वह भी 'लाल'? तब भी जेब का लाल रुमाल हमारे लिए एक राज था, आज भी है। उसी बाबू ने हमें ज्ञान दिया था कि इस अफसर ने 'कौम नष्टी' शासन के दौरान पश्चिम बंगाल में कभी सेवा नहीं की, क्योंकि यह तो उत्तर प्रदेश कैडर का अधिकारी है। जब अपनी जिज्ञासा जागती है तो अकसर रतजगे की सजा दिए बगैर मानती नहीं है। बेहतरी इसी में है कि लाल रुमाल का राज भी लगे हाथ इसी बाबू से जान लें। लिहाजा, हमने उन्हें अपनी संक्षिप्त तीस-पैंतीस सेकंड की मुलाकात का विस्तृत वर्णन सुनाया। 'भैया, उनकी बुशर्ट के ऊपरी पॉकेट में रुमाल, वह भी लाल? आखिर क्यों'?

उन्होंने लाल रुमाल के रहस्य को परत-दर-परत खोला, 'आप की निजी फर्मों में बड़े अधिकारियों के कमरों के आगे लाल-हरी बत्ती होती है क्या?' हमने इनकार में सिर हिलाया तो उन्होंने आगे बताया कि हर मंत्रालय के बाबू से लेकर उच्चाधिकारी तक के कंधे देश के भार से उलार हैं, बड़के अफसरों के कंधे तो कुछ ज्यादा ही। लिहाजा इन बड़ों को पूरी एकाग्रता से, कभी फाइल तो कभी मीटिंग से निबटना ही निबटना। इस 'शवासन' में कोई खलल न पड़े, इसलिए उन्हें लाल बत्ती की सुविधा प्रदान की गई है। इस दौरान सिर्फ महिला मित्र (दूसरे शब्दों में वर्तमान

उसी बाबू ने हमें ज्ञान दिया था कि इस अफसर ने 'कौम नष्टी' शासन के दौरान पश्चिम बंगाल में कभी सेवा नहीं की, क्योंकि यह तो उत्तर प्रदेश कैडर का अधिकारी है। जब अपनी जिज्ञासा जागती है तो अकसर रतजगे की सजा दिए बगैर मानती नहीं है। बेहतरी इसी में है कि लाल रुमाल का राज भी लगे हाथ इसी बाबू से जान लें। लिहाजा, हमने उन्हें अपनी संक्षिप्त तीस-पैंतीस सेकंड की मुलाकात का विस्तृत वर्णन सुनाया। 'भैया, उनकी बुशर्ट के ऊपरी पॉकेट में रुमाल, वह भी लाल? आखिर क्यों'?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमिका), चुनिंदा दोस्तों तथा कलीग्स को ही उनका निजी सचिव अंदर घुसने की इजाजत देता है। यह सूची स्वयं बड़के अफसर के निर्देश पर तैयार की जाती है।

इतना ही नहीं, आला अधिकारी सफर भी लाल बत्ती की गाड़ी में ही करता है। कमरा, कारपेट और कार में सबकुछ लाल ही लाल! रिटायरमेंट के पहले इस बड़के अफसर के जीवन का यह स्वर्ण काल ज्यादातर लाल बत्ती के इलाके में ही गुजरता है। स्वाभाविक है कि उसे जीवन में लाल का अभाव खले। इस कमी को कैसे दूर करे वह? कहावत है कि भागते भूत की लँगोटी ही भली। यहाँ तो रिटायरमेंट के बाद सरकार का भूत लँगोटी समेत तड़ी हो चुका है। उसकी याद में लाल रुमाल ही सही!

बाबू-ज्ञान से लाल रुमाल का रहस्य अपने पल्ले पड़ा। हमें लगा कि इससे फर्क क्या पड़ता है? वह जेब खाली रखें, लाल रुमाल लगाएँ या पीला, हास्यास्पद तो वह खुद को बना रहे हैं! इसका उन्हें पूरा हक है, हमसे क्या? कौन जाने शीशे में अपनी कार्टूनी छवि उन्हें सुहाती हो। वह आजाद देश के आजाद वरिष्ठ नागरिक हैं। चाहे तो अपनी शक्ल पूरी बिगाड़ें या आधी!

इस सबके बावजूद वह हमें एक अच्छे-खासे पड़ोसी लगे। न फोन उठाते हैं, न जाने पर मिलते हैं तो क्या हुआ? रोजमर्रा की जिंदगी में हस्तक्षेप भी तो नहीं करते हैं, यही क्या कम है! घर आकर दुश्मनी तो नहीं निभाते हैं दोस्त की तरह, वह भी अपनी भाभी से चिकनी-चुपड़ी बातें करके।

अचानक एक दिन घर का फोन घनघनाया। पत्नी ने उठाया और बताया कि घंटी बजानेवाले पड़ोसी हैं। हमने लपककर 'हैलो' किया। उधर से उसी रिटायर्ड सरकारी अफसर की आवाज आई। पहले हमारे जाने और उन्हें हर बार व्यस्त पाने पर उन्होंने खेद जताया। फिर बोले कि वह आज शाम 'फ्री' हैं। हम चाहें तो आ सकते हैं। हमने पत्नी को यह शुभ सूचना दी। शाम को हम दोनों सज-धजकर वहाँ पहुँचे। घंटी बजाई। इस बार ड्राइंग-रूम में प्रवेश मिला। अभी भी गरमी थी, जो उत्तर भारत में कमोवेश पूरे वर्ष रहती है। वह सफेद सफारी सूट की जेब में लाल रुमाल लगाए सपत्नीक उपस्थित हुए। पत्नियों से परिचय के बाद चाय-बिस्कुट आए और साथ ही स्वयं की विरदावली का उनका एक पक्षीय संवाद भी चालू हुआ, जो एक घंटे और चाय के दो कप ठंडे करके भी बमुश्किल खत्म हो पाया। उन्होंने पूरे वक्त 'मैं-मैं' की। निष्कर्ष यह निकला कि वह तो ऊब-थककर छोड़ चुके हैं, यह जिद्दी सरकारी कंबल अब उनको नहीं छोड़ रहा है।

वह 'मैं-मैं' करते रहे, हम प्रभावित होते रहे। 'मैं-मैं' करना बड़े लोगों की निशानी है। उन्होंने गिनाया कि वह इतनी महत्त्वपूर्ण कमेटियों में हैं कि उन्हें सबका नाम तक याद नहीं है। कभी गृहसचिव गवर्नरी के लिए फोन करते हैं, कभी वाणिज्य सचिव विदेश के डेलीगेशन में उनका नाम डालने की सहमति लेते हैं। बेचारे तंग आ गए हैं इतने प्रस्तावों से। हमारे बोलने का सवाल तो खैर था ही नहीं, आश्चर्य का विषय है कि पूरे वक्त उनकी पत्नी की बोलती भी बंद रही। बस वह कुल जमा एक वाक्य बोली, 'पहले तो इन्हें कुछ फुरसत थी भी, इधर तो है ही नहीं।'

जब इस चाय के बाद हम लोग घर लौटे तो अपना सिर भन्ना रहा था। पत्नी भी बदहाल थी। वह बोलीं, 'गनीमत है कि तुम सरकार में नहीं हो! क्या सरकार से रिटायर सब अधिकारी यों ही आत्म-मुग्ध बकवास करते हैं? हमने मंदिर में प्रभु की आरती और भजन सुने हैं। ऐसा अद्भुत और हैरतअंगेज नजारा तो कभी नहीं देखा है, जब प्रभु खुद ही अपनी आरती उतारें और भजन गाएँ!'

हमने पत्नी को आश्वस्त किया कि 'सब ऐसे पगलौट नहीं हो सकते हैं, यह जरूर कोई अपवाद हैं!' इस बोरियत के हादसे को कुछ ही दिन बीते थे कि एक रोज सवेरे-सवेरे हड़कंप सा मच गया। कुछ गाड़ियाँ आकर रुकीं। सादी वरदी में सात-आठ लोग उतरे। तकरीबन, दो-घंटे बाद 'साहब' को लोग गाड़ी में बिठाकर ले गए। हमें शक हुआ। साहब किसी आवश्यक मीटिंग में जाने से कन्नी कटा रहे होंगे, तभी घेर-घारकर उन्हें वहाँ ले जाया गया है। हमें उनकी व्यस्तता से हमदर्दी हुई। क्या जिंदगी है! जब सेवारत थे तब भी अपने लिए समय नहीं था, आज भी नहीं है।

हम शाम को दफ्तर से घर पहुँचे तो पत्नी और पप्पू जोर-जोर से चीखे, 'पापा, पापा, साहब 'अरेस्ट' हो गए। दोपहर की टी.वी. न्यूज पर उनकी तसवीर आई थी।' हमें यकीन नहीं हुआ। सरकार का ऐसा वफादार और निष्ठावान आला अफसर क्यों गिरफ्तार हो गया? सुबह सी.बी.आई. वाले ही रहे होंगे, जो उन्हें ले गए। फिर हमें खयाल आया। उनके मंत्रालय के बाबू ने कहा था कि साहब 'ऐसे-वैसे' नहीं हैं। हमने उसी को पान की दुकान पर पकड़ा।

उसने फिर दोहराया, 'साहब ऐसे-वैसे नहीं हैं। उनके एक जूनियर सहयोगी बताते हैं कि साहब का जीवन-दर्शन बहुत ही सीधा और सरल रहा है।' उनसे उसी मुँह लगे प्रिय पात्र ने कहा, 'सर! आप तो शेर हैं। शेर जब भी शिकार कर अपना पेट भरता है तो कुछ छीछड़े छोड़ देता है। सर! हम तो आपकी रिआया हैं, कुछ हम भी कमा लें। बेटी का दहेज निबटे। आपके गुण गाएँगे।' साहब ने उसे प्यार से समझाया था कि वह शेर नहीं अजगर हैं। पूरा का पूरा शिकार हड्डी समेत निगल जाते हैं। तभी तो हमने आपसे कहा था कि साहब ऐसे-वैसे नहीं, खास हैं। वह बाबुओं के अनुकरणीय राम हैं!'

तब से अच्छे पड़ोसी की अपनी पहचान में एक और लक्षण जुड़ा है। वह खास बाबू, तिस पर ऐसा-वैसा न हो, तभी बेहतर है। आम है तो चलेगा! हमें पता है। यह अपने वश में नहीं है, पर ऐसी हसरत रखने में क्या हर्ज है!

सा अ

९/५ राणा प्रताप मार्ग,
लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ललित निबंध

कष्टों की गड़वाट से सुविधा की सड़क तक

● गोविंद सेन

संभवतः सबसे पहले पगडंडियों ने ही दुनिया को जोड़ने की शुरुआत की है। इन पगडंडियों ने ही आदमी के छालों को महसूस किया होगा। सभ्यता का सफर इन पगडंडियों से होकर ही राजमार्ग तक पहुँचा है। पहिए के आविष्कार ने गड़वाट को जन्म दिया। बैलगाड़ी से लेकर रेलगाड़ी तक इस पहिए की मोहताज हैं। पहिए ने आदमी की रफ्तार को आश्चर्यजनक रूप से बढ़ा दिया। वह दौड़ने ही नहीं, उड़ने भी लगा। उसने आसमान में भी रास्तों का जाल बिछा दिया। रोजगार की तलाश और बेहतर जीवन की चाहत ने लोगों को नए-नए रास्ते खोजने के लिए विवश किया।

लेखक परिचय

जन्म : १५ अगस्त, १९५९।

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी, अंग्रेजी), बी.टी.।

प्रकाशन : 'चुप्पियाँ सुभती हैं' *(गजल संग्रह)*, 'अकड़ू भुट्टा' *(निमाड़ी हाइकु संग्रह)*, 'निमाड़ी लोक कथाएँ', 'बूझो तो जाने' एवं प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित; आकाशवाणी में रचनाएँ प्रसारित।

पुरस्कार सम्मान : पं. रामनारायण शास्त्री कहानी प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार, 'पं. देवीदत्त शुक्ल सम्मान', 'आंचलिक साहित्यकार सम्मान'।

संप्रति : अध्यापन।

बैलगाड़ी ने अपने पहियों से 'वाट' को गढ़ा है। गड़वाट के पास पगडंडियों का बल है। उसकी छाती में पगडंडियों का संघर्ष धड़कता है। कष्ट, दुःख, तकलीफें मनुष्य को माँजती हैं, जैसे नदी के पानी का प्रबल प्रवाह नुकीले-बेड़ौल पत्थरों को घिसकर सुडौल-चिकना बना देता है। जो लोग सीधे सड़क पर पहुँचने की कोशिश करते हैं, औंधे मुँह गिरते देखे गए हैं। अभाव और कष्टों में ही जीवन-सुमन खिलता है। फूल काँटों में खिलता है, किंतु सेज पर मुरझा जाता है।

मैं जिस नवनिर्मित सड़क पर सुबह-सुबह टहलने जाता हूँ, उसके नीचे एक गड़वाट दबी पड़ी है। सड़कों के निर्माण के लिए इसी तरह न जाने कितनी गड़वाटों को मिटना पड़ा है। पच्चीस साल पहले वह गड़वाट मुझे गाँव से इस नगर तक लाती-ले जाती थी। इस नवेली डामरीकृत सड़क को देखकर शायद ही कोई कल्पना कर पाएगा कि इसके नीचे एक सँकरी, धूल-धूसरित, ऊबड़-खाबड़, कष्टदायी गड़वाट दफन है। बरसात में इस गड़वाट पर चलना हिमालय पर चढ़ने से भी कठिन होता था। जरा सी वर्षा हुई नहीं कि साइकिल के मडगार्ड में गीली मिट्टी के लोंदे फँसकर पहियों को जाम कर देते थे। फिर विवश होकर साइकिल को कंधे पर उठाकर ही गड़वाट को पार करना होता था। उस गड़वाट के साथ ही अब उससे जुड़े सभी कष्ट भी नदारद हो गए हैं।

आज सड़क के दोनों ओर काँटों की बागड़ के स्थान पर शानदार मकानों की फौज खड़ी होने लगी है। नगर के समीप कॉलोनियाँ कुकुरमुत्तों की तरह उगने लगी हैं। सड़क ने गड़वाट की सत्ता को समाप्त कर दिया है। इस सड़क के नीचे गड़वाट के साथ ही एक पन्ना भी दब गया है, जो अचानक आज मेरी स्मृति में फड़फड़ा रहा है। गाँव और नगर के बीच का फासला लगभग मिट ही गया है। आवागमन सरल और सुगम हो गया है। लेकिन गाँव से अब वैसा लगाव नहीं रह गया, अब गाँव मेरे लिए भूली-बिसरी याद बनकर रह गया है। यूँ तो गाँव केवल पाँच किलोमीटर के फासले पर है, कभी-कभी गाँव का मुँह देखे सालों गुजर जाते हैं। यह वही गाँव है, जिसके पास मेरे अभावग्रस्त बचपन के सबसे दुःखी दिन रखे हुए हैं।

गाँव के मुहाने पर बहनेवाला खोदरा (अपने तेज जल-प्रवाह से जमीन को खोदते हुए आगे बढ़नेवाला नाला) प्रायः दीपावली तक बहता रहता था। आज वही खोदरा ऐन बरसात में भी अपनी उपस्थिति ठीक से दर्ज नहीं करा पाता है। नगर के समीप जहाँ से गाँव का रास्ता खत्म होता है, वहाँ प्राचीन चामुंडा देवी का मंदिर आज भी है, किंतु मंदिर के बगल में रास्ते से लगा मीठे पानी का कुआँ अब किसी की प्यास बुझाने के काबिल नहीं रहा। वृक्षारोपण की तमाम सरकारी योजनाएँ तो हैं, पर अब उदाबाबा जैसा कोई आदमी नजर नहीं आता, जिस पर वृक्षों को रोपने और उनके बड़े होने तक सेवा-सुरक्षा करने का जुनून सवार हो। सड़क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर लगे कई बरगद, पीपल और नीम के पेड़ आज भी उदाबाबा की याद को जीवित रखे हुए हैं। आज प्रशंसा के भूखे पौधों को रोपते हुए फोटो खिंचवानेवाले छद्म पर्यावरण-प्रेमी तो बहुतेरे मिल जाते हैं, लेकिन उदाबाबा जैसे शख्स कहीं नहीं मिलते।

सुविधाओं ने नए कष्टों को जन्म दिया है। हम अपने ही बनाए स्वर्ग में कैद होकर रह गए हैं। कंक्रीट के जंगल में पलनेवाले हमारे बच्चे माटी की महक से अपरिचित हैं। पहियों की गुलामी ने आदमी को लगभग पंगु बना दिया है। वह थोड़ी दूर भी पैदल चलना अपनी शान के खिलाफ समझने लगा है। गड़वाट के जमाने में हम दूध-घी के लिए तरस जाते थे, लेकिन आज सेहत की सलामती के लिए दूध-घी त्यागना पड़ रहा है। गड़वाट ने हमें ताकत दी थी, सड़क हमें पोला-पंगु बना रही है। तो क्या हमें पुन: पगडंडी और गड़वाट की ओर लौटना होगा? यह संभव हो पाएगा?

१९३, राधारमण कॉलोनी, मनावर
धार-४५४४४६
(म.प्र.)

कविता

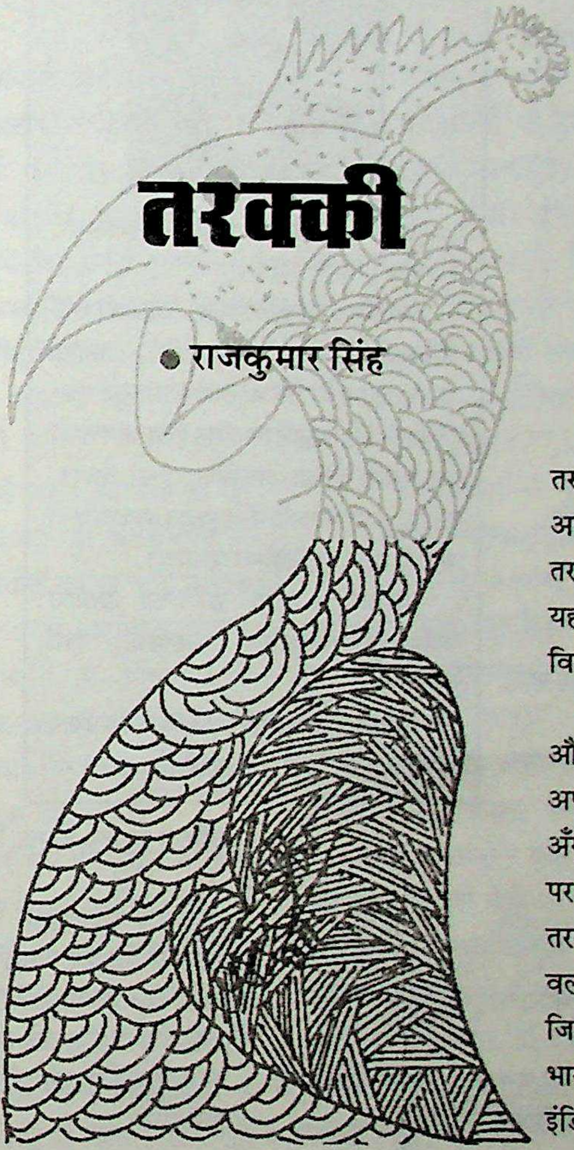

तरक्की

● राजकुमार सिंह

अकसर
सुनता आया हूँ
आजादी के बाद देश ने
तेज रफ्तार तरक्की की है
पर हैरत है, नजर नहीं आती।

नजर
अकसर भटककर रह जाती है
अपने ही इर्दगिर्द
उजड़ते गाँवों
और बिखरते परिवारों में
गरीबी, भुखमरी के चीत्कारों में
बेरोजगारों की अंतहीन कतारों में।

नजर
नहीं माप पाती
समाज को लीलते कंक्रीट के जंगल को
नहीं पहुँच पाती
विषमता की खाई के पार
झोंपड़पट्टी के मलबे पर खड़ी गगनचुंबी
विकास मीनारों तक।

शायद
यह मेरा दृष्टि-दोष है
या फिर
तरक्की को समझने की समझ
अपने पास है ही नहीं
तरक्की दरअसल आँकड़ों का खेल है
यह भूखे के पेट से नहीं
विकास के रेट से मापी जाती है

और फिर
अपने यहाँ तो आधी आबादी अँगूठा छाप है
अँगूठा छाप वोट तो दे सकते हैं
पर तरक्की का सर्टिफिकेट नहीं दे सकते
तरक्की का सर्टिफिकेट मिलता है
वर्ल्ड बैंक और आई.एम.एफ से
जिनका दावा है
भारत न सही
इंडिया तो तरक्की के ट्रैक पर
तेज रफ्तार दौड़ रहा है।

१३/१४४, वसुंधरा
गाजियाबाद-२०१०१२
(उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता

गिद्ध

• जनार्दन मिश्र

ऐ गिद्ध! जब तुम गिद्ध थे
तब थे
आज तुम्हारी जाति-प्रजाति को किसी शक्ति-
महाशक्ति के द्वारा
विलुप्त करने की लगातार कोशिश की जा रही है
कि दिखने में भी शायद ही कहीं दिखो,
फिर भी,
चाहे गाँव हो या गिराँव
नगर हो या महानगर
रहा करते हो हर समय, हर जगह
प्रकृति की गंध में पले-बढ़े हो तुम
चल देते हो कहीं भी रमते-झमते हुए
अपनी नुकीली चोंच को और धार देकर
लग जाते हो गीत गाने और
नाचने
तुम कभी थकते नहीं, और न शरमाते ही
तुम्हारी थिरकन पर जैसे धरती विहँस पड़ती
और लग जाती तुम्हारे साथ
सुर में सुर मिलाने

कहीं भी तुम भ्रमण करते हो तो अकेले ही नहीं
वरन् अपने समूहों के साथ धावा बोलकर
कई चक्कर काटते हुए नाप लेते हो जैसे क्षण भर
में आकाश
आच्छादित कर देते हो वह पृष्ठभूमि,
जहाँ तुम्हारी ही केवल जरूरत होती है
किसी दूसरे की नहीं···

किसी दधीचि की तरह परोपकार में ही तुम्हारा संपूर्ण जीवन
सन्निहित होता है
गंगा की निर्मल धारा की तरह निष्कलुष जैसे तुम कोई महान् जैविक हो
जिसके पंजों और डैनों से भहराती हो कोई विद्युत्-सी तरंग
जहाँ परिष्कृत होती रहती है
ग्रह-नवग्रहों की दिशाएँ

फिर भी तुम तिरस्कृत कर दिए जाते हो
जिस राह, जिस दिशा में चल देते, जिस पेड़,
या किसी घर की मुँड़ेर पर तुम बैठ जाते,
या किसी को सुबह की पहली किरण के साथ दिख पड़ते,

जन्म : १६ अगस्त, १९५७ को बेनसागर, रोहतास (बिहार) में।

कृतित्व : 'वे लौटेंगे फिर', 'आखिरी क्षणों में' *(कविता संग्रह)*, 'हाइटेक' *(कहानी संग्रह)*, 'अपनी गली में' *(उपन्यास)* एवं पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कई कविताओं का अंग्रेजी, बँगला, असमिया, मराठी, कन्नड़, उड़िया आदि भाषाओं में अनुवाद। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से नियमित प्रसारण।

सम्मान : देश की कई प्रख्यात साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

संप्रति : मध्य बिहार ग्रामीण बैंक, प्रधान कार्यालय, पटना में अधिकारी।

तो अशुभ माना जाता है···

किसी अनहोनी घटना के साथ
तुम्हारा भ्रमण-परिभ्रमण जोड़कर देखा जाता है
तुम्हारी धमस से मुक्ति के लिए
किसी देवी-देवता के सम्मुख माथा टेकने की
परंपरा
सामंती प्रवृत्तियों के द्वारा न जाने कब से रही है
मगर, तुम बेफिक्र होकर जारी रखते हो
अपनी उड़ान
जिसकी अमिट होती है अपनी दास्तान

तुम—
पूरी पृथ्वी के सिरमौर होकर भी घोर उपेक्षितों में
गिने जाते हो
तुम्हारा कार्य है पृथ्वी की हरीतिमा के लिए
सारे विष को पी जाना
और पचा जाना···

ऐ गिद्ध!
आज तुम्हारी जाति-प्रजाति से अलग हटकर
इस प्यारी धरती पर उतर पड़े हैं कई-कई महागिद्ध

उनके हाथ-पैर तुम्हारी तरह रूखे-सूखे नहीं होते,
और न पीपल-बरगद रैन-बसेरे ही

वे होते हैं सफेदपोश
जिनकी पैठ हर जगह होती है,
चाहे खेत हो या खलिहान, नगर हो या महानगर
चाहे किसी देश की संसद् हो
या पूरी दुनिया की कोई हो
महासंसद्

बड़ी असरदार होती हैं उनकी भाव-भंगिमाएँ
उड़ती हुई उन्मुक्त गौरैयों को भी नहीं पहचानते
सबकुछ खा जाते, सबकुछ पचा जाते
फिर भी डकारते तक नहीं हैं वे।

संकटमोचन नगर
नई पुलिस लाइन
आरा-८०२३०१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुक्र की खोज

मूल : आरपाड बरजिक
अनुवाद : भद्रसैन पुरी

एक दिन पस्थ की सड़क पर बिना किसी विशेष प्रयोजन के टहलते हुए मैंने एकाएक अपने आपको दो छोटे सुंदर पैरों के पीछे पाया. मैं अपने आपको जन्मजात सौंदर्यशास्त्री मानता हूँ; और चूँकि नन्हें पैरों की एक जोड़ी में इतना सौंदर्य था कि परमात्मा ही जानता है कि कितनी विद्वत्तापूर्ण पुस्तकों में उसका वर्णन है तथा चूँकि मैं केवल जीवित वस्तुओं पर ही सौंदर्य की कला का अन्वेषण करता हूँ। इसलिए इस सौंदर्य की जोड़ी के पीछे शीघ्रता से जाने के अतिरिक्त मेरे पास कोई विकल्प नहीं था—मेरा अभिप्राय उस बहुमूल्य टखनों की जोड़ी से है।

ये टखने अविश्वसनीय कुदान की चाल से चलते एवं तैरते जा रहे थे और मैं भी उतनी ही शीघ्रता से उनका पीछा कर रहा था। दुर्भाग्य से जब मैंने एक कोने पर मोड़ लिया तो पुराने फेरीवाले की पत्नी के सामान के बीचोबीच टकराया। मेरे शक्तिशाली शरीर ने उसका आधा सामान नष्ट कर दिया; उसकी गालियों और क्रोध की सीमा न रही। वह शीघ्र ही खड़ी हो गई और मेरे पीछे पड़ गई; केवल एक नोट उसकी ओर फेंकने की मेरी दक्षता ने मुझे उसके चंगुल से बचा लिया। मेरा विचार है कि वह नोट नीले रंग का था—दस फ्लोरिन या कहो एक पाउंड का।

इस मलहम ने उसका घाव भर दिया और मुझे मेरे उद्यम के लिए छोड़ दिया। व्याकुलता में मैंने अपने आगेवाले कदमों को सावधानी से देखा (मेरा अभिप्राय पुराने फेरीवाले की पत्नी से नहीं अर्थात् उनके कदमों से है)। अंत में वे मुझे पुनः मिल गए—ओह, कितना परम सुख प्राप्त हुआ मुझे उस क्षण! उस सुंदर पैरोंवाली ने अपना सिर घुमाया और मुझे देखा। वह घोड़ा-गाड़ियों के अड्डे की ओर गई—तनिक रुकी—फिर उसका पैर गाड़ी के अंदर गया। मैंने भी वैसा ही किया। वह गाड़ी में चली गई। मैंने उसका पीछा किया।

इस प्रसन्नचित्त सवारी के लिए अतिरिक्त गति और अतिरिक्त खर्च के साथ मुझे पाँच फ्लोरिन देने पड़े।

मेरे विचारानुसार हमारे चालक दौड़ लगा रहे थे क्योंकि उनकी गति भयंकर थी। उसने अपनी गाड़ी एक प्रसिद्ध दुकान के सामने रोक दी। मैंने भी वही किया। वह गाड़ी से उतरकर दुकान के अंदर गई। क्या मुझे बताना होगा कि मैंने भी उसका ध्यानपूर्वक अनुसरण किया? इस बार हमारे कार्य साथ-साथ हुए।

दुकान में उसकी दृष्टि मुझपर पड़ी और उसने मुझे सिर से पैर तक सूक्ष्म रूप से नापा। अंततः जिस बात का संदेह अब तक था, वह दूर हो गया—उसका चेहरा उसके पाँव से सुंदर था, उसकी आँखें उसके चेहरे से सुंदर थीं जबकि उसकी आकृति इन सबको मात कर रही थी।

दुकानदार ने मुझे हैरानी से देखा और पूछा, "मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ, श्रीमान्?"

मैं हिचकिचाया—"क्या तुम मुझे…?"

"कृपया सिल्क दिखाएँगे?" चाँदी की घंटी जैसी आवाज मेरे निकट गूँजी। आवाज इतनी दिव्य थी कि मेरे अंदर बिजली कौंध गई और मैंने विचार किया कि क्रिसमस के दिनों में देवदूत ऐसे ही गाते होंगे। मैंने उसी लय में दोहराया—"कृपया मुझे सिल्क दिखाइए।"

"रंग कौन सा?"

स्पष्ट रूप से काला। उसकी आँखों और बालों का रंग काला नहीं था क्या? अतः 'काला' मैंने उत्तर दिया।

सुंदर अजनबी ने एक बार मेरी ओर ध्यान देने का पुनः प्रयत्न किया और उसके चंचल चेहरे पर मुसकान फैल गई। ओह, इसका कारण मुझसे मत पूछो। मैं स्वयं चकित था कि पृथ्वी पर ऐसा चित्र फिर कब देख पाऊँगा—'सिल्क में सूक्ष्म अन्वेषण करता हुआ जीवित शुक्र।'

वह दुकानदार, हाँ, वह भयानक जंगली! प्रश्नों से मुझे किस प्रकार दुःख दे रहा था। क्या वह प्रश्न करना बंद करेगा? मैं उसके सामान की क्या परवाह करता हूँ कि वह मुझे क्या और कितना बेचता है। यदि वह अपनी बकवास बंद करे तो सौदेबाजी करती अपनी देवी को बिना किसी रुकावट देखने का अवसर मुझे मिले। क्या वह कभी नहीं समझेगा कि उसके कारण ही मैं उसकी दुकान पर आया हूँ? हाँ, केवल उसी के कारण—उसके पैर, उसका सिर, उसकी आकृति…।

अंततः मुझे शांति मिली; मेरी खरीदारी समाप्त हो गई, परंतु मेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवी लगी रही। सौदेबाजी चलती रही, परंतु यह शाईलॉक दुकानदार का राक्षसपन अपनी कीमतों पर जोंक की तरह चिपटा रहा; क्यों—वह घुटने टेककर, हाथ जोड़कर, कीमतें गिराकर अपनी सारी-की-सारी दुकान क्यों बेचे; देखो, अपनी उत्साहहीन रसीदों में किस प्रकार वह एक पाउंड मांस ले रहा है। जैसे-जैसे यह दृश्य चल रहा है, मेरी पोटलियों का ढेर बढ़ता जाता है क्योंकि अपना मंच शुक्र के निकट रखने के लिए ही मैंने अधिक खरीदारी की थी और वह अभी तक कीमतों के बारे में ही वाद-विवाद कर रही थी।

और जब वह धीरे से बाहर निकली, मेरी चीजों से गाड़ी भर चुकी थी और बहुत पोटलियाँ पीछे छूट गई थीं।

उसकी गाड़ी गतिमान हो गई और उद्यम नए सिरे से शुरू हो गया। मेरा गाड़ीवान एकाएक रुक गया। यह कैसी घटना थी? क्या कुत्ता नीचे आ गया था? तुम्हारा भला हो, भाई, हम इसके लिए रुकते नहीं! काश! बहुत देर हो गई; एक बूढ़ी औरत और उसका संकर जाति का कुत्ता दोनों सुप्रतिष्ठित थे; हमें घेर लिया गया। मैंने भयभीत होकर शव को और व्याकुल होकर अपने शुक्र के रथ को दूर गायब होते देखा; समय व्यर्थ गँवाने के लिए था। इसलिए मैंने शीघ्र ही मुट्ठी भर सिक्के भीड़ में फेंके—हलचल मच गई और हम पुनः चल दिए। ज्यों ही हम मिले, मेरी रानी अपनी गाड़ी से उतरी और मुझे प्रतीक्षा करने के लिए छोड़कर एक भवन में चली गई। एक पाउंड और खर्च हो गया। वह किसी से मिलने गई होगी क्योंकि उसकी गाड़ी अभी वहीं खड़ी थी—पंद्रह मिनट बीत गए—कितनी अविवेकी है यह औरत! उस भाग्यशाली भवन, जिसमें मेरी देवी थी, के सामने एक चाय की दुकान थी; दुकान की नौकरानी मेरे सामान से भरी गाड़ी को देखकर मुझे आकर्षित करते हुए हँसी से लोटपोट हो रही थी। सरदी के कारण ऐंठे हुए अपने अवयवों को ढीला करने तथा समय बिताने के लिए मैं चाय की दुकान में चला गया। मैंने प्रसन्नतापूर्वक विचार किया कि नौकरानियाँ मेरे बिना देखे खरीदी गई शोभायमान चीजों को पसंद करेंगी। मैंने उनको उन्हें दे दिया। ज्यों ही चीजों को गाड़ी से उतारा जा रहा था, मेरा शुक्र प्रकट हो गया और मेरी ओर अपनी घृणा और तिरस्कार को बुरी तरह फेंकता हुआ गाड़ी में चला गया''।

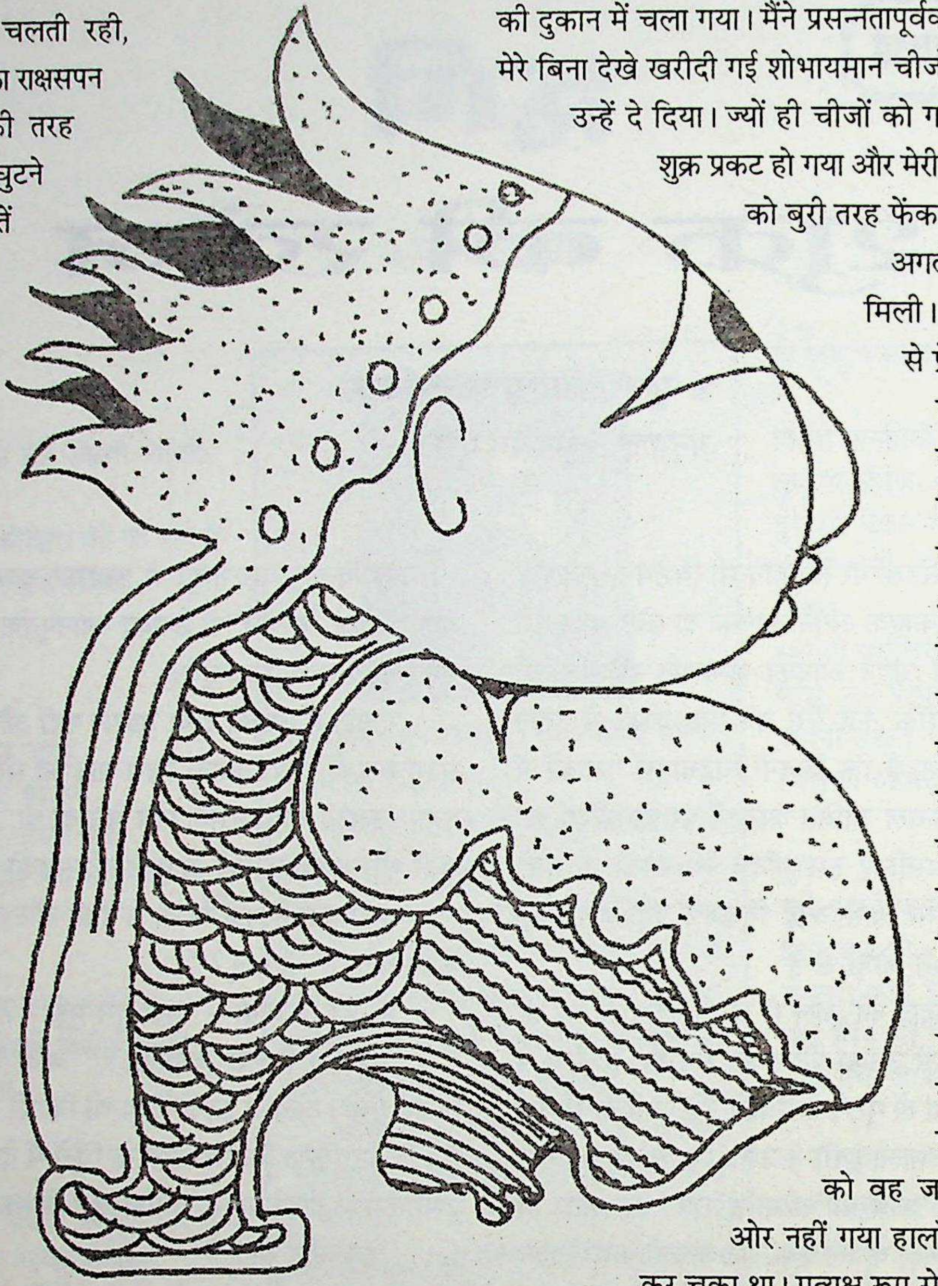

अगले दिन मुझे आश्चर्यजनक सूचना मिली। मेरा सेवक उसकी नौकरानी से प्रेम करता था और वह मुझे हर वह बात बता सकता था जो मैं जानना चाहता था। बीस शिलिंग देकर मैंने सूचना खरीद ली कि मेरी देवी विधवा है और उसका नाम जानने के लिए, मैंने प्रसन्नता से उसके वेतन में वृद्धि कर दी। ऐसे अवसर पर वह अपनी प्रेमिका को भूल न सका। उसको इनाम देने के लिए इसने थोड़े उधार के लिए भी याचना की और वह भी उसे दे दिया गया।

इससे अधिक सफलता मुझे नहीं मिली। हमें परिचित करवाने के लिए कोई भी मित्र प्रकट नहीं हुआ। जिस किसी को वह जानती थी, मेरा बटुआ उसकी ओर नहीं गया हालाँकि मैं बीस पाउंड व्यर्थ खर्च कर चुका था। प्रत्यक्ष रूप से मेरा स्वास्थ्य बिगड़ गया और मैं पतला एवं चिंताग्रस्त हो गया।

''हुजूर,'' मेरे सेवक ने जो प्रत्यक्ष रूप से मेरी हालत जानता था, एक दिन मुझसे कहने लगा—''यदि, श्रीमान्, आज्ञा दें तो मैं कुछ कहूँ और थोड़ा इनाम दें तो आपकी माननीय महिला से आपके परिचय का प्रबंध करूँ?''

मेरा हृदय आनंदित हो गया, परंतु मैंने जाहिर होने नहीं दिया और उसे चुप रहने के लिए कठोरता से कहा। हो सकता है, यह कोई तरीका जानता हो? परंतु नहीं, मैं जान-पहचानवाले नौकरों को मुँह नहीं लगाता।

''हुजूर,'' उसने पुनः कहना शुरू किया—''मैं जान-पहचान बढ़ाना नहीं चाहता, परंतु आपको दुःखी होते भी नहीं देख सकता। आपका कोई-न-कोई कपड़ा छोटा करवाने के लिए प्रतिदिन दरजी के पास जाना पड़ता है। आखिर यह कहीं समाप्त भी होगा। मैं सायं की सेवा नहीं कर सकता।''

इससे मेरा निर्णय हो गया। ''हाँ, मेरे आज्ञाकारी जेकसी,'' मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा, ''मैं सहमत हूँ, तुम अपना प्रयास कर सकते हो और जिस दिन मेरी माननीय महिला मुझे मिलेगी उसी दिन दस पाउंड तुम्हें मिल जाएँगे।''

तीन दिन बाद जेकसी ने निम्नलिखित पत्र दिया—

''प्यारे महोदय,

आज दोपहर साढ़े बारह बजे घर पर रहने से मुझे प्रसन्नता होगी।

तुम्हारी भवदीया

विडो वोन सूजानफैलवे।''

कैसी प्रसन्नता, कैसी शांति—मैं आनंदित हो अपनी कुरसी से कूद पड़ा और अपने सेवक का आलिंगन सा किया; यह जादूगर, यह कूटनीति से परिपूर्ण!

''अरे, भले आदमी, यह सब कैसे किया?''

''हुजूर, मुझे क्षमा करें। मैं अत्यंत सावधान रहना चाहता हूँ; यदि हजूर समय पर उपस्थित हो जाएँ तो सब ठीक हो जाएगा।'' उसी समय दस पाउंड उसके हाथों में चले गए। निर्मल कपड़े पहनाने में मेरी सहायता करते हुए उसने बताया कि उसकी प्रेमिका जुकजी, हमारी विश्वस्त रूप से जोड़नेवाली बाकी सबकुछ कर लेगी; और उसने आगे कहा कि उसने जीवन में उसे इतना उत्तेजित कभी नहीं देखा था; और मैं उससे पूर्णतया सहमत था। अंततः मैं तैयार हो गया और ठीक बारह बजकर तीस मिनट पर विडो वोन सूजानफैलवे के मकान की घंटी बजा दी।

जुकजी ने दरवाजा खोला। वह उत्तेजित सी जान पड़ी, परंतु मुझे देखकर प्रसन्न हुई।

''कृपया अंदर आ जाएँ, मेरी मालकिन आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।'' उसने मेरे कान में कहा और एक और बैंक नोट की शांत चित्त से अदला-बदली हो गई।

मैंने विचार किया कि उसकी आँखों में पहली प्रेम प्रभा देखने के लिए यह शोभायमान बैठक कितनी अनुकूल है जहाँ मैं शीघ्र ही अपनी प्रचंड उत्कंठा को स्वीकार करूँगा। आह, वह आ गई—मेरा फरिश्ता, मेरी रानी!

अपने घुटनों पर गिरकर उसके नन्हें पाँवों को चूमने की अपनी पहली प्रवृत्ति को विवेकहीन जानकर, मैंने शीघ्र कहना शुरू कर दिया—

''हजार अपराध क्षमा, मैडम कि···,'' परंतु उसने मुसकराते हुए मुझे टोका और बैठने के लिए प्रार्थना की।

''मुझे प्रसन्नता है कि तुम आ गए, नहीं तो मैं तुम्हें मिलने आती।''

मुझे मिलने? ईश्वर भला करे; यह मैं क्या सुन रहा हूँ। क्या यह संभव था?

''यह मामला वास्तव में हम दोनों के लिए रुचिकर है; यदि मैं कहूँ, हम दोनों इससे संबद्ध हैं।''

यह मामला—यह इसको मामला कहती है? क्या शांति है?

''तो मैडम, इस मामले के बारे में जानती हैं?'' मैं केवल हकलाया।

''इसके बारे में जानना? क्यों, मैं वास्तव में जानती हूँ। जेकसी से जुकजी को और जुकजी से मुझ तक—इससे सादी बात और क्या हो सकती है?''

उसने पूजाविधि से अपने कंधे झटक दिए; वह दिव्या है, वह मेरी है।

''और मैडम को कोई आपत्ति नहीं?''

''आपत्ति? क्यों, मेरे प्यारे श्रीमान् (पूजाविधि से कंधे पुनः झटकाए) जिनको परस्पर रुचि होती है, उनके लिए प्रेम के रास्ते सदा सीधे एवं साफ चलते हैं। लो अपना हाथ देती हूँ और विवाह के लिए अपनी सहमति देती हूँ।''

''विवाह के लिए?'' क्या मैं ठीक सुन रहा हूँ? मेरी ज्ञानेंद्रियाँ तो ठीक हैं?

''ठीक हैं, हाँ।''

मैं तुरंत अपने घुटनों के बीच दुबक गया और उसके फैले कोमल छोटे हाथ को चुंबनों से ढक दिया—मेरा हाथ!

''हजार अपराध क्षमा, लाखों धन्यवाद, प्यारी महिला।''

उसने डरकर अपना हाथ खींच लिया और कई कदम पीछे हट गई। मैंने महसूस किया कि मेरी उत्कंठा ने उसका मान भंग किया था।

''तुम्हें हो क्या गया है, बोलो?'' वह चिल्लाई।

''ओह, मुझे क्षमा करना, हजार धन्यवाद।'' घुटनों के बल होकर मैंने पुनः कहा।

''मेरी प्रार्थना है कि उठो; यह क्या मजाक है? इसका कारण क्या है?''

''क्यों, तुमने विवाह के लिए मुझे अपना हाथ और सहमति दी है।''

''ह··मा··रा विवाह? तुम मजाक कर रहे हो। मैंने कोई ऐसी बात नहीं कही।''

''फिर किसका विवाह?'' मैं चीखा।

''जेकसी और जुकजी का—(पूजाविधि से पुनः झटकी) मुझे बताया गया था कि वे विवाह करना चाहते थे और जुकजी अनाथ और मेरी धर्म-पुत्री है; मेरा खयाल था कि अपने सेवक जेकसी के लिए उसका हाथ माँगने के लिए तुम आज आने वाले थे।''

''और तुमने मेरा स्वागत इसीलिए किया, प्यारी महिला!''

''हाँ। मुझे खेद है, मैं स्वयं अगले सप्ताह अपना पुनर्विवाह कर रही हूँ।''

☐

मैंने शुक्र के मकान का दरवाजा हलके से बंद किया, सिगरेट सुलगाई और मौन विचारों में खो गया, साथ ही मामले के उद्यम में खर्च का अनुमान लगाने लगा। मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि इस खर्च को डालूँ तो किसके खाते में!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

लोकगीतों की परंपरा

● महेंद्र राजा जैन

लोकगीतों की परंपरा अति प्राचीन है। वैदिक काल में जिन गाथाओं का उल्लेख स्थान-स्थान पर पाया जाता है, वे ही लोकगीत की पूर्व प्रतिनिधि कही जा सकती हैं। वैदिक ग्रंथों—मैत्रायणी संहिता, पारस्कर गृह्यसूत्र, वाल्मीकि रामायण, श्रीमद्भागवत, हर्षचरित और इसके बाद रामचरित मानस व सूरसागर में भी इनका उल्लेख है। महाकवि कालिदास ने भी रघुवंश में स्त्रियों के गीतों की चर्चा की है, पर इनके सहारे गीतों की परंपरा खोजना भूल होगी। लोकगीतों का उद्गम तो मनुष्य के साथ ही समझना चाहिए।

लोकगीतों के जन्मकाल के संबंध में विचार करते हुए काडवेल ने इस बात पर विशेष रूप से प्रकाश डाला है कि उस समय सामाजिक चेतना अपने आरंभ काल में थी। इसका पता हमें इस बात से भी चलता है कि लोकगीतों के अध्ययन से कभी-कभी बड़ी मनोरंजक बातों की जानकारी होती है। लोकवार्त्ता शास्त्रियों ने खोज करके कुछ गीत ऐसे खोज निकाले हैं, जिनके भाव के गीत संसार के समस्त देशों में प्रचलित हैं तथा जो एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं। यह सचमुच बड़ी अद्भुत बात है। पर इससे इस तथ्य की पुष्टि होती है कि मानव जाति के विकास और फैलाव के साथ-साथ ये गीत भी एक स्थान से दूसरे स्थान में, एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में और दूसरे से तीसरे में धीरे-धीरे पहुँचते रहे। भारत में कभी-कभी एक क्षेत्र (जनपद) के गीत दूसरे क्षेत्र में भी मिलते हैं। उनमें अंतर यदि होता है तो केवल यही कि स्थानीय वातावरण ने उनका रूप-रंग बदल दिया है, पर भाव मूलतः वही हैं। इसी परिवर्तन परंपरा के कारण उत्पत्ति के मूल स्थान का पता लगाना कठिन ही नहीं, असंभव हो जाता है। यह लेन-देन अब भी जारी है। जिस एक लोकगीत को हम किसी एक भाषा का शृंगार बताने की चेष्टा करते हैं, निकट से अध्ययन करने पर पता चलता है कि ठीक उसी प्रकार के गीत देश की एक-दो अन्य भाषाओं में ही नहीं, संसार की कई भाषाओं में भी मिलते हैं। यह भाव साम्य, लोक साहित्य के अध्ययन को एक अत्यंत रोचक और शिक्षाप्रद विषय बना देता है। कई गीत (या कथाएँ, कहावतें) ऐसे होते हैं, जो देखने में अवश्य भिन्न जान पड़ते हैं; स्थानीय वातावरण के प्रभाव से उनका रंग, उनका आकार-प्रकार बदला हुआ होता है; परंतु भीतर से वे फिर भी एक हैं, उनके वैषम्य में भी समता का सूत्र मिलता है। अलग-अलग प्रदेशों में गाए जानेवाले वर के चुनाव के संबंध में कन्या की रुचि एवं सुहाग की रात संबंधी गीतों से इस तथ्य की पुष्टि होती है।

किसी भी भाषा के विकसित साहित्य का मूल स्रोत उस भाषा में

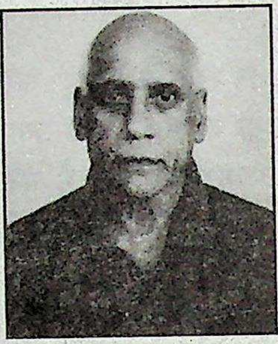

जन्म : १० मार्च, १९३२ को इटारसी (म.प्र.) में।

शिक्षा : एम.ए. , डिप.लिब.-एस-सी., फेलो ऑफ द लाइब्रेरी एसोसिएशन, लंदन।

कृतित्व : 'वाराणसी से लंदन' *(यात्रा वर्णन)*, 'अंग्रेज अपने मुल्क में', 'साहित्य के नए संदर्भ', 'विराम चिह्न : क्यों और कैसे ?' तथा पत्र-पत्रिकाओं में अब तक ५०० से अधिक लेख प्रकाशित। लंदन से 'आज' के लिए आठ वर्ष तक साप्ताहिक 'लंदन की चिट्ठी' तथा दारेस्सलाम (तंजानिया) से चार वर्ष तक 'पूर्वी अफ्रीका की चिट्ठी' एवं दोनों जगहों से मासिक 'विदेश की साहित्यिक डायरी' का लेखन।

सम्मान : किताबघर प्रकाशन द्वारा 'आर्य स्मृति साहित्य सम्मान'।

संप्रति : 'चिंतक जैनेंद्र : सूक्तियाँ और विचार' के संदर्भ ग्रंथ पर कार्य।

जनपद साहित्य कहे जानेवाले लोकगीतों के रूप में ही पाया जाता है। प्रत्येक युग का काव्य साहित्य लोकगीतों से प्रभावित होता है। लोकगीत की एक कड़ी को दो महाकवियों ने किस सुंदरता के साथ जड़ा है, इसका एक नमूना यह है—

गोरकूं त हउने मोरे भाईजी क पुतवा, सवरूं ननदजी क भैया

सहज सुभाय तन गोरे, नाम लखन लघु देवर मोरे।

—गोस्वामी तुलसीदास

शभे तुम्हारे कौन उभय से श्रेष्ठ हैं ?
गोरे देवर श्याम उन्हीं के ज्येष्ठ हैं।

—मैथिलीशरण गुप्त

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर ने भी 'बाउल' तथा बँगला के लोकगीतों से प्रेरणा ग्रहण कर कुछ गीतों की रचना की थी। 'विद्यापति की कला भी लोकगीतों का सहारा लेती है।' कदाचित् कोई भी अन्य कवि लोकजीवन और शास्त्र की गंगा-यमुना को इतने समीप नहीं ला सका। लोकगीतों में विरहिनी दूर प्रवास में गए प्रियतम को पत्र पहुँचाने को कहती है और कौओं को उड़ाने को कहती है अथवा उससे स्नेह की बात कहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यापति की रचनाओं से अनेक ऐसे गीत छाँटे जा सकते हैं, जिन पर लोकगीतों का स्पष्ट प्रभाव है—

के पतिया लय जायत रे मोर पियतम पास
हिय नहिं सह्य असह दुखरे मेल साओन मास
एकसरि भवन पिय बिनु रे मो रहलो न जाय
सखि अनकर दुख दारुण रे जा के पति आय
या
मोरहि रे अँगना चाँदन केरि गक्षि ताहि चढ़ि कुरुए करक रे!
सोने चंबु बंधरा देव मोए बाअस जदि पिया आओत आज रे!

मध्य युग में अनेक प्रेमकथाएँ वीरगाथा के साथ मिलकर लोकगीतों के रूप प्राप्त कर चुकी थीं। सूरदास प्रणीत 'सूरसागर' पर परंपरागत लोक काव्य का प्रभाव स्पष्टतया पड़ा है। इस विषय में आचार्य रामचंद्र शुक्ल को कहना पड़ा कि 'किसी पहले से चली आती हुई परंपरा का, चाहे वह मौखिक ही रही हो, पूर्ण विकास सा जान पड़ता है।' इस संदर्भ में बैजनाथ सिंह 'विनोद' का भी मत है कि 'लोकगीतों में राधाकृष्ण की भावना थी, उस परंपरा के गीत थे, उसी का व्यापक विकास सूर की प्रतिभा का प्रसाद था। यदि यह भावना ब्रज लोक समाज में व्याप्त न होती तो अपने अपजीव्य के अभाव में सूर की वाणी लुप्त हो जाती।' शुक्लजी ने तो यहाँ तक कहा है कि 'भारतीय हृदय का सामान्य स्वरूप पहचानने के लिए पुराने परिचित ग्रामगीतों की ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, केवल पंडितों द्वारा प्रवर्तित काव्य-परंपरा का अनुशीलन ही अलम् नहीं है।' और यह बात उन्होंने आज से करीब ८० वर्ष पहले ही महसूस की थी, जब लोकसाहित्य की ओर हिंदी भाषा-भाषियों का ध्यान इतना अधिक आकर्षित नहीं हुआ था, जितना कि वर्तमान में। जायसी आदि प्रेमाख्यानपरक कवियों का साहित्य, यद्यपि लोकसाहित्य के रूप में रचित नहीं हुआ तथापि उसमें उस युग की लोक कथाओं के रूप और लोकसाहित्य की कतिपय रूढ़ियों की रक्षा हुई थी। जायसी आदि ने आध्यात्मिक सूफी सिद्धांतों की व्यंजना के लिए प्रतीक रूप में जो कथाएँ लीं, वे तत्कालीन लोक कथाएँ ही तो थीं। उन कथाओं में मध्ययुग के जनसमूह के विश्वास, संस्कार, रूढ़ियाँ, परंपराएँ, भावनाएँ आदि रक्षित हैं। यह कहने में जरा भी अत्युक्ति नहीं कि हिंदी साहित्य में बारहमासा की परंपरा का मूल आधार भी लोक साहित्य ही है। अपभ्रंशकालीन ऐहिकतामूलक रचनाएँ अवश्य ही लोक साहित्य से प्रभावित थीं। तेलुगू कविता का भी प्रारंभ प्राचीन लोकगीत और लोकगाथाओं से हुआ है, जिन्हें सामान्य जनता गाया करती थी।[१] जान पड़ता है कि प्राचीन कवियों में जो वस्तु परिगणन की परिपाटी चली, वह भी शायद लोकगीतों का ही प्रभाव है। रामनरेश त्रिपाठी ने एक ऐसा गीत प्राप्त किया था, जिसमें व्यंजनों के नामों की भरमार दिखाई पड़ती है। भले ही आज के शिक्षित वर्ग की महिलाओं को बावन व्यंजनों के नाम भी याद न हों, पर उस जमाने की हमारी माताओं ने लोकगीतों के माध्यम से कितने सरल ढंग से सबके नाम याद कर लिये थे, यह देखकर आश्चर्य होता है। एक गीत में भोजन के चौष्य, चर्व्य, लेह्य, पेय—सब प्रकार के पदार्थों के नाम इस प्रकार गिनाए गए हैं—

''जुगुति से परसो जी ज्योनार—करि करि के सतकार। पेड़ा बरफी और अमिरती, खाजे खुरमा घेवर परसो, गुपचुप सोहन हलुआ परसो, कलाकंद की बरफी परसो। मक्खन बरा जलेबी परसो, पेठा और इंदरसे परसो॥ बूँदी और बतासे परसो, खुरचन और मलाई परसो। खोया बालूसाही परसो, खुरमा लडुआ सबके परसो॥ दालमौठ अरु मठरी परसो, तरे तिकोना सबके परसो। बूरा मिश्री जल्दी परसो, रबड़ी दही सबी के परसो। सिखरिन दूध लाय के परसो, पूड़ी कचौड़ी लुचुई परसो। खरी कचौड़ी सबके परसो, बेसन बरा पकौड़ी परसो। हापड़ के तुम पापड़ परसो। मालपुआ अरु पूआ परसो। दाल भात सन्नाटी परसो, मूँग समूची सबके परसो। कढ़ी करायल रातो परसो, खट्टे-मिट्ठे बरा परोसो। सुरुनी को घिउ मडुअन परसो, रसगुल्ला रसदार। जुगुति से परसो जी ज्योनार॥ १॥

सोया मेथी मरसों परसो, सरसों अरु चौरैया परसो। पालक पोय भसूंड़े परसो, मूरी मिरची सब के परसो॥ हरी हरी तुम धनिया परसो, कटहर बड़हर लौकी परसो। कद्दू और करेला परसो, रायल मेरा भाटा परसो। भिंडी, घिया, तुरैया परसो, पेठा की तरकारी परसो। आलू और रतालू परसो, पृथ्वीकंद, चंचेड़ा परसो॥ अदरख की तरकारी परसो, केला की तरकारी परसो। धनिया की तुम चटनी परसो, बथुआ की तरकारी परसो॥ पोदीना की चटनी परसो, छिरिका गलका अमरस परसो। आम अचारी सूखा परसो, दाख मुरब्बा सबके परसो॥ अदरख कमरख सबके परसो, सबी खटाई सबके परसो॥ हा हा करि करि जल्दी परसो, सत्य भाव से सबके परसो। करि करि के सतकार। जुगुति से परसो जी ज्योनार॥ २॥

सिलहट की नारंगी परसो, फर्रुखाबादी मिठवा परसो। सेव तूत सहतूत चिरौंजी चिलगोजा अखरोटन परसो॥ प्रागराज की सकड़ी परसो, गरी छुहारे पिस्ता परसो। नरम मखाने सबके परसो। खिन्नी और लुकाठन परसो॥ अनन्नास अंगूरन परसो। जल्द चिरौंजी सबके परसो। मूँगफली भरि दोना परसो, किसमिस आम टिकारी परसो॥ नौधा अरु तरबुजवा परसो, चपटा और मालदहा परसो। मोहनभोग बंबई परसो, गोला आमुनि जामुनि परसो॥ खरबुजवा तुम सबके परसो, सोया हिंगहा जुगिया परसो। देसी आम सबी के परसो, कंचन भरि भरि थार। पुरोहित करि करि के सतकार। परसो सब तर बारंबार, जुगुति से परसो जी ज्योनार॥ ३॥

गंगाजल जमुनाजल परसो, नदी नरवदा को जलु परसौ। सरजू का जलु सबके परसो, सिंध सरसुती कौ जलु परसौ॥ कावेरी कृश्ना जलु परसो, मानसरोवर को जलु परसो। नदी गंभीरी को जलु परसो, फलगू महानदी को परसो॥ ठंडे जल सब ही के परसो, हा हा करि करि सबके परसो। बिनती करि करि भोजन परसो, हाथ जोरि के सबके परसो॥ प्रेम प्यार करि सबके परसो, छोटे-बड़े सबी के परसो। आदर करि करि सबके परसो। समधी लमधी के ढिंग परसो॥ चारो भाइन के ढिंग परसो, गुरु वशिष्ठ तर जल्दी परसो। ऋषि मुनियों तर जल्दी परसो, सबै देवतन के ढिंग परसो॥ हाथ धुलाओ पान खवाओ, आभूषण बस्तर पहिरावो। जनवासे सब को पहुँचावो, करि करि वाहन त्यार। गावें तुलसीदास गँवार, जुगुति से परखो जी ज्योनार॥ ४॥

इस गीत में खाने-पीने की प्रायः सभी खास-खास चीजों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामों के साथ ही देश भर की सुप्रसिद्ध नदियों के नाम भी आ गए हैं। गानेवालियों को खाने-पीने की चीजों के नाम ही नहीं, बल्कि भूगोल की यह शिक्षा भी गीतों के द्वारा मिलती रहती है। हिंदी गीतिकाव्य की भूमिका लोकगीतों ने ही तैयार की है। लोकगीतों की मार्मिकता प्रकृति के सौंदर्य को साहित्यावकाश में छिटका देने में है। शिवप्रसाद सिंह भी मानते हैं कि हिंदी के कथाकारों में कइयों ने गाहेबगाहे लोकगीतों का प्रयोग किया है। प्रसाद, प्रेमचंद या अन्य कथाकारों में ये प्रयोग विरले नहीं, परंतु उनमें से बहुतों ने इन गीतों का प्रयोग केवल आकर्षण या मोह के कारण ही किया है। इन गीतों से हम कथासूत्र पा सकते हैं। भाषा को निखार और भावों को ताजगी दे सकते हैं। आधुनिक कवियों में भी केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, नागार्जुन, गिरजाकुमार माथुर, भवानीप्रसाद मिश्र, शंभूनाथ सिंह, आदि पर लोकगीतों का पर्याप्त प्रभाव है। कुछ कवियों ने तो अपनी कविताओं की प्रथम पंक्ति लोकगीतों से ही ली है।

लोकगीतों के गहरे पानी में पैठ जाने पर हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि आदिमकाल में मानव एक था; उसकी प्रवृत्तियाँ, भावनाएँ, विचारधाराएँ और कल्पनाएँ सर्वत्र एक थीं। सभ्यताएँ और संस्कृतियाँ ऊपर से हमें चाहे जितनी विभिन्न दिखाई पड़ती हों, फिर भी वे आपस में मिलने के लिए निरंतर एक-दूसरे की ओर अपना सहानुभूतिपूर्ण हाथ बढ़ाती रही हैं। यदि संसार के सब देशों की सब जातियों के लोकगीतों को संग्रह कर प्रत्येक भाषा के गीतों का संसार की प्रत्येक दूसरी भाषा में अनुवाद किया जाए तो निश्चय ही एक जाति के लोग दूसरी जाति का, एक धर्म के लोग दूसरे धर्म का और एक राष्ट्र के लोग दूसरे राष्ट्र का अधिक सम्मान करने लगें और प्रांतीयता तथा राष्ट्रीयता जैसे शब्दों को शायद शब्दकोशों से निकल जाना पड़े। हमें ऐसा जान पड़ेगा कि एक ही आत्मा भिन्न-भिन्न भाषाओं में बोल रही है।

लोकगीत किसी भी देश के राष्ट्रीय जीवन की थाती हैं। गुरुदेव के शब्दों में वे ग्रामों में बसे हुए किसी भी देश (भारत) की अंतरात्मा का दिग्दर्शन कराते हैं। इस अमूल्य संपत्ति-धरोहर को लोकजन बड़े-से-बड़े लोभ पर भी अपने से अलग नहीं कर सकते। वह सदा इन्हें अपनी छाती से चिपकाए रहते हैं। जिस प्रकार माँ-बाप अपनी गोदी के लाल को वात्सल्य के आवेश में अपनी आँखों से ओझल होने देना पसंद नहीं करते, उसी प्रकार जनकंठ इन लोकगीतों को अपने से अलग नहीं कर सकता। जनजीवन की अनवरत दौड़-धूप के साथ-साथ सभ्यता तथा संस्कृति का जितना दर्शन इन गीतों में मिल सकता है, उतना अन्यत्र नहीं। इनमें सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, नैतिक, दार्शनिक, राजनैतिक आदि नित्य प्रति के जीवन की सभी भावनाओं का समुचित समावेश ही नहीं वरन् उनका व्यापक विकास भी हुआ है। तुच्छ से तुच्छ, श्लाघ्य से श्लाघ्य प्रत्येक भावना, रस, समस्त मानवीय गुणावगुणों की सबलता तथा दुर्बलता के भाव चित्र इनमें इतनी सूक्ष्मता एवं सौंदर्य के साथ अंकित हुए हैं कि सौंदर्य भी सजीव हो उठा है। इनमें इतने दर्दमय चित्र भी मिलते हैं कि वे कंपन भी पैदा कर सकते हैं। तीखापन इनमें इतनी सरलता से आया है कि मिठास का बोध होता है।

लोकगीत संस्कृति और सभ्यता की बहुत बड़ी धरोहर है। महात्मा गांधी के शब्दों में ये जनता का साहित्य और जनता की भाषा है। वे केवल महाकाव्य ही नहीं, अमिट अमर जीवन काव्य हैं। ये साहित्योपवन के कभी न मुरझानेवाले पुष्प हैं, जो अपनी सुगंध माधुरी से हमें सर्वदा तरोताजा रखते हैं। 'ये विश्व साहित्य के भव्य भवन की नींव की पक्की ईंटें हैं।' और ये ईंटें कभी न फिसलने वाली, कभी न गलने वाली हैं। ज्यों-ज्यों ये पुरानी होती जाएँगी, त्यों-त्यों ये और भी पक्की होती जाएँगी। ये तो स्वयं प्रकृति की देन है। प्रत्येक गीत अजीब मस्ती में मुसकराता हुआ हमारा स्वागत करता है। लोकगीतों में जिंदगी मुसकराती है और मानव जाति पर अपना स्नेह उड़ेलती है। वेदनापूर्ण गीतों में एक प्रकार की मुसकराहट ही मिलती है। इनमें हमें मधुरमय स्वप्न, असीम वेदनाएँ, महान् महत्त्वाकांक्षाएँ, विराट् कल्पनाएँ, सूक्ष्मतम चरित्र चित्रण और सुंदर वर्णन मिलेगा। लोकगीत वस्तुतः धरती के गीत हैं। पृथ्वीपुत्रों ने इन गीतों में अपनी माता—धरती का जो अभिनंदन किया है, वह सहस्र कंठों से मुखरित होकर हमें आमंत्रित करता है कि हम भी उनके साथ सहयोग करें। ये गीत किसी विशेष काल—वर्तमान या भूत—के नहीं, ये तो सर्वकालिक, सार्वदेशिक और सार्वलौकिक हैं। सृष्टि के आदिकाल से मानव इन्हें गाता आ रहा है, आज भी गा रहा है और भविष्य में भी चिरकाल तक गाता रहेगा। तभी तो देवेंद्र सत्यार्थी को कहना पड़ा,

लोकगीतों में जिंदगी मुसकराती है और मानव जाति पर अपना स्नेह उड़ेलती है। वेदनापूर्ण गीतों में एक प्रकार की मुसकराहट ही मिलती है। इनमें हमें मधुरमय स्वप्न, असीम वेदनाएँ, महान् महत्त्वाकांक्षाएँ, विराट् कल्पनाएँ, सूक्ष्मतम चरित्र चित्रण और सुंदर वर्णन मिलेगा। लोकगीत वस्तुतः धरती के गीत हैं। पृथ्वीपुत्रों ने इन गीतों में अपनी माता-धरती का जो अभिनंदन किया है, वह सहस्र कंठों से मुखरित होकर हमें आमंत्रित करता है कि हम भी उनके साथ सहयोग करें।

'चिर-परिचित शब्द, चिर-परिचित बातें, चिर-परिचित स्वर यही लोकगीत की शक्ति है। कोई गीत पहाड़ी पगडंडी के समान ऊँचा-नीचा, कोई समतल प्रदेश के दूर तक फैले हुए क्षितिज की छवि लिये हुए। नीरव, उदास दोपहरी के गीतों का रंग और होता है, रात्रि के गीतों का और। प्रत्येक ऋतु, प्रत्येक उत्सव, कातने-बुनने के धंधे, जोताई-बोवाई और निराई-कटाई की सामाजिक क्रियाएँ; सभी के साथ गीतों के टाँके लगे हुए हैं।' लोकगीतों की पृष्ठभूमि में प्राकृतिक और भौतिक, चल-अचल,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नश्वर-अनश्वर, जल-थल-नभ आदि लौकिक-अलौकिक जगत् की जो प्रत्येक वस्तु का सूक्ष्म एवं अनुभूति की चलनी में छाना हुआ चित्रण हुआ है, उससे हम प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। लोकगीतकार धरती के पुत्र हैं। धरती से ही उन्हें यह शक्ति मिली है।

लोकगीतों में परिष्कार अपने आप होता रहता है। जो शब्द किसी लोकगीत में उसके उद्‌गम काल में थे, संभव है वे उसमें आज न मिलें; पर उन्हीं का परिष्कृत रूप मिल सकता है, जो देशकाल और पात्र का प्रभाव कहा जाना चाहिए। लोकगीत को पैदा करने के लिए किसी उपकरण की आवश्यकता नहीं, वह तो स्वत: प्रसूत रचना है। वह किसी भी समय उत्पन्न हो सकता है। उसे शास्त्रीय कवियों के समान 'मूड' की अपेक्षा नहीं। न वह फरमाइशी चीज ही है। वह तो अखिल विश्व की जाग्रत् जनता का प्रतीक है। तभी तो आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मानते हैं कि कुछ लोकगीत इतने सरस और मार्मिक होते हैं कि कालिदास और भवभूति भी उनके सामने हेय नजर आते हैं। उनके मत से लोकगीतों का महत्त्व मोहनजोदड़ो सरीखे खँडहरों से कहीं ज्यादा है। प्रमाणस्वरूप वे कहते हैं कि लोकगीतों की सहायता से हम एक पुराने संसार को प्राप्त कर लेंगे, जिसे या तो हम भूल चुके हैं या जिसे गलत समझ बैठे हैं। आर्यों के आने से पहले जो सभ्यता पहले से यहाँ मौजूद थी और इस विशाल देश के हर भाग में जरा-जरा फर्क के साथ साँस ले रही थी, उसे आर्य लोग पराजित न कर सके। आज भी हमारे जनसाधारण के रीति-रिवाजों में आर्यो से पहले की उस सभ्यता की कुछ-न-कुछ झलक पाई जाती है। प्राचीन लोकगीत उस सभ्यता पर प्रकाश डाल सकते हैं। सी.एफ. एंड्रूज के शब्दों में—'लोकगीत बड़ी खूबी के साथ हिंदुस्तान का धड़कता हुआ दिल हमारे सामने ले आते हैं।' गुरुदेव ने लोकगीतों की तुलना मेघ के साथ करते हुए लोकसाहित्य में लिखा है—"लोकगीतों की तुलना मैं मेघ के साथ करना चाहता हूँ। दोनों ही परिवर्तनशील, विविध वर्णों से रंजित और वायु स्रोत से यदुच्छाभासमान हैं। मेघ विज्ञान शास्त्रीय नियमों की पकड़ में भलीभाँति नहीं आता। लोक साहित्य भी नियमों के शास्त्रीय बंधन को स्वीकार नहीं करता। जड़ जगत् और मानव जगत् में दोनों उच्छृंखल अद्‌भुत पदार्थ चिरकाल से एक बड़े भारी उद्‌देश्य की पूर्ति करते आ रहे हैं। वारिधारा जमीन पर गिराकर मेघ शिशु शस्य को प्राण-दान देता है, लोक साहित्य भी स्नेह विगलित होकर कल्पना दृष्टि द्वारा शिशु-हृदय को उर्वर बनाता है। लघु काव्य बंधनहीन मेघ अपने लघुत्व एवं बंधनहीनता के गुणों से ही जगद्‌व्यापी हित साधन कर स्वभावत: ही उपयोगी हो उठता है। इसी प्रकार लोकगीत भी भारहीनता, अर्थ बंधन शून्यता एवं वैचित्र्यमयी कल्पना द्वारा शिशु हृदय का मनोरंजन करता है। तरल स्वच्छ सरोवर के ऊपर मेघ क्रीडित नभोमंडल की छाया की तरह लोकगीत हमारे अंतराकाश की छायामात्र है।" गुरुदेव ने स्वयं लोकगीतों का संग्रह किया था, इस बात को बहुत कम लोग जानते हैं। अपने गुणों के कारण लोकगीत सहृदयों के चित्र के 'चिंतामणि' बन जाते हैं। अमेरिका में स्कूलों में इन गीतों की सहायता से इतिहास आदि विषय पढ़ाए जाते हैं। सच पूछा जाए तो विद्यार्थी परीक्षा में प्रश्नों के उत्तर नहीं देते वरन् 'उत्तर गाते हैं' ('दे डू नॉट राइट बट सिंग देअर एंशर ऐट एक्जामिनेशन टाइम')।

लोकगीतों में क्या नहीं है? देश और गाँव का इतिहास उनमें गाया गया; इन्होंने शूरों का शूरा तन चढ़ाया; वीर हृदयों के वीरत्व की स्फुरणा की, वीरगति पानेवालों का नाम अमर रखा, अलिखित इतिहास को इन गीतों ने विस्मृति के गर्त में जाने से रोका; समाचार-पत्रों से रहित उस जमाने में हास्य एवं तिरस्कारोत्पादक घटनाओं के व्यंग्य चित्र भी इनमें उतारे गए; लोक जीवन का जो कोई भी प्रवाह उमड़ा, उसी का चित्र लोकगीतों में अंकित हो गया। लोकगीत किसी भी देश, जाति के जीवंत इतिहास कहे जा सकते हैं। यदि कविता वह साधन है, जिसके द्वारा शेष सृष्टि के साथ मनुष्य के रागात्मक संबंध की रक्षा तथा निर्वाह होता है, सृष्टि के नाना रूपों के साथ मनुष्य की भीतरी रागात्मक प्रकृति का सामंजस्य ही कविता का लक्ष्य है तो 'लोकगीत ही वह कविता है। प्रकृति के नाना रूप; सामाजिक आचार विचारों की विविधता; प्रकृति के मानवेतर अन्य उपादान, आकाश, वृक्ष, नदी-नाले, पशु-पक्षी, वन, पर्वत, खेत-झोंपड़े आदि प्रकृति के सभी रूपों का इनमें सामंजस्य हुआ है। झरने का अविराम नाद, पत्तों की मरमर ध्वनि, चंचल जल का कलकल, मेघ का गरजन, पानी का छमछम बरसना, आँधियों का हाहाकार, कलियों का चटकना, विक्षुब्ध समुद्र का महारव, मनुष्य की भिन्न-भिन्न भाषाएँ और विचित्र उच्चारण; खगपशु, कीट, पतंग आदि की बोलियाँ—ये सभी लोकगीतों के विषय हैं। ग्रामगीत प्रकृति के महासंगीत के अंश हैं। महात्मा गांधी के शब्दों में—लोकगीतों में धरती गाती है, पहाड़ गाते हैं, 'नदियाँ गाती हैं, फसलें गाती हैं, उत्सव गाते हैं और मेले, उत्सव, परंपराएँ सभी गाते हैं।' इनमें प्राकृतिक वातावरण सत्य पर आधारित रहता है, दृश्य तथा कथानक वास्तविकता लिये होते हैं। इन गीतों में मानव की प्रकृति से एकात्मता भी मिलती है। पशु-पक्षी, पखेरू, सूरज, चंदा, पवन, बदली; सभी उसके हास में रंजित तथा दु:ख पीड़ित दिखते हैं। जायसी की नायिका की भाँति '*पियु से कहेहु संदेसड़ा, हे भौंरा, हे काग*' ही इनमें अनेक राग हैं।

जान पड़ता है, लोकगीतों के कवियों को प्रकृति के विषय में सूक्ष्म जानकारी थी। प्रकृति की प्रत्येक कृति को वे ध्यान से देखते हैं, उन्हें इसका पूर्ण ज्ञान है कि कौन फूल कब खिलता है और कितने समय तक अपना सौरभ बिखेरता है। लोकगीत मस्तिष्क से नहीं, हृदय से निकलते हैं। कृत्रिम सभ्यता के प्रकाश में उनका विकास नहीं होता। इनका जन्म-स्थान गाँव है, जिनकी वाणी में मस्तिष्क नहीं, हृदय है; जिनके विनय के परदे में छल नहीं, पश्चात्ताप है; जिनकी मैत्री के फूल में स्वार्थ का कीट नहीं, प्रेम का परिमल है; जिनके मानस जगत् में आनंद है, सुख है, शांति है, प्रेम है, करुणा है, संतोष है, त्याग है, क्षमा है, विश्वास है। उन्हीं ग्रामीण मनुष्यों के बीच में हृदय नाम आसन पर बैठकर प्रकृति गान करती है। प्रकृति के वे ही गान ये गीत हैं।

८ए, बंद रोड, एलेनगंज,
इलाहाबाद-२११००२
(उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

थोड़ा सा आकाश

• अरुण अभिषेक

जन्म : जुलाई, १९५९।

शिक्षा : बी.कॉम., एल-एल.बी.।

कृतियाँ : 'कथा-कोसी' *(कहानी संकलन)*, 'जन-तरंग' *(लघु-कथा संकलन)* एवं पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। पूर्णियाँ आकाशवाणी से रचनाओं का नियमित प्रसारण

संप्रति : अधिवक्ता।

"क्या तुमने आज आईने में अपनी छवि देखी है :" मैं उसकी ओर एकटक आँखें गड़ाए, उसके झुर्रीदार चेहरे के मध्य से, अतीत की मुग्धता लिए, एक खास छवि में, उसकी छुपी सुंदरता देख रहा हूँ। वैसे भी मैं रोमांटिक सवाल करने के मूड में हूँ। वजह हमारी आपसी अंतरंगता है। इस खयाल से भी मैं झूम उठा।

उसकी आवाज एक थरथराहट के साथ मेरी कान से टकराई। हाँ, उसकी इस थरथराहट में एक ऊष्मा थी, जो मेरे भीतर एक सनसनाहट पैदा कर रही है। वाकई और दिनों की अपेक्षा मिसेज शर्मा आज काफी खुश नजर आ रही हैं।

शहर के मध्य भाग में विवेकानंद पार्क अपनी चहल-पहल और रौनक से बच्चे-बूढ़े, युवक-युवती, मध्यमवर्गीय आयु के दंपतियों को अपनी ओर आसानी से खींचता रहा है। छोटा तालाब, बच्चों के खेलने के लिए उपयुक्त व्यवस्था, प्रकृति के सुंदरतम दृश्य, सुबह-शाम टहलने के लिए पर्याप्त क्षेत्र आदि इसके कई कारण हैं। इसके साथ-साथ यह पार्क दूरी बनाए हुए छोटे-छोटे बेंच पर बैठे हुए एकांतालाप के लिए सुखद अवसर भी देता है। युवक-युवतियाँ तो चौड़े-घने फैले हुए फूलों की झाड़ियों के पीछे अपना वजूद ढूँढ़ते रहते हैं, जहाँ उनके चरित्रों पर आधुनिक संस्कृति हावी रहती है।

हम दोनों इसी पार्क में सुबह-शाम टहलने आते हैं। टहलते हुए जब थक जाते हैं तो थोड़ी देर सुस्ताने पार्क के कोने में लगे बेंच पर बैठ जाते हैं। मेरी पहली मुलाकात मिसेज शर्मा से इसी पार्क में हुई थी। या यूँ कहें कि यह पार्क हम दोनों के मिलने की एक छोटी सी दुनिया है, जहाँ हम दूसरों की जिंदगी को ऊपरी तौर पर देखकर, अपने-अपने अतीत को भीतर से महसूसते हुए, विमर्श करते हैं तो कभी उस जीवन की झाँकियों में अपने आपको देखते हैं, परखते हैं। तब संवाद फूटता है कि 'देखो दुनिया की सोच और दुनिया कहाँ जा रही है।' वगैरह-वगैरह।

मिसेज शर्मा जादवानी अपार्टमेंट में अपने बड़े बेटे के साथ रहती हैं। बड़ा बेटा किसी कंपनी में अच्छे ओहदे पर है। मिसेज शर्मा के और दो लड़के हैं, जो दूसरे शहर में रहते हैं। जब शर्माजी इस दुनिया में नहीं रहे, तब से मिसेज शर्मा कभी बड़े लड़के तो कभी दूसरे या तीसरे लड़के के यहाँ रहती हैं। ज्यादातर वह अपने बड़े लड़के के यहाँ रहती हैं। यहाँ बड़ी बहू है और दो पोते हैं। मिसेज शर्मा का एक कमरा है, जहाँ उनके बेडरूम के साथ-साथ छोटा सा पूजानुमा एक कमरा भी है। कमरे की खिड़कियाँ पश्चिम की ओर खुलती हैं, जहाँ से वह ढलते सूरज को बड़े गौर से देखती हैं, मानो जहाँ उनकी उम्र ठहर सी गई हो। सूरज का अस्त होना, एक चक्र का पूरा होना है। इनसान की उम्र भी तो इसी चक्र की तरह है।

मिसेज शर्मा को डायबिटीज और ब्लड-प्रेशर दोनों हैं, जिसके लिए वह दवा खाती रहती हैं। लेकिन कभी ऊब भी जाती है, इस कथन के साथ कि 'अब जीना भी क्या जीना है। जब वे नहीं रहे तो…।' इसके साथ ही वे लंबी थकान भरी साँस लेती हैं।

हम दोनों प्रायः हर रोज सुबह-शाम टहलते हुए, जब सुस्ताने के लिए एक कोना ढूँढ़ते हैं तो वहीं हम-दोनों बातों ही बातों में अपने-अपने जीवन के अतीत को परत-दर-परत खोलते रहते हैं। तब लगता है कि अतीत में झाँकना भी कितना सुखद है। हमारी सुखद स्मृतियाँ एक-दूसरे के लिए खास संवाद बनती हैं; और इस तरह हमारे इन संवादों के शेयर के साथ-साथ, हमारी अंतरंगता बढ़ती चली गई।

पार्क के पश्चिम तरफ, कुछ दूरी तय करने के बाद आजाद कॉलोनी है। कॉलोनी के पूरब की तरफ मेरा एक छोटा सा फ्लैट है, जहाँ मेरे साथ मेरी सेवा-टहल के लिए गाँव से लाए गए नौकर उगना का वास है। एक बेटी है, जो अपनी ससुराल में है। वह यदा-कदा ताक-झाँक के लिए, दामाद, नाती-नतनी के साथ आ जाया करती है। 'कैसे हो पापा? ठीक से रहना। उगना, तुम पापा का बराबर ख्याल रखना।' वगैरह-वगैरह पूछताछ कर अपना पुत्री-धर्म निभा जाती है।

हाँ, फ्लैट के एक छोर पर हम दो हैं तो फ्लैट के दूसरे छोर पर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भद्र किराएदार को रखा है, जो अपने परिवार के साथ अपनी मस्ती में रहता है। उनसे मेरा मतलब सिर्फ हाँ-हूँ के अलावा मासिक किराए के लेन-देन तक ही सीमित है। मैं अर्थशास्त्र का एक रिटायर्ड प्रोफेसर हूँ। यदा-कदा कुछ छात्र पढ़ने-पूछने फ्लैट में चले आते हैं। मैं उन छात्रों के साथ बड़ी तन्मयता से पेश आता हूँ। तब लगता है, मेरी बौद्धिकता का वजूद अब भी है।

हाँ, मिसेज शर्मा मेरे उस छोटे से परिचय से आश्वस्त होकर मेरे करीब आ गईं। यह एहसास तब होता है, जब वह पार्क में किसी दिन नहीं आती हैं, तब मैं शून्यता से भर जाता हूँ। लगता है कुछ खो दिया है।

जब मैंने अपने भीतर की इन संवेदनाओं को सहमते हुए मिसेज शर्मा को कहा तो वह झट से बोलीं, 'सक्सेना साहेब, लगता है आपको मुझसे प्यार हो गया है।' एक बूढ़ी हँसी के साथ वह खिल उठीं।

"तभी तो आज की शानदार सुबह में आपका रोमांस से भरा यह सवाल कि 'क्या तुमने आईने में अपनी छवि देखी है?' बहुत अच्छा लगा। पता नहीं क्यों, आपकी इस अदा में शर्माजी का अक्स नजर आने लगा। वे भी जब रोमांचित होते थे तो अचानक उनका मनुहार और खुशामद इस कदर प्रकट होती थी कि वह तरंग मेरे जिस्म से होते हुए रूह में समा जाती थी।"

"सच!"

"बिलकुल सच!"

हम दोनों ने एक-दूसरे को गौर से देखा।

"अब चलें! शाम को मिलते हैं।" मिसेज शर्मा बैंच से उठती हुई बोली।

"हाँ, अब चलें। धूप काफी निकल आई है।", मैं भी उठते हुए बोला। हम दोनों मंद-मंद मुसकरा रहे थे। वह मुसकराहट दीख कम रही थी, लेकिन भीतर हम दोनों महसूस कर रहे थे।

तभी हम दोनों की आँखें एक साथ टकराईं और उतनी ही तेजी से हम दोनों झेंप भी गए थे। यह क्या?

शाम को इस पार्क में युवक-युवतियाँ ज्यादा मँडराते हैं। शाम गहराते ही इनकी नजदीकियाँ बढ़ जाती हैं। ऊपर देखता हूँ—'नीला आसमान। कितना सुंदर। सफेद बादलों की विभिन्न आकृतियाँ मन को मुग्ध करती हैं। जहाँ कई सुनहरे रेशों वाले बादल तैर रहे हैं, सूर्य की रोशनी के रिफ्लेक्शन से वे और भी ज्यादा खूबसूरत हो जाते हैं। तब लगता है कि काश! कोई निपुण कलाकार प्रकृति की इस अनुपम सुंदरता को अपने कैनवास में कैद कर सकता।' मैं अपने चेहरे पर एक सनसनाहट महसूस करता हूँ। क्या यह किसी खास बोध की तृप्ति है?

मैं बाईं ओर पार्क के गेट की ओर देखता हूँ। मिसेज शर्मा अब तक नहीं आई हैं। बाहर पॉप-कॉर्न, कैंपा, बर्गर और चाय के छोटे-छोटे ठेलानुमा स्टॉल लगे हुए हैं। खुले आसमान में तैरते, ढेरों पक्षियों की चहचहाहट, एक अलग दुनिया गढ़ रही है, जिसमें खो जाने को दिल करता है। मैं मन-ही-मन मन्ना डे का एक गाना गुनगुनाता हूँ। तभी देखता हूँ, मिसेज शर्मा इधर ही आ रही हैं। ये क्या? उनके चेहरे पर यह कैसी उदासी है? पास आते ही गर्मजोशी से मैंने उनका स्वागत किया। वे लंबी साँस खींचती हुई, मेरे बगल में बैठ गईं।

"आज देर हो गई। आपको इंतजार करना पड़ा।", मिसेज शर्मा ने कुछ इसी तरह की उड़ती निगाहों से मुझे देखा, जैसे मेरे चेहरे पर उगे किसी भाव को पकड़ना चाह रही हों।

मेरे कुछ कहने के पहले, मिसेज शर्मा पुनः बड़ी गंभीरता से बोलीं, "यह अकेलापन सूने में सालता है। ये तो महज स्मृतियाँ हैं कि आदमी उनका आत्मावलोकन कर अपने अस्तित्व को महसूसता रहता है।" इसके साथ ही उन्होंने एक ठंडी साँस छोड़ी, मानो कोसों दूर से चलकर आई हैं और अब थक चुकी हैं।

"अच्छा बताएँ, कैसे हैं?"

"खास कुछ नहीं। बस ठीक हूँ।" मैं भी कुछ उड़ता-उड़ता महसूस करने लगा हूँ।

मेरे अंदर एक दार्शनिक भूमिका उभरने लगी। "जानती हैं मिसेज शर्मा! इनसान के अपनी अधिकांश उम्र जी लेने के पश्चात्, जब उसका अंत समय आता है तो वह क्षण-क्षण अपने जीवन में खास अमूर्त रिक्तता को महसूसता रहता है। शायद हम भी इसी दौर से गुजर रहे हैं। सच तो यह है कि मैं अपनी भूमिका के पश्चात् अपने भीतर की रिक्तता को महसूस करता हूँ।"

तभी मैं मिसेज शर्मा के चेहरे पर संतोष की झलक देख पाता हूँ। शायद वह जीवन का कोई सूत्र पकड़ रही हों।

"बात तो ठीक है। इसके बावजूद हम इस ढलती उम्र में जी रहे हैं।" मिसेज शर्मा मेरी और मुखातिब थीं। अनायास उनके चेहरे पर एक खास ताजगी भरा गुलाबीपन तैरने लगा। यह क्या?

वह चहकते हुए बोलीं, "मैं जब भी आप से मिलती हूँ, तो मुझे ऐसा लगता है कि मैं किसी अजीज से मिल रही हूँ। मिलकर बेहद खुशी और तरोताजा महसूस करती हूँ।" इसके साथ ही उनके झुर्रीदार चेहरे पर एक स्निग्ध छाया तैरने लगी।

मैं भी चहक उठा। दिल और दिमाग में एक मिठास सी घुलने लगी। हमारे भीतर यह कैसा संगीत है! अभिभूत हूँ, और खुश भी। मैं इन्हीं भावों में बोल उठा, "इसका मतलब यह हुआ कि आपको मुझ पर आस्था है। तभी तो··· चलो, यह आस्था आपकी सेहत के लिए ठीक है।" इसके साथ ही मैं महसूस करता हूँ कि मेरे भीतर एक नई ऊर्जा अँगड़ाई ले रही है। जीवन को क्षण में महसूस करने का यह नया स्वरूप, जीने की नई ललक पैदा कर रहा है।

देखता हूँ कि साँझ के झुकते ही गहरा अँधेरा घिर आया है। आसमान पर गहरे काले बादलों की परत चढ़ गई है। बावजूद थोड़ा सा आकाश अब भी बाकी है।

सा अ

विवेकानंद कॉलोनी
पूर्णिया-८५४३०१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

अनध्याय के दिन

विश्वास पाटील

जब से समझ ने मन के किवाड़ पर दस्तक दी है तब से मन में गगन का आकर्षण जगा है। दूसरा आकर्षण है देवतात्मा हिमालय का। आकाश की विस्तीर्ण नीलिमा और हिमगिरि की पारदर्शी धवलता। आगे इसे हरियाली की अपूर्वता ने आ घेरा। श्वेत-नीला-हरा रंग जीवन का तिरंगा ध्वज बना। मन-प्रवाह के मुकुलित होने के साथ ही संवेदना के क्षितिज तट विस्तीर्ण हुए। नित नए अनुभवों का अवतरण हुआ। इन अनुभवों ने बाँधा नहीं, मुक्त किया। उदर निर्वाह के साधन जुटाता रहा और निर्वाह की साधना को भी पुष्ट करता रहा। जीने का अर्थ जाना। यह जाना कि जीने का मतलब मात्र साँसों का आवागमन नहीं है।

शिशुशाला में पढ़ी हुई कविताएँ याद आ रही हैं। सुखद लग रही हैं। उन कविताओं का अब अर्थ विस्तार हो गया है। उन कविताओं के प्रतीक सगुण साकार बन गए हैं। उन गीतों के आसान-साधारण लगनेवाले शब्दों का गुह्य अर्थ समझ में आ रहा है। इन्हीं शब्दों को तो बचपन में रटा था। अर्थ जाने-समझे बिना संहिता पढ़ी थी। बिना अर्थ गरिमा जाने किए जानेवाले मंत्रघोष सा उसका स्वरूप था। मात्र उच्चारण मात्र से ही पापक्षालन हो पुण्योदय होता है। इस प्रकार की बेतुकी समझ इस पठन के साथ जुड़ी हुई थी। कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था, लेकिन सबकुछ जान लेने का भाव मन में था। कुछ भी जाने-समझे बगैर मैं अकेला ही जानता हूँ, यह अहं भाव मन में था। अध्ययन मानवी स्वभाव का व्यवच्छेदक लक्षण है। पशुत्व से मुक्ति की दिशा में अग्रसर होना अध्ययन से ही संभव है। बचपन की पढ़ाई का स्वरूप अधिकतर अनुकरणाधारित साधन है। विद्याधन सर्वश्रेष्ठ है। मनुष्य है तो पशु ही, लेकिन सामाजिक पशु है। अध्ययन के कारण मनुष्य पशु-वृत्ति से मुक्त होता है।'

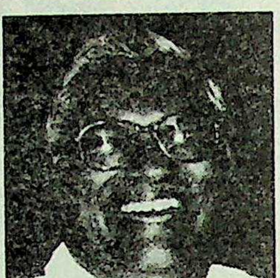

जन्म : ११ मार्च, १९५२ को नंदुरबार में।

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.

प्रकाशन : हिंदी में कुल ग्यारह ग्रंथ प्रकाशित, चार ग्रंथ पाठ्यक्रमांतर्गत, मराठी में कुल तेरह ग्रंथ प्रकाशित, गुजराती और मराठी में अनुवाद कार्य, मराठी कथा एवं एकांकिका नाटक लेखन तथा मंचन। राज्यस्तरीय एवं राष्ट्रीय अनेक पुरस्कार प्राप्त, पुणे विश्वविद्यालय द्वारा इनके लेखन पर एम्.फिल. का शोध जारी।

संप्रति : प्रपाठक एवं शोध निर्देशक स्नातकोत्तर हिंदी विभाग कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय शहादा, जिला नंदुरबार (महाराष्ट्र)।

आखिर मनुष्य की पहचान क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ते हुए एक सूत्र पाया—'काव्यशास्त्रविनोद', इसके अभाव में मनुष्य शृंग-पुच्छरहित पशु। पशु यानी पाश बद्ध। मनुष्य मुक्त, आजाद परवशता के बंधन से रहित। किसी से हाँका जाना नकारता है मनुष्य। मनुष्य सत्य, सत्त्व और स्वत्व का पुतला। मनुष्य है, परिस्थिति पर मनःस्थिति की विजय। धरा की जड़ता जिसे बाँध नहीं सकती वह मनुष्य। उफनती लहरों का निमंत्रण अनसुना नहीं कर सकती मनुष्य की चेतना। नए-पुराने का समन्वित रूप शोधन करता है वह मनुष्य। मनुष्य ज्ञान-संपन्न बने, कला संयुक्त बने, जीवन सन्मुख बने; मुख्यतः स्नेह समृद्ध बने, यह संस्कृति की पहचान है। मनुष्य पशुता का त्याग करे। मानव्य का विकास हो। इसलिए पीढ़ियों ने पसीना बहाया। ऋषि प्रज्ञा ने अस्थियाँ गलाईं। विज्ञाननिष्ठ प्रतिभा ने साँसों का धन खोया। कला विचार वेदी का गुलाब बना। शिल्प यज्ञ धूम की तरह तरंगायित रहे। मनुष्य स्थापित हुआ। आहार, निद्रा, भय और परिवार भावना की चतुःसूत्री मानव और पशु जीवन में समान तथा समांतर है। शारीरिक स्तर पर जीनेवालों के लिए जरूरी है।

पठन और लेखन के स्थूल बिंदुओं से चलकर मनुष्य चिंतन-मनन के शिखर तक पहुँचता है। इसमें अध्ययन-अध्यापन है। इसका समवेत स्वर अध्याय है। अध्याय आवश्यक है, स्वाध्याय अनिवार्य है। स्नातक को ऋषि प्रज्ञा ने उपदेश दिया। स्वाध्याय करने में प्रमाद मत करना। स्वाध्याय संस्कृति की प्राणवत्ता है। हाँ, शिष्टजनों का आगमन हुआ तो अनध्याय। 'शिष्टागमनेऽनध्यायः।'

बीमारी को शिष्ट कहें या अशिष्ट ? लेकिन इस बार उसकी उपस्थिति के कारण मेरा लौकिक अध्ययन खंडित हुआ। मैं अरक्षित नहीं, आरक्षित था। औषधियों की ढाल ले बीमारी से जूझ रहा था। बीमारी का प्रहार प्रचंड था। शरीर की रक्त-कोशिकाओं का साम्राज्य ध्वस्त हो गया था। उसके सल्तनत की चूलें ढीली हो गई थीं। थकान की खास वजह यह थी। बीमारी का पुनरागमन भयावह होता। प्रत्याघात चिंताजनक होता। ४उससे अपने आपको बचाना जरूरी था। थक गया था, रुक गया था, अटक गया था; विचार यात्रा मंद पड़ती जा रही थी।

शरीर पर बाहर से शीत की थकाने वाली मार जारी थी। अंदर से तप्त लहरियों के उफनते नारे थे। शरीर के जलपोत का मस्तूल टूट-बिखर गया। देहकांति झुलस गई। अन्न का स्वाद लुप्त हो गया। लाख कोशिशों के बाद दो स्वाद बचे रहे—मीठा और तीखा, बस! इन दो स्वादों के बीच स्वाद की एक अखंड रसमय धारा प्रवाहित रहती है, इस लक्ष्य का बोध मानो रसना भूल गई। भोजन स्वादशून्य नीरस व्यापार बन गया। यज्ञ की पावनता लुप्त होकर आग की ज्वालाएँ झुलसाती रहीं। यज्ञकर्म केवल उदरभरण हो गया। कर्म की सूक्ष्मता हट, काम की स्थूलता बची। उत्तमोत्तम औषधियाँ प्रभाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डालती रहीं। स्नेही-उदार डॉक्टर मित्र का सहयोग था, फिर भी व्याधि का प्रकोप भयंकर था। देह पर उसकी जकड़न मजबूत थी। उसने जबरन पूरी काया को एड़ी तले कुचले रखा था। मन पर उसकी अधिसत्ता तुलना में क्षीण थी, फिर भी मन शरीराधीन ही होता है न? मन गलित तो मन पलित। प्रज्ञा विवेक के गढ़ पर बीमारी को कब्जा करना नहीं सध पाया था।

सामने दूरदर्शन है। दाएँ हाथ में इशारों से चित्रों को रोकने-बदलने-मूक कर सकने की क्षमतावाला यंत्र है। उसके संकेत से दूरदर्शन को सजीव-निर्जीव या सवाक्-मूक करना संभव है। कहीं क्रूर श्वापदों को शर्मिंदा कर सकनेवाली नृशंस प्रतियोगिताएँ हैं। कहीं विलास का उत्तानपादी नग्न नृत्य है। कहीं शरद पूनम का ज्योत्स्ना पर्व है। कहीं प्रभु वचनों की पुण्यसलिला गंगाधारा है। कहीं शरीर क्रीड़ाओं के विलक्षण विभ्रम हैं। कहीं ज्ञान-विज्ञान की नित नई नवल गरिमा है। कहीं प्राकृतिक दृश्यावली के चेतोहर आवर्तन हैं। कहीं राजसत्ता की जहरीली फूत्कारों के विलोम-प्रतिलोम पैंतरे हैं। कहीं त्याग, समर्पण की कथा-कहानियाँ हैं। क्या देखें? क्या-क्या देखें? कितनी देर तक देखें? यंत्र को आदेश दे, मैं अकंप दूरदर्शन पर नजरें गड़ाए बैठा हूँ। इसमें मानवी जीव की उफनती लहरें अब चुप्पी साधे जमी हुई हैं। सबकुछ शांत। सबकुछ चुप-चुप। सोच रहा हूँ। उत्तमोत्तम गीत सुन रहा हूँ। धुन-लय-ताल-नाद-स्वर-शब्द-अर्थ-काकू-संवेदना-स्पर्श की अलग-अलग राहें खिल-खुल रही हैं। शरीर में अपार थकान है। देह निस्त्राण है। बीमारी के स्याहीचूस कागद ने देह के ऊर्जाद्रव्य की स्याही को मानो सोख लिया है।

पढ़ने-लिखने पर पाबंदी है। बीमारी क्या आई मानो शिष्टजन घर आए हों। न अध्ययन, न अध्याय! क्या करूँ? कुछ भी तो समझ में नहीं आता! अध्याय दूभर हो गया है। मन विहार मुक्त रूप से जारी है। प्रज्ञा की प्रगति अप्रतिहत है। कुछ भी न कर सकने का भाव थकानेवाला है। जबरन कुछ लिखना भी चाहूँ तो कलाई में दम नहीं है। मन स्वच्छंद है। कलाई पर बीमारी की हुकूमत भरी पकड़ है। दूरभाष की घंटी घनघना रही है। उठकर बात करना संभव नहीं है। मौन पाले हूँ। अनेक व्याधियों के व्याघ्रों से जूझते हुए भी अनेकों ने लेखन किया। भयंकर बीमारियों से जूझते हुए पढ़ा-लिखा। पीकदानी में खून थूकते आखिरी साँस तक कलम के सिपाही लड़ते रहे। इन उदाहरणों की याद आती और अपने आपको निष्क्रिय पाना थका डालता है। अपराध-बोध मन को घेर लेता है। बिस्तर पर पड़ा हूँ। लोग-बाग बिना पढ़े-लिखे अपना समय कैसे बिताते होंगे, इसका अनुमान कर रहा हूँ। कुछ भी तो समझ में नहीं आता।

कमरे की तीनों खिड़कियाँ खुली हैं। दरवाजा खुला है। जादू की छड़ी मानो घुमा दी हो। एक हरी-भरी कविता पंख पसार ठुमक-ठुमक नाच रही है। हरे रंग को देखकर पहली बार एहसास हुआ कि यह केवल हरा रंग नहीं है। इसमें हरेपन की अनगिनत छटाएँ हैं। हरा-पीला, हरा-गुलाबी, हरा-नीला, हरा-जामुनी, हरा-हरा, हाँ जी हाँ, हरा-श्याम भी। हरे रंगोत्सव का यह नजारा देख मन मुग्ध हो गया। सीताफल के वृक्ष से वक्ष सटाए खड़ा है अमरूद का पेड़। उसकी सतेज काया। शाखाओं पर श्वेत पुष्प सज्जा। खिड़की से दिखाई देनेवाला हरसिंगार का लहराया अस्तित्व। झूलती टहनियों पर सजा रंग-गंध का जादू। सत्यभामा का कृतक् कोप। रुक्मिणी की तरलता। कृष्ण का व्रात्यभाव। डालियों की आँख मिचौली। कथा निवेदक के आख्यान सी फैली हुई बेले की बेल। पहाड़ियों के कंधों से उछल-कूद करनेवाले जलप्रपात के स्राव के समान उसका अप्रतिबद्ध आविष्कार। सबकुछ तोष देनेवाला। जूही की बेल पर लहराते फूल। जल तरंगायमान सुगंध। साँवली धरती का चित्ताकर्षक हरा-भरा संभार। माया का हरा रूप। हरी काया। हरी छाया।

मन ने एक हरी-भरी चादर को ओढ़ लिया है। आँगन में अशोक के ऊँचे शिखर जगमगा रहे हैं। व्रतस्थ नीम की गेरूई शिखा लहरा रही है। दूर-दूर लहराती लहरों की हरी बाट दिख रही है। यह हरी पुस्तक पढ़ रहा हूँ। देह के रंध्र-रंध्र में आँख उग आई है। मैं सहस्राक्ष देवराय बन गया हूँ। रोम-रोम से निखर रहा हूँ। नेत्रों की अंजुलि में सारा तो समा नहीं रहा है।

देह पर बीमारी का कब्जा गजब का है। प्रज्ञा का विहार अखंड है। न कागज है न लेखनी। मन हवा की तरंगों पर आरूढ़ हो मुक्ति की कविता लिख रहा है। हरियाली का मन स्पर्श हो रहा है। एक अनुभूत द्रव्य देह-मन से झर रहा है। लेखन हाशिए की शोभा बन गया है।

इस बार की बीमारी का यह अनध्याय खूब रहा। है तो अनध्याय के दिन। आज मन सोच रहा है। हरियाली का यह बोध मन को सजगता और सहजता अर्पित कर रहा है। अध्ययन क्या केवल पढ़ने-लिखने तक ही सीमित है? क्या ग्रंथाधारित ही है? क्या मुद्रित अक्षरों के मुद्रित मन से पठन तक ही मर्यादित है? प्रश्न बादलों से उमड़-घुमड़ रहे हैं।

मन मना कर रहा है। कविता पढ़ने को उपलब्ध नहीं है तो चाँदनी को निहारो। निबंध पढ़ने की इच्छा है तो कली के फूल बनने की प्रक्रिया को समझो। उपन्यास पढ़ना है तो वट का विस्तार जानो, नाटक पढ़ना है तो ग्रहणों के विलोभनीय दृश्यों के साझीदार बनो। ग्रंथ झरनों में और प्रवचन पर्वत शिखरों पर सजे हैं। प्रकृति की नाना रस-गंधमयी पुस्तक को पढ़ना कितना सत्य है?

न पढ़े कोई पुस्तक। न लिखे कोई अक्षर। ग्रंथों की प्रेरणा बने हुए हैं जीवन। जीवन अध्ययन ही ग्रंथ निविष्ट होता है। अर्थ जीवन में ढूँढ़ने पड़ते हैं। शब्द मारता है, अर्थ तारता है। शब्द के शिक्षक होते हैं। अर्थ के आचार्य होते हैं।

खूब मन मथित हुआ। अनध्याय के दिन तो अध्ययन के दिनों पर मात कर गए। अनध्याय ने समृद्ध किया। मौन क्या प्रवचन की तुलना में व्यापक प्रभाव नहीं डालता? अनेक अनलिखे पृष्ठ क्या पाते हैं? क्या खोते हैं? किस कीमत पर पाते हैं? किस मोल खरीदते हैं?

मैं तो ईमानदारी से कहता हूँ कि ये दिन बड़े प्यारे, उपहार भरे। जीवन को समझनेवाले ने ग्रंथ, शास्त्र एवं शब्द सत्ता को ठुकराया। यह राजदंड की दीप्ति को अतिक्रांत करने से अधिक कठिन व्रत है। शब्द की यात्रा आकाशगामी होती है। शब्द आकाश का गुण है। इन दिनों लौकिक अर्थ में कुछ पढ़ा नहीं, गुना अधिक। लिखा कुछ नहीं, समय की स्लेट पर अनलिखा उभर आया। जो सुरक्षित है वह तो है ही, लेकिन जो समर्पित है, वह सुरभित हो गया। बिना कुछ लिखे-पढ़े समझ के दायरे बढ़े।

शिष्टजनों का आगमन परंपरा-मुक्त ज्ञान साधना का अक्षय कोष होता है। शिष्ट ही विशिष्टता प्रदान करते हैं। किन पैमानों से हम पाते हैं? साध्य और साधनों की समुचित सुसंगति ही तो साधना की धारा को प्रवाहित करेगी। साधना का पथ प्रशस्त करेगी। लौकिक भाव राशि को काव्योत्कट अभिव्यक्ति प्रदान करेगी। हम अपने अंदर झाँककर देखें। अंतस का गीत सुनें। मन की बात मानें। हृदय प्रदेश पर परचम लहराएँ।

३४ ब 'कृष्णांबरी', सरस्वती कॉलोनी,
शहादा-४२५४०९
(नंदुरबार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लघुकथा

पापा! मैं जीना चाहती हूँ

● महेंद्र प्रजापति

"क्या कहा डॉक्टर ने?" मिसेज शर्मा ने अपने पति को सवालिया नजरों से देखते हुए पूछा। शर्माजी कुछ बोल न सके, केवल फूट-फूटकर रोने लगे। आँसू पोंछते हुए बोले, "सिर्फ चार-पाँच दिन का समय है हमारी बेटी के पास। ब्लड कैंसर अब उसे पूरी तरह जकड़ चुका है।"

"क्या?" मिसेज शर्मा ने फटी आँखों से पति को देखा।

"हाँ ममता, डॉक्टर ने यही कहा।" कहकर शर्माजी पुनः बेजार होकर रोने लगे।

"पापा···" बेटी ने अंदर से आवाज दी।

"हाँ बेटी, मैं आ गया। बोलो?" शर्माजी दौड़कर बेटी के पास आ गए और उसका सर गोद में रखकर प्यार से सहलाने लगे। जैसे सारा प्यार आज ही बेटी पर लुटा देना चाहते हों। मिसेज शर्मा तो बेटी के पास जाने की हिम्मत ही नहीं कर सकीं। बेटी ने पहली बार पिता को इतनी पीड़ा में देखा था। पूछ लिया—

"क्या हुआ पापा?"

"कुछ नहीं बेटा, आई एम फाईन।" शर्माजी आँसू पोंछते हुए खुश होने की नाकाम कोशिश करने लगे। अपनी जागती आँखों से बेटी के डॉक्टर बनने का सपना टूटते हुए देखकर अंदर-ही-अंदर घुट रहे थे। पर क्या करें? वक्त किसी का दोस्त या दुश्मन नहीं होता। नियति ने उसको जिसके साथ जैसा बरताव करने का कार्य सौंपा है, वह पूरी ईमानदारी और कुशलता से उसे निभा रहा है।

"मेरे जीवन के कितने दिन शेष हैं, पापा?" बेटी के इस सवाल ने पिता को झकझोर दिया। अंदर एक असहनीय पीड़ा का एहसास हुआ; लेकिन तुरंत खुद को सँभाल लिया और खामोश हो गए।

"पर पापा, मैं जीना चाहती हूँ।" बेटी के इन शब्दों ने तो खामोशी का सब्र ही तोड़ दिया। इनसान को कभी-कभी इतनी पीड़ा का बोझ उठाना पड़ता है कि रोना उसे छोटा लगने लगता है और आँसू उसमें कहीं दब जाते हैं। शर्माजी उसी कष्ट को झेल रहे थे। बेटी के जीने की इच्छा पर वह सिर्फ इतना बोले, "बेटी, मैं तो अपना सर्वस्व देने को तैयार हूँ। कोई तुम्हें ठीक कर दे और मेरा सबकुछ ले ले। मैं एक कपड़े में तुम्हें लेकर घर से निकल जाऊँगा। मेरे पास और कोई तरीका नहीं है बेटे।"

"एक तरीका है पापा···एक तरीका है।"

"क्या··· ? क्या बेटी? जल्दी बताओ।" शर्माजी की आँखों में खुशी की चमक आ गई। आँसू नेपथ्य में चले गए।

"मेरी मृत्यु के बाद मेरा शरीर दान कर देना पापा।" बेटी ने गर्व से कहा।

"पागल हो गई हो? क्या कह रही हो बेटी?" शर्माजी ने बेटी की इच्छा का तिरस्कार किया।

"भला पागल भी कहीं ऐसी बात करते हैं, पापा?"

"हमारे धर्म में इसकी मान्यता नहीं है, बेटी।" शर्माजी ने धर्म का आश्रय लेकर विरोध किया, परंतु बेटी विचलित नहीं हुई। उसका संकल्प डिगा नहीं। वह खामोश नहीं हुई बल्कि जवाब दिया, "हर धर्म मानवता का संदेश देता है, पापा। जो मजहब इनसानियत न सिखाए, उसको मानने से क्या फायदा। फिर हमारा हिंदू धर्म तो मानवीय संवेदना के लिए विश्वविख्यात है।" बेटी की बातों में विरोध नहीं, बल्कि सुझाव का स्वर था। शर्माजी थोड़ा झुके, परंतु धर्म का मोह नहीं छोड़ पाए। यह कहना मुश्किल है कि बेटी के शरीर दान का क्रांतिकारी फैसला स्वीकार करने के लिए उन्हें धर्म रोक रहा था या एक ऐसे पिता का फर्ज, जिसने कभी भूल से भी अपनी बेटी को थप्पड़ नहीं मारा तो उसका शरीर दान कैसे कर दे। उन्होंने एक बार और यह कहकर बेटी को रोकने की अंतिम कोशिश की, "बेटी, जिस मानव का अंतिम संस्कार सशरीर नहीं किया जाता, उसकी आत्मा भटकती है।" अठारह वर्ष की बेटी आज जैसे कोई दार्शनिक हो गई थी। उसका एक-एक शब्द धर्म के भटकाव को सही रास्ते पर ला रहा था। उसने हार नहीं मानी पिता को पुनः समझाने के प्रयास में कहने लगी, "पापा, आत्मा तो उनकी भटकती है, जिनको ठिकाने नहीं मिलते। जरा सोचिए पापा, अगर मेरी आँखों से कोई देखेगा तो क्या मैं जिंदा नहीं रहूँगी? मेरा यह हृदय, जिसे आप जलाकर मिट्टी बनाना चाहते हैं, वह अगर किसी को नई जिंदगी देगा तो क्या मैं जिंदा नहीं रहूँगी, पापा? मेरे शरीर के एक-एक अलग-अलग अंग से, अलग-अलग लोग अपना जीवन जिएँगे तो क्या मैं जिंदा नहीं रहूँगी? मम्मी, पापा को समझाओ ना। जब इतने लोग मेरे शरीर से नया जीवन पाकर मुझे दुआएँ देंगे तो क्या मेरी आत्मा को शांति नहीं मिलेगी।" बेटी की बातें गीता-कुरान की तरह सच थीं। उसमें मानवता का संदेश था। शर्माजी ने बेटी को गौर से देखा, उनको लगा कि जैसे बेटी का डॉक्टर बनने का सपना पूरा हो गया। आखिर वह डॉक्टर भी तो इसलिए बनना चाहती थी कि लोगों को जिंदगी देगी। शर्माजी ने बेटी को गले से लगा लिया और फिर फूट-फूटकर रोने लगे, लेकिन इस बार आँसू कष्ट, पीड़ा और बेवसी के नहीं, बल्कि खुशी, उत्साह और गर्व के थे।

मकान नं. ५४४८/५०, कमरा नं. जी-४
गली नं. ६, न्यू चंद्रावल, जवाहर नगर,
कमला नगर,
दिल्ली-११०००७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग पहेली (७०)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ जुलाई, २०११ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते सितंबर २०११ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली–२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (६८) का हल

प्र	शं	स	नी	य	■	सी	मां	त
ति	क	ड़ी	■	था	ह	ना	■	न
पा	र	■	के	व	ल	■	लो	हा
ल	■	सं	त	त	■	चा	ट	■
क	बा	य	ली	■	ने	क	ना	मी
■	द	म	■	दे	व	र	■	ना
सा	ल	■	दु	शा	ला	■	अ	बा
ह	■	चौ	ख	ट	■	त	का	जा
स	ली	का	■	न	सी	ब	व	र

★ **पुरस्कार विजेता** ★

१. **श्री चंद्रमोहन श्रीवास्तव**
ग्राम : परसौनी
थाना : बैरगनियाँ
जिला : सीतामढ़ी
(बिहार)

२. **श्रीमती जया सहल**
डी-३/३४९८, वसंत कुंज
नई दिल्ली-११००७०

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली ६८ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री विजयपाल सेहलंगिया, लक्ष्मी देवी, ब्रह्मानंद 'खिच्ची', सी.आर. नाइड़िया (महेंद्रगढ़), शीला देवी आर्या, विवेक आर्य (जींद), फकीरचंद डुल (कैथल), महावीर प्रसाद अग्रवाल (रेवाड़ी), कमल किशोर पंवार (हनुमानगढ़), मोहन उपाध्याय (अजमेर), सुधा जौहरी (जयपुर), सीप गुप्ता (श्रीगंगानगर), ओंकारनाथ मित्र (इलाहाबाद), योगेंद्र वर्मा 'व्योम' (मुरादाबाद), शालिगाम एस. तिवारी (मुंबई), पवन शर्मा (हमीरपुर), शीत कुमार (हजारीबाग), अ. श्रीनिवासन (चेन्नै), माणक तुलसीराम गौड़ (रामगढ़), इंद्रसिंह राणा (चिकमंगलूर), शकुंतला चौरसिया, लक्ष्मीनारायण चौरसिया (सागर), निर्मला गुजराती, कुसुम गोयनका, नरेंद्र, राजाराम, शिव शंकर, विनोद, वंदना, प्रियंका, दीप्ति, संजीत कुमार, अनु कुमार, अनूप, विवेक, अभिषेक, हर्ष, मनीषा, निशा (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. शुरुआत (४)
४. भारतवासी (४)
७. सर्प (२)
८. परंतु (३)
१०. बहुमूल्य पत्थर (२)
११. नवाब का बेटा (५)
१३. मंशा (३)
१५. भूमि पर लगने वाला कर (३)
१७. पुत्र के प्रति माता का स्नेह (३)
१८. स्थान (३)
१९. मात (३)
२१. फालिज (३)
२३. सौगंध खाना (३, २)
२६. कीर्ति (२)
२८. केवल (३)
२९. दिन जो बीत गया हो (२)
३०. परिवर्तित (४)
३१. माँ–बाप (२–२)

ऊपर से नीचे—

१. टालमटूल (४)
२. वर्ण (२)
३. जलपान (३)
४. बहिन का पुत्र (३)
५. वाण (२)
६. कोशिश में लगा हुआ (४)
९. पूज्य व्यक्ति (३)
११. माथे का झुकना (५)
१२. युक्ति सफल होना (२, ३)
१४. शब्दालंकार जिसमें एक शब्द के विभिन्न अर्थ होते हैं (३)
१६. खरीदार (३)
१९. उलाहना (४)
२०. चमचमाहट (३)
२२. बहुत बोलने का भाव (४)
२४. कामयाब (३)
२५. अंत (३)
२७. संध्या (२)
२९. बंदर (२)

वर्ग पहेली (७०)

१		२	३	■	४		५	६
७		■	८	९		■	१०	
	■	११				१२	■	
१३	१४		■		■	१५	१६	
■	१७			■	१८			■
१९			■	२०	■	२१		२२
	■	२३	२४		२५		■	
२६	२७	■	२८			■	२९	
३०				■	३१			

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

....

....

वर्ग पहेली (६९) का हल अगले अंक में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का जून अंक मिला। संपादकीय के माध्यम से नई-नई जानकारियाँ मिलीं। 'प्रतिस्मृति' में ओंकार शरद का 'लंका महराजिन' के माध्यम से स्मरण किया गया है। देशी-विदेशी कहानियाँ रोचक बन पड़ी हैं। कविताओं में कुँवर बेचैन, प्रभा दीक्षित और कुमार रवींद्र पठनीय लगे। हमेशा की तरह गोपाल चतुर्वेदी का व्यंग्य गुदगुदाता है। ब्रजभूमि भारतवासियों को आकर्षित करती रही है। स्वप्ना उप्रेती का लेख 'फूलबँगला : धर्म और कला सौंदर्य का प्रतीक' यहाँ के वातावरण का सुंदर चित्र खींचने में सफल रहा है।

—चंद्र मौलेश्वर प्रसाद, सिकंदराबाद (आ.प्र.)

'साहित्य अमृत' के मई अंक में 'मोती बी.ए., जिन्होंने आखिरी साँस तक कविताओं को जिया' में भगवती प्रसाद की बातचीत बहुत अच्छी लगी। रमेश पोखरियाल 'निशंक' की 'अतीत की परछाइयाँ' कहानी अच्छी लगी। प्रतिक्रियाएँ और साहित्यिक गतिविधियाँ अच्छी जानकारियाँ उपलब्ध कराती हैं।

—साधना अग्रवाल, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का मई अंक खरीदकर पढ़ा। भगवती प्रसाद द्विवेदी का मोती बी.ए. पर साक्षात्कार पढ़ते ही आँखें भर आईं। यह बड़ा मार्मिक लेख है। महीप सिंह का आलेख 'माया महा ठगनि हम जानी' आज के साधु-संतों रूपी पाखंडियों की पोल खोलता है। संपादकीय में विश्व कप क्रिकेट की जगह अगर रवींद्रनाथ टैगोर पर चर्चा होती तो अच्छा लगता। 'आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री की जीवन-यात्रा' पढ़कर महादेवी वर्मा की याद आ गई। शैलेश मटियानी के धारावाहिक उपन्यास 'सीढ़ियाँ' ने पत्रिका के अगले अंक की अभी से उत्सुकता जगा दी है। एम.डी. मिश्राजी का 'बुंदेली लोक-साहित्य में विवाहोत्सव', नीरजा माधव की दोनों कविताएँ व कृष्ण कुमार 'आशु' का व्यंग्य 'परपीड़ा सर्वोत्तम सुख' भी बेहद अच्छे लगे।

—बलजीत गढ़वाल 'भारती', नलवा (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' का जून अंक पाकर मन मुदित हुआ। आदि से अंत तक आस्वादनोपरांत कह सकता हूँ कि पत्रिका की उत्कृष्टता यथावत् है। 'दुरगी का घर' में राजेंद्र रंजन चतुर्वेदी ने जिस समस्या की ओर ध्यान आकृष्ट किया है, उसके समाधान हेतु निरंतर प्रयास किए जाने की महती आवश्यकता है। कहानी 'एक लावारिस लाश' तथा 'विलुप्ति' में मरणोत्तर जीवन के मार्मिक चित्रों के माध्यम से वर्तमान की व्यवस्थाजन्य विद्रूपताओं को उभारा गया है। कुँअर बेचैन की गजलें बेहद पसंद आईं।

—महेशचंद्र त्रिपाठी, फतेहपुर (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' के मई अंक में भाषा प्रयोग के अंतर्गत श्री मोतीलाल विजयवर्गीय द्वारा हिंदी-शब्दकोशों के माध्यम से हिंदी में वर्तनीगत एकरूपता की आवश्यकता का उल्लेख किया गया है। भाषा का उच्चारण देशकाल, परिवेश आदि के कारण एक रूप नहीं हो सकता। तब किस भूभाग को एकता का आधार बनाया जाए? हर वर्ण का उच्चारण एक नहीं है। यही नहीं, संस्कृत के तत्सम शब्दों का क्या करें? क्या उनके उच्चारण को मान्यता दें या उनके मानक रूप को? ऐसा नहीं है कि वर्तनी सुधार या उसकी एकरूपता के लिए प्रयास न हुए हों। संभावना तो यही है कि यांत्रिक युग की माँग और भाषा की जीवंतता के लिए हिंदी वर्तनी का एक सभ्य और मान्य रूप सामने आएगा।

—महावीर प्रसाद अग्रवाल, रेवाड़ी (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय पढ़कर अच्छा लगा। 'आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री की जीवन-यात्रा' पर मृदुलाजी का आलेख बहुत आत्मीयता एवं मर्मस्पर्शी है। 'बुंदेली लोक-साहित्य में विवाहोत्सव' तथा 'हमारे गाँव-घर की संझा-पराती' आलेखों में ग्रामीण लोक संस्कृति की सुंदरता सजीव हो उठी है। 'माया महा ठगनि हम जानी' ने माया के रूपों की गहरी पड़ताल की है। मोती बी.ए. पर भगवती बाबू का साक्षात्कार बहुत रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक है। इस अंक की कहानियाँ, व्यंग्य, कविताएँ भी उत्कृष्ट हैं। अहिंदी भाषी क्षेत्रों की लोक संस्कृति को भी इस पत्रिका में जगह मिलनी चाहिए। पत्रिका में पूर्वोत्तर पर सामग्री न देखकर बहुत निराशा होती है।

—हरेराम पाठक, डिगबोई (असम)

'साहित्य अमृत' का मई अंक मिला। संपादकीय पढ़कर अच्छा लगा। सभी कविताएँ अच्छी लगीं। इस अंक में चित्रकार सुरेंद्रवर्मा बधाई के पात्र हैं। पवन चौहान की कहानी 'लॉटरी' अच्छी लगी। महीप सिंह का आलेख 'माया महा ठगनि हम जानी' ने यथार्थ उजागर किया है। श्रीधर द्विवेदी की कविता 'आज के महात्मा अन्ना हजारे' दिल को छू गई। यह अंक बड़ा रोचक, ज्ञानवर्धक, पठनीय व संग्रहणीय रहा। परिपक्व संपादन के लिए संपादक मंडल बधाई का पात्र है।

—राजेंद्र मिश्र, यवतमाल (महाराष्ट्र)

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। रमेश पोखरियाल 'निशंक' की कहानी 'अतीत की परछाइयाँ' उन्हें श्रेष्ठ साहित्यकार सिद्ध करती है। अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी की रम्य रचना 'हमारे गाँव-घर की संझा-पराती' में रमकर मैं भी अपने बचपन की स्मृतियों में खो गया। लोक साहित्य में 'बुंदेली लोक-साहित्य में विवाहोत्सव', रामनाथ राय की 'आँसू', पवन चौहान की 'लॉटरी' कहानी आदि मन को भाए। अन्ना हजारे स्वयं को 'आज का महात्मा' साबित कर सकें, ऐसी मेरी शुभकामना है।

—रमेशचंद्र त्रिपाठी, प्रयाग (उ.प्र.)

साहित्य अमृत का जून अंक पढ़ा। संपादकीय में दी गई जानकारियाँ रोचक लगीं। अभिमन्यु अनत की 'अधूरी कहानी' मन को भा गई, जबकि गुजराती कहानी 'एक लावारिस लाश' ज्यादा अच्छी लगी। कहानियाँ से गुजरते हुए माया मिश्र की 'खिलौना' बेटा और बेटी में अंतर दरशाती अच्छी लगी। जबकि अलका सिन्हा की कहानी 'फादर आन हायर', सुधा रचित 'विलुप्ति' भी अच्छी लगीं। आशा है, भविष्य में और भी अच्छी कहानियाँ पढ़ने को मिलेंगी।

—युगल किशोर 'चिंतित', औरंगाबाद (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक गतिविधियाँ

'रंगों के आसपास' का लोकार्पण

गत दिनों भोपाल के स्वराज भवन में वनमाली सृजन पीठ के संयोजन में श्री प्रयास जोशी के कविता संग्रह 'रंगों के आसपास' का लोकार्पण वरिष्ठ आलोचक डॉ. विजय बहादुर सिंह, कवि-नाटककार श्री राजेश जोशी तथा कथाकार-विज्ञानकर्मी श्री संतोष चौबे ने किया। इस आत्मीय आयोजन में सर्वश्री महेंद्र गगन, प्रज्ञा रावत तथा विनय उपाध्याय ने भी भाग लिया। संचालन कला समीक्षक श्री विनय उपाध्याय ने किया। कथाकार श्री मुकेश वर्मा और भोपाल साहित्य परिषद् के अध्यक्ष श्री सुभाष दुबे ने स्वागत किया। ☐

लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों प्रो. कैलाशचंद्र भाटिया के निवास स्थान, अलीगढ़ में उनकी पुस्तक 'हिंदी भाषा तथा साहित्य में डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया का योगदान' का लोकार्पण विशिष्ट अतिथि प्रो. आर. सुरेंद्रन (आरसु) ने किया, अध्यक्षता प्रो. नजीर मुहम्मद ने की। संचालन श्री अजय बिसारिया ने किया। इस अवसर पर सर्वश्री प्रेमकुमार, वेदप्रकाश अमिताभ, नमिता सिंह, विश्वनाथ शुक्ल, राजीवलोचन नाथ शुक्ल तथा कमल सिंह ने अपने विचार रखे। धन्यवाद-ज्ञापन श्री चंद्रेश भाटिया ने किया। ☐

'सप्तसिंधु' का विमोचन संपन्न

विगत दिनों भायंदर में भोर भ्रमण परिवार के तत्त्वावधान में श्री मुरलीधर पांडेय के काव्य संग्रह 'सप्तसिंधु' का विमोचन वरिष्ठ साहित्यकार श्री म.ना. नरहरि ने किया। संचालन डॉ. एम.एस. गुप्ता ने किया। श्री नीरज कुमार ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की तथा आशीर्वचन श्री सत्यप्रकाश पुरोहित ने दिया। प्रमुख अतिथि श्रीपत मोरे थे। श्री वीरेंद्र कुमार दुबे ने आभार व्यक्त किया। ☐

'साहित्य-शिरोमणि' सम्मान प्रदत्त

विगत दिनों लखनऊ के रवींद्र सभागार में उत्तर प्रदेश हिंदी-उर्दू अवार्ड समिति द्वारा सर्वश्री हरीश नवल, प्रेम जनमेजय और ज्ञान चतुर्वेदी को 'साहित्य-शिरोमणि' सम्मान प्रदान किया गया। अध्यक्ष प्रो. गोपीचंद नारंग थे। श्री सर्वेश अस्थाना ने संचालन और संयोजन किया। व्यंग्यकार श्री सूर्यकुमार पांडेय को भी पुरस्कार प्रदान किया गया। ☐

'अक्ल बड़ी या भैंस' कृति लोकार्पित

३० मई को सोनभद्र मुख्यालय के स्वामी विवेकानंद प्रेक्षागृह में पूर्वांचल प्रेस क्लब उ.प्र. द्वारा आयोजित हिंदी पत्रकारिता दिवस माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं जनसंचार के अवसर पर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ. अच्युतानंद मिश्र द्वारा श्री अजय चतुर्वेदी 'कक्का' के हास्य-व्यंग्य लेख संग्रह 'अक्ल बड़ी या भैंस' का लोकार्पण किया गया। डॉ. राममोहन पाठक विशिष्ट अतिथि थे। कार्यक्रम में सर्वश्री मुनीर बख्श आलम, अजय शेखर, रामनाथ शिवेंद्र, रमा शंकर पांडेय विकल, श्याम नारायण लाल श्रीवास्तव तथा राजीव ओझा उपस्थित थे। ☐

पुस्तकों का लोकार्पण एवं संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों अमृतसर में गुरु नानक भवन सभागार में गुरु नानक देव विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग एवं ट्रस्ट द्वारा पुस्तकों के लोकार्पण हेतु एक दिवसीय साहित्य उत्सव का आयोजन किया गया। 'हृदयेश : संकलित कहानियाँ', पुरुषोत्तम चितले की 'जैव-प्रौद्योगिकी', चंडीप्रसाद भट्ट की 'पर्वत-पर्वत बस्ती-बस्ती', जनार्दन मिश्र की 'पराया धन' तथा राजेंद्र यादव की 'टापू वाला राक्षस' और 'जय गंगे' का लोकार्पण कार्यक्रम के अध्यक्ष प्रो. हरमोहिंदर सिंह बेदी ने किया। 'इंटरनेट के युग में पुस्तक की भूमिका' विषय पर संगोष्ठी में सर्वश्री अशोक नीर, प्रेम विज, सुखविंदर कौर बाठ, सुरजीत कौर, सुधा जितेंद्र, सुरजीत दुखी, भूपिंदर सिंह संधू तथा हिंदी विभाग के विद्यार्थी सुश्री भावना, अंजली, गुरप्रीत और जस्सी ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

४३ पुस्तकों का लोकार्पण

२० मई को पटना में बिहार के मुख्यमंत्री श्री नीतीश कुमार द्वारा प्रभात प्रकाशन की पटना शाखा का उद्घाटन किया गया। इस अवसर पर माननीय मुख्यमंत्री ने बिहार से संबंधित पुस्तक शृंखला की ४३ पुस्तकों का लोकार्पण भी किया। अपने उद्बोधन में श्री नीतीश कुमार ने कहा कि बिहार ज्ञान की भूमि है। यहाँ लेखकों, पाठकों की भरमार है। ☐

लोकार्पण संपन्न

२२ मई को नई दिल्ली में वयोवृद्ध कवयित्री श्रीमती चंपा वैद के कविता संग्रह 'आवाजें' और उनकी चुनिंदा कविताओं के अंग्रेजी अनुवाद की पुस्तक 'द म्यूजिक ऑफ बोन्स' तथा चर्चित कलाकार श्री मनीष पुष्कले की कृति 'सफेद साखी' का लोकार्पण वरिष्ठ कवि कुँवर नारायण ने, अंग्रेजी अनुवाद का वरिष्ठ चित्रकार व कथाकार श्री रामकुमार ने और कला संबंधी पुस्तक का वरिष्ठ चित्रकार श्री सैयद हैदर रजा ने किया। इस अवसर पर श्री अशोक वाजपेयी ने चंपा वैद की कविताओं का पाठ किया। ☐

'आदि कैलाश यात्रा' का विमोचन

१३ जून को देहरादून में उत्तराखंड के पेयजल विकास एवं संसदीय कार्यमंत्री श्री प्रकाश पंत की पुस्तक 'आदि कैलाश यात्रा' का विमोचन संसद् की लोक लेखा समिति के अध्यक्ष डॉ. मुरली मनोहर जोशी और प्रदेश के मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' ने किया। पूर्व मुख्यमंत्री डॉ. नित्यानंद स्वामी ने भी श्री पंत को पुस्तक विमोचन के लिए बधाई दी। श्री राजीव काला को इस पुस्तक में लगाए गए चित्रों के लिए विशेष रूप से धन्यवाद दिया गया। ☐

दो पुस्तिकाओं का विमोचन

८ जून को देहरादून में उत्तराखंड के मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' ने जैव प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तिका 'सतत विकास की ओर निरंतर अग्रसर' और 'उत्तराखंड : समृद्ध ज्ञान का अक्षुण्ण भंडार' का विमोचन किया। इस अवसर पर डॉ. निशंक ने अपने विचार भी व्यक्त किए। ☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागार्जुन विशेषांक का विमोचन

१३ जून को नई दिल्ली में हिंदी और मैथिली के जाने-माने कवि बाबा नागार्जुन के जन्मशती वर्ष पर वरिष्ठ साहित्यकारों ने उनपर केंद्रित 'नया पथ' विशेषांक का विमोचन किया। इस अवसर पर दिवंगत कवि की रचनाओं पर चर्चा भी हुई। समारोह में सर्वश्री नामवर सिंह, शिवकुमार मिश्र और राजेश जोशी जैसे वरिष्ठ साहित्यकार उपस्थित थे। ☐

श्रीमती निर्मला सिंह सम्मानित

विगत दिनों श्री गांधी पुस्तकालय, शाहजहाँपुर द्वारा बाल साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए श्रीमती निर्मला सिंह को 'प्रभा बाल साहित्य सम्मान' प्रदान किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक चिह्न, अंगवस्त्र, सरस्वती-प्रतिमा एवं इक्कीस सौ रुपए की नकद राशि प्रदान की गई। इस अवसर पर डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' के शोध ग्रंथ 'बाल साहित्य के प्रतिमान' का विमोचन किया गया तथा 'बाल साहित्य का भविष्य और भविष्य का बाल साहित्य' विषय पर संगोष्ठी भी आयोजित की गई। समारोह की अध्यक्षता डॉ. राजेश गुप्त ने की। डॉ. राष्ट्रबंधु मुख्य अतिथि तथा डॉ. विनय मालवीय विशिष्ट अतिथि थे। ☐

'साहित्यश्री' सम्मान समारोह संपन्न

२० मई को दिल्ली के हिंदी भवन में हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा आयोजित 'साहित्यश्री' सम्मान समारोह की मुख्य अतिथि दिल्ली सरकार की मंत्री प्रो. किरण वालिया थीं, दिल्ली की महापौर प्रो. रजनी अब्बी विशिष्ट अतिथि थीं तथा सान्निध्य पूर्व राज्यपाल श्री केदारनाथ साहनी का मिला। अध्यक्षता प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. पी.बी. शर्मा ने की। सम्मेलन के अध्यक्ष एवं पूर्व महापौर श्री महेश चंद शर्मा तथा सम्मानित अतिथियों ने अपने विचार रखे। सम्मेलन में सर्वश्री रमानाथ त्रिपाठी, राज बुद्धिराजा, सत्यप्रकाश 'बजरंग', हरीश नवल, राहुल देव, राजेंद्र प्रसाद मिश्र, मोनिका अरोड़ा, मुकेश गुप्ता, बी.एल. गौड़ और तेजपाल सिंह धामा को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री गजेंद्र सोलंकी, अरुण जैमिनी और सत्यप्रकाश बजरंग ने अपने काव्य पाठ से भाव-विभोर कर दिया। सम्मेलन में सर्वश्री मृदुला सिन्हा, नारायण कुमार, जयंती प्रसाद मिश्र, कृष्ण मित्र, सरिता शर्मा, अरुण बर्मन, सुरेश खंडेलवाल, जयनारायण खंडेलवाल, श्यामसुंदर, केदारनाथ अग्रवाल, निशा निशांत, रवि शर्मा, अनिल जोशी, हबीब अख्तर आदि साहित्यकार, पत्रकार एवं हिंदी-प्रेमी उपस्थित थे। संचालन श्रीमती इंदिरा मोहन ने किया। ☐

अज्ञेय जन्मशती पर राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित

१३ अप्रैल को अज्ञेय जन्मशती के अवसर पर हरियाणा साहित्य अकादमी व कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का उद्घाटन कुलपति ले. जन. डॉ. डी.डी.एस. संधु ने किया। पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह 'शशि' ने 'अज्ञेय की रचनाधर्मिता : विविध आयाम' विषय पर बीज वक्तव्य दिया तथा दूसरे सत्र की अध्यक्षता की। प्रथम सत्र के अध्यक्ष डॉ. शशि भूषण सिंहल तथा डॉ. चमनलाल गुप्ता के अतिरिक्त सर्वश्री मुक्ता, सरिता वशिष्ठ, बाबू राम, वीनू भल्ला, सुचित्रा मलिक आदि ने चर्चा में भाग लिया। इस अवसर पर 'हिंदी के कालजयी कवि' तथा 'एक और अवधूत' कृतियों का लोकार्पण किया गया। ☐

१५०वीं रवींद्र जयंती मनाई गई

१५ मई को मुंशी प्रेमचंद सांस्कृतिक केंद्र, भिलाई एवं 'सेतु' साहित्यिक पत्रिका के संयुक्त तत्त्वावधान में बी.एस.पी.उ.मा. विद्यालय के सभागार में आयोजित गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर की १५०वीं जन्म शतवार्षिकी समारोह के मुख्य अतिथि श्री सतीश जायसवाल थे। अध्यक्षता श्री मधु भट्टाचार्य ने की। इस सांस्कृतिक अनुष्ठान में सर्वश्री रजनीकांत श्रीवास्तव, सियाराम शर्मा, शिप्रा भौमिक, चिन्मय खाँ, एम.आर. दास, सुचित्रा शर्मा, राधेश्याम सिंदूरिया, किसान दीवान, अशोक सिंघई, विनोद मिश्र, रामसिंह करुणेश, सदानंद राय, वासवी राय, अजीत मंडल, दीपा पाल, कोचिता पाल, मणिमय मुखर्जी, पी.के. मुखर्जी एवं डॉ. सेन आदि उपस्थित रहे। संचालन श्री विश्वजीत हरोडे तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री गोविंद पाल ने किया। ☐

वसीम बरेलवी का एकल काव्यपाठ

२८ मई को हिंदी भवन के संस्थापक पं. गोपालप्रसाद व्यास की छठी पुण्यतिथि पर हिंदी भवन, नई दिल्ली के सभागार में 'काव्ययात्रा : कवि के मुख से' कार्यक्रम के अंतर्गत वरिष्ठ रचनाकार श्री वसीम बरेलवी का एकल काव्यपाठ संपन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि प्रो. सादिक थे। हिंदी भवन के न्यासी सर्वश्री रामनिवास लखोटिया, राजेंद्र मोहन, समिति के कोषाध्यक्ष श्री हरीशंकर बर्मन तथा हिंदी भवन के मंत्री डॉ. गोविंद व्यास ने शॉल, प्रतीक चिह्न, सम्मान राशि प्रदान कर श्री वसीम बरेलवी एवं प्रो. सादिक का अभिनंदन किया। ☐

आचार्य निशांतकेतु-अमृत महोत्सव संपन्न

३० अप्रैल को निशांतकेतु-स्वस्ति सत्कार समिति के नेतृत्व में, सुलभ इंटरनेशनल सोशल सर्विस ऑर्गेनाइजेशन एवं बिहार एसोसिएशन के संयुक्त तत्त्वावधान में तथा दिल्ली की दस साहित्यिक संस्थाओं के संयोजन में दिल्ली के राजेंद्र भवन में आयोजित प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य निशांतकेतु के अमृत-महोत्सव के अवसर पर उनके अभिनंदन-ग्रंथ 'सचल तीर्थ वागर्थ' का लोकार्पण प्रसिद्ध लेखिका एवं आकाशवाणी, दिल्ली की उपमहानिदेशक डॉ. अलका पाठक ने किया। ख्याति-प्राप्त लेखक डॉ. बालशौरि रेड्डी ग्रंथ के प्रधान संपादक हैं तथा संपादन प्रेमचंद-विशेषज्ञ डॉ. कमल किशोर गोयनका ने किया है। डॉ. राजशेखर व्यास विशिष्ट अतिथि थे। संचालन प्रसिद्ध कवि पं. सुरेश नीरव ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन डॉ. मधु चतुर्वेदी ने किया। डॉ. नंदलाल मेहता 'वागीश' ने ग्रंथों में उनकी भाषण-कला की विशिष्टता पर लिखा है। ☐

पं. देवीदत्त शुक्ल की पुण्य तिथि मनाई गई

विगत दिनों हिंदी की ऐतिहासिक पत्रिका 'सरस्वती' के यशस्वी संपादक पं. देवीदत्त शुक्ल की ४१वीं पुण्य-तिथि पर सार्वजनिक श्रद्धा-स्मरण सर्वोदय साहित्य परिषद् व कटरा के नागरिकों की देखरेख में संपन्न हुआ। इस अवसर पर पूर्व मंत्री डॉ. नरेंद्र कुमार सिंह गौर, हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रधानमंत्री श्री विभूति मिश्र, डॉ. मुश्ताक अली,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रख्यात भाषाविद् डॉ. पृथ्वीनाथ पांडेय, सुश्री ऋतशील शर्मा ने अपने विचार प्रकट किए। संचालन श्री वेदप्रकाश पांडेय ने किया। श्री गोपाल तिवारी ने धन्यवाद-ज्ञापन किया। □

ऑथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया का ३६वाँ अधिवेशन

२८ मई को महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा ऑथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया के ३६वें अधिवेशन पर दो-दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन नागपुर में संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह 'शशि' ने संगोष्ठी का उद्घाटन किया तथा अनेक लेखकों की पुस्तकों का लोकार्पण भी किया। संचालन डॉ. शिवशंकर अवस्थी ने किया। संगोष्ठी में सर्वश्री सुब्रमण्यम, मणिकांतम, सेतुरमन, गिरीश गांधी, ओमप्रकाश मिश्र, रामप्रकाश सक्सेना, हीरालाल बाछोतिया, सरोजिनी प्रीतम, वीणा दाढ़े, साधना सक्सेना, रामप्रकाश गुप्ता, नरेंद्र परिहार, मैत्रेय तिवारी, विजय जिचकार, सुषमा सिंह, प्रमोद शर्मा, निडर तथा शीला भार्गव ने अपने विचार प्रस्तुत किए। अनेक वरिष्ठ व युवा लेखक तथा नेशनल बुक ट्रस्ट से श्री बीर सिंह भारती भी उपस्थित थे। सायंकालीन सत्र में अनेक कवियों ने काव्यपाठ किया। 'आभास' संस्था की संस्थापक श्रीमती मधु गुप्ता द्वारा आयोजित परिचर्चा-गोष्ठी में डॉ. शशि, डॉ. बाछोतिया तथा श्री रामप्रकाश सक्सेना को शॉल ओढ़ाकर सम्मानित किया गया। □

'केंद्र भी तुम परिधि भी तुम' का लोकार्पण

५ जून को गाजियाबाद में श्री श्रीभगवान दीक्षित के काव्य संग्रह 'केंद्र भी तुम परिधि भी तुम' का लोकार्पण मुख्य अतिथि डॉ. वेदप्रकाश 'बटुक' ने किया। संचालन श्री रामचरन सिंह साथी ने किया। कार्यक्रम में सर्वश्री अमरसिंह, शरदसिंह, मनुदेव, स्मिता शरद, संतोष कुमार, शकुंतला दीक्षित, मनमोहन, मधुलिका शर्मा, प्रियंवदा, निधि दीक्षित मणि तथा प्रभात कुमार ने अपने विचार रखे। अंत में श्री दीक्षित ने उपस्थित साहित्य प्रेमियों का आभार व्यक्त किया। □

चीन में 'भारत दिवस' का आयोजन

विगत दिनों चीन में पीकिंग विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के तत्त्वावधान में भारत दिवस का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन भारतीय दूतावास के काउंसलर श्री अरुण साहू ने किया। आरंभ में श्रीमती उषा चंद्रन ने गणेश वंदना प्रस्तुत की। कुमारी मेघा एवं शुभ्रा द्वारा शारदा-वंदना एवं वसंत ऋतु गीत प्रस्तुत किए गए। डॉ. देवेंद्र शुक्ल ने काव्य पाठ किया। संगोष्ठी का समापन भारतीय सांस्कृतिक केंद्र के प्रशिक्षणार्थियों द्वारा प्रस्तुत संगीत एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम से किया गया। इस ऐतिहासिक समारोह में सर्वश्री राजीव सिन्हा, प्रतीक माथुर, अभिषेक शुक्ल, वांग पांग वे, चियांगचिंग खुए, गअ फु पिंग, थांग लू, कुओ थौंग, चीन के प्रमुख विश्वविद्यालयों के प्राध्यापकों एवं छात्र-छात्राओं, चीन और भारत के विशिष्ट पत्रकारों एवं समाचार एजेंसियों के प्रतिनिधियों तथा विशिष्ट भारतविदों और हिंदी विद्वानों ने भाग लिया। □

डॉ. रमानाथ त्रिपाठी सम्मानित

विगत दिनों दिल्ली हिंदी साहित्य सम्मेलन में डॉ. रमानाथ त्रिपाठी को 'मनीषा साहित्यश्री सम्मान' प्रदान किया गया। भारतीय हिंदी परिषद् ने उन्हें अपने ३९वें अधिवेशन के अवसर पर अगले मास बोधगया में सम्मानित करने का निर्णय लिया है। □

द्विज देवी सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों इंद्रधनुष साहित्य परिषद् द्वारा अररिया के साहित्यकार डॉ. उदित कुमार वर्मा एवं बथनाहा के वरिष्ठ पत्रकार श्री बालेंद्र प्रसाद गुप्ता को 'द्विजदेवी स्मृति साहित्य सम्मान-२०११' प्रदान किया गया। समारोह का उद्घाटन मुख्य अतिथि श्री कर्नल अजित दत्त द्वारा माँ शारदा के पूजन से हुआ। विशिष्ट अतिथि सर्वश्री जगदीश लाल मंडल, नित्यानंद लाल दास, मोती लाल शर्मा तथा कमला प्रसाद बेखबर थे। दोनों साहित्यकारों को मुख्य अतिथि द्वारा शॉल ओढ़ाकर प्रशस्ति-पत्र दिया गया तथा विशिष्ट अतिथियों द्वारा प्रतीक-चिह्न, स्मृति-चिह्न के रूप में धार्मिक एवं साहित्यिक ग्रंथ आदि प्रदान किए गए। □

सुमित्रानंदन पंत की जयंती मनाई गई

विगत दिनों इंद्रधनुष साहित्य परिषद्, फारबिसगंज के तत्त्वावधान एवं कर्नल अजित दत्त की अध्यक्षता में कवि पं. सुमित्रानंदन पंत की जयंती समारोहपूर्वक द्विजदेनी मैदान में मनाई गई। सर्वश्री दत्त, उमा कांत दास, हेमंत यादव 'शशि', परमेश्वर प्र. साह, अनुज प्रभात एवं मोतीलाल शर्मा ने पं. सुमित्रानंदन पंत के साहित्यिक जीवन पर अपने विचार प्रस्तुत किए तथा उनकी रचनाओं पर चर्चा की। संयोजन तथा संचालन श्री विनोद कुमार तिवारी ने किया। □

कहानी एवं व्यंग्य प्रतियोगिता के परिणाम घोषित

१० जून को 'राष्ट्रधर्म' मासिक द्वारा आयोजित श्री राधेश्याम चितलांगिया स्मृति अ.भा. हिंदी कहानी प्रतियोगिता तथा डॉ. सुशीलचंद्र त्रिवेदी द्वारा आयोजित प्रो. राजेंद्र सिंह स्मृति अ.भा. हिंदी व्यंग्य लेख प्रतियोगिता के परिणाम इस प्रकार हैं—कहानी प्रतियोगिता हेतु सर्वश्री निरुपमा राय को प्रथम पुरस्कार सात हजार रुपए, आशा पांडेय को द्वितीय पुरस्कार पाँच हजार तथा रामनारायण मिश्र को तृतीय पुरस्कार तीन हजार रुपए, राजेंद्र सिंह गहलौत, रंजना फतेपुरकर, रमेशचंद्र छबीला को प्रोत्साहन राशि एक हजार पाँच सौ रुपए से पुरस्कृत किया गया तथा व्यंग्य लेख प्रतियोगिता हेतु सर्वश्री अनूपमणि त्रिपाठी को प्रथम पुरस्कार पाँच हजार, ममता मेहता को द्वितीय पुरस्कार तीन हजार तथा उषा अग्रवाल को तृतीय पुरस्कार दो हजार रुपए, भगवान वैद्य 'प्रखर' मधुर कुलश्रेष्ठ बिहारी दुबे को प्रोत्साहन राशि एक हजार पाँच सौ रुपए से पुरस्कृत किया गया। □

प्रो. रघुवंश को मिला 'मूर्तिदेवी पुरस्कार'

१६ मई को विज्ञान भवन में उपराष्ट्रपति महामहिम मोहम्मद हामिद अंसारी द्वारा श्री रघुवंश को उनकी कृति 'पश्चिमी भौतिक संस्कृति का उत्थान और पतन' पर वर्ष २००८ के मूर्तिदेवी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पुरस्कारस्वरूप दो लाख रुपए का चैक, प्रशस्ति-पत्र, सरस्वती की प्रतिमा, शॉल और श्रीफल आदि प्रदान किए गए। अतिथियों का स्वागत श्री रवींद्र कालिया ने किया। श्री टी.एन. चतुर्वेदी ने अपने विचार प्रकट किए। धन्यवाद ज्ञापन श्री आलोक जैन ने किया।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवलेखन पुरस्कार घोषित

७ जून को नई दिल्ली में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा नवलेखन प्रतियोगिता के तहत २०१० के लिए श्री विमलेश त्रिपाठी और श्री राजीव कुमार को विजेता घोषित किया गया। २०११ के लिए श्री गौरव सौलंकी और श्री प्रदीप जिलवाने को पुरस्कृत किया जाएगा। पुरस्कार-स्वरूप विजेता को पच्चीस-पच्चीस हजार रुपए की राशि दी जाएगी। □

रवींद्रनाथ टैगोर की जयंती आयोजित

२९ मई को मिश्र की राजधानी काहिरा में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर के प्रशंसकों ने उनकी १५०वीं जयंती के अवसर पर साहित्य, काव्य, नाट्य, लेखन, शिक्षा तथा संस्कृति में उनके योगदान को याद करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की। इस अवसर पर रवींद्र संगीत का आयोजन भी किया गया तथा टैगोर की 'गीतांजलि' पर बना वृत्तचित्र दिखाया गया। इस समारोह में भारतीय राजदूत श्री आर. स्वामीनाथन, बँगलादेश के राजदूत श्री मिजानुर रहमान, प्रख्यात वास्तुविद् श्री मोहम्मद अबू सैदा तथा वरिष्ठ मिस्री अधिकारियों एवं कलाकारों ने भाग लिया। □

कलामित्र कर्मशाला का आयोजन

२६ से २९ मई तक गुवाहाटी संस्कार भारती पूर्वोत्तर द्वारा चार दिवसीय कलामित्र कर्मशाला में शास्त्रीय गायन, नृत्य, नाटक तथा चित्रकला का आयोजन किया गया। प्रतियोगिता में १४३ प्रतिभागियों का चयन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री सोनल मानसिंह, जीतेंद्र महाराज, कु. नलिनी, मुकेश खन्ना, स्मृति ईरानी, शारोदी सैकिया, प्रांजल सैकिया, अरूप चक्रवर्ती, गुनाकर देव गोस्वामी तपोजित, देवेंद्र सतपति, शांतनु विस्वास, प्रज्ञान बरुआ, एस. प्रणाम सिंह, अदैत गणनायक, सुनील विश्वकर्मा आदि ने प्रतिभागियों को प्रशिक्षण दिया। गुवाहाटी कर्मशाला के निदेशक थे कोलकाता के वरिष्ठ रंगकर्मी श्री बिमल लाठ। □

'समग्र अटलजी' का शुभारंभ

८ जून को नई दिल्ली के भव्य सिरीफोर्ट सभागार में मुख्य अतिथि एवं पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने 'समग्र अटलजी' का शुभारंभ किया। अध्यक्षता पूर्व उप प्रधानमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी ने की, विशिष्ट अतिथि श्री नितिन गडकरी तथा श्री शरद यादव थे। रामभाऊ म्हालगी प्रबोधिनी द्वारा संचालित इस प्रकल्प के माध्यम से पूर्व प्रधानमंत्री तथा स्वतंत्र भारत के महान् जननेता मा. श्री अटल बिहारी वाजपेयी के लेखन, चिंतन एवं भाषणों—इस संपूर्ण सामग्री—के डिजिटल डॉकुमेंटेशन का कार्य होगा। प्रकल्प के निदेशक वरिष्ठ पत्रकार श्री उमेश उपाध्याय हैं। □

कोशकार अरविंद कुमार को 'शलाका सम्मान'

१६ जून को नई दिल्ली में हिंदी अकादमी ने वर्ष २०११-१२ के कुल आठ सम्मानों की घोषणा कर दी। इस वर्ष हिंदी 'समानांतर कोश' तैयार करने वाले श्री अरविंद कुमार को संस्थान का उच्चतम पुरस्कार 'शलाका सम्मान' से विभूषित किया जाएगा। इस वर्ष प्रो. गिरधर राठी को काव्य सम्मान, प्रो. देवेंद्र राज अंकुर को नाटक सम्मान, डॉ. आलोक पुराणिक को हास्य-काव्य सम्मान, रमणिका गुप्ता को विशिष्ट योगदान सम्मान, कृष्ण शलभ को बाल साहित्य सम्मान और बृजमोहन बख्शी को ज्ञान प्रौद्योगिकी सम्मान प्रदान किया जाएगा। शलाका सम्मान के तहत दो लाख तथा अन्य सम्मानों के लिए ५०-५० हजार रुपए, ताम्रपत्र और शॉल देकर सम्मानित किया जाएगा। □

साहित्यिक क्षति

इतिहासकार गोविंद चंद्र पांडे नहीं रहे

२२ मई को प्रसिद्ध दार्शनिक और इतिहासकार श्री गोविंद चंद्र का नई दिल्ली में निधन हो गया। वे ८७ वर्ष के थे। प्रो. पांडे मूलतः इतिहास के विद्वान् थे। इतिहास, दर्शन और साहित्य में गहरा अध्ययन होने के साथ वे संस्कृत के विद्वान् और कई भाषाओं के जानकार थे। साहित्य अकादेमी के महत्तर सदस्य श्री गोविंद चंद्र पांडे इलाहाबाद और राजस्थान विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। 'बौद्ध धर्म का इतिहास', 'भारती परंपरा के मूल स्वर' और 'मूल मीमांसा' उनके महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं। उन्हें सरस्वती सम्मान और मूर्तिदेवी पुरस्कार प्रदान किए गए। □

साहित्यकार चंद्रबली सिंह का निधन

२३ मई को जनवादी लेखक संघ के संस्थापक और पूर्व अध्यक्ष श्री चंद्रबली सिंह का वाराणसी में निधन हो गया। वे ८७ वर्ष के थे। उनका जन्म २० अप्रैल, १९२४ को गाजीपुर जिले के रानीपुर गाँव (उनकी ननिहाल) में हुआ। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी.ए. और अंग्रेजी में एम.ए. किया। उनके द्वारा लिखी गई दो पुस्तकें 'लोक दृष्टि और हिंदी साहित्य' तथा 'आलोचना का जनपक्ष' बहुत सराही गईं। वह 'हंस', 'पारिजात', 'नई चेतना', 'नया पथ', 'स्वाधीनता' और 'कलम' पत्रिकाओं से जुड़े रहे। □

कलाकार देवी प्रसाद नहीं रहे

२ जून को सुपरिचित कलाकार और शिक्षाविद् श्री देवी प्रसाद का नई दिल्ली में निधन हो गया। वे ९० वर्ष के थे। वे १९२१ में देहरादून में उनका जन्म हुआ। १९३८ में शांति निकेतन से कला स्नातक की उपाधि ली। १९४२ में भारत छोड़ो आंदोलन में हिस्सा लिया। उन्हें २००७ में 'ललित कला रत्न सम्मान' और २००८ में विश्व भारती से 'देशिकोत्तम' (डी.लिट.) की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया। उनकी २० पुस्तकें और १०० से भी अधिक लेख प्रकाशित हैं। □

प्रसिद्ध लेखिका हर्षनंदिनी भाटिया नहीं रहीं

८ जून को सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती हर्षनंदिनी भाटिया का अलीगढ़ में निधन हो गया। वे ७९ वर्ष की थीं। उनका जन्म २८ जून, १९३२ को हुआ। लोक-साहित्य पर उनकी लगभग नौ पुस्तकें प्रकाशित हैं। साहित्य में उल्लेखनीय योगदान के लिए उन्हें 'सरस्वती सम्मान', 'साहित्य रत्न', 'ब्रज विभूति', 'विद्याश्री', 'साहित्य मार्तंड' सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। □

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यात्रा-दर-यात्रा

● ब्रजेंद्र त्रिपाठी

राहुल सांकृत्यायन की एक अद्‌भुत कृति है—'घुमक्कड़ शास्त्र'। अद्‌भुत इस मायने में कि यह पुस्तक घुमक्कड़ी को एक शास्त्र के रूप में प्रतिपादित करती है। इस पुस्तक में राहुलजी ने इस्माइल मेरठी का एक शेर उद्‌धृत किया है—

सैर कर दुनिया की गाफिल जिंदगानी फिर कहाँ,
जिंदगानी गर रही तो ये जवानी फिर कहाँ?

राहुलजी ने इस पुस्तक में नवयुवकों को सलाह दी है कि उन्हें युवावस्था के शुरू होते-होते घुमक्कड़ी के लिए निकल पड़ना चाहिए। घर से अनुमति न मिले तो भाग जाने से भी गुरेज नहीं करना चाहिए। राहुलजी ने इसे करके दिखाया; न केवल भारत बल्कि विदेशों की यात्राएँ उस दौर में की, जब यात्रा करना आज की तरह सुखद न था। चार-चार बार तो उन्होंने तिब्बत की यात्राएँ कीं, वह भी जान पर खेलकर। न जाने कितने ग्रंथों का उद्धार उन्होंने इन यात्राओं में किया। वे ग्रंथ जो संस्कृत में लुप्त हो चुके थे, लेकिन तिब्बती भाषा में अनूदित होकर उपलब्ध थे।

राहुलजी से पहले नैन सिंह रावत ने अपने पैरों से पूरे हिमालय को नापा था और उन्होंने पूरे हिमालय का लगभग पहली बार भौगोलिक संरक्षण किया था। शेखर पाठक ने उन पर केंद्रित एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी है—'एशिया की पीठ पर', जिसे हर यात्रा प्रेमी को पढ़ना चाहिए।

पिछले दो दशकों से मैं भी देश के विविध भागों की यात्राएँ करता रहा हूँ और इन यात्राओं के क्रम में उन तमाम क्षेत्रों की संस्कृति, उनके जीवन, उनके रहन-सहन, आचार-विचार को समझने का मौका मिला है। इन यात्राओं के क्रम में मुझे निरंतर लगता रहा है कि देश को अगर सही अर्थों में जानना-समझना है तो पूरे देश को प्रत्यक्ष रूप से जानना होगा। यह यूँ ही नहीं था कि महात्मा गांधी ने अपने सहयोग आंदोलन को शुरू करने से पहले पूरे देश की यात्रा की, अलग-अलग क्षेत्रों के लोगों से मुलाकात की, उनकी समस्याओं को समझा, उनकी जरूरतों को समझा और अपने आंदोलन के लिए जमीन तैयार की। बाद के दिनों में चंद्रशेखर ने भी देश के विभिन्न स्थलों के लिए पद-यात्राएँ कीं। आज की मुश्किल यह है कि हमारे नीति-नियंता वातानुकूलित कमरों में बैठकर देश की विकास की योजनाएँ तैयार करते हैं। इसलिए वे योजनाएँ फलीभूत नहीं होतीं। इन योजनाकारों को खेत-खलिहान तक आना होगा, तभी योजनाएँ यथार्थ के धरातल पर खड़ी हो सकेंगी।

देखिए, बात कहाँ से शुरू की थी, कहाँ पहुँच गई। एक दोहा याद आ रहा है—

ज्यों केरे के पात की पात-पात में पात।
त्यों संतन की बात की बात बात में बात॥

हालाँकि जरूरी नहीं है कि बात में निकालने की कला पर केवल संतों का ही 'कॉपीराइट' हो, हमारे देश में यह कला तो हर खासो-आम में देखने को मिलती है। हमारा देश चल ही रहा है बातों की कमाई से।

हाँ तो, बात शुरू की थी यात्राओं से। हमारे एक मित्र हैं रमेश ऋषिकल्प! अतिशय यात्राप्रेमी। उन्हीं के संसर्ग में यात्रा का रोग मुझे भी लगा। हम दोनों ने हिमालय और उत्तराखंड के लगभग सभी प्रमुख पर्यटन स्थलों की यात्राएँ कीं। ये यात्राएँ हफ्ते भर से महीने-सवा महीने तक की होती थीं। इन यात्राओं में हमारी कोशिश होती थी कि हम उन जगहों की यात्रा करें, जो भीड़-भाड़ से हटकर शांत-एकांत हों और वहाँ पर्यटको की भीड़ न पहुँचती हो। हम एक-एक जगह पर दो-दो, चार-चार दिन रुककर वहाँ के लोगों से मिलते, संभव होता तो किसी स्थानीय व्यक्ति के घर रुकते और इस क्रम में वहाँ के जनजीवन को खुली आँखों से देखने का मौका मिलता।

ऐसी ही एक यात्रा के क्रम में जब हम हिमालय प्रदेश के किन्नौर जिले के चांगो नामक स्थान में थे, हमें एक यात्री दल मिला। उसमें से एक सूरत का युवा व्यापारी था, एक सज्जन मुंबई में किसी नौकरी में थे और एक व्यक्ति अहमदाबाद से। उनके साथ तंबू, कनात, भोजन बनाने की सारी व्यवस्था थी। रसोइया और दो-तीन सहायक थे। उनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात हुई तो उन्होंने बताया कि उनका यात्रा के लिए एक महीने का समय पहले से निर्धारित होता है और वे हर वर्ष एक महीने के लिए काम से छुट्टी लेकर यात्रा पर निकल पड़ते हैं।

इन यात्राओं के क्रम में हमने यह पाया कि अपने देश में सबसे अधिक यात्राप्रिय बंगाली लोग होते हैं। उनमें मध्यवर्गीय और निम्न-मध्यवर्गीय लोग भी साल में जरूर कुछ दिनों के लिए 'ग्रुप' बनाकर यात्रा पर निकल पड़ते हैं। हमें हिमालय के जनजातीय इलाके किन्नौर में या तो बंगाली पर्यटक मिले या विदेशी। प्राकृतिक सौंदर्य के लिहाज से किन्नौर अद्‌भुत है। कुछ विदेशी पर्यटकों से बात हुई तो उन्होंने कहा कि इतना सुंदर तो स्विट्‌जरलैंड भी नहीं है। यात्रा से लौटने के बाद न जाने कितने दिनों तक किन्नौर मन में छाया रहा। तब एक कविता लिखी 'किन्नौर' शीर्षक से। पूरी कविता इस प्रकार है—

सपनों में आवाज देता है किन्नौर
किन्नौर—हिमाचल का जनजातीय प्रदेश।
वैसे तो किन्नौर
खुद एक जीता-जागता सपना है
मुक्त हस्त प्रकृति ने
इस पर लुटाया है अपना ऐश्वर्य।
सुबह की धूप में चमकती
रजत पर्वत शृंखलाएँ
पहाड़ों की छाती फोड़ बहती जलधाराएँ
ऊपर आसमान छूते शिखर
नीचे अतल गहराइयाँ।

देखो यहाँ से
एक क्षीण रेखा सी जान पड़ती है
वह पहाड़ी नदी
आगे जाकर बदलती है अपना रूप
और फिर खुलने लगती है उसकी आवाज
उसका नाम तो विस्मृत हो गया है
लेकिन कानों में अब भी गूँजता है
उसका हर-हर नाद।

किन्नौर अब भी पुकारता है
बढ़ाता है अपने फलदार वृक्षोंवाले हाथ
निहारता है अपने हिमशीतल नेत्रों से
आमंत्रण भेजता है नारियों की चपल मुसकान में
कहता है—
कहाँ फँसे पड़े हो बंधु!
जीवन की किस आपाधापी में उलझे हुए हो?
किसलिए जोड़ रहे हो यह माया?
कौन सा सुख पाओगे इनसे भला तुम?
आओ, जोह रहा हूँ मैं तुम्हारी बाट!

मेरे प्राणों में स्पंदित होने लगता है
किन्नौर
आमंत्रित करता है मुझे साङ्ला गाँव
पुकारती है मुझे बास्पा नदी
याद आती है गाँव की वह अपरिचित युवती
जो यूँ ही वन-वीथियों में मिल गई थी
कितनी आत्मीयता से करती रही थी बातें
और सहज भाव से आमंत्रित किया था
अपने घर, चाय के लिए
याद आती है उसकी छोटी सी बिटिया
गोल-मटोल आँखोंवाली
सेब की तरह लाल गालों वाली।

किन्नौर!
भूला नहीं हूँ मैं तुम्हें
मैं फिर आऊँगा।
बार-बार आऊँगा
कोई भी
अनसुनी कैसे कर सकता है
तुम्हारी पुकार?

किन्नौर और न जाने ऐसे कितने स्थल स्मृति में बसे हुए हैं। ऐ[illegible] स्थलों का अपना एक व्यक्तित्व है। केवल मनुष्य का ही व्यक्तित्व न[illegible] होता, बल्कि छोटे-बड़े नगरों एवं गाँवों का भी अपना एक मूर्त व्यक्तित्[illegible] होता है—जीवंत। हजारों साल में निर्मित अपनी एक संस्कृति, जो उन[illegible] पहचान होती है। ऐसी ही बहुरंगी विविध संस्कृति का संपुंजन है अप[illegible] यह देश। यह विविधता और जीवंतता ही हमारे देश की पहचान है। इ[illegible] विविधता के माध्यम से ही देश अपनी एकता की पहचान करता रहा है। इस विविधता के मध्य एक अंत:सूत्र है, जो सबको बाँधे हुए है। जि[illegible] दिन हमारी यह समृद्धि विविधता नष्ट हो जाएगी, एक इकहरापन शेष र[illegible] जाएगा। इसलिए इस विविधता को जानने-पहचानने और संरक्षित क[illegible] की जरूरत है। और हम इसे जान-समझ सकते हैं—यात्राओं के माध्[illegible] से ही। यह जीवन भी तो एक निरंतर यात्रा ही है—

हरेक मकाम से आगे मकाम है तेरा
हयात ज़ौक़े-सफ़र के सिवाय कुछ भी नहीं।

१०१, अर्श कॉम्प्ले[illegible]
सेक्टर अल्फा १, ग्रेटर नोएडा-२०१[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृजन स्मरण

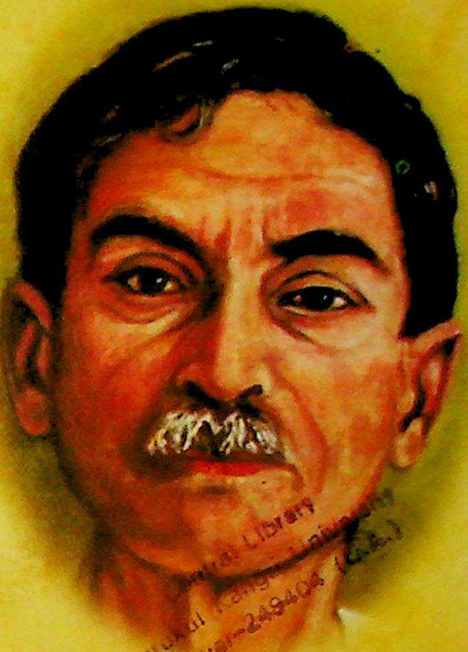

साहित्य मस्तिष्क की वस्तु नहीं
हृदय की वस्तु है।
जहाँ ज्ञान और उपदेश असफल होता है,
वहाँ साहित्य बाजी ले जाता है

मुंशी प्रेमचंद

(1880 - 1936)

दिल्ली सरकार
दिल्ली टीम - स्वप्न करे साकार

सूचना एवं प्रचार निदेशालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेषण की तिथि—पूर्व माह की २५-२६ • पंजीयन संख्या ६२११२
पी डी आर संख्या डी एल (सी)-०१/१२७३/०९-११
यू.(सी) २२२/२००९-११
पी.एस.ओ. नई दिल्ली अग्रिम शुल्क के बिना प्रेषण की अनुमति

मदद के लिए
बढ़ते हाथ

स्पर्श
अभियान

प्रदेश के सभी नि:शक्तजनों की पहचान करने और
उनका डाटाबेस बनाने का अभियान।

उनकी पहचान के बाद, उन्हें मिलने वाली
सभी सुविधाओं का लाभ मिलना आसान होगा।

पेंशन, सहायक अनुदान, इलाज, छात्रवृत्ति, प्रशिक्षण
और रोज़गार की सभी योजनाओं तक अब उनकी पहुंच होगी।

कमजोर नहीं हैं वे, बस थोड़ा सा सहारा,
उनकी क्षमताओं को सच करता है।

आकल्पन : म.प्र. माध्यम/2011

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

मध्यप्रदेश सरकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य अमृत

मासिक

साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक

वर्ष-१७ अंक-१ ❖ पृष्ठ १५० | श्रावण-भाद्रपद, संवत्-२०६८ | अगस्त २०११

व्यंग्य विशेषांक

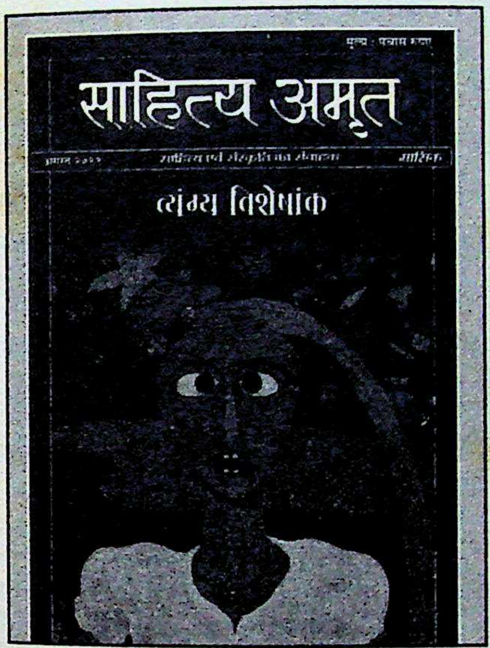

इस अंक में

संपादकीय

स्वाधीनता दिवस और देश के सम्मुख खड़े संकट, भ्रष्टाचार'' ५

प्रतिस्मृति

राजभवन की सिगरेटदानी / *श्रीनारायण चतुर्वेदी* १०

व्यंग्य

भ्रष्टाचार पावन-पवित्र सांस्कृतिक विरासत / *अशोक चक्रधर* १३

सुरक्षा की चिंता / *नरेंद्र कोहली* २०

आम आदमी बनाम अनाम आदमी / *महीप सिंह* २२

दूसरे पैर का जूता : तीसरी परंपरा का खौफ / *सूर्यबाला* २४

लो फिर'' / *प्रेम जनमेजय* २६

सम्मान फिक्सिंग एसोसिएशन / *गिरीश पंकज* २८

ये मिलनेवाले लोग / *रमाशंकर श्रीवास्तव* ३५

पिचकारी का सौंदर्य बोध / *अजय अनुरागी* ४४

दाल-भाजी लोन स्कीम / *अरविंद तिवारी* ४६

मनुष्य का सामाजिक प्राणी होना / *राजेंद्र त्यागी* ५३

Central Library Gurukul Kangri University Haridwar-249404 (U.A.)

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पूर्व संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

परामर्शदाता (मानद)

ब्रजेंद्र त्रिपाठी

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,

नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

इस अंक का मूल्य—₹ ५०

सामान्य अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ २००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ २५०

विदेश में

एक अंक—तीन यू.एस. डॉलर (US$3)

वार्षिक—पैंतीस यू.एस. डॉलर (US$35)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य अमृत

मासिक

व्यंग्य विशेषांक

अपार कनफ्यूजन है / *आलोक पुराणिक* ५५

साहित्यकार महाकवि व्याकुलजी / *पूरन सरमा* ५६

चलना खुजली अंगुलियों में / *देवव्रत जोशी* ५८

सरकार सदा सुखी / *यज्ञ शर्मा* ६०

वे वंदनीय हैं / *सूर्यकुमार पांडेय* ६६

ज्ञानी हैं सच्चे अज्ञानी / *श्रवण कुमार उर्मलिया* ६७

ओहदे की खातिर / *हरदर्शन सहगल* ७०

मित्रदुख / *हरिशंकर राढ़ी* ७२

पी.एम. हाउस से बुलावा / *रवि शर्मा 'मधुप'* ७४

चिलम-भराई / *ओमप्रकाश सारस्वत* ७६

नींद क्यों रात भर नहीं आती / *ललन चतुर्वेदी* ७८

इति ग्रन्थालय पुराणम् / *ज्योति व्यास* ८०

चोर का जूता / *एम.डी. मिश्रा 'आनंद'* ८३

संशोधन आयोग / *प्रवीण कुमार थपलियाल* ८६

मानव और मच्छर / *अखिलेश निगम 'अखिल'* ८८

चुप रहो, देश नाच-गा रहा है / *प्रेमचंद्र स्वर्णकार* ९०

भोंपू भगत / *प्रशांत अग्रवाल* ९६

एक साहित्यिक गोष्ठी का सफल आयोजन / *राजेश्वर उनियाल* ९९

कहाँ घुसे चले आ रहे हो ? / *उपेंद्र कुमार* १०२

साहित्य के औरंगजेब की आखिरी रात / *सुभाष काबरा* १०४

धत्, अपने को फ्लर्ट होना भी नहीं आता / *अतुल कनक* १०६

एक प्लांट जिसका नाम मनीप्लांट / *अनूप मणि त्रिपाठी* १०७

कुएँ का मेढक / *संतोष खरे* ११०

अतिथि / *ओमप्रकाश चौधरी* ११२

पानी रे पानी / *चंद्रमोहन दिनेश* ११४

तुम लौट आओ, हे श्रोता! / *भगवान वैद्य 'प्रखर'* ११६

पुलिस नाके पर भगवान् / *अशोक गौतम* ११८

वाह री दाल! / *ममता मेहता* १२०

एकाकीजी, समालोचक बन जाओ / *विनोद शंकर गुप्त* १२३

नींद क्यों रात भर नहीं आती कवि को ? / *राम स्वरूप दीक्षित* १२४

वो सात रुपए / *अजय चतुर्वेदी 'कक्का'* १२६

चंद्रचूड़ / *कमला प्र. 'बेखबर'* १३०

जब हमारे घर में इलेक्ट्रॉनिक मीटर लगा / *सीमा शर्मा* १३२

हिंदी के हाजी / *जवाहर चौधरी* १३४

पाती अन्ना के नाम / *आलोकेश्वर चबडाल* १३६

आलेख

हिंदी व्यंग्य के पदचिह्न / प्रेम जनमेजय १४

शरद जोशी का व्यंग्य-कर्म / कमलकिशोर गोयनका ३८

क्रांति से अध्यात्म तक : अरविंद घोष / आशारानी व्होरा १२८

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

जामुन का पेड़ / *कृश्न चंदर* ३१

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

गिरगिट / *एनटोन चेखव* ५१

राम झरोखे बैठ के

ईश्वर मेढकेश्वर और बिल्डर / गोपाल चतुर्वेदी ६१

उपन्यास-अंश

सीढ़ियाँ / शैलेश मटियानी ९२

अंततः

साहित्य और वैश्वीकरण / ब्रजेंद्र त्रिपाठी १४५

कविताएँ

रामदरश मिश्र १२

सादिक १०८

वर्ग पहेली १३७

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ १३८

यू.के. क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन १३९

साहित्यिक गतिविधियाँ १४१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाधीनता दिवस और देश के सम्मुख खड़े संकट, भ्रष्टाचार और महँगाई की सुरसा, मुंबई बम विस्फोटों से भारत की अस्मिता पर फिर चोट

हमारा देश दुर्भाग्य से अनेक समस्याओं से त्रस्त है। सब समस्याएँ नई हैं या यकायक सामने आई हों, ऐसा भी नहीं। पर उनकी अनदेखी करने या उनके निदान के लिए सतत कोशिश न करने के कारण वे बढ़ती जाती हैं। कुछ समस्याएँ पड़ोसी राज्यों से संबंध रखती हैं। वहाँ के हालात क्या हैं, उस पर निर्भर करता है; किंतु उसके विषय में हमारी मूलभूत दीर्घकालीन नीति के विषय में विचार होना चाहिए। क्या-क्या और किस प्रकार की परिस्थितियाँ पैदा हो सकती हैं, उनका एक काल्पनिक चित्र होना चाहिए। उसी के अनुसार हमारी प्रतिक्रिया-स्वरूप क्या-क्या और कैसे विकल्प हो सकते हैं, उसका अनुमान भी आवश्यक है। प्रत्येक समस्या विचार-मंथन का एक विषय है। हम कुछ समस्याओं का संसद् में जिक्र करना चाहते हैं, जिनके कारण देश में एक अनस्थिरता, नैराश्य, अनिश्चतता और मानसिक आक्रोश का वातावरण बनता जाता है। इससे देश आहत दिखाई देता है और असहाय भी। लोकतंत्रात्मक देश के लिए यह कोई शुभ लक्षण नहीं है। अगस्त मास हमारे लिए ९ अगस्त, १९४२ के गांधीजी के 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' आंदोलन और पाँच वर्ष बाद १५ अगस्त, १९४७ को भारतीयों के हाथ सत्ता-स्थानांतरण दोनों के लिए स्मरण किया जाता है उत्साह के साथ। १५ अगस्त का दिन तो स्वतंत्रता दिवस के रूप में आयोजित होता है। केंद्र दिल्ली और राज्यों के कार्यक्रमों से देश परिचित है। केंद्र में प्रधानमंत्री पहले की तरह लाल किले की प्राचीर से उद्बोधन करेंगे। देश को उपलब्धियों से अवगत करवाएँगे, कुछ नए आश्वासन देंगे और शाम को राष्ट्रपति भवन में निमंत्रित पार्टी प्रक्रिया आयोजित होगी। कुल मिलाकर पूरा वातावरण १५ को रस्मी तौर पर मनाए जाते मालूम होते हैं। आयोजनों में जीवंतता और असली स्वाभाविक आह्लाद नजर नहीं आता है। एक दिन और पक्की छुट्टी के रूप में देखते हैं। शायद कारण अंतर्मन का एक अव्यक्त अपराधबोध है कि ९ अगस्त और १५ अगस्त की अपेक्षाएँ, आश्वासन और आशाओं की संभावित पूर्ति तो अभी मीलों दूर हैं। यह जनसाधारण में उदासीनता के रूप में प्रकट होने लगता है।

सुरसा के मुँह की तरह बढ़ती हुई कीमतें या मुद्रास्फीति लोगों की कमर तोड़ रही है। यहाँ तक कि गाँव की एक बालिका किसानों की समस्या को पूछते हुए राहुल गांधी से पूछती है कि महँगाई का अंत कब, कैसे होगा और उन्हें निःशब्द कर देती है। पिछले दो सालों के वित्तमंत्रियों चिदंबरम और प्रणव मुखर्जी, योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोंटेक सिंह अहलूवालिया या प्रधानमंत्री के आर्थिक सलाहकार समिति के अध्यक्ष रंगराजन के बयानों को देखें तो पता चलता है कि उनके आश्वासन बदलते रहे हैं और खोखले नजर आते हैं। कुछ समय पहले भारत सरकार ने राज्य सरकारों से मंत्रियों और उपाधिकारियों से मंत्रणा कर बढ़ते मूल्यों पर काबू करने के लिए एक बहुप्रचारित रणनीति बनाई थी और उसमें निगरानी रखने को बड़ा महत्त्व दिया गया था। वह असफल ही रही। इस स्तंभ में उसका जिक्र आशा के साथ किया गया था, पर आज उस रणनीति की कुछ चर्चा ही सरकार की ओर से नहीं है। बढ़ती कीमतों के साथ विदेशी निवेश, जिस पर हम गर्व करते थे, वह कम हो गया है और औद्योगिक उत्पादन में कमी आई है। वित्त मंत्री ने दोनों विषयों के बारे में गंभीर चिंता जताई है। बेरोजगारी की समस्या वैसे ही विकट थी। उसके और बढ़ने से इनकार नहीं किया जा सकता है। उधर सरकारी गरीबी रेखा की धज्जियाँ डॉ. सेन गुप्ता आयोग ने पहले ही कर दी थी। महिलाओं व बच्चों के कुपोषण व उनकी अकाल मृत्यु के आँकड़े को हम प्रतिदिन समाचार-पत्रों में देखते हैं। इन मामलों में जिम्मेदारी राज्य सरकारों और केंद्र दोनों की है। प्रश्न है कि क्यों नहीं समुचित सामंजस्य समस्या के समाधान के लिए बन पाता है? जो देश अपने भूखे बच्चों को दो समय रोटी नहीं दे सकता, उसका 'सुपर-पावर' बनने का क्या तात्पर्य? शायद वही ऊपर से नीचे विकास आएगा, वही पुरानी कहानी। नव-उदारीकरण के युग में पुरातन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर केलिश की दुहाई बहुजन विकास ऊपर से छन-छनकर आएगा। पर वह सतयुग कब आएगा? खाने के बाद शिक्षा की आवश्यकता। ध्यान केवल बड़े और आधुनिकतम विश्वविद्यालयों पर या तथाकथित पब्लिक इंटरनेशनल स्कूलों में। लेकिन पुरानी यूनिवर्सिटियों और कॉलेजों को जहाँ गाँवों से और कम आयवाले वर्गों के बच्चे आते हैं, उनको सुधारने की पक्की योजनाएँ और सहायता क्यों नहीं? उनको सरकारी सहायता में वरीयता क्यों नहीं? उत्तमता और वैश्वीकरण के नाम पर सुधार की ओर पूरा ध्यान गाँवों और कस्बों में शिक्षा की ओर क्यों नहीं?

नई-नई घोषणाएँ हो रही हैं। संपूर्ण शिक्षा नीति के बारे में स्पष्टता नहीं है। डॉ. मनमोहन सिंह के कार्यकाल में सैम पित्रोदा और प्रो. यशपाल की कमेटियों ने सुझाव दिए। आगे समवेत क्या कार्यवाही हुई है, उसका कुछ लेखा-जोखा है? जो रिपोर्टें आती हैं, वे तो दूसरी ही तसवीर प्रस्तुत करती हैं। यहाँ तक कि प्रो. यशपाल एक शिक्षा आंदोलन की बात कर रहे हैं। यही दशा मेडिकल शिक्षा और चिकित्सा संस्थाओं एवं अस्पतालों में है। मेडिकल कौंसिल के एक पूर्व अध्यक्ष जेल की हवा खा चुके हैं। मुकदमा चल रहा है। सरकारी अस्पतालों में न दवा, न डॉक्टर, न मरीज के लिए कोई व्यवस्था। अस्पतालों में लापरवाही और अनुशासनहीनता के दृश्य रोज दिखाई देते हैं। निजी अस्पताल साधारण मध्यम वर्ग और गरीबों की हैसियत के बाहर। उच्च अदालतों ने कई बार टिप्पणियाँ की हैं। अंग्रेजी की एक साप्ताहिक पत्रिका ने हाल में चार निजी मेडिकल कॉलेजों का जो कच्चा चिट्ठा खोजा है, उससे ऐसी संस्थाओं के मेडिकल शिक्षा के स्तर पर प्रश्नचिह्न लगते हैं; किंतु कोई कार्यवाही नहीं होती। अतएव आज न कोई राहत और न भविष्य के लिए कोई आशा।

इन सब समस्याओं के पीछे भ्रष्टाचार और वे जवाबदेही का भूत है, जो स्वयं में भी सबसे बड़ी समस्या है। इस समस्या के बारे में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। जिन घोटालों में राजनेता और मंत्री फँसे हुए हैं, उनमें कुछ बढ़ोतरी ही हो रही है। अन्य मंत्रियों के खिलाफ भी अभियोग लगाए जा रहे हैं। मुरली देवड़ा ने इस्तीफे की पेशकश की है, क्योंकि सी.ए.जी. की रिपोर्ट ने, जब वे पेट्रोलियम मंत्री थे, कुछ परेशानी पैदा कर दी है। २जी के मामले में चिदंबरम पर भी छींटाकशी हो रही है। इसरो और एसट्रिक्स के अनुबंध का संभावित घोटाला मीडिया द्वारा सामने आया। उसका सीधा संबंध पी.एम.ओ. से है। सौभाग्य से समय रहते अनुबंध सरकार ने निरस्त कर दिया। मामला ठंडा पड़ गया। प्रधानमंत्री ने योजना विभाग के एक सदस्य को जाँच के लिए नियुक्त किया था कि वह देखें कि इस एकपक्षीय अनुबंध के लिए कौन अधिकारी जिम्मेदार है? आगे कार्यवाही की जानकारी सरकार के पास ही है। एसट्रिक्स कंपनी ने निरस्त होने के समय अदालत जाने की धमकी दी थी। पर अब एक एसट्रिक्स कंपनी इंटरनेशनल कौंसिल ऑफ आरवीट्रेशन के पास चली गई है। मुकदमे की सुनवाई शुरू होगी। अतएव यह मामला फिर गरमा सकता है। लोकपाल और काले धन का प्रश्न तो अलग से उठेगा ही। काले धन को वापस लाने की कार्यवाही पर सर्वोच्च न्यायालय ने दो पूर्व जजों की समित उच्च अधिकारियों की समिति निगरानी के लिए नियुक्त है। इस सबका संबंध उच्च स्तर के भ्रष्टाचार से है। उसका दूसरा पक्ष है साधारण नागरिक का, जिसका सामना नितदिन सरकारी कर्मचारियों से होता है और जिनके भ्रष्टाचार से जनसाधारण त्रस्त है। उस पर पुनः ध्यान देने की आवश्यकता हो गई है। उच्च स्तर के भ्रष्टाचार से जनता में सत्ता के प्रति अविश्वास का संकट पैदा हुआ है, नीचे दैनिक भ्रष्टाचार से पीड़ित जनता भ्रष्टाचार-विरोध के हर तरह आंदोलन में सहयोगी सहज में बन जाती है।

हरिद्वार में गंगा में होते खनन के विरोध में स्वामी निगमानंद के दो मास के समय के अनशन के उपरांत मृत्यु भ्रष्ट व्यवस्था को ही उजागर करती है। उसकी जाँच अलग हो रही है। पर खनन माइनिंग हो रहा है, इस बात से कोई इनकार नहीं करता है। केंद्र और राज्य सरकार दोनों ही इस मामले में दोषी हैं। केंद्र का कहना है कि राज्य सरकार ने मंत्रालय के इस पत्र का स्मरण-पत्र भेजने पर भी उत्तर नहीं दिया। राज्य सरकार का कहना है कि माइनिंग की इजाजत पहले की सरकार ने दी थी। पर जब गंगा के प्रदूषण का सवाल है, पहले की सरकार ने गलती की तो अब की सरकार ने आवश्यक कदम क्यों नहीं उठाए? कई पत्रिकाओं में राजनेताओं और मंत्रियों के नाम दिए हैं, जिनका समर्थन और शह इस मामले में है। फिर वही साठ-गाँठ का, असामाजिक तत्वों और राजनीति का संकट है। सभी राजनीतिक दल इसके लिए दोषी हैं। गंगा प्रदूषण के संबंध में इस संबंध में अकसर लिखते रहे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर एक अथॉरिटी की स्थापना हो चुकी है। वह चुपचाप क्यों बैठी हुई है? गंगा और जमुना को प्रदूषण से मुक्त कराने में काफी प्रचार करवाकर और वाहवाही देश के संत लूटते रहे हैं। उनके मुँह पर भी ताला लगा रहा। अथॉरिटी के अध्यक्ष प्रधानमंत्री हैं। आशा है कि इस मामले का कुछ खुलासा करेंगे। विडंबना यह कि जब स्वामी निगमानंद की मृत्यु हुई, उसी के आसपास समाचार आया कि विश्व बैंक से गंगा प्रदूषण को रोकने के लिए करोड़ों रुपयों की सहायता का अनुबंध हुआ है। अतएव जनता को सरकार में प्रभावी कदम उठाने के संबंध में कैसे विश्वास हो, इस बात पर सरकार, राज्य और केंद्र को ध्यान देना होगा। एक-दूसरे पर दोषारोपण तो गंगा के प्रदूषण को दूर करने का हल नहीं है।

एक समस्या देश में बढ़ती जनसंख्या है, जिसे सब जानते हैं। जो भी विकास में प्रगति होती है, वह बढ़ती आबादी खत्म कर देती है। यहाँ केवल इशारा करना है, विवरण में नहीं जाना है। वर्ष २०२५ तक भारत विश्व का सबसे अधिक जनसंख्यावाला देश होगा। पॉपुलेशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमीशन कुछ वर्षों पहले स्थापित हुआ था। उसके कारण क्या संभव हुआ, पता नहीं है। सुभाष चंद्र बोस ने १९३७ में कांग्रेस अध्यक्ष के भाषण में जनसंख्या नियंत्रण का मुद्दा उठाया था। उनके सुझाव पर कांग्रेस ने एक प्लानिंग कमेटी बनाई। नेहरू ने बोस के अनुरोध पर उस प्लानिंग कमेटी की अध्यक्षता स्वीकार की थी। उसने पॉपुलेशन पर एक रिपोर्ट भी तैयार की थी। जे.आर.डी. टाटा ने भी इस विषय पर बार-बार आगाह किया। पर हम अनसुनी करते रहे यद्यपि पंचवर्षीय योजनाओं में जनसंख्या नियंत्रण या नियोजित करने की बात कही जाती रही है। पर कार्यान्वयन बहुत शिथिल रहा। एक मुँह दो हाथ की बात हम करते रहे। अभी भी हम एक भ्रम पाले हुए हैं कि चूँकि २०२० तक हमारी युवा जनसंख्या की औसतन आयु करीब २९ वर्ष की होगी, जबकि चीन की ३७ वर्ष। युवा जनसंख्या एक हद तक वरदान है और उसका लाभ देश को मिल सकता है। पर हमारे प्राकृतिक साधन सीमित हैं। कितना और पृथ्वी सहन कर सकती है, हमें जनसंख्या का संतुलन तो रखना ही होगा। यदि हम जीवन-स्तर को ऊँचा करना चाहते हैं, जैसा आज की भाषा में कहा जाता है, तो हमें जनसंख्या के स्थिरीकरण पर गंभीरता से ध्यान देना पड़ेगा।

देश की आंतरिक और बाह्य सुरक्षा के संबंध में स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हो रहा है। माओवादी या नक्सलवादी सरकार से दो कदम आगे देखते हैं। गृहमंत्री चिदंबरम की सब रणनीति असफल ही दीख रही है। रोज सुरक्षा कर्मचारी शहीद हो रहे हैं। सलवा जुडूम की व्यवस्था को सर्वोच्च न्यायालय ने असंवैधानिक करार दिया है और उसको मानव अधिकार के लिए खतरा कहा है। केंद्र और राज्य सरकार चिंतित हैं। पुनरीक्षण के लिए अदालत में जाने की सोच रही हैं। जहाँ तक स्मरण है, जम्मू कश्मीर के डोडा इलाके में कभी स्थानीय पंचायतों और अन्य स्थानीय लोगों को आतंकवादियों का सामना करने के लिए सरकार ने हथियार वितरित किए थे। अब सरकार को देखना है कि क्या करे। पश्चिम बंगाल के चुनाव में आदिवासियों ने तृणमूल कांग्रेस को मदद दी थी। वे भी अभी से सिरदर्द बने हैं। अपना वर्चस्व अपने क्षेत्रों में बलात् बनाए रखने के लिए वे पुलिस अत्याचारों से अपने संरक्षण की बात करते हैं। इन जब क्षेत्रों में प्रशासन नाम भर का है। उधर केरल में कांग्रेस के गठबंधन को जो एक बारीक बहुमत मिला है, वह मुसलिम लीग तथा इसी प्रकार के अन्य लोगों द्वारा और दूसरी ओर ईसाई बहुमत क्षेत्रों के समर्थन के कारण। इस समीकरण की पेचीदगियाँ केरल के मंत्रिमंडल को झेलनी पड़ सकती हैं। वहाँ इस्लामिक अतिवादियों के संगठन, जिनके संबंध पाकिस्तानी आतंकवादियों से हैं, उनके फैलाव के समाचार समय-समय पर आते रहते हैं।

मुंबई में २६/११ के हादसे के बाद १३ जुलाई की शाम तीन स्थानों पर अलग-अलग तीन धमाके हुए, जिनमें २१ लोग मारे गए और १०० से अधिक घायल हुए, जिनमें १० की हालत गंभीर बताई जाती है। गृह मंत्रालय ने इसको आतंकी हमला कहा है। खुफिया तंत्र और सरकारी नीति फिर असफल रहे, ऐसा प्रतीत होता है। कौन इसके लिए जिम्मेदार है, यह धीरे-धीरे सामने आएगा। २६/११ के आरोपी अभी तक हमारे कब्जे के बाहर हैं। पाकिस्तान और आतंकवादी कैसे जुड़े हुए हैं, यह खुलासा रोज अमेरिकन अधिकारी कर रहे हैं। यहाँ तक कि पाकिस्तान को देनेवाली सुरक्षा के लिए मिलनेवाली राशि पर रोक लगाने की बात अमेरिका ने की है। २६/११ के बाद फिर पाकिस्तान से बातचीत का सिलसिला शुरू हुआ। हमारी विदेश सचिव पाकिस्तान गईं और आकर अपनी एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा कि पाकिस्तान का रुख आतंकवाद के बारे में अब बदल गया है। पर इसका सबूत नजर नहीं आता। उधर उसी समय निवर्तमान सचिव ने एक साक्षात्कार में कुछ दूसरी ही बात कही। सरकार का सही मत क्या है, इसकी कुछ स्पष्टता नहीं है। अपराधियों को न बख्शने का आश्वासन प्रधानमंत्री ने दिया है। पुरानी घटनाओं को देखकर यह हास्यास्पद नजर आता है।

हमने देश की कुछ पीड़ाओं को दुहराया है। १५ अगस्त को लाल किले की प्राचीर से इन मुद्दों पर अवश्य प्रधानमंत्री अपने विचार प्रकट करेंगे और देश को बताएँगे कि सरकार क्या कहने जा रही है, ताकि देश सुरक्षित महसूस कर सके। जो मंत्रिमंडल में फेर-बदल उन्होंने किया है, उससे प्रभावी राज्य-व्यवस्था और मजबूत सुशासन के कोई आसार नहीं मालूम होते हैं। आम लोगों की राय तो यही है कि खोदा पहाड़ निकली चुहिया। उनके एक मंत्री ने, जो स्वयं आदर्श सोसाइटी के मामले में फँसे हैं और एक अन्य विषय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय ने सख्त टिप्पणी की, उनकी हिम्मत कि वह मंत्रिमंडल के परिवर्तन को खो-खो का खेल कहते हैं। जब तक प्रधानमंत्री की मान्यता स्वीकार नहीं है और कोई अनुशासन मंत्रियों के नहीं आते हैं। यही हालात रहेंगे। प्रधानमंत्री की साख और दबदबा जब तक स्थापित नहीं होता है, काई सुधार संभव नहीं है। उनके पास संवैधानिक अधिकार है और उनका देश के प्रति दायित्व है। राजनीतिक ऊहापोह और खोज में प्रधानमंत्री के मुख से ऐसे कटु शब्द निकल जाते हैं जो न सही है और न विषय में जाने उचित है और उनका स्वभाव वैसा नहीं है, अपने अधिकार का सामयिक प्रयोग प्रभावी कदम से जनता का विश्वास प्राप्त कर सकते हैं। पर हम एक आशावादी और आस्थावान देश के नागरिक हैं। शायद आगे कुछ आशा की किरण दिखाई दे।

१५ अगस्त के अवसर पर हम अपने देश की आजादी के लिए हुए शहीदों और स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेनेवाली को बड़े आदर और श्रद्धा से स्मरण करते हैं। हम देश की सीमाओं के पहरेदारों और आंतरिक सुरक्षा में रत विभिन्न सुरक्षा बलों के बहादुर जवानों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। देशवासियों को 'साहित्य अमृत' परिवार की बधाई एवं शुभकामनाएँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

□

'रामायण' की महत्ता के विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। रामायण और महाभारत ही सामाजिक दृष्टिकोण से भारतीय अध्यात्म और नैतिकता के आधार-बिंदु हैं। इनसे सभी परिचित हैं। वेदों और उपनिषदों का अवगाह दूसरे स्तर का है। आदिकवि वाल्मीकि रचित रामायण के उपरांत देश में अनेक रामायणें लिखी गई हैं। तुलसी कृत रामचरित मानस उनमें सबसे प्रसिद्ध है। वाल्मीकि रामायण की रचना संस्कृत में हुई; किंतु उसका प्रभाव सभी कवियों और रामायणों में परिलक्षित होता है। भारत की प्राय: सभी भाषाओं में रामायण की रचना हुई अथवा रामकथा का वर्णन हुआ। चरित्रों के विवेचन में अथवा घटनाचक्र में उनमें विभिन्नता भी पाई जाती है। फादर कामिल बुल्के ने रामकथा के विषय में जो विशद और गहन कार्य किया है, उसके लिए हम सब कृतज्ञ हैं। उससे रामकथा की व्यापकता का पता चलता है। अभी और भी शोध हो रहे हैं। मूल वाल्मीकि और तुलसी के ग्रंथों के अंग्रेजी में पद्य और गद्य दोहे दोनों में कई अनुवाद हुए हैं। कुछ अन्य भाषाओं में भी हुए हैं। सी. राजगोपालाचारी ने वाल्मीकि की रामायण के आधार पर रामायण गद्य लिखी, उसकी अंग्रेजी में लाखों प्रतियाँ बिकी हैं। उसकी विशेष लोकप्रियता देश और विदेश दोनों में है। हरि कथा अनंत है, अतएव उसका वर्णन भी निरंतर चलता रहता है। रामायण की लोकप्रियता भारत तक ही सीमित नहीं है, सुदूर पूर्व के देशों में भी है, जैसे थाईलैंड, कंबोडिया, मलेशिया, इंडोनेशिया आदि में। रामलीला भी वहाँ खेली जाती है। रामकथा जितनी व्यापक है उतनी उसमें भिन्नता भी है। कहा जाता है कि अंग्रेजों के जमाने में जो भारतीय बँधुआ मजदूर होकर उत्तरी क्षेत्रों में गए, उनके लिए रामचरितमानस और हनुमानचालीसा कठिन परिस्थितियों में संबल रहे और वे अपनी संस्कृति एवं सामाजिक रीति-रिवाजों को बनाए रहे।

आज भी यह सांस्कृतिक संकट भारतीय जनमानस का है। भारतीय मूल के निवासी, जो विदेश में रह रहे हैं या वे जिन्होंने अन्य देशों की नागरिकता ग्रहण कर ली है, वे भी भारतीय संस्कृति से जुड़े रहना चाहते हैं। वे चिंतित रहते हैं कि किसी प्रकार उनकी संतानें, जो भारत को अच्छी तरह जानते नहीं, अपनी जड़ों से जुड़े रहें, उनको अपने पूर्वजों की संस्कृति का कुछ-न-कुछ ज्ञान रहे। यह संकट आंतरिक भी है। कभी दादा-दादी, माँ-बाप कहानियों के रूप में रामायण और महाभारत की कथाएँ सुनाया करते हैं। अब संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है। माता-पिता को भी फुरसत नहीं होती कि वे बच्चों पर इस दृष्टि से ध्यान दें। वे चाहते अवश्य हैं। शिक्षा-प्रणाली, अंग्रेजी के वर्चस्व और पाठ्यक्रम के बोझ के कारण हमारे बच्चे भारत में भी रामायण से अनभिज्ञ हैं। अगर जानते हैं तो मोटे तौर पर कथानक को और केवल मुख्य पात्रों को इस कमी का यह एक सुखद संयोग है कि एक डॉक्टर ने अनुभव किया अपने ही घर में। उनका नाम है डॉ. अखिलेश गुमाश्ता। वे जबलपुर के हड्डियों के एक विख्यात चिकित्सक हैं। उन्होंने स्वयं तुलसी के रामचरितमानस, वाल्मीकि की रामायण के अध्ययन के अतिरिक्त मलयालम, तमिल, तेलुगु एवं देश की अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में लिखित रामायणों का पढ़ना प्रारंभ किया। उनको लगा कि आज के संदर्भ में, विश्व की बदलती परिस्थितियों में पुन: रामकथा के नवसृजन की आवश्यकता है। उसके फलस्वरूप उन्होंने अंग्रेजी में पद्य में रामायण 'द हिम्स फ्रॉम द हिमालयाज' की रचना की (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली)। करीब सात वर्ष में उनका यह प्रयास पूरा हो सका। लोकार्पण के समय उन्होंने कहा कि उनका कवि होने का कोई दावा नहीं है। उन्हें प्रतीति हुई कि कोई अपरा शक्ति उनके माध्यम से लिखवा रही है। उनके राम साहित्य के गंभीर अवगाहन से ही शायद प्रेरणा उत्पन्न हुई। डॉ. गुमाश्ता के ग्रंथ का मुख्य आधार तुलसी का रामचरितमानस ही है। ८०० से अधिक पृष्ठों में उन्होंने पूरी रामकथा को पुन: महाकाव्य रूप में सफलता के साथ प्रस्तुत किया है। समाप्त करते हुए उन्होंने रामकथा रचनेवाले रचनाकारों की वंदना की है। उनका परिश्रम, अध्यवसाय और निष्ठा सराहनीय है। ग्रंथ उनकी क्षमता का प्रतीक है। वह अंग्रेजी के पाठकों के लिए यह उपयोगी है। उनके लिए डॉ. गुमाश्ता की यह विशेष देन है। यह मांगलिक अवसरों पर भेंट करने लायक ग्रंथ है। विदेश के अतिथि हमारे देश में आते हैं। केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा विदेशी अतिथियों को भेंट करने योग्य है। हमारे विदेश मंत्रालय को इसको दूसरे देशों के मुख्य पुस्तकालयों और विश्वविद्यालयों में प्रेषित करने की व्यवस्था करनी चाहिए।

अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् का सहयोग भी अपेक्षित है। रामकथा की परंपरा को डॉ. अखिलेश गुमाश्ता के इस नूतन साहित्यिक और आध्यात्मिक अवदान के लिए साधुवाद।

□

अंग्रेजी में बहुत से ग्रंथ भारत से संबंधित अलग-अलग विषयों पर प्रकाशित होते रहते हैं, जिनमें न केवल विषय का प्रतिवादन होता है बल्कि विषय से संबंधित चित्र भी प्रकाशित होते हैं। हिंदी में बहुत कम ये चित्रमय प्रकाशन या पिस्टोरियत छपते हैं। शायद मूल्य बाधक होता है। जैसे हम समझते हैं कि यदि विषय उत्तम हो तो मूल्य अधिक होने पर भी ग्रंथ की खपत होगी या होनी चाहिए। हिंदी में तो ऐसे ग्रंथ शायद उँगलियों पर गिने जा सकते हैं। पं. महावीर प्रसाद चतुर्वेदी का अभिनंदन ग्रंथ इसी श्रेणी का था। कुछ और भी ऐसे प्रकाशन रहे होंगे। बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन पर भी एक अच्छा ग्रंथ प्रकाशित हुआ। एक और अभिनंदन ग्रंथ, जो उसी प्रकार चित्रमय और आकर्षक था और अंग्रेजी के अतिरिक्त हिंदी में भी छपा था, वह था नेहरूजी उसका साठवीं वर्ष-तिथि के अवसर पर। हिंदी अभिनंदन ग्रंथ अंग्रेजी ग्रंथ का था उसका अनुवाद नहीं। वह स्वतंत्र रूप से मूल में तैयार किया गया था। महापुरुषों से संबंधित ग्रंथ जो विभिन्न अवसरों पर छपते हैं, वे भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंग्रेजी में होते हैं। रवींद्रनाथ ठाकुर की शती के समय और अब १५०वें जन्मदिवस पर अनेक ग्रंथ निजी संस्थाओं या सरकार द्वारा प्रकाशित हो रहे हैं, अधिकर अंग्रेजी से हैं। कुछ बंगला भाषा में दिखाई दे जाते हैं।

□

पिछले दिनों एक बृहत् प्रकाशन 'अमिट हस्ताक्षर' हमें भेंटस्वरूप प्राप्त हुआ। शायद सीमित प्रतियाँ छपी हों। मूल्य उस पर छपा नहीं है। वह प्रसिद्ध फोटोग्राफर वीरेंद्र प्रभाकर ने प्रकाशित किया है। वीरेंद्र प्रभाकर १९४७ से अब तक अपने क्षेत्र में क्रियाशील हैं। उनके अपने क्षेत्र में योगदान के कारण वे से राष्ट्रपति महोदय द्वारा पद्मश्री से अलंकृत हो चुके हैं। दिल्ली की कई साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्थाओं से वे जुड़े हुए हैं। चित्रकला संगम के वे संस्थापक हैं। उसके थोड़े से प्रारंभिक भाग में वीरेंद्र प्रभाकर के प्रशंसकों और मित्रों ने उनके और उनके परिवेश के संबंध में कुछ लिखा है। पर वह ग्रंथ केवल वीरेंद्र प्रभाकर पर केंद्रित हो, ऐसा नहीं है। वैसे प्रारंभ में ही उन्होंने मंतव्य व्यक्त कर दिया है कि क्यों इस ग्रंथ का प्रणयन किया। सन् १९४७ से लेकर करीब २००९ तक महत्त्वपूर्ण अवसरों पर उनके द्वारा खींचे गए फोटो चित्रों के संकलन से बहुत से चित्रों को इस ग्रंथ में समाहित किया है। इन चित्रों को देखकर साठ-पैंसठ साल की घटनाओं का स्मरण हो आता है। फोटो बहुत बड़ी संख्या में रंगीन हैं। पहले के फोटो सफेद और काले रंगों में हैं। कुछ फोटो तो अति उत्तम हैं। एक फोटो है नेताजी सुभाष बोस की पुत्री अनीता बोस का, लाल किले की प्राचीर पर हैं, जहाँ उनके पिता स्वयं न पहुँच सके और जिन्होंने चलो दिल्ली का नारा दिया। समझा जा सकता है कि एक भारतीय, जो उस चित्र को आज देखता है, उसकी क्या भावनाएँ होंगी। एक ग्रंथ दुर्लभ चित्र है, जब चीनी आक्रमण के उपरांत वर्ष १९६३ में राजपथ पर २६ जनवरी की परेड में प्रधानमंत्री नेहरू अपने सहयोगियों सरदार हुकुम सिंह अध्यक्ष लोकसभा, मोरारजी देसाई, शास्त्रीजी, जगजीवनजी एवं सांसदों आदि के साथ पैदल चल रहे हैं। यह चित्र हमें स्मरण दिलाता है कि देश क्यों और कैसे दलगत राजनीति और निहित स्वार्थ के ऊपर है। और भी इस प्रकार के उल्लेखनीय फोटो ग्रंथ में शामिल हैं। साहित्यकारों के और कलाकारों बहुत अच्छे फोटो वीरेंद्र प्रभाकर ने दिए हैं। वे अन्यत्र उपलब्ध नहीं हैं। वास्तव में १९४७ के उपरांत का भारतीय इतिहास वीरेंद्र प्रभाकर के 'अमिट हस्ताक्षर' में चित्रित है। आगे आनेवाली पीढ़ियों को यह उनकी विशिष्ट देन है। ग्रंथ एक ऐतिहासिक दस्तावेज है इस प्रकार के कल्पनाशील और श्रमसाध्य कार्य के लिए वे प्रशंसा और साधुवाद के पात्र हैं।

□

'अक्षरा' हिंदी जगत् की जानी-मानी द्विमासिक स्तरीय पत्रिका है। प्रधान संपादक कैलाशचंद्र पंत हैं। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिंदी भवन, भोपाल के तत्त्वावधान में प्रकाशित होती है। 'अक्षरा' का मार्च-अप्रैल का अंक रमेशचंद्र शाह पर केंद्रित विशेषांक है। रमेशचंद्र शाह का समसामयिक साहित्य में एक विशेष स्थान है। वे अंग्रेजी के प्रोफेसर रहे हैं। अंग्रेजी और हिंदी दोनों में लिखते हैं। वे बहुमुखी प्रतिभा के रचनाकार हैं। हिंदी रचना-जगत् में उनकी विशिष्ट पहचान है। वे कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, चिंतक, निबंधकार और आलोचक हैं। उनकी डायरियाँ भी प्रकाशित हुई हैं, जिनसे उनकी विविध रुचियों और प्रवृत्तियों का पता चलता है। उनके लेखों के संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं। उनके साहित्य के विविध आयामों पर शोधकार्य हो रहा है। 'अक्षरा' का यह विशेषांक उनके संपूर्ण साहित्य का सम्यक् परिचय कराता है। वैसे उनके साहित्य पर आगे भी बहुत कुछ लिखा जाएगा। विशेषांक में उनकी कुछ कविताएँ और एक कहानी भी सम्मिलित की गई है। रमेशचंद्र शाह की अंतरंग मित्रता अनेक साहित्यकारों से है और उनके द्वारा लिखे पत्र भी पढ़ने को मिलते हैं। पत्रों से पता चलता है पत्राचार की गंभीरता का। आलेखों में विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, नामवर सिंह, कृष्णदत्त पालीवाल और रमेश दवे के आलेख विशेषकर उल्लेखनीय हैं। संपादक डॉ. सुनीता खत्री का रमेशचंद्र शाह से वार्त्तालाप उनकी रचना-प्रक्रिया, व्यक्तित्व के कई पक्षों और आस्थाओं और विचारों पर अच्छा प्रकाश डालता है। 'अक्षरा' का यह विशेषांक बहुत स्वागत योग्य है। इसके माध्यम से मूर्धन्य रचनाकार की रचनाओं, उनकी भावभूमि, विचारणीय और विविधता से पाठकों व विद्यार्थियों को खासकर समुचित जानकारी प्राप्त होगी। रमेशचंद्र शाह के साहित्य के बारे में और अधिक जानने की उत्सुकता भी बढ़ेगी। यह विशेषांक निस्संदेह सराहनीय है।

इस अंक के साथ 'साहित्य अमृत' अपने प्रकाशन के सत्रहवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। इस सोलह वर्षों में 'साहित्य अमृत' ने अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई है, और इसे अपने लेखकों और पाठकों का भरपूर प्रेम मिला है। इस यात्रा में अनेक पड़ाव आए हैं, और अपने विशेषांकों के माध्यम से भी यह पत्रिका लगातार चर्चा में रही है। 'साहित्य अमृत' का यह अंक 'व्यंग्य विशेषांक' के रूप में हिंदी की व्यंग्य विधा को पुष्ट करने का एक विनम्र प्रयास है। आज देश जिन स्थितियों से गुजर रहा है, उनको दृष्टिगत रखते हुए ये व्यंग्य रचनाएँ एक सार्थक हस्तक्षेप करेंगी, ऐसा हमारा विश्वास है। हम अपने लेखकों, पाठकों और विज्ञापनदाताओं का हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं और भविष्य में भी उनके सक्रिय सहयोग की अपेक्षा करते हैं।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिस्मृति

राजभवन की सिगरेटदानी

● श्रीनारायण चतुर्वेदी

श्रीनारायण चतुर्वेदी का जन्म २८ सितंबर, १८९३ को जिला इटावा (उ.प्र.) में हुआ। उपनाम 'श्रीवर'। उन्होंने क्रमशः प्रयाग तथा लंदन विश्वविद्यालयों से इतिहास और शिक्षा शास्त्र में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। साहित्य के क्षेत्र में उनकी ख्याति 'विश्वभारती' के संपादक के रूप में हुई। उन्होंने 'श्रीवर' उपनाम से ब्रजभाषा तथा खड़ीबोली में कविताएँ भी कीं। इनकी स्फुट कविताओं के दो संग्रह 'रत्नदीप' तथा 'जीवन के गीत' नाम से प्रकाशित हैं। उनकी अन्य पुस्तकों में अंग्रेजी से किए गए अनुवाद हैं—'विश्व का इतिहास', प्लेटो की 'अपोलॉजी' का संपादन तथा 'शासक' नाम से मैक्यावली के 'प्रिंस' का अनुवाद किया, जो विशेष उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त शिक्षा प्रसार के क्षेत्र में भी उन्होंने महत्त्वपूर्ण योगदान किया। १९२६ से १९३० तक लीग ऑफ नेशंस, जेनेवा की शिक्षा समिति में भारत का प्रतिनिधित्व किया तथा संयुक्त प्रांत (वर्तमान उत्तर प्रदेश) में शिक्षा प्रसार विभाग के अध्यक्ष पद पर बहुत दिनों तक कार्य किया। जून १९५५ से अंत तक सुप्रसिद्ध हिंदी पत्रिका 'सरस्वती' का संपादन करते रहे।

'मूक होहिं वाचालु, पंगु चढ़हिं गिरिवर गहन' के अनुसार संयोग से श्री विनोद शर्मा को 'भारत दैट इज इंडिया' के एक प्रमुख राज्य के राजभवन की अतिथिशाला में ठहरने का दुर्लभ संयोग प्राप्त हो गया। एक तो स्वतंत्र भारत का राजभवन और फिर उसकी अतिथिशाला! मूल्यवान् और कलात्मक, बढ़िया मोटे गलीचों, सुंदर उपस्करों और अद्यतन सोफा-सेटों से सुसज्जित! स्प्रिंगदार पलंग, जिन पर दोहरे रबड़-फोम के ऐसे मोटे गद्दे कि उनमें शर्माजी का हलका शरीर बित्ते भर घुस जाए। चौबीसों घंटे चलनेवाले गरम और ठंडे पानी के नल। कक्ष में सुंदर एवं नयनाभिराम कलापूर्ण मध्यकालीन कलमी चित्रों की सजावट और करीने से लगी हुई प्राचीन प्रतिमाओं का प्रदर्शन। यद्यपि शर्माजी सिगरेट नहीं पीते, तथापि अन्य कितने ही अतिथि तो आधुनिक अग्निहोत्री होने के नाते धूम्रपान करते ही हैं। अतएव उनकी सुविधा के लिए पलंग के सिरहाने के पास एक सुंदर, छोटी मेज पर जीतल की एक प्राचीन भारतीय कलाकृति सिगरेटदानी (एश ट्रे) के रूप में रखी हुई थी। उसकी सुंदर और अनोखी बनावट के कारण शर्माजी का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट हुआ, क्योंकि प्राचीन और मध्यकालीन भारतीय हस्तकला में उनकी विशेष रुचि है। शर्माजी उसे उठाकर देखने लगे। 'ज्यों-ज्यों' निहारिए नीर ह्वै नैनन, त्यों-त्यों खरी निकसै-सी निकाई।' वे विस्फारित नेत्रों से उसे देखने लगे, क्योंकि जिसे वे अब तक एक सुंदर सिगरेटदानी समझे हुए थे, वह वास्तव में मंदिरों में काम आनेवाली एक 'आरती' थी। वह सैकड़ों वर्ष पुरानी मालूम होती थी। संभवतः उसका उपयोग किसी समय किसी राजकीय मंदिर में किसी देवता की अर्चना में किया जाता होगा। किंतु इस समय तो वह राजभवन की अतिथिशाला में राज्यपाल के सम्मानित अतिथियों की जूठी सिगरेटों का भार वहन करके उनकी सेवा कर रही थी।

इस सिगरेटदानी का मुख्य भाग खरबूजे के आकार का एक छोटा गड्डआ था, जो प्रायः सात अंगुल ऊँचा है। पुरानी होने के कारण इस पर जंग जम गया था। पीछे के भाग में पुजारी द्वारा पकड़ने के लिए उसमें एक हत्था लगा था, जो टूटा हुआ था। किंतु जहाँ वह हत्था गड्डए से जुड़ा था, वहाँ गरुड़ की एक छोटी सी मूर्ति बनी हुई थी। आगे के भाग में कमल-पुष्प के दल के आकार का दीपक बना था, जो बीच में गहरा था और उसका अगला भाग कुछ नुकीला था, जिसमें बत्ती बैठ सकती थी। जहाँ यह कमल-दल के आकार का दीपक गड्डए से जुड़ा था, वहाँ कमल-दलों के मंडल से परिवेष्टित गणेशजी की एक सुंदर मूर्ति बनी थी। दीपदान में जब अधजली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिगरेट डाली जाती होगी, तब उसका धुआँ सीधा गणेशजी पर पहुँचकर उन्हें आधुनिक धूम्रपान का आनंद देता होगा। गडुए के गहरे भाग में धूप जलाकर और दीपक में घी की बत्ती या कपूर जलाकर उससे राजकीय देवालय या रनिवास के मंदिर में भगवान् की आरती की जाती होगी।

राजभवनों और उनकी अतिथिशालाओं को सजाने का काम नौकरशाही के उच्च अधिकारी करते हैं। जिस किसी अधिकारी ने इस अतिथिशाला को सजाया है, उसमें अच्छा कलाबोध और सुरुचि रही होगी, किंतु इसमें भी संदेह नहीं कि वह पूरा 'सेक्युलर और ऐंग्लो-इंडियन' भी रहा होगा, अर्थात् शरीर से 'इंडियन' और मानसिकता से ऐंग्लो। वह उस सरकार का नौकर है, जो 'सेक्युलर' होने का गर्व करती है। शायद भविष्यदर्शी अकबर इलाहाबादी ने इसी सरकार को लक्ष्य करके लिखा था, 'रकीबों ने रपट लिखवाई है जा-जा के थाने में, कि 'अकबर' नाम लेता है खुदा का इस जमाने में।' हमारी सरकार की निगाह में 'खुदा' का नाम लेना भी 'सेक्युलर' होने में शायद बाधक है। जब श्रीमती इंदिरा गांधी तथा सर्वश्री चागला, अशोक मेहता, स्वर्णसिंह, संजीवैया, मनुभाई शाह और जगजीवन राम ने 'ईश्वर' के नाम पर शपथ न लेकर सत्यनिष्ठा और दृढ़ संकल्प (सालेम एफर्मेशन) की प्रतिज्ञा करके अपनी धर्मनिरपेक्षता का सार्वजनिक परिचय दिया था। जब तुलसदास, कबीर और रैदास के 'मद्दाह' श्री जगजीवन राम ने शपथ के लिए ईश्वर का नाम न लेकर अपनी 'सेक्युलरता' का विज्ञापन दिया व श्री चागला और श्री अशोक मेहता की बात कौन करे? 'जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं, कहहु तूल केहि लेखे माहीं?' नौकरशाही तो इस युग की भौतिक सांसारिक सफलता का जीता-जागता रूप है। उसे धर्म और ईश्वर की क्या आवश्यक्ता है? वह अपने नोट्स, मेमोरेंडमों और टिप्पणियों में ईश्वर के बाल की खाल निकाल सकता है। उसके लिए 'धर्म' और 'ईश्वर' अंधविश्वास है। आँखों में हुकूमत का कमल जब से खिला है, आते हैं नजर बाग व बाजार बसंती।' और हमारी जनता इन्हीं 'सेक्युलर' हुक्कामों की रियाया' मात्र है। इसलिए अधिकांश नागरिकों के सम्मानित देवताओं की मूर्तियों की अवमानना करने का साहस इसी अनोखे 'सेक्युलर' राज्य में संभव है।

शर्माजी इस सिगरेटदानी को बहुत देर तक देखते रहे, फिर उन्होंने गणेशजी को संबोधित करते हुए कहा, ''हे ऐश-ट्रे के गणेशजी, आपने वेदव्यास के स्टेनोग्राफर (आशुलिपिक) का काम करके इस देश को पंचम वेद उपलब्ध करा दिया था, जिसमें भारत की संस्कृति सुरक्षित है और जिसके विषय में कहा गया है—'यत्र भारते, तन्न भारते।' जो बात महाभारत में नहीं, वह इस भारत देश में नहीं है; किंतु शायद भारतीय संस्कृति को इस प्रकार अमर और अक्षय कर देना सेक्युलरवाद के प्रति महान् अपराध था। देवता होने या इस सेक्युलर-विरोधी ग्रंथ के प्रणयन में सहयोग देने के कारण आज आपके देवताओं की निगाह में घोर अपराधी हैं। अतएव, आपको इस सेक्युलर-युग में दंड का भागी होना ही पड़ेगा। बहुत दिनों आपने इस सुंदर कलाकृति में प्रतिष्ठित होकर किसी विशाल मंदिर में या किसी प्रतापी राजा के पूजागृह में प्रात:कालीन मंगला आरती से लेकर रात्रि की शयन आरती तक नित्यप्रति भगवान् की पूजा करने का सुख लूटा होगा, किंतु अब समय बदल गया है। 'समय एव करोति वलावलम्।' अब इस स्वतंत्र सेक्युलर इंडिया में आप इस देश की सर्वशक्तिशाली, 'सभ्य', अर्द्धसंस्कृत, संस्कारहीन और जनता की भावना तथा धर्म से निरपेक्ष नौकरशाही के पंजों में फँस गए हैं। अब आपको भगवान् की पूजा करने के बजाय राजभवन की अतिथिशाला में ठहरनेवाले आधुनिक देवताओं की जूठी और अधजली सिगरेटों से दग्ध होने का दंड दिया गया है। बहुत दिनों तक आपने अगरु और चंदन के बुरादे की धूप की सुगंध का आनंद लिया है, अब आप गोल्डफ्लैक, कैपस्टन और 555 की निकोटीन की गंध का मजा लीजिए। आपने इस शांति के मतवाले देश में 'महाभारत' संभव कर जो पाप किया था, उसका प्रायश्चित्त यही है कि आप आज के स्वतंत्र, पाश्चात्य संस्कृति में दीक्षित, धर्मनिरपेक्ष, सेक्युलर 'इंडियन', वी.आई.पी. लोगों की जूठी और अधजली सिगरेटों को वहन करके उनके भारवाही बना करें। आप अपने को 'विघ्नविनाशक' समझते हैं, किंतु आज के 'इंडियन' स्वयं समर्थ हैं। आपके ही कालिदास ने कहा है, 'स्ववीर्य गुप्ताहि मनोप्रसूति', वे अपने विघ्न स्वयं, अमेरिका अथवा रूस की सहायता से दूर कर लेंगे। उन्हें अब आपकी कपोलकल्पित विघ्नविनाशक शक्ति की आवश्यकता नहीं है। अब वे देवी-देवताओं और उनकी मूर्तियों का आदर करने के अंधविश्वास से ऊपर उठ गए हैं। आधुनिकता का यही तकाजा है, किंतु वे मूर्तिभंजक नहीं हैं और न वे आपको तोड़कर राष्ट्रीय क्षति करना ही पसंद करते हैं। अतएव आप इस मुक्त और निरपेक्षता के युग में आधुनिक सभ्यता के सार्वभौम प्रतीक धूम्रपान की अवशिष्ट अधजली सिगरेटों को वहन करके राष्ट्र की सेवा करें, जिससे उन अधजली सिगरेटों के इधर-उधर गिर जाने से राजभवन में कोई अग्निकांड न हो जाए। इस प्रकार आप इस सुंदर कक्ष की सेवा करके अपने को समाजोपयोगी बनाएँ। किसी समय इस देश में तैंतीस करोड़ देवता थे। आज उनकी संख्या बढ़कर पैंतालीस करोड़ हो गई है। इनमें से जो सभ्य, सुसंस्कृत और प्रबुद्ध हैं, वे बहुधा धूम्रपान करते हैं। आपका सौभाग्य है कि आपको उनकी सेवा करने का अवसर मिला है।''

ऐश-ट्रे के गणेशजी निर्विकार और निरपेक्ष भाव से शर्माजी का भाषण सुनते रहे। उनमें कोई प्रतिक्रिया होती न देख शर्माजी खिसियाकर चुप हो गए और उन्होंने अपने शरीर को रबड़-फोम के स्प्रिंगदार पलंग पर डाल दिया, जो बित्ता भर धँस गया। गणेशजी फिर भी मौन ही रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता

व्यंग्य मुक्तक

● रामदरश मिश्र

: १ :

पीकर ऊँचे लोग बकें तो वह प्रतिभा की बानी है,
उनका पीना सभ्य लोक की मानो एक निशानी है।
देसी पीकर गिरते-पड़ते लोग पियक्कड़ कहलाते,
उनकी मस्त रागिनी अहमक लोगों की शैतानी है।

: २ :

पीकर चले आ रहे डगमग मानो विश्व-विजेता हैं,
वे कवि हैं, वे आलोचक हैं, वे नेता अभिनेता हैं।
उनकी वाणी झरती रहती है मंचों से मूल्य यदा,
वे न भोक्ता निज वाणी के, वे वाणी-विक्रेता हैं।

: ३ :

महफिल में मुफ्त की है, पिए जा रहे हैं वे,
वैसे न कर सके जो, किए जा रहे हैं वे।
कहते हैं वे कि जो न पिए जिंदगी वह क्या,
खुश हैं कि इस अदा से जिए जा रहे हैं वे।

: ४ :

उनको पता न किससे वे क्या माँग रहे हैं,
कमरे को बंद करके हवा माँग रहे हैं।
वे खोजते खुशी हैं नशे में शराब के,
शैतान से जीने की दुआ माँग रहे हैं।

: ५ :

निगल गया रोटी गाँवों की, बचा न दूध, न मट्ठा है,
थोड़े ही दिन में तो कितना धन कर लिया इकट्ठा है।
उसके लिए नहीं कुछ भी औकात तुम्हारी है भाई,
तुम वाणी-सुत सरल और वह राजनीति का पट्ठा है।

: ६ :

अफसर है बड़ा अदब का वह अनुशासन कसता रहता है,
छाया में कॉलम लिख-लिखकर इस-उसमें फँसता रहता है।
हो शोक-सभा या जन्मशती मन पाती है न उसके बिना,
चुप रहे या कि बोले उसका चेहरा कुछ हँसता रहता है।

जन्म : १५ अगस्त, १९२४ को गोरखपुर (उ.प्र.) के डुमरी गाँव में।

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.।

कृतित्व : अब तक तेरह काव्य संग्रह, बारह उपन्यास, सोलह कहानी संग्रह, दस आलोचना पुस्तकें, तीन निबंध संग्रह, तीन यात्रा-वृत्त, दो संस्मरण पुस्तकें, दो आत्मकथात्मक ग्रंथ, चार संपादित पुस्तकें प्रकाशित।

सम्मान : अनेक विशिष्ट सम्मानों से सम्मानित।

: ७ :

लिखता रहा और लिखकर वह रहता था बेमन बैठा,
उसने इक दिन वृत्त बनाया और केंद्र में तन बैठा।
उसके अपने आलोचक अब और पत्रिका है अपनी,
उसने किया विरोध शिविर का और शिविर खुद बन बैठा।

: ८ :

घर में है वो अकेला ही बैठा हुआ दंश पाया है जो जो भुलाया ग
जागने न दिया दिन ने आराम से, चैन से रात ने भी सुलाया न
मन उचटता रहा, गूँजती सी रही उसके कानों में संगीत की ताल
बीत दस दिन गए बोलने के लिए हाय! उसको किसी ने बुलाया न

: ९ :

बैठे-बैठे सुबह से शाम करता है,
लगता नहीं वो कोई काम करता है।
माँगता निलज्ज होके बाद में रुपैया,
पहले वो मुझको सलाम करता है।

आर-३८, वाणी वि
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

भ्रष्टाचार पावन-पवित्र सांस्कृतिक विरासत

● अशोक चक्रधर

"चौं रे चंपू! आजकल्ल साधू-संन्यासी भ्रष्टाचार के विरुद्ध मोर्चा खोले भए ऐं, सामाजिक कार्यकर्ता ऊ आगै आय रए ऐं, तैनैं का कियौं?"

"चचा, मैंने तो छब्बीस साल पहले एक कविता लिखी थी, लगता है जैसे छब्बीस दिन पहले ही लिखी हो। 'धर्मयुग' में छपी थी, 'अड़तीसवाँ राष्ट्रीय भ्रष्टाचार महोत्सव'। आजकल कहीं सुनाता हूँ तो शीर्षक बताता हूँ 'तिरसठवाँ राष्ट्रीय भ्रष्टाचार महोत्सव', कविता लगभग वैसी की वैसी ही है।"

"मैंनैं नायँ सुनी!"

"अरे चचा, आप अपने इस चंपू को सिर्फ चंपू ही समझते हैं! खैर, ये कविता और कविताओं की तरह एक झटके में नहीं लिखी गई थी। पूरा शोध किया गया था। आप इतना तो जानते ही हैं कि जब किसी कथात्मक कविता का विचार मेरे मन में आता है तो मुझे एक अदद, समझदार श्रोता की जरूरत महसूस होती है। मुझे याद है कि इस कविता की बुनियाद एक रेलयात्रा में मरहूम कवि अग्निवेष शुक्ल के सामने रखी गई थी, फिर जयपुर में एक रात पुलिस के वरिष्ठ अधिकारी शंकर सरोलिया से भ्रष्टाचार के आँकड़े प्राप्त हुए। उसी रात रिश्वत-धन-प्राप्ति के चार स्वरूप निर्धारित हुए—नजराना, शुकराना, हकराना और जबराना। नजराना—ये काम होने से पहले दिया जानेवाला ऑफर है और पूरी तरह से देने वाले की श्रद्धा और इच्छा पर निर्भर है। शुकराना—ये बतौर शुक्रिया दिया जाता है। इसमें लेने वाले को अचानक प्राप्ति के कारण बड़ा मजा आता है। हकराना— यानी हक बनता है जनाब, बँधा-बँधाया हिसाब, आपसी सेटलमेंट, कहीं दस परसेंट, कहीं पंद्रह परसेंट, कहीं ट्वेंटी परसेंट, कहीं फिफ्टी परसेंट, लेकिन पेमेंट से पहले पेमेंट। जबराना—यानी जबरदस्ती पाना। ये देनेवाले की नहीं, लेनेवाले की इच्छा, क्षमता और शक्ति पर डिपेंड करता है। इसमें मना करनेवाला मरता है।"

"वा भई वा!"

"किसी दिन पूरी कविता सुनाऊँगा। बहरहाल, इस अंतर्यामी भ्रष्टाचार का कहाँ-कहाँ पता लगाओगे? जब देनेवाला राजी और लेनेवाला राजी, तो क्या करेगा काजी! टेबल के नीचे, परदे के पीछे, संकेतों में, गुपचुप

जन्म : ८ फरवरी, १९५१ को खुर्जा, उ.प्र. में।

शिक्षा : एम.ए., एम.लिट., पी-एच.डी. (हिंदी)।

हिंदी व्यंग्य-लेखन के सशक्त हस्ताक्षर, कविताओं के मंच की शोभा, अनेक पुस्तकें प्रकाशित, बहुप्रशंसित, अनेक ख्यातनाम सम्मानों से सम्मानित। हिंदी अकादमी, दिल्ली तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान के उपाध्यक्ष। विगत तीन दशकों से विभिन्न संचार माध्यमों में सक्रिय।

इशारों में लेन-देन की बात तय हो गई तो आप क्या कर लेंगे। इत्ते हमारे, इत्ते तुम्हारे! का कल्लेंगे अन्ना हजारे! क्या कर लेगा लोकपाल का बिल, जब लोग हैं इतने काबिल। भ्रष्टाचार हमारे देश की पावन पवित्र सांस्कृतिक विरासत बन गई है, चचा!"

"निदान बता, चंपू!"

"निदान है संविधान में आस्था! आत्मशुद्धि, आत्ममंथन और मनुष्यता के संस्कार! मुझे तो बाबा साहब भीमराव अंबेडकर के उस भाषण की याद आती है, जो उन्होंने नवंबर 1949 में नई दिल्ली में संविधान की प्रस्तावना में दिया था। उन्होंने कहा था कि एक संविधान चाहे जितना बुरा हो, वह अच्छा साबित हो सकता है, यदि उसका पालन करनेवाले लोग अच्छे हों। इस पंक्ति से यह अर्थ भी निकलता है कि आप संविधान कितना भी अच्छे से अच्छा बना लो, अगर उसको लागू करनेवाले अच्छे नहीं हैं तो वो धरा बिराजेगा। लोकपाल बिल आए, जरूर आए, लेकिन संविधान को भी तो देखा जाए कि उसमें क्या-क्या उपाय पहले से ही निर्धारित हैं। जो कानून हमारे पास पहले से ही बने हुए हैं, उन्हीं को अमल में लाना शुरू कर दिया जाए तो गिरे हुए लोगों के गिरेबान सुरक्षित नहीं रहेंगे। संविधान कानूनों का कानून है।"

"कानून तौ अंधौ होय करै रे!"

"विडंबना ये है कि कानून अब अंधा नहीं है, एक धंधा है। धंधा इसलिए है, क्योंकि वह तबाही की नहीं गवाही की मानता है। तबाही चीख-चीखकर कहेगी मैं हूँ, मैं हूँ, मैं हूँ! वह पूछेगा गवाही कहाँ है? गवाही कुछ बोले तो हम सिपाही भेजें। गवाही रंग बदलती रहती है। सिपाही भी रंग बदलते हैं। अब तो आंदोलन भी रंग बदल रहे हैं। मंचों पर जो लोग दिखते हैं, उनके छिपे हुए प्रपंच भी दिखाई दे रहे हैं। नियम हैं, अधिनियम हैं, बिल हैं, अनुच्छेद हैं; लेकिन सबमें छेद हैं। कवि रमेश थानवी का एक शेर याद आ रहा है—टँगे फ्रेम में जड़े हुए हैं ब्रह्मचर्य के कड़े नियम, इसी फ्रेम के पीछे चिड़िया गर्भवती हो जाती है।"

जे-११६, सरिता विहार, मथुरा रोड,
नई दिल्ली-११००४४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

हिंदी व्यंग्य के पदचिह्न

● प्रेम जनमेजय

मानवीय व्यंग्य-चेतना उसके पूर्ण बौद्धिक विकास का शंखनाद है। आदि मानवीय मस्तिष्क ने जब पशुत्व से सभ्य, सुसंस्कृत, विवेकशील मस्तिष्क तक की यात्रा तय कर ली तो व्यंग्य की उपस्थिति संभव हुई। आदिमानव हँसना, रोना, क्रोध, प्रेम आदि जैसी अनेक सहज मानवीय भावनाओं को धीरे-धीरे परिवेशानुसार स्वाभाविक रूप से व्यक्त करने लगा; परंतु व्यंग्य उसके व्यवहार में तभी आया, जब उसकी विवेकयुक्त बौद्धिक चेतना का विकास हुआ। मानव सभ्यता की यात्रा के आरंभिक काल में हास्य मानव जीवन में प्रवेश कर चुका था, जबकि व्यंग्य ने बहुत बाद में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई। मानव जब अधिक बौद्धिक, चतुर, धूर्त और अत्यधिक संवदेनशील हुआ, तभी व्यंग्य की उर्वर भूमि तैयार हुई। व्यंग्य एक सायास अभिव्यक्ति है। अपने आदिकाल से मानव-मन को विसंगतियों पर हँसी आती थी, पर धीरे-धीरे विसंगतियाँ उसे उद्वेलित करने लगीं और उसके विवेकशील मस्तिष्क ने व्यंग्य को हथियार के रूप में प्रयोग किया। हास्य एक सहज स्वाभाविक मनोभावना है, जबकि व्यंग्य बौद्धिक प्रक्रिया का सायास प्रयास। हास्य में निश्छलता, मृदुलता, सहजता आदि अपेक्षित हैं, जबकि व्यंग्य अपने स्वभाव में आक्रामक, सायास एवं बौद्धिक आधार ग्रहण किए हुए होता है। व्यंग्य कृति की सबसे बड़ी विशिष्टता उसकी कथावस्तु है । इसका कथानक बिंबात्मक होता है। बिंब-प्रधान शृंखलायुक्त क्षेपकों का प्रयोग व्यंग्य को उपन्यास, कहानी और निबंध आदि से भिन्न करता है। इन रचनाओं में कथासूत्र अथवा निबंध-तत्त्व के स्थान पर बिंबों की संरचना, विसंगति चित्रण को मुख्य मानकर व्यंग्य रचना का सृजन करती है। कथानक में क्षेपकों का यह प्रयोग एक नए आयाम को सामने लाता है।

जन्म : १८ मार्च, १९४९ को इलाहाबाद में।

कृतित्व : अब तक सात व्यंग्य संग्रह, बाल साहित्य पर तीन पुस्तकें, नवसाक्षरों के लिए दो पुस्तकें, दो आलोचना पुस्तकें प्रकाशित।

'मधुवन सम्मान', हिंदी निधि तथा भारतीय विद्या संस्थान द्वारा विशिष्ट सम्मान, अवंतिका सहस्राब्दी सम्मान, हरिशंकर परसाई स्मृति पुरस्कार, हिंदी अकादमी द्वारा साहित्यकार सम्मान, इंडो-रशियन लिटरेरी क्लब सम्मान, प्रकाशवीर शास्त्री सम्मान, 'माध्यम' युवा रचनाकार अट्टहास सम्मान, युवा साहित्य मंडल सम्मान, युवा साहित्य मंडल विशिष्ट सम्मान जैसे सम्मानों से सम्मानित।

'व्यंग्य-यात्रा' का संपादन।

हिंदी साहित्य में अधिकांशतः व्यंग्य को हास्य के साथ जोड़कर देखने की प्रवृत्ति है। हास्य और व्यंग्य को देखने का यह एक बहुत ही सरलीकृत रूप है। दोनों का आधार विसंगति है, परंतु प्रभाव और प्रक्रिया भिन्न है। दोनों की विधागत आवश्यकताएँ एवं 'टूल' भिन्न हैं। संस्कृत साहित्यशास्त्र में वर्णित नौ रसों में हास्य भी एक रस है। यह मानवीय मन का सहज-स्वाभाविक भाव है। साहित्य में किसी भी रस अथवा मानवीय भाव पर आधारित विधा का अस्तित्व दृष्टिगत नहीं होता है, परंतु हास्य पाश्चात्य साहित्य में 'कामदी' के रूप में तथा भारतीय साहित्य में 'हास्य-व्यंग्य' के रूप में स्वतंत्र रूपेण विद्यमान है।

आधुनिक काल से पूर्व हिंदी साहित्य में व्यंग्य अपने संपूर्ण रूप में अभिव्यक्त न होकर प्रसंगवश ही आया है। रामचरितमानस में लक्ष्मण-परशुराम संवाद तथा अंगद-रावण संवाद और इसी प्रकार बिहारी के दोहों तथा भ्रमरगीत प्रसंग में व्यंग्य की स्थिति रचना में व्यंग्य के पुट जैसी है, एक स्वतंत्र व्यंग्य रचना की नहीं है। 'भ्रमरगीत' के प्रसंग में गोपियों का वाक्-चातुर्य ही अधिक है। कबीर के दोहे व्यंग्य का स्वतंत्र रूप से प्रयोग करते हैं। व्यंग्य का शुद्ध रूप भी कबीर के यहाँ ही मिलता है। कबीर व्यंग्य के साथ हास्य की चाशनी परोसने को विवश नहीं हैं।

व्यंग्य ने अपना स्वतंत्र रूप ग्रहण करने के लिए आधुनिक काल में गद्य का आश्रय लिया। पाश्चात्य से आई गद्य की विभिन्न विधाओं की तरह आधुनिक हिंदी व्यंग्य पाश्चात्य साहित्य शास्त्र पर आधारित है। संस्कृत साहित्य में व्यंग्य की चर्चा ध्वनि के ही रूप में है। व्यंग्य वह शक्ति है, जो उस अर्थ को अभिव्यक्त करती है। यह व्यंग्य का एकपक्षीय भाषिक गुण है। आधुनिक व्यंग्य में विसंगति चित्रण, आक्रोश, आलोचनात्मक दृष्टि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्धिकता, प्रहारात्मकता आदि तत्त्व व्यंग्य को मात्र ध्वनि नहीं रहने देते। आज व्यंग्य केवल वाच्य से अधिक रमणी नहीं है, उसका स्वतंत्र रूप है।

आधुनिक युग में व्यंग्य के तीन स्वरूप प्राप्त होते हैं—रचना में व्यंग्य, व्यंग्यात्मक टिप्पणियाँ एवं व्यंग्य रचना। व्यंग्य एक शैली नहीं है और न ही लेखन-पद्धति, अपितु एक साहित्यिक प्रक्रिया है तथा लेखन की व्यवस्था है और इस रूप में वह अन्य विधाओं से मिश्रित होकर भी अभिव्यक्त होती है।

व्यंग्य मूलत: सुशिक्षित मस्तिष्क के प्रयोजन की विधा है। इसके प्रयोग में बहुत ही सावधानी की आवश्यकता है। इसका लक्ष्य मात्र विसंगतियों का उद्घाटन करना ही नहीं है, अपितु उस पर प्रहार करना है। तलवार को लक्ष्यहीन हाथ में पकड़कर घुमाने से किसी का भी गला काटकर अराजक स्थिति पैदा कर सकता है तथा स्वयं की हत्या का कारण भी बन सकता है। निरुद्देश्य व्यंग्य दिशाहीन साहित्य की रचना करता है। निरंकुश लेखन, विशेषकर व्यंग्य बहुत ही खतरनाक है। किस पर व्यंग्य करना है के साथ-साथ यह जानना भी आवश्यक है कि किस पर व्यंग्य नहीं करना है। वंचितों पर व्यंग्य कतई नहीं करना चाहिए।

व्यंग्यकार पर अकसर आरोप लगाया जाता है कि वह जीवन को ऋणात्मक दृष्टिकोण के साथ देखता है। उसे जीवन में कुछ भी सुंदर नहीं दिखाई देता है। वह तो हर समय आक्रोश से भरा साँप की तरह फुफकारता चलता है। यह सच है कि उसकी दृष्टि सौंदर्य की वायवी दुनिया में नहीं विचरती है, वह तो एक चिकित्सक की तरह मेज पर पड़ी सुंदरी के सुंदर मुखड़े को नहीं, उसके शरीर के सड़े फोड़े को देखता है, जिससे मवाद बह रहा है। वह उस पफोड़े पर चीरा लगाकर, जिस घाव के ठीक होने पर वह पुन: सुंदरी हो जाएगी। उसकी दृष्टि जीवन को सुंदर बनाने के लिए असुंदर पर ही टिकती है। इंजन भाप से भरा होगा तभी वह चलेगा और साँप फुफकारेगा तो जीवन को जिंदा रख सकेगा। वह नैतिकता का पाठ नहीं पढ़ाता है, अपितु नैतिकता का पाठ पढ़ाने की आड़ में अनैतिकता का खेल खेलनेवालों के मुखौटे उतारता है। वह मानवीय सभ्यता में आ रही सड़ायँध को रोकने के लिए जुटा रहता है। व्यंग्य प्रघात-चिकित्सा में विश्वास करता है, न कि अपने ही समाज के एक अंग को विच्छिन्न कर देने में। व्यंग्यकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती यही है कि वह कैसे आलोचनात्मक तथा आक्रोशपूर्ण भाव को प्रघात-चिकित्सा में परिणत करे।

व्यंग्य लेखन अन्य विधाओं से भिन्न लेखकीय रचना-प्रक्रिया की माँग करता है। वह अपने रचनाकार को बेचैन करता है और अपने पाठक के लिए भी बेचैनी की परतों का निर्माण करता है। उसका एकमात्र लक्ष्य विसंगतियाँ होती हैं। व्यंग्य बदलते सामाजिक परिवेश में उत्पन्न विसंगतियों के विरुद्ध लड़ाई का एक सार्थक हथियार बन गया है। सामयिक परिवेश में अवसाद, मूल्यहीनता, एकाकीपन आदि की उत्पन्न स्थिति का सामना करने के लिए व्यंग्य एक उपयुक्त माध्यम है।

गद्य को कवियों की कसौटी माना जाता है। यदि गद्य कविता की कसौटी है तो व्यंग्य गद्य की कसौटी है। व्यंग्य का सही स्वरूप तो स्वतंत्रता के बाद ही उभरकर आया है। 'छायावाद' के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए जैसे छायावादी कवियों को स्वयं प्रयास करने पड़े, वैसे ही प्रयास व्यंग्य के स्वतंत्र रूप को स्थापित करने के लिए हिंदी के व्यंग्यकारों को करने पड़े।

हिंदी-साहित्य में व्यंग्य की एक दीर्घ परंपरा है। भारतेंदु से पूर्व हास्य-व्यंग्य की जितनी लंबी परंपरा रही हो, परंतु नाटक एवं निबंध के क्षेत्र में हास्य-व्यंग्य को प्रसार एवं व्यापक धरातल प्रदान करने तथा व्यंग्य के स्वतंत्र रूप को आधार प्रदान करने में इस युग के रचनाकारों का योगदान सराहनीय है। हिंदी नाटकों में हास्य एवं व्यंग्य को जो स्वरूप प्रथमत: प्राप्त होता है, वह भारतेंदु-युग में ही है। व्यंग्य की प्रमुख दृष्टि समाज और धर्म की कुरीतियाँ ही विशेष रूप से रही हैं। भारतेंदु से पूर्व भी लोक-व्यवहार में व्यंग्य का प्रयोग होता रहा है। व्यंग्य का यह रूप लिपिबद्ध नहीं हुआ है, परंतु परंपरा के रूप में वह स्थित है। व्यंग्य का जो स्वरूप प्राप्त होता है, वह श्रेष्ठ एवं आदर्श का भाव लिये हुए नहीं है। भारतेंदु युग के व्यंग्य का मुख्य आधार सामाजिक, नैतिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा मानसिक विकृतियाँ हैं। बाल-विवाह, धार्मिक पाखंड, अंधविश्वास, पाश्चात्य अंधानुकरण, बेरोजगारी एवं अंग्रेजी शासन आदि विषयों को लेकर इस युग के रचनाकारों ने जिन विकृतियों की चर्चा की है, वे हास्य नहीं, व्यंग्य का तीव्र विक्षोभ अभिव्यक्त करती हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारतेंदु, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुंद गुप्त ने हिंदी व्यंग्य को आरंभ किया। भारतेंदु के निबंधों में व्यंग्य-विनोद को पर्याप्त स्थान मिला है। भारतेंदु ने विषय के आधार पर रचना की भाषा का परिवर्तन किया है। बालकृष्ण भट्ट विषयों के चुनाव तथा शैली की दृष्टि से भारतेंदुयुगीन रचनाकारों से भिन्न हैं। इन्होंने आँख, नाक, कान, बातचीत आदि विषयों पर मनोरंजक एवं व्यंग्यात्मक रचनाओं का सृजन किया। प्रतापनारायण मिश्र ने हास्य और व्यंग्य का भरपूर प्रयोग किया है। इन्होंने भी भट्टजी की तरह छोटे-छोटे विषयों को अपनी रचनाओं का विषय बनाया। दाँत, भौं, आँख, बात, रिश्वत, होली आदि विषयों के अतिरिक्त देशभक्ति, स्वदेशी आदि विषयों पर राजनीतिक-सामाजिक व्यंग्य किए हैं।

इसके अतिरिक्त राधाचरण गोस्वामी, काशीनाथ खत्री, गोविंदनारायण मिश्र, भीमसेन शर्मा, किशोरीलाल गोस्वामी तथा तोताराम ने भी हास्य-व्यंग्य रचनाओं का सृजन किया। बालमुकुंद गुप्त की रचनाओं ने व्यंग्य, कटाक्ष, विनोद तथा हास्य के माध्यम से एक भिन्न शैली प्रस्तुत की। इनकी हास्य-व्यंग्य दृष्टि भारतेंदुयुगीन रचनाकारों से भिन्न थी। शिव शर्मा के नाम से लिखी गई व्यंग्य रचनाओं में प्रहारात्मकता पर्याप्त प्रखर है। 'एक दुराशा' में हास्य-व्यंग्य का उत्कृष्ट प्रयोग है। इसी समय विजयानंद दुबे के नाम से विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की 'दुबेजी की चिट्ठी' के रूप में सार्थक व्यंग्यात्मक उक्तियाँ प्रभावपूर्ण हैं। निराला ने 'मतवाला' में व्यंग्य-विनोदपूर्ण लेख लिखे। इन लेखों में व्यक्तित्व तत्त्व का कहीं-कहीं समावेश हुआ है। हरिशंकर शर्मा और बेढब बनारसी की हास्य-व्यंग्य रचनाएँ भी इसी युग में प्रकाश में आईं।

हिंदी साहित्य में गद्य-व्यंग्य की नींव को सुदृढ़ करने में प्रेमचंद,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंद्रधर शर्मा गुलेरी, अन्नपूर्णानंद वर्मा, जी.पी. श्रीवास्तव, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, नागार्जुन, हरिशंकर शर्मा, अनंतगोपाल शेवड़े, राधाकृष्ण, अमृतलाल नागर, प्रभाकर माचवे, सारचंद, फणीश्वरनाथ रेणु, केशवचंद्र वर्मा आदि ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। प्रेमचंद की कहानियों में सामाजिक विसंगतियों पर प्रहार की भी मुद्रा दिखाई देती है। पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' में सीधे-सीधे प्रहार करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। राधाकृष्ण १९३० से 'घोष बोस बनर्जी' के नाम से हास्य-व्यंग्य में सक्रिय रहे। नागरजी ने महत्त्वपूर्ण उपन्यासों के अतिरिक्त परिहास-बोध की रचनाओं का भी सृजन किया है। इन्होंने विभिन्न वर्गों के तौर-तरीकों और भाषा आदि की भंगिमाओं को अपनी रचनाओं का आधार बनाया है। गोपालप्रसाद व्यास की रचनाओं में अधिकांशतः हास्य है, परंतु जहाँ वह हास्य का मोह छोड़ते हैं, प्रखर व्यंग्यात्मक प्रहार करते हैं। इनका गद्य इनके पद्य से अधिक गंभीर और प्रहारात्मक है। संसारचंद्र ने व्यंग्य-आलोचना के क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण काम किया है।

भारत का स्वतंत्र होना एक महत्त्वपूर्ण घटना है, जिसका व्यापक प्रभाव पड़ा। यह प्रभाव साहित्य पर पड़ना भी स्वाभाविक था, इससे हिंदी साहित्य भी अछूता नहीं रहा। स्वतंत्रता-प्राप्ति से आजतक की परिस्थितियों को एक सूत्र-वाक्य में व्यक्त किया जा सकता है—यह लालटेन से कंप्यूटर तक की विविधमुखी यात्रा है। भारत की आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक आदि परिस्थितियों को इस आलोक में देखा जा सकता है। इस काल ने युद्ध देखे हैं तो शांति भी देखी है। राशन, मिट्टी के तेल, डालडा आदि की रात-रात भर जगाने वाली पंक्तियाँ देखी हैं तो भरपूर बाजार में एक के साथ एक मुफ्त पाया है। राष्ट्र का खाली होता कोष देखा है तो अपार धन-संपदा का दर्शन भी किया है।

पिछले दस वर्षों में पूँजी के बढ़ते प्रभाव, बाजारवाद, उपभोक्तावाद एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों की 'संस्कृति' के भारतीय परिवेश में चमकदार प्रवेश ने हमारी मौलिकता का हनन किया है। अचानक दूसरों का कबाड़ हमारी सुंदरता और हमारी सुंदरता दूसरों का कबाड़ बन रही है। सौंदर्यीकरण के नाम पर, चाहे वो भगवान् का हो या शहर का, मूल समस्याओं को दरकिनार किया जा रहा है। आज का समय विसंगतियों से भरा हुआ है और चकाचौंध में सामाजिक सरोकार तथा मानवीय मूल्य धुँधलाते जा रहे हैं। अस्मिता पर लुके-छिपे हमले हो रहे हैं। ये सब ईमानदार मस्तिष्क पर निरंतर अपने प्रभाव छोड़ते रहते हैं।

हम सब जानते हैं कि हमारा अतीत चाहे सोने की चिड़िया जैसा कितना स्वर्णिम रहा हो, अनेक विसंगतियों से भरा था। हम जातिवाद, क्षेत्रीयतावाद, अस्पृश्यता जैसे कितने ही अँधेरों से घिरे रहे हैं। आज भी भ्रूण हत्या जैसे कलंक से हम बच नहीं पाए हैं। हम दिखावे में आधुनिक हो गए हैं, पर हमारी सोच आधुनिक नहीं हो पा रही है। प्रतियोगिता के इस परिवेश में नया परोसकर जैसे-तैसे आगे बढ़ने की लालसा ने लक्ष्य को महत्त्वपूर्ण कर दिया है और माध्यम को गौण। यही साहित्यकार की भूमिका सामने आती है। बहुत आवश्यकता है सामाजिक एवं आर्थिक विसंगतियों को पहचानने तथा उन पर दिशायुक्त प्रहार करने की।

मुझे लगता है कि जिस तरह से पिछले डेढ़ दशक में पूँजी के प्रभाव भारतीय समाज में विसंगतियाँ बढ़ी हैं तथा वर्तमान व्यवस्था आ हताश-निराश एवं अवसाद में अकेला महसूस करने को विवश कर है, ऐसे में इन सबसे लड़ने का एकमात्र हथियार व्यंग्य ही है और सं इसी कारण बदलते हुए सामाजिक परिवेश में जब वरिष्ठ आलो नित्यानंद तिवारी 'राग दरबारी' की पुनः आलोचना करते हैं तो स्वी करते हैं—''लगभग तीस वर्ष पहले मैंने 'राग दरबारी' का एक विश्ले किया था। मेरे विश्लेषण का तौर-तरीका यथार्थवादी ढाँचे के भीतर उसमें भाषा और वास्तविकता के बीच संबंध होता है। व्यंग्य वास्तवि के विद्रूप को उभारनेवाली एक शैलीगत विशेषता है। तब मैंने पाया थ 'व्यंग्य' का अतिरंजित उपयोग इस उपन्यास को वास्तविकता से अ एक स्वाद-रुचि देता है। लेकिन अब मैं 'राग दरबारी' के साक्ष्य प कह सकता हूँ कि यह जो व्यंग्य है, वह विद्रूप से अधिक 'रियलि और 'वर्चुअल रियलिटी' का फर्क सामने ले आता है...इस तरह के कांस्ट्रक्ट्स हमें दिखाई पड़ते हैं, मैं व्यंग्य या अतिरंजना को यथार्थ उ का एक 'टूल' नहीं मानता हूँ, बल्कि यह एक ऐसा मॉडल है, जो पू पूरे दौर को और आज तक के इस दौर को परिभाषित कर सकता है।

व्यंग्य बदलते सामाजिक परिवेश में उत्पन्न विसंगतियों के वि लड़ाई का एक सार्थक हथियार बन गया है। सामयिक परिवेश में अवस मूल्यहीनता, एकाकीपन आदि की उत्पन्न स्थिति का सामना करने के व्यंग्य एक उपयुक्त माध्यम है। यहाँ मेरे वक्तव्य से यह आशय लिया जाए कि लालटेन से आरंभ हुई अपनी जिंदगी के कारण मैं कंप् आदि जैसी नई तकनीकों का विरोध करनेवाला कोई पोंगा पंडित हूँ सामाजिक मानवीय मूल्यों को बचाने के लिए पिछड़ेपन से भरपूर की वकालत कर रहा हूँ। हम सब जानते हैं कि हमारा अतीत चाहे की चिड़िया जैसा कितना स्वर्णिम रहा हो, अनेक विसंगतियों से भरा हम जातिवाद, क्षेत्रीयतावा अस्पृश्यता जैसे कितने अँधेरों से घिरे रहे हैं। आज भ्रूण हत्या जैसे कलंक से बच नहीं पाए हैं। हम दि में आधुनिक हो गए हैं, हमारी सोच आधुनिक नहीं पा रही है। प्रतियोगिता के परिवेश में नया परोसकर जै तैसे आगे बढ़ने की लालसा लक्ष्य को महत्त्वपूर्ण कर दि है और माध्यम को गौण। साहित्यकार की भूमिका स आती है। बहुत आवश्यकता है सामाजिक एवं आ विसंगतियों को पहचानने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन पर दिशायुक्त प्रहार करने की।

स्वतंत्रता के पश्चात् हिंदी गद्य व्यंग्य निरंतर ऊँचाइयों की ओर बढ़ा है, जबकि हास्य-व्यंग्य कविता की स्थिति इसके विपरीत है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय, धूमिल आदि ने कविता में व्यंग्य की जो प्रखरता प्रदान की थी, वह धीरे-धीरे तिरोहित होती गई तथा व्यंग्य कविता हाशिए पर आ गई। आज स्थिति यह है कि मंगलेश डबराल, लीलाधर मंडलोई, दिविक रमेश, विष्णु नागर, कुबेर दत्त, राजेश जोशी, मनमोहन जैसे कवियों की रचनाओं में व्यंग्य का स्वर सुनाई देता है, परंतु जैसे गद्य में परसाई या श्रीलाल शुक्ल ने गद्य व्यंग्य को स्थापित किया, वैसा कविता में देखने को नहीं मिलता है। जबकि व्यंग्य लेखन की परिस्थितियाँ कविता के लिए भी वही हैं, जो गद्य के लिए हैं। इसका मूल कारण व्यावसायिक कविता मंचों द्वारा तैयार की गई तथाकथित हास्य-व्यंग्य कविता का भ्रष्ट स्वरूप है, जो कविता को गंभीर कर्म मानकर रचना करनेवाले रचनाकारों को इससे विमुख किए हुए है। मंच गलत माध्यम नहीं है, यह जनसाधारण से सीधे जुड़ने का एक सशक्त माध्यम है। लगभग वैसे ही जैसे दूरदर्शन एक सशक्त माध्यम है। सवाल यह उठता है कि इन माध्यमों का प्रयोग कौन कर रहा है और किस नीयत से कर रहा है।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी व्यंग्य की चार पीढ़ियाँ रचनाकर्म में संलग्न दृष्टिगत होती हैं। हिंदी व्यंग्य की पहली पीढ़ी के हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल, रवींद्रनाथ त्यागी और मनोहरश्याम जोशी ने हिंदी व्यंग्य साहित्य को स्वरूप तथा सशक्त आधार प्रदान करने की महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस पीढ़ी के अन्य अनेक प्रमुख व्यंग्यकारों—शंकर पुणतांबेकर, शांति मेहरोत्रा, केशवचंद्र वर्मा, सुदर्शन मजीठिया, कृष्ण चराटे, लतीफ घोंघी, के.पी. सक्सेना, श्यामसुंदर घोष आदि ने हिंदी व्यंग्य साहित्य को रचनात्मकता प्रदान की। वस्तुतः इससे पूर्व रचना में व्यंग्य के छींटे अथवा हास्य के उपफल के रूप में आता था। व्यंग्य का जो स्वरूप सैटायर के रूप में पश्चिमी साहित्यशास्त्र ने विकसित किया, उसका भारतीय रूप स्वतंत्रता के पश्चात् मिलता है। यह पहली बार हुआ कि व्यंग्य का सृजन करनेवालों की व्यंग्यकार के रूप में पहली बार भिन्न पहचान बनी। इस अलग पहचान को बनाने के लिए इस पीढ़ी के रचनाकारों को पर्याप्त संघर्ष करना पड़ा।

यह हरिशंकर परसाई की चेतना संपन्न दृष्टि का परिणाम था कि हिंदी गद्य में सार्थक व्यंग्य लेखन का आरंभ हुआ और व्यंग्य की स्वतंत्र सत्ता स्थापित होने की दिशा में व्यंग्य रचनाओं का सशक्त आधार मिलना आरंभ हुआ। हरिशंकर परसाई के लेखन ने एक पूरे युग को प्रभावित किया है। इस दृष्टि से व्यंग्य साहित्य के इतिहास को परसाई पूर्व युग, परसाई युग तथा परसाई उत्तर युग के रूप में विभाजित किया जा सकता है; परंतु इस विभाजन का खतरा यह है कि इससे उनके समकालीन शरद जोशी और श्रीलाल शुक्ल का महत्त्व कमतर लगने लगता है।

स्वतंत्रता के पश्चात् की इस पीढ़ी में ऐसे भी रचनाकार हैं, जिनका साहित्यिक व्यक्तित्व व्यंग्यकार का नहीं है। इन साहित्यकारों ने कविता, कहानी एवं उपन्यास के साथ-साथ व्यंग्य रचनाएँ भी लिखीं। इन साहित्यकारों की व्यंग्य रचनाओं ने हिंदी-व्यंग्य की स्थापना में 'उत्प्रेरक' की भूमिका निभाई है। बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न इन साहित्यकारों में प्रमुख हैं—भारतभूषण अग्रवाल, अमृतराय, धर्मवीर भारती, विद्यानिवास मिश्र, नामवर सिंह, कमलेश्वर, रघुवीर सहाय, रामनारायण उपाध्याय, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, रमेश बक्षी, महीप सिंह, नरेंद्र मोहन आदि।

व्यंग्य की दूसरी पीढ़ी में नरेंद्र कोहली, लक्ष्मीकांत वैष्णव, अशोक शुक्ल, प्रदीप पंत, मधुसूदन पाटिल, अजातशत्रु, गोपाल चतुर्वेदी, हरि जोशी, शेरजंग गर्ग आदि आते हैं।

नरेंद्र कोहली ने कथा और शिल्प दोनों धरातलों पर व्यंग्य के प्रयोग किए हैं। वे व्यंग्य के प्रखर प्रहारक हैं। हिंदी व्यंग्य साहित्य में एब्सर्ड उपन्यासों के वे एकमात्र सर्जक हैं। पाँच एब्सर्ड उपन्यास प्रयोग मात्र ही रह गए। नरेंद्र कोहली ने स्तंभ-लेखन भी किया। गोपाल चतुर्वेदी के प्रहारात्मक संदर्भ एक-दूसरे से जुड़े होते हैं। गोपाल चतुर्वेदी अपनी चिर-परिचित शैली में पहले तो भूमिका स्वरूप विसंगतियों का चित्रण करते हैं, उन पर व्यंग्यात्मक टिप्पणियाँ करते हुए अपने विषय को स्थापित करते हैं। गोपाल चतुर्वेदी ने स्तंभ लेखन भी किया है, पर इस दौरान उन्होंने अपनी रचनात्मकता को टिप्पणियों तक सीमित नहीं किया है, अपितु उसे रचना का स्वरूप प्रदान किया है। लक्ष्मीकांत वैष्णव ने नुक्कड़ नाटकों के द्वारा शिक्षा जगत् पर सार्थक प्रहार किए हैं। उनकी अकस्मात् मृत्यु ने उनसे प्राप्त होनेवाली अनेक सशक्त व्यंग्य रचनाओं से हिंदी व्यंग्य साहित्य को वंचित किया। अशोक शुक्ल के दो व्यंग्य उपन्यास 'हड़ताल हरिकथा' एवं 'प्रोफेसर पुराण' विशेष रूप से चर्चित रहे। ये दोनों भारतीय शिक्षा पद्धति पर सार्थक प्रहार करते हैं। अशोक शुक्ल ने हिंदी व्यंग्य साहित्य में अत्यधिक सक्रियता के साथ प्रवेश किया था, परंतु बाद में उनका लेखन शिथिल हो गया। प्रदीप पंत मूलतः कथाकार हैं और इनका यह स्वरूप व्यंग्य रचनाओं के सृजन में भी दृष्टिगत होता है। प्रदीप पंत के व्यंग्य कथा का आश्रय लेकर विसंगतियों पर चोट करते हैं। इन्होंने व्यंग्य के क्षेत्र में शिल्प के धरातल पर अनेक प्रयोग किए तथा अनेक व्यंग्य उपन्यासों का सृजन किया है। व्यंग्य आलोचना के क्षेत्र में शेरजंग गर्ग का सराहनीय योगदान है। अजातशत्रु के व्यंग्य दार्शनिक सूत्र से जुड़े दिखाई देते हैं। इन्होंने जिस परिमाण में लिखा, उस परिमाण में उनके व्यंग्य-संकलन प्रकाशित नहीं हुए। हरि जोशी व्यंग्य की संप्रेषणीयता के लिए हास्य को आवश्यक मानते दिखाई देते हैं। मधुसूदन पाटिल ने हिंदी व्यंग्य को सार्थक दिशा देने के लिए 'व्यंग्य विविधा' पत्रिका का प्रकाशन एवं संपादन किया तथा समाजोन्मुखी व्यंग्य लिखे। इन्होंने व्यंग्य आलोचना को भी सार्थक दिशा देने का प्रयत्न किया है।

इस पीढ़ी में ऐसे भी रचनाकार हैं, जिनका साहित्यिक व्यक्तित्व व्यंग्यकार का नहीं है। इन साहित्यकारों ने कविता, कहानी एवं उपन्यास के साथ-साथ व्यंग्य रचनाएँ भी लिखीं। बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न इन साहित्यकारों में प्रमुख हैं—सिद्धार्थ कुमार, महावीर चाचान, रमाशंकर श्रीवास्तव, रमेश उपाध्याय, मनोहर पुरी, सुरेश सेठ आदि।

इसके पश्चात् व्यंग्य की तीसरी पीढ़ी आती है, जो स्वतंत्रता के बाद पैदा हुई है और हिंदी व्यंग्य के क्षेत्र में पूरी तरह से सक्रिय है। इस पीढ़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने अपनी आँख स्वतंत्र भारत में खोली हैं और लालटेन से कंप्यूटर तक के समीकरण को जानती है। पिछले दशक से जिस प्रकार भारतीय समाज का सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक चेहरा बदला है और उसकी विसंगतियाँ बढ़ी हैं, उसे इस पीढ़ी के व्यंग्यकारों ने बखूबी लक्षित किया है तथा उस पर सार्थक प्रहार किए हैं। वर्तमान हिंदी व्यंग्य की यह सर्वाधिक सक्रिय पीढ़ी है। इस पीढ़ी में अवतार सिंह, ज्ञान चतुर्वेदी, प्रेम जनमेजय, विष्णु नागर, सूर्यबाला, सुबोध कुमार श्रीवास्तव, हरीश नवल, अलका पाठक, सुरेंद्र वर्मा, पूरन सरमा, शिव शर्मा, अशोक चक्रधर, दामोदरदत्त दीक्षित, यज्ञ शर्मा, ईश्वर शर्मा, संतोष खरे, विनोदशंकर शुक्ल, जवाहर चौधरी, प्रकाश पुरोहित, वीरेंद्र जैन, श्रीकांत चौधरी, रमेश सैनी, सुरेश कांत, मनोहरलाल, देवेंद्र इंद्रेश, अरविंद तिवारी, महावीर अग्रवाल, गौतम सान्याल आदि प्रमुख हैं।

अवतार सिंह अच्छा लिख रहे थे, परंतु उनकी आकस्मिक मृत्यु ने हिंदी व्यंग्य को अच्छी व्यंग्य रचनाओं से वंचित कर दिया। सुबोधकुमार श्रीवास्तव की शुरुआत बहुत अच्छी हुई थी, उनके लेखन में सार्थक व्यंग्य की उपस्थिति है, परंतु उस गति को बनाए नहीं रख सके। प्रेम जनमेजय सार्थक विचारात्मक दिशापूर्ण व्यंग्यात्मक प्रहार में विश्वास रखते हैं। इनकी व्यंग्य रचनाएँ हास्य की बैसाखी का सहारा नहीं लेतीं। इन्होंने सामायिक जीवन की आर्थिक विसंगतियों पर सार्थक प्रहार किए हैं। प्रेम जनमेजय का नाटक 'सीता अपहरण केस' विशेष चर्चित हुआ है। ज्ञान चतुर्वेदी गंभीर व्यंग्य लेखन में विश्वास रखते हैं। उनका व्यंग्य उपन्यास 'नरक यात्रा', 'राग दरबारी' के बाद आए खालीपन को भरता है। इनका सद्यः प्रकाशित उपन्यास 'मरीचिका' व्यंग्य में पौराणिक कथ्य के सावधानीपूर्वक प्रयोग का मापदंड उपस्थित रहता है। ज्ञान चतुर्वेदी ने स्तंभ लेखन के नए मानदंड उपस्थित किए हैं। विष्णु नागर के पास व्यंग्य की विचारात्मक सार्थक दृष्टि है। वह हर किसी पर व्यंग्य करने में विश्वास नहीं करते हैं। सूर्यबाला ने आस-पास के परिवेश की विसंगतियों को व्यंग्य का आधार बनाया है। हरीश नवल व्यंग्य में हास्य के मिश्रण के प्रयोग का स्वागत करते हैं। इनके व्यंग्य कथा का आधार लेकर चलते हैं। सुरेशकांत के व्यंग्य की प्रखर भाषा है। इनका व्यंग्य उपन्यास 'ब से बैंक' विशेष ... हुआ। बालेंदु शेखर तिवारी का व्यंग्य प्रखरता में विश्वास करता है। ... 'अभीक' पत्रिका के संपादन द्वारा व्यंग्य आलोचना को दिशा देने का ... किया है। व्यंग्य आलोचना के कर्म में जुटे हुए हैं। हिंदी व्यंग्य साहि... महिला व्यंग्यकारों का अभाव सा है। यदि सूर्यबाला, अलका पाठक ... लेखिकाएँ व्यंग्य नहीं लिखतीं तो व्यंग्य लेखन को पुरुषोचित लेखन ... से आलोचकों को कोई नहीं रोक सकता था तथा ऐसे में हिंदी ... साहित्य नारी-विमर्श विहीन होने का अभिशाप झेलता। सूर्यबाला ... कथा लेखिका हैं। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में व्यंग्य कथ... आधार ग्रहण करता है। अलका पाठक मूलतः व्यंग्य लेखिका हैं। ... व्यंग्य भी कथा का आधार लेकर चलते हैं तथा पात्रों और चरित्रों के मा... से अपनी बात कहते हैं। यज्ञ शर्मा ने निरंतर-स्तंभ लेखन किया है ... शरद जोशी की परंपरा के रचनाकार हैं। अशोक चक्रधर मंच के हा... व्यंग्य कवि हैं और इस कारण उनकी रचनाओं में दोनों का मिश्रण दृ... होता है, पर ये उचित मिश्रण है। इधर उन्होंने विभिन्न समाचार-प... स्तंभ लेखन के माध्यम से व्यंग्य गद्य लेखन आरंभ किया है। ईश्वर ... ने लतीफ घोंघी के साथ मिलकर व्यंग्य के अनेक शिल्पगत प्रयोग कि...

हिंदी व्यंग्य की चौथी पीढ़ी युवा सोच के साथ व्यंग्य रचनाओं ... सृजन कर रही है। अधिकां... यह पीढ़ी स्तंभ लेखन ... मोहजाल में फँसी हुई है ... अखबारी व्यंग्यात्मक टिप्प... को ही व्यंग्य रचना होने ... भ्रम पाले हुए है। इसके बाव... इस पीढ़ी में कुछ व्यंग्य... हैं, जिन्होंने हिंदी व्यं... साहित्य को अपनी रचनाओं ... समृद्ध किया है। इसमें एक ... नाम यशवंत व्यास का ... यशवंत व्यास ने 'चिंता... 'कामरेड गोडसे' जैसे व्यं... उपन्यासों के माध्यम से ... नया शिल्प दिया है। गि... पंकज सार्थक और गंभीर व्यं... लेखन में विश्वास करते ... 'माफिया' और 'पालीवुड ... अप्सरा' इनके चर्चित व्यं... उपन्यास हैं। इस पीढ़ी ... विनोद साव का व्यंग्य उपन्... 'चुनाव' सामयिक राजनीति... विसंगतियों को साक्षात् क...

> **रामावतार चेतन द्वारा संपादित 'रंग चकल्लस' अभी भी प्रकाशित हो रही है, पर उसमें वो गरिमा और सोच नहीं है, जो रामावतार चेतन के समय में थी। 'व्यंग्यम', 'व्यंग्य विविध', 'अभीक', 'व्यंग्य शती' जैसी पत्रिकाएँ निकलीं और अपनी उपस्थिति दर्ज करवाकर बंद हो गईं। हिंदी व्यंग्य के समकालीन परिदृश्य में प्रेम जनमेजय द्वारा संपादित 'व्यंग्य यात्रा' एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। व्यंग्य को गंभीर स्वरूप प्रदान करने तथा व्यंग्य आलोचना को एक सार्थक दिशा देने में इस पत्रिका का रेखांकित योगदान है। यह पहली बार हुआ है कि व्यंग्य के विभिन्न मुद्दों पर बहस हो रही है तथा अन्य भारतीय भाषाओं के व्यंग्य की चर्चा भी हो रही है। इसके अतिरिक्त 'व्यंग्य तरंग', 'अट्टहास', 'नई गुदगुदी', 'रंग चकल्लस', 'कार्टून वॉच' जैसी हिंदी हास्य-व्यंग्य को समर्पित पत्रिकाएँ हैं। अनेक व्यंग्य संकलनों के संपादन के माध्यम से भी विपुल व्यंग्य साहित्य पाठकों के समक्ष आया है।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इस पीढ़ी के सुभाष चंदर में व्यंग्य आलोचना की प्रतिभा है और वैसी ही प्रतिभा अजय अनुरागी में है। सुभाष चंदर गंभीर व्यंग्य के समर्थक हैं और उनकी बहुत सी ऐसी रचनाएँ हैं, जो हास्य विहीन हैं। इसके अतिरिक्त आलोक पुराणिक, शरद उपाध्याय, अनुराग वाजपेयी, अतुल चतुर्वेदी, श्रवण कुमार उर्मलिया, रामविलास जांगिड़ आदि प्रमुख हैं।

हिंदी में व्यंग्य को स्थापित करने की दिशा में 'धर्मयुग' के बैठे ठाले तथा 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' के ताल-बेताल स्तंभों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इन स्तंभों में प्रकाशित होकर उस समय के अनेक युवा रचनाकार प्रकाश में आए। 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिंदुस्तान', 'सारिका' जैसी पत्रिकाओं के अतिरिक्त नवभारत टाइम्स में शरद जोशी का स्तंभ 'प्रतिदिन' तथा 'काँटे की बात' के अंतर्गत अनेक रचनाकारों के व्यंग्य प्रकाशित हुए। आजकल तो लगभग सभी समाचार-पत्र अपने संपादकीय पृष्ठ पर व्यंग्य का स्तंभ देते हैं। 'इंडिया टुडे', 'नया ज्ञानोदय', 'साहित्य अमृत' जैसी पत्रिकाएँ भी निरंतर व्यंग्य का स्तंभ प्रकाशित कर रही हैं। इसके अतिरिक्त हास्य-व्यंग्य को समर्पित पत्रिकाएँ भी हैं। रामावतार चेतन द्वारा संपादित 'रंग चकल्लस' अभी भी प्रकाशित हो रही है, पर उसमें वो गरिमा और सोच नहीं है, जो रामावतार चेतन के समय में थी। 'व्यंग्यम', 'व्यंग्य विविध', 'अभीक', 'व्यंग्य शती' जैसी पत्रिकाएँ निकलीं और अपनी उपस्थिति दर्ज करवाकर बंद हो गईं। हिंदी व्यंग्य के समकालीन परिदृश्य में प्रेम जनमेजय द्वारा संपादित 'व्यंग्य यात्रा' एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। व्यंग्य को गंभीर स्वरूप प्रदान करने तथा व्यंग्य आलोचना को एक सार्थक दिशा देने में इस पत्रिका का रेखांकित योगदान है। यह पहली बार हुआ है कि व्यंग्य के विभिन्न मुद्दों पर बहस हो रही है तथा अन्य भारतीय भाषाओं के व्यंग्य की चर्चा भी हो रही है। इसके अतिरिक्त 'व्यंग्य तरंग', 'अट्टहास', 'नई गुदगुदी', 'रंग चकल्लस', 'कार्टून वॉच' जैसी हिंदी हास्य-व्यंग्य को समर्पित पत्रिकाएँ हैं। अनेक व्यंग्य संकलनों के संपादन के माध्यम से भी विपुल व्यंग्य साहित्य पाठकों के समक्ष आया है। इनमें नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित एवं श्रीलाल शुक्ल तथा प्रेम जनमेजय द्वारा संपादित 'हिंदी हास्य-व्यंग्य' संकलन बहुत चर्चित है। कन्हैयालाल नंदन, प्रेम जनमेजय, सुभाष चंदर, गिरिराजशरण अग्रवाल, विजय अग्रवाल द्वारा संपादित संकलन चर्चा में रहे हैं।

आजकल व्यंग्य लेखन फैशन में है और जो वस्तु फैशन में होती है, उसको चलने दिया जाता है और संत लोग सार-सार गहि के थोथा उड़ाते रहते हैं। जब किसी वस्तु की मात्रा में वृद्धि होती है तो उसकी गुणवत्ता में गिरावट आना स्वाभाविक है और उपभोक्तावादी समाज में वही टिकता है, जो गुणवत्ता का ध्यान रखता है। आज हिंदी व्यंग्य का सबसे दुर्बल पक्ष उसकी आलोचना ही है। व्यंग्य का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व आलोचना है । व्यंग्य को जीवन की आलोचना भी कहा गया है, परंतु जीवन की विसंगतियों की आलोचना करनेवाली इस साहित्यिक विधा के साथ यह विसंगति घटित हुई कि उसका आलोचना पक्ष बहुत दुर्बल रह गया। हिंदी व्यंग्य साहित्य में जितने प्रखर रचनाकार आए, उतने आलोचक नहीं आए।

व्यंग्य का अतीत बहुत ही सशक्त रहा है और वर्तमान प्रगतिशील है। हर युग का कूड़ा छनता है। परसाई, जोशी, त्यागी और शुक्ल के समय और भी व्यंग्यकार लिख रहे थे, पर उनकी चर्चा अधिक नहीं होती है। कुछ लोगों को समय छाँटता है और कुछ को सांप्रदायिक आलोचक भी छाँटते हैं। आज पूँजीवाद ने सभी देशी-विदेशी द्वार खोले हुए हैं। हमने भी अपने भवन के सभी द्वार खोल दिए हैं। राजनीति विसंगतियों पर किए जा रहे व्यंग्य अभिधा की बू देने लगे हैं। आवश्यकता है आज के बदलते हुए सामाजिक परिवेश की विसंगतियों के दूरगामी प्रभाव को सचेत होकर देखा जाए और उन पर सार्थक आक्रमण किए जाएँ।

सा अ

७३, साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-३ पश्चिम विहार
नई दिल्ली-११००६३

सिर पर बाल

एक बार लोकसभा में चीन द्वारा दबाए गए भारत के निर्जन भू-भाग के विषय में चर्चा हो रही थी। अचानक नेहरूजी के मुख से निकल गया, "वह क्षेत्र हमारे किसी काम का नहीं है। वहाँ घास का एक तिनका भी पैदा नहीं होता, उसके लिए सेना भेजकर खतरा मोल लेना उचित नहीं है।"

अचानक प्रखर सदस्य तथा कांग्रेसी नेता श्री महावीर त्यागी खड़े हुए तथा अपने सिर की टोपी उतारकर बोले, "आदरणीय प्रधानमंत्रीजी, मेरे सिर पर एक भी बाल नहीं है तो क्या मैं इसे..."। उनका अधूरा वाक्य सुनते ही नेहरूजी व अन्य सदस्यों की हँसी छूट पड़ी।

सा अ

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल
बीचपट्टी, पिलखुवा
गाजियाबाद (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

सुरक्षा की चिंता

● नरेंद्र कोहली

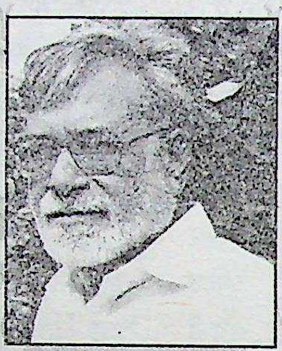

जन्म : ६ जनवरी, १९४० को स्यालकोट, पंजाब (अब पाकिस्तान) में।

कृतित्व : उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार तथा व्यंग्यकार—ये सब होते हुए भी वे अपने समकालीन साहित्यकारों से पर्याप्त भिन्न हैं। उन्होंने प्रख्यात कथाएँ लिखी हैं; किंतु वे सर्वथा मौलिक हैं। वे आधुनिक हैं; किंतु पश्चिम का अनुकरण नहीं करते। चौदह उपन्यास, आठ कहानी संग्रह, सात नाटक, बारह व्यंग्य संग्रह, चार निबंध संग्रह, तीन संस्मरण पुस्तकों सहित विपुल लेखन। 'शलाका सम्मान' सहित अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों एवं पुरस्कारों से सम्मानित-पुरस्कृत।

उत्तर प्रदेश में एक स्थान है लखीमपुर खीरी। वहीं कहीं एक गाँव के थाने के निकट खेतों में या जंगल में चौदह वर्षों की एक किशोरी अपने पशुओं को चरा रही थी। उसका नाम शायद सोनम था, वैसे नाम से फर्क क्या पड़ता है। किशोरी तो किशोरी ही रहेगी। नाम बदल जाने से किशोरी प्रौढ़ा तो बन नहीं जाएगी और प्रौढ़ा होने का अर्थ यह तो नहीं है कि वह लंपटों से सुरक्षित हो जाएगी।

वन हो या खेत, उससे पशु को कोई अंतर नहीं पड़ता। उसे तो चरना ही है, चरेगा। गाँव कौन सा था, इससे भी क्या फर्क पड़ता है। कोई भी हो, घटनाएँ तो एक जैसी ही घटेंगी। समय क्या था, इससे भी कोई अंतर नहीं पड़ता; पहले जो कुछ केवल रात के अँधेरे में घटित होता था, अब वह दिन के उजाले में भी घटित हो जाता है। उसे सूर्य देखे या चंद्रमा, घटना तो वैसी ही घटेगी।

थाने में बैठे दारोगाजी ने देखा कि चौदह वर्ष की एक किशोरी थाने की दीवार के निकट खेत में खड़ी थी। वह इतनी अकेली थी कि उसे कोई भी खेत में घसीट सकता था। घसीटी तो वह थाने में भी जा सकती थी। बस दिशा का अंतर था। मेंड़ पर से घसीटी जाती तो खेत में चली जाती; दीवार पर से घसीटी जाती तो थाने में आ जाती। दारोगाजी को लगा कि वह अवयस्क, नासमझ किशोरी ऐसे अकेली खड़ी सुरक्षित नहीं है। जाने वह क्यों और कैसे स्वयं को सुरक्षित मान रही थी। वह अपने खेत में खड़ी थी, इसलिए सुरक्षित थी। अपने गाँव से लगे जंगल में खड़ी थी, इसलिए स्वयं को सुरक्षित मान रही थी या फिर थाने की दीवार से लगी खड़ी थी, इसलिए स्वयं को सुरक्षित मान रही थी; क्योंकि थाना तो होता ही लोगों की सुरक्षा के लिए है।

किंतु दारोगाजी की चिंता थी कि जो कुछ भी हो, वह लड़की घसीटी जा सकती थी; और जो कोई भी उसे घसीटेगा, वह उसकी रक्षा थोड़ी करेगा। लड़की संकट में थी। दारोगाजी किसी को संकट में नहीं देख सकते थे; और वह भी विशेष रूप से कुँवारी, नासमझ, असुरक्षित किशोरी को। उसे समझदार बनाने के लिए दारोगाजी को कुछ करना होगा। उन्होंने सिपाही को संकेत किया।

"जी दारोगाजी।"

"यार, वह लड़की अकेली खड़ी है।"

"ले आऊँ?"

"वह वहाँ सुरक्षित नहीं है।"

"वहाँ कुछ करेंगे तो हम भी सुरक्षित नहीं रहेंगे। उसे थाने में ही ले आता हूँ। यहाँ सुरक्षित रहेगी।"

सिपाही बाहर आया तो देखा कि लड़की के साथ उसका एक छोटा सा भाई भी था, जो थाने के अंदर से दिखाई नहीं पड़ रहा था।

सिपाही ने लड़की की कलाई थाम ली, "आ जा, दारोगाजी तेरी सुरक्षा की चिंता में दुबला रहे हैं।"

लड़की चिल्लाई, उसका भाई भी चिल्लाया।

"भाग जा, नहीं तो मार डालूँगा।" सिपाही ने लड़के को धमकाया और लड़की को थाने में घसीट लाया।

दारोगाजी ने संकेत किया। सिपाही लड़की को घसीटता हुआ एक कमरे में ले गया।

"लड़की कमरे में सुरक्षित है, दारोगाजी।"

दारोगाजी अपना पाजामा सँभालते हुए कमरे में चले गए। थोड़ी देर में लड़की का चीखना-चिल्लाना बंद हो गया। सिपाही ने मान लिया कि दारोगाजी ने उसे सँभाल लिया है; और वह सुरक्षित हो गई है।

"अब मैं जाऊँ?" दारोगाजी के बाहर आने पर सिपाही ने पूछा।

"तू भी जा भाई। वह इतना चिल्ला रही थी कि मुझे लगा कि मैं ही सुरक्षित नहीं हूँ। उसका चिल्लाना बंद करने की कोशिश की तो जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या हुआ, वह चुप ही हो गई।''

''मर गई है तो एकदम सुरक्षित है, अब कोई उसका क्या कर लेगा।'' सिपाही हँसता हुआ उसके कमरे में चला गया।

□

दिल्ली के रामलीला मैदान में बाबा रामदेव दिन भर अनशन कर रात को सो रहे थे। पुलिस को (पहली बार) समाचार मिला कि रामलीला के आस-पास का क्षेत्र बड़ा संवेदनशील इलाका है। वहाँ बाबाजी सुरक्षित नहीं हैं। किसी ने बाबाजी को मार दिया तो सांप्रदायिक दंगा हो जाएगा। पुलिस का कर्तव्य-बोध जाग उठा। पुलिस इतना बड़ा जोखिम नहीं उठा सकती थी।

बड़े अफसर ने छोटे अफसर को बुलाया, ''वहाँ बाबाजी सुरक्षित नहीं हैं। वहाँ तो कोई उन्हें मार डालेगा। समझ रहे हो, वहाँ उनकी हत्या हो सकती है।''

''तो उनकी सुरक्षा का प्रबंध कर देते हैं।'' छोटा अफसर बोला, ''हत्या तो तब ही होगी, जब वे जीवित होंगे।''

''ठीक कह रहे हो।''

''तो फोर्स ले जाता हूँ। सोए लोग उठकर भागेंगे। भगदड़ मचेगी। भीड़ के पैरों तले कुचले जाएँगे तो पूरी तरह सुरक्षित हो जाएँगे। तब कोई उनकी हत्या कैसे करेगा?''

''देखो, हम कोई रिस्क नहीं ले सकते। पूरी सुरक्षा होनी चाहिए।''

''पाँच हजार जवान ले जाऊँ?''

''ठीक है, जाओ।''

पुलिस बंदोबस्त तो चाक-चौबंद था, फिर भी पत्रकार हैरान थे कि उस लड़की का शरीर तो थाने के घेर में ही मिल गया। पता नहीं सुरक्षा में क्या त्रुटि हुई कि बाबा का शरीर हरिद्वार पहुँच गया।

सा/अ

१७५ वैशाली, पीतमपुरा,
दिल्ली-११००३४

स्वराज्य पा सुखी रहो!

उठो, स्वदेश के सपूत कर्मक्षेत्र में बढ़ो!
बिसार द्वेष दंभ पाठ प्रेम का सदा पढ़ो॥
स्वराज्य-प्राप्ति के लिए विशेष यत्न कीजिए।
स्वदेश के सुधार में सहर्ष ध्यान दीजिए॥
स्व-जन्मभूमि के लिए अनंत कष्ट भी सहो।
बलिष्ठ धीर-वीर हो, स्वराज्य पा सुखी रहो॥
स्वतंत्र देश हो न दास, दैन्य दुःख को सहे।
समृद्धि-युक्त हों सभी न दीनता यहाँ रहे॥
सदैव शांति सत्य शील का प्रभा-प्रकाश हो।
परावलंब नाश हो स्वदेश श्रीनिवास हो॥
अनन्य देशप्रेम की तरंग में सदा बहो।
बलिष्ठ धीर-वीर हो, स्वराज्य पा सुखी रहो॥
मनुष्य जन्म पा उदार योग्य साहसी बनो।
अनीति अंधकार वैर के विकार को हनो॥
विपत्ति विघ्न-व्यूह नीति से नहीं हृदै हिले।
समस्त भारतीय वृंद नित्य मोद से मिलें॥
विलुप्त भारतीय शक्ति विश्व में पुनः लहो।
बलिष्ठ धीर-वीर हो, स्वराज्य पा सुखी रहो॥
निरन्न वस्त्रहीन हैं दुःखी किसान रो रहे।
विचारते न सभ्य, नेत्र मूँद हाय सो रहे॥
दुकाल रोग शोक लूट घूस जी जला रहे।
बचाइए प्रभो, अनंत कष्ट हैं सता रहे॥
दुखावसान हों स्वराज्य के सँदेश को कहो!
बलिष्ठ धीर-वीर हो, स्वराज्य पा सुखी रहो॥

हरिश्चंद्र देव वर्मा 'चातक'

लाएगा रंग यह दिन, खूने-रवाँ हमारा

मकतल बना हुआ है हिंदोस्ताँ हमारा,
सड़कों पे बह रहा है, खूने-रवाँ हमारा।
किस नींद में हो जागो, किस ख्वाब में हो चौंको,
आलस से मिट रहा है नामोनिशाँ हमारा।
तुम तो चलाओ खंजर, शिकवों से भी गए हम,
मुँह तक न खुलने पाए, क्यों मेहरबाँ हमारा?
पहिले ही कर चुके हो, कल्बो-जिगर को छलनी,
ले आओ क्या करेंगे, तीरो-कमाँ हमारा।
हिंदोस्ताँ में कैसी यह आग लग रही है,
दोजख बना हुआ है जन्नत-निशाँ हमारा।
माना कि जानो-दिल पर, है आपकी हुकूमत,
पर तुमसे भी कवी है एक हुक्मराँ हमारा।
नामुंसफी तो देखो, वह इसलिए है दुश्मन,
क्यों उनको चाहता है पीरो-जवाँ हमारा।
फाकों से मर रहे हैं, जेलों में भेज भी दो,
वाँ पेट तो भरेगा जाने-जहाँ हमारा।
बस हो चुकी जफाएँ, बेहतर है कत्ल कर दो,
है तंग जिंदगी से तिफली जवाँ हमारा।
आँखें चढ़ा-चढ़ाकर, नजरों से गिर गए तुम,
दिल फिर गया है तुमसे, अब तो मियाँ हमारा।
आले हसन न घबरा नैरंगिए-फलक से,
लाएगा रंग एक दिन खूने-रवाँ हमारा।

हसन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

आम आदमी बनाम अनाम आदमी

● महीप सिंह

उस दिन बिहारीलालजी बड़े बाग-बाग दिखाई दे रहे थे। बोले, "ऐसे दिन इस देश में कभी नहीं आए। चारों ओर आम आदमी की चर्चा हो रही है। आम आदमी बिलकुल भगवान् नजर आ रहा है। सभी राजनैतिक पार्टियाँ अपने घोषणा-पत्रों में कह रही हैं कि हमारी पार्टी आम आदमी के प्रति पूरी तरह समर्पित है।"

मैंने कुछ मायूसी भरे स्वर में कहा, "पंडितजी, आज कैसी बातें कर रहे हैं? दाल-रोटी खानेवाला आदमी क्या इतनी महँगी दाल खाकर खुश रह सकता है?"

बिहारीलालजी अपनी समझावन लालवाली मुद्रा में आ गए। बोले, "तुम एक बात नहीं समझते। दो तरह के आदमी होते हैं—एक, आम आदमी, दूसरे अनाम आदमी। मैं आम आदमी की बात कर रहा हूँ, तुम अनाम आदमी की चिंता में घुले जा रहे हो।"

मैं उनकी बात समझने की कोशिश करने लगा।

जन्म : १५ अगस्त, १९३० को उन्नाव (उ.प्र.) में।

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पी-एच.डी. आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।

कृतित्व : दस कहानी-संग्रह, एक उपन्यास 'यह भी नहीं' (हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी, पंजाबी, मलयाळम में भी प्रकाशित); पच्चीस पुस्तकों का संपादन।

पुरस्कार : उ.प्र. हिंदी संस्थान पुरस्कार, भाषा विभाग (पंजाब) का शिरोमणि साहित्यकार पुरस्कार, केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय पुरस्कार, हिंदी अकादमी (दिल्ली) पुरस्कार।

वे समझाते हुए बोले, "कुछ समय पहले ही अपने देश में आम चुनाव हुए हैं। आम लोगों ने अपने प्रतिनिधि चुनकर आम सभा, यानी लोकसभा में भेजे हैं। इस सभा में लगभग साढ़े पाँच सौ व्यक्ति चुनकर आते हैं। इस बार इनमें तीन सौ से अधिक करोड़पति हैं। यही आम लोग हैं, जो आम लोगों के प्रतिनिधि हैं।"

मैंने कहा, "पंडितजी, क्या वे भी आम लोगों के नुमाइंदे हैं, जिनके ऊपर आम लोगों को लूटने, उनकी हत्या करने के आपराधिक मामले कचहरियों में चल रहे हैं? संसद् के लिए चुने गए ऐसे लोगों की गिनती भी एक सौ पचास से अधिक बताई जाती है।"

"देखो, मेरे भोले शंकर भगवान् ने यह संसार किन लोगों को लेकर बनाया है? भगवान् ने सुर भी बनाए और असुर भी बनाए। इनमें से यदि केवल एक रह जाए तो संसार अधूरा रह जाए। भगवान् इन्हें बनाता है, फिर इन्हें आपस में लड़वा[ता] है, और फिर किसी ऊँची कुरसी पर बैठकर [उनका] तमाशा देखता है। किसी कवि ने कहा भी है, 'बैर बढ़ाय, लड़ाय सुरासुर आपन देखत [है] तमाशा'। आखिर लोकसभा का स्पीकर भी तो यही करता है। पक्ष और विपक्ष में करोड़पति भी हैं और अपराधी भी हैं। पक्ष-विपक्ष के सांसद आपस में लड़ते हैं और स्पीकर अपनी कुरसी पर बैठे तमाशा देखते हैं। इसलिए करोड़पति और अपराधी—दोनों ही आम लोगों के प्रतिनिधि हैं।"

"पर पंडितजी", मैंने कुछ खीझकर कहा, "आम लोग तो दो वक्त की रोटी कमाने में ही पिसते रहते हैं।"

"तुम इस इशू को बहुत कंफ्यूज कर रहे हो। तुम आम आदमी को अनाम आदमी के साथ जोड़ रहे हो।" वे बड़े सधे स्वर में बोले, "आम आदमी और अनाम आदमी दो अलग-अलग बातें हैं। हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि इस सृष्टि में चौरासी लाख जीव-जंतु हैं—कीड़े-मकोड़े, भेड़-बकरी, साँप-छिपकली, घड़ियाल-मछली। इसी प्रकार अनाम प्राणी भी हैं चौरासी लाख में से एक। हमारी सरकार की जिम्मेदारी आम आदमी के प्रति है, चौरासी लाख जीव-जंतुओं के प्रति नहीं। हाँ, यह बात जरूर है कि जब इनमें से कोई प्रजाति समाप्त होने के कगार पर दिखती है तो सरकार उनको बचाए रखने के लिए कभी-कभी अपनी चिंता दरशाती है, क्योंकि आम आदमी की सरकार इस दुनिया को रंग-बिरंगी बनाए रखना चाहती है।"

"लेकिन पंडितजी, चौरासी लाख जीव-जंतुओं का निर्माण करनेवाले भगवान् को तो सभी की चिंता रहती है।"

बिहारीलालजी ठहाका लगाकर हँस दिए, "भगवान् की बात तुमने खूब कही। तुम कहते हो कि जीव-जंतुओं को भगवान् ने बनाया है। ज[ब]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे यह बताओ कि भगवान् को किसने बनाया?''

मैंने कहा, ''अजीब जिज्ञासा है आपकी? भगवान् को किसने बनाया?''

''हाँ, इसमें चौंकने की क्या बात है? मैं बताता हूँ, भगवान् को इसी आम आदमी ने बनाया, उसी तरह जैसे उसने बिजली, रेल, हवाई जहाज जैसी चीजें अपनी जरूरत के लिए बना लीं। उसने अपनी जरूरत के लिए भगवान् भी बना लिया, फिर इस झुनझुने को उसने अनाम प्राणी के हाथों में पकड़ा दिया, बस इसे बजाते रहो, नमक-रोटी खाते रहो और खुश रहो।''

मैंने कुछ उत्तेजित होकर कहा, ''यह विचित्र न्याय है। एक आदमी माल-पूए खाए, दूसरे को दाल-रोटी भी नसीब न हो?''

''बस यहीं मुझे तुम्हारी अक्ल में खोट दिखाई देती है।'' बिहारी-लालजी भी थोड़ा उत्तेजित हो गए। बोले, ''तुम आम आदमी और अनाम आदमी के बीच का फर्क ही नहीं समझते। आम आदमी वह है, जिसकी कुछ पहचान होती है, जिसकी कोई आवाज होती है। जो सरकार बना भी सकता है, उसे गिरा भी सकता है। अनाम आदमी क्या कर सकता है? उसका तो कोई नाम ही नहीं होता। इसलिए उसकी कोई पहचान भी नहीं होती। जैसे साल में एक बार नाग पंचमी होती है। उससे बहुत दूरी बनाए हुए लोग उसे दूध पिलाते हैं। कहते हैं न—कुत्ते का भी एक दिन होता है। इसी तरह अनाम आदमी का भी एक दिन होता है, जो पाँच बरस में एक बार आता है। उस दिन आम आदमी के भले की हाँक लगाते हुए कुछ लोग अनाम लोगों के दरवाजे पर खड़े होकर कहते हैं, हम आपकी सेवा करने के लिए आए हैं। हम जन-प्रतिनिधि हैं...।''

मैंने उन्हें बीच में ही टोक दिया, ''पंडितजी, इस बार शायद यह चुनाव आयोग का आदेश था कि चुनाव लड़ने का हर इच्छुक व्यक्ति पहले यह बताए कि उसके पास कितनी चल-अचल संपत्ति है।''

बिहारी लालजी ठठाकर हँसे, ''अब तुम ठीक ढर्रे पर आते दिखाई दे रहे हो। तुमने देखा कि इन जन-प्रतिनिधियों ने अपनी संपत्ति का क्या ब्योरा दिया था?''

''हाँ पंडितजी, इनका ब्योरा देखकर तो मेरी आँखें फटी की फटी रह गईं। कोई भी उम्मीदवार करोड़पति से कम नहीं था। शायद ही कोई बेचारा गरीब लाखों की सीमा में बँधा हो।''

''यही लोग चुने गए। हारनेवाला भी करोड़पति, जीतनेवाला उससे बड़ा करोड़पति। यही लोग जन-प्रतिनिधि हैं, आम आदमी हैं।''

''लेकिन पंडितजी, भगवान् तो सबकुछ देखता है।''

''फिर भगवान्...।'' वे थोड़ा भुनभुनाए, ''देखो, जब आम आदमी का प्रतिनिधि करोड़पति है तो उसका भगवान् कैसा होगा? तुमने अखबारों में पढ़ा होगा—कर्नाटक सरकार के एक मंत्री ने तिरुपति के भगवान् बालाजी के लिए सोने-हीरों से जड़ा हुआ एक मुकुट बनवाकर भेंट किया है। मालूम है, उसकी कीमत क्या है? सिर्फ ४१ करोड़ रुपए। इतना

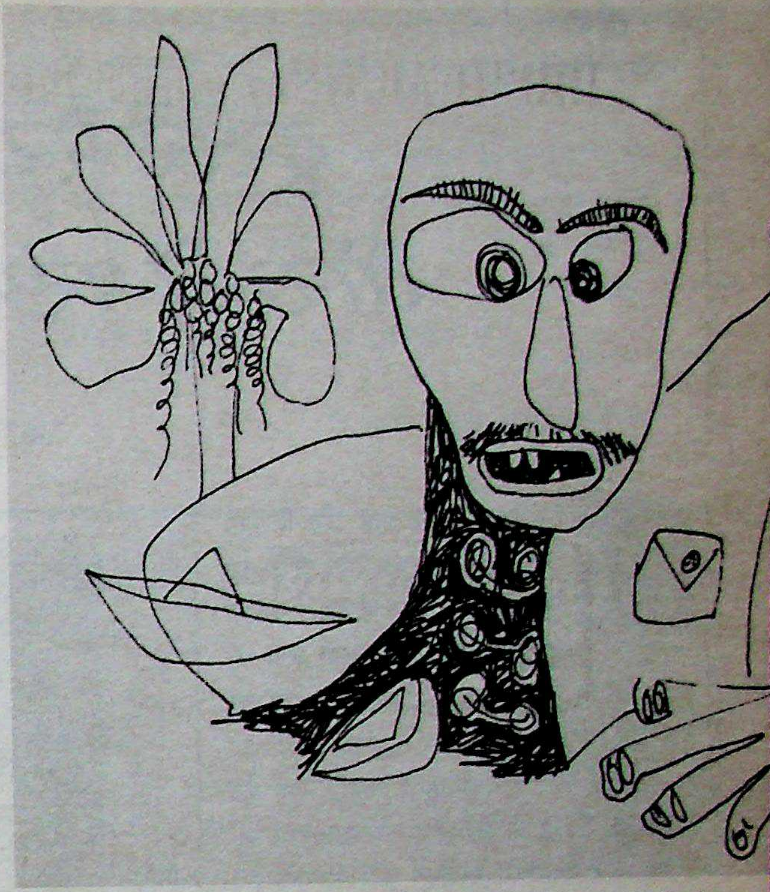

महँगा मुकुट छोड़कर तुम्हारा भगवान् क्या मेरे-तुम्हारे जैसे अनामियों को देखेगा?''

मेरा मुँह लटक गया, ''आपका मतलब है कि भगवान् करोड़पतियों का, करोड़पतियों द्वारा, करोड़पतियों के लिए है।''

''तुम बिलकुल ठीक कह रहे हो'', बिहारीलालजी प्रफुल्ल होकर बोले, ''तुमने देखा, इस देश का आम आदमी कितना समृद्ध होता जा रहा है। वह अपने प्रतिनिधि करोड़पतियों में से चुनता है, वह अपने भगवान् को करोड़ों रुपयों की लागत से बने मुकुट पहनाता है, अरबों रुपए खर्च करके उनके मंदिर बनवाता है। उसकी कृपा से देश के जन-प्रतिनिधि दिन दूनी रात चौगुनी दौलत के मालिक बन रहे हैं।''

हम दोनों मुँह लटकाए बैठे थे।

कुछ देर बाद मैं बोला, ''पंडितजी, जरा चार सौ रुपए तो दीजिए।''

अब बारी उनके चौंकने की थी, ''ऐसी क्या जरूरत पड़ गई?''

मेरा मुँह और लटक गया, ''घर में गैस का सिलेंडर खत्म हो गया है। पत्नी ने अल्टीमेटम दे दिया है, शाम तक नया सिलेंडर नहीं आया तो खाना नहीं बनेगा।''

बिहारीलालजी को इतना मायूस मैंने कभी नहीं देखा। वह बहुत धीरे-धीरे बोल रहे थे, ''जेब में कुल सौ-सवा सौ रुपए हैं। पेंशन पहली तारीख को मिलेगी, उसे आने में पाँच-छह दिन बाकी हैं।''

सा.अ.

एच-१०८, शिवाजी पार्क
नई दिल्ली-११००२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

दूसरे पैर का जूता : तीसरी परंपरा का खौफ

● सूर्यबाला

जन्म : २५ अक्तूबर, १९४४ को वाराणसी में।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.।

पिछले तीन दशकों से हिंदी कहानी, उपन्यास और हास्य-व्यंग्य में सुपरिचित व प्रतिष्ठित नाम। अब तक पाँच उपन्यास, दस कहानी-संग्रह तथा तीन व्यंग्य-संग्रह प्रकाशित। अनेक रचनाओं का अन्य भाषाओं में अनुवाद। आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं धारावाहिकों में अनेक कहानियों, उपन्यासों तथा व्यंग्य रचनाओं की प्रस्तुति।

सम्मान-पुरस्कार : साहित्य में विशिष्ट योगदान के लिए अनेक संस्थानों से सम्मानित एवं पुरस्कृत। प्रसार भारती की इंडियन क्लासिक शृंखला (दूरदर्शन) में 'सज़ायाफ्ता' कहानी चयनित।

मैं ने देखा, उनके एक पाँव में जूता नहीं था। मैं चौंकी, फिर लपककर पीछे हो ली। मन में हजार अंदेशे, कुतूहल, उत्तेजना। यानी आप भी चला आए? कहाँ चलाए? किस पर? आखिर बात क्या थी?

'बात?' उन्होंने चिढ़कर कहा, 'यहाँ मुँह छुपाने की नौबत आ पहुँची है और आप बात की पूछती हैं? आखिर बरदाश्त की भी एक हद होती है। जब नहीं रहा गया तो चला दिया, बस।'

'मुझे आप से पूरी सहानुभूति है, फिर भी आप नहीं समझते कि यह गलत है?'

'सही क्या दिख रहा है आपको?'

'आप तैश में हैं, उत्तेजित और आहत भी। खैर, बताइए, कहाँ चलाया? किस सभा में?'

'आपको अभी तक पता नहीं? तो जाकर देख लीजिए टी.वी. पर। कोई भी चैनल लगाइए, सब पर चल रहे हैं। हमने एक बार चलाया, वो सैकड़ों-हजारों बार चलाए जा रहे हैं, जैसे सारे देश में जूते ही चल रहे हैं। इसके सिवा कुछ हो ही नहीं रहा।'

'बिलकुल! जबकि चले तो अभी तक कुल दो-तीन ही न, राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मिलाकर?'

'आपको सिर्फ वे तीन ही दिखे न'''जो सरेआम प्रेस कॉन्फ्रेंसों में बाकायदा जूतों की शक्ल में चलते दिखे?'

'जी हाँ, बेशक। बड़ा सनसनीखेज रहा। अब धरपकड़ की कारवाई तो होनी ही थी इन पर।'

'बस इन्हीं पर? और वे लोग जो छोटे परदे पर माइक्रोफोन थामे, कीचड़ में लथेड़-लथेड़कर बेशरमी से पूरे देश पर चलाए जा रहे हैं? उन पर नहीं होनी कोई कारवाई?'

'बिलकुल होनी तो चाहिए, लेकिन वो कह(ते) है कि वे देश के कर्णधार हैं और सबकुछ दे(श) हित की खातिर कहते हैं।'

'तो समझिए हमने भी देश के हित में ह(ी) चला दिए।'

'आप गुस्सा थूक दीजिए और समझने की कोशिश कीजिए। देखिए, एक तो लोकतंत्र, दूसरे इलेक्शन'''अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का पूरा लाभ उठाने के लिए यही समय ज्यादा अनुकूल भी पड़ता है न उन्हें।'

'हमने भी अभिव्यक्ति की इसी स्वतंत्रता का उपयोग करते हुए तो चला दिए, और देखिए कि वो बरदाश्त भी कर ले गए।'

'बिलकुल! वरना चाहते तो सजा दिलवा सकते थे।'

'हरगिज नहीं, कैसे दिलवाते भला? पार्टी का हित आड़े नहीं आता? जो कुछ देखना होगा उन्हें, चुनाव के बाद देखेंगे। अभी तो चुनाव के टिकट का हीरामन जनता की खिलाई सारी मिर्चें खा जाएगा, उफ नहीं करेगा। तो हमने इलेक्शन की सोचकर ही 'चलाए' और उन्होंने इलेक्शन की सोचकर ही खाए भी।'

'जी हाँ, हमेशा पाने के लिए कुछ खोना भी पड़ता है, बरदाश्त करना पड़ता है, जैसे यह नुकसान।'

'नहीं, नुकसान कुछ खास नहीं, हम हमेशा एक ही पैर का 'चलाते' हैं। जिससे बाद में जाकर पहन लें।'

'मैं आपके नुकसान की बात नहीं कर रही। मैं राष्ट्रीय अस्मिता और सामाजिक मर्यादा की बात कर रही हूँ। यह एक उद्दंड परंपरा की शुरुआत है, जो हमारी राष्ट्रीय अस्मिता और आचरण की मार्यादा को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलंकित…'

'क्षमा करें,… राष्ट्रीय अस्मिता और आचरण-संहिता जैसी चीजें सचमुच में होती हैं क्या? मैंने तो आए दिन उछाले जाते वक्तव्यों, बयानों और स्पष्टीकरणों में कभी इन शब्दों का उल्लेख देखा नहीं, फिर किसका माथा और कैसा कलंक?'

'नहीं, मैंने अपने बाप-दादों के मुँह से अकसर सुने थे ये शब्द।'

'बेशक सुने होंगे, उस जमाने में होते भी रहे होंगे, लेकिन अब समय बदल गया है। अब हम इन रूढ़ियों से मुक्त, स्वतंत्र हो गए हैं।'

'कभी भी, कहीं भी प्रेस कॉन्फ्रेंसों में 'चला' देने के लिए?'

'सिर्फ प्रेस कॉन्फ्रेंसों में ही नहीं, अब तो शिक्षा, स्वास्थ्य, साहित्य, कला, उद्योग, वाणिज्य से लेकर धर्म-दर्शन तक सभी क्षेत्रों में यह परंपरा बेखौफ लोकप्रिय हो रही है, बल्कि उन लोगों का तो यह कहना है कि वे राष्ट्रीय अस्मिता के हित में ही चलाते हैं। विश्वास न हो तो अपने दाएँ-बाएँ दृष्टि डाल लीजिए।'

मैंने अपनी नजर घुमाई और यह देखकर दंग रह गई कि मेरे आगे-पीछे चलनेवाले तमाम सारे लोगों ने एक ही पैर में जूते पहन रखे हैं, दूसरा जूता उनके हाथों में है, कहीं भी, कभी भी… मैं इस खतरे से पहले 'लोक' को आगाह करूँ या पहले 'तंत्र' को? क्योंकि लोकतंत्र का यह हश्र जितना शरमनाक है, उतना ही खतरनाक भी।

बी. ५०४, रूनवाल सेंटर, गोवंडी स्टेशन रोड,
मुंबई-४०००८८

रक्षाबंधन

हरिकृष्ण प्रेमी

बहन बाँध दे रक्षाबंधन, मुझे समर में जाना है।
अब के घन-गर्जन में रण का, भीषण छिड़ा तराना है॥
दे आशीष, जननि के चरणों में यह शीश चढ़ाना है।
बहन, पोंछ ले अश्रु, गुलामी का यदि दुःख मिटाना है॥
अंतिम बार बाँध ले राखी,
कर ले प्यार आखिरी बार।
मुझको जालिम ने फाँसी की,
डोरी कर रक्खी तैयार॥
रक्षा, रक्षा कायरता से, मर मिटने का दे वरदान।
हृदय-रक्त से टीका कर दे, दे मस्तक पर लाल निशान॥
वह जीवन का स्रोत आज कर मेरे मानस में संचार।
अचल रहूँ मैं देख समर में रिपु की बिजली-सी तलवार॥
अपना शीश कटा जननी की,
जय का मार्ग बनाना है।
बहन, बाँध दे रक्षाबंधन,
मुझे समर में जाना है॥
जिसने लाखों ललनाओं के पोंछ दिए सिर के सिंदूर।
गड़ा रहा कितनी कुटियाओं के दीपों पर आँखें क्रूर॥
वज्र गिराकर कितने कोमल हृदय कर दिए चकनाचूर।
उस पापी की प्यास बुझाने, बहन जा रहे लाखों शूर॥
मृत्यु-विटप की शाखा पर मैं,
डाल हिंडोला झूलूँगा।
दो पींगों में अमर लोक की,
अंतिम सीढ़ी चूमूँगा॥
बहन, शीश पर मेरे रख दे स्नेह-सहित अपना शुभ हाथ।
कटने के पहले न झुके यह ऊँचा रहे गर्व के साथ॥
उस हत्यारे ने कर डाला, अपना सारा देश अनाथ।
आश्रयहीन हुई यदि तू भी, ऊँचा होगा तेरा माथ॥
दीन भिखारिन बनकर तू भी,
गली-गली फेरी देना—
'उठो बंधुओ, विजय-वधू को
वरो, तभी निद्रा लेना॥'
आज सभी देते हैं अपनी बहनों को अमूल्य उपहार।
मेरे पास रखा ही क्या है आँखों के आँसू दो-चार॥
ला दो-चार गिरा दूँ, आगे अपना आँचल विमल पसार।
तू कहती है—'ये मणियाँ हैं, इनपर न्योछावर संसार॥'
बहन बढ़ा दे चरण-कमल मैं,
अंतिम बार उन्हें लूँ चूम।
तेरे शुचि स्वर्गीय स्नेह के,
अमर नशे में लूँ अब झूम॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

लो फिर···

● प्रेम जनमेजय

जैसे किसी नेता को हारा चुनाव जीतने पर, किसी भ्रष्टाचारी को बेदाग भ्रष्टाचार करने पर, वकील को झूठा मुकदमा जीतने पर, पुलिसवाले को दोनों पार्टियों के 'सार्थक' सहयोग से कत्ल का केस पिटने पर, विद्यार्थी को बिना पकड़े नकल द्वारा परचा पूरा करने पर, धर्मगुरु को काम और अर्थ का फल प्राप्त करने पर अलौकिक सुख प्राप्त होता है, वैसा अलौकिक तो नहीं, पर उसके सहोदर सा सुख किसी मध्यवर्गीय ईमानदार जीव को मुफ्त की तसल्लीबख्श दावत खाने पर मिलता है। रात को सातवें आसमान के सुख में डूबे मन के सुख की ऐसी खुमारी चढ़ती है कि वो सुबह अकसर दफ्तर के लिए लेट हो जाता है।

हमारे राधेलाल भी इसी खुमारी में डूबे हुए थे कि उनकी पत्नी ने, जो कम खुमारी में डूबी थी, दफ्तर के लिए उठा दिया, ''सात बजनेवाले हैं, दफ्तर नहीं जाना है क्या?''

''अरे यार, बहुत दिनों बाद बढ़िया नींद आ रही थी, कल की पार्टी बहुत जोरदार थी।''

''जोरदार क्यों नहीं होगी, बढ़िया शराब की नदियाँ जो बह रही थीं। मैं देख रही थी कि खूब गोते लग रहे थे तुम्हारे।''

जन्म : १८ मार्च, १९४९ को इलाहाबाद में।

कृतित्व : अब तक सात व्यंग्य संग्रह, बाल साहित्य पर तीन पुस्तकें, नवसाक्षरों के लिए दो पुस्तकें, दो आलोचना पुस्तकें प्रकाशित।

'मधुवन सम्मान', हिंदी निधि तथा भारतीय विद्या संस्थान द्वारा विशिष्ट सम्मान, अवंतिका सहस्राब्दी सम्मान, हरिशंकर परसाई स्मृति पुरस्कार, हिंदी अकादमी द्वारा साहित्यकार सम्मान, इंडो-रशियन लिटरेरी क्लब सम्मान, प्रकाशवीर शास्त्री सम्मान, 'माध्यम' युवा रचनाकार अट्टहास सम्मान, युवा साहित्य मंडल सम्मान, युवा साहित्य मंडल विशिष्ट सम्मान जैसे सम्मानों से सम्मानित।

'व्यंग्य-यात्रा' का संपादन।

अपने पीने पर आक्रमण होता देख अच्छे-अच्छे पतियों की खुमारी टूट जाती है। राधेलाल की भी खुमारी टूट गई और उसने प्रत्याक्रमण की मुद्रा में कहा, ''और तुम जो चाटवाले स्टॉल पर भुक्खड़ की तरह लगी हुई थीं···गोलगप्पे, दही भल्ले, चीला और वो क्या टिकिया···कुछ छोड़ा तुमने···और उसके बाद खाने पर ऐसे टूटे कि···।''

''हम खा रहे थे, पी नहीं रहे थे।''

''नशा चाहे जुबान का हो या गले का, नशा नशा होता है।''

पत्नी ने सुबह की चाय का कप पति को थमाते हुए कहा, ''उपदेशकजी चाय पीयो, या रब वो न समझे हैं, न समझेंगे मेरी बात।''

पति ने मुसकराकर चाय का कप पकड़ते हुए कहा, ''और तुम्हारे चचा गालिब ने ही कहा है, 'तौबा तौबा शराब से तौबा।' और मैडम जी, सुबह की चाय का भी एक नशा होता है, चाय मिलते ही वैसी ही ताजगी आ जाती है, जैसी हाथ में गिलास आते···बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद। कुछ भी कहो, कल मल्होत्रा ने दावत बहुत जोरदार दी। क्या नहीं था खाने को और एंबिएँस···।''

''पंजाबियों की पार्टी होती जोरदार हैं।''

''दिखावा भी जोरदार होता है। उसने दस डिश रखी हैं तो मैं बीस रखूँगा वाली प्रतियोगिता होती है। एक समय था, जब भगवान् को छप्पन भोग लगाए जाते थे और भक्त हाथ बाँधे प्रभु को भोग लगाते देख प्रसन्न होता था। आजकल प्रभु भक्तों के लिए विवाहोत्सव आदि में छप्पन भोग परोसते हैं, भक्त भोग लगाते हैं और हाथ जोड़कर भोग की तारीफ करते हैं।''

''अरे बाप रे! पौने आठ हो गए। आपके चक्कर में मैं लेट हो जाऊँगी। आज कामवाली भी अभी नहीं आई है।''

''लगता है, वो भी कल रात को किसी मल्होत्रा की पार्टी में गई होगी। जरा अखबार पकड़ा देना।'' कहकर राधेलाल हँसे, पर अखबार पकड़ते ही हँसी नैतिक-मूल्यों सी गायब हो गई और वे ऐसे उछल पड़े जैसे हिंदी फिल्मों की किसी हीरोइन को पूरे कपड़े पहने देख लिया हो इस प्रौढ़ावस्था में किसी सुंदरी का प्रेमपत्र सामने आ गया हो या फिर अपने विरोधी का प्रमोशन-पत्र देख लिया हो। रसोई की ओर प्रगतिशील पत्नी के कदमों के लिए अवरोध उत्पन्न करते हुए चिल्लाए, ''सुनो, लो फिर रसोई गैस, मिट्टी के तेल और पेट्रोल के दाम बढ़ गए और इस बार तो बढ़े भी जेबफाड़ हैं।''

पत्नी के प्रगतिशील कदम जनविरोधी नीतियों की घोषणा सुन लौटे तो नहीं, रुक अवश्य गए। सब्जियों और दालों ने 'लो फिर' के अंदाज में पहले ही रसोई महँगी की हुई है और उस पर पतिदेव की यह सूचना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दाम बढ़ानेवालों पर गुस्सा करके वह कर भी क्या सकती है, बस वोट नहीं देगी और जिसे देगी, उसकी क्या गारंटी है कि 'लो फिर' नहीं होगा। इसलिए उसे गुस्सा आता है पति पर, जो गैस का खाली सिलेंडर समय से नहीं भरवाता है, गाड़ी में पेट्रोल की टंकी रिजर्व से भी नीचे ले आता है। इससे ज्यादा नहीं, ऊँट के मुँह में जीरा तो आ ही सकता है, बचत की एक मानसिक संतुष्टि तो मिल सकती है।

ये 'लो फिर' आजकल के भारतीय जीवन में सामान्य घटना सा हो गया है। कई बार ये लो फिर 'जागो मोहन प्यारे' से आरंभ होता है और रात को 'आ जा री निंदिया' के साथ समाप्त होता है। इस 'लो फिर' में लेना कुछ नहीं होता है और न ही कुछ मिलता है और यदि कुछ मिलता भी हो तो उसके प्रति आपकी अनिच्छा ही होती है।

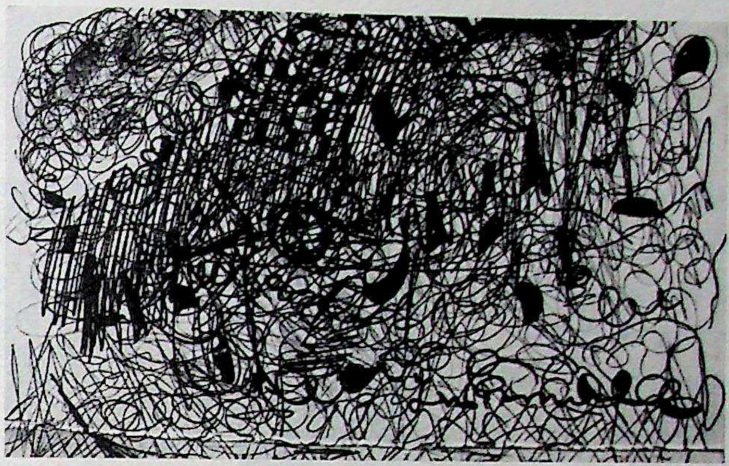

अभी तो पति ने अखबार पढ़कर इतना ही 'लो फिर' बताया है कि रसोई गैस, मिट्टी के तेल और पेट्रोल के दाम बढ़ गए, अभी यह 'लो फिर' तो नहीं बताया कि दूध के दाम बढ़ गए हैं, बसों के किराए बढ़ गए हैं, बिजली के दाम बढ़ गए हैं, बच्चे की फीस बढ़ गई, हाउसिंग और कार लोन बढ़ गया है, किसी तीन साल की बच्ची का यौन शोषण हुआ है, किसी बलात्कारी ने सत्तर साल की बुढ़िया को नहीं छोड़ा, किसी कसाब पर मुकदमा चल रहा है आदि आदि 'लो फिर'।

कहते हैं कि इतिहास अपने को दोहराता और संभवत: यह इसी कहने का परिणाम है कि हमारे जीवन में 'लो फिर' बहुत होता है। हर मनुष्य का अपना इतिहास होता है—कुछ का लिखा जाता है, कुछ लिखवाते हैं और बहुतों का अलिखित रहता है। अब इतिहास है तो जीवन में 'लो फिर' आएगा ही। आप ध्यान से देखें तो जैसे आपके चारों ओर भ्रष्टाचार विद्यमान है, वैसे ही जीवन का कोई कोना ऐसा नहीं है, जहाँ 'लो फिर' विद्यमान न हो।

हमारी सर्वप्रिय राजनीति में 'लो फिर' महिमा—लो फिर उसे टिकट मिल गया, लो फिर दाम बढ़ गए , लो फिर विरोधी दल ने भारत बंद किया, लो फिर संसद् पूरे सत्र नहीं चली, लो फिर मंत्रिमंडल में बदलाव हुआ, लो फिर नेता असंतुष्ट हुए, लो फिर नेताजी ने आत्मा की आवाज सुनी, लो फिर मंत्रीजी पर सी.बी.आई. इंक्वायरी बैठी, लो फिर मंत्रीजी निर्दोष पाए गए, लो फिर लाठीचार्ज हुआ, लो फिर सरकार ने चुनावी बजट पेश किया, लो फिर चुनाव आ गए, लो फिर मध्यावधि चुनाव आ गए, लो फिर घोटाला हो गया, लो फिर घोटाले में कोई नहीं फँसा।

साहित्य में देखें, 'लो फिर' महिमा—लो फिर उस साले को पुरस्कार मिल गया, लो फिर उसका एक और संकलन आ गया, लो फिर उसकी किताब कोर्स में लग गई, लो फिर साला अध्यक्ष बन गया, लो फिर उसकी पुस्तक चर्चित हो गई, लो फिर युवा लेखिका/लेखक उससे रात में मार्गदर्शन लेने चला गया, लो फिर प्रकाशक ने रॉयल्टी नहीं दी, लो फिर उसकी किताब बल्क परचेज में आ गई, लो फिर वो संपादक बन गया, लो फिर मेरी रचना वापस आ गई और उसकी छप गई।

अथ न्यायालय 'लो फिर' महिमा—लो फिर मुकदमा बीस बरस से चल रहा है, लो फिर एक और बदमाश बरी हुआ, लो फिर पैसे की चल गई, लो फिर मंत्रीजी को जेल में वी.आई.पी. सुविधा मिली, लो फिर कैदियों ने सुपरिंटेंडेंट को मार दिया, लो फिर जेल में मोबाइल मिले, लो फिर काले कोटवालो ने हड़ताल की।

सरकारी दफ्तर में 'लो फिर' महिमा—लो फिर बड़े बाबू नहीं आए, लो फिर उसे आउट ऑफ टर्न प्रमोशन मिल गया, लो फिर उस पर सी.बी.आई. इंक्वायरी बैठ गई, लो फिर साहब ने सेक्रेटरी को देर तक काम करने के लिए अकेले रोक लिया, लो फिर साले ने सी.आर. खराब कर दी।

परिवार में 'लो फिर' महिमा—लो फिर दहेज माँग रहे हैं, लो फिर लड़की पैदा हो गई, लो फिर बहू खाली हाथ आई, लो फिर कोई जला, लो फिर बहू ने मुकदमा कर दिया, लो फिर उनकी लड़की भाग गई, लो फिर मोहल्ले की नाक कट गई, लो फिर अपनी नाक कट गई।

अभी तो मैंने लो फिर का वर्णन समुद्र में बूँद जितना, थाने में ईमानदारी जितना, नेता में सभ्य आचरण जितना, अमेरिकी प्रशासन में विनम्रता जितना, पाकिस्तान सरकार के सत्य वचन जितना, आतंकवादी की आँख में आँसू जितना, हिंदी फिल्मों की हीरोइन के शरीर में कपड़े जितना ही किया है। इसका और वर्णन करने के लिए मुझे समुद्र को स्याही, धरती को कागज यानी उतना ही करना पड़ेगा, जितना भारत में भ्रष्टाचार के वर्णन के लिए करना पड़ता है।

देश का और आपका इस 'लो फिर' के चक्कर में क्या होता है, आपके जीवन में 'लो फिर' कितना लो अथवा हाई है या आज क्या-क्या 'लो फिर' हुआ, जानता नहीं, पर इतना जानता हूँ कि इस 'लो फिर' के कारण राधेलाल के घर में सुनामी आ गई। क्या-क्या लो फिर हुआ? पढ़िए—लो फिर बाई नहीं आई, लो फिर कार की बैटरी डाउन हो गई, लो फिर माँ-बाऊजी दो महीने के लिए आ रहे हैं, लो फिर दिल्ली बंद हो गई, लो फिर छोटी को बुखार आ गया, लो फिर सोसाइटी ने मेनटेनेंस बढ़ा दिया, लो फिर गीजर खराब हो गया, लो फिर पानी नहीं आ रहा है, लो फिर बिजली चली गई आदि-आदि, अनादि।

७३, साक्षर अपार्टमेंट्स, ए-३ पश्चिम विहार,
नई दिल्ली-११००६३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

सम्मान फिक्सिंग एसोसिएशन

● गिरीश पंकज

जमाना फिक्सिंग का है। री-मिक्सिंग का भी है। क्रिकेट की कोख से निकला फिक्सिंग नामक यह खतरनाक 'वायरस' चौतरफा वार कर रहा है। हर कोई इसका शिकार हो रहा है। मुझ पर भी फिक्सिंग का असर हुआ है। मैंने भी प्रेरणा लेकर एक संस्था बना डाली। नाम रख दिया—'सम्मान फिक्सिंग संघ।' इसमें फिक्सिंग शब्द को मैंने परदे के पीछे ही रखा है। आज हर तरफ सम्मान के भुखमरे जीभ लपलपाए खड़े हैं। पैसे देकर सम्मान खरीदनेवालों से लेकर अपनी एक अदद आत्मा को बेचकर भी सम्मान पाने के लिए लालायित महान् समाज में आप 'सम्मान फिक्सिंग संघ' के उज्ज्वल भविष्य की सुखद कल्पना कर ही सकते हैं। सो हमने बना डाला सम्मान फिक्सिंग एसोसिएशन। हिंदी में बोले तो 'सफिए'। इस सफिए की सफलता की कुछ बानगी भी देख लें।

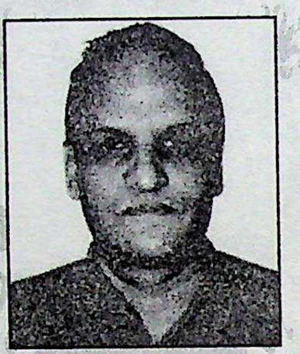

जन्म : १ जनवरी, १९५७।
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), बी.जे., डिप्लोमा इन फॉक आर्ट।
प्रकाशन : छह व्यंग्य संग्रह, तीन व्यंग्य उपन्यास, नवसाक्षरों के लिए बारह पुस्तकें, बच्चों के लिए चार पुस्तकें। एक गजल संग्रह, एक हास्य चालीसा। चार व्यंग्य संग्रहों में रचनाएँ संकलित, कुछ रचनाओं का तमिल, उर्दू, कन्नड, अंग्रेजी, नेपाली, सिंधी, मराठी, पंजाबी, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी आदि में अनुवाद।
सम्मान-पुरस्कार : 'अट्टहास युवा सम्मान', 'लीलारानी स्मृति सम्मान', 'रत्नभारती सम्मान' एवं दस संस्थाओं द्वारा सम्मान-पुरस्कार। कई देशों का भ्रमण।

जैसे भिखारियों की खुशी का ठिकाना नहीं रहता, जब उन्हें पता चलता है कि कहीं कोई भंडारा हो रहा है। जैसे ही शहर के सम्मान के भुक्खड़ों को पता चला कि कोई संस्था बनी है, जो सिर्फ सम्मान ही करती है तो उनके मन में संस्था के प्रति बड़ा सम्मान-भाव जगा और वे बिना किसी कामकाज के संस्था के पदाधिकारियों के दाएँ-बाएँ होने लगे। शायद इसलिए कि सोचते होंगे, कहीं सम्मान का कोटा न खत्म हो जाए। आजकल सम्मान कम हैं और उसे लपकनेवाले हद से ज्यादा।

उस दिन एक सज्जन मेरे सामने प्रकट हुए तो वे हाँफ रहे थे। शायद भागे-भागे चले आ रहे थे। मैंने चालू टाइप के बिजनेसमैन की तरह उन्हें ठंडा पिलाया, ताकि अगले को ठीक ढंग से भाँप लिया जाए। फिर व्यावसायिक मुसकान छितराते हुए पूछा, "हूँ, तो आप अपना सम्मान कराना चाहते हैं?"

"जी हाँ, जोर की लगी है। सम्मान ... जल्द से जल्द करा दें। कृपा होगी!"

"देखिए, जल्दी का काम शैतान का ... है। हमारी संस्था सम्मान करती है, लेकिन ... से। हड़बड़ी में सम्मान सम्मान नहीं, ... जैसे लगने लगता है।"

मेरी बात सुनकर सज्जन बोले, "... है, जैसी आपकी मरजी, लेकिन सम्मान ... धाँसू होना चाहिए।"

मैंने कुटिल मुसकान बिखेरते हुए ... "तुसी चिंता मत करो जी, बड़ा ही धाँसू ... इतना धाँसू कि आपके आँसू निकल आएँ, ... के आँसू। जितनी शक्कर डालोगे, उतनी मिठास पाओगे।"

"क्या मतलब?"

"मतलब ये कि जितना खर्चा ... उतना अच्छा और उतना ही स्तरीय स... होगा।"

"थोड़ा खुलासा करें।"

सज्जन की जिज्ञासा पर कोफ्त तो ... लेकिन अच्छे धंधेबाज की तरह मुझे मन मारकर शांत रहना ... उलटे नकली मुसकान का मुखौटा पहने हुए समझाना पड़ा, "दे... हम लोग टॉप के वी.वी.आइपीयों से लेकर नगर अध्यक्ष और ... मंत्री तक के हाथों से आपका सम्मान करवा सकते हैं, लेकिन ... हिसाब से खर्चा भी करना पड़ेगा। अब अगर किसी टॉप वी.आ... के हाथों सम्मानित होना चाहते हैं तो उसका रेट भी टॉप होगा। ... अपनी हैसियत हो तो आपको हम अमर कर सकते हैं। आपका ज... सम्मान कर डालेंगे। आपका अभिनंदन-पत्र इतना अद्भुत होगा ... आप हैरान रह जाएँगे। हम आपके ऐसे-ऐसे कारनामों का उल्लेख ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि आप खद चकरा जाएँगे। याद करते रह जाएँगे कि ऐसे कारनामे आपने कब किए थे। ऐसा अद्भुत सम्मान समारोह 'अरेंज' करने के लिए खर्चा भी तो वैसा करना पड़ेगा ना?''

सज्जन इस बार कुछ सहमे। मेरी बात सुनकर कहने लगे, ''लगता है टॉप वी.आइ.पी के हाथों सम्मान मेरे बजट में नहीं आ पाएगा। वैसे आपके रेट क्या-क्या हैं?''

मैंने अलग-अलग शख्सियतों से सम्मान के रेट वाली सूची पेश कर दी। उनके तो होश उड़ गए। बोले, ''आपकी सूची देखकर हाथ-पाँव फूल रहे हैं। नगरअध्यक्ष के हाथों से सम्मान का जो रेट आपने रखा है, उसे ही मैं दे पाने में असमर्थ हूँ। ग्यारह हजार रुपए होता तो मैं अपना सम्मान समारोह खुद 'अरेंज' कर लेता। कुछ और कम कीजिए ना!''

मैं भड़क गया—''आप सम्मान करवाने आए हैं या सब्जी-भाजी खरीदने? हमारा 'रेट' फिक्स है। अगर आपको पड़ता है तो बोलिए, वरना किसी और दुकान में 'ट्राई' कीजिए। नमस्कार। जयहिंद!''

मुझे उखड़ा देखकर सज्जन सकपकाए। फिर बोले, ''नहीं-नहीं, ऐसी बात नहीं है जी। किसी-न-किसी के हाथों सम्मान करवाऊँगा ही। अच्छा, ये तो बताइए कि अगर मैं किसी पार्षद के हाथों अपना सम्मान करवाना चाहूँ तो उसका रेट क्या है?''

मैंने खीझकर कहा, ''देखिए, हमारी संस्था एस.एफ.ए. केवल महापौर के स्तर का सम्मान समारोह अरेंज करती है। पार्षदों; भूतपूर्व पार्षदों या फिर किसी भी भूतपूर्व के हाथों सम्मान करवाने का काम हमारी कोई ब्रांच नहीं करती है। हाँ, हमने एक संस्था को अपनी फ्रेंचाइजी दी हुई है। आप उनके पास चले जाएँ। वहाँ आपको परती पड़ सकता है। मैं समझ सकता हूँ आपकी माली हालत। आप सम्मान भी पाना चाहते हैं और आपकी आर्थिक स्थिति भी उतनी अच्छी नहीं, इसलिए आप एफ.एस.ए. की ब्रांच से संपर्क करें। वहाँ आपको मिस्टर झंडू पंचारिष्टजी मिलेंगे। उनको आप अपना बजट बता दें। वे आपकी पूरी मदद करेंगे।'' सम्मान-क्षुधा से ग्रस्त सज्जन खुशी-खुशी चले गए। मैं अपने भावी कार्यक्रमों को अंतिम रूप देने में भिड़ गया।

'सम्मान फिक्सिंग एसोसिएशन' की आड़ में लोगों को 'टोपियाँ' पहनाने की योजना में मैं पूरी तन्मयता से लगा हुआ था। मैं ऐसे लोगों की तलाश कर रहा था, जो सम्मान रूपी प्यास को शांत करने के लिए एक अदद संस्था रूपी जल की तलाश में भटकते हुए मिल जाते हैं। ये लोग जीवन भर यही करते हैं। सम्मान पाने लायक कुछ भी न कर पाने के बावजूद कहीं-न-कहीं से सम्मान का 'पपलू' फिट कर ही लेते हैं। कुछ लोग चाय-पान-दारू, सिगरेट-फिगरेट आदि पर खर्च करते हैं। इस खर्चे में सम्मान खर्च भी जोड़ लेते हैं। जो चाय-पान की तरह सम्मान करवाना भी एक व्यसन हो। ऐसे लोग पैसे खर्च करते हैं और सम्मान झोंकते हैं। अगर किसी दूसरे सुपात्र का सम्मान करवाना हो तो उसकी राशि भी दे देते हैं। ऐसे लोगों की सूची तैयार करने के साथ-साथ मैं एक-दो ऐसी 'दुरात्माओं' की तलाश में भी था, जो सम्मान-फम्मान की राजनीति से दूर रहकर चुपचाप अपना काम करते रहते हैं। ऐसे लोग एक तो सम्मान के लिए राजी नहीं होते और मान लो कभी-कभार राजी हो भी गए तो सम्मान करवाने का पैसा देते नहीं, उलटे ले लेते हैं। ऐसे खतरनाक टाइप के लोगों को 'सम्मान फिक्सिंग एसोसिएशन' दूर से ही नमस्ते करता है। फिर भी संस्था की छवि बनाने के लिए ऐसे नासपीटों को भी ढूँढ़ना पड़ता है।

मैं इन्हीं कामों में भिड़ा था कि एक महानुभाव पधारे। मैं मन ही मन हँसा, 'मुरगी फसली ले फली।' प्रकट में धीर-गंभीर चेहरे के साथ बोला, ''हूँ, कहिए, क्या कर सकता हूँ मैं आपके लिए?''

''सम्मान और क्या?'' महानुभाव थोड़ा अक्खड़ टाइप में सम्मान शरणार्थी लगे, ''आपके पास कोई किसलिए आता है? सम्मान फिक्सिंग करवाने के लिए ही न?''

''जी हाँ, जी हाँ। बिलकुल ठीक फरमाया आपने।'' मैंने अपनी हँसी को दबाते हुए कहा, ''कहिए कब, किसके हाथों सम्मान करवाना

मैंने खीझकर कहा, ''देखिए, हमारी संस्था एस.एफ.ए. केवल महापौर के स्तर का सम्मान समारोह अरेंज करती है। पार्षदों, भूतपूर्व पार्षदों या फिर किसी भी भूतपूर्व के हाथों सम्मान करवाने का काम हमारी कोई ब्रांच नहीं करती है। हाँ, हमने एक संस्था को अपनी फ्रेंचाइजी दी हुई है। आप उनके पास चले जाएँ। वहाँ आपको परती पड़ सकता है। मैं समझ सकता हूँ आपकी माली हालत। आप सम्मान भी पाना चाहते हैं और आपकी आर्थिक स्थिति भी उतनी अच्छी नहीं, इसलिए आप एफ.एस.ए. की ब्रांच से संपर्क करें। वहाँ आपको मिस्टर झंडू पंचारिष्टजी मिलेंगे। उनको आप अपना बजट बता दें। वे आपकी पूरी मदद करेंगे।'' सम्मान-क्षुधा से ग्रस्त सज्जन खुशी-खुशी चले गए। मैं अपने भावी कार्यक्रमों को अंतिम रूप देने में भिड़ गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहते हैं आप?''

''मुख्यमंत्री के हाथों।'' महानुभाव बोले, ''मुख्यमंत्री आते हैं तो अखबारों में समाचार विस्तार के साथ छपता है।''

आदमी चालू टाइप का लगा। 'इस पट्ठे को तो सारी तिकड़म मालूम है।' मैंने मन ही मन सोचा। ''वो सब तो ठीक है, लेकिन काफी पैसे खर्च करने होंगे।'' मैंने कहा, ''मुख्यमंत्री के पास जाना होगा, उनसे टाइम फिक्स करना पड़ेगा। फिर कार्यक्रम की तैयारी, भीड़ जुटाने की चिंता, स्मृति-चिह्न, शॉल आदि में खर्चा। सोच लीजिए, पचास-एक हजार का खर्चा तो आ ही जाएगा।''

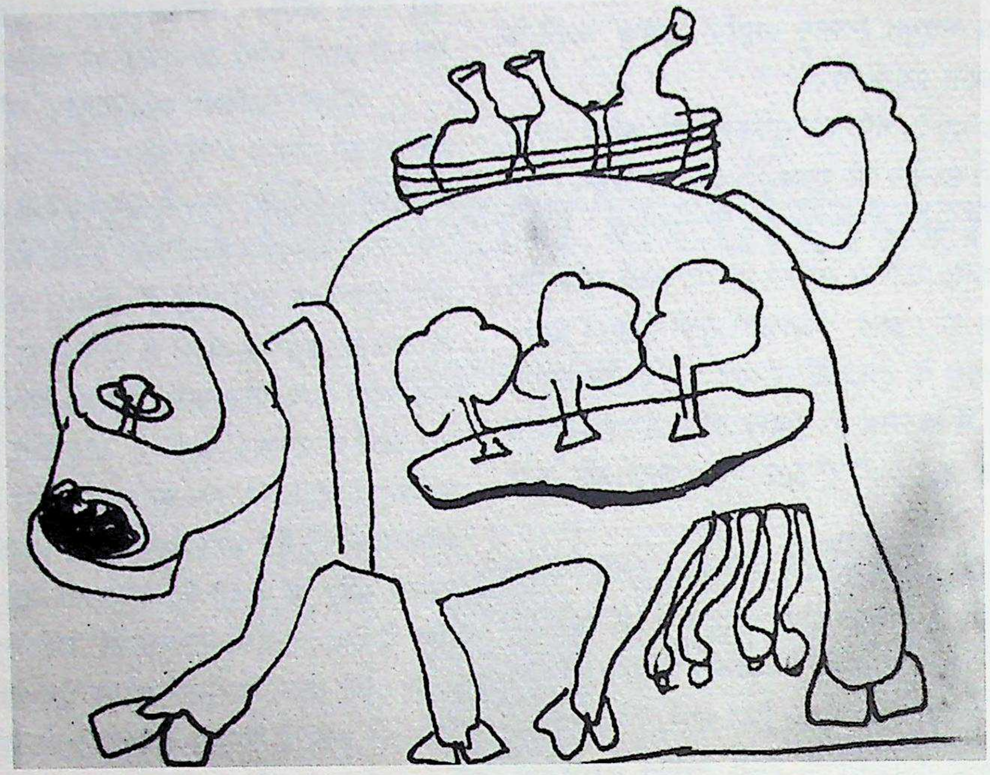

''बस! महानुभाव बोले, ''पचास हजार तो बड़ी छोटी रकम है। मैं एक लाख खर्च करने के मूड में था। खैर, पैसे बचे। अच्छा ये बताइए, भीड़ तो अच्छी-खासी होगी न? मुझे भीड़ चाहिए। पिछली बार एक संस्था को पैसे दिए थे, सालों के कार्यक्रम में दस लोग भी जमा नहीं हुए थे और मेरा दस हजार खर्च हो गया था।''

मैंने कुशल व्यवसायी की तरह कहा, ''आप चिंता मत कीजिए। अगर हमारे कार्यक्रम में मुख्यमंत्री आ गए तो देख लेना, जिस हॉल में कार्यक्रम करेंगे, वह खचाखच भरा रहेगा।''

''हॉल दो सौ लोगों वाला तो नहीं होगा?''

''अरे नहीं साहब, कम-से-कम दो हजार लोगों की क्षमतावाला होगा। अच्छा, ये तो बताइए अभिनंदन का प्रारूप आप देंगे कि हम लोग तैयार करा लें।''

''जैसी आपकी मरजी।'' महानुभाव बोले, ''वैसे आप लोग करें तो अच्छा रहेगा। मुझे पता चला है कि आपके अभिनंदन-पत्र बड़े धाँसू किस्म के रहते हैं। जो काम कभी किए ही नहीं गए, उन्हें भी आप कारनामों की सूची में जोड़ देते हैं। आप ही तैयार कीजिए शानदार अभिनंदन-पत्र, कि मुख्यमंत्री खुश होकर मुझे किसी मंडल या निगम का अध्यक्ष ही बना दें।''

''हें हें हे...मतलब सम्मान को आप सीढ़ी बनाना चाहते हैं।''

महानुभाव हँस पड़े, बोले, ''आप तो काफी समझदार प्राणी हैं, लेकिन ये तो बताइए कि क्या मुख्यमंत्री 'सम्मान फिक्सिंग एसोसिएशन' के बैनर तले आने को राजी हो जाएँगे?''

मैंने दाँत निपो... हुए कहा, ''अरे, हम... कच्ची गोलियाँ नहीं खे... हैं हुजूर। ऐसे बड़े-ब... नेताओं के पास हम ... जाते हैं, तब हमारी सं... का नाम होता है 'प्रति... सम्मान परिषद्।' बड़े ... खुश हो जाते हैं कि ... प्रतिभाओं को सम्मा... करना चाहते हैं। उन्हें ... पता कि हम इसकी ... में कैसे-कैसे गुल खि... रहे हैं।''

महानुभाव ... बातों से प्रभावित हु... बोले, ''जितनी जल्दी हो सके, सम्मान समारोह आयोजित करें। आ... तड़प रही है। महीनों हो गए हैं प्रायोजित सम्मान पाए। ऐ रात ... सम्मान पाने के सपने आते हैं।''

मैंने अपना पुराना जुमला दोहराया, ''देखिए, जल्दबाजी शैत... लोग करते हैं। हम अपने बड़े आयोजन आराम से करते हैं। वैसे छोटा... मोटा सम्मान तो कल-परसों ही होनेवाला है।''

महानुभाव बोले, ''तो फिलहाल छोटा-मोटा ही कर दें। मार्के... तो बना रहे। इस सम्मान का कितना रेट है?''

''देखिए, फिलहाल हम महापौर के हाथों आपका सम्मान करा... और इसका रेट है ग्यारह हजार।''

''बस, ग्यारह हजार? ये लीजिए।'' महानुभाव ने फौरन ग्यार... हजार का चेक काट दिया।

मैं उन्हें देखता रह गया। इन दिनों मेरी संस्था ठीक-ठाक ... कर रही है। कमाई भी अच्छी-खासी हो जाती है। जब तक सम्... खरीदनेवाले लोग मौजूद हैं, हमारे जैसे लोग बेचने के लिए तैयार ... हैं। कभी किसी को सम्मान की तलब लगे, दिल बेकरार हो रहा ... और गाँठ का पूरा भी हो तो उसे 'सम्मान फिक्सिंग एसोसिएशन' ... पता बता दीजिए। पता बड़ा छोटा सा है, श्रीमान् ठग्गूभाई वल्द लग्गू... गली नं. ४२०, लूटमार शॉप के बाजू, ऊटपटाँगपुर। एक बार तो ... का मौका दीजिए। धन्यवाद।

जी-३१, नया पंचशील ...
रायपुर-४९...
(छत्तीस...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जामुन का पेड़

● कृश्न चंदर

रात को बड़े जोर का झक्कड़ चला। सेक्रेटेरियट के लॉन में जामुन का एक पेड़ गिर पड़ा। सवेरे जब माली ने देखा तो उसे मालूम हुआ कि पेड़ के नीचे एक आदमी दबा पड़ा है।

माली दौड़ा-दौड़ा चपरासी के पास गया, चपरासी दौड़ा-दौड़ा क्लर्क के पास गया, क्लर्क दौड़ा-दौड़ा सुपरिंटेंडेंट के पास गया। सुपरिंटेंडेंट दौड़ा-दौड़ा बाहर लॉन में आया। मिनटों में ही गिरे हुए पेड़ के नीचे दबे हुए आदमी के चारों ओर भीड़ इकट्ठी हो गई।

''बेचारा, जामुन का पेड़! कितना फलदार था।'' एक क्लर्क बोला।

''और इसकी जामुन कितनी रसीली होती थीं,'' दूसरा क्लर्क याद करते हुए बोला।

''मैं फलों के मौसम में झोली भरकर ले जाता था। मेरे बच्चे इसकी जामुन कितनी खुशी से खाते थे।'' तीसरा क्लर्क रुआँसा होकर बोला।

''मगर, यह आदमी।'' माली ने दबे हुए आदमी की तरफ इशारा किया।

''हाँ, यह आदमी।'' सुपरिंटेंडेंट सोच में पड़ गया।

''पता नहीं जिंदा है कि मर गया?'' एक चपरासी ने पूछा।

''मर गया होगा, इतना भारी पेड़ जिसकी पीठ पर गिरे, वह बच कैसे सकता है?'' दूसरा चपरासी बोला।

''नहीं, मैं जिंदा हूँ।'' दबे हुए आदमी ने बड़ी मुश्किल से कराहते हुए कहा।

''जिंदा है।'' एक क्लर्क ने आश्चर्य से कहा।

''दरख्त को हटाकर इसे जल्दी से निकाल लेना चाहिए।'' माली ने सुझाव दिया।

''मुश्किल मालूम होता है।'' एक कामचोर और मोटा चपरासी बोला, ''पेड़ का तना बहुत भारी और वजनी है।''

''मुश्किल क्या है,'' माली बोला, ''अगर सुपरिंटेंडेंट साहब हुक्म दें तो पंद्रह-बीस माली, चपरासी और क्लर्क मिलकर पेड़ के नीचे से दबे हुए आदमी को निकाला जा सकता है।''

''माली ठीक कहता है'', बहुत से क्लर्क एक साथ बोल पड़े, ''लगाओ जोर, हम तैयार हैं।''

एकदम बहुत से लोग पेड़ को उठाने को तैयार हो गए।

''ठहरो!'' सुपरिंटेंडेंट बोला, ''मैं अंडर सेक्रेटरी से पूछ लूँ।''

सुपरिंटेंडेंट डिप्टी सेक्रेटरी के पास गया। अंडर सेक्रेटरी डिप्टी सेक्रेटरी के पास गया। डिप्टी सेक्रेटरी ज्वॉइंट सेक्रेटरी के पास गया। ज्वॉइंट सेक्रेटरी चीफ सेक्रेटरी के पास गया। चीफ सेक्रेटरी मिनिस्टर के पास गया। मिनिस्टर ने चीफ सेक्रेटरी से कुछ कहा। चीफ सेक्रेटरी ने ज्वॉइंट सेक्रेटरी से कुछ कहा। ज्वॉइंट सेक्रेटरी ने डिप्टी सेक्रेटरी से कहा, डिप्टी सेक्रेटरी ने अंडर सेक्रेटरी से कहा। फाइल चलती रही, इसी में आधा दिन बीत गया।

दोपहर के खाने पर दबे हुए आदमी के चारों ओर बहुत भीड़ हो गई थी। लोग तरह-तरह की बातें कर रहे थे। कुछ मनचले क्लर्कों ने समस्या को खुद ही सुलझाना चाहा। वे हुकूमत के फैसले का इंतजार किए बिना पेड़ को अपने आप ही हटा देने का निश्चय कर रहे थे कि इतने में सुपरिंटेंडेंट फाइल लिये भागा-भागा आया। बोला, ''हम लोग खुद इस पेड़ को यहाँ से नहीं हटा सकते। हम लोग व्यापार विभाग से संबंधित हैं, और यह पेड़ की समस्या है, जो कृषि-विभाग के अधीन है। मैं इस फाइल को अर्जेंट-मार्क करके कृषि विभाग में भेज रहा हूँ। वहाँ से उत्तर आते ही इस पेड़ को हटवा दिया जाएगा।''

दूसरे दिन कृषि विभाग से उत्तर आया कि पेड़ व्यापार विभाग के लॉन में गिरा है, इसलिए इस पेड़ को हटवाने या न हटवाने की जिम्मेदारी व्यापार विभाग पर पड़ती है।

वह उत्तर पढ़कर व्यापार विभाग को गुस्सा आ गया। उसने फौरन लिखा कि पेड़ों को हटवाने या न हटवाने की जिम्मेदारी कृषि विभाग पर लागू होती है, व्यापार विभाग का इससे कोई संबंध नहीं।

दूसरे दिन भी फाइल चलती रही। शाम को जवाब आया। हम मामले को हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट के हवाले कर रहे हैं, क्योंकि यह एक फलदार पेड़ का मामला है और एग्रीकल्चरल डिपार्टमेंट केवल अनाज और खेतीबाड़ी के मामलों में फैसला करने का हकदार है। जामुन का पेड़ एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फलदार पेड़ है, इसलिए यह पेड़ हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट के अंतर्गत आता है।

रात को माली ने दबे हुए आदमी को दाल-भात खिलाया। यद्यपि लॉन के चारों तरफ पुलिस का पहरा था। कहीं लोग कानून को अपने हाथ में लेकर पेड़ को खुद से हटवाने की कोशिश न करें, मगर एक पुलिस कांस्टेबल को दया आ गई और उसने माली को दबे हुए आदमी को खाना खिलाने की इजाजत दे दी।

माली ने दबे हुए आदमी से कहा, ''तुम्हारी फाइल चल रही है। आशा है, कल तक फैसला हो जाएगा।''

दबा हुआ आदमी कुछ नहीं बोला।

माली ने पेड़ के तने को ध्यान से देखकर कहा, ''अच्छा हुआ कि तना तुम्हारे कूल्हे पर गिरा, अगर कमर पर गिरता तो रीढ़ की हड्डी टूट जाती।''

दबा हुआ आदमी, फिर भी नहीं बोला।

माली ने फिर कहा, ''तुम्हारा यहाँ कोई वारिस है तो मुझे उसका अता-पता बताओ, मैं उन्हें खबर देने की कोशिश करूँगा।''

''मैं लावारिस हूँ।'' दबे हुए आदमी ने बड़ी मुश्किल से कहा।

माली खेद प्रकट करता हुआ वहाँ से हट गया।

तीसरे दिन हॉर्टीकल्चरल डिपार्टमेंट से जवाब आ गया। बड़ा कड़ा जवाब था और व्यंग्यपूर्ण।

हॉर्टीकल्चरल डिपार्टमेंट का सेक्रेटरी साहित्य-प्रेमी जान पड़ता था। उसने लिखा था, ''आश्चर्य है, इस समय जब हम 'पेड़ लगाओ' स्कीम ऊँचे स्तर पर चला रहे हैं, हमारे देश में ऐसे सरकारी अफसर मौजूद हैं, जो पेड़ों को काटने का सुझाव देते हैं, और वह भी एक फलदार पेड़ को, और वह भी जामुन के पेड़ को, जिसके फल जनता बड़े चाव से खाती है। हमारा विभाग किसी हालत में इस फलदार वृक्ष को काटने की इजाजत नहीं दे सकता।''

''अब क्या किया जाए?'' इस पर एक मनचले ने कहा, ''अगर पेड़ काटा नहीं जा सकता तो इस आदमी को ही काटकर निकाल लिया जाए।''

''यह देखिए,'' उस आदमी ने इशारे से बताया, ''अगर इस आदमी को बिलकुल बीच में से अर्थात् धड़ से काटा जाए तो आधा आदमी इधर से निकल आएगा और आधा उधर से बाहर आएगा और पेड़ वहीं का वहीं रहेगा।

''मगर इस तरह से तो मैं मर जाऊँगा।'' दबे हुए आदमी ने आपत्ति प्रकट की।

''यह भी ठीक कहता है।'' एक क्लर्क बोला।

आदमी को काटने वाली युक्ति प्रस्तुत करनेवाले ने भरपूर विरोध किया। ''आप जानते नहीं हैं? आजकल प्लास्टिक-सर्जरी कितनी उन्नति कर चुकी है। मैं समझता हूँ, अगर इस आदमी को बीच में से काटकर निकाल लिया तो प्लास्टिक सर्जरी से धड़ के स्थान पर इस आदमी को फिर से जोड़ा जा सकता है।''

इस बार फाइल को मेडिकल डिपार्टमेंट में भेज दिया गया। मेडिकल डिपार्टमेंट ने फौरन एक्शन लिया, और जिस दिन फाइल उनके विभाग में पहुँची, उसके दूसरे ही दिन उन्होंने अपने विभाग का सबसे योग्य प्लास्टिक सर्जन छान-बीन के लिए भेज दिया। सर्जन ने दबे हुए आदमी को अच्छी तरह टटोलकर, उसका स्वास्थ्य देखकर खून का दबाव देखा, नाड़ी की गति को परखा, दिल और फेफड़ों की जाँच करके रिपोर्ट भेज दी कि इस आदमी का प्लास्टिक ऑपरेशन हो सकता है और ऑपरेशन सफल भी होगा, मगर आदमी मर जाएगा।

इसलिए यह फैसला भी रद्द कर दिया गया।

रात को माली ने दबे हुए आदमी के मुँह में खिचड़ी डालते हुए उसे बताया कि अब मामला ऊपर चला गया है। सुना है कि कल सेक्रेटेरिएट के सारे सेक्रेटरियों की मीटिंग होगी। उसमें तुम्हारा केस रखा जाएगा। उम्मीद है, सब काम ठीक हो जाएगा।

दबा हुआ आदमी एक आह भरकर धीरे से बोला—

''ये तो माना कि तगाफुल न करोगे लेकिन,
खाक हो जाएँगे हम तुमको खबर होने तक''

माली ने अचंभे से मुँह में उँगली दबा ली और चकित भाव से बोला, ''क्या तुम शायर हो?''

दबे हुए आदमी ने धीरे से सिर हिला दिया।

दूसरे दिन माली ने चपरासी को बताया, चपरासी ने क्लर्क को, क्लर्क ने हेड-क्लर्क को, थोड़ी ही देर में यह अफवाह फैल गई कि दबा हुआ आदमी शायर है। बस, फिर क्या था, लोगों का झुंड शायर को देखने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए उमड़ पड़ा। इसकी चर्चा शहर में भी फैल गई और शाम तक गली-गली से शायर जमा होने शुरू हो गए। सेक्रेटेरिएट का लॉन भाँति-भाँति के शायरों से भर गया और दबे हुए आदमी के चारों ओर मुशायरे का सा वातावरण उत्पन्न हो गया। सेक्रेटरिएट के कई क्लर्क और अंडर-सेक्रेटरी तक, जिन्हें साहित्य और कविता से लगाव था, रुक गए। कुछ शायर दबे हुए आदमी को अपनी गजलें और नज्में सुनाने लगे। कई क्लर्क उसको अपनी गजलों को दुरुस्त करने पर मजबूर करने लगे।

जब यह पता चला कि दबा हुआ आदमी एक शायर है, तो सेक्रेटेरिएट की सब-कमेटी ने फैसला किया कि चूँकि दबा हुआ आदमी एक शायर है, इसलिए इस फाइल का संबंध न एग्रीकल्चरल डिपार्टमेंट से है, न हॉर्टीकल्चरल डिपार्टमेंट से, बल्कि सिर्फ कल्चरल डिपार्टमेंट से है। कल्चरल डिपार्टमेंट से अनुरोध किया गया कि जल्द-से-जल्द मामले का फैसला करके अभागे शायर को इस फलदार पेड़ से छुटकारा दिलाया जाए।

फाइल कल्चरल डिपार्टमेंट के अनेक विभागों से गुजरती हुई साहित्य अकादमी के सेक्रेटरी के पास पहुँची। बेचारा सेक्रेटरी उसी समय अपनी गाड़ी में सवार होकर सेक्रेटेरिएट पहुँचा और दबे हुए आदमी से इंटरव्यू लेने लगा।

''तुम शायर हो?'' उसने पूछा।

''जी हाँ!'' दबे हुए आदमी ने जवाब दिया।

''क्या उपनाम रखते हो?''

''ओस!''

''ओस?'' सेक्रेटरी जोर से चीखा, ''क्या तुम वही 'ओस' हो, जिसका कविता-संग्रह 'ओस के फूल' अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है?''

दबे हुए शायर ने इकरार में सिर हलाया।

''क्या तुम हमारी अकादमी के मेंबर हो?'' सेक्रेटरी ने पूछा।

''नहीं।''

''आश्चर्य है,'' सेक्रेटरी जोर से चीखा, ''इतना बड़ा शायर, 'ओस के फूल' का लेखक और हमारी अकादमी का मेंबर नहीं है। उफ कैसी भूल हो गई हमसे, कितना बड़ा शायर और कैसी अँधेरी गुमनामी में दबा पड़ा है।''

''गुमनामी में नहीं—एक दरख्त के नीचे दबा पड़ा हूँ, कृपया मुझे इस पेड़ के नीचे से निकालिए।''

''अभी बंदोबस्त करता हूँ।'' सेक्रेटरी फौरन बोला और फौरन उसने अपने विभाग में रिपोर्ट की।

दूसरे दिन सेक्रेटरी भागा-भागा शायर के पास आया और बोला, ''मुबारक हो, मिठाई खिलाओ, हमारी सरकारी साहित्य अकादमी ने तुम्हें अपनी केंद्रीय शाखा का मेंबर चुन लिया है, यह लो चुनाव-पत्र।''

''मगर मुझे इस पेड़ के नीचे से तो निकालो'', दबे हुए आदमी ने कराहकर कहा। उसकी साँस बड़ी मुश्किल से चल रही थी और उसकी आँखों से मालूम होता था कि वह घोर पीड़ा और यातना में पड़ा है।

''यह हम नहीं कर सकते।'' सेक्रेटरी ने कहा, ''और जो हम कर सकते थे, वह हमने कर दिया है। बल्कि हम यहाँ तक तो कर सकते थे कि अगर तुम मर जाओ तो तुम्हारी बीवी को वजीफा दे सकते हैं, अगर तुम दरख्वास्त दो तो हम वह भी कर सकते हैं।''

''मैं अभी जीवित हूँ'', शायद रुक-रुककर बोला, ''मुझे जिंदा रखो।''

''मुसीबत यह है'', सरकारी साहित्य अकादमी का सेक्रेटरी हाथ मलते हुए बोला, ''हमारा विभाग सिर्फ कल्चर से संबंधित है। पेड़ काटने का मामला कलम-दवात से नहीं, आरी-कुल्हाड़ी से संबंधित है। उसके लिए हमने फॉरेस्ट डिपार्टमेंट को लिख दिया है और अर्जेंट लिखा है।''

शाम को माली ने आकर दबे हुए आदमी को बताया, ''कल फॉरेस्ट डिपार्टमेंट के आदमी आकर इस पेड़ को काट देंगे और तुम्हारी जान बच जाएगी।''

माली बहुत खुश था। दबे हुए आदमी का स्वास्थ्य जवाब दे रहा था, मगर वह किसी-न-किसी तरह अपने जीवन के लिए लड़े जा रहा था। कल तक··· सवेरे तक··· किसी न किसी तरह से उसे जीवित रहना है।

दूसरे दिन जब फॉरेस्ट डिपार्टमेंट के आदमी आरी-कुलहाड़ी लेकर पहुँचे तो उनको पेड़ काटने से रोक दिया गया। मालूम हुआ कि विदेश-विभाग से हुक्म आया था कि इस पेड़ को न काटा जाए। कारण यह था कि इस पेड़ को दस साल पहले पीटोनिया राज्य के प्रधानमंत्री ने सेक्रेटेरिएट के लॉन में लगाया था। अब अगर यह पेड़ काटा गया तो इस बात का काफी अंदेशा था कि पीटोनिया सरकार से हमारे संबंध सदा के लिए बिगड़ जाएँगे।''

''मगर एक आदमी की जान का सवाल है।'' एक क्लर्क चिल्लाया।

''दूसरी ओर दो राज्यों के संबंधों का सवाल है।'' दूसरे क्लर्क ने पहले क्लर्क को समझाया, ''और यह भी तो समझो कि पीटोनिया सरकार हमारे राज्य को कितनी सहायता देती है—क्या हम उनकी मित्रता की खातिर एक आदमी के जीवन का भी बलिदान नहीं कर सकते?''

''शायर को मर जाना चाहिए?''

''निस्संदेह।''

अंडर सेक्रेटरी ने सुपरिटेंडेंट को बताया, ''आज सवेरे प्रधान मंत्री दौरे से वापस आ गए हैं। आज चार बजे विदेश-विभाग इस पेड़ की फाइल उनके सामने पेश करेगा, जो वे फैसला देंगे, वही सबको स्वीकार होगा।''

शाम के पाँच बजे सुपरिटेंडेंट स्वयं शायर की फाइल लेकर उसके पास गया, ''सुनते हो?'' आते ही वह खुशी से फाइल को हिलाते हुए चिल्लाया, ''प्रधानमंत्री ने इस पेड़ को काटने का हुक्म दे दिया और इस घटना की सारी अंतरराष्ट्रीय जिम्मेदारी अपनी सिर ले ली है। कल यह पेड़ काट दिया जाएगा और तुम्हें मिल जाएगा इस संकट से छुटकारा। सुनते हो, आज तुम्हारी फाइल मुकम्मल हो गई।''

मगर शायर का हाथ ठंडा था। आँखों की पुतलियाँ निर्जीव थीं और च्यूँटियों की एक लंबी पंक्ति उसके मुँह में जा रही थी।

उसके जीवन की फाइल मुकम्मल हो चुकी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिमाचल प्रदेश के बढ़ते कदम

सबसे ऊपर हिमाचल

सामाजिक सेवा को सर्वोच्च प्राथमिकता

गत तीन वर्षों में 1 लाख 4 हजार से अधिक लोगों को सामाजिक सुरक्षा पेंशन स्वीकृत।

सामाजिक सुरक्षा पैंशन 220 से बढ़ाकर ₹330, दिहाड़ीदारों की दिहाड़ी 75 से बढ़ाकर ₹120 की गई।

गुणात्मक शिक्षा का उत्कृष्ट केंद्र

10 नए विश्वविद्यालय स्थापित, सरकारी क्षेत्र में एक तकनीकी विश्वविद्यालय स्थापित।

सोलन ज़िला के बद्दी में 'अटल शिक्षा कुंज' में अंतरराष्ट्रीय स्तर के शिक्षण संस्थान खोले जा रहे हैं।

घर-द्वार पर श्रेष्ठ स्वास्थ्य सेवाएं

'अटल स्वास्थ्य सेवा' - आपात स्थिति में 30 मिनट में निःशुल्क एंबुलेंस सुविधा।

सभी सरकारी स्वास्थ्य संस्थानों में बी.पी.एल व ग़रीब लोगों को 38 दवाएं मुफ्त।

'मुख्यमंत्री स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम' -विद्यार्थियों का स्वास्थ्य परीक्षण मुफ्त।

वरिष्ठ नागरिकों को 'मुस्कान' योजना के तहत निःशुल्क डेंचर।

सड़कों का निरन्तर विस्तार

905 गांवों को सड़क सुविधा, 3062 कि.मी. लम्बाई की सड़कों का निर्माण,
2662 कि.मी. सड़कें पक्की हुईं। सात नए राष्ट्रीय उच्च मार्ग स्वीकृत।
220 पुल बने, सुरंगों के निर्माण को प्राथमिकता।

कृषि उत्पादन से सम्पन्नता

'पंडित दीन दयाल किसान बागवान समृद्धि योजना'- 16,500 पॉलीहाउस निर्माण,
20 हज़ार हैक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई सुविधा का लक्ष्य।

पॉलीहाउस निर्माण एवं सूक्ष्म सिंचाई के लिए 80 से 90 प्रतिशत उपदान की सुविधा।

'दूध गंगा योजना' - 50 हज़ार परिवार होंगे लाभान्वित, ₹15 लाख तक के ऋण सस्ती ब्याज दरों पर उपलब्ध।

'मुख्यमंत्री आरोग्य पशुधन योजना'-1272 पशु औषधालय खोलने का लक्ष्य।
अब तक 190 पशु औषधालय खोले गए।

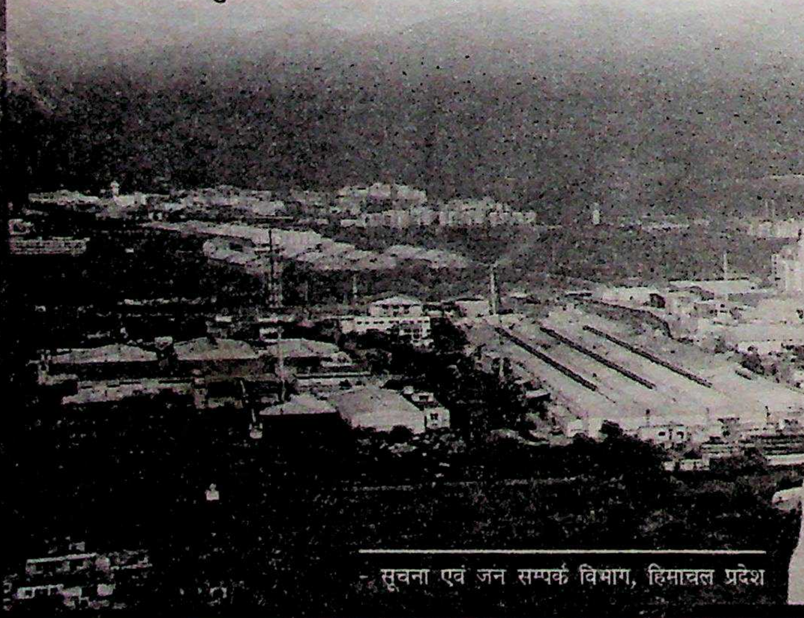

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

ये मिलनेवाले लोग

● रमाशंकर श्रीवास्तव

जन्म : पचरूखी (सीवान) बिहार में।

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.। अवकाश प्राप्त वरिष्ठ रीडर, राजधानी कॉलेज (दिल्ली विश्वविद्यालय)।

कृतित्व : पंद्रह उपन्यास, छह हास्य व्यंग्य, दो बाल उपन्यास, दो संस्मरण ग्रंथ, एक समीक्षा पुस्तक प्रकाशित तथा तीन पुस्तकों का संपादन।

सम्मान-पुरस्कार : हिंदी अकादमी दिल्ली द्वारा 'साहित्यिक कृति सम्मान' १९९४-९५ तथा व्यंग्य विधा में 'काका हाथरसी सम्मान'।

दस वर्षों बाद मैं पुराना मुहल्ला छोड़ नए में आया था। दार्शनिक भाव में सोच-सोचकर अपने मन को मनाने की कोशिश की कि मेरी किस्मत में मुहल्ला छोड़ना लिखा था। वैसे मुहल्ले-मुहल्ले में काई खास फर्क नहीं होता। नई जगह में नए लोग मिलते हैं। मिलते-मिलते वे पुराने पड़ जाते हैं। मैं भी उनके लिए पुराना पड़ जाता हूँ। दुआ-सलाम के सिलसिले बढ़ने लगते हैं। जब वे घिस-पिट जाते हैं तब रुसवा-रुसवाई या दुश्मनी शुरू हो जाती है। जो ज्यादा नजदीक हो गया, उसके घर आना-जाना शुरू हो जाता है। उनके घर की जन्म-मृत्यु, छठी, पूजा, भाँति-भाँति की वर्षगाँठें आदि जलसे पूरे साल मेरी जेब की तलाशी लेते रहते हैं।

यह दुनिया मिलने-जुलनेवालों की है। अपने लोग न मिलें तो फिक्र होती है कि अमुक जी कहाँ जा छिपे। हम न मिलें तो उनका फोन घनघनाने लगता है। सोचकर संतोष होता है कि चलो, हमें भी पूछनेवाला तो कोई है इस दुनिया में। मुझसे मिलनेवालों की कैटेगरी अनेक है। तरह-तरह के चेहरे, तरह-तरह की बातें। जब कोई उदास थोबड़ा लेकर आता है तो मेरा उल्लसित मन गिर जाता है। अपनी किस्मत को कोसने लगता हूँ। इतनी सुबह ऐसे ही सुमुख का दर्शन बदा था। अरे भाई, जरा दिन चढ़ जाने देते, आठ-दस लोगों से मिल लेने देते तब तुम आते। मुँह लटकाए पूछ रहे हो कि तुम्हारी कोई चिट्ठी डाकिया गलती से मेरे यहाँ तो नहीं डाल गया है। जी में आया कि मैं भी उन्हीं की तरह सूखा-मरियल चेहरा बनाए कह दूँ—जी नहीं, डाकिया कोई पागल है, जो आपकी चिट्ठी मेरे घर डाल जाएगा। मगर मैं अपनी आदत से मजबूर था। इमरती जैसे रसपगे शब्दों में जवाब देना अपनी आदत थी। मैंने कहा—आइए, बैठिए। ऐसा तो कुछ याद नहीं आता, जो डाकिया आपकी चिट्ठी मेरे यहाँ गिरा गया हो। एक बार उससे गलती हुई थी। उस दिन उसकी साली की शादी थी। वह उदास और खोया-खोया डाक बाँट रहा था। बी-ब्लॉकवाले शर्माजी की चिट्ठी वह मुझे देकर चला गया। उसे पुकारूँ कि उसकी साइकिल दनदनाती हुई दूर चली गई थी।

शर्माजी को चिट्ठी देने मैं खुद गया। वहाँ एक पंथ दो काज हो गए। उन्होंने बैठा लिया, चाय पिलाई। मेरी उम्र पूछी। पत्नी और बच्चों की उम्र पूछी। अंत में कहा, एल.आई.सी. की एक पॉलिसी ले लीजिए। फायदे में रहिएगा। आप सोच लीजिए, मैं कल आपके घर आ जाऊँगा। मैं फिक्र लेकर लौटा। कल शर्माजी आएँगे, इसके पहले हमें घर छोड़ देना चाहिए। दूसरी सुबह बच्चों को स्कूल भेज हम दोनों प्राणी जू की तरफ चले गए। ये मिलनेवाले एहसास करा देते हैं कि इस धरती पर भाँति-भाँति के लोग विचरते हैं। कब कौन किसी की प्राइवेट लाइफ में आ घुसेगा, पता नहीं चलता। आते-जाते एक सज्जन इतने घुल-मिल गए कि अपने निजी जीवन की बातें भी बताने लगे। किस रात पत्नी से उनका झगड़ा हुआ। किस बच्चे को जनमाने में कैसी-कैसी मुश्किलें आईं। लालन-पालन और पढ़ाई-लिखाई में कितने पापड़ बेलने पड़े। रोज शाम को कम-से-कम १० मिनट उपदेश देते और बेटे को भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद तथा ईमानदार एवं आदर्श प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री जैसा बनने को प्रेरित करते। लड़का जवान था। पिता के उपदेश एक कान से सुनता और दूसरे कान से बाहर निकाल देता। ऐसी बातों में उसकी दिलचस्पी नहीं थी। उसके मन के आँगन में दो साल पहले से एक प्रेमिका मँडरा रही थी। पिता ऐसी कमजोरियों से अच्छी तरह वाकिफ थे। मगर उनकी मजबूरी थी कि इस उम्र में प्रेम-व्यापार में बेटे से अपना शेयर नहीं माँग सकते थे।

उनकी बातों से मेरा ज्ञान काफी बढ़ गया। अब वे अपने ज्ञान की वृद्धि में लगे। पूछ बैठे—आपकी सालियाँ कितनी हैं? मैं चकराया। पता नहीं मेरी सालियों का क्या करेंगे। मैं खुद बुढ़ापे की ओर था, मगर बताते समय अपनी सालियों को बूढ़ी बताना मेरी प्रतिष्ठा के विरुद्ध था। बढ़ा-चढ़ाकर बताने में मैं कुशल था। अरे भाई साहब, तीसरी साली का क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछना। वह इतनी खूबसूरत, इतनी चंचल, इतनी हाजिर-जवाब है कि दूसरे लोग उससे सेकंड भर बात करने के लिए मचल उठते हैं। अपनी गलती मैंने बाद में महसूस की। मित्र को मचलने के लिए मैंने मसाला दे दिया था। और वास्तविकता यह थी कि वह साली आजकल दाँत की पीड़ा से परेशान रहती थी। फोन से खबर मिली थी कि इधर उसने तीन दाँत निकलवा दिए हैं। इस स्वप्न जगत् की वस्तु की सच्चाई उजागर करने में खतरा था। उनके सवाल का जवाब तो देना ही था। मैंने कहा—आजकल वह अमेरिका जा रही हैं। लौट आने दीजिए तो आपसे मिलवाऊँगा। उनकी बेचैनी बहुत दिनों तक मेरा सुख बनी रही।

कुछ दिनों पहले मैं सरकारी दाल खरीदने की लाइन में खड़ा था। सरकारी घोषणाओं को सच मान लेने का मुझमें संस्कार था। लाइन लंबी थी। लेकिन मुझे कोई बेचैनी नहीं थी। गाँव से चलते समय मैं और सारी बेचैनियाँ छोड़ आया था, यहाँ केवल पैसा कमाने की बेचैनी लेकर आया था। हालाँकि इस बेचैनी ने मुझे बी.पी. और शुगर का प्रसाद दे दिया था। भरोसा था कि पैसे की आमदनी रहेगी तो ये दोनों बीमारियाँ कोई जल्दबाजी नहीं करेंगी। पैसेवालों के आगे बड़ी-बड़ी बीमारियाँ नरम हो जाती हैं। लाइन में खड़े-खड़े बगल वाले सज्जन से मैं आज के हालात पर बात करता रहा। उनको हर क्षेत्र का ज्ञान था। वहीं मैंने महसूस किया कि उनके सामने मैं अल्पज्ञानी हूँ। केंद्रीय सरकार की नीति, आतंकवादियों की गतिविधि, महिला आरक्षण बिल, बढ़ती महँगाई, बादल, मौसम, आज की नई पीढ़ी की सोच सभी विषयों पर उन्होंने काफी कुछ कहा। जब हमारी बारी आई तो दाल खत्म हो चुकी थी। इस प्रकार दाल को लेकर हम लोग काफी परिचित हो गए।

बाद में वे मिलने मेरे घर आने लगे। पत्नी से नहीं मिलवाता तो वे कहीं पूछ पड़ते—आप किस साल विधुर हुए थे? अगर मैं खंडन करता तो अगला सवाल होता—पत्नी से आपकी पटती तो है? इसलिए मैंने सिद्धांत बना लिया था कि श्रीमतीजी मुझ पर नाराज भी हों तो उन्हें मुसकराते हुए मेरे मित्र के सामने आना चाहिए। यह हम दोनों का अंदरूनी समझौता था। हम आपस में भले लड़-कट लें, मगर दूसरों के सामने मुसकराते हुए आएँगे। उनके जाने के बाद दोनों पूर्व अवस्था में आकर मुँह-गाल फुला लेंगे। पिचके गाल से पता करना होता है कि यह पहले कितनी देर फूला था।

इसमें शक नहीं कि मित्रों-परिचितों से मिलने का एक अलग सुख है। परंतु इसकी भी एक सीमा है। नौकरी से रिटायर लोग अकसर रिटायरों की खोज में रहते हैं। मिलने पर उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहता। उनके पास अतीत का इतना मसाला होता है कि सुनते-सुनते आपको नींद आने लगे। इस माने में अपनी किस्मत बड़ी सहायक होती है। एक दिन सड़क पर सेब का ठेला खड़ा था और मैं ठेले के पास खड़ा था। मैं सेब का रेट पूछ रहा था कि एक और ग्राहक आ गए। बात-बात में परिचय हो गया। जाते-जाते कह गए—कल आपसे मिलने आऊँगा। घर आकर मैंने बता दिया कि कल एक रिटायर मित्र मुझसे मिलने आ रहे हैं। अंदर दीवार पर नए साल का कैलेंडर ठोंक रहा था। खबर मिली कि कोई सज्जन मिलने आए हैं। कैसे भुलक्कड़ हैं। मिलने की बात कल थी, आज कैसे आ गए। दो-तीन मिनट में मैं हाजिर हुआ। ये तो कोई और थे। मैंने पूछा—आप?

इसमें शक नहीं कि मित्रों-परिचितों से मिलने का एक अलग सुख है। परंतु इसकी भी एक सीमा है। नौकरी से रिटायर लोग अकसर रिटायरों की खोज में रहते हैं। मिलने पर उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहता। उनके पास अतीत का इतना मसाला होता है कि सुनते-सुनते आपको नींद आने लगे। इस माने में अपनी किस्मत बड़ी सहायक होती है। एक दिन सड़क पर सेब का ठेला खड़ा था और मैं ठेले के पास खड़ा था। मैं सेब का रेट पूछ रहा था कि एक और ग्राहक आ गए। बात-बात में परिचय हो गया। जाते-जाते कह गए—कल आपसे मिलने आऊँगा। घर आकर मैंने बता दिया कि कल एक रिटायर मित्र मुझसे मिलने आ रहे हैं। अंदर दीवार पर नए साल का कैलेंडर ठोंक रहा था। खबर मिली कि कोई सज्जन मिलने आए हैं। कैसे भुलक्कड़ हैं। मिलने की बात कल थी, आज कैसे आ गए। दो-तीन मिनट में मैं हाजिर हुआ। ये तो कोई और थे। मैंने पूछा—आप?

वे बोले—जी, आप मुझे पहचानते नहीं होंगे। आपके पड़ोस में पिछले सोमवार को कथा-पूजा थी। घर के मालिक मेरे बड़े भाई के क्लास फेलो रहे हैं। मुझे भी निमंत्रण था। वहीं मालूम हुआ कि आप भी मेरी तरह रिटायर प्राणी हैं। जानकर बड़ी खुशी हुई। सोचा, आपसे मिल लूँ। और सुनाइए, आप कैसे हैं? सबकुछ चंगा तो है? मुझे अपनी बेटी की शादी करनी है। तीन बेटियों को तो सर्विस-पीरियड में ही निबटा दिया था। वे अपने-अपने घर खुश हैं। तब नौकरी में ऊपरी आमदनी थी। दफ्तर के चपरासी-नौकर भी सेवाभाव से मेरे घर आते-जाते थे। सबकुछ आसानी से चल रहा था। रिटायर होने के बाद कुछ दिक्कतें आ गईं। रुपया-पैसा भी खर्च करने में अब बहुत कुछ सोचना पड़ता है। पता चला है कि आपको एक बेटा है। विवाह योग्य हो गए हैं। अपनी बिटिया का बायोडाटा-फोटो लेकर आया हूँ। आप बेटे की शादी कहीं-न-कहीं तो करेंगे ही। मेरी प्रार्थना पर भी विचार कीजिए।

वे और भी बातें करते रहे। सारा सुनने के बाद मुझे जवाब देना था। मैंने कहा—भाई साहब, आपकी बात दुरुस्त है, किंतु आपको सूचना गलत मिली है। मेरे बेटे की शादी दो साल पहले हो चुकी है। उसने इस पुण्य कार्य में मेरे सहयोग की आवश्यकता नहीं समझी। बिना रस्म-रिवाज के दुलहन मेरे घर आ गई। सारा सहयोग कोर्ट-कचहरी का था। बच्चों की उम्र आप बाँधकर तो नहीं रख सकते। मेरे फैसले के मेच्यो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने में थोड़ी देर लगी तब तक बेटा मेच्योर हो चुका था और कोर्ट चला गया।

उन्होंने कहा—चलिए, यह रिश्ता मेरी किस्मत में नहीं था। अब अपनी बेटी से जाकर कहूँगा—आँखें खुली रखो। जहाँ जी भरे वहाँ शादी कर लो। मेरी ओर से काई आपत्ति नहीं होगी। हाँ, मेरे बैंक खाते की ओर हाथ मत बढ़ाना।

अब वे सज्जन हर दूसरे-तीसरे दिन आ जाते हैं। कहते हैं, आपसे मिलकर बड़ी खुशी होती है। आप मेरे गुरु हैं, राह दिखाई है। मेरी बेटी भी कोर्ट में शादी करने वाली है। कितने मिलनेवाले समय तय कर नहीं आते हैं। मन को कहकर समझा लेता हूँ कि आज का आदमी अपनी व्यस्तता के बोझ से दबा रहता है। जहाँ लोग ज्यादा व्यस्त रहते हैं वहाँ चोरी, छीना-झपटी कम होती है। एक मित्र दिन में बाजार टहलने निकलते हैं और थकने पर मेरे घर आकर बैठ जाते हैं। यहाँ उनके दो-ढाई घंटे बढ़िया से कट जाते हैं। उनके जाने पर ध्यान आता है कि मुझे अमुक जगह जाना था, बातों में ही वह कार्यक्रम ध्यान से उतर गया। ऐसे मित्र और कुछ करें या न करें, एकांत का तनाव तो दूर कर ही देते हैं।

उस दिन बैठा-बैठा मैं कैलेंडर देख रहा था और एक यात्रा के लिए रेल आरक्षण की सुविधा सोच रहा था कि एक भाई साहब अपने तीन पोते-पोतियों को लेकर आ गए। याददाश्त पर जोर डाला तब ध्यान आया कि ये पाँच-छह महीने पहले रेलवे प्लेटफॉर्म पर मिले थे। दिल्ली में मुहल्ला पास होने के कारण मिलने आ गए थे। बच्चों को निर्देश दिया—दादाजी के पैर छूओ। गुडमॉर्निंग करो। तीन-चार बार कहा तो बच्चों ने अपना बायाँ हाथ तान-तानकर पैर छूने की मुद्रा बनाई। मेरा आशीर्वाद पाकर वे कमरे का मुआयना करने लगे। एक को गिरी पेंसिल मिल गई, उससे दीवार पर लिखने लगा। घर की सफेदी मैंने दो महीने ही पहले कराई थी। दूसरा बच्चा टेबल पर रखे अलार्म पीस की सूइयाँ ठीक करने लगा। सबसे छोटे ने ऐसा मुँह बनाया कि उनके दादाजी ने भाँप लिया कि इसे बाथरूम जाने की जरूरत है। वह काम कराया गया। उन्होंने मुझसे पूछा—और सुनाइए, क्या हाल हैं? इस घर में छोटे बच्चे नहीं हैं क्या? मैंने अपने पोते को बुलाया। बच्चों में खेल शुरू हुआ। फिर मारपीट, हम दोनों कहते रहे—कोई बात नहीं, कोई बात नहीं। उस क्षण हम दोनों बाल मनोविज्ञान के ज्ञाता बन गए थे।

चाय-मिठाई आई। एक बच्चे ने नमकीन की इच्छा जाहिर की। नमकीन का दूसरा प्लेट आया। खाते समय एक प्लेट ने फर्श पर गिरकर अपना हृदय विदीर्ण कर लिया। कप की चाय ऐसी छलकी कि फर्श पर पड़े जूते ने स्नान कर लिया।

उन्होंने फिर पूछा—और सुनाइए ,क्या हाल हैं? कभी हमारे यहाँ भी आइए। सभी को लेकर आइए।

मिलने-जुलने का संकल्प लेकर वे एक घंटे बाद विदा हुए। उनके जाते समय मैंने अपना मुँह ऐसा बनाया जैसे इस क्षण का वियोग मुझसे सहन नहीं हो रहा है। ये मिलने-जुलनेवाले लोग संयोग-वियोग बहुत देते हैं।

एक दिन तीन महिलाओं का झुंड आया। उन्होंने मुझे देखकर केवल नमस्ते का उपहार दिया। एक ने इधर-उधर नजर दौड़ाते हुए पूछा—बहनजी कहाँ हैं? अबोले मन में मैं खुश हुआ कि आज मेरे घर तीन-तीन सालियाँ-सी महिलाएँ आई हैं। वे मेरी श्रीमतीजी से चहकती हुई मिलीं—बहनजी, आज मेरे घर तीन-तीन सालियाँ-सी महिलाएँ आई हैं। वे मेरी श्रीमतीजी से चहकती हुई मिलीं—बहनजी, आज चार बजे शाम में मेरे घर कीर्तन है। जरूर आइएगा। आपकी वो नई वाली दरी चाहिए।

भगवान् के नाम पर मेरी जीवनसंगिनी दरी क्या दिल तक निकालकर दे सकती थीं। महिलाएँ दरी लेकर चली गईं।

बिना दूसरों से मिले-जुले जीवन का क्या अर्थ है। जगह-जगह की जानकारियों से अपना जनरल नॉलेज स्वस्थ रहता है। एक रिश्तेदार इतने व्यस्त रूप में आए कि लगा, घंटे भर में चले जाएँगे। मगर तीन दिन ठहर गए। मैं अतिथि देवो भव बना उनके लिए इस महँगाई में अच्छी-अच्छी सब्जियाँ बाजार से लाता रहा। वे सब्जी खाने में निर्मम थे। मेरे बेटे की हेल्थ पर वे काफी चिंतित दिखे। घंटे भर मुझे समझाते रहे, जिसका निष्कर्ष था कि बेटे को रोज एक किलो सब्जी खिलाया करो। उन्होंने दूसरी रिश्तेदारियों का भी करेंट न्यूज सुनाया—अमुक के घर में बँटवारा हो गया। अमुक का बेटा नशाखोरी में पकड़ा गया। दो महीने से जेल में है। मंदिर की पुजारिन की बेटी गर्भ नहीं सँभाल सकी, कुएँ में कूद गई। बाँके बिहारी की यही मरजी थी।

लौटते समय वे मेरी अटैची दो दिनों के लिए ले गए। आज पाँच महीने हो गए, दिखाई नहीं पड़े। बाद में ध्यान आया कि उन्होंने कहा था—जो दूसरों की मदद करता है उसकी मदद भगवान् करते हैं।

अब मैं प्रतीक्षा में हूँ कि किसी दिन भगवान् भी मेरे घर पधारें। वे जो माँगेंगे, दे दूँगा और वापसी की उम्मीद नहीं करूँगा।

सा अ

आर-७, वाणी विहार, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-११००५९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

शरद जोशी का व्यंग्य-कर्म

● कमलकिशोर गोयनका

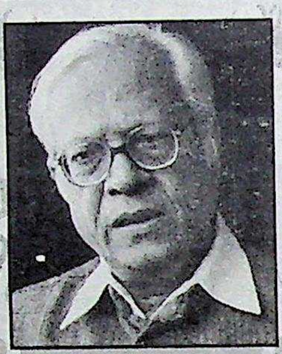

जन्म : ११ अक्तूबर, १९३८ को।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी., डी.लिट.।
कृतित्व : इकतालीस वर्षों से दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन। अब तक प्रेमचंद पर बाईस तथा अन्य साहित्यकारों पर बीस पुस्तकें प्रकाशित। एक नवीनतम विषय 'गांधी की पत्रकारिता' पर एक पुस्तक। प्रेमचंद साहित्य के विशेषज्ञ के रूप में ख्यात।
सम्मान-पुरस्कार : विभिन्न संस्थाओं, एकेडमियों द्वारा सात पुरस्कार तथा मॉरीशस से एक पुरस्कार से सम्मानित।

व्यंग्य मेरी विधा नहीं है। मेरा कार्य-क्षेत्र अनुसंधान और समीक्षा रहा है और जीवन का बड़ा हिस्सा उसी में निकाल दिया; लेकिन साहित्य का कोई सर्जक तथा उनके सर्जनात्मक कार्यों पर खोज-खबर करनेवाला अध्येता इस व्यंग्य का बहिष्कार नहीं कर सकता। व्यंग्य और उससे जुड़ा हास्य जीवन के अनिवार्य अंग हैं और इसीलिए ये साहित्य में भी हैं। मेरा यह सौभाग्य रहा कि हिंदी व्यंग्य में 'व्यंग्य-त्रयी' के रूप में विख्यात हरिशंकर परसाई, शरद जोशी और रवींद्रनाथ त्यागी से मेरा किसी-न-किसी रूप में संबंध रहा। रवींद्रनाथ त्यागी पर मेरी पुस्तक सन् १९८७ में प्रकाशित हुई तो मेरे उनसे पारिवारिक संबंध बने और पहली बार यह जानने का अवसर मिला कि व्यंग्यकार और उसकी व्यंग्य-सत्ता एवं संसार क्या होता है और वह यदि डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी के शब्दों में कहूँ, कि कैसे एक व्यंग्यकार के भीतर कई आदमी समाए होते हैं।[१] त्यागीजी ने मुझसे हुई बातचीत में इतना तो स्वीकार किया था कि उनके साहित्य में उनकी दोहरी मन:स्थिति दिखाई देगी, लेकिन स्वयं को श्रेष्ठ व्यंग्यकार मानने के बावजूद उनके अंदर बैठा एक और आदमी यही कहता था कि हरिशंकर परसाई और शरद जोशी उनसे बड़े व्यंग्यकार हैं। उनका स्पष्ट मत था कि परसाईजी का लेखन सोद्देश्य है। वे समाज-सुधारक हैं और उनकी केंद्रीय शक्ति राजनीति है और शरद जोशी व्यंग्य में बड़े शिल्पी हैं।[२] हरिशंकर परसाई से इतनी आत्मीयता न तो संभव थी और न हो सकती थी; लेकिन मैं जब जबलपुर में उनसे मिला तो उनके स्नेह एवं आत्मीयता ने भाव-विभोर कर दिया और जब मैंने उनकी प्रेमचंद-संबंधी जिज्ञासाओं का उत्तर देकर उन्हें संतुष्ट किया तो उन्होंने कहा कि मेरे संबंध में उन्होंने जो सुना था, वह गलत था और मैं इसी प्रकार काम करता रहूँ। उनके इस संतोष से मुझे प्रसन्नता हुई थी। शरद जोशी भी दिल्ली से दूर थे, इसलिए भी उनसे व्यक्तिगत संबंध होने की संभावना कम ही थी। मैंने कई कवि-सम्[मेलनों] में उनसे अपनी रचनाओं का पाठ सुना था औ[र] वे मुंबई गए और 'हिंदी एक्सप्रेस' का संपादन[...] तो अपने मित्र डॉ. देवेश ठाकुर के माध्यम से [...] संपर्क में आया और उन्होंने मेरी प्रेमचंद पर दो पु[स्तकों] की समीक्षा प्रकाशित कीं। इधर जब दया[...] सिन्हा 'भारत-भवन' के डायरेक्टर बने तो [...] कार्यक्रम में भोपाल आया और उनकी पु[त्री] से 'शरद जोशी रचनावली' के प्रकाशन प[र ...] हुई। मेरा तब और अब भी यही मत है कि [...] जोशी हिंदी व्यंग्य में ऐसे लेखक थे, जिन्हें स[...] में आनेवाली पीढ़ियों को सौंपा जाना चाहिए। [...] संसार की उपेक्षापूर्ण क्रूरता के न जाने कितने [...] लेखक शिकार हुए हैं। मैं मध्य प्रदेश के बाह[र ...] हिंदी लेखकों—जैनेंद्र, दिनकर, महादेवी आदि [...] चर्चा नहीं करता। आप अपने प्रदेश के ही [...] लेखकों के बारे में सोचें—क्या प्रतिष्ठित ले[खकों] की समग्र रचनाएँ आपके सामने हैं? क्यों नहीं [...] के विश्वविद्यालय, अकादमियाँ तथा अन्य संस्थाएँ अपने कालजयी [...] लेखकों को अपना लें, उनकी पांडुलिपियों का संग्रह करें, जीवनी प[र ...] कराएँ और उनकी संपूर्ण रचनाओं को सुंदरता से प्रकाशित करके [...] के हाथों में सौंपें।

शरद जोशी हिंदी की व्यंग्य-त्रयी के एक महत्त्वपूर्ण एवं शक्ति[शाली] स्तंभ थे। इस त्रयी के हरिशंकर परसाई और रवींद्रनाथ त्यागी भी [...] ही प्रतिभा-संपन्न थे। इस व्यंग्य-त्रयी की यह खूबी थी कि ये [...] की तीन दिशाओं के यात्री थे, परंतु व्यंग्य की मुख्यधारा में सभी का [...] होता था। हरिशंकर परसाई मार्क्सवादी प्रतिबद्धता के व्यंग्यकार [थे ...] उनकी व्यंग्य-संवेदना पीड़ितों के साथ थी; लेकिन रवींद्रनाथ त्या[गी] मार्क्सवादी प्रतिबद्धता को स्वीकार नहीं करते, परंतु पीड़ितों के प्रति सह[...] और सामाजिक दायित्व को वे भी स्वीकार करते हैं।[३] शरद जो[शी ...] वामपंथी प्रतिबद्धता को स्वीकार नहीं करते। वे मार्क्स से नहीं, क[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेरित होते हैं और प्रतिबद्धता को वामपंथ से न जोड़कर अपने मूल्यों और लेखन से जोड़ते हैं। वे सत्ता एवं राजनीति के पक्ष-विपक्ष में न होकर एक तटस्थ नागरिक की हैसियत से अपने समय को देखते हैं। उनके विचार में व्यंग्य का कच्चा माल देश में थोक के भाव मिलता है, जिसमें विसंगतियाँ, विद्रूपताएँ तथा दुष्प्रवृत्तियों का अमानवीय मायाजाल फैला पड़ा है। व्यंग्यकार इनकी तीखी आलोचना करता है, जिसमें कहीं-कहीं बदलाव की उम्मीद भी छिपी रहती है। फिर भी लेखक को यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि वह समाज में बदलाव ला सकता है, क्योंकि हजारों-हजार लोग मिलकर बदलाव लाते हैं, उसमें लेखक भी एक इकाई होता है। शरद जोशी ने इसके आगे लिखा है कि हम कबीर, भारतेंदु, गालिब और निराला के वंशज हैं। अन्याय के खिलाफ जन-जन के सुख के लिए जूझना हमारा काम है और हम यह कर रहे हैं। व्यंग्य पढ़कर पाठक के मन में निराशा नहीं वरन् चेतना जागनी चाहिए। अच्छा लेखन वही है, जो पाठक को वैचारिक रूप से झकझोरकर जगाए।(४)

चूँकि मैं व्यावसायिक पत्रों में नियमित लिखकर कमाता हूँ, अतः मैं कोई दर्जा नहीं रखता। दर्जेदार वे हैं, जो विश्वविद्यालय की पीठ पर विराजमान हों, बिना पढ़ाए मुफ्त का पैसा झाड़ साहित्य और साहित्यकार पर फतवे देते रहें। पद, पुरस्कार और पद्मश्री तक, सारा कुछ बटोरने के उपक्रम में सरकार के विरुद्ध लिखने से कतराकर मार्क्सवादी बनते हैं। अपनी तुलना कबीर से करेंगे और अपनी चदरिया मुख्यमंत्री के चरणों में बिछाए रखेंगे और शिखर का पुरस्कार लेने के लिए जमीन पर बिछ जाएँगे।

शरद जोशी ने व्यंग्य की इस झकझोरने की शक्ति और पाठकों के मनो-मस्तिष्क को उद्वेलित करने की सामर्थ्य अपने जीवन के संघर्षों, तनावों, अनिश्चितताओं और मिथ्या आरोपों के दंश से प्राप्त की थी। इस अर्थ में शरद जोशी के जीवन की व्यथाएँ हरिशंकर परसाई तथा रवींद्रनाथ त्यागी के जीवन के संघर्षों एवं वेदनाओं से भिन्न थीं। इस संबंध में रामप्रकाश त्रिपाठी का लेख 'शरद जोशी : कुछ स्मृति रेखाएँ' कुछ प्रकाश डालता है कि मध्य प्रदेश में रहते हुए शरद जोशी को उनके मित्रों ने ही किस प्रकार अपमानित किया तथा मिथ्या आरोप लगाए, उन्हें नौकरी से हटवाया और तरह-तरह की प्रताड़नाएँ दीं। उस समय की सत्ता और उसके सिपहसालारों-चमचों ने उन्हें इतना दंश दिया कि ज्ञानरंजन ने तो यहाँ तक कहा कि शरद जोशी की मृत्यु वास्तव में हत्या है, क्योंकि सत्ताधारियों ने उन्हें इतने तनाव दिए कि उन्हें मौत के करीब लाकर खड़ा कर दिया।(५) परंतु वे जीवन भर अपराजेय रहे और अपने विरोधियों व हिंदी आलोचकों की मूर्खताओं को उजागर करते रहे। उनका लेख 'काहे की आत्मा और कैसा कथ्य?' इन क्षुद्रताओं एवं अवमूल्यन की प्रवृत्तियों पर गहरी चोट करता है।(६) शरद जोशी हिंदी लेखक की यात्रा को 'अनिश्चित और अनजानी' मानते हैं, जहाँ सुख केवल चलने में है, परंतु कुछ लोग आपको खेदा करते हैं, पीछा करते हैं और कुछ सामने खड़े हमला करते हैं। लेखक को इन्हीं तंगदिल लोगों और आक्रामक समूह से जूझते हुए साहित्य में जीना होता है। शरद जोशी इसी 'भयानक और निर्मम' दुनिया से अपने बचाव की लड़ाई लड़ते हुए व्यंग्य लिखते रहे। हिंदी में लिखने का अर्थ उनके लिए निरंतर प्रहारों से सिर बचाना हो गया। भोपाल में रहते हुए वे एक सरकारी अफसर से असहमत हुए तो रातोरात उन्हें 'प्रतिक्रियावादी' घोषित कर दिया गया। शरद जोशी ने इस घटना पर स्वयं लिखा है—''मेरा सारा लिखा एक झटके में अकारथ हो गया। वह कवि, लेखक, आलोचक वगैरह कहलानेवाली सारी जमात, जो या तो स्वयं सरकारी नौकरी में थी या सत्ता से किस्म-किस्म के लाभ लेती थी, वह तो हुई प्रगतिशील और मैं प्रतिक्रियावादी, फासिस्ट घोषित हो गया।'' शरद जोशी ने लिखा है कि यदि वे उस रात को इस अफसर के यहाँ हुई शराब-पार्टी में जाकर उसके चरणों में गिर पड़ते तो सुबह तक फिर प्रगतिशील कहलाने लगते।

मैंने शरद जोशी को अपराजेय व्यंग्यकार कहा है तो उसके पीछे उनके जीवन के अनुभव हैं, जीवन की लड़ाई है, जो हार-जीत को ध्यान में रखे बिना सत्य और न्याय के लिए लड़ी जाती है तथा पाखंडियों, छली-कपटियों और दुष्टों के चेहरों से नकाब हटाकर उनका असली चेहरा समाज को दिखाया जाता है। शरद जोशी ने उन सभी को समुचित उत्तर दिया है, जो उन्हें व्यावसायिक लेखक, घटिया लेखक, स्तरहीन लेखक बताकर साहित्य में उनके प्रति घृणा का भाव फैला रहे थे। उन्होंने लिखा कि हिंदी में ऐसे पाखंडियों का साम्राज्य है, जो फोर्ड फाउंडेशन से लेकर राज्य सरकार से पैसा झटककर भ्रष्ट कर्मों में लिप्त लोगों की विराट् दुनिया बनाते हैं और यही लोग उन्हें 'व्यावसायिक' व 'घटिया' लेखक कहते हैं। शरद जोशी ने इन पाखंडियों और छिपे सियारों के बारे में लिखा—''मैं व्यावसायिक लेखक हूँ, अतः घटिया हूँ, साहित्य वाले मेरी रचना नहीं पढ़ेंगे। चूँकि मैं व्यावसायिक पत्रों में नियमित लिखकर कमाता हूँ, अतः मैं कोई दर्जा नहीं रखता। दर्जेदार वे हैं, जो विश्वविद्यालय की पीठ पर विराजमान हों, बिना पढ़ाए मुफ्त का पैसा झाड़ साहित्य और साहित्यकार पर फतवे देते रहें। पद, पुरस्कार और पद्मश्री तक, सारा कुछ बटोरने के उपक्रम में सरकार के विरुद्ध लिखने से कतराकर मार्क्सवादी बनते हैं। अपनी तुलना कबीर से करेंगे और अपनी चदरिया मुख्यमंत्री के चरणों में बिछाए रखेंगे और शिखर का पुरस्कार लेने के लिए जमीन पर बिछ जाएँगे। सरकार से खरीदी करवा देने का लालच दे छुटभैयों से अपने पर किताब लिखवाएँगे, ग्रंथावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का जुगाड़ जमाएँगे।[७]

शरद जोशी हिंदी साहित्य के ऐसे छली-कपटी लेखकों की दुनिया के नागरिक नहीं हैं। हिंदी साहित्य ऐसे लेखकों के द्वारा सत्ताधारियों के चरणों में पड़ी है तो उसे वहीं पड़ा रहने दो। ऐसा लेखक और साहित्य दरबारों से निकला और दरबार में ही घुस गया। शरद जोशी फुटपाथों पर चले हैं और मानते हैं कि वे ऐसे 'कमिटेड किस्म' के दरबारी लेखकों से पराजित हैं, परंतु इस पराजय में भी उनकी अपराजेयता है। उनका लेखक इन दरबारी और प्रतिबद्ध लेखकों की राह पर नहीं चला, दरबारी सुख और यश की ओर देखा भी नहीं, बल्कि उनके भालों और बर्छियों को छाती पर झेला और फिर भी महज ईमानदार लेखक बना रहा। शरद जोशी ने लिखा है कि "मैं अब महज लेखक हूँ। शेष जीवन भी रहूँगा। मैं कर्तव्यवश, जीवन जीने के लिए, एक आदमी की तरह, जो अपने समाज और देश के सुख-दुःख में बतौर नागरिक हिस्सेदारी करता है, रोटी कमाता है, बीमारी सहता है, हँसता है, मिलता है, मजे लेता है, यात्राएँ करता है, बातें करता है, यह जानते हुए कि ऐसा ही करते हुए उसे जल्दी या देर से कभी मर जाना है।"[८] शरद जोशी ने मृत्यु-पर्यंत ऐसा ही जीवन जिया और अपने व्यंग्य-संसार की रचना करते रहे और जब भी थोड़ी सी धूप, ठंडी हवा, बढ़िया कागज और कलम तथा एकाध चाय मिली तब एक सुंदर व्यंग्य-रचना ने जन्म लिया। वे अपने इस व्यंग्य-कर्म में अपराजेय रहे, बार-बार घर-आँगन बदला तो, परंतु उन्होंने व्यंग्य का अपना घर बनाया था। वह अपनी बुनियाद और दीवारों के साथ आज भी सुरक्षित है और वह भविष्य में पूरी मजबूती के साथ बना रहेगा।

शरद जोशी का व्यंग्य-संसार इतना व्यापक तथा वैविध्यपूर्ण है कि उस पर समग्रता में बात करना असंभव है। इंदौर, भोपाल और मुंबई उनके कर्म-क्षेत्र थे और 'नई दुनिया', 'धर्मयुग', 'रविवार' तथा 'नवभारत टाइम्स' में वे व्यंग्य-कॉलम लिखते रहे। इसके अतिरिक्त हिंदी की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में उनके व्यंग्य-लेख तो बराबर छपते ही रहे। उनकी लगभग २५ पुस्तकों की सूची मिलती है; परंतु काफी सामग्री ऐसी अवश्य होगी, जो अभी दबी-छिपी पड़ी है। अभिप्राय यह है कि जो जीवन के दृश्य उनके सामने थे, वे प्रायः अधिकांश उनके व्यंग्य-संसार के अंग बने। उनके लिए विषय कोई समस्या नहीं थे। वे अखबार में प्रतिदिन व्यंग्य-कॉलम लिखते रहे तो उन्हें नए-नए विषयों पर लिखना ही होता था और आवृत्ति के आरोप से भी बचना होता था। मैं यहाँ उनके 'नवभारत टाइम्स' के कॉलम 'प्रतिदिन' में प्रकाशित 'प्रतिदिन : एक' शीर्षक पुस्तक में संकलित लेखों के आधार पर बात करूँ तो खुद शरद जोशी का कहना है कि इस 'प्रतिदिन' के कॉलम के लिए उन्हें रोज नितांत नया व्यंग्य विषय खोजना और उसका पूरी तरह निर्वाह करना होता था और इसी कारण एक कॉलम लिखने की मानसिक प्रक्रिया में सात-आठ घंटे तक लग जाते थे।[९] मध्य प्रदेश के हिंदी साहित्य के माफिया-गिरोह को विश्वास था कि शरद जोशी इस कॉलम को लिखते-लिखते चुक जाएँगे, परंतु डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी के अनुसार उनकी 'दैवी चमत्कार जैसी क्षमता' और 'अद्भुत प्रतिभा' ने उनकी व्यंग्य-शक्ति से सबका मुँह बंद कर दिया।[१०] इस 'प्रतिदिन : एक' व्यंग्य संकलन में १८१ व्यंग्य लेख हैं, जो सौ से अधिक विषयों पर लिखे गए हैं। विषय का वैविध्य भरपूर है और जब भी एक विषय पर कई व्यंग्य-लेख लिखे गए हैं तो उनमें भी वैविध्यपूर्ण नवीनता है। व्यंग्यकार जीवन से चलता है। जीवन रोज बदलता है, पुराने चेहरों में भी रोज कुछ बदलता है। अतः व्यंग्यकार नवीनता बनाए रखता है। शरद जोशी की नवीनता और मौलिकता का यही रहस्य है।

शरद जोशी की 'प्रतिदिन' स्तंभ की आरंभ टिप्पणी दो दृष्टियों से महत्त्पूर्ण है, एक तो यह कि वे गणेश को याद कर हिंदू पद्धति से नए कार्य का शुभारंभ करते हैं, जिससे विघ्न-बाधाएँ नहीं आएँ और दूसरे वे लेखक का 'भारतीय' होना आवश्यक समझते हैं।[११] निश्चय ही 'श्री गणेशाय नमः' लेख से धर्मनिरपेक्षतावादियों को तथा 'भारतीय' होने के संकल्प से मार्क्सवादी गिरोहों को गहरा आघात लगा होगा; परंतु शरद जोशी की आस्थाएँ अटूट थीं। शरद जोशी 'भारतीय' हैं और इसलिए राष्ट्र-प्रेमी भी हैं। वे 'भावना का चक्कर' लेख में स्पष्ट लिखते हैं—"मैंने तो जीवन भर राष्ट्र के प्रति गर्व और प्रेम आदि रखकर काम चलाया है और मुझमें रातोरात कोई परिवर्तन आना संभव नहीं।"[१२] इस लेख में जोशीजी ने उन व्यक्तियों पर व्यंग्य किया है, जो 'राष्ट्रीयता और राष्ट्र-प्रेम' को रोग समझते हैं। शरद जोशी की यही राष्ट्रीयता उन्हें हिंदू मिथकों तथा धार्मिक कट्टरता के प्रति सही सोच देती है। वे छद्म प्रगतिशीलता और झूठी धर्मनिरपेक्षता के आधार पर हिंदू प्रतीकों का दुरुपयोग नहीं करते और न मुसलिम सांप्रदायिकता का ही समर्थन करते हैं। राज कपूर की फिल्म 'राम तेरी गंगा मैली' प्रदर्शित हुई तो शरद जोशी ने गंगा के नाम पर जो व्यंग्य-लेख लिखा, उसमें वे हिंदू मिथकों के दुरुपयोग पर जैसे फूट पड़े। उन्होंने लिखा—"यह दुर्भाग्य हिंदू धर्म का है, जो राम, गंगा, सीता या गीता के साथ धड़ल्ले से सेक्स जोड़ा जा सकता है। वे अमृतसर के पवित्र सरोवर के पास किसी लड़की को खुले बदन दिखाएँ अथवा किसी मुसलिम या कभी क्रिश्चियन या मुसलिम धार्मिक प्रतीक के साथ यह मजाक करें, फिर देखें क्या होता है। दूसरे ही क्षण आर.के. बैनर के हाथ न वायलिन रह पाएगा, न लड़की की कमर। यह तो हमारा ही धर्म है, जिसमें पवित्रता के प्रतीक भी गंदे व्यवसाय के माध्यम बन जाते हैं। यह भारतीय सेंसर बोर्ड है, जो सेक्स बेचनेवाले बड़े निर्माताओं की जेब में पड़ा रहता है। कोई खोखलापन तो हममें है ही कि हम सहन करते हैं।"[१३] शरद जोशी गंगा को 'गंगा माई' कहते हैं और नायिका को भी और इसलिए व्यथित हैं कि राज कपूर 'माँ' को बेच रहे हैं। इसी प्रकार 'आप जो करें, ठीक' लेख में शरद जोशी ने प्रगतिशील पार्टियों के मुसलिम सांप्रदायिकता से नकली गठजोड़ तथा हिंदू और मुसलमानों के प्रति दुरंगी नीति का तर्कों के साथ खुलासा किया है। जोशी ने लिखा है कि प्रगतिशील लोग हिंदू पंडे-पुजारियों की तो आलोचना करते हैं, परंतु कट्टर मुसलमानों की करतूतों, मुसलमानों की पाकिस्तानियत, देश में ईरान और खुमैनी पैदा करने की साजिश तथा आतंकवाद और खालिस्तान पर मौन हो जाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश के ऐसे प्रगतिशीलों तथा सरकार पर शरद जोशी अपनी टिप्पणी में लिखते हैं—''देश की सरकार न हुई, एक धंधा करनेवाली औरत हुई कि चूँकि उसे वोट लेने हैं, यश बटोरना है, कुरसी पक्की रखनी है, प्रगतिशील कहलाने की मजबूरी में सहिष्णु रहना है, सबकुछ सहन कर रही है।''[१४] इस व्यंग्य लेख में लेखक ने प्रगतिशीलता के अनेक देशद्रोही चेहरे दिखाए हैं और मुसलिम सांप्रदायिकता से भी नकाब उठाया है, जिसके कारण लेखक के अनुसार, मुसलमान पहले मुसलमान हैं और बाद में भारतीय नागरिक। उनके व्यंग्यकार का यह एक ऐसा पक्ष है, जिससे वे और बड़े हो जाते हैं। मुसलिम महिला से विवाह करने पर भी वे मुसलिम कट्टरता और देशद्रोहिता की आलोचना से वे बचे नहीं। राष्ट्रीयता और देश-प्रेम उनकी व्यंग्य नीति की बुनियाद बनी रही।

शरद जोशी के 'प्रतिदिन' व्यंग्य-लेखों में यद्यपि सभी विषयों पर लेख हैं, परंतु राजनीति, राजनेताओं तथा राजनीतिक पार्टियों पर सर्वाधिक लेख हैं। इन व्यंग्य-लेखों से स्पष्ट है कि उनकी राजनीति में विशेष रुचि है और उनका अपना एक राजनीतिक दर्शन है, जो किसी पार्टी या वाद-विचार से नहीं बनता, बल्कि एक आम नागरिक के अनुभवों और प्रतीतियों से बना है। शरद जोशी के देहांत से पूर्व तक 'प्रतिदिन' स्तंभ लिखने तक कांग्रेस पार्टी सत्ता में थी और राजीव गांधी देश के प्रधानमंत्री थे। कांग्रेस पार्टी के शताब्दी समारोह हो चुके थे और शरद जोशी के सामने कांग्रेस पार्टी का सौ वर्ष का इतिहास था। उनके सम्मुख कांग्रेस पार्टी की रीति-नीति, नेताओं तथा कार्यकर्ताओं का चरित्र तथा सत्ता-लोलुपता के असंख्य उदाहरणों व प्रसंगों का अपरिमित भंडार उनके सामने था और बहुत सी स्थितियों के वे स्वयं भी भुक्तभोगी थे। कांग्रेस पार्टी के सौ साल पूरे होने पर बड़ा जश्न हुआ तो उन्होंने बड़ी व्यथा के साथ 'तब यह भी हुआ था' व्यंग्य-लेख में लिखा—''कांग्रेस के सौ साल का इतना बड़ा जश्न मनाया गया। नेहरू के चर्चे रहे, किसी को मैथिलीशरण गुप्त, माखन लाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुब्रमण्यम भारती की याद नहीं आई, जो सब उसी कांग्रेस के प्रति समर्पित आदर्शों भरा लेखन कर रहे थे।''[१५] कांग्रेस पार्टी पर नेहरू घराने के इस आधिपत्य को उन्होंने 'सुंदर मुंबई, गंदा बंबई' लेख में कुछ अधिकता यथार्थता के साथ लिखा—''जब आजादी के बाद भारत का तटस्थ इतिहास लिखा जाएगा तब नेहरू घराने के राजनेताओं को यह श्रेय दिया जाएगा कि उन्होंने अपने अलावा इस देश में अखिल भारतीय नेतृत्व पनपने नहीं दिया। उन्होंने सबको क्षेत्रीय बने रहने के लिए मजबूर किया। अखिल भारतीय स्तर पर आप केवल चमचे हो सकते हैं, नेता कदापि नहीं।''[१६] ऐसी कांग्रेस के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए शरद जोशी ने 'कांग्रेस क्या नहीं है' व्यंग्य-लेख लिखा है, जिसमें वे कांग्रेस को ब्रह्म, आत्मा, हिमालय, फोरम, दर्शन, सरकस आदि उपमानों से स्पष्ट करते हैं, परंतु उसे वर्णनातीत मानकर सिर पीट लेते हैं।[१७]

कांग्रेस कई अर्थों में 'वट-वृक्ष' है। इसके फलों में जल्दी कीड़े लगते हैं। इसके पत्ते पीले होने के बाद भी जल्दी नहीं गिरते। इसकी जड़ों में इसके सदस्य ही मठा डालें तब भी इसका कुछ नहीं बिगड़ता। सदाबहार है, सब डरते हैं, पूजते हैं। इसकी खोल में जहरीले साँप अपनी जगह बना लेते हैं। कौए से लेकर तोते तक इस पर अपना घर या घोंसला बना लेते हैं। रात को इसी वृक्ष के अंधकार में गाँव के चोर अपनी कमाई का बँटवारा करते हैं। पंचायतें इसी की छाह में लगती हैं। राहगीरों के काफिले इसी के नीचे रुकते हैं। गाँव के कुत्ते दोपहर को इसी के नीचे सोते हैं। गँजेड़ी साधु इसी के नीचे अड्डे जमाते हैं। जमींदार का लड़का इसी के नीचे हरिजन लड़की का हाथ पकड़ता है। मर्डर करने के बाद लाशें इसी के आस-पास गाड़ी जाती हैं। कांग्रेस इन अर्थों में वट-वृक्ष है कि सारे कर्मों और कुकर्मों का यही आश्रय स्थल है।

शरद जोशी कांग्रेस पार्टी को 'वट-वृक्ष' कहते हैं। यह ऐसा 'वट-वृक्ष' है, जो 'बोधिवृक्ष' नहीं हो सकता, क्योंकि यह पाप-पुण्य दोनों का पोषण करता है। जोशीजी इस 'वट-वृक्ष' के स्वरूप का वर्णन करते हुए अपने 'वट-वृक्ष' व्यंग्य-लेख में लिखते हैं—''कांग्रेस कई अर्थों में 'वट-वृक्ष' है। इसके फलों में जल्दी कीड़े लगते हैं। इसके पत्ते पीले होने के बाद भी जल्दी नहीं गिरते। इसकी जड़ों में इसके सदस्य ही मठा डालें तब भी इसका कुछ नहीं बिगड़ता। सदाबहार है, सब डरते हैं, पूजते हैं। इसकी खोल में जहरीले साँप अपनी जगह बना लेते हैं। कौए से लेकर तोते तक इस पर अपना घर या घोंसला बना लेते हैं। रात को इसी वृक्ष के अंधकार में गाँव के चोर अपनी कमाई का बँटवारा करते हैं। पंचायतें इसी की छाह में लगती हैं। राहगीरों के काफिले इसी के नीचे रुकते हैं। गाँव के कुत्ते दोपहर को इसी के नीचे सोते हैं। गँजेड़ी साधु इसी के नीचे अड्डे जमाते हैं। जमींदार का लड़का इसी के नीचे हरिजन लड़की का हाथ पकड़ता है। मर्डर करने के बाद लाशें इसी के आस-पास गाड़ी जाती हैं। कांग्रेस इन अर्थों में वट-वृक्ष है कि सारे कर्मों और कुकर्मों का यही आश्रय स्थल है। पाप कर्मों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से लेकर पुण्य कर्मों तक का पोषण करनेवाली, हर तरह के पंछी को शरण देनेवाली यही पार्टी है।''[१८] कांग्रेस की कुरसी संस्कृति पर भी लेखक ने बड़े तीखे व्यंग्य किए हैं। कांग्रेस और कुरसी जैसे पर्याय हो गए हैं। 'चलो देखो कांग्रेस' लेख में वे लिखते हैं कि कांग्रेसियों का सिद्धांत है कि कुरसी पर चढ़कर ही कांग्रेस का झंडा फहराया जाता है। इसी प्रकार 'न कुरसी तो क्या कांग्रेस' लेख में भी उनका निष्कर्ष है—''स्थायी मन:स्थिति यह है कि 'है कुरसी तो हाँ कांग्रेस ना कुरसी तो क्या कांग्रेस।''[१९] कांग्रेस नेताओं को कुरसी मिलने की संभावना से ही अच्छी लगती है, पर जब कुरसी नहीं होती तो वही कांग्रेस गंदी हो जाती है। कांग्रेस के ऐसे नेताओं और दादाओं के संबंधों पर शरद जोशी ने 'नए दादा, पुराने दादा' शीर्षक व्यंग्य-लेख में यथार्थपूर्ण चित्रण किया है। कांग्रेस में आ चुकी आपराधिक और चरित्रहीनता की प्रवृत्तियों पर गहरे व्यंग्य मिलते हैं। 'नए बीहड़ों का आकर्षण' व्यंग्य लेख में कांग्रेस में हत्यारे, घोटालेबाज तथा डाकुओं को जो महत्त्व मिला है उस पर शरद जोशी अपने धारदार शब्दों से उसकी कलई खोलते लिखते हैं—''यदि एकाध मर्डर, कुछ आर्थिक घोटाले और डकैती का संदर्भ जुड़ा हो तो कांग्रेस में टिकट प्राप्त करने में सुविधा रहती है। पार्टी भी ऐसे लोगों को पसंद करती है, जो आदर्शवादी भाषण देने से छुरा भोंक देने तक हर स्तर पर पारंगत और व्यावहारिक हों। पार्टी भविष्य देखती है, अतीत नहीं। उन्हें इतिहास से ज्यादा चिंता हाथ मजबूत करने की है।''[२०] कांग्रेस पार्टी के 'यूथ कांग्रेस' के युवा सदस्यों की चरित्रहीनता और लड़कियों के साथ छेड़खानी करने पर उनकी दो टिप्पणियाँ मिलती हैं। पहली टिप्पणी का शीर्षक ही है—'रूस गए लड़कियाँ छेड़ीं'। इसमें मास्को के युवा-सम्मेलन में 'यूथ कांग्रेस' के युवकों द्वारा लड़कियों को छेड़ने के साथ देश के रूस-प्रेमी कम्युनिस्टों पर भी तीखा व्यंग्य है। मुंबई में जब कांग्रेस का अधिवेशन होता है तो शरद जोशी को इस चरित्रहीनता की याद आती है और वे 'चलो देखो कांग्रेस' में फिर इसी ओर चोट करते हुए लिखते हैं—''कन्याएँ एक-दूसरे से पूछ रही हैं, तू उस दिन घर से निकलेगी या नहीं? कांग्रेसी कभी-कभी कन्हैया हो जाता है, नागपुर में हुआ था, मास्को में हुआ था। कन्हैया हो जाने की ऐसे समय परंपरा है। कांग्रेस सम्मेलन की परंपरा है।''

शरद जोशी कांग्रेस पार्टी के नेता और प्रधानमंत्री राजीव गांधी को भी अपने व्यंग्यों का नायक बनाते हैं। 'हम सब यात्री' व्यंग्य-लेख में पायलट राजीव गांधी के प्रधानमंत्री बनने और इक्कीसवीं सदी में देश को ले जाने के संकल्प पर काफी चुटकी ली गई है। राजीव गांधी की विदेश-यात्राओं पर भी इसी प्रकार का व्यंग्य 'गए और वापस लौटे' में है; लेकिन इसमें लेखक ने हवाई अड्डे पर स्वागत करने को खड़े मुख्यमंत्रियों, गवर्नरों, मंत्रियों, नेताओं आदि की चाटुकारिता पर तीखी चोट करते हुए लिखा है—''इधर दिल्ली के एयरपोर्ट पर चंद मुख्यमंत्री, अपनी इज्जत का कचरा करनेवाले चंद गवर्नर, केंद्रीय मंत्री, निठल्ले कांग्रेसी औंधे मुँह पड़े रहते हैं कि प्रधानमंत्री विदेश से लौटें तो हम उन्हें प्रणाम करें। जब प्रधानमंत्री जा रहे थे तब वे प्रणाम करने आए थे, तब से यहीं पड़े हैं। भारतीय प्रजातंत्र की एक जरूरत यह भी है कि इन लोगों का प्रणाम पाए बिना न तो हमारा प्रधानमंत्री विदेश जा सकता है और न आ सकता है।''[२२] राजीव गांधी पर कई अन्य व्यंग्य भी मिलते हैं, जैसे 'आनंदमय प्रस्ताव', 'इक्कीसवीं सदी का प्रवेश द्वार', 'प्रधानमंत्री की यात्रा के लाभ', 'अच्छे लोगों को बख्शें' तथा 'झरोखा दर्पण में बदलो।' शरद जोशी राजीव गांधी के वक्तव्यों तथा यात्राओं पर गहरी दृष्टि रखते हैं और उनकी विसंगतियों और विद्रूपताओं के चित्रण से व्यंग्य उत्पन्न करते हैं। राजीव गांधी प्रधानमंत्री बने तो इक्कीसवीं सदी में भारत को ले जाने के संकल्प की खूब चर्चा हुई तो शरद जोशी भी नेता के साथ पूरे देश को इक्कीसवीं सदी में ले जाने का दृश्य कुछ इस प्रकार खींचा— ''नेता पहले घुसा, उसके पीछे सारा देश घुसा। गरीबी, बेकारी, भ्रष्टाचार, अकर्मण्यता, पाखंड, फूट और छुपाई गई असफलताओं के साथ धीरे-धीरे हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करने लगे, रेंगते, घिसटते, लड़खड़ाते जैसे वर्षों से चले आए हैं।''[२३] राजीव गांधी की मध्य प्रदेश की यात्रा पर भी लेखक कई प्रकार की सच्चाइयों को सामने लाता है। प्रधानमंत्री आते हैं तो रातोरात झाड़ू से सफाई होती है, पेड़-पौधे लगते हैं तथा गंदगी पर मखमल फैलाया जाता है और यथार्थ को रेशम से लपेटा जाता है। राजीव गांधी के इस प्रस्ताव पर कि अच्छे लोग राजनीति में आएँ, शरद जोशी अपने व्यंग्य-लेख 'अच्छे लोगों को बख्शें' में जैसे इन अच्छे लोगों की रक्षा के लिए मैदान में कूद पड़ते हैं। वे इस लेख में लिखते हैं—''कृपया अच्छे लोगों को बख्शें। उन्हें कहीं भी घसीटो, पर राजनीति में नहीं। आप राजनीति करना चाहते हैं। आपके पास बुरे लोगों की भरमार है। मुख्यमंत्री के मोहल्ले के राजनीतिक दादाओं तक कितनी बड़ी संख्या है, जो आपके साथ है। अच्छे लोग इस देश में माइनॉरिटी में हैं। आप माइनॉरिटी के सहारे राजनीति नहीं कर सकेंगे। आप मेजॉरिटी के सहारे राजनीति कीजिए। अच्छे लोगों की एक छोटी सी संख्या रह गई है, उसे कृपया इस देश के लिए छोड़ दीजिए।''[२४]

कांग्रेस पार्टी का समाजवाद, गांधी के नाम पर जिले का निर्माण, गाँव-गाँव में संदेश पहुँचाने की नीति आदि पर भी तीखे व्यंग्य किए हैं। जोशीजी ने वैसे तो समाजवाद के कई रूप गिनाए हैं, लेकिन कांग्रेसी समाजवाद पर उन्होंने 'पुन: प्रवेश की समस्या' शीर्षक टिप्पणी में कटु व्यंग्य किया है। कांग्रेस के मुख्यमंत्री, विधानसभा एवं उसके चुने प्रतिनिधि, मंत्रिमंडल आदि भी उनके व्यंग्य के निशाने पर रहते हैं। 'जाना और लौटाना' व्यंग्य-लेख में लेखक ने कांग्रेसी मुख्यमंत्री के बार-बार दिल्ली जाने पर जो व्यंग्य किया है वह दर्शनीय है। शरद जोशी लिखते हैं—''पता नहीं कितनी अवस्थाएँ हैं, जिनमें राज्य के मुख्यमंत्री दिल्ली जाते हैं, सकारण, अकारण, बुलाए, बिन बुलाए, होश में, बेहोशी में, यथार्थ में, स्वप्नों में वे दिल्ली जाते-आते रहते हैं। वे नहीं जानते कि वे क्यों दिल्ली में हैं, दिल्ली भी नहीं जानती कि वे क्यों दिल्ली में हैं। बस, वे वहाँ होते हैं। कई बार उनका शरीर राज्य में होता है और आत्मा दिल्ली में। कई बार उनका शरीर दिल्ली में और आत्मा प्रदेश की राजधानी में।''[२५]

शरद जोशी के व्यंग्य-संसार का यहाँ एक संक्षिप्त चित्र प्रस्तुत किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जाना और लौटाना' व्यंग्य-लेख में लेखक ने कांग्रेसी मुख्यमंत्री के बार-बार दिल्ली जाने पर जो व्यंग्य किया है वह दर्शनीय है। शरद जोशी लिखते हैं—''पता नहीं कितनी अवस्थाएँ हैं, जिनमें राज्य के मुख्यमंत्री दिल्ली जाते हैं, सकारण, अकारण, बुलाए, बिन बुलाए, होश में, बेहोशी में, यथार्थ में, स्वप्नों में वे दिल्ली जाते-आते रहते हैं। वे नहीं जानते कि वे क्यों दिल्ली में हैं, दिल्ली भी नहीं जानती कि वे क्यों दिल्ली में हैं। बस, वे वहाँ होते हैं। कई बार उनका शरीर राज्य में होता है और आत्मा दिल्ली में। कई बार उनका शरीर दिल्ली में और आत्मा प्रदेश की राजधानी में।''

गया है, परंतु इससे भी उनकी व्यंग्य-क्षमता एवं व्यंग्य-कौशल का चमत्कार देखा जा सकता है। व्यंग्य शरद जोशी के जीवन से जुड़ा है। उनके जीवन की परिस्थितियाँ और अनुभवों में व्यंग्य की सामग्री छिपी थी और जब वह विभिन्न रूपों में व्यंग्य-लेखों में अवतरित हुई तो उसने उन्हें आत्म-हत्या, भूखे एवं नंगे रहने से बचाया और उसी के दम पर अपने सभी दायित्व पूरे किए। कबीर ने उन्हें सर्वाधिक प्रेरित किया और उनसे निष्पक्षता व तटस्थता सीखी और इसी कारण वे वामपंथी प्रतिबद्धता से स्वयं को बचा सके। कोई भी वैचारिक प्रतिबद्धता व्यंग्यकार के लेखकीय व्यक्तित्व का परिसीमन करके उसकी निष्पक्षता और तटस्थता का हरण करती है। यही कारण है कि शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल, रवींद्रनाथ त्यागी जैसे व्यंग्यकार मार्क्सवादी या किसी अन्य की प्रतिबद्धता को स्वीकार नहीं करते। शरद जोशी ने स्पष्ट कहा है कि मेरी प्रतिबद्धता केवल लेखन से है। मन में जो जँचता है, मैं वही करता हूँ और अपने ही मूल्यों पर जीने की कोशिश करता हूँ। मुझे इसके लिए किसी झंडे या बिल्ले की जरूरत महसूस नहीं होती। मैं तो अपने पाठकों के प्रति, अपनी कलम के प्रति प्रतिबद्ध हूँ और ईमानदारी से लिखता हूँ। हम कबीर, भारतेंदु, गालिब और निराला के वंशज हैं। अन्याय के खिलाफ जन-जन के सुख के लिए जूझना हमारा काम है और हम यह कर रहे हैं। व्यंग्य पढ़कर पाठक के मन में निराशा नहीं वरन् चेतना जागनी चाहिए। अच्छा लेखन वही है, जो पाठक को वैचारिक रूप से झकझोर कर जगाए।''

शरद जोशी का व्यंग्य-कर्म इसी तटस्थता और जागरण की चेतना पर आधारित है। वे कबीर की तरह सबको देखते हैं और सबको फटकार लगाते हैं। जीवन की विसंगतियों, विद्रूपताओं, दोहरे जीवन तथा मानव-विरोधी परिस्थितियों व प्रवृत्तियों पर वे इसीलिए गंभीरता तथा तीखेपन से व्यंग्य कर पाए, क्योंकि वे कबीर के समान मनुष्य और उसके समाज के प्रतिबद्ध थे और वे तटस्थता के साथ जीवन को देख सकते थे। वे इस कारण अपने व्यंग्यों से समाज में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन या किसी राजनीतिक उथल-पुथल का दावा नहीं करते। वे पाठक को देश और समाज की व्यंग्यपूर्ण परिस्थितियों से अवगत कराकर उन्हें सोचने-विचारने और बदलने की चेतना उत्पन्न करते हैं। यही कारण है कि जीवन के प्रायः सभी पक्ष उनके सामने हैं। उनका व्यंग्यकार जीवन के चौराहे पर खड़ा है, वह सभी दिशाओं से आनेवाले जीवन-प्रवाह को देखता है और वह उस प्रवाह में बहती आती राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक एवं सांस्कृतिक प्रतिकूलताओं, जड़ताओं, विसंगतियों एवं मूर्खताओं तथा अमानवीयताओं के कचरे-कबाड़े और गंदगियों को चुनकर उनके स्वरूप को खोलता है और पाठक के मन में उनसे मुक्त होकर स्वस्थ जीवन जीने की प्रेरणा देता है। शरद जोशी के व्यंग्य का यही महत्त्व है कि वह पाठक को जीवन के विष से साक्षात्कार कराकर उसे मुक्ति का आह्वान करता है और एक श्रेष्ठ एवं स्वस्थ मनुष्य तथा समाज की आशा उत्पन्न करता है। हिंदी में यदि व्यंग्य का महत्त्व है तो वह इसी आधार पर हो सकता है। शरद जोशी के व्यंग्य-कर्म का यही मार्ग था और यही सिद्धि थी।

संदर्भ—

१. 'सापेक्ष'-४९, जनवरी-जून, १९९९, पृ. २६५-७६, २. 'रवींद्रनाथ त्यागी : प्रतिनिधि रचनाएँ', सं. कमल किशोर गोयनका, पृ. ३२८, ३. वही, पृ. ३२६-३०, ४. 'सापेक्ष'-४९, जनवरी-जून, १९९९, पृ. १०४-२७, ५. वही, पृ. ११२, ६. वही, पृ. ९७-१०३, ७. वही, पृ. ९७-१०३, ८. वही, पृ. ९७-१०३, ९. वही, पृ. ११९-१२७, १०. 'प्रतिदिन : एक' की भूमिका से, सं. ज्ञान चतुर्वेदी, अंजनी चौहान, पृ. ७, ११. वही, पृ. १३, १२. वही, पृ. १८१, १३. वही, पृ. ७९, १४. वही, पृ. १८३, १५. वही, पृ. ३२, १६. वही, पृ. ३९, १७. वही, पृ. २५, १८. वही, पृ. ५२, १९. वही, पृ. १४७, २०. वही, पृ. ४०, २१. वही, पृ. १९४, २२. वही, पृ. ५८, २३. वही, पृ. ६४, २४. वही, पृ. ८४, २५. वही, पृ. ४१

ए-९८, अशोक विहार,
फेज प्रथम, दिल्ली-११००५२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

पिचकारी का सौंदर्य बोध

● अजय अनुरागी

वैश्वीकरण के कारण एक नया संकट आ रहा है कि हम देशी त्योहार भी विदेशी वस्तुओं से मनाने लगे हैं। होली भी हमारी नहीं रही। पिचकारी चीन से बनकर आ रही है। रंग भी चाइना मेड हैं। कुछ दिनों बाद रंग बनानेवाले देश से पूछना पड़ेगा कि इजाजत हो तो रंग लगा दें, आदेश हो तो पिचकारी छोड़ दे? हस्तक्षेप यहाँ तक बढ़ सकता है कि रंगों के डिब्बों पर चेतावनी एवं सावधानी लिखी मिलेगी—यह रंग महिलाओं के गालों पर ही लगाया जाए तथा खास तौर से युवतियों पर ही प्रयोग करें।'''यह रंग प्रौढ़ पुरुषों के सिर पर डाला जाए तथा पानी में घोलकर ही डालें। या इस रंग का इस्तेमाल विशेष परिस्थितियों में ही करें, जब किसी प्रेमिका को रिझाना हो, किसी अफसर को झुकाना हो, किसी अनजान से नए संबंध बनाने हों, आदि।

फागुन में प्रकृति का सौंदर्य बढ़ जाता है अतः सौंदर्य बोध की ब्याज दर भी बढ़ जाती है। सौंदर्यबोध में सौंदर्य और बोध अलग-अलग हैं। सौंदर्य में किसी की जरूरत नहीं पड़ती है, परंतु बोध में बुद्धि के बिना काम नहीं चल सकता। फागुन में सौंदर्य इतना बढ़ जाता है कि कहीं भी यह आसानी से मिल सकता है। यत्र-तत्र सर्वत्र। मगर बोध बहुत कम देखने में आता है। सौंदर्य भी हो और सौंदर्य का बोध भी हो, ऐसा मणिकांचन योग दुर्लभ है। मैंने सौंदर्य बहुतों के पास देखा किंतु बोध के अभाव में फीका जान पड़ा। सौंदर्य का बोध पात्र में भी हो तथा देखनेवाले में भी हो। कभी-कभी दृष्टि पेचीदा हो जाती है तो सौंदर्य होते हुए भी देखनेवाले को दिखाई नहीं पड़ता। अथवा सौंदर्य न होते हुए भी उसे दिखाई पड़ जाता है।

सौंदर्य की दृष्टि पल-पल परिवर्तनशील है। अभी-अभी है और अभी-अभी नहीं है। कब, किसमें सौंदर्य दिखाई पड़ जाए, कुछ कहा नहीं जा सकता है। हालाँकि सौंदर्य स्थायी है, मगर बोध अस्थायी है। लोग मुझसे खफा हो सकते हैं कि मैं हर चीज में सौंदर्य क्यों ढूँढ लेता हूँ? कुछ न कुछ तो ढूँढना मेरी मजबूरी है। जैसे अखबार में से पाठक हत्या, लूट, बलात्कार, रिश्वत, भ्रष्टाचार आदि ढूँढ लेते हैं, वैसे ही मैं सौंदर्य ढूँढ लेता हूँ। सौंदर्योन्मुखी होने के कारण मैं रंगीन और चिकने कागजवाली खबरें ही पढ़ता हूँ। काले अक्षरोंवाली खबरों में मेरी रुचि नहीं है। मैं हत्या में भी सौंदर्य देखता हूँ। लूट और रिश्वत में भी सौंदर्य दिखाई देता है। यहाँ तक कि बलात्कार में भी सौंदर्य दीखने लगता है। विद्वानों को यह बहुत अखरता है। मैं उन्हें बताता हूँ कि सौंदर्य पसीने से लेकर ताजमहल तक है, कचरे में उगे कुकुरमुत्ते से लेकर गमले में उगे गुलाब तक होता है। सौंदर्य की सीमा नहीं होती, पर सौंदर्य बोध की सीमा होती है।

जन्म : १ जुलाई, १९६७।
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), एम.फिल., पी-एच.डी., एम.जे.एम.सी.।
प्रकाशन : 'आदमी से सावधान', 'चरणम् शरणम् गच्छामि', 'साहित्य में पूँजी निवेश', 'चापलूसी का अनुशासन', 'दबाव की राजनीति', 'मंत्री का मटका' *(व्यंग्य-संग्रह)*, 'इसी सदी के अंत में' *(कविता संग्रह)*, 'जंगल की कहानियाँ' *(कहानी संग्रह)*, 'जंगल की कविताएँ', 'सरस बाल गीत' *(बाल साहित्य)*, 'नई कविता और गिरिजा कुमार माथुर' *(आलोचना)* के अलावा शिक्षा, साहित्य, पत्रकारिता एवं समाज पर पुस्तकें, साथ ही अनेक पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य-स्तंभ लेखन एवं रचनाओं का प्रकाशन।
संप्रति : शिक्षा एवं पत्रकारिता से संबद्ध।

फागुन जैसे मस्त महीने में ऐसा कठोर विचार देखकर मित्र चकराया उसने एलान किया—"पिचकारी में सौंदर्यबोध नहीं होता।"

मैंने बताया—"सौंदर्यबोध हर वस्तु का होता है। खासतौर पर फागुन में। यह मीना ही ऐसा है। पिचकारी को छोड़ दें तो सरकंडे में भी सौंदर्य इस ढंग से उत्पन्न हो जाता है कि आसानी से उसका बोध होने लगता है।"

मित्र सौंदर्य बोध का विरोधी था। अड़ गया—"पिचकारी में काहे का सौंदर्यबोध? और भी बहुत सी चीजें थीं बोध करने के लिए।"

मैंने समझाया—"बहुत सी चीजों में से पिचकारी को इसलिए चुना कि फागुन पिचकारी के बिना वैसे ही जान पड़ता है जैसे गोपियाँ श्रीकृष्ण के बिना। यदि मैं श्रीकृष्ण का सौंदर्यबोध करने लगूँ तो मुझे अध्यात्मवादी समझ लिया जाएगा। गोपियों का सौंदर्यबोध करते ही नारीवादी बना दिया जाएगा। इसलिए पिचकारी को चुन लिया।"

मित्र बिगड़ गया—"यह कोई विषय है भला!"

मैंने कहा—"मैं विषयी नहीं हूँ और न विषय-वासनाओं में डूबना चाहता हूँ। मैंने इसीलिए ऐसी नीरस चीज चुनी है, जो सदैव सरस रहे। पिचकारी से उपयुक्त दूसरी चीज न थी।"

मित्र नहीं माना। बोला—"साहित्य में मत घुसो, समाज में ही बात रहो। पिचकारी का सामाजिक उपयोग सिद्ध करके बताओ, तभी बात होगी।"

मैंने उसे समझाया, जो कि आखिरी प्रयास था—"तुझे पिचकारी में सौंदर्य नजर नहीं आ रहा किंतु पिचकारी में से निकलनेवाले रंगों में तो सौंदर्य नजर आ रहा है कि नहीं?'''ये रंग जिस पर गिरते हैं, क्या वहाँ सौंदर्य उत्पन्न नहीं होता?" इस बार मित्र समझ गया। उसने मान लिया। सीधा पिचकारी लेने चला गया। मेरा पिंड छूटा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस बार फागुन में मनमोहनजी का जीया बेकरार इसलिए हो रहा है कि एटमी करार नहीं हो पाया है। वे खाली पिचकारी लेकर बैठे हैं, लेकिन रंग नहीं है। सौंदर्य-बोध सांसदों में जगेगा तब पिचकारी से रंग छूटेंगे। अभी तो सांसद ही नहीं जगे, सौंदर्य-बोध कैसे जगे? ऐसा लगता है लोगों ने पिचकारी छोड़कर रंगों का कुल्ला करना शुरू कर दिया है। जिस रंग का कुल्ला करना होता है उसे मुँह में भरकर कुल्ला कर देते हैं। जिस पर कुल्ला करना होता है उसके पास जाकर मुँह में रंग भर लेते हैं। इस तरह होली की पवित्रता को बनाए हुए हैं। कोई-कोई इसकी पवित्रता के लिए विषवमन भी कर देता है।

होली हमारे लिए प्रेम और भाईचारे का त्योहार है। फिर भी कुछ सामाजिक, राजनीतिक संगठन 'वैलेंटाइन डे' पर प्रेम करने पर प्रतिबंध लगाकर शुद्ध संस्कारित हो जाना चाहते हैं। 'भाईचारे' शब्द में से भाई और चारे को अलग-अलग करके भाई को सिर्फ भाभी तक सीमित कर देना चाहते हैं तथा चारे को भैंस तक पहुँचा कर एक सांस्कृतिक अनुष्ठान का समापन कर इतिश्री करना चाहते हैं। इस तरह अर्थ को व्यर्थ करने में अपना पसीना बहाया जा रहा है।

होली हमारे लिए प्रेम और भाईचारे का त्योहार है। फिर भी कुछ सामाजिक, राजनीतिक संगठन 'वैलेंटाइन डे' पर प्रेम करने पर प्रतिबंध लगाकर शुद्ध संस्कारित हो जाना चाहते हैं। 'भाईचारे' शब्द में से भाई और चारे को अलग-अलग करके भाई को सिर्फ भाभी तक सीमित कर देना चाहते हैं तथा चारे को भैंस तक पहुँचा कर एक सांस्कृतिक अनुष्ठान का समापन कर इतिश्री करना चाहते हैं। इस तरह अर्थ को व्यर्थ करने में अपना पसीना बहाया जा रहा है।

फागुन की सार्थकता अर्थ का अनर्थ करने से ही उत्पन्न होती है। होली ज्ञानेंद्रियों को प्रभावित या सक्रिय करने का पर्व है। अंग-अंग में रंग लगाने की सामाजिक छूट इसी पर्व पर मिला करती है। इसे उलट कर कहें, रंग-रंग को अंग लगाने की मौन स्वीकृति भी होती है। यह आदेश, अध्यादेश कृष्ण युग से चला आ रहा है। समाज में इसमें परिवर्तन या नवीनीकरण की आवश्यकता नहीं पड़ी। होली है तो पिचकारी का होना स्वाभाविक है। इस बार होली के रंग सरकारी स्तर पर चुनाव को ध्यान में रखकर डाले गए हैं। डाले क्या गए हैं, उछाले गए हैं। वित्तमंत्री को लग रहा है कि ये रंग पक्के निकलेंगे, जनता के बदन से छूटेंगे नहीं। पर उन्हें पता होना चाहिए कि ये रंग चीन से आयातित हैं, बिना पानी के ही छूट जाएँगे। चीनी पिचकारी सस्ती हैं लेकिन क्षणिक हैं। एक होली भी इनसे निकल जाए तो बच्चे खुश हो लेंगे। अब वो भारतीय पीतल की पिचकारी तो रही नहीं कि दादा खरीदे और पोता खेले। एक शुद्ध देशी चिंतक बोले—"आज की पीढ़ी पीचकारी तो रही नहीं कि दादा खरीदे और पोते खेले। एक शुद्ध देशी चिंतक बोले—"आज की पीढ़ी पिचकारी का सौंदर्यबोध ही नहीं जानती।" वे इस तरह बोले जैसे इस बोध को उन्होंने आत्मसात् कर रखा हो।

मैंने निवेदन किया—"आज की पीढ़ी होली ही नहीं जानती तो पिचकारी कहाँ से जानेगी? उसकी तो हर जेब में रग भरे हैं नोकियावाले। वो दूसरों पर रंग डाले या एस.एम.एस. करके रंगों से बचने की सलाह दे?" इसी बीच एक धार्मिक प्रवृत्ति के सज्जन का प्रवेश बीच में हो गया। उन्होंने पिचकारी की पौराणिकता बताने के बाद एक गीत सुनाया—"भर पिचकारी राधाजी के मारी…भर पिचकारी राधाजी के मारी…" इस पंक्ति पर पूरा जोर डालते हुए कई बार सुनाने लगे। उन्हें इसमें इतना जोर आ रहा था, जितना जोर शायद कृष्ण को पिचकारी भरकर राधा के मारने में नहीं आया होगा। इसका कारण मेरी समझ में बाद में आया, जब वे चले गए। मेरे निकट जो शुद्ध देशी चिंतक बैठे थे उन्होंने ही व्याख्या करते हुए बताया कि एक ही मुखड़ा पंक्ति को वे बार-बार इसलिए जोर देकर पढ़ रहे थे कि पिचकारी पूरी तरह भर जाए। जब उन्हें लगता था कि पिचकारी पूरी तरह भर गई है तभी वे राधाजी के मारने हेतु उद्यत होते थे। अत: 'भर पिचकारी, भर पिचकारी' पर जोर लगा रहे थे। राधाजी के मारी, राधाजी के मारी' पर वे बार-बार इसलिए अटक रहे थे कि कृष्ण ने पिचकारी तो पूरी भर ली लेकिन राधा मौका पाकर वहाँ से खिसक गईं। कृष्ण भरी पिचकारी लेकर राधाजी को ढूँढते-ढूँढते गलियों में कुंजों, कछारों में, यमुना तटों पर चक्कर मारते रहे; मगर राधाजी मिलीं नहीं। काफी देर बाद सखियों के बीच में छिपी मिलीं। तब कृष्ण ने पिचकारी राधाजी के मार दी। इस प्रक्रिया में जितना समय लगा उतना ही समय 'राधाजी के मारी' पंक्ति की पुनरावृत्ति में लगाया। फिर उन्होंने यह भी कहा कि इसी तरह पिचकारी से सौंदर्य बोध रूपी रस टपकता है। मैं धन्य होकर वहाँ से लौट आया।

रास्ते में फिर वही मित्र मिल गया, जो पिचकारी में सौंदर्यबोध की कल्पना को नकारने वाला था। आते ही बोला—"कुछ भी कहो, पिचकारी में सौंदर्यबोध नहीं होता है। मैं पिचकारीवाली दुकान से ही आ रहा हूँ।" अब उसे कौन समझाए कि सौंदर्यबोध पिचकारी का नहीं, पिचकारी में भरकर मारे गए रंगों के भाव में छिपा हुआ है। मैंने उसे वही गीत 'भर पिचकारी राधाजी के मारी' तब तक गाते रहने के लिए कहा जब तक कृष्ण पिचकारी भरते-भरते और मारते-मारते परेशान न हो जाएँ तथा राधाजी भीगते-भीगते मलेरिया की शिकार न हो जाएँ। मैंने उसे सावधानियाँ भी बताईं। पिचकारी केवल श्रीकृष्ण ही भरें और वे ही मारें। पिचकारी राधाजी के ऊपर निशाना साधकर ही छोड़ी जाए। इधर-उधर छींटे भी न पड़ने पाएँ। दो दिन बाद वह मिला। कहने लगा—"गुरु, कमाल हो गया। आपने सचमुच पिचकारी में सौंदर्य-बोध पैदा कर दिया। मजा आ गया। अब बताओ, और कहाँ-कहाँ हो सकता है सौंदर्यबोध?" मैंने कहा—"अभी घर जाओ और होली मनाओ। भंग की तरंग उतर जाएगी तब बात करना। पिचकारी में सौंदर्यबोध बताया था और तुमने बाँस में सौंदर्य-बोध उत्पन्न कर दिया।" 'भर-भर बाँस राधाजी के मारा' कहकर तुमने फागुन का सत्यानास कर दिया। वह तरंग में ही शर्मिंदा हुआ। हाय राधाजी, मुझे माफ करना। हाय कृष्णजी, माफ करना।

मैंने तसल्ली दी। पिचकारी भी बाँस की ही बनती है, इसलिए तुम्हारा कसूर माफ हो जाएगा। डरो मत, अनर्थ में भी अर्थ होता है। वह संकोच के साथ चला गया। मैं निस्संकोच होली खेलने निकल पड़ा।

१६०, विजय सिंह पथिक नगर
कालवाड़ रोड-बाईपास, झोटवाड़ा,
जयपुर-३०२०१२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

दाल-भाजी लोन स्कीम

● अरविंद तिवारी

एक बहुत पुराना गाना है—'दाल रोटी खाओ, प्रभु के गुण गाओ।' दाल-रोटी खाना और प्रभु के गुण गाना दोनों ही महँगे हो गए। दाल के भाव सातवें आसमान पर हैं और प्रभुजी हाईटेक हो गए हैं। किसी भी तीर्थस्थान पर चले जाइए, वी.आई.पी. लोगों के लिए अलग गेट बना है। रेलवे की तत्काल आरक्षणवाली सुविधा की तरह तत्काल प्रभु-दर्शन उपलब्ध हैं। आम आदमी को प्रभु तब दर्शन देते हैं जब वह कई घंटे लाइन में खड़ा रह लेता है। थके-हारे आदमी की कैसी पूजा और कैसी अर्चना। अस्तु।

दाल-रोटी को हमेशा गरीबों का भोजन माना जाता रहा है। मगर अब यह मिथक पूरी तरह टूट गया है। दाल, खासकर अरहर की दाल, अब लग्जरी आइटम में शुमार हो गई है। कहीं गलती से आपने अपने को ईमानदार आदमी बताते हुए कह दिया कि आप दाल-रोटी में गुजारा करते हैं तो पूरा जमाना आपके पीछे पड़ जाएगा। इस दौर में भी आप दाल खा रहे हैं, इसका मतलब है, आप वेतन के अलावा भी कुछ-न-कुछ कमा रहे हैं। जितना वेतन हमारा है उतना ही तुम उठा रहे हो। हम पालक से सूखी रोटी खा रहे हैं और आप दाल की दावत उड़ा रहे हैं। हो सकता है, दाल खानेवाला विजिलेंस के हत्थे चढ़ जाए। दाल की खिचड़ी अब बीते जमाने की बात हो गई। दाल-भात की थाली अब नमक-भात हो गई। पालक के पौष्टिक गुण हर किसी को नजर आने लगे हैं।

जन्म : १ फरवरी, १९५३ को उ.प्र. के मैनपुरी जिले में।

प्रकाशन : 'चुनाव टिकट और ब्रह्माजी', 'दीवार पर लोकतंत्र', 'राजनीति में पेटीवाद', 'मानवीय मंत्रालय' *(व्यंग्य संग्रह)*, 'दीया तले अँधेरा', 'शेष अगले अंक में', 'पंख वाले हिरण' *(उपन्यास)*, 'सब जानते हैं' *(काव्य संग्रह)*। पत्रिका 'शिविरा' तथा त्रैमासिक 'नया शिक्षक' का संपादन।

पुरस्कार-सम्मान : उ.प्र. हिंदी संस्थान का 'प्रेमचंद पुरस्कार' तथा 'श्रीनारायण चतुर्वेदी पुरस्कार', राजस्थान साहित्य अकादमी का 'कन्हैयालाल पुरस्कार'।

संप्रति : राजस्थान के एक राजकीय सीनियर सेकेंडरी स्कूल में प्रधानाचार्य।

सरकार को मकानों की तो चिंता है, दाल-भाजी की चिंता नहीं है। घर तो लोन से बन जाएगा, मगर उसके किचन में दाल कौन पका पाएगा? जैसे तीज-त्योहारों पर लोग मिठाई खाते हैं, उसी तरह अब महीने में सिर्फ एक या दो दिन दाल खाई जा रही है। शादी-संबंधवाले आते हैं तो पनीर की सब्जी के साथ दाल परोसी जाती है, इस उम्मीद में कि किसी तरह संबंध जुड़ जाए। दाल के कारण रिश्ता टूट जाए, यह अच्छी बात नहीं है। ९० रुपए किलो प्याज खाने का रिकॉर्ड बनानेवाले लोग अब ९० रुपए किलो की दाल खा रहे हैं। यह इंडिया है प्यारे, यहाँ ९० रुपए किलो की घास खाने का रिकॉर्ड भी बन सकता है।

कई लोग मेहमानों के आने से पहले ही किचन के पारदर्शी डिब्बों में तरह-तरह की दालें ऐसे भर देते हैं जैसे मध्यम वर्गीय परिवारों की बैठक में रवींद्रनाथ टैगोर और मुंशी प्रेमचंद की किताबें सजी रहती हैं। किचन में दालें और बैठक में टैगोर-प्रेमचंद सिर्फ 'डिस्प्ले' के लिए हैं। इनको छूने की मनाही है। परिवार के सदस्य न तो टैगोर-प्रेमचंद को पढ़ते हैं और न ही दालों का सेवन करते हैं। अरहर की दाल अब भारतीय समाज में 'स्टेटस सिंबल' बन चुकी है।

कई बैंक इन दिनों दाल-भाजी लोन स्कीम पर माथापच्ची कर रहे हैं। दालों के साथ आलू-टमाटर भी महँगे हो गए हैं। कई बैंक मकान लोन के साथ टॉपअप लोन के रूप में दाल-भाजी के लिए लोन स्वीकृत करने वाले हैं। ब्याज मकान के लोन का जैसा ही होगा। विगत वर्षों में जब आलू बहुत सस्ता हो गया था तब हमारे शहर की संस्था ने 'आलू के गिरते मूल्यों' पर साहित्यिक गोष्ठी का आयोजन किया था, वही संस्था 'आलू के चढ़ते मूल्यों' पर गोष्ठी का आयोजन कर रही है। यद्यपि आने की संभावना कम है, मगर इस संस्था ने इस गोष्ठी में भारत के वित्तमंत्रीजी को भी आमंत्रण-पत्र भेजा है।

कई बैंकों ने दाल-भाजी के लिए पर्सनल लोन सस्ता करने की स्कीम बनाई है। ग्राहक को यह शपथ-पत्र देना होगा कि इस स्कीम से प्राप्त राशि से वह दाल-आलू-टमाटर वगैरह खरीदेगा, अन्यथा उसे ज्यादा ब्याज देना होगा। शपथ-पत्र के साथ ही हर महीने खरीदे जानेवाली दाल-भाजी के वाउचर बैंक में जमा कराने होंगे। मानसून की बेरुखी के चलते यह स्कीम ग्राहक और बैंक दोनों के लिए लाभदायक सिद्ध होगी।

गरीबों को मुफ्त भोजन करानेवाले दानवीरों ने अब अपना मेन्यू बदल दिया है। जो दानवीर गरीबों को पूड़ी-भाजी खिलाते थे, वे अब दाल-रोटी खिला रहे हैं। दाल-रोटी का पुण्य पूड़ी-भाजी से अधिक हो गया है। कुछ धर्म-प्रवण लोग मंदिरों में अरहर की दाल चढ़ाने लगे हैं। बजट में कुछ हीरा सस्ता हो गया है, मगर लोग खरीद नहीं पा रहे हैं। उनकी सारी बचत दाल-भाजी के बढ़े हुए मूल्यों की भेंट चढ़ गई है। दाल लोगों के ईमान को डिगा सकती है।

उपप्रधानाचार्य, डाइट
धौलपुर-३२८००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदद के लिए
बढ़ते हाथ

स्पर्श अभियान

प्रदेश के सभी नि:शक्तजनों की पहचान करने और
उनका डाटाबेस बनाने का अभियान।

उनकी पहचान के बाद, उन्हें मिलने वाली
सभी सुविधाओं का लाभ मिलना आसान होगा।

पेंशन, सहायक अनुदान, इलाज, छात्रवृत्ति, प्रशिक्षण
और रोज़गार की सभी योजनाओं तक अब उनकी पहुंच होगी।

कमजोर नहीं हैं वे, बस थोड़ा सा सहारा,
उनकी क्षमताओं को सच करता है।

आकल्पम : म.प्र. माध्यम/2011

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

मध्यप्रदेश सरकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''गंगा, गीता, गायत्री हैं बेटियाँ
सीता, सत्या, सावित्री हैं बेटियाँ
दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती हैं बेटियाँ''

**बेटियों को केवल पूजना ही नहीं, बचाना है,
उन्हें सबकी लाड़ली लक्ष्मी बनाना है।**

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

बेटियाँ हैं तो समाज है - मध्यप्रदेश

मध्यप्रदेश जनसंपर्क द्वारा जारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरगिट

मूल : **एनटोन चेखव**
अनुवाद : **भद्रसैन पुरी**

पुलिस सारजेंट अचुमीलोफ अपना नया चोगा पहने और बगल में गठरी दबाए सड़क के आरपार चल रहा था। उसके पीछे लाल बालोंवाले सिपाही जब्त किए गए करौंदों से किनारों तक भरी झरनी ले जा रहे थे। हर तरफ खामोशी छाई हुई थी। सड़क पर एक भी व्यक्ति नहीं था। दुकानों और सार्वजनिक घरों के खुले दरवाजे एवं खिड़कियाँ परमात्मा की दुनिया को भूखा और शोकपूर्ण देख रहे हैं, यहाँ तक कि भिखारी भी इधर-उधर दिखाई नहीं देते।

एकाएक अचुमीलोफ ने किसी को चिल्लाते सुना—

"तो तुम काटना चाहते हो? तुम शापित जंगली जानवर! बच्चो, इसे काटने मत दो। आज कुत्तों को काटने नहीं दिया जाता, रोको उसे।"

कुत्ते का भौंकना सुनाई देता है। अचुमीलोफ ने उधर देखा, जिधर से आवाज आ रही थी। उसने एक कुत्ते को पिंचूगिन के लकड़ी के बाड़े से भागकर अपनी तीन टाँगों पर लँगड़ाते हुए देखा। एक आदमी माँड़ लगी केलिको कमीज और खुले बटनोंवाली वास्कट पहने उसका पीछा कर रहा था। आदमी कुत्ते के पाँव के बिलकुल निकट था। एकाएक वह आगे की ओर झुककर भूमि पर गिर गया और उसने कुत्ते के पिछले पाँव को पकड़ लिया। पुनः कुत्ते का भौंकना और चिल्लाहट सुनाई दी—"उसे काटने मत दो।" दुकानों की खिड़कियों से निद्रालु चेहरे प्रकट हुए और लकड़ी के बाड़े में शीघ्रता से लोगों का जमघट लग गया; जैसे वे उस भूमि में से ही उगे हों!

"क्या तुम सोचते हो कि यह उपद्रव हो सकता है?" सिपाही ने पूछा।

अचुमीलोफ बाएँ मुड़ा और लोगों की भीड़ की तरफ गया। लकड़ी के बाड़े के दरवाजे के निकट उसने खुले बटनोंवाली वास्कटवाले आदमी को अपना दायाँ हाथ थामे देखा। उसकी अंगुली से रक्तस्राव हो रहा था। उसके आधे नशीले चेहरे पर ऐसे भाव हैं जैसे वह कह रहा हो—'ठहरो, मैं तुमसे हरजाना वसूल करूँगा, दुरात्मा!' उसकी अंगुली अपने आपमें विजय-चिह्न प्रतीत होती थी। अचुमीलोफ को लगा कि यह सुनार खरीयुकिन है। भीड़ के मध्य में अपने अगले पैर फैलाए और सिर से पाँव तक काँपते हुए, तीखे थूथन के साथ, पीठ पर पीला बिंदु लिये सारे झगड़े की जड़ बैठा है—एक युवा सफेद शिकारी कुत्ता। उसकी जलमयी आँखों में घृणा का भाव है।

"मामला क्या है?" अचुमीलोफ ने भीड़ में से रास्ता बनाते हुए पूछा। "यहाँ किसलिए हो? तुम्हारी अंगुली को क्या हुआ? कौन चीख-चिल्ला रहा था?"

"मैं बिना किसी को छुए डेमिट्री डेमिट्रीएविच से जंगल में मिलने जा रहा था, श्रीमान!" खरीयुकिन ने अपनी मुट्ठी पर खाँसते हुए कहा, "जब एकाएक इस दुष्ट कुत्ते ने मेरी अंगुली काट ली। मुझे क्षमा करें। मैं कामकाजी आदमी हूँ और विशेष प्रकार का काम करता हूँ; किसी-न-किसी को मुझे भुगतान करना पड़ेगा, क्योंकि हो सकता है कि एक सप्ताह तक मैं इस अंगुली का उपयोग न कर सकूँ। जानवरों से बचने के लिए कोई कानून नहीं है! यदि ये सभी काटना शुरू कर दें तो उससे तो यही अच्छा रहेगा कि इस दुनिया में ही न रहा जाए!"

"अब!" अचुमीलोफ ने अपनी भौंहें ऊपर-नीचे करके कठोरता से पूछा, "यह कुत्ता किसका है? मैं इस मामले को जाने नहीं दूँगा। मैं तुम लोगों को सिखाऊँगा कि कुत्ते इस तरह खुले नहीं छोड़ने चाहिए। जो लोग नियमों का पालन नहीं करते, उनके लिए कुछ-न-कुछ करने का समय आ गया है। जब मैं उस दुरात्मा को दंड दूँगा तो उसे पता चलेगा कि कुत्तों को घूमने के लिए खुला छोड़ने का क्या अर्थ होता है। मैं उसे दिखाऊँगा कि मैं कौन हूँ!" सिपाही की ओर मुड़कर उसने कहा, "येलेड्रिन! पता लगाओ कि यह कुत्ता किसका है? और रिपोर्ट पेश करो। यह कुत्ता मार दिया जाएगा। इस काम को जल्दी करो। संभवतः यह कुत्ता पागल है। किसका कुत्ता है यह?"

"यह जनरल यीगेलोफ का कुत्ता प्रतीत होता है।" भीड़ में से किसी ने कहा।

"जनरल यीगेलोफ का? हम्म्म! येलेड्रिन, मेरा चोगा उतारो, अत्यंत गरमी है! संभवतः वर्षा होनेवाली है। एक बात मेरी समझ में नहीं आ रही—यह कुत्ता कैसे काट सकता है?" अचुमीलोफ ने खरीयुकिन की ओर मुड़ते हुए कहा, "वह तुम्हारी अंगुली तक पहुँच नहीं सकता। यह इतना छोटा कुत्ता है और तुम इतने बड़े आदमी हो। तुमने संभवतः अपनी अंगुली को स्वयं नाखून से फाड़ लिया है और उसके पश्चात् तुम्हें कुत्ते का खयाल आया। तुम पैसा बटोरने का प्रयत्न कर रहे हो। मैं तुम लोगों को जानता हूँ, तुम पिशाच हो!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''इसने कुत्ते के मुँह पर सिगरेट फेंककर उससे छेड़खानी की, परंतु कुत्ता मूर्ख नहीं है, वह इसको जान गया, श्रीमान!''

''तुम झूठ बोलते हो, तिरछी आँखवाले! इसने नहीं देखा, श्रीमान्। यह झूठ क्यों बोल रहा है? तुम बता सकते हो कि यह आदमी झूठ बोल रहा है या अपनी अंतरात्मा के अनुसार बात कर रहा है, जैसे परमात्मा के सामने हो। न्यायाधीश को निर्णय करने दो कि मैं झूठ बोल रहा हूँ या सच! आजकल के कानून के अनुसार हम सब बराबर हैं। मेरा एक भाई सेना में काम करता है। यदि तुम···।''

''बकवाद बंद करो।''

''नहीं, यह जनरल का नहीं है।'' सिपाही ने ध्यान से देखा, ''जनरल के पास इस प्रकार के कुत्ते नहीं हैं। उनके कुत्ते अधिकतर बैठनेवाले हैं।''

''क्या तुम्हें पक्का विश्वास है?''

''हाँ, पूरा विश्वास है।''

''मैं भी इसे जानता हूँ। जनरल के पास कीमती और अच्छी नस्ल के कुत्ते हैं; परंतु यह? पिशाच जानता है कि यह क्या है? इसके न बाल हैं और न ही शक्ल-सूरत—केवल सामान्य कुत्ता। क्या कोई ऐसा कुत्ता पाल सकता है? तुम लोगों का क्या खयाल है? यदि ऐसा कुत्ता पीटर्सबर्ग या मॉस्को में नजर आता तो जानते हो, क्या होता? वे कानून की तरफ नहीं देखते, बल्कि···यहीं अंत हो जाता। खरीयुकिन, तुम्हें पीड़ा हुई है; मैं मामले को ऐसे ही जाने नहीं दूँगा। मुझे उनको सबक सिखाना होगा। यही समय है इसका।''

''परंतु यह संभवतः जनरल का ही कुत्ता है।'' सिपाही ने थोड़ा सोचकर कहा, ''यह उसके थुथने पर तो लिखा नहीं है। मैंने उस दिन ऐसा ही कुत्ता जनरल के बाड़े में देखा था।''

''येलेड्रिन, चोगा पहनाने में मेरी सहायता करो; यहाँ हवा के झोंके आ रहे हैं, मैं काँप रहा हूँ। कुत्ते को जनरल के पास ले जाओ और वहाँ पता करो। उससे कहना कि मैंने इसे ढूँढ़ा है और उसके पास भेजा है। उससे यह भी कहना कि कुत्ते को सड़क पर न आने दे। संभवतः यह कीमती कुत्ता है; यदि हर कोई इसकी नाक पर सिगरेट फेंकने लगा तो यह बरबाद हो जाएगा। कुत्ता एक कोमल जीव है। और तुम, बुद्धिहीन प्राणी, अपना हाथ नीचे करो; तुम्हें अपनी भद्दी अंगुली की नुमाइश करना जरूरी नहीं। यह तुम्हारी अपनी गलती है।''

''जनरल का बावरची यहाँ है। इससे पूछते हैं।''

''सुने, प्रोखोर, एक मिनट के लिए यहाँ आओ। देखो, यह तुम्हारा कुत्ता है क्या?''

''यह कुत्ता? हमने ऐसा कुत्ता कभी नहीं पाला।''

''यह प्रश्न पूछे जाने योग्य नहीं है,'' अचुमीलोफ ने कहा, ''यह आवारा कुत्ता है। इससे अधिक कहने के लिए कुछ नहीं है। यदि मैं कहता हूँ कि यह आवारा कुत्ता है तो आवारा है; इसको मार दिया जाएगा।''

''यह हमारा नहीं है,'' प्रोखोर ने कहना जारी रखा—''यह कुत्ता जनरल के भाई का है, जो अभी-अभी आया है। मेरा मालिक शिकारी कुत्तों का शौकीन नहीं है, परंतु उसका भाई ऐसा है।''

''तो उसका भाई व्लेडीमीर डवेनोविच पहुँच गया है?'' अचुमीलोफ ने पूछा और आनंदपूर्वक मुसकराहट उसके चेहरे पर फैल गई—''बहुत ठीक, मुझे इसका पता नहीं था। क्या वह यहाँ मिलने आया है?''

''हाँ, मिलने ही आया है।''

''ठीक है, ठीक है, संभवतः वह अपने भाई के लिए उदास हो गया होगा। मुझे इसका पता नहीं है। तो तुम कहते हो कि कुत्ता उसका है? मैं अति प्रसन्न हूँ। इसे ले जाओ—एक छोटा, अच्छा कुत्ता! एक तेज छोटा और काटनेवाला कुत्ता और इसने उस व्यक्ति की अंगुली को पकड़ा है। हा··हा··हा! मेरी प्यारी नन्ही वस्तु, तुम काँप क्यों रहे हो? यह आदमी खलनायक है!'' प्रोखोर कुत्ते को बुलाता है और उसको लेकर लकड़ी के बाड़े से चला जाता है। लोगों की भीड़ खरीयुकिन की हँसी उड़ाती है।

''मैं किसी दिन तुम्हें पकड़ूँगा!'' अचुमीलोफ ने उसे धमकाया और अपने आपको अपने नए चोगे में लपेटकर सड़क के आरपार चलना जारी रखा।

इस अंक की चित्रकार

पूनम किशोर

जन्म : ४ नवंबर, १९८० को।

शिक्षा : एम.एफ.ए. पेंटिंग, प्रथम श्रेणी। आर्ट एवं क्राफ्ट कॉलेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

कृतित्व : विभिन्न वर्कशॉप तथा सेमिनारों में उत्कृष्ट चित्रकारी। विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा आयोजित पेंटिंग प्रतियोगिताओं में सहभागिता। डॉक्यूमेंटरी फिल्म 'छप्पन छुरी' के लिए स्केच निर्माण। अनेक प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित। इसके अतिरिक्त अनेक अकादमियों तथा विश्वविद्यालयों से पुरस्कृत।

संपर्क : *३ स्ट्राची रोड, सिविल लाइंस, इलाहाबाद (उ.प्र.)*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

मनुष्य का सामाजिक प्राणी होना

● राजेंद्र त्यागी

'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है', यह जुमला मैं तब से सुनता आ रहा हूँ, जब से मुझे काले अक्षर और काली भैंस में अंतर का बोध हुआ है। जुमला तब से आज तक यथावत् है। कहते हैं कि केवल परिवर्तन शाश्वत है, शेष सभी परिवर्तनशील है; लेकिन यह जुमला परिवर्तन की मार से भी अछूता ही रहा है। अभी तक तो शाश्वत लगता है, आगे राम जाने।

परिवर्तन की चपेट से सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य भी नहीं बच पाया है। हालाँकि मैं ऐसा नहीं मानता कि मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। मनुष्य स्वयं ऐसा दावा करता है, इसलिए श्रेष्ठ जनों की भीड़ में मैं भी अपने मुख से यदा-कदा ऐसा उच्चारण कर देता हूँ। मेरे ऊपर आप अवसरवादी होने का आरोप लगा सकते हैं। मुझे कोई एतराज नहीं है, क्योंकि अपने सीने पर मानववादी होने की प्लेट लगाकर मैं भी श्रेष्ठ जनों की पाँत में शामिल होने की हसरत रखता हूँ।

हाँ, मनुष्य स्वयं परिवर्तित हुआ है। उसका चौखटा परिवर्तित हुआ, उसकी आत्मा नित परिवर्तित होती रहती है। उसके चरित्र में परिवर्तन आया है। आत्मा परिवर्तित होगी तो चरित्र में परिवर्तन आएगा ही। आज के इस दौर में चरित्र परिवर्तन आवश्यक है, क्योंकि आधुनिक युग में वही मनुष्य प्रगतिशील माना जाता है, जिसका चरित्र हर क्षण परिवर्तित होता रहता है। वक्त आने पर गिरगिट व मौसम की तरह रंग परिवर्तित करनेवाली प्रजाति के मनुष्य हालाँकि आज भी यहाँ-वहाँ मिल जाते हैं, किंतु उनकी गिनती नई पीढ़ी के नवप्रगतिशील मनुष्यों में नहीं होती।

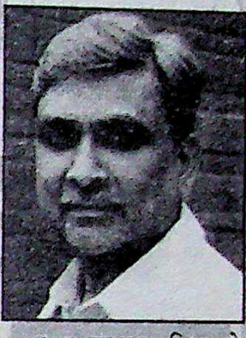

जन्म : १९४९, सरधना, जिला मेरठ में।
शिक्षा : एम.ए. (दर्शनशास्त्र)।
प्रकाशन : 'पानी उतरते चेहरे', 'खादी में पॉलिएस्टर', 'मुन्नालाल का लोकतंत्र' *(व्यंग्य-संग्रह)*; 'कश्मीर और भारत पाक संबंध' *(स्व. प्रकाशवीर शास्त्री के व्याख्यानों का संग्रह)*, 'बापू कैद में' *(व्यंग्य नाटक)*, 'महाभारत का अभियुक्त' *(उपन्यास)* के अलावा विभिन्न पत्र-पत्रिका व इंटरनेट पत्रिकाओं में कहानी व व्यंग्य लेख प्रकाशित।
सम्मान-पुरस्कार : प्रकाशवीर शास्त्री पुरस्कार, दुष्यंत स्मृति सम्मान व यशपाल जैन सम्मान।

कल तक प्रगतिशील माने जानेवाले लोग आज की बाधा दौड़ में पिछड़ गए हैं। शेष की तो ईश्वर जाने।

मनुष्य ही नहीं, समाज भी परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है, गुजरता रहा है। समाज का जुगराफिया परिवर्तित हुआ है। उसकी कैमिस्ट्री में परिवर्तन आया है। बावजूद इसके, मनुष्य आज भी उसी प्रकार सामाजिक है, जिस प्रकार समाजवादी नेता हर हाल में समाजवादी है और पंचतारा सुविधाओं से संपन्न प्रत्येक साम्यवादी नेता साम्यवादी, क्योंकि मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है।

हाँ, एक बार अवश्य मुझे इस जुमले में भी परिवर्तन का आभास हुआ था। किंतु आभास रस्सी में साँप की तरह मिथ्या ही सिद्ध हुआ। बात तब की है, जब मेरे लिए काला अक्षर भैंस बराबर था। उस समय हम जब कभी कहीं अकेले जाया करते थे तो हमारे बड़े-बूढ़े हमें उन रास्तों से ही गुजरने की हिदायत दिया करते थे, जिन रास्तों पर आदमियों का आना-जाना लगा रहता था, ताकि रास्ते में मिलनेवाले कुत्ते-बिल्लियों से कोई खतरा न हो। उस दौर में खतरा मनुष्यों से नहीं, जानवरों से हुआ करता था।

समय बदला, यानी कि परिवर्तन आया। मैंने 'काला अक्षर भैंस बराबर' की अवस्था पार की, बुजुर्गों ने अपनी हिदायत में परिवर्तन किया। अब वे उन रास्तों से न गुजरने की हिदायत देने लगे, जिन रास्तों पर आदमी मिल जाते हैं। सुरक्षा के लिए मोहल्ले का कुत्ता साथ ले जाने की हिदायत भी उनकी हिदायत में जुड़ने लगी थी। रात में यदि कभी किसी की छत पर आदमी के पैरों की आहट सुनाई दे जाए तो अगले दिन चर्चा का विषय यही होता था—'रात उसकी छत पर आदमी था।' पूरा मोहल्ला असुरक्षा की भावना से ग्रस्त रहता था। तब जानवर नहीं, आदमी खतरनाक सिद्ध होने लगा था; लेकिन मनुष्य तब भी सामाजिक प्राणी ही रहा।

हमारे बुजुर्ग बदली हिदायतों के जरिए मनुष्य के सामाजिक होने के विरोध में मिमियाते रहे; किंतु उनका यह मिमियाना सामाजिक जुमले के लिए चुनौती न बन पाया, क्योंकि वे समाजशास्त्री न थे। विचारणीय प्रश्न यह है कि हमारे बुजुर्ग भले ही समाज-शास्त्री न रहे हों, किंतु मनुष्य के सामाजिकपन में आए इस परिवर्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अहसास समाज-शास्त्रियों ने भी तो अवश्य किया होगा। फिर उन्होंने इस जुमले में परिवर्तन करने का प्रयास क्यों नहीं किया? शायद इसलिए कि विश्व के सभी श्रेष्ठ जन मनुष्य हैं और मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, फिर स्वयं को और अपने बंधु-बांधवों को कोई क्यों असामाजिक कहलाना पसंद करेगा?

चोर-चोर मौसेरे भाई। परिवर्तन गया भाड़ में। उसका भाड़ में रहना ही उचित है, क्योंकि कोई भी चोर दूसरे चोर को चोर कहने की अनैतिक चेष्टा करना उचित नहीं समझेगा। किसी भी चोर के लिए ऐसे अप्रिय सत्य का बखान करना तो दूर, सोचना भी असामाजिक कृत्य कहलाएगा। इस प्रकार कोई भी चोर दूसरे की पोल खोलकर अपने आपको असामाजिक कहलाना पसंद नहीं करेगा, क्योंकि उसकी भलाई हर हाल में सामाजिक बने रहने में ही है। वैसे भी, हमारे धर्मशास्त्रों में अप्रिय सत्य बोलने की सख्त मनाही है। इसलिए श्रेष्ठजन अन्य श्रेष्ठजनों को असामाजिक न कहकर शास्त्रों की ही वाणी का पालन कर रहे हैं।

यह सत्य और असत्य का भी अजीब झंझट है। मुगलई घुट्टी से व्हिस्की पीने तक की इस बौद्धिक अवस्था तक हमें घोट-घोटकर पिलाया जाता रहा है, 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात सत्यं अप्रियम्'। यह नैतिक बैरिकेड भी मनुष्य के सामाजिक होने के समाज-शास्त्रीय इस जुमले को चुनौती न मिलने का एक कारण हो सकता है। यह बिलकुल इसी प्रकार है जैसे बॉस की बात का जवाब दो तो लांछन कि 'जवाब देता है, जुबान चलाता है, अनुशासन हीन।' जवाब न दो तो भी अनुशासनहीनता के आरोप में कारण बताओ नोटिस, जवाब क्यों नहीं दिया? अजीब स्थिति है ना। किसी एक नेत्रीय व्यक्ति को 'नैनसुख' कह दिया तो असत्य और काना कह दिया तो अप्रिय सत्य, दोनों ही स्थिति में निषेध। सत्य और अप्रिय सत्य के इस सिद्धांत के खिलाफ मैं एक अरसे से अलापता आ रहा हूँ, क्योंकि मेरा मानना है कि सत्य प्रिय हो ही नहीं सकता, किंतु नक्कारखाने में तूती की तरह मेरा आलाप भी हमेशा ही लापता रहा, क्योंकि मैं नेता नहीं हूँ। नेता होता तो मेरी भी प्रत्येक लालूई लफ्फाजी 'आर्ष वचन' कहलाती।

सवाल केवल यह नहीं है कि हालात बदलने के बावजूद इस सामाजिक सिद्धांत को चुनौती क्यों नहीं मिली। मनुष्य की तरह अन्य प्राणी भी अपने-अपने समाज में रहते हैं। मनुष्य की तरह हाथी भी झुंड बनाकर रहते हैं। हिरन भी अपने परिवार में रहते हैं। बंदर भी कम सामाजिक नहीं हैं। हमारे गाँव की भैंस भी जब खूँटे से खुल जाती है तो अपने समाज में शामिल हो जाती है। कुत्ता बेचारा तो मनुष्यों के ही समाज में पूँछ हिलाता रहता है। फिर केवल मनुष्य को ही सामाजिक होने का प्रमाण-पत्र क्यों दिया गया, अन्य को क्यों नहीं? सवाल यह भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। शायद इसलिए कि मनुष्य दुराचारी है, बलात्कारी है। प्रकृति से भ्रष्टाचारी है। ऐसे सद्गुण अन्य प्राणियों मे[…] पाए जाते, इसलिए वे सामाजिक प्राणी नहीं[…] अन्य प्राणी भी यदि सामाजिक होते तो वे[…] अपने समाज का सदुपयोग इन सद्गुणों[…] क्रियान्वयन में करते। स्पष्ट रूप से मेरा मा[…] है कि धर्म, विवेक बुद्धि जैसे तत्त्व इनसान[…] अन्य प्राणियों से अलग नहीं करते। दोनों[…] मध्य यदि कोई अंतर है तो वह यही है[…] जानवरों में मानवीय सद्गुणों का अभाव[…] मसलन भ्रष्टाचार जैसे परम सद्गुण का जा[…] में अभाव है। उनमें दुराचार नामक सद्गुण[…] पाया जाता। उन्हें परमानंद-प्राप्ति के बला[…] जैसे सद्गुण का ज्ञान नहीं है। क्योंकि मनुष्[…] सद्गुणों के क्रियान्वयन में अपने समाज[…] भरपूर सदुपयोग करता है, इसलिए वह सामा[…] प्राणी है।

मेरा मानना है कि धर्म, विवेक बुद्धि जैसे तत्त्व इनसान को अन्य प्राणियों से अलग नहीं करते। दोनों के मध्य यदि कोई अंतर है तो वह यही है कि जानवरों में मानवीय सद्गुणों का अभाव है, मसलन भ्रष्टाचार जैसे परम सद्गुण का जानवरों में अभाव है। उनमें दुराचार नामक सद्गुण नहीं पाया जाता। उन्हें परमानंद-प्राप्ति के बलात्कार जैसे सद्गुण का ज्ञान नहीं है। क्योंकि मनुष्य इन सद्गुणों के क्रियान्वयन में अपने समाज का भरपूर सदुपयोग करता है, इसलिए वह सामाजिक प्राणी है।

कुल मिलाकर हम इस नतीजे पर पहुं[…] कि मनुष्य और समाज के बीच चोली-दाम[…] संबंध है। चोली-दामन का संबंध भी अ[…] संबंध है। यह जुमला भी मनुष्य के सामा[…] होने संबंधी जुमले की तरह शाश्वत लगत[…] आज के इस प्रगतिशील युग में चोली[…] दामन के मध्य पहले जैसी घनिष्ठता नहीं[…] है। दोनों के बीच भेद उत्पन्न होता जा रहा[…] चोली के ऊपर से दामन खिसकता जा रहा[…] फिर भी चोली-दामन की घनिष्ठता संबंधी[…] यह जुमला यथावत् है।

चोली से दामन के खिसकने के[…] दमन-शमन का दर्शन है। दरअसल, दामन[…] का प्रतीक है, इसलिए चोली को सहन[…] चोली दमन से मुक्त होती जा रही है। […] स्थिति मनुष्य व समाज के मध्य है। दम[…] पुरातन मूल्यों के आधार पर मनुष्य का सा[…] बने रहना दकियानूसी विचार है, दमनका[…] वह सामाजिक नए मूल्य स्थापित कर र[…] उनका सदुपयोग कर रहा है, इसलिए […] नपने के आधार पर असामाजिक होते हु[…] मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।

एच.आई.[…]
अभय खंड-प्रथम, इं[…]
गा[…]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

अपार कनफ्यूजन है

● आलोक पुराणिक

विकट मारामार है, कनफ्यूजन अपार है।

अमिताभजी की चकाचक सिचुएशन के लिए कौन जिम्मेदार है, वे सिर में लगानेवाला तेल या एक टैबलेट, जो वे इश्तिहारों में लेते हुए दिखाए जाते हैं।

सरजी, मैं तो बड़े आदमियों की बात मानता हूँ, पर बात पूरी समझ नहीं आती है।

सचिन तेंदुलकर एक बैटरी को अपनी परफॉरमेंस का क्रेडिट देते दिखते हैं। फिर अगले ही एड में बताया जाता है कि संडे हो या मंडे रोज खाओ अंडे। यानी सचिन की परफॉरमेंस का राज उनके द्वारा खाए जानेवाले अंडों में निहित है। अंडों से ही अगर बंदा सचिन बन जाए तो फिर आमलेट के सारे ठेले वालों को इंडिया की राष्ट्रीय क्रिकेट टीम में होना चाहिए था, पर पता नहीं, इस पर कनफ्यूजन बना हुआ है।

जन्म : ३० सितंबर, १९६६ को। दिल्ली विश्वविद्यालय में रीडर। हिंदी की सभी पत्र-पत्रिकाओं में नियमित व्यंग्य लेखन तथा कवि सम्मेलन मंचों से व्यंग्य गद्य का पाठ। 'आज तक' और 'सहारा समय' टी.वी. चैनलों के लिए हास्य व्यंग्य आधारित कार्यक्रमों का स्क्रिप्ट लेखन। एक व्यंग्य संग्रह 'नेकी कर अखबार में डाल' प्रकाशित।

कुछ दिनों पहले तक बल्कि अब तक वीरेंद्र सहवाग एक बाम की तारीफ करते हुए दिखाई दे रहे थे। पर बाद में पता चला कि यह बाम उन पर बेअसर रहा, उन्हें इलाज कराने के लिए विदेश जाना पड़ा। इलाज भी ऐसा-वैसा नहीं, बड़ा वाला। मतलब उनकी हेल्थ की सिचुएशन यह हो गई है कि उन्हें इंग्लैंड से होनेवाले पहले टेस्ट मैच से बाहर रखा गया है।

गौतम गंभीर भी कुछ दिनों पहले तक एक बाम को अपनी सेहत का राज बता रहे थे। बाद में पता चला कि उनकी सेहत ठीक नहीं है।

बाद में यह भी पता चला कि वह एक दारू के इश्तिहार में भी काम कर रहे हैं। दारू बेच रहे हैं, दारू सेहत के लिए बहुत खराब होती है। भले ही कोई भी बाम लगा लो। हमें तो यह सबक मिला है बाम और दारू के इश्तिहार देखकर। बाम कित्ती ही लगा लो, पर दारू एकाध पैग अंदर जाते ही प्रॉब्लम हो जाती है, सुस्ती आ जाती है। मौज आ जाती है।

यही सिचुएशन आजकल महेंद्र सिंह धोनी की हो गई। उन पर आरोप लग रहे हैं कि वह सुस्त हो गए हैं। उनके बॉलर बहुत धीमे बॉलिंग कर रहे हैं। बॉलरों में हरभजन सिंह शामिल हैं। हरभजन सिंह के साथ ही धोनी एक शराब का इश्तिहार करते हैं। शराब सुस्त बना देती है। भइया ज्यादा सुस्ती आ गई तो दिक्कत हो जाएगी। दारू-वारू पियो, भइया बॉडी में स्फूर्ति आती है। सस्तीवाली ताड़ी-वाड़ी टाइप खेंचने में रुपए भले ही बच जाएँ, पर बंदा सुस्त हो जाता है।

जब से विराट कोहली एक मोटरसाइकिल के इश्तिहार में तेज भागते दिखने लगे हैं, उनकी बैटिंग की रफ्तार धीमी हो गई है। भइया मोटरसाइकिल भी चलाओ, कार भी चलाओ, पर इतनी एनर्जी तो बचाकर रख लो कि बैटिंग चल जाए। बैटिंग ना चले तो फिर आफत हो जाए है। मतलब, उन्हें देख लो, इरफान पठान को, पहले बहुत आइटम बेचने को मिला करै थे उनको। अब ना बिकवाता उनसे कोई साइकिल भी, कोल्ड ड्रिंक तो छोड़ दो।

और भइया कोई भी आइटम बेचने से पहले यह तो देख लो कि क्या बेच रहे हैं।

करीना कपूरजी बता रही हैं कि एक पैसे में तमाम शेयरों के ट्रेड संभव हैं। करीना कपूरजी शेयरों के बारे में बताएँ, यह ऐसा है जैसे कि पी चिदंबरम कैबरे डांस के बारे में बताएँ। भइया, देख लो, सँभलकर बताओ ना। वरना तो कनफ्यूजन अपार है।

फ्लैट नं. एफ-१
प्लॉट नं. बी-३९
रामप्रस्थ, गाजियाबाद-२०१०११

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

साहित्यकार महाकवि व्याकुलजी

● पूरन सरमा

वे साहित्यकार थे और अकसर बीमार रहते थे। बीमारी और साहित्य का सान्निध्य भारतेंदु काल से चला आ रहा है। हालाँकि वे आधुनिक काल के रचनाकार थे, परंतु उनकी मान्यता और विचारधारा में नए युग की वजह से कोई ज्यादा अंतर नहीं आया था। इसी कारण वे अप्रकाशित रचनाकार थे। इस युग के संपादक उनकी रचनाओं को अपने पत्र में स्थान नहीं दे रहे थे। इसलिए उनका ज्यादा साहित्य उनके ही पलंग के नीचे गट्ठर के रूप में वर्षों से सुरक्षित है। चाहे उनकी रचनाओं का प्रकाशन न के बराबर हुआ था, परंतु वे पैंतीस साल की अपनी साहित्य साधना से अपना कद काफी बढ़ा चुके थे। वे स्वनामधन्य व मूर्धन्य साहित्यकार का स्वरूप ग्रहण कर चुके थे।

रुग्ण साहित्यकार होने से उनका संपर्क अस्पतालों से काफी हो गया था। कफ, खाँसी और अस्थमा उनका साथ नहीं छोड़ता था। इस बीमारी की हालत में भी वे अस्पताल कर्मियों को यह जानकारी देने से नहीं चूकते थे कि वे बहुत बड़े साहित्यकार हैं। इस बात से हालाँकि इस अव्यवस्थित होती जिंदगी में अस्पताल कर्मियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था, परंतु उनको तसल्ली यह हो जाती थी कि उनका ट्रीटमेंट साहित्यकारी की वजह से वी.आई.पी. की तरह होता रहा है। वे अस्पताल के चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी से लेकर डॉक्टर तक को यह बताना आवश्यक समझते थे कि वे साहित्यकार हैं।

दरअसल, वे कवि थे। वर्ष में छपी एकाध

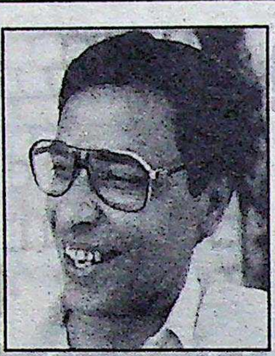

जन्म : १४ मार्च, १९५४, सिकंदरा, दौसा (राजस्थान)

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा।

प्रकाशन : 'एक थी बकरी', 'आत्महत्या से पहले', 'स्वयंवर आधुनिक सीता का', 'तैमूरलंग का तोहफा', 'इक्कीसवीं सदी का साहित्यकार', 'घायल की गति घायल जाने', 'नए नेता का चुनाव', 'गलीवाले नेताजी', 'अफसर की गाय', 'मेरी लघु व्यंग्य रचनाएँ', 'बड़े आदमी', 'मुख्यमंत्री दिल्ली गए', 'दफ्तर में वसंत', 'साहित्य की खटपट' *(व्यंग्य संग्रह)*; 'समय का सच' *(उपन्यास)* एवं बाल साहित्य की करीब बीस पुस्तकों का प्रकाशन।

सम्मान-पुरस्कार : अनेक बार पुरस्कृत एवं सम्मानित। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा सम्मानित।

संप्रति : राजस्थान विश्वविद्यालय में सेवारत।

रचनाओं को अपने झोले में डाले हर किसी से पूछते कि उन्होंने उनकी अमुक रचना पढ़ी या नहीं? अस्पताल कर्मियों का साहित्य से दूर-दूर का भी रिश्ता नहीं होता, वे स्वीकृति में जबरन सिर हिलाकर उनका मन रख लेते। हर तीसरे-चौथे रोज अस्पताल जाना और अपनी साहित्यकारी के योगदान और उससे जुड़े किस्से अपनी जबान से सुनाना उन्हें अत्यंत प्रिय था। वे खुद ही घोषणा करते कि वे बड़े साहित्यकार हैं और जल्दी ही एक अनियतकालिक पत्रिका निकालने जा रहे हैं। अस्पताल कर्मी अपनी सेवा व्यस्तताओं के मध्य ही उनकी बात सुनकर अनसुना करके काम में डूब जाते। उनको यानी व्याकुलजी को यही बुरा लगता था।

उनके कंधे पर लटका हुआ झोला झोला क्या था, हिंदी साहित्य का संपूर्ण इतिहास था। उसमें शहर के दूसरे साहित्यकारों के आलोचनात्मक पेपर और उन्हें नीचा दिखाने की करतूतें भरी थीं। व्याकुलजी ने साहित्य को पूरी तरह से ओढ़ लिया था और वे कई बार उसे बिछाकर अस्पताल के आगे लगे पेड़ों की छाया में लेट भी जाते थे।

सेवानिवृत्ति के बाद उनके पास पर्याप्त समय था, परंतु वे सामने वाले के समय से बेपरवाह थे। एक बार व्याकुलजी जब अपनी बीमारी के बारे में कम और साहित्य के बारे में अधिक जानकारी दे रहे थे तो डॉक्टर ने कहा, "व्याकुलजी, आप अपनी बीमारी का हाल-चाल बताओ, यह तो पूरा अस्पताल जानता है कि आप जाने-माने प्रसिद्ध साहित्यकार हैं? मेरा मतलब खाँसी चलती है क्या, और चलती है तो उसके साथ बलगम भी निकलता है क्या?"

व्याकुलजी बोले, "डॉक्टर सा'ब, आज सुबह जब मैं वसंत पर कविता लिखने बैठा तो हलका सा जाड़ा लगा और उसके बाद खाँसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के साथ बलगम भी आया। कहीं शीतकाल में वसंत के स्मरण मात्र से बॉडी ने कोई रिएक्ट तो नहीं किया है?''

''नहीं, ऐसा नहीं है। आप कफ-खाँसी के क्रॉनिक पेशेंट हैं। वायरस चल ही रहा है तो बरफानी हवाओं ने आपके गले को इंफेक्टेड कर दिया है। तीन दिन एंटीबायोटिक लें, आराम मिल जाएगा। यदि आपको मनोवैज्ञानिक रूप से लगता है कि वसंत आपको बेचैन करता है तो आप वसंत को छोड़ दीजिए, वैसे भी वसंत आउटडेटेड हो चुका है। वसंत की प्रासंगिकता अब जीवन में रह क्या गई है।'' डॉक्टर ने बताया तो व्याकुलजी को बातों का रस मिल गया। वे बोले, ''सच कह रहे हैं डॉक्टर सा'ब आप। वसंत को भुला दिया है लोगों ने। नए कवि नई कविता नाम से जो कविताएँ लिख रहे हैं, उनका कोई अर्थ नहीं निकलता। कोई छंद या लय नहीं और कविता लिखी जा रही है। आप कहें तो मैं आपको अपनी एक ताजा गजल सुनाऊँ?''

डॉक्टर के हाथों के तोते उड़ गए, वे बोले, ''देखिए, मरीजों की लाइन लंबी है। मैं ड्यूटी पर हूँ। कभी फुरसत में सुनूँगा आपकी गजल। आप उठिए और ये दवाएँ लीजिए। पहले आपका स्वास्थ्य जरूरी है। कविता तो आपकी रग-रग में है।'' यह कहकर डॉक्टर ने 'नेक्स्ट पेशेंट' पुकारा।

निराश भाव में व्याकुलजी उठे और कंपाउंडर के पास जाकर बोले, ''नमस्कार गुप्ताजी, मैं व्याकुल हूँ। साहित्यकार व्याकुल। यह डॉक्टर सा'ब एकदम रसहीन हैं। कविता से बिदक जाते हैं। जब भी कविता सुनाने का प्रस्ताव रखता हूँ, बहानेबाजी करके टाल जाते हैं। आपके पास वक्त हो तो एक कविता नोश फरमाएँ।''

कंपाउंडर के होश फाख्ता, वह बगलें झाँकने लगा, फिर साहस बटोरकर बोला, ''व्याकुलजी, इस समय मैं व्यस्त हूँ। आपकी भी तबीयत ठीक नहीं है। आप तो पहुँचे हुए साहित्यकार हैं। अस्पताल में कविता सुनाना शोभा नहीं देता, आप तो किसी मंच पर सुनाओ। कविता को मान-सम्मान तभी मिलेगा।'' व्याकुलजी कविता सुनाने को बेचैन थे, बोले, ''गुप्ताजी, मैं केवल कविता का मुखड़ा सुनाऊँगा, आगे का टुकड़ा जब आप फुरसत में होंगे तब ही गुनगुनाऊँगा।''

गुप्ताजी अकस्मात् अपना स्थान छोड़कर कमरे से बाहर निकल गए और सीधे डॉक्टर के पास जाकर बोले, ''डॉक्टर साहब, मुझे व्याकुलजी से बचाओ। वे मुझे अपनी कोई कविता सुनाने पर अड़े हुए हैं। मेरे पास वक्त नहीं है। पेशेंट्स की लाइन लगी हुई है। उनकी कविता सुनूँ या पेशेंट्स को दवा दूँ!''

डॉक्टर ने हालात को समझने में देर नहीं की। उन्होंने गुप्ताजी को अपने पास बैठाकर, चपरासी को बुलाकर कहा, ''रामधन, व्याकुलजी को तो जानते हो न?''

रामधन व्याकुलजी के नाम पर हँसने लगा और बोला, ''व्याकुलजी को पूरा अस्पताल जानता है सर। आप बताइए उनसे क्या काम है?''

''उनसे काम नहीं है, उन्हें पेशेंट्स की लाइन से हटाकर अस्पताल को सुचारु रूप से चलाने को मार्ग प्रशस्त करो। जाओ, जल्दी जाओ।'' रामधन डॉक्टर की आज्ञा शिरोधार्य करके व्याकुलजी के पास पहुँचा और बोला, ''व्याकुलजी, इधर आइए, सामने पेड़ों की छाया में कुछ रसिक श्रोता खड़े हैं, आप चाहें तो अपना प्रयोग उन पर कर सकते हैं। मेरा मतलब उन्हें आप कविता का मर्म भी समझा सकते हैं।''

व्याकुलजी रामधन की बातों में आकर लाइन से हट गए और मैदान में आ गए। रामधन ने उन्हें एक पत्थर पर बिठाया और 'अभी आया' कहकर अस्पताल में गुम हो गया। उधर व्याकुलजी अपने को कविता पाठ के लिए पूरी तरह तैयार कर चुके थे। जब काफी देर तक रामधन नहीं आया तो व्याकुलजी उठे और फिर जा घुसे अस्पताल में। वहीं गुप्ताजी के सामने जा डटे। व्याकुलजी को देखकर गुप्ताजी की जान हलक में आ गई।

आव देखा न ताव वे जाकर डॉक्टर से लिपट गए और डरे-डरे से बोले, ''डॉक्टर साहब, मुझे बचाओ। व्याकुलजी फिर आ गए हैं। इस बार वे काफी हिंसक नजर आ रहे हैं।'' यह सुनते ही डॉक्टर सकते में आ गए। उन्होंने कहा, ''पहले कमरे के किवाड़ बंद करो। वे अब इधर ही आ रहे होंगे।'' रामधन ने किवाड़ बंद कर मरीजों को शांत रहने को कहा।

तभी बाहर से दस्तक हुई तो डॉक्टर ने सबको चुप रहने का संकेत दिया। लेकिन बाहर किवाड़ जोरों से भड़भड़ाए जा रहे थे। बाहर से व्याकुलजी की चीख सुनाई दी, ''किवाड़ खोलो, मैं साहित्यकार व्याकुल हूँ। मुझे डॉक्टर, गुप्ता और रामधन की तलाश है। उन लोगों ने मुझे धोखा दिया है। मैं प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित साहित्यकार हूँ। इन लोगों ने मुझे ही नहीं, साहित्य को ललकारा है। मैं उनको मुँहतोड़ जवाब देना चाहता हूँ।'' यह कहने के बाद व्याकुलजी को खाँसी उठी और अस्थमा का दौरा पड़ा तो वहीं गिर पड़े।

डॉक्टर ने किवाड़ खुलवाकर देखा तो उनके होश उड़ गए, व्याकुलजी घायलावस्था में वहाँ पड़े थे।

डॉक्टर ने व्याकुलजी को हिलाकर कहा, ''अस्पताल बाद में चला लेंगे व्याकुलजी, पहले आप अपनी कविता सुना दीजिए।'' व्याकुलजी की चेतना में हरकत हुई और वे कराहकर बोले, ''रामधन तुमने ठीक नहीं किया। मैं प्रसिद्ध साहित्यकार व्याकुल हूँ।'' गुप्ताजी बोले, ''व्याकुलजी, मुझे माफ करें। मैं आपकी कविता सुनने को तैयार हूँ।'' व्याकुलजी उठकर बैठ गए और झोले में से डायरी निकालकर कविता पाठ करने लगे। मरीज कराह रहे थे और अस्पताल रेलवे स्टेशन में तब्दील हो गया। डॉक्टर, गुप्ता और रामधन लाचार थे। वे प्रसिद्ध साहित्यकार की अनदेखी कर कोई जोखिम भी नहीं लेना चाहते थे। व्याकुलजी विभोर और मस्ती में डूबे हुए थे। उनकी दवा यही थी।

१२४/६१-६२, अग्रवाल फार्म
मानसरोवर,
जयपुर-३०२०२०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

चलना खुजली अंगुलियों में

● देवव्रत जोशी

हाथ में खुजली चलती है तो पैसा आता है या खर्च होता है, ऐसी धारणा है। पाँवों की खुजली आदमी को यायावर बना सकती है, यात्रा के लिए मजबूर कर सकती है। हालाँकि ये सब पारंपरिक विश्वास हैं, निपट देहाती व भोले विश्वास।

लेकिन अंगुलियों में खुजली सबके नहीं चलती। अध्यापक की अंगुलियाँ जब खुजाल खाती थीं—कुछ वर्षों पहले और कमोबेश आज भी तो वह बालकों के नरम गालों पर झापड़ बनकर एक हरे निशान के रूप में उभरती थीं। प्रेयसी की अंगुली में खुजली चलना उसे प्रेमी द्वारा अँगूठी पहनाए जाने की प्रतीक्षा का प्रतीक होती थी।

हमारे एक मित्र हैं। कवि हैं। रातोरात चित्रकार बन गए। अंगुलियों में खुजली जो चली। ऐसी चली कि कोयले से दीवारें रँगी रात भर। दूसरे दिन अलस्सुबह वे ड्राइंग पेपर पर एक्सड चित्रकारी करने लगे और जुगाड़ लगाकर हफ्ते भर में उन्होंने एक चित्र-प्रदर्शनी आयोजित करवा डाली। चर्चित हुए और बस गए महीने-दो महीनों में।

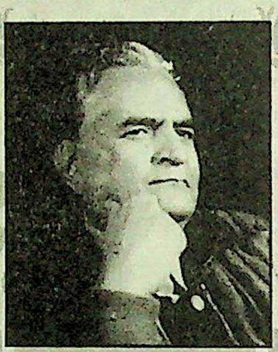

जन्म : १ दिसंबर, १९३५ को।

शिक्षा : 'दिनकर' के गद्य साहित्य पर पी-एच.डी.।

कृतित्व : सुप्रसिद्ध कवि, समीक्षक व निबंधकार; पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

सम्मान-पुरस्कार : भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय गीतों पर पुरस्कृत, म.प्र. लेखक संघ के सर्वोच्च साहित्य सम्मान 'अक्षर आदित्य' सहित विभिन्न सम्मानों से सम्मानित।

खुजली स्थायी नहीं होती। चली और कुछ देर में खत्म हुई। इस खुजली का समुचित उपयोग कर लिया जाए, यही उचित है, गृहणियों को अंगुलियों में खुजली चलती है तो वे घर भर की चादरें, कपड़े, परदे उतारकर धोने बैठ जाती हैं। चमकते हुए फर्श फिर साफ किए जाते हैं। इस बीच गुस्सा आ गया तो नन्हे-मुन्ने भी लपेट में आ जाते हैं।

साहित्यकार नमा प्रगति की अंगुलियों में सदा खुजाल चलती रहती है। एक मैं-मैं वादी कवि अर्थ-चिंता से ग्रस्त थे। किसी प्रतियोगिता के लिए लेख लिखना था। कवि और गद्य अब तो कुछ रिश्ता हो चला है, पहले नहीं था। उन्होंने एक लेख लिखा औ भूल गए। किस्मत कहिए या संयोग, उन्हें पह पुरस्कार मिल गया। वे स्वयं के जयघोष से आक गुँजाने लगे। यह अलग बात है कि गद्यकार रूप में वे कभी प्रतिष्ठित नहीं हुए।

एक पत्रकार मित्र हैं हमारे। अखबार दफ्तर में काम करते हैं। उन्हें दूसरों की रचना को काटने-छाँटने, सजाने-सँवारने से ही फुरस नहीं। एक दिन कहने लगे, अंगुलियों में ज खुजली चलती है, तब कुछ लिखता हूँ। वे अक्स लिखकर अंगुलियों की खुजली मिटा लेते हैं लेकिन बड़े प्रमादी हैं, आलसी! जब तक मनवांछित लेख मिलते रहते हैं, वे खुद लिखने की जहमत नहीं उठाते। पत्रकार को मोटे तौ पर खबर नवीस प्राणी के रूप में जाना जाता है एक दिन उनके दफ्तर में विद्वाननुमा प्राध्याप झोले लटकाए साहित्यकार लगनेवाले कुछ प्रा बैठे थे। चाय-चर्चा चल रही थी। अल्बेयर का पर परिशिष्ट के लिए लिखना था। प्राध्यापकों को अपनी क्लास मतलब। एक डायरी के नोट्स से कुछ प्रोफेसर तीस बरस की नौक की वैतरणी पार कर लेते हैं। वे खिसक लिये। झोले लटकानेवा साहित्यकारों ने काम का नाम तो सुना था, लेकिन कामू को पढ़क पचाकर उसके कृतित्व पर लिखना मुश्किल काम था। उन्होंने भी च के बाद पान-तंबाकू करके छुट्टी ले ली। काम परिशिष्ट निकला औ अखबार नवीस पर कटाक्ष करनेवाले प्राध्यापकों/साहित्यकारों ने दे कि खबर बटोरनेवाला पत्रकार सिर्फ पल्लवग्राही विद्वान् नहीं है। उस साहित्य में भी गहरी पैठ है। हमारा छोटा बच्चा बेहद चंचल है दीवाली का आगे-पीछे कहीं पता नहीं था। बरसात जमकर हो र थी। उसने जाने कब रंग का डिब्बा उठाया और पेटियाँ-अलमारियाँ रँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डालीं। इसे कहते हैं, अंगुलियों में खुजली चलना।

सभाओं के आयोजक-संयोजक अंगुली में खुजली चलने पर हाथों से जाजम बिछाते-उठाते पाए जाते हैं। बैरकों में बंद सैनिक अंगुली की खुजाल मिटाने के लिए बंदूकें साफ करते हैं। अंगुलियों की खुजली से दिमाग की खुजली ज्यादा फितरत पैदा करती है। अलगाव, सांप्रदायिक विद्वेष, धर्मांधता, जातीय कट्टरता और कई किस्म के विस्फोटक व संहारक काम मस्तिष्क की बेवजह खुजली के परिणाम हैं। पहले यह खुजली गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत खोजती थी, सापेक्षता के 'नियम' उद्घाटित करती थी। इसी खुजली ने खजुराहो कोणार्क के शिल्पों से धरती को सजाया। ताजमहल और कुतुबमीनार, रामायण, महाभारत और कामायनी इसी सात्त्विक, सृजनात्मक खुजाल की देन है।

अब किसी को अंगुली खुजलाते देखता हूँ तो होता है विस्मय। जागता है भय, कि कहीं मेरा या किसी और का अनिष्ट न हो जाए।

खेतों में हल चलाते हाथ, सड़कों पर गिट्टी तोड़ते मजदूर, खेल के मैदानों पर थिरकती तरुणाई आश्वस्त करती है कि ध्वंस नहीं, रचना ही अंगुलियों की खुजाल की सार्थकता है।

क्या ऐसा हो सकता है कि हर सिर खल्वाट हो जाए और आदमी सिर्फ सिर पर कटे नाखूनोंवाली अंगुलियाँ फिराकर संतोष कर ले, यही सोचकर कि उसका सपाट मस्तक ही यह विश्व-भूगोल है और यह सलामत रहा तो दुनिया भी सलामत रहेगी।

सा अ

२४, वेदव्यास कॉलोनी नं. २,
माता मंदिर के पास, रतलाम
(म.प्र.)

नवीन

● गोपालसिंह नेपाली

तुम कल्पना करो, नवीन कल्पना करो।
तुम कल्पना करो॥

अब घिस गईं समाज की तमाम नीतियाँ,
अब घिस गईं मनुष्य की अतीत रीतियाँ,
हैं दे रहीं चुनौतियाँ तुम्हें कुरीतियाँ,
निज राष्ट्र के शरीर के सिंगार के लिए,
तुम कल्पना करो, नवीन कल्पना करो।
तुम कल्पना करो॥

जंजीर टूटती कभी न अश्रु-धार से,
दुःख-दर्द दूर भागते नहीं दुलार से,
हटती न दासता पुकार से, गुहार से,
इस गंग-तीर बैठ आज राष्ट्र-शक्ति की,
तुम कामना करो किशोर, कामना करो।
तुम कामना करो॥

जो तुम गए स्वदेश की जवानियाँ गईं,
चित्तौड़ के 'प्रताप' की कहानियाँ गईं,
आजाद देश-रक्त की रवानियाँ गईं,
अब सूर्य-चंद्र से समृद्धि ऋद्धि-सिद्धि की,
तुम याचना करो दरिद्र, याचना करो।
तुम याचना करो॥

जिसकी तरंग लोल है अशांत सिंधु वह,
जो काटता घटा प्रगाढ़ वक्र इंदु वह,
जो मापता समग्र सृष्टि दृष्टि-बिंदु वह,
वह है मनुष्य जो स्वदेश की व्यथा हरे,
तुम यातना हरो मनुष्य, यातना हरो।
तुम यातना हरो॥

तुम प्रार्थना किए चले, नहीं दिशा हिली,
तुम साधना किए चले, नहीं निशा हिली,
इस आर्त दीन देश की न दुर्दशा टली,
अब अश्रु-दान छोड़ आज शीश-दान से,
तुम अर्चना करो, अमोघ अर्चना करो।
तुम अर्चना करो॥

आकाश है स्वतंत्र है स्वतंत्र मेखला,
यह शृंग भी स्वतंत्र ही खड़ा बना ढला,
है जल-प्रपात काटता सदैव शृंखला,
आनंद-शोक जन्म और मृत्यु के लिए,
तुम योजना करो, स्वतंत्र योजना करो।
तुम योजना करो॥

सा अ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

सरकार सदा सुखी

● यज्ञ शर्मा

सरकार खुश है। खुश रहना सरकारी संस्कृति है। हर सरकार यह मानती है कि उससे अच्छी सरकार न कोई हुई और न होगी। जो इतनी अच्छी हो, उसे खुश होने से कौन रोक सकता है? सरकार खुश है, पर जनता खुश नहीं है। जनता सरकार नहीं होती न! वह तो खुश होना जानती ही नहीं। वास्तव में जनता यह भूल जाती है कि सरकार जनता की प्रतिनिधि होती है। सरकार जो कुछ करती है, जनता के लिए करती है। खुश होती है तो जनता के लिए ही होती है। जब जनता के प्रतिनिधि खुश होते हैं तो जनता को भी खुश होना चाहिए। वरना जनता ऐसी सरकार चुनती ही क्यों है, जिसके खुश होने पर वह खुश नहीं हो सकती?

क्या सरकार कभी दुखी होती है? जी नहीं, सरकार कभी दुखी नहीं होती। सरकार या तो खुश होती है, या नाराज होती है। अब सरकार की खुशी से जनता खुश नहीं हो तो सरकार नाराज हो सकती है। सरकार जब नाराज होती है तो नया कानून बनाती है। हो सकता है, कल कोई सरकार यह कानून बना दे कि सरकार की खुशी में खुश होना हर नागरिक का कर्तव्य है। जो सरकार की खुशी में खुश नहीं होगा, उसे पाँच साल कैद बा-मशक्कत की सजा दी जाएगी। पाँच साल की क्यों? क्योंकि सरकार सिर्फ पाँच साल के लिए बनती है। वैसे ऐसा कानून जब बनेगा तब बनेगा, देश तो यह सजा पहले से ही भोग रहा है। पिछले पचास साल से भोग रहा है!

देश का हाल कुछ भी हो, सरकार खुश है। देश में भ्रष्टाचार बहुत है। वह भ्रष्टाचार में भी खुश है। इस देश में भ्रष्टाचार ने भक्ति का दरजा प्राप्त कर लिया है। भ्रष्ट आचरण आराधना है। भ्रष्टाचार का आरोप उसका पुण्य। राजनीति उसका स्वर्ग। भ्रष्टाचार के स्वर्ग में बड़ा रस है। सोमरस है। मंगल रस है, सप्ताह में जितने दिन हैं, उतने रस हैं। सातों दिन रस ही रस। छुट्टी के दिन और ज्यादा रस। सरकार के स्वर्ग में नीरस तो कुछ होता ही नहीं।

हमारे देश में संस्कृति का बड़ा महत्त्व है। संस्कृति में दो अवस्थाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण मानी गई हैं। एक है परमहंस, दूसरी परमानंद। जहाँ तक परमानंद का सवाल है, वह तो राजनीति में परमानेंट है। सरकार बदल जाए तो भी आनंद नहीं बदलता। आज तक हिंदुस्[...] में किसी ने दुखी सरकार नहीं देखी होगी। ने[...] दुखी हो सकता है, लेकिन सरकार दुखी न[...] होती। नेता भी वही दुखी होता है, जो सरका[र में] नहीं होता।

जन्म : १ जून, १९४१ को मथुरा में।
शिक्षा : एम. एस-सी. (भूगर्भशास्त्र)।
चार साल भूगर्भवैज्ञानिक की नौकरी, १७ साल टीवी स्ट्रिंगर, दो साल अमर चित्र कथा के सहयोगी संपादक। दो साल बच्चो की सचित्र विज्ञान पत्रिका 'साइफन' के हिंदी संपादक, १६ साल एक प्रमुख विज्ञापन एजेंसी में भारतीय भाषा विभाग प्रमुख तथा भाषा सलाहकार।

सरकार परमहंस कैसे होती है? परमहं[स] कौन होता है? सुख और दुख में जो समान भा[व] से रहे, वह परमहंस। हिंदुस्तान की सरकार [पर] यह बात बराबर फिट होती है। वह जिस भाव [से] अपने सुख में रहती है, उसी भाव से जनता [के] दुख में भी रहती है। न उसे अपना सुख ज्याद[ा] लगता है, न उसे जनता का दुख ज्यादा लग[ता] है—'सुखदुःखे समे कृत्वा बस! लाभाला[भौ] जयाजयौ नहीं!'

लोग कहते हैं कि देश पीछे जा रहा है[...] सच है, लेकिन उसका कारण यह है कि वास्[तव] में सरकार धीरे-धीरे जड़ों की ओर लौट रही है[...] जड़ से जुड़ने पर जीवन मिलता है तो जड़ से जड़ता भी आती है। सरका[र] में एक ओर बहुत जीवन है तो दूसरी ओर जड़ता भी बहुत है। बहुत से लो[गों] को जड़ता में परमहंस तत्त्व दिखाई देता है, एकदम स्थितप्रज्ञ। न सुख [में] हिलना, न दुख में डुलना। सरकार का स्वभाव ऐसा ही होता है। व[ह] हिलना-डुलना चाहती भी नहीं। स्थिर सरकार ऐसी ही सरकार को क[हा] जाता है। अगर इस सुख में फिलहाल कोई कमी है तो बस इतनी कि नेता[ओं] के दरबार में कभी खुलेआम मुजरा नहीं होता, लेकिन चिंता की कोई बा[त] नहीं है। जिस गति से, जिस दिशा में देश की राजनीति जा रही है, उस[...] मुजरा शुरू होने में कोई ज्यादा दिन बचे हों, ऐसा नहीं लगता। जब मुज[रा] पुराने राजाओं के दरबार में हो सकता था तो आधुनिक शहंशाहों के दरबा[र] में क्यों नहीं हो सकता?

यह जो शब्द है 'सदा', यह कुछ लोगों के साथ जुड़ ही जाता है[...] जैसे कि सरकार सदा-सुखी होती है और नगरवधू सदा-सुहागन।

बी-१०, जमुना द[...]
बांगड़ नगर, गोरे[गांव]
मुंबई-४०००[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम झरोखे बैठ के

ईश्वर मेढकेश्वर और बिल्डर

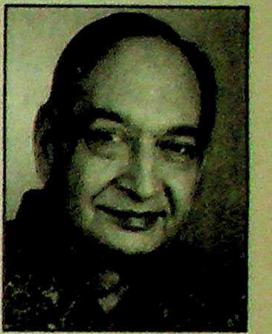

• गोपाल चतुर्वेदी

मेढकी की बस्ती में हलचल मची है। एक अकड़ू बैठे मेढक ने टर्राकर सबको चेताया कि कोई दो पैरवाला खतरनाक अजूबा आया है। पुरानी पोखर में मेढकों की आबादी है। पास ही मंदिर के भग्नावशेष हैं। उसके ईंट-पत्थर तक तथाकथित श्रद्धालु उठा ले गए हैं। शहर से दूर का इलाका है। पुजारी बिना चढ़ावे-प्रसाद कब तक पूजा-ध्यान में मग्न रहता? भक्ति का ही क्यों, कोई भी धंधा भूखे पेट नहीं चलता है। पुजारी ने एक दिन शिवलिंग उठाया, हनुमानजी और राम-सीता को झोले में डाला और चंपत हो लिया। मेंढक इस इनसानी हरकत पर टर्राते रह गए, पर उनका हाल भी पढ़े-लिखों के बीच आम आदमी जैसा है! उनकी सुनता कौन है? उनकी टर्राहट और ऐसों की चिल्लाहट की वकत ही क्या है? न सरकार के कानों पर जूँ रेंगती है, न अखबारों में खबर छपती है। आज के मीडिया-युग में इनका महत्त्व ही क्या है? जब तक कोई टी.वी. के कैमरे से न झाँके, न समाचार-पत्रों की सुर्खियों में छाए, वह सार्वजनिक जीवन में सिर्फ बड़ा सा सिफर है। समाज और सियासत में ऐसों का रुतबा कतई नहीं है।

अपनी मान्यता है कि आजादी के बाद से राष्ट्र-निर्माण का दायित्व केवल लीडर, बिल्डर और अफसर के मजबूत कंधों पर है। इनकी पारस्परिक साँठ-गाँठ का सीमेंट पैसा है। मेढकों को क्या पता कि वह जिसे दो पैरों का अजूबा समझ बैठे हैं, वह कोई ऐसा-वैसा अनजान इनसान नहीं, बल्कि वर्तमान का शक्तिपुंज, एक बिल्डर है। उसी ने पुजारी को शहर में मंदिर बनाने को अनधिकृत जमीन देकर पोखर के पास से रफा-दफा किया है। सत्ता में बिल्डर का दखल है। उसे अपना उल्लू सीधा करना है। पोखर को पाट कर, वहाँ वह एक बहुमंजिली इमारत बनाना चाहता है। जिस रफ्तार से आबादी बढ़ रही है, शहर को लामुहाला, इधर पाँव पसारना ही पसारना है। उसने पहले भी इस पोखर को ललचाई आँखों से देखा था। मंदिर को मिटाने में दिक्कत ही क्या है? कोई मसजिद होती तो बवाल होता। यह बहुसंख्यक तो हर दल के लिए चुनाव की गाय हैं। एक बार वादे-आश्वासन देकर वोट के दूध का दोहन कर लिया, फिर भाड़ में जाएँ। उठाते रहें अगड़े-पिछड़े के टंटे और जात की दीवारें। किसी भी मसले पर इनकी सम्मिलित आवाज संभव ही नहीं है। ऐसे मामलों में प्रजातंत्र के कालू कर्णधार समझदार हैं। उनका सोच कतई अंग्रेज शासकों जैसा है। इन बहुसंख्यक कहे जाने वालों में भेदभाव के भावनात्मक मुद्दे उठाओ और अल्पसंख्यकों को पटाओ। चुनावी कामयाबी चरण चूमेगी।

बिल्डर 'साइट' का निरीक्षण करने इसलिए आया था कि पोखर को पटवाने के बाद सबको पटाने के लिए कितने करोड़ का सौदा उपयोगी होगा? भविष्य में इस पटी जमीन का मूल्य कितना होगा? उसे विश्वास था कि चार साल तक यह पोखर शहर की सीमा के अंदर होगी। पक्की सड़क तो मंदिर के पास से गुजर ही रही है। अगर उसने मंत्री के साथ मिलकर प्रयास किया तो बिजली, पानी और सीवर लाइन भी फ्लैटों के निर्माण तक आ ही जाएगा! ऐसे भी यहाँ मेढकों के अलावा है ही क्या! वह टर्राते रहें! पोखर के बाहर मेढकों की अहमियत ही क्या है? यों भी उन्हें चलना तो आता नहीं है। फुदकते-फुदकते कहाँ तक पहुँचने की कूवत रखते हैं वे? अगर कभी सत्ता के संपर्क में आने की सामर्थ्य होती तो आज उनकी यह दुर्दशा कैसे मुमकिन थी! यों भी मेढक अपने-अपने कुएँ, पोखर, तालाब के पास ही तो टर्राते हैं। उनका कर्कश स्वर बारिश के दौरान ही तो गूँजता है। जनतंत्र में ऐसी मौसमी टर्राहट चलती ही रहती है। कभी बाबा रामदेव टर्राते हैं, कभी अन्ना हजारे। उनकी सुनता ही कौन है? एक बार, मिट्टी डालकर पोखर पटा दो न बचेंगे मेढक, न सुनाई देगी उनकी टर्राहट, बिलकुल उसी अंदाज में कि न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी।

इधर बिल्डर अपने खयाली पुलाव पका रहा था, उधर मेढक-पंचायत इस अजनबी के आगमन के निहितार्थ खोज रही थी। जब पुजारी उस निर्जन मंदिर में थे, तब कोई भक्त आता-जाता तो वहाँ था नहीं। पोखर और मंदिर दोनों वीरान रहते थे, भारत की उन ऐतिहासिक इमारतों की तरह, जिनके रख-रखाव का शासकीय प्रावधान सिर्फ कागज पर होता है। धीरे-धीरे वह खँडहर में तब्दील हो जाती हैं। यह तवारीखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खँडहर भारतीय पर्यटन उद्योग के विशेष आकर्षण हैं। जो पर्यटक आते हैं, उन्हें टूरिस्ट गाइड इन धरोहरों की आयु में सौ दो-सौ साल का इजाफा कर दिखाते हैं। यह विश्वसनीय भी है। मसलन, रख-रखाव के अभाव में किसी सौ वर्ष पुराने किले के बारे में गाइड जिज्ञासुओं को आत्मविश्वास के साथ सूचित कर सकता है, 'सर! यह किला कंपनी बहादुर के आक्रामक कदम रोकने के लिए राजा दिगंबर प्रताप सिंह ने तीन सौ वर्ष पूर्व बनवाया था। सरकार सफाई आदि तो करवाती रहती है, पर यहाँ छोटी सी पहाड़ी का ऊबड़-खाबड़ रास्ता है, उसके दोनों ओर इतने सालों में एक अच्छा-खासा जंगल उग आया है। अब साँप-बिच्छू की संभावना से उस रास्ते, किले तक पहुँचना नामुमकिन है, वरना हम आपको राजा साहब के ढाल, तलवार, बल्लम, भाले भी दिखाते और उन का तोपखाना भी। बस यह जंगल ही आड़े आता है।''

चिंतनीय विषय जो था, वह इस दो पैर के दैत्य की अनपेक्षित उपस्थिति थी। वह सत्ताविहीन मेढकों के बुजुर्गवार थे, अगर इनसानी सरकार के होते तो कमेटी या कमीशन का गठन कर इस उलझन से बच निकलते। कमेटी-कमीशन बनाना सरकार के पास हर समस्या का एक शर्तिया समाधान है। इससे कुछ बूढ़े बेरोजगार काम पाते हैं। सत्ता के आका के गुण गाते हैं। इस चक्कर में उन पर अकसर देश-विदेश का दौरा पड़ता है। बहुत दिनों से क्यों, रिटायर होने के बाद से उनके लिए कोई अच्छी स्कॉच नहीं लाया है। उन्होंने सरकार में रहकर खाने से लेकर पीने तक मुफ्तखोरी का कौल निभाया है। भारतीय बाजार में आज क्या उपलब्ध नहीं है? पर सरकार में रहने के कारण, दुकान जाकर और पैसा देकर, कुछ भी खरीदने की उनकी आदत छूट गई है।

हमें कभी-कभी शक होता है, जिसे हम सरकार का नाकारापन समझते हैं, वह हमारी मूर्खता है, अज्ञान है। सरकार अपने जैसों से कहीं ज्यादा समझदार है। वह जानबूझकर, इरादतन, ऐतिहासिक धरोहरों के रख-रखाव पर तवज्जो नहीं देती है। जरा गौर करिए। बाहर से पर्यटक भारत क्यों पधारता है? ज्ञानी बताते हैं कि भारत की सांस्कृतिक, तवारीखी और धार्मिक विरासत इसका प्रमुख कारण है। वह हजारों डॉलर फूँककर खँडहर देखने आते हैं, हम उन्हे खँडहर दिखाते हैं। कोई माने न माने, इसमें सरकार का योगदान सराहनीय है। वह जब नई इमारतें बनाती है, उसके ठेकेदार ऐतिहासिक खँडहर परंपरा के इतने कायल हैं कि एक-दो साल में वह भी हड़प्पा-मोहनजोदड़ो के समकक्ष नजर आती हैं। पर्यटक देखें और सराहें। कैसा इतिहास-समर्पित देश है भारत! यहाँ चप्पे-चप्पे पर इतिहास बिखरा है। इनका नया से नया निर्माण भी सैकड़ों साल पुराने खँडहरों से टक्कर लेता है।

मेढक-पंचायत के बुजुर्गवार ने युवा मेढक से जानना चाहा, ''आखिर, यह दो पाँव वाला प्राणी है कौन? यह उछलकर सामान्य अंदाज से क्यों नहीं चलता है? यह दैत्य यहाँ किस इरादे से आया है? इसका पाँव पड़ा तो हमारे कितने भाई अकाल मृत्यु के शिकार होंगे? प्राण-रक्षा के मेढक-मैनुअल की पहली सीख है कि छोटे से छोटे दुश्मन को भी बड़ा मानकर उससे मुकाबले की तैयारी करो। यह तो विशाल है। कौन कहे, किस खतरनाक टापू का प्राणी है यह? अपने दादुर गुरु की सीख है कि अहिंसा ही मेढक-धर्म है।''

दादुर गुरु का नाम सुनते ही टर्र-टर्र कर मेढक समुदाय ने हर्ष-ध्वनि की। यह टर्र पूरी तरह स्वाभाविक थी, इनसानी मजमों से अलहदा। वहाँ किराये के श्रोता अपने पैसे देनेवाले मालिक को देखते हैं। उसके इशारे पर ताली बजाते या नारे लगाते हैं, वरना खामोश रहते हैं। सभ्य होने की प्रक्रिया में आदमी भावना की सहज प्रतिक्रिया गँवा चुका है। कौन जाने, बनावटी व्यवहार ही सभ्य समुदाय की सबसे अहम पहचान हो। इसीलिए मुँह में राम, बगल में छुरी जैसे मुहावरों का जन्म सभ्यता के विकास के साथ होना ही होना है।

एक युवा ने बुजुर्गवार का विरोध किया, ''क्या हर संकट के समय अहिंसा की शरण जाना कायरता नहीं है? हमें अपने पोखर से बाहर आकर वास्तविकता से दो-चार होना चाहिए। दादुर गुरु ने भी अहिंसा का दर्शन नदी, तालाब, नाली, गली, शहर, गटर वगैरह की सैर कर और फिर पोखर में लोटकर दिया था। हमें उनकी विद्वत्ता, अनुभव और बुद्धि पर रत्ती भर शक नहीं है। वक्त के बदलाव के साथ सब बदलता है। यहाँ तक कि अपना पोखर का संसार भी बदला है। पहले पानीदार था, अब सूखा-सूखा है।''

बुजुर्गवार ने युवा मेढक के स्वर पर गौर किया। उसमें विद्रोह की बू आई। उन्हें बुरा तो लगा पर क्या करते! जब कुछ कर-धर नहीं पाता तो इनसान हो या मेढक, दार्शनिक बन जाता है। उन्होंने दार्शनिक अंदाज में सोचा कि विद्रोह युवा पीढ़ी की सिफत है। अपन न शेर हैं, न सियार, न साँप बल्कि मेढक हैं। अपना बचाव कैसे करें? अहिंसा के अलावा और कोई विकल्प है क्या? न अपने पास शेर के पैने दाँत हैं, न ताकत, न सियार की चालाकी, न साँप का जहर। हमारा पोखर में प्रादुर्भाव ही टर्राने और अमन-चैन से रहने के लिए हुआ है। जवानी का खून है। धीरे-धीरे अक्ल आएगी। पोखर के दस्तूर खुद-ब-खुद सीख जाएगा।

चिंतनीय विषय जो था, वह इस दो पैर के दैत्य की अनपेक्षित उपस्थिति थी। वह सत्ताविहीन मेढकों के बुजुर्गवार थे, अगर इनसानी सरकार के होते तो कमेटी या कमीशन का गठन कर इस उलझन से बच निकलते। कमेटी-कमीशन बनाना सरकार के पास हर समस्या का एक शर्तिया समाधान है। इससे कुछ बूढ़े बेरोजगार काम पाते हैं। सत्ता के आका के गुण गाते हैं। इस चक्कर में उन पर अकसर देश-विदेश का दौरा पड़ता है। बहुत दिनों से क्यों, रिटायर होने के बाद से उनके लिए कोई अच्छी स्कॉच नहीं लाया है। उन्होंने सरकार में रहकर खाने से लेकर पीने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक मुफ्तखोरी का कौल निभाया है। भारतीय बाजार में आज क्या उपलब्ध नहीं है ? पर सरकार में रहने के कारण, दुकान जाकर और पैसा देकर, कुछ भी खरीदने की उनकी आदत छूट गई है। बूढ़ा तोता पर्स खोलकर खरीदारी की। राम-राम सीखे तो कैसे सीखे ? विदेश यात्रा एक दीगर मसला है। वह उसी देश में जाते हैं, जहाँ उनके रिश्तेदार हों। होटल और खाने-पीने की बचत से सरकारी टी.ए. इफरात में रहता है। अब वह दारू खरीदे या सबसे नई महिला-मित्र के लिए परफ्यूम। उनकी मुफ्तखोरी की इंडिया-फंडिया अंतरात्मा को कोई कष्ट नहीं होता है।

इसके अलावा दोस्तों पर रोब अलग गालिब है, ''भैया! पिल्ले तो अपना उल्लू सीधा करने में बेहद चालाक हैं। तुमने देखा नहीं, कमेटी-कमीशन की मेंबरी कैसी दनादन झटक रहा है। अभी कल ही तो कमेटी के काम से लंदन-यू.एस. गया है। ठाठ हों तो ऐसे!'' इन वाक्यों में, हो न हो, कुछ-कुछ जलन और अधिकतर अतिशयोक्ति की दुर्गंध है। पर इतना तो निर्विवाद सच है कि वह सरकारी खर्चे पर विदेश गया हुआ है। उसके साथी-सहयोगी, जिंदगी भर हाथ-पैर मारकर भी मिशन-विदेश गमन में असफल रहे। यह कामयाब बूढ़ा आज भी उछल-कूद कर रहा है।

मेढक मजबूर थे। वृद्ध के साथ बैठे वह टर्राते रहे। कोई हल पल्ले नहीं पड़ा। दैत्याकार घुसपैठिया अपने आप चला गया था। युवा मेढकों की टोल ने पोखर से आठ-दस कदम तक फुदक-फुदककर अपनी साहसिक जाँच का दायित्व संपन्न किया। यह आठ-दस कदम तक का फुदक-सफर उनके लिए दस बारह काले कोस की यात्रा के समान था। वह लौटकर निढाल हो गए और पोखर में जैसे बेहोश से गिर पड़े। उनमें टर्राने तक का दम न था। दस-पंद्रह मिनट तक सुस्ता कर, उन्होंने जाकर अपने अभियान की असफलता के बारे में बुजुर्गवार से टर्राया। बुजुर्गवार ने उनकी टर्राहट ध्यान से सुनी और मन-ही-मन मुसकराए। उनकी एकबार कहने की इच्छा हुई कि वह इस नाकामयाबी के बारे में पहले से जानते थे, पर उन्होंने जान-बूझकर कुछ नहीं कहा। जिंदगी के सच दूसरों की सीख और अनुभव से नहीं बल्कि अपने खुद के हाथ जलाकर और भटक-भुगत के सीखते हैं। उन्होंने युवा मेढकों का हौसला बढाया, ''कल भी कोशिश करना, शायद उस दैत्य के इरादों का कुछ सुराग मिले।''

शाम को सब मेढक फिर एकत्र हुए। उन्होने 'मेढकेश्वर' की पूजा-अर्चना की। जब आदमी या मेढक अपने हालात से विवश होता है, तभी उसे ईश्वर या मेढकेश्वर का स्मरण आता है। यों मेढकों के पास मेढकेश्वर की कोई मूर्ति या प्रतिमा नहीं थी। बस उन्हें बचपन से बताया जाता कि मेढकेश्वर कहीं ऊपर बहुत बड़े ताल में वास करते हैं। वह बेहद शक्तिशाली हैं। उनकी टर्राहट से हाथी भागते हैं और शेर थर-थर काँपते हैं। वह मेढकों के शुभचिंतक हैं। किसी भी वक्त मेढक-मेढकी की मदद की गुहार पर फुदकते आते हैं। उनके रहते मेढकों का कोई भी अहित असंभव है। सबने सामूहिक टर्राहट से मेढकेश्वर के गुण गाए। उनसे प्रार्थना की कि हर दो पैर वाले दैत्य से मेढकों की रक्षा करें। पुजारी मेढक के माध्यम से उन पर ढेर सारे कीड़े-मकोड़ों का प्रसाद चढ़ाया, जो सबने बाद में पुजारी के साथ हिल-मिलकर खाया-खिलाया।

कहना कठिन है कि मेढकेश्वर मेढकों की पूजा-प्रार्थना से प्रभावित हुए कि नहीं, पर दूसरे ही दिन पोखर और मंदिर की माप-जोख करने ठेकेदार द्वारा भेजा गया अमला आ टपका। युवा मेढकों ने एक अन्य खुफिया तथ्य उजागर किया। यह दो पैर के दानवों की चाल ही नहीं, भाषा भी अजीब है। वह टर्र-टर्र नहीं करते हैं। उनकी टर्राहट कुछ कर्ण-कटु किस्म की है। इस अमले के साथ एक 'आर्किटैक्ट' भी था। युवा मेढकों ने उछल-उछलकर यह भी पाया कि यह सारे दैत्याकार प्राणी एक दैत्य के सामने झुककर कुछ टर्राते हैं और फिर वापस पोखर का चक्कर लगाने में जुटते हैं। मेढकों के लिए विरोध का इकलौता अहिंसात्मक तरीका सामूहिक टर्राहट है। जब तक आर्किटैक्ट और माप-जोख का अमला वहाँ टिका, मेढकों की टर्राहट उनके कान खाती रही। माप-जोख करने आए एक मजदूर ने मेढकों को पत्थर से मारकर भगाने का सोचा, पर उसके सुपरवाइजर ने उसे मन से काम करने और वक्त न जाया करने की चेतावनी दी।

शाम तक अपना काम समाप्त कर सब वापस लौट गए। मेढक खुश हुए। उनका विरोध-प्रदर्शन सफल रहा। अनजान दैत्यों पर मेढक-विजय का यह अहिंसात्मक अध्याय दादुर-इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित होगा, यानी टर्राया जाएगा। मेढकों में एक ऐसा खानदानी मेढक है, जो दादुर-इतिहास टर्रा-टर्रा कर सबेरे-सबेरे शिशु-मेढकों को सुनाता है और बदले में कीड़े-मकोड़ों का फ्री राशन पाता है!

बुजुर्ग मेढक के निर्देश पर सुबह-शाम सारे मेढक एक साथ मेढकेश्वर की आरती-आराधना में भी जुटे रहे! उधर ठेकेदार मुख्यमंत्री और आवास मंत्री के चक्कर काटता रहा, पोखर का अस्तित्व मिटाने तथा वहाँ 'महामाता आवास' बनाने के वास्ते। सारा मामला पोखर के विकास पर अटका था। पानी की सप्लाई कैसे होगी, शहर की सीमा से चार किलोमीटर दूर बिजली की व्यवस्था का क्या प्रबंध होगा ? ठेकेदार के लिए बिजली का इंतजाम जरूरी था, उसके बिना आवासीय निवासों की योजना भी मुश्किल है। पानी के लिए तो वह ट्यूब-वैल खुदवा लेगा, पर वह भी तो बिजली से ही चलेंगे। उसे पैसे की पावर का अहसास है। यह एक चाभी, सियासी हो या ब्यूरोक्रेटिक, हर ताले में फिट है। पावर का ताला उसने पैसे की चाभी से खोल लिया और पोखर को बहुमंजिली आवासीय योजना में परिवर्तित करने पर निश्चय और लगन से भिड़ लिया।

मेढक अपने मेढकेश्वर की पूजा-आराधना में लगे रहे। जब तक आवासीय योजना कागजी बाधा-दौड़ को पार करती, तब तक राज्य में चुनावी अधिसूचना जारी हो गई। सब काम चुनाव के नतीजों तक रुक गया। मेढकों की आस्था मेढकेश्वर में और बढ़ गई। थोड़े समय के लिए पोखर और मेढकों का अस्तित्व भी बचा रह गया। कौन जाने पोखर की नियति क्या है ? मेढकों का जीवन भी पोखर के भविष्य पर निर्भर है।

शायद यही कारण है कि मेढक हो या सामान्य इनसान, दोनों राम भरोसे ही जीवित हैं। दोनों का ऊपरवाले पर दृढ़ विश्वास है। ईश्वर के विभिन्न रूप हों या मेढकेश्वर, दोनों उसे पटाने में लगे रहते हैं। यह अंधी आस्था ही उनकी जिंदगी का राज है, वरना बिल्डर हो या अफसर-मिनिस्टर, किसी ने भी उन्हें मिटाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी है।

९/५ राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभात प्रकाशन

ISO 9001 : 2008 प्रकाशक

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002

☎ 011-23289777 (7 लाइंस)

इ-मेल : prabhat1@vsnl.com ● prabhatbooks@gmail.com

अगस्त 2011 में प्रकाश्य नई पुस्तकें

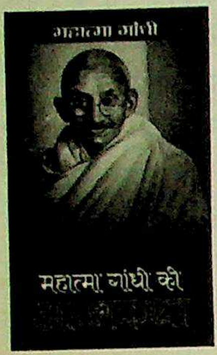

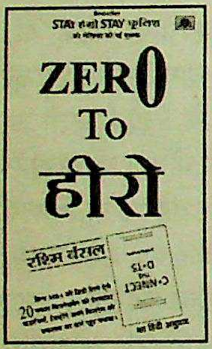

- महात्मा गांधी
  - **ग्राम स्वराज्य** 250.00
  - **सत्य के साथ मेरे प्रयोग** 250.00
- डॉ. राजेंद्र प्रसाद
  - **चंपारन में महात्मा गांधी** 500.00
- ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
  - **जीवन वृक्ष** 200.00
- एन.के. सिंह
  - **विवेक की सीमा : राजनीति और परिवर्तन** 400.00
- मयंक छाया
  - **विश्व शांति गुरु दलाई लामा** 400.00
- अशोक राज
  - **योग गुरु स्वामी रामदेव** 250.00
- सं. उमा विष्णु
  - **गौरवशाली भारत** 500.00
- जॉन एम. हंट्समैन
  - **विजेता धोखा नहीं देते** 300.00
- रमा बीजापुरकर
  - **120 करोड़ भारतीयों का बाजार** 350.00
- रश्मि बंसल
  - **Zero To हीरो** 400.00
- वी. रघुनाथन
  - **थक मत, जीना सीख** 200.00
- मॉर्गन विटजेल
  - **टाटा ब्रांड की कहानी** 400.00
- सं. सुशील कपूर
  - **विश्व के महान् भाषण** 350.00
- विक्रम अकुला
  - **मुट्ठी भर चावल** 200.00
- रोहिणी नीलकेनी
  - **स्टिल बॉर्न** 300.00
- जूलन वर्न
  - **80 दिन में दुनिया की सैर** 175.00
- स.ही. वात्स्यायन अज्ञेय
  - **अज्ञेय : रचना सागर** 700.00
- नोरेनहा/सुजाता अग्रवाल
  - **नैनो** 200.00
- आचार्य महाप्रज्ञ
  - **जो सहता है वही रहता है** 250.00
- विनीत नायर
  - **पहले कर्मचारी फिर ग्राहक** 250.00
- सरश्री
  - **जीवन रहस्य** 150.00
- नितिन गडकरी
  - **विकास के पथ** 700.00
- गौरव बंसल
  - **जीतना : तमाम बाधाओं के बावजूद** 250.00
- सं. देवेंद्र स्वरूप/यादवराव देशमुख
  - **राष्ट्र ऋषि नानाजी** 200.00
- मुश्ताक शेख
  - **कहानी शाहरुख खान की** 400.00
- शशांक जौहरी
  - **सुपर स्पीड कंप्यूटर कोर्स** 500.00
- रशमीत कौर
  - **सुपर स्पीड इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स** 500.00
- सं. बदरीनाथ कपूर
  - **स्टुडेंट अंग्रेजी-हिंदी कोश** 75.00
  - **स्टुडेंट हिंदी-अंग्रेजी कोश** 75.00
- जय शंकर मिश्र
  - **24×7 आनंद ही आनंद** 250.00
- महेश शर्मा
  - **शिक्षा का अधिकार (RTE)** 200.00
- ममता महरोत्रा
  - **महिला अधिकार और मानव अधिकार** 200.00
- शिवगोपाल मिश्र
  - **आपदा प्रबंधन** 300.00
- अनुपम मिश्र
  - **आज भी खरे हैं तालाब** 150.00
- डॉ. प्रफुल्ल विजयकर
  - **Predictive होम्योपैथी** 200.00
- प्रेमपाल शर्मा
  - **घर का डॉक्टर** 200.00
- विनोद मल्होत्रा
  - **गीता में मैनेजमेंट सूत्र** 250.00
- अजय कुमार उपाध्याय
  - **हिंद स्वराज की अनंत यात्रा** 250.00
- शंभू रतन अवस्थी
  - **नवीकरणीय ऊर्जा** 250.00
- ममता झा
  - **चार्ली चैप्लिन** 200.00
- रस्किन बॉण्ड
  - **साहसिक कहानियाँ** 175.00
  - **भारत के बच्चे** 175.00
- मनु शर्मा
  - **द्रौपदी की आत्मकथा** 175.00
- शंकर
  - **विवेकानंद की आत्मकथा** 400.00
- रमेश पोखरियाल 'निशंक'
  - **प्रतिज्ञा** 200.00
- ईशान महेश
  - **मुझे कृष्ण चाहिए** 200.00
- शुभांगी भडभडे
  - **योगीराज संत ज्ञानेश्वर** 400.00
- अशोक गुजराती
  - **व्यंग्य के रंग** 200.00
- शिव शर्मा
  - **दुम की दरकार** 200.00
- हरि जोशी
  - **नेता निर्माण उद्योग** 200.00
- विजय कुमार
  - **कुरसी तू बड़भागिनी** 175.00
- दिनकर जोशी
  - **चक्र से चरखे तक** 250.00
  - **रामायण के पात्र** 225.00
- सूर्यबाला
  - **कात्यायनी संवाद** 175.00
- ऋता शुक्ल
  - **मृत्युगंध-जीवनगंध** 200.00
- सं. अरुणा सीतेश
  - **बयार''उस पार से** 250.00

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- मंजु मधुकर
  चंपई मन 200.00
- वीरबाला वर्मा
  बस इतनी सी रोशनी 175.00
- सुचित्रा भट्टाचार्य
  अंधकार बेला 250.00
- पूर्णिमा केडिया 'अन्नपूर्णा'
  सीढ़ियाँ 225.00
- महेश शर्मा
  साफ हाथ, स्वस्थ जीवन 125.00
- दाजी पणीशकर
  रामायण की अनजानी बातें 250.00
- हरदर्शन सहगल
  तीसरी कहानी 200.00

- मोजेज माइकेल
  ओ. हेनरी की श्रेष्ठ कहानियाँ
- सिरिल मैथ्यू
  इनसानियत की वापसी 200.00
- रोशन प्रेमयोगी
  एक डॉक्टरनी का जिंदगीनामा 300.00
- सुरेश कांटक
  सूरज उगने से पहले 175.00
- रत्नेश्वर
  लेफ्टिनेंट हडसन 150.00
- राजेश कुमार
  पाँच नुक्कड़ नाटक 200.00
  भ्रष्टाचार का अचार 200.00

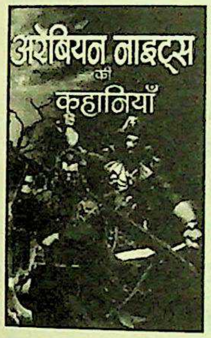

- दिशा गुलाटी
  सरोजनी नायडू 200.00
- टी.के. बसु
  सी.वी. रमन 150.00
- बेंजामिन फ्रैंकलिन
  आत्मकथा 150.00
- दिनकर
  मार्टिन लूथर किंग 200.00
- रामप्रसाद बिस्मिल
  आत्मकथा 150.00
- दिलीप कुलकर्णी
  जे.सी. बसु 200.00
- प्रेमचंद्र स्वर्णकार
  संक्रामक बीमारियों से कैसे बचें 250.00

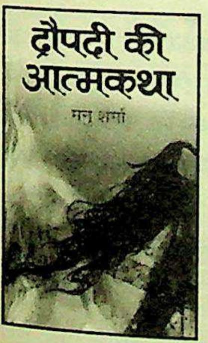

- रुडयार्ड किपलिंग
  द जंगल बुक 200.00
- हेलन कीलर
  मेरा जीवन 150.00
- मायाराम 'पतंग'
  विद्यालयों में मनाए जाने वाले उत्सव 200.00
  हमारे विद्यालय गान 250.00
  श्रेष्ठ विद्यालय गीत 250.00
- विनोद कुमार मिश्र
  डायनासोर 200.00
- डॉ. डी.डी. शर्मा
  गणित में पाएँ 100/100 200.00
- श्यामसुंदर शर्मा/डॉ. निलय खरे
  मध्य रात्रि के सूर्य का प्रदेश : आर्कटिक 300.00

- सं. गिरिराज शरण
  मैं विवेकानंद बोल रहा हूँ 200.00
  मैं लाजपतराय बोल रहा हूँ 200.00
  मैं अरविंद बोल रहा हूँ 200.00
  मैं सावरकर बोल रहा हूँ 200.00
  मैं गांधी बोल रहा हूँ 200.00
  मैं सुभाष बोल रहा हूँ 200.00
  मैं नेहरू बोल रहा हूँ 200.00
  मैं पटेल बोल रहा हूँ 200.00
  मैं तिलकबोल रहा हूँ 200.00
- सं. प्रशांत गुप्ता
  मैं कलाम बोल रहा हूँ 200.00

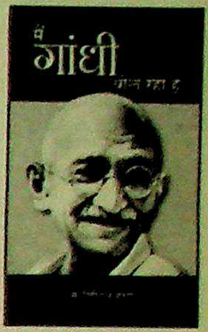

- सं. जयश्री
  मैं राधाकृष्णन बोल रहा हूँ 200.00
- सं. अनिल कुमार
  मैं भगतसिंह बोल रहा हूँ 200.00
- मनोज शर्मा
  आओ, शतरंज खेलना सीखें 200.00
- कमोडोर विजय शंकर बबेले
  पति, पत्नी और नौसेना 250.00
- सं. वाग्देव
  सूर पदावली 200.00
  रहीम दोहावली 200.00
- सं. राघव 'रघु'
  रसखान रत्नावली 200.00
  तुलसी दोहावली 200.00
- नीलोत्पल
  मीरा पदावली 200.00
  कबीर दोहावली 200.00

- अनीश भसीन
  1000 बिहार प्रश्नोत्तरी 200.00
  मानवाधिकार 300.00
- संजय कुमार द्विवेदी
  1000 झारखंड प्रश्नोत्तरी 200.00
  1000 उत्तर प्रदेश प्रश्नोत्तरी 200.00
  1000 भारत ज्ञान प्रश्नोत्तरी 200.00
- राजेंद्र प्रसाद सिंह
  1000 महापुरुष प्रश्नोत्तरी 200.00
- बृजकिशोर प्रसाद सिंह
  1000 हिंदी वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तरी 200.00
- मोहननंद झा
  भारतीय संगीतज्ञ 300.00

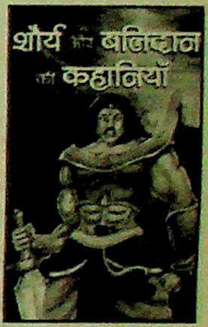

- आशारानी व्होरा
  भारत की प्रथम महिलाएँ 250.00
- प्रमोद कुमार अग्रवाल
  जागो, ग्राहक जागो 150.00
- रवि चतुर्वेदी
  क्रिकेट की रोचक बातें 250.00
- जॉन विल्सन
  बाइबिल की कहानियाँ 175.00
- मुकेश नादान
  सिंहासन बत्तीसी 175.00
- स्वप्नदर्शी
  अरेबियन नाइट्स की कहानियाँ 175.00
- वैभव विप्लव
  हातिमताई की तिलिस्मी कहानियाँ 175.00

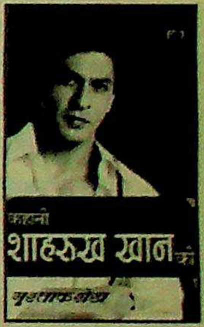

- श्रुति
  शौर्य और बलिदान की कहानियाँ 175.00
- विभोर कुमार
  रोमांचकारी कहानियाँ 175.00
- सत्य प्रकाश द्विवेदी
  संपूर्ण पंचांग ज्ञान 250.00
- आनंद आदीश
  आँखिन देखी, अंतर लेखी 150.00
  राष्ट्रमंत्र के हे उद्गाता! 125.00
- सं. श्रीकांत
  पीर मुहम्मद मूनिस : कलम का सत्याग्रही 200.00
- अनिल प्रकाश
  समय के सरोकार 200.00

- बाल्मीकि महतो
  अठारहवीं सदी का बिहार 150.00
- पवन
  कार्टूनों की दुनिया 175.00
- सुरेश प्रसाद
  मदांतकी 175.00
- जगदीश ममगाँई
  लोकशिल्पी दिल्ली नगर निगम 400.00
- रमाशंकर शर्मा
  स्मृति पंख 250.00
- डॉ. चंदर सोनाने
  पर्वतों का अंत:संगीत 250.00

CC-0. In Public D

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

वे वंदनीय हैं

● सूर्यकुमार पांडेय

जबसे उन्होंने जनसेवा का धंधा शुरू किया, हरेक काम खुल्लमखुल्ला करते रहे। किसी की ठुकाई भी की तो सरेआम सड़क पर। चार लोगों के सामने जूते मारे। इससे उनकी यश-कीर्ति में रातोरात आठ चाँद लगे। विज्ञापन के बिना ही पब्लिसिटी मिली। लोगबाग उन्हें उनके सत्कर्मों से पहचानने लग गए। इस तरह समाज में उनका सम्मान बढ़ा।

फिर तो कालांतर में अत्यंत समाजवादी सम्मान कमाया उन्होंने। पुलिस की जमात हो कि चोरों का मोहकमा, वे सर्वत्र समभाव से पूजित होते। अच्छा चढ़ावा आने लगा। चेलों-चपाटों की मंडली से चौबीसों घंटे घिरे रहते। जो कोई भी चढ़ावा पहुँचाने में आनाकानी करता था, उसके लिए उनके पास डोर स्टेप सेवा मौजूद रहती। होता यह कि उनके चेले घर तक पहुँच जाते। जो जिस लेबल का होता, उसको वैसी ही सेवा प्रदान करते। कुछ पर समुचित चढ़ाई करते। कुछ को यथोचित प्रसाद देते।

इस जरिए हासिल संपत्ति से उनके शरीर में वैकल्पिक ऊर्जा का संचार होता रहता था।

जनसेवा की दुकान अच्छीखासी चल रही थी। उत्पात कम हो चुके थे। उनके होते क्षेत्र में किसी की जुर्रत नहीं थी। इलाके में कुछ भी होता, उनके नेतृत्व में होता या फिर मौन सहमति हुआ करती थी। यह भी चर्चा थी कि वे कई धरना-आंदोलन स्वयं प्रायोजित कर दिया करते थे। धन के अभाव में जनतंत्र के ये हथियार भोथरे पड़ जाएँ, यह उन्हें गँवारा नहीं था।

जैसाकि शुरू में ही बता दिया गया है, वे हरेक काम खुल्लमखुल्ला करते आ रहे थे। वे इसका समूचा रस भी लेते थे। मगर इधर कुछेक दिनों से वे एक ही स्टाइल में काम करते-करते बोरियत जैसा कुछ फील करने लग गए थे।

तब एक रात उन्होंने अपने आत्मीयों की क्लोजडोर मीटिंग में एलान किया—'आज से यह खुल्लमखुल्ला वाला धंधा बंद। अब से जो कुछ भी किया जाएगा, बंद-बंद होगा।' एक बार उन्होंने दरवाजा बंद कर कतिपय सार्वजनिक न किए जानेवाले काम करके इसका रिहर्सल भी किया। इससे उनका कॉन्फिडेंस लेबल बढ़ा। जो बचाखुचा एक परसेंट भय था, वह भी जाता रहा।

अब वे बंद किस्म के काम करने को उतावले रहने लग गए। इसका एक अवसर भी आ गया। वे हाल के दिनों में जिस राजनीतिक पार्टी के लिए काम कर रहे थे, उसके हाईकमान का निर्देश आया—अपने कस्बे में भारत बंद का आयोजन करो। उनको एक निश्चित तिथि बता दी गई। वे तैयारी में जुट गए।

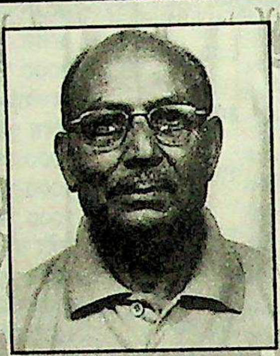

समकालीन व्यंग्यकारों में सर्वाधिक सक्रिय। प्रतिष्ठित दैनिक समाचार-पत्रों में नियमित व्यंग्य लेख प्रकाशित। अब तक हास्य-व्यंग्य, गीत और बाल कविताओं की १६ पुस्तकें प्रकाशित। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के प्रतिष्ठित भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार समेत दो दर्जन से अधिक राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय सम्मान प्राप्त। संप्रति उत्तर प्रदेश सरकार में अधिकारी हैं।

पार्टी की अपनी तमाम माँगें थीं। सरकार से मनवाना चाहती थी। खुलेआम धमकियाँ दी जा चुकी थीं और घोषणाएँ की जा चुकी थीं—'अगर सरकार ने अमुक तारीख तक उनकी माँगें नहीं मानीं तो उनकी पार्टी विरोध का दूसरा रास्ता अख्तियार करेगी।'

यह दूसरा रास्ता और कुछ न होकर भारत बंद का आयोजन था। बंद की शुभ तारीख तयशुदा थी। उस रोज दुकानें बंद करवानी थीं। सड़कें जाम रखवानी थीं। सन्नाटे का माहौल तैयार करवाना था। गोया, टोटल बंद। सरकार सन्नाटे में आएगी, तभी सुनेगी।

मगर सरकार की निजी मजबूरियाँ थीं। जैसाकि होता है, उसके अपने कान बंद थे। उसने सुने बिना ही कह दिया—'जाओ, कर लो बंद। हम भी जब सरकार में नहीं थे, यह ही किया करते थे। यह बंद-खुला वगैरह सब जनसरोकार के मुद्दे हैं, यूँ भी सरकार को इनसे क्या लेना-देना? जनता का मामला, जनता ही भुगतेगी।'

सो, उन्होंने पार्टी के निर्देश पर अपने इलाके में भयंकर और भव्य बंद का आयोजन कराया। चक्का जाम। पूरा इलाका सीलबंद। उनके कार्यकर्ताओं ने इतने सारे टायर जलाए कि आसमान में बेमौसम बादलों का भ्रम होने लग गया। जो जिस तरह से अवरोध उत्पन्न कर सकता था, उसने किया। दुकानें बंद रहीं। रेल-सड़क यातायात ठप रहा। सड़कें जनशून्य हो गईं। इनसान नदारद थे। जो दस-पाँच थे, वे आदमजात नहीं, उनकी पार्टी के कार्यकर्ता थे। वर्कर्स के अमानवीय हुड़दंग देखकर यूँ भी उनको छोड़कर कोई मूर्ख ही इन वर्कर्स को मनुष्य मानता।

इस बंदोत्सव की अप्रत्याशित सफलता पर उनके अपनों ने खुलेआम ऐलान किया कि हमारे माननीय आज से इलाके के वंदनीय हो गए।

पब्लिक नहीं चौंकी। जनता जानती है जो चक्काजाम और बंद सरीखे जनअनुष्ठान कराने में सफल होता है, एक न एक रोज इस लोकतंत्र में उसे वंदनीय होने से उसका सगा बाप तक नहीं रोक सकता।

५३८क/५१४, त्रिवेणीनगर द्वि...
लखनऊ-२२६...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

ज्ञानी हैं सच्चे अज्ञानी

● श्रवण कुमार उर्मलिया

न जाने ईश्वर यह हमारी कैसी परीक्षा ले रहा है। हमें कैसी मुसीबतों के हवाले करता जा रहा है!

स्कूलों से अर्जित हमारे सारे ज्ञान और संस्कार निरर्थक साबित होते जा रहे हैं। ऐसा लगता है जैसे हमारे भीतर संचित ज्ञान और संस्कार की वे उपलब्धियाँ हमारे लिए कलंक का पर्याय बनती जा रही हैं।

हमारे भीतर 'सदा सत्य बोलो' के कंगारू उचटने लगे तो हमारे मुँह से सत्य उच्चरित होने लगा। हमें लगा कि इस धरती पर सत्य की लाट हमीं गाड़ेंगे। हम जिसे चाहते, अपने सत्य की परिधि में लेकर उसका झूठ उजागर कर देते। सत्य बड़ा अन्वेषी होता है। उसे पता चल जाता है कि दफ्तर में कहाँ-कहाँ प्रेम-प्रसंग पनप रहे हैं। सत्य रिसर्च कर लेता है कि कहाँ-कहाँ व्यभिचार, भ्रष्टाचार और अनैतिकता फल-फूल रहे हैं। सत्य जान लेता है कि किन-किन कोनों में झूठ छुपा हुआ है।

हम अपने सत्य के गरूर से झूठ का माथा फोड़ते रहे; उस पर सत्य की लाठी भाँजते रहे। झूठ नंगा होता, बेपरदा होता तो हमारा सत्य अपनी पीठ ठोकने लगता। झूठ किचकिचाता; तिलमिलाता तो सत्य ठहाके लगाता। व्यभिचार मिमियाते हुए नाक रगड़ता तो सत्य विजय के उल्लास में झूम उठता।

अभी हम सत्य को ठीक से सत्ताधीश बना भी न पाए थे कि झूठ हर कोने और प्रत्येक बिल से निकल आए और उन्होंने अपनी यूनियन बना ली। नारे लगाने लगे कि सत्य की दादागिरी नहीं चलेगी, नहीं चलेगी!

सत्य संस्कारी था। संस्कारी नितांत अकेला और असहाय होता है। आदरणीय राष्ट्रपिता बापू ने सत्य को निहत्था भी बना दिया था। झूठ, फरेब और भ्रष्टाचार की सामूहिक गुंडागर्दी ने सत्य को धुन दिया। शारीरिक पीड़ा ने हमारे सत्य को मन की गहन घाटियों में ढकेल दिया। 'सदा सत्य बोलो' के ज्ञान और संस्कार ने हमारी बड़ी फजीहत करवाई। एक बहुत प्रभावी ज्ञान प्राप्त हुआ हमें। ज्ञान और संस्कार को अपने भीतर सुरक्षित रखना चाहिए। वे भीतर दबे हुए हैं तो हम भी सुरक्षित हैं। मन के बिल में दुबके हुए सत्य के साँप बाहर निकलते हैं तो वे हमें ज्यादा डसते हैं।

संस्कारी अकिंचनों का मन बड़ा ढीठ होता है। उसकी फितरत ही ऐसी होती है। वह थोड़े दिन तो शांत रहता है, पर फिर मन के भीतर संस्कार के हिरन कुलाँचें भरने लगते हैं।

हमारे संस्कारों में कूट-कूटकर भरा गया था—'नॉलेज इज पॉवर'। यदि हमारे पास ज्ञान है तो हम शक्तिशाली हैं। ज्ञान हमारे तरकश में शक्ति का ब्रह्मास्त्र दे देता है। ज्ञान हमें शक्ति का लाइसेंस दे देता है।

मैं अपने इस स्वकायाजीवी मन का क्या करूँ? यह भी भ्रम पाले हुए है कि जितना ही ज्ञान अर्जित करोगे, उतने ही शक्तिशाली होते जाओगे। मैं अपनी आँखें और कान खुली रखता हूँ, ताकि ज्ञान मुझसे बचकर निकल न पाए। मैं ज्ञान-पिपासु बिल्ली की तरह ज्ञान के हर चूहे को झपट लेता हूँ।

मुसीबत यह है कि जैसे-जैसे मुझे ज्ञान प्राप्त होता जाता है, मैं भीतर से बिखरने लगता हूँ। ज्ञान मुझे कमजोर बनाकर अव्यवस्थित करने लगता है। जानकारियाँ मेरे मन को बेचैन करने लगती हैं। मन में छटपटाहट भर जाती है।

जन्म : १० अगस्त, १९५१ को दक्षिणी झगड़ा खांड कोलियरी, सरगुजा (म.प्र.) में।
शिक्षा : बी.ई., एम.टेक., ज्योतिष अलंकार, एम.बी.ए. (वित्त)।
प्रकाशन : तीन कहानी संग्रह, सात व्यंग्य संग्रह, दो कविता संग्रह, 'कुछ बसंत अधूरे से' *(उपन्यास)*।
सम्मान : 'साहित्यिक कृति पुरस्कार', 'भारतेंदु राजभाषा साहित्य शिरोमणि सम्मान', 'आठवाँ लीला रानी स्मृति पुरस्कार', 'साक्षी भारत सम्मान', 'हिंदी राजभाषा प्रचार एवं प्रसार सम्मान', 'राजभाषा कीर्ति सम्मान'।
संप्रति : महाप्रबंधक, पावर फाइनेंस कॉर्पोरेशन लि., नई दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाध ईमानदार मित्र से पूछता हूँ—'यार, दफ्तर में धड़ल्ले से भ्रष्टाचार चल रहा है, पर सब इतने आश्वस्त कैसे दिख रहे हैं?' दुनियादार दोस्त मुझे समझा देता है—'यार, तू क्यों अपना सर फोड़ता है। कोई घूस ले रहा है तो तू क्यों अपने दिल को जलाता है। जो जैसा करेगा वो वैसा फल भोगेगा, बस!' जस करनी, तस भरनी। यह भी हमारे संस्कारों में रचा-बसा है। हमें पता है कि भ्रष्टाचार हो रहा है। हम अपनी आँखों के सामने उसे होता हुआ देख रहे हैं। पर हम असंपृक्त भाव से बैठे हैं। हम तटस्थ हैं। क्योंकि हमारा विश्वास है कि जो जैसा बोएगा वैसा ही काटेगा। बड़ी सफाई से हमने अपनी जिम्मेदारी को भगवान् नामक अदृश्य शक्ति पर डाल दिया है। वह भ्रष्टाचारी को सजा देगा; हमें बीच में पड़ने की जरूरत ही नहीं। भगवान् का मामला भगवान् ही जाने।

जब तक अज्ञानता है तब-तक मानसिक शांति है; चित्त व्याकुलता से मुक्त है। चित्त में ज्ञान के पदार्पण करते ही चित्त विचलित हो जाता है।

जैसे ही मुझे पता चलता है कि फलाँ-फलाँ अधिकारी घूस लेकर भ्रष्टाचार को स्थापित कर रहे हैं; तो इस ज्ञान से मन उद्विग्न हो उठता है।

मन बड़ा पापी होता है। उसे गलत बातें जल्दी नजर आ जाती हैं। अच्छे काम भी जरूर हो रहे होंगे, पर भ्रष्टाचार का आकर्षण मन को मोह लेता है।

नाक के नीचे भ्रष्टाचार हो रहा है और मैं परेशान हूँ। जो संस्था मुझे रोजी-रोटी दे रही है, उसको लुटते हुए देखना असह्य है। संस्था भी अपनी है और उसे उजाड़ने वाले भी अपने हैं। रावण अन्य निशाचरों के साथ अपनी अशोक वाटिका को ही उजाड़ रहा है।

मेरे संस्कार मुझे भ्रमित कर रहे हैं। कायदे से भ्रष्टाचार का ज्ञान यदि मुझे पावर दे तो संस्कारों की परवरिश हो। यदि मैं इस जानकारी से खुद को घूस लेनेवाले अधिकारी से ज्यादा शक्तिशाली महसूस करूँ, तब तो संस्कारों पर आस्था जगे।

विडंबना यह है कि घूस लेने वाला निरंतर विशाल होता जाता है और हम शिथिलता की भेंट चढ़ते रहते हैं। भ्रष्टाचारी ऊँचा उठता जाता है और मैं हीनता की भावना से ग्रसित होता जाता हूँ। कई बार मन होता है, कि अपनी शक्ति को समेटूँ और अधिकारी से आमने-सामने पूछ लूँ—'क्यों बे, बेशर्म! घूस क्यों लेता है?' पर उसके सामने पहुँचते ही मेरी शक्ति जवाब दे जाती है।

पापी और भ्रष्टाचारी को बाली वाला वरदान प्राप्त है। भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करने की अभिलाषा रखनेवाले व्यक्ति की आधी शक्ति भ्रष्टाचारी में चली जाती है। वह हिम्मत ही नहीं जुटा पाता कि भ्रष्टाचारी की पोल खोले।

मैं देख रहा हूँ कि भ्रष्टाचारी अधिकारी आदमकद हैं और मैं बौना हो गया हूँ। मैं यह भी देख रहा हूँ कि सिर्फ मैं परेशान हूँ, चिंतित हूँ, व्यथित हूँ। मेरे सारे सहकर्मी सुखी हैं; उन्हें कोई संताप नहीं है। तो क्या उन्हें भ्रष्टाचार के बारे में पता नहीं है? पर ऐसा कैसे हो सकता है? भ्रष्टाचार की गंध कैसे छिप सकती है? पर सब कौन-सी विद्या जानते हैं, जो उन्हें परेशान नहीं होने देती?

एकाध ईमानदार मित्र से पूछता हूँ—'यार, दफ्तर में धड़ल्ले से भ्रष्टाचार चल रहा है, पर सब इतने आश्वस्त कैसे दिख रहे हैं?' दुनियादार दोस्त मुझे समझा देता है—'यार, तू क्यों अपना सर फोड़ता है। कोई घूस ले रहा है तो तू क्यों अपने दिल को जलाता है। जो जैसा करेगा वो वैसा फल भोगेगा, बस!'

जस करनी, तस भरनी। यह भी हमारे संस्कारों में रचा-बसा है। हमें पता है कि भ्रष्टाचार हो रहा है। हम अपनी आँखों के सामने उसे होता हुआ देख रहे हैं। पर हम असंपृक्त भाव से बैठे हैं। हम तटस्थ हैं। क्योंकि हमारा विश्वास है कि जो जैसा बोएगा वैसा ही काटेगा। बड़ी सफाई से हमने अपनी जिम्मेदारी को भगवान् नामक अदृश्य शक्ति पर डाल दिया है। वह भ्रष्टाचारी को सजा देगा; हमें बीच में पड़ने की जरूरत ही नहीं। भगवान् का मामला भगवान् ही जाने।

क्या हमें ऐसे निम्नस्तरीय संस्कारों पर गर्व होना चाहिए? फिर शर्मिंदा होने के लिए हमारे पास क्या बचेगा? क्या हमारे लिए भी भगवान् शर्मिंदा होगा?

मैं मन को समझा लेता हूँ कि वह ज्ञानवान बनने की चेष्टा न करे। फायदा इसी में है कि अज्ञानी बने रहो, ताकि भ्रष्टाचारी की नजर में न चढ़ो। वह बड़ा ताकतवर होता है और आकर्षक भी। वह विरोधियों को धूल चटा देता है, और समझौतेवादी लोगों को शरणागत बना लेता है। ज्ञानी भीतर-ही-भीतर भ्रष्टाचार देख-देख कुढ़ता रहता है, पर अज्ञानी होने का अभिनय ओढ़े लोग जाकर भ्रष्टाचारी की स्तुति कर आते हैं— 'माई बाप, हमें अपने हुजूर-दरबार में शामिल कर लीजिए। हमें अवसर दीजिए, ताकि हम आपके भ्रष्टाचार वाले मिशन में अपना योगदान दे सकें।'

हर तरफ वातावरण सामान्य है, क्योंकि अनैतिकता, अनाचार और भ्रष्ट आचरण किसी कुटिल सभ्यता की तरह फल-फूल रहे हैं। तो कहीं से व्यभिचार प्रगट होकर कसर पूरी कर देता है। सभ्यता में चार चाँद लग जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रष्टाचार के द्वारा प्रदत्त दुस्साहस और आत्मविश्वास से प्रेरणा लेकर एक दु:शासन सीमाएँ लाँघ जाता है। एक नारी की इज्जत दागदार होते-होते बचती है।

संस्कारी मन फिर उलझ जाता है। हमें समझाया गया था कि नारी का सम्मान होना चाहिए। सदियों से इस मानव सभ्यता में अपमान और अत्याचार के लिए सिर्फ नारियों को ही चुना जाता रहा है। उन्हें इस विषय में हमेशा ही प्राथमिकता दी जाती रही है।

पूरे महकमे में घटना की खबर फैल गई है। इस जानकारी का ज्ञान सभी को मिला है, पर लोग फिर वैसे ही तटस्थ, वैसे ही असंपृक्त उधर लोग निश्चिंत बैठे हैं और इधर मैं अपराध-बोध से भरा हुआ हूँ। दु:शासन निर्द्वंद्व होकर घूम रहा है और मैं भीतर-ही-भीतर खुद को धिक्कार रहा हूँ।

पूरे महकमे में दबी जुबान प्रतिक्रियाएँ दी जा रही हैं। ज्यादातर सहानुभूतियाँ दु:शासन के साथ हैं। बेचारा मुफ्त में फँस गया, यार! एक हाथ से तो ताली बजती नहीं। जरूर इसे बहकाया गया होगा।

घर-परिवारवाला कोई कदम उठाने से पहले दस बार सोचेगा, यारो! उसे तो जान-बूझकर फँसाया गया है!

महिलाएँ उसे चरित्र-प्रमाणपत्र बाँटती फिर रही हैं—'वे हमारी तरफ आँख उठाकर भी नहीं देखते। ऐसा सज्जन पुरुष तो हमने देखा ही नहीं!'

सहानुभूति पाकर दु:शासन का आत्मविश्वास लौट आया है। वह एक और इज्जत-घोटाला करने के लिए तैयार है। बेचारी पीड़ित नारी सहानुभूति को तरस रही है। महिलाएँ उसका उत्साह बढ़ाने के लिए यह जुमला बोलकर अपना दायित्व पूरा कर रही हैं—'हम औरतों के साथ तो ऐसा होता ही रहता है।'

सुन-सुनकर मैं आत्मग्लानि से भर गया हूँ। अप्रत्यक्ष रूप से पीड़ित महिला पर लाँछन लगाए जा रहे हैं। गनीमत है कि लोग यह तर्क नहीं दे रहे हैं कि पीड़ित ने नारी के रूप में ही क्यों जन्म लिया। न वह नारी बनती, न कोई दु:शासन इज्जत अफजाई के लिए प्रेरित होता। नारी होकर भूल तो उसी ने की है।

लोग तटस्थ हैं और घटनाक्रमों में रस ले रहे हैं। मेरी आत्मग्लानि उस सीमा तक पहुँच गई है, जहाँ मैं खुद को ही अपराधी समझने लगा हूँ। असली अपराधी निश्चिंत घूम रहा है; पीड़ित से सहानुभूति जताने वाले भी किसी नए घटना के इंतजार में लग गए हैं। पर मैं सच्चे मन से उदास हूँ और अपने ज्ञानी व संस्कारी होने का मोल चुका रहा हूँ।

इधर एक और मुद्दा उठ खड़ा हुआ है। दूसरों के चरित्रों की चीड़-फाड़ करनेवाले चिंतित हैं कि बात बाहर उछली तो संस्थान की बड़ी बदनामी होगी। एक नारी की बदनामी गौण है। नारी बदनाम हो जाए तो हो जाए, पर संस्थान के दामन पर दाग न लगने पाए। संस्था-समर्थक कुछ नराधमों ने तो पीड़ित से अनुरोध भी कर लिया है—'बहन, संस्था की आबरू का सवाल है। इस बड़ी आबरू के सामने तेरी आबरू नगण्य है। नारी हमेशा से ही त्याग करती आई है। बहन, तेरे सामने भी यह क्रेडिट लेने का अवसर है, इसलिए अपनी कंपलेंट वापस लेकर कंपनी को बचा ले!'

निरीह नारी फिर घिर गई। वह क्षमा की देवी, सहनशीलता की पर्याय इत्यादि न जाने क्या-क्या बना दी गई। नारी को हम इसी तरह ठगते आए हैं। एक वरिष्ठ ने तो मनुष्य की नीचता का इतिहास ही रच डाला। उन्होंने विनयपूर्वक पीड़ित से कहा, 'मैडम, बस इस बार तुम माफ कर दो और अपनी कंपलेंट विड्रा कर लो। भविष्य में यदि फिर कभी तुम्हारे साथ ऐसा हुआ तो मैं वायदा करता हूँ कि मैं जरूर ऐक्शन लूँगा।'

एक नया ज्ञान मेरे भीतर प्रवेश कर रहा है। बड़ा पीड़ादायक है यह ज्ञान, लगता ही नहीं कि हम किसी सभ्य समाज में रह रहे हैं। विश्वास ही नहीं होता कि हम इनसानों की बस्ती में हैं।

इधर एक और मुद्दा उठ खड़ा हुआ है। दूसरों के चरित्रों की चीड़-फाड़ करनेवाले चिंतित हैं कि बात बाहर उछली तो संस्थान की बड़ी बदनामी होगी। एक नारी की बदनामी गौण है। नारी बदनाम हो जाए तो हो जाए, पर संस्थान के दामन पर दाग न लगने पाए। संस्था-समर्थक कुछ नराधमों ने तो पीड़ित से अनुरोध भी कर लिया है—'बहन, संस्था की आबरू का सवाल है। इस बड़ी आबरू के सामने तेरी आबरू नगण्य है। नारी हमेशा से ही त्याग करती आई है। बहन, तेरे सामने भी यह क्रेडिट लेने का अवसर है, इसलिए अपनी कंपलेंट वापस लेकर कंपनी को बचा ले!'

अनैतिकताओं से भरे इस समाज में हमारे सारे ज्ञान और संस्कार अर्थ खो चुके हैं। जो ज्ञान हमें पीड़ा दे, उसे निकाल फेंकना चाहिए। जो संस्कार हमें भ्रमित करें, उन्हें उखाड़ फेंकना ही बुद्धिमानी है।

जहाँ अज्ञानी बने रहने की अपनी सहूलियतें और फायदे हों, वहाँ ज्ञानी के हित में है कि वह भी सच्चा अज्ञानी बनकर रहे।

किसी भी लिहाज से ज्ञानी बनकर दु:खी होने से बेहतर है अज्ञानी बनकर सुख-ऐश्वर्य का भोग करना।

१९/२०६, शिवम खंड
वसुंधरा, गाजियाबाद-२०१०१२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

ओहदे की खातिर

● हरदर्शन सहगल

जन्म : २६ फरवरी, १९३५ को कुंदियाँ, जिला—मियाँवाली (अब पाकिस्तान) में।
कृतित्व : ५ कहानी-संग्रह, १ व्यंग्य कथा-संग्रह, ३ उपन्यास, १ बाल उपन्यास, १ नाटक, १ हास्य संस्मरण, १० बाल कथा-संग्रह, कई संपादित ग्रंथ, १ हजार से अधिक स्फुट रचनाएँ प्रकाशित व प्रसारित।
सम्मान : राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर; सोवियत नारी, मास्को; चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट एवं परिवार कल्याण मंत्रालय सहित विभिन्न संस्थानों एवं संगठनों द्वारा सम्मानित।

बहुत समय पहले की बात है। मैंने एक अंतरराष्ट्रीय स्तर की संस्था की स्थापना की थी। लगे हाथों एक पत्रिका भी निकाल डाली थी। इनका लाभ मुझे आज भी प्राप्त हो रहा है। संस्था का नाम उसी अनुरूप गढ़ा था—'अंतरराष्ट्रीय बुद्धिजीवी यूनियन'।

एकदम निकट भविष्य में इस यूनियन का क्या हश्र होगा, इस शुद्ध तथ्य से बखूबी वाकिफ था, क्योंकि साहित्यकारों तथा लेखकों के अंकगणित, भूगोल और इतिहास की जानकारी रखता हूँ। पता है, यूनियन का मतलब 'एकता' होता है, जबकि हमारे यहाँ के बुद्धिजीवी कहलानेवाले लेखक कैसे यूनाइट होकर रह सकते हैं। एक की टाँग, दिमाग, इधर है तो दूसरे का उधर। उनकी दिली-ख्वाहिश दूसरे को धक्का देकर सबसे पहले खुद आसमान छू लेने की होती है। सितारों की मानिंद चमचमाने की होती है। वे अनादि काल से कभी मिलकर रह ही नहीं सके। एक-दूसरे को नीचा दिखाने का कोई मौका गँवाना अपनी बेअक्ली समझते हैं।

तब मुझसे पूछा जा सकता है, जब तुम्हारे पास अपने ही तबके के प्रति ऐसे नेक खयालात हैं, तब तुमने अंतरराष्ट्रीय बुद्धिजीवी यूनियन का निर्माण क्यों किया? और तो और साथ में 'चटखारा' नामक पत्रिका और निकाल डाली। वजह? मानता हूँ कि ऐसे प्रश्न पूछना आपका हक है। तो खुलासा करता हूँ :

वजह एक नहीं, दो। बताता हूँ। पहले यह बता दूँ कि पत्रिका का पूरा नाम 'वैचारिक चेतना चटखारा' था। वहाँ २०१ रुपए का वार्षिक पुरस्कार भी था।

पहली वजह यह रही कि मेरे फादर के पास अनाप-शनाप पैसा है, जिसे हमारे बुद्धिजीवी मित्र अकसर जल-भुनकर 'ब्लैक मनी' कह देते हैं। पिताजी के पास उसे ह्वाइट कर दिखाने के लासानी हुनर हैं। रकमों के साथ बिंदियाँ १ जीरो १ जोड़ते हैं। घटाते है खुद महत्त्वाकांक्षी प्रवृत्ति के मानव हैं। इस मेरा सहयोग चाहते थे। दूसरा, वे यह भी च थे कि बेटा बेशक गलत-शलत क्यों न करें, बनकर दिखाए। बाप का नाम भी रोशन करे

दूसरी असल वजह यह थी कि मुझे कि भी खास पदवी से विभूषित नहीं किया जाता ज्यादा-से-ज्यादा, 'बुद्धिजीवी', 'लेखक 'साहित्यकार', 'साहित्य अनुरागी', 'शब्द शि जैसे नामों से पुकारा जाता था। इससे क्या, य सभी होते हैं। यही स्थिति अखबारों की प पढ़ने पर दुःख से भरती है। ज्यादातर के प ओहदे, तमगे थे। मसलन शिक्षाविद्, सामाजि कार्यकर्ता व्यंग्यकार आदि-आदि।

ऐसे निराशाजनक माहौल में मैंने अपनी तरह के चंद लोगों से संपर्क किया। पूछा कि किया जा सकता है।

मित्रों ने अपने-अपने दिमाग पर जोर डाल निष्कर्ष निकाला, हमें भी कोई पत्रिका निका चाहिए। कोई संस्था चलानी चाहिए।

यही तो मैं चाहता था, जो मित्रों के मुँह से उगलवा दिया। ऐसे यही एक इलाज होता है।

मैंने कहा, अवश्य चिंता न करें। धन की कमी आड़े नहीं आ जाएगी, फिर भी देखिए, यह एक टीमवर्क है। सो आपको भी सहयोग करना पड़ेगा। खुद ग्राहक बनिए। औरों को भी बनाइए। मैं र बुकें बनवाए देता हूँ। अपनी जान-पहचान के और अनजान लोगों से माँगने में कैसी शरम।

लोग-बाग भले ही किसी की कमाई को 'हराम की कमाई' लेकिन मुझे पूरा अहसास है कि इसमें कितना बड़ा रिस्क उठाना है। अफसरों की हर तरह से चापलूसी करनी पड़ती है। इसलिए योग्य पुत्र होने के नाते, अपने पिताश्री से पूरी छूट मिल जाने के बाव उनकी गाढ़ी कमाई को उजड़वाने के हक में नहीं था। बिजनेस भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छा, जो दूसरों के धन और अपने दिमाग से किया जाए।

तब पिताजी के थोड़े धन को मित्रों के अधिक धन में मिश्रित कर एक साथ संस्था तथा पत्रिका निकालने की घोषणा कर डाली। मित्रों से वायदा किया कि इनके माध्यम से उनको पूरा महत्त्व दिया जाएगा और उन विरोधियों के नामों की लिस्ट वे दे दें। एक-एक को अच्छी तरह से उखेड़ा जाएगा।

फादर को मैंने आनन-फानन में 'अंतराष्ट्रीय बुद्धिजीवी यूनियन' का संस्थापक सदस्य घोषित कर दिया। उन्होंने मीटिंग में आला अफसरान को बुला-बुलाकर महमाने खुसूसी वगैरह बनाना शुरू कर दिया। संस्था और पत्रिका के नाम पर दूसरी सुविधाओं के अलावा सरकारी कोटे से अच्छा-खासा ब्लैक हेतु कागज भी आने लगा।

दो सालों में पत्रिका के तीन अंक निकाले। फिर इसे बंद कर दिया है। आज के जमाने में पत्रिका निकालना कितना दुर्गम कार्य है। मित्रों से कहा, "ऐसा न सोचें कि पत्रिका बंद हो गई है। इसे मात्र कुछ अरसे के लिए स्थगित किया गया है। यह फिर निकलेगी पूरी सजधज के साथ। आप से निवेदन है कि आप सब हमें लेखकीय सहयोग अवश्य देंगे।"

लोग-बाग भले ही किसी की कमाई को 'हराम की कमाई' कहें, लेकिन मुझे पूरा अहसास है कि इसमें कितना बड़ा रिस्क उठाना पड़ता है। अफसरों की हर तरह से चापलूसी करनी पड़ती है। इसलिए एक योग्य पुत्र होने के नाते, अपने पिताश्री से पूरी छूट मिल जाने के बावजूद मैं उनकी गाढ़ी कमाई को उजड़वाने के हक में नहीं था। बिजनेस भी वही अच्छा, जो दूसरों के धन और अपने दिमाग से किया जाए।

इसी प्रकार यूनियन की सात गोष्ठियाँ हुई थीं, लेकिन अब तक फादर का अफसरों के बीच उठना-बैठना जारी है।

भले ही पत्रिका के तीन अंक निकले थे। सात गोष्ठियाँ हुई थीं, लेकिन आज तलक मुझे दूसरी साहित्यिक संस्थाएँ ससम्मान बुलाती हैं। अध्यक्ष बनाएँ, मुख्य अतिथि बनाएँ, चलो किसी के गले में मेरे द्वारा माला ही पहनवाएँ, अब संचालक मुझे दूसरों की तरह पूर्व, भूतपूर्व अध्यक्ष, अंतरराष्ट्रीय बुद्धिजीवी यूनियन तथा पूर्व संपादक 'चटखारा' कहना नहीं भूलते। पहले वे दूसरों को ही डॉक्टर, पूर्व सांसद, पूर्व सिंधी-उर्दू अकादमी सदस्य, जन-कल्याण कवि कहकर तालियों के बीच मंच पर बुलाते थे। तभी मुझमें हीन भावना भर गई थी। अब यह दरजा मैंने भी पा लिया है। सो अपने को 'अभूतपूर्व' सोच-सोचकर गद्‌गद होता रहता हूँ।

५-ई-९ संवाद डुप्लैक्स,
बीकानेर-३३४००३

गधो-खच्चरों की कमी नहीं है

सन् १९६२ की बात है।

लोकसभा में चीनी आक्रमण के संदर्भ में चर्चा चल रही थी। ऊँचाईवाले क्षेत्रों में सेना को पर्याप्त मात्रा में रसद तथा अन्य सामग्री की आपूर्ति के लिए क्या-क्या कदम उठाए जाने चाहिए, इस पर सदस्य सुझाव दे रहे थे। एक सदस्य ने सुझाव दिया कि सामान खच्चरों पर पहुँचाया जाता है। खच्चरों की कमी दूर करने के लिए खच्चरों का विदेशों से आयात किया जाना चाहिए।

प्रखर सांसद तुलसीदास जाधव ने पूछा, "क्या अपने देश में गधों-खच्चरों की कमी है, जो बाहर से मंगवाने पड़ेंगे?"

रक्षामंत्री श्री यशवंतराव चव्हाण जैसे ही उत्तर देने के लिए खड़े हुए कि प्रधानमंत्री नेहरूजी ने उन्हें बैठ जाने का संकेत किया और बोले, "अध्यक्ष महोदय, अभी तक तो सरकार का अनुमान यही था कि खच्चरों की कमी है, पर अब माननीय सदस्य की बात सुनने के बाद सरकार को पता चल गया है कि गधों-खच्चरों की कोई कमी नहीं है तथा उनके आयात की जरूरत नहीं है।"

पूरा सदन नेहरूजी के व्यंग्य को सुनकर ठहाकों से गूँज उठा।

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल
बीचपट्टी, पिलखुवा
गाजियाबाद (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मित्रदुख

• हरिशंकर राढ़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उन्हें सखा मिल गया, उनकी समस्याएँ हल हो गईं। रेस्तराँ एवं सिनेमा जैसे आवश्यक खरचे, नोटस एवं किताबें भाई साहब एक इशारे पर ला रहे हैं। गर्लफ्रेंड से ही संतुष्ट हैं बशर्ते खर्चों में कटौती न हो, कार या बाइक की सवारी मिलती रहे और मिस्ड कॉल का जबाव अनंत काल तक चलनेवाली इनकमिंग कॉल से मिलता रहे, परंतु इधर भाई साहब को मित्रता का स्वाद मिल चुका है। उन्हें ऐसी ही और मित्रणियों की जरूरत है। उनका काम एक से नहीं चल सकता।

पहले के लोग बहुत गंदे थे। उन्हें कभी लगा ही नहीं कि स्त्री और पुरुष भी सच्चे मित्र हो सकते हैं। वे तो स्त्री-पुरुष के बीच एक ही संबंध की कल्पना कर सकते थे। कितनी घटिया सोच थी और बनते थे बड़े चरित्रवान! स्त्री-पुरुष एक साथ दिखे नहीं कि पता नहीं क्या अनाप-शनाप सोच लेते थे। छू जाने से भी अपवित्रता चिपक जाती थी। कभी-कभी किसी युवती को पुरुष ने छू भी लिया तो वह गर्भवती हो सकती थी। मगर आज देखिए, स्त्री-पुरुष की मित्रता ही परवान चढ़ पा रही है। यहाँ, वहाँ, पार्कों में, झाड़ियों में मित्रगण मिले जा रहे हैं। इनसे गलतियाँ क्यों नहीं होतीं? बस मन साफ होना चाहिए!

खतरनाकजी का भी मन साफ है। मन की बात किसी को नहीं बताते, सो मैंने समझ लिया है कि मन साफ होगा। आप की शिकायत आप के मुँह पर तो कर ही नहीं सकते। ना जाने किस रूप में नारायण मिलि जाएँ! कब आप जरूरत पर काम आ जाएँ, कौन जानता है?

जरूरत पर काम आना ही मित्रता की कसौटी है। इस सर्वमान्य सिद्धांत से खतरनाकजी पूरा इत्तेफाक रखते हैं। इत्तेफाक ही नहीं, समयानुसार उन्होंने इस सिद्धांत में संशोधन भी किया है—जो जरूरत पर काम आ जाए, वही मित्र है। चूँकि जरूरतें अनंत हैं, इसलिए उनके मित्र भी अनंत हैं, किंतु उनकी मित्रता रोटेशन में चलती है। उन्हें कुछ सिद्धांत और भी मालूम हैं। दुनिया आनी-जानी है। यहाँ कुछ स्थायी नहीं है। इसलिए मित्रता को स्थाई बनाना महामूर्खता है। थोड़ा-बहुत विश्वास बस राजनीति के सिद्धांतों पर करते हैं; हालाँकि साहित्यकारों और धर्मात्माओं की दृष्टि में राजनीति में खुद ही सिद्धांत नहीं हैं। राजनीति में कोई स्थायी मित्र या स्थायी शत्रु नहीं होता। खतरनाकजी इस दृष्टि से सफल राजनीतिज्ञ सिद्ध होते हैं।

गोस्वामीजी ने रामचरितमानस में मित्र के लक्षण गिनाए हैं। एक लक्षण पर उनका विशेष ध्यान है—जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी। तुलसीदासजी का निहितार्थ तुलसीदासजी ही जानें। 'खतरनाकजी' को इसका अर्थ कुछ इस प्रकार लगता है—जो मित्र के दुख के लिए दुखी न हों, उन्हें देखने में भी पाप लगता है। अस्तु, वे मित्र के दुख के लिए दुखी रहते हैं। कहीं से कोई दुख ला सकें तो पातक कटे!

राजनीति और मित्रता की गुत्थी मेरे समझ में नहीं आती थी। लोकतंत्र में संसद् या विधानसभा के अंदर पहुँचनेवाले विराधी दल के नेता आपस में 'मित्र' होते हैं। ऐसा मैं नहीं कह रहा, ये तो वही कहते हैं। जब वे किसी बहस में किसी का विरोध करना शुरू करते हैं, तो उसे अपना घनिष्ठ मित्र बताकर ही करते हैं। शर्माजी ने मुझे समझाया कि वास्तव में वे एक-दूसरे के मित्र होते हैं। जो लोग अलग-अलग क्षेत्रों से चुनकर आए हैं। वे राजनीति में शत्रु कैसे हो सकते हैं? शत्रु या तो अपनी पार्टी में होते हैं, जो टिकट कटवाते हैं या फिर अपने क्षेत्र के चुनावी प्रतिद्वंद्वी!

बहरहाल, वे मेरे यहाँ आते रहते हैं। मित्र हैं, इत्मीनान से पास बैठते हैं। हर चीज का सिंहावलोकन करते हैं। उनके पास दिव्यदृष्टि है। वे परख लेते हैं कि मेरे यहाँ कौन सी चीज नई आई है। चीज ठीक नहीं है, फिर तो ठीक है। तारीफें भी करेंगे। मगर अच्छी है तो चुभ जाएगी। उधर से नजरें हटा लेंगे। ऐसे दिखाएँगे जैसे देख ही नहीं रहे हों। कभी-कभी किसी काम के बहाने बुला लेंगे—आओ न, बैठकर साथ चाय पीएँगे, बहुत दिन हो गया साथ बैठे। अब मैं जान जाता हूँ कि कुछ नया लाए होंगे जो मेरे 'कुछ' से मिलता-जुलता होगा या महँगा होगा। दिखाना चाहते होंगे। चेहरे पर एक चमक होती है उस दिन। फिर मेरे भी चेहरे पर चमक आ जाती है—विशेषत: यह समझकर कि उनका 'कुछ' उनके लिए विशेष उपयोगी नहीं है। कभी-कभी दुखी भी दिखते हैं, किंतु और को भी दुखी पाने पर उनका दुख कम हो जाता है।

गोस्वामीजी ने रामचरितमानस में मित्र के लक्षण गिनाए हैं। एक लक्षण पर उनका विशेष ध्यान है—जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी। तुलसीदासजी का निहितार्थ तुलसीदासजी ही जानें। 'खतरनाकजी' को इसका अर्थ कुछ इस प्रकार लगता है—जो मित्र के दुख के लिए दुखी न हों, उन्हें देखने में भी पाप लगता है। अस्तु, वे मित्र के दुख के लिए दुखी रहते हैं। कहीं से कोई दुख ला सकें तो पातक कटे!

मित्रता पर आचार्य रामचंद्र शुक्लजी ने बहुत कुछ लिखा है। मित्रता पर निबंध लिखते समय शुक्लजी की पंक्तियाँ बहुत उपयोगी सिद्ध होती हैं और परीक्षक को प्रभावित करती हैं। शुक्लजी को मेरे मित्र जैसा चरित्र कोई नहीं मिला, वरना वे लिखते—'मित्रता मनुष्य के पैरों में बँधी हुई चक्की के समान होती हैं…।' हालाँकि उनके लिखे कई वाक्य अभी भी पूरी तरह फिट बैठते हैं—'कुसंगति का ज्वर बड़ा भयानक होता है।' बस यहाँ कुसंगति एवं मित्रता में फर्क न समझा जाए। ज्वर को एक प्रकार का दिमागी बुखार समझा जाए, जो 'मित्र' नामक नर या मादा मच्छर के काटने से फैलता है। कुछ-कुछ मलेरिया की सिहरन का भी आभास प्रदान कराता है, जो जून-जुलाई की उष्णता में भी रजाई-सुख प्रदान करा देता है।

'मित्र' मनुष्य की भाँति होता है और शत्रु शेर की भाँति। मित्र के विषय में कुछ भी पता नहीं होता, जबकि शेर के विषय में पता होता है। शेर एक निश्चित काल तक नरभक्षी नहीं होता—प्राय: जब तक अकाल पीड़ित न हो। मित्र कभी भी नरभक्षी हो सकता है, किसी भी हद तक जा सकता है। सावधान रहें—निठारीकरण भी कर सकता है।

दरवाजे की घंटी बजी है। शायद वे आ गए हैं।

फ्लैट नं. २, १७६, वार्ड नं. ३, महरौली,
नई दिल्ली-११००३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

मित्रदुख

● हरिशंकर राढ़ी

खतरनाकजी बिलकुल तय समय पर आ विराजे। उनका सरकारी नाम कुछ और है। वे मेरे मित्र हैं, साथ-साथ कई अन्य लोगों के भी मित्र हैं। पीठ पीछे मैं उन्हें खतरनाकजी कहता हूँ। कभी-कभी मुँह पर भी कह देता हूँ, लेकिन हँसकर। पीठ पीछे गंभीरतापूर्वक कहता हूँ। दरअसल, ये उनका कोड नाम है। परिवार के कुछ लोग इस कोड को समझते हैं। बच्चे नहीं जानते इस कोड को। हालाँकि वे इस शब्द से परिचित हैं, परंतु इसे डिकोड नहीं कर पाए हैं। लीक होने का खतरा रहता है। बच्चों का क्या भरोसा—आदमी की चाल-ढाल और तरीके का ज्ञान ही नहीं।

उनका पधारना कोई विचित्र या ऐतिहासिक घटना नहीं है। वे प्राय: पधारते रहते हैं—मित्र जो ठहरे! किसी भी समय आ सकते हैं। आपको सावधान होने का भी समय नहीं मिलता। मित्रता में ऐसा ही होता है। पर मुझे भी पकड़ पाना कोई बाएँ हाथ का खेल नहीं है। मुझे मालूम है कि वे किस समय निहायत खाली होंगे और हवा का रुख इधर घूमेगा। फिर मैं किसी और के यहाँ पधार लेता हूँ। इस बीच वे तशरीफ ले आते हैं तो कभी-कभी धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा कर लेते हैं। वे बड़े आशावादी हैं। उन्हें मालूम है कि मैं कोई साँड़ नहीं हूँ कि घूमता ही रह जाऊँगा। बैल हूँ, घूम-फिरकर खूँटे पर तो आना ही पड़ेगा। रस्सी बिना गला सूना जो लगता है।

लेकिन आज मैं घर पर ही था, पकड़ा गया। आखिर उन्हें भी तो मेरी होशियारियाँ मालूम हैं। कभी-कभी वे फोन कर लेते हैं और समय बताकर आते हैं। इसका मतलब होता है कि वे आज बड़ी मुश्किल से जाएँगे। सारे काम पहले ही निपटा लो। हो सकता है कि एक-दो कविताएँ लिख मारे हों या फिर कुछ नकद-नारायण की जरूरत हो। हाँ, कभी-कभी मुलाकात निरापद ही रह जाती है। तब हैरानी होती है। देश की समस्याओं को हल करते-करते मुलाकात संपन्न हो जाती है। शेष रह जाता है देश को सुधार न पाने का मलाल!

उनका आना-जाना वर्षों से है। औपचारिकताएँ खत्म भी हैं और नहीं भी। शायद हमारी मित्रता पक्की नहीं हो पाई है। अभी हम एक-दूसरे को 'खतरनाक', 'मतलबी', 'कंजूस', 'दुश्मन' इत्यादि के अतिरिक्त कोई घनिष्ठता बोधक विशेषण नहीं दे पाए हैं। सच तो यह है कि मैं अभी तक यह समझ ही नहीं पाया हूँ कि वे मेरे मित्र हैं या शत्रु? एक गैर-साहित्यिक मित्र ने किसी अज्ञातनाम शायर का एक शेर सुनाया—

दोस्तों को अजमाते जाइए, दुश्मनों से प्यार होता जाएगा।

मित्रता तो वह है जिसमें आप शब्दों के अर्थ का अतिक्रमण कर जाएँ; शब्दों का अर्थ शून्य हो जाए और मैत्री भी अनौपचारिक रिश्ते तक परिवर्तित हो जाए। दो मित्र आपसी वार्त्तालाप के दौरान प्रसन्नता के अतिरेक में एक-दूसरे पर बॉक्सिंग का भी अभ्यास कर लेते हों तो उनकी घनिष्ठता के विषय में संदेह कर आप पाप के भागी न बनें। ऐसे ही धौल-धप्पों से शरीर की सहनीयता बढ़ती है और मानो विश्वास की मुहर लगती है।

कुछ मित्र मजाक को सच में परिवर्तित करने की क्षमता रखते हैं और अपने उन्नत चरित्र के बल पर मित्रता को 'सालेपन' के कार्यरूप में परिणत कर देते हैं। यह तभी होता है जब 'मित्र' के घर में कोई युवा सुंदरी हो और यूँ ही घास न डाल रही हो। ऐसी स्थिति में दूरदर्शिता, इच्छाशक्ति और नि:स्वार्थावरण में की गई मित्रता प्राय: फलीभूत होती है। मित्र के माध्यम से गृहांतर में आना-जाना हुआ तो मित्रता उपयोगी सिद्ध हो सकती है। हाँ, रिश्ता बनने तक धैर्य धारण करना आवश्यक होता है।

वैसे यह प्रयोग पुराना पड़ गया है। लोगों में उदारता बढ़ी है, संकीर्णता समाप्त हुई है और मित्र रूपी वैशाखियों का उपयोग घटने लगा है। बहुत दिनों बाद जाकर यह समझ विकसित हो सकी है कि वास्तविक मित्रता तो जनाना-मर्दाना में ही हो सकती है। भदेस या गँवई भाषा से ऊपर उठकर बोलने का प्रयास करूँ तो आज के सच्चे फ्रेंड के साथ 'ब्वॉय' या 'गर्ल' का उपसर्ग आवश्यक हो गया है। यह मित्रता स्वादिष्ट होती है। ब्वॉय को गर्लफ्रेंड मिल जाए और गर्ल को ब्वॉयफ्रेंड मिल जाए तो किसी और 'फ्रेंड' की न तो इच्छा रह जाती है और न आवश्यकता। आगे इन्हें ही सखी और सखा कहकर संबोधित किया जाएगा, कृपया ध्यान रखें। ज्यादा अँगरेजी नहीं, क्योंकि हिंदी दिवस भी आनेवाला है।

पचास प्रतिशत उम्र व्यय हो जाए तब भी सखी या सखा बनाया जा सकता है। हाँ, ऐसी मित्रता के लिए गर्लफ्रेंड या ब्वॉयफ्रेंड जैसी संज्ञा का अर्थ शून्य हो जाता है और मैनफ्रेंड या वूमनफ्रेंड की संस्तुति अभी तक मिल नहीं पाई है। शर्माजी भाषा-वैज्ञानिक हैं, उनका विचार है कि इन्हें 'हीफ्रेंड' और 'शीफ्रेंड' कहना उचित है।

जो भी हो, इस मित्रता के बनने पर बचे-खुचे पुराने दोस्तों से भी जान छुड़ाने की अभिलाषा होती है। कई बार तो ऐसा लगता है कि अब तक का सारा वक्त जाया गया। कइयों को तो दूसरों की ऐसी मित्रता देखकर अपना सारा जीवन की जाया लगता है।

सखी या सखा की उपलब्धता के बाद जीवन में नया रंग आ जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उन्हें सखा मिल गया, उनकी समस्याएँ हल हो गईं। रेस्तराँ एवं सिनेमा जैसे आवश्यक खरचे, नोटस एवं किताबें भाई साहब एक इशारे पर ला रहे हैं। गर्लफ्रेंड से ही संतुष्ट हैं बशर्ते खर्चों में कटौती न हो, कार या बाइक की सवारी मिलती रहे और मिस्ड कॉल का जवाब अनंत काल तक चलनेवाली इनकमिंग कॉल से मिलता रहे, परंतु इधर भाई साहब को मित्रता का स्वाद मिल चुका है। उन्हें ऐसी ही और मित्रणियों की जरूरत है। उनका काम एक से नहीं चल सकता।

पहले के लोग बहुत गंदे थे। उन्हें कभी लगा ही नहीं कि स्त्री और पुरुष भी सच्चे मित्र हो सकते हैं। वे तो स्त्री-पुरुष के बीच एक ही संबंध की कल्पना कर सकते थे। कितनी घटिया सोच थी और बनते थे बड़े चरित्रवान! स्त्री-पुरुष एक साथ दिखे नहीं कि पता नहीं क्या अनाप-शनाप सोच लेते थे। छू जाने से भी अपवित्रता चिपक जाती थी। कभी-कभी किसी युवती को पुरुष ने छू भी लिया तो वह गर्भवती हो सकती थी। मगर आज देखिए, स्त्री-पुरुष की मित्रता ही परवान चढ़ पा रही है। यहाँ, वहाँ, पार्कों में, झाड़ियों में मित्रगण मिले जा रहे हैं। इनसे गलतियाँ क्यों नहीं होतीं? बस मन साफ होना चाहिए!

खतरनाकजी का भी मन साफ है। मन की बात किसी को नहीं बताते, सो मैंने समझ लिया है कि मन साफ होगा। आप की शिकायत आप के मुँह पर तो कर ही नहीं सकते। ना जाने किस रूप में नारायण मिलि जाएँ! कब आप जरूरत पर काम आ जाएँ, कौन जानता है?

जरूरत पर काम आना ही मित्रता की कसौटी है। इस सर्वमान्य सिद्धांत से खतरनाकजी पूरा इत्तेफाक रखते हैं। इत्तेफाक ही नहीं, समयानुसार उन्होंने इस सिद्धांत में संशोधन भी किया है—जो जरूरत पर काम आ जाए, वही मित्र है। चूँकि जरूरतें अनंत हैं, इसलिए उनके मित्र भी अनंत हैं, किंतु उनकी मित्रता रोटेशन में चलती है। उन्हें कुछ सिद्धांत और भी मालूम हैं। दुनिया आनी-जानी है। यहाँ कुछ स्थायी नहीं है। इसलिए मित्रता को स्थाई बनाना महामूर्खता है। थोड़ा-बहुत विश्वास बस राजनीति के सिद्धांतों पर करते हैं; हालाँकि साहित्यकारों और धर्मात्माओं की दृष्टि में राजनीति में खुद ही सिद्धांत नहीं हैं। राजनीति में कोई स्थायी मित्र या स्थायी शत्रु नहीं होता। खतरनाकजी इस दृष्टि से सफल राजनीतिज्ञ सिद्ध होते हैं।

गोस्वामीजी ने रामचरितमानस में मित्र के लक्षण गिनाए हैं। एक लक्षण पर उनका विशेष ध्यान है—जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी। तुलसीदासजी का निहितार्थ तुलसीदासजी ही जानें। 'खतरनाकजी' को इसका अर्थ कुछ इस प्रकार लगता है—जो मित्र के दुख के लिए दुखी न हों, उन्हें देखने में भी पाप लगता है। अस्तु, वे मित्र के दुख के लिए दुखी रहते हैं। कहीं से कोई दुख ला सकें तो पातक कटे!

राजनीति और मित्रता की गुत्थी मेरे समझ में नहीं आती थी। लोकतंत्र में संसद् या विधानसभा के अंदर पहुँचनेवाले विराधी दल के नेता आपस में 'मित्र' होते हैं। ऐसा मैं नहीं कह रहा, ये तो वही कहते हैं। जब वे किसी बहस में किसी का विरोध करना शुरू करते हैं, तो उसे अपना घनिष्ठ मित्र बताकर ही करते हैं। शर्माजी ने मुझे समझाया कि वास्तव में वे एक-दूसरे के मित्र होते हैं। जो लोग अलग-अलग क्षेत्रों से चुनकर आए हैं। वे राजनीति में शत्रु कैसे हो सकते हैं? शत्रु या तो अपनी पार्टी में होते हैं, जो टिकट कटवाते हैं या फिर अपने क्षेत्र के चुनावी प्रतिद्वंद्वी!

बहरहाल, वे मेरे यहाँ आते रहते हैं। मित्र हैं, इत्मीनान से पास बैठते हैं। हर चीज का सिंहावलोकन करते हैं। उनके पास दिव्यदृष्टि है। वे परख लेते हैं कि मेरे यहाँ कौन सी चीज नई आई है। चीज ठीक नहीं है, फिर तो ठीक है। तारीफें भी करेंगे। मगर अच्छी है तो चुभ जाएगी। उधर से नजरें हटा लेंगे। ऐसे दिखाएँगे जैसे देख ही नहीं रहे हों। कभी-कभी किसी काम के बहाने बुला लेंगे—आओ न, बैठकर साथ चाय पीएँगे, बहुत दिन हो गया साथ बैठे। अब मैं जान जाता हूँ कि कुछ नया लाए होंगे जो मेरे 'कुछ' से मिलता-जुलता होगा या महँगा होगा। दिखाना चाहते होंगे। चेहरे पर एक चमक होती है उस दिन। फिर मेरे भी चेहरे पर चमक आ जाती है—विशेषतः यह समझकर कि उनका 'कुछ' उनके लिए विशेष उपयोगी नहीं है। कभी-कभी दुखी भी दिखते हैं, किंतु और को भी दुखी पाने पर उनका दुख कम हो जाता है।

गोस्वामीजी ने रामचरितमानस में मित्र के लक्षण गिनाए हैं। एक लक्षण पर उनका विशेष ध्यान है—जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी। तुलसीदासजी का निहितार्थ तुलसीदासजी ही जानें। 'खतरनाकजी' को इसका अर्थ कुछ इस प्रकार लगता है—जो मित्र के दुख के लिए दुखी न हों, उन्हें देखने में भी पाप लगता है। अस्तु, वे मित्र के दुख के लिए दुखी रहते हैं। कहीं से कोई दुख ला सकें तो पातक कटे!

मित्रता पर आचार्य रामचंद्र शुक्लजी ने बहुत कुछ लिखा है। मित्रता पर निबंध लिखते समय शुक्लजी की पंक्तियाँ बहुत उपयोगी सिद्ध होती हैं और परीक्षक को प्रभावित करती हैं। शुक्लजी को मेरे मित्र जैसा चरित्र कोई नहीं मिला, वरना वे लिखते—'मित्रता मनुष्य के पैरों में बँधी हुई चक्की के समान होती हैं…।' हालाँकि उनके लिखे कई वाक्य अभी भी पूरी तरह फिट बैठते हैं—'कुसंगति का ज्वर बड़ा भयानक होता है।' बस यहाँ कुसंगति एवं मित्रता में फर्क न समझा जाए। ज्वर को एक प्रकार का दिमागी बुखार समझा जाए, जो 'मित्र' नामक नर या मादा मच्छर के काटने से फैलता है। कुछ-कुछ मलेरिया की सिहरन का भी आभास प्रदान कराता है, जो जून-जुलाई की उष्णता में भी रजाई-सुख प्रदान करा देता है।

'मित्र' मनुष्य की भाँति होता है और शत्रु शेर की भाँति। मित्र के विषय में कुछ भी पता नहीं होता, जबकि शेर के विषय में पता होता है। शेर एक निश्चित काल तक नरभक्षी नहीं होता—प्रायः जब तक अकाल पीड़ित न हो। मित्र कभी भी नरभक्षी हो सकता है, किसी भी हद तक जा सकता है। सावधान रहें—निठारीकरण भी कर सकता है।

दरवाजे की घंटी बजी है। शायद वे आ गए हैं।

फ्लैट नं. २, १७६, वार्ड नं. ३, महरौली,
नई दिल्ली-११००३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul K

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

पी.एम. हाउस से बुलावा

● रवि शर्मा 'मधुप'

पी.एम. हाउस यानी प्रधानमंत्री निवास; और प्रधानमंत्री भी किसी ऐरे-गैरे देश का नहीं, बल्कि विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र अर्थात् भारत का। हर भारतीय नेता के सपनों का निवास, हर मंत्री के जीवन का अंतिम लक्ष्य। और हो भी क्यों न ? इसी पी.एम. हाउस में जाने के लिए तो हर नेता लालायित रहता है : हर समय शीर्षासन करने को तैयार रहता है, 'साम-दाम-दंड-भेद' सब अपनाता है। हर नेता का आज एक ही ख्वाब है—किसी प्रकार एम.पी. और फिर उसका उलटा अर्थात् पी.एम. बन पाना। वैसे भी पी.एम. हाउस में घुसना तो दूर की बात, उसे नजदीक से देख पाना भी साधारण भारतवासी के लिए आसान नहीं। उसी पी.एम. हाउस से जब मेरे जैसे अदना व्यक्ति को बुलावा आया तो मुझे सहसा विश्वास ही नहीं हुआ। श्रीमतीजी ने दो-तीन बार मेरा नाम व पता पढ़ा, सबकुछ ठीक था। पत्र खोला, पता चला कि प्रधानमंत्रीजी देश के बुद्धिजीवियों से संवाद स्थापित करना चाह रहे हैं। मेरे पास इस पत्र के आने का अर्थ था कि सरकार ने मुझे बुद्धिजीवियों की श्रेणी में रख लिया है। अब तक तो केवल मैं ही मानता था कि मैं बुद्धिजीवी हूँ, मगर अब तो सरकार भी मान गई है। मेरे बुद्धिजीवी होने पर अब सरकारी मुहर लग गई है।

बुद्धिजीवी अर्थात् बुद्धि के आधार पर जीवित रहनेवाला प्राणी। मेरे मन में सवाल उठा कि यदि मैं बुद्धिजीवी हूँ या जिन्हें प्रधानमंत्रीजी ने संवाद के लिए बुलाया है, क्या केवल वे ही बुद्धिजीवी हैं, बाकी नहीं ? मुझे तो लगता है कि प्रत्येक व्यक्ति, नहीं-नहीं, प्रत्येक प्राणी बुद्धिजीवी है। इसी बुद्धि के सहारे बगुला भगत बनकर मछलियाँ खाता है, बिल्ली घात लगाकर शिकार पकड़ती है, मक्खी-मच्छर आदि भी इसी बुद्धि के सहारे जीवित रहते हैं या जान बचा पाते हैं; मगर सर्वाधिक बुद्धिमान कहलानेवाले मानव ने इस 'बुद्धिजीवी' शब्द का अर्थ संकोच कर दि और अपने ही जाति भाइयों में से कुछ खास को बुद्धिजीवी घोषित क दिया। उनके अनुसार बुद्धिजीवी वह है, जो शारीरिक श्रम कम औ बौद्धिक श्रम अधिक करता है; जो हाथ से मेहनत नहीं करता, अपि बुद्धि से कलम या जुबान चलाकर ही अपने सब काम चला लेता है, मग बदलते समय के साथ आज 'बुद्धिजीवी' शब्द का अर्थ परिवर्तन हो ग है। आज बुद्धिजीवी वह माना जाता है, जो सिवाय बातों के और कुछ न कर सकता, जो अपनी बुद्धि से दूसरों को उल्लू बनाकर अपना उल् सीधा कर सकता है, जो कल्पना के महल या हवाई किले बनाने में द हो, जो जोड़-तोड़ में निपुण हो, जो हथेली पर सरसों उगा सके और द और दो पाँच कर सके। ऐसे में सबसे बड़ा बुद्धिजीवी तो है—भारत क नेता। शायद इसीलिए एक बुद्धिजीवी ने दूसरे बुद्धिजीवी को संवाद के लिए बुलाया है।

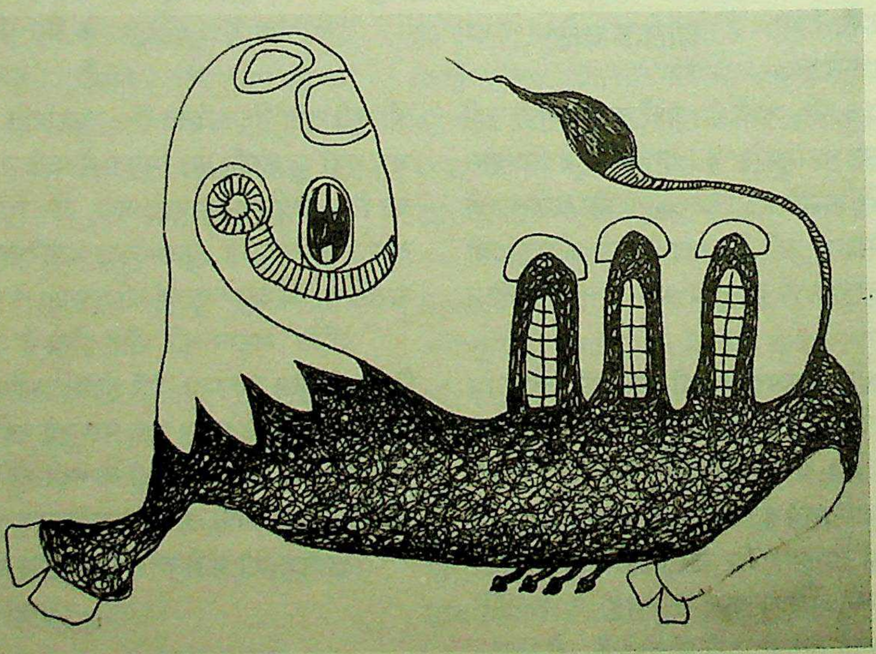

पी.एम. हाउस से बुलावा मिलते ही मैं सातवें आसमान पर उड़ने लगा। पता नहीं यह सातवाँ आसमान है कहाँ। हमारे ऋषि-मुनि भी बड़े महान् थे, कितने आसमान ढूँढ़ लेते थे, हम तो एक आसमान में भी कभी नहीं उड़ पाए। मेरी श्रीमतीजी के पाँव जमीन पर नहीं पड़ते थे। वाह! कैसे अद्भुत मुहावरे हैं। अरे भई, पाँव जमीन पर नहीं पड़ेंगे तो और कहाँ पड़ेंगे ? मेरे यार-दोस्तों के भ भाव बढ़ गए, मानो वे को वस्तु हों जिन पर बजट की मार पड़ी हो। मैं भी फूलक कुप्पा हो गया और स्वयं को एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति मान लगा। आखिर भारत जैसे विशाल देश में, करोड़ों की आबादी में मौजूद लाखों बुद्धिजीवियों में से मुझे पी.एम. हाउस से बुलावा मिला था यह कोई छोटी बात तो नहीं।

मैंने पी.एम. हाउस जा के लिए विशेष तैयारियाँ शु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर दीं। नए कोट, पैंट, जूते खरीदे। कुछ पर्सनैलिटी भी तो जँचे। हमारे देश में आजकल ऊपरी टीम-टाम, प्रदर्शन, दिखावा ही महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है; गुण, योग्यता, सादगी, सरलता सब दबते जा रहे हैं। इसलिए पी.एम. हाउस जाने के लिए प्रभावशाली वेशभूषा आवश्यक समझी गई। मैंने स्वतंत्र भारत के प्रधानमंत्रियों, प्रधानमंत्री निवास, देश-विदेश के ज्वलंत प्रश्नों आदि की जानकारी एकत्रित करनी शुरू कर दी। क्या पता प्रधानमंत्री साहब हमारी राय ही पूछ लें। कुछ अनुभवी लोगों को ढूँढ़ा, जो पहले कभी-न-कभी पी.एम. हाउस हो आए थे। उनसे मार्गदर्शन माँगा। उन्होंने बहुत अहसान करते हुए, अपना अत्यंत आत्मीय घोषित करते हुए मुझे कृपापूर्वक अपने अनुभव सुनाए।

इसके बाद शुरू किया प्रधानमंत्रीजी के व्यक्तिगत परिचय, पारिवारिक इतिहास, रुचियों, उपलब्धियों का पता लगाना। उनके भाषण व लेख भी पढ़ डाले। हो सकता है कि कहीं संदर्भ ही देना पड़ जाए। अब प्रश्न यह था कि वहाँ जाया कैसे जाए। वैसे तो हम प्राय: बस या ट्रेन से ही आना-जाना करते हैं, कभी-कभी दहेज में मिले अपने स्कूटर का भी सदुपयोग कर लेते हैं; मगर भारत में भ्रष्टाचार की तरह पेट्रोल के दाम भी लगातार बढ़ते जा रहे हैं, अत: चाहकर भी स्कूटर नहीं चला पाते। बड़ी दुविधा थी कि क्या करें, तभी श्रीमतीजी ने बिना माँगी सलाह दी—'मेरी मानो तो टैक्सी से जाओ, ताकि तुम्हारा भी कुछ रोब पड़े।' पत्नी की बात मुझे जँच गई। वैसे भी घर में सुख-शांति बनाए रखने तथा युद्ध की आशंका से बचे रहने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है—श्रीमतीजी की सलाह मानना। जो पति सफल-सुखद विवाह के इस मूलमंत्र को नहीं मानते, उनके पड़ोसी सदैव नि:शुल्क मनोरंजन का आनंद लेते हैं। अशांति उनके यहाँ ऐसे विद्यमान रहती है, जैसे कामी पुरुष के हृदय में वासना।

मैंने श्रीमतीजी की सलाह मानी और तुरंत टैक्सी लेकर पी.एम. हाउस पहुँच गया। टैक्सी का भारी-भरकम बिल देखकर मेरा दिल उसी प्रकार बैठ गया, जैसे माशूका की भारी-भरकम माँ को आता देखकर आशिकों का। किसी तरह मन को समझाया कि आखिर पी.एम. हाउस से कोई रोज तो बुलावा आता नहीं और यदि मैं बस या स्कूटर से आता तो मेरी तो कोई बात नहीं, पी.एम. हाउस की अवश्य बेइज्जती हो जाती। टैक्सी चले जाने के बाद अपने बाल, टाई, कॉलर आदि ठीक किए तथा

स्वागत कक्ष में बैठी रूपसी बाला को देखकर ही टैक्सी के आधे पैसे वसूल हो गए। जब उसने अपनी मधुर आवाज से कानों में चाशनी घोलते हुए पूछा, ''कहिए सर, मैं आपकी क्या सेवा कर सकती हूँ?'' तो सच मानिए हुजूर, मुझे पहली बार अपने शादीशुदा होने पर रोना आया। मैं कहना तो बहुत कुछ चाहता था, मगर मेरी जुबाँ ने मेरा साथ नहीं दिया। मैंने तुरंत निमंत्रण पत्र आगे बढ़ा दिया। वह निमंत्रण-पत्र देखते ही बड़े जोर से खिलखिला पड़ी। मैं घबरा गया कि न जाने मुझसे क्या गलती हो गई। बड़ी मुश्किल से हँसी पर काबू पाकर वह बोली, ''सर, इस निमंत्रण-पत्र पर लिखी तारीख तो पढ़ लीजिए। साफ लिखा है—1 अप्रैल यानी अप्रैल फूल।''

पहुँच गए स्वागत कक्ष में। स्वागत कक्ष में बैठी रूपसी बाला को देखकर ही टैक्सी के आधे पैसे वसूल हो गए। जब उसने अपनी मधुर आवाज से कानों में चाशनी घोलते हुए पूछा, ''कहिए सर, मैं आपकी क्या सेवा कर सकती हूँ?'' तो सच मानिए हुजूर, मुझे पहली बार अपने शादीशुदा होने पर रोना आया। मैं कहना तो बहुत कुछ चाहता था, मगर मेरी जुबाँ ने मेरा साथ नहीं दिया। मैंने तुरंत निमंत्रण पत्र आगे बढ़ा दिया। वह निमंत्रण-पत्र देखते ही बड़े जोर से खिलखिला पड़ी। मैं घबरा गया कि न जाने मुझसे क्या गलती हो गई। बड़ी मुश्किल से हँसी पर काबू पाकर वह बोली, ''सर, इस निमंत्रण-पत्र पर लिखी तारीख तो पढ़ लीजिए। साफ लिखा है—१ अप्रैल यानी अप्रैल फूल।''

सुर-सदन, डब्ल्यू.जे.-१९८७
रानी बाग, दिल्ली-११००३४

साहित्य अमृत

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के पत्रांक ११०१४/८/९६-रा.भा. (प) द्वारा
केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/
स्वायत्त निकायों/संस्थाओं आदि के लिए
एक विशिष्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका के रूप में अनुशंसित एवं अनुमोदित।

एक अंक : बीस रुपए
वार्षिक : दो सौ पचास रुपए (२५०/-)

राजभाषा हिंदी तथा सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए संस्थाओं का सहयोग अपेक्षित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

चिलम-भराई

● ओमप्रकाश सारस्वत

तब लोग खूब चिलम पीते थे। किसी भी समय-स्थान पर साधु-असाधु, अक्खड़-औघड़, बाबे, गुरु, गुरुघंटाल, गृहस्थ सब चिलम खींचते थे और कच्चे चेलों को पक्का शिष्य बनाने के लिए एंट्रेंस के तौर पर उनसे चिलम भराया करते थे।

उस समय चिलमों के ठाट थे। कुम्हारों का चिलम व्यापार अपने यौवन पर था। मेलों-ठेलों में, हट्टी-दुकानों पर, एक से बढ़कर एक, सुंदर सधी हुई, छरहरे बदनवाली, मुष्टीग्राह्या मनोरम चिलमें बिकती थीं। चिलमों के शौकीन मित्रों को, स्वेच्छा से अथवा कभी माँग/डिमांड पर, उपहार-स्वरूप एक-से-एक बढ़िया चिलमें भेंट करते थे। मैंने पिताजी को अपने चिलम-भाइयों के साथ नई-नई किस्म की चिलमों की खासियतें बखान करते सुना है। इन चिलम भाइयों में आस-पास के तीन-चार गाँवों के चार-पाँच पंडित, एक दंत चिकित्सक, एक राखा और एक गुजर चुके पंडित का बड़ा बेटा होते थे। पर ऐसा भी नहीं है कि ये सदा भाँग की ही चर्चा करते थे। ये समाज के बनते-बिगड़ते रिवाजों, पंडिताई की अच्छाइयों-बुराइयों, इस-उस साल फसल कैसी रही, बारिश कैसी हुई, धौलाधार पर बर्फ कितनी पड़ी तथा इस साल भयंकर ठंड, गरमी, बाढ़ और बाघों ने कितनों को अपना-अपना आहार बना लिया, इस पर भी बतियाते थे। यह पंडित मंडली पढ़ी-लिखी होने के साथ-साथ व्यवहार-कुशल भी थी। इलाके में इसका मान था। चिलम-मंडली के इकट्ठा हो जाने पर तब मेरा काम गाँजा भरी चिलम पर सलीके से अंगार जमाना होता था। रोज चिलमें भर-भर के मैं तब इस काम में एक्सपर्ट हो गया था। छोटी टोपीवाली, अँगुली जितनी पतली चिलम पर अंगार धरना आसान नहीं। तब पिताजी के पास कुछ तर्जनी जितनी, कुछ अंगुष्ठ जितनी, कुछ मुट्टायित एवं कुछ पतली तथा कुछ कई रंगों में चित्रित चिलमें होती थीं। एक बार होली के दिनों में मेले से मैं भी एक सुंदर-सी चिलम पिताजी के लिए लाया था, जिसका मौका लगने पर वे कभी उल्लेख करना नहीं भूलते थे। पिताजी की 'कमरी' में एक चिलम, थोड़ा गाँजा तथा एक-आध मली हुई भाँग की सदा रहती थी। कई-कई साधुओं की चिलमों पर का जालीनुमा खोल चढ़ा होता था। साधु केवल गाँजा-सुल्फा ही अपितु वे इन चिलमों में चरस, अफीम, पोस्त तथा तंबाकू आदि पीते थे। पिताजी की साधुओं/अर्द्धसाधुओं से खूब छनती थी। इन का डेरा कहीं हो, पिताजी को उसका पता होता था। पिताजी इन पर भी करते थे। एक बार मैंने हँसी-हँसी में—नारि मुई गृह संपति नासी, मुँड़ाय भए संन्यासी, यह तुलसीदासजी की चौपाई क्या कह दी, मुझ पर नाराज ही हो गए। कहने लगे गृह-त्याग पूरे सांसारिक मोह त्याग है। यह आसान नहीं। भगवे का स्वीकार सारी आसक्तियों का है।

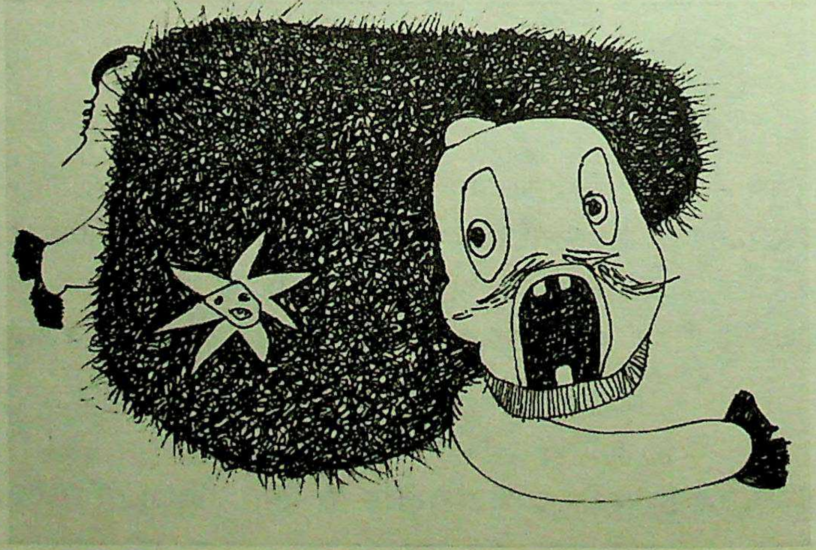

अमलियों को चिलम देखते ही सरूर आ जाता है। तब उनके पर अकारण हँसी और आँखों में सकारण खुमार भर जाता है। भाँग उसकी बिरादरी के नशों का सेवन करनेवाले खूब हँसते हैं। इन आदी ऊँघते भी हैं और ऊँघते-ऊँघते ही सो जाते हैं। जबकि इनके शराबी अपनी धौंस जमाना नहीं भूलते। वे अपनी सीमा से बढ़कर हैं। एक सींखचू पहलवान भी अपने से ताकतवर से पंगा ले लेता है, भले ही उसका अंजाम जो भी निकले।

चिलम-पियक्कड़ वैसे तो दुनियावी बातों पर भी अपनी राय हैं, परंतु जब भोले बाबा की बूटी अपना असर दिखाती है तब वे न किन-किन रिश्तों और किन- ज्ञान गोष्ठियों से स्वयं को लेते हैं। सूटा खेंचकर जब वे लगते हैं तब उनकी गप्पें कई- छोरों में घूमने लगती हैं। इधर, साधुओं के इन्हीं सुट्टों को देख ही एक फिल्मवाले ने 'दम दम' एक गाना ही अपनी फिट कर दिया था। वहाँ उसने अल्हड़ छोकरियाँ नीम बेहोशी हालत मे नचा दीं। भाँग कभी कोई भंगड़, योगियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भभूत की तारीफ करते नहीं थकता तो कोई इसकी किस्मों और उसके असर को कश खेंच-खेंचकर बखानता है। नशा जब अपने पूरे सरूर पर होता है तब तो वे महाबूटीनाथ के बगीचे तक जा पहुँचते हैं। मैंने एक साधु को नशे में धुत होकर अपनी मंडली में शेखी बघारते हुए सुना है कि 'गुरुजी' दीदी पार्वती तो अपने ही गाँव की थीं। उनकी कई सहेलियाँ रिश्ते में हमारी बुआएँ, मासियाँ, मामियाँ, चाचियाँ आदि हुई हैं। कभी इच्छा हो तो चले चलेंगे गाँव। और सुना है, जँवाई राजा के यहाँ तो मीलों-मील एक-से-एक उम्दा किस्म के अमरबूटी के उद्यानों के उद्यान हैं, जहाँ कितने ही प्रबंधन में दक्ष मैनेजर आदि रखे हुए हैं। हमारे जँवाई राजा के उद्यानों की 'विजया भवानी' उत्तमोत्तम चाय पत्ती के ब्रांडों की तरह राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय व्यापार मेलों में हाथोंहाथ बिकती है।

पर ऐसा भी नहीं है कि भाँग का नशा आदमी को सदा हाशिए पर ही दौड़ाता है। यह आदमी की सुरती को केंद्रित भी करता है। आदमी, स्वयं में मग्न होकर चिंतनशील भी हो उठता है। आपने बनारस के गोधूलिका चौक में चारमगज, पोस्त, बादाम, केसर मिली भाँग की ठंडाई पी हो तो उसके धीमे-धीमे नशे और मंद-मंद स्मित को आप भूले नहीं होंगे। बनारस की ठंडाई का आलम ही निराला है। वैसे एक शिवरात्रि के अवसर पर पिताजी ने इसी बूटी की, खोए-बादाम-नारियल आदि को गाय के घी में पकाकर पाव के करीब गोलियाँ, घर से सरदी की छुट्टियाँ काटकर लौटते समय थमा दी थीं, ताकि समय-समय पर दवाई के रूप में प्रयोग करते रहने से एक तो वातादि से मुक्ति रहेगी और दूसरे दिमागी स्फूर्ति भी रहेगी।

अब यह अभ्यास बाबाओं/धूर्जटियों के डेरों, साधुओं की मंडलियों तथा अवधूतों के अखाड़ों से निकलकर राजनीति में पसर गया है। आज राजनीति में चिलम-भराई सबसे कारगर अस्त्र है। यहाँ हर छोटा नेता बड़े नाता की चिलम भर रहा है और बड़ा नेता अपने से बड़े नेता की। सब देश की मलाई को गाँजे में मिला-मिलाकर पी रहे हैं। सारी नैतिकताएँ, सारे सन्मूल्य, समस्त शील व मर्यादाएँ चिलम में धुआँ-धुआँ हो रही हैं। राष्ट्र के नाम पर सारे जिम्मेदार निर्मोही होकर चिलम फूँकने में व्यस्त हैं और राष्ट्र इन तमाम तरह के चिलमबाजों से मुक्ति के प्रयत्न में।

भले ही यह चिलम-भराई गाँवों, कस्बों, देसी बाबाओं के डेरों एवं बड़े-बड़े महंतों के अखाड़ों में ही होती थी; किंतु इसके साथ तब गाँवों में ताऊ, दाऊ एवं दादा आदि हुक्का भी गुड़गुड़ाते थे। उस समय घरों-चौपालों में बड़े-बड़े हुक्के होते थे, जिनकी चिलमें आधा-आधा छटाँक तंबाकू खपा जाती थीं और पूरी महफिल को अपने दम पर नचाती थीं। घरों में सुबह-सुबह पत्नियाँ, लड़कियाँ, बहुएँ तथा नौकरादि पीतल अथवा काँसे, कुट्ट के बने हुक्कों के गड़वीनुमा गोल आधार को माँजते थे, उनका पानी बदलते और नड़ी/नली में पतली सलाई फेरकर उन्हें साफ करते थे। प्रसंगवश बता दूँ कि तब इन बड़े हुक्कों के समानांतर छोटे हुक्के, जिन्हें कली, कलू अथवा नरेलू कहते थे, भी प्रचलन में थे, जो केवल अपनी या छोटी जरूरत के समय अथवा खेतों की बुआई, निराई, गुड़ाई आदि के वक्त काम आते थे। इन काँसे, कुट्ट, पीतल, नारियल तथा मिट्टी के आधारवाले हुक्कों का प्रयोग लोग अपनी-अपनी हैसियत और सामर्थ्यानुसार करते थे। जिसकी जितनी लंबी नली उसका उतना बड़ा ठसका।

साधु समुदाय में चिलम-भराई साधु से महात्मा बनने की ट्रेनिंग का एक हिस्सा होती हैं। ट्रेनिंग के दौरान ये नवमुंडित साधु ही तप-तपकर, गरम चिमटे और बेलिहाज गालियों की मार खा-खाकर सीनियर हो जाने पर महात्मा हो जाते हैं और सधुक्कड़ी परंपरा के अनुसार सूटा खेंचते-खेंचते 'तांडव' रटने लग जाते हैं। बहुत संभव है, 'तांडव' के रचयिता बाबा रावण ने भी इतना विकट/प्रचंड तथा सारे प्रज्ञाचक्रों/प्राणरंध्रों को खोलनेवाला यह महास्तोत्र विजया का कश खेंचकर ही साधा हो। वैसे बिना कोई जामिन लगाए इतनी आश्चर्यकर लौकिक-अलौकिक, आध्यात्मिक, दैवी शक्तियों को जाग्रत् करनेवाली अद्भुत सामर्थ्यशालिनी ध्वनियों का समुच्चय एक साथ आविर्भूत नहीं हो सकता। कहते हैं, चिलम की लौ, ध्वनियाँ आपकी लौ को उस लौ से मिला देती है। कई बार यही लौ साधारण-से-साधारण शब्द-योजक को भी असाधारण कवि बना देती है।

गोरी निकली छप्पड़ विचों न्हा के
सुल्फे ही लाट वरगी।

क्या ये पंक्तियाँ साधारण हैं? नहीं। ये पंक्तियाँ ऐसे ही किसी लौ लगे अभ्यासी की हैं, जो साधारण से असाधारण हो गई हैं। मेरी कामना है कि 'सुल्फे की लाट' यदि ऐसी 'लौ' जगाती/लगाती है तो ऐसी 'लौ' सबको लगे।

तो बात चल रही थी चिलम-भराई की। अब यह अभ्यास बाबाओं/धूर्जटियों के डेरों, साधुओं की मंडलियों तथा अवधूतों के अखाड़ों से निकलकर राजनीति में पसर गया है। आज राजनीति में चिलम-भराई सबसे कारगर अस्त्र है। यहाँ हर छोटा नेता बड़े नाता की चिलम भर रहा है और बड़ा नेता अपने से बड़े नेता की। सब देश की मलाई को गाँजे में मिला-मिलाकर पी रहे हैं। सारी नैतिकताएँ, सारे सन्मूल्य, समस्त शील व मर्यादाएँ चिलम में धुआँ-धुआँ हो रही हैं। राष्ट्र के नाम पर सारे जिम्मेदार निर्मोही होकर चिलम फूँकने में व्यस्त हैं और राष्ट्र इन तमाम तरह के चिलमबाजों से मुक्ति के प्रयत्न में।

जी-६, नॉल्सवुड कॉलोनी,
शिमला-१७१००२
(हि.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

नींद क्यों रात भर नहीं आती

● ललन चतुर्वेदी

इन दिनों मैं नींद के बाहर हूँ। निद्रा देवी के रूठने के बाद मनुष्य के चिंतक बनने की संभावना प्रबल हो जाती है। बहरहाल, नींद के बाहर रहने के कारण नींद ही मेरे चिंतन का मूल विषय बन गई है। नींद संबंधी आदतों-व्यवहारों पर शोध-कार्य किया जा सकता है, हुए भी हैं। इस क्षेत्र में काम करके लोग प्रसिद्ध मनोचिकित्सक बन गए हैं। संक्षेप में, इतना जान लेने में कोई बुराई नहीं है कि लोग नींद में सिर्फ सोते नहीं हैं। नींद में लोग रोते हैं, चलते हैं, बोलते हैं, दिल खोलते हैं (सपने देखना क्या है?)। यह भी कह दें कि विभिन्न लोग विभिन्न तरीकों से नींद माँगते हैं। सीमित अनुभव के आधार पर इतना देखता-सुनता रहा हूँ कि माताएँ लोरियाँ सुनाकर, थपकियाँ देकर अपने बच्चे को आसानी से सुला देती हैं। आजकल लोग अपनी मनपसंद, ज्ञानवर्द्धक भद्दे, अश्लील सीरियल देखकर भी नींद माँग लेते हैं। नींद माँगने का अंतिम उपाय नींद की गोलियाँ तो हैं ही, जो खासकर सुख के बोझ से दबे तनावग्रस्त लोगों के लिए नियमित खुराक बन गई हैं। यह बताना कोई जरूरी नहीं कि रोटी की जुगाड़ में दिन भर हाड़तोड़ मेहनत करनेवाले जुगाड़ी राम को नींद कैसे आती है? जेठ की दुपहरी में दिन भर पसीने से मालिक का खेत सींचकर वह एक किलो आटा और एक पाव आलू के साथ आँखों में मन भर नींद साथ लेकर घर लौटता है। मतलब यह कि अलग-अलग लोगों की आँखों में अलग-अलग रास्ते से नींद आती है। यह वृहत् विषय है। इसे छोड़ मैं इसके दूसरे घटक पर प्रकाश डालना चाहता हूँ। मेरी दृष्टि में यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि किसी को नींद कैसे आती है, बल्कि यह है कि किसी की नींद कैसे खुलती है? मुझे यह मालूम नहीं कि आपकी नींद कैसे खुलती है? अगर मुझे यह मालूम हो जाए कि व्यक्ति-विशेष की नींद कैसे खुलती है, तो मैं प्रसिद्ध ज्योतिष-वेत्ता बन जाऊँ और मेरी किस्मत के द्वार खुल जाएँ। आइए, थोड़ा पीछे की ओर लौटें। लंबी छलाँग लगाने के लिए पीछे से दौड़ शुरू करनी पड़ती है। प्राचीन साहित्य के अध्येताओं को मालूम थी कि राजाओं की नींद तब तक नहीं खुलती थी जब तक चारणों की स्तुति के स्वर उनके कानों में न गूँजने लगें। सूर्योदय के पूर्व से ही राज-दरबार में राजा की जय-जयकार होने लगती थी। लोगों के अनुसार अब जमाना बदल गया है। अब कोई राजा नहीं रहा। अब राजा नहीं रहा तो प्रजा कैसे रहेगी? जहाँ प्रजा वहीं राजा। प्रजाविहीन राज्य या राजा आज तक देखने-सुनने में नहीं आया। तब अपने प्रिय देश में प्रजा तो है ही। इससे आप इनकार नहीं कर सकते, क्योंकि अखिल विश्व का यह दूसरा सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश है। इस हिसाब से यहाँ राजतंत्र के अस्तित्व से इनकार नहीं किया जा सकता। यह भी एक नायाब उदाहरण है—दोनों तंत्र हैं यहाँ। यह निरा तर्क का विषय नहीं है। यह अनुभवगम्य, अनुभवसिद्ध है। जब दो तंत्र हों तो दो पाटों के बीच प्रजा तो पिसेगी ही। कवि बिहारीलाल को याद कीजिए—

दुसह दुराज प्रजानि को क्यों न बढ़े दुख द्वंद।
अधिक अँधेरे जग करत हैं मिलि मानस रवि चंद॥

अभी तक आपने दो तंत्रों की चर्चा देखी-सुनी। जरा गौर फरमाएँ तो यहाँ अनेक तंत्र हैं। मेरी दृष्टि में और मेरी दृष्टि में ही क्यों, हमारे अगुआ अर्थात् नेताओं के विचार से भारतीय लोकतंत्र के लिए यह शुभकारी है। जनता की अपेक्षाएँ इसी व्यवस्था से तो पूरी होंगी। कितने स्तर बने हुए हैं। किसी फोरम में तो उनकी आवाज सुनी जाएगी। पंचायत, जिला, राजधानी, केंद्र स्तर पर अर्थात् कहीं भी अपनी फरियाद लेकर वे पहुँच सकती हैं। अंत में न्यायालय तो अंतिम विकल्प है ही, जिसकी शरण में जाए बगैर शायद ही कोई जनहित का कार्य सफल हो पाए। जनहित याचिकाओं की बढ़ती संख्या पर गौर कीजिए। यह सत्ता के विकेंद्रीकरण का मोहजाल है। भाई! इस जाल में अगर फँस गए तो गलती आपकी है। शिकारी तो जाल बिछाएगा, दाना डालेगा ही। गलती तो फँसनेवाले की होती है।

आप सोचते होंगे, मैं नींद के बाहर हूँ, इसलिए थोड़ा भटक गया हूँ या प्रलाप कर रहा हूँ। नींद तो मेरा मूल विषय है ही। मूल प्रसंग से हटकर मैं आपके मूल्यवान समय को नष्ट नहीं होने दूँगा। मुझे खुद भय है कि आजकल साहित्य के पन्ने को देखते ही पाठकों को नींद आने की शिकायत होने लगती है। शायद उनसे भी ज्यादा संपादकों को आती है, क्योंकि वे जनरुचि का जरूरत से ज्यादा ध्यान रखते हैं। इसलिए निरानंद संपादकगण साहित्य को अखबार-पत्रिकाओं से बाहर कर रहे हैं। बहरहाल, यह निष्कर्ष निकाल लेना कि सारी दुनिया नींद के बाहर है, शायद ठीक नहीं होगा। हाँ, इतना जरूर कहा जा सकता है कि कुछ लोगों की आँखों की नींद अब उड़ने लगी है और इस नींद नामक उड़ती चिड़िया को पकड़ने के लिए लोग साधना-शिविरों में चादर ले-लेकर ध्यान लगाने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

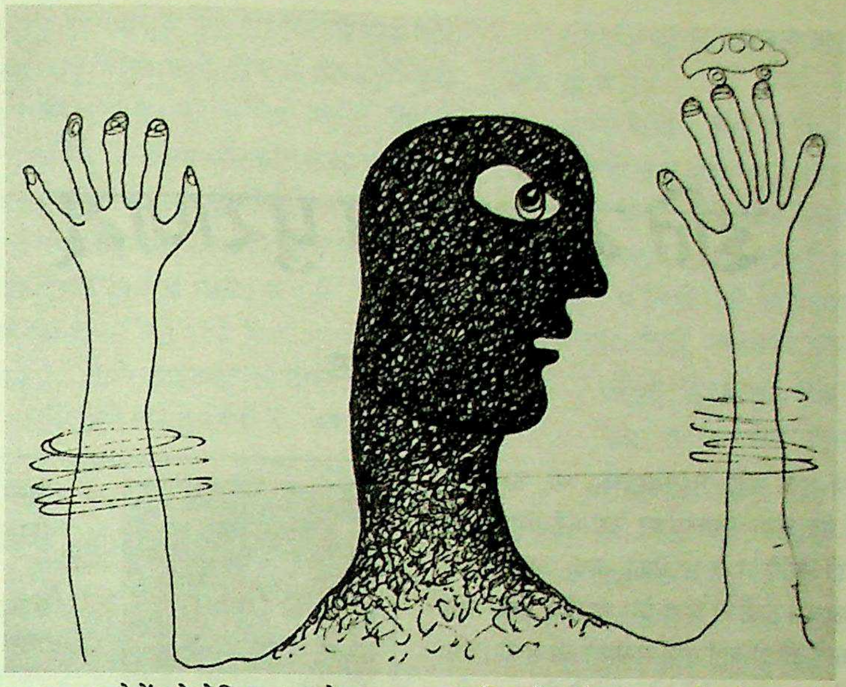

लिए पहुँचने लगे हैं। चैनलों पर धर्म-अध्यात्म की गंगा बहने लगी है। गुरुजनों की चाँदी है और चाँदी ही क्यों, आज की तारीख में सोना-चाँदी सब उनके लिए सुलभ हैं। बड़े-बड़े अरबपति उनके पाँव-तले विनम्रभाव से झुके खड़े हैं। उनकी आँखों से नींद गायब है और उनके लिए बेहद जरूरी सोना है। सोने के लिए शांति चाहिए और सोने के खजाने पर बिछाई गई शय्या उन्हें नींद नहीं दे सकती, बल्कि इससे उनकी नींद हराम हो गई है। इसीलिए इन धन-कुबेरों को देखिए, अहले-सुबह चादर समेटे योग-साधना शिविरों की ओर भागते-दौड़ते चले जा रहे हैं। बड़ी दयनीय स्थिति में जी रहे हैं ये धन-कुबेर भाई! गरीब लोग भी कितने बेरहम हैं! अपनी थोड़ी सी नींद इनको दे देते तो उनका क्या घट जाता? इसीलिए तो इन धन-कुबेरों को गरीबों पर गुस्सा आता है।

इसी प्रसंग में मैंने अपने शहर के स्वनामधन्य प्रतिष्ठित सेठ प्यारेलाल से निवेदन किया—''महोदय! आप निद्रा देवी का कोपभाजन बन चुकने के कारण चिड़चिड़े हो गए हैं। आपके व्यवसाय में भी मंदी का दौर चल रहा है। किसी दरिद्रनारायण से थोड़ी नींद की भीख माँग लें तो आपकी सेहत सुधर जाए।'' सेठजी रुआँसा हो गए। बोले, ''कोई देने को तैयार नहीं होता। क्या करूँ भाई!'' मुझे हँसी आ गई। मैंने भी शरारत भरी मुद्रा में कह दिया—''अंधे भिखारियों के झोले में खोटे सिक्के डालते हो सेठजी! नींद कैसे आएगी?'' प्यारेलालजी कातर मुद्रा में बोले, ''कुछ उपाय करो। मेरी आँखों से नींद उड़ गई है भाई!'' ''बहुत आसान है नींद को बुला लेना। एक इशारे पर निद्रा देवी ठुमकती हुई चली आएँगी। इसी शहर का भिखारी परमसुख नींद का नुस्खा बाँटता है। उससे मिलकर नुस्खा लिखवा लो। मालूम है उसका पता?'' ''नहीं मालूम! मुझे कुछ नहीं मालूम!'' सेठ प्यारेलाल लगभग गिड़गिड़ा पड़े। मुझे दया आ गई। ''तुम देख भी कैसे पाओगे?'' अशर्फियों के ढेर पर गड़ी हुई तुम्हारी आँखों को भिखारियों को देखने की फुरसत ही कब मिली? तुम्हारे ही महल के सामने चौड़ी सड़क के किनारे खुले आकाश के नीचे फटी छतरी की छाया में भिखारी परमसुख बैठता है। उसी की शरण में जाओ। उसके पास नींद का नायाब नुस्खा है।'' सेठ प्यारेलाल तेज कदमों से परमसुख के पास पहुँच गए और उन्होंने उसे अपनी समस्या बताई। भिखारी परमसुख ने जोर से ठहाका लगाया। थोड़ी देर बाद कहा, ''बैठो सेठ! क्षण भर इसी छतरी के नीचे। यह बोधि वृक्ष है। तुम्हें स्वयं नुस्खा मिल जाएगा।'' सेठजी भिखारी की बात सुनकर बहुत विचलित हो गए। बोले, ''ऐसा नहीं हो सकता। मैं इस छतरी के नीचे नहीं बैठ सकता।'' भिखारी अब गंभीर मुद्रा में लौट आया। बोला, ''तुम्हें नींद का नुस्खा कभी नहीं मिल सकता। अहंकार के बोझ से तुम्हारा चित्त उद्विग्न है। धन की चकाचौंध से तुम्हारी आँखें चौंधिया गई हैं। करुणा का एक बूँद गंगाजल भी तुम्हारी इन आँखों में नहीं है। तुम चले जाओ यहाँ से।'' सेठ प्यारेलाल का चेहरा तमतमा गया। वह चिल्ला पड़े—''भिखारी होकर तू मुझे नसीहत देता है। भगवान् ने तुझे हाथ दिया है और भीख माँगकर गुजारा करते हो। मेरी संपत्ति मेहनत की कमाई है।'' भिखारी ने फिर ठहाका लगाया—''आप सोने-चाँदी के ढेर पर आराम फरमाएँ, सेठजी! मैं अपने हिस्से की नींद कैसे दे दूँ आपको? आप अपना गुस्सा अपने पास रखें। कृपा कर चले जाइए यहाँ से। अपनी गद्दी सँभालिए, आपको देर हो रही है।'' भिखारी की यह बात सुनकर सेठ उद्विग्न मन से चलने लगा। उसने भिखारी को कुछ देने के लिए पॉकेट में हाथ लगाया। भिखारी ने सेठ का अभिवादन करते हुए हँसकर कहा, ''इस बार खोटे सिक्के मत डालना बाबा!''

मैं समझता हूँ कि इस सेठ-भिखारी संवाद से आपकी जिज्ञासा शांत नहीं हुई होगी। इससे तो सिर्फ नींद का नुस्खा ही हम हथिया पाए हैं। पते की बात तो अभी बाकी है। इस दुनिया में सिर्फ सेठ और भिखारी ही नहीं हैं। बीच के आदमी की संख्या बेशुमार है और उनकी कसौटी पर जो खरा उतरे, वही सत्य है, मंगलकारी है। वे युग-जमाने के हिसाब से व्यावहारिक हैं, होशियार हैं। उन्हें नींद के बिलकुल बाहर नहीं कहा जा सकता। उन्हें नींद आती है। उनके लिए सुख की कसौटी यह हो सकती है कि उनकी नींद खुलती कैसे है? साथ ही नींद खुलने के तत्क्षण बाद के किन स्थितियों से रू-ब-रू होते हैं। उनके सामने कौन सा पहला सवाल होता है? यह सवाल ही उनकी पूरी दिनचर्या का नियंत्रक होता है। सच है, जितने लोग उतने सवाल और सब पर विचार करना हरक्यूलियन टास्क होगा न! सिर्फ बहुसंख्यक रोमांटिकों का अगर हम खयाल रखें तो कह सकते हैं कि वे सचमुच सुखी हैं, जिनकी नींद अपनी प्रेयसी की चूड़ियों की खनक से खुलती है। बहरहाल, और भी विकल्पों पर विचार करने के लिए आप स्वतंत्र हैं।

सा अ

केंद्रीय तसर अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान
नगड़ी, राँची-८३५३०३
(झारखंड)

CC-0. In Public Domain. Gurukul K

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

इति ग्रन्थालय पुराणम्

● ज्योति व्यास

एक बड़े शहर में एक बड़ा महाविद्यालय था, उस बड़े महाविद्यालय में एक बड़ा ग्रंथालय था, उस बड़े ग्रंथालय में अकसर एक बड़ी 'सॉरी' एक साधिका आया-जाया करती थी। उस साधिका को ग्रंथों से बड़ा प्रेम था। वह जब-जब सांसारिक जालसाजों से ऊब जाती, तो दो बातें ग्रंथों से करने आ जाती। एक दिन उसकी नजर ग्रंथालय में रखे पुस्तकों के नीचे पड़े कचरे के ढेर पर पड़ी। गौर से देखने पर पता चला कि ग्रंथालय में रखे अमूल्य ग्रंथों का यह बुगदा है और न केवल पुराने बल्कि नए-से-नए ग्रंथों को भी मूषक महाराज अपने दिमाग में ही नहीं, बल्कि अपने उदर में सँभालकर रखने के महान् कार्य में लगे हुए हैं। साधिका ने ग्रंथपाल से गुहार लगाई, परंतु उनके संतों जैसे निरामय चेहरे पर कोई विकार उत्पन्न नहीं हुआ। उनके निर्विकार मुखमंडल को देखकर साधिका समझ गई कि इस महात्मा से ग्रंथों की सुरक्षा की उम्मीद नहीं की जा सकती; परंतु यह हालत देखकर साधिका इतनी बेचैन हुई कि वह सीधे संस्था के अध्यक्ष के पास पहुँची और अपनी व्यथा उन्हें सुनाई। अध्यक्ष पुराने जमाने के थे, अब तक गांधीजी को भूले नहीं थे। इसलिए ग्रंथों की कद्र जानते थे। उन्होंने इस विषय को गंभीरता से लिया—आपातकालीन बैठक बुलाई और उस दिन रौद्र-रस में बात करते हुए अपनी आपत्ति दरशाई, तुरंत उपाय करने को कहकर वे प्रस्थान कर गए। साधिका खुश थी, क्योंकि संस्था के अध्यक्ष ने बोलने के बाद सबकुछ ठीक होने का विश्वास उसके हृदय में जागा था।

और एक माह के अंतराल के बाद···

फिर साधिका सांसारिक मोह-माया से त्रस्त होकर ग्रंथालय की शरण में आई। ग्रंथों को निकालने के लिए जैसे ही हाथ बढ़ाया—एक मुषकराज धम्म से उसपर गिरे, साधिका घबरा गई। चारों ओर ग्रंथों का बुरा हाल था—चारों ओर कुतरे हुए पृष्ठों का बुगदा बिखरा हुआ था। नीमबेहोशी में जो ग्रंथ थे, वे साधिका से कह रहे थे—'देखो! हमारी क्या दशा हुई है इन चूहों के मारे! कुछ करती क्यों नहीं?' साधिका से ग्रंथों का दुख देखा नहीं गया और वह कुछ उपाय न होते देख टेंशन में ही वहाँ से निकली। ग्रंथालय में बैठा दुबला-पतला कर्मचारी उसके भाव समझ रहा था। अपने कान में खुजली करते हुए वह इंडायरेक्टली बोला—

पक गई आदतें, बातों से सर होगी नहीं।
कोई हंगामा करो, ऐसे गुजर होगी नहीं॥

जन्म : १५ जनवरी, १९६०।
शिक्षा : एम.ए. (इतिहास, ... बी.एड., एम.फिल., पी-एच.डी।
प्रकाशन : 'मंथन', 'मध्य... अनमोल रत्न', 'समय के ह... *(समीक्षात्मक)*, 'चाँद पिघल रहा ... *(काव्य-संग्रह)* राष्ट्रीय स्तर की प... में शोधालेख, आलेख, ललित निबंध... कविताएँ आदि प्रकाशित।
सदस्य, हिंदी अभ्यास मंडल, संत गाडगे बाबा अमरावती विश्ववि... अमरावती। राष्ट्रीय मंत्री-संरक्षक, अखिल भारतीय विकलांग चेतना ... विलासपुर (म.प्र.)
संप्रति : विभागाध्यक्षा/प्रपाठक स्नात- कोत्तर हिंदी विभाग।

जैसे उसने चाबी भर दी हो, साधिका सीधे प्रधानाचार्य के ... पहुँची। हमेशा जैसी ही वहाँ महफिल जमी थी। माहौल गुलेगुल... साधिका ने बड़ी हिम्मत की और उन्हें ग्रंथालय का हाल बताया। ... अनाहूत लोगों ने चर्चा में सहभाग लिया और इस गंभीर विषय प... मंथन आरंभ हुआ। दूसरे कार्य से आए रजिस्ट्रार भी विषय में रुचि... और चर्चा आरंभ हुई क्योंकि मामला ग्रंथालय का था, इसलिए ग्रं... भी बुलाया गया। वे आए और उसी निर्विकार मुद्रा में मंद-मंद ... हुए बैठ गए। वह मुसकराहट रहस्यमयी थी। सबसे पहले ए... प्राध्यापक बोले, "अपने कॉलेज में कोई गड़बड़ी नहीं है। गड़बड़ी... के स्कूल में! वहाँ बच्चों को खिचड़ी बाँटी जाती है, जो इतनी स्... कि चूहों का आकर्षित होना लाजिमी है। वे वहाँ पेट भर खाते हैं औ... आराम करने हमारे ग्रंथालय में आते हैं। सुस्वादु भोजन के पश्चात् ... जरूरी है, इसलिए ग्रंथों के पान खाते हैं बस! इसलिए सबसे ... खिचड़ी बाँटना ही बंद करवाना चाहिए!"

साधिका ने कहा, "लेकिन सर! यह तो सरकारी शिक्षा-नी... कैसे चैलेंज कर सकते हैं?"

"क्यों नहीं! उपोषण पर बैठो! आंदोलन करो! सरकार ... चाहिए कि 'खिचड़ी बाँटो अभियान' कितना घातक है और दे... चूहों की संख्या कितनी बढ़ रही है। सरकार के ध्यान में कौन ... पूरी बात गौर से सुननेवाले प्रोफेसर सल्लु बोले, 'नहीं-नहीं...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपाय नहीं है! इसका तो भई एक ही उपाय है, तुरंत एक बिल्ली पाली जाए उसे लाइब्रेरी में अच्छे से रखा जाए, उसके खाने-पीने की जिम्मेदारी इसी मैडम को दो, जो शिकायत लेकर आई है। चूहे के लिए बिल्ली, बिल्ली के लिए कुत्ते! इससे हमारा पशु-प्रेम भी बढ़ेगा और कॉलेज का नाम ऊँचा होगा।' तुरत-फुरत में कॉलेज से सबसे सीधे-सादे और ईमानदारी से काम करनेवाले बाहोटी को बुलाया गया और उसे फरमान सुनाया गया—"अरे बाहोटी! एक बिल्ली का बच्चा पकड़कर तो लाना! याद से⋯"

वह बिचारा मिनमिना रहा था—"लो ऽऽऽ ये ऽऽऽऽ लो! अब मैं बिल्ली का बच्चा कहाँ से लाऊँ?"' तीसरे कुछ ज्यादा ही गंभीर होकर बोले, "पर मेरी समझ में नहीं आता कि इतने चूहे हुए क्यों हैं? क्या कारण है? पहले ग्रंथपाल 'जमीर पटेल' थे, तब तो यह बात नहीं थी? अब ऐसा क्या हुआ है, जो इतना उपद्रव मचा है?"

उनके प्रश्न का उत्तर एक विद्वान् ने दिया—"बात साफ है। पटेल साहब एक तो मुसलमान थे। ऊपर से ईमानदार थे, इसलिए गणेश वाहन मूषकराज

"क्यों मैडम! आपको इतनी सी बात भी समझ में नहीं आतीं, जो छोटी सी बात की—शिकायत लेकर पहुँच गई हैं?"
साधिका हकलाते हुए बोली, "सर! ये छोटी सी बात नहीं है! लाखों की पुस्तकें ख़राब हो रही हैं। यह ग्रंथ हमारी अमूल्य धरोहर है।"
रजिस्ट्रार उत्तर देते हुए हिंदी फिलॉसॉफी से प्रभावित होकर बोले, "पानी केरा बुलबुला अस मानुष की जात, मैडम इतना मोह-माया-लोभ ठीक नहीं है। इस संसार में शाश्वत कुछ भी नहीं है।"

उनपर प्रसन्न कैसे होते? पटेल साहब काम चोरी में माहिर नहीं थे। इसलिए दिन भर ग्रंथों की सुरक्षा में रहते थे। एक मुसलमान के होने से मूषकराज ग्रंथालय के आस-पास भी नहीं फटकते थे। अब बात दूसरी है। मौजूदा ग्रंथपाल गणेश-भक्त हैं। इसलिए मूषक भी इनसे अति प्रसन्न हैं। यह तो हमारे लिए गर्व का विषय है। ग्रंथों का क्या? वह तो आनी-जानी बात है।"

तभी एक वरिष्ठ प्रध्यापक डॉ. भागवत बोले, "पर ये हिंदी के ग्रंथों के साथ ही क्यों हो रहा है? ये भी तो हो सकता है कि ये चूहे किसी विशेष राजनैतिक पक्ष के हों, जिसे हिंदी से और हिंदीवालों से चिढ़ हो और वे इस ग्रंथालय से हिंदी का नामोनिशान मिटा देना चाहते हों! वे यहाँ के अथॉरिटी की सहमति से ये सब कर रहे हों! कल तक जिस बिल्डिंग पर 'स्नातकोत्तर हिंदी विभाग' लिखा था, आज वहाँ है क्या? नहीं है क्या कर लिया किसी ने? तो ग्रंथालय में भी हिंदी की पुस्तकें क्यों हों? जो भी हो रहा है, सही हो रहा है। इन हिंदीवालों से तो पूछना ही चाहिए—

'मेरे अँगने में तुम्हारा क्या काम है?'

(जबकि चूहे केवल हिंदी के ही नहीं, अन्य विषयों के ग्रंथों को भी चटोर रहे थे।)

अपनी विशिष्ट शैली के लिए प्रसिद्ध रजिस्ट्रार ने बातचीत का सूत्र अपने हाथ में लिया और बोले, "देखिए, आप लोग समझे नहीं। हिंदी भाषा है ही इतनी मीठी, इतनी प्यारी, इतनी लाजवाब कि चूहे भी इस भाषा के साहित्य के दीवाने हैं। क्या कवि है, क्या शायर है, क्या इनकी लाहौल बला कुवत है, क्या इनकी ये है, क्या इनकी वो है। भई, चूहे दीवाने नहीं होंगे तो क्या होंगे? देखो; एक कवि कहता है—

जिंदगी खूबसूरत—जैसे हरसिंगार के फूल झरे!
अब इससे कोई गिला-शिकवा कैसे करे?

"क्यों मैडम! आपको इतनी सी बात भी समझ में नहीं आती, जो छोटी सी बात की—शिकायत लेकर पहुँच गई हैं?"

साधिका हकलाते हुए बोली, "सर! ये छोटी सी बात नहीं है! लाखों की पुस्तकें खराब हो रही हैं। यह ग्रंथ हमारी अमूल्य धरोहर है।"

रजिस्ट्रार उत्तर देते हुए हिंदी फिलॉसॉफी से प्रभावित होकर बोले, "पानी केरा बुलबुला अस मानुष की जात, मैडम इतना मोह-माया-लोभ ठीक नहीं है। इस संसार में शाश्वत कुछ भी नहीं है।"

ग्रंथपाल के जिगरी दोस्त एक सज्जन बोले, "समझने की बात यह है कि चाहे कोई कुछ भी कर ले। हमारे ग्रंथपाल का बाल भी बाँका नहीं कर सकता!"

प्रो. सल्लु फिर बोल उठे, "इनका बाल बाँका कोई कर भी नहीं सकता, क्योंकि इनके सिर पर तो बाल ही नहीं है।"

पूरे कक्ष में ठहाका गूँज उठा। प्रधानाचार्य जवान थे, कुछ करना भी चाहते थे, परंतु ग्रंथपाल पर वरदहस्त है, यह वह जानते थे। यह हँसी साधिका को पिघले शीशे के समान लगी। एक रिटायर प्राध्यापक पूरे प्रसंग के साक्षी थे। वे साधिका की व्यथा समझ रहे थे। साधिका के साथ वे भी उठकर बाहर आ गए और कहने लगे—"दुःखी मत होइए! कुछ होनेवाला नहीं। नीचे से ऊपर तक सब मेनेज है! क्या आप समझती नहीं कि ग्रंथपाल को यहाँ 'अभयदान' मिला है। वह एक ही कला बहुत अच्छे से जानता है 'सब कुछ मेनेज करना।' इस ग्रंथालय को क्या लेकर बैठी हैं, आज तो पूरे राष्ट्र को ही चूहे कुतर रहे है! कभी भाषा के, कभी प्रांत के, कभी जाति के, कभी धर्म के, ये सारे चूहे जब राष्ट्र को ही कुतर-कुतरकर बुगदा कर रहे हैं, तो एक ग्रंथालय की क्या कथा?"

साधिका भारी कदमों से ग्रंथालय में बचे-खुचे ग्रंथों को लेने पहुँची तो ग्रंथालय का वही दुबला-पतला कर्मचारी दार्शनिक बनकर गा रहा था—

सुखिया सब संसार है, खावै और सोवै।
दुखिया दास कबीर है, जागै और रोवै॥

आज एक नया स्लोगन बनाओ भाई—

'न जागिए, न रोइए'

स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
श्रीमती केशरबाई लाहोटी महाविद्यालय
अमरावती (महाराष्ट्र)

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हास्य-व्यंग्य की श्रेष्ठ पुस्तकें

- सं. काका हाथरसी
  - **श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य एकांकी** 200.00
  - **श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य कहानियाँ** 200.00
  - **श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य कविताएँ** 200.00
- प्रेमकिशोर 'पटाखा'/अशोक अंजुम
  - **श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य गीत** 200.00
- गोपाल चतुर्वेदी
  - **कुरसीपुर का कबीर** 250.00
  - **जुगाड़पुर के जुगाड़** 200.00
  - **भारत और भैंस** 200.00
  - **फार्म हाउस के लोग** 200.00
  - **राम झरोखे बैठ के** 200.00
  - **आदमी और गिद्ध** 200.00
- मनु शर्मा
  - **मुंशी नवनीतलाल** 200.00
- जैमिनी हरियाणवी
  - **बेस्ट ऑफ जैमिनी हरियाणवी** 250.00
- माणिक वर्मा
  - **बेस्ट ऑफ माणिक वर्मा** 250.00
- ओमप्रकाश आदित्य
  - **बेस्ट ऑफ ओमप्रकाश आदित्य** 250.00
- अल्हड़ बीकानेरी
  - **बेस्ट ऑफ अल्हड़ बीकानेरी** 250.00
- हुल्लड़ मुरादाबादी
  - **बेस्ट ऑफ हुल्लड़ मुरादाबादी** 200.00
- अशोक चक्रधर
  - **सोची-समझी** 250.00
  - **चुनी-चुनाई** 250.00
- रवींद्रनाथ त्यागी
  - **गरीब होने के फायदे** 300.00
  - **सिंदबाद की अंतिम यात्रा** 300.00
- श्रीमती सूर्यबाला
  - **धृतराष्ट्र टाइम्स** 200.00
  - **देश सेवा के अखाड़े में** 200.00
  - **भगवान ने कहा था** 175.00
- सुरेंद्र वर्मा
  - **कुरसियाँ हिल रही हैं** 200.00
- रमेशचंद्र महरोत्रा
  - **आड़ी-टेढ़ी बात** 200.00
- दीनानाथ मिश्र
  - **चापलूसी रेखा** 200.00
  - **हर-हर व्यंग्ये** 200.00
  - **पापी वोट के लिए** 200.00
- प्रेम जनमेजय
  - **कौन कुटिल खल कामी** 250.00
- आबिद सुरती
  - **365 चुटकुले** 150.00
- यज्ञ शर्मा
  - **सरकार का घड़ा** 200.00
- आलोक पुराणिक
  - **नेता बनाम आलू** 175.00
- योगेंद्र मौद्गिल
  - **चर्चित व्यंग्य लघुकथाएँ** 200.00
  - **व्यंग्यमेव जयते** 200.00
- ईशान महेश
  - **कंस की आत्मा** 200.00
- ज्योतींद्र ह. दवे
  - **हास्यं शरणं गच्छामि** 200.00
- शिखर चंद्र जैन
  - **उदारीकरण का च्यवनप्राश** 150.00
- विजय अग्रवाल
  - **पी एस स्पीकिंग** 200.00
- अश्विनीकुमार दुबे
  - **फ्रेम से बड़ी तसवीर** 200.00
  - **अपने-अपने लोकतंत्र** 200.00
- रामदेव धुरंधर
  - **कलजुगी करम-धरम** 200.00
- शिवानंद कामडे
  - **कार्टूनों में गांधी** 200.00
- रामेश्वरनाथ तिवारी
  - **मुट्टन काका** 200.00
- रमेश नैयर
  - **साधो जग बौराना** 200.00
  - **बुक ऑफ चारा रिकॉर्ड्स** 250.00
- मनोहर पुरी
  - **लोकतंत्र के पाये** 200.00
- सं. गिरिराजशरण अग्रवाल
  - **शिक्षा व्यवस्था पर व्यंग्य** 200.00
  - **चिकित्सा व्यवस्था पर व्यंग्य** 200.00
  - **पुलिस व्यवस्था पर व्यंग्य** 200.00
  - **न्याय व्यवस्था पर व्यंग्य** 200.00
  - **सामाजिक व्यवस्था पर व्यंग्य** 200.00
  - **कार्यालयीन व्यवस्था पर व्यंग्य** 200.00
  - **राजनीतिक परिवेश पर व्यंग्य** 200.00
  - **पारिवारिक जीवन के व्यंग्य** 200.00
  - **साहित्यिक परिवेश के व्यंग्य** 200.00
  - **मानव चरित्र के व्यंग्य** 200.00
- डॉ. प्रेमचंद स्वर्णकार
  - **मीटिंग चालू आहे** 175.00
- यशवंत कोठारी
  - **नोटम् नमामि** 175.00
- अशोकगुजराती
  - **व्यंग्य के रंग** 200.00
- शिव शर्मा
  - **दुम की दरकार** 200.00
- हरि जोशी
  - **नेता निर्माण उद्योग** 200.00
- विजय कुमार
  - **कुरसी तू बड़भागिनी** 175.00

विस्तृत सूची-पत्र के लिए लिखें—

प्रभात प्रकाशन

ISO 9001 : 2008 प्रकाशक

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-2 ☎ 23289777 ❖ फैक्स : 23253233

इ-मेल : prabhat1@vsnl.com • prabhatbooks@gmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

चोर का जूता

● एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

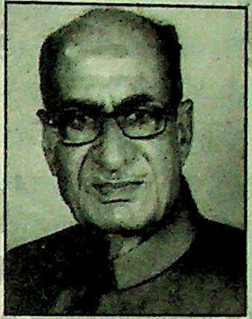

जन्म : ६ मई, १९३६ को आनंद भवन, मुख्य मार्ग पृथ्वीपुर, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.) में।

शिक्षा : स्नातक।

प्रकाशन : 'मोक्ष की राह', 'बद्रीनाथ सहित शिवलोक की यात्रा', 'मैं कौन हूँ' (*काव्य संग्रह*), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (*कहानी संग्रह*) एवं राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टी.वी. पर कार्यक्रमों का प्रसारण।

सम्मान : म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल द्वारा सम्मानित।

संप्रति : म.प्र. शासन में नायब तहसीलदार के पद से सेवानिवृत्त।

जिले के पुलिस अधीक्षक क्राइम मीटिंग ले रहे थे। सभी थाना प्रभारी सहित पुलिस विभाग के जिला अधिकारी उपस्थित थे। मीटिंग में मुख्य समस्या रखी गई कि गोविंद नगर थाना क्षेत्र में बहुत अधिक अपराध हो रहे हैं। संपूर्ण क्षेत्र में अशांति और तबाही का वातावरण निर्मित हो गया है। अपहरण, डकैतियाँ, चोरी की घटनाएँ बढ़ रही हैं। वर्तमान थाना प्रभारी किसी भी वारदात का खुलासा नहीं कर पा रहे हैं।

पुलिस कप्तान ने पूछा कि कोई इंस्पेक्टर ऐसा है, जो क्षेत्र में शांति स्थापित कर सके? कुछ समय के लिए सन्नाटा रहा। कोई कुछ नहीं बोला था। पुन: कप्तान ने कहा, जो तैयार है, अपना हाथ ऊपर करो।

सज्जन सिंह निरीक्षक ने अपना हाथ ऊपर उठाया और खड़े हो गए। साहब को सैल्यूट किया, फिर कहा—सर, आपका आदेश जिसके लिए होगा वही सक्षम हो जाएगा। बस आपकी कृपा और आदेश चाहिए। आपके निर्देशन में तीन माह के अंदर शांति स्थापित हो जाएगी।

वहीं पर स्टेनो ने ऑर्डर टाइप कर साहब के हस्ताक्षर कराए और सज्जन सिंह को तामील कराया। सज्जन सिंह बहुत ही तेज-तर्रार और चतुर पुलिस अधिकारी थे, जिसके कारण उनका नाम क्षेत्र में सबकी जबान पर रहता था। जब उनकी पोस्टिंग की खबर क्षेत्र में पहुँची तो अपराधियों में हड़कंप मच गया था। अब चोर-बदमाश एकत्रित होकर बाहुबली नेता अपराधियों के जनक भाई रामसिंह के यहाँ पहुँचे। वहाँ विचार मंथन हुआ। भाईजी ने कहा कि अगर सज्जन सिंह यहाँ जम गया तो नेतागीरी चल नहीं पाएगी। वह सभी झंझट स्वयं ही निपटा लेता है। और जब तक थाना तहसील में जनता का काम अटके नहीं तो नेता या कार्यकर्ता के पास कोई क्यों आएगा? लेकिन तुम लोग चिंता मत करो, उसे ऐसा उलझाएँगे कि सब होशियारी धरी-की-धरी रह जाएगी। संपूर्ण क्षेत्र की जनता को उसके विरोध में खड़ा कर देंगे।

क्योंकि सज्जन सिंह उसका नाम था और जिस थाने में वह पदस्थ होता था, लोग उसे दुर्जन सिंह के नाम से ही संबोधित करते थे। वह छह फीट का लंबा-तगड़ा जवान, जिसकी तोंद बाहर निकली अड़तालीस इंच का घेरा था। उसके चेहरे पर बड़ी-बड़ी मूँछें, आँखें कैरे रंग की पीली-पीली जैसे काँसा और पीतल धातु से बनी गोलियाँ हों। वह अपना रंग बदलने में बहुत कुशल था। जब अपने अधिकारी से बात करता तो 'श्रीमान, जी, हुजूर, जी हाँ, जी हाँ' करता था। उसकी दोनों मूँछें अपने आप नीचे झुक जाती थीं जैसे थाली के पास बैठी बिल्ली म्याऊँ-म्याऊँ करती है और अपनी पलकें झुका लेती है। मूँछों के बाल नीचे की ओर झुक जाते हैं। किंतु जब बिल्ली चूहे का शिकार करती है तो उसकी मूँछें ऊपर की ओर खड़ी हो जाती हैं और आँखें भयावनी अंगारे जैसी लगती हैं। दाँत निकालकर झपटती है। तब लोग कहते हैं कि बिल्ली शेर की मौसी माँ है। इसी प्रकार सज्जन सिंह अपनी स्थिति क्षण भर में बदल लिया करते थे। थाने के अंदर बैठे लोगों पर ऐसे ही टूट पड़ते, सभी पिछली जान-पहचान भूल जाते थे।

चोर-बदमाश सब एकत्रित हुए और सभी ने मिलकर यह फैसला किया कि सज्जन सिंह के क्षेत्र से बाहर ही अपराध वारदातें की जाएँ। योजना के अनुसार कार्य संपादन होने लगा था। बाहरी क्षेत्र से लूटकर लाते और गोविंद नगर क्षेत्र में बैठकर खाते थे।

सज्जन सिंह ने थाने के कार्यालय के बाहर एक सुंदर बोर्ड बनवा

CC-0. In Public Domain. Guruk...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर टँगवा दिया था, जिस पर यह लिखा था कि—

"अपने घर में अब कोई न डालो ताले,
हर वक्त सुरक्षा में तत्पर हैं पुलिस वाले।"

अब इलाके में सब ओर शांति थी। महीना-दो महीना व्यतीत हो गए। किसी अखबार में दरोगाजी का नाम नहीं छपता था। और थाने का संपूर्ण स्टाफ मुफ्त की चाय को तरस गया था। सज्जन सिंह वेतन के पैसे से साग-सब्जी, जूते, कपड़े, सामान खरीदने को विवश थे। तो उनकी पत्नी ने कहा—भाड़ में जाए ऐसी बहादुरी दिखाना कि कोई एक रुपए की कीमत न करे। सज्जन सिंह ने अपने माथे पर हाथ रखते हुए कहा कि सभी बदमाशों ने अपराध न करने की यूनियन बना ली है, ताकि इस थाने में पदस्थ थानेदार मुफ्त की कमाई को तरस जावे। और जो ऊपर के अधिकारी भ्रमण पर आते हैं, सभी तो मुफ्तखोर हैं, कोई एक पैसा भी बिल का नहीं चुकाते हैं। इनके ठहरने और खाने का संपूर्ण बिल पुलिस का टी.आई. और राजस्व के अधिकारियों का तहसीलदार व नायब तहसीलदार भुगतान करते हैं। अगर ऊपर से पैसा नहीं आए तो वेतन से ही तो करना पड़ता है। चाहे बाल-बच्चे भूखों मरें, उनको इससे क्या फर्क पड़ता है। बस उनके मन मुताबिक खाने-पीने की व्यवस्था होनी चाहिए। लेकिन चिंता नहीं, अवसर मिलने पर सब घाटा हम पूरा कर लेंगे।

गोविंद नगर क्षेत्र में जिला स्तर के नेता भाई रामसिंह, जो पिछला चुनाव हार चुके थे, किंतु इस पराजय को वह चुनावी अनुभव मान रहे थे। पिछले चुनाव में विरोधियों ने दीवारों पर लिख दिया था और पर्चे भी छपवाकर बाँट दिए थे।

"राम नहीं, यह रावण है। सिंह नहीं, यह गीदड़ है। भाई नहीं, यह दुश्मन है।" लिखे हुए वाक्यों की महिमा से वह परिचित थे। क्योंकि इसी दुष्प्रचार के कारण वह चुनाव में पराजित हो गए थे।

एक दिवस भाईजी दरोगाजी से मिलने थाना गए। वहाँ जब थाने का वह बोर्ड लिखा देखा तो वह मन-ही-मन दर्द झेल रहे थे कि इसने तो संपूर्ण राजनीतिक क्षेत्र चौपट कर दिया है। ऊपर नकली मुसकान बिखेरते हुए मिले तो मन में तो सज्जन सिंह भी अश्लील गालियाँ दे रहा था और नकली हँसी हँसकर कहा, अरे कोई है। दीवानजी, जरा चाय-नाश्ता मँगाइए, भाईजी आए हैं।

इधर-उधर की बातें होती रही, वैसे दोनों आपस में एक-दूसरे के मित्र थे। और दुश्मन भी कौन किसको चित करता है? भाईजी का सबसे बड़ा शत्रु एक स्थानीय अध्यापक था, जिसने चुनाव में पराजित कराने हेतु भूमिका निर्वाह की थी। भाईजी ने मास्टर के विरुद्ध शिकायतें दरोगाजी को सुनाई और अपने पक्ष में सहयोग करने के लिए दरोगाजी से निवेदन किया। चाय-नाश्ता हुआ, फिर वापस वह अपने निवास चले गए थे।

दूसरे दिवस एक व्यक्ति आया और उसने कहा कि मुझे मास्टर ने मारा-पीटा है और गालियाँ दी हैं। लाठी-डंडों से पीट-पीटकर लहूलुहान कर दिया है। रोने चिल्लाने लगा। दरोगाजी ने कहा, "तुम्हारा नाम क्या है?" उसने कहा, "धर्मदास।" "ठीक है धर्मदास, तुम धर्म के सा[थ] सही लिखकर आवेदन लाओ।" धर्मदास ने जो कहा था वह लिखकर दे दिया। दरोगा ने कहा, "लाठी-डंडों के निशान और चोटें दिखाओ।" देखकर उससे बोला, "भाई धर्मदास, चोट के निशान तो नहीं दिख रहे हैं, जो तुमने आवेदन में लिखे हैं।"

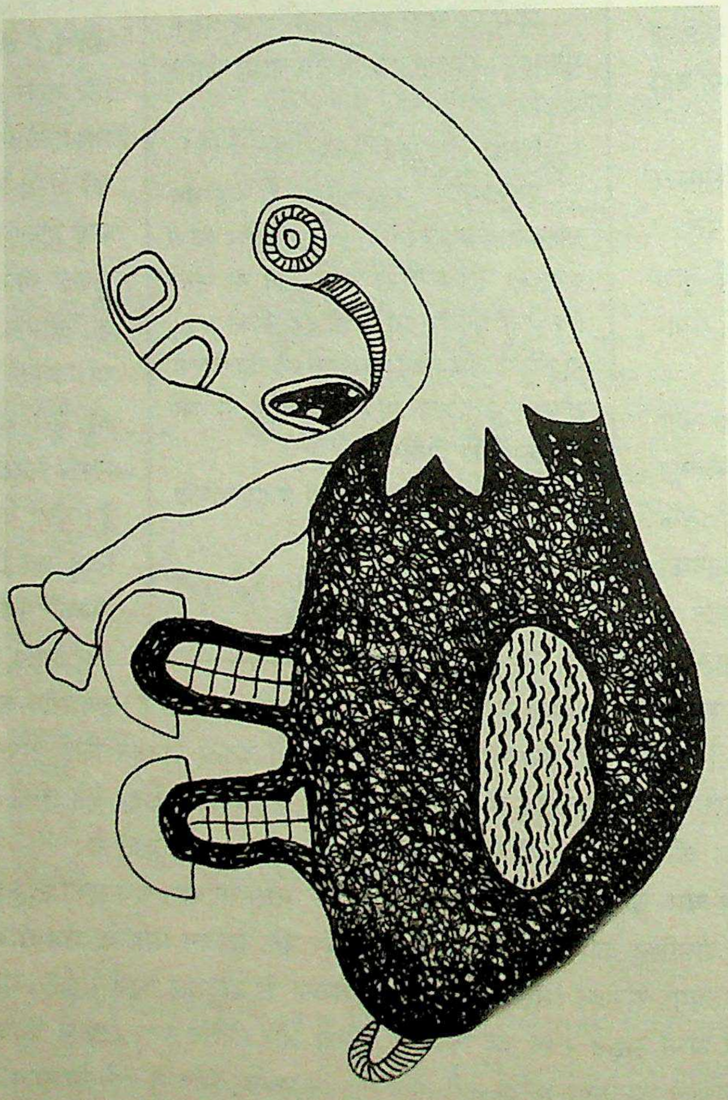

इसी समय भाईजी का फोन आया—दरोगाजी, मास्टर अच्छा फँसने वाला है। धर्मदास को बहुत चोटें आई हैं। वह तो मरते-मरते बचा है। जरा मजबूत केस बनाना है। उन्होंने कहा ठीक है।

दरोगाजी ने दीवानजी को बुलाया और कहा, "हेड साहब, इसके आवेदन को पढ़ लो और इसमें लिखा है, वह सब ठीक करो, फिर डॉक्टरी करवा दो। इसके बाद मेरे सामने पेश करना।" दीवानजी ने कहा, "जी सर।" और धर्मदास को अंदर लेकर चले गए। थोड़ी देर में रोने-चिल्लाने की आवाजें आने लगीं। बस, एक घंटे बाद आरक्षक धर्मदास को लेकर आया तो वह बेहाल था। उसके कपड़े फटे थे, शरीर से खून बह रहा था। शरीर पर लाठियों-डंडों के निशान थे। "हुजूर..." दरोगा के पैरों पर गिर पड़ा, "हुजूर, बहुत मारा है थाने के अंदर दीवानजी ने।" दरोगा ने कहा, "किसने मारा..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोच ले। ठीक से अगर केस मजबूत बनवाना है तो फिर सोच, किसने मारा है।'' धर्मदास बोला, ''मास्टर ने मारा है।'' ''हाँ, अब ठीक है। जाओ, इसकी डॉक्टरी कराओ।'' आरक्षक धर्मदास को लेकर डॉक्टर से रिपोर्ट बनवा लाया और मास्टरजी के विरुद्ध प्रकरण तैयार हो गया।

धर्मदास कुटा-पिटा भाईजी के पास पहुँचा और चीखकर बोला, ''भाईजी, आपने मेरी हड्डी-पसली तुड़वा दी उस जल्लाद से। अरे वह थानेदार नहीं, साक्षात् यमराज है। आपने तो कहा था कि मेरी बात हो गई है। और तू जाकर रिपोर्ट लिखाकर आ जाना, लेकिन मेरी जो दुर्गति उसने की है वह बहुत दुःखदायी है।'' और वह बैठकर रोने लगा। भाईजी निरुत्तर हो गए और सबक सिखाने का अवसर देखने लगे।

एक सप्ताह बीता होगा कि थाने के सामने ही सर्राफा बाजार था, जहाँ सोने-चाँदी के जेवरातों की दुकानें थीं। रात्रि में चोरों ने शटर के ताले तोड़कर लाखों का माल चुरा लिया था। पुलिस जाँच करने पहुँच गई। सज्जन सिंह ने सोचा कि थाने के सामने चोरी थानेदार के मुँह पर तमाचा है। चोरों का कोई पता नहीं। घटना-स्थल पर जाँच के समय केवल एक जूता मिला—'चोर का जूता'।

सज्जन सिंह ने उसे थाने के मालखाने में रखवा दिया और पता लगाना प्रारंभ किया। दस दिन निकल जाने के पश्चात् भी बेसुराग। अब भाईजी तो इसी की प्रतीक्षा में थे। जनता को भड़काया। बाजार चौक में आम सभा आयोजित की गई कि थाने के सामने लाखों रुपए की चोरी, अभी तक चोर नहीं पकड़े गए हैं। भाषणबाजी हुई ,थानेदार को हटाने की माँग की गई। सज्जन सिंह ने सोचा कि शेर बनकर यहाँ आए थे, बिल्ली बन कर जाएँगे। यह तो मेरी काबिलियत पर दाग लग रहा है।

पुलिस कप्तान आए, जनता को समझाया, सज्जन सिंह से बात की गई तो उन्होंने दो हफ्ते का समय चाहा। सभा विसर्जित हुई। अब सज्जन सिंह ने दूसरे दिन से ही आस-पास के प्रतिष्ठित लोगों को, खास व्यक्तियों को थाने में बुलाना प्रारंभ किया। जो थाने में आता, उसे अच्छी तरह से बैठाते, चाय पिलाते, नाश्ता कराते और शिकारी चीते की तरह गुर्राने लगते और कहते कि दीवानजी वह चोर का जूता इसके पाँव में पहनाओ। तो उसको पसीना आने लगता। उसके पाँव में जूता डाला, हवालात में बंद कर दिया। लोग अपनी जमीनें तथा जेवरात गिरवी रखते या बेच देते और थानेदार को २० हजार, २५ हजार, ५० हजार, जिससे जैसा सौदा पटता देकर अपनी जान छुड़ाते और कोई अपनी बदनामी दुर्दशा किसी को नहीं सुनाते। लेकिन कहते है कि ऐसी बात छिपती नहीं है। सज्जन सिंह ने खूब कमाई कर ली थी। पीड़ित लोग भाईजी के पास गए और अपनी आपबीती सुनाई। लेकिन भाईजी के दिल में घबराहट होने लगती कि कहीं दरोगा ने मेरे पैर में भी वह जूता पहना दिया तो सबकी नजर में चोर बन जाऊँगा। और एक बार पुलिस के चक्कर में फँस गया तो अदालत में मुजरिम बन जाऊँगा।

भाईजी ने सोचा कि कोई विश्वास नहीं करेगा कि मैं चोर हूँ। क्या डरना है दरोगा से, बस इसकी शिकायत की जाएगी। और लोगों को इकट्ठा कर विरोध प्रदर्शन किया जाएगा कि एक चोर के टूटे-से जूते से इसने लाखों रुपए की कमाई कर ली है। वह जिसके पाँव में जूता पहना देता है, हजारों रुपया देकर छूट पाता है। उसने जनता को अगले दिवस प्रातः थाने का घेराव करने, थानेदार का तबादला कराने का कार्यक्रम बनाया।

रात्रि को भाईजी ने सोचा कि जब राज्य सरकार के मंत्री, पुलिस के शीर्ष अधिकारी जैसे लोग फँस गए और जेल काट रहे हैं। सामान्य सा व्यक्ति उनका मुँह नोंच लेता है।

अगर हम झूठे ही आपराधिक प्रकरण में फँसा दिए गए तो सभी सच मानेंगे। लोगों का क्या है? लोग तो कहने लगते हैं कि पाप का घड़ा भर गया था, सो फूट गया है। अब उस घड़े को किसने देखा है कि कितना पाप उसमें और समा सकता है? उसने अपने पापों का लेखा-जोखा किया तो बहुत लंबी सूची थी, जिसका साक्षी कोई नहीं था। बस साक्षी था, कर्ता वह स्वयं था अथवा जिसे ईश्वर कहते हैं, उससे तो कुछ छिपता ही नहीं है। लोग तो दूसरों की फजीहत देखना चाहते हैं। और कहीं जूता मेरे पैर के नाप का बैठ गया तो चोरी में फँसा देगा। बस, इसी सोच-विचार में भाईजी नींद के आगोश में निद्रामग्न हो गए थे।

थानेदार ने भाईजी को थाने बुलवाया और भाईजी जब कुरसी पर बैठने लगे तो उसने ललकार लगाई—''चोरी करता है और थाने में आकर कुरसी पर बैठता है।'' वह शिकारी बिल्ली की तरह गुर्राया। उसकी दोनों मूँछें ऊपर की ओर फैल गईं। उसने डपटकर कहा, ''दीवानजी, वह चोर का जूता लाओ, इसके पैर में डालो। देखो, यही है चोर।''

भाईजी घबराए उनकी घिग्घी बँध गई। मुँह से कोई शब्द नहीं निकल रहा था। इधर-उधर नजर घुमाई। थाने की कोठरी में वे सब बंद थे, जिन्हें जूता पहनाया गया था। और पास में ही धर्मदास कुटे-पिटे लहूलुहान खड़े आँसू बहा रहे थे।

सज्जन सिंह ने गरजकर कहा, ''दीवानजी, मालखाने से चोर का जूता लाओ, इसे पहनाओ और मेरा बेंत भी लाओ।''

भाईजी जोर से चिल्लाए, ''नहीं-नहीं, मैं नहीं पहनूँगा।'' और नींद से जागकर पलंग पर बैठ गए। घबराए हुए थे, शरीर काँप रहा था। पत्नी ने कहा—क्या नहीं पहनेंगे आप? भाईजी बोले चोर का जूता। भाईजी इतने घबरा गए थे कि उन्हें अब भी विश्वास नहीं हो रहा था कि वह स्वप्न देख रहे थे। उन्हें अपना घर भी थाना जैसा प्रतीत हो रहा था। थोड़ी देर में होश सँभालकर पत्नी से बोले, ''अरे, इस सज्जन सिंह थानेदार की क्या हिम्मत है कि मुझे पहनाएगा चोर का जूता!''

मिश्रा मार्केट, मेन रोड
पृथ्वीपुर, जिला-टीकमगढ़-४७२३३६
(म.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

संशोधन आयोग

● प्रवीण कुमार थपलियाल

लेखक परिचय

जन्म : सन् १९५४, देहरादून।

शिक्षा : भौतिकी व हिंदी साहित्य में स्नातकोत्तर।

कृतित्व : पत्र-पत्रिकाओं में लेख, व्यंग्य व कहानियाँ प्रकाशित।

संप्रति : ओ.एन.जी.सी. मुख्यालय में मुख्य प्रबंधक।

आजादी के बाद नया संविधान लागू तो हुआ, पर उसमें कई संशोधन हो चुके थे और होते ही जा रहे थे। देश का बोझ कंधों पर उठाए नेता सोचने लगे, 'अगर इसी रफ्तार से संशोधन होते रहे तो संविधान से ज्यादा तो संशोधन हो जाएँगे। कोई-न-कोई तरकीब निकालनी ही होगी।'

आला कमान ने सर्वदलीय सम्मेलन बुलाया। हर दल ने अपनी राय दी। सबका यही कहना था कि वक्त के हिसाब से मौजूदा संविधान पुराना पड़ चुका है। इसे बदल देना चाहिए। अगर बदलना मुश्किल हो तो आयोग गठित करना चाहिए, जो एक बार में ही सारे संशोधन पेश कर दे।

बात सबको जँच गई। आयोग गठित हो गया। चार साल में आयोग ने रिपोर्ट पेश कर दी। चार साल इसलिए लगे, क्योंकि आयोग को कई देशों में जाना पड़ा, वहाँ के संविधानों का अध्ययन करना पड़ा। यह कोई छोटा-मोटा काम न था। बेहिसाब हवाई यात्राएँ करना, तमाम मुल्कों के लग्जरी होटलों में महीनों ठहरना, नित नए लजीज पकवान मन मारकर खाना, बेहतरीन पिकनिक स्थलों में इच्छा न होते हुए भी घूमना! आत्मा की आवाज दबाकर भत्ते लेना। संविधान विशेषज्ञों से मूड न होते हुए भी मिलना, थके हुए प्रेजेंटेशन झेलना, जबरदस्ती सवाल पूछना, किसी तरह नींद रोककर नीरस व उबाऊ लेक्चर सुनना—कितने तकलीफ का काम था!

मगर सवाल देश का था! अगर प्राइवेट होटलों को बचाने में हमारे कमांडो जान गँवा सकते हैं, नकली बुलेटप्रूफ जैकेटें पहने पुलिस अफसर आतंकवादियों की गोलियों से छलनी हो सकते हैं तो यह छोटी सी कुरबानी आयोग के सदस्य कैसे न कर पाते! सारी जहालत उन्होंने देश के नाम पर खुशी-खुशी झेली।

चार साल की मशक्कत के बाद जो दस्तावेज तैयार हुआ, उसे बड़ी हिफाजत से रखा गया था, पर उसकी कॉ[illegible] उसी तरह मिल गई जैसे रेलवे परीक्षा के [illegible] पहले ही बाहर आकर लाख-लाख रुपए में [illegible] जाते हैं। दस्तावेज में एक अध्याय सिफारि[illegible] था। आयोग ने दावा किया था कि इन सिफ[illegible] पर अमल किया गया तो भविष्य में कभी सं[illegible] संशोधन की जरूरत नहीं पड़ेगी। सिफारिशें [illegible] में इस प्रकार थीं—

१. किसी भी देश की सबसे ज्यादा क्रि[illegible] पावर होती है—युवा पीढ़ी। इसे सत्ता से दूर रखने के लिए निम्नलि[illegible] उपाय करने जरूरी हैं—

(क) इन्हें रोजी-रोटी में बुरी तरह जकड़कर रखा जाए।

(ख) रिजर्वेशन के जरिए इन्हें संगठित न होने दिया जाए।

(ग) इन्हें पब संस्कृति में ढाला जाए, ताकि ये पीकर मस्त रहें, [illegible] फ्रैंड्स के साथ घूमें-फिरें, सपनों की दुनिया में खोए रहें [illegible] अनुभव के दलदल में आकंठ डूबें तथा अन्य लोकों की या[illegible] लिए तैयार बैठे मरणासन्न नेता सत्ता की बागडोर अपने तजुर्[illegible] हाथों में उसी तरह सँभाले रहें, जिस तरह वे आज तक सँभा[illegible] रहे हैं।

(घ) युवाओं को सेनाओं में बाँट दिया जाए, ताकि ये सेनाएँ आ[illegible] घमासान युद्ध करती रहें तथा सत्ता में भागीदारी करने का [illegible] विचार इनके दिमाग में न आ सके।

(ङ) काले पैसे का प्रवेश चुनावों में अनिवार्य कर दिया जाए, ताकि [illegible] को ईमानदार बतानेवाले लोग चुनाव लड़ने की सोच ही न [illegible] दूसरे, समाज में काले पैसे की प्रतिष्ठा स्थापित हो सके। लो[illegible] से कह सकें। हमारे पास ब्लैक मनी है।

२. देश में सिर्फ दो कानून हों—एक अमीरों का और दूसरा [illegible] बकरियों का। अमीर चाहे जितनी लूटमार मचाए, उसे कभी सजा [illegible] गरीब अगर सुई भी चुराए तो उसे बुरी तरह पीटा जाए। जेल में ही [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देकर मार दिया जाए, ताकि कोई दूसरा गरीब सुई चुराने की भी हिम्मत न कर सके। अमीरों की लाख गलतियाँ भी न देखी जाएँ। अगर लोक-लाज से देखनी ही पड़े तो गिरफ्तार न किया जाए। करना भी पड़े तो निजी मुचलके पर फौरन छुड़वा लिया जाए। मान लो, सबूत भी खिलाफ हों तो रिमांड पर लिया जाए, पर सजा न हो। अगर सजा देनी ही पड़े तो कोर्ट के थ्रू उसे सारी सुविधाएँ जेल के भीतर ही मुहैया कराई जाएँ। तभी जनता में संदेश जा सकेगा कि एक ही देश में दो कानून लागू करने में सरकार कितनी कामयाब रही है।

३. अविश्वास प्रस्ताव के दौरान अगर सरकार गिरने का खतरा हो तो दूसरी पार्टियों के सांसदों को अंतरात्मा की आवाज पर वोटिंग करने का अधिकार दिया जाए और दैव की इच्छा मानते हुए राष्ट्रहित में उसे वैध ठहराया जाए। क्रॉस वोटिंग करनेवाले साहसी देशभक्त सांसदों का नागरिक अभिनंदन किया जाए। उन्हें शॉल, श्रीफल और प्रशस्ति-पत्र भेंट किया जाए। सहायता राशि के रूप में कम-से-कम १०-१० करोड़ रुपए का मानदेय भी जरूर दिया जाए।

४. संविधान में 'परिवारवाद' की व्यवस्था हो। राजनीतिक पार्टियाँ किन्हीं परिवारों की जागीरें हों। पार्टियों के सदस्य उन जागीरों के कारिंदे भर हों। अगर किसी कारिंदे को पार्टी प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति बना दे तो वह खुद को सचमुच का प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति न समझने लगे, बल्कि तब भी पार्टी अध्यक्ष के प्रति वफादार बना रहे। अपनी मरजी से संवाददाता सम्मेलन तक न बुलवाए। जहाँ दस्तखत करने को कहा जाए, वहीं करे। अपनी मरजी न चलाए। अपने सुझाव भी न दे। पार्टी अध्यक्ष के हर आदेश का सिर झुकाकर पालन करे।

५. देश की सभी पार्टियाँ इस परिवारवाद के सिद्धांत का कड़ाई से पालन करें। किसी ऐसी पार्टी को ऊपर न उठने दिया जाए, जो किसी 'आइडियोलॉजी' पर आधारित हो।

६. कोई भी संवैधानिक अधिकारी योग्यता से नहीं, बल्कि सत्ताधारी पार्टी के अध्यक्ष की पसंद से चुना जाए। जिस अधिकारी का पिछला रिकॉर्ड हेरा-फेरी, घूसखोरी व घोटाले आदि कारनामों से विभूषित हो, जिसमें रिस्क लेने की क्षमता कूट-कूटकर भरी हो, दुःसाहस की कमी न हो, जो अपनी सीमाएँ लाँघकर कहीं भी जा सकता हो, उसी को मुख्य चुनाव आयुक्त बनाया जाए। किसी डरपोक या सीधे-सादे पप्पू को या फिर ज्यादा पढ़े-लिखे को इस कुरसी पर न बिठाया जाए, क्योंकि ऐन वक्त पर ऐसे आदमी की अंतरात्मा जाग उठती है। वह तत्काल ईमानदार, देशभक्त व धर्मात्मा हो जाता है।

७. सूचना के अधिकार से नेताओं, जजों व ब्यूरोक्रेटों को बाहर रखा जाए। उनकी संपत्ति का ब्योरा माँगनेवाले को गैर-जमानती वारंट निकालकर सीधे उठवा लिया जाए, उस पर रासुका लगाई जाए, सश्रम कारावास के साथ दस साल के लिए 'अंदर' किया जाए।

८. धर्म के ठेकेदारों को हवा में जहर घोलने की खुली छूट दी जाए। ऐसा माहौल बनने दिया जाए कि मजहब, जाति व धर्म के नाम पर लोग एक-दूसरे के खून के प्यासे हो जाएँ। दंगे भड़क उठें। जितने ज्यादा लोग मरेंगे उतना ही तंत्र मजबूत होगा।

९. पड़ोसी देशों के साथ दोस्ताना संबंध रखे जाएँ, ताकि जब अपने यहाँ खतरे के बादल दिखाई दें तो पड़ोसी हमला करके कुरसी बचा सके।

१०. ऊपर जितने लोग बैठे हैं, सबके आगे गांधीजी के तीन बंदर रखवा दिए जाएँ। आँखें, मुँह और कान बंद रखने की कसम खाकर ही वे कुरसी पर बैठें। चाहे आग लगे, भूकंप आए, बाढ़ आए, जनता महँगाई की चक्की में पिसती रहे, बेरोजगारी बढ़ती रहे, आतंकवादी निहत्थी जनता को भूनते रहें, रेल दुर्घटनाओं में बेकसूर लोग मरते रहें, हवाई कंपनियाँ ग्राहकों को लूटती रहें, सत्यम घोटाले होते रहें; पर कोई न तो बोले, न देखे और न सुने।

११. ऐसा कानून बने कि न्यूज चैनलवाले नेताओं के स्ट्रिंग ऑपरेशन न कर सकें। नेता को छींक आए, जुकाम हो या फिर वह किसी घोटाले में लिप्त हो तो भी बँगले पर जाकर डिस्टर्ब न करें। इसके बजाय गाँवों में जाएँ। आत्महत्या करते किसानों का सीधा प्रसारण दिखाएँ। बिजली, पानी, सड़क, रोजगार, स्वास्थ्य और शिक्षा के लिए तरसते लोगों का कवरेज लें। सनसनी न फैलाते फिरें। नेता, अभिनेता व क्रिकेटरों के तलुए ही न चाटें।

१२. वेतन आयोग आँखों में धूल झोंकने के लिए बना जरूर था, पर वेतन बढ़ाने न लग जाए। वेतन के लिए हड़ताल करनेवालों को 'देशद्रोही' करार दें। उन पर 'एस्मा' की चाबुक मारें। उन्हें ऐसे कुचलें कि देश सिर्फ नेताओं की जागीर नजर आए। मीडिया को खूँखार कुत्ते की तरह हड़तालियों के पीछे लगा दें। याद रहे—"सरकारी कर्मचारी घोड़े-गधे होते हैं। जितना पीटो उतना काम करते हैं। इनके लिए क्या महँगाई? ये तो चना-चबैना खाकर भी जी लेते हैं। कमीज न हो तो पाँवों से पेट ढकते हैं। नेता या नौकरशाह ऐसा नहीं कर सकते। वे तो देश के मालिक ठहरे! इसीलिए अपने भत्ते बढ़ाने में नेता देर न करें। ध्वनि मत से प्रस्ताव पास करके भत्ते बढ़ा लें, क्योंकि देखिए, महँगाई बढ़ती जा रही है! जजों और नौकरशाहों के लिए भी महँगाई बढ़ रही है। उनका भी ध्यान रखें।"

यह एक दर्जन सिफारिशें 'संशोधन आयोग' के अप्रकाशित ड्राफ्ट से साभार चुराई गई हैं। इनका जनता से सीधा ताल्लुक है, इसलिए इन्हें पाना जनता का अधिकार है। इन्हें चुराकर जारी किए जाने को गोपनीयता कानून का उल्लंघन न माना जाए।

४४, मोहनपुर, प्रेम नगर,
देहरादून-२४८००७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

मानव और मच्छर

● अखिलेश निगम 'अखिल'

आदिकाल से मानव और मच्छर का अटूट संबंध रहा है। दोनों ही एक दूसरे के जानी दुश्मन रहे हैं। मानव को सदैव यह भ्रम रहा है कि संपूर्ण पृथ्वी पर वही सबसे बुद्धिमान प्राणी है, संसार के सभी जीव-जंतु उसके इशारे पर नाचते हैं, उसने धरती, सागर एवं आकाश की ऊँचाई एवं गहराई को भी परास्त कर दिया है, वह चंद्रमा पर पहुँच चुका है और अब मंगल विजय का अभियान चल रहा है। धर्मग्रंथों ने भी बड़ी जोर-शोर से यह प्रतिपादित किया है कि चौरासी लाख योनियों में मानव ही उत्कृष्ट योनि है।

यदि मुझसे पूछा जाए कि इस जगत् का सबसे बुद्धिमान और शक्तिशाली जीव कौन है? तो मैं यही कहूँगा कि मच्छर संसार का सबसे बुद्धिमान और शक्तिशाली जीव है, क्योंकि आज तक मानव मच्छर को परास्त नहीं कर सका है; मानव ने मच्छर-विजय के जितने भी अभियान चलाए हैं, वे सभी भारतीय प्रक्षेपास्त्रों की तरह एक-एक करके ध्वस्त हो गए और मच्छरों ने अनेकानेक अमोघ अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग करके आदमी की जिंदगी दूभर कर दी है। यदि हम इतिहास का अवलोकन करें तो यही पाएँगे कि मनुष्य सदैव मच्छरों से भयभीत रहा है उससे मुक्ति हेतु वह ज्ञान-विज्ञान, धर्म और ईश्वर सभी की शरण में गया, किंतु उसने मच्छरों से बचाव के जितने भी रास्ते ईजाद किए, मच्छरों ने दुगुने वेग से आक्रमण कर मानव व्यूह रचना को बिल्कुल छिन्न-छिन्न कर दिया।

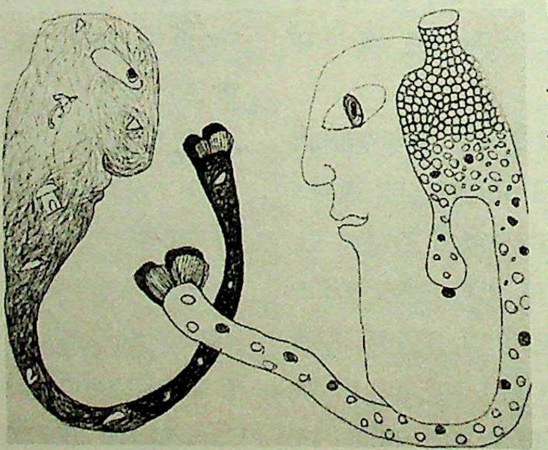

जब मानव आदिम युग में था तो मच्छरों से बचाव हेतु विभिन्न तरीके अपनाता था, तत्समय बचाव का सबसे मुख्य तरीका यह था कि जब उसके दल के सभी सदस्य सो जाते थे तो एक-दो लोग बारी-बारी मच्छरों को उड़ाया करते थे, मच्छरों से बचाव के लिए नियमित रूप से पहरेदारी होती थी। विकास के साथ मच्छरों से छुटकारा पाने के लिए मानव अपने घर के आस-पास धुँआ करने लगा। धुएँ का प्रभाव रहने तक मच्छर उस प्रदूषित स्थान का परित्याग कर देते थे, किंतु जैसे ही धुएँ का प्रदूषण समाप्त होता, मच्छर अपने रक्तपान अभियान में दुगुने वेग से पुन: लग जाते थे। सारी रात इनसान को पंखा झलते बीत-झेलते जाती थी।

मनुष्य ने विकास के साथ मच्छर-वध हेतु डी.डी.टी. पाउडर का आविष्कार किया, किंतु मच्छरों ने शोध करके मलेरिया नामक मानवमार मिसाइल तैयार कर दी, गाँव-के-गाँव साफ होने लगे, आदमी का साहस, उत्साह और जोश की तो बात ही छोड़िये, मलेरिया से आदमी का पूरा शरीर ही ठंडा हो जाता था। इस मिसाइल का ऐसा घातक प्रभाव पड़ा कि भयंकर गरमी में भी आदमी ठंड से मरे। है न कितनी आश्चर्यजनक बात!

मलेरिया से बचाव के लिए मानव में नीम और करेले से भी कड़वी दवा कुनैन की खोज की। वह मन मारकर उसे खाता था और मच्छर आदमी की दुर्दशा पर हँसते थे। अंततोगत्वा मनुष्य ने मच्छरों के सम्मुख अपने हथियार डाल दिए और मच्छरदेव ने दया-भाव दिखलाते हुए यह शर्त रखी कि यदि आप सोते समय हमारी कैद में रहेंगे तब हम तुम्हें बख्श देंगे। मन मानकर मनुष्य ने मच्छरों की इस शर्त को स्वीकार कर लिया और सोते समय अपने लिए एक जैल तैयार किया, जिसे मच्छरदानी कहते हैं। मानव जब मच्छरदानी के अंदर लेटते हैं तो मच्छर अपने बीवी-बच्चों के संग मानव को चिड़ियाघर के जीव-जंतु की तरह देखते हैं, मजाक उड़ाते हैं और संगीतमय गाना गाकर चैलेंज करते हैं कि तुम्हारी सारी प्रगति, विकास, विज्ञान और बुद्धि व्यर्थ है, वृथा ही अहंकार में फूले-फूले घूम रहे हो। हिम्मत है तो मुझसे आकर टकराओ।

कालांतर में मनुष्य ने अपनी शक्ति को संयोजित कर मच्छर मारने के लिए घातक रसायनों की खोज की, जिससे बेगान, फिनिट आदि उत्पादों का मच्छर मारने में प्रयोग किया जाने लगा। मैलाथियान पाउडर के छिड़काव के लिए वृहद स्तर पर फागिंग मशीन का प्रयोग प्रारंभ हुआ, घरों, नाली आदि में फिनाइल एवं अन्य कीटनाशक दवाओं के माध्यम से उसने मच्छरों को एक नई चुनौती दी। इससे एकबारगी मच्छरों का बुरी तरह सफाया होना प्रारंभ हो गया तो मच्छरों ने अपने दूसरे अमोघ मिसाइल इन्सेफ्लाइटिक (मस्तिष्क ज्वर) का आविष्कार करके आदमी की बुद्धि को ही नष्ट करने का अभियान प्रारंभ कर दिया। इन्सेफ्लाइटिस में आदमी के दिमाग में सूजन आ जाती थी। इस मिसाइल की चपेट में बड़े-बड़े बुद्धिमान व्यक्ति बुद्धिहीन होकर काल-कवलित हो गए। इसके बाद मच्छरों ने फाइलेरिया और पीत ज्वर जैसे मनुष्य-भेदी टैंकों का आविष्कार कर मानव को एकदम बौना और बुद्धू सिद्ध कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पराजय से व्यथित होकर मनुष्य ने सोचा कि मच्छरों से सीधे मोर्चा लेना संभव नहीं है। उसने मच्छरों को धोखा देकर जहर देने की रणनीति बनाई, जिसके तहत उन्होंने मच्छर मार जहरीली अगरबत्ती का आविष्कार किया, इस रणनीति के अनुसार पहले मच्छरों को रिझाने के लिए जहरीली अगरबत्ती सुलगाकर उनकी पूजा-आराधना का नाटक किया जाता था, ताकि अधिकाधिक मच्छर आराधना में भाग ले सकें। उसी दौरान जहरीले धुएँ के माध्यम से मच्छर मारने के अभियान का श्रीगणेश हुआ। सर्वप्रथम कछुआ छाप मच्छर अगरबत्ती का प्रयोग हुआ और धोखेबाज आदमी के चक्कर में मच्छर अपने प्राण गँवाने लगे, किंतु शीघ्र ही मनुष्य के इस रहस्य का भंडाफोड़ हुआ, जहरीले धुएँ से निजात पाने हेतु मच्छरों ने प्रभावी टीके की खोज की, जिससे उनकी प्रतिरोधक क्षमता कई गुना बढ़ गई है। आज तेज-से-तेज मच्छरमार क्वायल उनका बाल-बाँका भी नहीं कर पाता है बल्कि आदमी स्वयं उन जहरीली अगरबत्तियों का शिकार होकर नाना प्रकार की व्याधियों से ग्रस्त हो गया है। मनुष्य निर्मित ओडोमास, मार्टिन, आल आउट सभी कुछ निष्प्रभावी हो गया है। नगरपालिकाओं की फागिंग मशीनें भी मच्छरों के सामने असहाय होकर खड़ी हो गई है।

हाल ही में मच्छरों ने शास्त्रीय संगीत पर आधारित एक नए राग चिकनगुनिया की खोज की है इसमें सरगम के सभी स्वर मौजूद हैं, जो व्यक्ति के कानों को ही नहीं बल्कि हड्डियों के हर एक जोड़ या कहें रोम-रोम में ऐसा छा जाता है कि आदमी का हर रोम-रोम एवं हड्डी सप्तम स्वर में 'ओम मच्छर देवाय नमो नमः' का राग अलापने लगती है और आदमी पूर्णरूपेण मच्छर भक्त हो जाता है।

इसी वर्ष मच्छरों का एक सेमिनार हुआ था, जिसमें उनके प्रधानमंत्री एवं राष्ट्रपति द्वारा डेंगू और चिकनगुनिया के आविष्कार एडीज एजिप्टाई को अशांति का सबसे बड़ा नोबल पुरस्कार देकर मैं सम्मानित किया गया है। अभी तक मच्छर केवल गंदे पानी में ही अंडे देकर अपनी वंशवृद्धि करते थे, किंतु एडीज एजिप्टाइ ने साफ पानी में अंडे देने की सफल विधि खोज ली है। इसके साथ ही इन्होंने जनसंख्या वृद्धि में नए-नए फॉर्मूलों को भी ईजाद किया है, जिसके तहत वे एक दिन में एक लाख तक अंडे देकर इनसान के बड़े से बड़े किले को भी ध्वस्त कर सकते हैं।

आज के मच्छर अधिक आदमखोर हो गए हैं उन्हें आदमी का रक्त पहले से कहीं अधिक स्वादिष्ट लगने लगा है। पहले मानव रक्त की बहुत सीमित वैराइटी थी। आज एक से बढ़कर एक मॉडर्न रक्त व्यंजन मच्छरों के लिए उपलब्ध हैं। मिठाइयों में चमचागिरी का चमचम, जुगाड़ की जलेबी, हरामखोरी का हलुआ और रिश्वत का रसगुल्ला एवं इश्क की इमरती की अत्यधिक माँग है। जहाँ शाकाहार में छल कपट का शाही पनीर और घोटाले का पुलाव लोकप्रिय है, वहीं मांसाहार में मिलावट का मटन, अंधविश्वास का कबाब एवं बेईमानी की बिरयानी की मच्छरों में अत्यधिक माँग है। साउथ इंडियन व्यंजन में आजकल दलाली का डोसा खूब चल रहा है, निंदारस की चाय-कॉफी का तो कोई जवाब ही नहीं।

मच्छरों को राह चलती सुंदरियों को छेड़ने में बड़ा मजा आता है। तन पर झीने-झीने अधखुले वस्त्रों के कारण उनकी पौ बारह हैं। वे मनचाहे अंगों से हाट एंड कोल्ड ड्रिंक का भरपूर सेवन करते हैं। सुंदरियों के कोमल अंगों का रक्त उनके लिए बीयर, ब्रांडी और रम का काम करता है जिसके नशे में वे झूमते रहते हैं।

जिस प्रकार देवताओं को सुरापान और इनसान को नशापान की घनघोर आदत है, उसी प्रकार मच्छरों में रक्तपान की आदत है मच्छर समाज में इनसानीरक्त की कई कैटेगरी लोकप्रिय हैं। बड़े-बड़े नेताओं और देश के तथाकथित कर्णधारों का खून सबसे महँगा, पौष्टिक, ताकतवर तथा सर्वगुण-संपन्न माना जाता है। इसमें सभी प्रकार के विटामिन और मिनरल होते हैं।

तत्पश्चात् पूँजीपतियों, मिलावटखोरों, माफियाओं, रिश्वतखोरों एवं भ्रष्ट अधिकारियों के खून की अत्यधिक माँग है। इस रक्त में प्रोटीन, कैल्शियम एवं लौह तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इनके सेवन से चेहरे की लालिमा और मन की कालिमा खूब बढ़ती है।

इसके बाद तृतीय श्रेणी में मध्यम वर्ग के व्यक्तियों का रक्त आता है, जिससे मात्र जीवन-यापन होता है, विटामिन, मिनरल एवं अन्य तत्व बहुत ही सीमित मात्रा में पाए जाते हैं, किंतु जीवन-संचालन में यह बड़ा उपयोगी है।

मच्छर-समाज में गरीब मजदूर, किसान, रिक्शा-ताँगा चालक, भिखारियों और अपाहिजों का रक्त निम्न श्रेणी का माना जाता है उनके शरीर में खून बहुत कम मात्रा में होता है, क्योंकि उनका रक्तपान पहले ही बड़े-बड़े नेताओं, गुंडा, माफिया, व्यापारियों एवं अधिकारियों द्वारा किया जा चुका होता है, उनका शरीर हड्डियों का ढाँचा मात्र होता है। ऐसे लोगों का रक्तपान करने में अनेक मच्छरों के डंक टूट गए, कई घायल और चोटिल हो गए। कई के साथ ऐसी भी दुर्घटना घटी कि उनका ही रक्त उन गरीब असहायों के रक्त में मिल गया और मच्छर एनेमिक होकर मर गए। तब से मच्छर इस श्रेणी का रक्तपान करने से बचते हैं।

आज मच्छर-संस्कृति और धर्म का बड़ी तेजी से विकास हो रहा है। मच्छर सोची-समझी रणनीति एवं सुनियोजित तरीके से मनुष्य का पथभ्रष्ट एवं दिग्भ्रमित कर देते हैं, ताकि वे संपूर्ण प्रकृति पर एकाधिकार कर सकें। आज आदमी ही आदमी का रक्तपान कर रहा है। अनेकानेक अस्त्र-शस्त्रों, विस्फोटकों का आविष्कार कर अपनी ही जाति-प्रजाति को मिटाने में तुला है। सभी एक-दूसरे का शोषण करने में लगे हुए हैं। चोरी, मक्कारी, भ्रष्टाचार, हत्या, आगजनी, बलात्कार आदि जघन्य कार्यों के रूप में मच्छर संस्कृति का चतुर्दिक् प्रचार-प्रसार हो रहा है।

मच्छर धर्म के कारण ही धर्मांतरण का खतरा भी बढ़ गया है। आज का मनुष्य बड़ी तेजी से मच्छर-धर्म ग्रहण कर रहा है। जातिवाद, सांप्रदायिकता, धार्मिक कट्टरता, दंगा-फसाद, अराजकता अपनी चरम सीमा पर हैं और मच्छर मानव-जाति की विनाश-लीला देखकर मुसकरा रहे हैं।

ओम निवास
५१ क्ले स्क्वायर, कबीर मार्ग
लखनऊ-२२६००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

चुप रहो, देश नाच-गा रहा है

● प्रेमचंद्र स्वर्णकार

देश स्वतंत्र होकर अब प्रगति की ओर अग्रसर है। लोग आगे बढ़ रहे हैं। वे खुशहाल हैं। तभी तो रोज नाच-गा रहे, खुशियाँ मना रहे हैं। हमें कम-से-कम हमारे दूरदर्शन यंत्र के प्रायः सभी चैनल और फिल्में देखकर तो यही लगता है। सैकड़ों नाच-गानों के कार्यक्रम प्रसारित हो रहे हैं। लोग थिरक रहे हैं, नाच रहे हैं, ऊँची आवाज में गा भी रहे हैं। यहाँ तक कि दूरदर्शन और निजी कंपनियाँ नाच-गानों की इतनी सारी प्रतियोगिताओं का आयोजन कर रही हैं कि नाचने-गानेवाले युवक और युवतियों के सामने यह धर्म-संकट उपस्थित हो चुका है कि वे किस कार्यक्रम की तैयारी करें और किसकी नहीं। खैर, संकट भले उपस्थित हो गया हो, लेकिन वे पूरी लगन से जुटे रहते हैं नाचने-गाने के अभ्यास में। और वे ही क्यों, देश में तो हर जगह नाच-गाना चल रहा है। चाहे वे स्कूल के मंच, कॉलेज के ऑडिटोरियम, नगर निगमों के हॉल या सार्वजनिक मंच हों, हर ओर नाच-गाना दिखाई देता है। कोई भी कार्यक्रम नाच-गाने से शुरू होता है और उसकी समाप्ति भी नाच-गाने से होती है। भले ये गाने या नाच प्रायः फिल्मी होते हैं, लेकिन इससे क्या अंतर पड़ता है। नाच-गाने शास्त्रीय हों या फिल्मी, सुर में हों या बेसुरे। महत्त्वपूर्ण बात है लोगों के गाने की, नाचने और खुश होने की—और ये हो रहा है। हमारे देश के कर्णधार या जनता के नुमाइंदे यही तो चाहते हैं कि समस्याओं की चिंता छोड़कर लोग खुश हों, नाचें-गाएँ, सो वे नाच-गा रहे हैं। सबकुछ भूल, सारी समस्याओं को विस्मृत कर वे मगन हैं स्वयं का मनोरंजन और लोगों का मनोरंजन करने में।

शिक्षा : बी.एस-सी., एम.बी.बी.एस., एम.डी.।

कृतित्व : 'नहीं, यह व्यंग्य नहीं है', 'टुकड़ा-टुकड़ा सच', 'महारोग एड्स' (व्यंग्य संकलन), चिकित्सा विज्ञान पर १० पुस्तकें एवं १५ पुस्तिकाएँ दिल्ली से प्रकाशित। पत्र-पत्रिकाओं में लगभग पाँच सौ लेख प्रकाशित।

पुरस्कार/सम्मान : 'महारोग एड्स' एवं 'रोगों से कैसे बचें' पर दो बार डॉ. मेघनाद साहा राष्ट्रीय पुरस्कार, आर्यभट्ट पुरस्कार एवं अन्य कई छोटे-बड़े पुरस्कार/सम्मान।

संप्रति : इंडियन मेडिकल एसोसिएशन शाखा हटा (दमोह) के संस्थापक सचिव। म.प्र. स्वास्थ्य सेवा में स्वास्थ्य अधिकारी। 'समवेत' पत्रिका के संपादक।

वे नहीं सोच रहे हैं कि खाने का तेल सत्तर या पचहत्तर रुपए किलो हो गया है। चावल पच्चीस रुपए और दाल पचासी रुपए किलो हो चुकी है। वे यह भी नहीं जानते कि परवल नामक हरी सब्जी अस्सी रुपए और भिंडी बत्तीस रुपए बिक रही है। इसके अलावा सस्ती सब्जी के पर्याय भटा और भाजी भी महँगे होकर सोलह से बीस तक बिक रहे हैं। नाचने-गानेवालों को शायद यह भी नहीं पता कि उनमें से अधिकांश अब अपना मकान नहीं बनवा पाएँगे, क्योंकि इसमें लगनेवाली हर वस्तु लगभग दुगुनी, तिगुनी महँगी होकर अब उनके द्वारा चाहे गए मकान को सपना बना रही हैं। खैर, क्या अंतर आता है इससे। हमें केवल सपने देखने की आदत है। उन्हें वास्तविकता का असली जामा पहनाने की नहीं। जब हम छोटी-छोटी बातों में खुश हो लेते हैं तो बड़ी बातें सोचें क्यों? जब हमें आधे पेट खुश रहना आता है तो पूरे भरे पेट की सोचें क्यों?

कहावत है, प्रसन्न रहने के लिए उज्ज्वल पक्ष को देखें, कमियों को नहीं। इसलिए हम नहीं देखते हैं कि देश या प्रदेशों में शिक्षा लड़कों की शादी से भी महँगी हो चुकी है। बीमार का इलाज भी इतना महँगा हो चुका है कि गहने और मकान बेचने की नौबत आ जाती है और वे या हम खुश रहने के लिए नाचने-गाने के पीछे यह भी नहीं सोचते कि विद्युत् प्रदाय कब आता है और कब जाता है। नलों में पानी है भी कि नहीं। रोज-रोज होनेवाली चोरी, डकैती, अपहरण, बलात्कार और हत्या की घटनाओं तक के बारे में नहीं सोचते; भूख और गरीबी का रोना भी हम नहीं रोते। हम इतने तल्लीन हैं कि मोमबत्ती या मिट्टी का तेल उपलब्ध हुआ तो ढिबरी या लालटेन की रोशनी में भी नाच सकते हैं, गा सकते हैं। यहाँ तक कि अँधेरे में नाचें भले ही, लेकिन गा तो सकते ही हैं।

यह शोध के साथ एक हर्ष का विषय भी है कि अभावों और इतनी सारी समस्याओं के बीच सारा देश नाच-गा कैसे रहा है। हम जरा सी बात में नाच-गाने का बहाना कैसे ढूँढ़ लेते हैं। कोई क्रिकेट मैच यदि जीता गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाच शुरू। कोई छुटभैया नेता वार्ड का मेंबर बन गया तो नाच। स्कूल में कोई छात्र चुनाव जीत गया तो नाच, शादी-विवाह में नाच। तो अभिप्राय यह कि हमारे यहाँ लोग नाच-गाने के बहाने ढूँढ़ते हैं। बहाना बड़ा हो या छोटा, बस उन्हें नाचना है और गाना है। गाने की तो पूछिए मत, साहब। चार-पाँच लोग इकट्ठे हुए कि गाना शुरू। बस में, रेल में, पिकनिक पर, हर जगह लोग गाते हुए दरियाफ्त किए जा सकते हैं। देश की विकराल समस्याएँ भी उन्हें गाने-बजाने या नाचने से नहीं रोक सकतीं। सच बात है, समस्याएँ अपनी जगह हैं, वे दु:खी होकर अपने मूड का सत्यानास क्यों करें। महँगाई बढ़ गई है तो बढ़ती रहे। पानी मिले या न मिले। बिजली मिले या न मिले। भरपेट खाना मिले या फिर न मिले, क्या अंतर पड़ता है? आदमी को अभावों में भी खुश रहना चाहिए। किसी शायर ने कहा भी है—'आदमी वो है जो खेला करे तूफानों में'। या आपने वो गाना सुना होगा—'आग लगी हमरी झुपड़िया में, हम गाएँ मल्हार देख भई देख, कितनी तमाशे की जिंदगानी हमार।' इस तथ्य को जगह-जगह चरितार्थ होते हमारे देश में देखा जा सकता है। हर जगह, हर दिशा में रोज-रोज हजारों-हजार नाच-गाने के कार्यक्रम हो रहे हैं। लोग अपनी खुशियों का इजहार कर रहे हैं तो महानुभाव समस्याएँ तो रहेंगी ही, कम हों या ज्यादा। उन्हें भूल जाइए। उन्हें न हम हल कर सकते हैं, न आप। इसलिए आ जाइए हमारे साथ हमारी खुशियों में शामिल होने के लिए। आपसे गाते नहीं बनता तो नाचिए और नाचते नहीं बनता तो गाइए और दोनों नहीं बनते, तब कैसा भी नाचिए और गाइए। वरना आप अलग-थलग पड़ जाएँगे। आप न अपना मन खराब करिए, न हमारा। खुश रहिए, नाचते-गाते रहिए, समस्याएँ अपने आप हल हो जाएँगी। ज्यादा चिंता करेंगे तो तनाव के कारण उच्च रक्तचाप या हृदय रोग से ग्रस्त हो जाएँगे। अत: बात दिल पर मत लीजिए, समस्याओं को यथावत् छोड़कर मेरे साथ नाचिए, गाइए और मस्त रहिए। और जो नाच-गा नहीं रहे हैं, वे इन मस्ती छाननेवालों की खुशी में खलल न डालें। कृपया चुप रहें, शांत रहें। उन्हें निर्विघ्न खुशियाँ मनाने दें।

महानुभाव समस्याएँ तो रहेंगी ही, कम हों या ज्यादा। उन्हें भूल जाइए। उन्हें न हम हल कर सकते हैं, न आप। इसलिए आ जाइए हमारे साथ हमारी खुशियों में शामिल होने के लिए। आपसे गाते नहीं बनता तो नाचिए और नाचते नहीं बनता तो गाइए और दोनों नहीं बनते, तब कैसा भी नाचिए और गाइए। वरना आप अलग-थलग पड़ जाएँगे। आप न अपना मन खराब करिए, न हमारा। खुश रहिए, नाचते-गाते रहिए, समस्याएँ अपने आप हल हो जाएँगी। ज्यादा चिंता करेंगे तो तनाव के कारण उच्च रक्तचाप या हृदय रोग से ग्रस्त हो जाएँगे। अत: बात दिल पर मत लीजिए, समस्याओं को यथावत् छोड़कर मेरे साथ नाचिए, गाइए और मस्त रहिए।

गायत्री नगर,
दमोह-४७०६६१
(म.प्र.)

संसद् में व्यंग्य-बौछार

लोकसभा में पहले भी अनेक बार भ्रष्टाचार की चर्चा होती रही है।

श्री लालबहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री थे। उन दिनों नेहरू स्मारक कोष में जमा धन के घोटाले की चर्चा चारों ओर थी। एक दिन एक उद्योगपति सांसद ने प्रश्न उठाते हुए कहा, "स्मारक कोष के घोटाले के आरोपों की जाँच कराई जानी चाहिए।"

प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री खड़े हुए और बोले, "सरकार तो जाँच कराएगी ही, किंतु मैं सदस्य महोदय से अनुरोध करता हूँ कि वे कोष में बड़ी रकम देकर स्वयं जाँच कर सकते हैं कि उनकी दी गई रकम कोष में जमा की गई है या नहीं?"

उनके व्यंग्य से सदस्य सकपका उठे।

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल
बीचपट्टी, पिलखुवा
गाजियाबाद (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक उपन्यास-८

सीढ़ियाँ

शैलेश मटियानी

श्री शैलेश मटियानी हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार थे, उनका जन्म १४ अक्तूबर, १९३१ को अल्मोड़ा जनपद के बाड़ेछीना गाँव में हुआ। उनकी शिक्षा हाई स्कूल तक हो पाई, परंतु हिंदी साहित्य में उनका अनन्य योगदान है। उनके तीस कहानी संग्रह, इकतीस उपन्यास तथा नौ अपूर्ण उपन्यास, तीन संस्मरण पुस्तकें, निबंधात्मक एवं वैचारिक विषयों पर बारह पुस्तकें, लोक-साहित्य पर दस पुस्तकें, बाल साहित्य की पंद्रह पुस्तकें प्रकाशित हैं। उन्होंने 'विकल्प' एवं 'जनपक्ष' पत्रिकाओं का संपादन किया। उनकी अनेक कृतियाँ पुरस्कृत हुईं तथा 'फनीश्वर नाथ रेणु पुरस्कार', 'साधना पुरस्कार', उ.प्र. हिंदी संस्थान का 'लोहिया सम्मान', केंद्रीय हिंदी निदेशालय का 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' सहित उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। उनका महाप्रयाण २४ अप्रैल, २००१ को दिल्ली में हुआ।

"अरे कंतो! जैसी बातें आदमी के अंदर बहुत ज्यादा एक ही हो जाती हैं ना, जैसी बातों को किसी से कहने के लिए आदमी व्याकुल रहता है, उसके लिए सिर्फ बुद्धि के स्तर की पात्रता किसी काम की नहीं होती। उमेश कहते हैं कि बुद्धि के स्तर की पात्रता से भी बड़ी खोज आदमी को अनुभूति के स्तर पर पात्रता की रहती है और अगर ऐसा न हो सके तो वह फिर ऐसी किसी मीडियम की खोज में रहता है, जिसकी अपनी कोई पात्रता ही नहीं हो।··· उमेश कहते हैं कि ईश्वर की खोज मनुष्य ने एक ऐसे ही मीडियम की खोज के सिलसिले में कर डाली होगी, जो बिलकुल न्यूट्रल रहकर मनुष्य की अपात्रता और जाचता दोनों को ही एक सी मुद्रा में स्वीकार कर सके। यानी मनुष्य हमेशा अपने अंदर घुमड़ती हुई नितांत निजी बातों को जमाने में और भी ज्यादा असमर्थ होता है, और कहने के लिए उसे ज्ञान या अज्ञान के स्तर पर—और फिर या विश्वास के स्तर पर हार्मलेमस मीडियम यानी निरापद माध्यम की खोज रहती है। ऐसी बातों को आदमी कभी किसी ईश्वर की मूर्ति के सामने या फिर कुत्ते-बिल्ली जैसे पशुओं से करने लगता है।"

"अरे तो क्या तुम मुझे भी बिल्ली समझ रही हो?"

"हुश, पगली कहीं की। अरे डियर, तू तो बड़ी तेज लगती है। अच्छा, आ-आ, अच्छा, सच बता विपिन भैया ने तुझे तेरी मरजी के खिलाफ जबरदस्ती चूम लिया था, या उससे पहले भी···।"

कांति को एकदम सकपकाता सा देखकर कंचना रुक गई। बात बदलकर बोली, "देख, मैं तुझे अभी जवाब यह देने वाली थी कि तुझे मैंने विश्वास के आधार पर अपनी साकी चुना है। तू जिस तरह से विपिन भैया के गलत व्यवहार को चुपचाप पचा गई थी, और जैसे तू मेरे बार-बार पूछने पर भी इस प्रसंग में गोल रही कि तेरे स्कूल की लड़कियाँ और मास्टरनियाँ··· और उमेश के अफेयर की बातें करती हैं या नहीं, तेरी इंटीग्रिटी का पता इसी से चल जाता है। आदमी कितना उथला या कितना गहरा है, यह उसके एक्शन और आँखों से तुरंत पता चल जाता है। दूसरे, मोहल्ले भर के आगे तक किसी ने तेरे बारे में पहनली कहा है, तूने फलाने के घर ऐसा देखा था, फलाने के बारे में ऐसा कहा था। कभी-कभी आदमी अपने को ही नहीं पहचान पाता। हो सकता है, खुद तुझे ही यह पता न हो कि तुझमें कितना ऊँचा गुण है। अच्छा, और देख, न माँ ने किसी से ज़िक्र किया है, न भैया ने किसी से किया हो। बस, इतनी सी बात जरूर है कि तू ज्यादा यहाँ आएगी तो हो सकता है भैया फिर कोई ऐसी हरकत कर बैठें। और पिताजी ही कुछ शक करें। हाँ, मैं तेरे यहाँ आया करूँगी तो कोई परेशानी की बात ही नहीं होगी।··· और जैसे मैं तेरा भरोसा करती हूँ, तुझे भी मेरा होना चाहिए। देख, मैं पहली बार तुझसे कह रही हूँ कि मैं प्रोफेसर उमेश से सचमुच प्यार करती हूँ और वो भी करते हैं। हालाँकि सिर्फ किसिंग के अलावा और वैसा कोई संबंध हममें नहीं है।···मगर मैं यह बात किसी और से तो नहीं कह सकती हूँ ना। लोग कहते हैं, किसके बारे में ट्यूटर्स··· उड़ाए जाते हैं? मनोरंजन का तो सदा से पावरफुल मीडियम यही है··· दरअसल, न तो वह हमारे प्रिंसिपल महोदय हैं, ना वह मातृकाप्रसाद··· भटनागर? उन्ही स्वनामधन्य महाशय ने मेरे हाथ से एकाएक पुस्तक लेकर··· पलट ली थी और उसमें उमेश का मुझे प्यार के साथ लिखकर भेंट किया हुआ चित्र देख लिया था।···हालाँकि यह प्रूफ करता कोई खेल था··· प्रोफेसर उमेश ने न जाने वह फोटो प्यार के साथ किसे भेंट किया हुआ··· किसी अपने पुरुष दोस्त को, भाई-बहन को···कोई उसमें मेरा नाम थोड़े···

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखा हुआ था।''

''हमारी टीचरजी तो कह रही थीं कि आपके प्रिंसिपल भटनागरजी प्रोफेसर बाजपेयी को टर्मिनेट करने वाले हैं ?'' कांति एकाएक कह गई।

''अरे टर्मिनेट करेगा तो बौड़म मेरा···'' कंचना खिलखिला पड़ी। कांति सकपकाई सी देखती रही।

कंचना फिर गंभीर हो गई—''असल बात यह है कंतो कि प्रोफेसर उमेश ने पिछले साल बी.ए. फाइनल की कॉपियाँ जाँचते समय स्वानामधन्य मातृकाप्रसादजी का एक खास रोल नंबर वाली कॉपी पर डिस्टिंक्शन मार्क्स दे देने का प्रोपोजल रिफ्यूज कर दिया था।···ना जाने कहाँ की, उसके किसी दोस्त की लड़की का रोल नंबर था। तब से मातृकाप्रसाद महाशय उमेश से बहुत खफा हैं। उमेश का कहना यह है कि अगर मेरी कॉपी भी उसे जाँचने को मिले तो भी वह रियायत नहीं कर सकता। कभी तुझे उनसे जरूर मिलाऊँगी, कंतो।''

''तुमसे तो कुछ नहीं कहता ?''

''किससे ? प्रिंसिपल ने ? अरे, पक्का घाघ है। फोटो जेब में डालकर, सीधे अपने कमरे में चला गया। सोचता होगा, मैं जाऊँगी और गिड़-गिड़ाकर माफी माँगूँगी, तो फिर मुझे और प्रोफेसर उमेश दोनों को इक्सप्लॉइट करेगा। मैं सीधे कैंटीन में चाय पी रहे उमेश के पास ही चली गई थी और एकांत में सारी सिच्यूएशन सामने रख दी थी। उमेश ने मुझे साफ-साफ बता दिया था कि दूसरे के रहस्यों को जानने के बाद उसके द्वारा क्षमा याचना की प्रतीक्षा करने वाला सेर पादरी भी मनुष्य की आत्मा को दबोच लेता है। उन्होंने मेरी सारी घबराहट और आत्म-ग्लानि दूर कर दी और मैं लगातार चार दिन तक मातृकाप्रसाद महाशयजी के कमरे में नहीं गई।''

बोलते-बोलते कांति हँस पड़ी। फिर कहने लगी, ''अब इस समय देर हो रही है। तुझे संक्षेप में सुना देती हूँ। अब जो प्रिंसिपल महाशय लड़के-लड़कियों के बीच मिल जाएँ आते-जाते तो मैं जी, नमस्कार करके किनारे लग जाऊँ और महाशय महसूस करते फिरे होंगे न—जाने कैसी—परेशानी और बेचैनी। आखिर जो सोमवार को मैं उनके कमरे में इसी शरदोत्सव के बारे में पूछने चली गई कि जी, आइटम हमारे कॉलेज में भी रहेगा ? तो तपाक से बोले महाशय, हमारे कॉलेज में आइटमों की क्या कमी है। जी तो हुआ कि हाथ में थमी हुई किताब घुसेड़ दूँ मुँह में, मगर मैं भी जरा मूड में रहने लग गई हूँ। पढ़ने का मतलब मेरे लिए सिर्फ पुस्तकों को खोलकर डिग्री हासिल करना ही रह नहीं गया है। एकदम सीरियस होकर ही मैंने फिर पूछ लिया था, जी, तो वो मेरा देश, मेरा घर ही वाला वन ऐक्ट प्ले ही देंगे क्या ? तो फिर महाशय जी एकदम भड़क उठे कि मिस कंचना, 'आप मुझे क्या बेवकूफ समझती हैं ?' और इसके बाद महाशय बड़ी देर तक नैतिकता-वैतिकता पर लेक्चर झाड़ते रहे। मुझसे बीच में कहा, दरवाजा बंद कर दो। मैंने पूछ लिया-जी, क्यों ? तो बोले, 'मैं चाहता हूँ, तुम्हारा राज मुझ तक ही सीमित रहे। तुम्हारे सामने अभी बहुत बड़ा भविष्य पड़ा हुआ है।' मैंने कहा, जी आपकी कृपा है। और बाहर निकलने लगी, तो तुरंत हाथ पकड़ लिया। मैंने तो तड़ाक से हाथ खींच लिया, तो महाशयजी की ठुड्डी मेज के किनारे से टकराई।···अरे अब तो मुझे भी हँसी आती है, मगर उस समय मैं बड़े ताव में थी। आखिर जब उन्होंने धमकी दी कि मैं तुम्हारा फोटो सबको दिखा दूँगा। तो मैंने तुरंत सवाल किया, मेरा या कि प्रोफेसर बाजपेयी ने जो आपकी लड़की प्रियंवदा को भेंट किया है ?···अरे बाहर निकल आई। खैर, कंतो, इस समय तू जा, अभी मैं तेरे घर के सामने पहुँचकर आवाज दे दूँगी। फिर रास्ते में बातें करेंगे।''

कांति उठ खड़ी हुई। कुछ सोचकर फिर बोली, ''दीदी आपके पास आयरन है ना ? मुझे सलवार-कुरता प्रेस करना था ?''

कांति चली गई तो कंचना दरवाजा बंद करके, कुछ देर तक आँखें मूँद कर लेट गई। अपनी निर्दोषिता और योग्यता को दूसरे के सामने स्वयं महसूस करने पर अपने सोचते रहने, और सोचे हुए को निरंतर अपने ही अंदर झेलते रहने के तनाव से इतनी बड़ी मुक्ति मिलती है, यह कंचना ने पहली बार अनुभव किया। उसे लगा, 'जब पहली बार मीरा ने कृष्ण की मूर्ति, यानी एक निरापद माध्यम के आगे अपने सोचे हुए को कहकर अपने सारे मानसिक तनाव को अपनी आँखों के सामने रखकर नृत्य किया होगा तो उसे भी ऐसी ही मुक्ति मिली होगी।' थोड़ी देर चुपचाप लेटी रहने के बाद कंचना उठ खड़ी हुई कि कहीं नींद न आ जाए और कांति बेचारी प्रतीक्षा करती रहे।

□

अन्नपूर्णा बहन के यहाँ से लौट आने पर बृजनारायण पुरोहित असितबरन बाबू के घर चले आए। अरुणा ने दरवाजा खोला और बताया कि 'नमुस्कार, असित साहब तो अभी सोया है।'

कांति चली गई तो कंचना दरवाजा बंद करके, कुछ देर तक आँखें मूँद कर लेट गई। अपनी निर्दोषिता और योग्यता को दूसरे के सामने स्वयं महसूस करने पर अपने सोचते रहने, और सोचे हुए को निरंतर अपने ही अंदर झेलते रहने के तनाव से इतनी बड़ी मुक्ति मिलती है, यह कंचना ने पहली बार अनुभव किया। उसे लगा, 'जब पहली बार मीरा ने कृष्ण की मूर्ति, यानी एक निरापद माध्यम के आगे अपने सोचे हुए को कहकर अपने सारे मानसिक तनाव को अपनी आँखों के सामने रखकर नृत्य किया होगा तो उसे भी ऐसी ही मुक्ति मिली होगी।' थोड़ी देर चुपचाप लेटी रहने के बाद कंचना उठ खड़ी हुई कि कहीं नींद न आ जाए और कांति बेचारी प्रतीक्षा करती रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बृजनारायणजी हँसते हुए बोले, "मोस्ते। गनीमत है कि आप लोग दोनों के दोनों सोए हुए नहीं मिले।"

अरुणा शरमा गई। कुरसी पर से अखबार उठाते हुए बोली, "बोसुन! पुरोहित साहब, बँगला बोलने से आप समझता नहीं है, हिंदी बोलने से गलती होने से मजाक उड़ाता है। अभी अंग्रेजी में बोलने से नेशनल लैंग्वेज का इस्तेमाल करने को बोलता है···।"

"अरे, नहीं, नहीं अरुणाजी। अब तो आप बहुत अच्छी हिंदी बोलने लग गई हैं। आप मेरे नमोस्ते को मजाक समझ रही होंगी, मगर शुद्ध तो नहीं है—नमो-अस्ति-ई··· खैर सुनिए, जब असित बाबू उठ जाएँ तो उनसे यह जरूर कह दीजिए कि उद्घाटन के लिए मुख्यमंत्री ही आ रहे हैं और उनके साथ शिक्षा मंत्री आत्मारामजी भी आ रहे हैं।···और महिला जागरण केंद्र में अन्नपूर्णा बहनजी के यहाँ सबसे पहले जाएँगे। अन्नपूर्णा बहनजी कह रही थीं कि उनके स्वागत में रवींद्र संगीत का एक छोटा सा आइटम रख दीजिए। मैं समझता हूँ, आप पहले जन मन गण वाला कोरस करा दें और फिर असित बाबू एक गीत गीताजंलि से सुना दें हिंदी में।"

"सुनिए तो पुरोहित साहब, एक बार बोलने से ठीक रहेगा, कल राजी भी असित साहब आपको बर्मन साहब वाली संगीत-गोष्ठी में आने से हमको एक बात बोला था। आपको कहने से आप बुरा तो नहीं मानेगा, क्योंकि तो सियां इस पराया नजर में आप ही हमको सहारा दिया है।" अरुणा कृतज्ञता प्रदर्शित करते हुए बोलती रही, "मगर असित साहब बड़ा अजीब आर्टिस्टिक नेचर का आदमी है। क्यों तो कलकत्ता में रहने से भी आप कभी उधर में अक्सर मिनिस्टर लोग का घर जाता नहीं था। आज तो घर-बार और ठिकाना उखड़ जाने से वो बेचारा बहुत दुखी रहते हैं। मेरे साथ तो शादी नहीं बनाने से उधर ही संगीत कला का साधना कंटीन्यू करते रहने से असित बाबू एक दिन बहुत बड़ा संगीतकार बनता···।"

"अरे, तो यहाँ क्या कोई संगीतकार रह जाएँगे अरुणाजी? यह छोटा शहर जरूर है, मगर हम लोगों के दिल तो छोटे नहीं हैं। आप देखिएगा तो सही, एक दिन असित बाबू को हम संगीत में पद्मश्री, पद्म भूषण बना के दिखा देंगे। मगर इतना तो आप भी जानती हैं कि कला के आश्रयदाता बदल गए हैं। अब राजा-महाराजाओं के दरबारों के नौरतन ऑल इंडिया रेडियो में चप्पलें चटकाते फिरते हैं। और मेरा तो आप लोगों की कृपा से उठने-बैठने का संबंध उन लोगों के यहाँ है, जिनके यहाँ ऑल इंडिया रेडियो के डायरेक्टर लोग ड्यूटी देते फिरते हैं। बृजमोहनजी कुरसी के हत्थे को ठोंकते हुए बोले, "अब देखिए, आप लोगों के आने के बाद से इस शहर में पहली बार मुख्यमंत्री और शिक्षा मंत्री आ रहे हैं। उनके कानों में भी अभी से बात डाल दूँगा, तो स्वतंत्रता दिवस के उत्सव में असित बाबू को और आपको एक-दो इन डिवीज्युअल लेबिल पर भी प्रोग्राम मिल जाएँगे। मैं तो कहता हूँ कि अगर आज अन्नपूर्णा बहनजी के केंद्र में ही आप मीरा भजन सुना दें तो ये लोग भी याद कर जाएँ कि हीरे सिर्फ दिल्ली, लखनऊ, कलकती के शो केस और तिजोरियों में ही नहीं होते, एकाध इस छोटे से शहर की धूलि में भी पड़ा ही रहता है।"

बृजनारायणजी हँसते रहे। अन्नपूर्णा सोचती रही कि वह फिर से कैसे संदर्भ जोड़े। कहीं असितबरन की नींद टूट गई तो वह सीधे ही नहीं कह दें कि इस तरह व्यक्तिगत रूप से बड़े लोगों के घरों और अगवानियों में गाने-बजाने के लिए जाते रहना उनके लिए संभव नहीं है। कल रात कालीचरण बर्मन के घर से लौटते ही उन्होंने बताया था कि कालीचरण और एस.डी.एम. कपूर बार-बार यही पूछ रहे थे कि अरुणाजी को क्यों नहीं ले आए आप साथ। असित ने रात ही कह दिया था कि इन हिंदुस्तानी अंग्रेज लोगों से बातें करते हुए घिन लगती है। लगता है संगीत और संस्कृत के विषय में ऐसे फूहड़ लोगों से बातें कर रहे हैं, जो हमेशा अपने इस हीन मानसिकता से आक्रांत रहते हैं कि उन लोगों को प्रभावित कर सकने के लिए दूसरे सारे लोगों के पास सिर्फ यों ही आप शेष रह गए हैं या तो घूस देकर और या खूबसूरत लड़कियों और औरतों के माध्यम से ऑबलाइज यानी उपकृत करना। अपने पद और प्रभाव के कारण उनको यही लगता रहता है कि जो भी उनके पास पहुँचता है, अपने किसी-न-किसी स्वार्थ की सिद्धि के लिए। यानी ऐसे लोग अपने को और हर दृष्टि से असहाय सा महसूस करते रहते हैं। ऐसी हीन भावनाओं से आक्रांत लोगों के सामने बैठकर संगीत और संस्कृत एक पेशेवर व्यवसाय जैसी चीज में बदल जाती है। ऐसे लोगों के लिए कलाकार की साधना की जगह इस बात का ज्यादा महत्त्व होता है कि वह लड़की या औरत है, तो कितनी कम उम्र और सुंदर है। पुरुष है, तो उसके साथ कौन सी लड़की या औरत भी आती है।"

असित बाबू की आँखों में यह बताते हुए आँसू भर आए थे कि वे लोग तो ऐसा समझते हैं कि जो पुराने संगीतज्ञ और कलाकार हैं, संगीत-संस्कृत की रक्षा का काम तो उन्हीं से चल जाएगा।···मगर जो नए उभरते हुए कलाकार हैं, उनको संगीत और संस्कृत के उन्नायकों की साधना पहले करनी चाहिए। राजे-महाराजे तो कलानिपुण वेश्याओं को भी संगीतज्ञ गायिकाओं के रूप में देखते थे, मगर ये बिना खानदान के हिंदुस्तानी पंचम जॉर्ज गायिकाओं को रंडियाँ समझने में विश्वास रखते हैं।

उनका कहना यह भी था कि स्वतंत्रता मिले भले ही छह-सात वर्ष हो गए हैं। मगर अहिंसा, सत्याग्रह और बलिदान के द्वारा स्वराज्य प्राप्त करने के मानसिक उन्माद और बौद्धिक प्रमाद से जब तक मुक्ति नहीं मिलेगी, तब तक स्वतंत्रता की वास्तविक अच्छाइयों को पनपने का अवसर कदापि नहीं मिलेगा और सतारूढ़ लोग अंग्रजों को भगा देने वाले आजादी के सिपाही के अहंकार से ज्यादा बदतर ढंग से देश का नैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक शोषण करते रहेंगे।

वास्तव में बार-बार अरुणा के न आने के प्रति अपना असंतोष व्यक्त करते हुए एम.एल.सी. कपूर की आँखों में तैर जाने वाली चमक असित को बहुत घिनौनी और पाशविक लगी थी। अरुणा महसूस कर रही थी, उसका मौन पुरोहित साहब के सामने उनके मानसिक तनाव को तो उभार सकता है, मगर उसको अभिव्यक्त नहीं कर सकता। "पुरोहित साहब, आप चाय तो जरूर पिएँगे।"

"नहीं, पिऊँगा नहीं।"

"क्यों तो? कुछ हमारे से नाराजी है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''नहीं तो अरुणाजी। मैं तो सिर्फ यह कहना चाहता था कि चाय पीऊँगा नहीं, चाय खाऊँगा।''

बृजनारायण पुरोहित जितने कृत्रिम ढंग से बोलते और हँसते हैं, अरुणा को हमेशा ऐसा लगता है, ऐसे आदमियों से संबंध रखे रहने का अर्थ ही अपने को किन्हीं विवशताओं में पाना है। एक क्षण को तो यह साफ-साफ कहने को मन हो आया कि असित बाबू का कहना है, वो सिर्फ कक्षा में सिखाने के अलावा और कहीं नहीं जाएँगे। मगर दूसरे ही क्षण ये आशंका भी छा गई कि आखिर कब तक ऐसे चटकना होगा। हो सकता है, दोनों के ही आहत स्वाभिमान को कहीं दूसरी जगह और बड़ा कोई आघात लगे। यहाँ तो अभी कोई ऐसी प्रत्यक्ष अपमानजनक स्थिति नहीं है।

अपेक्षया मधुर स्वर में बोली, ''मैं अभी चाय बनाने को जाऊँगी, तभी तक तो असित बाबू उठ सकेगा। आप तो खुद भी कलाकार जन हैं। पुरोहित साहब, आपको क्या ऐसा नहीं लगता कि आर्टिस्ट लोगों का भी अपना एक अलग ही नेचर होता है। इनकी डेढ़ चावल की खिचड़ी तो अलग ही बनाने से काम चलता है।''

''अरे, क्यों नहीं अरुणाजी! ऐसे-ऐसे स्वाभिमानी लोग रहते हैं कि बस क्या पूछिए। मुगल बादशाह अकबर के दरबार में एक बार तुलसीदासजी को भी वैसे ही रामायण गाने को बुलाया गया था, जैसे आजकल के मिनिस्टर लोग पंडित राधेश्यामजी कथावाचक को बुलाते हैं, मगर तुलसीदास ने लाठी हवा में हिला दी, संतन कहा सीकरी सो लेना। यानी कलाकारों को राज दरबार से क्या लेना है।''

''सोही तो, सोही तो। हमारे असित बाबू भी यही तो कहते रहते हैं।''

बृजनारायणजी को लगा, वो अपनी ही कही हुई बात में फँस गए हैं। इतना अनुमान उन्होंने लगा लिया था कि शायद कल रात की नाराजी अभी दूर नहीं हुई है। अंततः असित बाबू उठकर चले ही आए थे, यह कहकर कि आप लोग के यहाँ तो महफिल ज्यादा जम सकती थी।

कालीचरण बर्मन ने असित बाबू के दरवाजे से बाहर निकलते ही कहा था—''अजीब बददिमाग बंगाली है। उड़ाकर तो लाया है न—जाने किसकी बहू, बेटी को, रोब ऐसा छाड़ता है, जैसे तानसेन के बीज से पैदा हुआ हो। कपूर साहब इसकी कुछ इनक्वारी-विंक्वारी आपको जरूर करवानी चाहिए थी।''

''अरे साहब, हम तो पुरोहित साहब का लिहाज करते हैं, नहीं तो इनको यहाँ से निकलवाकर यों ही वापस कलकत्ता की कालीमाई की शरण में भेज दें कि बेरोजगारी में खर्चा कैसे चलाते हो? स्साला पक्का नक्शेबाज है। देखा नहीं, ऐसे आँख लटेर रहा था जैसे ससुरे की माँ को बुलवा रहे हैं। अरे, हम गाना सुनते ज्यादा-से-ज्यादा नाच ही देख लेते और इससे ज्यादा क्या करते? पुरोहित साहब ने बात सँभाल ली थी, मगर कालीचरण बर्मन ने साफ-साफ कह दिया था, लेकिन किसी दिन इसकी मैया को नचवाइए जरूर, चाहे डी.एम. साहब के यहाँ ही प्रोग्राम क्यों न रखवाना पड़े। बल्कि वह अगर ज्यादा टाँग-पूँछ उड़ाए तो इंक्वारी होने तक के लिए उसको हमारे महिला कल्याण केंद्र के सुपुर्द करवा दीजिए। अरे इतनी बड़ी आजादी हम लोगों ने हासिल करके रख दी है, वह छटंकी भर की चिड़िया कौन सी कोहकाक की परी है। बृजनारायण पुरोहित कपूर से उतना नहीं, कालीचरण से ज्यादा दबते हैं। अफसर तो बदलते रहते हैं, मगर नेता जब तक मिनिस्टर न हो जाए, तब तक उससे रात-दिन काम पड़ता रहता है।''

पुरोहित साहब बोले, ''आप कलाकार के स्वाभिमानी होने की बात तो बहुत सही कहती हैं अरुणाजी, मगर तुलसीदासजी का जो मैंने जिक्र किया था, सो तो बात यह है कि एक तो अकबर था मुसलमान और संत तुलसीदास थे हिंदू। दूसरे, यह कि तुलसीदास थे औलिया फकीर कि न जोरू न जाता, फकत खुदा से न्यारा।''असित बाबू असल में बहुत ही भावुक और कोमल आदमी हैं। घर-गृहस्थी वाले आदमी को जरा दूर तक नजर रखनी चाहिए। जब तक डिग्री और सिफारिश नहीं हो, तब तक नौकरी दुर्लभ होती है। और अभी तक तो खैर, आप लोग दो मियाँ-बीबी हैं, मगर आगे बच्चे भी तो होंगे। देखिए अरुणाजी, मैं आपकी बात समझ गया हूँ कि आप यही कहना चाहती हैं कि असित बाबू दोपहर को अन्नपूर्णा बहनजी के आश्रम में गाने नहीं जाएँगे और न आपको जाने देंगे। है न? अब प्रसंग चल ही पड़ा है तो मैं हूँ आपका बुजुर्ग। मेरी इस बात को गाँठ बाँध लीजिए कि जब आदमी की इक्नोमिकल कंडीशन खराब और परसनाइगो हो बहुत ऊँची तो फिर या तो वह महात्मा कबीरदास बन जाता है और या फिर एक दिन इस कदर डिमोरलाइज्ड होता है कि कुछ पूछिए मत। असित बाबू और हम लोग महात्मा कबीरदास, तुलसीदास और संत तुकाराम तो हो नहीं सकते, अब मध्यम मार्ग से इज्जत और व्यवस्था की जिंदगी बिताना या फिर तश्तरी में रखे हुए फलों को ठोकर मारकर कीचड़ में से बेर उठाकर खाना हमारे हाथ में है। अब आप ही बताइए कि जिनके हाथों में इस समय देश की बागडोर है, जो पैंतालीस करोड़ लोगों पर शासन कर रहे हैं, उनका ईगो हम लोग के ईगो से तो बड़ा ही होगा। उनके सामने तनकर फिर निचले तबके के चले लोगों के सामने झुकने को तो मैं और ज्यादा डिमोरलाइजेशन समझता हूँ।''अब कहने की बात तो नहीं है, अब आप लोग आ करके राजकमल होटल में ठहरे हुए थे, तब उसके तीन कौड़ी के टुच्चे मैनेजर ने असित बाबू को नहीं झाड़ा था। उस दिन आप ही बता रही थीं कि असित बाबू ने चुपचाप हाथ से घड़ी उतारकर दे दी थी, जिसे बाद में मैंने छुड़वा दिया था।''मगर कल जरा सा एस.डी.एम. साहब और बर्मन साहब ने एक-दो बार इतना ही पूछ लिया कि अरुणाजी को आप साथ नहीं लाए, तो असित साहब एकदम मिस अंडरस्टैंड कर गए। आखिर हायर सोसायटी में ही लोग एटीकेट के नाते भी पूछते ही हैं।''

(क्रमशः)

प्रस्तुति : श्री राकेश मटियानी
२६१-ए, मोतीलाल नेहरू नगर,
कर्नलगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

भोंपू भगत

● प्रशांत अग्रवाल

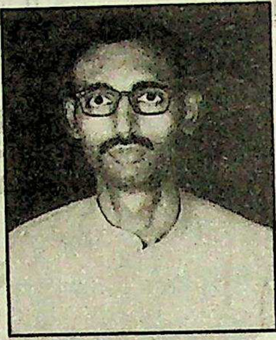

जन्म : २५ अप्रैल, १९७८, बरेली।
शिक्षा : एम.ए. (इतिहास), बी.एड.।
कृतित्व : पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, लेख आदि प्रकाशित।
संप्रति : अध्यापन।

"उफ, इतना शोर! क्या दूसरों को इस प्रकार पीड़ा पहुँचाना धर्म है?" धर्मस्थल में बज रहे लाउडस्पीकर की तेज, कर्कश और अस्पष्ट ध्वनि से सत्यकाम का सर फटा जा रहा था। एक बार तो उसका मन हुआ कि तत्काल वहाँ जाकर विरोध करे, कुछ चुभते सवाल दागे, धर्म के नाम पर हो रहे आडंबर का चोला फाड़ डाले; लेकिन परिवार, समाज के ताने-बाने और चाल-चलन को देखते हुए उसे ऐसा प्रत्यक्ष विरोध उचित नहीं लगा या शायद हिम्मत नहीं हुई, लेकिन विचारों की उथल-पुथल होती ही रही और अंत में उसने एक बीच का रास्ता निकाला, ताकि बिना प्रत्यक्ष विरोध किए दिल की भड़ास निकाल, सके। उसने 'धर्म-प्रेमी' जनता के नाम एक लंबा-चौड़ा सार्वजनिक पत्र लिखा, जो इस प्रकार है—

"धर्मप्रेमी बंधुओ!

यह तो आप सब जानते ही हैं कि धर्म का हमारे जीवन में कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है, लेकिन क्या आपने कभी सोचा है कि इस धर्म की रक्षा करनेवाले कौन हैं और हमारे लिए कितना कष्ट उठा रहे हैं? आइए, हम आपको बताते हैं। धर्म के इन रक्षकों का नाम है—भोंपू भगत। कृपया आप लोग इस नाम को बुरा न मानें, क्योंकि अकसर लोगों की पहचान उनकी किसी खास चीज से ही होती है; जैसे—कबूतरवाले बाबूजी, छड़ीवाले पंडितजी आदि-आदि इसी प्रकार आजकल धर्म-कार्य में भोंपू अर्थात् लाउडस्पीकर की अपरिहार्यता को देखते हुए हम इन धर्मरक्षकों को सम्मानार्थ ही इस उपाधि से विभूषित कर रहे हैं।

हाँ, तो हम मानते हैं कि इस कलियुग में हमारे जीवन में जो भी धर्म बचा-खुचा है, उसका श्रेय भोंपू भगतों को ही है, बल्कि हम तो यहाँ तक कहेंगे कि जिस प्रकार राम से भी बड़ा राम का नाम माना जाता है, उसी प्रकार भोंपू भगतों से भी अधिक सम्मान भोंपू का करना चाहिए, बिन भोंपू के भक्ति कैसी? कहा जाता है कि 'कलजुग केवल नाम अधारा', लेकिन भोंपू भगतों ने तो और भी गहराई में जाकर नाम का भी आधार ढूँढ़ निकाला है, जिसका नाम है भोंपू न हो तो नाम में मन कैसे लगे? सुनें थोड़े से हों तो भक्ति की धारा कैसे बहे?

जब भोंपू भगत कंठ की नसों को ता... हमारी खातिर भीषण कष्ट उठाकर, भरपू... लगाकर, भोंपू की सहायता से संपूर्ण वा... को दहलाते···माफ कीजिए भक्तिमय बनाते... कोई दूसरी सांसारिक ध्वनि सुनाई देने का प्र... नहीं उठता। जिस प्रकार घोर अँधेरे में हाथ-... हाथ नहीं सूझता, उसी प्रकार इस गूँज में ... आवाज खुद को ही नहीं सुनाई पड़ती, ... ऐसा करने में दूरदर्शी भोंपू भगत हमारा क... ही देखते हैं और हमें मौन रहने की प्रेरणा ...

कुछ लोगों का कहना है कि भोंपू के तीव्र शोर से उनके का... परदे खराब हो सकते हैं, लेकिन मैं उनसे सहमत नहीं हूँ। जिस ... राम का नाम लेकर मरनेवाला मुक्त हो जाता है, उसी प्रकार अग... भक्ति का श्रवण करते हुए हम बहरे भी हो जाएँ तो इसमें हमारा क... ही है और इसके लिए हमें भोंपू भगतों का आभारी होना चाहिए।

कुछ लोगों को आपत्ति है कि इससे विद्यार्थियों की पढ़ाई ... होती है। इसपर हमारा कहना है कि क्या रखा है इस सांसारिक वि... फेल-पास करना तो प्रभु के हाथ में है। छात्रों को चाहिए कि जिस... भोंपू बजना शुरू हो, वे अपनी संसारी पढ़ाई-लिखाई छोड़कर ... स्वरलहरियों में डूब जाएँ और यदि पहले ही स्वरलहरियों में ... अपनी श्रवण-शक्ति को भोंपू भगतों के चरणों में समर्पित कर चुके ... भी स्वर-लहरियाँ न सही, भोंपू महाराज और भोंपू भगतों के दर्श... पुण्य-लाभ अर्जित करें।

गंभीर बीमार लोगों पर भोंपू भगत विशेष कृपा-दृष्टि रखते ... उन्हें इच्छा-मृत्यु के लिए राष्ट्रपति आदि के पास आवेदन भेजने ... ही नहीं करना पड़ता। भोंपू भगत भोंपू महाराज की सहायता ... रोगियों को पहले ही मुक्त कर देने का प्राण पण से प्रयत्न करते ...

एक बात लोग यह भी कहते हैं कि शाब्दिक-जप से मा... जप श्रेष्ठ होता है और भगवान् का नाम अगर सच्चे मन से बिना ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करे लें तो भी भगवान् तक पहुँचा जा सकता है, तो फिर इतना शोर क्यों? लेकिन भोंपू भगत की दृष्टि से देखें तो केवल अपना कल्याण करना स्वार्थ है। ये तो भोंपू भगतों की दरियादिली है कि वे परोपकार कि लिए अपने गले को इतना कष्ट देते हैं अन्यथा स्वान्तः सुखाय मानसिक जप करके तो ये भगवान् को पा चुके होते।

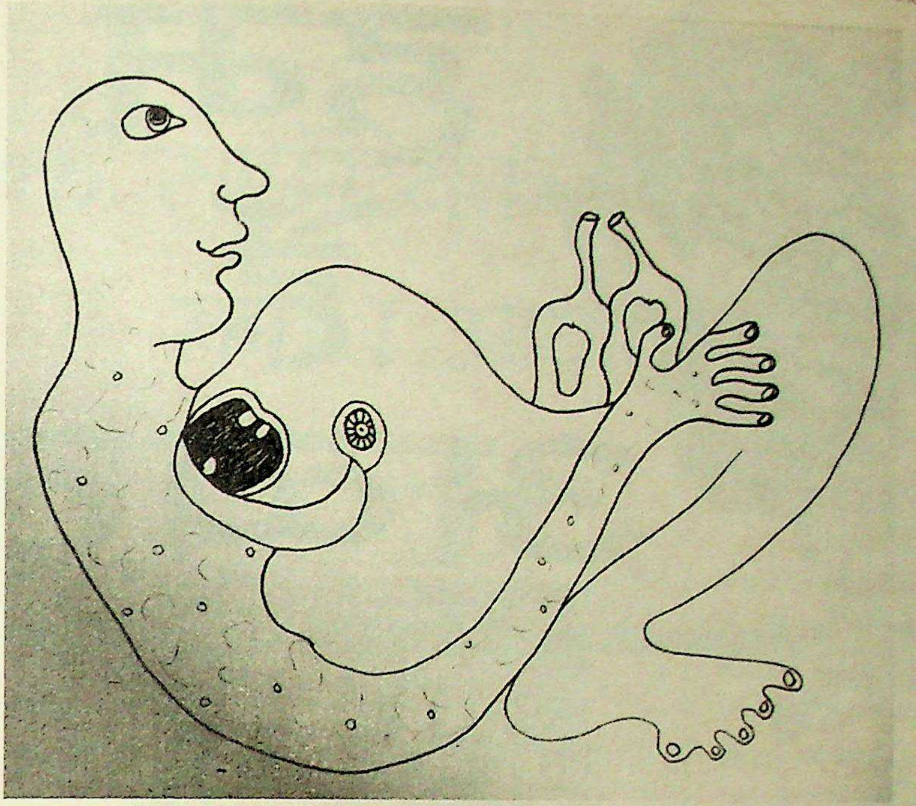

सुबह-सुबह प्रकृति का संगीत सुनने के इच्छुक कुछ लोगों की इच्छा भोंपू से बाधित होती है, लेकिन इसमें कसूर भोंपू भगतों का नहीं, बल्कि प्रकृति का है, जो बढ़ते शोरवाले परिवेश से कदम-ताल नहीं मिला रही है और वही घिसा-पिटा, पुराना, मद्धम संगीत सुनाने की जिद पर डटी है। प्रकृति को चाहिए कि भोंपू भगतों का अनुकरण करके अपना 'वॉल्यूम' बढ़ाए। उदाहरण के लिए, भँवरे गुनगुन करने की बजाय चहकें, चिड़ियाँ चहकने की बजाय कूकें, कोयलें कूकने की बजाय दहाड़ें और शेर दहाड़ने की बजाय चिंघाड़ें।

कुछ लोग इस बात पर आपत्ति जताते हैं कि भोंपू भगत भजन-पूजन की शुरुआत में ओम् कहने की बजाय हलो···टेस्टिंग···हलो···क्यों कहते हैं, लेकिन ये शंकालु लोग भोंपू भगतों के गूढ़ मनोभावों को नहीं पढ़ पाते। भोंपू भगत जानते हैं कि मोबाइल फोन की 'हैलो-हैलो' के अभ्यस्त हो चुके लोग ओम् की बजाय हैलो-हैलो की ध्वनि सुनते ही तत्काल सावधान होकर भजन में एकाग्र हो सकेंगे।

कुछ लोगों को यह शिकायत है कि इससे उनकी निजी पूजा-आराधना में व्यवधान पड़ता है तो इस पर हमारा कहना है कि 'संघे शक्ति कलियुगौ' के अनुसार हमें अपनी एकांतिक, निजी पूजा-पाठ छोड़कर भोंपू-भगतों की समूह-मंडली में सम्मिलित हो जाना चाहिए।

कुछ लोगों को आपत्ति है कि इससे विद्यार्थियों की पढ़ाई बाधित होती है। इसपर हमारा कहना है कि क्या रखा है इस सांसारिक विद्या में? फेल-पास करना तो प्रभु के हाथ में है। छात्रों को चाहिए कि जिस समय भोंपू बजना शुरू हो, वे अपनी संसारी पढ़ाई-लिखाई छोड़कर भोंपू की स्वरलहरियों में डूब जाएँ और यदि पहले ही स्वरलहरियों में डूबकर अपनी श्रवण-शक्ति को भोंपू भगतों के चरणों में समर्पित कर चुके हों तो भी स्वर-लहरियाँ न सही, भोंपू महाराज और भोंपू भगतों के दर्शन से ही पुण्य-लाभ अर्जित करें।

क्योंकि भोंपू भगतों से ही हमें यह ज्ञान मिला है कि कलियुग में भगवान् भी पहले जैसे नहीं रह गए हैं, जो भक्त की गुपचुप, एकांत में, धीमे स्वर में की गई पूजा से प्रसन्न हो जाएँ। वे भी कंठ की शक्ति से ही भक्ति की श्रेष्ठता का निर्धारण करते हैं। हाँ, विशेष दयालु होने के कारण उन्होंने कंठ पर दया करते हुए उसे भोंपू का सहारा लेने की अनुमति जरूर दे दी है।

अतः मेरा आप सब भाई-बहनों से निवेदन है कि आप सब बिना शंकित हुए भोंपू महाराज और भोंपू भगतों की महिमा समझें और उनके कारण यदि कोई कष्ट महसूस भी हो रहा हो तो उसे अपनी अज्ञानता और भोंपू भगतों की विशेष कृपा समझें, बल्कि हम तो कहेंगे कि हम सबको भक्ति के इस नए एवं आधुनिक क्षमताओं से संपन्न साधन अर्थात् भोंपू को अपना नया देवता मानकर मंदिरों में इसकी प्राण-प्रतिष्ठा भी करनी चाहिए। जिस प्रकार गोविंद से बड़े गुरु हैं, क्योंकि वे गोविंद का पता बताते हैं, उसी प्रकार भगवान् से भी अधिक महिमा भोंपू की है, जो हमें भगवान् तक पहुँचाता है।

बोलो भोंपू भगतों और भोंपू महाराज की जय!"

यह पत्र जब अगले दिन मोहल्ले की दीवारों पर चिपका मिला तो लोग मुसकरा रहे थे और भोंपू भगत शरमा रहे थे। शायद भोंपू भगत अपनी अत्यधिक प्रशंसा का बोझ उठा नहीं पा रहे थे। संभवतः इसीलिए भोंपू भगत पूरी तरह तो नहीं, लेकिन लोगों से कुछ-कुछ कटे-कटे रहने लगे और 'परोपकार' करना कुछ कम कर दिया।

४० बजरिया मोतीलाल,
बरेली (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम हैं अव्वल

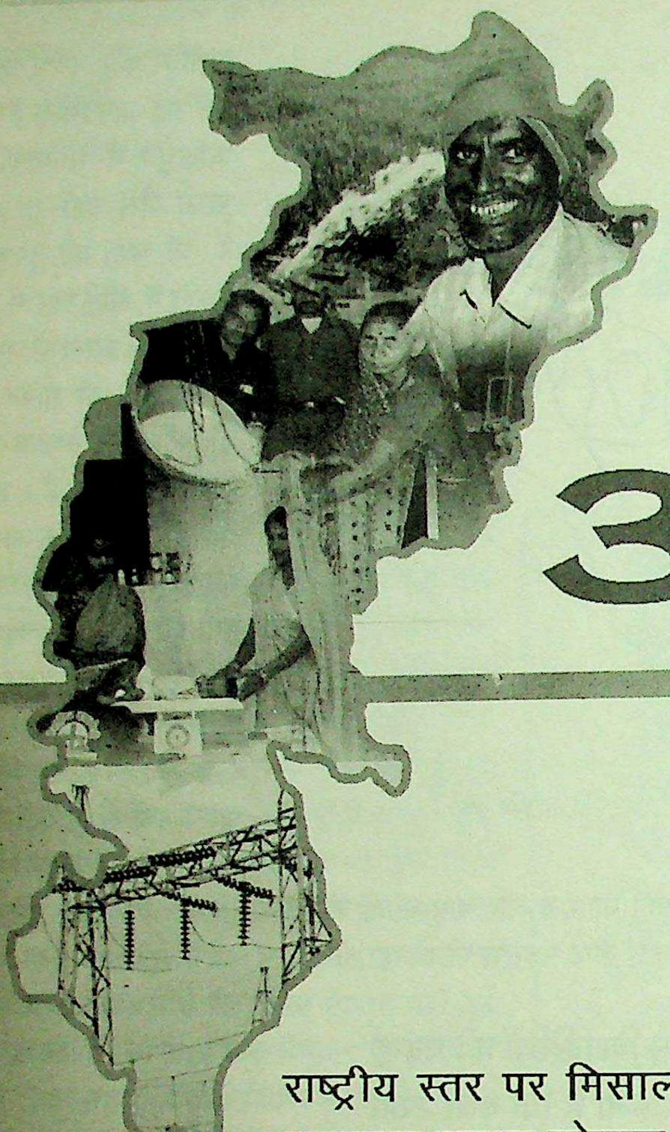

राष्ट्रीय स्तर पर मिसाल बन चुकी मुख्यमंत्री खाद्यान्न सुरक्षा योजना को मजबूत बनाने के लिये 946 करोड़ का प्रावधान।

छत्तीसगढ़ देश का पॉवर हब ऐसे ही नहीं कहलाता क्योंकि हमारा छत्तीसगढ़ है देश का पहला जीरो पावर कट राज्य।

देश में छत्तीसगढ़ ही अकेला और पहला राज्य है जिसने किसानों को सबसे कम 3 प्रतिशत की ब्याज दर पर कृषि ऋण उपलब्ध कराया।

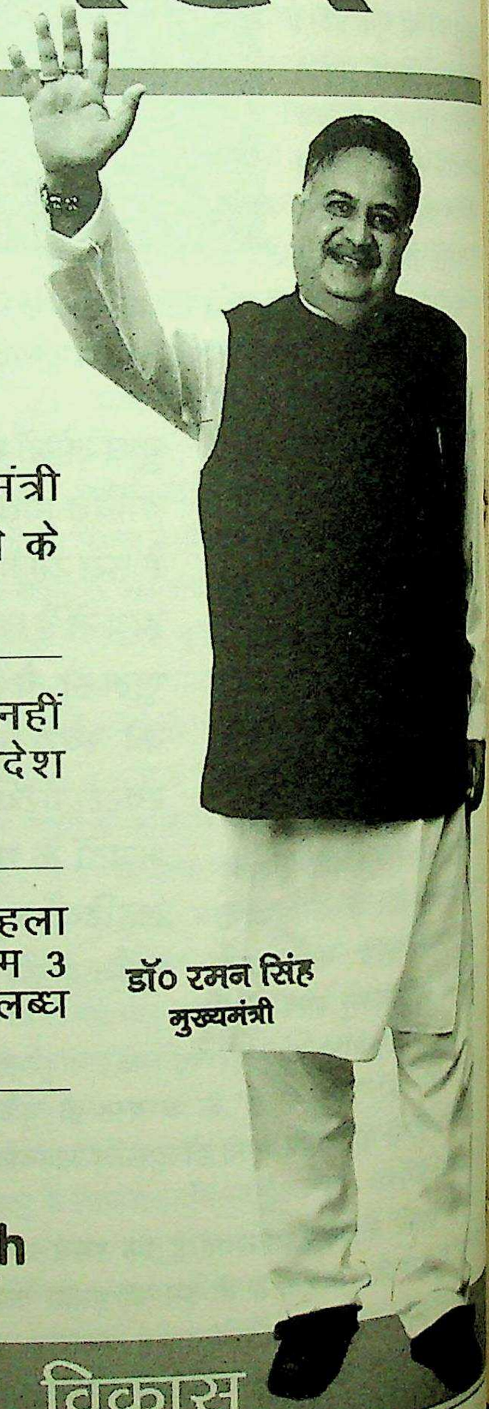

डॉ० रमन सिंह
मुख्यमंत्री

Credible Chhattisgarh
विश्वसनीय छत्तीसगढ़

सबके साथ सबका विकास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक साहित्यिक गोष्ठी का सफल आयोजन

● राजेश्वर उनियाल

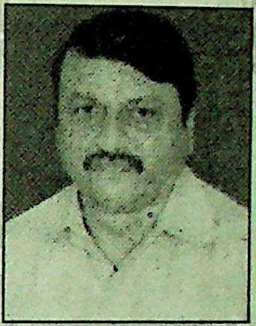

जन्म : १ जून, १९६० को श्रीनगर गढ़वाल (उत्तरांचल) में।

शिक्षा : हिंदी एवं अंग्रेजी में एम.ए., पत्रकारिता में स्नातकोत्तर, पी-एच.डी.।

प्रकाशन : 'शैल सागर' (*काव्य-संग्रह*), 'पंदेरा' (*उपन्यास*), 'हिंदी लोक साहित्य का प्रबंधन', 'उत्तरांचली लोक-साहित्य' व 'उत्तरांचल की कहानियाँ' के साथ २० पुस्तकों सहित वैज्ञानिक/राजभाषा/लोकप्रिय व साहित्यिक कृतियों का लेखन।

पुरस्कार : राजभाषाश्री, डॉ. राजेंद्र प्रसाद पुरस्कार, आशीर्वाद राजभाषा सम्मान, हिमाद्रि रत्न, राजर्षि पुरुषोत्तम टंडन प्रशस्ति-पत्र, पराज साहित्य सम्मान, साहित्य रत्न, काव्यश्री।

संप्रति : सहायक निदेशक (राजभाषा), केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई।

"बेटी, जरा देखना, कहीं दरवाजे पर प्रिंटर तो नहीं खड़ा है?" सुलोचना देवी ने दरवाजे पर घंटी की आवाज सुनकर जूड़ा बनाते हुए अपनी बेटी से कहा। "नहीं माँ, वह तो दूधवाला है। मैं ले लेती हूँ।"

बेटी ने कहने को तो कह दिया, पर वह क्या जाने कि माँ पर क्या बीत रही थी। अब श्रीमती सुलोचना देवी के काव्य-संग्रह के विमोचन के लिए बस ८-१० दिन ही तो बचे थे। हॉल, मेहमान, मुख्य अतिथि इन सबकी तो उन्हें चिंता नहीं थी। अब इतने बड़े महानगर में रहते हुए उन्हें ३० साल हो गए थे। उन्होंने साहित्यिक जगत् पर अपनी अच्छी पकड़ बना रखी थी। इसलिए इन बातों को तो वह निपटा लेंगी, परंतु जिस काव्य-संग्रह का विमोचन होना है, उसका अभी तक मुखपृष्ठ भी नहीं बन सका है। अभी उन्हें अंदर के पृष्ठों की चिंता नहीं थी। सच्ची बात तो यह है कि अभी अंदर के पृष्ठ पूरे हुए भी नहीं हैं। उन्होंने अपने जीवन में कुल मिलाकर ६५ कविताएँ लिखी हैं। उनके चहेते मार्गदर्शक प्रो. शुक्लाजी उन्हें बस जब तब प्रेरणा देते रहते थे कि आप अपना काव्य-संग्रह छपवा दें। देखना, आपकी कविताएँ और आप दोनों बहुत लोकप्रिय हो जाएँगे। प्रो. शुक्लाजी के इन चतुर, क्षमा करें मधुर वचनों को सुनकर वह फूली नहीं समाती थीं। एक दिन उन्होंने प्रो. शुक्लाजी को अपने घर भोजन पर आमंत्रित किया। भोजन कराने के उपरांत उन्होंने अपनी सभी ६५ रचनाएँ प्रो. शुक्लाजी के समक्ष रख दीं और कुछ सकुचाती हुई सी पूछने लगीं कि बताइए सर, क्या ये सभी सचमुच में प्रकाशन योग्य हैं? मैंने तो इन्हें बस यों ही लिख दिया था। प्रो. शुक्लाजी ने सभी कविताओं पर एक सरसरी नजर डाली। उन्होंने पच्चीस कविताओं को प्रकाशन के अयोग्य ठहरा दिया। अब बची कुल ४० कविताएँ।

कहीं यह पुस्तक छोटी या पतली न लगे, इस बात को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय लिया गया कि प्रो. शुक्लाजी उन २५ अस्वीकृत कविताओं में अपने ढंग से निखार लाकर उनको भी प्रकाशन योग्य उपलब्ध करा दें। बस यह सब देख श्रीमती सुलोचना देवी सचमुच में जोश में आ गईं और उन्होंने पुस्तकों को प्रकाशित करने की ठान ली।

अब ज्यों-ज्यों पुस्तक विमोचन का समय पास आता जा रहा था, श्रीमती सुलोचना देवी की समस्याएँ बढ़ती जा रही थीं। पुस्तक विमोचन के लिए यह निर्णय लिया गया कि अभी सभी कविताओं की केवल ५-५ की प्रतियाँ ही कंप्यूटर से निकाली जाएँ। जब प्रो. शुक्लाजी अन्य २५ कविताओं को भी ठीक-ठाक कर देंगे तब सभी को एक साथ प्रकाशित कर लेंगे। वैसे भी फोटो तो मुखपृष्ठ की ही ली जाती है। वह आकर्षक होना चाहिए, लेकिन यह प्रिंटर अभी तक मुखपृष्ठ का डिजाइन भी नहीं दिखा पा रहा है।

खैर, मुखपृष्ठ तो ३-४ दिन में छप जाएगा, परंतु समारोह की रूपरेखा भी तो अभी से बनानी होगी। प्रो. शुक्लाजी ने महत्त्वपूर्ण सुझाव देते हुए यह भी कहा कि कहीं उस दिन किसी ने कोई अन्य कार्यक्रम रख दिया तो समस्या उत्पन्न हो जाएगी। इसलिए सबसे पहले आप सभी को अभी से सूचित कर दें कि अमुक दिन साहित्यिक समारोह है, ताकि सभी लोग पहले से ही अपना कार्यक्रम निश्चित कर लें।

एक शाम को श्रीमती सुलोचना देवी एवं प्रो. शुक्लाजी ने समारोह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के आयोजन हेतु चर्चा करनी प्रारंभ की। अब समस्या यह हुई कि समारोह का मुख्य अतिथि किसे बनाया जाए। प्रो. शुक्लाजी को डॉ. त्रिपाठीजी के अतिरिक्त कोई नाम सूझता ही नहीं था। बहुत उपकार था उनपर डॉ. त्रिपाठीजी का। उन्हीं के मार्गदर्शन में उन्होंने पी-एच.डी. की उपाधि ली थी। उन्होंने ही जैसे-तैसे उन्हें प्रोफेसर के पद तक भी पहुँचाया था, लेकिन श्रीमती सुलोचना देवी की नजर अपने शुभचिंतक प्रो. रामस्वरूप तिवारीजी की ओर थी। दोनों ने गहन चिंतन-मनन के बाद यह निर्णय लिया कि समारोह की अध्यक्षता डॉ. त्रिपाठीजी से कराई जाए व प्रो. तिवारीजी मुख्य अतिथि होंगे, लेकिन यहाँ टकराव डॉ. त्रिपाठीजी व प्रो. तिवारीजी में भी था। दोनों के अहं टकराते थे। दोनों अगर मंच पर एक साथ बैठेंगे तो वे वक्त-बेवक्त टीका-टिप्पणी कर माहौल बिगाड़ते रहेंगे। इसलिए यह निर्णय लिया गया कि दोनों के बीच में साहित्य-प्रेमी स्थानीय विधायकजी को बैठा दिया जाए। निमंत्रण-पत्र में लिख दिया जाएगा कि माननीय विधायकजी पुस्तक का विमोचन करेंगे। बस, हो गया समस्या का निदान।

अब मंच तो सज जाएगा, परंतु अतिथियों का क्या होगा। सौ-सवा सौ कुरसियोंवाले सभागृह में अगर पचास-साठ लोग भी नहीं आए तो विधायक महोदय क्या सोचेंगे। हालाँकि उम्मीद तो है कि पचास-साठ लोग आएँगे। पर नहीं आए तो? तब क्या करेंगे? लेकिन कहते हैं कि जैसे-जैसे समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, वैसे-वैसे उनका समाधान भी निकलता रहता है। बस, इस समस्या का हल समारोह के होनेवाले अध्यक्ष महोदय अर्थात् डॉ. त्रिपाठीजी ने निकाल लिया। उन्होंने अपने दिमाग पर जोर देते हुए श्रीमती सुलोचना देवी को एक राय दे दी कि आप इस पुस्तक-विमोचन के साथ ही समारोह में साहित्य-क्षेत्र की ८-१० प्रतिभाओं को पुरस्कृत करने की भी घोषणा कर दें। अब ८-१० लोगों को पुरस्कार देंगे तो वे तो समारोह में आएँगे ही, साथ ही उनके साथ उनके परिवारजन व ईष्ट-मित्र भी आएँगे। अब अगर हर पुरस्कृत प्रतिभा के साथ औसतन ४-५ लोग भी आए तो ४०-५० श्रोता तो यही हो गए। आप चाहें तो इनके सम्मान आदि का खर्च मैं उठा लूँगा। प्रो. त्रिपाठीजी ने २५० रुपए प्रति शॉल के हिसाब से ८ शॉल का मूल्य दो हजार रुपए व श्रीफल, माला आदि हेतु अलग से ५०० रुपए अर्थात् २५०० रुपए श्रीमती सुलोचना देवी को दे दिए। साथ ही उन्होंने ८-१० लोगों की एक सूची भी थमा दी कि आप इनको पुरस्कृत करने हेतु विचार कर सकती हैं। इससे पहले कि श्रीमती सुलोचना देवी कुछ सोचें या बोलें, डॉ. त्रिपाठीजी ने उनको आश्वासन भी दे दिया कि वह इन सम्मानित होनेवाली प्रतिभाओं का जीवन-परिचय स्वयं तैयार कर लेंगे तथा उनको समारोह में पहुँचने हेतु निमंत्रण भी दे देंगे। आप चिंता न करें। आपको और भी कई काम करने हैं।

श्रीमती सुलोचना देवी ने एक हाथ में दो हजार पाँच सौ रुपए व सम्मानित होनेवाले अतिथियों की सूची पकड़ी तथा दूसरे हाथ से अपना पर्स उठाते हुए डॉ. त्रिपाठीजी को नमस्कार कर बाहर निकलीं। उनकी आधी चिंता तो दूर हो गई थी। अब ४०-५० लोग तो आएँगे ही और ८-१० लोगों को सम्मानित करने का सौभाग्य अलग से मिल रहा था। उन्होंने कार में बैठते हुए एक नजर उस सूची पर डाली तो कोई भी नाम उनको परिचित नहीं लगा। पर मुझे इससे क्या, इनका धाँसू परिचय तो डॉ. त्रिपाठीजी लिखकर देने ही वाले हैं। पढ़वा लेंगे किसी से भी।

अपना आत्मबल सँभालते हुए श्रीमती सुलोचना देवी अपने सर प्रो. शुक्लाजी के साथ प्रो. तिवारीजी को भी आमंत्रित करने उनके निवास पर पहुँची। प्रो. तिवारीजी मँजे हुए साहित्यकार व जमे हुए मुख्य अतिथि थे, जमे हुए इसलिए कि वह किसी भी समारोह में मुख्य अतिथि बनकर जाते थे, अपने सारगर्भित भाषण से श्रोताओं का दिल जीत लेते थे। उनको विषय की आवश्यकता नहीं होती थी। परंतु इस समारोह की अध्यक्षता डॉ. त्रिपाठीजी कर रहे हैं, अर्थात् मुख्य अतिथि के बाद वह अध्यक्षीय भाषण में अपना तो गुड-गोबर कर देंगे। तो अब क्या करें? वैसे भी वहाँ अधिकांश श्रोता डॉ. त्रिपाठीजी के निमंत्रित लोग ही होंगे। तभी उनके दिमाग का बल्ब जला। उन्होंने श्रीमती सुलोचना देवी को निहारते हुए पूछा कि क्या आपने समारोह के बाद कवि-सम्मेलन भी रखा है। जैसे ही श्रीमती सुलोचना देवी ने नकारात्मक अंदाज में सर हिलाया, प्रो. साहब के चेहरे पर चमक सी आ गई। प्रो. तिवारीजी ने मैडम को समझाते हुए कहा कि भई, अब देखिए, सौ-सवा सौ के सभागृह में अगर आधी सीटें खाली रहीं तो सभा अधूरी कहलाएगी। ऐसा कीजिए कि आप समारोह के बाद एक कवि-सम्मेलन का भी आयोजन कर दीजिए और शहर के तमाम नामी व गुमनाम सभी कवियों को निमंत्रित कीजिए कि भई, कवि-सम्मेलन भी है और आपको अपनी रचना पढ़नी है। बस, देखना शहर के स्वनामधन्य ३०-४० कवि आपके हलके निमंत्रण पर ही अपनी रचनाएँ सुनाने के लिए उमड़ पड़ेंगे। इससे सभागृह पूरा भर जाएगा और आपको मुफ्त में वाहवाही भी मिल जाएगी। परंतु इसमें एक टेक्निकल समस्या आएगी। श्रीमती सुलोचना देवी ने अपने अनुभवी चश्मे को साफ करते हुए कहा कि हमारे शहर में कवि तो कई हैं, परंतु सभी अलग

श्रीमती सुलोचना देवी ने अपने अनुभवी चश्मे को साफ करते हुए कहा कि हमारे शहर में कवि तो कई हैं, परंतु सभी अलग-अलग गुटों में बँधे हुए हैं। अब समस्या यह है कि जैसे ही मैं किसी कवि को निमंत्रित करूँगी तो वह पहले पूछेगा कि संचालन कौन कर रहा है, तब मैं क्या करूँ? काफी विचार-विमर्श के बाद प्रो. शुक्लाजी ने एक महत्त्वपूर्ण राय दी कि क्यों न हम तीन-चार मंच-संचालकों से संचालन करवाएँ। अब जो कवि जिस संचालक के गुट के होंगे, उनके नाम उनकी सूची में रख दिया जाए। बस सब खुश।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलग गुटों में बँधे हुए हैं। अब समस्या यह है कि जैसे ही मैं किसी कवि को निमंत्रित करूँगी तो वह पहले पूछेगा कि संचालन कौन कर रहा है, तब मैं क्या करूँ? काफी विचार-विमर्श के बाद प्रो. शुक्लाजी ने एक महत्त्वपूर्ण राय दी कि क्यों न हम तीन-चार मंच-संचालकों से संचालन करवाएँ। अब जो कवि जिस संचालक के गुट के होंगे, उनके नाम उनकी सूची में रख दिया जाए। बस सब खुश।

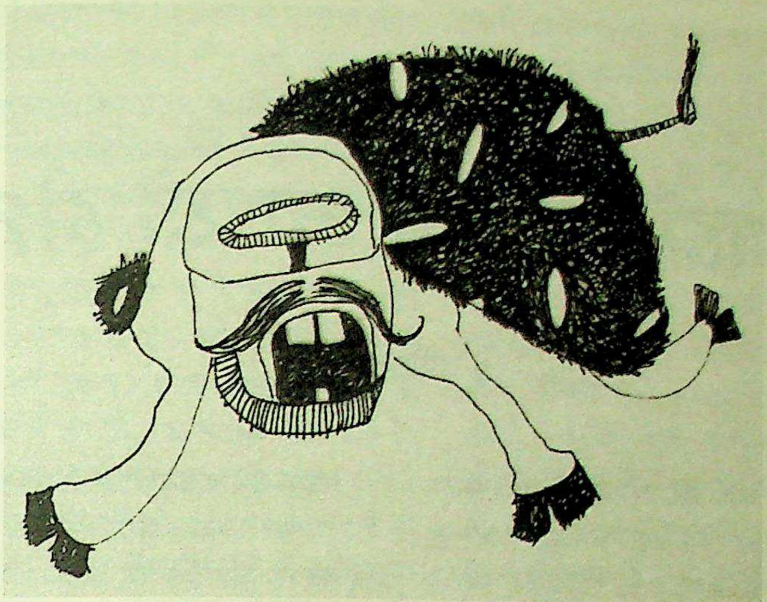

लेकिन ३०-४० कवि। इतने कवियों से कविताएँ पढ़वाने का समय कहाँ मिलेगा? अब हॉल कुल तीन घंटे के लिए लिया है। उसमें पुस्तक-विमोचन व सम्मान में ही दो-ढाई घंटे बीत जाएँगे, फिर ३०-४० कवियों को'' ? श्रीमती सुलोचना देवी आगे कुछ कहतीं, इससे पहले प्रो. शुक्लाजी ने हँसते हुए कहा, ''अरे, टेंशन आप क्यों लेती हैं। ये सब मंच-संचालकों पर छोड़ देते हैं।''

□

रविवार का दिन। शाम के चार बजते ही अतिथियों का आना प्रारंभ हो गया। डॉ. त्रिपाठीजी का अनुभव बिलकुल सही निकला। आज पुरस्कृत होनेवाले सभी महानुभाव अपने साथ चार-छह परिवारजनों को लेकर सज-धजकर आ रहे थे। अब भले ही उन्हें कोई पहचानता न हो, परंतु उनकी भाव-भंगिमाएँ बता रही थीं कि वह ही सम्मानित होंगे। धीरे-धीरे कवियों की टोलियाँ भी आने लगीं। कवियों की एक विशेषता होती है, उन्हें निमंत्रण-पत्र मिले ना मिले, आयोजक उन्हें स्वयं फोन कर आमंत्रित करें ना करें, बस उन्हें एक एस.एम.एस. कर दें, पहुँच जाएँगे वे समारोह में दाँत निपोरते हुए। उन्हें अपने मान-सम्मान से ज्यादा अपनी कविता पढ़ने की उत्सुकता होती है। कई कवि तो बिना एस.एम.एस. के भी आ जाते हैं, उन्हें केवल मालूम होना चाहिए कि कवि-सम्मेलन है, बस।

सभागृह खचाखच भर गया। ४०-५० परिवारजन, ४०-५० कविगण व ४-६ साहित्य-प्रेमी श्रोतागण। खूब तालियाँ पीटी गईं। पुस्तक-विमोचन के बाद जब पुरस्कार वितरण हो रहा था तो सभी की उत्सुकता उन सम्मान प्राप्तकर्ताओं के दर्शन करने की हो रही थी। वह बात अलग थी कि उन्हें न तो मंच-संचालक जानते थे, न ही आयोजकगण। बस, केवल डॉ. त्रिपाठीजी जब जिधर देखते, सभी उधर ही देखने लग जाते। आखिर केवल वही पहचानते थे इन महान् विभूतियों को, लेकिन श्री रामदयाल गुप्ताजी के भाई ने थोड़ी गड़बड़ कर दी। अब रामदयालजी शहर से बाहर गए थे तो उनका पुरस्कार लेने उनके छोटे भाई आ गए। उनको केवल डॉ. त्रिपाठीजी ही पहचानते थे। उन्होंने सोचा कि ज्यादा बोलने से क्या फायदा। दाँत निपोरते रहे। पहले रामदयालजी का डेढ़ पेज का जीवन-परिचय पढ़ा गया, फिर विधायक महोदय ने उनको माला पहनाई, शॉल ओढ़ाया, खूब फोटो खिंचे, पर जब उनसे दो शब्द बोलने को कहा गया तो रामदयालजी के छोटे भाई ने कह दिया कि मैं रामदयाल नहीं हूँ, वह शहर से बाहर गए हुए हैं, इसलिए मैं उनका पुरस्कार लेने आया हूँ। अब भाई का पुरस्कार लेना कोई गलत बात नहीं है, परंतु पहले बता देते तो मंच-संचालक की किरकिरी तो नहीं होती। क्या शानदार परिचय करा रहे थे वे श्री रामदयालजी का!

करीब दो घंटे तक चले पुस्तक-विमोचन व सम्मान-समारोह के बाद जलपान की व्यवस्था की गई थी। संचालक महोदय ने कई बार घोषणा की कि जलपान करने के तुरंत बाद हम कवि-सम्मेलन प्रारंभ करेंगे; परंतु जलपान के बाद सम्मानित महानुभाव अपने परिजनों के साथ अन्यत्र व्यस्त होने का बहाना कर निकलने लगे।

अब सभागृह में छत्तीस कवि, तीन मंच-संचालक तथा तीन-चार अतिथिगण बचे हुए थे। कुल चालीस मिनट का समय और इतने कवि? अब क्या करें? श्रीमती सुलोचना देवी ने परिस्थिति को भाँपते हुए कह दिया कि अब यह मंच मंच-संचालकों के अधीन है। वे ही अपनी कुशलता के साथ इस कार्यक्रम को संपन्न करें। पहले संचालक महोदय ने समय की कमी को दोहराते हुए चार-छह मिनट तक अपनी प्रतिभा का भारी-भरकम प्रदर्शन किया, फिर उन्होंने अपने प्रिय कविजी, जोकि अकसर उनके कार्यक्रमों के प्रायोजक होते हैं, उनको सादर मंच पर बुलाया। पहले कवि जमे तो उखड़े ही नहीं। आठ-दस मिनट तक अपनी बासी रचनाएँ सुनाते रहे, फिर मंच पर कवियों का आना-जाना प्रारंभ हो गया। बमुश्किल सात-आठ कवियों ने अपनी रचनाएँ सुनाई होंगी कि तभी हॉल की घंटी बज गई। जैसे-तैसे एक-दो और कवियों को निपटाकर व फटाफट सभी कवियों को बुलाकर उनके हाथों में एक-एक गुलाब का फूल पकड़ा दिया गया तथा समय कम होने की मजबूरी बताते हुए कवि-सम्मेलन समाप्त करने की घोषणा कर दी गई। अब जब मंच-संचालकों का ही नंबर नहीं आया तो बाकी कवियों का कहाँ से आता।

सभागृह के बाहर संयोजिका श्रीमती सुलोचना देवी मुसकराते हुए सभी से एक-एक कप चाय और पीने का आग्रह कर रही थीं। आखिर उनका कार्यक्रम इतना सफल जो रहा।

४०१, गौरव जमुना, गौरव गार्डन,
कांदिवली (पश्चिम), मुंबई-४०००६७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

कहाँ घुसे चले आ रहे हो?

● उपेंद्र कुमार

अरे भाई, ठहरो, ठहरो। कहाँ घुसे चले आ रहे हो? मालूम भी है, यह डब्बा आरक्षित है। माना कि भीड़ के बावजूद यह डब्बा खाली-खाली सा लगता है, परंतु इसका मतलब यह तो नहीं है कि हर कोई ऐरा-गैरा इस आरक्षित डब्बे में घुस आए। अब तो सबके लिए इस देश की गाड़ी में अलग-अलग डब्बे आरक्षित कर दिए गए हैं, फिर खोजो अपना डब्बा और उसमें सफर करो। यह क्या कि न बाएँ देखा, न दाएँ। जो सबसे अच्छा डब्बा नजर आया, उसी में बैठने को पिल पड़े। अरे, डब्बा अच्छा है तो क्या हुआ, पहले अपनी औकात तो देखो। क्या इतनी बड़ी हैसियत है तुम्हारी कि इस डब्बे में—जहाँ एक-से-एक प्रभावशाली, शक्तिशाली, भाग्यशाली, सज्जन, दुर्जन, सदाचारी, दुराचारी, व्यभिचारी, व्यापारी, दलाल, महाबली, बाहुबली, कुलीन, कुटिल आदि-इत्यादि बैठे हों वहाँ तुम भी बैठ सको? भइए, यह डब्बा राजनीति का डब्बा है। उनके लिए आरक्षित है, जिन्होंने वर्षों चप्पलें घिस-घिस के, तरह-तरह के छल-छद्म करके, हथकंडे अपना के, ब्लैक-व्हाइट का अपार-धन लूट के या लुटा के, गुंडागर्दी करके, पीट-पिटा के देश की राजनीति में अपनी जगह बनाई है।

आजादी के पहले यह डब्बा देश-प्रेमियों, आंदोलनकारियों, क्रांतिकारियों, स्वयंसेवकों, विचारकों और विद्वानों से भरा रहता था; परंतु उस समय इस डब्बे की हालत आज जैसी शानदार थोड़े ही होती थी। गाड़ी का सबसे खराब डब्बा यही होता था। इतनी गंदगी और बदबू होती थी कि गांधीजी जब भी यात्रा करते थे तो संडास से लेकर सारा डब्बा अपने हाथों से धोकर ही बैठते थे।

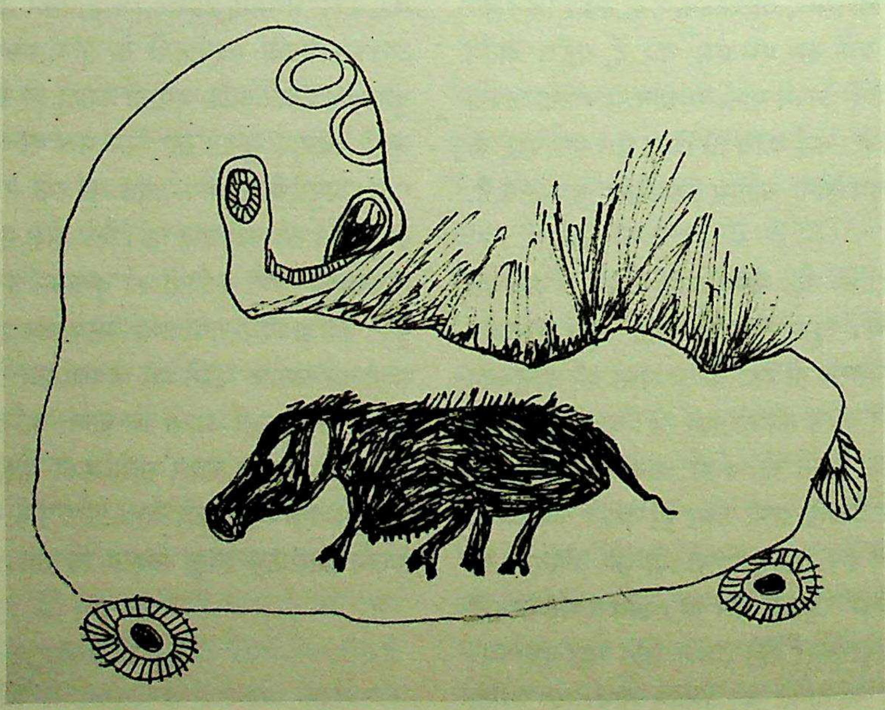

समय बदलता रहा और उसी के साथ डब्बे की हालत भी। जैसे-जैसे करोड़पतियों से संसद् भरती गई, वैसे-वैसे डब्बा भी ... सितारा बनता गया। जैसे-जैसे गुंडे, बाहुबली और महाबली संसद् ... पहुँचते रहे वैसे-वैसे यह डब्बा भी मजबूत, ताकतवर और अभेद्य ... रहा। अब जब यह डब्बा राजनीति के नाम पर आरक्षित है तो इसमें ... कहाँ से घुस बैठने की सोचने लगे?

गेरुआ वस्त्र धारण कर रखा है तो साधुओंवाले डब्बे में बैठो। ... मन नहीं लगे तो बुद्धिजीवियोंवाले डब्बे में चले जाना। वहाँ अनंत ... चलनेवाले विचार-विमर्श, बहसों और दिमागी उखाड़-पछाड़वाले ... में तुम्हारा मन अवश्य लगेगा। जिस जोश-खरोश से वहाँ बहस होती ... लगता है कि क्रांति अब आई कि तब आई। बाँहें ताने, आस्तीनें चढ़ा ... गले की नसें फुला-फुलाकर इन्हें बोलते देख लगता है, कल का सूर्योदय ... भारत में सतयुग लेकर आने वाला है। कल जब हम आँखें खोलेंगे ... गांधीजी का स्वराज आ चुका होगा और राजनीतिवाले डब्बे में बैठनेवाले ... हम सब लोग जनता के बीच अपमानित होकर गधे पर बैठाकर घुमाए ... रहे होंगे; परंतु होना-हवाना कुछ नहीं है इन ढपोर शंखों से। इनकी बंदूक ... के कारतूस अव्वल तो चलेंगे नहीं और चलेंगे तो निशाने पर लगेंगे नहीं ...

लुंगी और दाढ़ी तक ... आपसे कायदे से सँभल ... रही, देश क्या सँभालेंगे ... राजनीति में तो आधे से ... बातें इशारों-इशारों में यह ... हैं और आपको तो आँख ... इशारा करने की भी तमीज ... है। जगह-बेजगह, मौके-... बेमौके आँख मारते रहते ... पता लगा, गलत आँख ... इशारा कर दी और हिंदुस्तान ... पाकिस्तान में दोस्ती के ... युद्ध आरंभ हो गया या ... और ऑस्ट्रेलिया के रिश्ते ... हो गए। आपको लग ... विदेशों से सारा काला धन ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वापस लाकर भारतीय इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में लिखवा लेंगे। यह गलतफहमी है आपकी। अंग्रेज भारतीयों को यूँ ही नहीं काला कहते थे। वे जानते थे कि भविष्य में ये काले, काला धन कमाएँगे और उन्हें ही यानी विदेशियों को ही सौंप देंगे परंतु काले हों या गोरे, हैं तो ये हिंदुस्तानी ही। प्राण जाए, पर वचन न जाए वाली परंपरा के। ये भले ही हिंदुस्तान छोड़ देंगे, परंतु धन वापस नहीं लाएँगे।

राजनीति को अपराधियों से पूर्णतः मुक्त कराने की जो बातें आप करते रहते हैं, कभी गंभीरता से सोचा भी है? यदि ऐसा हो गया तो इसका बुरा प्रभाव कहाँ-कहाँ नहीं पड़ेगा। प्रत्येक राजनीतिक गुंडे के साथ छुटभैए में गुंडों, चेले-चपाटों का जो एक मजमा जुड़ा रहता है, उसका क्या होगा? इनका मुकदमा लड़नेवाले वकीलों का क्या होगा? पुलिस और जेल विभाग के कर्मचारियों की आय के इस स्रोत के बंद हो जाने का क्या प्रभाव होगा? आप तो हजारों परिवारों के मुँह से रोटी छीनने की बात कर रहे हैं। ईमानदारी की हवा चल गई तो कस्बे के प्रशासन से लेकर दिल्ली के सिंहासन तक डोलने लगेंगे। ऐसी सुनामी मार्का ईमानदारी झेलने को अपना यह देश तैयार भी है क्या? आम आदमी की बेहतरी के लिए इतनी बड़ी कीमत? बाबा, आप तो कोई और ही डब्बा खोजो।

वैसे आपकी प्रशंसा करनेवाले भी कम नहीं हैं। उनकी प्रशंसा का अंदाज भी निराला है। वे कहते हैं कि बाबा आम भारतीयों जैसे काले नहीं हैं, लेकिन उनकी दाढ़ी एकदम स्याह-काली है। अब ये भी कहीं वो वाली दाढ़ी तो नहीं है जिसमें तिनका होता है?

यह बात सही है कि गुरु वसिष्ठ से लेकर ऋषि विश्वामित्र तक सभी अपने समय की राजनीति में सक्रिय रहे और न केवल अयोध्या के शक्तिशाली साम्राज्य को संस्कृति-विरोधी रावण के विरुद्ध खड़ा कर दिया, वरन् अयोध्या और मिथिला के बीच पारिवारिक संबंध बनवाकर अयोध्या को और शक्तिशाली बनाने की राजनीति में भी सफल रहे। गांधीजी भी एक तरह से देखें तो संत ही थे। उन्होंने कहा भी था, राजनीति और धर्म मेरे लिए दो अलग-अलग चीजें नहीं हैं, परंतु बड़े लोगों की बड़ी बातें। मैं कालिदास बनकर जिस डाल पर बैठा हूँ उसे काटने से तो रहा। बाबा, राजनीति के इस डब्बे में तो मैं अपने प्राण रहते तुम्हें बैठने नहीं दूँगा। तुम तो जनता पर कृपा बाद में करना, पहले हम पर ही कृपा करो। हमें चैन से दूध-मलाई खाने दो, भ्रष्टाचार के गंदे नाले में डूब-डूबकर नहाने दो। जाओ प्रभु, अपने लिए आरक्षित डब्बे में स्थान ग्रहण करो। संत बिनोवा भावे से लेकर बाबा आम्टे तक को याद करो और उन्हीं की तरह कहीं किसी कोने में बैठ समाज-सुधार वगैरह पर ध्यान दो। करोड़ों का ट्रस्ट तो तुम्हारे पास है ही, उससे ही संतोष करो। कहा भी गया है, 'संतोषं परम सुखम्।'

सा अ

एफ-७३,
ईस्ट ऑफ कैलाश,
नई दिल्ली-११००६५

पंतजी का व्यंग्य

एक बार लोकसभा में संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन पर चर्चा चल रही थी। श्री चिंतामणि देशमुख ने आंदोलन का समर्थन करते हुए कहा, ''महाराष्ट्र का हर बुद्धिजीवी इस आंदोलन का समर्थन कर रहा है।'' गृहमंत्री श्री गोविंद वल्लभ पंत ने व्यंग्य करते हुए कहा, ''श्री देशमुखजी, यह समझ लें कि बुद्धिमान लोग तो महाराष्ट्र छोड़कर अन्य राज्यों में जाकर बस चुके हैं।'' पंतजी का आशय अपने से था, जिनके पुरखे महाराष्ट्र से अल्मोड़ा आकर बस गए थे।

श्री देशमुख पुनः खड़े हुए और बोले, ''पंतजी ठीक कह रहे हैं, बुद्धिमत्ता भले ही राज्य से बाहर चली गई है, किंतु सूझबूझवाले व्यक्ति अभी भी महाराष्ट्र में ही हैं।''

सा अ

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल
बीचपट्टी, पिलखुवा
गाजियाबाद (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

साहित्य के औरंगजेब की आखिरी रात

● सुभाष काबरा

उस दिन वे बहुत परेशान लग रहे थे। मैंने पूछा, ''क्या बात है''? तो बोले, ''तबीयत ठीक नहीं रहती।'' मैंने कहा अच्छा—दवाई की टेंशन होगी।'' वे बोले नहीं, दवा वगैरह तो बड़ा बेटा ले आता है। मुझसे मोहब्बत है इसलिए नहीं, बल्कि बाकी भाई-बहनों पर यह रोब डालने के लिए कि कमबख्तो, ये बाप तो हम सबका है, पर पाल मैं अकेला ही रहा हूँ।''

''हूँ तो ये बात है! पर जब दवा का इंतजाम है तो फिर आप टेंशन में क्यों हैं?''

''दवा का तो है पर दुआ का नहीं। अब जाकर ये समझ में आया कि इंसान को वक्त रहते हुए कुछ दुआएँ भी कमा लेनी चाहिए।''

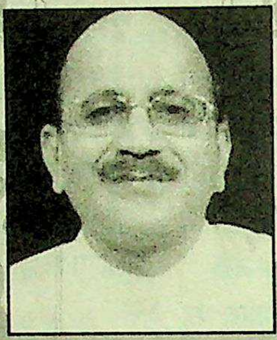

पचपन की उम्र तक ३०० रेडियो प्रोग्राम, ३००० कवि सम्मेलन, धारावाहिकों के ३००० एपिसोड, ४ टेली फिल्म्स, ५ देशों की काव्य यात्राएँ, ४ कैसेट, एकाध किताब। ३०० शॉल-श्रीफल, कुछ पुरस्कार-सम्मान।
संप्रति: जैमिनी स्टूडियो में क्रिएटिव हेड।

''कमाल है इतने बड़े-बड़े पदों पर आप रहे। कविता से नाटक, नाटक से कहानी और कहानी से उपन्यास। हर विधा के आका बने रहे। सरकारी खर्च पर पचासों पर विदेश गए। बिना लिंगभेद किए अपने साथ किस-किस को नहीं ले गए। मैं तो समझ रहा था कि आपके खाते में बहुत सारी दुआएं जमा होंगी।''

''यहीं तो मैं चूक गया यार। मैंने कभी किसी को दुवाएं दी हों तो मेरे खाते में जमा निकलें। अब तो वो लड़कियाँ भी सीधे मुंह बात नहीं करतीं, जिन्हें लड़की होने का एहसास पहली बार मैंने ही कराया था।''

बुजुर्ग परवर की इस टिप्पणी पर मैं शरमा गया तो मुझे डांटकर बोले ''तुम क्यों शरमा रहे हो? शर्म तो मुझे आ रही है। पत्नी को कवियत्री, बेटे को लेखक और क्रिमिनल बाप को स्वतंत्रता सेनानी घोषित करने का जो अपराध मैंने किया है, वो रात-रात भर सोने नहीं देता।''

''इस उम्र में वैसे भी नींद कम आती है अंकल ''वे बोले, ''उम्र की चिंता नहीं है मुझे, नींद की है। अपनी नहीं, उन लोगों की नींद की, जो आज भी मेरे कारण सो नहीं पाते होंगे।''

''आप बेकार में चिंता कर रहे हैं। सोना सबके नसीब में नहीं होता।''

''चार हजार रुपए तोला था।'' वे बोले। ''क्या? मैंने पूछा।'' चार हजार रुपए ताला था सोना। जब मैंने रागिनी को सोने का सेट दिलवाया था और भाविनी रूठ गई थी।'' वे अतीत में चले गए।

''अब राग और भाव तो जीवन में आते-जाते रहते हैं। फिर आप ठहरे प्रयोगवादी। एक ही राग और भाव से कब तक बंधे रहते?''

''भाव बहुत बढ़ गए हैं सरकारी गेस्टहाउस के। पद पर थे तो रोब से आई कार्ड दिखाकर कहीं भी घुस जाते थे। अब रिश्वत देने पर भी दरवाजा नहीं खुलता।'' वे अपनी पीड़ा बता रहे थे।''

ऐसे ही एक गेस्ट हाउस में आपने ईमानदारी पर जो सेमिनार किया था, उसमें बेईमानी के झूठे आरोप लगे थे आप पर।'' मैंने साहस करके कह दिया।

''आरोप सच्चे थे ''वे बोले'' दरअसल एक प्लॉट पड़ा था एम.जी. रोड पर। पप्पू की मम्मी बार-बार टॉर्चर करती थी कि मकान बना लो, मकान बना लो। बस उसकी बातों में आ गया मैं। चुन-चुनकर रिश्वतखोरों को बुलाया और उनसे पैसे वसूल कर ये मकान बनवाया।''

''चलिए, जैसे भी हुई एक छत तो हुई सर पर।''

''हाँ, अब यहीं पड़ा रहता हूँ रात-दिन। कमरे तो सारे बच्चों ने हथिया लिए। कहते हैं, ऊपर जाने के दिनों में ऊपर ही रहो। ताजी हवा आपके लिए बहुत लाभदायक है।''

''और आपने मान लिया आप तो अच्छे-अच्छों की हवा बंद करने के लिए मशहूर थे।''

''यही तो तुम नहीं समझते। आदमी बाहर से आने वाले तूफान का मुकाबला कर सकता है, लेकिन घर में चाय की प्याली, नाश्ते के मर्तबान और रसोई के कनस्तरों में जो तूफान उठता है, उससे निपटना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन है।''

वे प्रतीक्षा के अमिताभ की तरह डायलॉग बोल रहे थे और पुराने दिनों का जलसा याद कर रहे थे।'' जलसे वाले दिनों में तूफान तो हर साल उठता था, जब आप पैसा लेकर अकादमी के पुरस्कार अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिश्तेदारों में बाँट देते थे।''

''ये आरोप गलत हे। हम पच्चीस परसेंट लेते थे। सर्विस चार्ज बोलकर। बाकी राज्यों में जाकर देखो। साठ परसेंट का रेट चल रहा है। खैर, ये सब व्यस्तता वाले दिनों की यादें हैं। अब तो बिल्कुल खाली हूँ।''

''आप कुछ लेखन-वेखन क्यों नहीं करते? अब तो वक्त भी है आपके पास।''

''काहे का लेखन यार। मैं तो एक ठेकेदार का लड़का था। वहाँ कॉम्पटीशन बढ़ गई तो साहित्य का ठेका ले लिया। एक लाईन भी ढंग की लिखी हो तो गंगाजली उठवा लो। जिंदगीभर लोगों से लिखवाता रहा और अपने नाम से छपवाता रहा।''

मैं हैरान था कि झूठ के पुलंदे से बना ये साहित्य श्रीकांत, आज सच क्यों बोल रहा है?

''अब एक आखिरी उम्मीद है तुमसे।'' उन्होंने कहा।

''जी आदेश करें।''

''मैं जिंदगी भर अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में चर्चा में रहा, टी.वी. पर नजर आता रहा। वादा करो कि मेरे जाने के बाद, जब तक तुम जिंदा हो तब तक, मेरा जिक्र जिंदा रखोगे। उन घोटालों को छोड़कर, जिनके केस मुझ पर चल रहे हैं।

''जी!''

''वादा करो कि मेरी आत्मा की शांति के लिए दो-चार श्रद्धांजलि सभाएँ भी करोगे। मैं तुम्हारे लिए कभी कुछ नहीं कर पाया। पर तुम मेरे लिए इतना जरूर करोगे।''

मैं हतप्रभ था। उन्होंने मेरा हाथ थाम लिया और वादा लिए बिना छोड़ने के मूड में नहीं थे। हारकर मैंने वादा कर लिया,

''ठीक है, मैं कोशिश करूँगा।''

''कोशिश नहीं, पक्की बात करो, वरना मैं आत्मा बनकर तुम्हारे आस-पास मँडराता रहूँगा। अखबारों और टी.वी. चैनलों के दफ्तरों में तोड़-फोड़ कर दूँगा।''

मैं घबरा गया। मैंने कह दिया। ''मैं वादा करता हूँ।''

मेरे हाथों में उनका हाथ ढीला पड़ा। गरम से नरम होता हुआ ठंडा होने लगा। मैं समझा, उनके कलेजे को ठंडक पहुँच रही होगी। पर मैं गलत था। हाथ छुड़ाकर मैं जैसे ही प्रस्थान के लिए मुड़ा, धड़ाम की आवाज आई। वे कुरसी से गिर चुके थे और उनके प्राण पखेरू उड़ चुके थे। शायद इस वादे में ही उनके प्राण अटके थे। आइए दोस्तो, इस सभा में हम आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करें। उनकी आत्मा की शांति के लिए नहीं, बल्कि अपनी-अपनी आत्मा की शांति के लिए, जिसे एक नकली और बुरी आत्मा से हमेशा-हमेशा के लिए छुटकारा मिल गया।

सा॰ अ॰

बी/८, खत्री अपार्टमेंट
स्कूल रोड, बॉम्बे टॉकीज लेन,
मलाड (प.), मुंबई-४०००६४

महादेवीजी के व्यंग्य-बाण

महादेवीजी उन दिनों प्रीवियस में पढ़ती थीं। सांसारिक प्रपंचों ने ऊब पैदा की तथा अचानक मन में आया कि भिक्षुक बन जाऊँ। उन्हें बुद्ध के विचारों ने प्रभावित किया था। उन्होंने लंका के बौद्ध विहार के महास्थविर से पत्र द्वारा संपर्क किया कि वे भिक्षुणी बनना चाहती हैं। दीक्षा के लिए कब लंका आएँ। भिक्षु महास्थविर की ओर से पत्र मिला कि वे लंका से नैनीताल स्थित विहार में अमुक तारीख को पहुँच जाएँगे। वहीं आकर दीक्षा ग्रहण कर लें।

महादेवीजी ने अपनी तमाम संपत्ति दान कर दी तथा एक दिन नैनीताल जा पहुँचीं। उन्होंने विहार (आश्रम) में देखा कि भिक्षु अंग्रेजों जैसे ठाठ-बाट का आनंद ले रहे हैं। उनके मन को यह देखकर झटका लगा कि यदि इन्हें इतना तामझाम रखना था तो फिर भिक्षु क्यों बने?

महादेवीजी को कमरे के अंदर ले जाया गया। भिक्षु सिंहासनारूढ़ थे। उन्होंने अपना चेहरा पंखे से ढक रखा था। महादेवीजी उन्हें देखने दूसरी ओर बढ़ीं कि उन्होंने मुँह फेरकर फिर से चेहरा ढक लिया। वे यह देखकर विस्मित हुईं। कमरे से बाहर निकलीं तथा सचिव से पूछा, ''महास्थविर मुख को पंखे से क्यों ढके रखते हैं।'' उसने उत्तर दिया, ''ये स्त्री का मुँह नहीं देखते।''

महादेवीजी ने व्यंग्य में कहा, ''हम ऐसे दुर्बल व्यक्ति को गुरु कैसे बना सकते हैं, जो स्त्री को घृणा की दृष्टि से देखता है, आत्मा न तो स्त्री है न पुरुष, फिर भी वह भेद करता है। इतने कमजोर मनोबल वाला हमें क्या देगा।'' वे वापस लौट आईं।

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

धत्, अपने को फ्लर्ट होना भी नहीं आता

● अतुल कनक

"क्या यार अतुलजी! मैं लगातार आपको फ्लर्ट कर रही हूँ और आप हैं कि इस बात को सीरियसली ही नहीं ले रहे।'' उस बीस-बाईस साल की लड़की ने जब मुझसे कहा तो मैं चौंका। मेरा चौंकना स्वाभाविक था। चालीस बरस के आदमी को एक बीस-बाईस साल की लड़की फ्लर्ट करने का फैसला कर ले, तो आदमी को समझ में ही नहीं आता कि वह आर्थिक उदारवाद के परिणामों की सराहना करे या संचार क्रांति की सफलता को दुआएँ दे।

अपने से करीब दुगुनी उम्र के आदमी को फ्लर्ट कर पाना आसान बात नहीं होती! लेकिन वह लड़की डंके की चोट पर कह रही थी कि वह ऐसा कर रही है। उसे शिकायत थी कि मैं उसकी कोशिशों को गंभीरता से नहीं ले रहा। लेकिन मुझे लगता था कि वह खुद अपने आपको गंभीरता से नहीं ले रही। वरना आप ही बताइए कि विश्वव्यापी आर्थिक मंदी ने अभी इतना विकराल रूप भी धारण नहीं किया है कि कोई जवान लड़की मुझ जैसे फटीचर के दरबार में आकर कहे कि वह मुझे फ्लर्ट कर रही है।

मैंने जिस दौर में होश सँभाला था, उस दौर में छोटे शहरों में न तो फ्लैट संस्कृति पनपी थी और न फ्लर्ट संस्कृति। इसलिए मेरे जैसे लोग जब देखते थे तो आलीशान मकान का सपना देखते थे और जब करते थे तो गंभीरतापूर्वक केवल प्यार करते थे। उस जमाने में प्यार करने का अपना रोमांच हुआ करता था। आदमी जिससे प्यार करता था, उससे बिछुड़ने के बाद या तो कविताएँ लिखता था या शराब पीने लगता था। शराब और कविताओं, दोनों ने देश की ऊर्जा का बहुत अपव्यय किया है। शराब की बिक्री से तो फिर भी सरकारों को अच्छे राजस्व की प्राप्ति होती है, जिसके दम पर वह जनकल्याणकारी कार्यक्रम संचालित करती है, लेकिन कवितागिरी ने देश के आर्थिक विकास में ऐसा कोई महत्त्वपूर्ण योगदान किया हो—यह बात अपनी तो जानकारी में नहीं है।

लेकिन प्यार करना या कविताई करना आसान काम नहीं है। इसके लिए आदमी को समय की जरूरत होती है। छोटे शहरों में भी मकानों के लिए जगह की और प्यार करने के लिए समय की गुंजाइश नहीं बची है। इसलिए लोग रहने के लिए फ्लैटों से और दिल लगाने के लिए फ्लर्टिंग से काम चला रहे हैं। मैं उस लड़की से कहना तो चाहता था कि बाई! फ्लर्टिंग-व्लर्टिंग का मतलब अपने को समझ नहीं आता। तू यदि अपने लिए ऐसा-वैसा कुछ महसूस करती है तो सीधे-सीधे प्यार कर। इधर-उधर बहकाती क्यों है? लेकिन चालीस साल की उम्र में यह डर ज्यादा सताने लगता है कि कोई आपको बिलकुल ही पिछड़ा हुआ नहीं समझ ले। इसलिए मैं लड़की की बात सुनकर मुसकराकर रह गया।

जन्म : १६ फरवरी, १९६७ को रामगंजगंडी, जिला-कोटा (राज.) में।

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी, अंग्रेजी, इतिहास), एम.बी.ए. (वित्त)।

प्रकाशन : 'पूर्वा' *(हिंदी नवगीत संग्रह)*, 'आओ बाताँ कराँ' *(राजस्थानी कविता संग्रह)*, 'चलो चूना लगाएँ' *(व्यंग्य संग्रह)*, 'जूण-जातरा' *(राजस्थानी उपन्यास)* एवं पत्र-पत्रिकाओं में सात हजार से अधिक रचनाएँ प्रकाशित।

दूरदर्शन के लिए कुछ वृत्तचित्रों का लेखन। माध्यमिक शिक्षाबोर्ड, राजस्थान और वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय के लिए पाठ्यक्रमों का लेखन।

सम्मान : छोटी-बड़ी अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

सोचा था कि घर पर जाकर पत्नी से पूछूँ कि कोई किसी को फ्लर्ट किस तरह से करता है और यदि फ्लर्ट होने वाले को कुछ कायदे कानून न आते हों तो उसे क्या करना चाहिए? क्या फ्लर्ट होने और फ्लर्ट करने का कोई पाठ्यक्रम कहीं पर पढ़ाया जाता है? क्या इंटरनेट पर सोशल नेटवर्किंग की कोई साइट इस मामले में मेरी मदद कर सकती है? लेकिन फिर इस फ्लर्ट के प्रसंग पर पत्नी से कोई बात इस डर से नहीं की कि कहीं यह जिज्ञासा उसे अलर्ट न कर दे।

आजकल मैं सतर्क हो गया हूँ। वह लड़की जब मुझसे बात करती है तो मैं सावधान रहता हूँ कि मेरे व्यवहार से यह न झलके कि मैं फ्लर्ट होने के मामले में अनाड़ी हूँ। मैं जानता हूँ कि फ्लर्ट करने का यह फलसफा केवल मुझ तक ही सीमित नहीं है। जो फ्लर्ट करता है, वह फ्लर्ट करता ही इसलिए है कि उसे एक साथ कई लोगों को अपने मोहजाल में उलझाए रखकर यह सुख महसूस करना है कि वह किसी से कम नहीं है। वह भी स्मार्ट है, आकर्षक है। जब हमारी जवानी का दौर था तब ऐसी हरकतें हमारे साथियों ने भी खूब की थीं, लेकिन अंतर केवल इतना था कि उन्होंने किसी को फ्लर्ट किया तो उसे यह अहसास नहीं होने दिया कि वो फ्लर्ट कर रहे हैं। मगर अब देश ने बहुत तरक्की कर ली है। इतनी तरक्की कि एक बीस-बाईस साल की लड़की चालीस साल के आदमी को किसी आत्मीय संबोधन से संबोधित किए बिना ही सीधे नाम से पुकारती है और शिकायत करती है कि वह आदमी उससे फ्लर्ट क्यों नहीं हो रहा है?

मेरा मन तो कर रहा है कि पूरी ताकत से वह पुराना गाना गाऊँ—''हम लाए हैं तूफान से कश्ती निकाल के, इस देश को रखना मेरे बच्चों सँभाल के'', मगर यह सोचकर चुप रह जाता हूँ कि पता नहीं कौन सा बच्चा मुझे फ्लर्ट कर रहा हो और 'बच्चा' कहे जाने पर मुझे ताने मारने लगे— ''अतुलजी, आप तो कुछ समझते ही नहीं हैं।''

३ए ३०, महावीर नगर विस्तार
कोटा-३२४...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

एक प्लांट जिसका नाम मनीप्लांट

● अनूप मणि त्रिपाठी

मनीप्लांट का प्लांट मुझे आकर्षित करता है। मुझे इसके प्रति जबरदस्त आकर्षण क्यों है? इसके प्रति ऐसे आकर्षित हूँ, जैसे झुग्गी-झोंपड़ी के बच्चों का किसी भंडारे के प्रति आकर्षित होना। इधर कुछ दिनों से मनीप्लांट को लेकर उत्साह वैसे है, जैसे किसी कटी पतंग के पीछे बच्चों का भागना। न तो इसमें फल। न तो इसमें फूल। यह न तो विशालकाय, फिर यह मुझे क्यों आकर्षित करता है? मैं क्यों और कैसे इसके प्रति आकर्षण महसूस करने लगा हूँ? सब 'मनी' शब्द की महिमा है। मुझ जैसे गरीब का इसके प्रति आकर्षित होना स्वाभाविक है। शेक्सपीयर ने कहा था—नाम में क्या रखा है। मैं कहता हूँ—बहुत कुछ जनाब! नाम में कर्म भले न धरा हो, मगर आकर्षण खूब मिलता है। नाम उम्मीद जगाता है। धर्मराज नाम सुनकर ही न्याय मिलने की आस जगने लगती है। जिले में आए नए कप्तान का नाम अगर हलवा लाल हो तो नाम सुनकर डरने की जगह पहले हँसेंगे लोग। वह बात अलग है, पल्ले पड़ने पर उनकी गलतफहमी दूर हो जाए। हम कैसे पहली बार नाम सुनकर अमुक व्यक्ति के बारे में कल्पना करने लगते हैं। अनसुना नाम कल्पना को उड़ने का आधार देता है। भले वो कल्पना नाममात्र ही सही! देखिए, विषयांतर हो गया। बात तो हो रही थी मनीप्लांट की।

जैसे माइंड के आगे 'मनी' लग जाने से वो माइंड मनीमांइड कहलाता है। वैसे ही इस प्लांट के आगे 'मनी' लग जाने से यह मनीप्लांट हो गया है। कई घरों के गमलों में मैंने फैलते देखा है इसे। खूब फैलता है। मनीप्लांट का नाम मनीप्लांट क्यों है? दूसरे कितने प्लांट है। कितने कीमती होते हैं। वे अपनी विशेषताओं के कारण बाद में ढेर सारी मनी भी दिलाते हैं। मगर उनका नाम तो मनीप्लांट नहीं पड़ा। यह गौरव, यह विरुद इसे ही क्यों मिला? और तो और मनीप्लांट को पानी खूब चाहिए। पानी की जरा सी कमी असहनीय है इसके लिए, फिर यह पनप नहीं सकता। पानी पी-पीकर कोई प्लांट पैसा कैसे दे सकता है? पैसा पाने क लिए ढेर सारा पसीना बहाना पड़ता है! ढेर सारा पैसा उगाने के लिए दूसरों का खून तक चूसना पड़ता है! यह तो दोनों काम नहीं करता! फिर पैसा कैसे देगा? इसका नाम मेरे अंदर कल्पना को जन्म दे रहा। जैसा मैंने पहले भी कहा, नाम कल्पना को उड़ने का आधार देता है।

मान लीजिए, सचमुच इसमें पत्तियों की जगह अगर हरे-हरे नोट उगते—तब? तब घर-घर में मनीप्लांट का प्लांट होता। लोग दिन-रात उसे पानी पिलाने में अपना पसीना बहाते। जितना पनपेगा उतना ही नोट लहराएगा! सरकारी पौधरोपण में मनीप्लांट ही होता। सड़क के किनारे-किनारे मनीप्लांट लहराते। मनीप्लांट का जंगल होता। सड़कों-गलियों में नोट बिखरे पड़े मिलते। सुबह सफाई कर्मचारी सफाई करता और नोटों को कूड़ेदान में डाल देता, क्योंकि उसके घर भी तो मनीप्लांट का प्लांट है। तब आयकरवालों की टीम छापे नहीं डालती। तब फॉरेस्ट डिपार्टमेंटवाले घरों-दफ्तरों में छापे डालते। किस-किस ने निर्धारित कोटे से अधिक अपने घर में मनीप्लांट का प्लांट लगाया है, यह जानने के लिए। तब घरों से नोटों का बंडल नहीं मनीप्लांट के पौधों को जब्त किया जाता। लोग प्लांट लगे गमलों को छुपाने के लिए तरह-तरह की तरकीबें लगाते। बिलकुल आज की तरह, जैसे नोटों के बंडल को छुपाने की तरकीबें भिड़ाते हैं। तब आदमी नोट ही खाता, नोट ही बिछाता। नोट की पतंग उड़ाता, नोट की बोट चलाता। अन्न कौन उगाना चाहेगा जब नोट उगानेवाला प्लांट मौजूद हो। यदि यह विकल्प आपको मिले तो आप क्या करेंगे? जाहिर है, आप नोटवाला प्लांट ही लगाएँगे। आप ही क्यों, मैं भी तो वही करूँगा जो आप करेंगे।

काश! मनीप्लांट में मनी फरते। पैसे क्या पेड़ पर उगते हैं? तब ऐसा कोई न कहता। मगर अभी ऐसा कह सकते हैं। अभी इस क्रूर सच का सामना करना ही पड़ेगा कि पैसे पेड़ पर नहीं उगते। सही है, पैसा पेड़ पर नहीं उगता, मगर एक प्लांट अपना नाम मनीप्लांट रख सकता है। मनीप्लांट का नाम मनीप्लांट कैसे पड़ा? मैं नहीं जानता। मनीप्लांट का नाम मनीप्लांट क्यों पड़ा? यह भी नहीं जानता। हाँ, इसकी एक खूबी मैं जानता हूँ, जो मेरे मित्र ने मुझे बताई है। वह कहता है कि मनीप्लांट चोरी से ही लगता है। कहीं से उसकी एक डाल चुरा लाओ और अपने घर के गमले में लगा लो। तभी ये घर में लगेगा वरना नहीं पनपेगा। उसकी बात झूठ हो या सही, लेकिन है तो फायदेमंद। मनी पाने के लिए पहले मनीप्लांट का प्लांट लाए, फिर प्लांट लाने के पहले अपने जेब से मनी लगाए, फिर वो पनपे या न पनपे! पैसे के मामले में अपनी किस्मत वैसे भी दगा दे जाती है। इनवेस्टमेंट में रिस्क फैक्टर है। और जब लगाकर पाया तो क्या पाया! इसलिए मित्र की सलाह पर अमल किया।

आज मैं मोहल्ले के एक घर से मनीप्लांट की डाली चुरा लाया हूँ। आशा करता हूँ कि अब ये मेरे घर भी पनपेगा। मैं खुश हूँ, क्योंकि यह चोरी की लाई हुई डाल लग गई, और अब पनपकर फैल रही है। मित्र की बात सही निकली। मैं उसे खूब पानी पिला रहा हूँ। उसके हरे चिकने पत्ते आँखों को ठंडक पहुँचा रहे हैं। कलेजे को ठंडक 'आनेवाले दिनों में मेरे दिन भी बहुरेंगे' का खयाल पहुँचा रहा है। मेरे घर में मनी का आगमन होगा। मैं प्रतीक्षारत हूँ। मेरी छोटी सी चोरी आज कैसे मेरी खुशी का कारण बन गई है। अब, जब वो डाली लगकर पनप चुकी है। और तेजी से फैल रही है, तब मैं यह कह सकता हूँ, इसका नाम मनीप्लांट क्यों रखा गया है। मनीप्लांट चोरी से लगता है। चोरी होने के बाद भी इसकी डाली पनप जाती है। पनपती ही नहीं, पनप के प्लांट में बदल जाती है। शायद इस खूबी के चलते इसका नाम मनीप्लांट रखा गया है। मनी दे या न दे, मनी उगाने का फिलहाल एक तरीका तो सिखा रहा है यह प्लांट। तभी यह कैसे बँगलों के लॉनों से घरों के गमलों तक खूब पनप रहा है!

ई-५००३, सेक्टर-१२
राजाजीपुरम, लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छह गजलें

● सादिक

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.।

प्रकाशन : उर्दू, हिंदी कविता संग्रह, आलोचनात्मक ए अनुवादित कई पुस्तकें प्रकाशित।

'एवान-ए-उर्दू' एवं 'उमंग' मासिक के संपादक। अने शैक्षिक संस्थाओं के सदस्य।

सम्मान : अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

संप्रति : प्रोफेसर एवं पूर्व अध्यक्ष, उर्दू विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय।

: एक :

राजनीति में कुछेक इतने सफल हो जाते हैं
घपले करते हैं, मगर बच के निकल जाते हैं।

प्राप्त करते हैं वो अधिकार असीमित लेकिन
बात कर्तव्य की आती है तो टल जाते हैं।

लोग होते हैं कई साँप की खस्लत वाले
जब भी अवसर मिले विष अपना उगल जाते हैं।

बाबुओं में भी अदा अफसरों वाली देखी
लाभ हो एक का तो दूसरे जल जाते हैं।

छोटे सिक्कों का चलन खत्म है बाजारों से
पर धड़ल्ले से फटे नोट भी चल जाते हैं।

लॉटरी-सट्टे में आते नहीं पैसे यारो!
गाँठ में अपनी जो है वह भी निकल जाते हैं।

कुछ मुकाम ऐसे हुआ करते हैं सादिक साहब
अच्छे-अच्छों के जहाँ पाँव फिसल जाते हैं।

: दो :

ठगे-ठगे से मुकद्दर की चाल देखते हैं
हर इक दिशा में पनपते अकाल देखते हैं।

सभी सवालों के देकर जवाब, फिर उसके
अधर से फूटता, ताजा सवाल देखते हैं।

वह अंधकार मिटाने की बात करता था
हम उसके हाथ में दिन को मशाल देखते हैं।

समय के अश्व को पहचान ही न पाए जो
लगाम मुँह में तो पैरों में नाल देखते हैं।

कहीं तो ढूँढ़ निकालेंगे अर्थ जीवन का
वह पात-पात तो हम डाल-डाल देखते हैं।

लकीर हाथ की क्या वो बदल नहीं सकते
सड़क पे बैठ जो किस्मत का हाल देखते हैं।

: तीन :

वो समस्याएँ बताते हैं समाधान नहीं
कौन कह सकता है भाषण में कोई जान नहीं।

अपने शुभ लाभ पे ही उनकी नजर है लेकिन
जो क्षति मुझको हुई उनका तो नुकसान नहीं।

'थैंक यू' कहके समझते हैं कि कीमत दे दी
काम करवा के कभी मानते एहसान नहीं।

दुश्मनों ने ही वहाँ जाके लगाई होगी
अब वह पहले की तरह मुझ पे मेहरबान नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

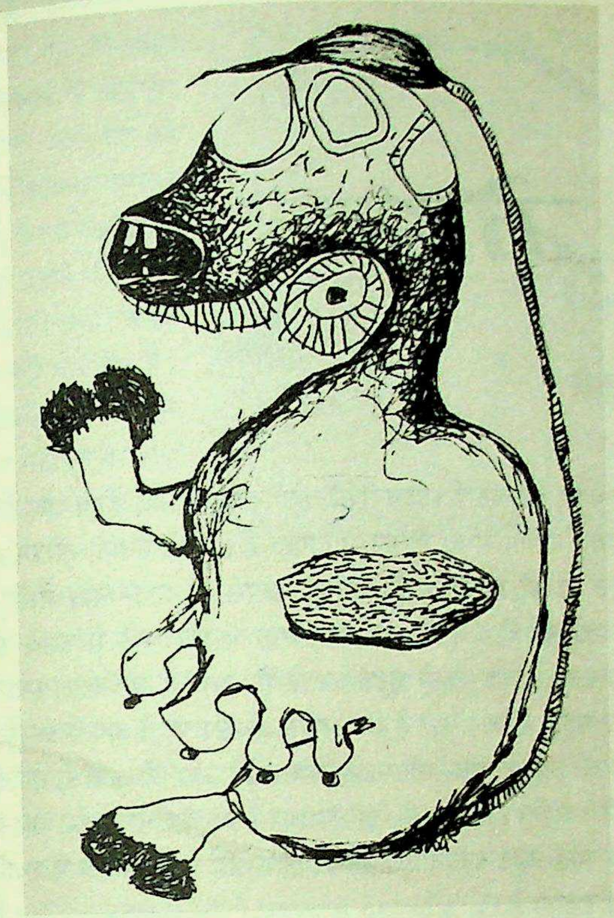

इस मिलावट के जमाने में तो सादिक साहब
खालिस इनसान का मिलना भी अब आसान नहीं।

: चार :

बुजुर्ग कहते थे 'तातारियों' से डरते हैं
जो हमसे पूछो 'सदाचारियों' से डरते हैं।

हरे-भरे हों, या सूखे वृक्ष जंगल के
कभी कुल्हाड़ी, कभी आरियों से डरते हैं।

बना लिया था महाद्वीप को गुलाम अपना
तभी तो हम सभी व्यापारियों से डरते हैं।

धरम हो, जाति हो, भाषा हो या कि क्षेत्र कोई
ये ऐसे भुस हैं, जो चिंगारियों से डरते हैं।

हैं कुछ तो फीस से, कुछ डॉक्टर से खौफजदा
ये न समझना कि बीमारियों से डरते हैं।

चली है जब से वीमेंस-लिब्रेशन की तेज हवा
तो जितने नर हैं यहाँ, नारियों से डरते हैं।

: पाँच :

टुटपुँजियों को दुनिया शिक्षक समझ रही है
कुछ जाहिलों को दुनिया शिक्षक समझ रही है।

अज्ञान के अँधेरों में जी रहे हैं अब तक
उन गाफिलों को दुनिया शिक्षक समझ रही है।

'खाने-खुजाने' जैसा जीवन बिता रहे जो
उन डंगरों को दुनिया शिक्षक समझ रही है।

घर से झगड़ के आएँ, बच्चों पे कहर ढाएँ
उन जालिमों को दुनिया शिक्षक समझ रही है।

होता है जिनके हाथों विद्या का कत्ल हरदम
उन कातिलों को दुनिया शिक्षक समझ रही है।

सच पूछिए तो जिनमें कुछ तेल ही नहीं है
ऐसे तिलों को दुनिया शिक्षक समझ रही है।

: छह :

जो राजनीति चली एक ने उठाने में
तो दूसरे ने दिखाई रुचि गिराने में।

दवाइयाँ मिला करती हैं रोज खाने में
मगर व्यस्त हैं दिन-रात धन कमाने में।

जो पक्षी दाने की खातिर कफस में पहुँचा तो
कभी न लौट सका अपने आशियाने में।

यही तो करके सड़क-छाप बन गए नेता
मजे हैं धज्जियाँ कानून की उड़ाने में।

अजीब लोग हैं उपयोगिता के मद्देनजर
लगे हैं आपसी संबंध को भुनाने में।

छुपाएँ आपसे क्या, बात ही कुछ ऐसी है
हिचक है सुनने में उनको, हमें सुनाने में।

जो पकड़े जाते हैं अपराधी उच्चकोटि के
पहुँच के ऐश ही करते हैं जेलखाने में।

ए जी-१/४७ सी
विकासपुरी, नई दिल्ली-११००१८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

कुएँ का मेढक

संतोष खरे

मैं जब भी उनसे मिलने जाता हूँ, वे अत्यधिक व्यस्त दिखाई देते हैं। अपनी मेज पर गंभीर मुद्रा में या तो कुछ पढ़ते या लिखते नजर आते हैं। उनकी मेज पर पुस्तकों-पत्रिकाओं का ढेर लगा रहता है। बगल में टेलीफोन, फैक्स, फोटोकॉपी की मशीन उनके लेखकीय व्यक्तित्व को गरिमा प्रदान करते लगते हैं। यदा-कदा उनके सचित्र वक्तव्य अखबारों में पढ़ने को मिलते हैं। धर्म-अधर्म, तीज-त्योहार, शिक्षा-अशिक्षा, समाज-राजनीति, बागवानी-पाककला, साहित्य-कला, नाटक-फिल्म, कविता-कहानी, समीक्षा-आलोचना, खेल-खिलाड़ी, व्यापार-व्यवसाय, शासन-सरकार आदि विषयों पर वे समयानुकूल टिप्पणी करते रहते हैं। जीवन का शायद ही ऐसा कोई पक्ष हो, जिस पर साधिकार न बोल सकते हों। इन्हीं कारणों से वे गोष्ठियों के अनिवार्य वक्ता बन चुके हैं, पर उनकी व्यवस्थाओं के कारण वे उन्हीं आयोजनों में जा पाते हैं, जिनमें उन्हें मुख्य अतिथि या अध्यक्ष बनाया जाता हो। उनका अच्छा-खासा व्यापार है, जिसे उनकी सुयोग्य संतानें सफलतापूर्वक चला रही हैं। वे तो व्यापार में केवल तब सक्रिय होते हैं, जब कोई नंबर दो का मामला फँस जाता है या आयकर-विक्रय कर की राशि बचाने की समस्या पैदा होती है। तब वे अपने संपर्कों-संबंधों के आधार पर इन स्थितियों का एक-न-एक आसान समाधान निकाल ही लेते हैं। जब ऐसी कोई समस्या नहीं होती तब वे निश्चिंत होकर अपना समय लेखन में लगाते हैं। मैं तो उनकी लेखन प्रतिभा से शुरू से ही प्रभावित हूँ। उनकी डायरी में सात-आठ ऐसी कविताएँ लिखी गई हैं, जिनके दम पर विगत पचास वर्षों से कवि सम्मेलनों, गोष्ठियों में वाह-वाही लूटते आ रहे हैं। अब तो अधिकांश स्थानीय श्रोता यह पहले से जान जाते हैं कि अमुक अवसर पर वे अपनी अमुक कविता, अपनी अमुक भाव-भंगिमा के साथ पढ़ेंगे और श्रोताओं से तालियाँ बटोर लेंगे। साहित्य समीक्षकों, इतिहासकारों को यह तथ्य नोट करना चाहिए कि सात-आठ कविताएँ लिखकर लोकप्रिय कवि के रूप में स्थापित हुआ जा सकता है।

> **पाठक उनकी पुस्तकें पढ़ें या न पढ़ें, इस बात की उन्हें कोई परवाह नहीं रहती। अपनी परिचय-सूची (बायोडाटा) में इन प्रकाशनों के उल्लेख मात्र से वे संतुष्ट रहते हैं। उनके कमरे में लगभग पचास-साठ चित्र, जिनमें या तो वे किसी विशिष्ट व्यक्ति के साथ हैं या किसी संस्था द्वारा सम्मानित होने के अवसर के हैं, फ्रेम करवाकर सलीके के साथ टाँगे गए हैं। किसी नए व्यक्ति के आने पर उसे नाश्ता कराने के पूर्व प्रत्येक चित्र का विस्तार से वर्णन करते हैं। स्वयं को प्रकाशन और आत्म-प्रशंसा से दूर रहने की बात करते हैं।**

ऐसा नहीं है कि उन्होंने कुछ और नहीं लिखा। बड़े व्यापारियों-उद्योगपतियों के सम्मान में अभिनंदन-पत्र, स्थानीय अखबारों में सामयिक आलेख, अपने इष्ट देवता पर महाकाव्य और जीवनी आदि ऐसे प्रकाशन हैं, जो उनके लेखन का लोहा मनवाने के लिए पर्याप्त हैं। पाठक उनकी पुस्तकें पढ़ें या न पढ़ें, इस बात की उन्हें कोई परवाह नहीं रहती। अपनी परिचय-सूची (बायोडाटा) में इन प्रकाशनों के उल्लेख मात्र से वे संतुष्ट रहते हैं। उनके कमरे में लगभग पचास-साठ चित्र, जिनमें या तो वे किसी विशिष्ट व्यक्ति के साथ हैं या किसी संस्था द्वारा सम्मानित होने के अवसर के हैं, फ्रेम करवाकर सलीके के साथ टाँगे गए हैं। किसी नए व्यक्ति के आने पर उसे नाश्ता कराने के पूर्व प्रत्येक चित्र का विस्तार से वर्णन करते हैं। स्वयं को प्रकाशन और आत्म-प्रशंसा से दूर रहने की बात करते हैं। उनकी इस आदत का मैंने और मेरे कुछ मित्रों ने यह लाभ लिया है कि जब-तब उनके कमरे में बैठकर उनके चित्रों अथवा उनकी पुस्तकों की प्रशंसा कर उसके बारे में उत्सुकता दिखाते हुए प्रश्न पूछने लगते हैं। तब वे घंटी बजाकर नौकर से अच्छा नाश्ता-चाय या कॉफी लाने के लिए कहकर विस्तार से उन चित्रों या पुस्तकों की जानकारी देते हैं। हम नाश्ते की प्रतीक्षा में उनकी बातें सुनते हुए उनकी सराहना करते रहते हैं और चाय-नाश्ता आने पर (जो अकसर काफी विलंब से आया करता है) उसका सेवन कर तत्काल उनसे नमस्ते कर चल देते हैं। मैं उनसे नाश्ते के स्तर पर गहराई से जुड़ा हुआ हूँ।

उनके शानदार निवास स्थान में सुविधा के हर उपकरण हैं। ए.सी., बड़े परदेवाला टी.वी., गैरेज में महँगी कार, तीन टेलीफोन, चार मोबाइल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

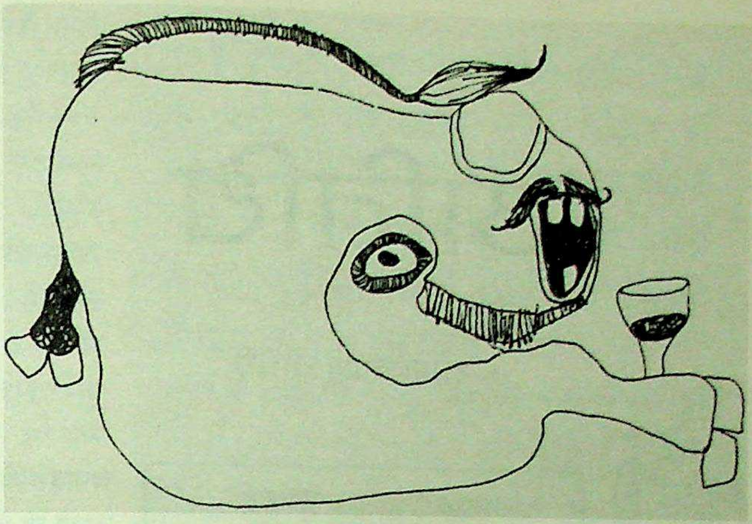

आदि देखकर हर व्यक्ति प्रभावित हो जाता है। अवसर के अनुसार हर बड़े अधिकारी और नेता को अपने आवास में बुलाकर उसका स्वागत-सत्कार करना जानते हैं। संपर्कों का लाभ उठाने की कला में वे माहिर हैं। रही-सही कसर उनका साहित्य पूरी कर देता है। स्थानीय अखबारों में 'वरिष्ठ साहित्यकार' के विशेषण के साथ उनका नाम प्रकाशित होता है और पूरा शहर उन्हें 'वरिष्ठ साहित्यकार' मान लेता है। जब एक बार उन्हें तस्करी के आरोप में पकड़ा गया था, तब उन्होंने धन और बुद्धि के द्वारा उस आरोप से मुक्त होकर यह साबित कर दिया था कि उनका व्यक्तित्व कितना प्रभावशाली है। वे नगर के संभ्रांत नागरिक माने जाते हैं।

अच्छा खाना-पीना, अच्छा रहन-सहन और अच्छी दिनचर्या ने उनके चेहरे की चमक को बढ़ा दिया है। अपनी धन-संपत्ति को देख-देखकर वे स्वस्थ और प्रसन्न रहते हैं। लोगों से अधिक मिलना-जुलना पसंद नहीं करते। खाली समय में अपने बगीचे में पेड़-पौधों की सिंचाई करते हैं। लोग कहा करते हैं कि वे केवल उन्हें चाय पिलाते हैं, जिनसे उन्हें कोई काम करवाना होता है या जो उनकी चापलूसी करता हो, उसको वे केवल पानी पिलाते हैं, वह भी माँगने पर। अनावश्यक बातें नहीं करते। जब कोई अधिक देर तक उनका मूल्यवान् समय नष्ट करता है तो वे अपनी व्यस्तताओं की बात कर उसे जाने के लिए विवश कर देते हैं। वास्तव में वे व्यावहारिक और सफल व्यक्ति हैं। उनकी बात करने के ढंग से उनके सुखी और समृद्ध होने का आभास होता है। वह शहर की 'क्रीम' माने जाते हैं। लोग उनके मुँह पर उनकी प्रशंसा और पीठ पीछे बुराई करते हैं, पर उनकी इस बात के लिए सराहना की जानी चाहिए कि वे समाज के इस व्यवहार से चिंतित नहीं होते। वे अपनी दुनिया में मग्न रहते हैं। वे सुखी और संतुष्ट हैं। समाज के लिए उनके पास समय नहीं। वे सदैव व्यस्त रहते हैं।

उन्हें देखकर मेरे मन में उस मेढक का चित्र उभरता है, जो कुएँ में रहकर सुखी रहता है। जब इच्छा होती है तो टर्र-टर्र कर लेता है।

७, राजेंद्रनगर, सतना
(म.प्र.)

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

अतिथि

● ओमप्रकाश चौधरी

हमारा देश 'अतिथि देवो भव' को मानने वाला देश है, इसीलिए हमारी सरकार खूँखार आतंकवादियों और देश के दुश्मनों को पालती रहती है, कभी न्याय के नाम पर, कभी मानवाधिकार के नाम पर और कभी वोट बैंक के नाम पर। अतिथि-सत्कार की ऐसी परंपरा आपको और कहीं देखने को नहीं मिलेगी। पिछले दिनों एक फिल्म आई थी, 'अतिथि, तुम कब जाओगे'। अतिथि से परेशान परिवार उसे विदा करने को क्या कुछ नहीं करता, पर अतिथि है कि अंगद के पाँव की तरह जमा रहता है। अतिथि-सत्कारवाले इस देश में ऐसे अतिथि मेजबान को कितना रौंदते हैं, यह कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है।

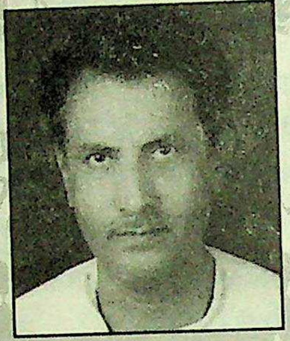

जन्म : ४ जून, १९५६।

शिक्षा : एम.ए. लिब.एस-सी., एल-एल.बी.।

कृतित्व : स्थानीय समाचार-पत्रों में यात्रा-वृत्तांत व व्यंग्य लेख प्रकाशित।

संप्रति : ज्ञानमंदिर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) में ग्रंथालय के पद पर कार्यरत।

मेरे एक परिचित हैं। गलती से वे मध्य प्रदेश के एक प्रमुख महानगर में रेलवे स्टेशन और बस स्टैंड के नजदीक रहते हैं, जहाँ से उनके घर पैदल ही जाया जा सकता है। और ऊपर से वे ठहरे मेहमाननवाज और मुलाहिजा पालनेवाले, हो गया करेला और वह भी नीम चढ़ा। अब आलम यह है कि आएदिन उनके घर में मेहमानों का जमावड़ा लगा रहता है। एक जाने वाला होता है, नया उसके पहले आ जाता है। उनके घर में भी बच्चे हैं, जिन्हें मैं समझता हूँ कि नोबेल पुरस्कार मिलना चाहिए अतिथियों की भीड़ के बीच अपनी पढ़ाई अच्छी तरह से पूरी करने के लिए, क्योंकि मेहमानों के इस

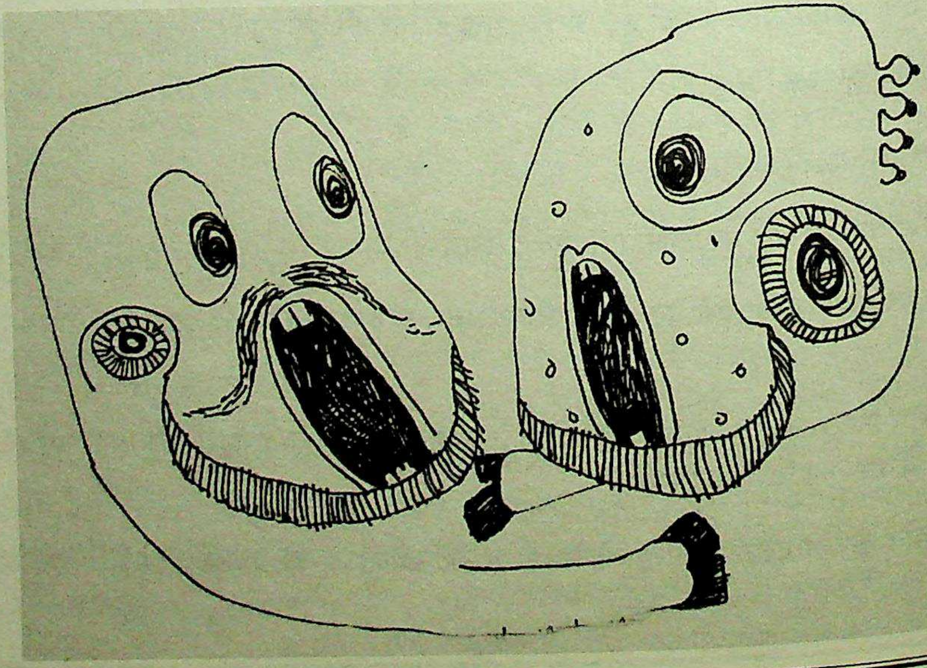

जमावड़े के बीच भी यदि आप इंजी... जाओ या पी-एच.डी. कर लो तो है न... और वह भी लड़कियों के लिए।

उनके घर का आलम यह है कि... बीमार आ रहा है तो उसके लिए ... अपाइंटमेंट भी लो, उसे दिखाने भी ज... उसका आदर-सत्कार भी करो। शादी के... में तो वे बेचारे शादी में तब पहुँचते हैं ज... वापस जा रहे होते हैं। कारण, वही मेहमान... क्योंकि धर्मशाला घर के पास ही ... बुलानेवाले ने चाहे कितना ही अच्छा ... किया हो, मेहमान वहाँ नहीं, इनके यहाँ... आएगा चाहे उसे चाय पीना हो, तैयार ... या मिलना हो—ये बेचारे लगे हैं इनकी ... और जब शादी में पहुँचे तो बुलानेवाला ... देर से क्यों आए? अब आप ही बताइए, मेहमाननवाजी से हल... बेचारे जाएँ तो जाएँ कहाँ। हालात तो यहाँ तक पहुँच जाते हैं कि ... ढंग से सो भी न... ऐसे में मेरे जैसा दूर... समझदार प्राणी व... घबराता है कि ज... जाऊँ तो ये डाँट... कि भरी गाड़ी में ... कई बजन तू क्यों...

इनके विप... इसी महानगर ... मेहमान आपके ... फटकेंगे भी नहीं, ... शहर से ... किलोमीटर दूर रह... या तो उन्हें समय ... या बेतकल्लुफी ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमारो घर भोत दूर है। यह वाक्य मैं अपने बच्चों की शादी में कई बार सुन चुका हूँ, क्योंकि मेरे यहाँ मेहमान बनना यानी २०० किलोमीटर की यात्रा करना। अब आप ही बताइए कि ऐसे में आदमी 'अतिथि देवो भव' के अनुरूप आचरण करे तो करे कैसे? यह और बात है कि कुछ मेजबान मेहमान के आने की खबर मिलते ही उसे रुख्सत करने के दाँव-पेच लड़ाने लगते हैं। और ऐसे में मेहमान उनके घर एक दिन भी रह ले तो समझो, उसने किला जीत लिया। मेजबान स्वागत तो बड़ा हँसके करेगा, पर बार-बार यह अहसास जरूर दिलाता रहेगा कि जल्दी जाने में ही आपकी भलाई है। यदि पानी पिला दिया तो पूछेगा, चाय तो आप पीकर ही आए होंगे या इस भयंकर गरमी में चाय हानिकारक होती है। यदि चाय पिला दी तो पूछेगा, खाना तो आप घर जाकर ही खाएँगे। या आपके सामने घर के अन्य सदस्यों को घर गंदा करने के लिए ताना देंगे। और कुछ नहीं तो घर छोटा होना या महँगाई का रोना रोने बैठ जाएँगे। मतलब साफ है कि आप मिल लिये, अब खिसको।

यह तो उन अतिथियों का किस्सा है, जिनके न जाने से मेजबान दुखी हो जाता है या वह चाहता है कि खुद भले ही अतिथि बनकर दूसरों की छाती पर मूँग दलें पर उसके यहाँ अतिथि आना तो दूर, उसके आने की खबर भी न आए। मैं बात कर रहा हूँ उन महानुभावों की, जो अतिथि तो बुला लेते हैं, पर उनके न आने से दुखी हो जाते हैं और कई बार तो लानत मलामत से लेकर सड़े टमाटर-अंडे खाने की नौबत तक पहुँच जाते हैं। ये वे मेजबान होते हैं, जो संस्था नाम की मुसीबत में किसी पद पर बैठे होते हैं। ये पदाधिकारी अपनी संस्था का नाम चमकाने के चक्कर में साधारण से लेकर भारी-भरकम अतिथियों को आमंत्रण देकर अपने पाँव पर खुद कुल्हाड़ी मार बैठते हैं। ढेर सारे कार्ड बाँटकर अतिथि के आने के इंतजार में अंदर-बाहर होते रहते हैं। देर से आना तो अतिथि का विशेषाधिकार होता है। पर हद तब हो जाती है जब काफी इंतजार करने के बाद अतिथि के पी.ए. या उनके किसी चमचे का फोन आता है कि वे नहीं आ पाएँगे। सॉरी। अब आप इस सॉरी को ओढ़ें या बिछाएँ। जनता आपके सिर पर तबले जो बजा रही है, जिसे अतिथि के नाम से इकट्ठा किया गया है।

मेरे ही शहर की एक नामी संस्था, जो अपने को कार्यक्रम कराने का चैंपियन मानती है, को पिछले दिनों इन अतिथियों ने वो नाच नचाया कि आयोजक चौकड़ी भरना भूल गए। अतिथि पट्ठे भी इतने शातिर निकले कि घर में बैठकर आयोजकों को विश्वास दिला रहे हैं कि वे बस पहुँचने ही वाले हैं। बाहर हॉल खचाखच भरा था और दो घंटे बीत गए, पर अतिथियों का कहीं अता-पता नहीं। खैर, जैसे-तैसे भागते भूत की

उनके घर का आलम यह है कि कोई बीमार आ रहा है तो उसके लिए डॉक्टर से अपाइंटमेंट भी लो, उसे दिखाने भी जाओ और उसका आदर-सत्कार भी करो। शादी के मौसम में तो वे बेचारे शादी में तब पहुँचते हैं जब लोग वापस जा रहे होते हैं। कारण, वही मेहमाननवाजी, क्योंकि धर्मशाला घर के पास ही जो ठहरी। बुलानेवाले ने चाहे कितना ही अच्छा इंतजाम किया हो, मेहमान वहाँ नहीं, इनके यहाँ जरूर आएगा

लंगोटी की तरह कुछ अतिथियों ने पहुँचकर मेजबानों को अंडे और टमाटर खाने से बचा लिया। इन पलायनवादी अतिथियों को हम क्या नाम दें? इनका करें तो क्या? एक भैया बोले, इन्हें बुलाने से पहले इनसे सिक्यूरिटी डिपॉजिट करा लेनी चाहिए। क्या ऐसा हो सकता है? अतिथि बुलाना आपकी मजबूरी है तो स्टेज पर बैठना उनकी भी तो दुखती रग है, पर उसके बाद भी ये अतिथि मेजबान का भट्टा बैठाने से नहीं चूकते।

कभी-कभी कार्यक्रमों के ये अतिथि आने की 'हाँ' कर नहीं आते और आयोजक की फजीहत कराकर उस पर पक्षपात करने का आरोप भी लगाने से बाज नहीं आते। अब हुई न वही बात कि उलटा चोर कोतवाल को डाँटे। अरे भई, यदि आपको लगता है कि मेजबान आपके अलावा किसी दूसरे अतिथि को ज्यादा भाव दे सकता है तो साफ मना करने का साहस क्यों नहीं दिखाते या माइक मिल जाए तो मंच से खरी-खरी क्यों नहीं सुनाते? पीठ पीछे पर-निंदा का खेल क्यों खेलते हो अतिथि? और उस पर तुर्रा यह कि शहर का कोई नामचीन आदमी भी इनके सुर में सुर मिलाकर आयोजकों को बेईमान बताने से नहीं चूकता, चाहे वह ऐसे आदमी पर आरोप लगाए जिसे वह स्वयं जानता है कि उसकी ईमानदारी शंकास्पद नहीं है। तो कुल मिलाकर अतिथि कैसा भी हो, मेजबान की फजीहत तय है, चाहे वह कितना ही ईमानदार और मेहमाननवाज क्यों न हो।

कुल मिलाकर लब्बो-लुआब इतना है कि यदि आप किसी अतिथि को बुला रहे हैं तो उसे ठोक-बजाकर ही बुलाइए, ताकि आपकी हालत सिर मुँड़ाते ही ओले पड़ने जैसी न हो। और नहीं आपको ऐसा लगे कि यह कहाँ हमने आसमान में पत्थर फेंककर उसके नीचे अपना सर दे दिया। और यदि आपको लगता है कोई ऐसा अतिथि आने वाला है, जो जम जाएगा तो खुद पहले ही पलायन करने में भलाई समझें। यही नहीं यदि आप रोज के अतिथि-मिलन से घबरा गए हों तो पहली फुरसत में महानगर के किसी दूर के कोने में अपना आशियाना बसा लें, जहाँ तक आने में अतिथि को दस बार सोचना पड़े और उसके बाद भी वह आ जाए तो आपको भी इस दुर्लभ अतिथि-सत्कार का आनंद आए। पर मैं अंत में ऐसे अतिथियों को कहना चाहता हूँ कि मालवी की इस कहावत 'पहले दिन को पावणो ने दूसरे दिन को पई और तीसरे दिन नी गयो तो थारी अक्कल गई' का ध्यान जरूर रखें।

ग्रंथपाल, ज्ञान मंदिर महाविद्यालय
नीमच (म.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

पानी रे पानी

● चंद्रमोहन दिनेश

मेरी निगाह में जिंदगी में सबसे अहम चीज है पानी। पानी न हो तो जीवन व्यर्थ, यह सृष्टि व्यर्थ। अभी चाँद से जो चित्र प्राप्त हुए हैं, उन्हें देखकर वैज्ञानिकों ने चहककर बयान दिया कि भई, चाँद पर पानी है। पानी माने जीवन, और जीवन माने? पानी।

पानी की बरबादी रोकने के लिए देश चिंतित है। हम भी हैं, आप भी होंगे। हर देशवासी होगा। होना भी चाहिए। और कुछ करें या न करें, चिंता तो कर ही सकते हैं। इसमें अपने पास से क्या जाता है? और जाता भी हो तो इतना त्याग (चिंता करने का) हमें करना ही चाहिए।

पानी के अपव्यय से सरकार चिंतित हुई। एक नारा बना—'जल ही जीवन है। इसकी बूँद-बूँद बचाइए।' मेरी आत्मा जो थी, वह तृप्त हो गई। हम पानी बचाने लगे। नहाने का 'दैनिक कार्यक्रम' 'साप्ताहिक' में बदल दिया। पत्नी व बच्चों को भी कड़ी हिदायतें दीं कि पानी उतना ही पियो जितनी प्यास हो। फालतू में गटकने की जरूरत नहीं। पानी के पैसे लगते हैं। पालिकावाला टैक्स लेने आता है। पहले घरों में पानी के भी मीटर लगे होते थे। रीडिंग ली और बिल दिया। पत्नी तो एक दिन मीटर रीडर पर बरस पड़ी। बोली, 'क्या बकते हो? पाँच हजार गैलन पानी हमने खर्च किया है? झूठे कहीं के। बदलो हमारा मीटर! मुआ यह मीटर भी सरकारी बोली बोलता है।'

मीटर उखड़ गया। दोबारा न लगना था, न लगा। पता लगा, पालिका के पास कई हजार मीटर तो हैं, लेकिन सब खराब हैं। अब पानी नापने-तौलने की इल्लत भी मिटी। अब पानी, पानी की तरह बहाओ! क्या कीजिए

इधर मेरे लिए एक बड़ा धर्म-संकट आन पड़ा है। हाल ही में ए महानगर जाने का सौभाग्य मिला। पानी को लेकर वहाँ एक ताजा-तरीन नारा लिखा मिला—'जल की सोचें, कल की सोचें!' वाह, तबीयत जो थी वह प्रसन्न हो गई। कौन कहता है कि साहित्य मर रहा है, कवि मर रही है। भैया, कविता तो गली-गली, हर चौराहे-पंचराहे पर अप हाजिरी दर्ज करा रही है। फिर भी आप··· ? कमाल है!

लेकिन असली कमाल तो अब सुनिए! जहाँ यह बोर्ड लगा था उसके ठीक नीचे पालिका का स्टैंडपो (समझते हैं न? नल का बंबा) लगा था पाइप में टोंटी नहीं लगी थी। कि जरूरतमंद ने निकाल ली होगी। वैसे इ कोई बुराई भी नहीं है। देश की सं हमारी है कि नहीं? रेलवे हमारी संपत्ति कि नहीं? डिब्बों में लिखा भी होता है 'रेलवे आपकी संपत्ति है···' (आगे लाइन मत पढ़िए, क्योंकि इसकी सुरक्षा लिए क्या हम ही बचे हैं, बचे भी हैं कितनी देर तक? ज्यादा-से-ज्यादा के से शाहजहाँपुर स्टेशन तक। एक घंटे रास्ता। चलिए, एक घंटे तक हम इस सुरक्षा कर लेंगे। अब आगे इसकी सु कौन करेगा? कई बार तो हम महज कारण दुःखी होते रहे कि रेलवे यानी ह संपत्ति आगे जा रही है। पता नहीं आगे रास्ते में इसके साथ क्या सुलूक हो, ले हमारे दुःखी होने से देश तो दुःखी हो जाएगा और न देश की जनता हो जाएगी हमारे देश की जनता महान् है (यह महान् है, यह तथ्य तो स्थापित किया ही जा चुका है), इसलिए

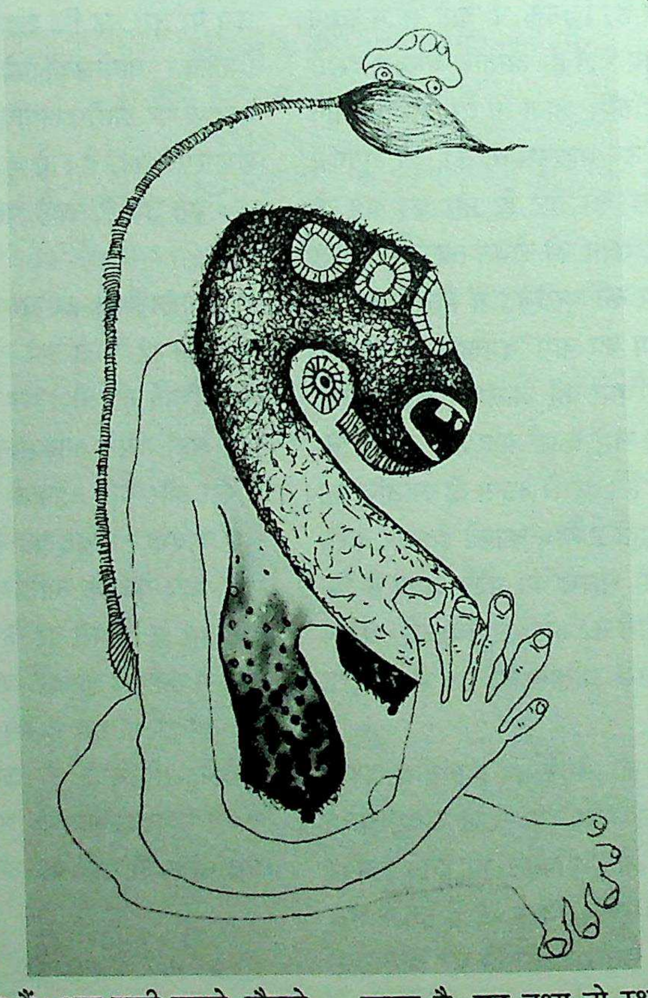

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाँ, यह मान सकता हूँ कि जल ही जीवन है। पानी बिना जीवन की कल्पना ही व्यर्थ है। संसार के सारे क्रियाकलापों में इसकी उपस्थिति से इनकार नहीं किया जा सकता। महिलाएँ भोजन बनाने में, दूधवाला दूध की मात्रा बढ़ाने में, चित्रकार रंगों में, खेतीवाला खेती में, भगवान् वर्षा करने में और भक्तगण जो हैं, चंदन घिसने में इसका प्रयोग करते हैं। इसी पानी को श्रावण मास में भक्तजन शंकरजी का अभिषेक करने में, महिलाएँ व कन्याएँ मेहँदी लगाने में और हमारी रक्षक यानी पुलिस जिद्दी व हिंसा पर उतारू भीड़ को खदेड़ने में इसे अहिंसक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल करती है। कभी-कभी आग (कलेजे की नहीं) बुझाने में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

दुःखी होती ही नहीं। चाहे मोहल्ला, शहर, प्रांत, राष्ट्र या अंतरराष्ट्र हो, कहीं भी दुःखद घटना हो जाए, हम कतई दुःखी नहीं होते। टी.वी. पर चैनल किसानों की आत्महत्याएँ दिखा रहा हो, निठारी कांड दिखा रहा हो, निरपराधों की नृशंस हत्याएँ दिखा रहा हो, मुंबई में आतंकी हमले दिखा रहा हो, तब भी बाकी तमाम चैनल आपको नाचने-गाने के रियल्टी-शो, लतीफेबाजी के कार्यक्रम, फिल्मों के गाने और अविवाहित युवक-युवतियों की जोड़ियाँ मिलाते नजर आएँगे। सामाजिक व्यवस्था ने हमें इतना संवेदना शून्य बना दिया है कि हम पर कुछ असर नहीं होता। किसी का दुःख नहीं व्यापता, सिवा अपने दुःख के! क्या कीजिएगा?

मित्रो! मैं मुख्य बिंदु से भटक गया हूँ। आपने भी नहीं टोका, पढ़ते ही चले गए।

मैं 'जल की सोचें, कल की सोचें' पर था। यह उस 'कल' की तरफ इशारा कर रहा हूँ, जिसे किसी ने देखा नहीं, जाना नहीं। कल क्या होगा, कौन जाने? कल हो न हो (इसी नाम की एक फिल्म भी बनी थी)। सब ज्ञानी-ध्यानी कहते हैं—'केवल आज को जियो। जो अज्ञात है, अदृश्य है, अनिश्चित है—ऐसे कल की क्यों सोचें, भई? विद्वान् कहते हैं कि 'कल' की चिंता में अपना 'आज' बरबाद मत करो। अब बताइए, किसकी सुनें, किसकी न सुनें? जिसकी न सुनो, वही नाराज। दोनों की मानना हमारे लिए मुश्किल। क्या कीजिएगा!

मैं फिर से भूल यानी उद्गम-बिंदु पर लौटता हूँ और अब सिर्फ पानी पर बात करूँगा। मेरे भीतर का लेखक मुझे यही करने के लिए ललकार रहा है। मैं ललकार की अनसुनी नहीं करूँगा। पानी वह वस्तु है, जो (विद्वानों के अनुसार) सृष्टि से पहले भी थी और प्रलय के बाद भी रहेगी—

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर
बैठ वृक्ष की शीतल छाँह।
एक पुरुष भीगे नयनों से
देख रहा था प्रवल प्रवाह॥

प्रसादजी की इन पंक्तियों में सृष्टि में प्रारंभ में भी पानी की उपस्थिति पाई गई है। पानी प्रवाहमय है (बूँद-बूँद बचाने की तो अपेक्षा ही गलत लगती है)। हाँ, यह मान सकता हूँ कि जल ही जीवन है। पानी बिना जीवन की कल्पना ही व्यर्थ है। संसार के सारे क्रियाकलापों में इसकी उपस्थिति से इनकार नहीं किया जा सकता। महिलाएँ भोजन बनाने में, दूधवाला दूध की मात्रा बढ़ाने में, चित्रकार रंगों में, खेतीवाला खेती में, भगवान् वर्षा करने में और भक्तगण जो हैं, चंदन घिसने में इसका प्रयोग करते हैं। इसी पानी को श्रावण मास में भक्तजन शंकरजी का अभिषेक करने में, महिलाएँ व कन्याएँ मेहँदी लगाने में और हमारी रक्षक यानी पुलिस जिद्दी व हिंसा पर उतारू भीड़ को खदेड़ने में इसे अहिंसक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल करती है। कभी-कभी आग (कलेजे की नहीं) बुझाने में भी इसका प्रयोग किया जाता है। मेरे विचार से, इतने विस्तृत विवेचन के उपरांत अब यह उल्लेख करने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती कि इसे पीया भी जाता है।

मुहावरा-रचनाकार भी इसमें पीछे नहीं रहे हैं। 'पानी तो पी ही लीजिए', 'पानी तक को नहीं पूछा', 'चाय-पानी' और 'आँख का पानी मर जाना' आदि कुछेक मुहावरे मुझे उदाहरण के लिए याद आ गए हैं।

पिछले दिनों एक पंक्ति मेरे सामने से गुजरी—'प्रभुजी, तुम चंदन हम पानी!' क्या बात है! 'चंदन' और 'पानी' यानी एक ठोस और एक तरल। काव्य की भाषा में कहें तो एक तरल है, एक सघन, लेकिन एक दूसरे के पूरक। एक के बिना दूसरा व्यर्थ। न सूखा चंदन किसी काम का, न खाली पानी। दोनों मिल जाएँ तो अभिषेक की वस्तु बन जाएँ, पवित्र।

लेकिन यहाँ गौर करने की चीज है कवि का वाक्चातुर्य! उसकी विनम्रता से रसी-पगी कल्पना। प्रभु से कुछ कहा भी नहीं और कहने को कुछ छोड़ा भी नहीं। सरल भाव से कह दिया कि हे प्रभु! आप चंदन हैं, सघन हैं, सुगंधित हैं, शीतलता प्रदान करनेवाले हैं और मैं मूढ़मति, दासानुदास—पानी। न रूप रूप''प्रसन्न भी हैं। इसीलिए स्मित हास्य बिखेर रहे हैं।

कोई मूर्ति देख लीजिए, मुसकराती मिलेगी। भक्त की परम आस्था, दीनता, प्रेम और समर्पण से ही तो हारे हैं प्रभु।

रोशनगंज,
शाहजहाँपुर-२४२००१
(उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

तुम लौट आओ, हे श्रोता!

● भगवान वैद्य 'प्रखर'

हे मेरे सहृदय श्रोता! मेरे दरियादिल दर्शक, तुम लौट आओ! तुम जब से गायब हुए हो तब से सारे आयोजन ठप्प हो चुके हैं। संस्थाओं की बैठकें 'कोरम' के अभाव में रद्द करनी पड़ रही हैं या लगातार मुल्तवी की जा रही हैं। कवि-सम्मेलन गोष्ठियों में तब्दील हो चुके हैं और गोष्ठियाँ वाद-विवाद स्पर्धाओं का रूप ले चुकी हैं। तुम्हारी उपस्थिति से वंचित कुछ कार्यक्रम-प्रेमी अपने घर की खिड़की में 'बैनर' लटकाकर फोटो खिंचवा रहे हैं और 'भारी उपस्थिति भरे सफल आयोजनों के झूठे समाचार छपवाकर अपनी ख्वाहिश पूरी कर ले रहे हैं।

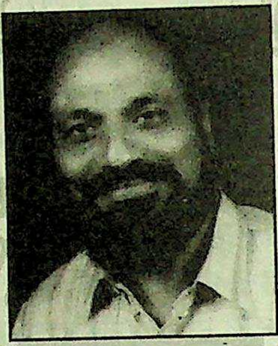

प्रकाशन : तीन व्यंग्य-संग्रह, दो कहानी-संग्रह, एक लघुकथा-संग्रह, दो पुस्तकों का मराठी में हिंदी में अनुवाद, एक संपादित काव्य-संग्रह तथा पत्र-पत्रिकाओं में विविध विधाओं की ६०० से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से नाटक एवं अनेक वार्ताएँ प्रसारित।

सम्मान-पुरस्कार : केंद्रीय हिंदी निदेशालय, भारत सरकार द्वारा 'हिंदीतर-भाषी हिंदी लेखक पुरस्कार', 'मुंशी प्रेमचंद पुरस्कार' (दो बार), 'राष्ट्रीय हिंदी-सेवी सहस्राब्दी सम्मान २०००', अखिल भारतीय कहानी-प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार।

वे सभागृह, जो कार्यक्रम के आरंभ होने से पहले ही तुम्हारी उपस्थिति के कारण 'हाउस फुल' हो जाया करते थे, अब सुनसान पड़े हैं और वहाँ का फर्नीचर पड़ोसी अपने घर ले जा चुके हैं। संगीत सभाओं में तुम्हारे दीदार हुए एक लंबा अरसा बीत चुका है। हाल ही में ड्राइविंग लाइसेंस लेकर मोटर साइकिल को हेलिकॉप्टर की तरह चलानेवाली उत्साही पीढ़ी के प्रतिनिधि यह भूलते जा रहे हैं कि बचपन में वे कभी अपने बुजुर्गों की उँगली पकड़कर तुम्हारी भीड़ में से रास्ता बनाते हुए संगीत सभाओं में जाया करते थे। ऐसी बैठकों में अकसर होनेवाली भारी भीड़ के कारण या तो घंटे-दो घंटे जाकर जगह पकड़नी पड़ती थी या फिर साथ के बालक को कंधे पर उठाकर उफनती हुई नदी की भाँति तुम्हारी भीड़ में से रास्ता बनाना पड़ता था। और उसके बादवाली पीढ़ी तो कहर ढा रही है। वह इस बात पर यकीन करने को ही तैयार नहीं है कि ऐसे आयोजनों में भी कभी इस कदर भीड़ हुआ करती थी। तुम्हारी अनुपस्थिति के कारण कई सिनेमागृह कालाबाजारी करके खरीदे गए अनाज के भंडारण के काम आ रहे हैं या सरकार में शरीक किसी राजनीतिक पार्टी के जनसंपर्क कार्यालय के लिए हथियाए जा चुके हैं। मुझे याद है कि मुगले-आजम, अनारकली और संगम जैसी कई फिल्में तुमने पचासों बार देखकर भारतीय फिल्म निर्माताओं के जहाँ एक ओर हौसले बुलंद किए थे वहीं दूसरी ओर एक्टिंग के नाम पर महज कूल्हे मटकाने वालों को ज्यूबिली-स्टार बना दिया था। मेरी टिकट के आधे पैसे तो जनता-क्लास में भारी संख्या में तुम्हारी उपस्थिति देखकर और हेलन के परदे पर आते ही तुम्हारी सामूहिक सीटियाँ सुनकर वसूल हो जाया करते थे; लेकिन ऐसा क्या हो गया कि तुमने सिनेमा-गृहों से मुँह मोड़ लिया? परसों सत्तर साल की उम्र के जनाब वली से मुलाकात हो गई, जिसने अपनी तीन-चौथाई से अधिक उम्र सिनेमा-टॉकीज के गेट-कीपर के रूप में बिताई है और सैकड़ों फिल्मों के हजारों डायलॉग उसे कंठस्थ हैं। उसने अपनी अंतिम इच्छा व्यक्त करते हुए कहा, 'भाई साहब, अब एक ही इच्छा बाकी है। सिनेमा-टॉकीज के कूड़ा-घर में पड़ा हुआ 'हाउस-फुल' का बोर्ड एक बार टिकट खिड़की पर वहाँ लग जाए जहाँ उसके लगते ही मालिक पूरे स्टाफ को मिठाई के पैकेट और चाँदी के सिक्के बाँटा करते थे।' मैं जानता हूँ कि टिकट-खिड़की पर 'हाउस-फुल' का बोर्ड देखने की जनाब वली की हसरत केंद्र में एक पार्टी की सरकार देखने के कभी पूरा न होनेवाले ख्वाब के समान ही है।

अगर और कहीं न मिल सके तो नाट्य-गृह में तो तुमसे मुलाकात हो ही जाया करती थी। जिसे सिनेमा में सुकून नहीं मिला वह नाटक देखने जरूर जाता था, क्योंकि वहाँ उसके 'सुधी-श्रोता' और 'दर्दी-दर्शक' दोनों की इच्छाएँ पूरी हो जाती थीं। हमारे मीटिंग-स्पॉट हुआ करते थे नाट्य-गृह, जो अब तुम्हारी बेरुखी के कारण चमगादड़ के बसेरे बन गए हैं।

तुम शायद भूल चुके हो, पर मुझे अब भी याद है कि शहर में जब भी कोई सर्कस आता था, तुम हजारों की संख्या में हौसला-अफजाई करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूर जाते थे। सर्कस का कलाकार उसे मिलनेवाले तुच्छ मुआवजे के भरोसे नहीं अपितु उसे दर्शकों से मिलनेवाली वाहवाही के भरोसे जीता है और हर नए शो में नए सिरे से अपनी जान की बाजी लगाता है, यह कहनेवाले तुम कहाँ खो गए हो दर्शक? तुम्हारे दीदार की चाह में भूला-भटका कोई सर्कस कभी आ भी जाता है शहर में तो तुम्हारे जैसे कद्रदानों की बजाय फ्री पासवाले मुफ्तखोरों की भीड़ देखकर बेताब होते सर्कस के शेरों को काबू में बनाए रखना अच्छे-अच्छे रिंग-मास्टरों के लिए कठिन हो जाता है।

तुम शायद भूल चुके हो, पर मुझे अब भी याद है कि शहर में जब भी कोई सर्कस आता था, तुम हजारों की संख्या में हौसला-अफजाई करने जरूर जाते थे। सर्कस का कलाकार उसे मिलनेवाले तुच्छ मुआवजे के भरोसे नहीं अपितु उसे दर्शकों से मिलनेवाली वाहवाही के भरोसे जीता है और हर नए शो में नए सिरे से अपनी जान की बाजी लगाता है, यह कहनेवाले तुम कहाँ खो गए हो दर्शक? तुम्हारे दीदार की चाह में भूला-भटका कोई सर्कस कभी आ भी जाता है शहर में तो तुम्हारे जैसे कद्रदानों की बजाय फ्री पासवाले मुफ्तखोरों की भीड़ देखकर बेताब होते सर्कस के शेरों को काबू में बनाए रखना अच्छे-अच्छे रिंग-मास्टरों के लिए कठिन हो जाता है।

एक जमाना था, जब नागपुर के नाना रेटर और जबलपुर के नाइकर बंधु तुम्हारी खिदमत में अपनी बेहतरीन नकलों का पुलिंदा लेकर गाहे-बगाहे हाजिर होते थे और तुम हजारों की संख्या में उनके कार्यक्रम में उपस्थित रहकर दिल और दिमाग से प्रस्तुत की जानेवाली इस अनूठी कला को रात-रात भर सराहते नहीं अघाते थे। तुम्हारी बेरुखी ने इस अनूठी कला के पनपने से पहले ही उनकी गरदन मरोड़कर रख दीं। कठपुतली का 'शो' करनेवाले कलाकार भी तुम्हारी उपस्थिति के अभाव में या तो सड़क पर आ गए हैं या सरकारी विज्ञापन तैयार करनेवाली कंपनियों के हाथों की कठपुतली बनने पर मजबूर हो गए हैं।

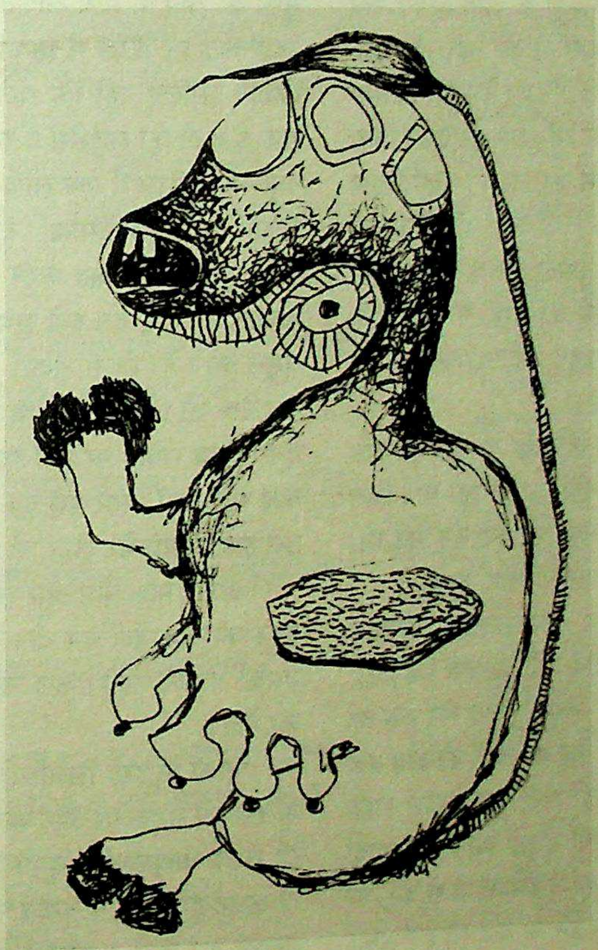

किसी जमाने में दो-दो सप्ताहों तक धूम मचानेवाली रामलीला तुम्हारी अनुपस्थिति के कारण अब किंवदंती बन चुकी है। मेले मृतप्राय हो चुके हैं। जलसे सांस्कृतिक इतिहास की पुस्तकों में दाखिल हो चुके हैं। नुक्कड़-नाटक के नुक्कड़ अभी भी वही हैं और नाटक भी जीवित हैं, लेकिन तुम्हारे मुँह मोड़ लेने से ये दोनों अधमरे-से हो गए हैं। इसीलिए कह रहा हूँ कि हे संस्कार और आस्था चैनल पर हजारों की संख्या में सतत डोलते दिखाई देनेवाले श्रोता! तुमसे अनुरोध है कि इस कैमरा-जनित मायाजाल के जाल से बाहर निकलकर देखो। तुम्हारे दूर-दूर तक फैले सामाजिक संबंधों के कुंज और आपसी मेलजोल के कानन कैसे सूख गए हैं।

संस्थाओं से सिनेमा तक और सभाओं से समारोहों तक दीर्घकालीन अनुपस्थिति से तुम अपना विश्वास वैसे भी खो चुके हो, दर्शक। आज किसी भी आयोजन से संबंधित हर चीज की गारंटी दी और ली जा सकती है। शानदार शामियाना, उत्कृष्ट साउंड-सिस्टम, बेहतरीन कुरसियाँ, पंखे-कूलर-एसी और हर क्षेत्र का सफलतम कलाकार या वक्ता। पैसा फेंक, तमाशा देख! लेकिन तुम्हारी कोई गारंटी नहीं ले सकता। बीस साल के पहले एक विद्वान्-वक्ता शहर में आए थे। तब उन्होंने १० हजार रुपए पारिश्रमिक की शर्त रखी थी। आज वे 'आप जो देना चाहें' की तर्ज पर आने को तैयार बैठे हैं। बस, एक छोटी सी शर्त रखी थी। उन्होंने कहा है कि कम-से-कम ५०० श्रोता हों कार्यक्रम में। यह बात मैंने अपने ६ लाख की आबादीवाले शहर में कइयों को बताई, लेकिन तुम्हारा रवैया देखकर ५०० तो क्या १०० की भी गारंटी लेने को तैयार नहीं हुआ कोई—पारिश्रमिक चाहे दुगना दे दें। यह मेरी ही नहीं बल्कि हर उस शख्स की पीड़ा है जो इस जुमले पर विश्वास रखकर बड़ा हुआ है कि 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।' इसके पहले कि इस जुमले में से 'सामाजिक' शब्द हमेशा के लिए हट जाए, तुम टी.वी. के मायाजाल से मुक्त होकर बाहर निकल आओ, बंधु!···

सा
अ

३०, गुरुछाया कॉलोनी,
साईंनगर, अमरावती-४४४६०७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

पुलिस नाके पर भगवान्

● अशोक गौतम

ज्यों ही अखबार में छपा कि पुलिस लेन के लक्ष्मीनारायण मंदिर में पुलिस की नाक तले चोरी हो गई तो पुलिस को न चाहते हुए भी हरकत में आना पड़ा। हालाँकि एक सयाने ने अखबार को परे फेंकते हुए कहा, 'यारो, डरने की कोई बात नहीं, मजे से सोए रहो। चोरियाँ तो इस देश में नित्यकर्म हैं। सरकार यहाँ सभी को पगार सोने की ही तो देती है। संसद् में वह सोई रहती है, दफ्तरों में हम। मित्रो, जब हम आज तक अपने घर के चोरों को ही नहीं पकड़ सके तो बाहर के चोरों के आगे हमारी क्या औकात! दूसरे, हम चोर पकड़ने के लिए नौकरी तो कर नहीं रहे, सभी की तरह अपना पेट भरने के लिए नौकरी कर रहे हैं। इस देश में हर शख्स को चोरी करने का पूरा अधिकार है। किसी के अधिकार का हनन किस कानून की किताब में लिखा है? रही बात चोरी की, तो यह कहाँ लिखा है कि पुलिस लेन में चोरी करना अपराध है? चोरी कहीं भी हो सकती है। यह तो चांस की बात है कि अबके चोरी अपनी लेन के मंदिर में हो गई। इसलिए इस चोरी को भी दैनिक चोरियों की तरह लें और शांति बनाए रखें।' पर रिटायरमेंट पर बैठे थानेदार साहब पता नहीं क्यों, पहली बार इस चोरी को लेकर एकदम गंभीर हो गए।

और साहब, पुलिस लेन स्थित भगवान् के मंदिर में चोरी हुए चार दिन हो चुके थे, पर चोर था कि पकड़ में नहीं आ पा रहा था। जिस पुलिस के नाक थी ही नहीं, पता नहीं उसकी नाक पर क्यों बन आई थी! शहर में जगह-जगह नाके लगाए जा रहे थे, पर परिणाम शून्य।

दोपहर को बचे चुस्त साथियों के साथ आपातकालीन बैठक में थानेदार साहब ने अपने पेट को जबरदस्ती भीतर को धकेलते हुए कहा, 'दोस्तो! दु:ख की बात है कि अब चोर बढ़ते-बढ़ते पुलिस लेन तक आ गए हैं। हमारे लिए अब परीक्षा का समय आ गया है। चोरों को अब बता देने का समय आ गया है कि हम सोए ही नहीं रहते। हम केवल हफ्ता वसूली ही नहीं करते। हम ईमानदारी से अपनी ड्यूटी करने का माद्दा भी रखते हैं। हम तो चाहते हैं कि हम अपनी ड्यूटी ईमानदारी से करें, पर ये लोग हैं न, लाख अपने चरित्र पर अडिग रहने के बाद भी हमें हमारे चरित्र से गिरा ही देते हैं। मैं मानता हूँ कि इस बिकाऊ संसार में सबकुछ बिकाऊ है। नेता से लेकर वोटर तक सबकी अपनी-अपनी कीमत है, तो ऐसे में हम अमूल्य कैसे हो सकते हैं? खैर, जनता के सामने तो हमारी नाक कटी हुई है ही, पर अब भगवान् के सामने भी अपनी नाक [illegible] दिख रही है। इसलिए हे मेरे रेहड़ी फेरीवालों के बूते जवान [illegible] साथियो! बता दो भगवान् को कि अगर हम कुछ भी करने पर [illegible] कर ही गुजरते हैं। छान मारो पुलिस लेन का चप्पा-चप्पा, मेरा [illegible] शहर का चप्पा-चप्पा और सुधार लो अपना आगा। भगवान् ने [illegible] मंदिर में चोरी करवा हमें एक बार अपनी वरदी की धूल झाड़[illegible] सुअवसर दिया है और फिर पुलिस थाने के साथ लगते रेहड़ीवा[illegible] मुफ्त की चाय के साथ आपातकालीन बैठक समाप्त हो गई। [illegible] रेहड़ीवाला हर बैठक में चाय बिना ऑर्डर के पिलाता है। कोई [illegible] किताब इसलिए नहीं कि थानेदार साहब ने उसे पूरे शहर को [illegible] सप्लाई करने का लाइसेंस दे रखा है। एक पुलिसवाला छोकरा, [illegible] नया-नया पुलिस में एक लाख देकर भरती हुआ था, ने दूसरे के [illegible] चलते-चलते फुसफुसाया, 'देख साले को! रिटायरमेंट पर बैठा [illegible] आगा सुधारने की बात करने लगा है। फिर तो मरे हुओं को [illegible] छोड़ता था। अरे, हम क्यों सुधरें! मुझे अभी नेताजी को दिए पैसे [illegible] वसूल करने हैं। साला नौकरी में लगने के लिए बैंक से लोन ले[illegible] था। नेता को कितना कहा था कि साहब, नौकरी लगते ही किश्तें [illegible] दूँगा, ब्याज समेत; पर नहीं माने।' सीधे बोले थे, 'भैया, इस मा[illegible] कोई सौदा नहीं। सारे पैसे एकमुश्त तो बस एकमुश्त! इस हाथ [illegible] उस हाथ अपॉइंटमेंट लेटर लो।'

अपनी नाक कम और साख अधिक बचाने के लिए पुलिस [illegible] शहर की नाकाबंदी कर दी। जो भी नाके के पास से गुजरता, [illegible] उसकी तलाशी लेती। कुछ नहीं मिलता तो उससे सौ-पचास [illegible] कर देती।

नाकों के इसी सिलसिले में सुबह के चार साढ़े-चार के [illegible] पुलिसवाले सड़क पर आग जलाए एक दुकान की बाहर रखी बेंच [illegible] रहे थे कि ब्राह्ममुहूर्त में घूमने निकले भगवान् के कदमों की आह[illegible] तो अलर्ट हुए। एक ने जमीन पर पड़ा अपना अधसड़ा डंडा उठा [illegible] पटकते हुए कहा, "कौन है बे! चोर!! कहाँ भाग रहा है? कहाँ [illegible] साफ कर आ रहा है?"

"मैं हवलदार साहब, भगवान्!" भगवान् ने आदतन [illegible] कहा। वे तो भक्तों से भी नम्रता से कहते हैं और ये ठहरे पुलिस[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''पर साहब, मैं चोर नहीं!'' भगवान् ने दोनों हाथ जोड़े।
''तो क्या करने निकला था रात को? माशूका से मिलकर आ रहा है? उसका पति घर नहीं होगा, क्यों?''
''नहीं साहब! मैं तो...मैं तो...''
''तू तो, तू तो। चल थाने। जब तक सारे राज न उगलवा दिए तब तक पानी भी न पिऊँगा। तेरे जैसों ने पूरे देश की पुलिस की नाक में दम कर रखा है।''
''साहब! मैं तो ब्राह्ममुहूर्त में घूमने निकला था, फिर सारा दिन व्यस्त हो जाता हूँ न!''
''कहाँ व्यस्त हो जाता है? क्या कारोबार है तेरा? चोरी-चकोरी का?''

''कौन भगवान्? शहर का छटा हुआ बदमाश? क्यों बे! क्या कर रहा है आधी रात को? मर गए चार दिनों से सड़क पर कुत्तों की तरह डेरा जमाए और तू है कि...आ भूतनी के...'' दूसरे ने अपना कोट ठीक कर भगवान् की ओर टूटा डंडा हिलाते हुए कहा। पास ही दारू की तीन खाली बोतलें लुढ़की हुई थीं।

''साहब! मैं, मैं भगवान्!''

''पूरा नाम-पता बता अपना! कहाँ रहता है? शहर में किसी को जानता है?'' पहले ने कड़क हो भगवान् की जेब का एक्सरे करते हुए कहा तो भगवान् की जैसे घिग्घी ही बँध गई। उनसे कुछ बोलते नहीं बना तो पहलेवाला दहाड़ा, ''जाने तब न, जो यहाँ का हो। साले पता नहीं कहाँ-कहाँ से चले आते हैं हम पुलिसवालों की नींद हराम करने। चल अभी पुलिस स्टेशन। शहर की सारी चोरियाँ न कबूल करवा दीं तो मेरा नाम भी मातादीन हवलदार नहीं।''

''पर साहब, मैं चोर नहीं!'' भगवान् ने दोनों हाथ जोड़े।

''तो क्या करने निकला था रात को? माशूका से मिलकर आ रहा है? उसका पति घर नहीं होगा, क्यों?''

''नहीं साहब! मैं तो...मैं तो...''

''तू तो, तू तो। चल थाने। जब तक सारे राज न उगलवा दिए तब तक पानी भी न पिऊँगा। तेरे जैसों ने पूरे देश की पुलिस की नाक में दम कर रखा है।''

''साहब! मैं तो ब्राह्ममुहूर्त में घूमने निकला था, फिर सारा दिन व्यस्त हो जाता हूँ न!''

''कहाँ व्यस्त हो जाता है? क्या कारोबार है तेरा? चोरी-चकोरी का?''

''साहब, मैं भगवान् हूँ। कारोबार करता नहीं, कारोबार में सहायता करता हूँ।''

''कौन भगवान् यार? पूरा नाम बता अपना। भगवानदास, भगवान सिंह, भगवान प्रसाद या फिर...'' हवलदार ने अपने डंडे से अपना माथा ठोंका।

''मैं तलैया के पासवाले मंदिर का भगवान् हूँ, सर!''

''तो रात को क्या करने निकला है?''

''थोड़ा साँस लेने। दिन भर तो जनता की माँगें सुनता-सुनता थक जाता हूँ। अब क्या बताऊँ, हवलदार साहब! बड़े बुरे दिन आ गए! पहले तो जनता सरकार से माँगा करती थी, पर जब से सरकार बहरी हुई है, अपने यहाँ माँगनेवालों का ताँता लगा रहता है। बलिहारी जाऊँ उस पुजारी की कि वह रात को दस बजे मंदिर के द्वार बंद कर देता है। नहीं तो मेरा तो जनता की फरियाद सुनते-सुनते दम ही निकल जाए। पर आप रात को यहाँ कैसे? बुरा मत मानना! आप तो दिन को भी कहीं नजर नहीं आते!'' कह भगवान् ने दोनों हाथ जोड़े।

''क्या बताएँ यार! सिगरेट होगी?''

''क्षमा, मैं धूम्रपान नहीं करता। लोग ही मुझे काफी धुआँ देकर रखते हैं।''

''अपने पुलिस लेन के मंदिर में चोरी हो गई, यार!''

''बधाई! चोर पुलिस लेन तक आ गए।''

''यार, मजाक मत कर भगवान्! यहाँ नाक की पड़ी है और तू है कि...अच्छा चल, तू भगवान् है तो बता, चोर कहाँ होगा?'' हवलदार ने दोहरी चाल चली।

''कह दूँ तो बुरा तो नहीं मानोगे?''

''नहीं! वचन देता हूँ।''

''तो पुजारी से पूछताछ करो।''

''पर वह तो अपना बंदा है, भगवान्! तू बोल क्या रहा है? होश तो ठीक हैं न तेरे?''

''भगवान् हूँ साहब! किस कानून की किताब में लिखा है कि चोर—चोर के भीतर ही होता है? इसलिए उठाओ अपने नाके और पुलिस लेन में गश्त लगाओ।'' कह भगवान् हवा हो लिये। तभी हवलदार ने सिपाही से पूछा, ''लगता है, साली आज ज्यादा ही हो गई। देख न, कोई अपने को भगवान् कहनेवाला मेरा उल्लू बना गया। तू तो नहीं उल्लू बना न?''

''नहीं साहब!''

''हाँ, बनना भी नहीं। तेरी लंबी नौकरी है अभी। यहाँ तो साला उल्लू भी उल्लू बनाने की ताक में रहता है; पर तू कितना पढ़ा है?''

''ग्रेजुएट हूँ साहब!''

''अपने आप न?''

''हाँ साहब!'' कह वह झेंपा।

''गुड! ईमानदारी से नौकरी कर। जागता रह।'' कह हवलदार वहीं बेंच पर लुढ़क गया।

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड,
सोलन-१७३२१२ (हि.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

वाह री दाल!

● ममता मेहता

ऑफिस से घर लौटकर अभी जूते भी नहीं खोल पाया था कि सुमि की दहाड़ती सी आवाज आई, ''आ गए आप! अब जरा यह भी बता दीजिए कि अभी खाने में क्या बनाऊँ, घर में न कोई सब्जी है, न दाल। कितना कह रही थी कि दाल भरवा लो, दाल भरवा लो, पर नहीं, हमेशा अपनी जिद पर अड़े रहेंगे—'अभी रुको, अभी और सस्ती होगी', लो हो गई आपकी दाल सस्ती, ५५ रुपए से सीधी १०० रुपए पर पहुँची है। अब बताओ मुझे क्या बनाऊँ? आपका सिर?''

मुझे चिढ़ हो गई, ''आते ही शुरू हो गई। ऑफिस से थका-माँदा लौटा हूँ और कुछ नहीं तो जरा साँस तो लेने दो। जरूरी नहीं है दाल बनाना, जो घर में हो वही बना लो।''

सुमि हाथ नचाकर बोली, ''आप जिंदगी भर साँस ही लेते रहना, इसके अलावा और तो कुछ ले नहीं सकते। ५५ रुपए तक की दाल तो ली नहीं गई आपसे, 'साँस लेने दो'। मैं कहे देती हूँ, आप दो-चार दिन साँस नहीं लोगे तो मर नहीं जाओगे, पर मैं दो-चार दिन दाल-चावल नहीं खाऊँगी तो जरूर मर जाऊँगी। मुझे तो तुअर की दाल ही बनानी है, दाल ही बनाऊँगी। आप कहीं से भी, कैसे भी मुझे दाल लाकर दो।''

मुझे भी तैश आ गया, ''मैं नहीं जा रहा अभी दाल-वाल लेने। वो भी १०० रुपए किलो की। ऐसी ही नबाबजादी हो तो अपने मायके से मँगवा लो तुअर की दाल का कट्टा, समझी!

जन्म : १८ फरवरी, १९६९।

शिक्षा : एम.ए. *(राजनीति शास्त्र, हिंदी)*, एम.फिल.।

कृतित्व: 'लातों के भूत' *(व्यंग्य संग्रह)* तथा लगभग २०० रचनाएँ, यथा लेख, व्यंग्य, कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

विभिन्न संगोष्ठियों, राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय शिविरों में सहभागिता, आलेख-वाचन, काव्य-गोष्ठियों में सहभागिता, मंचों एवं टेलीविजन पर काव्यपाठ, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सक्रिय सहयोग।

पर मुझे बख्शो। तुअर की दाल, तुअर की दाल। ऐसा लग रहा है तुअर की दाल न हुई, जी का जंजाल हो गई।''

सुमि के हाथ में पतीला, था उसे जोर से पटककर बोली, ''हर चीज मुझे अपने मायके से मँगवानी है तो आपकी जरूरत क्या है? कितनी चीजें तो भिजवाते रहते हैं मेरे मायके वाले। अब दाल-चावल भी उन्हीं से मँगवाऊँ। आप भी तो अपनी उपयोगिता बताइए, ये साबित कीजिए कि आप भी किसी काम के हैं। नाकारा-निकम्मे नहीं। मैं कुछ नहीं जानती, आप जैसे भी हो, मुझे दाल लाकर दीजिए, चाहे १०० रुपए हो या २०० रुपए।''

मैंने साफ इनकार कर दिया, ''इतनी महँगी दाल खाने की मेरी औकात नहीं। अपने आपको बेचकर तो मैं दाल लाने से रहा, तुमको जो बनाना है बनाओ, नहीं बनाना मत बनाओ।''

सुमि ने मुँह बनाया, ''हूँ, अपने आपको बेचकर, आपको खरीदेगा कौन, ऐसा माल जिसकी न गारंटी न वारंटी। कौन आपको खरीदकर पैसा वेस्ट करेगा। तुअर की दाल लाने के लिए कहने पर खुद बिकने की बात करने लगे। काजू, बादाम लाने को कहती तो शायद मुझे और बच्चों को बेचने को तैयार हो जाते। अरे ये तो मैं ही हूँ, जो काम चला रही हूँ और कोई होती तो कब की भाग चुकी होती।''

गुस्से से मेरे कान लाल हो गए, ''तो भाग जाओ ना, रोका किसने है, अच्छा है मुझे भी ये दिन-रात की किच-किच से मुक्ति मिलेगी। रोज सुबह उठो, वही खिटर-पिटर, शाम को आओ वही कचर-कचर। बंद करो अब मेरी छाती पर मूँग दलना।''

सुमि भी बिफर गई, ''देखा, देखा, मुझे मालूम था। आप तो चाहते ही यही हैं कि मैं यहाँ से चली जाऊँ। आप फिर अकेले हो जाएँ, छुट्टे साँड़ की तरह घूमते रहें। न घर की फिक्र करनी पड़े, न बीबी-बच्चों की। न दाल लाने की चिंता हो, न सब्जी लाने की। सब जानती हूँ मैं। जिम्मेदारियों से बचकर भागना है आपको। जिम्मेदारियाँ सामने आते ही साँप सूँघ जाता है आपको। नानी मर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगती है आपकी, लेकिन मैं भी मैं हूँ। इतनी आसानी से तो पीछा छोड़नेवाली हूँ नहीं। दाल तो आपको लानी ही पड़ेगी। चाहे कुछ भी हो जाए, समझे आप!''

मैंने सिर पकड़ लिया, ''फिर दाल! हे भगवान्! आज तो लगता है ये दाल मँगाए और खाए बिना मानेगी नहीं। ठीक है, लाता हूँ पाव भर दाल और मारता हूँ इसके मुँह पर। उस दाल को इसके मुँह में भरकर ही इसका मुँह बंद करूँगा। बहुत हो गया अब ये नाटक! हुँ।''

मन-ही-मन भुन-भुन करता मैं घर से निकला, 'दाल-रोटी खाओ, प्रभु के गुण गाओ, हरी सब्जियाँ खाओ, सेहत बनाओ', खाक प्रभु के गुण गाओ, खाक सेहत बनाओ। इस महँगाई के जमाने में दाल-रोटी खाना काजू-बादाम खाने जैसा हो गया। अब आदमी क्या खाए और क्या सेहत बनाए। ऊपर से दिन-रात घर में बीवी की चख-चख। आदमी का खाना-पीना दुश्वार करके रखा हुआ है।

यही सब सोचते, सरकार को कोसते, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, जमाखोरी को गालियाँ बकते एक आम मध्यमवर्गीय शहरी मैं दुकान पर पहुँचा। तुअर की दाल के लिए कहा तो उसने कुछ पैकेट सामने रख दिए और बोला, ''ये १ रुपए का, ये २ रुपए का, ये ५ रुपए का, ये १० रुपए का, ये २५ रुपए का—कौन सा दूँ।''

मैं हैरानी से देखता रहा। हैरानी से ही बोला, ''ये कोई पान पराग या पान मसाला है जो पाउच में दे रहे हो। पाव भर दाल दे दो भई।''

वो बोला, ''दाल इतनी महँगी हो गई है भाई साहब कि आजकल पान मसाले की तरह ही खाई जा रही है, चुटकी भर, इसीलिए ये पाऊचेज बनाए हैं। १ रुपए, २ रुपए, ५ रुपए के। आप ये २५ रुपए वाला पाऊच ले जाइए।''

मैंने देखा, सोचा और पाँच रुपए वाले दो पाऊच खरीद लिये। घर आया, सुमि ने देखा, वो भी हैरान हुई, ''ये क्या है?''

मैंने कहा, ''आया जब से दाल दाल चिल्ला रही थी। अब ले आया तो पूछ रही है कि क्या है, दाल है और क्या है?''

वो बोली, ''वो तो मुझे भी दिख रहा है, पर इतनी सी!'' मैंने कहा, ''इतनी महँगाई में इतनी ही आती है, अब बहस मत करो, चुपचाप खाना बनाओ।''

वो चली गई। इस बात को साल-आठ महीने बीत गए। इस बीच में सुमि ने तुअर की दाल की कभी बात नहीं की। हैरान होते हुए भी मैंने चैन की साँस ली। सुमि ने सबस्टीट्यूशन खोज लिया और तुअर की दाल की जगह मटर की दाल बनानी शुरू कर दी। मैंने भी बिना नाक-भौं चढ़ाए उसी से काम चलाना शुरू कर दिया। क्योंकि उससे तुअर की दाल बनाने के लिए बोलना मतलब सोई नागिन को छेड़ना था। बीच-बीच में कभी-कभार एकाध बार काजू-करी की तरह तुअर की दाल आ जाती, तो मैं काजू-करी की तरह उसका लुत्फ उठा लेता। इसी तरह कुछ दिन और निकल गए। एक दिन बहुत सुबह-सुबह दरवाजे की घंटी बजी। इतनी सुबह कौन होगा—सोचते हुए दरवाजा खोला, तो सामने कुछ सुटेड-बुटेड लोग खड़े थे। इतनी सुबह इतने सजे-धजे, बने-ठने न मेरे घरवाले, न सुमि के मायकेवाले। फिर कौन हैं ये लोग? मैं पूछने ही वाला था कि उनमें से एक ने अपना आई कार्ड मेरी आँखों के सामने फिराया, ''हम आयकर विभाग से हैं, आपके घर की तलाशी लेनी है।''

मैं क्या जवाब देता? मुझे तो कुछ पता ही नहीं था। मैंने सुमि से पूछा, ''बताओ ना! कहाँ से आई, क्या वाकई मायकेवालों से मँगवा ली?''
उसने इशारे से मना किया, फिर मुझे एक तरफ ले जाकर धीरे से बोली, ''पहले इनसे निपटो, फिर बताती हूँ, कहाँ से आई ये दाल।''

मैं घबरा गया, ''पर क्यों? मैं तो एक साधारण नौकरी-पेशा आदमी हूँ। टैक्स भी बराबर भरता हूँ। कोई लखपति, करोड़पति भी नहीं हूँ। फिर मेरे घर की तलाशी क्यों?''

मुझे धकेलकर अंदर आते हुए वे बोले, ''अभी मालूम पड़ जाएगा आप लखपति-करोड़पति हैं या नहीं। हमें खबर मिली है कि आपके यहाँ कई किलो तुअर की दाल भरी हुई है।''

मैं हँस दिया, ''तुअर की दाल! मेरे घर में? होती तो मेरी बीवी मुझसे इस तरह झगड़ा करती। आपको किसी ने गलत खबर दी है। कई किलो तो क्या मेरे यहाँ तो १०० ग्राम दाल भी नहीं है।''

वो मेरी बात को अनसुनी कर अपना काम करते रहे। उन्होंने सामान खँगालना शुरू किया। सोफे के नीचे, टेबल के नीचे, शोकेस में, अलमारियों में, बिस्तर के नीचे, पलंग के पीछे, सेफ के लॉकर में, वाशिंग मशीन में, रसोई के डिब्बों में सबकुछ खँगाल डाला। कुछ न मिला। फिर एक की नजर रसोई के ऊपर लॉफ्ट में रखी एक बड़ी टंकी की तरफ गई। उसको उतारा, खोला तो उन अधिकारियों के चेहरे चमक उठे। मेरी आँखें खुली-की-खुली रह गईं। टंकी ऊपर तक तुअर की दाल से लबालब भरी थी। कम से कम २५-३० किलो दाल तो थी ही।

मैंने हैरानी से सुमि को देखा। सुमि ने अधिकारियों को, अधिकारियों ने मुझे, ''ये क्या है? हाँ, कह रहे थे। मैं लखपति, करोड़पति नहीं हूँ, ईमानदार हूँ, चोरी नहीं करता, फिर ये क्या है? इतनी दाल कहाँ से आई तुम्हारे पास। जमा करके रखी थी, छुपा के रखी थी, पर हमने भी घास नहीं छीली है, हमारी आँखों से कुछ बच नहीं सकता। बताओ इतनी दाल कहाँ से आई तुम्हारे पास?''

मैं क्या जवाब देता? मुझे तो कुछ पता ही नहीं था। मैंने सुमि से पूछा, ''बताओ ना! कहाँ से आई, क्या वाकई मायकेवालों से मँगवा ली?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने इशारे से मना किया, फिर मुझे एक तरफ ले जाकर धीरे से बोली, ''पहले इनसे निपटो, फिर बताती हूँ, कहाँ से आई ये दाल।''

मैंने दाँत भींचे, ''इनसे निपटो! मेरे साले हैं ये जो इनसे निपट लूँ। ये तो दाल देख के ऐसे कर रहे हैं जैसे मुझे जेल भिजवाकर ही दम लेंगे।''

सुमि बोली, ''वो आप देखो। आपको जेल जाना है, जेल में चक्की पीसनी है या यहीं रहना है। कुछ ले-दे के रफा-दफा करो इनको।''

जेल जाने के नाम से मेरी हवा खिसकने लगी। मैंने उनसे कहा, ''सरजी, हमारा विश्वास कीजिए। हमने कोई चोर बाजारी, काला बाजारी नहीं की। हम तो सीधे-सादे शरीफ आदमी हैं।''

उनमें से एक व्यंग्य से बोला, ''हाँ, वो तो दिख ही रहा है। शराफत के मुखौटे के नीचे क्या छिपा हुआ है। तभी तो इतनी दाल भर रखी है।''

मैंने उन्हें समझाने की कोशिश की, पर वे कुछ सुनने को राजी ही नहीं थे। बड़ी मुश्किल से उन्हें पटाया। सुमि ने समझाया। हाथ-पैर जोड़े तो वे कुछ पिघले और दान-दक्षिणा लेकर रवाना हो गए।

मेरी बेचैनी बढ़ रही थी। मैं सुमि की तरफ लपका और उससे पूछा, ''ये २५-३० किलो दाल कहाँ से आई, क्या लॉटरी लग गई?''

उसने कहा, ''कोई लॉटरी-वॉटरी नहीं लगी। उस दिन आप जो पाँच-पाँच रुपए के पैकेट लाए थे न। आपकी जेब में से चिल्लर निकालकर और तनख्वाह में से बचा-बचाकर मैंने कभी एक रुपए के, कभी दो रुपए के, कभी पाँच रुपए के, कभी दस के पाऊचेज खरीदकर ये दाल इकट्ठी की है। आपको मालूम नहीं, पर मैं दाल-चावल के बिना नहीं रह सकती। इसलिए मैंने इस तरह से दाल भरी है। आपको तो कहने का कोई फायदा नहीं था, क्योंकि न आपने तब दाल भरी न अब भरते।''

मैंने कहा, ''और तुम्हारी इस दाल के चक्कर में मैं जेल चला जाता तो?''

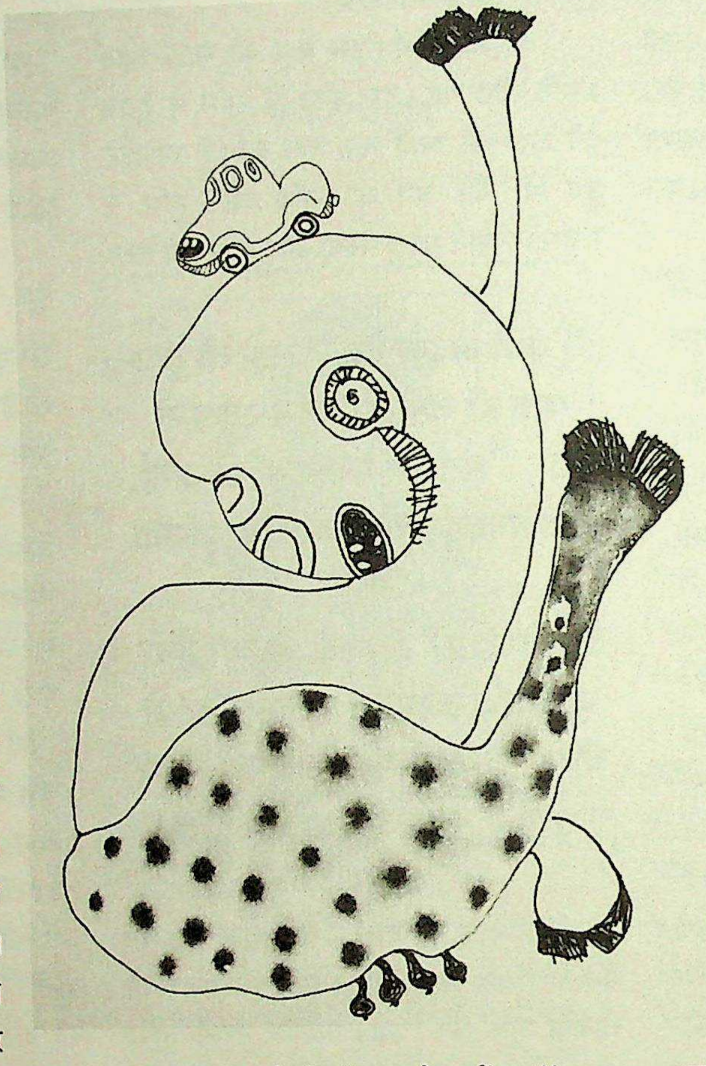

सुमि बोली, ''गए तो नहीं न!''

अब मैं क्या जवाब देता। दूसरे दिन देखा, आस-पड़ोस का माहौल ही बदला हुआ था। सुबह से ही घर में बधाई देनेवालों का ताँता लग गया। लोगों को लग रहा था, हम बहुत अमीर हैं कि हमारे घर से २५-३० किलो तुअर की दाल निकली। ऑफिस में भी सबका नजरिया बदला हुआ था।

शर्माजी बोले, ''इतनी महँगाई में तुअर की दाल! यार तुम तो छुपे रुस्तम निकले।''

तिवारीजी बोले, ''मैंने तो इन सबसे पहले ही कह दिया था कि हो न हो तुम जरूर किसी रईस खानदान के हो। नौकरी तो बस ऐसे ही टाइमपास के लिए कर रहे हो।''

राठीजी बोले, ''लगता तो मुझे भी ... ही था। इनके तो चेहरे से ही किसी ... आदमी का नूर टपकता है।''

चौबेजी आँख मारते हुए बोले, ''... कहाँ-कहाँ माल छुपा रखा है भई, जरा ... भी बताओ। हम तो तुम्हारे यार-... हैं, कोई गैर नहीं।''

मुझे समझ नहीं आ रहा था ... लोग मेरी अमीरी को सराह रहे हैं ... मुझ पर व्यंग्य कर रहे हैं। मुझे ... पर गुस्सा आ रहा था। न वो ... भरती, न छापा पड़ता और न इस ... की बातें सुननी पड़तीं।

घर आते ही मैं सुमि पर ... पड़ा, ''देखा, तुम्हारे तुअर की ... के शौक ने घर में छापा पड़वा ... न! अब मजा आ रहा होगा ... लोग कैसी उलटी-सीधी बातें बना ... हैं हमारे बारे में।''

सुमि मेरी बात काटती सी ... ''उलटी-सीधी नहीं, लोग सी... सीधी ही बातें बना रहे हैं। फटी... घूम रहे थे। रईसजादा बना दिया ... सहन नहीं हो रहा। पता है, मुह... में कैसी धाक जम गई है आप... लोग आते-जाते बधाइयाँ दे रहे ... आपको बड़ा आदमी समझ रहे ... आप ही बताइए, छापा पड़ना कोई मा... बात है? है कोई पूरे मोहल्ले में ऐसा माई ... लाल, जिसके घर छापा पड़ा हो। इतनी ... बढ़ा दी, उसका तो एहसान नहीं, ऊपर से ... में घुसते ही चिल्ला रहे हो, हुँ, नाशुक्रे ... के।''

वह पैर पटकती अंदर चली गई। मैं ... की तरह पलकें झपकाता वहीं खड़ा रहा। ... नहीं पा रहा था, उसकी इस बात पर ... होऊँ या जैसा हूँ वैसा ही रहूँ।

७ प्रभा-रेजीडेंसी, लद्दा...
पुराना बियाणी चौक ...
अमरावती-४...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाकीजी, समालोचक बन जाओ

व्यंग्य

● विनोद शंकर गुप्त

एक दिन कॉफी हाऊस में मेरे कवि मित्र एकाकीजी मिल गए। बहुत समय बाद उनसे भेंट हुई थी। उनके कुशल समाचार जानने के बाद पूछा, "कहिए एकाकीजी, अभी हाल में कोई आपकी नई रचना आई है?" मेरे मित्र ने कहा, "आजकल कवि बहुत पैदा हो गए हैं। गली-गली में मिल जाएँगे। जिसको देखो वही कविता करने लगा है। तुकबंदी करनी है बिना छंद ज्ञान के, बिना लय के। कभी-कभी तो यही पता नहीं लगता कि रचनाकार ने पद्य में रचना की है या गद्य में। बिन बुलाए कवि-सम्मेलनों में पहुँच जाते हैं और आयोजकों से प्रार्थना करते हैं कि मेरी भी कविता सुन ली जाए।' जहाँ तक कविता की पुस्तक छपवाने का प्रश्न है, आजकल प्रकाशक वही छापता है, जिसमें उसे चार पैसे का लाभ हो। आजकल कविता की पुस्तक पढ़ता कौन है। हाँ, पुस्तक छापने का शौक ही हो तो अपने खर्चे से पुस्तक छपवा लीजिए, फिर उसका किसी मित्र की साहित्यिक संस्था में किसी साहित्यकार द्वारा विमोचन करा लीजिए। उस समारोह का खर्च भी स्वयं करना पड़ेगा। और फिर अपनी नई पुस्तक को मित्रों को भेंट कर दो। कुछ समाचार-पत्रों में चित्र के साथ समाचार भी छप जाएगा। अब बताएँ, ऐसी परिस्थिति में कवि का क्या मूल्य रह गया है। एक जमाना था, जब हम कॉलेज में पढ़ते थे, खूब कवि-सम्मेलन होते थे, बड़े-बड़े कवि आते थे। अब धीरे-धीरे वह भी बंद से हो गए। उन महान् कवियों के नाम आज भी याद किए जाते हैं।"

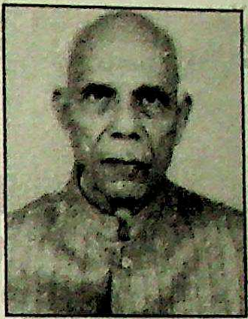

जन्म : २१ फरवरी, १९३४ को आगरा में। भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण में उप-अधीक्षण, पुरातात्त्विक अभियंता पद से १९९२ में सेवा निवृत्त, उपाध्यक्ष—बाबू गुलाबराय स्मृति संस्थान आगरा, संरक्षक—जिज्ञासा मंच हिसार।

प्रकाशन : 'बाबू गुलाबराय व्यक्तित्व और कृतित्व एक झलक', 'जीवन पाथेय', 'बाबू गुलाब राय की हास्य-व्यंग्य रचनाएँ', 'बाबू गुलाबराय के विविध निबंध', 'मेरे मानसिक उपादान : बाबू गुलाबराय', 'मेरी कहानी मेरी जुबानी', 'बाबू गुलाबराय विचार सार' (*संपादित ग्रंथ*) एवं विविध पत्र-पत्रिकाओं में सामाजिक व पुरातत्त्व विषय पर लेख प्रकाशित।

मैंने देखा, मित्र बड़े निराश लग रहे थे। मैंने उन्हें सलाह दी कि कविता के क्षेत्र में सफलता व यश नहीं मिल रहा तो समालोचक क्यों नहीं बन जाते? तुम पढ़े-लिखे हो, यह काम आसानी से कर सकते हो। कवि से समालोचक का पद कुछ ऊँचा ही है, उसका सम्मान भी अधिक होता है। उसके बनने के लिए किसी विश्वविद्यालय से उपाधि नहीं लेनी पड़ती। इसमें अर्थ-लाभ कुछ कम अवश्य है, किंतु यश के (जिसमें अपयश भी शामिल है) लाभ की कमी नहीं। समालोचक को चाहे आर्थिक लाभ न भी हो, उसे समीक्षा के लिए आई पुस्तकें तो पढ़ने को मिल जाती हैं व उसके निजी पुस्तकालय की शोभा बढ़ जाती है। उसके बदले में समालोचक का काम होता है केवल आधा या एक पृष्ठ लिखना, जो बहुत कठिन कार्य नहीं। समीक्षा में कुछ पंक्तियाँ लिखनी होती हैं—पुस्तक का नाम, पुस्तक के प्रकाशक का नाम, पुस्तक का मूल्य, पृष्ठों की संख्या, छपाई कैसी है, उसका कवर कैसा है, आदि-आदि। जिस विषय पर पुस्तक लिखी गई है उस विषय की प्रशंसा कर दें। विषय-सूची देखकर पुस्तक में प्रतिपादित विषयों के नाम दे दीजिए और उस संबंध में कोई श्लोक या कोई अन्य कोई बात स्मरण आ जाए, उसे लिख दें। कविता की बात छोड़कर यह तो प्रत्येक विषय के संबंध में लिख सकते हैं, जिसमें कोई विवाद नहीं होगा—'हिंदी में अमुक विषय की बड़ी कमी है, आपकी पुस्तक ने यह कमी पूरी कर दी, यह सराहनीय कदम उठाया है।' और यदि पुस्तक कविता की हुई तो उसकी तुलना किसी बड़े कवि की रचना से कर सकते हैं। यदि कोई अनुवाद की हुई पुस्तक है तो लिख सकते हैं—'अनुवाद में मूल से भी अधिक आनंद आता है।' दो-चार शब्द शैली के संबंध में लिख दें, जैसे—'लेखक की शैली सरल सुबोध है। इसको पढ़ने में उपन्यास का सा आनंद आता है। शिक्षा के साथ मनोरंजन भी है।' पुस्तक के लेखक या संपादक ने पुस्तक की भूमिका में पुस्तक के विषय में बहुत कुछ लिखा होता है, उसके आधार पर भी अपनी समीक्षा में कुछ पंक्तियाँ जोड़ सकते हैं। अब समीक्षा में कुछ सुझाव लिख दें कि अगले संस्करण में यह-यह और होना चाहिए।

मैंने अपने मित्र एकाकीजी से कहा, "देखो, एक समोलाचक और इससे अधिक क्या लिखे? जब समालोचक के पास बहुत सी पुस्तकें समीक्षा के लिए आई होती हैं, तो वह बेचारा कितनी पुस्तकें पूरी-की-पूरी पढ़ सकता है। समालोचक को सभी लेखकों और संपादकों की इच्छा पूरी करनी होती है। इसलिए वह पुस्तक की ऐसी ही गुलाबी समीक्षा लिख देता है। जिससे लेखक भी खुश रहता है, उसे ख्याति मिल जाती है तथा समीक्षक की लोक-तृष्णा की तृप्ति हो जाती है। समालोचक को भी साहित्य-मर्मज्ञ की उपाधि मिल जाती है।"

मेरे मित्र ने बड़ी प्रसन्न मुद्रा में मुझे धन्यवाद दिया और कहा, "गुरुजी आपके आदेश का पालन करूँगा।" मित्र ने आभार प्रकट तो किया ही, कॉफी हाउस का बिल भी पेमेंट किया। हम गले मिले और फिर मिलने का वायदा किया।

ए-१५ न्यू स्टाफ कॉलोनी
जिंदल स्टेनलैस लि.
ओ.पी. जिंदल मार्ग, हिसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

नींद क्यों रात भर नहीं आती कवि को ?

राम स्वरूप दीक्षित

नींद न आना कवियों में पाई जानेवाली एक आम बीमारी है। प्रायः हर कवि में इस बीमारी के कीटाणु होते हैं। किसी में अधिक। किसी को यह बीमारी वंशानुगत रूप से मिलती है तो किसी को लंबे समय तक कवियों की संगति के कारण ये बीमारी लग जाती है। हमारे एक भाषा वैज्ञानिक मित्र इसे छूत की बीमारी कहा करते हैं। अपनी आपबीती सुनाते हुए उन्होंने एक बार बताया कि अपने साहित्यिक जीवन के प्रारंभिक दिनों में वे अपने नगर के कुछ कवियों की चपेट में आ गए और महीने पंद्रह रोज में ही उनकी गहरी नींद धीरे-धीरे उथली होकर सूखने लगी। वैसे तो उनके घर के लोग समझदार थे सो स्थिति को शुरुआत में ही भाँप गए और धीरे-धीरे उन्हें कवियों के जाल से मुक्त कर लिया और वे फिर से गहरी नींद सोने लगे। इस प्रक्रिया में उन्हें कवि और कविता दोनों से एलर्जी सी हो गई और नगर के कविताई क्षेत्रों में वे काव्यशत्रु के रूप में जाने जाने लगे। अच्छी जमी हुई कवि गोष्ठी को वे कुछ ही क्षणों में उखाड़ देते हैं। कवि सम्मेलनों को हूट करना तो उन्होंने कइयों को सिखा दिया। हालाँकि कवियों ने उन्हें बख्सा नहीं और पिछले दिनों बासठ वर्ष की उम्र में उन्हें एक अखिल भारतीय कवि सम्मेलन का अध्यक्ष बनाकर अपना वर्षों पुराना वैर निकाल लिया। बेचारों की हालत आज तक ठीक नहीं है। अभी भी सोते-सोते चौंक उठते हैं।

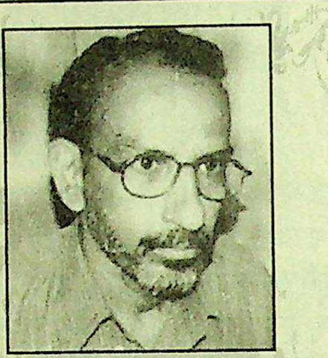

जन्म : १ अगस्त, १९५७ को उ.प्र. के महोबा जिले के भगारी गाँव में।
शिक्षा : बी.ए., बी.टी.।
कृतित्व : देश के लगभग सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से रचनाओं का प्रसारण।
सम्मान : 'केशव सम्मान', 'बीसवीं शताब्दी रत्न सम्मान', 'मणिरत्नम सम्मान', 'कविवर मैथिलीशरण गुप्त सम्मान'।
कुछ व्यंग्य लेखों व लघुकथाओं का पंजाबी, कन्नड़ व बुंदेली में अनुवाद।

हरकवि के नींद न आने के अपने अलग कारण होते हैं। शहर की चिंता और प्रेमिका का वियोग तो परंपरागत कारण हैं ही, पर इसके अलावा भी कुछ ऐसे आधुनिक किस्म के कारण हैं, जिनसे कवि की रातों की नींद और दिन का चैन उड़ जाना स्वाभाविक है।

हमारा गली में एक कविजी रहते हैं। ये विशुद्ध कवि हैं। पूर्णकालिक कवि हैं। बेचारे चौबीसों घंटे कवि रहते हैं। नहाते, खाना खाते, उठते-बैठते, चलते-फिरते सोते-जागते हर समय कवि रहते हैं। अपने बीवी बच्चों से उनका संबंध बीवी-बच्चों का कम, श्रोता का ज्यादा रहता है। एक बार मैं रात को दो-ढाई बजे कहीं से लौटा तो उनके कमरे की बत्ती जलती देखकर आवाज लगाई। वे जाग रहे थे। तुरंत दरवाजा खोलकर बाहर आ गए। मैंने पूछा, ''क्या बात है, आज इतनी देर तक जाग रहे हैं ?'' ''आपको इसमें ताज्जुब हो रहा है।'' वे बोले, ''पर बंधुवर, मेरी तो यही दिनचर्या है। मेरी तो हर रात कविता को समर्पित रहती है। (यह केवल संयोग ही है कि उनकी पड़ोसन का नाम कविता है) तनिक नींद आई थी कि यकायक एक भाव आया मन में और उसे कागज पर उतारने लगा। मुश्किल से पाँच मिनट पहले फुर्सत हुआ हूँ लिखकर। बहुत ही जीवंत रचना बन पड़ी है, सुनोगे ?'' मैंने घबराकर उनके पैर पकड़ लिये कहा कि गुरु, आज माफ करो, फिर कभी सुन लूँगा। मन में सोचा, मूर्ख होगा जो आज के बाद तुम्हारे दरवाजे से निकले। पर वे कहाँ मानने वाले थे ? बोले, ''बंधुवर, मेरे बच्चे बाहर गए हुए हैं और पत्नी बीमार है। डॉक्टर ने उसे सोते से जगाने के लिए सख्ती से मना किया हुआ है। और मेरी आदत ये है कि जब तक मैं अपनी नई रचना किसी को सुना न दूँ तब तक मुझे नींद नहीं आती। बच्चे घर होते या पत्नी की तबियत ठीक होती तो मैं तुम्हें यह कष्ट न देता। मैं तो इन्हें ही अपनी हर रचना का पहला श्रोता बनाता हूँ। हाँ, एक बात तो बताओ, क्या लगातार कविता सुनते रहने से कोई बीमार हो जाता है ? मेरे आलोचक शहर में ये कहते घूम रहे हैं कि मैंने अपनी कविताएँ सुना-सुनाकर अपनी पत्नी को बीमार कर दिया है।''

मैंने कहा, ''नहीं, यह बात तो नहीं है।'' तो फिर सुन लो। उन्होंने कहा और मुझे कुछ कहने का मौका दिए बिना ही वे शुरू हो गए। मेरी स्थिति जाल में फँसे पंछी की तरह हो गई। लगातार तीन रचनाएँ सुनाने के बाद उन्होंने मेरी निरीहता पर तरसखाकर अपना काव्यपाठ बंद किया। बोले, ''धन्यवाद मित्र। अब जाओ, मैं भी अब सुख की नींद सो सकूँगा। तुम न मिलते तो मुझे रात भर जागना पड़ता।'' वे तो सो गए होंगे, पर मुझे दो-तीन दिन तक ठीक से नींद नहीं आई।

एक और कवि हैं। ये छपास के कवि हैं। ये लिखते कम हैं, छपते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक और कवि हैं। ये छपास के कवि हैं। ये लिखते कम हैं, छपते अधिक हैं। एक ही कविता को आठ-दस जगह छपवाते हैं। छपने के लिए ये कुछ भी करने को तैयार रहते हैं। इनका अधिकांश वक्त पत्रकारों व संपादकों की चापलूसी करने में बीतता है। कहाँ, कब और कैसे छपा जा सकता है, इस गुणा-भाग में ये रात-रात भर जागते रहते हैं। इनकी अधिकांश रातें संपादकों को खुशामद भरी चिट्ठियाँ लिखने और कविताओं की प्रतिलिपि तैयार करने में ही गुजरती हैं।

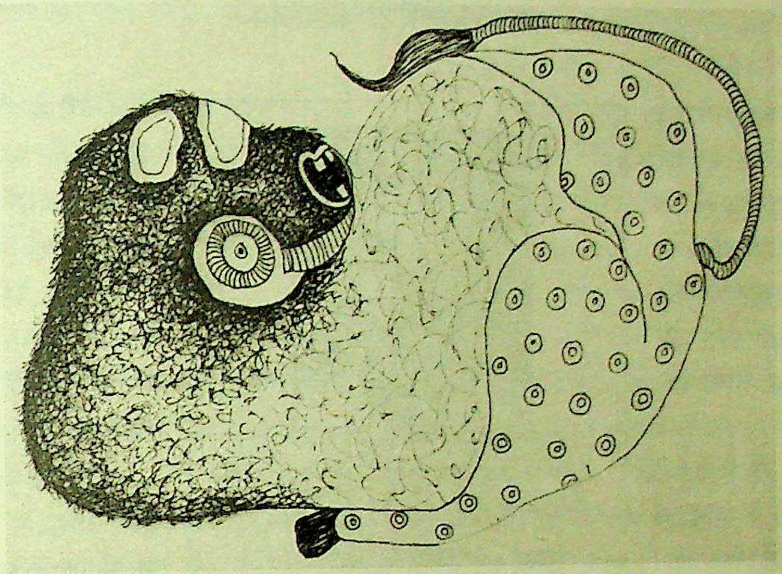

अधिक हैं। एक ही कविता को आठ-दस जगह छपवाते हैं। छपने के लिए ये कुछ भी करने को तैयार रहते हैं। इनका अधिकांश वक्त पत्रकारों व संपादकों की चापलूसी करने में बीतता है। कहाँ, कब और कैसे छपा जा सकता है, इस गुणा-भाग में ये रात-रात भर जागते रहते हैं। इनकी अधिकांश रातें संपादकों को खुशामद भरी चिट्ठियाँ लिखने और कविताओं की प्रतिलिपि तैयार करने में ही गुजरती हैं। पत्र-पत्रिकाओं में कविता छपने के बाद ये स्वयं ही विभिन्न नामों से प्रशंसात्मक पत्र भी लिखते हैं। इस गोरख-धंधे में इन्हें हफ्तों और महीनों नींद नहीं आती। सप्ताह की एक रात तो संपादकों को खिलाने-पिलाने में ये बिताते ही हैं।

बहुतेरे कवि भूखे पेट होने के कारण रात-रात भर भूख की कविताएँ लिखते रहते हैं। इनकी कविता दिल दिमाग से न निकलकर पेट से निकलती है और बँगलो-कोठियों में चैन की नींद सोनेवालों की नींद हराम कर देती है।

कवि अद्‌भुतजी आजकल रात-रात भर घर की छत पर घूमते रहते हैं। उनके एक कवि मित्र से इसका कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि अद्‌भुत जी आजकल एक साहित्यिक संस्था द्वारा प्रतिवर्ष दिए जानेवाले पाँच हजारी पुरस्कार की जुगत भिड़ाने में लगे हुए हैं। दिन रात संस्था सचिव की सेवा में लगे रहते हैं। उसके मित्रों व रिश्तेदारों से अपने लिए सिफारिशों चिट्ठियाँ लिखवा रहे हैं और स्थानीय राजनीति का सहारा लेकर कुछ दबाव भी बना रहे हैं। किसी ने उनसे कह दिया है कि रात के एकांत में घूमने से बहुत बेहतरीन आइडिया आते हैं दिमाग में। तभी से बेचारे रात भर छत पर घूमकर आइडिया तलाशते हैं और दिन में उसे इधर-उधर आजमाते हैं। कह रहे थे कि देखना, इस वर्ष में यह पुरस्कार लेकर ही चैन लूँगा।

कवि गड़बड़ जी की नींद कुछ और ही कारण से गायब रहती है। उनके विरोधी खेमे के एककवि को एक लखटकिया पुरस्कार मिलने की घोषणा हो चुकी है। इस घोषणा ने गड़बड़ जी की रातों की नींद चुरा ली है। सरकार की इस घोषणा के खिलाफ उन्होंने अपने पूरे खेमे को लामबंद कर दिया है। जिस कवि को पुरस्कार मिलने वाला है, उसके अतीत का गहन अध्ययन कर उसके चरित्र हनन करने की जिम्मेदारी उन्होंने तीन सदस्यीय एक लेखक समिति को सौंप रखी है। वे स्वयं रात-रात भर जागकर उसकी एक पुस्तक का गंभीरता से अध्ययन कर उसे चुराई हुई रचनाओं का संग्रह सिद्ध करने में लगे हुए हैं। दूसरी ओर वे नेताओं को उसकी कविताओं के कुछ उदाहरण देकर यह समझाने का प्रयत्न भी लगातार कर रहे हैं कि उसकी रचनाएँ सत्ता के विरुद्ध बगावत का स्वर लिये हैं। अतः ऐसे कवियों को पुरस्कार देने का मतलब है, सरकार का उससे डर जाना। बहरहाल इस घटना से उनकी नींद गायब है।

कुछ दिनों पूर्व कवि तुक्काचार्यजी की एक पुस्तक छपी तो एक विख्यात समीक्षक ने पत्रिका में उसकी समीक्षा कर पुस्तक की धज्जियाँ उड़ा दीं। तुक्काचार्य जी ने देखा तो बहुत मायूस हो गए। रात को एकांत में बार-बार उस समीक्षा को पढ़ते और दुःखी होते। आखिर जब बहुत रातें यूँ ही बीत गईं तो उन्होंने उस समीक्षक के विरोधी समीक्षकों में एक के बदले चार-पाँच समीक्षाएँ छपवा लीं। अब उनकी नींद लौटने लगी है।

एक जनकवि से मैंने पूछा कि क्यों साहब, आपको रात को नींद क्यों नहीं आती, तो उन्होंने जवाब दिया, ''भइया, बड़े सरकारी पदों पर बैठे कवियों, विश्वविद्यालयों के विभागाध्यक्षों, सरकार की पुस्तक खरीद समिति के अध्यक्षों, पाठ्यक्रम निर्धारण समिति के सदस्यों तथा सेठों के पैसों पर फलफूल रहे साहित्यकारों ने हमारी नींद चुरा ली है।''

एक दिन मैंने अपने एक मित्र से पूछा, ''क्यों यार, ये कवि लोग रात-रात भर क्यों जागते रहते हैं ?'' उसने जवाब दिया, ''दोस्त, कवि अपने लिए नहीं, देश के लिए जागता है। जिस दिन देश का कवि सो जाएगा उसी दिन हम सबकी नींद चली जाएगी।''

सिद्ध बाबा कॉलोनी,
टीकमगढ़-४७२००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्मरण

वो सात रुपए

● अजय चतुर्वेदी 'कक्का'

माघ कृष्ण पंचमी का दिन। सप्ताह भर पहले से उमंगित तन-मन ऐन दिन सुबह से ही ढीला पड़ने लगा था और दस बजे जब पिताजी सत्रह पैसे (दस, पाँच और दो पैसे के कुल तीन सिक्के) मेला घूमने के लिए हाथ पर रखे तो रही-सही कसर भी पूरी हो गई। मेले का सारा उमंग और जोश ठंडा पड़ गया।

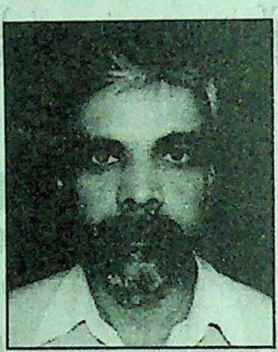

जन्म : १६ जुलाई, १९६० को ग्राम-बढ़ौली, जिला-सोनभद्र (उ.प्र.) में।
शिक्षा : स्नातकोत्तर (हिंदी)।
कृतियाँ : 'मेरी बात सुनोगे' (*हास्य-व्यंग्य काव्य-संग्रह*), 'चूहों को मृत्युदंड' (हास्य-व्यंग्य लेख संग्रह)।
सम्मान : 'हास्य-सुधाकर', 'मानव रत्न', 'सोनभद्र रत्न', 'साहित्य गौरव सम्मान', 'साहित्य भाष्कर' एवं अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मान एवं प्रशस्ति-पत्र।

यह घटना सन् बहत्तर की है, तब मैं छठवीं में पढ़ता था। आज किसी भिखारी के हाथ पर एक रुपए का सिक्का रखो तो वह यूँ मुँह बिचकाता है गोया भिखारी वो नहीं, बल्कि देनेवाला है। हालाँकि वो सस्ती का जमाना था, पर सत्रह पैसे! भोंपू-बाँसुरी बेचनेवाले के यहाँ दफ्ती पर रंग-बिरंगी पन्नी चिपकाकर बनाया गया सबसे सस्ता बिकनेवाला चश्मा और फिर्र-फिर्र बजनेवाली सीटी भी बीस-पच्चीस पैसे में बिकती थी। ज्यादा मोल-भाव करने पर कोई-कोई पंद्रह पैसे में भी देकर बच्चों का मन रख देता था। पाँच पैसे में तीन कतरी आलूदम, दस पैसे में आधा कलछुल चने की घुघरी। मेले में खरीदने और खाने का सबसे सस्ते आइटम यही हुआ करते थे।

सत्रह पैसे में क्या होगा? क्या खाऊँगा और क्या खरीदूँगा? वही कहावत—'नंगा नहाए क्या और नहाकर निचोड़े क्या?' मेले की चिल्ल-पों, भोंपू, बाँसुरी, फिरहरी और सीटियों की आवाजें अपनी ओर खींच रही थीं और सत्रह पैसे घर से निकलने नहीं देना चाहते थे। अजीब असमंजस थी। करूँ तो क्या करूँ। बेबसी में मेरी आँखें छलछला आईं। पास-पड़ोसवालों को मन-ही-मन सैकड़ों गालियाँ दे डालीं—'अपने बच्चों को पैसा देते वक्त तनिक भी शरम नहीं आई कि पड़ोसी का बच्चा भी खड़ा है। दस-पाँच पैसे उसके भी हाथ पर रख दें, मक्खीचूस'।

गम चाहे जितना बढ़े, पैसा बढ़नेवाला नहीं था। घर की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। पिताजी लेखपाली से सेवानिवृत्त हो चुके थे। मुझे अच्छी तरह याद है, उन्हें पहली पेंशन छब्बीस रुपए मिली थी। पाँच भाइयों में सबसे बड़े भाई (पहली माता के एकमात्र पुत्र) सीमेंट फैक्टरी में नौकरी करते थे। सेवानिवृत्त पिता, सौतेली माँ और उसके छह बच्चे (चार भाई, दो बहनें)। खरचे से बचने के लिए ही तो अलग हो गए थे। वे क्यों मेले को पैसे देते। शोक-सागर में डूब गया। और पैसे का जुगाड़ हो तो कहाँ से हो। एक बार मन में आया कि माँ से कहूँ, यदि पाँच पैसे भी मिल गए तो कम-से-कम एक चश्मा या सीटी और आलूदम दोनों का जुगाड़ हो जाएगा।

माँ का ध्यान आते ही पैसा बाँटते समय का दृश्य आँखों में नाच गया। मुझसे बड़े भाई-बहन मुझसे ज्यादा पारिवारिक स्थिति से अवगत और समझदार थे, उन लोगों को जो मिला वही लेकर चुप हो गए। मैं, मेरा छोटा भाई और छोटी बहन और पैसा दीजिए, और दीजिए, नंगई करने और पिताजी को नोंचने लगे।

लेकिन ढाक के तीन पात तो तीन पात। कोई फायदा नहीं। ऐसा नहीं कि पिताजी कंजूस थे। बहुत ही शाहखर्च और शौकीन थे। गाँव-जवार के लोग बताते थे कि गाँव में सबसे पहले ब्रासलेट की धोती और फलैक्स का जूता मेरे पिताजी खरीदे थे तो लोग देखने आए थे। लोग उनके साफ-सुथरे और सुगंधित बिस्तर पर बैठने के लिए तरसते थे। मेरी जानकारी में रोज शाम को सात-आठ लोग जुटते भाँग छानते और पउवा भर सुपारी कतर जाते थे।

समय बदलता है—बदला। सेवानिवृत्त हुए। कमाई बंद, पर परिवार और खर्चा बढ़ता गया। थोड़ी-बहुत जो खेती-बारी थी, वो पहले ही भाई-बंधुओं को उदारता-वश कमाने-खाने को दे चुके थे। भाई-बंधु भी नंबर एक के। थोड़ा-थोड़ा पैसा उस समय यह कहकर कि ये रख लीजिए नहीं तो लोग कहेंगे कि—देखो मुफ्त में लोग मजा ले रहे हैं। प्रकारांतर से यूँ कहूँ तो खेत-क्यारी सब रेहन पर थी। वो छूटें कैसे, पैसे हों तब तो छूटे।

जब आमदनी का कोई स्रोत न हो तो पैसे आएँ कहाँ से? पैसे होते तब तो देते। माताजी ने टोका—'लइका जिद्दि करत हँव तऽ कुछु अउर देइ दा।' तब पिताजी ने कहा था—'जो था वो सब बाँट दिया। अब मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास केवल एक रुपया बचा है।'

'ते साँझी के मिठाई कहाँ से आई।'

'प्यारे साहु के यहाँ से उधार ले लूँगा।'

माताजी मर्माहत हो यह बड़बड़ाती आँख मलते हुए घर में चली गईं कि 'ऐसे तोहरे लग्गे पइसा रहइ चाही न रहइ, लेकिन परब या त्यउहारे पर जरूर दलिद्दर आइक बइठि जाला।' माँ का रुआँसा चेहरा आँखों में घूम गया और उनके पास जाने की हिम्मत नहीं हुई। हिम्मत होती भी तो कोई फायदा होनेवाला नहीं था। यदि उनके पास होते ही तो क्या वे देने से चूकतीं?

जितना सच यह सच है कि घर की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी, उतना ही यह भी सच है कि पता नहीं परिवार पर कौन सा श्राप था कि 'दरिद्रता माई' किसी पर्व-त्योहार के दो-चार दिन पहले से ही पैर तोड़कर हमारे घर बैठ जाती थी। गरीबी ने बचपन में ही इतनी समझ तो मुझमें भी पैदा कर ही दी थी।

एक बार निर्णय कर लिया कि मेला घूमने नहीं जाऊँगा। एक दिन पहले गाँव के पोखरे के बड़ेवाले पत्थर पर रगड़-रगड़कर साफ किया, इस्त्री के लिए रात भर सर के नीचे मोड़कर रखा गया पाजामा-बुशर्ट उतारकर उदास होकर दरवाजे पर बैठ गया।

गाँव के बूढ़े-जवान, औरतें-बच्चे झुंड-के-झुंड पैदल मेले में जाने लगे। जाएँ भी क्यों नहीं। आज का राबर्ट्सगंज तब का एक छोटा सा बाजार था। न कोई मौज-मस्ती, न मनोरंजन, न और कुछ। उस जमाने में घूमने-फिरने, मिलने-जुलने, खाने-पीने, मौज-मस्ती के लिए एक मेला ही तो था, जिसका साल भर सबको इंतजार रहता था। गाँव से करीब दो किलोमीटर पर 'बरैला बाबा' और सात किलोमीटर की दूरी पर 'गौरी शंकर बाबा' का धाम था। बसंत पंचमी पर दोनों जगह एक दिन और शिवरात्रि पर बरैला मेला एक दिन तथा गौरी शंकर मेला पंद्रह दिन तक चलता था। मेरे गाँव ही नहीं, आस-पास के गाँवों के भी लोग पैदल ही, मेला जाया करते थे। कारण यह कि एक तो उलटे राबर्ट्सगंज जाओ, बस-टैंपो का भाड़ा दो, धक्का-मुक्की अलग से। धक्का-मुक्की से बचने के लिए रिक्शा पर बैठो तो बेवजह फालतू पैसा खर्च करो। दरेरी-देरा और पैसे की बचत के मद्देनजर पैदल जाने को सुगम जानकर लोग-बाग पैदल ही जाया करते थे।

लोगों के साथ अपने हमउम्र बच्चों को मेला जाते देख मेरे कलेजे पर साँप लोटने लगा। यदि मैं मेला नहीं गया तो साल भर के लिए गया काम से। यह सोच-सोचकर दिल धड़कने लगा। उठा, पाजामा-बुशर्ट पहना, सत्रह पैसे जेब में डाले और परिचितों की नजर बचाकर तिक्खे (शॉर्टकट) मेले के लिए चल पड़ा। लोगों से बचते-बचाते मेले में पहुँच गया। मेले के बाहर एक भिखारी, जिसे शायद कुष्ठ रोग भी था, बबूल की टहनियों के बीच में लेटा चिल्लाए जा रहा था—'दे दा बाबू, भगवान् के नाम पर कुछ दे दा।'

मेरी नजर उस कुष्ठ रोगी भिखारी पर पड़ी। उसकी दरिद्रता और बेबसी मेरी दरिद्रता और बेबसी से टकराई। मैं द्रवित हो, दो पैसेवाला सिक्का उसकी ओर उछालकर मेले में घुस गया। मैं सोचने लगा कि कहीं हमारे साथ के लड़के न मिल जाएँ। अगर मिल गए तो कहेंगे कि चलो ये खाएँ-वो खाएँ। साथ में खाना तो होगा, लेकिन कोई किसी के खाने का पैसा क्यों देगा? सबको पता है कि मेला घूमने के लिए पैसा सभी को मिला है। मैं नहीं खाऊँगा तो बेइज्जती और खाऊँगा तो पैसे कहाँ से दूँगा।

अपने परिचितों की नजर बचाकर मेले में घूम-घूमकर लगा ताड़ने (जाँचने) कि खरीदने और खानेवाली कौन सी चीज सबसे सस्ती है। मेले का कई चक्कर लगाने के बाद इस निर्णय पर पहुँचा कि या तो चश्मा या सीटी ले पाऊँगा या फिर आलूदम और घुघरी खा पाऊँगा। मन में अंतर्द्वंद्व शुरू हो गया। अंततः सामान पर जीभ हावी हुई और एक ठेलेवाले के पास पहुँचा। दस पैसे की घुघरी और पाँच पैसे का आलूदम लिया। खाने के बाद ज्यों ही जग उठाकर पानी के टब की ओर घूमा, मुँड़ी-चुड़ी पाँच रुपए की गिरी नोट से मेरी निगाह टकराई। मेरा दिल बाग-बाग हो उठा। मन में तरह-तरह के विचार आने-जाने लगे—'उठाऊँ कैसे। कहीं कोई देख तो नहीं रहा है। उठाते वक्त कोई देख न ले। अगर कोई देख लिया तो? कोई देख ले और हाथ मुरकेटकर कहे कि ऐ! मेरा पैसा है, तुम कैसे ले रहे हो? चोर कहीं के तो? भीड़ लग जाएगी। कोई गाँव-घर का देख लिया तो? नहीं, नहीं उठाऊँगा। अरे नहीं, पाँच रुपया है, पाँच रुपया। बच्चू पाँच पैसे के लिए रो रहे थे। यहाँ तो पाँच रुपए का सवाल है। मेरे मन में फिर विचार आया। उठा लो बेटा, देखा जाएगा। अरे देर मत करो, कहीं कोई और देख लिया और उठा लिया तो गए काम से। बेटा, हाथ मलते रह जाओगे। बेटा बहुत पछताओगे। ठीक है जो होगा सो होगा, छोड़ूँगा नहीं, उठाता हूँ। पानी का जग ठेले पर धीरे से रख नोट की ओर झुका, हाथ बढ़ाया, अंतरात्मा में बैठे भय से लगा गोया या तो नोट को जड़ निकल आया हो या फिर जैसे कोई मदारी जादू से पैसे को बाँध दिया हो। हे भगवान्! दया करो। मन-ही-मन जय हो बरैला बाबा की, कहकर पूरा जोर लगाया, नोट मुट्ठी में आ गया। नोट मुट्ठी में आते ही चुपचाप खड़े हो कुछ सेकेंड इधर-उधर देखा। कहीं कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। धीरे-धीरे ठेले से थोड़ा दूर हुआ और मेले से निकलकर घर की ओर पूरा जोर लगाकर ऐसे भागा जैसे कुत्तों के पीछे पेट्रोल लगा देने पर कुत्ते भागते हैं। रास्ते में एक बार पाँच के नोट को चेक किया तो उसके अंदर दो की एक और नोट थीं। खुशी के मारे दौड़ता-सुस्ताता मैं घर पहुँचा। माँ को बताया। उस समय माताजी क्या सोचीं या उनके चेहरे पर क्या प्रतिक्रिया हुई, अति प्रसन्नता के कारण यह नहीं जान पाया। हाँ, मेरे हाल के क्या कहने। दसों अंगुलियाँ घी में। अपनी तो महीने भर की चाँदी हो गई थी। आज मैं सरकारी नौकरी में हूँ। लाखों रुपए हाथ में आ-जा रहे हैं, लेकिन उतना आनंद, उतना सुख, उतनी उमंग इन पैसों में कहाँ, जितना उन सात रुपए में। आज भी वो सात रुपयों याद हैं। भूलें भी कैसे, जहाँ पाँच पैसे का ठिकाना नहीं था, वहाँ सात रुपए मामूली औकात रखते थे क्या?

नि.बी-९९, एन एच-४
पो.-बीजपुर, सोनभद्र (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

क्रांति से अध्यात्म तक : अरविंद घोष

● आशारानी व्होरा

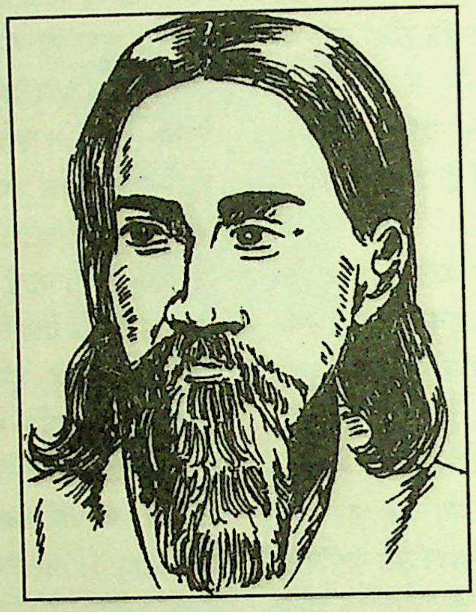

इतिहास के आकाश के जाज्वल्यमान नक्षत्र अरविंद घोष को केवल उच्च कोटि के शिक्षाविद्, सुधारक और कट्टर देशभक्त कहना पर्याप्त नहीं होगा। वे क्रांति, योग और अध्यात्म को एक साथ साधनेवाले अक्षर ब्रह्म के उपासक थे। वे भारतीय संस्कृति और वेदांत दर्शन के समर्थक ही नहीं, अध्येता और उन्नायक भी थे।

कहाँ विदेश में रहकर विदेशी भाषा में पढ़ाई और कहाँ भारतीयता की आध्यात्मिक ऊँचाई! एकदम विरोधाभासी स्थितियों में संतुलन साधते हुए विकसित होता एक ऊर्ध्वोन्मुखी व्यक्तित्व। बौद्धिक प्रतिभा के साथ नैतिक आचरण संहिता पर भी बल देनेवाला और आगे चलकर अपना अतिक्रमण कर, लोकोत्तर सत्ता में विश्वास लेकर अतिमानस की साधना तक पहुँचा एक महान् योगी! श्रीअरविंद को इसीलिए योगिराज अरविंद संबोधन दिया गया है।

यह भी एक संयोग ही है कि स्वाधीनताकामी इस युग-पुरुष का जन्म भी १५ अगस्त (जो आगे चलकर सन् १९४७ में स्वतंत्रता के सुप्रभात से जुड़कर भारत का 'स्वाधीनता दिवस' कहलाया) को हुआ था। जिस दिन समूचा भारत अपनी स्वतंत्रता का उद्घोष करते हुए प्रसन्नता व्यक्त कर रहा था, भारतीय लोकमानस उसी दिन योगी अरविंद के रूप में अपने इस ऋषि का 'अमृत महोत्सव' मना रहा था। श्रीअरविंद का संदेश आकाशवाणी से प्रसारित किया गया, जिसे देश-विदेश में सुना गया, 'भारत स्वाधीन हो गया है। पर उसने एकता प्राप्त नहीं की है, केवल टूटी-फूटी स्वतंत्रता ही प्राप्त की है।…आशा करनी चाहिए कि कांग्रेस द्वारा तय किए गए विभाजन को सदा के लिए निर्णीत नहीं मान लिया जाएगा।…हम आशा करें कि तनाव ढीला पड़ने पर शांति और मेल-मिलाप की आवश्यकता उत्तरोत्तर अधिक समझे जाने पर यह विभाजन समाप्त हो जाएगा…चाहे किसी भी रूप में हो, इस विभाजन को मिटाना ही होगा।'

भारत के स्वाधीनता दिवस को पड़नेवाले उनके जन्मदिन और उसी वर्ष उनका 'अमृत महोत्सव' मनाए जाने के कारण राष्ट्र के इस प्रकाश-पुंज को भारतीय संसद् में भरपूर सम्मान दिया गया। यही कारण है कि दूरदर्शन पर संसद् समाचार सुनने से पूर्व संसद् भवन की पृष्ठभूमि में हमें दो महापुरुषों की मूर्तियाँ दिखाई देती हैं, जिनमें से एक है—संविधान निर्माता डॉ. भीमराव अंबेडकर की और दूसरी योगिराज श्रीअरविंद की।

सन् १८७२ में बंगाल के एक अंग्रेजीदाँ सामंती परिवार में जनमे श्रीअरविंद के पिता डॉ. कृष्णन घोष अपने समय के सुप्रसिद्ध चिकित्सक और समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उनकी जीवन-शैली एकदम अंग्रेजियत में रची-बसी थी। बालक अरविंद ने बहुत छोटी उम्र से ही अपनी तीव्र बुद्धि और लगनशीलता का परिचय दे दिया था। पिता ने उन्हें सात वर्ष की [illegible]
पढ़ने के लिए इंग्लैंड भेज दिया। इंग्लैंड और मान[illegible]
के अंग्रेजी स्कूलों में उन्होंने फ्रेंच, जर्मन और इटा[illegible]
भाषाएँ सीखीं। पिता उन्हें पूरी तरह विलायती रंग में [illegible]
देना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अरविंद के [illegible]
अभिभावक पादरी को विशेष हिदायत दी कि उनके [illegible]
को संस्कृत शिक्षा और भारतीयता के संपर्क में न [illegible]
दिया जाए, लेकिन होनहार के भविष्य को कौन [illegible]
सकता है!

विलक्षण प्रतिभा के धनी इस मेधावी छात्र ने [illegible]
मनोयोग से पढ़कर आई.सी.एस. की परीक्षा पास [illegible]
इस प्रकार उन्होंने अपने पिता की इच्छापूर्ति कर [illegible]
प्रसन्न कर दिया। पर देश-सेवा के अपने संकल्प [illegible]
पूरा करने के लिए इस परीक्षा के अनिवार्य अंग घुड़[illegible]
का बहिष्कार करके आई.सी.एस. में चयनित न [illegible]
भी सुनिश्चित कर दिया कि साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। आ[illegible]
आई.सी.एस. की पढ़ाई के साथ वे बँगला और संस्कृत का अध्ययन भी कर [illegible]
थे तथा भारतीय संस्कृति से संबंधित पुस्तकें भी पढ़ रहे थे। यही नहीं, उ[illegible]
'कमल और कटार' नाम की एक गुप्त संस्था भी स्थापित की थी। वे आय[illegible]
के क्रांति-साहित्य में भी रुचि ले रहे थे कि भारत लौटकर उन्हें स्वाधी[illegible]
संग्राम और क्रांति में भी हिस्सेदारी करनी थी, जिसके लिए वे मन-ही-[illegible]
संकल्पित थे।

इंग्लैंड में रहते श्रीअरविंद बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव गायक[illegible]
के संपर्क में आए। महाराजा उनकी विलक्षण प्रतिभा, अंग्रेजी भाषा पर [illegible]
पकड़ और देश-प्रेम की भावना से प्रभावित होकर परीक्षा के बाद उन्हें [illegible]
राज्य में आने का निमंत्रण दे आए थे। बड़ौदा में उन्हें कई महत्त्वपूर्ण प[illegible]
रखा गया। वहाँ रियासत की सेवा में रहते हुए भी उन्होंने गुजराती, म[illegible]
हिंदी सीखी तथा संस्कृत और बँगला का अपना ज्ञान आगे बढ़ाया। वे [illegible]
प्रकाश' पत्रिका में राजनीतिक विषयों पर लेख भी लिख रहे थे।

भारत लौटने से पूर्व विभिन्न देशों के इतिहास व क्रांतियों का अ[illegible]
कर ही चुके थे। भारत को गुलाम रखने के लिए अंग्रेज-चरित्र भी बखूबी [illegible]
चुके थे। यहाँ आकर उन्होंने सुना कि बड़ौदा नरेश मल्हारराव गायकवाड़ [illegible]
सन् १८७५ में अंग्रेज रेजीडेंट को विष देने के संदेह पर गद्दी से हटा दि[illegible]
था। पर सन् १९०२ में क्रांतिकारी हेमचंद्र दास से उनकी भेंट तो उनके जी[illegible]
एक महत्त्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुई। हेमचंद्र दास एक जमींदार थे, पर उनकी [illegible]
पर क्रांतिकारी युवक राइफल की निशानेबाजी का अभ्यास करते थे।

सन् १९०२ में ही बंगाल से भगिनी निवेदिता बड़ौदा आईं। श्रीअ[illegible] भगिनी [illegible]
उनकी पुस्तक 'काली द मदर' पढ़ी थी। वे यह भी जानते थे कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत आने से पूर्व आयरलैंड की क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़ी थीं और भारत आकर उन्होंने अपने पास जुटाया सारा क्रांति-साहित्य बंगाल की क्रांति-संस्थाओं को दे दिया था। इसके लिए और अपनी बड़ौदा यात्रा के कारण भगिनी निवेदिता को दंडस्वरूप रामकृष्ण मिशन से नाता भी तोड़ना पड़ा था। बड़ौदा महाराज की आज्ञा लेकर श्रीअरविंद भगिनी निवेदिता को लिवाने स्टेशन गए थे और महाराजा से उनकी भेंट कराई थी। भगिनी निवेदिता ने महाराजा के सामने स्पष्ट माँग रखी कि वे स्वयं सामने न आकर भी क्रांतिकारियों की मदद करें। महाराजा ने सीधा उत्तर न देकर कहा, 'अरविंद के द्वारा उत्तर भिजवा देंगे।'

सन् १९०२ में ही श्रीअरविंद ने अहमदाबाद के कांग्रेस अधिवेशन में भाग लिया, जहाँ लोकमान्य तिलक से उनकी भेंट हुई और तिलक से सहमति-संकेत पाकर उन्होंने माधवराव जाधव को बम, रिवॉल्वर बनाना सीखने के लिए इंग्लैंड भेजा। अपने छोटे भाई वारीन घोष को भी तैयार किया, जिनका आगे चलकर क्रांति-कार्य में बड़ा योगदान रहा।

श्री अरविंद घोष के जीवन व कार्य को हम चार पड़ावों में बाँटकर देख सकते हैं—

पहला—चौदह वर्ष का लंदन में अध्ययन-काल और बचपन के सात वर्ष मिलाकर अरविंद का बचपन से यौवन तक इक्कीस वर्ष का बुनियादी निर्माण-काल।

दूसरा—सन् १८९३ में भारत आकर १८९३-१९०६ के चौदह वर्ष साहित्य, क्रांतिकारिता, परिवार और योग-अध्यात्म की ओर प्रवृत्ति को समर्पण का व्यक्तित्व-परिष्कार काल। इसी बीच उन्होंने मृणालिनी देवी से विवाह किया था। बाद में जब मानिकतल्ला स्ट्रीट के उनके पैतृक मकान में बम-कारखाना पकड़े जाने पर उस मकान की तलाशी हुई, तो उसमें पत्नी मृणालिनी देवी के नाम लिखे गए श्रीअरविंद के दो पत्र भी बरामद हुए थे, जो भारत की आजादी के बाद बहुत देर से प्रकाश में आए। इन पत्रों से श्रीअरविंद की उस समय की मानसिकता की पूरी झाँकी मिलती है, जिसका आज ऐतिहासिक महत्त्व है।

६ दिसंबर, १९०७ और १७ फरवरी, १९०८ के इन दो पत्रों में एक में उन्होंने अपनी पत्नी को लिखा था—''मेरे तीन पागलपन हैं, पहला—शिक्षा, विद्या, प्रतिभा, गुण, धन सब भगवान् की देन हैं, अत: ये उसी को अर्पित होने चाहिए। दूसरा—यह प्रण कि अपने शरीर के भीतर, अपने मन में मैं भगवान् के साक्षात् दर्शन करूँगा और उसे पाकर रहूँगा। मेरी इस साधना में तुम साथ नहीं चल सकोगी, पर सहधर्मिणी के नाते पीछे-पीछे तो चल ही सकती हो। मेरा तीसरा पागलपन है—भारत माँ को आजाद कराना और उसके लिए हर खतरा मोल लेना।'' इस अवधि में उन्होंने पत्रकारिता और लेखन में भी रुचि ली। पत्र-पत्रिकाओं में लिखने के अलावा 'भवानी मंदिर' नाम की पुस्तक भी लिखी।

तीसरा—श्रीअरविंद के जीवन के तीसरे पड़ाव की अवधि सन् १९०६-१९१० केवल पाँच वर्ष रही, जिसमें उन्होंने बंगाल के अपने घर में रहकर क्रांतिकारी राजनीतिक जीवन जिया। इंग्लैंड में रहते हुए ही उन्हें स्वातंत्र्य-संघर्ष की प्रेरणा जॉन ऑफ आर्क और मैजिनी से प्राप्त हुई थी। स्वतंत्रता के अंग्रेजी पर्याय शब्द 'इंडिपेंडेंस' का पहली बार प्रयोग भी उन्होंने ही किया था। 'बंग-भंग' की घोषणा के बाद सन् १९०६ में उन्होंने 'नेशनल कौंसिल ऑफ एजुकेशन' की स्थापना की और नेशनल कॉलेज में प्रधानाचार्य रहते हुए राष्ट्र के लिए समर्पित विद्यार्थी तैयार किए। साथ ही 'वंदे मातरम्' समाचार-पत्र से जुड़े।

६ अगस्त, १९०६ को अपना घोषणा-पत्र प्रस्तुत करनेवाला यह पत्र २ जून, १९०७ को साप्ताहिक हो गया था। उन्हीं दिनों उन्होंने 'कर्मयोगिन' (अंग्रेजी) और 'धर्म' (बँगला) नाम से दो साप्ताहिक पत्र भी चलाए थे। 'वंदे मातरम्' पत्र की नीति का निर्धारण अरविंद घोष ही करते थे। 'निष्क्रिय प्रतिरोध' शीर्षक से उसमें एक लेखमाला भी लिखते थे। ३० जुलाई, १९०७ को 'वंदे मातरम्' कार्यालय पर छापा पड़ा और अरविंद घोष पर राजद्रोह का मुकदमा दायर किया गया। १६ अगस्त को उनकी गिरफ्तारी के वारंट निकले थे, पर श्रीअरविंद घोष स्वयं थाने पहुँच गए थे और जमानत पर छूट आए थे।

इसके बाद जब मानिकतल्ला स्ट्रीट स्थित मकान पर पड़े छापे में बम बनाने की फैक्टरी पकड़ी गई तो इस कार्य में लिप्त उनके छोटे भाई वारीन घोष और उनके एक साथी उल्हासकर भी वहाँ से पकड़ लिये गए, जिन्हें फाँसी की सजा सुनाई गई। इस केस में गिरफ्तार होकर श्रीअरविंद सन् १९०८ से १९०९ तक एक वर्ष अलीपुर जेल में रहे। वे ब्रिटिश कोप के शिकार थे, पर अपने आध्यात्मिक रुझान के कारण यह एकांत उन्हें बहुत रास आया। जेल में रहकर उन्होंने स्वामी विवेकानंद को पढ़ा-जाना, 'गीता', 'उपनिषद्' का अध्ययन किया, योग-ध्यान की साधना की और आध्यात्मिक ऊँचाई पर पहुँचने की कल्पना करने लगे। रिहा होने के बाद तो वे अध्यात्म-साधना के लिए ४ अप्रैल, १९१० को पांडिचेरी में ही जा बसे थे। पांडिचेरी तब फ्रांसीसी बस्ती थी। अंग्रेज चाहकर भी न उन्हें वहाँ से गिरफ्तार कर सकते थे, न उनकी साधना में खलल ही डाल सकते थे।

क्रांतिकारी इतिहास में प्रसिद्ध इस 'अलीपुर बम केस' में कुल बयालीस लोगों पर मुकदमा चलाया गया था, जिनमें से तैंतीस श्रीअरविंद के दल के साथ थे तथा नौ अन्य, जिन पर 'सरकार के विरुद्ध युद्ध' का अभियोग लगाया गया था। इस केस में नरेंद्र गोस्वामी नाम का युवक मुखबिर बना, पर ३१ अगस्त, १९०८ को वह भी अस्पताल में अपने साथियों द्वारा मारा गया। कुल एक सौ इकतीस दिन मुकदमा चला। अधिवक्ता श्री चित्तरंजन दास की चतुराई अंग्रेज अधिवक्ता पर भारी पड़ी और १४ अप्रैल, १९०९ को श्रीअरविंद जेल से बेदाग छूट गए। उनके छोटे भाई वारीन घोष और साथी उल्हासकर की फाँसी की सजा भी आजीवन कारावास में बदल दी गई। अन्य साथियों में से हेमचंद्र दास और उपेंद्र नाथ बनर्जी को भी आजीवन कारावास का दंड मिला। श्री वारीन घोष की पुस्तक 'मेरी निर्वासन कहानी' और उल्हासकर दत्त की पुस्तक 'जेल की गाथा' से उनके व उनके साथियों के आजीवन कालापानी कारावास के दौरान उन्हें दी गई यातनाओं की दर्दनाक दास्तान मिलती है।

चौथा—श्रीअरविंद के जीवन का चौथा पड़ाव सन् १९१०-१९५० तक पांडिचेरी-प्रवास का ही है, जहाँ रहकर अनवरत साधना करते हुए वे चेतना के प्रकाश-पुंज बने। बंगाली परंपरानुसार माँ भगवती काली के उपासक वे प्रारंभ से ही थे। सशस्त्र क्रांति में उनकी हिस्सेदारी भी अत्याचारी का दमन करनेवाली माँ काली की प्रेरणा से हुई थी। अब वे काली उपासना चक्र में योग की ओर उन्मुख होकर योग की उच्चावस्था तक पहुँचने के लिए प्रयत्नशील थे। इस आध्यात्मिक साधना में उनका साथ देने आई एक विदेशी महिला श्री माँ के साथ अरविंद आश्रम में निवास करते हुए उनके भीतर के विचार-प्रवाह को कुछ मुख्य बिंदुओं में इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है—

लक्ष्य : आनंद-प्राप्ति—पहले अपने लिए प्राप्त करो, फिर दूसरों में बाँटो।

स्वार्थ : परहितवाद भी प्राय: स्वार्थ का ही सर्वोत्कृष्ट रूप होता है—उसमें भी अपनी आत्मिक उन्नति का स्वार्थ निहित है।

संकीर्णता : नास्तिकता, धार्मिक संस्थाओं की दुष्टता और संप्रदाय की संकीर्णता, सभी एक समान हैं—इनका विरोध आवश्यक है।

रोग : अंतरात्मा में दरार से ही शरीर में रोग लौट-लौटकर आता है।

कला : कला प्रकृति की नकल नहीं है।

देश : देश भगवान् है, जनक है, जननी है। उसके बारे में कुछ कोमलता के साथ न कह सको तो कभी कुछ बुरा मत कहो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

चंद्रचूड़

कमला प्र. 'बेखबर'

"उठो मजदूर हिंदों के" बस यहीं आकर चंद्रचूड़जी धरा गए। कवि-गोष्ठियों की आचार संहिता (जिसे हर कवि के रोने-गाने को श्रोताओं द्वारा तीन बजे रात तक निगलना पड़ता है) के विरुद्ध स्कूल में व्याकरण के शिक्षक कृष्णाचार्य ने कविता पाठ के मध्य में उन्हें टोक दिया—"महाशय, 'हिंदी' शब्द व्यक्तिवाचक संज्ञा है, इसका बहुवचन में प्रयोग नहीं होता है।" चंद्रचूड़जी हक्का-बक्का रह गए। आठ-नौ क्लास तक उन्होंने स्कूल में पढ़ा जरूर था, मगर व्याकरण के घंटे में हमेशा पाँच मिनट या पंद्रह मिनट का बहाना बनाकर अनुपस्थित हो जाते थे। व्याकरण पढ़ानेवाला दीनानाथ पंडित बड़ा खुर्राट किस्म का नीरस व्यक्ति था। क्लास में लड़कों को उठा-उठाकर कनैठी दे-देकर कर्ता के 'ने' और गुणवाचक विशेषण के बारे में पूछा करता था। चंद्रचूड़ को कविता से लगाव जरूर था, मगर व्याकरण से घृणा थी। सो उन्होंने 'हिंद' को ध्वनि की दृष्टि से हिंदों' का प्रयोग कर दिया था। दरअसल, यह किसी पुराने समाजवादी कवि के किसी परचे में छपी कविता के मुखड़े 'उठो हिंद के मजदूरों' का परिवर्तित रूप था। मुखड़ा जोरदार था, सो उन्होंने सिर्फ स्थान परिवर्तन कर शब्दों को इधर-उधर करके 'मजदूरों' को 'मजदूर' और 'हिंद' को 'हिंदों' बना दिया था। उन्हें यह कतई पता नहीं था कि यह व्यक्तिवाचक संज्ञा क्या बला है, जिसका बहुवचन नहीं होता। दूसरी कोफ्त यह हुई कि ये साले व्याकरणवाले कवि-गोष्ठियों में क्यों आ जाते हैं? उन्हें लगा कि दीनानाथ पंडित से अभी तक उनका पिंड नहीं छूटा है।

बात ऐसी थी कि चंद्रचूड़जी कविता बनाने में इस आदर्श के कायल थे कि 'भावो अनूठो चाहिए भाषा कैसी होय', फिर कविता बनाने को वे एक तकनीक मानते थे—ठीक दरजी व बढ़ईवाला तकनीक। छोटे-छोटे हिस्सों को कहीं-कहीं से काट-कूटकर, रंदा-रेती मारकर फिट कर दिया जाए, तो अच्छी सी पोशाक या फर्नीचर का रूप तैयार हो जाता है। भाषा तो ईश्वर की देन है, प्राकृतिक है, इस पर किसी की बपौती नहीं हो सकती है। शब्दों को काट-छाँटकर पुरानी कविता नया फर्नीचर जैसा बन सकती है। यही उनकी तकलीफ थी, जैसे किसी पुराने कवि एक पंक्ति '''आह रे, मनु के राज कुमार''' तो इसमें थोडा रद्दोबदल करके उन्होंने इसे 'वाह रे, राजा मनु कुमार' कर दिया और यह उनकी अपनी पंक्ति हो गई। इस तरह का तकनीकी परिवर्तन वे प्रायः पुरानी और नहीं पढ़ी जानेवाली कविताओं के साथ करते हैं। कभी उर्दू के कुछ शेरों का [illegible] रूप-परिवर्तन कर वे बिलाड़ जैसा बना देते हैं। मसलन, 'मौत का एक दिन मुअय्यन है। नींद क्यों रात भर नहीं आती।' तो इसका रूप वे [illegible] प्रकार बदलकर अपना बनाते हैं—

'मृत्यु का एक दिन मुकर्रर है। निद्रा क्यों रात्रि में नहीं आती।' ऐसी कविताओं पर तालियों के साथ सीटियाँ भी बजती हैं—चाहे वे 'हूट' की हों या प्रशंसा की, मगर बजती जरूर हैं।

चंद्रचूड़जी का नाम सिर्फ इसलिए नहीं है कि वे कविता की फ्रेमिंग करते हैं, बल्कि नाम इसलिए है कि बिना नागा वे स्थानीय से लेकर जिला स्तरीय, राज्य स्तरीय और विश्व स्तरीय कवि सम्मेलनों में शरीक होते रहे हैं। कवि सम्मेलनों के लिए उनका नाम इतना अनिवार्य है कि यदि किसी सम्मेलन में बीस कवियों का आमंत्रण देने की बात होती है तो वहाँ उन्नीस को ही आमंत्रण भेजा जाता है, बीसवाँ चंद्रचूड़जी को मान लिया जाता है। आमंत्रण जैसी क्षुद्र औपचारिकता को वे महत्त्वहीन मानते हैं। फूल भौंरा को कौन सा कार्ड भेजता है या गुड़ मक्खी को कौन सा [illegible] करती है, फूल का खिलना या गुड़ का खुला होना ही भौंरा और मक्खी को आमंत्रण है। कवि सम्मेलनों के आयोजन ही चंद्रचूड़जी की उपस्थिति के सूचक हैं।

गोरे, लंबे चेहरे के पीछे लटकते पंत कट लंबे बालों के गुच्छे जिनसे किसी सुगंधित तेल की सुगंध उड़ती रहती, सफाचट कोमल मुख मंडल, सफेद चूड़ीदार पाजामा पर सिल्क का कामदार कुरता, पैर में कोल्हापुरी चप्पल, काँधे पर लटकता शांति निकेतन वाला कामदार झोला, स्वप्निल आँखें और पान पराग तथा जाफरानी जर्दा चबाते हुए दाँत, मुखमंडल पर मुसकान की स्थायी झाँकी—गोया आदमी नहीं, एक चलता-फिरता काव्य संकलन।

तो ऐसा व्यक्तित्व था चंद्रचूड़जी का, जिससे सम्मेलनों के मंच पर उन्हें कवयित्रियों के बगल में बैठने और पान पराग पेश करके परिचय बढ़ाने का विशेष अवसर प्राप्त होता था। बहुत सी नई कवयित्रियों को मंच तक लाने का श्रेय चंद्रचूड़जी को था। इसलिए महिला मंडल या [illegible] कॉन्फ्रेंस में जहाँ सदस्यों के पतियों तक का निषेध होता था, विशिष्ट अवसरों पर चंद्रचूड़जी बेरोकटोक वहाँ जाते और सुशोभित, सम्मानित होते थे, और कविताएँ तो जरूर पढ़ते थे। कवयित्रियाँ तथा अन्य सदस्याएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनका पान-पराग चबा-चबाकर उनकी कविताओं का रस लिया करती थीं। उनका पान-पराग तो महिला सभा में इतना लोकप्रिय हो गया था कि एक कवयित्री ने उस पर एक कविता भी रच डाली थी—

'आह, वह स्वर्गिक पान पराग'
राग है, अथवा वहाँ विराग।'

कृष्णाचार्य के टोकने पर चंद्रचूड़जी के कविता पाठ में जो व्यवधान आ गया था, उससे सिर्फ चंद्रचूड़जी ही मर्माहत नहीं थे, उनके श्रोता वर्ग भी तिलमिला उठे थे, खासकर उन छात्रों को गहरी चोट लगी थी, जो स्वयं भाषा प्रयोग में व्याकरण के प्रति स्वच्छंदता के अनुयायी थे। उनमें से एक ने उठकर अपना विरोध प्रकट किया—

"मास्टर साहब, आप यहाँ कविता सुनने आए हैं कि व्याकरण की कॉपी जाँचने?" लड़के ठठाकर हँस पड़े। चंद्रचूड़जी को लगा कि उनको अब विरोध में बोलने की आवश्यकता नहीं है। उनके संप्रदाय की संख्या काफी मजबूत है।

किंतु मास्टर साहब फनफना उठे—"मैं अशुद्ध भाषा में कविता लिखने का साहित्य के प्रति अपराध मानता हूँ, मैं इसे बरदाश्त नहीं कर सकता।"

बीच से एक दबी आवाज आई—"तो यहाँ रोक कौन रखा है। आप जा सकते हैं।"

बात को बिगड़ते देखकर प्रो. सिंह साहब ने सँभालने की चेष्टा की—"मेरी समझ में कवि ने भाषा का गलत प्रयोग भावना के अतिरेक में आकर किया है। गलती करना या भाषा को विकृत करने का उनका उद्देश्य कतई नहीं है। कवि तो भाषा का निर्माता होता है। मेरी समझ में कवि ने यहाँ 'हिंदों' शब्द का जो प्रयोग किया है, उसमें 'हिंद' व्यक्तिवाचक को जातिवाचक बना दिया है। अर्थात् 'हिंद' यहाँ सिर्फ भारत का प्रतीक न होकर देश का प्रतीक बन गया है। सभी देशों के मजदूरों को जाग्रत् होने का यह एक अंतरराष्ट्रीय आह्वान जैसा लगता है। उदाहरण के लिए, जब हम कहते हैं कि यह शिवाओं, प्रतापों का देश है, तब शिवाजी या राणा प्रताप व्यक्ति न होकर वीर जाति के हो जाते हैं।"

इस पर श्रोताओं में जोर का हुर्रा मच गया। मास्टर कृष्णाचार्य असंतुष्ट होकर बैठ गए। उन्हें ऐसा अनुमान नहीं था, कि ऐसे पाखंडी लोग भी यहाँ बैठे हैं, जो तर्क के कुहरे में यथार्थ की सड़क को ढककर एक्सीडेंट करा सकते हैं। दूसरी बात, कि मास्टर साहब ने व्याकरण को नियमों के अधीन पढ़ा था। उसकी व्याख्या भी की जा सकती है—ऐसा उनका अनुमान नहीं था।

उधर चंद्रचूड़जी भी मन-ही-मन सोच रहे थे कि इस पंक्ति को बदलते हुए इतनी ऊँची बातें मैंने नहीं सोची थीं। मगर जब प्रोफेसर साहब कर रहे हैं, तो मैंने जरूर ऐसा ही सोचकर लिखा होगा। कविता खत्म करने के बाद कवयित्रियों का जत्था छोड़कर प्रोफेसर साहब के निकट आकर बैठ गए और अपना पान-पराग का डिब्बा जाफरानी जर्दा के साथ उनके सामने बढ़ा दिया—कृतज्ञता मिश्रित सम्मान के साथ। यह क्रिया उन्होंने ठीक उसी प्रकार संपादित की, जैसाकि धान के खेत को लुटवाने के बाद हँसेरी के प्रधान को जमींदार मुसकराते हुए इनाम देता है। साथ ही उन्होंने प्रोफेसर से यह भी कह दिया कि 'आप जैसे विद्वान् को तो राष्ट्रभाषा अकादमी का चेयरमैन होना चाहिए। शिक्षा मंत्री की पत्नी कविता लिखती हैं, मैं उनसे आपके बारे में कहूँगा।'

प्रो. सिंह सोचने लगे कि इस बार चंद्रचूड़जी उन्हें दिल्ली या कहीं भेजकर ही दम लेंगे।

प्रो. कॉलोनी, फारबिसगंज
जिला अररिया-८५४३१८

बिना पिए ही नशा

एक बार महादेवीजी से कुछ आधुनिकाएँ मिलने आईं। उन्होंने बातचीत के दौरान उनसे सहज ही पूछा, "बताइए, नारी आपके जमाने में अधिक मुक्त थीं या आज के हमारे युग में?" महादेवीजी ने तीव्रता से जवाब दिया, "हमारे जमाने में वह अधिक स्वतंत्र थीं। वह व्यक्ति थीं, जबकि आप लोग व्यंजन हैं। व्यंजन में भी कहीं स्वतंत्रता होती है?"

महादेवीजी ने उन्हें मौन देखा तो कहा, "उस जमाने में जब हम लोग सत्याग्रह के लिए तिरंगा हाथ में लेकर निकला करते थे, सभी लोग हमें आदर से देखते थे, देखते ही हाथ जोड़कर खड़े हो जाते थे। यदि हम शराब की दुकान पर धरना देने चली जाती थीं तो अच्छे-अच्छों का नशा देखते ही काफूर हो जाता था। आज तो नारी फैशन के जिस लिबास में निकलती है, उसे देखकर तो जो नहीं पिए हैं, उन्हें भी नशा हो जाएगा और जो पिए हैं, उनका तो कहना ही क्या?"

महादेवीजी का व्यंग्य-बाण एक तरह से उन्हें घायल कर गया।

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

जब हमारे घर में इलेक्ट्रॉनिक मीटर लगा

● सीमा शर्मा

जब से चुन्नू घर में अवतरित हुआ, मेरी कमर का घेरा चालीस इंच पार कर गया। पतली सी नाजुक कमरिया पर तीन-चार बल पड़ने लगे। अब तो मुझे बेहद चिंता हुई और मैंने सोचा, सब्जी खरीदने के बहाने सैर भी हो जाएगी और कमर भी दुबली। सो सब्जी खरीदने के लिए चुन्नू के पिता को अयोग्य ठहराते हुए स्वयं सब्जी मंडी जाने लगी। वैसे भी चुन्नू के पिताजी सड़ी-गली सब्जी खरीदने में पूर्णतः माहिर हैं। न जाने सब्जी खरीदते समय ध्यान कहाँ रहता है। कूँजड़ी सबसे बुरी सब्जियाँ तौल-तौलकर महाराज के झोले में भर देती। फिर कितना भी झगड़ो, कोई असर नहीं। 'सब्जी खरीद लाए यही क्या कम है' जैसे जुमले हमें परास्त करते रहे।

मंडी पहुँचते ही सबसे पहले पुरानी कॉलोनी वाली मिसेज वर्मा से भेंट हो गई। मिसेज वर्मा की तो बाँछें खिल गईं। बोली, "अरे तुम, मैं तो पहचान ही नहीं पाई, कितनी दुबली हो गई हो…।" दुबली, मुझे तो जैसे करंट लगा। यहाँ तो छत्तीस से चालीस इंची घेरे को कम करने के लिए आफत मोल ली। सारे रास्ते चल-चलकर साँसें धौंकनी सी हो गईं, तिस पर भी मिसेज वर्मा को मैं दुबली दिख रही थी। मैं सोचने लगी, फिर चौंककर बोली, "क्या बात है? आँखें कमजोर हो गईं लगता है?" बोली, "हाँ यार, जब से इलेक्ट्रॉनिक मीटर घर में लगा है, आँखों में बहुत दर्द रहता है।" मुझे तो लगा शायद मिसेज वर्मा के दिमाग का कोई स्क्रू ढीला हो गया है, शायद बेचारी घर में परेशान रहती है, वो मुए मिस्टर वर्मा ने लगता है, अभी तक पीना कम नहीं किया। मैंने कहा, "मिसेज वर्मा, मैंने भी कई

जन्म : २६ अगस्त, १९६६।

कृतित्व : पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

सम्मान : जाह्नवी तथा उप. राजपीठ द्वारा सम्मानित। आकाशवाणी ग्वालियर व शिवपुरी से प्रसारित।

प्रतियोगी परीक्षाएँ दी हैं और पास की हैं, पर आपकी रीजनिंग कुछ पल्ले नहीं पड़ रही है। इलेक्ट्रॉनिक मीटर और आँखें क्या संबंध है?" वह बोली, "क्या तुम्हारे यहाँ नहीं लगा अभी तक?" मैं अनमनी सी बोली, "अभी नहीं, शायद दो-चार दिन में लगने वाला है।" वो हँसती हुई आगे बढ़ गई और बोली, "लेट हो रही हूँ, कहीं ज्यादा देर हो गई तो बिल्लू के पापा दीवाली मनाने लगेंगे। पीछे से लेकर आगे तक जहाँ जाएँगे, बत्ती जला देंगे। बुझाना ही भूल जाते हैं। ना जाने कितने फालतू बल्ब जल रहे होंगे।" फिर कहकर वो तेजी से ऐसे निकली—ना मालूम कितनी बड़ी समस्या हो।

सब्जी लेकर शाम ज्यादा होने पर मैं जल्दी घर पहुँची। पीछे से पता चला, आया के पास बिजली विभाग के दो कर्मचारी यह कहकर एक फॉर्म रख गए कि एकाध दिन में वे इलेक्ट्रॉनिक मीटर लगा जाएँगे। तीन दिन बाद बिजली विभाग के तीन मुस्टंडे पुराना मी… हटाकर नया इलेक्ट्रॉनिक मीटर लगा गए। दि… तो मानो बल्लियाँ उछलने लगा। पुराने क… से यंत्र को वे लेकर गए, मुझे तो ऐसा लगा मा… बरसों से घर में सारी गड़बड़ी इस खराब यंत्र… ही हो रही हो। वैसे भी वास्तु के हिसाब से घ… के बिजली के उपकरण सब सही करवा… रखने की मेरी आदत थी, बस मुआ ये मीटर ही सारी दिक्कत की जड़ था।

शाम जब पति लौटे तो मैंने तुरंत शु… सूचना दी, "सुनो, नया मीटर लग गया है। पुराना वाला निकाल ले गए बिजलीवाले। वै… भी पुराना मीटर चलता ही कहाँ था। एवरे… बिल भरते थे।" एक सच्ची ईमानदार भारती… नारी की पहचान देकर मैंने अपना ज्ञान बघा… पति चौंककर बोले, "क्या!" और दौड़कर अं… गए। अंदर का नजारा ही कुछ और था। प्रे… गरम हो रही थी, टी.वी. पर समाचार देखते हु… ही मैं इस्त्री करती थी। पहले तो खट् से उन्हों… टी.वी. बंद किया। मुझे तो बेहद बुरा ल… कैसा बेदर्द इनसान है। मैंने रोकने की कोशि… करते हुए बताया कि अभी दूसरे चैनल प… करवाचौथ से संबंधित कोई सीरियल आए… मेरी भी पूजा की नॉलेज बढ़ जाएगी। पर वो… दौड़ते हुए रसोई में पहुँचे। ओवन में केक ब… रहा था और पूजा घर में सौ वॉट का बल्ब ज… रहा था। दौड़-दौड़कर बिजली से संबंधित स… उपकरण बंद करके बाहर आए। मीटर पर रीडिं… पढ़कर तो उन्हें पसीना आ गया। मीटर रीडिं… से चेहरा बुझ-सा गया। ऐसा क्या हुआ? मैं… सोचा था इलेक्ट्रॉनिक मीटर से मेरी वास्तु संबं… परेशानी दूर हो जाएगी। मीटर हमेशा तेज ग… से चलता। ऐसा लगता मानो कहीं रेस में भा…

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ले रहा हो। तिस पर हरे और लाल चमकते बल्ब कितने चलायमान लगे हैं। मानो जिंदगी ने गति पकड़ ली हो, पर चुन्नू के पिताजी तो हमेशा उलटे ही चलते हैं। उन्हें तो वही करना है, जो मुझे पसंद नहीं। बेचैन शेर की भाँति वो चहलकदमी करने लगे। जाने क्या खिचड़ी उनके उलटे दिमाग में पक रही थी।

खैर, मुझे क्या! मेरी तो वास्तव में इस आदमी से कभी नहीं पटी। हमेशा उधेड़बुन में लगा, जाने क्या षड्यंत्र करता रहता है। मैं सीधी-सादी। मैं शांति से चाय बनाने चल दी। चाय लेकर लौटी तो पति मुझे शत्रुभाव से घूर रहे थे। सुबह ही राशि में पढ़ चुकी थी, अपनों पर भरोसा न करें। परेशानी बढ़ने की संभावना है। जाने राशिवाले कहाँ से पता कर लेते हैं, एकदम सटीक भविष्यवाणी निकलती है। फिर भी हिम्मत जुटाकर मैंने कहा, "क्यों जी, ये क्या बात हुई? तुमने नया मीटर लगते ही इलेक्ट्रॉनिक चीजों को ऑफ कर सारे उपकरण बंद कर दिए। क्या हम फिर आदिम युग में जिएँ? हाथ से केक फेंटकर कुकर में पकाएँ।" वो झल्लाकर बोले, "भगवान् जब अक्ल बाँट रहा था, तब तुम कहाँ थीं?"

मैं तपाक से बोली, "छन्नी से चाँद और तुम्हारा चेहरा देख रही थी। बेहतर तो ये होता जब अक्ल बँट रही थी तो मैं वहीं ईश्वर की मदद कर देती तो किसी को कम और ज्यादा की पार्शियलिटी तो नहीं कर पाता भगवान्।" मेरे तर्कों पर महाराज माथा ठोककर बैठ गए।

दूसरे दिन ही पति कहीं से एक धोबिन तलाश लाए—वॉशिंग मशीन चलनी बंद कर दी गई। प्रेस और हीटर उठाकर ताक पर रख दिए गए। शाम अँधेरा होते ही सारे परिवार को एक ही कमरे में रहकर पढ़ने या काम करने के आदेश पारित हो गए। क्या मजाल कि पप्पू और नटखट निन्नी अपने कमरे में बैठकर लैंप से पढ़ें। बस, लिविंग रूम में एक ट्यूबलाइट जलती,

अब तो बिजली सेंसर की परिसीमाएँ लाँघने लगी। बिजली जलाना हो तो पति से लिखित में आवेदन करके पूछना पड़ता। जलाने के लिए जरूरी होने का सर्टिफिकेट देना पड़ता, तभी किसी उपकरण के लिए अनुमति मिलती। दूसरे दिन ही पति कहीं से एक धोबिन तलाश लाए—वॉशिंग मशीन चलनी बंद कर दी गई। प्रेस और हीटर उठाकर ताक पर रख दिए गए। शाम अँधेरा होते ही सारे परिवार को एक ही कमरे में रहकर पढ़ने या काम करने के आदेश पारित हो गए। क्या मजाल कि पप्पू और नटखट निन्नी अपने कमरे में बैठकर लैंप से पढ़ें। बस, लिविंग रूम में एक ट्यूबलाइट जलती, घर का हर सदस्य वहीं आ डटता। पति हिटलरी निगाह से हरदम अपना ध्यान फालतू जलते बल्ब पर केंद्रित रखते।

एक दिन तो हद हो गई। पति मोमबत्ती के आठ-दस पैकेट और हाथ के पंखे ले आए। बोले, "इमरजेंसी लाइट की तरह इनका प्रयोग करना भी सीखो।" अब तो मैं बीस साल की हीरोइन की भाँति रात में कैंडल लेकर कमरों में छुटपुट काम निपटाती, मोमबत्ती लेकर घूमती। धीरे-धीरे मेरे सिर में दर्द रहने लगा। आँखें हलकी सी कमजोर हो गईं। एक दिन बाजार गई तो मिसेज वर्मा से टकराई। मैंने कहा, "अरे, आप तो बहुत गोरी लग रही हो। वजन भी कुछ कम-सा लगता है।"

वो तुरंत पलटकर बोली, "क्यों, लग गया इलेक्ट्रॉनिक मीटर?"

१०१, सागर रत्न अपार्टमेंट्स,
३५, नेहरू कॉलोनी, ग्वालियर (म.प्र.)

पाठकों से निवेदन

- आपके सक्रिय सहयोग से 'साहित्य अमृत' का प्रकाशन निरंतर हो रहा है। इसके लिए हम आपके आभारी हैं।
- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो गई है, वे कृपया अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करवा लें। साथ ही अपने मित्रों-संबंधियों को भी इसकी सदस्यता ग्रहण करने हेतु प्रेरित करने की कृपा करें। सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो पत्र या पोस्ट कार्ड द्वारा भी सूचित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण की सूचना देते समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- किसी अवसर विशेष से संबंधित लेख भेजते समय कृपया उसे उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि उसे समय रहते प्रकाशन-योजना में सम्मिलित किया जा सके।
- साहित्यिक गतिविधियों के अंतर्गत सूचना-समाचार भेजते समय कृपया कार्यक्रम का स्थान, तिथि आदि भी भेजने का कष्ट करें, ताकि पाठकों को पूरी जानकारी मिल सके।
- सदस्यों से अनुरोध है कि सदस्यता संबंधी अपनी किसी भी प्रकार की समस्या को दूर करने के लिए कार्यालय-दिवसों में प्रातः 10.00 से अपराह्न 3.00 बजे के मध्य 23257555 • 23276316 पर संपर्क करें।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

हिंदी के हाजी

● जवाहर चौधरी

अगला विश्व हिंदी सम्मेलन अमेरिका में करना तय किया गया। किसने किया? क्यों किया? जैसे सवाल उठे। सवाल उठाना साहित्य में सक्रिय होने की पहली शर्त है। गुटीय नजरिए से देखें तो इसे कपड़े फाड़ना कहते हैं। एक गुट कुछ करता है तो दूसरा कपड़े फाड़ने लगता है। अगर किसी ने कपड़े नहीं फाड़े तो माना जाता है कि कुछ किया ही नहीं गया है। तय करनेवालों में से अनेक ने अमेरिका नहीं देखा था। देखा तो और भी बहुत कुछ नहीं है, पर अमेरिका नहीं देखने का जो दर्द हिंदी में है, उसकी बात और है।

दरअसल हमारे अनुभव अच्छे नहीं हैं। देश में होनेवाले हिंदी सम्मेलन प्रायः इसलिए फ्लॉप हो जाते हैं कि आयोजन समिति के पदाधिकारियों के अलावा कोई शोभा बढ़ाने भी नहीं आता है। घर में भले ही हम खुद हिंदी की कितनी भी भद्द पीट लें, पर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सावधानी रखना बहुत जरूरी है। हिंदी को हम जितना मार रहे हैं, उससे ज्यादा अमेरिका के लिए मरे जा रहे हैं। सारा देश अमेरिका जाने के लिए 'हम्म-हम्म' कर रहा है। लखनऊ वाले भी 'पहले मैं, पहले मैं' पर उतर आए हैं। जाहिर है, हिंदी सम्मेलन उधर करना सफलता की गारंटी है।

हिंदी-भाषियों का एक बड़ा क्षेत्र है, जिसे 'हिंदी बेल्ट' कहने का चलन है, जो 'उन्नति-विरोधी उन्नतिशीलों' से भरा पड़ा है। इनका सिद्धांत है कि जब वे हिंदी सम्मेलन करते हैं तो दूसरों को आने नहीं देते और जब दूसरे करते हैं तो खुद नहीं जाते। वे बिना वैचारिक खतना

जन्म : ११ फरवरी, १९५२ को इंदौर (म.प्र.) में।

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी., (समाजशास्त्र)।

प्रकाशन : छह व्यंग्य संग्रह, एक उपन्यास, एक कहानी संग्रह, एक लघुकथा संग्रह एवं हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में सतत प्रकाशन; रेडियो-दूरदर्शन पर प्रसारण।

पुरस्कार : 'शरद जोशी पुरस्कार', 'राष्ट्रीय हिंदी सेवी सहस्राब्दी सम्मान' एवं अन्य सम्मान।

किए किसी को उन्नतिशीलता का कलमा नहीं पढ़ाते हैं। साहित्य के अंडरवर्ल्ड में उनकी 'पी-कंपनी' सक्रिय है, जिसके शूटर और भाई ऊँची-ऊँची इमारतों से हिंदी के माहौल पर कड़ी नजर रखते हैं। 'कंपनी' में आदमी का काम नहीं, वफादारी देखी जाती है। वफादार को बात-बेबात पर पुरस्कार दिए जाने की अघोषित परंपरा है। जो वफादार नहीं होते हैं, कंपनी मौका पाते ही उसे टपका देती है। कभी-कभी साहित्य के अंडरवर्ल्ड में गैंगवार भी शुरू हो जाता है और डॉन लोग बाकायदा एक-दूसरे वालों के लिखे को 'कूड़े में फेंकने लायक' घोषित करते हैं। इसलिए भी बहुत जरूरी हो जाता है कि विश्व हिंदी सम्मेलन देश के बाहर, यानी दुबई या अमेरिका जैसी जगह हो।

तिथियाँ घोषित होते ही हिंदी के [illegible] हाजी पूछताछ विभाग के कान में मिश्री घो[illegible] लगे। 'टिकट में अनुदान कितना मिलेगा, [illegible] कितनों को ले जा रहे हैं, कितने सांसदों [illegible] अनुशंसा लगेगी, किसी बूढ़े के साथ एक हेल[illegible] फ्री जा सकेगा या नहीं, डॉलर कितने मिल[illegible] रहने-ठहरने का क्या, पीने-खाने का [illegible] मनोरंजन के मामले में कितनी छूट मिलेगी [illegible] वगैरह-वगैरह।' दो दिनों में ही सारी बातें [illegible] हो गईं।

"इन लोगों ने भी पता नहीं क्या सोच[illegible] अमेरिका रख लिया! जाने-आने का खर्चा [illegible] रुपए से ऊपर है।" सेतु सागर निराश होते हु[illegible] बोले।

"अमेरिका जाने-आने का लाख रु[illegible] है, पर विश्व हिंदी सम्मेलन तो फ्री है, ये [illegible] नहीं सोचते हो।" उतावले कुसुम हजारे [illegible] समझाया।

"फिर भी, लाख रुपया लगाकर [illegible] अमेरिका जाए और वहाँ जाकर हिंदी सम्मे[illegible] में बैठ जाए, इससे बड़ी नासमझी की बात [illegible] क्या हो सकती है!" सेतु सागर ने अ[illegible] दुखड़ा बयान करते हुए थोड़ा सा मुसक[illegible] अपने मनोभाव व्यक्त किए।

"यहाँ से चलो तो यार, वहाँ देखेंगे। [illegible] मौका मिलेगा, करेंगे। तुम खुश हो जाओगे [illegible]

"एक डॉलर पचास रुपए के आस[illegible] रहता है। वहाँ पीना-खाना महँगा पड़ेगा। [illegible] में नहीं आया कि अमेरिका में रखने की [illegible] क्या है।" सेतु सागर लगभग पिनपिनाए।

"तुम भी यार, बच्चों जैसी बातें करते [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊधमसिंह का नाम सुना है कि नहीं?'' कुसुम हजारे ने पूछा।

''सुना क्यों नहीं। उसने शैतान जनरल डायर को ब्रिटेन में जाकर गोली मारी थी।''

''बिलकुल ठीक। जिस तरह डायर देश के लिए शैतान था, उसी तरह हिंदी के लिए अंग्रेजी शैतान है।''

''तो! क्या हम वहाँ जाकर अंग्रेजी पर गोली मारेंगे?''

''गोली नहीं, कंकर मारेंगे। जब शैतान आपके जीवन में रच-बस गया हो तो उसे गोली नहीं मारी जाती है, मात्र कंकर मारने से रस्म पूरी हो जाती है।''

''बात समझ में नहीं आई।...आप कवि लोग उलझाते बहुत हो।'' सेतु सागर ने दिमाग पर ढाई सल डालते हुए कहा।

''अरे भाई, अंग्रेजी का हमारे घर, परिवार, सरकार, दरबार सब जगह तो महत्त्व है, उसे कहने की जरूरत है क्या? सारे हिंदीवालों के बच्चे अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं। बड़ा समीक्षक हिंदी कविता पर अंग्रेजी में बयान देता है या नहीं? तो ऐसे में किस माँ का दूध पीकर अंग्रेजी पर गोली मारेंगे हिंदीवाले?''

''आप तो पहले भी गए हो ना अमेरिका?'' सागरजी ने बात बदली।

''इसीलिए तो कह रहा हूँ...। जो अमेरिका नहीं गया, समझो जनमा ही नहीं। अभी मौका है तो जन्नत की सैर कर आओ...'अकेले'।''

> **वे बिना वैचारिक खतना किए किसी को उन्नतिशीलता का कलमा नहीं पढ़ाते हैं। साहित्य के अंडरवर्ल्ड में उनकी 'पी-कंपनी' सक्रिय है, जिसके शूटर और भाई ऊँची-ऊँची इमारतों से हिंदी के माहौल पर कड़ी नजर रखते हैं। 'कंपनी' में आदमी का काम नहीं, वफादारी देखी जाती है। वफादार को बात-बेबात पर पुरस्कार दिए जाने की अघोषित परंपरा है। जो वफादार नहीं होते हैं, कंपनी मौका पाते ही उसे टपका देती है।**

''वो तो ठीक है यार,...परंतु सम्मेलन अंतरराष्ट्रीय है। इसमें तो बड़े लेखकों और कवियों को जाना चाहिए, जैसे महाकवि राधारमण 'विकट' वगैरह।''

''उनके पास लाख रुपया नहीं होगा, वरना अमेरिका कौन नहीं जाता। फिर हाड़-गोड़ का मामला भी है। ज्यादातर कवि शिलाजीत पर चल रहे हैं। जब वही ग्लैमर, वही खुलापन, वही कैटवॉक एफ-टी.वी. पर मिले तो कोई भला टापने-टूँगने अमेरिका क्यों जाएगा? यहीं नहीं देखेगा।''

''तुम भी यार कुसुम हजारे, हद्द कर देते हो। अरे भई, हिंदी सम्मेलन है, टापने-टूँगने की बात कहाँ से आ गई?''

''विश्व हिंदी सम्मेलन तो हज है यार, जाओ, तब लोग हार पहनाते हैं, आओ तब भी। एक बार हिंदी के हाजी हो जाओ, तब तुम्हें पता पड़ेगा कि तुम दूसरों से कितने अलग और खास हो गए हो।'' कुसुम हजारे बोले।

''सूट नहीं है यार, मेरे पास। चालीस साल पुराना शादी का सूट भी फट-फटा गया है।'' सेतु सागर ने नई समस्या बताई।

''मेरे पास दो सूट हैं, अदल-बदलकर पहन लेंगे। तुम्हारी दाढ़ी तो है ही, सफेद खद्दर के दो कुरते-पैजामे और रख लो बस।''

''अमेरिका में खद्दर पहनूँगा क्या?''

''खद्दर में सारे ऐब छुप जाते हैं। दाढ़ी और खादी हो तो न कलम की जरूरत होती है, न कागज की। एक विश्व हिंदी सम्मेलन दाढ़ी और खादी के भरोसे निबट सकता है।''

पंद्रह दिनों बाद सेतु सागर और कुसुम हजारे फूल-मालाओं से लदे विश्व हिंदी सम्मेलन के लिए अमेरिका रवाना हुए।

१०२ अर्पिता अपार्टमेंट,
७३ जावरा कंपाउंड,
इंदौर-४५२००१

सभी सुधी लेखकों, पाठकों और हिंदी-प्रेमियों को
साहित्य अमृत परिवार की ओर से
स्वतंत्रता दिवस एवं रक्षा बंधन
की हार्दिक शुभकामनाएँ!

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

पाती अन्ना के नाम

● आलोकेश्वर चबडाल

अन्नाजी, प्रणाम!

आशा है, स्वस्थ होंगे, सानंद होंगे। कौशलपुर के राजा के प्रताप से कुशल से भी होंगे। कुशलता से होना अच्छी बात है, पर उससे भी अच्छी बात है दूसरों की कुशलता का ध्यान रखना। कुशल से रहो और कुशल से रहने दो। सम्मान दो और सम्मान लो। आप तो बड़े हो, इसलिए हम आपका सम्मान करते हैं, आप पर अभिमान करते हैं। आखिर आप गांधीवादी हो, मलमल के दौर में खादी हो, दिनचर्या सादी-सादी हो, झूठ के शहर में सत्यवादी हो, इसलिए हम आपको प्रणाम करते हैं। आप दुबले-पतले पर फौलादी इरादों वाले हो; वादों वाले नहीं, करामातों वाले हो; लोगों को शराब जैसी खराबी से निकालकर, लड़खड़ाहट से सँभालकर अपने पैरों पर खड़ा कर देते हो; देश के ही नहीं, संसार के सामने बड़ा कर देते हो, इसीलिए तो हम आपको नमन करते हैं।

आप फौजी हो, हार नहीं मानते हो, डरना नहीं जानते हो, आँधियों में तंबू तानते हो, इसीलिए तो इतना आदर पाते हो। पर देखो दादा, आदर पाने तक ही सीमित रहो तो अच्छा है। ईश्वरीय गुणों से युक्त हो तो ईश्वर की तरह धूप-बत्ती की सुगंध खाकर सुन्न पड़े रहना भी सीख लो। आँखें बंद कर मंद-मंद मुसकराओ और पूजा का आनंद लो। खाली-पीली क्यों लाल-पीले हो रहे हो? मानवों की गंदगी में क्यों गीले हो रहे हो? कृपालु हो क्यों नुकीले हो रहे हो? आप तो ठहरे गांधीजी के भक्त, राष्ट्रप्रेम में अनुरक्त, सच के अनुयायी सख्त, आपका क्या? न कोई आगे न पीछे। है कोई जो बाल खींचे, मुक्का ताने और जबड़ा भींचे? बुढ़ऊ क्या जोड़ा है मेरे लिए, जैसे अमृत वचनों से सींचे। आप जोड़ो भी तो क्यों और किसके लिए?

पर हमारे पेटों और बेटों पर क्यों लात मारते हो भइया? जियो और जीने दो, पियो और पीने दो, खाओ और खाने दो, पाओ और पाने दो। आप सम्मान लो, पुरस्कार लो, प्रसिद्धि लो और हमें नोट लेने दो। आप भलाई लूटो और हमें मलाई लूटने दो। लूट का यह चक्र न टूटने दो। चोली को दामन से न छूटने दो। न रूठो, न रूठने दो। सबको मनाए रहो और सबसे बनाए रहो। हमें छाने दो और खुद भी छाए रहो।

आप भी बाकी बुद्धिजीवियों की तरह लेख लिखो ए.सी. रूम में बैठकर। चिंता व्यक्त करो, दुःख जताओ। टी.वी. पर आकर टिपिकल मुख-मुद्रा बनाओ, टी.वी. पर अपनी रेटिंग बढ़ाओ, घड़ियाली आँसू बहाओ। घड़ी-घड़ी धूप में क्यों बैठ जाते हो? पसीना क्यों बहाते हो? भूख हड़ताल पर क्यों उतर आते हो? मामलों की जाँच-पड़ताल पर क्यों उतर आते हो?

अरे, मन नहीं मानता तो बंद कमरे में मनन करो। मन को शांत करो और शांति से शयन करो। ना स्वयं सोते हो, न दूसरों को सोने देते हो? सोए और खोए हुए लोगों में अलख क्यों जगाते हो? सहते हुए लोगों को लड़ना क्यों सिखाते हो? गूँगों को बोलना क्यों सिखाते हो? मरे हुए लोगों को अमृत क्यों पिलाते हो? उम्मीदें क्यों जगाते हो? क्यों?

समय है, अब भी मौन हो जाओ, कब कहाँ कौन हो जाओ। वेंट गौन हो जाओ। जो हम दे रहे हैं, उसे पाओ और फूले न समाओ। दलदल में महल न बनाओ, कंकरों की दाल न गलाओ। हम दूब से फैले हैं, मैल से मैले हैं, सब गुरु-चेले हैं, चिकने केले हैं, खूब खाए खेले हैं, हमने तुमसे सैकड़ों झेले हैं। इसलिए जिद छोड़ो, भूख हड़ताल तोड़ो। जूस पियो और खूब जियो। ताली बजवाओ, फोटो खिंचवाओ। राज्यसभा का टिकट पाओ। शांति से रहो और रहने दो। समझे अन्ना! समझो भी यार!

१११९, चिपलुंकर ...
गेल गाँव, दिबियापुर
औरैया, उ.प्र.-२०६...

लेखक-परिचय

जन्म : ३० अगस्त, १९७४ को नैनीताल, उत्तरांचल में।

शिक्षा : परास्नातक (हिंदी), पी-एच.डी. (हिंदी जारी)।

लेखन : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

सम्मान : अखिल भारतीय युवा प्रतिभा सम्मान २००६, अखिल भारतीय हाइकू प्रतियोगिता २००६ में 'सांत्वना पुरस्कार', कानपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, गृह मंत्रालय द्वारा आयोजित कविता प्रतियोगिता २००१ में द्वितीय, २००३ व २०११ में प्रथम स्थान, राष्ट्रकिंकर द्वारा आयोजित हास्य-कविता प्रतियोगिता में 'हास्य श्री सम्मान'।

संप्रति : वरिष्ठ, फोरमैन, गेल इंडिया लि.।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग पहेली (७१)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ अगस्त, २०११ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते अक्तूबर २०११ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली–२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (६९) का हल

१ प	यां	२ य	३ वा	ची	■	४ मू	खं	५ ता
टु	■	६ म	द	■	७ श	र्त	■	ली
८ ता	९ रा	■	१० क	११ न	क	■	१२ अ	ब
■	१३ धा	१४ म	■	ज	■	१५ त	नु	जा
१६ धौं	■	१७ ट	क्क	र	खा	ना	■	ना
१८ स	१९ ली	का	■	बं	■	२० व	२१ श	■
२२ ज	ग	■	२३ प्र	दी	२४ प	■	२५ त	२६ म
मा	■	२७ अ	ति	■	२८ रा	२९ नी	■	ह
३० ना	ना	थं	■	३१ चु	स्त	चा	ला	क

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री माणक तुलसीराम गौड़**
बैंक ऑफ महाराष्ट्र
बालाजी भवन, सब्जी मार्केट,
जिला–रायगढ़,
पनवेल–४१०२०६ (महा.)

२. **श्री कृष्ण कुमार 'अजनबी'**
पो.–देवयोग,
जिला–रायपुर–४९३८९०
(छत्तीसगढ़)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली ६९ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री मोहन उपाध्याय (अजमेर), सुधा जौहरी (जयपुर), अर्चना श्रीवास्तव (खरगौन), कुसुम गोयनका, प्रियंवदा कुमार, निर्मला गुजराती (दिल्ली), भूप सिंह (हरिद्वार), रामप्रकाश राय (गोरखपुर), अंजली शर्मा (मधुबनी), रीतेश कुमार (कैथल), गणपति झा (उन्नाव), एम.डी. मिश्रा (टीकमगढ़), मुंशीराम वैद (छिंदवाड़ा), गोपीराम कश्यप (अलीगढ़)।

बाएँ से दाएँ—

१. देहावसान (४)
४. अयुक्त (४)
७. रिपोर्टर का काम (५)
९. उम्र (३)
११. जाली (३)
१३. कामदेव (२)
१४. उत्सव (३)
१६. स्वच्छ (२)
१७. गलीचा (३)
१८. अवगुण (३)
१९. फतह (२)
२०. कबूतर (३)
२२. विशिष्ट (२)
२४. बैंगन आदि का सालन (३)
२६. अर्थी (३)
२७. गुणग्राहक (५)
२९. पर्याय (४)
३०. चिंतन के योग्य (४)

ऊपर से नीचे—

१. प्राचीन प्रथा, जिसमें कन्या अपने लिए आप ही पति चुन लेती थी (४)
२. लौटकर फिर अपने स्थान पर आना (३)
३. कार्यकाल (२)
४. शत्रु (२)
५. औलाद (३)
६. कष्ट (४)
८. दीपक के धुएँ से जमाई कालिख (३)
१०. यम का छुरा (५)
१२. बूचड़खाना (५)
१४. जन्मदाता (३)
१५. अखंडित (३)
१९. तृप्ति होना (१, ३)
२१. तालाब (३)
२३. एक ही जात का (४)
२५. शक्ति (३)
२६. उत्पत्ति (३)
२८. कीमत (२)

वर्ग पहेली (७१)

१		२	३	■	४	५		६
	■	७		८			■	
९	१०		■		■	११	१२	
१३		■	१४		१५	■	१६	
■	१७			■	१८			■
१९		■	२०	२१		■	२२	२३
२४		२५	■		■	२६		
	■	२७			२८		■	
२९				■	३०			

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

....

....

वर्ग पहेली (७०) का हल अगले अंक में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक मिला। संपादकीय में विभिन्न समस्याओं की चर्चा पढ़कर अच्छा लगा। प्रतिस्मृति में कहानी 'दुखिया', लोककथा और व्यंग्य बहुत अच्छे बन पड़े हैं। कविताओं में अखिलेश की गजलें व संदीप नैयर की तुकांत कविताएँ हृदयग्राही रहीं। 'पापा! मैं जीना चाहती हूँ' में जिजीविषा की अदम्य इच्छा देखने को मिली। अंक सदैव की भाँति अच्छा बन पड़ा है।

—*नाथूराम शर्मा, झाँसी (म.प्र.)*

'साहित्य अमृत' का जून अंक पढ़कर अच्छा लगा। कुँअर बेचैन की गजलें, राजेंद्र रंजन चतुर्वेदी का आलेख 'दुरगी का घर', राजेंद्र त्यागी का व्यंग्य 'पालतू राजनीति में', गोपाल चतुर्वेदी का 'कूड़ा कल्चर और कीचड़', कुमार रवींद्र के 'गीत', स्वप्ना चतुर्वेदी का 'फूलबँगला : धर्म और कला सौंदर्य का प्रतीक', अरविंद तिवारी का 'सदन में न उठने का गम', प्रेमचंद पांडे का 'सीढ़ियाँ' एवं ब्रजेश त्रिपाठी का 'संताली भाषा एवं साहित्य' बड़े मनोरंजक, ज्ञानवर्द्धक, सार्थक व सुखद लगे। संपादकीय तो समसामयिक और उत्प्रेरक है ही।

—*नंदकिशोर तिवारी, वाराणसी (उ.प्र.)*

'साहित्य अमृत' आया, पढ़कर
मेरे मानस का सुमन खिला
अक्षर-अक्षर हृदयस्थ हुआ
अंतर्मन को परितोष मिला।
आलेख-कहानी-व्यंग्य और
फिर ललित निबंध मुझे भाया
हर रचना में सौंदर्य देख
उर में आनंद उमड़ आया।

—*महेशचंद्र त्रिपाठी, फतेहपुर (उ.प्र.)*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक मिला। संपादकीय पढ़कर अच्छा लगा। आज का राजनैतिक वातावरण कितना दूषित है, उसका सही चित्रण किया गया है। कहानी 'पापा मैं जीना चाहती हूँ', 'थोड़ा सा आकाश' अच्छी लगीं। साहित्य का भारतीय परिपार्श्व की कविताएँ पढ़कर अच्छा लगा। प्रतिक्रियाएँ और गतिविधियाँ सदैव मन को लुभाती हैं। संपादक मंडल को बधाई।

—*दिनेशचंद्र, इलाहाबाद (उ.प्र.)*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक नवीन सामग्री एवं आकर्षक कलेवर के साथ प्राप्त हुआ। प्रथमत: साहित्य अमृत के सोलहवें वर्ष के लिए हार्दिक बधाई व शुभकामनाएँ। पत्रिका की समस्त सामग्री ज्ञानवर्धक, चेतनायुक्त तथा सामयिक घटनाओं के साथ प्रकाशित होती है। साहित्यिक गतिविधियाँ ज्ञानवर्धक होती हैं। पत्रिका परिवार को बधाई।

—*रामकिशन पंवार, हनुमानगढ़ (राज.)*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय अत्यंत सामयिक रहा। कहानी 'पापा मैं जीना चाहती हूँ', 'कछुए की चतुराई' 'थोड़ा सा आकाश' और 'कठपुतली' अत्यंत पसंद आईं। रूपा सिंह की कविताएँ मन को भा गईं। राजकुमार सिंह और जनार्दन मिश्र ने एक अच्छी कोशिश की है। नए-नए रचनाकारों को प्रेरित करने हेतु आशा है आपका प्रयास सदैव जारी रहेगा। गतिविधियाँ पढ़कर अच्छी जानकारी मिलती है।

—*कृष्ण कुमार उपाध्याय, बस्ती (उ.प्र.)*

'साहित्य अमृत' का मई अंक मिला। रचनाएँ बहुत उत्कृष्ट हैं। संपादकीय टिप्पणी, मृदुला सिन्हा का शास्त्रीजी पर संस्मरण, उत्तराखंड के मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक की कहानी 'अतीत की परछाइयाँ' एवं पवन चौहान की 'लॉटरी', महीप सिंहजी का आलेख 'माया महाठगिनि हम जानी', भवानीलाल भारतीय का आलेख 'दिवंगत विदेशी हिंदी सेवी', रमानाथ राय की 'आँसू', गोपाल चतुर्वेदी की 'नींद न आने पर' एवं अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी की रम्य-रचना 'हमारे गाँव-घर की साँझा-पराती' बहुत उत्कृष्ट रचनाएँ हैं। एक शानदार अंक के लिए बधाई स्वीकारें।

—*विपिन कुमार, नवादा (बिहार)*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक प्राप्त हुआ। जनार्दन प्रसाद झा की 'दुखिया' और रहबान अली प्रकाश की कहानी 'कठपुतली' बेहद पसंद आई। कठपुतली कहानी के माध्यम से लेखक ने ग्राम्य जीवन में व्याप्त रूढ़िवादिता, भारतीय संस्कृति के जीवन पहलुओं को मार्मिकता के साथ उठाया है। कहानीकार प्रशंसा का पात्र है।

—*विनोद कुमार तिवारी, फारबिसगंज (बिहार)*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक मिला। संपादकीय पढ़कर अच्छा लगा। समस्त कहानियाँ और कविताएँ अत्यंत मार्मिक तथा हृदयग्राही बन पड़ी हैं। उस पत्रिका का कलेवर बहुत उपयोगी और बहुआयामी है। इसके लिए संपादक मंडल को हार्दिक बधाई।

—*डॉ. राजेश्वरी शांडिल्य, लखनऊ (उ.प्र.)*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक प्राप्त कर मन प्रसन्नता से खिल उठा। कविताएँ अच्छी लगीं। कहानी 'कछुए की चतुराई' बेहद पसंद आई। रामचंद्र शुक्ल के बारे में मैंने भी विस्तार से पढ़ा है, पर मुझे उनका आलोचक रूप ज्यादा पसंद आया। वह तर्कसंगत और यथार्थवादी दृष्टिकोण रखते थे। गतिविधियों से जो जानकारी मिलती है वह श्रेयस्कर है। आशा है भविष्य में भी ऐसी उत्कृष्ट रचनाएँ पढ़ने को मिलती रहेंगी।

—*स्वाति ग्रोवर, नई दिल्ली*

वैसे तो मैं 'साहित्य अमृत' पत्रिका का नियमित पाठक हूँ, पर मई अंक एवं जून के अंक ने अपनी विशिष्ट छवि प्रदान की है। जो संग्रहणीय है। संपादकीय पढ़कर अच्छा लगा। 'एक लावारिस लाश' ने समाज की वास्तविकता को चरितार्थ और बेनकाब किया है। व्यंग्य, कहानी, कविता आदि सभी रचनाएँ हृदयग्राही हैं। प्रकाशन के लिए शुभकामनाएँ।

—*राधावल्लभ व्यास, रतलाम (म.प्र.)*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यू.के. क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन

यदि संकल्प-शक्ति के साथ कोई काम किया जाए तो कम सयम में भी एक बड़ा आयोजन संभव हो सकता है। यू.के. हिंदी क्षेत्रीय सम्मेलन इसका प्रमाण बन चुका है। वास्तव में यह कार्य १२ मार्च, २०११ को प्रारंभ हुआ, जब गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय बर्मिंघम को विदेश मंत्रालय का पत्र मिला था। ३ अप्रैल से १९ जून तक निर्वाचित कार्यकारिणी की ७ बैठकें हुईं, जिसमें विभिन्न शहरों से लोग आए। इन्हीं बैठकों में सर्वसम्मति से सम्मेलन की रूपरेखा बनी। कौंसल जनरल श्री गुरुराज राव के नेतृत्व और अध्यक्ष श्री हरमोहिंदर उपासक के मार्गदर्शन में सदस्यों को दायित्व दिए गए। २९ सदस्यों वाली कार्यकारिणी को ३० अप्रैल को दूतावास का अनुमोदन मिला और मंत्री (समन्वय) श्री आसिफ इब्राहिम के सूक्ष्म सुझावों से काम आरंभ हुआ।

सम्मेलन के कार्य विवरण को तैयार करने का दायित्व यार्क विश्वविद्यालय के श्री महेंद्र वर्मा एवं कैंब्रिज विश्वविद्यालय के श्री ऐश्वर्य कुमार को दिया गया, जिसको उन्होंने बड़े ही सुरुचिपूर्ण ढंग से पूरा किया।

प्रौद्योगिकी एवं मल्टीमीडिया के माध्यम से गगन शर्मा ने युवाओं में एक चिनगारी पैदा की, जो अब तक नहीं हो पाई थी। सभी प्रपत्र वाचन सारगर्भित, योगदान प्रशंसनीय एवं सराहनीय रहे। प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल का बीज वक्तव्य प्रेरणात्मक ऊर्जा से भरा था। ऐस्टन विश्वविद्यालय की उपकुलपति प्रो. जूलिया किंग के उद्‌घाटन वक्तव्य ने ऐसे सम्मेलनों के द्वार तथा विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण का मार्ग खोला। हिंदी का संसार अब यू.के. में नई चेतना से संपन्न है।

यू.के. क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन भारतीय उच्चायोग, लंदन और प्रधान कौंसुलावास, बर्मिंघम के संरक्षण में गीतांजलि बहुभाषी साहित्यिक समुदाय द्वारा, गीतांजलि ट्रेंट, चौपाल, एच.सी.ए. वेल्स, सैंडवेल कंफेडरेशन ऑफ इंडियंस, संत निरंकारी मंडल यू.के., कथा यू.के., भारतीय भाषा संगम, नेशनल काउंसिल ऑफ हिंदू प्रीस्ट्स, संस्कृति यू.के., डी.यू.टी. नीदरलैंड के सहयोग से २४ से २६ जून, २०११ तक बर्मिंघम के ऐस्टन विश्वविद्यालय प्रांगण में संपन्न हुआ।

इस सम्मेलन का उद्‌घाटन भारत के उच्चायुक्त श्री नलिन सूरी ने किया। इस अवसर पर सैंडवैल की डिप्टी मेयर काउंसलर ऐन शैकल्टन, लॉर्ड तार्सेम किंग, बैरेनेस संदीप वर्मा, ऐस्टन विश्वविद्यालय की उपकुलपति प्रो. जूलिया किंग, कोंसुल जनरल श्री सी. गुरुराज राव, श्री हरमोहिंदर भाटिया उपासक और सैंडवेल के पुलिस उपाधीक्षक श्री कैंपबेल भी उपस्थित थे।

सम्मेलन के अकादमिक सत्र का प्रारंभ 'हिंदी की दशा और दिशा' पर प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल के बीज वक्तव्य से हुआ। उन्होंने कहा कि भाषा एक सांस्कृतिक पाठ है और हिंदी सत्ता की नहीं, जन आंदोलन की भाषा है। द्वितीय सत्र में सर्वश्री जर्नादन अग्रवाल, ऐश्वर्य कुमार, कादंबरी मेहरा ने ब्रिटेन में हिंदी पर प्रकाश डाला। इस सत्र की अध्यक्षता श्री महेंद्र वर्मा ने की।

'हिंदी एवं भारतीय संस्कृति-युवा पीढ़ी के परिप्रेक्ष्य में' सत्र का प्रारंभ श्रीमती सरोज श्रीवास्तव के संचालन में हुआ। भारतीय उच्चायोग में मंत्री (समन्वय) श्री आसिफ इब्राहिम ने युवाओं को हिंदी से जोड़ने के लिए युवाओं की रुचि और परिवेश को ध्यान में रखने का आह्वान करते हुए कहा कि युवाओं को आकर्षित करने वाली शायरी, फिल्म और संगीत आदि का प्रयोग करना भी भाषा को सिखाने का प्रभावी माध्यम हो सकता है। श्री गगन शर्मा और श्री गुरुप्रीत भाटिया ने हिंदी शिक्षण की दशा पर प्रकाश डाला। शाम के सांस्कृतिक कार्यक्रम का प्रारंभ नेहरू सेंटर लंदन में द्वितीय सचिव श्री गौरी शंकर ने दीप प्रज्वलित करके किया।

दूसरे दिन का प्रारंभ 'हिंदी की वैश्विकता और देवनागरी लिपि' सत्र से हुआ। प्रो. मोहन कांत गौतम के संचालन में बीज वक्तव्य देते हुए श्री परमानंद पांचाल ने देवनागरी लिपि को उत्कृष्ट बताते हुए कहा कि 'बच्चे के स्वाभाविक विकास के लिए जिस तरह माँ का दूध आवश्यक है, उसी तरह मातृभाषा का ज्ञान भी।' श्री वेद मित्र मोहला ने प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल से कहा कि उच्चारण पर स्थानीयता का प्रभाव रहता है और स्थान परिवर्तन से उच्चारण में भी परिवर्तन होता रहता है।

'हिंदी भाषा के शिक्षण में समस्याओं और चुनौतियों' संबंधी सत्र में बीज वक्तव्य श्री महेंद्र वर्मा ने दिया। प्राध्यापकगण श्री बोरिस जखारिन और लुडमिला खोखलोवा ने मास्को विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने संबंधी अपने अनुभव साझा किए। सत्र के अंत में डेनमार्क से आई हिंदी सेविका श्रीमती अर्चना पेन्यूली ने हिंदी के शिक्षण में आनेवाली समस्याओं और समाधानों के बारे में प्रभावी वक्तव्य दिया। इजराइल में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिंदी के शिक्षक श्री गेन्नादी श्लोम्पेर ने इजराइल में हिंदी शिक्षण की स्थिति पर प्रकाश डाला। श्रीमती चित्रा कुमार ने कैंब्रिज हिंदी परीक्षा के बारे में विस्तृत विवरण दिया। अध्यक्षीय वक्ता के रूप में श्रीमती फ्रेंचिस्का ओरसिनी ने अंग्रेजी के अलावा अन्य भाषाएँ सीखने के महत्त्व को समझने की सलाह दी।

'ब्रिटेन में हिंदी शिक्षण की समस्याएँ और चुनौतियाँ' सत्र में श्रीमती वंदना मुकेश शर्मा ने यू.के. में हिंदी शिक्षण के सामने मौजूद समस्याओं पर विस्तार से चर्चा की। ओरसिनी ने वेब शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों को हिंदी सिखाने के बारे में अपने अनुभव साझा किए। अध्यक्षीय वक्तव्य देते हुए श्री श्याम मनोहर पांडेय ने कहा कि निराश होने की आवश्यकता नहीं है और इस प्रकार के विचार मंथन से अवश्य ही कुछ नया और अच्छा नतीजा निकलेगा।

दूसरे दिन के अंतिम सत्र में श्रीमती उषा राजे सक्सेना ने अपने वक्तव्य में ब्रिटेन में पिछले ३० वर्ष में प्रवासी हिंदी साहित्यकारों के योगदान पर प्रकाश डाला। 'प्रवासी संसार' पत्रिका के संपादक श्री राकेश पांडेय का कहना था कि हिंदी लोक की भाषा है, इसलिए हिंदी में भोजपुरी, अवधी आदि भाषाओं का समावेश अवश्यंभावी है। इसके बाद श्रीमती शिखा वार्ष्णेय ने हिंदी के उत्थान में वेब पत्रकारिता के योगदान पर वक्तव्य देते हुए कहा कि सीमित साधनों और व्यक्तिगत योग्यता पर टिकी वेब पत्रकारिता ने हिंदी के लिए नए द्वार खोले हैं। श्रीमती अर्चना पेन्यूली ने अध्यक्षीय वक्तव्य दिया।

इसके बाद आयोजित कवि सम्मेलन में स्थानीय एवं भारत से आए कवियों ने हिस्सा लिया। सम्मेलन का तीसरा दिन मुख्यत: हिंदी एवं मीडिया की भूमिका तथा युवा वर्ग की भागीदारी पर केंद्रित रहा। सत्र का संचालन भारतीय उच्चायोग में हिंदी और संस्कृति अताशे श्री आनंद कुमार ने किया तथा अध्यक्षता कहानीकार श्रीमती उषा राजे सक्सेना ने की। सत्र में सर्वश्री महेश भारद्वाज तथा राकेश पांडेय ने हिस्सा लिया।

युवाओं की भागीदारी संबंधी विशेष सत्र में स्थानीय युवाओं सर्वश्री प्रताप हिरानी, नितेश शर्मा, गुरप्रीत भाटिया, निवेदिता, मुहम्मद और रवि ने अपनी बात रखी, जिसका निष्कर्ष यह था कि युवाओं को हिंदी से जोड़ने के लिए उनके परिवेश और रुचियों के साथ-साथ शिक्षण की वैज्ञानिक पद्धति अपनाई जाए। इस बारे में श्री गगन शर्मा ने एक प्रभावशाली प्रस्तुति भी दी। इस सत्र दी अध्यक्षता विधिवेत्ता श्री केशरीनाथ त्रिपाठी ने की और पैनल में शामिल थे—सर्वश्री परमानंद पांचाल, कृष्णदत्त पालीवाल, बोरिस जाख्रिन, रूही सिंह, गगन शर्मा एवं मोहन कांत गौतम।

हिंदी शिक्षकों की समस्याओं पर चर्चा का सत्र कोंसुल जनरल श्री गुरुराज राव की अध्यक्षता और श्री ओंकारेश्वर पांडेय के संचालन में प्रारंभ हुआ। स्थानीय हिंदी शिक्षकों ने बच्चों को हिंदी सिखाते समय आने वाली अनेक प्रकार की समस्याओं व स्थितियों को सामने रखा।

इस अवसर पर जो प्रस्ताव पारित किए गए, उनका सार संक्षेप है—भाषा एवं संस्कृति के क्षेत्र में विभिन्न गतिविधियों में युवा-वर्ग की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए योजना तैयार की जाए और उसका शीघ्र कार्यान्वयन किया जाए।

तीसरे दिन के अंतिम सत्र में गीतांजलि साहित्यिक समुदाय के अध्यक्ष डॉ. कृष्ण कुमार से भाषा-संस्कृति से जुड़ी गतिविधियों पर विस्तार से चर्चा की। उनके वक्तव्य की सभी ने हृदय से सराहना की तथा हिंदी को लेकर नई दिशा में बढ़ने का संकल्प लिया।

—कृष्णकुमार, बर्मिंघम (यू.के.)

मुज़फ़्फ़र

हिंदियों का राज

कभी वो दिन भी आएगा कि हम स्वराज देखेंगे।
दयारे-हिंद में फिर हिंदियों का राज देखेंगे॥
छुटेगी कौम अपनी गैर-जाती की हुकूमत से,
वतन को गैर-मुल्कों का न हम मोहताज देखेंगे।
गड़ेगा हिंद में झंडा मसावातो-अदालत का,
रवादारी-ए-नस्लो-रंग का इख़राज देखेंगे॥
न हिंदी कोष पर कब्जा रहेगा गैर हाकिम का,
न भारतवर्ष से लेते किसी को ताज देखेंगे।
रज़ाकाराने-आजादी की कोशिश बराबर होगी,
मुज़फ़्फ़र कांग्रेस की हर तरफ अफवाज देखेंगे॥
हमेशा हर घड़ी तिफ्लो-जवानो-पीर के दिल में,
वतन के इश्क की उठती हुई अमवाज देखेंगे॥
तकालीफो-मसायब दूर होंगे अहले-भारत के,
सँवरते हिंद में बिगड़े हुए सब काज देखेंगे।
न आने पाएँगी कसरत से मुल्के-गैर की चीजें,
न जाता हिंद से हिंदोस्ताँ का नाज देखेंगे।
गरीबों को भी आएगी मुयस्सर पेट भर रोटी,
यतीमों को न दाने-दाने को मोहताज देखेंगे॥
विजय के हार होंगे नेहरू औ' गांधी की गरदन में,
मुकद्दस मादरे-भारत के सर पे ताज देखेंगे।
मनाएँगे जमीने-हिंद पर हम जश्ने-आजादी,
फलक पर से हमें खुश-खुश तिलक महाराज देखेंगे॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक गतिविधियाँ

'और सोच में तुम' कृति लोकार्पित

५ जून को भोपाल के हिंदी भवन में वरिष्ठ गीतकार श्री नरेंद्र दीपक के गीत संग्रह 'और सोच में तुम' का लोकार्पण एन.एच.डी.सी. के कार्यपालक निदेशक श्री के.एम. सिंह ने किया। कार्यक्रम म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति एवं म.प्र. शासन के 'संस्कृति संचालनालय' द्वारा आयोजित किया गया। अध्यक्षता श्री कैलाशचंद्र पंत ने की। इस अवसर पर त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका 'अंतरा' के प्रवेशांक का लोकार्पण भी हुआ। प्रारंभ में श्रीमती मधु शुक्ला ने स्वरचित सरस्वती वंदना प्रस्तुत की। समारोह में सर्वश्री चंद्रसेन विराट, ऋषि शृंगारी, मधु शुक्ला, भारतेंदु मिश्र और डॉ. राजेंद्र गौतम ने अपने विचार प्रस्तुत किए। संचालन डॉ. प्रतिभा गुर्जर ने किया। ☐

'हिंदी विश्व : गौरव ग्रंथ' का लोकार्पण

१६ जून को दिल्ली में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् एवं कर्मण्य तपोभूमि सेवा-न्यास के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित लोकार्पण समारोह में डॉ. राजेंद्रनाथ मेहरोत्रा द्वारा संपादित ग्रंथ 'हिंदी विश्व : गौरव ग्रंथ' का लोकार्पण परिषद् के महानिदेशक श्री सुरेश गोयल, डॉ. वेदप्रताप वैदिक और डॉ. कमल किशोर गोयनका ने किया। सर्वश्री सुरेश गोयल, वेद प्रताप वैदिक, परमानंद पांचाल, कुमुद शर्मा, प्रदीप पंडित, रामप्रकाश शर्मा ने ग्रंथ पर अपने विचार प्रस्तुत किए। कार्यक्रम में डॉ. कमला सिंघवी, प्रो. अशोक चक्रधर सहित अनेक लेखक एवं हिंदी-प्रेमी उपस्थित थे। ☐

'हाशिये पर दिल्ली' का विमोचन

विगत दिनों नोएडा की फिल्म सिटी स्थित एशियन एकेडमी ऑफ आर्ट्स के प्रांगण में लेखिका डॉ. राज बुद्धिराजा की पुस्तक 'हाशिये पर दिल्ली' का विमोचन किया गया। समारोह में अकादमी के संस्थापक और निदेशक प्रो. संदीप मारवाह, पत्रकार डॉ. ओम गुप्ता, प्रो. आर.के. सिंह तथा जापान के युवा हिंदी शोधकर्ता श्री याशियो ताकाकुरा ने अपने विचार व्यक्त किए। पुस्तक के प्रकाशक श्री कमल बिष्ट और आकाशवाणी के श्री श्याम शर्मा भी उपस्थित थे। ☐

नंदन की कृति लोकार्पित

१ जुलाई को दिल्ली में इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में लेखक-पत्रकार स्व.कन्हैयालाल नंदन की पुस्तक 'मैं था और मेरा आकाश' का लोकार्पण मुख्य अतिथि एवं लोकसभा में विपक्ष की नेता श्रीमती सुषमा स्वराज ने किया। विशिष्ट अतिथि श्री आलोक मेहता थे एवं मुख्य वक्ता के रूप में उपस्थित थे श्री अजित कुमार। अध्यक्षता 'नया ज्ञानोदय' के संपादक श्री रवींद्र कालिया ने की। बाद में एक विचार-गोष्ठी आयोजित की गई, जिसका संचालन श्रीमती अलका सिन्हा ने किया। ☐

'समाजवाद-एक अध्ययन' कृति लोकार्पित

१९ जून को दिल्ली के तीन मूर्ति भवन में प्रमुख उद्यमी महावीर प्रसाद आर. मोरारका द्वारा लिखित पुस्तक 'समाजवाद—एक अध्ययन' का लोकार्पण राजग के संयोजक श्री शरद यादव ने किया। कार्यक्रम में सर्वश्री कैप्टन अब्बास अली, सतपाल मलिक, सांसद मोहन सिंह, जया जेटली, केसी त्यागी, मंजू मोहन और नीरज उपस्थित थे। अध्यक्षता डॉ. वेद प्रताप वैदिक ने की। ☐

काव्य-संग्रह 'इफ्हाम' विमोचित

विगत दिनों इलाहाबाद के करैली स्थित अदब घर में प्रसिद्ध शायर डॉ. वारिस अंसारी पट्टवी के काव्य-संग्रह 'इफ्हाम' का विमोचन डॉ. जमीर अहसन ने किया। मुख्य अतिथि श्री सुरेंद्रनाथ 'नूतन' थे। संचालन श्री नजीब इलाहाबादी ने किया। विमोचन के बाद मुशायरे का आयोजन किया गया। सर्वश्री शिवशरण बंधु, हसनैन मुस्तफाबादी, फरमूद इलाहाबादी, बुद्धिसेन शर्मा, शकील गाजीपुरी, वाकिफ अंसारी, नईम साहिल, तलब जौनपुरी, जफर सईद जिलानी, इंतजार गाजीपुरी, विमल कुमार वर्मा, रमेश नाचीज, शाहिद सफर, अशरफ ख्याल, जलाल फूलपुरी, ख्वाजा जावेद अख्तर और सलाहुउद्दीन ने काव्य-पाठ किया। ☐

'सफर में हूँ' कृति लोकार्पित

१८ जून को दिल्ली के हिंदी भवन में अक्षरम् और अक्षरम् संगोष्ठी के तत्त्वावधान में श्री शशिकांत के गजल संग्रह 'सफर में हूँ' का लोकार्पण किया गया। अध्यक्षता श्री बालस्वरूप राही ने की तथा मुख्य अतिथि प्रो. अशोक चक्रधर थे। इस अवसर पर सर्वश्री सादिक, सर्वेश चंदौसवी, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, अनिल जोशी, नरेश शांडिल्य और अंबर खरबंदा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती अलका सिन्हा ने किया। कार्यक्रम में सर्वश्री सीतेश आलोक, अमरनाथ 'अमर', देवेंद्र आर्य, रंजना अग्रवाल, राधेश्याम बंधु, देवेंद्र माँझी, मंगल नसीम, आलोक श्रीवास्तव, सीमाब सुलतानपुरी, मुसाफिर देहलवी, भारत भूषण आर्य, सुभाष नीरव, राजेश राज आदि अनेक गजलकार उपस्थित थे। धन्यवाद-ज्ञापन श्री राजेश गोगना ने किया। ☐

लोकार्पण एवं सम्मान समारोह आयोजित

१९ जून को दिल्ली के कमानी सभागार में सावित्री विकास समिति व टी.एफ.जी. पब्लिकेशन के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित 'एक शाम डॉ. गोपाल दास नीरज के साथ' कार्यक्रम में काव्यपाठ के दौरान कवि गोपाल दास नीरज को लाइफटाइम अचीवमेंट 'ज्ञानश्री अवार्ड' से, श्री पवन जैन को 'ज्ञानदीप अवार्ड' तथा श्री अशोक माहेश्वरी को 'ज्ञानप्रकाश अवार्ड' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर श्री प्रेमशंकर लाल 'प्रेम' व डॉ. अनिता श्रीवास्तव के हिंदी काव्य-संग्रह 'प्रेम के दो रस' का लोकार्पण भी किया गया। मुख्य अतिथि स्वामी सर्वानंद 'वेदांताचार्य' तथा विशिष्ट अतिथि सर्वश्री संदीप मारवाह, आर.के. सिन्हा, वी.के. अग्रवाल थे। कार्यक्रम में सर्वश्री मिराज फैजाबादी, सबीना अदीब, यूडी चौबे, देवकी नंदन 'शांत', लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, शशांक प्रभाकर, ममता 'किरण' व रईस जिलानी उपस्थित थे। ☐

लोकार्पण तथा कवि-गोष्ठी संपन्न

२८ जून को साहित्य निर्झर मंच, पालमपुर के तत्त्वावधान में लोकार्पण समारोह तथा कवि-गोष्ठी का आयोजन न्यूगल पब्लिक स्कूल, बिंद्रावन के सभागार में संपन्न हुआ। श्री नरेश कुमार 'उदास' की तीन पुस्तकों में कहानी-संग्रह 'माँ गाँव नहीं छोड़ना चाहती' का लोकार्पण श्री रामकुमार आत्रेय ने; कविता-संग्रह 'हमारे सपनों के हत्यारे' का लोकार्पण डॉ. लेखराज ने तथा तीसरी पुस्तक 'बच्चे होते हैं अच्छे' का लोकार्पण श्री वासुदेव शर्मा ने किया। श्री रामकुमार आत्रेय की अध्यक्षता में आयोजित कवि-गोष्ठी में सर्वश्री लेखराज, गोपाल शर्मा फिरोजपुरी, दर्शन त्रिपाठी, यशपाल शर्मा, राधेश्याम भारतीय, कृष्णा अवस्थी, रुचि शर्मा, कमलेश सुध, सुमन शेखर, छाया डोंगरा, नरेश कुमार 'उदास' तथा अमर तनोतत्ता ने काव्य-पाठ किया। मंच-संचालन श्रीमती कमलेश सुध ने किया। ☐

तीन कृतियाँ लोकार्पित

विगत दिनों दिल्ली के हिंदी भवन के सभागार में वरिष्ठ साहित्यकार श्रीमती रजनी सिंह की तीन काव्य पुस्तकों 'प्रकृति मेरी प्रकृति', 'तथ्य कथ्य' एवं 'माँ तथाता' का लोकार्पण कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ. सोमदत्त दीक्षित तथा मुख्य अतिथि डॉ. त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ने किया। कार्यक्रम में सर्वश्री महेश चंद्र शर्मा, साहब सिंह चौहान, अनिल शर्मा, इंदिरा मोहन, रामरंग आदि विशिष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन उपस्थित थे। संचालन डॉ. कृष्णकांत मधुर ने किया। डॉ. जया, डॉ. श्वेता एवं डॉ. ज्ञानेंद्र ने भी अपने विचार प्रस्तुत किए। धन्यवाद ज्ञापन श्री चंद्रमणि ब्रह्मदत्त ने किया। □

कबीर जयंती मनाई गई

२६ जून को साहित्यिक संस्था 'संस्कार' द्वारा चित्र विहार, दिल्ली में आयोजित कबीर जयंती संगोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. हेम भटनागर ने की। सुश्री तेजसी, अनीता, मधुलिका व सखियों ने कबीर गायन प्रस्तुत किया। 'संस्कार' के सदस्यों ने अपने आलेख प्रस्तुत किए। सर्वश्री अतुल प्रभाकर व वेद प्रकाश जैन ने कबीर वाणी पर अपने विचार प्रस्तुत किए। विशिष्ट अतिथि श्री माधव चतुर्वेदी थे। संचालन श्रीमती मीना जैन तथा धन्यवाद ज्ञापन श्रीमती मंजुला श्रीवास्तव ने किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

३० जून को हिंदी साहित्य संगम, पालक्काड़ द्वारा वरिष्ठ हिंदी साहित्य सेवियों को सम्मानित किया गया। प्रो. टी.के. प्रभाकरन को 'संगम साहिनी सहचर सम्मान' दिया गया। अध्यक्षता श्री रवि नायर ने की। वरिष्ठ हिंदी सेवा पुरस्कार प्राप्त हिंदी प्रचारक श्री सी. सोमसुंदरन का भी अभिनंदन किया गया। समारोह का उद्घाटन प्राचार्य डॉ. के. माधवन नंबियार ने किया। स्वागत डॉ. पी.के. वेणु ने किया। सर्वश्री एल. प्रेमलता, वी. जया, पी.एन. जयरामन, एम.के. कृण्वन, के. गंगाधरन, वी. कुञ्ज्पन, के. मीनाकुमारी आदि ने अपने विचार प्रस्तुत किए। धन्यवाद-ज्ञापन श्री एन. सोमसुंदरन ने किया। □

राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी संपन्न

२१ से २३ जून तक जोशीमठ, अल्मोड़ा में 'बालप्रहरी' एवं 'बालबिगुल' के संयुक्त तत्त्वावधान में राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी का आयोजन स्थानीय शंकराचार्य माधवाश्रम में किया गया। शुभारंभ बच्चों की काव्य गोष्ठी से हुआ। संगोष्ठी में 'बालसाहित्य : यथार्थ एवं कल्पना', 'बालसाहित्य में लोकसाहित्य का अवदान', 'बाल कहानी विश्लेषण', 'बाल कविता विश्लेषण' आदि विषयों पर चर्चा हुई। सर्वश्री राष्ट्रबंधु, भैंरूलाल गर्ग, उदय किरौला, लक्ष्मण सिंह नेगी, आनंदगोपाल सिंह बिष्ट, सविता मोहन, केदार सिंह फोनिया, उज्ज्वला केलकर, शिवदेव भारतीय, राकेश चक्र, अमरेंद्र कुमार सिंह, हरिश्चंद्र बोरकर, भगवानसिंह भास्कर सहित ११० साहित्यकारों ने चर्चा में भाग लिया। उद्घाटन सत्र में बालसाहित्य की १२ पुस्तकों का लोकार्पण हुआ। उद्यापन समारोह में १६ साहित्यकारों को बालसाहित्य की उत्कृष्ट सेवा के लिए प्रतीक-चिह्न, प्रशस्ति-पत्र एवं शॉल ओढ़ाकर सम्मानित किया गया। 'जनदेश' संस्था द्वारा अतिथि साहित्यकारों को प्रतीक-चिह्न भेंट किए गए। □

'बालवाटिका' बालसाहित्य पुरस्कार घोषित

विगत दिनों भीलवाड़ा में 'बालवाटिका' द्वारा १-२ अक्तूबर २०११ को आयोजित होनेवाले 'राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी एवं सम्मान समारोह' में दिए जानेवाले बालसाहित्य पुरस्कार की घोषणा की गई। 'बालकथा पुरस्कार' श्री भगवतीप्रसाद द्विवेदी की 'मेरी प्रिय कहानियाँ' एवं श्री जाकिर अली रजनीश की 'सामाजिक कहानियाँ' को, 'बालकविता पुरस्कार' डॉ. अजय जनमेजय की 'निंदिया सबसे प्यारी तू' एवं श्री अश्वनीकुमार पाठक की 'तुम धरती के राजदुलारे' को, 'बाल उपन्यास पुरस्कार' श्री संजीव जायसवाल 'संजय' के 'डूबा हुआ किला' एवं सुश्री सुकीर्ति भटनागर के 'छूना है आसमान' को, 'नाट्य विधा पुरस्कार' डॉ. रवि शर्मा के 'विरासत' एवं श्री गोविंद शर्मा के 'नया बालदिवस' तथा 'यात्रावृत्तांत विधा पुरस्कार' श्री काशीलाल शर्मा के 'शिक्षक की प्रथम अमेरिका यात्रा' एवं डॉ. मुनिलाल उपाध्याय 'सरस' के 'साहित्य परिक्रमा' हेतु प्रदान किया जाएगा। पुरस्कार-स्वरूप रचनाकारों को पच्चीस सौ रुपए की नकद राशि, श्रीफल, प्रशस्तिपत्र, स्मृतिचिह्न एवं अंगवस्त्र प्रदान किए जाएँगे। डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' को शोध-आलोचना के लिए 'बालसाहित्य के प्रतिमान' पर एवं श्री दीनदयाल शर्मा को राजस्थानी बालसाहित्य के लिए 'बालपणै री बाताँ' इक्कीस सौ रुपए की नकद राशि, प्रशस्तिपत्र, स्मृतिचिह्न, श्रीफल एवं अंगवस्त्र भेंट कर पुरस्कृत किया जाएगा। □

सम्मान समारोह संपन्न

३० जून को लंदन के हाउस ऑफ लॉर्डस में नेहरू सेंटर और यू.के. हिंदी समिति के तत्त्वावधान तथा बैरोनैस फ्लैदर के संरक्षण में 'वातायन : पोएट्री ऑन साउथ बैंक सम्मान' समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में प्रसिद्ध कवि-लेखक श्री प्रसून जोशी एवं श्री जावेद अख्तर को वातायन अवॉर्ड से सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि अभिनेत्री श्रीमती शबाना आजमी, लॉर्ड देसी एवं डॉ. मधुप मोहता थे। संचालन डॉ. संगीता दत्त ने किया। श्रीमती रीना भारद्वाज ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की। अध्यक्षता डॉ. सत्येंद्र श्रीवास्तव ने की तथा प्रस्तावना डॉ. पद्‌मेश गुप्त की रही। धन्यवाद-ज्ञापन श्रीमती दिव्या माथुर ने किया। □

माधवराव सप्रे की १४१वीं जयंती मनाई

१९ जून को रायपुर के महंत घासीदास संग्रहालय सभागार में 'महाराष्ट्र मंडल', 'सप्रे साहित्य एवं शोध संस्थान' एवं 'माधवराव सप्रे पत्रकारिता शोधपीठ' के संयुक्त तत्त्वावधान में माधवराव सप्रे की १४१वीं जयंती समारोह के मुख्य अतिथि हिंदी के प्रसिद्ध समालोचक प्रो. मैनेजर पांडेय थे। श्री आशीष पंडित ने कार्यक्रम के औचित्य पर प्रकाश डाला। धन्यवाद-ज्ञापन श्री परितोष चक्रवर्ती ने किया। □

साहित्यकार सम्मान समारोह आयोजित

१५ मई को पुणे के शिक्षक भवन में 'हिमाक्षरा राष्ट्रीय साहित्य परिषद्' वर्धा एवं 'गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा' नई दिल्ली के संयुक्त तत्त्वावधान में आचार्य काका कालेलकर की १२५वीं जयंती के पुनीत अवसर पर 'साहित्यकार सम्मान समारोह' का आयोजन किया गया, जिसमें डॉ. केशव फालके को उनकी बहुआयामी उपलब्धियों के परिप्रेक्ष्य में गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा की सचिव श्रीमती कुसुम शाह के करकमलों द्वारा शॉल, प्रमाण-पत्र और स्मृति-चिह्न सहित 'आचार्य काका कालेलकर स्मृति सम्मान' प्रदान किया गया। □

शहादत दिवस मनाया गया

विगत दिनों 'इंद्रधनुष साहित्य परिषद्' एवं 'बुद्धिजीवी विचार मंच' के तत्त्वावधान में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई एवं पं. रामदेनी तिवारी 'द्विजदेनी' का शहादत दिवस मनाया गया। अध्यक्षता श्री उमाकांत दास ने की। मुख्य अतिथि कर्नल अजित दत्त सहित सर्वश्री मोती लाल शर्मा, जगदीश लाल मंडल, परमेश्वर प्रसाद साह, मांगन मिश्र 'मार्तंड', अनुज प्रभात, हेमंत यादव 'शशि', कमल प्रसाद बेखबर आदि ने श्रद्धांजलि दी और राष्ट्रीय संग्राम में उनके अवदान पर प्रकाश डाला। संयोजन-संचालन श्री विनोद कुमार तिवारी ने किया। दूसरे कार्यक्रम में इंद्रधनुष साहित्य परिषद्, फारबिसगंज द्वारा 'वंदे मातरम्' के रचयिता श्री बंकिमचंद्र चटर्जी की जयंती तथा दिवंगत साहित्यकार श्री अमोघ नारायण की तृतीय पुण्यतिथि का आयोजन किया गया। अध्यक्षता कर्नल श्री अजित दत्त ने की। सर्वश्री नित्यानंद लाल दास, जगदीश लाल मंडल, मोतीलाल शर्मा, सुधीर धरमपुरी, अनुज प्रभात, हेमंत यादव 'शशि', परमेश्वर प्र. साह, विश्वनाथ राम कुशवाहा, मांगन मिश्र 'मार्तंड' ने उनके साहित्यिक जीवन तथा रचनाओं पर प्रकाश डाला। संचालन श्री विनोद कुमार तिवारी ने किया। □

'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' प्रदत्त

१ जुलाई को दिल्ली में पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा हरियाणा साहित्य अकादमी के पूर्व निदेशक डॉ. जयनारायण कौशिक को उनकी पांडुलिपि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'एक पंथ दो काज' के लिए 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' स्वरूप सोलह हजार रुपए की नकद राशि प्रदान की गई। □

सम्मान समारोह एवं काव्य गोष्ठी आयोजित

१९ जून को मुरादाबाद में विप्रकला साहित्य मंच द्वारा हिमगिरी कॉलोनी स्थित शिव मंदिर सभागार में आयोजित समारोह में गीतकार कवि श्री सत्येंद्र तिवारी को 'उत्कृष्ट गीत कवि सम्मान' एवं वरिष्ठ साहित्यकार श्री शचींद्र भटनागर को 'साहित्यार्जुन सम्मान' स्वरूप अंगवस्त्र, प्रतीक चिह्न एवं सम्मान पत्र आदि भेंट किए गए। अध्यक्षता डॉ. माहेश्वर तिवारी ने की। डॉ. पूनम बंसल ने सरस्वती वंदना गाई। संयोजन व संचालन श्री आनंद कुमार 'गौरव' ने किया। समारोह में सर्वश्री प्रेमवती उपाध्याय, जगदीप भटनागर, वीरेंद्र बृजवासी, मनोज 'मनु', सतीश सार्थक, योगेंद्रपाल विश्नोई, मक्खन मुरादाबादी, ओम आचार्य, रामदत्त द्विवेदी, विकास मुरादाबादी, जितेंद्र जौली, हरिशंकर, समीर तिवारी, गोविंद मुरारी, प्रकाश मुरारी, रघुराज 'निश्चल' आदि उपस्थित थे। □

सम्मान समारोह संपन्न

१६ जून को हरिद्वार में दीपशिखा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मंच ज्ञानोदय अकादमी द्वारा आयोजित 'माँ लक्ष्मी देवी दीपशिखा सम्मान २०११' कवि-गीतकार श्री मधुकर अष्ठाना को प्रदान किया गया। अध्यक्षता डॉ. सूर्यकांत श्रीवास्तव ने तथा संचालन डॉ. सुशील कुमार त्यागी ने किया। सम्मान-स्वरूप श्री मधुकर अष्ठाना को माला, दुशाला, पुस्तकें एवं इक्कीस सौ रुपए की राशि भेंट की गई। समारोह में सर्वश्री राधेश्याम सेमवाल, कमल गांगेय, अनिल शास्त्री, कैलाश द्विवेदी, माधवेंद्र सिंह, सीमा सदक, सुमन गुप्ता सुगंध, मीरा भारद्वाज, एस.पी. सुंद्रियाल, गिरिराज किशोर, शाहिद हसन 'शाहिद', शशिभूषण सक्सेना, एम.सी. कमला आदि साहित्यकार उपस्थित थे। □

'सुरेंद्र बहादुर सिन्हा स्मृति सम्मान' प्रदत्त

३० मई को बरेली में समग्र साहित्यिक योगदान के लिए प्रतिष्ठित साहित्यकार श्री राधे मोहन राय को 'सुरेंद्र बहादुर सिन्हा स्मृति सम्मान' प्रदान किया गया। अध्यक्षता श्री वसीम बरेलवी ने की तथा संयोजन अखिल भारतीय पत्रकारिता संस्थान के निदेशक श्री बीनू सिन्हा ने किया। श्री इंद्रदेव त्रिवेदी ने सम्मान-पत्र, श्री धर्मपाल गुप्त 'शलभ' ने शॉल तथा श्री वसीम बरेलवी ने स्मृति-चिह्न भेंट किया। श्री राय की रचनाधर्मिता में विशिष्ट योगदान के लिए उनकी पत्नी श्रीमती जीवन लता राय को भी सम्मानित किया गया। इस अवसर पर श्री राय के पिताश्री श्री जिगर बरेलवी के द्वितीय गजल संग्रह 'दिल से काँटा जुदा करे कोई' का लोकार्पण डॉ. कमल किशोर गोयनका ने किया। □

द्वि-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों नागपुर में लोहिया अध्ययन केंद्र के तत्त्वावधान में महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी के सौजन्य से मधु लिमये स्मृति सभागृह में 'भाषा, बोली और तत्सामयिक समाज' पर आयोजित द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का उद्घाटन डॉ. वेदप्रकाश मिश्रा ने किया, अध्यक्षता श्री नंदकिशोर नौटियाल ने की। संचालन डॉ. ओमप्रकाश मिश्रा ने किया तथा श्री हरीश अड्यालकर ने आभार व्यक्त किया। प्रथम सत्र 'भारतीय भाषाएँ, बोलियाँ और समाज' की अध्यक्षता श्री जयशंकर गुप्त ने की, संचालन श्री उमेश यादव ने किया। द्वितीय सत्र 'सिनेमा, साहित्य की भाषा और समाज' की अध्यक्षता श्री हर्षवर्धन आर्य ने की, संचालन युवा व्यंग्यकार श्री टीकाराम साहू 'आजाद' ने किया। तृतीय सत्र 'दलित चेतना और भाषा' डॉ. बसंत त्रिपाठी की अध्यक्षता में हुआ, संचालन श्री अमर रामटेक ने किया। दूसरे दिन के प्रथम सत्र 'बाजार की भाषा और समाज' की अध्यक्षता श्री श्रीपाद अपराजित ने की, संचालन श्री नरेंद्र परिहार 'एकांत' ने किया। द्वितीय सत्र 'भाषा और डॉ. लोहिया' का संचालन श्री हरीश अड्यालकर ने तथा आभार प्रदर्शन श्री सुरेश अग्रवाल ने किया। तृतीय सत्र में श्री जयशंकर गुप्त की अध्यक्षता में काव्य-गोष्ठी हुई, जिसमें सर्वश्री उमेश यादव, गोविंद उपाध्याय तथा कृष्णकुमार द्विवेदी ने काव्य-पाठ किया। समापन समारोह श्री नंदकिशोर नौटियाल की अध्यक्षता में हुआ। प्रमुख अतिथि श्री ब्रजभूषण तिवारी तथा विशिष्ट अतिथि श्री एस.क्यू. जमा थे। संगोष्ठी का समापन डॉ. राममनोहर लोहिया की सप्तक्रांति पर आधारित, श्री अमर रामटेक द्वारा लिखित नुक्कड़ नाटक 'सप्तक्रांति' के मंचन से हुआ, जिसका निर्देशन श्री रूपेश पवार ने किया। □

वीर सावरकर जयंती मनाई गई

२८ मई को बीकानेर में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् द्वारा श्री नरोत्तम व्यास की अध्यक्षता में आयोजित स्वातंत्र्य वीर सावरकर जयंती कार्यक्रम में साहित्य अध्येता एवं चिंतक श्री गुरुदयाल मिढ्ढा को 'वीर सावरकर स्मृति-चिह्न' प्रदान किया गया। प्रांतीय उपाध्यक्ष श्री रमेश कुमार शर्मा ने वीर सावरकर के व्यक्तित्व-कृतित्व पर प्रकाश डाला। □

महाराणा प्रताप जयंती मनाई गई

४ जून को बीकानेर में वंदे मातरम् मंच एवं अखिल भारतीय साहित्य परिषद् के संयुक्त तत्त्वावधान में महाराणा प्रताप की जयंती पर काव्यगोष्ठी का आयोजन किया गया। श्री नानूचंद आसेरी की अध्यक्षता में संपन्न काव्य-गोष्ठी में सर्वश्री लीलाधर सोनी, गंगाविष्णु बंशीवाला, रमेश कुमार शर्मा, मोनिका गौड़ 'कौशल', सौरभ कश्यप, विजय कोचर, कांता चाडा, महेंद्र, शिव कुमार आर्य, ममता सिंह, नागेंद्र सिंह, गणेश योगी, शिवशंकर भादाणी, शिल्पा योगी एवं खुशबू सेन ने कविता-पाठ किया। □

बंकिमचंद्र जयंती मनाई गई

२६ जून को बीकानेर में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् एवं वंदे मातरम् द्वारा बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय जयंती मनाई गई। इस अवसर पर कवि एवं संगीतज्ञ श्री कृष्ण कुमार मुखर्जी को 'बंकिमचंद्र स्मृति-चिह्न' एवं नवोदित कवयित्री सुश्री मोनिका गौड़ 'कौशल' को 'वंदे मातरम् सम्मान' से सम्मानित किया गया। अध्यक्षता श्री गंगा विष्णु बंशीवाला ने की। □

'सेतु सम्मान' समारोह संपन्न

१५ जून को शिमला के गेयटी थियेटर के सभागार में हि.प्र. क्रिएटिव राइटर्स फोरम द्वारा आयोजित 'सेतु-साहित्य सम्मान-२०११' कार्यक्रम का प्रारंभ मुख्य अतिथि डॉ. ए.डी.एन. वाजपेयी द्वारा दीप-प्रज्वलन से हुआ। मुख्य अतिथि ने श्री सुरेश सेन निशांत के 'वे जो लकड़हारे नहीं हैं', श्री कुँवर दिनेश सिंह के 'उदयांचल' तथा डॉ. लालित्य ललित के 'इंतजार करता घर' के लिए 'सेतु साहित्य सम्मान' स्वरूप प्रशस्ति-पत्र तथा स्मृति-चिह्न प्रदान किए। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में साहित्य-प्रेमी जन उपस्थित थे। □

द्विदिवसीय राष्ट्रीय व्यंग्य संगोष्ठी संपन्न

११ जून को उज्जैन के होटल आश्रय में अखिल भारतीय टेपा सम्मेलन द्वारा उ.प्र. भाषा संस्थान के सहयोग से आयोजित द्वि-दिवसीय शरद जोशी स्मृति राष्ट्रीय व्यंग्य संगोष्ठी के मुख्य अतिथि प्रख्यात व्यंग्यकार श्री गोपाल चतुर्वेदी थे। संगोष्ठी के विषय थे 'वर्तमान परिवेश में व्यंग्य की भूमिका', 'व्यंग्य की चुनौतियाँ एवं भविष्य', 'व्यंग्य और समाज' एवं 'शरदजी की व्यंग्य परंपरा'। संगोष्ठी में डॉ. प्रेम जनमेजय द्वारा संपादित त्रैमासिक व्यंग्य पत्रिका 'व्यंग्य यात्रा' तथा शरद जोशी पर केंद्रित मासिक साहित्यिक पत्रिका 'समावर्तन' के जून अंक का विमोचन अतिथियों द्वारा किया गया। व्यंग्यकार डॉ. हरीशकुमार सिंह के व्यंग्य संग्रह 'लिफ्ट करा दे' का विमोचन सर्वश्री गोपाल चतुर्वेदी, शेरजंग गर्ग, शिव शर्मा, प्रेम जनमेजय, हरि जोशी, जवाहर चौधरी तथा पिलकेंद्र अरोरा ने किया। संगोष्ठी के दूसरे दिन के सत्र की अध्यक्षता श्री सूर्यकांत नागर ने की। सारस्वत अतिथि डॉ. प्रेम जनमेजय थे। दूसरे दिन सर्वश्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृदुल कश्यप, शांतिलाल जैन, कैलाश मंडलेकर, प्रेमचंद द्वितीय, गिरीश पंडया, राजेंद्र नागर, जवाहर चौधरी, मुकेश जोशी, संदीप सृजन, राजेंद्र देवधरे 'दर्पण', जगदीश ज्वलंत, बी.एल. आच्छा, रमेशचंद्र, रमेशचंद्र शर्मा, हरीशकुमार सिंह, पिलकेंद्र अरोरा आदि व्यंग्यकारों ने व्यंग्य-रचना पाठ किया। संचालन डॉ. पिलकेंद्र अरोरा ने किया तथा धन्यवाद-ज्ञापन डॉ. हरीशकुमार सिंह ने किया। □

नागार्जुन जन्मशती मनाई गई

१५ जून को दिल्ली के त्रिवेणी सभागार में जनवादी लेखक संघ, सहमत, जन नाट्य मंच और एक्ट वन की ओर से नागार्जुन जन्मशती के अवसर पर साहित्य, संगीत और नाटक के विविध कार्यक्रम आयोजित किए गए। 'नया पथ' के नागार्जुन विशेषांक का लोकार्पण सर्वश्री नामवर सिंह, राजेश जोशी, शिवकुमार मिश्र, जुबैर रजवी और मैत्रेयी पुष्पा ने किया। सर्वश्री मैत्रेयी पुष्पा, जुबैर रजवी, मंगलेश डबराल, दिनेश कुमार शुक्ल और लीलाधर मंडलोई आदि ने कविता पाठ किया। सुश्री अंजना पुरी ने 'बादल को घिरते देखा है' को शास्त्रीय रूप में प्रस्तुत किया। सूफी गायक श्री मदन गोपाल सिंह ने नागार्जुन की कविता 'कई दिनों तक चूल्हा रोया' प्रस्तुत की। जनम के कलाकारों द्वारा सामूहिक गायन 'होशियार' तथा बिगुल के कलाकारों द्वारा कोलाज प्रस्तुत किया गया। संचालन श्री चंचल चौहान ने किया। □

श्री अरविंद कुमार को 'शलाका सम्मान'

२४ जून को दिल्ली में दिल्ली सचिवालय सभागार में हिंदी अकादमी का सर्वोच्च शलाका सम्मान श्री अरविंद कुमार को शब्दकोष परियोजना के अंतर्गत 'बृहद समानांतर कोश' का निर्माण करने के लिए दिया गया। पुरस्कार-स्वरूप उन्हें दो लाख रुपए, प्रशस्ति पत्र, शॉल और स्मृति चिह्न प्रदान किया गया। डॉ. श्रीमती महापात्र और दिल्ली की मुख्यमंत्री श्रीमती शीला दीक्षित ने श्री परमानंद श्रीवास्तव को 'गद्य विधा सम्मान', सुश्री रमणिका गुप्ता को 'विशिष्ट योगदान सम्मान', श्री गिरधर राठी को 'काव्य सम्मान', प्रो. देवेंद्र राज अंकुर को 'नाटक सम्मान', श्री बृजमोहन बख्शी को 'ज्ञान प्रौद्योगिकी सम्मान', डॉ. आलोक पुराणिक को 'हास्य व्यंग्य सम्मान' तथा श्री कृष्ण शलभ को 'बाल साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप प्रत्येक को पचास हजार रुपए की नकद राशि, प्रशस्ति-पत्र, शॉल और स्मृति-चिह्न दिया गया। □

सुश्री अंजलि जोसेफ पुरस्कृत

२६ जून को लंदन में लेखिका सुश्री अंजलि जोसेफ को उनके पहले उपन्यास 'सरस्वती पार्क' के लिए साहित्य के दो शीर्ष पुरस्कारों 'बेट्टी ट्रैस्क अवार्ड' और 'डेसमंड एलियट प्राइज' से पुरस्कृत किया गया। पुरस्कार-स्वरूप उन्हें दस हजार पाउंड की नकद राशि प्रदान की गई। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

अखिल भारतीय साहित्य परिषद्, राजस्थान द्वारा आयोज्य डॉ. सरला अग्रवाल अखिल भारतीय हिंदी उपन्यास प्रतियोगिता-२०११, डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ अखिल भारतीय हिंदी कहानी-संग्रह प्रतियोगिता-२०११ तथा श्री शुकदेव शास्त्री हिंदी निबंध-संग्रह प्रतियोगिता-२०११ हेतु प्रविष्टियाँ आमंत्रित हैं। प्रविष्टि हेतु पुस्तक की तीन प्रतियाँ, पता लिखा टिकट जवाबी लिफाफे व पोस्ट कार्ड के साथ ३० सितंबर २०११ तक अखिल भारतीय साहित्य परिषद्, ७५/७०, मानसरोवर, जयपुर-३०२०२० के पते पर भेज सकते हैं। □

'पाठ और संवाद' समारोह आयोजित

विगत दिनों भोपाल में वनमाली सृजन पीठ द्वारा आयोजित 'पाठ और संवाद' समारोह की अध्यक्षता डॉ. रमेश दवे ने की तथा संचालन श्री विनय उपाध्याय ने किया। सर्वश्री डॉ. देवेंद्र दीपक, नरेंद्र पबरा, महेंद्र गगन, प्रेमशंकर शुक्ल, शांतिलाल जैन, सुरेश तातेड, प्रशांत सोनी आदि ने अतिथियों का स्वागत किया। □

विष्णु प्रभाकर जन्मशती का भव्य उद्घाटन

२१ जून को विष्णु प्रभाकर जन्मशती समारोह समिति एवं विष्णु प्रभाकर प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित प्रसिद्ध साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर की जन्मशती का उद्घाटन समारोह नई दिल्ली के साहित्य अकादेमी सभागार में आयोजित किया गया। अध्यक्षता डॉ. प्रभाकर क्षोत्रिय ने की। मुख्य अतिथि डॉ. महीप सिंह तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. अशोक चक्रधर, श्री असगर वजाहत तथा डॉ. राजकुमार सैनी थे। इस अवसर पर श्री अतुल कुमार द्वारा संपादित पुस्तिका 'विष्णु प्रभाकर: एक झलक' का लोकार्पण भी किया गया। समारोह में सर्वश्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी, वेदप्रताप वैदिक, अरविंद कुमार, विश्वनाथ त्रिपाठी, राजी सेठ, कमल कुमार, ब्रजेंद्र त्रिपाठी, सुरेंद्र शर्मा, कमला सिंघवी, गोविंद व्यास, विश्वनाथ, प्रभात कुमार, केवल गोस्वामी, नरेश शांडिल्य, नारायण कुमार, बागेश्वरी, सरोज शर्मा आदि साहित्यकारों सहित विष्णुजी के पुत्र अतुल कुमार, अमित कुमार, पुत्रियाँ अनिता नवीन, अर्चना प्रभाकर, परिवार के अन्य सदस्य, परिचित एवं प्रशंसक बड़ी संख्या में उपस्थित थे। संचालन श्रीमती अलका सिन्हा ने किया। □

लंदन में गीतकार शैलेंद्र पर कार्यक्रम आयोजित

१९ जून को लंदन के नेहरू सेंटर में एशियन कम्यूनिटी आर्ट्स एवं कथा यू.के. द्वारा 'आम आदमी की पीड़ा का कवि : शैलेंद्र' कार्यक्रम आयोजित किया गया। कथा यू.के. के महासचिव श्री तेजेंद्र शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम की शुरुआत में कथा यू.के. के संस्थापक ट्रस्टी सिने स्टार नवीन निश्चल को श्रद्धांजलि दी गई। श्री कैलाश बुधवार का कथा यू.के. के नए अध्यक्ष के रूप में स्वागत किया गया। धन्यवाद-ज्ञापन श्रीमती मोनिका मेहता ने किया। □

व्याख्यानमाला एवं लोकार्पण संपन्न

१० जुलाई को लखनऊ के सी.एम.एस., गोमतीनगर में आयोजित समारोह में सर्वश्री शंभुनाथ, गोपाल चतुर्वेदी, राकेश कुमार मित्तल, महेश चंद्र द्विवेदी, योगेंद्र प्रताप सिंह, गदाधर नारायण सिन्हा तथा कुणाल कृष्ण ने 'लोक साहित्य में अध्यात्म चिंतन' विषय पर व्याख्यान दिया। इस अवसर पर डॉ. जितेंद्र नाथ पांडेय को 'श्री कृष्ण प्रताप सिंह स्मृति सम्मान', श्री मदन मोहन सिन्हा 'मनुज' को 'डॉ. विद्यानिवास मिश्र स्मृति सम्मान', श्री धर्मराज सिंह को 'श्री दिल बहाल सिंह स्मृति सम्मान', डॉ. जगदीश गांधी को 'श्री देव नारायण सिंह स्मृति सम्मान', श्रीमती मालिनी अवस्थी को 'श्रीमाँ प्रभु देवी स्मृति सम्मान', श्रीमती विद्या मिश्रा को 'श्रीमाँ प्राण देवी स्मृति सम्मान', डॉ. शेफाली भटनागर को 'श्रीमती प्रभा पँवार स्मृति सम्मान', श्री अभय राज सिंह को 'श्री संचित सिंह स्मृति सम्मान', डॉ. योगेश प्रवीन को 'श्री अमृतलाल नागर स्मृति सम्मान', श्री दाऊजी गोस्वामी को 'श्रीमती प्रतिभा नागर स्मृति सम्मान', श्रीमती स्वरूप कुमारी बख्शी को 'श्री कुमुद नागर स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। इसके बाद श्री विद्याविंदु सिंह की 'श्रीहरि नाम महिम', 'एक बँसुरी एक बाँस', 'लोक विमर्श' तथा 'श्रद्धा-विश्वास (स्मारिका) कृतियों का लोकार्पण हुआ। संचालन डॉ. शीला मिश्र ने किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

साहित्य अकादेमी, मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल द्वारा ५१,००० रु. के 'अखिल भारतीय पुरस्कार' एवं ३१,००० रु. के 'प्रादेशिक पुरस्कार' हेतु वर्ष २००९-२०१० में प्रकाशित सभी विधाओं की पुस्तकें तथा प्रादेशिक लेखक तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के रचनाकारों की पहली कृति के प्रकाशन हेतु सहायता अनुदान योजना के अंतर्गत पांडुलिपियाँ आमंत्रित हैं। प्रकाशित पुस्तकें अथवा पांडुलिपियाँ ३१ जुलाई तक पांडुलिपि निदेशक, साहित्य अकादेमी, मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद्, मुल्ला रमूजी, संस्कृति भवन, बाणगंगा चौराहा, भोपाल-४६२००३ पर भेजें। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य और वैश्वीकरण

● ब्रजेंद्र त्रिपाठी

अभी ९-१० जुलाई को साहित्य अकादेमी के एक आयोजन के सिलसिले में मैं बनारस में था। वहाँ रहते हुए मुझे गुरुतुल्य पं. विद्यानिवास मिश्र का स्मरण हो आया, जिनके संपर्क में वर्षों रहने का मुझे अवसर मिला। बनारस उनका कार्यक्षेत्र था। वे संपूर्णानंद संस्कृत वि.वि. और काशी विद्यापीठ के कुलपति रहे। वे संस्कृत, हिंदी और भाषा-विज्ञान के उद्‌भट विद्वान् और भाषा, साहित्य तथा संस्कृति के अंतर्संबंधों के गहन व्याख्याता थे। बनारस में कुछ मित्रों ने साहित्य के सरोकार की चर्चा की तो पंडितजी की बात याद आई। पंडितजी कहते थे कि 'मैं इस सरोकार शब्द से घबराता हूँ। बार-बार यह प्रश्न पूछा जाता है कि साहित्य का, विशेषकर आज के साहित्य का सरोकार क्या है? साहित्य का जो सामाजिक सरोकार होना चाहिए, वह कितना है?' इस तरह के प्रश्नों को सुनकर उन्हें लगता था, जैसे कोई बाहर का आदमी हमसे जवाब माँग रहा है कि तुम्हें यह करना था, तुमने क्यों नहीं किया? उनका मानना था कि लेखक का सरोकार लेखक को अपने प्रति, अपने भीतर के मनुष्य के प्रति तो है, पर उसके बारे में प्रश्न करने वाला भी भीतर का आदमी होगा, क्योंकि लेखन का स्रोत बाहर तो है नहीं, भीतर है। पंडित जी सरोकार से अधिक साहित्य का रिश्ता चिंता से मानते थे, क्योंकि साहित्य भीतर की बेचैनी से ही उकसता है। उसी तरह जैसे कि बीज धरती में डाला जाता है और थोड़ी ऊष्मा से तपता है तो अँखुआ बन जाता है। यदि ठंडे स्थान में रहता है तो बीज ही बना रहता है। साहित्य का प्रभाव यह है कि जो जहाँ है, उसे वहाँ से वह विस्थापित कर देता है, भले ही थोड़े ही समय के लिए। भीतर की यह बेचैनी देश और काल की सीमाओं का अतिक्रमण करके होती है। हर अच्छा रचना-कर्म यही करता है। वह निरंतर प्रयत्नशील रहता है कि धर्म की सत्ता बनी रहे, मनुष्यता का क्षय न हो, कथनी और करनी में भेद न हो। यह भी है कि अपने उद्‌देश्य में उसे बार-बार विफलता मिलती है, सबकुछ लगभग वैसा ही चलता रहता है।

पंडित जी मानते थे कि संभवतः यह विषाद ही साहित्य की जमीन है। यह जानते हुए भी कि असंख्य प्रयत्न होते रहते हैं कि उनका फल कुछ निकलता नहीं। पर प्रयत्न न रुके, विषाद रहे, अवसाद न घेरे, आशा और विश्वास बना रहे, साहित्य इसके लिए चिंतित रहता है। साहित्य चिंतित रहता है, इसका अर्थ यह है कि जो रचता है, वह चिंतित रहता है।

आज का ये दौर भूमंडलीकरण का दौर है। नए संचार साधनों ने विश्व के तमाम देशों के मध्य की दूरियाँ बहुत कम कर दी हैं। आज 'ग्लोबल विलेज' या 'विश्वग्राम' की बात होती है, लेकिन सच यह भी है कि 'विश्वग्राम' का यह मुहावरा जिस अमरीका से चला है, वहाँ अब एक भी गाँव नहीं है।

आज का दौर भौतिक संसाधनों को अधिक से अधिक जुटा लेने का दौर है, जिसकी जरूरत है उसे भी और जिसकी नहीं जरूरत है, उसे भी। वृत्ति यह है कि पड़ोसी के पास यह है तो हमारे पास क्यों नहीं? बाजार में नित नए उत्पाद आ रहे हैं। साल बीतते न बीतते तमाम चीजों के नए-नए मॉडल बाजार में आ जा रहे हैं। विज्ञापनों के सतरंगी सम्मोहन में पड़कर हम उन्हें खरीद कर घर लाते हैं, पर हकीकत यह है कि पहले खरीदे हुए उत्पादों का ही उपयोग नहीं हो पा रहा है। फैशन की तरह ही रोज नए-नए विचार भी सामने आ रहे हैं। नीत्शे ने तो ईश्वर की मृत्यु की घोषणा कर ही दी थी, अब साहित्य और इतिहास की मृत्यु की घोषणाएँ भी हो चुकी हैं। इस तरह के विचारों के साथ होना किसी भारतीय मन के लिए संभव नहीं है, लेकिन इस तरह के विचारों और चिंताओं के चलते मनुष्य अपने पड़ोस, अपने परिवेश से कट सा गया है। उसमें एक तरह की निष्क्रियता व्याप गई है, लगता है उसकी भीतरी अकुलाहट के बीज ही पथरा गए हैं। उसकी संवेदनशीलता का इतना क्षरण हो चुका है कि उसके मन में दूसरे व्यक्ति या किसी प्राणी या पौधे के लिए कोई दर्द ही नहीं उठता। गालिब का शेर याद आता है—

यूँ तो दुश्वार है हर काम का आसाँ होना
आदमी को भी मयस्सर नहीं इन्साँ होना।

ऐसे माहौल में एक रचनाकार अपने को अकेला पाता है। लेकिन किसी रचनाकार के लिए यह अकेलापन भी वरदान सदृश होता है, क्योंकि वह सबकी दृष्टि से ओझल रहकर भी अपने पूरे परिवेश को देखता-समझता है और उससे जीवंत संबंध बनाए रखता है।

आज के दौर में जिस तरह का वैश्वीकरण आ रहा है, वह हमारी भाषाआ और संस्कृतियों को गहरे प्रभावित कर रहा है, कहें कि उसे विकृत कर रहा है। वैश्वीकरण की तुलना 'वसुधैव कुटुम्बकम्' या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'विश्व कुटुम्बवाद' से नहीं की जा सकती। भारत की संस्कृति हजारों वर्ष पुरानी है। इस दौरान इस संस्कृति पर कितने आक्रमण हुए, कितनी विचार-सरणियों का आवागमन हुआ, फिर भी यह उसकी जिजीविषा ही है कि वह इस सबको झेलकर आज भी बनी हुई है। संस्कृति की कल्पना हम किसी जड़ पदार्थ के रूप में नहीं करते, यह निरंतर गतिशील चेतना का आलोक हैं, लेकिन आज हम जिस समय में रह रहे हैं, वह अत्यंत कठिन समय है। यह एक तरह की आपाधापी का युग है, जिसमें तमाम सभ्यताएँ संक्रमण से गुजर रही हैं, संस्कृतियाँ अपनी पहचान खो रही हैं, भाषाएँ अपना स्वरूप बदलकर विकृत हो रही हैं। एक तरह की संकर संस्कृति बन रही है, जिसमें सब कुछ उलट-पुलट हो रहा है। यदि हम इस भूमंडलीकरण के दुष्प्रभावों के प्रति सचेत नहीं हुए तो कुछ भी नहीं बचेगा, न हमारी भाषाएँ, न संस्कृतियाँ सबका लोप हो जाएगा। हमें पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से उबरना होगा, तभी हम अपनी अस्मिता की रक्षा कर पाएँगे।

आज का दौर भौतिक संसाधनों को अधिक से अधिक जुटा लेने का दौर है, जिसकी जरूरत है उसे भी और जिसकी नहीं जरूरत है, उसे भी। वृत्ति यह है कि पड़ोसी के पास यह है तो हमारे पास क्यों नहीं? बाजार में नित नए उत्पाद आ रहे हैं। साल बीतते न बीतते तमाम चीजों के नए-नए मॉडल बाजार में आ जा रहे हैं। विज्ञापनों के सतरंगी सम्मोहन में पड़कर हम उन्हें खरीद कर घर लाते हैं, पर हकीकत यह है कि पहले खरीदे हुए उत्पादों का ही उपयोग नहीं हो पा रहा है। फैशन की तरह ही रोज नए-नए विचार भी सामने आ रहे हैं। नीत्शे ने तो ईश्वर की मृत्यु की घोषणा कर ही दी थी, अब साहित्य और इतिहास की मृत्यु की घोषणाएँ भी हो चुकी हैं। इस तरह के विचारों के साथ होना किसी भारतीय मन के लिए संभव नहीं है, लेकिन इस तरह के विचारों और चिंताओं के चलते मनुष्य अपने पड़ोस, अपने परिवेश से कट सा गया है।

बहुत बार पढ़े-लिखे लोग भी इस भ्रम के शिकार हो जाते हैं कि वैश्वीकरण के माध्यम से एक साझा संस्कृति विश्व मंच पर अवतरित हो रही है। वैश्वीकरण के माध्यम से कुछ पश्चिमी देश अपने स्थापित करने में लगे हैं, इसीलिए वे तमाम राष्ट्रीय अस्मिताओं और मूल्य-बोधों को खत्म करने पर जुटे हुए हैं। इस कार्य में उपभोक्तावाद, उदारीकरण, फैशन और विज्ञापन इनके प्रबल सहयोगी बनकर उभरे हैं। वैश्वीकरण के माध्यम से बाजारीकरण बढ़ रहा है, और बाजार न केवल हमारी देहरी लाँघकर हमारे घरों के अंदर पहुँच चुका है, बल्कि वह हमारे मन पर भी काबिज हो चुका है। तीसरी दुनिया के अन्य देशों की तरह भारत पर भी भूमंडलीकरण या वैश्वीकरण का शिकंजा कसता जा रहा है। आज हम वास्तविक यथार्थ की जगह आभासी यथार्थ की दुनिया में रह रहे हैं। एक ऐसी दुनिया, जहाँ महात्मा गांधी अप्रासंगिक हो चुके हैं और पश्चिम के बड़े व्यापारी ही हमारी युवा पीढ़ी के रोल मॉडल हैं। साधन की पवित्रता की बात करना दकियानूसी समझा जाता है। आज की दुनिया में साध्य ही सब कुछ है—भले ही उसके लिए कोई साधन अपनाना पड़े। यह यूँ ही नहीं है कि हमारे देश की संसद् और तमाम राज्यों की विधानसभाओं में ऐसे लोगों का प्रतिशत काफी है, जिनका आपराधिक इतिहास है। आज के दौर में 'जनतंत्र' दिखावा हो कर रह गया है, क्योंकि आज 'जन' की अपेक्षा 'तंत्र' अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है।

किसी भी भाषा से उस समाज की अपनी एक पहचान बनती है, कहें कि वह हमारी सांस्कृतिक अस्मिता का अभिन्न अंग है। चाहे तो हम कह सकते हैं कि हर भाषा की अपनी एक संस्कृति होती है, जो हजारों साल में अपना स्वरूप ग्रहण करती है। पिछले दिनों जो भाषाई सर्वेक्षण आए हैं, वे भाषाओं पर आए संकट को उजागर करते हैं। कहा गया है कि विश्व की अधिकांश भाषाएँ लुप्त होने के कगार पर हैं और संभवतः इस सदी के खत्म होते-होते एकाध दर्जन भाषाएँ ही शेष रह जाएँ। अभी छह-सात महीने पहले खबर आई कि अंडमान द्वीप में एक व्यक्ति के निधन के साथ वहाँ की एक भाषा का अस्तित्व समाप्त हो गया। जो भाषाएँ बच जाएँगी, जाहिर है कि उनमें अधिकांश प्रभु देशों की भाषाएँ होंगी।

आज के दौर में ये तमाम तरह की चुनौतियाँ हैं, जिनका हमें प्रतिबद्धता के साथ सामना करना है। यह चरम उपभोक्तावाद ही है, जिसके चलते प्रकृति के साथ हमारे सहज सामंजस्यपूर्ण संबंध नहीं रह गए हैं और इसके दुष्परिणाम भी बाढ़, भूस्खलन, अकाल के रूप में हमें देखने को मिल रहे हैं, क्योंकि हमने प्रकृति के संसाधनों को भरपूर दोहन किया है, जिससे उसका संतुलन नष्ट हो गया है, ऋतु चक्र-परिवर्तित हो गया है। यह विकास का हमारा कैसा मॉडल है कि गरीब और गरीब होता जा रहा है, जबकि एक नवधनाढ्य वर्ग ऐसा है, जिसकी पूँजी निरंतर बढ़ती जा रही है। हमारा अन्नदाता किसान भूखों मरने, आत्महत्या करने के लिए अभिशप्त है।

इस स्थिति को बदलने के लिए एक जन आंदोलन की जरूरत है, जिसमें साहित्यकारों की भूमिका अहम होगी। प्रेमचंद ने कहा था कि साहित्य समाज के आगे-आगे चलनेवाली मशाल हैं। इस मशाल को रचनाकार के सक्षम हाथों की जरूरत है, ताकि इससे आलोक फैले और तिमिर नष्ट हो। कहीं ऐसा न हो कि यह आग लगाने का उपक्रम बन जाए।

१०१, अर्श कॉम्प्लेक्स
सेक्टर-अल्फा १, ग्रेटर नोएडा-२०१३०८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल्य : बीस रुपए

साहित्य अमृत

सितंबर २०११ • साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक • मासिक

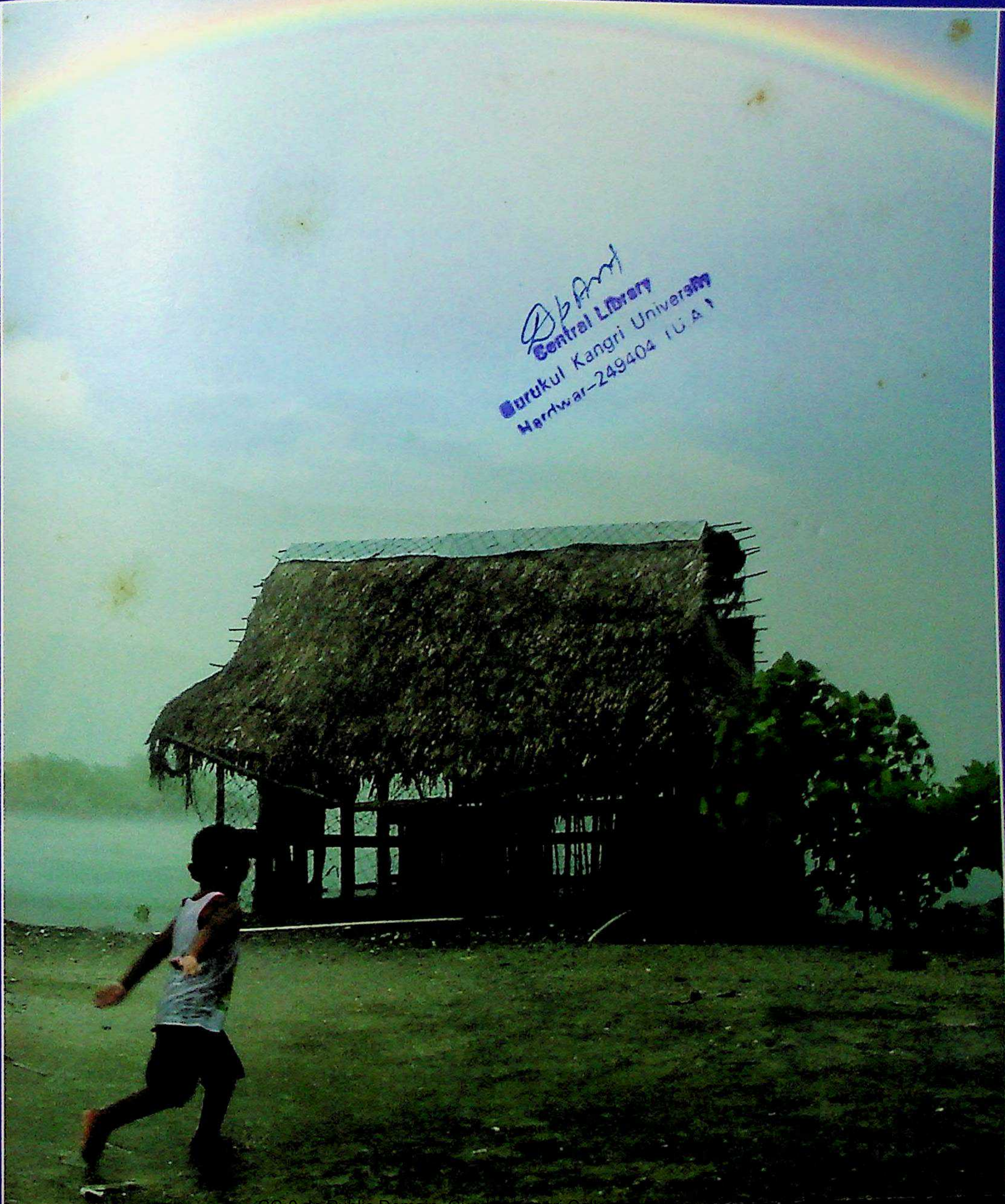

Central Library
Gurukul Kangri University
Hardwar-249404 (U.A.)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तराखण्ड सुराज की ओर...

पशुपालन भी अब जीविका का साधन

डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक'
मुख्यमंत्री उत्तराखण्ड सरकार

उत्तराखण्ड में पशुधन की बहुतायत है। पशुपालन जीविका का प्रमुख साधन भी है। राज्य सरकार पशुपालकों को विभिन्न प्रकार की प्रोत्साहन सुविधा उपलब्ध कराकर उनकी आमदनी का जरिया बढ़ा रही है। इसके साथ ही दवा, चारा, अनुदान, अच्छी नस्ल भी उपलब्ध कराई जा रही है। गो पालन, बकरी पालन, भेड़ पालन, कुक्कुट पालन, खच्चर पालन, को स्वरोजगार का माध्यम बनाया जा रहा है।

सरकार किसान के द्वार

● 'कृषक महोत्सव कार्यक्रम' का समस्त 670 न्याय पंचायतों में सफल आयोजन।

● आयोजन का मुख्य उद्देश्य 'कृषकों एवं पशुपालनकों को उनके निकटवर्ती स्थान पर' कृषि एवं पशुपालन की नवीनतम जानकारी उपलब्ध कराने के साथ-साथ उनकी समस्याओं का विशेषज्ञों द्वारा मौके पर ही निदान।

● कुल 52122 ग्रामों के 321961 पशुपालकों को पशुपालन व्यवसाय सम्बन्धी रोजगार परक जानकारी।

● कुल 436263 पशुओं की चिकित्सा, 744465 पशुओं में टीकाकरण, 219941 पशुओं में दवापान व 257083 पशुओं को दवास्नान।

● कुक्कुट पालन को स्वरोजगार बनाने हेतु 699879 कुक्कट चूजे वितरित।

● 170335 कि.ग्रा. विभिन्न चारा घास बीजों का तथा 317023 नैपियर चारा घास की जड़ों की वितरण।

● कृषकों महोत्सवों के आयोजन से कुल 30.23 लाख रूपये राजस्व की प्राप्ति।

गो सेवा आयोग

● गो सेवा आयोग एवं गो विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान की स्थापना हेतु गो वंश के परिरक्षण, संवर्धन तथा कल्याण हेतु गो सेवा आयोग की स्थापना।

गो विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

● उत्तराखण्ड भारत का पहला राज्य है, जहां गो वंश के संरक्षण एवं आधुनिक उपकरणों के सहायता से पंचगव्य निर्मित आयुर्वेदिक औषधियों के उत्पादन तथा इससे सम्बन्धित शोध हेतु पशुलोक-ऋषिकेश में गो विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान स्वीकृत।

गो अर्क से रोजगार

● पशुपालकों को रोजगार उपलब्ध कराने के लिए दुग्ध संघों के माध्यम से अर्क निर्माण हेतु गौ मूत्र एकत्रित कर अर्क के विपणन की व्यवस्था।

● पशु प्रजनन प्रक्षेत्र कालसी (देहरादून) द्वारा उत्पादित गौमूत्र अर्क का विपणन।

● अब तक 72509 लीटर अर्क का विक्रय।

अटल आदर्श ग्राम योजना

● अटल आदर्श ग्राम योजना के तहत 110 न्याय पंचायतों में पशु सेवा केन्द्रों की स्थापना।

चारा बैंकों की स्थापना

● पशुओं को पेट भर चारा उपलब्ध कराने हेतु प्रदेश में 02 चारा ब्लाक निर्माण इकाईयों तथा विकासखण्ड स्तर पर 47 उप चारा बैकों की स्थापना।

● 19 अतिरिक्त विकासखण्डों में उप चारा बैंक निर्माणाधीन

रोजगार के अवसर

● वर्ष 2007 से 2010 तक अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों को कुक्कुट पालन इकाई (100 प्रतिशत अनुदानित) की स्थापना योजना के तहत कुल 20188 कुक्कट पालक लाभान्वित।

● पशुपालकों के बहुमूल्य पशुधन को प्राथमिक चिकित्सा सुविधा प्रदान करने हेतु 120 प्रशिक्षु पशुधन प्रसार अधिकारियों का पंतनगर विश्वविद्यालय के माध्यम से प्रशिक्षण हेतु चयन।

सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग उत्तराखण्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-१७ अंक-२ ❖ पृष्ठ ६८ | भाद्रपद-आश्विन, संवत्-२०६८ | सितंबर २०११

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर

❖

परामर्शदाता (मानद)
ब्रजेंद्र त्रिपाठी

❖

कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क
एक अंक —₹ २०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ २००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ २५०
विदेश में
एक अंक—तीन यू.एस. डॉलर (US$3)
वार्षिक—पैंतीस यू.एस. डॉलर (US$35)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय
अन्ना की आँधी, हिंदी का मुद्दा ४

प्रतिस्मृति
हमारी राष्ट्रभाषा / *स्व. पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर* ६

कहानी
आप लौट आओ अंकल / *प्रशांत कुमार सिन्हा* १०
शुबहा / *अशोक गुजराती* ५६

आलेख
हिंदी और विद्यानिवासजी की स्मृति / *रत्नेश विष्वक्सेन* १६
भाषा, उत्तरसंस्कृति और संचारभाषा हिंदी / *अवधेश नारायण मिश्र* १८
राजभाषा हिंदी और कंप्यूटर क्रांति / *दिलीप कुमार पांडेय* २२
भारत की भाषाएँ और हिंदी / *सुधा* २६
राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रभाषा हिंदी / *सुधाकर उपाध्याय* २८
महिलाएँ पुरुषों की चिंता छोड़ दें / *महादेवी वर्मा* ३६
सूरीनाम में हिंदी विकास और साहित्यिक परिधि / *भावना सक्सेना* ३८

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
जिंदगी वहीं-कहीं होगी / *कालूसिंह रनपहेली* ४१

उपन्यास-अंश
सीढ़ियाँ / *शैलेश मटियानी* ४२

राम झरोखे बैठ के
घर-बाहर की बात / *गोपाल चतुर्वेदी* ४६

नवांकुर
दो कविताएँ / *बब्लु कुमार सोनी* ४९

व्यंग्य
क्या सच, क्या झूठ / *गिरिराज शरण अग्रवाल* ५०

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
बुलबुल और गुलाब / *ऑस्कर वाइल्ड* ५३

अंततः
आज की हिंदी कविता / *ब्रजेंद्र त्रिपाठी* ६५

कविता
अनंत मिश्र ८
रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' ९
अमरनाथ 'अमर' २५
ऋता शुक्ल ३२

वर्ग पहेली ५९
पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ६०
साहित्यिक गतिविधियाँ ६१

Central Library Gurukul Kangri Haridwar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

अन्ना की आँधी, हिंदी का मुद्दा

देश को स्वतंत्र हुए ६५ वर्ष हो चुके हैं। किसी भी राष्ट्र के समुचित विकास और विभिन्न क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता के लिए यह अवधि कम नहीं है। यह भी नहीं है कि हमने विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं चिकित्सा आदि क्षेत्रों में ऊँचाइयाँ नहीं छुई हैं; लेकिन हम देश के आमजन को कितनी सुविधाएँ दे पाए हैं, विकास की यह धारा हमारे ग्रामीण क्षेत्रों तक कितनी पहुँची है, सवाल इसका है। गांधीजी जिसे अंतिम आदमी कहा करते थे, उस तक अगर विकास की गंगा नहीं पहुँचती तो इसकी बात करना बेमानी है। हमारा वास्तविक पैमाना तो हाशिए पर खड़ा वही अंतिम आदमी है।

कहने को तो हमारा देश विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, लेकिन क्या सचमुच हमने लोकतांत्रिक परंपराओं का सम्मान करना सीखा है। क्या हम अपने भीतर एक लोकतांत्रिक चरित्र विकसित कर पाए हैं। देखें तो पाएँगे कि जिनके कंधों पर विश्व के इस सबसे बड़े लोकतंत्र को सँभालने का जिम्मा है, वही इसकी धज्जियाँ उड़ा रहे हैं। हमारे व्यवहार में 'कथनी' और 'करनी' का अंतर बढ़ता ही जा रहा है। हम महज एक 'हिप्पोक्रेट' बनकर रह गए हैं। इस पर गहरे आत्मचिंतन की जरूरत है।

इस समय देश के सामने जो सबसे बड़ी समस्या है, वह भ्रष्टाचार की है। भ्रष्टाचार ने हमारी जड़ों को भीतर से खोखला कर दिया है। यह अपने आप में एक संस्था बन गया है। ऊपर से चलनेवाले एक रुपए में से कितना पैसा जरूरतमंद आदमी तक पहुँचता है, यह शोध का विषय है। हमारे एक पूर्व प्रधानमंत्री ने कहा था कि एक रुपए में से मात्र १५ पैसे जरूरतमंद तक पहुँचते हैं। लेकिन इस बीच भ्रष्टाचार जिस शिखर तक पहुँचा है, ताज्जुब नहीं कि एक रुपए में से मात्र ५ पैसे ही जरूरतमंद तक पहुँच रहे हों।

राष्ट्रमंडल खेलों में हुए घोटालों की जो परत-दर-परत उधड़कर सामने आ रही है, वह हमें दाँतों तले उँगली दबा लेने को मजबूर कर रही हैं कि किन-किन स्तरों पर इसे किस तरह अंजाम दिया गया। इसकी आँच छोटे अफसरों से लेकर पी.एम.ओ. कार्यालय तक पहुँच रही है कि कैसे एक व्यक्ति को इतने अधिकार दे दिए गए कि वह जो चाहे सो कर सके। इसी तरह संचार-घोटाले की बात है, जिसमें ए. राजा से लेकर करुणानिधि की बेटी कनिमोषी फँसी हुई हैं और ये सभी इस समय जेल की हवा खा रहे हैं। यह संभव हुआ है—लोकायुक्त, कैग या उच्चतम न्यायालय जैसी संस्थाओं के चलते, जिनकी रिपोर्ट और सुप्रीम कोर्ट की लताड़ के चलते कुछ कदम उठाने को सरकार मजबूर हुई है। आज भले ही वह इसका श्रेय लेने को तैयार हो, लेकिन बड़े ही टाल-मटोल और अनिच्छा के बाद कार्रवाई हुई है।

आज पूरा देश लोकपाल बिल के मुद्दे को लेकर आंदोलित है। 'सरकारी लोकपाल बिल बनाम जन लोकपाल बिल' का मुद्दा गरम है। ७४ वर्षीय अन्ना हजारे इस मुहिम का नेतृत्व कर रहे हैं अपनी सिविल सोसाइटी के माध्यम से और एक तरह से पूरा देश उनके पीछे खड़ा है। सरकार ने संसद् में अपना लोकपाल बिल पेश किया है। सिविल सोसाइटी के सदस्यों का कहना है कि यह बहुत ढीला-ढाला बिल है, जिसके माध्यम से भ्रष्ट मंत्रियों और सांसदों आदि पर लगाम नहीं कसी जा सकती। उन्होंने जन लोकपाल बिल में प्रधानमंत्री और न्यायपालिका को भी शामिल किया है, जबकि सरकार उन्हें इस दायरे से बाहर रखना चाहती है। इस मुद्दे को लेकर अन्ना ने १६ अगस्त से आमरण अनशन शुरू कर दिया है। अन्ना अपने अनशन के लिए मध्य दिल्ली में कोई उचित जगह चाहते थे। बहुत टाल-मटोल के बाद दिल्ली पुलिस उन्हें जे.पी. पार्क अनशन के लिए देने को राजी तो हुई, लेकिन बहुत सारी शर्तों के साथ। अन्ना और उनकी टीम को ये सभी शर्तें स्वीकार नहीं थीं, इसलिए उन्हें स्थान देने से मना कर दिया गया। यह एक तरह से संविधान-प्रदत्त मौलिक अधिकारों के हनन का मामला है और इस संदर्भ में एक संस्था ने मानव अधिकार आयोग में एक याचिका दाखिल की गई है, जिस पर आयोग ने दिल्ली पुलिस और केंद्र सरकार को इस संबंध में स्पष्टीकरण देने को कहा है।

अन्ना को सुबह अपने आवास से निकलते समय गिरफ्तार कर तिहाड़ जेल पहुँचा दिया गया; लेकिन उनकी गिरफ्तारी के चलते जिस तरह पूरे देश में स्वत:स्फूर्त प्रदर्शन शुरू हुए, उससे सरकार हिल गई। इस जन-दबाव के चलते रात में उनकी रिहाई का आदेश आ गया। लेकिन अन्ना इस बात पर अड़ गए कि वे तब तक तिहाड़ से बाहर नहीं जाएँगे, जब तक सरकार उन्हें बिना शर्त जे.पी. पार्क जाकर अनशन करने की स्वीकृति नहीं देती और वह भी लिखित रूप में। फाँस सरकार के गले में अटक गई।

स्वतंत्रता के बाद इस तरह का जनांदोलन या तो जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में हुए संपूर्ण क्रांति के समय देखा गया या अब अन्ना के इस आंदोलन में। एक शांतिपूर्ण, अहिंसक आंदोलन कैसे सत्ता को हिला सकता है, इसका नजारा सबने देखा, खासकर युवा पीढ़ी ने। अन्ना के इस आंदोलन में युवा पीढ़ी की भागीदारी बढ़-चढ़कर है। अपनी खूब छीछालेदर कराने के बाद दिल्ली पुलिस उन्हें बगैर किसी शर्त के रामलीला मैदान में अनशन करने देने के लिए राजी हो गई है—पंद्रह दिनों के लिए। दिल्ली पुलिस का कहना है कि अगर आंदोलन शांतिपूर्ण रहा तो अवधि बढ़ाई भी जा सकती है।

सचमुच यह अन्ना के आत्मबल की विजय है। उन मुद्दों की विजय है, जिनके लिए वह ताल ठोंककर मैदान में खड़े हो गए। आम जनता उनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गांधी की छवि देख रही है। अन्ना का अपना कोई संगठन नहीं है, लेकिन उनकी एक आवाज पर जिस तरह पूरा देश उनके साथ खड़ा हो गया है, वह सचमुच अजूबा है। सरकार के प्रतिनिधियों और मंत्रियों ने उन पर हर तरह से कीचड़ उछालने की कोशिश की, उनके लिए अमर्यादित भाषा का प्रयोग किया, लेकिन जैसे आसमान पर थूकने की कोशिश करनेवाले पर ही थूक आकर गिरती है, कुछ वैसा ही इस मामले में हुआ और सरकार नतमस्तक होने पर मजबूर हुई।

बहुत समय बाद एक ऐसे मुद्दे को लेकर जनांदोलन प्रारंभ हुआ है, जिससे चाहे आम आदमी हो या खास, सभी परेशान हैं। भ्रष्टाचार के चलते विकास का रथ रुक गया है। अगर इससे मुक्ति न मिली तो हम चाहे कितनी योजनाएँ बनाएँ, कुछ नहीं होने वाला है। ऐसे ही काले धन की वापसी का मुद्दा है। विदेशी बैंकों में इतनी मात्रा में काला धन जमा है कि अगर वह वापस देश में आ जाए तो हमारी बहुत सारी समस्याएँ हल हो जाएँ। जन लोकपाल के संबंध में अन्ना ने कहा है कि यह अगर लागू हो जाए तो भ्रष्टाचार पर ६५ प्रतिशत तक नियंत्रण हो सकता है। इस मुद्दे को लेकर संसद् से सड़क तक बहस जारी है। सरकार इसे संसद् की सर्वोच्चता पर प्रश्नचिह्न के रूप में देख रही है, जबकि टीम अन्ना का कहना है कि इसे पहले संसद् के समक्ष प्रस्तुत तो किया जाना चाहिए था; लेकिन इसमें दो राय नहीं कि अन्ना और उनकी टीम जनहित को लेकर देश के सामने खड़े हैं, इसलिए उन्हें पूरे देश से हर वर्ग का समर्थन मिल रहा है। हमें उनकी सफलता की कामना करनी चाहिए।

□

सितंबर का महीना 'राजभाषा हिंदी' से जुड़ा हुआ है। १४ सितंबर, १९४९ को हिंदी संघ की राजभाषा घोषित की गई थी, इसलिए केंद्रीय सरकार के विभिन्न विभागों, कार्यालयों, उपक्रमों, स्वायत्त संस्थानों में हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़ा, हिंदी माह का आयोजन किया जाता है। विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताओं, व्याख्यानों आदि का दौर चलता है, पुरस्कार बाँटे जाते हैं और फिर वर्ष भर के लिए हम हिंदी को भूलकर यथाक्रम अंग्रेजी में अपना सरकारी कामकाज करने लगते हैं। ये सब आयोजन महज एक औपचारिकता का निर्वहन भर लगते हैं। इसलिए बहुत से लोग इसे 'श्राद्धपक्ष' की संज्ञा देने लगे हैं।

जब हिंदी संघ की राजभाषा घोषित की गई थी, यदि सरकार की इच्छा शक्ति रही होती तो उसी समय से हिंदी पूरी तरह राजकाज की भाषा बन गई होती, लेकिन तत्कालीन सरकार को लगा कि शायद इस दायित्व के निर्वाह के लिए हिंदी अभी पूरी तरह तैयार नहीं है, अभी हिंदी के साथ अंग्रेजी को भी बनाए रखना चाहिए। लेकिन बाद में ऐसी शर्तें रख दी गईं कि शायद हिंदी पूरी तरह कभी भी राजकाज की भाषा न बन सके।

प्रश्न यह भी है कि खुद हिंदीभाषी भी अपनी हीनता ग्रंथि से कहाँ मुक्त हो पाए? अंग्रेजी को लेकर एक तरह की मानसिक गुलामी के शिकार हो गए। मैकाले ने जो स्वप्न देखा था कि हिंदुस्तान में एक ऐसा वर्ग तैयार किया जाए, जो भले ही रूप-रंग से हिंदुस्तानी हो, लेकिन मानसिकता एवं आचरण से अंग्रेजीपरस्त हो। हम अब भी अपने बीच ऐसे काले अंग्रेजों को देख ही सकते हैं।

जब हम हिंदी की बात करते हैं तो उसके बहुत से आयाम हमारे सामने उभरते हैं—हिंदी एक भाषा ही नहीं एक जाति भी है। इकबाल ने जब कहा था—'हिंदी हैं हम, वतन है हिंदोस्तां हमारा' तो शायद इसी संदर्भ को सामने रखकर कहा था। राजभाषा के प्रश्न को किनारे रख दें तो हम पाएँगे कि स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में हिंदी का प्रचार-प्रसार बढ़ा है। भारत में मात्र हिंदी ही एक ऐसी भाषा है, जिसमें एक साथ पूरे देश को संबोधित किया जा सकता है। इसलिए दूसरे प्रदेशों के जो भी राजनेता राष्ट्रीय राजनीति में आए, उन्हें हिंदी सीखने को मजबूर होना पड़ा।

हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदी फिल्मों और उसके गानों की बड़ी भूमिका रही। बालीवुड की फिल्में न केवल देश में, बल्कि विदेश में भी पसंद की जाती हैं और वहाँ उसमें बहुत अधिक दर्शक हैं। बाजार ने भी हिंदी के प्रचार-प्रसार में अपना योगदान किया है। भारत में हिंदी-भाषी एक बहुत बड़ा मध्य वर्ग है जिस तक पहुँचने के लिए बाजार को हिंदी का माध्यम अपनाना पड़ा है। यह यूँ ही नहीं है कि तमाम विदेशी चैनलों को अपना हिंदी अवतार भी लाना पड़ा है।

पिछले दशकों में संचार माध्यमों के तीव्र प्रसार के साथ पारंपरिक प्रिंट मीडिया भी आगे बढ़ा है। तमाम हिंदी अखबारों के क्षेत्रीय संस्करण निकलने प्रारंभ हुए हैं। लेकिन इनके साथ कुछ नकारात्मक पक्ष भी हैं, जिन पर गौर करना चाहिए। चाहे प्रिंट मीडिया हो या इलेक्ट्रानिक मीडिया, वहाँ एक भाषा के रूप में हिंदी को जिस तरह बरता जा रहा है, वह सचमुच चिंता का विषय है। हिंदी वहाँ 'हिंग्लिश' होकर रह गई है। ज़रूरत न होते हुए भी जानबूझकर अंग्रेजी के शब्द प्रयुक्त हो रहे हैं। न केवल शब्दों के स्तर पर, बल्कि वाक्य संरचना के स्तर पर भी उसके व्याकरण के साथ छेड़छाड़ हो रही है। इसके प्रति सचेत होने की जरूरत है।

एक और चिंता का विषय है कि हमारी नई पीढ़ी हिंदी से दूर होती जा रही है। जिस तरह लोगों का कॉवेंट और पब्लिक स्कूलों के प्रति आकर्षण बढ़ रहा है। शहर तो शहर, कस्बों तक में जिस तरह शिक्षा की दुकानें खोली जा रही हैं और जिस तरह की अधकचरी शिक्षा वहाँ अयोग्य शिक्षकों द्वारा दी जा रही है, उससे पूरी-की-पूरी नई पीढ़ी हिंदी से दूर होती जा रही है। बहुत से राज्यों में प्राथमिक स्तर से अंग्रेजी की पढ़ाई हो रही है, जो बहुत ही घातक है, क्योंकि उससे बालक की ऊर्जा का क्षय होता है और मौलिक चिंतन की शक्ति अवरुद्ध होती है।

बहुत से आंदोलनों और दबाव के बाद संघ लोक सेवा आयोग में अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषाओं का प्रवेश हुआ था और इसके परिणाम भी अच्छे आने लगे थे। प्रशासनिक सेवाओं में कस्बाई और ग्रामीण पृष्ठभूमि के युवकों का आना शुरू हुआ था, क्योंकि उनमें प्रतिभा की कमी नहीं थी। अंग्रेजी भाषा के कारण वे मार खा जाते थे। अब पुन: पिछले दरवाजे से आयोग ने अंग्रेजी को लाने का रास्ता साफ कर दिया है। इसका व्यापक विरोध होना चाहिए।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकि नाथ चतुर्वेदी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिस्मृति

हमारी राष्ट्रभाषा

● स्व. पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

भारत के स्वाधीन होने से कुछ वर्ष पहले से ही हिंदी भाषा की जगह हिंदी-उर्दू मिश्रित 'हिंदुस्तानी' भाषा को स्थान दिए जाने के प्रयास किए गए थे। उस समय हिंदी साहित्य सम्मेलन के संस्थापक राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन, पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी आदि ने हिंदी के शुद्ध स्वरूप को बनाए रखने के लिए 'हिंदुस्तानी' का विरोश किया था। स्वाधीनता सेनानी तथा साहित्य मनीषी सेठ गोविंद दासजी तथा सुविख्यात वैदिक विद्वान् पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकरजी ने लेख लिखकर हिंदी का विशुद्ध स्वरूप बनाए रखने पर बल दिया था।

पं. सातवलेकरजी का 'हमारी राष्ट्रभाषा' शीर्षक लेख दैनिक 'सन्मार्ग' (काशी) के फाल्गुन शुक्ल ४ संवत् २००४ के अंक में अब से ६४ वर्ष पूव प्रकाशित हुआ था। यह महत्त्वपूर्ण आलेख श्री शिवकुमार गोयल ने अपने पिताश्री (भक्त रामशरणदासजी) के संग्रहालय से प्राप्त कर 'साहित्य अमृत' के लिए प्रेषित किया है।

राष्ट्रभाषा के नाम

अपनी राष्ट्रभाषा के अनेक नाम इस समय प्रचलित हैं। इनमें कुछ नाम प्राचीन हैं और कुछ सार्थक और कुछ नाम राजकारण में घसीटे जाने के कारण विपरीत भी हुए हैं। 'भाषा, भारती' आदि नाम प्रचीन हैं। इनमें 'भारती' पद तो शुद्ध वैदिक है। अपनी जाति का नाम 'भरत या भरता,' देश का नाम 'भारत' और देश भाषा का नाम 'भारती' था।

आ भारती भारतीभिः सजोषा (ऋ. ३/४/८)

अतारिषुर्भरता गव्यवः सं। (ऋ. ३/३३/१२)

विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनम्। (ऋ. ३/५३/१२)

ऋग्वेद के इन मंत्रों में 'भारती' भारत देश की राष्ट्रभाषा, 'भारती' भारत राष्ट्र की सब प्रजा, जो भारती भाषा बोलती थी, 'भरताः' भारत राष्ट्र के प्रजाजन, 'भारतं' भारत राष्ट्र और 'भारतं जन' भारत राष्ट्र के जन, ये शब्द भारत देश की जनता और उसकी बोली के विषय पर उत्तम प्रकाश डालते हैं। इससे सिद्ध है कि 'भारती' शब्द राष्ट्रभाषा के लिए वैदिक समय में भी प्रयुक्त था। उस समय की भारत की राष्ट्र भाषा संस्कृत थी। इसी संस्कृत भाषा की पुत्री आज की हमारी राष्ट्रभाषा है। इसलिए माता का जाति नाम पुत्री के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है और इससे आज की राष्ट्रभाषा का संबंध वैदिक सारस्वत के साथ जुट सकता है।

हिंदी और हिंदुस्तानी

आज के प्रचलित भाषावाचक पद 'हिंदी' और 'हिंदुस्तानी' हैं। इनके विषय में इस समय बड़ा विवाद चल रहा है, इसलिए यहाँ इस विषय में थोड़ा सा विवेचन करना आवश्यक है। राजनीतिक आंदोलन में भाषा, धर्म आदि को घसीटने से जितना अनर्थ होने की संभावना होती है, उतना ही अनर्थ इन शब्दों के प्रयोग में इस समय हो रहा है। आश्चर्य की बात यह है कि जो लोग इस भारत को 'हिंदुस्तान' कहना नहीं चाहते, वही इस देश की राष्ट्रभाषा को 'हिंदुस्तानी' (वास्ताविक हिंदुस्तानी) कहने के लिए अत्यंत उत्सुक हैं। हिंदुस्थान न होने पर उस देश की भाषा का नाम हिंदुस्थानी किस तरह हो सकता है? पर यह विसंगति इस भाषा को राजनीति में घसीटने के कारण उत्पन्न हुई है। वास्तव में राजनीति में भाषा, धर्म आदि को लाना नहीं चाहिए। आजकल राजनीति को धर्मातीत माननेवाले ही अपने राजकीय हेतु की सिद्धि के लिए भाषा को तोड़ना, मरोड़ना, संकरित करना चाहते हैं। इसलिए हिंदुओं के स्थान को हिंदुस्थान न कहने का हठाग्रह करनेवाले ही हिंदुस्थान की राष्ट्र भाषा को 'हिंदुस्तानी' कहने का यत्न कर रहे हैं।

हमारी राष्ट्रभाषा तो राजकारण का क्षेत्र बनाई गई है। इसलिए आज परिस्थिति के कारण जो अर्थ विशेष शब्द को प्राप्त हुए हैं, वे ही अर्थ हमें आज लेने चाहिए।

इसी कारण हम अपनी राष्ट्रभाषा को 'हिंदी' नाम से पुकारेंगे और 'हिंदुस्तानी' नाम उसको देंगे, जो संकरजन्य भाषा होते हुए भी राष्ट्रभाषा के स्थान पर आरूढ़ होने का साहस राजकीय शक्ति के सहारे करना चाहती है। इसी का विरोध हमें अपनी संपूर्ण शक्ति से करना है। कोई संकरजन्य प्रजा संस्करों से शुद्ध हुए बिना हमारे सम्मान के योग्य नहीं बन सकेगी, क्योंकि सुव्यवस्था से वंश-शुद्धि और अव्यवस्था से संकर होता है, जो वंश का घात करता है।

वास्तव में हमारे भारतीय राष्ट्रभाषा के नाम 'भारती, भाषा, आर्यभाषा' ये हैं। 'आर्यभाषा' शब्द स्वामी दयानंदजी के पूर्व नहीं था, परंतु 'आर्यावर्त' के साथ इसका संबंध होने से यह नाम अन्वर्थक है। 'भारती' नाम वेदकाल से राष्ट्रभाषा के लिए प्रसिद्ध है। 'भाषा' हिंदी जगत् में सुप्रसिद्ध है।

मैं स्वयं अपनी राष्ट्रभाषा के लिए 'भारती, आर्यभाषा' इन शब्दों का प्रयोग करने का पक्षपाती हूँ। ये शब्द शुद्ध स्वदेशी हैं, संस्कृत भाषा के हैं। तथा संदेह-रहित हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकरजन्य भाषा हिंदुस्तानी

हिंदुस्तानी की कल्पना अंग्रेजों के मस्तिष्क की ही उपज है। जब भारतवर्ष पर उन्होंने अधिकार स्थापित किया, तब यहाँ दो भाषाएँ प्रचलित थीं। उत्तर भारत के बादशाही राज्य के अभिमानी मुसलमानों में उर्दू का अभिमान विशेष जाग्रत् था। यद्यपि कई हिंदू उर्दू में भी विशेष प्रवीण थे, तथापि उर्दू के दरबारी भाषा होने का अभिमान मुसलमानों में ही था। सर्वसाधारण हिंदू जनता में हिंदी का प्रेम विशेष था। इस कारण अंग्रेज राजकर्ताओं को हिंदी और उर्दू इन दो भाषाओं के सीखने का कष्ट उठाना पड़ता था। इन कष्टों से अपने को बचाने के उद्देश्य से अंग्रेजों ने दोनों भाषाओं के आधे-आधे शब्द लेकर नई संकर भाषा 'हिंदुस्तानी' बनाने की इच्छा की।

अंग्रेजों ने कुछ हिंदू पंडित और मौलवी एक समिति में नियुक्त किए और संकर भाषा 'हिंदुस्तानी' बना दी। इतना ही नहीं, कुछ पाठ्य-पुस्तकें भी बनाईं और लंदन में 'हिंदुस्तानी कोष' भी मुद्रित कर प्रकाशित किया। इतने यत्न करने पर भी गत सौ-सवा सौ वर्षों में यह हिंदुस्तानी भाषा नौकरी के लिए आए अंग्रेजों में तथा उनके खानसामों, रईसों और चपरासियों में ही रही। न मुसलमानों ने इसे अपनाया और न हिंदुओं ने ही इसे पढ़ा। दोनों जातियों द्वारा इस तिरस्कृत भाषा को स्वराज्य प्राप्त होने पर और स्वतंत्रता मिलने पर, जिनके हाथों मे राजशक्ति आ गई है, वे अपनी राजशक्ति के बल के सहारे राष्ट्र की भाषा बनाना चाहते हैं। सौ वर्षों का इतिहास जो पाठ दे रहा है, उसको न देखना भारी भूल है।

हिंदुस्तानी के हेतु में पाप

अंग्रेजों ने जो हिंदुस्तानी बनाई, उसे बनाने में उनके मन में एक बड़ा भारी 'राजकीय पाप' था। उर्दू यदि राष्ट्रभाषा मानी जाएगी तो मुसलमानों में मुसलिम साम्राज्याभिमान जाग्रत् होगा, वह अंगेजों को अनिष्ट था। इसी तरह, यदि हिंदी भाषा को राष्ट्रभाषा बना दिया जाए तो रामचरित मानस जैसे दैवी भाव जगाने वाले प्रासादिक ग्रंथ पढ़कर हिंदुओं में भी अपनी प्राचीन उज्ज्वलता जाग उठेगी। यह भी अंग्रेजों की दृष्टि से महा अनिष्ट था। इसलिए जिसमें कोई प्राचीन साहित्य नहीं, जिसके पीछे कोई इतिहास नहीं, ऐसी नई हिंदुस्तानी भाषा हिंदुस्तानी प्रजा को दी जाए तो प्रजा में कोई क्रांति की भावना कभी उत्तेजित न होगी और अपना साम्राज्य चिरकाल तक बना रहेगा। पाप की यह भावना साम्राज्यवादी अंग्रेजों में थी, जिस पापी भावना से हिंदुस्तानी का जन्म हुआ। अतः यह हिंदुस्तानी जैसी हिंदुओं को वैसी ही मुसलमानों को तिरस्कार करने योग्य प्रतीत हुई और केवल बाबर्चियों की ही भाषा गत सौ वर्षों में बनी रही।

हिंदुस्तानी की उत्पत्ति में यह पाप था और साम्राज्यवादियों की दृष्टि से उनके हित के लिए ऐसा करना योग्य ही था। पर अब अंग्रेज गए, उनका साम्राज्य टूट गया, उनका राज्यशासन अब होने की कोई आशा नहीं है, भारत अब स्वतंत्र, स्वयंशासित तथा स्वराज्य के संपूर्ण अधिकारों से संपन्न हुआ है, इसलिए पापसंभव, संकरजन्य हिंदुस्तानी को अब उत्तेजित करने की आवश्यकता ही क्या है? अब हिंदुस्तानी का अभिमान राष्ट्र के लिए अनावश्यक, अयोग्य और हानिकर है।

हमारे नेता कहते आए हैं कि हिंदू-मुसलिम एकता के बिना स्वराज्य सिद्ध नहीं होगा और एकता के लिए दोनों जातियों की उर्दू और हिंदी भाषाओं का संकर करके संकरजन्य हिंदुस्तानी बनाना आवश्यक है। इस संकरजन्य भाषा से दोनों जातियों में एकता स्थापित होगी और वह सच्चा स्वराज्य निर्माण करेगी।

पर अब सिद्ध हो चुका है कि यह विचारधारा ही अशुद्ध एवं भ्रमपूर्ण थी। हिंदुस्तानी के प्रचार का प्रारंभ १२ वर्ष पूर्व हमारे नेताओं ने किया। उसके पूर्व हिंदू और मुसलमान प्रेम से रहते थे। अब तो इन जातियों में बहुत ही विद्वेष बढ़ गया है और द्वेष बढ़ जाने पर भी स्वराज्य तो मिल ही गया है। इससे सिद्ध हो चुका है कि स्वराज्य मिलने के साथ हिंदू-मुसलिम एकता का कोई संबंध नहीं था। नहीं तो हिंदू मुसलिमों के भयानक विग्रह के समय ही स्वराज्य न मिलता।

उर्दू-हिंदी के संकर से हिंदू-मुसलिम एकता का निर्माण करना भी एक अशुद्ध विचारधारा थी। भाषा के तोड़-मरोड़ से जातियों की एकता नहीं होती।

इसके अतिरिक्त उर्दू भाषा मुसलमानों की भाषा है, यह भी अशुद्ध धारणा है, क्योंकि प्रत्येक प्रांत के मुसलमान प्रांतीय भाषा ही बोलते हैं। बंगाल के मुसलमान बँगला बोलते हैं, पंजाब के मुसलमान पंजाबी, सीमा प्रांत के पश्तो, कश्मीर के कश्मीरी, गुजरात के गुजराती, महाराष्ट्र के मराठी, इसी तरह अन्य प्रांतों के मुसलमान अन्य प्रांतों की प्रांतीय बोलियाँ ही बोलते हैं।

इस समय पूर्व बंगाल के पाकिस्तान की भाषा बँगला रखने का विचार वहाँ के पाकिस्तानी सरकार के कुछ मंत्री कर रहे हैं। इससे ही सिद्ध है कि वहाँ के मुसलमानों की भाषा उर्दू नहीं है। यही दशा सब प्रांतों के मुसलिमों की है। इसलिए मुसलमानों की भाषा 'उर्दू' है, ऐसा मानना पहली अशुद्धि है, और हिंदू-मुसलिमों की एकता करने के लिए हिंदी-उर्दू का संकर करना चाहिए, ऐसा मानना दूसरी अशुद्ध धारणा है। इसलिए इस प्रयत्न से एकता तो न हुई, परंतु वैरभाव अत्यंत बढ़ गया और जो पहले एकता थी, वह भी विनष्ट हो गई। अशुद्ध विचारधारा से ऐसा ही अनर्थ होगा। इस कारण हमने कहा कि भाषा को राजनीति में घसीटना हमारे नेताओं के लिए योग्य नहीं था। इतनी कटुता का अनुभव करने पर भी उस भाषा के संकर पर पुनः जोर देना सर्वथा हानिकारक है।

उर्दू किसी प्रांत की भाषा नहीं

उर्दू किसी जाति की भाषा नहीं, वैसे ही किसी प्रांत की भी भाषा नहीं है। यदि भाषानुरूप प्रांतों की रचना की जाए तो उर्दू के लिए कोई प्रांत नहीं रहेगा। आज पाकिस्तान बना है, इसलिए पाकिस्तान वाले वहाँ की प्रांतीय भाषाओं को मारकर वहाँ उर्दू का राज्य शुरू करेंगे, परंतु वैसा करने पर भी वहाँ की प्रांतीय बोलियाँ आगे सौ-पचास वर्षों तक निःसंदेह रहेंगी, क्योंकि प्रांतीय भाषाओं का नाश करके वहाँ विदेशी भाषा को स्थापन करना सहज में होनेवाली बात नहीं है।

जब उर्दू किसी जाति की भाषा नहीं और किसी प्रांत की भी भाषा नहीं, तब तो यह निःसंदेह सिद्ध होता है कि किन्हीं दो जातियों की एकता के लिए हिंदी-उर्दू का संकर करने की भी आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता तो दूर रही, यह विचारधारा महाभयंकर घातकारी भी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे और भी अनर्थ होने की संभावना है, क्योंकि आज अपने भारतवर्ष में हिंदू, मुसलमान और ईसाई हैं। अन्य जातियों के जन अति अल्प हैं। यदि हिंदू-मुसलिम एकता के लिए हिंदी-उर्दू के आधे शब्द लेकर संकर करने की आवश्यकता सिद्ध हो जाए तो वही नियम ईसाइयों को भी लगाने की आवश्यकता होगी और वैसा होने पर हिंदी-उर्दू-इंग्लिश, इन तीन भाषाओं की खिचड़ी करनी पड़ेगी! क्योंकि मुसलमान और ईसाइयों की परिस्थिति एक जैसी है—

चिह्न	मुसलमान	ईसाई
टोपी	तुर्की टोपी	अंग्रेजी हैट
वेश	ईरानी	अंगेजी हैट
पवित्र क्षेत्र	अरबस्तान	जेरूशलम
भाषा	अरबी-फारसी-उर्दू,	अंग्रेजी
धर्म	मुसलमानी	
मंदिर	मस्जिद	गिरजाघर
पवित्र ग्रंथ	कुरानशरीफ	बाइबल(पवित्र)

प्रवृति पर धर्म-द्वेष, परधर्म-असहिष्णुता मूर्ति-निषेध मूर्तिभंजन मूर्तिजा का तिरस्कार, धर्म-प्रसार साधन तलवार, शिक्षा आदि संस्थाओं के द्वारा इस तरह मुसलमान और ईसाई एक जैसे ही थे और हैं। इस समय ईसाई संख्या में कम हैं और शिक्षित हैं, इसलिए मुसलमानों के समान राजकीय महत्त्वाकांक्षा से दुराग्रही नहीं बने हैं। पर यदि मुसलमानों के दुराग्रह के कारण हमने संकर भाषा बनाने का असत् तत्त्व मान्य किया तो ईसाइयों के लिए भी वैसा करना न्याय्य तथा योग्य होगा। कम-से-कम उनके पूछने पर हमारे पास योग्य उत्तर नहीं है। यदि ईसाइयों के साथ समझौता करने के लिए इसी तरह संकर करने का अवसर आ जाए तो हिंदी-उर्दू-अंग्रेजी के ३३-३३ शब्द लेकर एक नई खिचड़ी भाषा बनानी पड़ेगी, जो हमारी मूढ़ता का ही एक प्रदर्शन होगा।

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल

कविता

दो कविताएँ

• अनंत मिश्र

ऊब

ऊब जब पैदा होती है
तो बढ़ती रहती है
अपने सूक्ष्म रूप में
छाती रहती है बदली की तरह
बरसनेवाली बदली नहीं होती ऊब
यदि बरस जाती तो
ऊब नहीं रह जाती
उलट-पलटकर सँभालती है चेतना को
न स्वप्न देखती है
न यथार्थ
ऊब एक चुड़ैल की तरह
पकड़ती छोड़ती रहती है आदमी को
और आदमी किसी भी झाड़-फूँक करनेवाले से
जल्दी नहीं ठीक होता।

दुनिया नहीं बदलेगी

वह कविता कभी नहीं लिखी जाएगी
जिससे दुनिया बदल जाए
शताब्दियों से कविता अपनी राह
आदमी अपनी राह
चले जा रहे सब कपनी-अपनी राह
धुरी पर पृथ्वी धूमती है
आकाश में अगणित तारे-नक्षत्र
सबकी परमगति
शायद पर्यवसान
किंतु आदमी है कि कविता लिख रहा है
दुनिया बदलने की जिद में
ज्यादा-से-ज्यादा
चिड़चिड़ा होता जा रहा है।

नलनी निवास
दाउदपुर, गोरखपुर
(उ.प्र.)

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन कविताएँ

● रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

जन्म : ५ जुलाई, १९२९, सिधावली, आगरा (उ.प्र.)।

शिक्षा : एम.ए., (हिंदी, संस्कृत), पी-एच.डी., डी.लिट्.।

साहित्य-सेवा : १२६ मौलिक ग्रंथ, जिनमें पाँच प्रबंध-काव्य, दस गीत-संग्रह, पाँच नई कविता, दस नाटक, चार कथा-साहित्य, पाँच निबंध-संग्रह, बारह शोध एवं आलोचना-ग्रंथ प्रकशित।

सम्मान पुरस्कार : भारत सरकार से नाटक-पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादमी से तीन बार काव्य-पुरस्कार तथा अन्य अनेक सम्मान।

रूस, जापान, कोरिया, थाईलैंड, चीन, जर्मनी, मॉरीशस, नेपाल की विदेश यात्रा।

संप्रति : भीली भाषा पर शोध-कार्य एवं स्वतंत्र लेखन।

अभी समय है

तुम नहीं चाहते थे क्या
फूल खिलें
भौंरे गूँजें
तितलियाँ उड़ें।
नहीं चाहते थे तुम—
शरदाकाश
वसंत की हवा
मंजरियों का महोत्सव
कोकिल की कुहू
हिरनों की दौड़?

तुम्हें पसंद थे भेड़िये
धीरे-धीरे जंगलाते आदमी
हरियाली को धुआँ बनाते विस्फोट?

तुमने ही बना दिया सबको
बधिर, चक्षु हीन, आकाशगामी
हो गए सब
कोलाहल में डूबे
वाणी-विहीन!

अब भी समय है
बाकी है भविष्य
खड़े हो जाओ अँधेरों के खिलाफ
वेद-मंत्रों के ध्याता!
पहचानो अपनी धरती
अपना आकाश!

□

शब्द लड़ते हैं

बहुत आसान नहीं है
अर्थों को यह समझा पाना
कि वे नहीं लड़ते
केवल शब्द लड़ते हैं!
हवा में भर जाता है जब
इतिहासों का कोलाहल
जन्म लेने लगते हैं
आजादी के हिटलर!

अर्थों के मौन धारण करने पर भी
निरंतर बढ़ता है अँधेरा
सूख चुके वृक्षों की डालों पर
नए सवेरे का दावा
करती हैं चमगादड़ों की
चकाचौंध करती आँखें!
लेकिन ऐसे नहीं होता
कभी भी सवेरा
अंधकार को तोड़ते हैं जब
चहचहाती चिड़ियों के पंख
हवा में उछलते हैं
अर्थों के गुब्बारे
तब नहीं रहते चमगादड़
तब नहीं बजते निरर्थक शब्द!

□

एक छोटा शब्द 'भूख'

यहीं
बिलकुल तुम्हारे पास
खिसककर आ गया था
एक छोटा शब्द
भूख
अँतड़ियों से चिपका
थरथराता पसलियों को!

तुमने कहा था
हटा दो इसे
मेरा नहीं
कविता के रथ से निकला
टूटा हुआ पहिया है!

उसमें हो गया विस्फोट
सचमुच
अब कविता ने जन्म लिया है
अचानक उसकी
आकाशी अग्नियों में
किसी रथ के
टूटे हुए पहिए
जल रहे हैं निरंतर!

चारों ओर घिरता
धुआँ, कोलाहल
उसी से निकला है।

डी-३०१, कृभको,
टाउनशिप, प्लाट नं. १२२
सेक्टर ३५, नोएडा-२०१३०७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

आप लौट आओ अंकल!

● प्रशांत कुमार सिन्हा

जन्म : ०१ अगस्त, १९५० को गिरिडीह जिले (झारखंड) के पलौंजिया ग्राम में।
प्रकाशन : पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित, कुछ कहानियाँ पुरस्कृत।
संप्रति : जल संसाधन विभाग, बिहार के अंतर्गत सिकरहना तटबंध प्रमंडल, मोतिहारी (पूर्वी चंपारण) में कार्यरत।

दरवाजा खोलते ही मायूस सी निगाहें ठहर जाती हैं उस निशान पर, जो सामने के नेमप्लेट हट जाने से बना है, और यह खाली जगह अहसास करा जाती है उन स्मृतियों की, जो अब विखंडित हो चुकी हैं।

जब से सामने के फ्लैट से नेमप्लेट हटी है, सुबह उदास, दोपहर मलिन और शाम ठंडी हो चली है। लगता है, नेमप्लेट उस दरवाजे पर नहीं, मेरे हृदय पर टँगा था, जो अपने वजूद को मिटने नहीं दे रहा। नेमप्लेट के साथ ही एक तसवीर उभरती है—उदास, पलकें नीची की हुई, सुवास कुमार की। और मैं उपहास से घिर जाती हूँ। स्वयं को दोषी पाती हूँ। मुझे ऐसा कुत्सित खेल नहीं खेलना चाहिए था। खेल भी किसके साथ—बराबर का पार्टनर होता तो एक बात थी। अपने से तीस वर्ष बड़े, थके-हारे तटस्थ से व्यक्ति को भावनात्मक दबाव के तहत परास्त करने की मेरी योजना निश्चय ही युक्तिसंगत नहीं थी। क्या कसूर था उनका! सिर्फ इतना भर कि उम्र की मर्यादा को लाँघते हुए कुछ दिनों पूर्व उन्होंने सहमे स्वर में कह डाला, 'आई लव यू पाली, आई लव यू…।'

पहली दफा जब सुवास कुमार को इन सीढ़ियों पर देखा तो प्रभावित हो बैठी थी। कत्थई टीशर्ट, डार्क पतलून, भूरे बाल। सीढ़ीघर परफ्यूम से महक उठा। पचपन की उम्र में भी पूरे स्टाइलिश। पापा सीढ़ीघर से बाइक निकाल रहे थे। मैं उन्हें मदद कर रही थी। अनायास कानों में वीणा के तार बज उठे—'हैलो, क्या नाम है तुम्हारा?'

स्वर में इतना सम्मोहन! जवाब देना ही भूल गई। पापा बाइक निकाल चुके थे। परिचय कराया, 'नमस्ते कहो, सुवास अंकल हैं।'

(धन्य भाग्य जो दर्शन दिया—चार दिन मुझे आए हो गए, सिर्फ नेमप्लेट ही पढ़ा था।)

मेरी हथेलियाँ नमस्ते की मुद्रा में जुड़ गईं, 'जी पँखुरी।'

'गुलाब की?' उन्होंने चुटकी ली। मैं समझ पाती कि हँसते हुए कहा, 'पँखुरी—जुबान पर उतरने में थोड़ा समय लेगा।'

'पाली कह लीजिए।' मैं मुसकराई।

'यह रही न बात! हाय पाली! कब आई, एग्जाम कैसा हुआ?'

(यह तो बूढ़ा न होकर हाय-हैलोवाला निकला।)

लगा—उन्हें मेरे विषय में जानकारी थी। इस फ्लैट में हम नए थे। वे पुराने। पापा का तबादला यहाँ हुआ था। वे कुछ दिन पूर्व आ गए थे। मेरी परीक्षाएँ बाकी थीं। मुझे पुराने शहर में रुकना पड़ा। जब आई तो नजरें सर्वप्रथम बगल के बंद दरवाजे पर जा टिकीं—सुवास कुमार, छोटा सा नेमप्लेट।

उत्सुकता जगी, कैसे होंगे मि. सुवास! आज के पूर्व उन्हें देखा नहीं था। दरवाजा अकसर बंद रहता, जिसे देख जाने क्यों खीझ होती। कोई पारिवारिक होता तो चहल-पहल होती। उनका सीढ़ियाँ चढ़ना-उतरना इतना खामोश होता कि कब आए, कब छूमंतर। आँखें बिछी रह जातीं। जिस दिन पता चला, अब तक शादी नहीं की। अविश्वसनीय सा लगा था। उनके रहस्यमय व्यक्तित्व की तह तक जाने की ललक पैदा हो उठी। क्यों नहीं बसाई अपनी गृहस्थी, कैसे जी होगी अकेली जिंदगी?

एक रविवार मन में ठान ली—आज मिस्टर कुमार के दर्शन करके रहूँगी। अपना दरवाजा खुला रख छोड़ा। सामने कुरसी लगा अपना होमवर्क पूरा करने लगी। दिन के ग्यारह बज गए, दरवाजा नहीं खुला। (मरो स्साले!) झल्लाहट किसी से कह भी नहीं सकती। निगाहें थकने लगी थीं। चाहे कितना ही मायावी क्यों न बने, कोई बात हुई? एक छत एक सीढ़ी, आमने-सामने का फ्लैट, फासला दो-ढाई मीटर और उन्हें एक नजर देखने भर के लिए मैं सुबह सात बजे से ही आँखें बिछाए बैठी हूँ!

सिटकनी सरकने की आवाज के साथ साँसें थम सी गईं। आहिस्ते से दरवाजा खुला। सामने सुवास कुमार। ताजगी भरा मुसकराता चेहरा। नजरें टकराईं। मैं सकुचा गई। नमस्ते भी नहीं कह पाई। विश उन्होंने ही किया, 'हैलो, कैसी हो? इन दिनों दिखी नहीं?' (मैं नहीं दिखी!'' बंतूस है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अंकल, मैं नहीं दिखी कि आप गायब रहे? आपकी तो कोई दिनचर्या ही नहीं। कब आए, कब गुम हो गए?'

लगा मैं बातूनी हो रही हूँ। उन्होंने हँसते हुए कहा, 'अरे नहीं यार, इन दिनों टूर की ड्यूटी पर हूँ। जल्द ही इस काम से मुक्ति मिल जाएगी, फिर शिकायतें खत्म।' और वे सीढ़ियाँ उतर गए।

यार! उन्होंने मुझे यार कहा! मतलब समझते भी हैं? यार निकटतम और समान वयस्कवाले दोस्तों को कहा जाता है। मैं तो इनसे लगभग तीस वर्ष छोटी हूँ। यार!··· कितना सम्मोहन है। जो कई घंटों बीत जाने के बाद भी मेरे कानों में झींगुरों के स्वर सा सुरसुरा रहा था।

उस दिन कॉलेज से लौटी तो अपने ड्राइंग-रूम में सुवास कुमार को बैठा देख खुशी से चीख उठी, 'अंकल आप!'

'क्यों, इसमें चौंकने जैसी क्या बात है। तुम्हारे ड्राइंग-रूम में मैं नहीं बैठ सकता क्या?'

'अरे नहीं अंकल, ऐसी क्या बात है। आपकी 'फुरसत' चौंका गई।' चहकते हुए मैंने अपना बैग मेज पर फेंक दिया। अंदर गई। पापा नहीं थे। मम्मी ने चाय चढ़ा रखी थी। मम्मी के प्रति ईर्ष्या हो आई। आज अनायास, असमय, पापा घर पर नहीं हैं—कहीं मम्मी को लाइन तो नहीं मार रहा? उत्तर की टोह में मम्मी से पूछ बैठी, 'अंकल कब आए?'

'यही कोई पंद्रह-बीस मिनट पहले।' मम्मी ने चाय में चीनी डालते हुए कहा।

'बीस मिनट!' इतनी देर से मम्मी के साथ गप्पें लड़ा रहा है!

मम्मी के साथ एकांत फ्लैट में उनका बैठना मुझे चुभा था। मम्मी ने कहा, 'तुम्हारा ही नाम पूछा था। मेरे द्वारा तुम्हारे कॉलेज जाने की बात सुनकर उलटे पाँव लौटने को हुए कि मैंने बिठा लिया।'

मम्मी के शब्दों ने राहत पहुँचाई। मुझे पूछ रहे थे! नहीं पाकर वापस लौट चले थे।

मम्मी से चाय का छन्ना हाथ में लेते हुए मैंने कहा, 'मम्मी चलो। तुम्हारा काम पूरा हुआ। चाय पिलाने का जिम्मा मेरा।'

मम्मी चाय का प्याला लेकर टी.वी. के सामने जा बैठीं।

वह एक खुशनुमा अपराह्न था। सूर्य ढलान की ओर। पहली दफा सुवास कुमार से खुलकर बातें हो रही थीं। पढ़ाई के विषय में पूछा। टिप्स दिए। टाइम मैनेज करने का गुर सिखाया। एकाग्रता के लिए योग पर बल दिया। तात्पर्य कि जितनी बातें हुईं, आदर्शवादिता की धरातल पर। उनका चेहरा इस हद तक निरपेक्ष कि मुझे इक्कीस वर्षीय युवती होने पर संदेह हो उठा। नजरें इतनी तटस्थ कि एक बार भी दुपट्टा सहेजने की जरूरत महसूस नहीं हुई।

इस बीच एक जरूरी काम से एक माह के लिए मम्मी-पापा लखनऊ चले गए थे। फ्लैट में मैं और छोटा भाई विक्की। मुझे उदास पाकर आत्मीयता के साथ कहा, 'डॉन्ट वरी, मैं हूँ। अकेली नहीं हो तुम।'

अकेली नहीं हूँ मैं? मेरा प्रतिप्रश्न। अंकल मेरे साथ हैं—स्वयं का उत्तर। उन्होंने निर्वहन भी किया। हमारा खयाल रखा।

अंकल ने अनायास एक दिन सूचना दी, 'कजिन की शादी है, कल हजारीबाग जा रहा हूँ। शाम को सीढ़ीघर का दरवाजा बंद कर लेना। कोई आवाज दे तो बालकनी से देख लेना। वैसे मैंने पड़ोस के अस्थाना साहब को कह दिया है। जरूरत पड़ने पर निस्संकोच संपर्क कर लेना।'

अंकल के हजारीबाग जाने की सूचना से मायूस हो बैठी, 'पहले नहीं बताया?'

'अरे फुरसत कहाँ मिली?'

'फुरसत नहीं मिली! शादी का प्रोग्राम अचानक तय नहीं हुआ होगा। इसके पूर्व एक बार भी नहीं कहा।'

मेरे शब्दों में अधिकार उभर आया। लगा—मैं ज्यादा ही सापेक्ष हो रही हूँ। यदि नहीं बतला पाए तो कौन सा गुनाह कर बैठे!

'कब लौटेंगे?' मायूसी भरा मेरा प्रश्न था।

'रिसेप्शन तक तो रुकना ही पड़ेगा।'

'कब है?'

'यही तो प्रॉब्लम है। पूरे सप्ताह का चक्कर।'

'फिर रिसेप्शन ही क्यों नहीं अटैंड करते।' मैंने सुझाया।

'अरे नहीं, लोग माइंड कर जाएँगे।'

'खाक माइंड करेंगे, कह दीजिए, छुट्टियाँ नहीं मिलीं।'

"............"

'अकेली रहूँगी तब तक?'

मेरा अधिकारपूर्ण आग्रह। कुछ क्षणों के लिए हमारी आँखें एक-दूसरे में जा समाईं। प्रश्न-प्रतिप्रश्न, खामोश उत्तर। आँखें भी क्या बला हैं। कितनी सारी भाषाओं, कितनी सारी भावनाओं को आत्मसात् किए।

वह एक खुशनुमा अपराह्न था। सूर्य ढलान की ओर। पहली दफा सुवास कुमार से खुलकर बातें हो रही थीं। पढ़ाई के विषय में पूछा। टिप्स दिए। टाइम मैनेज करने का गुर सिखाया। एकाग्रता के लिए योग पर बल दिया। तात्पर्य कि जितनी बातें हुईं, आदर्शवादिता की धरातल पर। उनका चेहरा इस हद तक निरपेक्ष कि मुझे इक्कीस वर्षीय युवती होने पर संदेह हो उठा। नजरें इतनी तटस्थ कि एक बार भी दुपट्टा सहेजने की जरूरत महसूस नहीं हुई।

इस बीच एक जरूरी काम से एक माह के लिए मम्मी-पापा लखनऊ चले गए थे। फ्लैट में मैं और छोटा भाई विक्की। मुझे उदास पाकर आत्मीयता के साथ कहा, 'डॉन्ट वरी, मैं हूँ। अकेली नहीं हो तुम।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'आप तो खामखाह सोच में डूब गए। जाइए, शौक से जाइए, मेरे लिए मिठाइयाँ लाना नहीं भूलेंगे। समझ गए।'

दूसरे दिन अंकल बस-स्टैंड से लौट आए। मैं खुश हो गई। पूछा, 'लौट आए?'

उत्तर मिला, 'लगन की भीड़ चल रही है। सारी की सारी बसें पहले से फुल। सीट मिलने का तो प्रश्न ही नहीं। सोचा, तुम ठीक कह रही थी। अब रिसेप्शन अटैंड कर लूँगा।'

सुवास की आँखों में देखा, इतने निष्कपट हैं कि झूठ छिपाना भी नहीं आता। मैं मुसकरा उठी। वे झेंप गए।

२५ दिसंबर। एक्समस का दिन। लंबी अवधि के बाद कोहरे को चीरकर गुनगुनी धूप निकली थी। सुबह उठते ही अंकल के फ्लैट में ताला बंद दिखा। कहाँ गए होंगे—नहीं जानती। अजीब सी स्थिति थी। अंकल के प्रति रह-रहकर रोष सा उभर रहा था। आज तो छुट्टी का दिन है। छुट्टियाँ तो आवास में बिताया करें! फिर अपने आप से पूछ बैठती, यह कैसा अधिकार मैंने पाल रखा है?

मैं छत पर धूप का आनंद ले रही थी। निगाहें उन सभी रास्तों पर टिकी हुईं, जिधर से अंकल के आने की संभावना थी। अंकल लौटे। बताया, चर्च गया था। सबों की खुशहाली के लिए जीसस से प्रार्थना की तुम्हारी ओर से कैंडिल जलाया और दाईं हथेली बढ़ाते हुए कहा, 'मैरी क्रिसमस।'

हथेलियाँ कुछ पल के लिए आपस में बँधी रहीं।

सुवास कुमार के एकाकी जीवन की टोह मैं अब तक नहीं ले पाई थी। इतना तय था, उनका कहीं कोई अफेयर्स नहीं, कोई अंतरंग मित्र नहीं। यदि कोई था तो किताब-पत्रिकाएँ थीं। जब देखो, इन्हीं में डूबे हुए। लोगों को कहते सुना था, खिसका हुआ है। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं था। कटे रहने की प्रवृत्ति शायद उनके अकेलेपन की वजह हो। एक दिन उनसे पूछ बैठी, 'अंकल, कितने एकाकी हैं आप! आपका दरवाजा हमेशा बंद देखती हूँ। बड़ा क्षोभ होता है। कभी-कभी तो लगता है, आप हमसे कन्नी काटा करते हैं। जब फ्लैट में रहें तो दरवाजा खुला रखें, प्लीज।'

(फ्लैट में तुम्हारे होने का अहसास तो बना रहे।)

'अंकल एक बात पूछूँ? सच-सच बताएँगे! आंटी होतीं तो हमें कितना अच्छा लगता।'

इस प्रश्न के लिए वे तैयार न थे। भौंहों में हलका सा कंपन्न हुआ। पल भर के लिए खामोशी छा गई। फिर बड़ी चतुराई के साथ विषयांतर करना चाहा, 'दिसंबर-जनवरी दो माह कुहासे से निजात पाना मुश्किल है।'

'मैंने आंटी के होने की बात पूछी थी।'

'छोड़, नसीब की बात है। लिखा ही नहीं था।' कहते हुए हँस तो दिया, किंतु हँसी के पीछे दर्द को नहीं छुपा पाए।

मेरी टेढ़ी निगाह उनके चेहरे पर चिपक गई। वे कन्नी काटते दिखे। (आज तुम्हें छोड़ूँगी नहीं।)

'नहीं कुछ तो होगा। कोई ठेस-विश्वास का टूटना, उत्पीड़न... कुछ न कुछ तो कारण होना चाहिए।'

छत पर ठंडी हवा का झोंका हमें कँपा गया। सीढ़ियाँ उतरते हुए अंकल ने कहा, 'एक फ्रेंड को अपाइंटमेंट दे रखा है। वहाँ से लौटकर बातें होंगी।'

'जरूर जाइए, लेकिन मेरे प्रश्न का उत्तर आपके फ्रेंड नहीं हैं। शाम घिर आई है, ठंड भी ज्यादा है। फोन दबाएँ और अपने फ्रेंड का अपाइंटमेंट कैंसिल करें।'

हम अपने ड्राइंगरूम में आ बैठे। चुप्पी छाई रही। चाय का प्याला लेकर कमरे में आई तो देखा, अंकल शून्य को निहार रहे थे। प्याला टेबल पर रखते हुए आहिस्ते से पूछा, 'दिल दुःखा दिया?'

'अरे नहीं, दिल ने इतने जख्म सहे हैं कि दुखते नहीं।'

लगा, मेरा निशाना सटीक बैठा है। चाय पीकर उठने को हुए कि मैंने उनका हाथ पकड़ लिया, 'बैठिए प्लीज!'

'पाली, तुम मुझसे काफी छोटी हो। इन बातों से तुम्हें क्या सरोकार?'

'नहीं चाहते तो मत कहिए। आपने ही तो कहा था—दोस्ती उम्र की मोहताज नहीं होती।'

बाद में उन्होंने जो कुछ सुनाया, उसका संक्षिप्त स्वरूप यह था। उन्हें एक अंतरंग मित्र की तलाश थी। किसी ने उन्हें समझाने की चेष्टा नहीं की। एक बँधे बँधाए ढर्रे में उन्हें जीना पसंद न था। दूसरी वजह यह थी कि अपने माता-पिता की गृहस्थी को खुशहाल नहीं देखा। वे हमेशा एक-दूसरे को ढोते रहे। इसके पीछे भी माँ की महत्त्वाकांक्षाएँ थीं। जिसे पिताजी पूरी करने में असमर्थ थे। एक कारण और था, जिसे स्पष्ट रूप से तो उन्होंने नहीं कहा, लेकिन बातचीत के दौरान मैं ताड़ गई। अपनी जिंदगी में जिसे जीवनसाथी बनाना चाहा था, उसने बेरुखाई से उनका दिल तोड़ डाला।

मेरे खयाल में यह तीसरा कारण ही प्रमुख था, जिसे जानकर मैं भी आहत हुई। अंकल के शब्दों में, 'प्रेम कोई फल नहीं, जिसे वृक्ष से तोड़ लें। प्रेम कोई खरीदने की वस्तु भी नहीं, जिसे बाजार से खरीद लिया जाए। प्रेम की दिव्यता को सिर्फ महसूस किया जा सकता है। जिसके वर्णन में जितने भी शब्द जुटा लिये जाएँ, कम पड़ेंगे।'

परिस्थितियाँ तेजी से बदलने लगीं। मेरी सापेक्षता गहराती गई। हालाँकि उन्हें समझने में अभी भी बहुत कुछ शेष रह गया था। जिन भावनाओं ने मेरे अंदर हलचल सी पैदा कर रखी थी, वैसा कुछ खास अंकल में स्पष्ट रूप से नहीं दिखा था। उस शाम नारी सुलभ चुहल के तहत उनके लौटते ही उनसे फोन माँगा, 'आपका फोन प्लीज। मेरे फोन से पकड़ नहीं रहा।'

फोन सौंपते हुए बिना कुछ कहे अंकल अपने दरवाजे की ओर मुड़े ही थे कि मैंने कहा, 'अंकल, आप भी अजीब हैं, दिन-रात किताबों में! कभी प्रकृति के थ्रिल्स को भी महसूस कर देखें। छत पर कितनी धवल चाँदनी छिटकी है!'

छत पर मैंने अपने क्लासमेट हर्ष का नंबर डायल किया। जान-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूझकर फोन का लाउडस्पीकर ऑन कर दिया, 'हर्ष, कहाँ था आज? क्लास में दिखा नहीं, अच्छे-खासे समय तक बोर हुई।'

बातचीत अनसुनी करने की गरज से अंकल छत की दूसरी ओर चले गए। उनकी निगाहें यूक्लिप्ट्स की लहराती टहनियों पर टिकी थीं। हर्ष के साथ मेरी बातचीत उन्हें भी सुनाई दे रही थी। हमारी बातचीत की उन्मुकता कहीं से उन्हें चुभ उठी, कह बैठे, 'अरे, लाउडस्पीकर ऑफ कर ले। आस-पास की छत तक आवाज फैल रही है।'

(जल उठा बेचारा!)

सुवास कुमार की भावनाओं पर मेरी पकड़ कसने लगी थी।

एक रात अंकल ने फोन पर बतलाया, 'पाली, मुझे लौटने में देर होगी। सीढ़ीघर का दरवाजा बंद कर लेना।'

रात काटे नहीं कट रही थी। विक्की खाना खाकर सो गया। मेरी निगाहें घड़ी पर अटकी रहीं। आठ बज रहे थे। देर का मतलब कितनी देर—एक घंटा, दो घंटे, ज्यादा-से-ज्यादा तीन घंटे। फिर भी ग्यारह बजे तक लौट आना चाहिए। घड़ी की टिक-टिक ठंडी रात में भयावह महसूस हो रही थी। इंतजार करते-करते बोर भी होने लगी थी। खीझ रही थी, ज्यादा देर की तो रहना ठंड में बाहर, दरवाजा ही नहीं खोलूँगी।

ठीक पौने बारह बजे फ्लैट के सामने रिक्शा रुका। देखा, अंकल पैसे चुका रहे थे। अतिरिक्त पैसे देते हुए उन्होंने रिक्शावाले से कहा, 'ये लो पाँच रुपए। चाय पी लेना। बहुत ठंड है।'

रिक्शावाले को अतिरिक्त पैसे देते वक्त ही मैं भाँप गई कि अंकल रिलेक्स मूड में हैं। मन में आया, आज उनसे जी भरकर बातें करूँगी। उनके हृदय के सूक्ष्म कोने तक समा जाऊँगी। उनकी जख्मी भावनाओं पर प्रेम का लेप चढ़ाऊँगी। प्रेम में उन्होंने सिर्फ मन को भागीदार बनाया है। मैं उनके मन को एक आकार दूँगी। यह व्यक्ति जितना जिंदादिल दिखता है, अंदर से है नहीं।

कॉलोनी निस्तब्धता में डूबी हुई। स्ट्रीटलाइट छोड़कर कहीं किसी फ्लैट में रोशनी की एक किरण तक नहीं। कॉलबेल घनघना उठी। बालकनी में आकर आहिस्ते से कहा, 'आई अंकल।'

सीढ़ियाँ चढ़ते हुए अंकल ने कहा, 'सोचा, रात बाहर ही काट लूँ। सुबह लौटूँगा। फिर खयाल आया, लौटने की बात कह चुका हूँ, व्यर्थ इंतजार करोगी।'

'नहीं, मैं तो सो गई थी।' जबकि पलकें पल भर को झपकी तक नहीं थीं।

एक साथ सीढ़ियाँ चढ़ते हम आपस में टकरा जाते। मैं रोमांच से भर उठी। पीठ पर हथेली का हलका सा स्पर्श मिला, 'आगे बढ़ो।' स्पर्श का जादू, मैं चुहल कर बैठी, 'नहीं बढ़ती' और फिक्क से हँस दी। ऊपर आते ही मैंने कहा, 'अंकल, 'नींद तो भाग चुकी है, एक-एक चाय चले।'

लेकिन यह क्या? उन्होंने अपने फ्लैट के ताले में चाबी घुमाई और बड़ी सहजता से 'सो जाओ, गुड नाइट' कहते हुए दरवाजा बंद कर लिया। मेरे उत्तर की प्रतीक्षा नहीं की, मेरी तरफ देखा तक नहीं।

हतप्रभ सी मैं बंद दरवाजे को देखती रह गई। सामने सुवास कुमार का नेमप्लेट—मुँह चिढ़ाता हुआ। इच्छा हुई, नोच डालूँ। कुछ मिनटों तक मैं अपने दरवाजे पर ठगी सी खड़ी रह गई। आक्रोश की आग से तनमन झुलस उठा। स्वयं को सहेजने की चेष्टा की, पर सहेज नहीं पाई।

सुलगती मन:स्थिति में मैंने भी दरवाजा बंद कर लिया। बिस्तर पर कटी डाल की भाँति गिर पड़ी। स्वयं को धिक्कार उठी, क्यों किया इंतजार? कौन होते हैं हमारे? एक पड़ोसी मात्र ही तो! रात भर बाहर ही रहता तो क्या फर्क था!... उनके प्रति क्यों इतना कमजोर होती गई?

भारी अंतर्द्वंद्वों से जूझती रात भर मैं करवटें बदलती रही। ठान लिया, उम्र की खाई को पाटने का प्रयास अब कभी नहीं करूँगी।

उस रात मेरे अवचेतन में एक दूसरी पाली ने जन्म लिया। जिसका स्वरूप मुझसे सर्वथा भिन्न था। आकार लेती दूसरी पाली ने फुफकारा—स्साले तड़पा के न मारा तो कहना।

दूसरी शाम सुवास कुमार का चिर-परिचित सम्मोहन भरा संबोधन सुना, 'पाली!'

मैं नाराज सी किचन में चली गई। विक्की को इशारा किया, 'देखो।' कान दरवाजे पर टिके थे। अंकल मुझे पूछ रहे थे। चेहरे पर बनावटी गंभीरता लिये मैं बाहर आई। नमस्ते भी नहीं कहा। उन्होंने मुझे भाँप लिया। माफी माँगनेवाले अंदाज में कहा, 'सॉरी पाली, रात काम के बोझ से बुरी तरह थका हुआ था, चाहो तो चाय का बकाया चुकता कर सकती हो।' और उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना

मम्मी-पापा लौट आए। छत हो या कारीडोर, मेरा खेल जारी रहा। उन्हें मेरा बदला स्वरूप अबूझ लगा। वे बातें करने को लालायित रहते। मैं कमरे में बंद। कभी पुकारते, पापा को भेज देती। वे छत पर जाते, मैं उतर जाती। सीढ़ी पर मिलते, किनारे हो लेती। रास्ते में दीखते, अनदेखा कर जाती। उनकी दुखती रगों को छेड़कर मुझे प्रसन्नता होने लगी थी। कभी लगता, मेरा यह खेल उचित नहीं। बेचारा सीधा-सादा, दुःखी इनसान है। दूसरे पल मन में विचार आते, इनसान है कि हाड़-मांस का लोथड़ा। संवेदनाएँ हैं कि संवेदनाशून्य। गाँठें इतनी कसी हुई कि खोलने के प्रयास में अंगुलियों की पोरें दुःख जाएँ। कहते हैं, जीवन में जितनी नारियाँ मिलीं, सब की सब मैटरलियस्टिक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकारपूर्वक सोफे पर बैठ गए। टीस कुछ कम हुई तथापि मन में कुछ उमड़ता-घुमड़ता रहा।

'आज की शाम तुम्हारे नाम।'

इच्छा हुई कह दूँ—कोई जरूरत नहीं, पर जुबान नहीं खुली। उनसे निगाहें चुरा रही थी। नजरें टकराईं, मैं परास्त। तटस्थता का नकाब धारण कर लिया, गोया शाम मेरे हवाले करना कोई खास बात न हो। मेरे अंदर के द्वंद्वों को उन्होंने पहचान लिया। मेरी हर बात पर सहमति की मुहर। प्रत्येक शब्द मान-मनौव्वल के भावों से लिपटा हुआ। मेरे चेहरे पर बनावटी उदासी छायी रही। चाय बनाने की गरज से किचन में आ गई। सुवास अकेले पत्रिकाओं को उलटते-पुलटते रहे। चाय लेकर आई तो वे जाने को उठ खड़े हुए थे। शायद उन्होंने सोचा, मैं अंदर चली गई हूँ। स्वयं को लाख मनाने की चेष्टा की, किंतु, 'सो जाओ, गुड नाइट' शब्द बिच्छू के डंक जैसे टीस रहे थे।

उस रात की कसक मिट नहीं पाई। हमारे बीच एक दीवार सी खड़ी होती दिख पड़ी, जिसे मैं ढाहना चाहती, लेकिन मेरे अंदर की दूसरी पाली को यह स्वीकार्य नहीं था। मुझ पर दूसरी पाली हावी होती चली गई। मैंने जाल बुना। उनकी नजरों से स्वयं को बचाने लगी। उनका दरवाजा खुलता, मैं बंद कर लेती।

मम्मी-पापा लौट आए। छत हो या कारीडोर, मेरा खेल जारी रहा। उन्हें मेरा बदला स्वरूप अबूझ लगा। वे बातें करने को लालायित रहते। मैं कमरे में बंद। कभी पुकारते, पापा को भेज देती। वे छत पर जाते, मैं उतर जाती। सीढ़ी पर मिलते, किनारे हो लेती। रास्ते में दीखते, अनदेखा कर जाती। उनकी दुखती रगों को छेड़कर मुझे प्रसन्नता होने लगी थी। कभी लगता, मेरा यह खेल उचित नहीं। बेचारा सीधा-सादा, दुःखी इनसान है। दूसरे पल मन में विचार आते, इनसान है कि हाड़-मांस का लोथड़ा। संवेदनाएँ हैं कि संवेदनाशून्य। गाँठें इतनी कसी हुई कि खोलने के प्रयास में अंगुलियों की पोरें दुःख जाएँ। कहते हैं, जीवन में जितनी नारियाँ मिलीं, सब की सब मैटरलियस्टिक। लेकिन इन्हें क्या पता, अपने द्वारा खींची गई जिस लक्ष्मण रेखा से घिरे रहे, उसकी धधक लड़कियाँ कैसे झेल पाई होंगी।··· अपने प्रेम को कभी व्यक्त नहीं किया होगा। पहेलियाँ कब तक बूझतीं बेचारी। प्रेम के दर्शनशास्त्र का तो अच्छा ज्ञान है, भौतिक शास्त्र भी पढ़ा होता। प्रेम है तो अभिव्यक्ति होनी चाहिए। अनुभूति के साथ आकृति होनी चाहिए। लेकिन सुवास कुमार ?···

अंकल बेचैन दिखने लगे। संवादहीनता के कारण उनकी बेचैनी फोन पर एस.एम.एस. के रूप में उतर आई। संदेश अनुत्तरित रहने के बावजूद नित उनका कोई-न-कोइ लुभावना एस.एम.एस. मेरे फोन पर टँकने लगा। उनकी व्याकुलता मेरे अहं को तुष्ट करती। एक छत के नीचे रहते हुए भी हमारी आँखें नहीं मिल पातीं। ऐसा भी न था कि हमने रिश्ते को विराम दे दिया हो। आँखें न मिल पाने का मलाल मुझे भी था। लेकिन मैं उन्हें समझाना चाहती थी कि उपेक्षा के दंश कितने कष्टदायक होते हैं, जबकि मैं जानती थी, उन्होंने जान-बूझकर ऐसा नहीं किया था।

एक रात उनका एस.एम.एस. मिला, 'टीयर्स केन समटाइम्स बी मोर स्पेशल दैन स्माइल्स, फॉर स्माइल्स केन बी गिवन टू एनीवन बट टीयर्स आर ऑनली शेड फॉर पिपल वी लव।'

मैं खुश हो उठी। मेरी अंगुलियाँ उत्तर के लिए फोन पर टिपटिपाने लगीं। फिर कुछ सोच उन्हें मिटा दिया। नहीं, अभी उत्तर देने का सही वक्त नहीं आया है।

मैं छत पर आ गई। चारों ओर अँधेरा और सन्नाटा पसरा था। छत पर अंकल के कपड़े सूख रहे थे। यों कहें, सूख चुके थे, जिन्हें वे उतारना भूल गए। उन कपड़ों को मैंने सूँघा, सहलाया। सहलाते-सहलाते उन्हें अपने सीने में भींच लिया। बेतहाशा चूमने लगी। शर्ट की बाँहें अपने गले में लपेट लीं। आँखें बंद कर अपनी दोनों बाँहें कस लीं। गोया सुवास कुमार मेरे सीने से चिपक गए हों।

दूसरी पाली ने तंद्रा तोड़ी, 'पागल लड़की!··· इतनी जल्द हार मान ली ?'

पिछले कई दिनों से महसूस कर रही थी, वे कुछ कहना चाहते हैं, पर क्या ? यही न कि दोस्ती में इतना रूखापन क्यों आया ? मेरी जख्मों को हरा क्यों किया ? यदि किया तो यह बदलाव क्यों ?···मैं उनके कॉल्स रिसीव ही नहीं करती।

उस दिन कॉरीडोर में खड़ी थी। उदासी भरा स्वर कानों से टकराया, 'पाली कैसी हो ? काफी बदल गई, गुस्साई हो ?'

'नहीं तो।'

'दिखती नहीं। कॉल्स नॉट आन्सर्ड रह जाता है। एस.एम.एस. का जवाब तक नहीं।'

मैं कॉरीडोर से हटकर अपने दरवाजे की ओर मुड़ गई।

'कुछ कहना चाहता था, साहस नहीं जुटा पाया।'

'क्या ?'

'आई लव यू पाली, आई लव यू!' उनका चेहरा निरीह हो उठा। वे कुछ और भी कहना चाहते थे, पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त किए बिना मैंने आहिस्ते से अपना दरवाजा बंद कर लिया। दरवाजा बंद करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वक्त कनखियों से देखा, अंकल का चेहरा भयभीत हो उठा था। उन्हें लगा, मैंने अन्यथा ले लिया है, जबकि मेरे अंदर ध्वनित हुआ, 'इतनी देर क्यों की कहने में, क्यों तरसाते रहे आज तक?'

भावनाओं के रंग-बिरंगे फूल झरने लगे। उन्हें बाँहों में भरकर हवा में उछालना चाहती—फूलों का झरना उतना ही तेज हो उठा। कुछ ही मिनटों में लगा, इन रंग-बिरंगे भावपुष्पों के नीचे आपादमस्तक दब सी गई हूँ। आईने के समक्ष अंग-अंग में थिरकन आ समाई है।

मेरी खुशियाँ किसी रिमोट के तहत पलक झपकते गायब हो गईं। देखा, सामने दूसरी पाली कुटिल मुसकान लिये खड़ी है। पुष्पशय्या से बेरहमी के साथ खींचते हुए मुझे ललकारा, 'तू क्यों खुश हो रही है? जीत तुम्हारी नहीं, मेरी हुई है।' एक जोरदार अट्टहास लगाते हुए उसने आगे कहा, 'अभी कहाँ!···खेल का उत्तरार्द्ध तो अभी बाकी है।'

लोकाचार से भयभीत हो उठे अंकल के चेहरे की दयनीयता पर मैं पसीज उठी। इच्छा हुई, दरवाजा खोलकर उन्मुक्ता के साथ उत्तर दे डालूँ, 'आई टू लव यू डियर अंकल।' पर दूसरी पाली ने पुनः मेरा हाथ दरवाजे के हैंडिल से खींच लिया, 'बंद रहने दे, डरने दे।'

सुवास कुमार भयभीत रहने लगे। इस उम्र में प्रेम का रोग! कहीं पोल खुल गई तो?

नहीं ऐसे खराब शॉट खेलकर खेल का मजा किरकिरा नहीं करना है।

मेरा स्वरचित खेल पूरी तरह एकतरफा था। लक्ष्यविहीन। यदि मेरा लक्ष्य सुवास कुमार को परास्त करने का था, तो वे पराजित हो चुके थे। कुछ ही दिनों में वे थके-थके से दिखने लगे। अधिकांश समय बाहर ही बिताते। पूर्व की भाँति उनका दरवाजा कब खुलता, कब बंद होता—पता ही नहीं चलता। मुझे दुःख भी था। किंतु इस खेल में दूसरी पाली की भागीदारी थी। मैं विराम देना चाहती और वह कहती, 'बस-बस, एक करारा गोल और दागना है। बाजी तुम्हारी झोली में। फिर आम खेलों की भाँति हाथ मिला लेना।'

एक दिन फिर उन्हीं सीढ़ियों पर हम आमने-सामने थे, जहाँ पहली दफा सुवास कुमार को देखा था। मैं बाहर जा रही थी, वे अंदर आ रहे थे। सीढ़ीघर था एकांत। शरीर सिकोड़ती हुई बाहर निकलना ही चाह रही थी कि सहसा ठिठक गई। तब वीणा के तार बज उठे थे, आज शांत झील में पत्थर का एक टुकड़ा आ गिरा था।

'एक्सक्यूज मी।'

मैं सहम गई।

'मुझे अपनी भूल के लिए पश्चात्ताप है।'

बदला संबोधन, बदला स्वर।

'अनजाने में मैंने आपके दिल को ठेस पहुँचाई, इसका गहरा दुःख है।'

उनके शब्द अटक रहे थे।

'अपने अंदर उठ आए चक्रवात में संतुलन खो बैठा था। कैसी तृष्णा है—कितना हास्यास्पद कि एक पचपन वर्ष का आदमी अपनी बेटी की उम्र की लड़की को संपूर्णता के साथ प्यार करने लग जाए! घुटन··· प्यास···अभिव्यक्ति का बंधन। लेकिन यह सच है।'

मैं पलकें नीची की हुई सुनती रही।

'प्रेम की जो भी परिभाषा हो, मैं इसे चैतन्य मानता आया हूँ। हृदय पर किसी का वश नहीं। वह कब किस पर आ जाएगा, कहना कठिन है। इसे उम्र और रिश्तों के दायरे में भी नहीं बाँधा जा सकता। कोई गुनाह नहीं है यह। बुराई प्रेम में नहीं, अपनी सोच में होती है।'

अंकल के स्वर में कंपन तीव्र हो उठा। मेरी सुनने की क्षमता चूकती नजर आई। किसी ग्रंथि के शिकंजे में मैं कस उठी। ग्रंथि लज्जा की थी या नारी सुलभ नकारात्मकता की, अथवा दहकते दर्प की—मेरी समझ से परे थी। दूसरी पाली पुनः सामने आ खड़ी हुई। ललकारा, 'देखती क्या है, मार अंतिम और करारा गोल!'

और मैं चीख पड़ी, 'एनफ!···आई डॉण्ट वांट टू लिसन यू···डॉण्ट ट्राई टू टॉक ऐनी मोर प्लीज!'

उफ! यह मैंने क्या कह डाला!

सुवास सकते में आ गए। ऐसी प्रतिक्रिया की उन्होंने कल्पना भी न की होगी। चेहरा स्याह हो उठा। पलकें झुका लीं। रेलिंग थामे आहिस्ते-आहिस्ते सीढ़ियाँ चढ़ने लगे।

यह सीढ़ीघर हमारी भावनाओं का जन्मस्थल था। सीढ़ियों ने कभी हमारे लिए मंजुल गीत गाए थे। आज एक-एक सीढ़ी मुझे दुत्कारती नजर आई।

सप्ताह भी न बीता। खिड़की से देखा, फ्लैट के सामने ठेला पर घरेलू सामान लादे जा रहे थे। मैं चौंक पड़ी। अंकल जा रहे हैं? नहीं-नहीं, मैं ऐसा नहीं होने दूँगी।···खेल में मैं जीतना भर चाहती थी। जीत भी गई। अब हाथ मिलाने की बारी थी। लेकिन दूसरा पक्ष वाक आउट कर चला है!···चाहा रोक लूँ, पर सबकुछ इतना अचानक था कि कुछ नहीं कर पाई। अगल-बगल के लोग भी चकित थे।

कहीं पढ़ा था, प्रेम एक गठरी प्यास है और एक गठरी दुःख भी। प्यास की गठरी मेरे पास छोड़ दुःख की गठरी लिये सुवास ओझल हो गए।

निस्तेज कदमों से बाहर आई। शाम का धुँधलापन। अँधेरा नहीं घिरा था। कॉरीडोर में पसरा खौफनाक सन्नाटा। सन्नाटे को चीरती झींगुरों की डरावनी आवाज।···सुदूर समवेत् स्वर में भौंकते सियार।···उदासी के रंग से पुती दीवारें।···नेमप्लेट की खाली जगह—सबकुछ विद्रूपता के साथ मेरा उपहास करते नजर आए। मैं काँप उठी। लगा नेमप्लेट दरवाजे से हटकर मेरे जख्मी हृदय के बीचोबीच आ टँगा है—'सुवास कुमार'।

विलुप्त सी होती चेतना कराह उठती है, 'आप लौट आओ अंकल!'

सागर लहर, बंपास टाउन
देवघर-८१४११४
(झारखंड)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आलेख

हिंदी और विद्यानिवासजी की स्मृति

● रत्नेश विष्वक्सेन

हिंदी से संबद्ध कोई भी संदर्भ हो, विद्यानिवास मिश्रजी की स्मृति अनायास साकार होने लगती है। अपनी रचनात्मक यात्रा में मिश्रजी हिंदी के बिरवे को लगातार सींचते रहे और उसकी उपेक्षा पर आहत भी होते रहे। भाषाविद् मिश्रजी ने हिंदी पर बहुत लिखा, उसके पक्ष में खड़े होकर साधनारत रहे, पर तड़प और कचोट से आक्रांत ज्यादा हुए, प्रोत्साहित कम। कुछ निबंधों के शीर्षक, यथा—बेघर हिंदी, अहिंदी दिवसी, हिंदी का नाम न लें, स्वाधीनता युग के कठघरे में हिंदी, आज तो हिंदी अपनों ही से हारी है, राष्ट्रभाषा की समस्या, हिंदी का विभाजन, हिंदी बनाम राजनीति को देखने से उनके संकटग्रस्त होने का पता चलता है। 'अहिंदी दिवस' निबंध में उन्होंने बड़ी यातना के साथ विस्मयादिसूचक संबोधन में लिखा—"काश! १४ सितंबर न आता। हिंदी दिवस के नाटक देखने-सुनने की घटना झेलनी नहीं पड़ती। वास्तविकता तो यही है कि यह हिंदी दिवस नहीं है। हिंदी-प्रेमियों को दुख पहुँचाने वाला दिवस है।" यह बात क्यों लिखनी पड़ी। जाहिर है, बहुत पीड़ा में रहते हुए ही कोई ऐसी बात लिख सकता है। सरकारी रस्म अदायगी हिंदी को विकसित होने का अवसर दे, इसकी संभावना शायद संदिग्ध है। दूसरी बात यह कि अंग्रेजी की मानसिकता में धँसा मध्यवर्गीय, हिंदी भाषी अस्तित्व रही-सही कसर पूरी करता है। कुछ खीझ और कोफ्त में भरकर इस मानसिकता पर प्रहार करते हुए लिखा—"प्लासी युद्ध में भारत की पराजय का दिवस भी मनाना शुरू करेगा। क्लाइव, वॉरेन हेस्टिंग्स, डलहौजी, कर्जन की जयंती भी मनाना शुरू करेगा।... तब तक हम इतना ही कर सकते हैं कि हिंदी दिवस को अहिंदी दिवस के रूप में मनाएँ और यही चेताएँ कि हिंदी इस तरह कभी नहीं विकसित होगी।" संकेत है राजभाषा दिवस का, जो कम-से-कम राष्ट्रभाषा, संपर्क भाषा और हिंदी भाषा के अन्य रूपों के विकास का विकल्प शायद नहीं बन सकता। हिंदी को वैकल्पिक बनाकर कितनी दूर तक हम ले जाएँगे। हिंदी की ताकत उसकी सर्वसुलभता और सर्वप्रियता है। हिंदी की अपनी प्रकृति समावेशी रही है। आत्मसात् करने की क्षमता हिंदी की अन्यतम विशेषता है। इसकी तसदीक विद्यानिवासजी 'हिंदी का नाम न लें' में करते हैं कि 'हिंदी शायद ऐसे ही लौटे। अनुरोध की भाषा वह कभी नहीं रही, प्रतिरोध की भाषा रही है। वह अपनी भूमिका अपने आप तलाश लेगी।'

मिश्रजी ने अपनी रचनाधर्मिता के प्रत्येक आवेश में हिंदी को महसूस किया है, उसके आवेग को पहचाना है, प्रत्येक स्पंदन को अपने हृत्तंत्री से जोड़ा है। हिंदीवालों ने हिंदी को जो पीठ दगाबाजी की हद तक दी है, उसपर मिश्रजी की नाराजगी थोड़ी गंभीर किस्म की है। वे लिखते हैं—'हम हिंदीवाले यह क्यों नहीं सोचते कि हमने अपना आवेग खोकर अपनी निष्ठा को असुरक्षित कर दिया है। विशेष रूप से सच की निष्ठा तभी तक सुरक्षित रहती है, जब तक उसके लिए आवेश रहता है। नदी तभी तक तरणतारिणी होती है, जब तक उसमें तेज धार होती है।" सच ही है कि कोई भाषा राजकीय सम्मान से ही आगे नहीं बढ़ती है, उसके लिए उसके लोगों की निष्ठा अनिवार्य है। हिंदीवालों की निष्ठाहीनता ने या यों कहें कि आरोपित निष्ठुरता ने हिंदी को पिछड़ा, अनुपयोगी बनाकर विज्ञापित किया है। इस राजभाषा दिवस की किसी भी रस्मी कोशिशों से मिश्रजी को नाराजगी है। उन्हें पीड़ा होती है। 'स्वाधीनता युग के कठघरे में खड़ी हिंदी' में लिखते हैं कि—"हिंदी की यह विनय हिंदी के हीन भाव के कारण नहीं है। अब वह समय आ गया है, जब हिंदी की संतानों को क्षमा-प्रार्थना के स्वर में नहीं, सत्य स्थापना के स्वर में यह दृढ़तापूर्वक कहना चाहिए कि राजभाषा होने के लिए हिंदी अब अपने को अपमानजनक शर्तों पर बेचने को तैयार नहीं है। राज-भाषा का पद हिंदी के लिए बहुत छोटा पद है।"

सच तो यह है कि हिंदी विकल्प की भाषा बना दी गई है और

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नई पीढ़ी के पास समय कम है और विवशता ज्यादा है। संकल्प क्षत है और विकल्प बहुत सारा। परिणाम यह होता है कि हिंदी बेघर होने के लिए अभिशप्त है। विद्यानिवासजी पीड़ित तो हैं, पर आशान्वित भी। अनुकंपा नहीं चाहते हैं। हिंदी को कृपाजीवी नहीं बनाना चाहते, क्योंकि उन्हें हिंदी और उसके स्वाभिमान पर दृढ़ प्रत्यय है। लिखते भी हैं—''हिंदी के पास जो भी विरासत है, वह स्वतंत्रता के आत्मसम्मान की विरासत है, स्वदेशी की विरासत है, और अहिंसा की विरासत है।

सारे सरकारी मध्यवर्गीय मानस का संकल्प अंग्रेजी के साथ खड़ा है। भाषा के कुरुक्षेत्र में हिंदी के पांडवों की लड़ाई अंग्रेजी के अपने कौरवों से है। हिंदी निर्वासित और बेघर है। बेघर हिंदी में लिखते हैं—''हिंदी पहले भी बेघर थी, आज भी बेघर है। पहले बेघर होने में शान थी, उसकी फकीरी ठाट थी। उसके पास मँगनी का साज नहीं था। आज मँगनी के साज ऊपर से नीचे तक शोभा बढ़ा रहे हैं और फकीरी तो जाने सपने की बात हो गई। घर फूँक सेवा करनेवाली पीढ़ी विदा हो गई। अब जो पीढ़ी पनप रही है, वह या तो राज्य पर आश्रित है या आश्रित नहीं है।'' हिंदी को लेकर सेवा भाव निरंतर क्षरित हो रहा है। नई पीढ़ी के पास समय कम है और विवशता ज्यादा है। संकल्प क्षत है और विकल्प बहुत सारा। परिणाम यह होता है कि हिंदी बेघर होने के लिए अभिशप्त है। विद्यानिवासजी पीड़ित तो हैं, पर आशान्वित भी। अनुकंपा नहीं चाहते हैं। हिंदी को कृपाजीवी नहीं बनाना चाहते, क्योंकि उन्हें हिंदी और उसके स्वाभिमान पर दृढ़ प्रत्यय है। लिखते भी हैं—''हिंदी के पास जो भी विरासत है, वह स्वतंत्रता के आत्मसम्मान की विरासत है, स्वदेशी की विरासत है, और अहिंसा की विरासत है। हिंदी विवश है कि प्रतीक्षा करे, प्रतीक्षा के साथ-साथ बड़े पैमाने पर अहिंसात्मक आंदोलन शुरू करे। उसकी तैयारी करे। हिंदी को अनुकंपा का घर नहीं चाहिए, हिंदी को स्वाभिमान की नींव पर खड़ी कुटिया से ही संतोष है।''

इस वक्तव्य में यह प्रतीत होता है कि विद्यानिवास मिश्रजी को हिंदी पर, उसकी विरासत और सबसे बढ़कर उसके स्वाभिमान पर पूरा भरोसा है और हो भी क्यों न, क्योंकि जहाँ संकल्प होता है, वहाँ आशा होती है, उत्साह होता है, प्रक्रिया में निरंतर निरत साधना का ढाढ़स होता है। हिंदी के राज भाषा पद पर प्रश्नचिह्न लगाते हैं? और राज भाषा के इर्द-गिर्द केंद्रित राजकीय आयोजनों, रस्मों की सहानुभूति पर विश्वास नहीं कर पाते हैं। उनका सीधा कहना है कि भावों की भाषा हिंदी को सम्मान करने से ज्यादा जरूरी उसके उपयोग से सिद्ध करें। 'जिसकी जमीन है विश्व भी उसका है' में उनकी यह अपेक्षा कितनी सारगर्भित है, ''इसलिए आप अपनी भाषा का प्रयोग कीजिए। आपकी जुबान में जो बात आती है, अगर कुछ शब्द नहीं आते हैं, किसी शब्द का प्रयोग कीजिए, भाव से प्रकट हो जाएगा—आप क्या कहना चाहते हैं। उससे जो हिंदी का विकास होगा, वह सही होगा। हिंदी शब्दों से नहीं बनेगी, हिंदी प्रयोग से बनेगी और जीवन में आप जितना ही विस्तृत प्रयोग करेंगे, हृदय से प्रयोग करेंगे, हिंदी का उतना ही विकास होगा।'' भाव यह कि हिंदी का प्रयोग, उपयोग ही उसका सबसे बड़ा सम्मान है। हिंदी को लेकर गर्व होना जरूरी है, तभी यह संभव हो पाएगा कि राष्ट्र और उसकी अस्मिता निरंतर बढ़ती रहेगी। वर्तमान समय व्यापार और बाजार का है। हिंदी उपयोगिता की सारी अपेक्षाओं पर खरी उतरी है और यह अपनी भीतरी शक्ति के सहारे खरी उतरती भी रहेगी। आवश्यकता बस इस बात की है कि हमें अपने जीवन में उसे जगह देनी होगी। हृदय के संवाद के रूप में उसे स्वीकारना होगा। १४ सितंबर को जब रस्मों की दौड़ में, आयोजनों की भीड़ में, शासन के शृंगारों में, भाषण के सम्मानों में हिंदी का राजकीय स्वरूप स्थान पाएगा तो एक कचोट दिल में रहेगी कि इस भव्य आयोजन के बीत जाने के बाद क्या होगा? ठीक इसी समय प्रत्येक सहृदय, हिंदी प्रेमी, हिंदी-सेवी को हिंदी की बात पर विद्यानिवासजी की याद बरबस चली आएगी और यह याद हमें टटोलेगी तथा हिंदी की राह में अंगुली पकड़कर थपका देगी।

हिंदी विभाग
राँची कॉलेज, राँची
झारखंड

इस अंक की चित्रकार

भावना पाल

जन्म : २२ अगस्त, १९८१।
एम.बी.ए. एवं एम.कॉम.।
अध्यापन (प्राध्यापिका)।
चित्रकारी एवं लेखन।

संपर्क : मकान नं. १०६१, सेक्टर-३, आर.के. पुरम, नई दिल्ली-११००२२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

भाषा, उत्तरसंस्कृति और संचारभाषा हिंदी

● अवधेश नारायण मिश्र

भाषा मनुष्य की संवेदना और उसके चैतन्य के बीच का सेतु है। किसी समाज की निजी शक्ति की परख उसकी भाषाई क्षमता और संस्कृति से होती है। मनुष्य विश्व के क्रियाकलापों को आत्मसात् कर अपनी चिंतनशक्ति से जीवन के जिन रचनापरक औदात्य को समाज के लिए मानक रूप में प्रस्तुत करता है, वे ही धीरे-धीरे संकलित होकर उसकी संस्कृति का सृजन करते हैं। इस प्रकार संस्कृति लोगों के अर्जित आचार-विचारों की एक व्यवस्था है। इन्हीं आचार-विचारों को सुरक्षित रखने तथा प्रकट करने का काम भाषा करती है। भाषा एक माध्यम है, जिसके जरिए लोग अपनी बातें एक-दूसरे तक संप्रेषित करते हैं, विचारों का आदान-प्रदान करते हैं तथा परस्पर समझ विकसित करते हैं। चिंतन-प्रक्रिया से प्रत्यक्ष संबंधित होने के कारण भाषा चिंतन के परिणामों और ज्ञानात्मक सक्रियता की उपलब्धियों को एकत्र करती है, उन्हें शाब्दिक आधार प्रदान करती है, शब्दों को वाक्यों में पिरोती है, संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदनों को अभिव्यक्ति की गरिमा प्रदान करती है।

संस्कृति यदि चित्तभूमि की खेती है तो भाषा उसकी बालियाँ। प्रत्येक संस्कृति का सारतत्व उसकी भाषा में अभिव्यक्त होता है। भाषा के बिना संस्कृति पंगु है और संस्कृति के बिना भाषा अंधी। भाषा अपनी इस भूमिका में संस्कृति से किस प्रकार का संबंध रखती है, यह अहम प्रश्न है। इसका समाधान पाने के लिए हम समाजवादी दृष्टिकोण को एक प्रविधि के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं, जहाँ मूलाधार (Basis) तथा अधिरचना (Superstructure) के मध्य नितांत वैज्ञानिक तथा उत्पाद्य उत्पादक संबंध पूर्वस्वीकृत हैं। इस दर्शन के अनुसार समाज का मूलाधार उसका आर्थिक ढाँचा होता है, जिसके प्रतिफलन के रूप में कानून, धर्म, कला, दर्शन और राजनीति से संबद्ध संस्थाएँ होती हैं। इस आर्थिक ढाँचे को यदि सामंती समाज के संदर्भ में देखें तो उसकी अधिरचना को तत्कालीन समाज की कानून-व्यवस्था, धर्म-व्यवस्था, दार्शनिक प्रणाली और राजनीतिक संस्था के रूप में देखना होगा। फिर पूँजीवादी मूलाधार की अलग अधिरचना दिखाई पड़ेगी। इसी तरह समाजवादी मूलाधार की अधिरचना, पूँजीवादी और सामंतवादी मूलाधार वाली अधिरचना से बिल्कुल नई होगी। वस्तुतः मूलाधार और अधिरचना के संबंध को समझे बिना व्यवस्था के नवनिर्माण का अर्थ नहीं समझा जा सकता।

यहाँ इस बात को स्पष्ट करना जरूरी है कि समाजवादी दर्शन के अनुसार समाज व्यवस्था में अधिरचना की भूमिका बहुत सक्रिय होती है। मूलाधार के बदलते ही अधिरचना भी तदनुरूप स्वयं को ढालने के लिए आत्मसंभवा शक्ति बन जाती है और पुराने मूलाधार के अवशेषों को तोड़ने और पुरानी अधिरचना को विस्थापित करने में जुट जाती है। एक ऐसी अधिरचना की कल्पना निर्मूल है, जो मूलाधार की सहायिका न हो और सभी वर्गों के प्रति समान व्यवहार वाली हो। यह अधिरचना की प्रकृति के विपरीत है।

भाषा के संदर्भ में उपर्युक्त सिद्धांत लागू नहीं होता, क्योंकि भाषा की प्रकृति वैसी नहीं होती, जैसी अधिरचना की। सच यह है कि मूलाधार में परिवर्तन से भाषा के व्याकरण और बुनियादी रूप में कोई अंतर नहीं आता। हाँ, भाषा में कुछ नए शब्द आ जाते हैं, अभिव्यक्ति का तौर-तरीका बदल जाता है। कुछ शब्द चलन से हट जाते हैं और कुछ का अर्थ बदल जाता है। यह बदलाव दूसरे कारणों से भी हो सकता है। कारण, भाषा पूरे समाज की निर्मिति है। वह विशेष समाज समूह के पक्ष में कुछ नहीं करती। लोगों के बीच परस्पर संपर्क के साधन के रूप में भाषा की क्रियात्मक भूमिका है। भाषा दूसरे वर्गों को क्षति पहुँचाकर किसी एक वर्ग की सेवा नहीं करती, बल्कि समान रूप से पूरे समाज की, उसके सभी वर्गों की एकसमान सेवा करती है। इस प्रकार अधिरचना का वर्ग-चरित्र होता है, जबकि भाषा वर्गों से परे है।

भाषा अपनी कार्यकारी भूमिका में मनुष्यमात्र के संपर्क साधन के रूप में व्यवहृत होती है। इसके कारण वह प्रत्येक परिवर्तन के प्रति संवेदनशील होती है और प्रत्येक स्तर पर ग्रहणशीलता का परिचय देती है। भाषाएँ अतीत के लंबे अंतराल में विकसित होती हैं। इस लंबे अंतराल में गोत्र भाषाओं से जातीय भाषाएँ, जातीय भाषाओं से राष्ट्रीय भाषाएँ और फिर राष्ट्रभाषा तक अनुवर्ती विकास का क्रम चलता है। इस क्रम में प्रत्येक स्तर पर भाषा का स्वभाव समाज के हर सदस्य के साथ एक जैसा होता है। अतः राष्ट्रभाषा राष्ट्र के प्रत्यके सदस्य के बीच प्रथमतः संपर्क सूत्र का काम करती है, वह सामान्य भाषा होती है, न कि वर्ग भाषा। कुलीनभाषा या जनभाषा का व्यवहार समाज में विविध वर्गों में बोली जानेवाली भाषा के आधार पर साहित्यालोचन में भले चलता हो, लेकिन यह भाषावैज्ञानिक यथार्थ नहीं है। इस संबंध में मार्क्स को भी अकसर गलत ढंग से उद्धृत किया गया है और आज भी यह बात प्रचलन में है कि वे राष्ट्रभाषा जैसी चीज को नकारते थे और भाषा की वर्गीयता को प्रश्रय देते थे। ईमानदारी का तकाजा यह है कि मार्क्स को उद्धृत करते हुए उनके उद्धरण का उत्तर पक्ष भी प्रस्तुत किया जाना चाहिए, जहाँ उन्होंने साफ-साफ कहा है कि वर्ग भाषाओं का सांद्रीकरण (कंसन्ट्रेशन) एक अकेली राष्ट्रीय भाषा के रूप में आर्थिक, राजनीति सांद्रीकरण के परिणामस्वरूप होता है। इसके अतिरिक्त मार्क्स एकमात्र राष्ट्रीय भाषा की आवश्यकता को भी स्वीकरते हैं, जो एक उच्चतर स्वरूप की तरह हो और निम्नतर स्वरूप में जिसकी सहायिका वर्ग उपभाषाएँ हों।

भाषा को वर्ग चरित्र से जोड़ने का मतलब है कि हम उसे अधिरचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के रूप में ग्रहण कर रहे हैं। ऐसा मानने के मूल में वर्ग-संघर्ष का अर्थ सामाजिक विघटन समझना और वर्ग व्याकरण के निर्माण की प्रतीक्षा करना है। ऐसी समझ रखनेवाले को ट्रोग्लो डायट्स कहा गया है। ये विचार भाषा और व्याकरण के नियमों के प्रतिकूल हैं और इनकी कोई उपादेयता नहीं है। समाज का विघटन और वर्ग संघर्ष अलग-अलग चीजें हैं। वर्ग-संघर्ष का यह अर्थ नहीं कि उसकी मौजूदगी में समाज का आभिजात्य वर्ग और श्रमिक वर्ग एक-दूसरे से आर्थिक रूप से जुड़ा हुआ नहीं है। पूँजीवादी समाज में भी पूँजीवादी और सर्वहारा एक अर्थसूत्र से बँधे होते हैं। दोनों वर्ग परस्पर आश्रित हैं, चाहे वर्ग संघर्ष अति के स्तर तक भी पहुँच गया हो। यह संघर्ष दो संस्कृतियों का निर्माण तो करता है, किंतु इसका आशय यह नहीं कि दो संस्कृतियों की अलग-अलग भाषा होगी। ऐसा मान लेना भाषा को शब्द-भंडार भर मान लेने जितना सीमित होगा। भाषा कुलीन और श्रमिक संस्कृतियों के बीच सामान्य व्यवहार करती है। डायलेक्ट और जार्गन का अस्तित्व भाषा के इस गुण का विरोधी नहीं है। ये सामान्य भाषा की सहायिकाएँ हैं।

भाषा का प्रकार्य विचार विनिमय को संभव बनाना है। भाषा एक आधार है, जो समाज के अस्तित्व के साथ अस्तित्व में आती है और उसके नष्ट होने के साथ ही नष्ट होती है। यह समाज के निर्माण और विकास के साथ ही निर्मित और विकसित होती है; समाज से अलग कोई भाषा नहीं होती। इसीलिए भाषा और उसके विकास के नियमों को तभी समझा जा सकता है, जबकि इनका अध्ययन इनसे अवियोज्य रूप से जुड़े, समाज के इतिहास के साथ किया जाए; उस जनता के इतिहास के साथ किया जाए, जिसकी वह भाषा है और जो इसकी निर्मात्री और धारक है। भाषा के माध्यम से समाज सृजनात्मक सक्रियता का लक्ष्य निश्चित कर पाता है। इसके बिना वह विघटित हो जाता है। अत: भाषा समाज के विकास और संघर्ष की वाहिका है।

भाषा में व्याकरण की भूमिका यह है कि मनुष्य इसी के जरिए विचारों को भौतिक अर्थ दे पाता है। इसका कारण यह है कि व्याकरण वाक्य रचना के नियमों का संयोजन करता है। ये नियम मानव मस्तिष्क में अनवरत घटित हो रहे अमूर्तिकरण के प्रतिफल होते हैं। भाषा और व्याकरण के मूल शब्द-भंडार के साथ भाषा की एक छवि बनती है। यह छवि सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ शब्द-भंडार में होनेवाले परिवर्तन के लिए आधार का कार्य करती है। इस विवेचन से एक तो यह स्पष्ट होता है कि भाषा अर्थव्यवस्था की अधिरचना से पृथक् एक अत्यंत टिकाऊ संरचना है, जो समाज के सभी वर्गों में समान रूप से प्रचलित है। दूसरी बात यह कि एक भाषा की विकास यात्रा राष्ट्रभाषा तक संभव है, जहाँ पहुँचकर वह अपना उच्चतर स्वरूप अर्जित करती है। भाषा के इस समाजवादी दर्शन के साथ यह भ्रांति नहीं जुड़नी चाहिए कि संस्कृति या प्रतिसंस्कृति से भाषा की संरचना एकदम मुक्त है। हाँ, हम भाषा को अधिरचना के रूप में ग्रहण नहीं करते हैं, मगर अधिरचनाएँ भाषा को प्रभावित तो करती ही हैं। अपने विवेचन में, हमने भाषा में शब्दों की आवाजाही का जो उल्लेख किया है, ऐसा प्राय: अधिरचनाओं के कारण होता है। हम एक भाषिक यात्रा के विवेचन में अधिरचनाओं को ओझल नहीं कर सकते।

हम हिंदी के संदर्भ से उपर्युक्त विवेचन को और आगे बढ़ा सकते हैं। जिस हिंदी का प्रयोग हम आज कर रहे हैं, उसका आरंभ अधिक-से-अधिक दो सौ वर्ष पूर्व से माना जा सकता है। कल की लंबी शृंखला में भारतेंदु के कुछ पहले हम इसका प्रस्थान बिंदु मान सकते हैं। इस बिंदु पर कई समाज सुधारक हिंदी के प्रयोग का अनुष्ठान करते देखे जा सकते हैं। संस्कृत के मूर्धन्य लेखकों में हिंदी के प्रति आसक्ति घनीभूत होती है। 'शिवराज विजयम्' के रचियता अंबिकादत्त व्यास जैसे विद्वानों की एक पंक्ति हिंदी के पक्ष में खड़ी होती है। प्रचुर मात्रा में दूसरी भाषाओं की किताबों का अनुवाद हिंदी में किया जाता है। डॉक्टर रामविलास शर्मा ने भारतेंदु पर लिखते हुए हिंदी भाषा के उद्भव और विकास पर वैज्ञानिक ढंग से प्रकाश डाला है। निस्संदेह उन्नीसवीं शताब्दी में हिंदी जातीय भाषा के रूप में विकसित हुई। इस भाषा ने अपनी संरचना अर्जित कर ली।

जातीय भाषा के रूप में हिंदी के उत्थान का क्रम बीसवीं शताब्दी के शुरू होते ही नई गरिमा प्राप्त करता है। भारतेंदु की 'निज भाषा' (हिंदी) ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध संग्राम लड़ने वाली के मन-मस्तिष्क में 'राष्ट्रभाषा' के रूप में प्रतिष्ठित हो जाती है। तब ब्रिटिश साम्राज्यवाद से युद्ध करते हुए देश ने 'राष्ट्रभाषा' के रूप में हिंदी को लक्षित किया। सन् १९०९ में गांधी ने 'हिंद स्वराज' में लिखा, 'हर पढ़े-लिखे हिंदुस्तानी को अपनी भाषा का, हिंदू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को फारसी का और सबको हिंदी का ज्ञान होना चाहिए। उत्तरी और पश्चिमी हिंदुस्तान के लोगों को तमिल सीखनी चाहिए। सारे हिंदुस्तान के लिए जो भाषा चाहिए, वह तो हिंदी ही होनी चाहिए।' स्वतंत्रता आंदोलन के पूरे दौर में हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' के रूप में संबोधित किया गया। इस दौरान कुछ विवाद हिंदी के स्वरूप को लेकर अवश्य उठा, पर राष्ट्रभाषा की संकल्पना के साथ हिंदी विकसित होती रही। उसकी व्याकरणिक संरचना और ठोस हुई तथा भाषिक चेतना में राष्ट्रीय-संस्कृति का स्वर अनुगुंजित हुआ। यहाँ यह उल्लेख्य है कि गांधी की किताब 'हिंद स्वराज' वस्तुत: सभ्यता समीक्षा की किताब है। इसमें उन्होंने भाषाओं को भी विभिन्न सभ्यताओं के साथ विकसित माना है। हिंदी को उन्होंने 'राष्ट्रभाषा' मानते हुए व्यवहार से अंग्रेजी को निकालने का उपाय बताया है।

स्वातंत्र्योत्तर भारत भाषा के संदर्भ में 'हिंदी की नई-नई अर्थच्छवियाँ, निर्मित हुईं। राजभाषा के रूप में हिंदी, राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी, संपर्क भाषा हिंदी—इन अर्थच्छवियों के तीन शिखर हैं। इनमें संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का स्वरूप प्रमुख है। संपर्क भाषा दो या दो से अधिक भाषाओं का रसायन है। यह विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच परस्पर आदान-प्रदान की संप्रेषण शक्ति से संवलित होकर सहायक या पूरक भाषा के रूप में समझौते की भाषा होती है। भावों और विचारों के आदान-प्रदान के लिए यह विचार विनिमय या संपर्क की भाषा का एक खास रूप ले लेती है। इसमें गृहीत भाषा और ग्राहिका भाषा की संरचनागत भंगिमाएँ एकीकृत हो जाती हैं। इस प्रकार 'संपर्क भाषा हिंदी' की संरचना एवं दायित्व को समझा जा सकता है।

मुख्य प्रश्न यह है कि स्वातंत्र्योत्तर भारत की आर्थिक संरचना और तज्जन्य अधिरचना की ऐसी क्या विशेषता थी कि विद्वानों ने राष्ट्रभाषा के बदले 'संपर्क भाषा' के रूप में हिंदी को प्रस्तावित किया और राजभाषा के उस सिंहासन पर बैठाने की संवैधानिक घोषणा की, जिस पर वास्तव में अंग्रेजी विराजमान थी और है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में हिंदी के साथ यह व्यवहार राजसत्ता की ओर से किया जा रहा था, जो पूरी तरह अंग्रेजी की पक्षधर थी। अंग्रेजी सत्ता-संस्कृति के अनुकूल थी, किंतु उसे खुलकर मान्यता देना भारतीय राजसत्ता के लिए संभव न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। नेहरू की मिश्रित अर्थव्यवस्था में निर्मित हुई आधुनिक संस्कृति की अधिरचना का अध्ययन करने पर पता चलता है कि भारतीय सत्ता की नीयत के निर्माण में ऐसे कौन से कारण तत्त्व सक्रिय थे, जो हिंदी को संपर्क भाषा की परिधि में उलझाए रखना चाहते थे। फलतः लोहिया के 'अंग्रेजी हटाओ' आंदोलन के बावजूद हिंदी के प्रति सत्तापक्ष का दृष्टिकोण नहीं बदला। उनकी मृत्यु के बाद तो 'हिंद स्वराज' के उस संकल्प को लेकर लड़नेवाला कोई नहीं, जिसकी चर्चा ऊपर की गई है।

वास्तव में, संस्कृति के पण्यीकरण की प्रक्रिया ही ऐसी है कि वह जान नहीं पाता कि कब बाजार में आ गया, कब उसका पुराना घर जल गया, कब उसने अपना घर फूँक दिया। वह सोच नहीं पाता कि उसका परिचालन एक बाह्य मस्तिष्क से संचालित है। यह संस्कृति रोज बन रही नई दुनिया की संस्कृति है, जिसमें वह प्रवाह का निरंतर अनुभव करता है। उसके सामने दृश्य आते हैं, जाते हैं।

वैश्वीकरण की आँधी में बाजार मुख्य सत्ता बनकर उभरा। उसने राजसत्ता को अपना पिछलग्गू बना लिया। इस मूलाधार ने जिस अधिरचना का निर्माण किया, वह उत्तर (आधुनिक) संस्कृति के नाम से चिह्नित हुई। यह उत्तर संस्कृति उपभोक्ता संस्कृति की अपर संज्ञा है। मनुष्य का मन माने, न माने पर सच यही है कि वह बाजार में खड़ा है। उसे बाजार में होने का भान नहीं है। वास्तव में, संस्कृति के पण्यीकरण की प्रक्रिया ही ऐसी है कि वह जान नहीं पाता कि कब बाजार में आ गया, कब उसका पुराना घर जल गया, कब उसने अपना घर फूँक दिया। वह सोच नहीं पाता कि उसका परिचालन एक बाह्य मस्तिष्क से संचालित है। यह संस्कृति रोज बन रही नई दुनिया की संस्कृति है, जिसमें वह प्रवाह का निरंतर अनुभव करता है। उसके सामने दृश्य आते हैं, जाते हैं। यह उत्तर-संस्कृति एक वास्तविकता है और छल भी। उसमें ये दोनों गुण साथ-साथ हैं। जैसे भौतिकी में क्वांटम एक ही क्षण में कण भी है और तरंग भी। सांस्कृतिक-अध्ययनों की शृंखला में उत्तर संस्कृति एक नव्यतम विमर्श के रूप में समादृत है।

उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता का विस्तार है एवं उसका चरम बिंदु है। यह एक भूमंडलीय ज्ञान की अवस्था है, जिसमें सभी सम्मिलित हैं। यह ज्ञान की अवस्था के बदले जाने की स्वीकृति है तथा साथ-ही-साथ हमारे बोध के रूपाकार के बदल जाने का अभिलक्षण भी है। नवजागरण के मनीषी चिंतकों ने वैज्ञानिक दृष्टि, पंथनिरपेक्षता, समानता, स्वतंत्रता, तर्कबुद्धि, मानवतावाद आदि जिन आदर्शों और अवधारणाओं का सृजन किया, उत्तर-आधुनिकता उन सब का निषेध करती है। इसका युग साहित्य, कला, दर्शन, इतिहास, धर्म, ईश्वर एवं लेखक के अंत का युग है। इस सांस्कृतिक अवधारणा का जुड़ाव सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं से है, जिसकी अभिव्यक्ति जीवन की विभिन्न शैलियों—कला, दर्शन, साहित्य इत्यादि में दृष्टिगोचर होती है। इसके प्रधान विमर्शकारों—फूको, देरिदा, जेमसन, ल्योतार्द आदि ने जिन चुनिंदा अभिलक्षणों को रेखांकित किया है, उनका केंद्रीय पाठ अग्रवत् हो सकता है—

१. सर्वव्यापी और वस्तुनिष्ठ यथार्थ के प्रति अविश्वास;
२. आख्यान के स्थान पर, आभासी सिद्धांतों के अवरित तथ्य;
३. सभी प्रकार के परा-आख्यानों की अविश्वसनीयता;
४. भावार्थ की संदर्भहीनता;
५. 'यथार्थ के बजाय दृश्यमान को संबोधन' का विमर्श के उद्देश्य के रूप में स्वीकरण;
६. युवा अपसंस्कृति, प्रतिसंस्कृति की निर्मात्री संस्कृति के रूप में मान्यतापेक्षा।

उत्तर सांस्कृतिक विमर्श का एक अन्य महत्त्वपूर्ण परिपार्श्व है— वैश्वीकरण। इससे टकराए बिना उत्तर-संस्कृति को भली प्रकार से दृष्टिगत नहीं किया जा सकता। वैश्वीकरण का उद्गम राजनीतिक, सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक अधिरचनाओं या कारकों से है। इन सब कारकों में से सर्वाधिक केंद्रीय कारक है—सूचना और तकनीकी संचार। मीडिया के साधनों ने दुनिया भर की दूरियों को पाट दिया है। इस युग में तकनीकी के क्षेत्र में जो भी नवाचार हुआ है, उसका ज्ञान और सूचना के साथ गहरा संबंध है। सूचना तकनीकी उस उत्तर औद्योगिक समाज की जीवनधारा है, जिसने प्राकृतिक दुनिया का विदलन वास्तविक एवं उपभोग्य वस्तुओं में कर दिया है। इसमें मानव मन को अनुकूलित करने की दैत्य शक्ति है। यही कारण है कि वैश्वीकरण के कुटिल प्रायोजकों ने इसे अपना अमोघ सम्मोहन अस्त्र बना लिया है, जो मीडिया के तूणीर से निकलकर भाषा के सहारे अचूक लक्ष्यवेध कर सकता है। वैश्वीकरण, उपभोक्तावादी प्रवृत्ति और बाजारवाद की रुग्ण मानसिकता के कारण स्वार्थ-प्रेरित आर्थिक शोषण, सामाजिक उत्पीड़न और सांस्कृतिक प्रपीड़न का विश्वव्यापी विकृत नियोजन है। इतना ही नहीं, उत्तर सांस्कृतिक दौर में प्रतिपालित विसंरचनावादी अवधारणा ने पाठ (भाषा, रचना एवं कलाकृति) एवं रचनाकार के गरिमापूर्ण संबंधों पर कुठाराघात किया है। उनका हास्यास्पद तर्क है—'जैसे उत्पादन के बाद 'माल' मजदूर से विच्छिन्न हो जाता है, वैसे कलाकृति कलाकार से विच्छिन्न हो जाती है।' यह कुतर्क संस्कृति के पण्यीकरण की पराकाष्ठा है तथा उत्तर-संस्कृति के चेहरे का अक्स भी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बाजार और आवारा पूँजीवाली अर्थव्यवस्था में संस्कृति किस प्रकार का खेल कर रही है। राज्यसत्ता हिंदी को 'संपर्कभाषा' के रूप में व्यावहारिक स्तर पर उतार भी न पाई थी कि बाजार ने इसका विस्तार कर डाला। यह विस्तार विज्ञापन-भाषा के रूप में हुआ, क्योंकि बाजार की सबसे बड़ी जरूरत उसका विज्ञापन है। विज्ञापन के माध्यम से बाजार उपभोक्ता से संपर्क करता है, अपना माल बेचता है और उपभोक्ता को नियंत्रित करता है। इस भाषा का प्रायोजक मीडिया है। यह मीडिया वैश्वीकरण के पहले के मीडिया से नितांत भिन्न और अपार शक्ति संपन्न है। यह बाजार के समान बली और उसी का प्रतिरूप है। उत्तर-संस्कृति इसी मीडिया पर सवार है। कहना न होगा, मीडिया आज उपभोक्ता संस्कृति का सबसे बड़ा हितसाधक है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी 'भारतीय संस्कृति' को रज्जब मियाँ का हुक्का कहते थे। कभी नेचा बदला, कभी नारियल, आग बराबर रहती है, पानी कभी-कभी, चिलम भी कभी-कभी। हाँ, सब एक साथ नहीं बदलता, फिर भी हुक्का हुक्का ही रहता है। भाषाई संस्कृति एवं परंपराओं को इसके बरक्स भी देखा जा सकता है। किंतु जहाँ सुनियोजित तरीके से भाषा को विज्ञापन भाषा में ढाला जा रहा हो, वहाँ सामान्य भाषा का अग्नितत्त्व और उसका चैतन्य तो नहीं ही बचेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैश्वीकरण के इस समय में प्रभावी राष्ट्र अपनी भाषा को जबरन थोप रहे हैं। इस खतरे को चीन, जापान और यूरोप के कुछ देशों ने सही समय पर समझ लिया था। इसलिए वे अपनी भाषा को किसी भी सूरत में छोड़ने को तैयार नहीं हैं। 'डॉलर' को पीटने के लिए 'यूरो' को अपनाने वाले देश अंग्रेजी से परहेज कर रहे हैं। इराक पर हमले को लेकर जब फ्रांस ओर जर्मनी अमेरिका के समर्थन में नहीं गए तो अमेरिका ने उनके माल का बहिष्कार किया। फ्रांस ने इसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप अपनी फ्रेंच भाषा में से उन शब्दों को निकाल दिया, जो अंग्रेजी से लिए गए थे। इन देशों ने अंग्रेजी को प्रगति का पर्याय न मानकर एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया और सिद्ध किया कि मातृभाषा में ही वह क्षमता है, जो उन्हें ज्ञान, गौरव और स्वाभिमान प्रदान करती है।

भारतीय संदर्भों मे बाजारीकरण के सिपहसालार आज जनमाध्यमों के सहारे आधुनिकता को अंग्रेजी से, प्रगति को अंग्रेजी से तथा भूमंडलीकरण को अंग्रेजी से प्रत्यक्षतः संबंधित करने में सफल हैं। अधकचरी भाषिक दक्षता तथा स्वायत्त जातीय परिवेश का लगातार आत्मविसर्जन इसके दूरगामी खतरे हैं। आज संचारभाषा हिंदी शनैः-शनैः जिस पथ पर प्रवृत्त है, उसके रुझान एवं प्रवृत्तियों का संक्षिप्त पाठ इस प्रकार हो सकता है—

(क) सरलीकरण की प्रवृत्ति, जिसमें जनभाषा को वरीयता मिल रही है तथा तद्भव, देशज एवं आगत शब्दों की सहायता से अपेक्षया सरल भाषिक संरचना में निर्मित हो रही है। क्लिष्ट भाषा एवं जटिल वाक्य-विन्यास हाशिए की ओर खिसकते जा रहे हैं।

(ख) कंप्यूटर तकनीकी के उपयोग से सही प्रोक्ति की खोज एवं फॉर्मूलाबद्ध स्वचालित लेखन की परिपाटी विकसित हो रही है। ऐसे में हिंदी अपनी प्रगतिशील छवि का निर्माण कर रही है।

(ग) साभिप्राय शब्दों का अधिकाधिक प्रचलन हो रहा है, अभिधेयार्थ को तरजीह मिल रही है। जैसे— 'जल' के कई पर्यायवाचियों में से जल तथा पानी अधिक प्रयुक्त हो रहे हैं, शेष का तिरोधान होता जा रहा है।

(घ) कार्यकलाप की सूक्ष्मता बढ़ने के साथ-साथ नई शब्द-संरचना सामने आ रही है। अधिक प्रयोग के कारण शब्दों की छीजन को कम करने के लिए उनमें कुछ अतिरिक्त उपसर्ग/परसर्ग जोड़कर नया अर्थ-गांभीर्य भरा जा रहा है। जैसे—धन्यवाद के स्थान पर बहुत-बहुत धन्यवाद या हार्दिक धन्यवाद।

(ङ) भाषा में सुरुचिबोध जाग्रत् हो रहा है। जैसे—बम पुलिस, टट्टी, पाखाना, संडास जैसे शब्दों के स्थान पर 'प्रसाधन' का प्रयोग।

(च) उत्तर-संस्कृति आपा-धापी की संस्कृति है। इसके कारण संक्षेपण प्रवृत्ति ने अपने पाँव पसारे हैं। 'फास्ट लाइफ' के प्रभाववश भाषा में त्वरा बढ़ रही है।

(छ) अभिव्यक्ति को प्रभावी बनाने के लिए तल्ख शब्दों एवं धारदार वाक्यों का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है। बाजार की प्रतिस्पर्धा में संचार-भाष का मिजाज तेज-तर्रार हो रहा है। 'सुपरलेटिव' शब्दों के प्रयोग से तिलमिला देने वाला संप्रेषण हो रहा है। 'पुलिस का तांडव', 'धोनी सेना ने धूल चटाई', 'फुटबॉल में ब्राजील ने स्पेन को २-० से रौंदा' जैसे प्रयोगों से भाषा की नजाकत एवं नफासत खत्म होती जा रही है।

(ज) संचार भाषा हिंदी में देहभाषा एवं टेलीभाषा को लगातार महत्त्व मिल रहा है।

(झ) संवेदनहीनता, गोपनीयता, औपचारिकता एवं कृत्रिमता को अधिकाअधिक प्रश्रय मिल रहा है। भाषा ध्वनिबिंबों एवं अर्थबिंबों पर अपना ध्यान केंद्रित कर रही है।

(ञ) अंग्रेजी की शब्दावली एवं वाक्य विन्यास का यथारूप ग्रहण, संचार भाषा की प्रमुख प्रवृत्तियों में से एक है।

(ट) नए काव्यरूपों, यथा—हाइकु का उदय तथा साहित्य का समाख्यान रूप में न रहकर दोहों, लघुकथाओं, लघुगीतों तक सीमित होने की प्रवृत्ति भी लक्षित की जा रही है।

सही अर्थों में हिंदी भाषा से कोई वैर नहीं। हिंदी की उदार एवं सर्वसमावेशी प्रवृत्ति ने अन्य भाषाओं के साथ-साथ आगत के तौर पर अंग्रेजी का सदैव स्वागत ही किया है; किंतु सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के शब्दों में—

''और अब छीनने आए हैं/ वे हमसे हमारी भाषा
यानी हमसे हमारा रूप/ जिसे हमारी भाषा ने गढ़ा है
और जो इस जंगल में/ इतना विकृत हो चुका है
कि जल्दी पहचान में नहीं आता।''

ऐसे सांस्कृतिक संकट के समय हमें भाषा का अपना मोरचा फतह नहीं होने देना है। मुकाबला हिंदी बनाम तमिल या हिंदी बनाम उर्दू का न होकर भूमंडलीकरण बनाम भारतीय भाषाओं का है। उत्तर-संस्कृति की हाट में सभी भारतीय भाषाओं की नियति हिंदी से भिन्न नहीं है। इन सबको अब एक साथ जीना या एक साथ मरना है। जातीय पुनर्जागरण उन्हें फिर एक नया जीवन देगा, जातीय आत्मक्षय उन्हें फिर एक बार पृष्ठभूमि में फेंक देगा।

पत्रकारिता तथा जनमाध्यमों ने इस भाषा को गढ़ा, उसमें रंग भरे। यही पत्रकारिता 'ऑनर किलिंग' के रास्ते पर गतिशील है। ऐसे में आज सांस्कृतिक निरक्षरता के खतरे से जूझते हुए नागरिकों को सचेत होना होगा। उन्हें मूल्यविहीन लकदक जीवन-शैली के खांडव वन को उस भाषा की आग में स्वाहा करना होगा, जिसकी पाचनशक्ति अंग्रेजी की सुनियोजित घृतधार से दिन-ब-दिन छीजती जा रही है। जो राष्ट्रभाषा हिंदी का स्वरूप परिकल्पित कर सकते हैं या जिन्हें जातीय हिंदी के ठाठ का ज्ञान है, वे संचार भाषा हिंदी के प्रारूप से उसकी तुलना कर सकते हैं। वे समझ सकते हैं कि यह 'नए चाल की हिंदी' है। यह हिंदी देहभाषा, बाइट, दृश्यभाषा, संगीत भाषा आदि के पूरक रूप में प्रयुक्त होकर बाजार की दुनिया को प्रकट करती है और फिर संक्रमित होकर मुद्रित या लिखित हिंदी में शामिल होती जा रही है। कहा जा सकता है कि भाषा अधिरचना की भाँति भले न हो, पर उसकी चेतना अधिरचना इस तथ्य की गवाह है, यद्यपि मार्क्सवादी दर्शन के निष्कर्ष और इस तथ्य के बीच कोई अंतर्विरोध नहीं दिखता।

हिंदी विभाग
काशी हिंदू विश्वविद्यालय,
वाराणसी-२२१००५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

राजभाषा हिंदी और कंप्यूटर क्रांति

● दिलीप कुमार पांडेय

ज्ञान, विज्ञान, मनोरंजन तथा दूर-संचार, हर क्षेत्र में कंप्यूटर ने धूम मचा दी है। आज कंप्यूटर कार्य में सुविधा, गति में तेजी, कार्यक्षमता में वृद्धि, गुणवत्ता और परिशुद्धता की दृष्टि से हमारे लिए वरदान सिद्ध हो रहा है।

कंप्यूटर हमारे कल-कारखानों, कार्यालयों, न्यायालयों, बैंकों, शिक्षण, औद्योगिक एवं तकनीकी संस्थानों, अस्पतालों, संसद, इंजीनियरी, राष्ट्रीय सुरक्षा, कृषि यहाँ तक की छोटी-मोटी दुकानों से लेकर अंतरराष्ट्रीय बाजारों आदि सभी क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। रेलवे, हवाई जहाज, होटल आदि का आरक्षण हो या बैंकों में ग्राहकों के खातों की सूचनाएँ अथवा देश-विदेश में कहीं भी पैसा भेजना हो, अपराध जगत् के आँकड़े हों अथवा बड़े से बड़ा ऑपरेशन हो, टेलीफोन, बिजली, पानी के भुगतान हो, कपड़ों के डिजाइन हों या मकानों व मशीनों के रेखाचित्र या देश-विदेश के किसी भी शहर के नक्शे हों, आज कंप्यूटर हर प्रकार की सूचनाएँ प्रदान करने में सहायक है। कंप्यूटर से न सिर्फ रिकॉर्ड रखने में सहायता मिलती है, बल्कि प्रबंध-व्यवस्था, नियंत्रण एवं आँकड़ों के विश्लेषण में भी यह आज अपरिहार्य सा हो गया है। काम में शीघ्रता, समय की बचत, क्षमता और शुद्धता में वृद्धि तथा तुरंत सहायता उपलब्ध कराना आदि वे गुण हैं जिनके कारण कंप्यूटरों की लोकप्रियता निरंतर बढ़ती जा रही है। इसके साथ ही, खोज एवं अनुसंधान के क्षेत्र में कार्यरत वैज्ञानिक, कंप्यूटर-विशेषज्ञ आदि आज और भी नवीन उपलब्धियों के लिए इस दिशा में निरंतर प्रयत्नशील हैं। विद्युत्-मस्तिष्क और मानव-मस्तिष्क के इस अद्भुत सामंजस्य के कारण ही कंप्यूटर जीवन के हर क्षेत्र का अनिवार्य अंग बन गया है।

प्रारंभ में कंप्यूटरों पर काम करने के लिए अंग्रेजी भाषी जानकारी अपेक्षित थी। इन मशीनों द्वारा किए जानेवाले कार्यों में अंग्रेजी का वर्चस्व था। भारत में अंग्रेजी का ज्ञान दो प्रतिशत लोगों को ही है। अतः इस तकनीक को पूरी तरह से जन-सामान्य तक पहुँचाने में भाषा बाधा बनी हुई थी। परंतु सूचना प्रौद्योगिकी के बदलते परिवेश में हिंदी भाषा ने अपना स्थान धीरे-धीरे प्राप्त कर लिया है। अब हिंदी की उपादेयता पर कोई भी प्रश्न-चिह्न लगा नहीं सकता। कंप्यूटर पर हिंदी में काम करते समय अकसर लोबों को Word, Excel, Power Point आदि में तैयार किए गए दस्तावेजों में प्रयोग किए जानेवाले फॉण्ट्स की इनकंपैटिबिलिटी के कारण दस्तावजों के स्थानांतरण/विनियम की समस्या का सामना करना पड़ता है।

यह समस्या मानक भाषा एनकोडिंग को प्रयोग न करने से पैदा होती है। सौभाग्य से यूनिकोड के आने से ये समस्याएँ खत्म हो गई हैं। अगर कंप्यूटर में विंडोज २०००, विंडोज एक्सपी, विंडोज विस्ता, रेड हैट जिनक्स, उबंतु लिनेक्स या मैकिण्टोश का नया ऑपरेटिंग सिस्टम मैक ओएस टेन इंस्टाल्ड है तो यूनिकोड हिंदी में बनी वेबसाइटें तथा पोर्टलों को देखने के लिए न तो फोंट डाउनलोड करने की जरूरत है और न ही वेब निर्माताओं को डायनेमिक फॉण्ट आदि का प्रयोग करने की। तक कंप्यूटर पर वैसे ही काम किया जा सकता है जैसे अंग्रेजी में किया जाता है।

यूनिकोड को एक प्रकार से तकनीकी भूमंडलीकरण का ही प्रतीक कह सकते हैं। सामान्य भाषा में कहें तो यूनिकोड वह टेक्नोलॉजी है जो दुनिया में कहीं भी किसी भी भाषा में कंप्यूटर, इंटरनेट और कंप्यूटिंग में सक्षम विभिन्न यंत्रों पर काम करना संभव कर देती है। कंप्यूटर मूल रूप से नंबरों से संबंध रखते हैं। वे बाइनरी भाषा अर्थात् ० और १ भाषा समझते हैं। ये प्रत्येक अक्षर और वर्ण के लिए एक नंबर निर्धारित करके अक्षर और वर्ण संग्रहित करते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि यूनिकोड प्रत्येक अक्षर के लिए एक विशेष नंबर प्रदान करता है। अतः इसमें कोई शक नहीं कि सूचना प्रौद्योगिकी का उद्भव भले ही अमेरिका में हुआ हो, परंतु भारत के योगदान के बिना वह अस्तित्व में ही नहीं आ सकती थी। क्योंकि विश्व को शून्य का अंक भारत ने दिया था। इसलिए चूँकि कंप्यूटर न क्वींस इंग्लिश जानता है और न फ्रैंच, अतः यूनिकोड के बनने के बाद कंप्यूटर पर हिंदी या गुजराती या किसी भी अन्य भाषा में काम करना भी उतना ही आसान है जितना कि अंग्रेजी में। यूनिकोड बहुभाषी सादे पाठ की एनकोडिंग का साधन है और इसका उपयोग टेक्स्ट को स्थानीय या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विनिमय करने में आनेवाली समस्या का पूर्ण समाधान है। यूनिकोड मानक लिखित रूप में उपलब्ध सभी महत्त्वपूर्ण भाषाओं में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयुक्त वर्णों के लिए केड परिभाषित करता है। इन लिपियों में देवनागरी सहित बंगाली, गुरुमुखी, गुजराती, उड़िया, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम आदि जैसी भारतीय भाषाएँ भी शामिल हैं और अन्य लिपियों, जिनमें ब्रेल भी शामिल है, के लिए कोड परिभाषित किए जा रहे हैं।

ऐसा नहीं है कि यूनिकोड का डायनेमिक फॉण्ट नहीं बनाया जा सकता। अगर कोई मंगल के अलावा बेहतर यूनिकोड फॉण्ट इस्तेमाल करता है तो उसे डायनेमिक फॉण्ट में परिवर्तित कर सकता है। लेकिन उसकी बाध्यता नहीं है। बिना डायनेमिक फॉण्ट के भी पाठ को बिना किसी परेशानी के देखा और पढ़ा जा सकता है, अगर वह यूनिकोड का इस्तेमाल करता है। यूनिकोड इनकोडिंग को सूचना/प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा मानक के रूप में मान्यता दे दी गई है। जैसे किसी अंग्रेजी फॉण्ट्स में किसी कंप्यूटर पर तैयार/उपलब्ध फाइल को कंप्यूटर पर दूसरे अंग्रेजी फॉण्ट में देखा जा सकता है उसी प्रकार अब यूनिकोड इनकोडिंग के जरिए विंडो-२००० एवं उसके बाद वाले विडोज ओ.एस. में कार्य कर सकते हैं। यूनिकोड समर्थित फॉण्ट्स में बनी .doc, .xls, व .ppt, फाइल किसी भी यूनिकोड समर्थित कंप्यूटर पर देखी व संशोधित की जा सकता है। इस कंपैटिबिलिटी के लिए आवश्यकता केवल यह है कि हम कोई भी वह फॉण्ट्स प्रयोग कर रहे हों, जो यूनिकोड समर्थित हो और जो साफ्टवेअर प्रयोग करें वह यूनिकोड को सपोर्ट करता हो। सूचना प्रौद्योगिकी विभाग व राजभाषा विभाग द्वारा कंप्यूटर हिंदी प्रयोग को सरलता, कुशलता व प्रभावी ढंग से करने के लिए पर्याप्त संसाधन व समाधान उपलब्ध कराए जा चुके हैं। ये सॉफ्टवेयर सूचना प्रौद्योगिकी विभाग की वेबसाइट (http://ildc.gov.in/hindi/hdownloadhindi.htm), व राजभाषा विभाग की वेबसाइट www.rajbhasha.gov.in), से नि:शुल्क डाउनलोड किए जा सकते हैं।

सरकारी कार्यालयों में सरल व प्रभावी तरीके से हिंदी में कार्य करने के लिए उपयुक्त सॉफ्टवेयरों के विकास हेतु राजभाषा विभाग ने सूचना एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय की कंप्यूटिंग कंपसी सी-डैक, पुणे के साथ एक समझौता किया है। पिछले कुछ वर्षों में विकसित सॉफ्टवेयरों में हिंदी भाषा का स्वयं शिक्षण (लीला-शृंखला), मंत्र शृंखला द्वारा चुनिंदा कार्यक्षेत्रों में अंग्रेजी से हिंदी तुरंत अनुवाद, हिंदी डिक्टेशन के लिए श्रुतलेखन सॉफ्टवेयर, अंग्रेजी स्पीच की पहचान कर उसे हिंदी में अनुवाद के लिए वाचान्तर सॉफ्टवेयर, ई-महाशब्दकोश शामिल हैं।

'मंत्र-राजभाषा' मशीन साधित अनुवाद का एक सिस्टम है, जो राजभाषा के प्रशासनिक, वित्तीय, कृषि, लघु उद्योग, सूचना प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य रक्षा, शिक्षा एवं बैंकिंग क्षेत्रों के दस्तावेजों का अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करता है। मंत्र टेक्नोलॉजी पर आधारित यह सिस्टम सी-डैक, पुणे के एप्लाइड आर्टिफिशियल इंटैलिजेंस ग्रुप द्वारा विकसित किया हुआ है। भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा प्रायोजित मंत्र-राजभाषा स्टैंडएलोन, इंट्रानेट और इंटरनेट संस्करणों में विकसित किया गया है। मंत्र राजभाषा भारत सरकार के सभी मंत्रालयों तथा विभागों में मानक तथा शीघ्र गति से हिंदी अनुवाद में सहायक होगा। इस कार्य के लिए जिस पद्धति को अपनाया गया है, वह है-'न तो शब्द से शब्द''' न ही नियम से नियम''' लेक्सिकल ट्री से लेक्सिकल ट्री।'

'मंत्र-राजभाषा' मशीन साधित अनुवाद का एक सिस्टम है, जो राजभाषा के प्रशासनिक, वित्तीय, कृषि, लघु उद्योग, सूचना प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य रक्षा, शिक्षा एवं बैंकिंग क्षेत्रों के दस्तावेजों का अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करता है। मंत्र टेक्नोलॉजी पर आधारित यह सिस्टम सी-डैक, पुणे के एप्लाइड आर्टिफिशियल इंटैलिजेंस ग्रुप द्वारा विकसित किया हुआ है। भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा प्रायोजित मंत्र-राजभाषा स्टैंडएलोन, इंट्रानेट और इंटरनेट संस्करणों में विकसित किया गया है। मंत्र राजभाषा भारत सरकार के सभी मंत्रालयों तथा विभागों में मानक तथा शीघ्र गति से हिंदी अनुवाद में सहायक होगा। इस कार्य के लिए जिस पद्धति को अपनाया गया है, वह है—'न तो शब्द से शब्द''' न ही नियम से नियम''' लेक्सिकल ट्री से लेक्सिकल ट्री।'

मंत्र में हिंदी और अंग्रेजी के लिए लेक्सिकल ट्री एडजॉइनिंग ग्रामर का प्रयोग किया जाता है। मंत्र को कंप्यूटर जगत् स्मिथसोनियन अवार्ड से पुरस्कृत किया गया और यह अमेरिकी ऐतिहासिक राष्ट्रीय संग्रहालय में १९९९ नवीन शोध संकलन का भाग है। मंत्र-राजभाषा में अंग्रेजी दस्तावेज पहले पूर्व-संसाधन तत्पश्चात् पारसिंग एवं जनरेशन के लिए भेजा जाता है, जिसके दौरान अंग्रेजी लेक्सिकॉन (शब्दकोश), हिंदी लेक्सिकॉन और अंतरण (ट्रांसफर) लेक्सिकॉन का प्रयोग किया जाता है। जनरेटर हिंदी आउटपुट या अनुवाद देता है, जिसे आवश्यकतानुसार पश्च-संसाधन के लिए भेजा जाता है और अंततः दस्तावेजों का हिंदी अनुवाद प्राप्त हो जाता है। इसमें भी अनुवाद संबंधित सामान्य सहायक उपकरण जैसे कि एडवर्ड, बहुविध आउटपुट, ऑनलाइन थिसॉरस और शब्दकोश आदि दिए गए हैं। इसके अतिरिक्त सिस्टम में रिपोर्ट तैयार करते, बड़े दस्तावेजों को छोटे-छोटे दस्तावेजों में विभाजित करने, जिससे एक से अधिक अनुवादक या पुनरीक्षक को वितरित किया जा सके। विभाजित अनुवादित भागों को एक दस्तावेज में संयुक्त करने से संबंधित सुविधाएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी दी गई हैं। मंत्र राजभाषा इंटरनेट संस्करण का डिजाइन और विकास 'थिन क्लाइंट आर्किटेक्चर पर आधारित है। इसमें संपूर्ण अनुवाद प्रक्रिया सर्वर पर ही होती है। इसलिए दूरवर्ती स्थानों में भी इंटरनेट कनेक्शन उपलब्ध लो-एंड सिस्टम पर भी दस्तावेजों के अनुवाद करने के लिए इस सुविधा का उपयोग किया जा सकता है। अनुवादित दस्तावेजों की पुनः प्राप्ति के लिए इसे प्रयोक्ता के इनबॉक्स में रखा जाता है। इस प्रकार टेक्नोलॉजी आपके घर तक पहुँचेगी, आपको उस तक पहुँचने की जरूरत नहीं है।

ए.ए.आई. ग्रुप की गतिविधियों में गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के सहयाग से वेब-आधारित लीला हिंदीप्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ पाठयक्रमों की प्रमुख विशेषता यह है कि (१) प्रयोक्ता को हर हिंदी अक्षर और उसकी मात्राओं को ट्रेसर से लिखने, लेखन विधि को देखने, उच्चारण सुनने और पढ़ने की सुविधा उपलब्ध है, (२) शब्द वाक्य और पैराग्राफ के स्तर पर शुद्ध उच्चारण और अनुतान सुनने के लिए स्पीच इंटरफेस की सुविधा उपलब्ध है, (३) सामान्य प्रयुक्त शब्दों और पाठों में उपलब्ध है। प्राज्ञ पाठ्यक्रम में हिंदी-अंग्रेजी प्रशासनिक शब्दावली भी उपलब्ध है। प्रबोध पाठ्यक्रम में वर्गीकृत शब्दों का संग्रह भी उपलब्ध है, (४) यथावश्यक सांस्कृतिक टिप्पणियाँ भी दी गई हैं, जिसमें कोश खंड जरिए प्रवेश किया जा सकता है, (५) इस मूल पाठ के साथ एक विडियो चलचित्र है, जिसमें प्रयोक्ता लिख और बोले गए अंश को देख भी सकता है, सुन भी सकता है और समझ भी सकता है। यह सुविधा ऑडियो-विडियो स्ट्रीमिंग तकनीक में उपलब्ध कराई गई है, जिससे चित्र की गुणवत्ता बहुत अच्छी बनी रहती है। विडियो का रिप्ले वाक्य और पैराग्राफ के स्तर पर किया जा सकता है, (६) वेब-आधारित इन पाठ्यक्रमों में रिकॉर्ड और कंपेयर की सुविधा भी उपलब्ध है, जिससे प्रयोक्ता अपनी आवाज को रिकॉर्ड कर सकता है और फिर सॉफ्टवेयर में दिए मानक उच्चारण से उसकी तुलना कर सकता है (७) इंटरनेट के माध्यम से छात्र और अध्यापक के बीच अधिक निकट का संबंध स्थापित होता है। इसमें छात्र व्यक्तिनिष्ट प्रश्नों का उत्तर देकर अध्यापक को भेज सकता है और अध्यापक उन्हें जाँचकर छात्र के इनबॉक्स में लौटा सकता है, (८) हर पाठ में आरेख और उदाहरण सहित उपयुक्त व्याकरणिक टिप्पणियाँ दी गई हैं। (९) हर पाठ में कई तरह के अभ्यास हैं। छात्र के उत्तरों के सही या गलत होने का संकेत तुरंत दे दिया जाता है। माउस क्लिक करके तुरंत उत्तर भी उपलब्ध हो जाता है, (१०) हर पाठ के अंत में एक स्वमूल्यांकन परीक्षण है। जिन छात्रों ने पंजीकरण के समय नियंत्रित शिक्षण का विकल्प चुना है, उनके लिए इस परीक्षा में उत्तीर्ण होना जरूरी है अन्यथा अगला पाठ नहीं खुलेगा। जिन्होंने मुक्त शिक्षण का विकल्प चुना है, उनके लिए यह परीक्षा देना जरूरी नहीं है। सी-डैक ने 'श्रुतलेखन' नाम की कंप्यूटर आधारित एक नई विधि विकसित की है, जिसके सहारे बोली गई हिंदी को लिपि में परिवर्तित करना संभव हो गया है। जो लोग देवनागरी लिखने या टाइप करने में अक्षम हैं, अब वे इसकी सहायता से हिंदी में लिख सकते हैं। यही नहीं, 'प्रवाचक' की सहायता से हिंदी में लिखित कंप्यूटर सामग्री को सुना भी जा सकता है।

सी-डैक के माध्यम से विकसित ई-महाशब्दकोश एक द्विभाषी-द्विआयामी उच्चारण शब्दकोश है। ई-महाशब्दकोश में देवनागरी लिपि यूनिकोड फॉण्ट में प्रदर्शित की गई है, जिसमें हिंदी/अंग्रेजी का उच्चारण है। इसमें स्पष्ट प्रारूप, आसान व त्वरित शब्द खोज, अक्षर क्रम में शब्द सूची, सीधा शब्द खोज, अंग्रेजी/ हिंदी अक्षरों द्वारा शब्द खोज, स्पीच इंटरफेस के साथ हिंदी शब्द का उच्चारण, सामान्य शब्दकोश में सामान्यतया न पाए जानेवाले शब्द रूपों का पूरा विवरण तथा भाषा विशेष का शुद्ध उच्चारण, शब्द/मुहावरों के प्रयोग की सुविधा है। साथ ही, शब्द/मुहावरों को चित्रों के माध्यम से (जहाँ लागू हो) पूर्ण रूप से दरशाया गया है।

सी-डैक के माध्यम से विकसित ई-महाशब्दकोश एक द्विभाषी-द्विआयामी उच्चारण शब्दकोश है। ई-महाशब्दकोश में देवनागरी लिपि यूनिकोड फॉण्ट में प्रदर्शित की गई है, जिसमें हिंदी/अंग्रेजी का उच्चारण है। इसमें स्पष्ट प्रारूप, आसान व त्वरित शब्द खोज, अक्षर क्रम में शब्द सूची, सीधा शब्द खोज, अंग्रेजी/ हिंदी अक्षरों द्वारा शब्द खोज, स्पीच इंटरफेस के साथ हिंदी शब्द का उच्चारण, सामान्य शब्दकोश में सामान्यतया न पाए जानेवाले शब्द रूपों का पूरा विवरण तथा भाषा विशेष का शुद्ध उच्चारण, शब्द/मुहावरों के प्रयोग की सुविधा है। साथ ही, शब्द/मुहावरों को चित्रों के माध्यम से (जहाँ लागू हो) पूर्ण रूप से दरशाया गया है।

इस बात में कोई संदेह नहीं रह गया है कि कंप्यूटर के क्षेत्र में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएँ भाषाई दीवार को कब का लाँघ चुकी हैं। फिर भी मात्र ई-मेल भेजने, ब्लॉग लिखने या किस्से, कहानियाँ व कविताएँ लिख देने मात्र से ही कंप्यूटर की दुनिया में हिंदी अपना स्थान प्राप्त कर लेगी—ऐसा नहीं है। यह तभी संभव है जब हिंदी को कंप्यूटर आधारित तकनीकी संसाधनों से जोड़ा जाए। तभी हिंदी मेडिकल साइंस, इंजीनियरिंग और व्यापार से मूलतः जुड़ेगी और हिंदी का वास्तविक जुड़ाव रोजी-रोटी के साथ होगा। रोजी-रोटी के साथ हिंदी का जुड़ाव होते ही कंप्यूटर के क्षेत्र में शिक्षा और विकास की गति अपने आप तेज हो जाएगी और हिंदी भाषा देश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी अपना परचम लहराएगी।

संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग,
गृह मंत्रालय, भारत सरकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसात

अमरनाथ 'अमर'

जन्म : ७ अप्रैल, १९५८, पटना (बिहार)।

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.।

प्रकाशन : 'स्पंदित प्रतिबिंब' *(काव्य संग्रह)*, 'टेलीविजन साहित्य और सामाजिक चेतना', 'दूरदर्शन और मीडिया : विविध आयाम', 'इलेक्ट्रॉनिक मीडिया : बदलते आयाम', 'पुष्पगंधा' *(कहानी संग्रह)*।

पुरस्कार : राष्ट्रपति द्वारा 'गणेश विद्यार्थी पुरस्कार', हिंदी अकादमी का साहित्यकार सम्मान, भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रीय पुरस्कार सहित कई पुरस्कार।

संप्रति : दूरदर्शन केंद्र दिल्ली में कार्यक्रम अधिशासी एवं निर्माता निर्देशक।

: एक :

इस क्षितिज पर मैं
उस क्षितिज पर तुम
चलो झुककर कहीं
दोनों एक हो जाएँ!
दूर तक
समुद्री सतह है
और ऊपर
विस्तार नभ का
मैं पाषाण
पर्वत सरीखा
इंतजार में
अविरल खड़ा
तुम दूर
बदली की तरह
ऊपर मेरे
उड़ती परी सी
अब तो सरसो
अब तो बरसो
रुककर यहीं
कि दोनों
तर-बतर हो जाएँ
चलो झुककर!

हर तरफ द्वंद्व
अंतर्द्वंद्व है
इस जमीं से
उस फलक तक
उलझा अजाना
गंतव्य है
जुगनुओं की भीड़ में
सुप्त तन्हा ख्वाब है
टिमटिमाते तारों में
टूटा हुआ अरमान है
इस अमावस की
अँधेरी रात में भी
स्वप्न को
साकार करें
आओ मन की
नव चाँदनी में
हम तुम नहाएँ
चलो झुककर!

: दो :

इन बादलों के
पनघट से
भर-भर लाऊँगा
ढेर सारा जल!
इन जुल्फों की
छाँव से
खींच लाऊँगा कोई
चुलबुला सा पल
और बहा ले चलूँगा
अपने संग तुम्हें भी
रिमझिम फुहार में
सरिता की धार में!
इस झमझम में
छम-छम में
गूँजों में
इस फुहार में
इस बहाव में
तुम संग
चुरा लूँगा
प्रणय का
कोई आसक्त क्षण!
इन बादलों के पनघट से
भर-भर लाऊँगा
ढेर सारा जल!

: तीन :

घिर-घिर आए बदरा
चमकी बिजुरी
पड़ने लगी बूँदें
कटोरी से अंजु में
अमृत सी बूँदों को
भर-भरकर पी लें
प्रिये! चलो
संग-संग भीगें!

बौराई हवा
चहके पक्षी
लचकीं डालियाँ
झूमे पत्ते
थिरका मन
अब दूर से ही सब
अपनी ओर खींचे
प्रिय चलो
संग-संग भीगें!

टप-टप का गीत है
झर-झर संगीत
हर-हर के बोल हैं
सन-सन की प्रीत
तब सबके सब
छू रहे
सपनों की डोर में
आँखों को मींचे
प्रिये चलो!
संग-संग भीगें।
खेतों की मेंड़ों पर
पाँवों की छाप
उँगली के पोरों में
ठिठुरी सी ताप
अब सोंधी सी माटी में
कोमल सी हो गई
काँटों सी कीलें
प्रिय चलो!
संग-संग भीगें।

कार्यक्रम अधिशासी
दिल्ली दूरदर्शन केंद्र, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की भाषाएँ और हिंदी

● सुधा

बहुभाषा-भाषी देश होना भारत के लिए अत्यंत गौरव की बात है। यहाँ की उन्नत भाषाओं का समृद्ध साहित्य राष्ट्र की बहुत बड़ी थाती है। भारतीय संविधान में सर्वगुणसंपन्न बाईस (२२) भाषाओं को 'आधुनिक भारतीय भाषा' के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। आधुनिक शब्द से आप इस भ्रम में न पड़ें कि ये भाषाएँ आज की देन हैं; ये भाषाएँ अति प्राचीन हैं, अति प्राचीन स्रोतों से उपजी हैं। इनमें कई तो उस प्रातःस्मरणीय विश्वभाषा संस्कृत जितनी प्राचीन हैं, जिसे अपनी अद्वितीयता के कारण हमारे संविधान में शास्त्रीय भाषा का सम्मान मिला है। ये भाषाएँ आधुनिक इस अर्थ में हैं कि इन्होंने समय के साथ चलकर अपने बोलनेवालों की जरूरतें पूरी की हैं; ये जीवंत और विकासशील हैं। इनकी आधुनिकता इस बात से भी सिद्ध होती है कि आधुनिक विचारों को वहन करने में ये कभी पीछे नहीं रही हैं। इनका साहित्य समय की कसौटी पर खरा उतरा है। ये समय सिद्ध माता स्वरूपिनी परंपरागत भाषाएँ आधुनिक भारत की प्राणवायु हैं।

लेखिका-परिचय

जन्म : २१ नवंबर, १९३३ को।

कृतित्व : तेरह कहानी-संग्रह, तीन उपन्यास, दो बाल साहित्य की पुस्तकें, एक अनुवाद पुस्तक। चार सौ से अधिक कहानियाँ प्रकाशित-प्रसारित।

सम्मान-पुरस्कार : लेखन के लिए राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर पुरस्कृत।

संस्कृति तथा लोक-संगीत से संबद्धता। श्री अरविंदाश्रम हेतु पांडिचेरी में निवास।

भाषाओं का पहला काम होता है संपर्क स्थापित करना; दो व्यक्तियों या व्यक्ति-समूहों के बीच सेतु का काम करना। विश्व में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है, जिसे अभिव्यक्ति का इतना बड़ा यंत्र उपलब्ध है। इसका लाभ मनुष्य ने खूब उठाया है। ज्ञान के भंडार आखिर किस उपकरण ने भरे हैं? सत्य तो यह है कि हम भाषा के न होने की कल्पना भी नहीं कर सकते। यह हमारे व्यक्तित्व का एक अंग है। हमारी श्रेष्ठता इसी में है कि हम अपने इस अंग, इस यंत्र का सर्वोत्तम उपयोग करें। भूलकर भी भाषा को समाज-भंजक न बनाएँ।

जब कुछ काल के लिए देश दुर्भाग्य से गुलाम हो गया था और ब्रिटिश राज ने अपना शासन इस पर थोप दिया था, उस समय भारत की भाषाओं पर भी भयंकर आघात हुआ। दरअसल, भारत के जन-जन में व्याप्त यहाँ की उन्नत भाषाओं और इसकी शास्त्रीय भाषा संस्कृत ने विदेशी शासकों को चकित कर दिया था। इस देश को दुर्बल बनाकर पराधीन बनाए रखने की अपनी नीति में उन्होंने एक प्रमुख बिंदु बनाया था यहाँ की भाषाओं की अवमानना करना। लेकिन भारतीय भाषाओं ने उस दुखद अवमानना को केवल नजरअंदाज नहीं किया, अस्वीकार भी कर दिया; इस बात का मुख्य श्रेय इन भाषाओं के लेखकों को जाता है। भारत की सभी भाषाओं के लेखकों ने परतंत्रता की हताशा के बीच भी लिखना नहीं छोड़ा, उन्होंने इस बात की परवाह नहीं कि उन्हें शासन का कोपभाजन बनना पड़ेगा, इस बात को भी उन्होंने अधिक महत्त्व नहीं दिया कि कितने लोग उनको पढ़ते हैं। वे लिखते गए, बल्कि स्वतंत्रता की प्यास ने उनकी लेखनी को और भी धारदार बना दिया था। इसलिए भारत की सभी भाषाएँ विदेशी शासकों की अवहेलना और अपमान सहकर भी जीवित रहीं। अब हम गर्व के साथ अनुभव कर सकते हैं कि विश्व की किसी भी भाषा की तुलना में हमारी संविधान सम्मत भाषाएँ न्यून नहीं हैं।

यहाँ यह बात भी स्पष्ट हो जानी चाहिए कि किसी भी विदेशी भाषा से हमारा वैमनस्य नहीं है। बल्कि भारत तो विदेशी भाषाओं को आत्मसात् करने में माहिर है। अंग्रेजी को ही लें; अंग्रेजों ने जब भारत पर अंग्रेजी थोपने की योजना बनाई होगी तो उन्होंने कभी यह कल्पना की होगी कि एक ऐसा दिन भी आएगा जब अंग्रेजी को भारत के लोग 'इंडियनाइज' कर देंगे। यह तनिक प्रसंग से बाहर की बात हो रही है, लेकिन मैं आपको बताना चाहती हूँ कि दुनिया में जो विभिन्न प्रकार की अंग्रेजी प्रचलित है, उनमें एक है 'इंडियन-इंगलिश'। इस अंग्रेजी में भारतीय भाषाओं के शब्द भरे हैं, इस अंग्रेजी में अंग्रेजी के अनेक मूल शब्दों का भारतीयकरण हो गया है। कहने का तात्पर्य यह कि भाषा विषयक भारतीय ऊर्जा न केवल अपनी भाषाओं की रक्षा करने में सक्षम है, बल्कि इसमें अन्य भाषाओं को पचा लेने की तगड़ी पाचनशक्ति भी है।

इन्हीं समृद्ध और सशक्त भाषाओं में एक है हमारी लोकप्रिय भाषा हिंदी। हिंदी का किसी भी भाषा से कोई विरोध नहीं है। कवि स्वर्गीय वीरेंद्र मिश्र ने हिंदी के प्रति जो उद्‌गार प्रकट किए थे, वह पूरी तरह सटीक हैं—

'इसका स्वाद प्रसाद बहुत है, जन भाषा रसवंती
ऋतुओं में वासंती है यह, रागों में मधुवंती।
भाषाएँ हों चाहे जितनी, यह सब की हमजोली
स्वागत करती हिंदी सबका, बिखरा कुंकुम रोली।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुले दिल से सब का स्वागत करने वाली हिंदी 'जयहिंद' की भाषा है, 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' की भाषा है। 'जय जगदीश हरे' की यह भाषा व्यापार-वाणिज्य में भी निष्णात है, देश की रक्षा में तैनात वीर सैनिकों को एकसूत्र में बाँधनेवाली भाषा भी यही है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान यह संदेश कि 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है'—जन-जन तक पहुँचानेवाली भाषा यही थी। यह मनोरंजन की भी भाषा है। यह आनंद और प्रेम की भाषा है।

हिंदी की विशेषताओं में सबसे बड़ी और निराली चीज है इसकी नमनीयता। इस भाषा में स्वाभिमान है, पर अहंकार नहीं। इसमें एक सरल प्रवाह है। यह अपने को किसी भी परिस्थिति में उपयोगी बनाना जानती है। इसमें देवभाषा बनने के भी सारे गुण विद्यमान हैं और लोकभाषा के रूप में विस्तार पाने के भी सभी लक्षण हैं। किसी भी भाषा की धमनियों में रक्त प्रदान करती हैं उसकी बोलियाँ; इसमें हिंदी का सौभाग्य चरम सीमा पर है; अत्यंत ही स्वस्थ, सुंदर बोलियाँ हिंदी की श्रीवृद्धि करती हैं। इन बोलियों के विशिष्ट अर्थवाले शब्द, मुहावरे, गीत, कथाएँ, कहावतें, यहाँ तक कि मीठी गालियाँ भी अपनी सुकुमार पहचान बनाती चलती हैं। इन बोलियों में वैविध्य है, ताजगी है और हैं पारंपरिक निधियाँ भी। इनमें देश का इतिहास और भौगोलिक कथा छिपी होती है। बिहार में एक जगह का नाम है 'तरेगना'(पटना से २५ किलोमीटर पर); ज्ञात हुआ कि यह प्राचीन नक्षत्र-विज्ञानी आर्यभट की जन्मभूमि है और इस स्थान का यह नाम अपने उसी विलक्षण पुत्र के कारण पड़ा जो दिन-रात 'तारों' के विषय में ही अध्ययन करता रहता था। तरेगना से कुछ ही दूर 'खगौल' है, जहाँ आर्यभट की वेधशाला थी। ये नाम मात्र शब्द नहीं हैं। इनमें है भारत का सांस्कृतिक सौष्ठव। हिंदी अपनी सुहानी बोलियों के इस सौष्ठव से देश की प्रतिष्ठा बढ़ाती है।

हिंदी की एक प्राकृतिक शक्ति है उसकी लिपि देवनागरी। बिल गेट्स कहते हैं—'बोलकर लिखाने की प्रविधि जब संसार में चलेगी, तो केवल (देव) नागरी ही ऐसी लिपि होगी, जिसमें सही भाषा लिखी जा सकेगी।' स्वयंसिद्ध लिपि देवनागरी को इस प्रमाणपत्र की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए थी, क्योंकि यह बात सब जानते हैं कि संसार में इसके समान वैज्ञानिक लिपि दूसरी नहीं है। ऐसे में इस प्रवृत्ति पर रोक लगनी चाहिए कि हिंदी या कोई भी भारतीय भाषा रोमन या किसी अन्य लिपि में लिखी जाए। हमारे पास खरे सोने जैसी लिपि है, तब हम क्यों अपनी भाषा को किसी अन्य लिपि में धूल चटाएँ?

आज सारा संसार एक 'बृहद बाजार' बन गया है। संसार के जनगण को एक 'ग्राहक' मानकर चला जा रहा है। यह स्थिति अच्छी है या बुरी, हम इस प्रसंग को यहाँ नहीं छेड़ेंगे, हम केवल यह देखना चाहते हैं कि इस बाजारवाद और मानव के ग्राहकीकरण में भाषा की भूमिका और स्थिति क्या होगी। जिसे अपना माल बेचना है, वह बहुत तरह के समझौते करता है, कभी-कभी अनैतिकता की हद तक भी उतर जाता है। उनके लिए जब नैतिकता ही महत्त्व नहीं रखती, तब यह अपेक्षा करना व्यर्थ है कि वे भाषा या संस्कृति का खयाल रखेंगे। ऐसे में हमें स्वयं अपनी नीतियाँ निर्धारित करनी होंगी, अपनी शर्तें स्वयं बनानी होंगी; बाजार-चालकों को विवश करना होगा कि वे हमारी शर्तों के अनुसार चलें। जैसे, विज्ञापन में हिंदी या संस्कृत के वाक्यांश अन्य लिपियों में न लिखे जाएँ। इसके लिए कानून की सलाह लेकर आवश्यक कदम उठाने होंगे। इसके साथ ही देवनागरी लिपि में हिंदी के भद्र विज्ञापनों को प्रोत्साहन दिया जाए, हिंदी में भद्दे और अश्लील विज्ञापनों पर रोक लगे। वाणिज्य के इस युग में बाजार का हिस्सा बनने से किसी चीज को रोकना कठिन है, लेकिन यह तो किया जा सकता है कि हम उस पलड़े पर रहें, जहाँ विश्वसनीयता हो। यानी, एक ऐसा स्तर तैयार हो कि लोग मानें कि यदि किसी वस्तु का विज्ञापन हिंदी में आया है, तो वह चीज जरूर भरोसे की होगी।

हिंदी का समस्त साहित्य, समस्त ज्ञान-भंडार कंप्यूटर पर आ जाना चाहिए। जो लिखा जा रहा है, जो लिखा जा चुका है—सबकुछ कंप्यूटर पर उपलब्ध होना चाहिए। इसके लिए अनेक सशक्त, अनुरत, प्रवीण और लगनशील व्यक्ति-समूहों की आवश्यकता है। इसे एक पूर्णकालिक काम की तरह करना होगा। योजनाबद्ध ढंग से इसका कार्यान्वयन हो। हिंदी का भविष्य संभावनाओं से भरा है। सरकारी उदासीनता या विदेशी वैमनस्य से इसका कुछ भी बिगड़नेवाला नहीं है। हिंदी बिना किसी ढोल-नगाड़े के सफलताओं से भरे सत्पथ पर अग्रसर है।

२०, अंबलत्ताडु अय्यर स्ट्रीट,
पांडिचेरी-६०५००१

आज सारा संसार एक 'बृहद बाज़ार' बन गया है। संसार के जनगण को एक 'ग्राहक' मानकर चला जा रहा है। यह स्थिति अच्छी है या बुरी, हम इस प्रसंग को यहाँ नहीं छेड़ेंगे, हम केवल यह देखना चाहते हैं कि इस बाजारवाद और मानव के ग्राहकीकरण में भाषा की भूमिका और स्थिति क्या होगी। जिसे अपना माल बेचना है, वह बहुत तरह के समझौते करता है, कभी-कभी अनैतिकता की हद तक भी उतर जाता है। उनके लिए जब नैतिकता ही महत्त्व नहीं रखती, तब यह अपेक्षा करना व्यर्थ है कि वे भाषा या संस्कृति का खयाल रखेंगे। ऐसे में हमें स्वयं अपनी नीतियाँ निर्धारित करनी होंगी, अपनी शर्तें स्वयं बनानी होंगी; बाजार-चालकों को विवश करना होगा कि वे हमारी शर्तों के अनुसार चलें। जैसे, विज्ञापन में हिंदी या संस्कृत के वाक्यांश अन्य लिपियों में न लिखे जाएँ। इसके लिए कानून की सलाह लेकर आवश्यक कदम उठाने होंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रभाषा हिंदी

● सुधाकर उपाध्याय

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने एक बार स्पीकर सोमनाथ दा से पूछा था, 'दादा, आप अपने क्षेत्र की जनता से अंग्रेजी में वोट माँगते हैं ?' दादा ने कहा, 'नहीं, उस क्षेत्र की भाषा में।' वाजपेयीजी ने कहा, 'तब आप अपना विचार संसद् में अंग्रेजी के माध्यम से क्यों रखते हैं ?' सोमनाथजी निरुत्तर हो गए। लोकसभा के सत्र में एक हिंदी भाषा-भाषी क्षेत्र से चुने गए सांसद मंत्री के रूप में संसद् में हिंदी में पूछे गए प्रश्न का जवाब अंग्रेजी में देने लगे। इस पर सपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष मुलायम सिंह यादव ने आपत्ति की। उनका कहना था—'जिस भाषा में आपने वोट माँगे हैं, उसी हिंदी में जवाब दें।' लेकिन मंत्री महोदय की चेतना जाग्रत् नहीं हुई और वे फिर दूसरे दिन एक अन्य सांसद के प्रश्न का उत्तर अंग्रेजी में देने लगे। सांसद की आपत्ति पर मंत्री महोदय ने कहा, 'आपको भी मुलायम सिंह की बीमारी लग गई है ?' बात आई और गई, किंतु मेरे जैसे नासमझ लोगों को असमंजस में डाल दिया। बीमार मंत्रीजी हैं या मुलायम सिंह ? राष्ट्रभाषा और उस मंत्री की मातृभाषा हिंदी होते हुए भी अंग्रेजी में उत्तर देना उनके अहंकार, उनकी वर्जना और कुंठा का परिचायक है। अंग्रेजी बोलकर अपनी संप्रभुता और आभिजात्यता का प्रदर्शन करना उनका मिथ्याभिमान है।

जन्म : ४ मार्च, १९५० को आजमगढ़ जिले के उदयना गाँव में।

शिक्षा : एम.ए. (गोल्ड मेडलिस्ट), एल-एल.बी. और पी-एच.डी.।

'पॉयनियर' और 'स्वतंत्र भारत' पत्रों में पत्रकारिता। हिंदी साहित्य परिषद्, मिर्जापुर के संस्थापक अध्यक्ष।

प्रकाशन : 'हिंदी सूक्तियाँ', 'नियति साहित्यकार की', 'रीतिकालीन भक्तिकाव्य', 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास', 'राष्ट्रीय एकता और भक्ति साहित्य', 'उपन्यासकार और हजारी प्रसाद द्विवेदी', 'मध्यकालीन काव्य', 'आंगिक भाषा'।

संप्रति : के.बी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मिर्जापुर में प्राचार्य।

ठीक इसके विपरीत, हमारे नौजवान सांसदों ने हिंदी के महत्त्व को पहचाना। हमारे पुराने महंतनुमा नेता ने या तो राष्ट्रीय भावना को तिलांजलि दे दी है या उनकी अहंमन्यता और संप्रभुता उन्हें ऐसा करने से रोकती है। हमारे नौजवान सांसदों को अंग्रेजी का ज्ञान बेहतर है और महँगे एवं आभिजात्य पब्लिक स्कूलों से शिक्षा प्राप्त करते हुए भी भारतीय चेतना और राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान है। 'जय हो' का गान ब्रिटिश शब्दकोश में भले ही स्थान न बना पाया हो, किंतु २८ मई को राष्ट्रपति भवन में ज्योतिरादित्य सिंधिया, जितिन प्रसाद और सचिन पायलट ने हिंदी में शपथ लेकर राष्ट्रभाषा हिंदी की महत्ता का प्रतिपादन कर प्रखर देशभक्ति का परिचय दिया। इतना ही नहीं, वरन् हिंदी भाषी इलाके से जीतकर आई सुश्री अगाथा संगमा ने पूरे आत्मविश्वास से लबरेज होकर हिंदी में शपथ ली। किंतु हिंदी भाषा-भाषी प्रांतों में हिंदी की दुर्गति देखकर रोना आता है। इस वर्ष उत्तर प्रदेश ने इंटर बोर्ड की परीक्षा में करीब आठ लाख बच्चों ने हिंदी में अनुत्तीर्ण होकर हिंदी भाषा-भाषाई की गोबरपट्टी नाम की सार्थकता को प्रतिपादित कर दिया है। जिस भाषा को वैश्विक स्तर पर मान्यता मिल रही हो, उसी भाषा का हिंदी प्रांत में यह हाल देखकर बौद्धिकों का दुखी होना लाजिमी है। और तो और, हिंदी पट्टी के नेता श्रीप्रकाश जायसवाल ने अंग्रेजी में शपथ लेकर अपनी हीन मानसिकता का परिचय दिया। हीन भाव से ग्रसित हमारे राजनेता हिंदी भाषा का ही मजाक उड़ा रहे हैं।

आजादी के बाद हिंदी को राष्ट्रभाषा पर पदासीन करने के लिए जो १५ वर्ष का समय दिया गया, वह एक सोची-समझी रणनीति का हिस्सा था। लॉर्ड मैकाले के मानस पुत्रों की तिकड़मी चाल में हिंदी अनंत काल के लिए निर्वासित हो गई। साठ के दशक में राम मनोहर लोहिया ने जो 'कांग्रेसी हटाओ' का आंदोलन प्रारंभ किया, वह इसी मानसिकता से प्रेरणा लेकर किया था। इस बाजारवादी युग में जहाँ हिंदी प्रदेश के युवकों में अंग्रेजी के प्रति मोह बढ़ा है, वहीं बाजार ने हिंदी को देश एवं विदेशवादी रूप देने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। हिंदी-भाषी प्रांत में पैर जमाने के लिए बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सी.ई.ओ. को भी आज हिंदी का सहारा लेना पड़ रहा है। सिटी बैंक, एच.डी.एफ.सी., आई.सी.आई.सी.आई. जैसे अंतरराष्ट्रीय बैंक हिंदी में काम करेंगे, ऐसा सोचा भी न था, किंतु ग्राहक की भाषा में उन्हें आज हिंदी में काम करना पड़ रहा है। हिंदी फिल्में अरसे से हिंदी का प्रचार-प्रसार आसेतुहिमालय से कन्याकुमारी तक कर रही हैं। कभी पश्चिम बंगाल, कर्नाटक एवं तमिलनाडु जैसे प्रांत के लोग हिंदी के नाम पर नाक-भौं सिकोड़ते थे, उन्हीं प्रांतों के बीच हिंदी चैनल दिनानुदिन लोकप्रिय होता जा रहा है। उनका तर्क है कि हिंदी चैनल में काम करने से उनकी अखिल भारतीय पहचान बनती है। जबकि कर्नाटक और तमिलनाडु में उनका व्यक्तित्व सिमटकर क्षेत्रीय बनकर रह जाता है। हिंदी अंतरप्रांतीय भाषा है। भारत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दो-तिहाई भाग में खालिस हिंदी बोली जाती है और शेष एक-चौथाई भाग में अपनी सार्थक उपस्थिति दर्ज कराती जा रही है।

हिंदी लोकतांत्रिक ढंग से पूरे भारत में ही नहीं, देश-विदेश में भी स्वयं अपना स्थान बना रही है। उसे शासन की कृपा की दरकार नहीं है। इसे खुद राष्ट्रीय संपर्क के रूप में जनता-जनार्दन द्वारा फैलाया जा रहा है। बोलना ही किसी भाषा को संजीवनी शक्ति देता है। बंगाल में कामरेडों का शासन एक लंबे कार्यकाल तक रहा है। बंगाल के राजनेताओं ने अन्य भाषाओं को उस प्रांत में घुसने नहीं दिया। किंतु उपन्यास साम्राज्ञी महाश्वेता को कहना पड़ा कि हिंदी के बल पर मुझे अखिल भारतीय पहचान मिली। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता और केंद्रीय मंत्री प्रणव मुखर्जी का कहना है कि इस देश का प्रधानमंत्री हिंदी बोलने वाला ही हो सकता है। हिंदी न जानने वाला प्रधानमंत्री टिक नहीं सकता और हठात् टिक भी गया तो सफल नहीं हो सकता । उन्होंने उदाहरण देते हुए कहा कि कामराज प्रधानमंत्री इसीलिए नहीं बन पाए और देवगौड़ा टिक नहीं पाए। नरसिंह राव की सफलता का राज हिंदी था। १५ अगस्त, १९४७ को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने बीबीसी के रिपोर्टर को अपना पहला साक्षात्कार देते समय कहा था—'आज पूरी दुनिया को बता दो कि गांधी अंग्रेजी बोलना भूल गया है।' गांधीजी आजादी की पहली प्रतीति भाषा में मानते थे। उनका मानना था कि जब भाषा मुक्त होगी तो आत्मा मुक्त होगी। चेतना पर भाषायी गुलामी शारीरिक गुलामी से ज्यादा खतरनाक है। अब वह दिन दूर नहीं, जब केरली हिंदी, नागा हिंदी, तमिलनाडी हिंदी विकसित होकर अपने सपनों का आख्यान हिंदी में करने लगें।

एक तरफ बाजारवाद के सहारे हिंदी भाषा देश-देशांतर में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है, दूसरी तरफ हम अंग्रेजी के उपनिवेश की छाँव खोज रहे हैं। एक दिना ऐसा आएगा कि न 'खुदा ही मिलेगा न मिसाले सनम' जैसी उक्ति चरितार्थ होगी। हिंदी-भाषी क्षेत्र में स्थिति अत्यंत दयनीय बनती जा रही है। न अंग्रेजी का ज्ञान होगा, न हिंदी का। दोनों के मध्य रहकर हम अपनी प्रतिभा कुंठित कर लेंगे। यहाँ के पब्लिक स्कूल के नौनिहाल अंग्रेजी तले दबकर अपनी प्रतिभा एवं मौलिकता खोते जा रहे हैं। आजादी के साठ वर्ष बाद का परिदृश्य भयावह होता जा रहा है। अंग्रेजी बोलना और पढ़ना हमारी प्रभुता और स्टेटस सिंबल बन गया है।

एक तरफ बाजारवाद के सहारे हिंदी भाषा देश-देशांतर में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है, दूसरी तरफ हम अंग्रेजी के उपनिवेश की छाँव खोज रहे हैं। एक दिना ऐसा आएगा कि न 'खुदा ही मिलेगा न मिसाले सनम' जैसी उक्ति चरितार्थ होगी। हिंदी-भाषी क्षेत्र में स्थिति अत्यंत दयनीय बनती जा रही है। न अंग्रेजी का ज्ञान होगा, न हिंदी का। दोनों के मध्य रहकर हम अपनी प्रतिभा कुंठित कर लेंगे। यहाँ के पब्लिक स्कूल के नौनिहाल अंग्रेजी तले दबकर अपनी प्रतिभा एवं मौलिकता खोते जा रहे हैं। आजादी के साठ वर्ष बाद का परिदृश्य भयावह होता जा रहा है। अंग्रेजी बोलना और पढ़ना हमारी प्रभुता और स्टेट्स सिंबल बन गया है। आज देश का स्वदेशी बजट अंग्रेजी में प्रस्तुत किया जाता है। आए दिन पब्लिक स्कूलों के तमाम बच्चों को हिंदी बोलने पर प्रताड़ित किया जाता है। कुछ विद्यालय ऐसे हैं, जहाँ राष्ट्रगीत पढ़ाने से मना कर दिया जा रहा है। स्कूलों के माध्यम से धर्मांतरण कराया जा रहा है। अंग्रेज संतों और महात्माओं के नाम से विद्यालय खोले जा रहे हैं। भारतीय महापुरुषों का तिरस्कार और आंग्ल संतों-महात्माओं का यशोगान कराया जा रहा है। सेंट मार्क्स, सेंट जेवियर, सेंट थॉमस को हमारे देश के लल्लू जगधर गले लगा रहे हैं। यदि गलती से किसी ने संत तुलसीदास, संत कबीर, कालिदास, पाणिनि के नाम से विद्यालय स्थापित कर दिया है तो बीमार मानसिकता के भारतीय उस विद्यालय को हीन भाव से देखते हैं। देश के न्यायालय की भाषा अंग्रेजी है, जिसे देश के ९८ प्रतिशत लोग नहीं जानते। हम इंडियन हैं, भारतीय नहीं। धन्य हैं हमारे बौद्धिक राजनेता, जिन्होंने देश का नाम ही बदल दिया है। प्रापर नाउन को बदल डाला गया। यह है कमाल लॉर्ड मैकाले के अनुयायियों का। लॉर्ड मैकाले का दृष्टिकोण बिलकुल साफ था, देश का भूगोल मत देखो, उसे जीतने का प्रयास करो। भाषा बदल दो, इतिहास बदल जाएगा, धर्म-संस्कृति बदल जाएगी। खेत किसी का, फसलें तुम काटोगे। हम आज उसी तिकड़म में फँसकर रह गए हैं।

इस समय देश में कुल पाँच हजार समाचार-पत्र प्रकाशित हो रहे हैं, जिनमें अंग्रेजी के ३३० हैं, जबकि हिंदी में २०५०, उर्दू में ४५७, कन्नड़ में २७५, मराठी में २२७० और मलयालम में २२० हैं। यह संख्या अनुमान पर आधारित है। दस-पाँच घट बढ़ सकते हैं। हिंदी भले ही राष्ट्रीय एवं जातीय पहचान की भाषा है, किंतु मैकाले के मानसपुत्रों का कमाल ही है कि देश की कोई संवाद भाषा नहीं बन पा रही है। देश की जनता जनार्दन लल्लू-जगधर के सपनों का आख्यान तथ झुग्गी-झोंपड़ियों में राम-रहीम का पाठ पढ़ानेवाली अंतरप्रांतीय भाषा निरंतर अपना मौलिक रूप खोती जा रही है। काले अंग्रेजों द्वारा बुने हुए षड्यंत्र के मायाजाल में उलझकर रह गई है। दुःख-सुख, राग-द्वेष का इजहार मातृ-भाषा में ही संभव है। किसी उधार ली गई है या जबरन थोपी गई भाषा में न तो हृदय की विराट् भावनाओं को अभिव्यक्त किया जा सकता है और न ही कालजयी साहित्य की रचना की जा सकती है। रवींद्रनाथ टैगोर आजीवन अंग्रेजी में लिखते रहे, किंतु असफल रहे। सफलता मातृभाषा बँगला में 'गीतांजलि' लिखने पर मिली। ख्यातिलब्ध बँगला उपन्यासकार बंकिमचंद्र चटर्जी ने मैकाले के मानस पुत्रों के विषय में अत्यंत प्रखर चिंतन प्रस्तुत किया है—'बाबू बहुत बातूनी होंगे, जो विदेशी भाषा में निपुण और अपनी भाषा के घोर विरोधी होंगे। कुछ विद्वान् बाबुओं का जन्म होगा, जो अपनी मातृभाषा में बातचीत करने में असमर्थ होंगे। विष्णु की भाँति उनके दस अवतार होंगे—क्लर्क, अध्यापक, एकाउंटेंट, डॉक्टर, वकील, न्यायाधीश, जमींदार, संपादक, अधिकारी और बेरोजगार। बाबू घर पर पानी पिएँगे और मित्रों के साथ मदिरा। वह भारत की सदा आलोचना करेंगे और विदेशों की तारीफ। वह अपने मित्रों, समाज और मालिकों को अपमानित करेंगे। उनके चाटुकारिता करने और करवाने के ही रिश्ते होंगे।' कहना न होगा कि इन्हीं संस्कारों से हमारे देश की स्वतंत्रता की शुरुआत हुई। स्वतंत्रता-प्राप्ति की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्व संध्या पर पं. जवाहर लाल नेहरू ने अंग्रेजी में भाषण देकर जनता के नाम संदेश प्रसारित कर इस परंपरा की शुरुआत की। १९४६ की भारत की संवैधानिक असेंबली में केवल पठान नेता अब्दुल गफ्फार खान ही हिंदुस्तानी में बोले थे।

आज देश में बहुत से हिंदी अखबार ऐसे हैं, जो व्यापक क्षेत्र में प्रचार-प्रसार करते हैं, किंतु अंग्रेजी अखबार बहुत कम दाम में हिंदी से दूने पन्ने लेकर सफलतापूर्वक संचालित हो रहे हैं। इन अंग्रेजी अखबारों का रिश्ता भावनात्मक न होकर उत्पादक और उपभोक्ता के बाजार का रिश्ता रह गया है।

वस्तुतः संपूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए हमारी भाषाएँ ही समर्थ हैं। सुदूर अतीत काल में वृहत्तर भारत की राष्ट्रीय एकता अक्षुण्ण थी, क्योंकि संस्कृत भाषा उत्तर से दक्षिण तक संपर्क भाषा थी। उस समय भाषायी विवाद नहीं था। क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय भाषाओं के बीच परस्पर सामंजस्य था। जब तक पूरे देश में एक संपर्क भाषा नहीं होगी, तब तक एकता और अखंडता की कल्पना करना व्यर्थ है। प्राचीन काल में उत्तर भारत में संस्कृत और दक्षिण भारत में तमिल समान रूप से सर्वमान्य भाषाएँ थीं। तमिल के हजारों शब्द संस्कृत में यथावत् ले लिये गए हैं और संस्कृत के शब्द तमिल ने स्वीकार कर लिये थे। वस्तुतः संस्कृत इस देश की प्राचीनतम भाषा है, तमिल से भी प्राचीन। किंतु संस्कृत पर जितना अधिकार उत्तर भारतीयों का है, उतना ही दक्षिण का। श्रौत गृह्य और धर्म सूत्रों के रचयिता आपस्तंभ दक्षिण के थे। आपस्तंभ के अनुकरण पर एक नवीन धर्मसूत्र के रचयिता सत्याषाढ हिरण्यकेशी भी मालाबार के थे। वैखानस संप्रदाय का गृह्यसूत्र दक्षिण में ही रचा गया था। वेदों को पुनरुज्जीवित करने वाले पंडित सायणाचार्य दक्षिण के ही थे। सद्गुरु शिष्य भी दक्षिण के ही थे। भागवत पुराण की रचना दक्षिण में ही हुई थी। विष्णु पुराण के व्याख्याता विष्णुचित्त स्वामी भी दक्षिण भारत के थे। रामायण पर विवेक तिलक लिखने वाले विद्वान् उद्दालि श्री दाक्षिणात्य थे। संस्कृत और प्राकृत काव्य साहित्य की रचना में भी दक्षिणात्यों का महनीय योगदान है। गाथा सप्तशती के रचयिता 'हाल' शातवाहन महीप थे। जानकीहरण काव्य के रचयिता कुमारदास लंका में रहते थे। भारवि दक्षिण के थे, जिन्होंने किरातार्जुनीयम् लिखा। भवभूति वरार में जनमे थे और विद्याभ्यास कुमारिल भट्ट के चरणों में किया था।

'मुकुंदमाला' नामक काव्य के कर्ता कुलशेखर कवि केरल देश के राजा थे। नलोदय, त्रिपुरदहन, युधिष्ठिर विजय आदि चार यमक काव्य के रचयिता कवि वासुदेव दक्षिण के थे। इस प्रकार नलचंपू काव्य के रचयिता त्रिविक्रम भट्ट राजकूट नरेश राजा इंद्र के दरबार में रहते थे। वृहत् कथा के रचयिता गुणाढ्य दक्षिण के थे। इसके सिवा अप्पय दीक्षित, भट्टोजि दीक्षित, मल्लिनाथ सुत और पंडितराज जगन्नाथ, ये सब के सब चिंतक और कवि दक्षिण के थे। संस्कृत साहित्य पर जितना ऋण उत्तर वालों का है, उतना ही दाक्षिणात्यों का भी है।

प्रत्येक जाति के संस्कार, उसकी आत्मा और उसके प्राण उसकी अपनी भाषा में बसते हैं। भारत की आत्मा और भारत के सूक्ष्म संस्कारों का निवास संस्कृत में है। संस्कृत इस देश में बसनेवालों की सेवा लगभग पाँच हजार वर्षों से करती आ रही है। भारत की सभी भाषाएँ संस्कृत के घाट पर पानी पीकर जीती आई हैं और अब भी उनका उपजीव्य संस्कृत ही है। भारत की आधुनिक भाषाओं में नए शब्द बनाने की शक्ति समाप्त है। अब भारत की जो भी भाषा नया शब्द खोजती है, उसके सामने संस्कृत की ओर जाने के सिवा और कोई चारा नहीं है। इसी संस्कृत पर आधारित होने के कारण भारत की सभी भाषाएँ एक हैं, क्योंकि उनके शब्द एक हैं। उनकी तर्ज, भंगिमाएँ और अदाएँ एक हैं तथा वे एक ही सपने का आख्यान अलग-अलग लिपियों में करती हैं।

उत्तर भारत की सभी भाषाएँ संस्कृत से विकसित हुई हैं, किंतु ये भाषाएँ परस्पर भिन्न हैं, किंतु संस्कृत ने हिंदी को एक खास ढंग से विकसित कर उत्तर भारत को एक ऐसी भाषा दी है, जो कमोवेश सभी भाषा-भाषी क्षेत्र में समझ ली जाती है। तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम की प्राचीन तमिल से निकली है, किंतु द्रविड़ क्षेत्र में उस परिवार की एक भी भाषा विकसित नहीं हुई है, जो चारों भाषा क्षेत्र में समझी जा सके। केवल हिंदी ही एक ऐसी भाषा है, जो सही मायने में किसी भी क्षेत्र की मातृभाषा नहीं है। यही कारण है कि सारा देश हिंदी भाषा को अपना रहा है।

उत्तर भारत की सभी भाषाएँ संस्कृत से विकसित हुई हैं, किंतु ये भाषाएँ परस्पर भिन्न हैं, किंतु संस्कृत ने हिंदी को एक खास ढंग से विकसित कर उत्तर भारत को एक ऐसी भाषा दी है, जो कमोवेश सभी भाषा-भाषी क्षेत्र में समझ ली जाती है। तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम की प्राचीन तमिल से निकली है, किंतु द्रविड़ क्षेत्र में उस परिवार की एक भी भाषा विकसित नहीं हुई है, जो चारों भाषा क्षेत्र में समझी जा सके। केवल हिंदी ही एक ऐसी भाषा है, जो सही मायने में किसी भी क्षेत्र की मातृभाषा नहीं है। यही कारण है कि सारा देश हिंदी भाषा को अपना रहा है।

आजादी के बाद संविधान सभा द्वारा राष्ट्रभाषा के लिए मतदान हुआ और एकमत से हिंदी भाषा की जीत हुई। संविधान के अनुच्छेद ३४३ में संघ की राष्ट्रभाषा हिंदी और देवानगरी लिपि राष्ट्रीय लिपि घोषित की गई। अनुच्छेद ३४८ के अनुसार न्यायालय की भाषा अंग्रेजी को ही माना गया, पर अनुच्छेद ३५१ में हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए कतिपय निर्देश दिए गए, जिनका अनुपालन आज तक नहीं हुआ। अंग्रेजी दो प्रतिशत की भाषा थी और आज साठ वर्ष बाद भी वही स्थिति बनी हुई है। वस्तुतः किसी भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए भावात्मक लगाव होना आवश्यक है। यह लगाव राजबल से नहीं उत्पन्न किया जा सकता।

एक बार सम्राट् अकबर ने 'दीन-ए-इलाही' एक निजी धर्म चलाया, किंतु असफल रहा। उस सम्राट् के इस धर्म को माननेवाले मात्र १४ लोग थे। इस धर्म के साथ आत्मबल या भावनात्मक लगाव न होने के कारण असफल हो गया। एक बार विश्व के तमाम भाषावेत्ताओं ने विचार किया कि संसार में हजारों भाषाएँ हैं, जिन्हें समझना-पढ़ना कठिन है। एतदर्थ एक ऐसपरंतो नामक कृत्रिम भाषा का विकास किया जाए। यह कृत्रिम भाषा अपने निर्माण काल में ही गतायु हो गई, प्रयोग असफल रहा। इसे लोग परायी भाषा समझने लगे। सबके लिए बनाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई यह भाषा किसी की नहीं रही। भाषा विज्ञान का एक सिद्धांत है कि 'most heterogeneous language most hetrogeneous society' अर्थात् भाषा-भिन्नता समाज भिन्नता का कारक होती है। इस देश में जब भी क्षेत्रीयता की भावना प्रबल हुई है, उसका आधार भाषा ही रही है। पंजाब और हरियाणा में जब भी प्रांत की सीमा-रेखा के निर्धारण की माँग उठती है, तो यही सिद्धांत अपनाया जाता है कि पंजाबी और हरियाणी भाषा के आधार पर क्षेत्र का विभाजन किया जाए। इस विभाजन के मापदंड के मूल में भाषावार प्रांतों का गठन प्रमुख कारण है। जिस तरह तमिल भाषा के वनज पर तमिलनाडु नामकरण हुआ, उसी तर्ज पर आंध्र प्रदेश की जनता तेलुगु भाषा की वनज पर तेलगुनाडु और कन्नड़ के लोग कन्नड़ की वनज पर कन्नड़नाडु की माँग करने लगे। बात यह है कि भाषा एक भावनात्मक पहलू है, जिसे भड़काकर राजनीति की रोटी सेंकी जा सकती है। तमिलनाडु में कोई भी दल हो, सवर्ण और हिंदी का विरोध करना उसके लिए अनिवार्य हो जाता है। भाषायी उन्माद दक्षिण भारत में कुछ अधिक ही है, किंतु यह प्रवृत्ति उत्तर भारत में भी पनप रही है। हिंदी की बोलियों में ब्रज के आधार पर प्रदेश, अवधी के आधार पर अवध प्रांत और भोजपुरी के आधार पर भोजपुर प्रदेश की माँग उठने लगी है। भाषावार क्षेत्रीयता पनपना देश के लिए अशुभ है। इधर हिंदी की बोलियाँ, जो हिंदी की एक शैली मात्र हैं, को संविधान आठवीं अनुसूची में शामिल करने की माँग उठा रही हैं और मैथिली को शामिल भी कर लिया गया है। अगर यह भस्मासुरी माँग मानकर हिंदी की बोलियों को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल कर लिया गया तो इन सारी बोलियों को अलग भाषा के रूप में मान्यता मिल जाएगी, भले ही उनकी देवनागरी लिपि हो। तब हिंदी को मातृभाषा बताने वाले गिनती के रह जाएँगे, अतः इस विपथगामी प्रवृत्ति पर अंकुश लगना चाहिए।

भाषा हमारी राष्ट्रीय अस्मिता है। जातीय स्वाभिमान की उद्‌वाहिका है। इस संबंध में यदि हम विश्व के अन्य देशों पर नजर दौड़ाएँ तो अभिज्ञात होगा कि भाषा के संबंध में ये कुछ ज्यादा ही कट्टर हैं और होना भी चाहिए। १९४८ में जब सारे यहूदियों ने एकत्र होकर इजरायल राष्ट्र का निर्माण किया तो उसी दिन सबने पहले अपनी राष्ट्रभाषा के रूप में हिब्रू को मान्यता दी। मिस्र के राष्ट्रपति कमाल पाशा ने जिस दिन देश आजाद हुआ, उसी दिन सारे बुद्धिजीवियों से पूछा कि मिस्री को राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में लागू करने के लिए कितने समय की दरकार है। सभा में एकत्र लोगों ने पाँच वर्ष का समय माँगा। राष्ट्रपति ने कहा कि समझो आज ही पाँच वर्ष पूरे हो गए और तत्क्षण मिस्री भाषा को राष्ट्रभाषा पर पदासीन कर दिया गया।

रीडर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग
के.बी.पी.जी. कॉलेज,
मिर्जापुर

साहित्य अमृत

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के
पत्रांक ११०१४/८/९६-रा.भा. (प) द्वारा
केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/
सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/स्वायत्त निकायों/संस्थाओं आदि के लिए

एक विशिष्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका के रूप में अनुशंसित एवं अनुमोदित।

एक प्रति का शुल्क : बीस रुपए
एक वर्ष का शुल्क : दो सौ पचास रुपए

शुल्क मनीऑर्डर अथवा बैंक-ड्राफ्ट द्वारा 'साहित्य अमृत' के नाम
४/१९ आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२ के पते पर भेजा जा सकता है।

राजभाषा हिंदी तथा सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए संस्थाओं का सहयोग अपेक्षित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाँच कविताएँ

● ऋता शुक्ल

जन्म : १४ नवंबर, १९४९ को डिहरी ऑन सोन में।

शिक्षा : मगध विश्वविद्यालय की स्नातक हिंदी 'प्रतिष्ठा' परीक्षा में विशिष्टता सहित प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान एवं स्वर्ण पदक प्राप्त।

कृतियाँ : 'अरुंधती', 'दंश', 'अग्निपर्व', 'समाधान', 'बाँधो न नाव इस ठाँव', 'शेषगाथा', 'कनिष्ठा उँगली का पाप', 'कितने जनम वैदेही', 'कासों कहों मैं दरदिया' तथा 'मानुस तन'।

पुरस्कार : 'क्रौंचवध तथा अन्य कहानियाँ' वर्ष १९८४ में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा देश भर से आमंत्रित कुल छियासी पांडुलिपियों में सर्वश्रेष्ठ घोषित, पुरस्कृत।

सब सपने होंगे परिपूरन

सुख-दुःख दोनों समान लगते, जगती हो जाती मनभावन,
तुम गाकर देखो मनुज राग, सब सपने होंगे परिपूरन।

जिन आँखों में करुणा पलती, उनमें ही होता अपनापन,
भौतिक लिप्साएँ कंचन मृग, धन दौलत से बौराया मन।

पुरखिन पुरखों की बदहाली, घर आँगन दहती वैदेही,
माई की कोख कलपती, रघुनंदन क्यों ऐसे निर्मोही?

कोयलिया गाती विरह राग, सूनी बँसवारी अमराई,
चइता, फगुआ, बारहमासा, बिसरी रामायन चउपाई!

बूढ़े बरगद की आँखें नम, ठिठुरी पीपल की तरुनाई,
सरसों, महुआ, तीसी मोहाल, मंडी बिकते बुधुआ, बिरसी।

भूखा, नंगा, लाचार खड़ा, जनतंत्र दुहाई देता है,
अंधी, बहरी, गूँगी सत्ता, कुछ नहीं दिखाई देता है।

ऊँचा आसन, नीची करनी, पापी फलता, बेबस पुनिया,
खोटा सिक्का टकसाल सजा, ऐसी कारोबारी दुनिया!

पूजा, सुमिरन, अरदास, ध्यान, हैं पंथ अलग पर लक्ष्य एक,
नित मानवता का आवाहन, सद्बुद्धि जगे, सत्कर्म नेक!

हो देवासुर संग्राम नवल, वसुधा की कोख फले-फूले,
आस्था विजयिनी कहती है, लौटेंगे घर भटके भूले।

संघर्षव्रती तप निखरेगा, माटी सुजला-सुफला होगी,
सब सपने होंगे परिपूरन शुभ संस्कृति अजर-अमर होगी!

□

मानुस जनम न पाए

काल मरुद् गति से बढ़े, जीवन घटता जाए।
पीड़ामय संसार है, खुशी कहाँ से पाए॥

ऊँचे आसन पर चढ़े, धन मद में बौराए।
सोने की लंका जली, क्यों कर तू इतराए?

पाप गठरिया सिर मढ़ी, गंगाघाट नहाए।
दंभ, कपट, जंजाल में बिरथा जनम गँवाए॥

मलते इतर फुलेल हैं, मन की बास न जाए।
कोयल बैठी मौन है, काग बेसुरा गाए॥

हंसा पैठा मानसर, वक विद्वान् कहाए।
राजनीति का पेंच है, साधो जग बौराए॥

नारी गुनवंती वही, कुल परिवार नसाए।
वृद्धाश्रम आश्रय भया, मात-पिता कलपाए॥

डिस्को धुन पर थिरक रहें, श्रवण कौन समझाय।
अपने घर के सामने भीख माँगते राय॥

पूत-कपूत बिदेस हैं, करनी कही न जाय।
बिटिया ब्याही आन घर, सपने पलक सजाय॥

सास कर्कशा, ससुर पतित, वधिक रूप दिखलाय।
पति परमेश्वर असुर सम, विपदा सही न जाय॥

गाँव-नगर जानकी जले, व्यथा कथा दुहराए।
नारी की गरिमा बड़ी क्यों मरजाद नसाए?

कृष्ण सुदामा मैत्री, गाथा क्यों कर गाय।
सोने के पट बंद हैं ईश कहाँ से पाय॥

ऐसी चाकी चल रही, लोभ-मोह अरुझाय।
हर पल साँसें झीजतीं, देख रहे निरुपाय॥

धन-दौलत रेती हुई, देह अकेली जाय।
झूठा जग झूठी अकड़, मरघट सच बतलाए॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँझ भई सँभलो नहीं, नैया डूबी जाय।
छूटेगा संसार पुनि मानुस जनम न पाय॥

□

तुम भारत भाग्य विधाता हो

तुम हो भारत की युवा शक्ति, स्वप्नों की नूतन परिभाषा,
छंदों का स्वर वैभव तुम हो, हर मातृ कुक्षि की अभिलाषा।

तुमने ही वैदिक मंत्र दिए, तुमसे ही हुआ अनल सिरजन,
मस्तक पर धरते काल व्याल, डमरू निनाद, शिव का नर्तन,
अजपा जप करते महावीर, शबरी निषाद के सखा राम,
माया विजड़ित दिग्भ्रमित पाथ, नव उद्बोधन गीता ललाम
उद्गाताओं का अनुशासन, यह सृष्टि यज्ञशाला जैसी
शाश्वतता की अनुपम आभा, जगती है उसकी छाया सी।

उदात्त मध्य स्वर साधक तुम, सम विषम श्वास की नियमन गति
धरती नभ ग्रह नक्षत्र नवल, भैरवी राग, ऋत्विज संस्कृति।
विज्ञान स्रोत के सूत्रधार, सबकी शुभता का दिव्य गान
चेतन अवचेतन का रहस्य, उद्घाटन की क्षमता महान्
भौतिक लिप्साएँ नागपाश, सात्त्विक विवेक की पराशक्ति
उद्बुद्ध मनीषा निष्कलंक, निर्लोभ चित्त साधुता वृत्ति।

तुम हो अजेय वैश्वानर तुम, गुरु जननि जनक ऋणत्राता हो,
तुमको पाना है आत्मज्ञान, तुम भारत भाग्य विधाता हो।

□

आवाहन

मेरा आँगन है खुला-खुला, उनके घर पर कितने पहरे!
नित भक्तिभाव में रमी रहूँ, मैं क्या जानूँ कैसे खतरे?
संगीनों के साये में वे चिंता की गठरी ढोते हैं,
पिंजड़े में बंद परिंदे हैं, आकाश निहारा करते हैं!
दो रोटी, मुट्ठी भर चावल, शीतल जल, बाँहें सिरहाना,
हरियाली धरती, मुक्त पवन, नीलाभ गगन सा मन अपना!
वे दर्पण देख सिहरते हैं, अपना मुख बेगाना लगता,
बदनुमा दाग से भरा हुआ, ज्यों शीशमहल खँडहर लगता।

सोने के सिंहासन बैठे, वे पल भर चैन न पाते हैं,
चाँदी की थाली में खाते, कुछ हजम नहीं कर पाते हैं।
वे भाषण-पटु हैं, आश्वासन आहार परोसा करते हैं,
उनकी कथनी आकाश-कुसुम, वे झूठ बाँटते फिरते हैं।
शब्दों का सत्य पला, जिनमें उन साँसों की तकदीर मिली,
अपनी कुटिया नंदन कानन, विद्या धन की जागीर मिली।
जिंदगी बिसात सियासत की, वे शकुनि रूप धर बैठे हैं!
मद मोह लोभ के पुतले हैं, झूठी प्रभुता में ऐंठे हैं।

आएगा काल प्रभंजन बन, तिनका-तिनका उड़ जाएगा।
दीमकवाली दीवारें हैं, घर कभी नहीं बच पाएगा!
शुभ संस्कार की माटी में अभिनव विद्या का बीज वपन,
संयम, अनुशासन, विनय भाव से राष्ट्र धर्म का अनुपालन,
हो मनस्ताप निज कर्मों का, संकल्प शक्ति जागे नूतन,
घर लौटेंगे भूले भटके, संस्कृति करती है आवाहन!

□

माँ का मंगलमय आवाहन

नयनों में भरी अखंड ज्योति
शत सूर्य चंद्र, तन की विभूति
दशभुजा देवि, महिमा अनन्य
दिव्योपम माँ की छवि सुरम्य!

अवतरित हुईं सब भार हरण
आसुरी शक्ति संग भीषण रण!
तव तनया माँ, मैं सिंह लग्न
मुझमें विराजती तू हर क्षण।

भय, संशय, विभ्रम, असुर भाव
घिरते, मन होता निस्सहाय
तब कांति तुम्हारी 'कवच' हुई
'अर्गला' खोलती राह नई।

'कीलक' संकल्प साधता है,
मंत्रों से ज्ञान सँवरता है।
संग्राम नया ठन जाता नित
आस्था इधर, वे संशय चित्त।

तुम शक्तिरूपिणी बन आतीं
निर्भयता मन में भर जातीं
शांभवी, शारदा, अवचेतन
में भरती हो माँ भाव प्रमन!

असुरों का दंभ दलन करतीं
मस्तक पर वरद हस्त धरतीं
तुम दया रूपिणी, कल्याणी
अमृत बरसाती मृदु वाणी!
इस वसुंधरा का भार बने
महिषासुर, रक्तबीज पलते
निज महानिलय से नीचे आ
जगती को त्राण दिलाओ माँ!

हर पल बस एक प्रतीक्षा है
भक्तों की पावन इच्छा है।
दश भुजा देवि, निज रूप धरो
तुम महाकालिका बन उतरो!

माँ का मंगलमय आवाहन,
तब हो असुरों का गर्वदलन!

कहानी
मोराबादी, राँची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

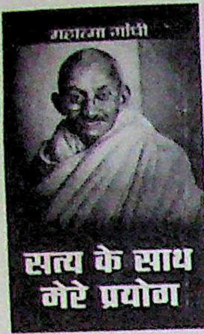

प्रभात प्रकाशन

ISO 9001 : 2008 प्रकाशक

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
☎ 011-23289777 (7 लाइंस)
इ-मेल : prabhat1@vsnl.com • prabhatbooks@gmail.com

सितंबर 2011 में प्रकाश्य नई पुस्तकें

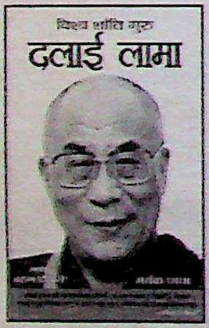

लेखक	पुस्तक	मूल्य
महात्मा गांधी	ग्राम स्वराज्य	250.00
	सत्य के साथ मेरे प्रयोग	250.00
डॉ. राजेंद्र प्रसाद	चंपारन में महात्मा गांधी	500.00
ए.पी.जे. अब्दुल कलाम	जीवन वृक्ष	200.00
स.ही. वात्स्यायन अज्ञेय	अज्ञेय : रचना सागर	700.00
एन.के. सिंह	विवेक की सीमा : राजनीति और परिवर्तन	400.00
मयंक छाया	विश्व शांति गुरु दलाई लामा	400.00
अशोक राज	योग गुरु स्वामी रामदेव	250.00
सं. उमा विष्णु	गौरवशाली भारत	500.00
जॉन एम. हंट्समैन	विजेता धोखा नहीं देते	300.00
आर. गोपालकृष्णन	मैनेजर नहीं, Smart मैनेजर बनें	350.00
रमा बीजापुरकर	120 करोड़ भारतीयों का बाजार	350.00
रश्मि बंसल	Zero To हीरो	400.00
वी. रघुनाथन	छोटे कदम, लंबी दौड़	200.00
मॉर्गन विट्ज़ेल	TATA एक कॉरपोरेट ब्रांड का विकास	400.00
सं. सुशील कपूर	विश्व के महान् भाषण	350.00
सी.के. प्रह्लाद	गरीबी हटाएँ, मुनाफा कमाएँ	500.00
विक्रम अकुला	माइक्रोफायनेंसिंग से गरीबी हटाएँ	200.00
रोहिणी नीलकेनी	स्टिल बॉर्न	300.00
जूल्स वर्न	80 दिन में दुनिया की सैर	175.00
नोरेनहा/सुजाता अग्रवाल	नैनो कार की कहानी	200.00
आचार्य महाप्रज्ञ	जो सहता है वही रहता है	250.00
विनीत नायर	पहले कर्मचारी फिर ग्राहक	250.00
सरश्री	जीवन के महान् रहस्य	150.00
नितिन गडकरी	विकास के पथ	700.00
गौरव बंसल	डर के आगे जीत है	175.00
सं. देवेंद्र स्वरूप/यादवराव देशमुख	राष्ट्र ऋषि नानाजी	200.00
शांता कुमार	भ्रष्टाचार का कड़वा सच	300.00
मुश्ताक शेख	कहानी शाहरुख खान की	400.00
शशांक जौहरी	सुपर स्पीड कंप्यूटर कोर्स	500.00
रशमीत कौर	सुपर स्पीड इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स	500.00
सं. बदरीनाथ कपूर	पॉकेट अंग्रेजी-हिंदी कोश	75.00
	पॉकेट हिंदी-अंग्रेजी कोश	75.00
जय शंकर मिश्र	24×7 आनंद ही आनंद	250.00
महेश शर्मा	शिक्षा का अधिकार (RTE)	200.00
ममता महरोत्रा	महिला अधिकार बनाम मानव अधिकार	200.00
शिवगोपाल मिश्र	आपदा प्रबंधन	300.00
अनुपम मिश्र	आज भी खरे हैं तालाब	150.00
डॉ. प्रफुल्ल विजयकर	Predictive होम्योपैथी	200.00
प्रेमपाल शर्मा	घर का डॉक्टर	200.00
विनोद मल्होत्रा	गीता में मैनेजमेंट सूत्र	250.00
अजय कुमार उपाध्याय	हिंद स्वराज की अनंत यात्रा	250.00
शंभू रतन अवस्थी	नवीकरणीय ऊर्जा	250.00
ममता झा	चार्ली चैप्लिन	200.00
रस्किन बॉण्ड	साहसिक कहानियाँ	200.00
	भारत के बच्चे	175.00
मनु शर्मा	द्रौपदी की आत्मकथा	175.00
शंकर	विवेकानंद की आत्मकथा	500.00
रमेश पोखरियाल 'निशंक'	प्रतिज्ञा	200.00
ईशान महेश	मुझे कृष्ण चाहिए	200.00
शुभांगी भडभडे	योगीराज ज्ञानेश्वर	400.00
अशोक गुजराती	व्यंग्य के रंग	200.00
शिव शर्मा	दुम की दरकार	200.00
हरि जोशी	नेता निर्माण उद्योग	200.00
विजय कुमार	कुरसी तू बड़भागिनी	175.00
दिनकर जोशी	चक्र से चरखे तक	250.00
	रामायण के पात्र	225.00
सूर्यबाला	कात्यायनी संवाद	175.00
ऋता शुक्ल	मृत्युगंध-जीवनगंध	200.00

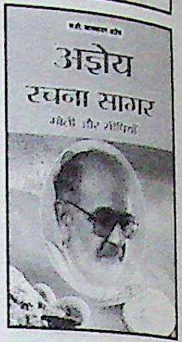

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

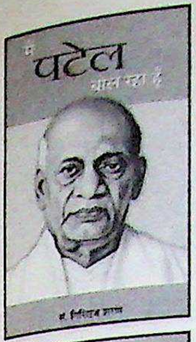

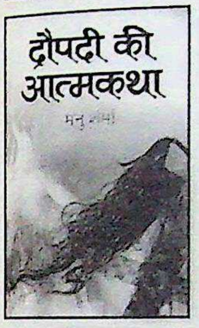

- भवानीलाल भारतीय
  बॉलीवुडनामा 300.00
- सं. अरुणा सीतेश
  बयार''उस पार से 250.00
- मंजु मधुकर
  चंपई मन 200.00
- वीरबाला वर्मा
  बस इतनी सी रोशनी 175.00
- सुचित्रा भट्टाचार्य
  अंधकार बेला 250.00
- पूर्णिमा केडिया 'अन्नपूर्णा'
  सीढ़ियाँ 225.00
- महेश शर्मा
  साफ हाथ, स्वस्थ जीवन 125.00
- राजेंद्र मोहन भटनागर
  आज का ताजा खबर 200.00
- हरदर्शन सहगल
  तीसरी कहानी 200.00
- मोजेज माइकेल
  ओ. हेनरी की लोकप्रिय कहानियाँ
- सिरिल मैथ्यू
  इनसानियत की वापसी 200.00
- रोशन प्रेमयोगी
  एक डॉक्टरनी का जिंदगीनामा 300.00
- सुरेश कांटक
  सूरज उगने से पहले 175.00
- रत्नेश्वर
  लेफ्टिनेंट हडसन 150.00
- राजेश कुमार
  पाँच नुक्कड़ नाटक 200.00
  भ्रष्टाचार का अचार 200.00
- अरुण तिवारी
  सुकरात 150.00
- तेजेन कुमार बासु
  सी.वी. रमन 150.00
- बेंजामिन फ्रैंकलिन
  बेंजामिन फ्रैंकलिन की आत्मकथा 150.00
- दिनकर
  मार्टिन लूथर किंग 200.00
- रामप्रसाद बिस्मिल
  आत्मकथा 150.00
- दिलीप कुलकर्णी
  जगदीशचंद्र बसु 200.00
- प्रेमचंद्र स्वर्णकार
  संक्रामक बीमारियों से कैसे बचें 250.00
- रुडयार्ड किपलिंग
  जंगल बुक 200.00
- हेलन कीलर
  मेरा जीवन 150.00
- मायाराम 'पतंग'
  विद्यालय उत्सव 200.00
  चुने हुए विद्यालय गीत 250.00
  श्रेष्ठ स्कूली गीत 250.00
- डी.डी. शर्मा
  गणित में पाएँ 100/100 150.00
- डॉ. निलय खरे/श्यामसुंदर शर्मा
  आर्कटिक : मध्य रात्रि के सूर्य का क्षेत्र 300.00
- दाजी पणशीकर
  रामायण के 51 प्रेरक प्रसंग 250.00
- सं. गिरिराज शरण
  मैं विवेकानंद बोल रहा हूँ 200.00
  मैं लाजपतराय बोल रहा हूँ 200.00
  मैं अरविंद बोल रहा हूँ 200.00
  मैं सावरकर बोल रहा हूँ 200.00
  मैं गांधी बोल रहा हूँ 200.00
  मैं सुभाष बोल रहा हूँ 200.00
  मैं नेहरू बोल रहा हूँ 200.00
  मैं पटेल बोल रहा हूँ 200.00
  मैं तिलकबोल रहा हूँ 200.00
- सं. प्रशांत गुप्ता
  मैं कलाम बोल रहा हूँ 200.00
- सं. जयश्री
  मैं राधाकृष्णन बोल रहा हूँ 200.00
- सं. अनिल कुमार
  मैं भगतसिंह बोल रहा हूँ 200.00
- विवेक आनंद
  शतरंज खेलना सीखें 200.00
- कमोडोर विजय शंकर बबेले
  पति-पत्नी और नौसेना 250.00
- सं. वाग्देव
  सूर पदावली 200.00
  रहीम दोहावली 200.00
- सं. राघव 'रघु'
  रसखान रत्नावली 200.00
  तुलसी दोहावली 200.00
- सं. नीलोत्पल
  मीरा पदावली 200.00
  कबीर दोहावली 200.00
- अनीश भसीन
  1000 बिहार प्रश्नोत्तरी 200.00
  जानिए मानव अधिकारों को 300.00
- संजय कुमार द्विवेदी
  1000 झारखंड प्रश्नोत्तरी 200.00
  1000 उत्तर प्रदेश प्रश्नोत्तरी 200.00
  1000 भारत ज्ञान प्रश्नोत्तरी 200.00
- राजेंद्र प्रसाद सिंह
  1000 महापुरुष प्रश्नोत्तरी 200.00
- वृजकिशोर प्रसाद सिंह
  1000 हिंदी वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तरी 200.00
- आशारानी व्होरा
  भारत की प्रथम महिलाएँ 250.00
- प्रमोद कुमार अग्रवाल
  जागो, ग्राहक जागो 150.00
- रवि चतुर्वेदी
  क्रिकेट की रोचक बातें 250.00
- मुकेश नादान
  सिंहासन बत्तीसी 175.00
- स्वप्नदर्शी
  अरेबियन नाइट्स की कहानियाँ 175.00
- वैभव विप्लव
  हातिमताई की तिलिस्मी कहानियाँ 175.00
- श्रुति
  शौर्य और बलिदान की कहानियाँ 175.00
- विभोर कुमार
  रोमांचकारी कहानियाँ 175.00
- जॉन विल्सन
  बाइबिल की कहानियाँ 175.00
- सत्य प्रकाश द्विवेदी
  संपूर्ण पंचांग ज्ञान 250.00
- आनंद आदीश
  आँखिन देखी, अंतर लेखी 150.00
  राष्ट्रमंत्र के हे उद्‌गाता! 125.00
- सं. श्रीकांत
  पीर मुहम्मद मूनिस : कलम का सत्याग्रही 200.00
- अनिल प्रकाश
  समय के सरोकार 200.00
- बाल्मीकि महतो
  अठारहवीं सदी का बिहार 150.00
- पवन
  कार्टूनों की दुनिया 175.00
- सुरेश प्रसाद
  मदांतकी 175.00
- जगदीश ममगाँई
  लोकशिल्पी दिल्ली नगर निगम 400.00
- रमाशंकर शर्मा
  स्मृति पंख 250.00
- डॉ. चंदर सोनाने
  पर्वतों का अंत:संगीत 250.00

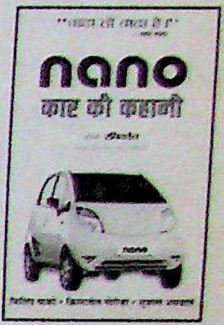

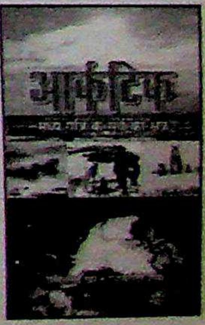

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महिलाएँ पुरुषों की चिंता छोड़ दें

● महादेवी वर्मा

इन दिनों दिल्ली में युवतियों द्वारा युवकों के सहयोग से निकाला गया 'बेशर्म मोर्चा' के पक्ष-विपक्ष में विचार आ रहे हैं। सराहना और भर्त्सना के स्वर सुनाई दे रहे हैं। ११ अगस्त को पार्लियामेंट में भी रोष व्यक्त किया गया। इस अवसर पर महीयसी महादेवी वर्मा द्वारा (१९८१) नई दिल्ली में दिए गए वक्तव्य को पुनः प्रकाशित करना उचित समझ रही हूँ। मैंने उनके भाषण को यूँ शब्दों में गूँथ लिया था। महिला विकास की दिशा खोजते हुए ये शब्द हमारे संबल हैं।

१९८१, नई दिल्ली की सामाजिक-साहित्यिक संस्था 'महिला मंगल' ने महीयसी महादेवी वर्माजी के सम्मानार्थ स्थानीय एवाने-गालिब ऑडिटोरियम में एक सभा का आयोजन किया था। महान् कवयित्री की अमर रचना 'यामा' के चार भावगर्भ गीतों पर नृत्य व भाव-नृत्य दिखाए गए। दर्शक, जिनमें अधिकांश महिलाएँ थीं, महादेवी वर्माजी को सुनने को उतावली हो रही थीं। महादेवीजी ने कहा, ''आप लोगों को हँसते, गाते, नाचते देख मुझे अपने जेल-जीवन का स्मरण हो आया है। वहाँ सारे कैदी मिलकर पर्व-त्योहार मनाया करते थे। नाच-गान से जेल का प्रांगण गूँज उठता था। सबसे पुराने कैदी का सम्मान किया जाता था। कुछ देर के लिए हम भूल जाते थे कि हम कैदी हैं। क्या आज आप भी उन्हीं कैदी की तरह अपना गम नहीं भूल बैठी थीं?''

और वर्तमान नारी-जीवन की तुलना कैदी-जीवन से करते-करते स्वयं महादेवीजी का मन विषाद से भर उठा। अपने ही भाव में डूबती-उतराती पूरे हॉल के दर्शकों को वस्तुस्थिति का भान कराती महादेवीजी ने कहा, ''आजादी की लड़ाई में गांधीजी ने महिलाओं के सहभाग का महत्त्व आँकते हुए हमारा आवाहन किया और शिक्षित-अशिक्षित युवा, प्रौढ़ और बुजुर्ग महिलाएँ बहुतायात में उस अहिंसक आंदोलन से जुड़ गईं। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् देश के कई समुदायों-संगठनों ने आजादी के फल में अपना हिस्सा माँगा। हमने कुछ नहीं माँगा और ऐसा लगा, जैसे हमें बहुत कुछ मिल गया। संविधान द्वारा नारी और पुरुष में भेदभाव नहीं बरता गया। स्त्री को भी 'व्यक्ति' मान पुरुष की बराबरी के सब अधिकार मिले। नागरिक मानकर उसे व्यक्तित्व दिया गया।''

महादेवीजी का मन भर आया। उन्होंने कहा, ''लेकिन मुझे बड़ा दुःख होता है, जब मैं आजादी मिलने के तीन दशक सात वर्ष बिताए समाज को देखती हूँ। आज नारी को कुछ भी नहीं मिला है। जो कुछ तब मिला हुआ था, वह भी छिन गया। हमारे जमाने में स्त्री, बेटी, पत्नी और माँ के रूप में सुरक्षित थी। परदा प्रथा थी, स्त्रियों में पढ़ने-लिखने का रिवाज न था, देश परतंत्र था, पर समाज में हम स्त्रियों का महत्त्वपूर्ण स्थान था। भय, संत्रास, असुरक्षा-भाव आज के बनिस्बत तब नारी में कम थे।''

वर्तमान समाज, समाज के प्रमुख घटक पुरुष के नारी को देखने के नजरिए की ओर इंगित करती महान् कवयित्री की वाणी रुकती है—''आज नारी व्यक्ति नहीं, वस्तु मानी जाने लगी है। सब उसका उपभोग करना चाहते हैं। पुरुष को अपने जीवन-यापन के लिए धन चाहिए और धन-संपदा के साथ नारी भी चाहिए। एक बार धन-संपदा गँवाकर पुरुष फिर से अर्जित करता है, उसका उपभोग करता है। ठीक उसी प्रकार एक नारी को जलाकर दूसरी अर्जित करता है। उसके साथ आए धन-वैभव और नारी दोनों को समान रूप में भोगता है।''

नारी का 'वस्तु' रूप देखकर पूजनीया का मनोभाव गहरा जाता है। परंतु जब ऐसा लगता है कि नारी की इस वर्तमान स्थिति के लिए मात्र पुरुष ही दोषी नहीं, स्त्री भी है तो उनका मन पीड़ा से भर उठता है। पीड़ित मन की स्वीकृति है—''पुरुष की निर्माता तो नारी ही है न! पुरुष को अच्छाई-बुराई का क्या भान? पुरुष को संसार में चलने की राह अपनी अंगुली पकड़कर तो स्त्री ही दिखाती है। संसार को देखने का नजरिया, कटु-मधु वाक्शक्ति तो नारी ही देती है। अतः नारी को अपनी शक्ति का भान होना चाहिए।''

भारतीय नारी के अंदर छुपी अपार शक्ति की पहचान करती महादेवीजी को राजस्थान की वीरांगनाओं का स्मरण हो आता है। भावविह्वल होकर कहती हैं—''हमारे देश की राजस्थानी वीरांगनाएँ दुनियाँ में बेमिसाल हैं। उन्होंने जिन्हें स्नेह से पाला-पोसा, उन पुत्रों के हाथों में खड्ग धराया; जो उनके रक्षक थे, उन पतियों को तिलक लगा देश-जाति व धर्म के रक्षार्थ रणभूमि में भेज दिया और स्वयं सारे शृंगार कर अग्नि में कूद गईं। वह उनकी अग्नि-परीक्षा नहीं थी, स्वयमाहुति थी। अग्नि-परीक्षा तो सीता की हुई थी। परंतु दुबारा सीता ने भी अग्नि-परीक्षा नहीं दी। दुबारा अग्नि-परीक्षा की जब बारी आई तो सीता माँ बन चुकी थीं—लव और कुश की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर माता। भला माँ कहीं अपने शील की परीक्षा देती है? माँ के रूप में स्त्री के शील-हरण की बात नहीं की जा सकती। माँ की अस्मिता पर किसी की अंगुली नहीं उठ सकती। माँ तो माँ है, वह भोग्या नहीं हो सकती।

"सीता ने तो रावण के साम्राज्य में भी अपनी रक्षा स्वयं की। जंगल में राम-लक्ष्मण उनकी रक्षा करते थे। लंका में सीता अकेली थीं। रावण उनके आत्मबल के आगे उन्हें हाथ भी नहीं लगा सका, अपने राजप्रासाद में ले जाने की हिम्मत नहीं बटोर सका; पर आज की नारी जो माँ है, पत्नी है—फिर उसका आत्मबल कहाँ चला गया? क्या उसे कोई सताता है, भोगता है, जलाता है, आत्मदाह के लिए मजबूर करता है? स्वयं नारी में कहीं-न-कहीं कमजोरी आई है, उसकी निर्माण-कला में दोष आया है, विघ्न पड़ा है। नहीं तो उसकी गोद में पला पुरुष इतना उच्छृंखल क्यों है? उसके व्यवहार अमानवीय क्यों हो गए? वह मनावोचित गुणविहीन होकर अस्त्र-शस्त्र बनाने, संहार करने में क्यों लगा है?"

महादेवीजी महिलाओं से आग्रह करती हैं—"पुरुषों की चिंता छोड़ दो। घर में किसी लड़के की हरकतों से दु:खी होकर लोग कहते हैं—आवारा हो गया है, जाने दो! पर क्या कभी किसी लड़की को भी ऐसा कहा है? उसकी माँ, घरवाले कभी नहीं कहते आवारा हो गई है, इसे होने दो! क्यों? इसलिए कि लड़कियों के आवारा होने की कल्पना नहीं की जा सकती। लड़की मात्र एक व्यक्ति नहीं, संस्था है। अब जब पुरुष पागल हो रहा है तो होने दो! आप तो सजग-सचेत नागरिक बनो। अपनी शक्ति पहचानो। अपनी शक्ति से पुनः आपको नया निर्माण करना है।"

समाज में व्याप्त विसंगतियों और अराजकता की स्थिति को स्वीकार करती महादेवीजी की मान्यता है—"समाज विप्लव के कगार पर खड़ा है।" उनके हृदय की कसमसाहट मुखर हो उठती है—"परंतु मैं नया निर्माण करूँ तो कैसे? मुझे सौ ऐसी लड़कियाँ मिलें, जो दहेजलोभी लड़कों से शादी करने से इनकार कर दें तो मैं क्रांति ला सकती हूँ—समाज को बदलने की पहल कर सकती हूँ। परंतु मुझे तो ऐसी सौ क्या, दस लड़कियाँ भी नहीं मिलतीं। मैं करूँ तो क्या करूँ?"

देश में स्त्री-शिक्षा की कमी को स्वीकारती हुई महादेवीजी की उक्ति थी—"ज्ञान का शिक्षा से संबंध नहीं। स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेती महिलाओं में पढ़ी-लिखी विजयलक्ष्मी पंडित जैसी विदुषी भी थीं तो कस्तूरबा गांधी जैसी स्कूली शिक्षा-विहीन समझदार भी। पर तत्कालीन राष्ट्रीय जीवन-मूल्य, व्यक्तिगत जीवनाद्देश्य को समझने में उनमें कहीं कोई भेद न था। कभी-कभी तो कस्तूरबा गांधी जैसी महिलाएँ मुद्दों को ज्यादा समझती थीं और अपनी पूरी शक्ति, भरपूर तन्मयता से कार्यक्रमों में जुट जाती थीं।"

अपने सामने उपस्थित राजधानी की प्रबुद्ध लेखिकाएँ, संपादिकाएँ, पत्रकार, गृहिणी, युवा, प्रौढ़ और वृद्धाओं की आँखों में झाँकती, कुछ पढ़ती, कुछ गुनती महादेवीजी आशान्वित हो उठती हैं—"मुझे तो इन आँखों से आशा की किरणें फूटती दिखती हैं। इन नयनों में अपनी नियति पर क्षोभ है तो एक विश्वास भी है। अपनी स्थिति से उत्पन्न दर्द का पानी है तो आशा की उष्णता भी है। मुझे भी आप सबका विश्वास है। परंतु न जाने, आप सब क्यों प्रगाढ़ निद्रा में सोई हो! जब कभी अपनी बहनों से मिलती हूँ, उन्हें जगाती हूँ। जाग भी जाती हैं, पर फिर सो जाती हैं। आप जागेंगी नहीं तो दुनिया को देखेंगी कैसे? स्वप्न देखिए, पर मात्र स्वप्नद्रष्टा मत बनिए। स्वप्न तो आपकी सुशुप्तावस्था की निशानी है। अपने स्वप्नों को साकार करने की पहल कीजिए।"

महीयसी महादेवीजी उपस्थित महिलाओं को विश्वास दिलाती हैं—"आपको पुरुषों की शक्ति मिल जाएगी। ये बेचारे हैं, ये कुछ नहीं कर सकते। आप इनकी शक्ति और अपने अंदर की असीमित शक्ति संचय कर, पशुबल पर आरूढ़ हो सामाजिक बुराइयों को मिटाने का संकल्प लीजिए। अपने तेजस्व को स्वीकारिए। आप अपने को 'व्यक्ति' बनाइए। अपने व्यंजन रूप का परित्याग कीजिए। शक्ति किसी 'व्यक्ति' में होगी, 'वस्तु' में नहीं। पुरुष की भोग्या नहीं, उसकी निर्मात्री बनिए।"

वे बोलीं—"स्वतंत्र भारत में नारी को मिले वैधानिक अधिकारों की कमी नहीं, अधिकार-ही-अधिकार मिले हैं। परंतु भारत में कितनी नारियाँ हैं जो अपने अधिकारों को भोगती हैं? आप अपने कर्तव्यों के बल पर अधिकार अर्जित कीजिए। कर्तव्यों और अधिकारों का सदुपयोग कर ही आप 'व्यक्ति' बन सकती हैं। आप स्वयं व्यक्ति हैं। आपको अपने कर्तव्यों का भान है तो कोई पुरुष आपको भोग्या नहीं बना सकता, व्यक्ति मानकर सम्मान ही करेगा। इसी तरह आनेवाली पीढ़ी आपकी ऋणी रहेगी।"

क्रांतिकारी कवयित्री को अपना बचपन याद आता है—"हमारे बचपन में लड़कियों की शिक्षा के नाम पर ज्यादा-से-ज्यादा रामचरितमानस रटवा दिया जाता था। जब मैंने हठ किया कि 'मैं पढ़ूँगी' तो सबको आश्चर्य हुआ। पढ़ने की स्वीकृति मिल भी गई, परंतु जब मैंने ऋग्वेद पढ़ने की इच्छा जाहिर की तो सब हतप्रभ रह गए। परंतु वेदों को पढ़कर तो मुझे आश्चर्य हुआ। वहाँ तो हमारी ही गौरव-गाथा थी। नारी की गौरव-गाथा। वैदिककालीन महिलाओं की तेजस्विता, शौर्य, धैर्य, साहस, विद्वत्ता, व्यावहारिकता की कहानी। मुझे वेद को पढ़ने से बल मिला। मुझे लगा, नारी को प्रकृति ने अबला नहीं, सबला बनाया है। आज की नारी सबला बन सकती है—ऐसा विश्वास जागा। आप भी सबला बनिए, अपने ओढ़े हुए भोग्या रूप का परित्याग कीजिए। तभी समाज में आपका उपभोग, क्रय-विक्रय, आपका व्यापार, आपका दमन व दहन बंद होगा।"

वयोवृद्ध कवयित्री के अंग-प्रत्यंग में एक तेजस्व कौंध रहा था। तत्काल कुछ कर-गुजरने की शक्ति उनके जर्जर शरीर की धमनियों में प्रवाहित हो रही थी। आज की नारी को व्यक्तित्व प्रदान करने के लिए छटपटा उठी थीं।

एक चिंतक, विचारक और संवेदनशील कवयित्री महादेवी वर्मा द्वारा दिखाए मार्ग पर चलकर स्त्री का समुचित और समग्र विकास हो सकता है, जो स्वयं अपने, परिवार और समाज के लिए हितकारी होगा। महादेवी वर्मा का स्त्री विकास विषयक सपना पूर्ण नहीं हुआ है। हमें पूर्णता की ओर आगे बढ़ाना चाहिए। महादेवीजी के तब के विचार आज भी हमारे संबल हैं। हमें आत्मनिरीक्षण के लिए प्रेरित करते हैं। आगे भी यही विचार नारी विकास के चित्र होंगे, जिसमें महिलाओं द्वारा 'बेशर्म' मोर्चा निकालने का तो स्थान बिलकुल नहीं होगा।

प्रस्तुति—**मृदुला सिन्हा**
पी.टी ६२/२०, कालकाजी
नई दिल्ली-१९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

सूरीनाम में हिंदी विकास और साहित्यिक परिधि

● भावना सक्सेना

भारत से सोलह हजार किलोमीटर दूर दक्षिण अमेरिका के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में स्थित है सूरीनाम देश की प्राकृतिक वैभव से सजी-सँवरी सुवासित धरती, जिसके ऊपर आकाश न जाने कितनी बार सतरंगी ओढ़नी ओढ़ता है और उसके सौंदर्य व उर्वरता पर न्योछावर हो उसे सिंचित करता रहता है। इस देश की संस्कृति सामासिक संस्कृति है। यहाँ की भूमि पर प्रथम पदार्पण और कई ऐतिहासिक करवटों के बाद आज इस देश में जातीय सप्तरंगी इंद्रधनुष दिखाई पड़ता है। यहाँ मुख्यत: सात जातियों के लोग बसे हुए हैं—अमर इंडियन, डच अथवा यूरोपियन, अफ्रीकी, चीनी, हिंदुस्तानी, इंडोनेशियन और लेबनीज।

यहाँ डच, स्रनांग तोंगो, हिंदी, इंडोनेशियन, चीनी, बुश नीग्रो जनजातीय भाषाएँ व अमर इंडियन भाषाएँ बोली जाती हैं। डच यहाँ की आधिकारिक भाषा है। संपर्क के लिए बोली जानेवाली भाषाओं की ध्वनि भी भिन्न है। अत: सूरीनाम देश को जातीय व भाषिक कोलाज कहें तो अतिशयोक्ति न होगी।

हिंदी का वृक्षारोपण : इस भूमि पर ५ जून, १८७३ को जब भारतीयों के कदम पड़े तो दूर-दूर तक घने कँटीले जंगल के सिवा कुछ न था। इन भारतवंशियों को यहाँ अनुबंधित श्रमिकों के रूप में लाया गया था। सूरीनाम आनेवाला भारतीय समुदाय बहुत पढ़ा-लिखा नहीं था, किंतु अपनी संस्कृति को जीनेवाला वर्ग था, सूरीनाम में हिंदी का उदय इन्ही गिरमिटिया मजदूरों के माध्यम से हुआ। यहाँ आनेवाले भारतीय श्रमिक मूलत: उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों से थे, जहाँ भोजपुरी, अवधी, मगही, मैथिली, ब्रज भाषाएँ बोली जाती हैं। सूरीनाम लाकर उन्हें अलग प्लांटेशनों में रखा जाता था, साथ ही ये लोग रामायण, गीता, पुराण, सत्यनारायण कथा आदि साथ लेकर आए थे। पाँच वर्ष की शर्तबंदी के तहत आनेवाले हिंदुस्तानी मजदूरों के पास विकल्प था कि वे नया अनुबंध बना लें अथवा नि:शुल्क भारत वापस लौट जाएँ, फिर भी ६६ प्रतिशत हिंदुस्तानी यहीं बस गए। दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद ये अपने साथ लाए रामचरितमानस की चौपाइयाँ पढ़ते, आपस में मिल-बैठकर भजन गाते, किस्से-कहानियाँ कहते और इन्हीं बैठकों के माध्यम से भाषा, धर्म व संस्कृति का प्रचार होता रहा। २०वीं सदी के तीसरे दशक से हिंदुस्तानियों के अंदर सामूहिक जीवन जाग्रत् हुआ और संगठन कार्य स्थायी रूप से शुरू हुआ, तब अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक संस्थाएँ स्थापित की गईं। धीरे-धीरे शहर और गाँवों मे हिंदी पाठशालाओं का उद्घाटन होने लगा, जहाँ फुरसत के समय हिंदी की शिक्षा दी जाने लगी। धीरे-धीरे हिंदी अध्ययन में रुचि लगातार बढ़ती गई व पीढ़ी-दर-पीढ़ी विरासत में सौंपी जाने लगी।

आरंभ में हिंदी सीखने-सिखाने का स्रोत थी—नाथूराम की पहली से चौथी की पुस्तक। वर्ष १९६० में भारतीय सांस्कृतिक केंद्र की ओर से बाबू महातम सिंह यहाँ आए। सूरीनाम आने से पहले वे गयाना में हिंदी शिक्षण कार्य कर रहे थे। सूरीनाम में मानक हिंदी शिक्षण का पूरा श्रेय बाबू महातम सिंह को जाता है। इनके प्रयास से यहाँ विधिवत् रूप से हिंदी शिक्षण कार्य आरंभ हुआ और एक नई ऊर्जा का संचार हुआ। आज तक जो स्थानीय हिंदी अध्यापक पढ़ा रहे हैं, वे बाबू महातम सिंह से पढ़े हुए हैं और सदैव उनके प्रति आदर से नत रहते हैं। वर्तमान आकलन के अनुसार, यहाँ लगभग पचास हिंदी अध्यापक निस्स्वार्थ रूप से सतत हिंदी अध्यापन कर रहे हैं और अन्य लोगों को इसके लिए प्रेरित कर रहे हैं।

सन् १९७७ में यहाँ 'सूरीनाम हिंदी परिषद्' की स्थापना की गई, जिसे सूरीनाम सरकार द्वारा मान्यता प्रदान की गई है। 'सूरीनाम हिंदी परिषद्' अखिल सूरीनाम में प्रतिवर्ष हिंदी की परीक्षाएँ आयोजित करती है, ये परीक्षाएँ राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा (भारत) द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार ली जाती हैं। यहाँ प्रथमा, मध्यमा, उत्तमा, प्रवेश, परिचय, कोविद, रत्न की परीक्षाएँ आयोजित की जाती हैं । परिचय परीक्षा का स्तर हाई-स्कूल, कोविद का इंटरमीडिएट तथा रत्न का स्तर स्नातक के समकक्ष है। सिर्फ रत्न परीक्षा के प्रश्नपत्र राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा भारत से तैयार होकर आते हैं व उनकी जाँच भी वहीं पर होती है। जनवरी २००१ में आयोजित परीक्षा में लगभग ६२५ छात्रों ने भाग लिया।

कोविद पाठ्यक्रम में जयशंकर प्रसाद की 'ध्रुवस्वामिनी', संक्षिप्त 'गबन' तथा राष्ट्रभाषा रत्न में दिनकर की 'रश्मिरथी', जयशंकर प्रसाद की 'अजातशत्रु', भगवती शरण वर्मा कृत 'चित्रलेखा', आधुनिक काव्य संग्रह, हिंदी साहित्य का इतिहास राष्ट्रभाषा और लिपि, हिंदी भाषा सिद्धांत और अध्ययन आदि शामिल हैं। कठिन पाठ्यक्रम के रहते भी छात्रों की रुचि बने रहना दरशाता है कि यहाँ के लोग हिंदी के गहन पठन-पाठन में भी रुचि रखते हैं। इसके अतिरिक्त साहित्य से भी जुड़े हुए हैं और कंप्यूटर पर हिंदी प्रयोग के लिए रुचि दरशा रहे हैं।

यहाँ का हिंदुस्तानी समाज आरंभ से अपनी भाषा व संस्कृति के प्रति सजग रहा और विषम परिस्थितियों के बावजूद उन्होंने अपनी भाषा की ज्योति को जलाए रखा। विषम परिस्थितियों में कड़ी मेहनत से सँवारे गए इस देश की वर्तमान पीढ़ी के स्वर में आज भी अपने आजा-आजी (दादा-दादी) का दर्द व्यक्त होता है। इतिहास का दर्द स्वरों में उभरता है तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द सहज ही कविता का रूप ले लेते हैं। अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए यह समाज अपनी ही भाषा का प्रयोग करता है, किंतु अपने धर्म, जाति, संस्कृति को सँजोए इन हृदयों के भावोद्गार की अभिव्यक्ति साधनों के अभाव में अभी भी जन-सामान्य तक नहीं पहुँच पाई है।

हिंदी साहित्य रचना का आरंभ : सूरीनाम में हिंदी साहित्य रचना कब से प्रारंभ हुई, यह निश्चित रूप से कह पाना कठिन है। सन् १८७३ में जब भारतीय श्रमिकों को यहाँ लाया गया तो उनके पास लिखने-पढ़ने की सुविधा नहीं थी। दिन भर के कठिन परिश्रम के पश्चात् वे संध्या को आपस में बैठते व किस्से-कहानियाँ कहते, गीत गाते तथा बच्चों को लोरियाँ सुनाते; महाभारत, रामायण, पंचतंत्र, हितोपदेश, बीरबल-बादशाह की कहानियाँ सुनाते, महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद और महर्षि दयानंद के विचारों पर चर्चा करते। इस तरह मौखिक साहित्य जीवित रहा।

धीरे-धीरे उनके अपने अनुभव, दिन भर की कठिनाइयाँ और जीवन का दर्द शब्दों में उभरकर आने लगा। जैसे विलयम वर्ड्सवर्थ ने कहा है कि काव्य हृदय की तीव्रतम अनुभूतियों की सजग अभिव्यक्ति है, तो अनुभूतियाँ अभिव्यक्त होने लगीं और काव्य रचना आरंभ हुई, किंतु यह मौखिक थी। दिन भर के श्रांत-क्लांत श्रमिक अपने अनुभवों को पद्य (दोहा, चौपाई, गीत, भजन इत्यादि) में प्रकट करते। कुछ लोगों ने लिखना भी आरंभ किया, लेकिन अधिकांश उत्पीड़ित वर्ग के पास कोई साधन नहीं था। समय के साथ गद्य लेखन भी आरंभ हुआ, किंतु यह सभी आरंभिक रचनाएँ हस्तलिखित रूप में ही रहीं। साधन सुलभ न होने के कारण इनके कार्य प्रकाशित नहीं हो पाए। कुछ पांडुलिपियाँ प्राप्त भी हुई हैं तथा अन्य की खोज जारी है।

सूरीनाम के साहित्य का इतिहास जानने के लिए पंडित हरिदेव सहतू का शोध कार्य महत्त्वपूर्ण है, उन्होंने अपनी पुस्तक 'सूरीनाम में हिंदी भाषा और साहित्य का विकास' में सूरीनाम के लिखित साहित्य को दो भागो में बाँटा हैं:

१. सन् १९१८ से १९६० तक
२. सन् १९६० से १९७५ तक व आगे

इनके शोध कार्य से पता चलता है कि मुंशी रहमान खान सूरीनाम के पहले कवि होने की आम धारणा सर्वथा सत्य नहीं है। मुंशी रहमान खान तथा पंडित चंद्रमोहन सिंह से पहले अनेक लोगों ने हिंदी में लिखा। आरंभ में ये रचनाएँ धार्मिक सत्संग में भाग लेनेवाले प्रचारकों द्वारा हस्तलिखित परचों के रूप में वितरित की जाती थीं, फिर टंकित व साइक्लोस्टाइल करके पुस्तकें निकाली जाने लगीं।

नवांकुरित साहित्यकारों की सूची भी लंबी है, जैसे अमित अयोध्या, वीना अयोध्या, विकास समोधी, डॉक्टर कारमेन जगलाल, कृष्णा कुमारी भिखारी, संध्या लल्कु, तारावती बद्री, लीलावती कल्लू, सुमित्रादेवी बलदेव। ये सभी नए कवि और लेखक मुख्यतः मानक हिंदी में ही लिखते हैं। इनकी रचनाएँ 'शब्द-शक्ति' नामक पत्रिका में छपती रहती हैं। समय-समय पर यहाँ कई हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ निकलती रही हैं, जैसे 'आर्य दिवाकर' से 'धर्म-प्रकाश' और 'वैदिक संदेश', स्व. बाबू महातमजी के निर्देशन में निकली 'शांतिदूत', सूरीनाम हिंदी परिषद् से 'सूरीनाम दर्पण' और 'हिंदीनामा' तथा सूरीनाम साहित्य मित्र संस्था की 'शब्दशक्ति'। किंतु साधनों के अभाव में इनका सतत प्रकाशन नहीं हो पाता है। वर्ष २०१० में सूरीनाम साहित्य मित्र संस्था का प्रथम कविता संग्रह 'एक बाग के फूल' प्रकाशित हुआ।

आरंभ से अब तक सूरीनाम के सभी साहित्यकार हिंदी में लिखकर अपने को भारत से जुड़ा हुआ पाते हैं। इनकी कविताओं, लेखों, नाटकों में संस्कृति और उससे जुड़ाव की झलक है। भाषा प्रेम की अभिव्यक्ति है, हिंदी सीखने के लिए प्रेरणा है। समस्त जीवन की अनुभूतियों के बहुआयामी चित्र हैं और अतीत की वेदना है; साथ में है धार्मिक आस्था, भक्ति और लोकजीवन का संगीत।

पंडित लक्ष्मी प्रसाद बलदेव (बग्गा), श्री मंगल प्रसाद, मुंशी रहमान खान, बाबू चंद्रमोहन रणजीत सिंह, महादेव खुनखुन, रामनारायण झाव, रामदेव रघुबीर वे नाम हैं, जिन्हें अभी तक वैश्विक स्तर पर पहचान तो नहीं मिल पाई है, लेकिन प्रवासी भारतीय हिंदी साहित्य में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है। ये सभी कवि भाषा व संस्कृति की ओर लौटने और सामाजिक कुरीतियों से बचने की प्रेरणा देते हैं। चंद्रमोहनजी ने केवल मानक हिंदी में ही लिखा और भाव भाषा तथा छंद पर विशेष ध्यान दिया। इन्हें सूरीनाम का मुख्य कवि कहा जाता है। मुंशी रहमान खान ने अपनी पुस्तकों में भाषा व संस्कृति की ओर लौटने और सामाजिक कुरीतियों से बचने की प्रेरणा दी। इन्होंने हिंदू मुसलिम एकता नीति, इतिहास, इष्ट वंदना, ज्ञान-विज्ञान, भारतवर्ष का इतिहास व स्वतंत्रता आंदोलन विषयों को अपने काव्य में समाहित किया है।

मौजूदा हस्ताक्षरों में मुख्य हैं—अमर सिंह रमण, डॉक्टर जीत नाराइन, सुरजन परोही, पंडित हरिदेव सहतू, जन सुरज नाराइनसिंह सुभाग, अमर सिंह रमण लोक चेतना और अंतर चेतना के सफल कवि हैं और काव्य, नाटक, निबंध के रचयिता, एक कुशल अभिनेता, रंगमंच निर्देशक, गायक और सामाजिक कार्यकर्ता भी रहे हैं। पेशे से चिकित्सक डॉक्टर जीत नाराइन स्वभाषा संस्कार से प्रेरित होकर हॉलैंड में रहते हुए अकेले ही 'सरनामी' पत्रिका का प्रकाशन व अपनी मातृभाषा का प्रचार-प्रसार करते रहे। जीत नाराइन ने टी दामस्तीग के साथ मिलकर डच-सरनामी व्याकरण की एक पुस्तक 'का हाल' तैयार की और दूसरी पुस्तक 'द देवनागरी स्क्रिप्ट' विशेष रूप से उन लोगों के लिए तैयार की, जो अपने आप हिंदी (देवनागरी) पढ़ना, लिखना और जानना चाहते हैं। भारतीय संस्कृति से अगाध प्रेम रखनेवाले कवि सुरजन परोही की भाषा परिष्कृत हिंदी है। इनकी कविताओं में पुरखों की वेदना है, साथ ही सामाजिक चेतना है, दर्द और आवेश भी है। समसामयिक विषयों से भरपूर व ईश्वरीय भक्ति से ओतप्रोत कविताएँ प्रार्थना के स्वर लिये हुए हैं श्री सुरजन ने रेडियो पर ३० वर्ष तक रोज बच्चों के लिए चंदामामा कार्यक्रम प्रसारित किया, जो अत्यंत लोकप्रिय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा। सहतूजी सूरीनाम में पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। पेशे से स्थानीय पाठशालाओं के मुख्य अध्यापक का कार्य करके अवकाश प्राप्त हैं। स्थानीय हिंदी प्रचार की संस्था सूरीनाम हिंदी परिषद् के सभापति का दायित्व अत्यधिक सफलता से उन्होंने अपने कार्यकाल में पूरा किया है। वे सूरीनाम में हिंदी में प्रकाशित होनेवाली स्थानीय पत्रिकाओं 'सूरीनाम दर्पण' और 'शब्द शक्ति' के प्रधान संपादक हैं। सहतूजी गद्य व पद्य दोनों विधाओं में लिखते हैं। जन सुरजनाराइन सिंह सुभाग सूरीनाम सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय में सलाहाकार के पद पर कार्यरत हैं व कई अन्य समाजिक संगठनों से जुड़े हुए हैं। सूरजजी की कविताओं में सुख-दुख की सहज अभिव्यक्ति है। सरल भाषा में कहानियों का संकलन मेरी आवाज १९८२ में प्रकाशित हुआ। वर्ष २००९ में कहानियों का संकलन 'किस्सा कहानी' प्रकाशित हुआ। सूरज हिंदी और भारतीय संस्कृति के प्रचार में लगे हुए हैं।

लेखन से जुड़े अन्य लोग हैं—सुशीला बलदेव मल्हू, संध्या भग्गू, प्रेमानंद भोंदू, तेजप्रसाद खेदू, सुशीला सुक्खू, देवानंद शिवराज, धीरज कंधई और रामदेव महाबीर।

सूरीनाम की आजादी के समय कई प्रबुद्धजन जीविकोपार्जन व विकास हेतु हॉलैंड जा बसे, किंतु उन्होंने भी हिंदी सरनामी साहित्य को काफी समृद्ध किया है, ये हैं—पंडित सूर्यप्रसाद बीरे, रवीन सतनाराइन सिंह, बलदेवसिंह, राजमोहन, सुश्री चाँदनी, चित्रा गयादीन, मार्तिन हरिदत्त, लछमन श्रीनिवासी, राज रामदास।

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य लोगों ने भी समय-समय पर लिखा है, यथा पंडित हलधर मथुराप्रसाद, बलराज शिवनाथ, संझरी द्वारकासिंह, बिहारी लाल कल्लू, तर्क शास्त्री, लेखराम केवल, शिवरतन रामदुखी, कमला जगमोहन, रामचरण आर्य, किसुनदयाल रामदास, संतोखी सुरेंद्र।

नवांकुरित साहित्यकारों की सूची भी लंबी है, जैसे अमित अयोध्या, वीना अयोध्या, विकास समोधी, डॉक्टर कारमेन जगलाल, कृष्णा कुमारी भिखारी, संध्या लल्कु, तारावती बद्री, लीलावती कल्लू, सुमित्रादेवी बलदेव। ये सभी नए कवि और लेखक मुख्यत: मानक हिंदी में ही लिखते हैं। इनकी रचनाएँ 'शब्द-शक्ति' नामक पत्रिका में छपती रहती हैं। समय-समय पर यहाँ कई हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ निकलती रही हैं, जैसे 'आर्य दिवाकर' से 'धर्म-प्रकाश' और 'वैदिक संदेश', स्व. बाबू महातमजी के निर्देशन में निकली 'शांतिदूत', सूरीनाम हिंदी परिषद् से 'सूरीनाम दर्पण' और 'हिंदीनामा' तथा सूरीनाम साहित्य मित्र संस्था की 'शब्दशक्ति'। किंतु साधनों के अभाव में इनका सतत प्रकाशन नहीं हो पाता है। वर्ष २०१० में सूरीनाम साहित्य मित्र संस्था का प्रथम कविता संग्रह 'एक बाग के फूल' प्रकाशित हुआ। यह सूरीनाम के वरिष्ठ और नवोदित २७ कवियों की कविताओं का संग्रह है और यह पहला अवसर है कि यहाँ इस तरह का संग्रह प्रकाशित हुआ है। इसमें सरनामी व खड़ी बोली हिंदी में, देश-प्रेम व आम जनजीवन के लगभग प्रत्येक पहलू पर लिखी कविताएँ हैं, जो देवनागरी व रोमन दोनों लिपियों में हैं। हाल ही में कवि श्री देवानंद शिवराज के कविता संग्रह 'अभिलाषा' का विमोचन हुआ; इसका प्रकाशन भी सूरीनाम साहित्य मित्र संस्था द्वारा कराया गया है और यह इस तथ्य की पुष्टि करता है कि यदि संबल मिले तो अनेक साहित्य रचनाएँ विश्व के सामने आने को तत्पर हैं।

सूरीनाम के हिंदी लेखकों की रचनाएँ संभवत: शिल्प की दृष्टि से विद्वानों को आकर्षित न करें, उनमें भाषागत अशुद्धियाँ भी मिलें, किंतु भारत से दूर इन प्रवासी भारतीयों की सुख-दुख की सहज भावाभिव्यक्ति अवश्य मिलेगी। सूरीनाम के सभी साहित्यकार हिंदी में लिखकर अपने को भारत से जुड़ा हुआ पाते हैं। इनकी कविताओं में संस्कृति और उससे जुड़ाव की झलक है। भाषा-प्रेम की अभिव्यक्ति है, हिंदी सीखने के लिए प्रेरणा है। समस्त जीवन की अनुभूतियों के बहुआयामी चित्र हैं और अतीत की वेदना है, साथ में है धार्मिक आस्था, भक्ति और लोकजीवन का संगीत।

सरनामी साहित्य : सरनामी भोजपुरी अवधी, मगही, मैथली, ब्रज तथा अन्य बोलियों की मिश्रित भाषा है, जिसमें कालांतर में डच, स्रनांग तोंगो, जावनीज व अंग्रेजी भाषा के शब्दों का समावेश हुआ है, फिर भी यह भोजपुरी के सबसे करीब है। सूरीनामी हिंदुस्तानी सरनामी हिंदी को अपनी मातृभाषा मानते हैं और मातृभाषा अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम होती है, यही कारण है कि सरनामी में साहित्य रचना आरंभ हुई।

सन् १९८३ से १९९२ के बीच 'भाषा' नामक पत्रिका छपी, जिसमें सरनामी हिंदी पर लेख छपे। सन् १९८५ व १९८६ में पारामारिबो की वैज्ञानिक सूचना संस्था ने सरनामी हिंदी में लोककथाओं की दो पुस्तकें निकालीं।

समर इंस्टीट्यूट ऑफ लिंग्विस्टिक ने सरनामी पर कई पुस्तकें प्रकाशित कीं, जैसे डुइसकांप की पाठ्यपुस्तक (सन् 1980 में)। सूरीनाम व नीदरलैंड्स में सरनामी व हिंदी दोनों रूपों में सतत रूप से लेखन जारी है।

सूरीनाम का हिंदुस्तानी समाज आरंभ से अपनी भाषा व संस्कृति के प्रति सजग रहा और विषम परिस्थितियों के बावजूद अपनी भाषा की ज्योति को जलाए रखा। अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए वह अपनी भाषा का प्रयोग करता है। आम हिंदुस्तानी का मानना है—

''जे हम ना बतियइए अपन भासा तो लड़कन के का बतइए? कौन भासा आजा बोली उ ना जानि'' (यदि हम अपनी भाषा में बात नहीं करेंगे तो बच्चों को क्या बताएँगे कि उनके दादा, परदादा कौन भाषा बोलते थे।) और इसी मातृभाषा प्रेम का उदाहरण है पंडित सहतूजी की कविता 'महतारी भाषा'—

हम तोहके का बोली
बोली बोली
भाषा बोली
अवधी कि भोजपुरी
हम तोहके का बोली।

सरनामी कि सरनामी हिंदी
हिंदुस्तानी कि सरनामी हिंदुस्तानी
हम तोहके का बोली।

मानक हिंदी कि खड़ी बोली
टूटल भाषा कि अइली गइली
हम तोहके का बोली।

अपन भाषा में एक बात बोली
तोहसे हम्मे बहुत है प्यार
महतारी भाषा हमार।

अताशे (हिंदी व संस्कृति)
भारत का राजदूतावास, पारामारिबो (सूरीनाम)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिंदगी वहीं-कहीं होगी

मूल : **कालूसिंह रनपहेली**
अनुवाद : **बिर्ख खडका डुवर्सेली**

जिंदगी कहीं
पेड़ के पीले पत्तों के साथ
गिर रही होगी
धरती पर बिखरे पत्तों से
सजी राह बन गई होगी
नव पल्लव के नयनों को खोलकर
कहीं जिंदगी
यह संसार झाँक रही होगी
नए जोश नई अनुभूति लेकर
नई राह से
चलते-चलते आ रही होगी।

जिंदगी कहीं
आँसू के ऐंसेलु* को
व्यथा की आँखों से टिपकर खा रही होगी
सूरज की रश्मियों की माला गूँथकर
कहीं जिंदगी
उजाले का उपभोग कर रही होगी
कहीं पत्थरों के कानों में कुछ कहकर
लोहे का दिल धड़का रही होगी
कहीं फूलों के अधरों को माँगकर
प्रेम से मुसकरा रही होगी।

जिंदगी कहीं
वेदना के वन में
शांति की राह खोकर उलझ गई होगी
कहीं खुशी की नाव में चढ़कर
सुख की सरिता की सैर कर रही होगी
कहीं लोभ-लाभ और ईर्ष्या के
चट्टानों से टकराकर
शीशे की तरह टूट रही होगी
कहीं निस्स्वार्थ होकर सूरज की तरह
शीत की बूँदों के भीतर
प्यार का उजियारा बिखेर रही होगी।

जिंदगी कहीं
पहाड़ी नदी की तरह अहंपूर्ण गर्जन के साथ उफनकर
मन जैसे अति कोमल किनारों को तोड़ रही होगी
कहीं स्वच्छ नदी बनकर नाच रही होगी
वेदना के काँटेदार जंगल में
नेवला बनकर रो रही होगी
कहीं कोयल के सुर में बसकर
आह्लादपूर्ण पंचम स्वर में गा रही होगी।

जिंदगी कहीं
तार टूटी वीणा की तरह
बेसुर बन गई होगी
कहीं घुँघरू के छेदों से निकलकर
बेपरवाह टूट रही होगी
जिंदगी कहीं
सुर, लय और ताल मिलाकर
गीत रच रही होगी
बाजे, गीत और नृत्य जोड़कर कहीं
संगीत प्रस्तुत कर रही होगी।
कहीं जंगल, ढार-पहाड़ और काँटों की
झाड़ियों में राह ढूँढ़कर टक्कर लगने से
गिरते-उठते आगे बढ़ रही होगी
कहीं सुगम राहों से
आस्था की थैली कंधों से लटकाए
खुशी की यात्रा कर रही होगी
जिंदगी वहीं-कहीं होगी।

युग्मक

मौत का मुँह
खो रही हैं बकरियाँ प्रतिदिन
बाघ भी खो गया एक दिन।

राह
हरेक पिंजरे से निकलने का
एक दरवाजा तो होता है।

दारू की दुकान से
राम गया था
रावण लौटा।

व्यथा
दिल के कमरे में
एक स्थायी किराएदार।

यात्रा
कोई मून तक
कोई नून तक।

शहीद
मर गया हूँ
जिंदा रहने के लिए।

हत्या
फूल की हत्या हुई
हत्यारा मंदिर की ओर गया।

खून का रिश्ता
लहूलुहान हुआ खून का रिश्ता
झगड़े से अंश-बंटे का।

दुर्गामढ़ी, प्रधान नगर
दार्जीलिंग-७३४००३

---
* एक प्रकार का स्वादिष्ट फल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक उपन्यास-९

सीढ़ियाँ

शैलेश मटियानी

श्री शैलेश मटियानी हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार थे, उनका जन्म १४ अक्तूबर, १९३१ को अल्मोड़ा जनपद के बाड़ेछीना गाँव में हुआ। उनकी शिक्षा हाई स्कूल तक हो पाई, परंतु हिंदी साहित्य में उनका अनन्य योगदान है। उनके तीस कहानी संग्रह, इकतीस उपन्यास तथा नौ अपूर्ण उपन्यास, तीन संस्मरण पुस्तकें, निबंधात्मक एवं वैचारिक विषयों पर बारह पुस्तकें, लोक-साहित्य पर दस पुस्तकें, बाल साहित्य की पंद्रह पुस्तकें प्रकाशित हैं। उन्होंने 'विकल्प' एवं 'जनपक्ष' पत्रिकाओं का संपादन किया। उनकी अनेक कृतियाँ पुरस्कृत हुईं तथा 'फनीश्वर नाथ रेणु पुरस्कार', 'साधना पुरस्कार', उ.प्र. हिंदी संस्थान का 'लोहिया सम्मान', केंद्रीय हिंदी निदेशालय का 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' सहित उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। उनका महाप्रयाण २४ अप्रैल, २००१ को दिल्ली में हुआ।

अरुणा को लगा इस बात का उत्तर देने का अधिकार उसे नहीं हो सकता। विशेषकर पुरोहितजी की बात का समर्थन करने का। उसे अंदर-ही-अंदर थोड़ी कुढ़न असित के प्रति भी हो रही थी, कि आखिर जब कलकत्ता से यहाँ चले आए हैं और दुबारा घर लौटना भी नहीं है तो कहीं-न-कहीं तो छोटे-मोटे समझौते करने ही हैं। मगर साथ ही उसे यह महसूस हो रहा था कि असित के नाराज होने के मूल में उसके प्रति प्यार की गहराई भी है। प्यार की वह प्रगाढ़ता, जिसमें एक सम्मान और आत्मगौरव छिपा रहता है। अरुणा को लेकर नाराज न होने की स्थिति तो असित की तभी आएगी या तो वह जब खुद अपने को पीछे हटा लेगा या अरुणा से आगे निकल जाएगी। एकनिष्ठता की स्थिति में तो तटस्थ हो सकना संभव ही नहीं हो सकता। एकनिष्ठता की स्थिति में तो सूक्ष्म धरातल पर पुरुष और नारी ठीक वैसे ही मनोवैज्ञानिक अन्योन्याश्रयी अनुरक्तियों से जुड़े रहते हैं, जैसे वैज्ञानिक अन्योन्याश्रयी बुनियाद पर।

सूर्य और धरती। ऐसे में एक दूसरे के आत्मगौरव के प्रति उदासीन होने का अर्थ ही एक-दूसरे के गुरुत्वाकर्षण से छूटकर अलग हो जाता भी है। और जो जुड़ाव कलकत्ता से यहाँ तक की यात्रा में नहीं टूटा।

अरुणा को यह भी याद आया कि असित कह रहा था, अगर बृजनारायण साहब ने मना कर दिया तो यह महीना अपनी घड़ी और अँगूठी बेचकर गुजार लेंगे और इसी महीने से कुछ ट्यूशन करने लगेंगे। इसके अलावा मॉडर्न इंडिया दैनिक के संवाददाता के लिए जो प्रार्थनापत्र भेजा है, उसके भी स्वीकार हो जाने की आशा है।

असित ने तो यह भी कहा था कि वह अरुणा को अपने साथ इसीलिए नहीं लाया है कि वह कमाए और असित को खिलाए। वह तो संकट के समय बृजनारायणजी ने सहायता की थी और आश्रय दिया था। उनके अहसान जरूर हैं। उन्हीं के लिहाज से अरुणा संगीत की कक्षा भी ले लेती है।

इतना सबकुछ सोचा तो जाता है। अरुणा ने सिर्फ इतना ही कहा, ''पुरोहित साहब, बात असल में यह है कि असित बाबू अभी अपने को ठीक से एडजस्ट नहीं कर पाए हैं, क्योंकि वो तो जमींदार घराने का लड़का होने से थोड़ा सा शर्मीला भी है। कभी ऐसे दूसरे लोगों के सामने प्रोग्राम भी नहीं दिया है। इधर आए भी तो हम लोगों को सिर्फ चार ही महीने तो हुए हैं। धीरे-धीरे सोसाइटी में मूव करने रहने से तो।...''

''मगर अरुणाजी, इस छोटे से शहर में प्राइम मिनिस्टर और चीफ मिनिस्टर तो रोज-रोज नहीं आते हैं ना? अब देखिए, मेरा तो सपना यही है कि संगीत निकेतन को एक ऐसी संस्था बना दूँ कि देश के बड़े-से-बड़े संगीतज्ञ को यहाँ आने में गौरव अनुभव हो। फल्फेसेद धीरे-धीरे यह एक संगीत विद्यालय का रूप ले ले।'' बृजनारायणजी जरा जोर से कहते रहे—''और ये तो आप लोग जानते ही हैं कि मेरे पास तो इन सब कामों के लिए समय रहता नहीं है। आखिर सँभालना असित बाबू को ही है।''

दरवाजे की ओर मुँह हो जाने के कारण अरुणा तो नहीं देख पाई, मगर बृजनारायणजी ने देख लिया। असित उठकर बीच के दरवाजे तक आ गया था। कुल जमा सत्ताइस-अट्ठाइस वर्ष के इस युवक की आँखों में बृजनारायणजी को हमेशा एक चमक सी दिखाई देती रही है। एक ऐसी तीखी चमक, जो आदमी को एकाएक न तो पीछे लौटने देती है और न आगे बढ़ने देती है। मगर जब एक निर्णीत स्तर पर पीछे हटाती या आगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बढ़ाती है—अपनी स्थिति और मनस्थितियों की तात्कालिकता से तो फिर किसी एक आखिरी छोर पर ही पहुँचा देती है। और फिर धीरे-धीरे अपनी ही जगह की लिट रह-रहकर बुझ जाती है। बृजनारायणजी को याद आया, ऐसी ही चमक उन्होंने उस लड़के की आँखों में भी देखी थी, जो ट्यूशन कर-करके पढ़ता था और आज मुख्यमंत्री है।''

''असित बाबू नमस्कार।'' बृजनारायणजी बोले, ''लगता है, रात आप बहुत देर से सोए?''

नमस्कार की मुद्रा में हाथ जोड़े हुए असित अरुणा के पास वाली कुरसी पर बैठ गया और बंगाली भाषा में ही चाय बना लाने को कह दिया।

अरुणा उठकर चली गई तो असित बोला, ''पुरोहित साहब, आप हमारे लिए पिताजी की जगह पर हैं। आपका आज्ञा मानने से हमको खुशी होता है···मगर यदि कोई काम करने से हमारा आत्मा के 'नहीं' बोलने से तो वो काम करने में हमको दुख भी होता है। मगर अभी रात को हम एक सपना देखा है। अभी डिटेल में बोलने का समय नहीं होने से फिर कभी बोलेगा।···मगर हम यह डिसाइड किया है, कबीरदास या तुलसीदास नहीं हो सकने से हमको अरुणा को अपनी मरजी के मुताबिक चलना तो ठीक नहीं है, यदि अरुणा राजी होवे तो हमको तो कोई उसका नाचने से भी मनाही नहीं होगा। आप लोग का इधर आ करके आप लोग का दिल तो खुश रखना ही होगा। जब किसी का बिलव्ड को घरपत्नी को रंडी की माफिक नचाने से आप लोग का ईगो सैटिसफाई होता है, तो···''

बृजनारायणजी को लग रहा था, जैसे कोई एकदम सुर्ख सलाख उनके कानों में घुसी चली जा रही है। इतने आवेश रहित स्वर में भी कोई इतनी तीखी बातें कह सकता है, यह उन्हें विश्वास नहीं हो पा रहा था, क्योंकि असित बोलते समय बराबर मुसकरा रहा था। उसकी आँखों की ओर टकटकी लगाए रहने के बाद अब बृजनारायणजी को लग रहा था, अगर उन्होंने अपनी आँखें जरा सी इधर-इधर कीं तो पुतलियाँ नीचे फर्श पर गिर पड़ेंगी। वो अंदर-ही-अंदर चुपचाप उठकर चले जाने की तैयारी कर रहे थे, मगर उन्हें यह भी लग रहा था कि बिना चाय पिए ही उठकर चला जाना उनके लिए संभव नहीं रह गया है। वे समझ गए कि कल नशे में कालीचरण बर्मन ने जिस तरह व्यवहार किया था, उससे असित बहुत अधिक क्रुद्ध हो गया था और इसे शांत करने के लिए समय की नहीं, बल्कि असित के आहत आत्म-गौरव को तुष्ट करने की आवश्यकता है।

बृजनारायणजी ने अपना हाथ आगे बढ़ाकर असित का हाथ पकड़ लिया और बोले, ''असित बाबू, मंत्री के झाड़ू से उछली हुई कीचड़ से डर कोई भी आदमी रास्ता चलना नहीं छोड़ देता। आप कम उम्र जरूर हैं, मगर समझदार हैं। मुख्यमंत्री से अपनी भेंट कराने में मेरा कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं है, मैं उन्हें सिर्फ आज से पैंतीस वर्ष पहले का उन्हीं का प्रतिरूप दिखाना चाहता हूँ। और आप देखेंगे कि ट्यूशन करके पढ़नेवाला गरीब लड़का अब मुख्यमंत्री बन जाने के बाद ज्यों का त्यों है। मैंने तो कल आपके चले आते ही बर्मन साहब को झाड़ दिया था कि आप लोगों में अभी कलाकारों के साथ उठ-बैठ सकने की तमीज नहीं आई है। एस.डी.एम. साहब भी आपकी बहुत तारीफ कर रहे थे। बाद में तो खुद बर्मन साहब बहुत शर्मिंदगी प्रकट कर रहे थे कि यार, हम शराब के नशे में न मालूम उस देवता आदमी से क्या-क्या कह बैठा?···आपके स्वर में एक आग है, असित बाबू।···मगर यह मत भूलिए, कभी भी कि ईश्वर ने थोड़ी बहुत इनसानियत सभी में दी है। आप अपने अपमान को जल्दी महसूस कर जाते हैं, बल्कि आप अपमान को सोच लेते हैं। जरा अपने सम्मान को भी देखने की आदत डालनी चाहिए। फिर आपके स्वर की यह आग एक पवित्र और शांत ज्योति बन जाएगी। आप जो कहते हैं कि पंचम तक का अलाप करने पर आपका कंठ बैठने लगता है। लिखाकर ले लीजिए— फिर आपके लिए चंद्र और तार सप्तक दोनों एक समान हो जाएँगे।

असित बरन बृजनारायणजी की बातों से हतप्रभ सा कुछ कहने को सोच ही रहा था कि अरुणा आ गई। बृजनारायणजी बोले, ''जब आप लोगों के घर में बच्चा आ जाएगा, तब आप लोग समझ पाएँगे कि गुस्सा करके तुरंत भूल जाने के लिए कितनी बड़ी इनसानियत की जरूरत होती है।''

□

अकसर यही होता है।

कमरे की एकमात्र छोटी सी खिड़की खोलते ही या तो मातृकाप्रसादजी की बेटी प्रियंबदा दिखाई दे जाती है—गाती हुई या पढ़ती हुई, और या नगरपालिका के अध्यक्ष पार्वती नंदन सहाय वकील की पंच मंजिल इमारत पर लहराता हुआ तिरंगा झंडा दिखाई दे जाता है। मोहल्ले की और बाकी सारी चीजें बाद में दिखाई देती हैं। बल्कि यहाँ तक कि मकान मालिक के जोर-जोर से कुल्हाड़े करने की आवाज भी बाद में सुनाई देती है।

मानसरोवर सिनेमाहॉल का गेटकीपर द्वारका भी कल रात के अंतिम शो के बाद सुनील दिलरूबा के साथ ही चला आया था। दोनों एक ही चारपाई पर सोए हुए थे और माँ बाहर एक तरफ को बने रसोई घर में। माँ चाय बना रही होगी, इस अनुमान के साथ सुनील उठ गया था और सिरहाने के पास की खिड़की का एक पल्ला खोल लिया था। कल रात ही देखी हुई फिल्म के 'काहे कोयल शोर मचाए रे, मुझे कोई अपना याद आये रे' गीत की धुनि और सीटी बजाते हुए थोड़ी ही देर तक मातृकाप्रसादजी के घर की ओर देखने पर उसे प्रियंबदा दिखाई दे गई थी।

सुनील आज भी यह समझने में असमर्थ रहा कि प्रियंबदा उसी को देखकर मुसकराती है या कमरे में और कोई बैठा हुआ होता है, जिससे वह बातें करते-करते बाहर को घूम पड़ती है। कल रात द्वारका के जिक्र करने पर वह इसीलिए साथ चला आया था कि डियर अनुपराम एक शॉट में ही तय कर देंगे कि मामला क्या है।

जब से द्वारका के साथ लगातार तीन महीने तक सिनेमा जगत् के चक्कर में सुनील बंबई-पूना घूम आया है, तब से दोनों की मैत्री और भी गहरी हो गई है। सुनील द्वारका को उठाकर बताना चाहता था कि जरा देर वह ऊपर की तरफ देखता तो रहे, मगर पियंबदा को मुसकराते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखकर जल्दी से आँखें हटा लेना संभव नहीं हुआ था और तब तक वह कहीं अंदर की ओर जाकर गायब हो गई थी।

इस बीच द्वारका स्वयं ही उठ गया था— ''क्यों रे दिलरूबा? ऊपर से ये आँ-बो-बो-बो-बो के जैसी आवाज, कैसे आ रही है?''

''इस खिड़की के ठीक ऊपर मकान की मालकिन का बाथरूम पड़ता है। साली कुल्ला कर रही होगी।···''

''अरे बाप रे! यह औरत है या टुनटुन। मैं तो यों सोच रहा था, कोई बकरा तरन्नुम में आया हुआ है।···और वो तेरी मुनव्वर सुलताना दिखाई दे रही है या नहीं?''

पूछते-पूछते द्वारका ने खिड़की के पास सिर लगा दिया था— ''अरे यार, नीचे नाली में तो बेहद गंदगी है। तुम्हारी मकान मलकिन के पास सिर्फ बाथरूम ही बाथरूम है, लेटरिन-हाउस नहीं है क्या? यार, तेरा जैसा आर्टिस्ट कहाँ इस नरक में पड़ा हुआ है? इससे अच्छे तो साले बंबई के गटर पाइप थे यार। मगर दोस्त, एक बात जरूर है। उन गटर-पाइपों में रहते हुए सिर्फ हकीकत-ही-हकीकत दिखाई देती थी। वो ख्वाब नहीं दिखाई देते थे, जिसे तूने यहाँ और मैंने तोताराम की कैंटीन में सोते हुए देखा था। मगर यार इधर एक चीज मेरे दिमाग में आ रही है। किसी भी तरह से स्साली कोई हिरोइननुमा एक वो लौंडिया फँस जावे, तो स्साला एक चक्कर बम्बई का और मारा जाए। डियर ख्वाबों की दुनिया भी क्या साली, एक जुवे का संसार है। इसमें या तो आदमी रहे नहीं और रहे, तो द्रौपदी को भी दाँव में लगाने से न चूके।''

''अरे यार, इस बात में कुछ नहीं रखा है। जहाँ ससुरा सेलेक्शन दूसरों के हाथ में हो, तो फिर कोई उम्मीद बेकार है। अब वह जमाना, जुवे में जीती हुई द्रौपदी को भी पाण्डवों के साथ लगा देने का नहीं है। चेयरमैन साहब का लड़का गया तो था अपनी महबूबा को लेकर, मगर आखिर राधे भंगी से भी बदतर हालत में वापस लौट आया था। वो तो कहो कि सात हाथ ऊँचा झंडा ही नहीं, डंडा भी चेयरमैन पार्वती बंदर के पास मौजूद रहता है, नहीं तो बेटा अभी तक बड़ी इमारत में होते।''

''अरे यार, इस बात में कुछ नहीं रखा है। जहाँ ससुरा सेलेक्शन दूसरों के हाथ में हो, तो फिर कोई उम्मीद बेकार है। अब वह जमाना, जुवे में जीती हुई द्रौपदी को भी पाण्डवों के साथ लगा देने का नहीं है। चेयरमैन साहब का लड़का गया तो था अपनी महबूबा को लेकर, मगर आखिर राधे भंगी से भी बदतर हालत में वापस लौट आया था। वो तो कहो कि सात हाथ ऊँचा झंडा ही नहीं, डंडा भी चेयरमैन पार्वती बंदर के पास मौजूद रहता है, नहीं तो बेटा अभी तक बड़ी इमारत में होते।''

''अरे यार, वो तो स्साला बाप पार्वती नंदन जितना बड़ा काँइयाँ है, बेटा रेवती उतना ही चूतियानंदन है। अच्छा-भला साला वहाँ सीमेंट के ब्लैक में हजारों का वारा-न्यारा कर रहा था, बेटे को हीरो बनने का शौक चर्राया। उस उल्लू के पट्ठे को यह तभी-जभी नहीं, कि घोड़े की सवारी या तो साईस करता है या रईस। न तो स्साले का बाप तोताराम जालान के बरोबर पैसे वाला और न खुद बेटे राम हमारी तरह के फकत जान गिरधारी। हमारी तो यह जरूरत है, प्यारे कि गुड़ न मिले ससुरा, मगर गुड़ की बात करते हुए ठंडा पानी तो पीएँ?''

''···मगर उस चुगद में अकल होती, तो वह अपने बाप की सेकिंड हैंड गाड़ियों में ही अपनी पूरी जिंदगी दिलीपकुमार की तरह गुजार सकता है।···कोई ये थोड़े ही है कि बेटा द्वारका की तरह रेहाना को विदा और सुरैया को ओढ़कर तोताराम की कैंटीन के तख्तों पर जवानी गुजार दी। मगर डियर, अपना तो जो होना था, हो गया, मगर तुम जैसे आर्टिस्ट की जिंदगी को बेकार होते देखकर साला बड़ा कष्ट होता है।···मैं एक आइडिया सोचकर तेरे साथ आया हूँ। बंबई का हीरो तो तुझे बना नहीं सका, मगर जरा जानेमन पहले मुसकराकर दिखा दे, तो फिर स्कीम आगे बढ़ाई जाए। लेकिन डियर, बात फिफ्टी-फिफ्टी पर तय होनी चाहिए। नामा मेरे बाप भटनागर बाबू ने भी कम नहीं जीता हुआ है।''

''अरे यार, पक्का! जितना भी माल दहेज में आएगा, उसमें से आधा तेरा।''

''और जिसके दहेज में आएगा?''

''वह तो यार तेरी बहू न हो जाएगी? तुझे तो नजर उठाकर देखने से भी पाप लगेगा।''

''अच्छा तो अपुन बिना आँख खोले ही सारा काम निबटा लेंगे।''

''अब देख द्वारका, ज्यादा बदतमीजी मैं बरदाश्त नहीं करता।''

सुनील का चेहरा एकदम तमतमा गया—''कोई फोकट में सिनेमा दिखा देता है, यह सोचकर मेरी मुहब्बत पर कीचड़ उछालने की हिम्मत मत कर लिया कर। तोताराम कैंटीन वाले की लौंडिया और प्रिंसिपल भटनागर साहब की बेटी में जमीन आसमान का फर्क होता है।''

''अंबो। तो बेटे तुम्हारी आँखों में अभी सिर्फ ख्वाब ही ख्वाब दिखाने वाला कुदरत का बेशरमी उतरी नहीं है। तुम लोग यों चिंता कर रहे हो, जैसे शहनाई की आवाज साफ-साफ सुनाई देने लगी हो?···मगर इतना याद रख ले जानेमन कि पहले तो यह उम्मीद भी अभी बट्टे खाते में ही है, कि वह नीमजान तुझको देखकर मुसकराती है। फिर दूसरा सवाल यह है कि तेरे जैसे सेंटीमेंटल आर्टिस्ट को दिल लगाने वाली और चूतिया बनानेवाली मुसकराहट के बीच का फर्क ही मात्र मालूम नहीं होगा। और फिर तीसरी और आखिरी बात यह है कि अगर वह सचमुच तुझसे मुहब्बत करने भी लगे तो शहनाईवाला ख्वाब उसके सामने न रख बैठना, दुआ-सलाम से भी जाता रहेगा। मैं तो अभी तक मजाक ही समझ रहा था। मगर लगता है, अभी तेरा दीवानापन गया नहीं? हेडमास्टर माताराम की बेटी के शादी के बाद तू जैसे महीनों तक अपनी बाँसुरी के छेदों में पानी भरता रहा था, वो तेरी दुर्दशा क्या मुझसे छिपी है, बंबई में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी तेरा वही हाल था कि खाने को न मिला, तो रो दिए। सोने को जगह न मिली, तो रो दिए और सुरैया ने मिलने से इनकार कर दिया तो रो दिए। और कल को खिड़की में से मुसकराती हुई मिस भटनागर किसी दूसरे के गले में बाँहें डाले दिखाई दे गई तो तू फिर बाँसुरी से इस लोहे की छड़ों को खड़खड़ाता फिरेगा। और डियर, फिल्मों में तो इधर से अगर दिलीप कुमार आँसू बहाता है, तो उधर से मुनव्वर सुलताना या नूरजहाँ भी मातम मनाती हुई दिखाई दे जाती है। मगर जिंदगी की हकीकत का परदा इतना मोटा होता है कि उसमें सिर्फ एक ही तरह के सीन दिखाई देते हैं। मैं तो यही कहूँगा प्यारे कि अगर शादी करने का ही ख्वाब देखता हो तो किसी अपर प्राइमरी या नई स्कूल की टीचरनी को फाँस ले। सही करवट बैठ गई तो ससुरी दाल-रोटी तो निकलती रहेगी।''

''औरत का हेरना और ऊँट का फेरना कोई खेल नहीं है। और फिर दूसरी बात यह है कि जो बरखुरदारी औरत की मुहब्बत और उसके मकसद इन दो चीजों में फर्क करना नहीं जानते, उनकी आखिरी गत वही होती है, जो तेरी हुई थी।''

थोड़ी देर रुककर सिरहाने से सिगरेट की डिबिया निकालकर, सिगरेट सुलगा लेने के बाद द्वारिका सिगरेट पीता और खिड़की की छड़ों से हाेंठ टिका-टिकाकर धुँआ बाहर फेंकता रहा। फिर सुनील की ओर पलटकर बोला, ''देख, तू है अपनी गरीब बुढ़िया माँ का अकेला बेटा, तुझे लग गए हैं बुढ़िया के आँसू। मेरी माँ भी ससुरी वहाँ गोरखपुर में छाती पीट रही होगी कि बेटे से तो बछड़ा जना होता तो जोत के काम तो आता। तो अब तू संगीत-शायरी के चक्कर से अलग जरा चवन्नी-अठन्नी की भी सोच। वह उमाशंकर तो तुझसे यों ही फोकट में बाँसुरी बजवाता रहेगा और तू मारा जाएगा इसी जवाब में कि वो बहनजी तेरे प्यार में दीवानी हो जाएगी। मगर हकीकत यह है प्यारे, कि बहनजी ने तो अपना केंद्र अलग ही चालू कर रखा है और कभी किसी बड़े घर की लड़की को लेकर हो गई कोई ऊँची-नीची बात तो, शारदा बाबू तो तानपूरे की तरह अलग कोने में खड़े हो जाएँगे और धरा जाएगा तू, क्योंकि शहर तुझे भले ही न हो, और हिम्मत सिर्फ बाबू भाई मिस्त्री वाली जादू की दरी पर ही बिठाकर उड़ा सकने की तो, मगर अदाओं से तू पक्का प्रेमी प्राणी दिखने के चक्कर में रहता है और तेरी ये ही अदाएँ तुझे कभी ले डूबेंगी। प्यारे, औरतों के मामले में तो मजा वह ही मर्द बच्चा कर सकता है, जो बाहर से दिखाई देता हो हेड-मास्टर माताराम और अंदर से हो बाबू कालीचरण बर्मन। तू तो निरा बेवकूफ है।''

सुनील दिलरूबा चुपचाप सुनता चला जा रहा था। उसे हमेशा यही लगता आया है कि डाँट पड़ने पर बड़ी देर तक चुपचाप सुनते रह जाने की अपनी कमजोरी से मुक्त हो पाना उसके लिए संभव नहीं है। फिर द्वारिका उससे उम्र में ही कुछ बड़ा नहीं, बल्कि आड़े वक्त का संरक्षक भी है। कभी माँ मर गई तो···माँ की याद आते ही सुनील और भी उदास हो गया। वह चाय के लिए आवाज लगाना चाहता था, मगर सिर्फ यही महसूस करता रह गया कि द्वारिका इस समय नाराज होकर चला गया और माँ कभी मर गई तो फिर उसके लिए जी पाना संभव नहीं हो पाएगा।

वह द्वारिका से कहना चाहता था कि यार, न जाने मैं क्यों ऐसा महसूस करता हूँ कि जिस दिन नगर आर्य अनाथाश्रम के मैनेजर गुप्ता बाबू मर गए तो सबसे ज्यादा दुख मुझे ही होगा।···क्योंकि जिस दिन भी उनके अनाथालय के बच्चों की टोली बाँसुरी बजाते हुए चंदा माँगते दिखाई देती है, मुझे लगता है, मैं भी उनके साथ-साथ चलता चला जा रहा हूँ। बल्कि कभी-कभी कोई लड़की मुझे देखकर मुसकराती भी है, तो मुझे लगता है, मैं मुहब्बत की भीख भी बाँसुरी बजाकर ही माँग सकता हूँ। और यार, कहीं ऐसा न हो कि भटनागर साहब की लड़की मुझे देखकर जैसे मुसकराती है, ठीक वैसे ही अनाथालय के लड़कों को देखकर भी मुसकराती हो? और यार, एक बात यह भी तो है कि जो साला अनाथ होता है, उसे हर किसी की आँखों से अपने लिए दया और मुहब्बत दिखाई देने लगती है।''

साँकल खड़खड़ाने की आवाज सुनकर द्वारिका ही उठ गया। दरवाजा खोलकर सुनील की माँ अंदर आई, तो चाय के गिलास उसके हाथ से लेते हुए द्वारिका बोला, ''माँजी, अब सुनील की शादी-वादी कर डालिए। ये सब चाय-वाय पिलवाने के काम बहुओं के हाथ के अच्छे दिखाई देते हैं।''

''हाँ बेटे, सोच तो रही हूँ कि अब राजा-महाराजों के घरों तक खबर पहुँच ही जानी चाहिए कि हमारे कुँवरजी विवाह के योग्य हो चले हैं।'' सुनील की माँ के इस व्यंग्य से द्वारिका कुछ हतप्रभ हो गया। फिर बोला, ''नहीं चाची, मैं मजाक नहीं कर रहा हूँ। अब तो···''

''अरे द्वारिका, तू भला मुझसे क्यों मजाक करेगा बेटे। तेरे लिए तो मैं जैसे सुनील की माँ, वैसे तेरी। मेरे साथ तो मजाक कर गया इसका बाप और किए चला जा रहा है, परमेश्वर। तेरे साथ चला ही गया यह बंबई, पूना, वहीं से किसी नरगिस-सुरैया का दरवाजा पकड़ लेता। मैं भी यों रो-रो के सब्र कर ही लेती, कि कहीं अच्छे ही दिन काट रहा होगा। अब आँखों के सामने जवान बेटे को बंद आँख के पिल्ले की तरह कूँकता फिरता कैसे देखूँ, जो कभी बंद दरवाजों से सिर टकराता फिरता है, तो कभी सीढ़ियों से लुढ़ककर कीं-कीं करता रहता है?'' कहते-कहते परपरा आई आँखों को सुनील की मैंने स्थिर कर लिया और एक हलकी सी मुसकराहट उसके बची होते हुए होंठों पर फैल गई—''मगर अब मेरा कहना-सुनना, रोना-धोना बेकार है द्वारिका। इसकी जिंदगी यों ही बरबाद होगी।''

''तुम तो बेकार इतनी ना उम्मीद हो गई हो, चाची, कैसे-कैसे ऊँचे आर्टिस्ट अपने वक्त पर धूल फाँकते फिरते हैं और जब सितारा चमका है, तो कलकत्ते की सड़कों पर, अंधे की लाठी तू ही है, गाकर पैसे इकट्ठा करने वाला लड़का मन्ना डे बनता भी देखा गया है। सुनील दब्बू और सेंटीमेंटल जरूर है, मगर किसी दिन इसकी बाँसुरी भी वो रंग दिखाएगी।''

(क्रमशः)

प्रस्तुति : श्री राकेश मटियानी
२६१-ए, मोतीलाल नेहरू नगर,
कर्नलगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम झरोखे बैठ के

घर-बाहर की बात

गोपाल चतुर्वेदी

यों तो बहुत दिनों से जानते थे, पर जब अपने पान-मसाले-सिगरेट के 'कट' का सुझाव वित्त मंत्री यानी पत्नी ने दिया तो पल्ले पड़ा कि मामला गंभीर है। अब भी हाथ पर हाथ धरे बैठने से काम नहीं चलेगा। कुछ करना पड़ेगा। पर क्या? यह तो हमें भी पता है कि कीमतों का पानी बहुत दिनों से सिर के आस-पास मँडरा रहा है, पर हम सोचते रहे कि आम आदमी का नारा लगानेवाली सरकार है। कुछ-न-कुछ करेगी। इस बीच घर में लगातार 'कट' का करिश्मा हुआ। पहले सब्जी कट हुआ। कभी दो बनती थीं, बहुत दिनों से एक बन रही है, वह भी आलू की। लंच पर छुट्टी के दिन सूखे आलू बनते हैं, दाल के साथ। हमें शक है। शाम को गैस बचाने के नेक इरादे से, उन्हीं में पानी उबालकर मिला दिया जाता है। हमने कई बार विविधता का आग्रह किया तो सुनना पड़ा कि कीमतें आसमान पर हैं—''हम सरकार तो हैं नहीं कि उधार से या नोट छापकर काम चला लें।''

पत्नी के इस तर्क से अपन सहमत हैं। ओवर ड्राफ्ट सरकार के लिए संभव हैं, अपने लिए नहीं। पुरखों ने कर्ज की मानसिकता से बचने की नसीहत घुट्टी में पिलाई है। आलम यह है कि क्रेडिट-कार्ड से अपन सिर्फ स्कूटर में पेट्रोल भरवाते हैं, वह भी नपा-तुला। उसका इस्तेमाल भी केवल पप्पू को स्कूल छोड़ने के पावन उद्देश्य से होता है। उसकी स्वीकृति भी घर के वित्त मंत्री ने स्कूल बस के और माह के पेट्रोल बिल के तुलनात्मक अध्ययन के बाद दी है, इस शर्त के साथ कि स्कूटर का इस्तेमाल सिर्फ पप्पू को स्कूल पहुँचाने के सीमित कर्म के लिए किया जाए। लौटते में कीमती पेट्रोल की अनावश्यक बरबादी से बचने को हमें मंडी से सस्ती-से-सस्ती सब्जी लेने का निर्देश है। इसके लिए मंडी में हर उपलब्ध सब्जी, जैसे भटा, कद्दू, भिंडी, परवल, टमाटर, पालक, लौकी वगैरह को कीमतों के तराजू पर तौलकर हमने यह नतीजा निकाला है कि आलू ही इकलौता गरीब-नवाज, समाजवादी विकल्प है।

हम पत्नी से अकसर चुनिंदा और संशोधित सच बोलते हैं। इसके कई लाभ हैं। इससे पत्नी का दिल नहीं दुखता है। सच के कई कोण हैं। दफ्तर में साथ-साथ लंच शेयर करने का आज तक जिक्र नहीं किया है। दुनिया की उदार से उदार पत्नी पति के बारे में शक्की होती है। यह गलत है या सही, जैसे नैतिक निर्णय विद्वानों को शोभा देते हैं, अपन जैसे अक्षर-ज्ञानियों को नहीं। हम तो बस इतना जानते हैं कि किसी का दिल नहीं दुखाना चाहिए। हमने दफ्तर में एक पंडितजी को 'सत्यं ब्रूयात्, प्रियं ब्रूयात्' कहते भी सुना है। वह बिल बाबू हैं। जब कोई भी उनसे बिल के भुगतान का तकाजा करता है, तब वह यही मनभावन उत्तर देते हैं, 'बस एक दो दिन की बात है।' उसके जाने के बाद हमें आँख दबाकर संस्कृत का यही सुभाषित दोहराते हैं। हमें भी पता है और उन्हें भी, पंडितजी बिल आवती के क्रमानुसार ही पास करते हैं। कोई भी अधिकारी कैसे उनकी नीयत पर शक करे?

यह दीगर है कि बिल पास करने का हर सरकारी दफ्तर में एक 'प्रोटोकॉल' है। भ्रष्टाचार के नियत शिष्टाचार का अनुपालन बिल के भुगतान की अनिवार्य शर्त है। यों हर दफ्तर के नोटिस बोर्ड पर यह सूचना सार्वजनिक रूप से उपलब्ध है—''घूस का लेन-देन एक दंडनीय अपराध है।'' पर ऐसे गुनाह हर दफ्तर की कार्यपद्धति का लाजिमी अंग हैं। यह लेन-देन स्वेच्छा से होता है। यह कतई जबरन नहीं है। अब यही हर दफ्तर की सामान्य प्रक्रिया है। इससे सब परिचित हैं। घूस एक भोंडा, घटिया और भद्दा शब्द है। इसीलिए प्रचलित प्रयोग अब सुविधा शुल्क है।

कुछ ही किस्मतवाले हैं, जो इस कमाऊ सीट की शोभा बढ़ाने के सुपात्र हैं। पंडितजी 'रोटेशन' की नीति में इधर से उधर यानी कभी वित्त से रिसीट-डिसपैच तो कभी अधिकारी के गोपनीय सैक्शन की सजा भोग, ज्योतिष-पंडिताई की सुरंगों से गुजरकर फिर बिल के बिल में आ घुसते हैं। ठेकेदारों ने जमाना देखा है। वह जानते हैं कि किसी भी आधुनिक सूट-टाई में सज्जित हो या फिर आई.टी.आई. में शिक्षित हो, वह अधिकारी भी आदमी है। उसे अपने कामयाब भविष्य की जानकारी कंपू (कंप्यूटर) बाबा से उसकी जन्मकुंडली बनाकर कोई संस्कृत ज्ञानी पंडित दे, वह भी फ्री में, तो किसे बुरा लगेगा? हर ज्योतिषी मानव मनोविज्ञान का जन्मजात एक्सपर्ट है। वह केवल मीठी बातें बोलता है। भविष्य के खुशनुमा ख्वाब दिखाता है। साथ ही अपना महत्व और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहमियत कायम रखने के लिए एकाध क्रूर ग्रह की शांति अथवा संतान का भटकता मन एकाग्र करने को पूजा-पाठ का सुझाव भी उसे जजमान के व्यापक हित में देना ही देना। शातिर से शातिर अफसर भी इस 'फ्री' की सेवा से कैसे इनकार करे?

अगर उसके मन में संशय भी है तो उसकी मॉडर्न पत्नी भी उस का भविष्य बनवाना चाहती है। जेब से पैसा-कौड़ी लगता तो उसे शक होता कि यह लालची पंडित बुरे ग्रह का बहाना बनाकर उन्हें उल्लू बना रहा है, पर यह तो साहब से इतना प्रभावित है कि दफ्तर के पहले, ब्रह्म मुहूर्त में पूजा-पाठ, यज्ञ-हवन करवाने को प्रस्तुत है। बस वह यही चाहता है कि इस पूजा-पाठ को कतई गोपनीय रखा जाए, इस हद तक कि बाएँ हाथ को दाहिने, यानी साहब के 'कलीग्स' को भी इसकी खबर न हो, वरना उसकी नन्ही सी जान व्यर्थ के बवाल में फँसेगी। वह कहाँ-कहाँ कुंडलियाँ बाँचेगा और पूजा-पाठ का आयोजन करवाएगा। वह मैडम के सन्मुख साहब के गुण गाता है। उनके भद्र व्यवहार, नेकनीयती, ईमानदारी के कसीदे पढ़ता है। मैडम सब जानती हैं। वही तो सीधे बिचौलियों से डील करती हैं। शातिर तो वह हैं। उनका पति तो पढ़ा-लिखा सीधा-सादा गधा है। कमाई का हर दंद-फंद पत्नी ने अपने पी.सी.एस. बाप से सीखा है। इस आई.ए.एस. को क्या पता कि कितने पापड़ बेलने पड़ते हैं, तब उसके माँ-बाप ने इस एक अदद पति को, कड़ी प्रतियोगिता के बाद सबसे अधिक बोली लगाकर खरीदने में सफलता पाई है।

बहरहाल, इस भाग्यशाली पंडित जैसी किस्मत अपनी नहीं है। वह घूम-फिरकर, सेक्युलर व्यवस्था में पूजा-पाठ के सहारे, बार-बार कमाई के केंद्र में आ जाता है। अपन में ऐसा कोई हुनर नहीं है। लिहाजा, हम कमाई की सीट से दूर हैं। इसीलिए हम तो भगवान् को हाजिर-नाजिर मानकर कहने को प्रस्तुत हैं कि दफ्तर में भ्रष्टाचार है, पर वह कुछ सीटों तक सीमित है। यह एक भुक्तभोगी की भोगे हुए यथार्थ की दर्द भरी आत्म-स्वीकृति है। ऐसा न होता तो हम भी पंडितजी के समान शान से पूजा-पाठ करवाते, कमाऊ सीट पाते और महँगाई को सिंगट्टा दिखाते। कम-से-कम ऐसे दिन तो देखने न पड़ते।

आज आलू की नियामत हासिल है, पर कब तक? कल उसका भरोसा भी नहीं है। दुख में आदमी दार्शनिक हो जाता है। आलू की सोचते-सोचते हमें ध्यान आता है कि साँसों का ही अगले पल-छिन का ठिकाना नहीं है तो साग-सब्जी का कैसे हो? साँसों का घटना और सब्जी का मूल्य बढ़ना समय की एक अनिवार्य प्रक्रिया है। इसकी शिकायत करने का क्या फायदा?

हर दफ्तर में एक कवि होता है। अपने दफ्तर में भी है। ऐसा कवि हिंदी-दिवस, स्वागत-विदाई समारोहों में प्रमुखता पाता है। कभी-कभार साहित्यिक अभिरुचि का कोई साहब ऑफिस के अरण्य में आ फँसा तो कवि का उसके घर आने-जाने का डौल भी लगता है। उसकी दो दफ्तर-प्रिय पंक्तियाँ हैं—'जो होना है, सो होना है, इसमें क्या रोना-धोना है।'

कविजी एक बार कैंटीन के मैनेजर की फरमाइश और उसी के सौजन्य से चाय, समोसा, गुलाबजामुन उदरस्थ कर कविता की तान छेड़ने के बाद हमें समझा चुके हैं कि उनका यकीन उत्तर-आधुनिकता में नहीं है। इस पारंपरिक और आध्यात्मिक मुल्कों के देश में उनका सहज विश्वास नियतिवाद में है। वही इन नए नवेले वाद के प्रवर्तक हैं। उन्होंने कविता के दायरे में नियतिवाद का उल्लेखनीय योगदान किया है। आलोचक इसे मानें न मानें, कविजी ऐसा ही मानते हैं। उनकी वाद की यह बकवास अपने पल्ले नहीं पड़ती है, फिर भी मुफ्त का समोसा-गुलाबजामुन जपने का मौका मिले तो सरकारी बाबू गाली भी सुनने को तैयार हैं, यह तो कोई वाद नामक रहस्य है। क्या है, क्यों है, यह अपने लिए अनर्गल है। बेमानी और व्यर्थ है। अपन तो सिर्फ इतना जानते हैं कि गरम समोसे और गुलाबजा-मुन में काफी जान है।

मुफ्त का माल खाते-खाते हमें खयाल आता है। बरसात बीत गई। कई बार याद भी आई, पर पत्नी से कहने की हिम्मत नहीं पड़ी। अरसा गुजर चुका है, घर में पकौड़ी नहीं बनी है। एक बार हमने साहस किया, पत्नी से प्रार्थना करने का तो उन्होंने पलटकर उत्तर दिया, "तेल की आसमानी कीमतों का अंदाज तुम्हें है कि नहीं? उस पर कोढ़ में खाज, गैस का सिलेंडर है। बैठे-ठाले चार सौ का चूना है। तुम्हारी जुबान है कि बस चटोरेपन के चटखारे लेती रहती है। उसे कंट्रोल करना सीखो!"

आपसे क्या छिपाना! पत्नी के अनुशासन के आगे हम लाचार हैं। घर की शिकायत बाहर करने की अपनी आदत नहीं है। जीवन-संगिनी का स्वभाव ही उग्र है। जब वह उत्तेजित होती हैं तो उनके स्वर में लाउड-स्पीकर फिट हो जाता है। आर्थिक बजट पर मुसलसल मूल्य वृद्धि के आक्रामक हमलों से उत्तेजित होना कोई आश्चर्य का विषय भी नहीं है। पर जब वह उत्तेजित स्वर में यानी दहाड़कर हमें टोकती हैं तो

खुलेआम, दिन-दहाड़े, मूल्य वृद्धि की यह डकैती कोई कब तक बरदाश्त करे! सरकार के विशालकाय ढाँचे का किसी नागरिक का नपुंसक गुस्सा क्या बिगाड़ लेगा? उसकी नींद में खलल सिर्फ सत्ता खिसकने की हलचल से होता है वरना आतंक, कीमतों की बढ़त, भूखे किसान, आत्महत्या को बाध्य बेरोजगार, सीमा में घुसपैठियों की वारदातें, चीन का भारतीय इलाके हड़पने का प्रयास आदि-आदि इस कुंभकर्ण के खर्राटों को रोकने में असमर्थ हैं। सरकार इन खुर्राट खर्राटों को 'मीटिंग' का नाम देती है और लाल बत्ती जलाकर बैठी रहती है। कौन माई का लाल है, जो खर्राटों के सुप्त चिंतन में व्यवधान डाल सके! अब तो आलम यह है कि उसे याद ही नहीं रहता कि वह कब मीटिंग कर रही है, कब खर्राटे भर रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ोसियों के कान खड़े होते हैं। अपन भी ऊँची आवाज सुनकर यही करते हैं। एक-दूसरे के घरेलू मामलों में जानकारी रखना अच्छे पड़ोसियों का मौलिक अधिकार है और मिर्च-मसाला लगाकर उसकी दूसरों से चर्चा, उनका कर्तव्य। यह पड़ोसी-धर्म है और हम सब इसे बखूबी निभाते हैं।

खुलेआम, दिन-दहाड़े, मूल्य वृद्धि की यह डकैती कोई कब तक बरदाश्त करे! सरकार के विशालकाय ढाँचे का किसी नागरिक का नपुंसक गुस्सा क्या बिगाड़ लेगा? उसकी नींद में खलल सिर्फ सत्ता खिसकने की हलचल से होता है वरना आतंक, कीमतों की बढ़त, भूखे किसान, आत्महत्या को बाध्य बेरोजगार, सीमा में घुसपैठियों की वारदातें, चीन का भारतीय इलाके हड़पने का प्रयास आदि-आदि इस कुंभकर्ण के खर्राटों को रोकने में असमर्थ हैं। सरकार इन खुर्राट खर्राटों को 'मीटिंग' का नाम देती है और लाल बत्ती जलाकर बैठी रहती है। कौन माई का लाल है, जो खर्राटों के सुप्त चिंतन में व्यवधान डाल सके! अब तो आलम यह है कि उसे याद ही नहीं रहता कि वह कब मीटिंग कर रही है, कब खर्राटे भर रहा है।

बहरहाल, सरकार और पंडितजी ऐसे कमाऊ सीट पर स्थापित कर्मचारियों के लिए दिनोदिन बढ़ती सुरसा सी महँगाई से क्या फर्क पडता है? अपन में हनुमानजी ऐसी क्षमता भी नहीं है कि लघु रूप धरकर इन दिनों एवरेस्ट छूती मूल्यवृद्धि को धत्ता बता सकें। हम हैं, हमारे ऐसे लाखों विवश परिवार हैं, जो इस सुरसा को लगातार झेल रहे हैं। सरकार है कि जाने किस निष्क्रियता से ग्रस्त हाथ पर हाथ धरे बैठी है। हमें लगने लगा हैं कि उसमें भी कमाऊ सीट हथियाए पंडितजी ऐसों की भरमार है। उन्हें क्या फर्क पड़ता है कि मिठाई उनके अलावा दूसरों के लिए एक दर्शनीय शै बन गई है! उसे देखकर मन-ही-मन अपन जैसे, स्वाद का आनंद ले लेते हैं। इतने दिनों से अपन सूखे और रसे के आलुओं में बसे हैं कि हमें संदेह होता है कि कभी सुबह सोकर उठें तो पेट से आलुओं के अंकुर न फूटने लगें।

कभी विद्वान् बताते हैं कि सरकार क्या करे? मजबूर है। महँगाई जो है, वह विश्व-व्यापी प्रक्रिया है। संसार अब एक ग्लोबल गाँव है। अमेरिका को छींक आई तो वायरल भारत को होता है। वहाँ भटे-आलू उछले तो असर हिंदुस्तान पर पड़ता है। अपन अज्ञानी ही भले। दूसरे ज्ञानी फरमाते हैं कि यदि अर्थव्यवस्था को तरक्की करनी है तो महँगाई तो बढ़नी ही बढ़नी है। यह कुदरत का कानून है। जैसे मौसम में खुद-ब-खुद फूल खिलते हैं, वैसे ही आर्थिक विकास के साथ कीमतें और मुद्रा-स्फीति भी। अपना सिर चकराने लगता है। हम भ्रमाक्रांत हैं। यह कैसा परस्पर-विरोधी तर्क है! एक ओर उत्पादन और फसलें बढ़ें, साथ ही मुद्रास्फीति भी, तो तरक्की तो वैसी ही धरी रह गई! अपन खाने की इकलौती सब्जी आलू भी गँवाएँगे। पंडितजी ऐसे तकदीरवाले हैं। उनकी ऊपरी आय इनफ्लेशन के साथ सामंजस्य बिठाती रहती है। अपनी तो हर हाल में मुसीबत है। वही तय और सीमित तनख्वाह है। जब तक महँगाई भत्ता बढ़ता है, कीमतें ऊँची कूद का नया कीर्तिमान बनाती हैं और रुपया मूल्य घटने का। अपनी बदहाली पहले से भी बदतर हो जाती है।

हमें याद है। हमारे पिताजी अपने दोस्तों के साथ हँसी-मजाक में कहते थे, 'यार! वेतन तो आज का ठीक ही है। बस कीमतें छह-सात साल पहले की दे दो। हम सब धन्ना सेठ बनेंगे। गुजारा भी रो-झींक के नहीं, आराम से हँसते-खेलते होगा।'

हम जब भी इस वाकये को सोचते हैं तो हमें महसूस होता है कि हमारे ऐसे बाबुओं की भी यही तमन्ना है। हम सरकार को भरोसा दिलाते हैं कि पे-कमीशन के वेतन से हमें कोई गिला नहीं है। बस जरा कीमतों की करामात पर वह नियंत्रण कर ले। अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री इतना करिश्मा कर दें कि कीमतों को दो-तीन साल पहले के स्तर पर लादें। हम सब उनके गुण गाएँगे। आरती उतारेंगे। उनका नाम वजीरे-आजमों की फेहरिस्त में स्वर्णाक्षरों से लिखा जाएगा। उनमें बड़े आदमियों का एक प्रमुख लक्षण किसी भी हालात में, मुँह बँद रखना तो है ही, बस मूल्य वृद्धि को रोकने का कारनामा और कर दिखाए तो वह देश के बेमिसाल प्रधानमंत्री कहलाएँगे।

इस देश में जननायकों के मंदिर बनाने की समय सिद्ध परंपरा है। हमने बहुत दिनों से मोहल्ले के पार्क पर नजर गड़ा रखी है। किसी चतुर-सुजान ने वहाँ पहले एक हनुमानजी के मंदिर के बहाने अपने रहने का इंतजाम किया था। एक दिन कॉरपोरेशन के उड़न दस्ते ने उसकी ईंट से ईंट बजा दी।

हमें यकीन है। अल्पसंख्यकों के पूजाघरों के साथ ऐसे विध्वंस की जुर्रत कोई नहीं कर सकता है। अपना वादा है। यदि प्रधानमंत्री ने मूल्यवृद्धि को पीछे धकेल दिया तो हम पार्क में उनका सेक्युलर मंदिर बनवाएँगे।

इस देश में किसी भी अच्छे-बुरे काम के लिए लोग चंदा जुटाने में समर्थ हैं। अपने मन में एक कल्पना है। दिवंगत हुसैन साहब का गतिमान घोड़ा कीमतों की दौड़ का प्रतिनिधि प्रतीक बनने की हैसियत रखता है। अपना विचार है कि उस घोड़े पर प्रधानमंत्री को बैठाकर घोड़े की रास उनके हाथ में रहे। इस मनोहारी छवि का शीर्षक रहेगा—"मूल्य मर्दन अवतार।" सुबह-शाम वहाँ कीर्तन होगा। सस्ती सब्जियों का चढ़ावा चढ़ेगा। उसे मुल्क के निर्धन लोगों में बाँट दिया जाएगा। हमने निर्माण-कार्य में लगे मजदूरों को नमक-रोटी पर गुजारा करते देखा है। वह मेहनतकश इस चढ़ावे की बदौलत एक जून की सब्जी तो पा ही जाएँगे यदि इस बीच हमारी नीयत में खोट नहीं आया तो।

ऐसे हमें खुद पर विश्वास नहीं है कि पैसा झटकने का मौका मिलने पर भी हम ईमानदार रहेंगे या युग धर्म को निभाएँगे। प्रसाद में चढ़ी सब्जियों के कुछ हिस्से पर हमारा हक बनना अपने श्रम-परिश्रम का थोड़ा सा प्रतिफल ही तो होगा।

अपन दृढ़ निश्चय और लगन से इस सेक्युलर मंदिर के इरादे पर डटे हैं। आपका क्या खयाल है? मंदिर बनना कीमतें घटने पर मयस्सर है। क्या ऐसी शुभ घड़ी इस देश में कभी आएगी या नहीं?

९/५ राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो कविताएँ

● बब्लु कुमार सोनी

जन्म : १६ अगस्त, १९८४ को लेग्शेप पश्चिम-सिक्किम (भारत) में।

शिक्षा : स्नातक।

प्रकाशन : 'पोटली/कुम्लो' : जिंदगी की बिडंवनाओं की *(कविता संग्रह)* एवं 'प्रवाहिकी', 'भारत-एशियाई साहित्य', 'समय दैनिक' तथा 'स्रष्टा' आदि स्थानीय पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

अफसोस होता है

कितनी रंग-बिरंगी है यह जिंदगी
पर मैं अकेला यूँ ही
फीके-रंग में रमा रहा
यह खुला आसमाँ, पहाड़, पर्वत
हरे-भरे पेड़-पौधे
झर-झर करता झरना
चूँ-चूँ करती चिड़ियों की चहक
दिल में एक तरह की
आनंद की तरंग उभारते हैं।

ये मदमस्त नदियाँ
मानो अपने प्रियतम से
मिलने को बड़ी उत्सुक हों
इसलिए तो सामने अवरोध को भी,
सिर कुचल-कुचलकर दौड़ पड़ी हैं
हाय! मैं अकेला कभी
इस मिलन-बिछोह का स्वाद
चख न सका।

यह सुंदर वाटिका
कितने रंग-बिरंगे फूल
एक साथ फल-फूल रहे हैं
'मानो एक साथ सभी मुसकरा रहे हैं'
हाय! मैं कभी इस नजारे को
आँखों में सँजो न सका
बस मैं यूँ ही अकारण
सूखे फूलों की पँखुड़ियों की तरह
गिरता ही रह गया
बेरंग होकर यूँ ही सिर
पीटता ही रह गया।

बड़ा अफसोस होता है
नयन से नीर की धारा बहा करती है
मैं अभागा इस दुनिया में आकर
प्रकृति का यह मधु रस
रसास्वादन न कर सका। □

भूल

प्रेम को दूर से सलाम करता रहा
सोचा प्रेम एक भ्रम है
एक धोखा है, एक छल है
पर जाने-अनजाने में
एक सुरूप सुंदरी से
सुमधुर प्रेम करने की गुस्ताखी कर बैठा
भ्रम में था इसलिए
सोच लिया प्रेम सच्चा-गहरा है।

आजकल सच्चा प्रेम मिलता कहाँ
प्रेम मुखौटा पहनकर छल करता रहा
कपट-बाण का शिकार दिन-रैन बनता रहा
उस कंकर को हीरा समझने की भूल कर बैठा।
कंकर-संवेदनशीलता पाँव में चुभता ही रहा
और मुँह से आह तक न निकल पाई
वेदना को नजरअंदाज करता ही रहा
चाहे इसे मेरा भोलापन कहें या अज्ञता
दिल लगा लिया था समुद्र सा गहरा
अत: प्रेम-गहराइयों में बारंबार डूबता ही रहा।

दिल बने हैं टूटने के लिए
इसलिए बारंबार टूटता है
जख्म-पर-जख्म जुड़ता है
क्या करूँ स्वभाव ही ऐसा है
हरपल यूँ ही ठगता रहता हूँ,
ठेस-पर-ठेस यूँ ही खाता रहता हूँ।

कभी तो अकारण शब्द में चंद्रबिंदु लगाकर
खुद पर हँसता ही रहता हूँ तो
कभी विषाद की घटा इस कदर छा जाती है कि
गम के तिमिर में गुम हो जाता हूँ
बस यह सिलसिला जारी है।

गेजिंग बाजार
पश्चिम-सिक्किम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

क्या सच, क्या झूठ

गिरिराज शरण अग्रवाल

रोजी बैड से उठकर धीरे-धीरे चलती हुई अपने छोटे से कोठीनुमा मकान के लॉन में आई और धीरे से कुरसी पर बैठ गई। दवाई लेने के दो घंटे बाद उसका अस्थमा का दौरा लगभग शांत हो गया। अब वह आसानी से साँस ले सकती है और अपनी रोग से पीड़ित साँस की नलियों को ताजा हवा के आनंद से भर सकती है। शाम काफी नीचे उतर आई है। रोजी जानती है कि गरमियों की कई शामें ऐसी होती हैं, जो मन में भारी उदासी भर देती हैं। आज की शाम भी कुछ ऐसी ही उदासी भरी शाम है। गरदन झुकाकर देखती है तो ईजी चेयर के नीचे और उसके आस-पास पाम की कई लंबोतरी पत्तियाँ बिखरी पड़ी हैं। ये पत्तियाँ तेज धूप की तपन में पहले शाख का साथ छोड़कर नीचे गिरी होंगी और फिर हवा का कोई खिलंदड़ा झोंका उन्हें यहाँ कुरसी के आस-पास इकट्ठा कर गया होगा। कुछ देर बाद फिर से कोई झोंका आएगा और इन सूखी पत्तियों को उड़ाकर कहीं और ले जाएगा। कहाँ—वह नहीं जानती।

जन्म : सन् १९४४ में संभल (उ.प्र.) में।
स्वलिखित एवं संपादित एक सौ से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। हिंदी शोध तथा संदर्भ साहित्य की दृष्टि से प्रकाशित विशिष्ट ग्रंथों 'शोध संदर्भ', 'सूर साहित्य संदर्भ', 'हिंदी साहित्यकार संदर्भ कोश' को गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त।
पुरस्कार-सम्मान : उ.प्र. हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा पुरस्कृत, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली द्वारा प्रथम पुरस्कार, उ.प्र. हिंदी संस्थान, लखनऊ के 'सूर पुरस्कार' सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानोपाधियाँ प्रदत्त।

रोजी विचारों की भीड़ से बचने के लिए मन-ही-मन ईशु का नाम लेती है और धीरे से छाती पर क्रॉस करते हुए सोचने लगती है, 'सच क्या है? घास की ये सूखी पत्तियाँ, हवा का खिलंदड़ा झोंका, वह स्थान जहाँ ये पड़ी हुई हैं या वह स्थान, जहाँ हवा का कोई और झोंका इन्हें उड़ाकर ले जानेवाला है? सच क्या है? सच क्या है।'

कई बार रोजी मन-ही-मन यह प्रश्न दुहराती है, 'हर सच क्षणिक नहीं होता है क्या?' कोई और आवाज उसके कानों में एक और प्रश्न उड़ेल देती है। सूखी पत्तियों के लिए शाख से बिछुड़कर नीचे गिरने का क्षण सच था, फिर वह स्थान सच था, जहाँ हवा का झोंका इन्हें पहली बार उड़ाकर ले आया था, फिर वह स्थान सच हो जाएगा, जब कोई और झोंका इन्हें किसी और स्थान पर ले जा फेंकेगा। पहले के सारे सच मृतप्राय: हो जाएँगे इन सूखी पत्तियों के लिए।

'यही होता है! यही होता है न जीवन के इस खेल में।' रोजी ने सोचा। हवा अभी हलकी-हलकी गरम थी और उमस से भरी थी। आम की लंबोतरी पत्तियाँ शाखों के साथ धीरे-धीरे नृत्य कर रही थीं। सूरज का सफेद गोला अब अपना रंग बदलने लगा था। पहले वह सफेद था, अब लाल हो चुका है।

'बस वही एक क्षण सच होता है, जिसे हम भोग रहे होते हैं। शेष सारे क्षण गुजर जाते हैं।' रोजी ने जानबूझकर अपनी सोच के सिलसिले को यहीं लाकर छोड़ दिया।

रोजी ने देखा, कोठी की बाउंड्री पर एक बँदरिया अपने बच्चे को छाती से चिपकाए टुकर-टुकर उसकी ओर देख रही है। रोजी उठी और किचन से ब्रैड के दो पीस लाकर उसने बँदरिया की ओर उछाल दिए। उसने महसूस किया, जैसे क्षण भर के लिए उसका मन हमदर्दी और प्यार के भाव से भर गया है।

यह भी इसी एक क्षण का सच है न! भावना की यह लहर गुजर जाएगी, तब यह सच भी दूर चला जाएगा, कहीं किसी गहरे अंधकार में गुम हो जाने के लिए।

रोजी को आश्चर्य हुआ। आज वह इतनी नकारात्मक क्यों हो रही है? क्या यह उमस भरी शाम उसके विचारों को प्रभावित कर रही है

याद आया, अभी कुछ ही घंटे पहले जैक ने उसे अस्थमा की दवा लाकर दी थी और प्यार से पानी का गिलास उसके हाथ में थमाते हुए गोली उसके मुँह में डाल दी थी। धीमे से किस किया था उसे और कहा था, 'अभी कुछ ही देर में ठीक हो जाओगी तुम! थोड़ा रेस्ट करो, डार्लिंग!'

रोजी को याद आया, जवाब में बीमार होते हुए भी वह फूल की तरह खिल उठी थी, 'ओह, जैक! तुम कितना चाहते हो मुझे?' उसने कहा था और जैक को कोठी के मुख्य द्वार से जाते हुए देखती रह गई थी।

'यह सब क्षणिक सच है न?' रोजी ने अपने आप से पूछा है। हमारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कोई और समय होता तो डॉगी मेरे पीछे नहीं आता।' रोजी ने मुड़कर डॉगी को देखा और किचन से निकालकर उबले हुए मीट का बरतन उसके सामने रख दिया। उस क्षण रोजी ने अपने भीतर उभरती हुई संतुष्टि की एक विचित्र सी भावना महसूस की। अगले ही पल वह फिर से विचारों के एक और चक्रवात में उलझ गई—'आदमी दान देता है, किंतु दया के पात्र को अपने द्वारा कुछ दिए जाने की क्षमता दरशाकर, स्वयं को संतुष्ट करने के लिए अथवा माँगनेवाले के प्रति सहानुभूति की भावना से। जो भी हो, दान देने और लेनेवाले क्षण दोनों सच हैं। प्रेम और समर्पण की भावनाओं जैसे ही। ये बार-बार मरते हैं, बार-बार जन्म लेते हैं। इनका कोई अंत नहीं है। ये टुकड़ों-टुकड़ों में दूर तक फैले चले गए हैं।

प्यार और हमारे प्यार की स्वीकारोक्ति क्षणिक नहीं होती है क्या? रोजी ने नजर उठाकर देखा तो बाउंड्री पर बैठी बँदरिया अभी अपने नन्हे बच्चे को ब्रैड के टुकड़े खिलाने में व्यस्त थी।

'बस, यही एक पल सच है। ममता के लिए भी और ममता के भूखे प्राणी के लिए भी।' रोजी ने अपने आपसे कहा, 'बच्चा, बड़ा होगा तो भूल जाएगा इस क्षण को। बँदरिया पहचान नहीं पाएगी उस बच्चे को, जो आनेवाले कल तक पूरे बंदर में परिवर्तित हो चुका होगा। हममें से हर एक प्राणी एक-एक क्षण का सच जी रहा है।' रोजी ने सोचा और श्रद्धापूर्वक एक बार फिर अपनी छाती पर क्रॉस किया।

जब वह प्यार के उन्माद में यह कह रहा होता है कि मैं तुम्हें अपने जीवन से भी अधिक चाहता हूँ तो वह इन शब्दों को बोलनेवाले क्षण में एकदम सच्चा होता है, लेकिन उस क्षण के गुजर जाने पर?

रोजी अपने आप से किया गया यह सवाल अधूरा छोड़ देती है।

उसे खयाल आता है, जैक उसके लिए दवा लाया था, प्रेमपूर्वक टेबलेट उसके मुँह में डाली थी, लेकिन इससे पहले कि उसे थोड़ा आराम मिले, वह चला गया। टेबलेट प्यार से मुँह में डालना भी सच था और स्थिति में सुधार को देखे बिना बाहर चला जाना भी सच था।

रोजी जैक की कल्पना के भँवर से निकलकर अपनी ओर आई है। वह सोच रही है कि जैक से उसका यह कहना कि 'जैक डियर, तुम मुझे कितना चाहते हो!' क्या क्षण भर की स्वीकारोक्ति नहीं थी? क्या ये शब्द अब भी जीवित हैं उसके मन-मस्तिष्क में?

आदमी अपनी सुविधा और जरूरत के हिसाब से ही प्यार करता है। न कम, न ज्यादा। प्यार का अपना भी एक गणित होता है। रोजी ने सोचा और उन छोटी-छोटी पल-पल की सच्चाइयों के बीच जीवित रहनेवाले आदमी की सरलता पर मुसकरा दी, जो सच्चाइयाँ आनेवाले पल में मर जानेवाली होती हैं।

रोजी की सोच और तीखी हो गई—पर क्षण भर के ये छोटे-छोटे सच सदैव के लिए तो मरते नहीं हैं न! ये मरते हैं, फिर जन्म लेते हैं, फिर मरते हैं, फिर जन्म लेते हैं और इन्हीं के बीच आदमी बहलता रहता है। सुख की साँस लेता रहता है।

जैक के मन में प्रेम का अपार सागर उमड़ पड़ता है मेरे लिए पाँच दिन में, छः दिन में, सात दिन में। लगता है, वह अपने पूरे अस्तित्व को न्योछावर कर देगा मेरे एक इशारे पर। कितना सच्चा, कितना अच्छा लगता है तब वह। लेकिन प्यार के सच के उस पल के गुजर जाने पर कितना उदासीन हो जाता है जैक! निश्चित अवधि पर यह सच फिर जन्म लेता है, फिर अपने स्थायी होने का विश्वास दिलाता है, उसे भी मुझे भी। फिर मर जाता है, फिर जन्म लेता है। जैसे एक बार वसंत ऋतु आती है, फिर चली जाती है, फिर आती है, फिर चली जाती है।

रोजी ने आस-पास का जायजा लिया। पेड़ों की पत्तियों से भरी शाखाएँ मंद गति से बहनेवाली हवा में धीरे-धीरे हिलकोरे ले रही थीं। बँदरिया अपने बच्चे को लेकर अन्यत्र चली गई थी। वातावरण में अब भी उमस थी। अब भी गरम हवा की तरंगें शरीर को उमस का अहसास दिला रही थीं।

रोजी ने देखा, उसका डॉगी ड्राइंगरूम से निकलकर आया है और दुम हिला-हिलाकर उसके पाँवों में लोटने लगा है। डॉगी ने अपनी लाल-लाल जीभ जबड़े से बाहर निकाल दी थी। बूँद-बूँद करके उसकी लार टपक रही है, हमेशा की तरह। इस पल भी डॉगी की आँखों में समर्पण का भाव है, चाहे जाने की भूख है।

रोजी प्यार से डॉगी की पीठ पर हाथ फेरती है। उसे सहलाती है, चुमकारती है। रोजी जानती है कि 'डॉगी' ऐसा तभी करता है, जब उसे तेज भूख लग चुकी होती है। वह कुछ क्षण बाद उठेगी, डॉगी को उबला हुआ मीट खाने को देगी, डॉगी पीठ के बल लेटकर और दुम हिलाकर उसका आभार व्यक्त करेगा और फिर प्रतिदिन की तरह ड्राइंगरूम में सोफे के नीचे आँखें मूँदकर सो जाएगा।

रोजी सोचती है, डॉगी के समर्पण के भाववाला क्षण भी सच है और रोजी के भीतर स्वामित्व की संतुष्टि के लिए तरसता हुआ भाव भी सच। साथ ही वह पल भी सच है, जो उसे और डॉगी को या उसे और जैक को कुछ समय के लिए एक-दूसरे के प्रति उदासीन बनाने के लिए आ जाता है।

'प्यार और समर्पण में निरंतरता ढूँढ़नेवाले मूर्ख हैं।' रोजी अपने आप से कहती है—'भूख में बच्चे को माँ, पेट को रोटी, नर को नारी और नारी को प्रेम की याद आती है। भूख शांत होते ही सच का वह पल गुजर जाता है और छोड़ जाता है अपने पीछे दिखावे और व्यवहार की मजबूरियाँ।'

रोजी ने डॉगी की तरफ देखा। वह अब भी लार टपकाते हुए रोजी की ओर निहार रहा है। रोजी कुरसी से उठ गई है। डॉगी उसके पीछे-पीछे चला है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कोई और समय होता तो डॉगी मेरे पीछे नहीं आता।' रोजी ने मुड़कर डॉगी को देखा और किचन से निकालकर उबले हुए मीट का बरतन उसके सामने रख दिया। उस क्षण रोजी ने अपने भीतर उभरती हुई संतुष्टि की एक विचित्र सी भावना महसूस की।

अगले ही पल वह फिर से विचारों के एक और चक्रवात में उलझ गई—'आदमी दान देता है, किंतु दया के पात्र को अपने द्वारा कुछ दिए जाने की क्षमता दरशाकर, स्वयं को संतुष्ट करने के लिए अथवा माँगनेवाले के प्रति सहानुभूति की भावना से। जो भी हो, दान देने और लेनेवाले क्षण दोनों सच हैं। प्रेम और समर्पण की भावनाओं जैसे ही। ये बार-बार मरते हैं, बार-बार जन्म लेते हैं। इनका कोई अंत नहीं है। ये टुकड़ों-टुकड़ों में दूर तक फैले चले गए हैं।

रोजी ने महसूस किया कि वह विचारों के चक्रवात में फँसती चली जा रही है। धूप अपना बिस्तर समेटने लगी थी। हवा अब शांत थी और पाम का पेड़ अपने निश्चल पत्तों के साथ सिर झुकाए खड़ा था।

अनायास उसकी स्मृति जैक से हटकर रिचर्ड की ओर चली गई। रोजी ने सोचा, 'वह एक ऐसी महिला है, जिसे दो पुरुषों का अनुभव प्राप्त हुआ।'

रोजी ने सोचा, 'जब वह जीवित था तो उसे लगता था कि रिचर्ड से अधिक प्यार करनेवाला कोई और पुरुष उसे अपने पूरे जीवन में नहीं मिलेगा। उसने अपने विवाह के तीन वर्ष गुजारे थे रिचर्ड के साथ। उसे याद आया कि जब रिचर्ड रेल-दुर्घटना में घायल होकर दम तोड़ रहा था, तब उसने संकल्प लिया था कि अब वह किसी और पुरुष से संपर्क नहीं करेगी। पूरा जीवन रिचर्ड की याद में गुजार देगी, पर ऐसा नहीं हुआ। रिचर्ड की मृत्यु के दो साल बाद ही उसने पुनर्विवाह कर लिया जैक के साथ।'

वह भूल गई कि रिचर्ड किस प्यार के साथ उँगली से उसकी ठोड़ी उठाकर उसे 'किस' किया करता था। रिचर्ड के साथ रहते हुए भी प्यार के ऐसे पल थोड़े-थोड़े समय बाद ही मिल पाते थे उसे। ये पल गुजर जाते तो मन कुछ सामान्य सा हो जाता।

रोजी ने सोचा, 'उसने संकल्प तो यही लिया था कि रिचर्ड के साथ बीते क्षणों की यादों को हृदय से लगाए-लगाए वह अपना सारा जीवन गुजार देगी, पर वास्तव में ऐसा हो नहीं पाया।'

रोजी ने सोचा, 'जीवन की जो माँग है, उसकी जो चाह हैं, वह कल्पना से तो पूरी नहीं होती हैं न।'

तब उसने जैक का हाथ थाम लिया। तब फिर वह ठीक उन्हीं जैसे क्षणों से गुजरने लगी, जैसे क्षण उसने रिचर्ड के साथ गुजारे थे। कोई भी अंतर नहीं था या वह स्वयं ही अंतर नहीं कर पाती थी।

उसे लगता था, जैसे मात्र स्वर बदला है, आदमी का रंग-रूप बदला है। शब्द वही हैं, भावनाएँ वही हैं, भूख वही है, प्यास वही है, जो थोड़े-थोड़े समय बाद उभरती है, प्यार का रूप धारण करती है, क्षण भर के सच को अपने भीतर समोती है और गुजर जाती है।

रोजी ने देखा, डॉगी फिर से सोफे के नीचे पसर गया था।

कई-कई दिन तक प्यार के वाक्यों का आदान-प्रदान नहीं होता है अब जैक के और मेरे बीच। पहले बार-बार होता था और प्रतिदिन होता था। फिर दूरी बढ़ती गई··· दूसरे दिन, तीसरे दिन, चौथे दिन, सप्ताह में एक आध बार ऐसे पल आते और हम दोनों के मुँह में शहद जैसा कुछ उड़ेलकर चले जाते, उदासीनता के अंधकार में गुम होने के लिए।

शाम के धुँधले पड़ते जा रहे उजाले ने अब धीरे-धीरे रात की कालिमा को स्वीकार करना शुरू कर दिया था। सामने की हर चीज अपना रूप खोती जा रही थी। पाम की सूखी पत्तियाँ अब भी कुरसी के आस-पास बिखरी पड़ी थीं। रोजी ने इनमें से एक सूखी पत्ती चुनकर हाथ में ली। सोचा, 'क्या इसे याद होगा कि यह सामने वाले पाम के वृक्ष का कभी कोई हिस्सा थी। नहीं-नहीं।' वह धीमे से बुदबुदाई—'मुझे ही कब यह याद है कि रिचर्ड कभी मेरे जीवन का कोई हिस्सा रहा था।'

इस खयाल के आते ही रोजी ने एक झुरझुरी सी ली। सोचा, इस पत्ती की जगह वृक्ष की डाल पर कोई और पत्ती उग आएगी और डाल यह भूल जाएगी कि पहली वाली पत्ती कभी उसके भीतर से फूटी थी, हवा की लहरों में झूमी थी और नाची थी।

'ये सब एक-एक क्षण के सच हैं रोजी—' अपने-आपको संबोधित करते हुए रोजी ने धीमे से कहा, 'जो सच गुजर जाता है, कोई और सच उसकी जगह ले लेता है। बिलकुल वैसा ही जैसे वह पहले था। आदमी मर जाता है, ठीक है, पर ठीक वैसा ही आदमी फिर पैदा हो जाता है। रिचर्ड मर गया, उसकी जगह जैक अस्तित्व में आ गया है, मेरे लिए। ठीक वैसा ही पुरुष जैसा कि रिचर्ड था। वह भी सच था, यह भी सच है।'

रोजी ने सोचा और फिर अनायास अपने इस विचार पर सहम गई। अस्थमा के अगले अटैक पर जब वह दम तोड़ चुकी होगी तो मेरे बाद किसी और नारी से संपर्क न करने का संकल्प लेनेवाला जैक क्या करेगा! पुनः इस रिक्त स्थान को शीघ्र ही भर लेगा क्या? जैसे इस वृक्ष ने एक नई पत्ती उगाकर स्वयं को भर लिया है या स्वयं तुमने।

उसने अपनी सोच फिर अधूरी छोड़ दी। 'पर रोजी तुम यह क्यों चाहती हो कि जैक रिक्त हुए स्थान को पुनः न भरे! तुम्हें क्यों अच्छा लगता है उसका यह संकल्प? क्यों अच्छा लगता है? सोचो-सोचो।'

रोजी ने सोचा, उसे लगा, जैसे हर सच भ्रम की नींव पर खड़ा है। आदमी जब झूठ को सच मानकर बोल रहा होता है तो हमें अच्छा लगता है। हमें अच्छा लगता है वह सच, जबकि हम जान लेते हैं कि वह झूठ बन जानेवाला है।

द्वार पर आहट हुई है। रोजी ने देखा, जैक बोझिल-बोझिल पैरों से चलकर भीतर आया है, वह उसके पास खड़ा है और पूछ रहा है, 'अब तुम कैसी हो? रोजी बिलकुल ठीक हो न?'

उसे अच्छा लगता है क्षण भर का यह सच, क्षण भर का यह झूठ! वह कुछ नहीं कहती। बस धीरे से मुसकरा देती है।

एफ-४०३, पार्क व्यू सिटी-१,
सोहना रोड, गुड़गाँव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुलबुल और गुलाब

मूल : ऑस्कर वाइल्ड

अनुवाद : भद्रसैन पुरी

"उसने कहा, 'मैं तुम्हारे साथ तभी नाचूँगी, जब तुम मुझे लाल गुलाब लाकर दोगे।' " युवा विद्यार्थी चिल्लाया—"परंतु मेरे सारे बागों में लाल गुलाब नहीं है। मैंने वह सबकुछ पढ़ा है जो बुद्धिमान लोग लिख गए हैं। फिर भी मेरा जीवन दूषित हो गया है, क्योंकि मेरे पास लाल गुलाब नहीं है। मैं नहीं जानता कि उसे किस प्रकार और कहाँ से प्राप्त करूँ। ये छोटी-छोटी बातें हमारी खुशी में कैसी विभिन्नता पैदा कर देती हैं!" उसकी आँखें आँसुओं से भर गईं।

बुलबुल नामक एक छोटे पक्षी ने पुराने वृक्ष में अपने घोंसले से उसे देखा। उसने पत्तों में से बाहर देखा और उसपर हैरान हुआ।

"यहाँ मैं कम-से-कम एक प्रेमी को देखता हूँ।" बुलबुल ने कहा, "मैंने रातों के बाद रातों को सच्चे प्रेमी के बारे में गाया है, परंतु मैंने उसे अब तक देखा नहीं था। रात के बाद रात को मैंने प्रेमी की कहानी सितारों को सुनाई है और अब कम-से-कम एक प्रेमी को देख रहा हूँ।"

"कल महल में नाच होगा," विद्यार्थी ने कहा, "राजकुमार वहाँ होगा और मेरी प्रिय भी उस समूह में होगी। यदि उसके लिए मैं लाल गुलाब लाता हूँ तो वह मेरे साथ तब तक नाचेगी, जब तक सूर्य आकाश में नहीं आ जाता। मैं उसको अपनी बाँहों में थामूँगा और उसका हाथ मेरे हाथ में होगा, परंतु मेरे बाग में कोई गुलाब नहीं है, इसलिए मैं वहाँ अकेला ही बैठूँगा और वह मेरे पास से निकल जाएगी। उसको मेरी कोई जरूरत नहीं होगी और मेरा दिल टूट जाएगा।"

"यह वास्तव में प्रेमी है।" बुलबुल ने कहा, "यह उसी बात से पीड़ित है जिसके बारे में मैं गाता हूँ; जिसको मैं पसंद करता हूँ, वही उसको दर्द देता है। प्रेम भी विचित्र वस्तु है। सोना और गहने उसे खरीद नहीं सकते।"

"संगीतकार वाद्य बजाएँगे और मेरी प्रिय उनके संगीत पर नृत्य करेगी; नवाब और धनी लोग अच्छी पोशाकों में उसके इर्दगिर्द एकत्र हो जाएँगे, परंतु वह मेरे साथ नहीं नाचेगी; क्योंकि उसको देने के लिए मेरे पास लाल गुलाब नहीं है।" वह घास पर लेट गया और अपने चेहरे को अपने हाथों पर रखकर रोने लगा।

"वह क्यों रो रहा है?" बाग के छोटे-छोटे जीवित प्राणियों ने पूछा।

"वह क्यों रो रहा है?" बाग में खिले फूलों ने पूछा।

"वह लाल गुलाब के लिए रो रहा है।" बुलबुल ने कहा।

"लाल गुलाब के लिए?" वे चिल्लाए—"क्या मूर्खता है?" और वे हँस दिए, परंतु बुलबुल सारी बात समझती थी। उसने अपने भूरे पंख फैलाए और हवा में उड़ गई।

घासवाली भूमि के मध्य में गुलाब का एक सुंदर पौधा था। जब बुलबुल ने उसे देखा तो उसके पास ही नीचे उतर आई।

"मुझे एक लाल गुलाब दे दो।" वह चिल्लाई—"मैं तुम्हारे लिए मधुरतम गीत गाऊँगी।"

"मुझे खेद है!" गुलाब के पौधे ने कहा, "मेरे गुलाब सफेद हैं—पहाड़ों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ी बर्फ की तरह सफेद। बाग के दूसरी तरफ मेरे भाई के पास जाओ। वह तुम्हें संभवतः दे सके जो तुम चाहती हो।''

अतः बुलबुल उड़कर गुलाब के दूसरे पौधे पर गई। ''मुझे लाल गुलाब दे दो!'' वह बोली, ''और मैं तुम्हारे लिए मधुरतम गीत गाऊँगी।''

''मुझे खेद है!'' गुलाब के पौधे ने उत्तर दिया—''मेरे गुलाब पीले हैं—शरद् ऋतु में खेतों में उगे सुनहरे अनाज की तरह पीले, परंतु तुम मेरे भाई के पास जाओ, जो विद्यार्थी की खिड़की के सामने उगा है। वह तुम्हें संभवतः दे देगा, जो तुम चाहते हो।''

वह उड़कर गुलाब के उस पौधे के पास गई जो विद्यार्थी की खिड़की के सामने उगा था।

''मुझे एक लाल गुलाब दे दो!'' वह बोली, ''और मैं तुम्हें अपना मधुरतम गीत सुनाऊँगी।''

''मेरे गुलाब लाल हैं,'' उसने उत्तर दिया—''परंतु शरद् ऋतु की सर्दी ने मेरे फूलों को जमा दिया है और वे झड़ गए हैं तथा तूफान ने मेरी शाखें तोड़ दी हैं। इस कारण इस वर्ष मेरे गुलाब बिलकुल नहीं होंगे।''

''मुझे एक ही लाल गुलाब चाहिए।'' बुलबुल ने आग्रह से कहा, ''केवल एक लाल गुलाब; क्या कोई दूसरा तरीका नहीं है जिससे मैं उसे प्राप्त कर सकूँ?''

''तरीका है,'' पौधे ने उत्तर दिया—''परंतु तुम्हें बताने के लिए मेरे पास साहस नहीं है।''

''मुझे बता दो।'' बुलबुल ने कहा, ''मुझे कोई भय नहीं है।''

''यदि तुम्हें लाल गुलाब चाहिए,'' पौधे ने कहा, ''तो चाँद की रोशनी में तुम्हें उसे संगीत से बनाना पड़ेगा और उसकी लाली तुम्हारे दिल के रक्त से आएगी। अपने दिल को काँटे के विरुद्ध दबाकर तुम्हें मेरे लिए गाना होगा। तुम्हें मेरे लिए सारी रात तब तक गाना होगा, जब तक काँटा तुम्हारे दिल को फाड़कर खोल न दे और तुम्हारा जीवन-रक्त बहकर मेरी रगों में आकर मेरा न बन जाए।''

''लाल गुलाब के लिए मृत्यु बहुत बड़ी कीमत है!'' बुलबुल ने कहा, ''और जीवन हम सबके लिए बहुत प्यारा है। मैं हरे जंगल में बैठकर सोने में सूर्यास्त और आकाश में चाँदी के चाँद का उदय होते देखना चाहती हूँ। मैं फूलों को सूँघना चाहती हूँ; उनकी सुंदरता पर चकित होती हूँ। फिर भी जीवन की अपेक्षा प्रेम उत्तम है और मानव हृदय के सामने एक पक्षी का दिल क्या है?''

उसने अपने भूरे पंख पुनः फैलाए और हवा में उड़ गई। वह बाग के ऊपर से साए की तरह गुजर गई। युवा विद्यार्थी अभी तक घास में लेटा हुआ था और उसकी आँखों के आँसू अभी खुश्क नहीं हुए थे।

''प्रसन्न हो जाओ!'' बुलबुल चिल्लाई—''तुम्हें तुम्हारा लाल गुलाब मिल जाएगा। मैं उसको चाँद की रोशनी में अपने संगीत से बनाऊँगी और अपने दिल के रक्त की लाली से उसमें लाल रंग भरूँगी। मैं तुमसे केवल इतना चाहूँगी कि तुम एक सच्चे प्रेमी बनो, क्योंकि प्रेमी बुद्धिमानों से भी बुद्धिमान है और शक्तिशालियों से भी शक्तिशाली है।''

विद्यार्थी ने घास से मुँह उठाकर ऊपर देखा और सुना, परंतु बुलबुल उसे क्या कह रही थी, वह समझ नहीं पाया, क्योंकि वह उन्हीं बातों को जानता था जो पुस्तकों में लिखी थीं।

परंतु बूढ़ा वृक्ष सब समझता था, क्योंकि वह बुलबुल को प्यार करता था, जिसने उसकी शाखाओं में अपना घोंसला बनाया था।

''मुझे अपना अंतिम गीत सुनाओ।'' उसने कहा, ''क्योंकि तुम्हारे चले जाने के बाद मैं उदास हो जाऊँगा।''

अतः बुलबुल ने बूढ़े वृक्ष के लिए गाना गाया। उसकी आवाज ऐसी थी जैसे चाँदी के घड़े से पानी की बूँदें गिर रही हों।

जब उसने गाना समाप्त किया तो विद्यार्थी उठा और एक कॉपी निकाली।

''उसकी आवाज में कुछ सुंदर स्वर हैं, परंतु उसके गीत का कोई अर्थ नहीं निकलता और न ही उससे कोई वास्तविक लाभ होने वाला है, वह किसी मतलब का नहीं है। उसके पास भावना नहीं है। वह अपने संगीत की बाबत ही सोचती है। वह अधिकतर कलाकारों की तरह ही है, केवल चीखती है और अपनी कला तथा अपने बारे में ही सोचती है, दूसरों के बारे में नहीं।''

वह अपने कमरे में गया और चारपाई पर लेटकर अपने प्यार के बारे में सोचने लगा। कुछ समय के बाद उसे नींद आ गई।

जब आकाश में चाँद उदित हुआ तो बुलबुल उड़कर गुलाब के पौधे के पास गया। उसने अपने आपको काँटे के विरुद्ध दबाया और दबाते हुए सारी रात गाया। ठंडा चाँद सुनता रहा। वह सारी रात गाती रही और काँटा अंदर-ही-अंदर गहराई से जाता रहा और उसका जीवन-रक्त उससे बह गया!

उसने पहले लड़के और लड़की के हृदय में उपजे प्रेम के बारे में गीत गाया और एक विचित्र गुलाब, पौधे की सबसे ऊँची टहनी पर नजर आया। जैसे ही गीत के बाद गीत चला, वह खिल उठा। पहले वह सफेद था, उस बादल की तरह जो नदी के ऊपर मँडराता है—आकाश में सूर्योदय से पहले प्रातःकाल के पंखों जैसा चाँदी-सा!

काँटे के विरुद्ध और अधिक दबाने के लिए गुलाब का पौधा चिल्लाया—''और दबाओ, छोटी बुलबुल, या फिर दिन चढ़ने से पहले गुलाब पूर्ण नहीं होगा।''

बुलबुल ने अपने आपको काँटे के विरुद्ध जोर से दबाया और उसका गाना ऊँचे-से-ऊँचा होता गया, क्योंकि फिर उसने आदमी और औरत के दिलों में उपजे प्यार की बाबत गाया। गुलाब लाल हो गया, परंतु गुलाब का दिल सफेद ही रहा, क्योंकि उसे तो बुलबुल के दिल का रक्त ही लाल कर सकता था।

गुलाब का पौधा बुलबुल को पुनः चिल्लाया—''और दबाओ, नहीं तो छोटी बुलबुल, काँटे के विरुद्ध अपने आपको और दबाओ, नहीं तो गुलाब के पूर्ण होने से पहले दिन चढ़ जाएगा।''

बुलबुल ने अपने आपको काँटे के विरुद्ध और जोर से दबाया। काँटे ने उसके हृदय को छुआ और बुलबुल पीड़ा से भर गई। जैसे-जैसे उसकी पीड़ा बढ़ती गई उसका गीत प्रचंड-से-प्रचंडतर होता गया, क्योंकि उसने उस प्रेम का गीत गाया जो मृत्यु से ही पूर्ण होता है; प्रेम, जो कब्र में भी नहीं मरता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुलाब गहरा लाल हो गया। गुलाब का दिल रत्न की तरह लाल था, परंतु बुलबुल की आवाज दुर्बल से दुर्बलतम हो गई। उसके छोटे-छोटे पंख अब नहीं हिलते थे और आँखों के सामने अँधेरा छा रहा था।

उसके अंतिम अद्‌भुत गीत में उसकी आवाज ऊँची उठी। चाँद ने आकाश में प्रतीक्षा करके उसको सुना। लाल गुलाब ने भी उसे सुना और प्रातःकाल की ठंडी हवा में खुलकर खिला।

"देखो, देखो!" गुलाब के पौधे ने कहा, "गुलाब अब पूरा हो गया है।" परंतु बुलबुल ने कोई उत्तर नहीं दिया, क्योंकि वह दिल में काँटे को लिये लंबी घास में मर चुकी थी।

दोपहर के समय विद्यार्थी ने अपनी खिड़की को खोला और बाहर देखा।

"हाँ!" वह चिल्लाया—"यहाँ लाल गुलाब है! हू-ब-हू जैसा मैं चाहता था! मैंने अपने सारे जीवन में ऐसा गुलाब नहीं देखा। मुझे विश्वास है कि यह उतना ही सुंदर है जितना लातीनी भाषा में इसका लंबा नाम है।" अतः उसने बाहर अपना हाथ बढ़ाकर उसे ले लिया।

फिर उसने अपनी टोपी पहनी और लाल गुलाब को हाथ में लेकर विद्वान् डॉक्टर के घर की ओर भागा। विद्वान् डॉक्टर विद्यार्थी का अध्यापक था और विद्यार्थी उसकी बेटी से प्रेम करता था। वह घर के दरवाजे पर बैठी थी और उसका छोटा कुत्ता उसके पाँव में लेटा हुआ था।

"तुमने कहा था कि यदि मैं तुम्हें लाल गुलाब ला दूँ तो तुम मेरे साथ नाचोगी!" विद्यार्थी चिल्लाया—"यह है, दुनिया भर में सबसे अधिक लाल रंग का गुलाब। तुम आज रात इसे अपने दिल से लगाओगी और जब हम इकट्ठा नाचेंगे तो यह तुम्हें बताएगा कि मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ।"

"मुझे खेद है!" लड़की ने कहा, "यह मेरी पोशाक के रंग के अनुरूप नहीं होगा और कप्तान ने कुछ असली रत्न भेजे हैं। हर कोई जानता है कि फूलों की अपेक्षा असली रत्न बहुमूल्य होते हैं।"

"ठीक है," विद्यार्थी ने क्रुद्ध होकर कहा—"तुमने मुझे यही धन्यवाद दिया है!"

उसने गुलाब को सड़क पर फेंक दिया और एक छकड़े का पहिया उसके ऊपर से निकल गया।

"तुम्हें मेरे साथ इस तरह बात करने का साहस कैसे हुआ?" लड़की ने कहा, "तुम कौन हो? एक विद्यार्थी!" वह अपनी कुरसी से उठी और घर के अंदर चली गई।

"प्रेम भी क्या मूर्ख वस्तु है!" विद्यार्थी ने जाते-जाते कहा, "यह विवेक-बुद्धि के आसपास भी लाभदायक नहीं है, क्योंकि यह चीजों की सचाई को प्रमाणित नहीं कर सकता। प्रेम हमें हमेशा उन चीजों के बारे में बताता है जो कभी नहीं होतीं और उन बातों का विश्वास दिलाता है जो कभी सच्ची नहीं होतीं। यह बिलकुल निरर्थक है। इन कठिनाई के दिनों में व्यक्ति को लाभदायक चीजों की बाबत जानना चाहिए। अब मैं अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान दूँगा।"

अतः वह अपने कमरे की ओर लौट गया और धूलि भरी एक बड़ी पुस्तक को लेकर पढ़ने लगा।

सा. अ.

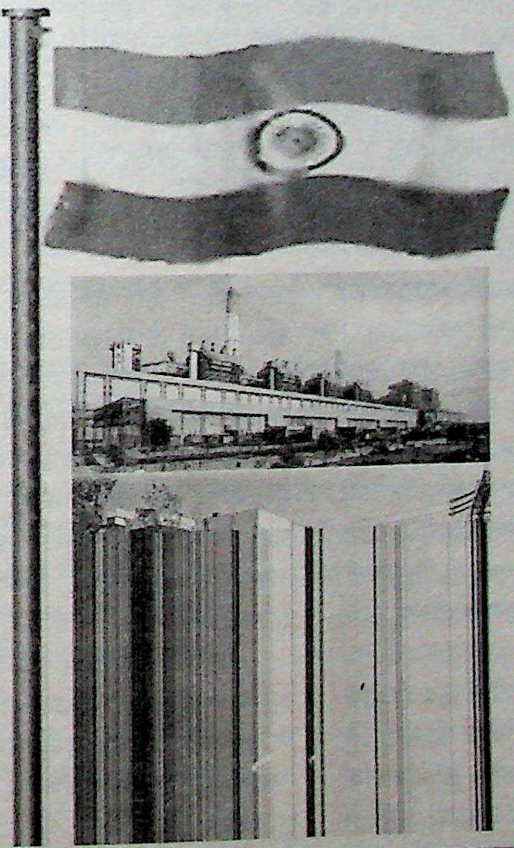

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

शुबहा

● अशोक गुजराती

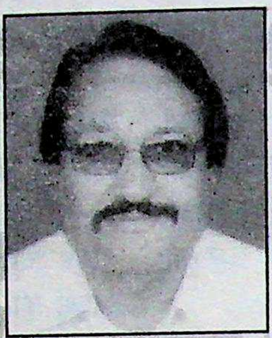

जन्म : २६ जुलाई, १९४७ को महाराष्ट्र के अकोला जिले के अकोट कस्बे में।
शिक्षा : एम.एस-सी., एम.ए., पी-एच.डी. (हिंदी), डी.आर.एल. (रूसी), डी.डी.ई. (दूर शिक्षा)।
प्रकाशन : 'तुम क्या जानो', 'व्यंग्य के रंग', 'पंछी-सी उड़ान', 'अंगुलीहीन हथेली', 'सौर जगत का एक बंजारा', 'ओ. हेनरी की कहानियाँ', 'जंगल में चुनाव', 'विज्ञान : हँसते-हँसाते', 'सृष्टि की रचना', 'कालू का कमाल', 'लालची भालू', 'खुशी के दीये' और प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में ४५० से ज्यादा रचनाएँ प्रकाशित।
पुरस्कार : 'अंगुलीहीन हथेली', केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा तथा 'पंछी-सी उड़ान' महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी से पुरस्कृत।
संप्रति : स्वतंत्र लेखन।

हजरत निजामुद्दीन स्टेशन पर गाड़ी रुकी सुबह सवा चार बजे। सामान उसने पहले ही समेट लिया था। एक बड़ी और एक छोटा बैग, दोनों को सँभालते, पत्नी को निर्देश देते वह दरवाजे तक पहुँचा। पत्नी अपना पर्स लटकाए पहले उतरी। बैगों को निकालने में कुछ मदद की। अब वे दोनों प्लेटफार्म पर थे। इतने कम लगेज के लिए कुली क्या करना, सोचकर उसने बड़ा बैग का हैंडल निकाल उसे चक्कों पर चलाते हुए छोटा बैग कंधे से टाँग लिया। वह आगे-आगे, पत्नी धीरे-धीरे पीछे आती हुई। उसकी पत्नी को घुटनों के दर्द की बेहद तकलीफ थी। इस उम्र में अकसर हो ही जाती है। वह तिरसठ का और पत्नी छप्पन की हो चुकी थी। वह चलते-चलते पीछे छूट गई पत्नी के लिए रुकता-बढ़ता ब्रिज तक जा पहुँचा। ऊपर चढ़ा, ब्रिज के अधबीच पहुँच उसने छोटे बैग का कंधा और बड़े का हाथ बदला, जरा सुस्ताते हुए पत्नी को रेलिंग पकड़े चढ़ते देखा। उसके नजदीक आ जाने पर आगे बढ़ा।

वह दिल्ली में नया ही था। उसने ऊपर जाते ही किसी से पूछ लिया—'भैया, काले खाँ सराय किस तरफ है?' अगले ने बताया। वह पत्नी को साथ-साथ लिये प्लेटफार्म नं. १ की ओर चला। नीचे उतरते हुए उसे लगा कि कहीं कुछ गलत हो गया है। फिर भी बढ़ता गया। वहाँ सामान रख ऑटो करने की सोच रहा था कि एक ने उसे पूछ ही लिया। उसने बताया—'दिलशाद गार्डन।' ऑटोवाले ने कहा, 'दो सौ लूँगा। एक सवारी उधर की पहले से बैठी है।' उसे अब समझ में आ गया कि वह दूसरी दिशा में उतर गया है। पर उसमें इतनी हिम्मत नहीं बची थी कि दोबारा सामान और पत्नी को लेकर परली ओर जाए। कुली करेगा तो कम-से-कम पचास लेगा ही। उसने ऑटो वाले से कहा, 'डेढ़ सौ दूँगा।' उसके इनकार करने पर दूसरे ऑटोवालों से बात करता रहा, लेकिन उसे पहला ही किफायती लग रहा था कि एक सवारी पहले से होने के कारण शायद मान जाएगा, और अंततः वह राजी भी हो गया।

बैठे। वह घुसा, फिर उसकी पत्नी। सामान ऑटोवाले ने खुद ही पीछे जमा दिया था। उसने कनखियों से बैठी हुई सवारी पर नजर डाली। उसे दिल्ली में पिछले दिनों हुए कई हादसे यकायक याद आने लगे—ऑटो चालक ने अकेली सवारी को देर रात लूट लिया था·· उसका लुटेरा साथी ऑटो में पहले से बैठा हुआ था या रास्ते में आ बैठा था। सुनसान जगह पर जाकर छुरा दिखाया और सारा कुछ छीन लिया। फिर दो-चार मुक्के मारकर ऑटो लेकर रफूचक्कर हो गए·· उसे यह भी याद आया कि ऑटो में कोई लड़की या औरत अकेली थी तो उन्होंने अपनी हवस के वहशीपन के बाद उसे मारा-काटा और सड़क किनारे फेंक गए।

वह अंदर-ही-अंदर सहम गया। उसकी पत्नी खामोश थी, लेकिन संभवतः उसके दिमाग में भी यही सब चल रहा होगा। अभी सवेरे का उजास नहीं फैला था, जिसकी वह बेताबी से प्रतीक्षा कर रहा था। नीम अँधेरे में उसने देखा—पास बैठा व्यक्ति अपने हाथ में आधी भरी पानी की बोतल पकड़े है, चेहरे से—जितनी वह तिरछी निगाह डाल पा रहा था। कोई बदमाश तो नहीं लग रहा था। युवा था, पर उसका सामान कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। हो सकता है, केवल पानी की बोतल ही उसके पास हो, मगर यह कैसे संभव था·· या वह जानबूझकर हाथ में पानी की बोतल रखे हो और हो सकता है, ऑटोवाले का ही साथी, ताकि उस पर शक न हो, लेकिन उस युवक का सामान·· उसने पीछे हाथ डालकर टटोला तो उसकी उँगलियों को अपनी दो बैगों का ही स्पर्श हुआ—उसका कहाँ है?

इसी उधेड़बुन के चलते उसने वार्त्तालाप की पहल की—'आप कहाँ से आ रहे हैं?' वह चाहता था कि उस अजनबी के बारे में कुछ तो मालूम हो। उसने धीमी सी आवाज में अटकते हुए उत्तर दिया—'आँ··हैदराबाद से।' उसके लहजे से वह दक्षिण का लग रहा था। पर इतना सा परिचय नाकाफी था। उसने फिर सवाल किया—'कहाँ तक जाएँगे?' पुनः बारीक से स्वर में जवाब मिला—'आनंद विहार।' जैसे उसने संक्षिप्त से संक्षिप्त बात करने की ठान रखी हो। इन प्रश्नों और उनके ऐसे समाधान से उसकी संतुष्टि नहीं हो पा रही थी। शंका उसके मस्तिष्क में अपना घर बना चुकी थी, उसमें इजाफा ही हो रहा था, कोई राहत नहीं मिल रही थी।

उसने अपनी पत्नी की सूरत का जायजा लिया। उसे वहाँ कुछ भी अजीब नहीं दिखाई दिया। वह सामान्य ही लग रही थी। कमाल है औरतों के जब्त की··हो सकता है, वह पति को आश्वस्त रखना चाहती हो या वह अकेला ही इस भ्रम का शिकार है, दुश्चिंता में मरा जा रहा है·· इससे उसका कुछ हौसला बढ़ा, इतना भी डरना क्या·· जो होगा देखा जाएगा·· ऊखल में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर दिया तो मूसल से क्या परहेज। इसका अर्थ साफ था—उसका तनाव अब भी बरकरार है, वह भयभीत तो निश्चित ही है, पत्नी भले न हो। आखिर उसे ही तो आनेवाली विकट परिस्थिति का सामना करना पड़ेगा। हाँ, पत्नी के भाव-विहीन होने से यह लाभ तो हुआ ही कि उसका अपना डर कुछ-कुछ काबू में आ गया।

उसने अपने आपको सँवारा। आतंक को निकाल बाहर फेंकना चाहा, लेकिन वह बीच में था। दोनों तरफ रुकावटें थीं। एक, बीवी की सुरक्षा की तो दूसरी उस अनजान की समूची जाँच-पड़ताल की। उसने एक मर्तबा और कोशिश की—'तुम्हारे बोलने के ढंग से ही मैं समझ गया था कि तुम 'साउथ इंडियन' हो' शायद वह खुद को ही भरोसा दिला रहा था। उस अपरिचित ने हौले से हुंकारी भरी। वही फिर बोला, 'हमारे दिलशाद गार्डन में बहुत से 'साउथ इंडियन' रहते हैं। आप जानते ही होंगे…'

उसने गरदन हिलाई, उसके हाथ में पकड़ी अधभरी बोतल भी हिली—'मैं… मैं जानता हूँ।'

वह उसकी अल्प-भाषिता से चिढ़ा। स्साला, बन रहा है। गोल-गोल जवाब दे रहा है…अबे! जानता है तो तू क्यों नहीं वहाँ रहता… आनंद विहार क्यों जा रहा है। ठीक है… मैं भी कुछ कम नहीं हूँ… मौका आने पर मेरी बीवी भी इतनी कमजोर नहीं कि कोई साथ नहीं दे पाएगी…तभी उसका ध्यान, जो शुरू से ही रास्ते के बाजू में लगे बोर्डों को पढ़ने में सतर्क था, क्योंकि वह इन सड़कों को बिलकुल पहचान नहीं पा रहा था, कुछ भटक गया लगा तो उसने जरा झुककर आसमान और आसपास के इलाके पर आँखें केंद्रित कीं। थोड़ा उजाला हो गया लगता है, पर यह क्या, ऑटो अब एकदम सूने-सूने रास्ते पर भाग रहा है। प्रारंभ में कई ट्रक और कारें आगे-पीछे थीं। अब अगर यहाँ इसने रोक दिया तो… नहीं, नहीं, कोई-न-कोई गाड़ी पीछे से आएगी ही, आगे चाहे न हो। वह खतरे को सूँघकर तुरंत शोर मचा देगा। इक्का-दुक्का पैदल या साइकिलवाले भी बीच-बीच में दीख रहे हैं। कोई तो सहायता करेगा। अभी लोग इतने भी स्वार्थी नहीं हो गए हैं कि किसी के साथ ऐसी दुर्घटना हो जाए और वे अनदेखा कर निकल जाएँ। तभी ऑटो ने एक मोड़ लिया। इस रोड पर दूर तक आदमी क्या, पंछी भी दिखाई नहीं दे रहा था। और ऑटोवाला, जो शुरुआत से ही काफी तेज चला रहा था, अब तो हवा से होड़ लेने लगा।

उसे लगा, अब तो गए। करीब बैठा तथाकथित मुसाफिर चुप था, मानो ताक में हो कि वीरानी और बढ़ने दो, फिर हम दोनों तुमको बताएँगे कि दिल्ली में रात के अँधेरे का सफर कितना महफूज होता है।

डर ने अपनी कुंडली और सख्त की, तभी ऑटो ने दाहिनी ओर पैना घुमाव लिया। एक झटके के साथ पत्नी उससे और वह उस हमसफर से टकराया, उसके रोंगटे खड़े हो गए। लेकिन उसकी सचेत आँखों ने सामने चहल-पहल देख ली। अँधेरा भी काफी-कुछ छँट चुका था। उसने मुक्ति की साँस ली। कुछ ही आगे जाकर उस बड़े से चौक में, जहाँ बहुत से रिक्शेवाले, ऑटोवाले थे, बाईं तरफ लेकर ऑटोवाले ने रोका।

उसके सहयात्री ने अपनी बोतल लहराते हुए पीछे हाथ डालकर अपनी छोटी सी बैग, जो उनकी बड़ी बैग के पार्श्व में कहीं छिपी सी थी, निकाली। ऑटोवाले को सौ का नोट थमाया और चलता बना। यानी आनंद विहार आ गया था। रास्ते के किनारे लगे बोर्ड ने इसकी पुष्टि भी कर दी। चलो, उसने सोचा, बला टली। लेकिन आदमी का मन कोई स्थिर रहता है। फिलहाल उसे नए विचार ने आ दबोचा। वह हमराही, जो उतर गया, सही था। नाहक उस पर संशय किया। बल्कि हो सकता है उसकी वजह से ऑटोवाले का साहस न हुआ हो किसी बेजा हरकत के लिए। उसके जाने के बाद तो वह कुछ भी कर सकने को आजाद है। वैसे बाहर पर्याप्त रोशनी हो चुकी है। बहरहाल, सड़कें जरूर अभी भी सूनापन लिये हैं।

अब यह नया और ताजा खौफ उस पर हावी हो गया। पुराने की तुलना में अवश्य फीका, पर था तो।

ऐसा तो नहीं कि इसके चेले आगे कहीं घात लगाए छिपकर बैठे हों…जरा निर्जन सड़क आई कि ये रोके और वे हमला कर दें। अचानक वह पल उसकी आँखों में कौंध गया जब स्टेशन से बाहर आने पर इस ऑटोवाले के मोबाइल की घंटी बजी थी। तब उसने उसकी बातचीत पर विशेष ध्यान नहीं दिया था, पर हाँ, उसने अंत में कहा था—'मैं वहीं आ रहा हूँ।'

उसकी बनियान, जो कुछ सूख गई सी लग रही थी, पुनः छाती पर गीली हो चिपक गई। बालों से उतरकर, सुबह की ठंडी हवा के बावजूद, पसीने की धारें उसके चश्मे को छेड़ती गालों पर बह आईं। उसने रूमाल निकाल चेहरा पोंछा, चश्मे के काँच साफ किए, पलकें बंद कर भरपूर साँस लेकर फेफड़ों में हवा भरी और चश्मा पहना। इससे वह कुछ प्रकृतिस्थ हुआ। बाहर पसरे प्रकाश ने मुसकराकर उसे ढाढ़स बँधाया।

निजामुद्दीन से यहाँ तक बमुश्किल चालीस-पैंतालीस मिनट बीते होंगे। यह बात और कि उसे यह फासला घंटों का लगा। इस दरमियान लोगों की आवाजाही बढ़ चुकी थी। इधर के रास्ते भी वह पहचान पा रहा था। वह उत्साहित होकर पत्नी से बोला, 'यह रहा पावर हाउस, इसके पश्चात् फ्लाई-ओवर और फिर दिलशाद का मेट्रो स्टेशन। बस घर आ गया समझो।'

फ्लाई-ओवर पर भीड़ तो नहीं थी लेकिन एकदम सूना भी नहीं था। उतार आते ही उसने बाईं ओर दृष्टि डाली और उसे दिलशाद के मेट्रो स्टेशन का पिछवाड़ा पहचानने में देर न लगी। सीमापुरी के बस स्टैंड तक वह सब देखता-परखता गया, पर ऐन गोल चक्कर से ऑटो के आगे निकल जाने पर उसे होश आया कि बाएँ मुड़ना है। इतनी सी चूक से उसे पसीने के गीलेपन का अहसास हो गया। ऑटोवाले ने फौरन पलटाकर सही सड़क पर ऑटो डाल दिया।

इस तरह क्षण-क्षण बदलती विचित्र मनस्थितियों से गुजरते हुए वे अपने फ्लैट के सामने आ पहुँचे। पहली मंजिल पर जाना था। ऑटोवाले ने बैग निकाले। पैसे लेते हुए बोला, 'बाबूजी, आप आगे चलो, मैं सामान लेकर आता हूँ।'

वह पत्नी को सहारा देता हुआ सीढ़ियाँ चढ़ तो रहा था, लेकिन बार-बार पलटकर देख भी लेता था कि ऑटोवाला पीछे कितनी दूरी पर है।

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी,
दिल्ली-११००९५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

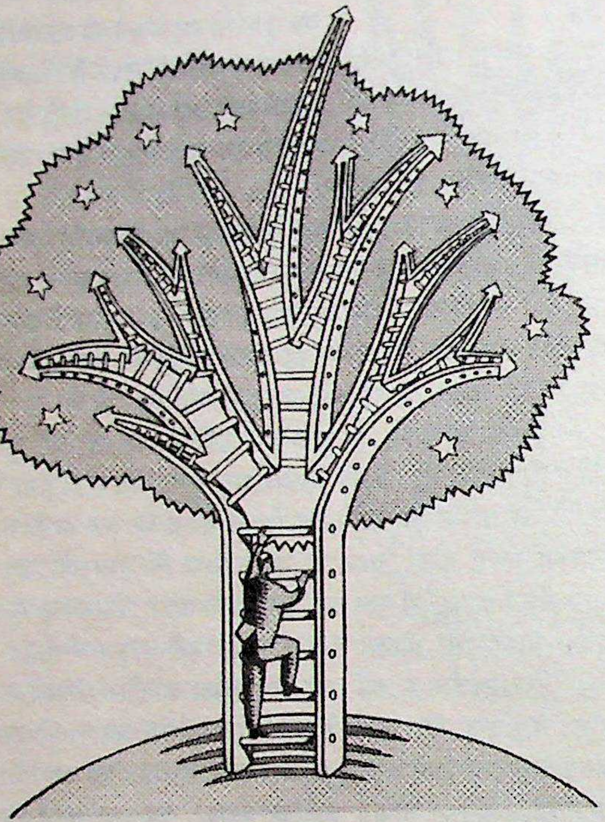

निरन्तर विकास. इंडियनऑयल के कर्मचारियों का यही लक्ष्य है. और यही हमारी संस्था की विचारधारा का अभिन्न अंग है. इसका उद्देश्य कर्मचारियों के विकास और योगदान के लिए सहभागिता और उन्नति की परम्परा बनाए रखना है.

कर्मचारियों के कौशल और प्रबंध-क्षमता को बढ़ाने के लिए हल्दिया में एक प्रबन्ध अकादमी के अलावा देश-भर में फैले हमारे 16 प्रशिक्षण केन्द्र हैं. इनमें कर्मचारीगण सघन, सुव्यवस्थित प्रशिक्षण तो पाते ही हैं, उन्हें यथासम्भव कार्यपरिवर्तन के फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों और कार्यकलापों का अनुभव भी मिलता है.

इंडियनऑयल के गुड़गांव स्थित पेट्रोलियम प्रबंध संस्थान (आई आई पी एम) ने हमारी उपर्युक्त विचारधारा को और आगे बढ़ाया है. आई आई पी एम का लक्ष्य है विश्व की एक अग्रणी ज्ञानार्जन संस्था बनना - मुख्यतः पेट्रोलियम और ऊर्जा प्रबंधन के क्षेत्र में. यह मानव संसाधन को अन्तरराष्ट्रीय स्पर्धा के लिए सक्षम बनाता है और संगठन की प्रभावकारिता बढ़ाने के लिए प्रबंध अनुसंधान के क्षेत्र में परामर्श भी देता है.

अपने कार्यस्थल पर भी हमारे कर्मचारी ज्ञानार्जन व प्रशिक्षण प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं.

इंडियनऑयल में सीखने की प्रक्रिया अनंत.

शॉपफ़्लोर से लेकर विभिन्न क्षेत्रों में, अलग-अलग स्तर पर, उनके सीखने का कार्य लगातार चलता रहता है. इसके फलस्वरूप इंडियनऑयल के मानव संसाधन ने सबसे कुशल और प्रतिभाशाली वर्ग में अपनी विशेष पहचान बना ली है - देश में और विदेशों में भी.

इस उपलब्धि का मुख्य कारण : इंडियनऑयल में हमने शुरू से इस बात पर जोर दिया है - "आगे बढ़ना है, तो हमें सीखते रहना है."

इंडियनऑयल

इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लि.

दृष्टि भविष्य की ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग पहेली (७२)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० सितंबर, २०११ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते नवंबर २०११ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली–२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (७०) का हल

१ आ	रं	२ भि	३ क	■	४ भा	र	५ ती	६ य
७ ना	ग	■	८ ले	९ कि	न	■	१० र	त्न
का	■	११ न	वा	ब	जा	१२ दा	■	बा
१३ नी	१४ य	त	■	ला	■	१५ ल	१६ गा	न
■	१७ म	म	ता	■	१८ ज	ग	ह	■
१९ शि	क	स्त	■	२० द	■	२१ ल	क	२२ वा
का	■	२३ क	२४ स	म	२५ खा	ना	■	चा
२६ य	२७ श	■	२८ फ	क	त	■	२९ क	ल
३० त	ब	दी	ल	■	३१ मा	ता	पि	ता

★ पुरस्कार विजेता ★

१. श्री चंदन सिंह
द्वारा—बाल सोम गौतम
सरस्वती सदन, पो.-टिनिच
जि.-बस्ती-२७२१६३
(उ.प्र.)

२. श्री पी. शंकरन नंबूनिरि
भैरवी, नारेक्काड ग्रामम्
पालक्काड-६७८००१
(केरल)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली ७० के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री मनोज मु. जोशी (अमरावती), नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), माणक तुलसीराम गौड़ (रायगढ़), कमला सेन (नागपुर), विमला शर्मा (हमीरपुर), जसवंत सिंह चौहान (हनुमानगढ़), शंकरलाल कारपेंटर (झालावाड़), मोहन उपाध्याय (अजमेर), विष्णु विनोद सक्सेना (आबू रोड), रेनू अग्रवाल (जयपुर), अर्चना श्रीवास्तव (खरगौन), प्रेम कुमार साहू (छिंदवाड़ा), राधावल्लभ व्यास (रतलाम), राजा चौरसिया (कटनी), रुक्मणी संगल (पटियाला), प्रदीप धींगड़ा (फिरोजपुर), ओंकारनाथ मिश्र (लखनऊ), अभिषेक श्रीवास्तव (अलीगढ़), राजेश्वर प्रसाद मिश्र (इलाहाबाद), ओमप्रकाश गुप्त, योगेंद्र वर्मा 'व्योम' (मुरादाबाद), शिवानंद सिंह 'सहयोगी' (मेरठ), निर्मला गुजराती, रचना गांधी, कुसुम गोयनका, महिंद्र कौर, स्वाती ग्रोवर (दिल्ली), ब्रह्मानंद खिच्ची, सी.आर. नाइड़िया (महेंद्रगढ़), फकीरचंद दुल (कैथल), सरिता शर्मा (गुड़गाँव)।

बाएँ से दाएँ—

१. आना-जाना (५)
५. गायब (३)
७. चैन (३)
८. पास (३)
१०. रुपया-पैसा (२)
११. गहरा लाल रंग (३)
१२. चिट्ठी (२)
१३. घबड़ाया हुआ (३)
१४. गौरैया के समान एक पक्षी (२)
१५. यहूदी महिला (४)
१७. अज्ञान (४)
१९. विस्फोटक गोला (२)
२०. इलेक्शन (३)
२१. खून (२)
२२. बीज बोना (३)
२३. सिगरेट का दम (२)
२४. वाटिका (३)
२५. मदिरापान करनेवाला (३)
२६. दुर्घटना (३)
२७. ट्रांसपोर्ट (५)

ऊपर से नीचे—

१. पूजा के योग्य (५)
२. सवारी (३)
३. गुजरा हुआ (२)
४. माता का मायका (४)
५. स्तंभ (२)
६. बल (३)
९. किस समय (२)
११. शुभ या अशुभ लक्षण (३)
१२. विचार (३)
१३. पुराना (३)
१४. प्रवाह (३)
१६. बिलकुल एक जैसा (१-२)
१७. स्त्री-संबंधी (३)
१८. दर्शक (५)
२०. गुप्त रूप से (४)
२१. क्षण (३)
२२. बीमार (२)
२३. वेदनासूचक शब्द (३)
२४. चरबी (२)
२५. लाश (२)

वर्ग पहेली (७२)

१	२	३		४	■	५		६
७			■	८	९		■	
१०		■	११			■	१२	
	■	१३			■	१४		■
१५	१६			■	१७			१८
■	१९			२०			■	
२१		■	२२			■	२३	
	■	२४			■	२५		
२६			■	२७				

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

....

....

वर्ग पहेली (७१) का हल अगले अंक में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' के जुलाई अंक की सारी सामग्री उत्तम है। पर संदीप नैयर की कविताओं का जवाब नहीं। संपादकीय लेख विचारणीय है। सभी रचनाओं ने आनंदित किया। आशा है, भविष्य में भी इसी तरह की सर्वोत्तम सामग्री पढ़ने को मिलती रहेगी।

—*हरदर्शन सहगल, बीकानेर (राज.)*

'साहित्य अमृत' का सत्रहवें वर्ष में प्रवेश 'व्यंग्य विशेषांक' के रूप में हुआ। यह अवलोकन वास्तव में एक पल्लवग्राही अवलोकन है, जिसके अंतर्गत व्यंग्य विधा में तन-मन से समर्पित एवं सक्रिय रचनाकारों की महत्त्वपूर्ण सूची को छूने भर का सद्प्रयास किया गया है। संपादक मंडल का यह अवलोक्य विनम्र स्पर्श है, जिसके लिए भूरि-भूरि प्रशंसा भी कम है।

—*डॉ. ज्ञानेंद्र माहेश्वरी, डिबाई (उ.प्र.)*

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक मिला, कवर देखते ही पढ़ने की इच्छा प्रबल हुई। हाँ, इससे एक शिकायत पैदा हो गई, वह मेरी ही नहीं, शायद जो अंक पूरा पढ़ते हैं, उनकी भी होगी। वह यह कि व्यंग्य इतने सटीक हैं, बाण की तरह बींधते हुए आगे निकलते हैं, और अपने साथ आगे बढ़ाते हुए पढ़ने को मजबूर करते हैं। इससे और पत्रिकाओं, पत्रों के पठन-पाठन आदि को समय नहीं दे पाते। मेरी समझ में इसका यही सरल उपाय है कि इतनी अधिक पठनीय सामग्री एक अंक में न दी जाए।

—*वीरेंद्र प्रभाकर, नई दिल्ली*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक प्राप्त हुआ। हमेशा की तरह संपादकीय समसामयिक विषयों पर एवं अंतरात्मा को झकझोरने वाला रहा। गोपाल चतुर्वेदी की हास्य-व्यंग्य रचना पढ़कर अच्छा लगा। प्रतिस्मृति में 'दुखिया' ने अंदर तक झकझोर दिया। लोककथा 'कछुए की चतुराई' बहुत अच्छी लगी। संदीप नैयर की कविताएँ बेहद पसंद आईं। आलेख में महेंद्र राजा जैन का 'लोकगीतों की परंपरा' दिल में उत्तर गया। वर्ग पहेली में त्रुटियाँ खूब रहती हैं, कृपया सुधारें। साथ ही पत्रिका में नए साहित्यकारों को भी स्थान दे सकें तो अति कृपा होगी।

—*माणक तुलसीराम गौड, मुंबई*

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक प्राप्त हुआ। अंक सभी ज्वलंत समस्याओं, शिक्षाप्रद लेखों व वास्तविकता से ओतप्रोत है। जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' कृत 'दुखिया' गहरी छाप छोड़ती है। बाल्मीकि प्रसाद सिंह ने जिस प्रकार स्वामी विवेकानंद की पुण्य स्मृति पर उनके प्रासंगिक शिक्षण का उल्लेख किया, वह सचमुच प्रशंसनीय है। महेंद्र प्रजापति की लघुकथा 'पापा मैं जीना चाहती हूँ' मानवता के प्रति संदेश है, उससे पाठकगण बहुत लाभान्वित होंगे। पत्रिका हिंदी में सृजनात्मक लेखन का गौरव बढ़ा रही है।

—*गंगाधरसिंह सुखलाल, विश्व हिंदी सचिवालय*

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक प्राप्त हुआ। संपादकीय सुस्पष्ट, बेबाक, तथ्यपूर्ण एवं राष्ट्र-कल्याणकारी है। रचनाएँ अच्छी हैं। कवियों के ऊपर अनेक व्यंग्य हैं, पर वे प्रायः कल्पना-प्रसून ही हैं। पूरन सरमा की रचना पर कुछ आपत्ति है, विशेषकर इसलिए कि जयपुर के ही होने के कारण वे रामचरण प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के संस्थापक एवं यशस्वी रचनाकार स्व. आचार्य रामचरण शर्मा 'व्याकुल' को जानते होंगे। ऐसे में उन्हें अपने नायक को कोई और नाम देना चाहिए था।

—*श्रीकृष्ण कुमार त्रिवेदी,* फतेहपुर (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' पत्रिका साहित्य, समाज व संस्कृति का पोषण करती है। इसके अतिरिक्त यह प्रत्येक माह पाठकों हेतु नई कहानी, लेख, आलेख, काव्य-रचना, देश भर की साहित्यिक गतिविधियाँ और नवांकुर स्तंभ आदि सामग्री देती है, जो सराहनीय व पठनीय है। शोधार्थी व शिक्षक वर्ग हेतु यह ज्ञान का भंडार है।

—*मुरारीलाल, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)*

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक मिला। व्यंग्य करना भी एक कला है और हर रचनाकार ने अपनी-अपनी कला से परिचित कराया है। खास तौर से अशोक चक्रधर का 'भ्रष्टाचार पावन-पवित्र सांस्कृतिक विरासत', अरविंद तिवारी का 'दाल-भाजी लोन स्कीम' जवाहर चौधरी का 'हिंदी के हाजी', राम स्वरूप दीक्षित का 'नींद क्यों रात भर नहीं आती कवि को' और प्रेमचंद्र स्वर्णकार का 'चुप रहो, देश गा रहा है' बेहद पसंद आए। गोपाल चतुर्वेदी अकसर व्यंग्य ही लिखते हैं, शायद इसलिए इस बार उनके व्यंग्य में नवीनता का अभाव सा था। अन्य रचनाएँ भी उत्कृष्ट हैं। सादिक की गजलें पसंद आईं।

—*स्वाति ग्रोवर, नई दिल्ली*

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक मिला। व्यंग्य विशेषांक पढ़कर अति प्रसन्नता हुई। ललन चौधरी, ज्योति व्यास, प्रेमचंद्र स्वर्णकार, प्रशांत अग्रवाल, सीमा शर्मा, अजय चतुर्वेदी, आशारानी व्होरा, अशोक गौतम और ममता मेहता के व्यंग्य हृदय को छू गए। गतिविधियाँ साहित्यिक जानकारी देने का श्रेयस्कर कार्य कर रही हैं।

—*डॉ. वसिष्ठ नारायण, गोरखपुर (उ.प्र.)*

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक प्राप्त हुआ। व्यंग्य 'मुक्तक समेत' व्यंग्य संबंधी आलेखों को पढ़कर सद्यः लगा कि इन रचनाओं के द्वारा वस्तुतः पाठकों को वैचारिक रूप से झकझोरकर जगाने का ईमानदार तथा सार्थक प्रयास हुआ है। सादिक की 'गजलें' तो अच्छी लगीं ही, कविताओं में विशेषकर नेपालीजी तथा हरिकृष्ण प्रेमी की कविताएँ बेहद अच्छी लगीं। चंद्रमोहन दिनेश के 'पानी रे पानी' में व्यंग्य का पुट देखने योग्य है। संपादकीय समसामयिक रहा। अन्य सभी रचनाएँ भी उत्कृष्ट हैं। अंक के चित्रकार को सटीक चित्रांकन के लिए बधाई।

—*सीताराम सिंह, बेंगलुरु (कर्नाटक)*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हम ठहरे गाँव के फकीर' कृति लोकार्पित

२७ जुलाई को रायबरेली के स्थानीय सभागार में वरिष्ठ साहित्यकार श्री राम नारायण रमण के नवगीत संग्रह 'हम ठहरे गाँव के फकीर' का लोकार्पण प्रख्यात शायर श्री अंबर बहराइची ने किया। अध्यक्षता डॉ. शिव बहादुर सिंह ने की। परिचर्चा गोष्ठी में सर्वश्री जय चक्रवर्ती, रमाकांत, विनय भदौरिया, शमसुद्दीन अजहर, प्रमोद प्रखर, वाई. वेद प्रकाश, चंद्रप्रकाश पांडेय, आनंद स्वरूप श्रीवास्तव, आर.पी. सिंह, निशिहर शर्मा, दुर्गेश, शंभुशरण द्विवेदी बंधु ने अपने विचार रखे। कार्यक्रम के द्वितीय चरण में सर्वश्री शिव बहादुर सिंह भदौरिया, अंबर बहराइची, रमण, रमाकांत, ओम प्रकाश सिंह ने काव्यपाठ किया। संयोजन एवं संचालन श्री रमाकांत ने किया। □

'राष्ट्रीय गौरव' पत्रिका विमोचित

१७ जुलाई को दिल्ली में 'राष्ट्रीय गौरव' पत्रिका के विमोचन के अवसर पर मुख्य अतिथि श्री प्रमोद अग्रवाल ने दीप प्रज्वलित कर समारोह का शुभारंभ किया तथा 'राष्ट्रीय गौरव' के दूसरे अंक का लोकार्पण किया। समारोह में सर्वश्री पुरुषोत्तम अग्रवाल, रामवतार अग्रवाल, सागर जैन, एस. कुमार यादव, विजय गुप्ता, अरुण कुकरेजा, राधेश्याम दयाल भटनागर, ललित कुमार, मंगलसेन शर्मा, पुरुषोत्तम शर्मा, प्रवीण दत्त शर्मा, अनुभा शर्मा, उमेश शर्मा सहित अनेक गण्यमान्य जन उपस्थित थे। समारोह की सज्जा चित्रकार श्रीमती बिंदु पोपली ने की। संचालन श्री रमेश भारद्वाज ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन श्री दिनेश शर्मा ने किया। □

'पहाड़ी चित्रकला एवं वास्तुकला' का विमोचन

५ जुलाई को शिमला में कथाकार श्री सुदर्शन वशिष्ठ द्वारा लिखित 'पहाड़ी चित्रकला एवं वास्तुकला' पुस्तक का विमोचन हि.प्र. के मुख्यमंत्री प्रो. प्रेमकुमार धूमल ने अपने आवास पर किया। □

जयंती एवं लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों दिल्ली के हिंदी भवन में दिल्ली हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'तुलसी जयंती' एवं 'राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन जयंती' का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री सत्यप्रकाश 'बजरंग' की 'शंखनाद' एवं 'गोस्वामी तुलसीदास चरितामृतम्' कृतियों का लोकार्पण किया गया तथा तुलसी काव्य गोष्ठी आयोजित की गई। अध्यक्षता श्री महेशचंद्र शर्मा ने की। सर्वश्री सोहनलाल रामरंग, इंदिरा मोहन तथा दीनानाथ बत्रा वक्ता के रूप में उपस्थित थे। संचालन श्री रामदत्त शर्मा 'अनमोल' ने किया। सर्वश्री राजेंद्र 'राजा', कृष्ण कांत 'मधुर', कमला कौशिक, बालकृष्ण 'बालेंदु', मायाराम 'पतंग', गजेंद्र सोलंकी, रामदत्त मिश्र 'अनमोल', तारा गुप्ता एवं विनय 'विनम्र' ने काव्य पाठ किया। समारोह में अनेक साहित्यकार, पत्रकार, हिंदी सेवी सर्वश्री बाबूराम गुप्ता, अरुण बर्मन, हंस, ब्रज शुक्ल घायल, डोरीलाल गोस्वामी तथा हास्य कवि संत हास्यरसी आदि उपस्थित थे। □

'ऐसे में कविता कैसे हो' कृति लोकार्पित

१८ जुलाई को दिल्ली विधान सभा में आयोजित कार्यक्रम में श्री विनोद पासी के कविता संग्रह 'ऐसे में कविता कैसे हो' का लोकार्पण दिल्ली विधान सभा के अध्यक्ष डॉ. योगानंद शास्त्री ने किया। इस अवसर पर कई गण्यमान्य अतिथि उपस्थित थे। □

काव्य कृति 'तितिक्षा' लोकार्पित

६ अगस्त को दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में वाणी प्रकाशन एवं विचार न्यास द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित लोकार्पण समारोह में कवि श्री माणिक मुंडे की काव्यकृति 'तितिक्षा' का लोकार्पण किया गया। समारोह में सर्वश्री अशोक वाजपेयी, डी.पी. त्रिपाठी, उबैद आजमी, राजविंदर सिंह एवं संजीव कुमार उपस्थित थे। श्री मुंडे ने अपनी कविताएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री राजविंदर सिंह ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री अरुण माहेश्वरी ने किया। □

'के.एन. मोदी कर्मयोगी' विमोचित

२ अगस्त को दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में डॉ. केदार नाथ मोदी के जीवन पर आधारित पुस्तक 'के.एन. मोदी कर्मयोगी' का विमोचन श्री हरि शंकर सिंघानिया ने किया। पुस्तक की पहली प्रति श्री किशोर बियानी को भेंट की गई। इस अवसर पर सर्वश्री आर.के. धवन, सुरेश नेवटिया, के.के. मोदी, एम.के. मोदी और डी.एन. मोदी ने अपने विचार प्रस्तुत किए। □

संगोष्ठी एवं लोकार्पण समारोह संपन्न

५ अगस्त को तुलसी जयंती के अवसर पर दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान में इंद्रप्रस्थ साहित्य भारती के तत्त्वावधान में 'विनयपत्रिका में समाज दर्शन' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस अवसर पर डॉ. विनीता पांडेय की पुस्तक 'डॉ. रामनाथ त्रिपाठी का रचना संसार', डॉ. रघुनाथ शर्मा की 'श्रीराम की व्यापकता' तथा डॉ. सौमित्र शर्मा की 'हिंदी के रामकथापरक उपन्यास एवं रामगाथा' का विमोचन किया गया। कार्यक्रम में सर्वश्री रामशरण गौड़, जयसिंह आर्य, महेशचंद्र गुप्त, रामनाथ त्रिपाठी, शकुंतला कालरा तथा रीता सिंह आदि प्रबुद्ध जन उपस्थित थे। □

'शिकंजे का दर्द' पुस्तक विमोचित

११ अगस्त को दिल्ली के साहित्य अकादेमी सभागार में दलित लेखिका सुश्री सुशीला टाकभौरे की आत्मकथा 'शिकंजे का दर्द' का विमोचन सर्वश्री रमणिका गुप्ता, मैनेजर पांडेय, तुलसीराम, अनामिका, विमल थोराट सहित पुस्तक की लेखिका ने संयुक्त रूप से किया। □

व्याख्यानमाला एवं लोकार्पण संपन्न

१० जुलाई को लखनऊ में आयोजित 'लोक साहित्य में अध्यात्म चिंतन' विषय पर व्याख्यानमाला समारोह में सर्वश्री शंभुनाथ, गोपाल चतुर्वेदी, राकेश कुमार मित्तल, महेश चंद्र द्विवेदी, योगेंद्र प्रताप सिंह, गदाधर नारायन सिन्हा, कुणाल कृष्ण ने व्याख्यान दिया। समारोह में श्री जितेंद्र नाथ पांडेय को 'श्रीकृष्ण प्रताप सिंह स्मृति सम्मान', श्री मदन मोहन सिन्हा 'मनुज' को 'डॉ. विद्यानिवास मिश्र स्मृति सम्मान', श्री धर्मराज सिंह को 'श्री दिल बहाल सिंह स्मृति सम्मान', श्री जगदीश गांधी को 'श्री देव नारायण सिंह स्मृति सम्मान', सुश्री मालिनी अवस्थी को 'श्रीमाँ प्रभु देवी स्मृति सम्मान', श्रीमती विद्या मिश्रा को 'श्रीमाँ प्राण देवी स्मृति सम्मान', सुश्री शेफाली भटनागर को 'श्रीमती प्रभा पँवार स्मृति सम्मान', श्री अभय राज सिंह को 'श्री संचित सिंह स्मृति सम्मान', श्री योगेश प्रवीन को 'श्री अमृतलाल नागर स्मृति सम्मान', श्री दाऊजी गोस्वामी को 'श्रीमती प्रतिभा नागर स्मृति सम्मान', श्रीमती स्वरूप कुमारी बक्शी को 'श्री कुमुद नागर स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर श्री विद्याविंदु सिंह की 'श्रीहरि नाम महिमा', 'एक बँसुरी एक बाँस', 'लोक विमर्श' एवं 'श्रद्धा-विश्वास' (स्मारिका) कृतियों का लोकार्पण किया गया। संचालन डॉ. शीला मिश्र ने किया। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. सरोजिनी महिषी को 'हिंदीरत्न सम्मान'

१ अगस्त को राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन की १३०वीं जयंती के अवसर पर नई दिल्ली के हिंदी भवन के सभागार में आयोजित एक भव्य समारोह में राष्ट्रभाषा हिंदी की प्रबल पक्षधर डॉ. सरोजिनी महिषी को 'हिंदीरत्न सम्मान' से सम्मानित किया गया। समारोह की अध्यक्षा न्यायमूर्ति सुश्री ज्ञानसुधा मिश्रा, न्यायमूर्ति श्री विकास श्रीधर सिरपुरकर, श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी, श्री रामनिवास लखोटिया, पद्मश्री गीता चंद्रन एवं डॉ. रत्ना कौशिक ने क्रमशः एक लाख रुपए की राशि, प्रशस्ति पत्र, वाग्देवी की प्रतिमा, रजत श्रीफल, शॉल और पुष्पाहार आदि सम्मान-स्वरूप प्रदान किए। मुख्य अतिथि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री विकास श्रीधर सिरपुरकर थे। संचालन प्रो. सुषमा यादव ने किया। समारोह में सर्वश्री रामनिवास जाजू, निधि गुप्ता, वीरेंद्र प्रभाकर, महेशचंद्र शर्मा, रोशनलाल अग्रवाल, चमनलाल सप्रू, त.शि.क. कण्णन, राजनारायण बिसारिया, हरिसिंह पाल, रामपाल विद्यालंकार, विमला गोगना, प्रह्लाद महिषी, श्याम निर्मम, रघुनंदन शर्मा 'तुषार' एवं उषा पुरी सहित अनेक साहित्यकार, पत्रकार, बुद्धिजीवी, समाजसेवी और हिंदीप्रेमी उपस्थित थे। □

कवि श्री सोहनलाल 'सुबुद्ध' सम्मानित

१८ जुलाई को लखनऊ में अखिल भारतीय साहित्यकार अभिनंदन समिति, मथुरा द्वारा श्री सोहनलाल 'सुबुद्ध' को साहित्यिक सेवाओं हेतु तथा राष्ट्रीय गीतकार के रूप में 'साहित्य पद्मश्री' से सम्मानित किया गया। □

'प्रमोद वर्मा आलोचना सम्मान' प्रदत्त

२३ जुलाई को रायपुर कृषि विश्वविद्यालय के हॉल में आयोजित दो-दिवसीय कार्यक्रम में वर्ष २०११ का 'प्रमोद वर्मा आलोचना सम्मान' साहित्यकार डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल को तथा 'युवा आलोचना सम्मान' श्री प्रफुल्ल कोलारकाल को प्रदान किया गया। सम्मान-स्वरूप दोनों आलोचकों को क्रमशः २१ एवं ११ हजार रुपए, प्रतीक चिह्न, शॉल, श्रीफल दिए गए। इस अवसर पर आलोचकों ने हिंदी की समकालीन आलोचना पर विचार व्यक्त किए। □

श्रद्धांजलि समारोह आयोजित

१० जुलाई को कानपुर में अवधी लोकनाट्य के विशेषज्ञ आचार्य गोरेलाल त्रिपाठी को 'स्मृति निधि' संस्था द्वारा श्रद्धांजलि अर्पित की गई। सर्वश्री राष्ट्रबंधु, राजेंद्र दुबे, उमाशंकर मिश्र 'राजा', दयानंद सिंह 'अटल', रामेश्वर वर्मा, सुभाष मिश्र, सर्वेश 'सुयश', पीयूष शुक्ल आदि ने श्रद्धांजलि व्यक्त की। इस अवसर पर कानपुर सांस्कृतिक निधि के तत्त्वावधान में परशुराम अभिनेता पं. गोरेलाल त्रिपाठी को पुष्पांजलि प्रदान की गई। अध्यक्षता श्री हरिहरनाथ तथा संचालन श्री सुभाष मिश्र ने किया। □

विचार-गोष्ठी संपन्न

२२ जुलाई को शिलचर के जैन भवन में साहित्यकार श्रीमती शुभदा पांडेय की कृति 'मेले की सैर' के संदर्भ में एक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किया गया। सांस्कृतिक कार्यक्रम में नृत्य-शिक्षिका श्रीमती श्री चौहान के छात्रों ने बिहू, झूमर, राजस्थानी व मेला नृत्य प्रस्तुत किया तथा सीमा सुरक्षा बल के श्री राजेंद्र राजू ने अपने गीत, गजल, भजन तथा कविताएँ प्रस्तुत कीं। कवि सम्मेलन की अध्यक्षता श्री मनोहर लाल बाथम ने की। विशिष्ट शायर के रूप में श्री वाजिद अली साहब ने अपनी गजलें तथा अतिथि कवि श्री शुकजी ने अपने गीत प्रस्तुत किए। सर्वश्री गुलशनराय मोंगा, मदन सिंघल, मीरा सिंह, अमित सिकदर तथा भागीरथी विश्वास ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। डॉ. सुनंदा नंदीपुर कायस्थ ने टैगोर की रचना का पाठ किया तथा श्रीमती शुभदा पांडेय ने गीत प्रस्तुत किया। संचालन श्री मदन सिंघल ने किया। स्वागत श्री अनिल कुमार ने तथा आभार प्रो. नित्यानंद पांडेय ने ज्ञापित किया। □

हीरक जयंती समारोह संपन्न

विगत दिनों दिल्ली मलयाळी एसोसिएशन, केरल हाउस तथा केरल क्लब के संयुक्त तत्त्वावधान में डॉ. सुधांशु चतुर्वेदी के साहित्य-सृजन का हीरक जयंती समारोह का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि एवं गृहराज्य मंत्री श्री मुल्लपिल्ली रामचंद्रन ने 'राष्ट्रसेतु' के दो विशेषांकों का लोकार्पण किया तथा डॉ. सुधांशु चतुर्वेदी को शॉल ओढ़ाकर सम्मानित किया। अध्यक्षता प्रो. ओमचेरी एन.एन. पिल्लै ने की। □

'कविता कोश सम्मान' समारोह संपन्न

विगत दिनों जयपुर में जवाहर कला केंद्र के कृष्णायन सभागार में प्रथम 'कविता कोश सम्मान' समारोह में श्री प्रेमचंद गांधी को कविता कोश का नया संपादक घोषित किया गया। 'कविता कोश सम्मान २०११' हेतु दो वरिष्ठ कवियों श्री नरेश सक्सेना एवं श्री बल्ली सिंह चीमा को ११००० रुपए नकद, कविता कोश सम्मान पत्र और कविता कोश ट्रॉफी प्रदान की गई तथा पाँच युवा कवियों सर्वश्री दुष्यंत, श्रद्धा जैन, अवनीश सिंह चौहान, सिराज फैसल खान एवं पूनम तुषामड़ को सम्मान-स्वरूप ५००० रुपए नकद, सम्मान पत्र और कविता कोश ट्रॉफी प्रदान की गई। मंच पर उपस्थित सर्वश्री विजेंद्र ऋतुराज, नंद भारद्वाज तथा मोहन श्रोत्रिय ने कवियों का सम्मान किया तथा अपने विचार प्रस्तुत किए। बाद में आयोजित विचार-गोष्ठी में श्री नरेश सक्सेना ने अपनी कविताएँ प्रस्तुत कीं। समारोह में सर्वश्री प्रतिष्ठा शर्मा, धर्मेंद्र कुमार सिंह, कुमार मुकुल, आदिल रशीद, संकल्प शर्मा, रामेश्वर कांबोज 'हिमांशु', माया मृग, मीठेश निर्मोही, राघवेंद्र, हरिराम मीणा, बनज कुमार 'बनज' आदि उपस्थित थे। □

'७५वें वर्ष में गोदान : एक पुनर्पाठ' आयोजित

३१ जुलाई को वर्धा में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय के क्षेत्रीय केंद्र द्वारा '७५वें वर्ष में गोदान : एक पुनर्पाठ' विषय पर आधारित गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री लालबहादुर वर्मा, रविभूषण एवं अली जावेद ने अपने विचार प्रस्तुत किए। संयोजन एवं संचालन श्री संतोष भदौरिया ने किया। समारोह में सर्वश्री जियाउल हक, रामजी राय, अकील रिजवी, ए.ए. फातमी, प्रणय कृष्ण, अनीता गोपेश, अनिल रंजन भौमिक, प्रवीण शेखर, मुश्ताक अली, अनुपम आनंद, के.के. पांडेय, मीना राय, गोपाल रंजन, धनंजय चोपड़ा, सुरेंद्र वर्मा, नंदल हितैषी, अशोक सिद्धार्थ, अलका प्रकाश, शिवमूर्ति सिंह, फखरूल करीम, रमेश सिंह, रेनू सिंह, विनोद कुमार शुक्ल, संजय पांडेय, सुरेंद्र राही, सुनील दानिश, शशिधर यादव आदि उपस्थित थे। □

प्रो. अंजना मिश्र सम्मानित

विगत दिनों कोलकाता में भारतीय वाङ्मय पीठ के तत्त्वावधान में कोलकाता ग्रामर स्कूल में आयोजित कवि गोष्ठी में वरिष्ठ कवयित्री एवं मनोविज्ञान की वरिष्ठ प्रवक्ता महीयसी प्रो. अंजना मिश्र का सारस्वत सम्मान किया गया। संस्था के मंत्री प्रो. श्यामलाल उपाध्याय ने उत्सवमूर्ति प्रो. अंजना मिश्र का माल्य, रोली, शॉल, कविगुरु रवींद्रनाथ ठाकुर सारस्वत सम्मान-पत्र एवं पुस्तकें से अभिनंदन किया। गोष्ठी में सर्वश्री जगदीश प्रसाद 'चाँद', सागर चौधरी, प्रदीप कुमार धानुक, रामनारायण झा, अदिति मिश्र, नंदलाल सेठ 'रोशन', कृष्णा राय, दिनेश कुमार धानुक, प्रवेश पटियालवी, संजय जोशी, कुँवरबहादुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंह 'मार्त्तंड', श्यामलाल उपाध्याय आदि रचनाकार एवं श्रोता उपस्थित थे। अध्यक्षता प्रो. अगम शर्मा ने तथा संचालन डॉ. मार्त्तंड ने किया। धन्यवाद-ज्ञापन प्रो. उपाध्याय ने तथा संयोजन श्री प्रदीप कुमार धानुक ने किया। ☐

प्रो. उपाध्याय को 'साहित्यकार सम्मान'

१५ जून को कोलकाता में हिमाक्षरा राष्ट्रीय साहित्य परिषद, वर्धा के तत्त्वावधान में शिक्षक भवन, पुणे में आचार्य काका कालेलकर की १२५वीं जयंती के अवसर पर आयोजित साहित्यकार सम्मान समारोह में प्रो. श्यामलाल उपाध्याय को गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा, नई दिल्ली द्वारा 'आचार्य काका कालेलकर साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित किया गया। ☐

'हिंदी प्रचारक शताब्दी सम्मान-२०११' घोषित

२६ जुलाई को वाराणसी में हिंदी प्रचारक परिवार ने 'हिंदी प्रचारक शताब्दी सम्मान-२०११' की घोषणा की। इस वर्ष का 'हिंदी प्रचारक शताब्दी सम्मान' डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी को 'साहित्य-मंडल' श्रीनाथद्वारा के तत्त्वावधान में आयोजित प्रभु श्री श्रीनाथजी के 'पाटोत्सव ब्रजभाषा समारोह' एवं 'हिंदी लाओ-देश बचाओ समारोह' के शुभ अवसर पर १४ सितंबर को दिया जाएगा। सम्मान-स्वरूप श्रीफल, शॉल, उत्तरीय, श्रीनाथजी का प्रसाद, श्रीनाथजी के हाथ कलम का चित्र, अभिनंदन एवं सम्मान पत्र सहित ग्यारह हजार की राशि प्रदान की जाएगी। ☐

'मीरा-स्मृति सम्मान समारोह' संपन्न

विगत दिनों इलाहाबाद में मीरा फाउंडेशन द्वारा आयोजित मीरा स्मृति सम्मान समारोह में प्रो. ए. अरविंदाक्षन, डॉ. जगन्नाथ पाठक, श्री गिरीश पांडे तथा प्रो. उषा यादव को उनकी उपलब्धियों के लिए 'मीरा-स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। विशिष्ट अतिथि डॉ. चंद्रकांत त्रिपाठी थे। प्रथम सत्र में श्री दूधनाथ सिंह की पुस्तक 'तू फू', श्री चंचल चौहान की पुस्तक 'हिंदी कथा साहित्य : विचार और विमर्श', श्री अमरेंद्र कुमार शर्मा की पुस्तक 'आपातकाल: हिंदी साहित्य और पत्रकारिता', श्री हीरालाल की पुस्तक 'कस्में हीरालाल' तथा श्री जमीर अहसन की पुस्तक 'सौ गजलें' का विमोचन किया गया। स्वागत डॉ. एस.के. पांडेय ने तथा संचालन डॉ. आनंद श्रीवास्तव ने किया। द्वितीय सत्र में डॉ. कमला प्रसाद की 'नेह के नाते', श्री श्रीराम वर्मा की 'जस्ट फिट', श्री लीलाधर मंडलोई की 'मनवा बेपरवाह', श्री ललित सुरजन की 'नील नदी की सावित्री' तथा श्री वर्षा अग्रवाल की 'मुक्तिबोध का रचना-संसार' पुस्तकों का लोकार्पण किया गया। ☐

'राष्ट्रीय संस्कृति सम्मान' घोषित

२७ जुलाई को भोपाल में मध्य प्रदेश सरकार ने विविध विधाओं के लिए राष्ट्रीय संस्कृति सम्मानों की घोषणा की। 'राष्ट्रीय मैथिलीशरण गुप्त सम्मान' प्रो. रमेशचंद्र शाह को, 'राष्ट्रीय कालिदास सम्मान' श्री जैराम पटेल, श्री कलामंडलम गोपी तथा पं. छन्नूलाल मिश्रा को, 'राष्ट्रीय देवी अहिल्या सम्मान' सुश्री गुलाबो को, 'राष्ट्रीय शरद जोशी सम्मान' श्री के.पी. सक्सेना को, 'राष्ट्रीय कुमार गंधर्व सम्मान' पं. संजीव अभ्यंकर को, 'राष्ट्रीय तुलसी सम्मान' श्री रंगास्वामी बेडार को तथा 'राष्ट्रीय इकबाल सम्मान' श्री गोपीचंद नारंग को दिए जाएँगे। ☐

'परंपरा सम्मान' घोषित

२३ जुलाई को दिल्ली की साहित्यिक संस्था 'परंपरा' ने वर्ष २०११ के परंपरा सम्मानों की घोषणा की। इस वर्ष का 'परंपरा ऋतुराज सम्मान' हिंदी कविता के प्रतिमान श्री जितेंद्र श्रीवास्तव के 'असुंदर-सुंदर' व सुश्री अलका सिन्हा के काव्यसंग्रह 'तेरी रोशनाई रोना चाहती है' को दिया जाएगा। सम्मान-स्वरूप इक्यावन हजार रुपए की राशि, परंपरागत अंगवस्त्र एवं अन्य सादर चिह्नों सहित दी जाती है। ☐

श्री रामपद चौधरी पुरस्कृत

१२ अगस्त को दिल्ली में इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ प्लानिंग एवं मैनेजमेंट द्वारा आयोजित समारोह में संस्थान के संस्थापक निदेशक डॉ. मलय चौधरी ने बांग्ला उपन्यासकार श्री रामपद चौधरी को 'रवींद्रनाथ टैगोर अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार' स्वरूप एक करोड़ रुपए और स्मृति-चिह्न प्रदान कर सम्मानित किया। इस अवसर पर आयोजित सेमिनार में लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स के प्रोफेसर लॉर्ड मेघानद देसाई, सर्वश्री मलय चौधरी, मोहन मुनासिंघे, बिंदेश्वर पाठक और अरिंदम चौधरी ने भाग लिया। ☐

'भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार' प्रदत्त

विगत दिनों दिल्ली में युवा प्रतिभावान कवियों की श्रेष्ठ कविता के लिए हर वर्ष दिया जानेवाला 'भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार' इस वर्ष श्री अनुज लुगुन को 'वसुधा' पत्रिका के अप्रैल-जून २०१० अंक में प्रकाशित उनकी कविता 'अघोषित उलगुलान' हेतु दिया गया। ☐

'राष्ट्रीय सांप्रदायिक सद्भावना पुरस्कार' प्रदत्त

२९ जुलाई को दिल्ली में उपराष्ट्रपति श्री हामिद अंसारी ने राष्ट्रीय एकता की भावना का प्रचार करने हेतु मोहम्मद हनीफ खान शास्त्री, आचार्य लोकेश मुनि तथा 'सेंटर फॉर ह्यूमन राइट्स एंड सोशल हार्मनी' को वर्ष २००८ का 'राष्ट्रीय सांप्रदायिक सद्भावना पुरस्कार' प्रदान किया। समारोह में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह तथा गृहमंत्री श्री पी. चिदंबरम भी उपस्थित थे। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

३१ जुलाई को लखनऊ में प्रेमचंद जयंती के अवसर पर हिंदी त्रैमासिकी की ओर से हिंदी संस्थान में आयोजित समारोह में प्रसिद्ध कथाकार श्रीमती ममता कालिया को वर्ष २००८ का और श्री अफसाना निगार साजिद रशीद को वर्ष २०१० का 'लमही सम्मान' वरिष्ठ कथाकार श्री कामतानाथ ने प्रदान किया। ☐

'शब्द साधक शिखर सम्मान' घोषित

इंडिपेंडेंट मीडिया इनीशिएटिव सोसाइटी द्वारा 'शब्द साधक शिखर सम्मान' श्री राजेंद्र यादव को, 'शब्द साधना जनप्रिय सम्मान' श्री पंकज सुबीर को तथा 'शब्द साधना युवा सम्मान' श्री मृत्युंजय प्रभाकर को दिया जाएगा। शिखर सम्मान हेतु इक्यावन हजार रुपए, जनप्रिय सम्मान हेतु इक्कीस हजार रुपए एवं युवा सम्मान हेतु ग्यारह हजार रुपए तथा स्मृति-चिह्न और प्रशस्ति-पत्र दिया जाता है। ☐

चर्चा-गोष्ठी संपन्न

२७ जुलाई को दिल्ली के इंडिया हैबिटेट सेंटर में वाणी प्रकाशन के तत्त्वावधान में क्लासिक उपन्यास पुनःपाठ के दूसरे सत्र का आयोजन किया गया, जिसमें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की क्लासिक रचना 'बाणभट्ट की आत्मकथा' पर चर्चा की गई। सर्वश्री नामवर सिंह, राधावल्लभ त्रिपाठी और रविकांत ने अपने विचार व्यक्त किए। समारोह में हिंदी साहित्य के लेखक तथा युवा साहित्यप्रेमी उपस्थित थे। ☐

मुंशी प्रेमचंद जयंती मनाई गई

२९ जुलाई को वाराणसी में मुंशी प्रेमचंद की १३१वीं जयंती के अवसर पर उनकी जन्मस्थली लमही में तीन दिवसीय 'लमही महोत्सव' का उद्घाटन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.प्र. के संस्कृति मंत्री श्री सुभाष पांडेय ने किया। स्वागत भाषण श्री रविंद्र तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री अजय उपाध्याय ने किया। संस्कृति मंत्री ने मुंशी प्रेमचंद शोध संस्थान के शिलापट्ट का शिलान्यास भी किया। □

काव्य-गोष्ठी संपन्न

१४ अगस्त को डिबाई के सरस्वती सदन में भारत विकास परिषद् के तत्त्वावधान में मुख्य अतिथि श्री संजीव राठी, विशिष्ट अतिथि श्रीमती रजनी सिंह, कार्यक्रम अध्यक्ष श्री वेद जैसवाल के दीप प्रज्वलन एवं माल्यार्पण तथा डॉ. महेश चंद्र 'मयंक' की सरस्वती वंदना से काव्य-गोष्ठी का शुभारंभ हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री मुकेश वार्ष्णेय, गिरीश कुमार गुप्ता, भगवती प्रसाद राजपूत, मनोज पालीवाल, सूर्य प्रकाश दुबे, ज्ञानेंद्र माहेश्वरी, जे.पी. गांधी, रजनी सिंह, राधेश्याम गुप्ता, महेशचंद्र तलब, मयंक, पी.पी. सिंह तथा वेद जैसवाल ने काव्य-पाठ किया। संचालन श्री जे.पी. गांधी ने किया। □

गुरुदेव रवींद्रनाथ की पुण्यतिथि मनाई गई

८ अगस्त को दिल्ली में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर की ७१वीं पुण्यतिथि पर संगीत नाटक अकादमी और संस्कृति मंत्रालय के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित सांस्कृतिक संध्या का उद्घाटन केंद्रीय वित्त मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी ने किया। सर्वश्री आफताब सेठ, प्रणव मुखर्जी, शैलजा तथा लीला सैमसन ने गुरुदेव के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम का समापन शास्त्रीय संगीतज्ञ श्री बहाउद्दीन डागर के रुद्र-वीणा के मधुर संगीत से हुआ। □

'प्रवासी मंच' कार्यक्रम आयोजित

५ अगस्त को साहित्य अकादेमी द्वारा 'प्रवासी मंच' कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में नॉर्वे से प्रकाशित हिंदी पत्रिका 'शांतिदूत' और समाचार पत्र 'आप्रवासी टाइम्स' के प्रकाशक और संपादक श्री अमित जोशी ने 'नॉर्वे में हिंदी' विषय पर अपने विचार व्यक्त किए। □

'बाल साहित्य पुरस्कार-२०११' घोषित

१६ अगस्त को त्रिशूर में साहित्य अकादेमी ने २४ पुस्तकों को बाल साहित्य पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा की। सर्वश्री गुलाम नबी आतश (कश्मीरी), स्नेहलता राई (नेपाली), दर्शन सिंह आश्ट (पंजाबी), अभिराज राजेंद्र मिश्र (संस्कृत), नूहुम हेंब्रह्म (संताली), एम.एल. थगप्पा (तमिल) और आदिल असीर देहलवी (उर्दू) को उनके काव्य-संग्रहों; सर्वश्री बंदिता फुकन (असमिया), सिद्धार्थ शर्मा (अंग्रेजी), हुंदराज बलवानी (सिंधी), एन. डी'सूजा (कन्नड़), गजानन जोग (कोंकणी) और के. पापूट्टि (मलियालम) को उनके उपन्यासों; सुश्री के. शांतिबाला देवी (मणिपुरी) को उनकी लोक-कथा एवं नाटक आधारित पुस्तक; सर्वश्री महेश्वर नार्ज्जारी (बोडो), मायानाथ झा (मैथिली), दिलीप प्रभवळकर (मराठी), हरीश बी. शर्मा (राजस्थानी) और एम. भूपाल रेड्डी (तेलुगु) को उनके कहानी-संग्रहों; सर्वश्री सेलेन घोष (बंगला), श्यामदत्त 'पराग' (डोगरी), रमेश पारिख (गुजराती), हरिकृष्ण देवसरे (हिंदी) और महेश्वर मोहांति (ओड़िया) को उनके द्वारा बाल साहित्य में दिए गए योगदान हेतु 'बाल साहित्य पुरस्कार २०११' से नवंबर २०११ में सम्मानित किया जाएगा। सम्मान-स्वरूप एक उत्कीर्ण ताम्रफलक, शॉल और पचास हजार रुपए की राशि दी जाएगी। □

रजत जयंती समारोह संपन्न

३० जुलाई को दिल्ली में वरिष्ठ कथाकार श्री राजेंद्र यादव द्वारा संपादित कथा मासिक 'हंस' के प्रकाशन के २५ वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर रजत जयंती समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें वरिष्ठ आलोचक प्रो. नामवर सिंह ने 'साहित्यिक पत्रकारिता और हंस' विषय पर अपने विचार रखे। इस अवसर पर 'हंस' से जुड़े लोगों को सम्मानित किया गया। □

८७ के हुए प्रो. रामदरश मिश्र

जाने-माने साहित्यकार प्रो. रामदरश मिश्र ने इस १५ अगस्त को जीवन के ८७ (सतासी) वर्ष पूरे किए। उन्हें बधाई देने के लिए उनके अनेक आत्मीय मित्र और साहित्यकार उनके घर एकत्र हुए और फिर एक साहित्यिक उत्सव मनाया गया। इस अवसर पर मिश्रजी की सद्यःप्रकाशित और उनसे संबंधित तीन पुस्तकों का लोकार्पण भी हुआ। प्रख्यात आलोचक डॉ. नित्यानंद तिवारी ने डॉ. स्मिता मिश्र द्वारा संपादित पुस्तक 'रामदरश मिश्र की काव्ययात्रा' का, डॉ. नरेंद्र मोहन ने डॉ. संजय त्यागी की पुस्तक 'नारी मुक्ति की अवधारणा और रामदरश मिश्र के उपन्यास' का तथा श्रीमती सरस्वती मिश्र ने रामदरशजी के नए मुक्तक-संग्रह 'धूप के टुकड़े' का लोकार्पण किया। डॉ. स्मिता मिश्र के संपादकीय वक्तव्य के बाद डॉ. नित्यानंद तिवारी और डॉ. नरेंद्र मोहन ने मिश्रजी की रचनाधर्मिता पर गहन विमर्श किया। श्रीमती सरस्वती मिश्र ने मिश्रजी की कविताओं की प्रथम श्रोता होने के अनुभव सुनाए। इस अवसर पर उपस्थित कई कवियों ने काव्य-पाठ किया। अंत में मिश्रजी ने मित्रों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए अपनी कुछ आत्मीय कविताएँ सुनाईं। सुश्री अलका सिन्हा के काव्यात्मक संचालन से यह एक यादगार शाम बन गई। □

सम्मान समारोह संपन्न

१७ अगस्त को हरिद्वार स्थित ज्ञानोदय अकादमी के सभागार में दीपशिखा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मंच द्वारा 'माँ लक्ष्मी देवी दीपशिखा सम्मान-२०११' का आयोजन किया गया, जिसमें साहित्यकार डॉ. केशव प्रसाद उपाध्याय एवं श्रीमती मीरा भारद्वाज को माला, दुशाला, प्रतीक-चिह्न एवं सम्मान राशि ग्यारह सौ एवं पाँच सौ एक रुपए से सम्मानित किया गया। अध्यक्षता आचार्य राधेश्याम सेमवाल तथा संचालन श्री के.एल. दीवान ने किया। मुख्य अतिथि डॉ. अशोक खन्ना 'अशोक' एवं डॉ. धनप्रकाश गुप्ता थे। समारोह में सर्वश्री राधेश्याम सेमवाल, के.एल. दीवान, केशव प्रसाद उपाध्याय, सुशील कुमार त्यागी 'अमित', माधवेंद्र सिंह, कीमत लाल शर्मा, गांगेय कमल, शशीभूषण सक्सेना, मीरा भारद्वाज, एस.के. त्यागी, सुखपाल सिंह, गिरिराज पावन, विजयलक्ष्मी तुंबड़िया, दीपिका राय, धनप्रकाश गुप्ता, अशोक खन्ना 'अशोक', सीमा बनौधा, भगवती गौड़, श्याम बनौधा तालिब आदि साहित्यकारों ने दोनों सम्मानित साहित्यकारों को बधाई दी। □

'सरस्वती सुमन' लघुकथा विशेषांक विमोचित

२६ जून को अंडमान-निकोबार द्वीप समूह की राजधानी पोर्टब्लेयर में सामाजिक-सांस्कृतिक संस्था 'चेतना' के तत्त्वावधान में स्व. सरस्वती सिंह की ११वीं पुण्यतिथि पर मेगापोड नेस्ट रिसॉर्ट में आयोजित एक कार्यक्रम में देहरादून से प्रकाशित 'सरस्वती सुमन' पत्रिका के लघुकथा विशेषांक का विमोचन किया गया। इस अवसर पर 'बदलते दौर में साहित्य के सरोकार' विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई। अध्यक्षता डॉ. आनंद सुमन 'सिंह' ने की। मुख्य अतिथि श्री एस.एस. चौधरी, विशिष्ट अतिथि श्री कृष्ण कुमार यादव, डॉ. आर.एन. रथ तथा डॉ. जयदेव सिंह थे। संगोष्ठी में सर्वश्री जयदेव सिंह, आर.सी. श्रीवास्तव, आर.एन. रथ तथा 'दीप लहरी' के संपादक डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी ने अपने विचार रखे। संचालन संस्था के उपाध्यक्ष श्री अशोक कुमार सिंह एवं धन्यवाद-ज्ञापन श्री आई.ए. खान ने किया। समारोह में विभिन्न द्वीपों से आए अनेक साहित्यकार, पत्रकार व बुद्धिजीवी उपस्थित थे। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज की हिंदी कविता

● ब्रजेंद्र त्रिपाठी

हिंदी की खड़ी बोली कविता का इतिहास कमोबेश सवा सौ वर्ष पुराना है। साहित्य के इतिहास में सवा सौ वर्षों का कालखंड कोई बड़ा कालखंड नहीं होता, लेकिन इस अवधि के दौरान हिंदी की खड़ी बोली कविता ने जिस तीव्र गति से विकास किया है, वह सचमुच चकित करनेवाला है। हिंदी खड़ी बोली के शुरुआती दौर में तो लोग यह मानने को भी तैयार नहीं थे कि खड़ी बोली में कविता भी की जा सकती है। स्वयं भारतेंदु हरिश्चंद्र तक इस द्वंद्व के शिकार थे। खड़ी बोली को काव्य भाषा बनाने का बहुत कुछ श्रेय राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त को है। अगर गुप्तजी न होते तो शायद छायावाद भी न होता। यह अकारण नहीं है कि अज्ञेय उन्हें अपना काव्य गुरु मानते थे।

छायावाद, उत्तर-छायावाद, प्रयोगवाद, नई कविता, अकविता आदि काव्यांदोलनों से गुजरती कविता को इक्कीसवीं सदी में प्रवेश किए एक पूरा दशक बीत चुका है। इधर की कविता के लिए 'समकालीन कविता' का प्रयोग भी बहुतायत से होता है। हिंदी में 'समकालीन' पद चलता तो खूब है, लेकिन सबसे अधिक अपरिभाषित भी यही है। कोश में इसका अर्थ दिया गया है—'एक समय में रहने या होनेवाला', 'समसामयिक'। लेकिन 'समकालीन' शब्द की व्याप्ति के अंतर्गत एक कालखंड का कितना हिस्सा आएगा, इसे ठीक-ठीक बता पाना कठिन है। अगर हम समकालीन काव्य सृजन की बात करें तो उसे हम कहाँ से शुरू कर आज तक के लेखन तक लाएँ? क्या समूची स्वातंत्र्योत्तर कविता को समकालीन कविता कहें या विगत तीन-चार दशकों के लेखन को उसमें शामिल करें। बहुत बार ऐसा भी होता है कि अपने कथ्य और स्वर के चलते बहुत समय पहले के लेखक भी हमें समकालीन लगने लगते हैं। कबीर का ही उदाहरण लें, जब हम उन्हें आज के संदर्भों में देखते-परखते हैं तो वे हमें समानधर्मा समकालीन कवि के रूप में नजर आते हैं। वस्तुतः समकालीनता के साथ समय की अवधारणा तो जुड़ी ही है, उसके साथ एक मूल्यबोध भी जुड़ा हुआ है। अगर हम अपने 'समकाल' से अपरिचित हैं तो हम भौतिक रूप से उस समय में रहते हुए भी सही अर्थों में समकालीन नहीं कहे जा सकते; क्योंकि हम अपने समय की जटिलताओं से बेखबर हैं; जो 'समकालीन' है, उसका आधुनिक होना लाजिमी है, किंतु जो आधुनिक है, जरूरी नहीं कि वह समकालीन भी हो।

वस्तुतः समकालीनता 'काल और देश' दोनों से जुड़ी हुई है। साहित्य के संदर्भ में समकालीनता का अर्थ है—नए संदर्भों और नवीन भावबोध से जुड़ाव। समकालीन प्रश्नों से टकराए बगैर समकालीन लेखन संभव ही नहीं है। कविता के संदर्भ में बात करते हुए लीलाधर जगूड़ी ने एक जगह लिखा है, "कविता अपने समय की समझ से पैदा होती है और हर काल की कविता अपनी समझ, अपना सौंदर्य एवं अपना बोध स्वयं रचती है।" समकालीन कविता में भी नई काव्याभिरुचि, नया सौंदर्यबोध और नया संवेदन दिखाई पड़ता है। इसे सही अर्थों में जनतंत्र की कविता कहा जा सकता है। समकालीन कविता यथार्थ से मुँह नहीं फेरती, लेकिन उसका यथार्थ इकहरा नहीं, संश्लिष्ट होता है। इस बारे में प्रतिष्ठित कवि कुँवर नारायण का कहना है, "कविता यथार्थ को नजदीक से देखती, मगर दूर की सोचती है। वह एक बारीक मगर जरूरी फर्क करती है—जीवन-यथार्थ और जीवन-सत्य के बीच। दुनिया जैसी है और जैसी उसे होना चाहिए, के बीच कहीं वह एक लगातार बेचैनी है। एक कवि में अगर दूर तक सोच सकने की ताकत नहीं है तो उसकी कविता या तो यथार्थ की सतह को खरोंचकर रह जाएगी या किसी भी आदर्श से चिपककर।"

हर सच्ची कविता अपने आप में विशिष्ट होती है। उसमें कुछ ऐसा जरूर होता है जो अब तक न कहा गया हो, न देखा गया हो। ऐसा कुछ, जिसे कोई दूसरा माध्यम कह पाने में सक्षम न हो। लेकिन वह समकालीन तभी कहलाएगी, जब वह अपनी लंबी ऐतिहासिक परंपरा से अपने जटिल रिश्तों को परिभाषित कर सके; क्योंकि परंपरा के संदर्भ के बिना आधुनिकता को परिभाषित नहीं किया जा सकता। हिंदी में आधुनिकता का नव अंकुरण अज्ञेय और उनकी पीढ़ी के लेखकों में होता दिखाई देता है। नंदकिशोर आचार्य लिखते हैं, "अज्ञेय इसी अर्थ में एक आधुनिक लेखक हैं कि वे जहाँ एक ओर परिस्थिति-निरपेक्ष परंपरा को नहीं स्वीकार करते, वहीं दूसरी ओर परिस्थिति के सम्मुख समर्पण कर देने के बजाय परंपरा का सामर्थ्य इसी में मानते हैं कि वह किसी हद तक नई-से-नई परिस्थिति का सामना कर सकती है—यह सामना ही परंपरा का विकास अथवा उसका नया रूपायन है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिंदी कविता को आधुनिक भावबोध देने में अज्ञेय द्वारा संपादित सप्तकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। तीसरा सप्तक १९५९ में प्रकाशित हुआ था। उसके बाद इलाहाबाद से विजयदेव नारायण साही और डॉ. जगदीश गुप्त के संपादकत्व में 'नई कविता' का प्रकाशन हुआ। उस दौर में जो नए कवि उभरकर सामने आए, उनमें कुँवर नारायण, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, केदारनाथ सिंह आदि का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, भवानी प्रसाद मिश्र, त्रिलोचन और मुक्तिबोध भी इसी दौर के कवि थे। १९६०-६५ में हिंदी कविता में जो नए चेहरे उभरे, उनमें धूमिल, विनोदकुमार शुक्ल, चंद्रकांत देवताले, नरेश सक्सेना, ऋतुराज, अशोक वाजपेयी, कुमार विमल, लीलाधर जगूड़ी, भगवत रावत आदि थे। इन लोगों के बगैर समकालीन हिंदी कविता का परिदृश्य अधूरा रहेगा।

अज्ञेय ने छायावादी काव्य के दौर में लेखन शुरू किया, लेकिन उन्होंने स्वयं को उसकी स्वप्नजीविता एवं वायवीयता से अलग किया। उन्होंने विदेशों से आयातित छद्म राजनीतिक नारेबाजी से भी अलग रहकर मौलिक रचनाशीलता को प्रोत्साहित किया और आधुनिकता के क्षेत्र में नए हिंदी लेखक की विशिष्ट पहचान कायम की। धर्मवीर भारती ने ठीक ही लिखा है—''हिंदी कविता के रूप, प्रस्तुतीकरण और भावबोध को नया आयाम देने और आधुनिक मानसिकता से जोड़ने में वात्स्यायन की भूमिका अग्रणी रही है।''

हिंदी कविता को आधुनिक भावबोध देने में अज्ञेय द्वारा संपादित सप्तकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। तीसरा सप्तक १९५९ में प्रकाशित हुआ था। उसके बाद इलाहाबाद से विजयदेव नारायण साही और डॉ. जगदीश गुप्त के संपादकत्व में 'नई कविता' का प्रकाशन हुआ। उस दौर में जो नए कवि उभरकर सामने आए, उनमें कुँवर नारायण, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, केदारनाथ सिंह आदि का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, भवानी प्रसाद मिश्र, त्रिलोचन और मुक्तिबोध भी इसी दौर के कवि थे। १९६०-६५ में हिंदी कविता में जो नए चेहरे उभरे, उनमें धूमिल, विनोदकुमार शुक्ल, चंद्रकांत देवताले, नरेश सक्सेना, ऋतुराज, अशोक वाजपेयी, कुमार विमल, लीलाधर जगूड़ी, भगवत रावत आदि थे। इन लोगों के बगैर समकालीन हिंदी कविता का परिदृश्य अधूरा रहेगा।

पिछले चार-पाँच दशकों की हिंदी कविता पर नजर डालेंगे तो पाएँगे कि इस दौरान 'नई कविता' की तरह का कोई बड़ा आंदोलन उभरकर सामने नहीं आया। इस पूरे दौर की कविता पर टिप्पणी करते हुए भगवत रावत का कहना है, ''पिछले लगभग चालीस वर्षों में हिंदी कविता ने अपनी स्वतंत्र पहचान इसलिए बनाई है कि वह किसी आंदोलन विशेष की देन नहीं है। नई कविता के उतार के बाद और कविता के तरह-तरह के छोट-मोटे नामधारी आंदोलनों के बाद पिछले लगभग चालीस वर्षों में हिंदी कविता ने, न केवल पश्चिम के आतंक से मुक्ति पाई है, बल्कि उस पर किसी तरह का कोई बाहरी दबाव नहीं बचा है। रूस के विघटन के बाद जो मोह भंग हुआ, आज का लेखक इन्हीं परिस्थितियों से जूझते हुए अपनी पहचान बना रहा है। इस पूरे घटनाक्रम से गुजरते हुए हिंदी कविता ने न केवल अपना स्वतंत्र रास्ता बनाया है, अपनी अलग पहचान भी अर्जित की है।''

जिन कलाओं का भी शब्द से रिश्ता है, उनमें कविता सबसे पुरानी है। समय के साथ कविता के सरोकार अधिक व्यापक हुए हैं और उनकी अभिव्यक्ति की प्रक्रिया भी अधिक जटिल और संश्लिष्ट हुई है। अगर हम आज की कविता की बात करें यानी कि पिछले दो दशकों की कविता का तो वैश्विक स्तर पर कई मुद्दे हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। इसमें सोवियत रूस का विघटन, भूमंडलीकरण, आर्थिक उदारीकरण, आतंकवाद, सांप्रदायिकता, अपराध का राजनीतीकरण और राजनीति का अपराधीकरण, दलित विमर्श, स्त्री विमर्श आदि प्रमुख हैं। पिछले दो दशक की कविताओं में ये मुद्दे प्रमुखता के साथ उभरे हैं। इस तरह के काव्य सृजन में तीन पीढ़ी के रचनाकार सक्रिय हैं।

आज भूमंडलीकरण और आर्थिक उदारीकरण की बड़ी चर्चा है। संचार के तीव्र संसाधनों के चलते विश्व के तमाम देशों के मध्य दूरियां कम हो गई हैं और एक विश्वग्राम की कल्पना की जा रही है। हालाँकि जिस अमेरिका से यह विश्वग्राम का नारा निकला, वहाँ एक भी गाँव शेष नहीं रह गया है। आज विश्व के तमाम विकासशील देशों में यह प्रचारित किया जा रहा है कि उनका तीव्र विकास तभी संभव है, जब वे भूमंडलीकरण से जुड़ जाएँ, और भूमंडलीकरण का आधार है आर्थिक उदारीकरण। इसे अपनाकर ही देश की अर्थव्यवस्था को विश्वव्यापी बनाया जा सकता है।

पिछले दो दशकों की हिंदी कविता को देखें तो पाएँगे कि यह कविता भूमंडलीकरण के इस विश्वव्यापी शोषण और मनुष्य विरोधी शक्तियों का सार्थक विरोध कर रही है। इन्हीं दशकों में हिंदी कविता में दलित, स्त्री एवं आदिवासी अस्मिता के स्वर भी मुखर हुए हैं। इस दौर में विश्व स्तर पर घटित होनेवाली घटनाओं की अनुगूँजें भी हिंदी कविता में सुनी जा सकती हैं। इन कविताओं में हम एक नया सौंदर्यबोध देख सकते हैं, जो कविता की परिधि को और विस्तार देता है।

१०१, अर्श कॉम्प्लेक्स
सेक्टर-अल्फा १
ग्रेटर नोएडा-२०१३०८
(उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

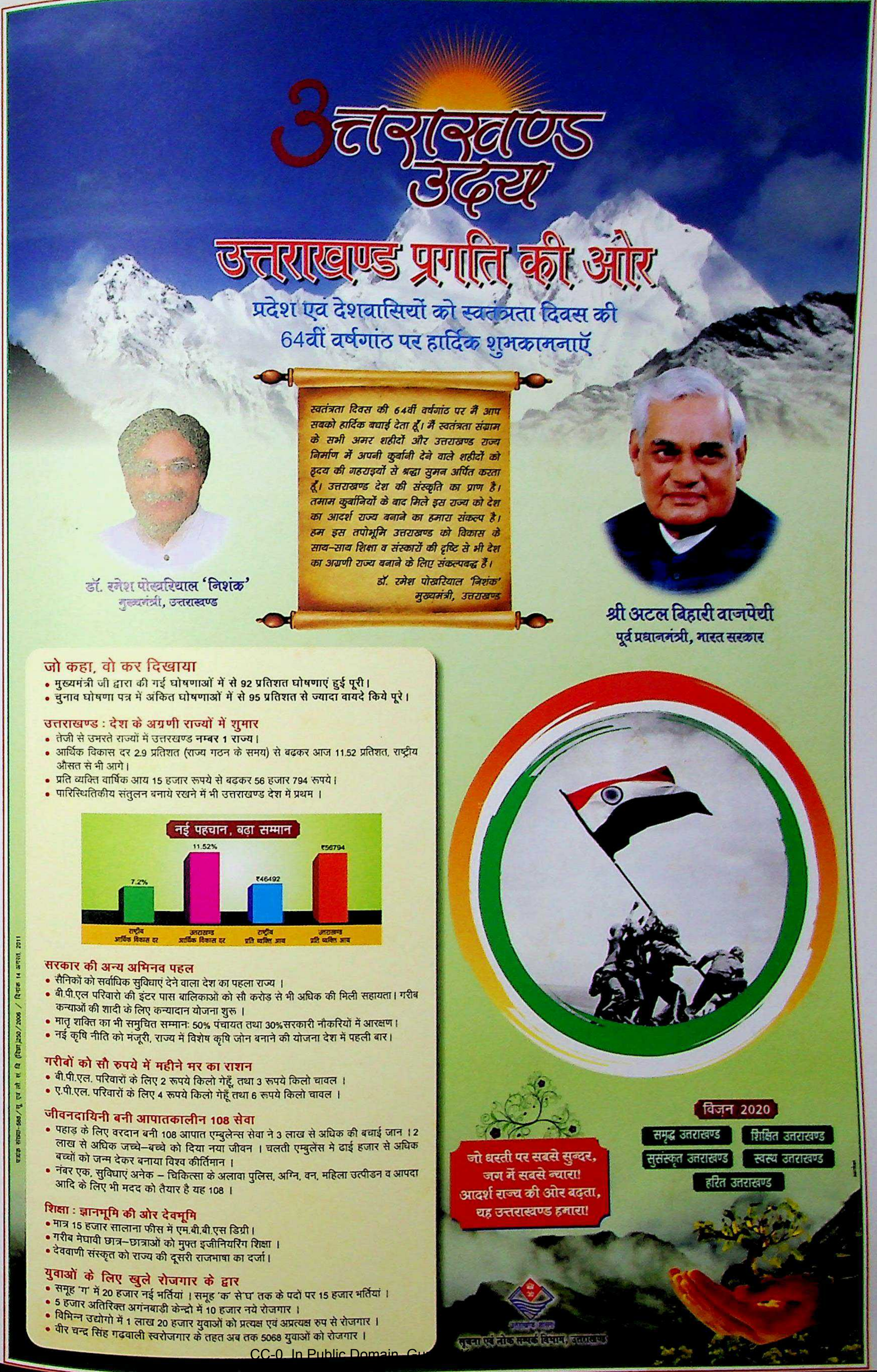

CC-0. In Public Domain. Gu

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेषण की तिथि—पूर्व माह की २५-२६ • पंजीयन संख्या ६२११२...
पी डी आर संख्या डी एल (सी)-०१/१२७३/०९-११
यू.(सी) २२२/२००९-११
पी.एस.ओ. नई दिल्ली अग्रिम शुल्क के बिना प्रेषण की अनुमति

खेती लाभ का धंधा बना
खुशहाल किसान बना

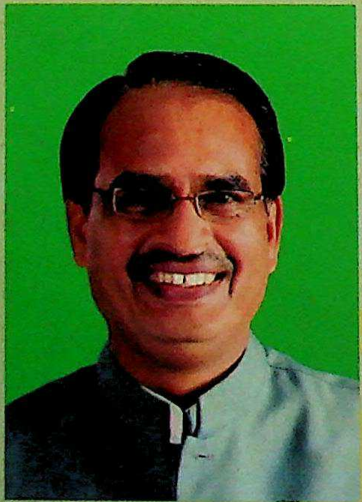

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

प्रदेश के किसानों के हितों की पूरी सुरक्षा हो रही है अब

- किसानों को 1 प्रतिशत ब्याज पर कम अवधि का ऋण देने वाला पहला राज्य।
- गेहूं पर 100 रुपये प्रति क्विंटल बोनस देने वाला देश का पहला राज्य।
- इस साल 46 लाख मीट्रिक टन से अधिक का गेहूं उपार्जन।
- सहकारी बैंकों ने जारी किये 98 लाख से अधिक किसान क्रेडिट कार्ड।

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

आकल्पन : म.प्र. माध्यम/2011

अन्नदाता किसान का पूरा सम्मान - मध्यप्रदेश

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल्य : बीस रुपए

साहित्य अमृत

अक्तूबर २०११ • साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक • मासिक

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकास में सब साथ-साथ, कहता है नयी बात

देश का दिल

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

- लोक सेवा प्रदाय गारंटी कानून के तहत लगभग 34 लाख से अधिक लोगों को निर्धारित समय-सीमा में सेवाएं प्राप्त। प्रदेश के विकासखण्डों में अब उप लोक सेवा केंद्र खोलने का निर्णय। अब नागरिकों को विभिन्न सेवाओं का लाभ लेने के लिए अलग-अलग जगह जाने की जरूरत नहीं होगी।
- फल-फूल, औषधि फसलों और सब्जी की फसलों को मंडी अधिनियम परिधि से बाहर रखने का निर्णय। किसानों को अब ये उत्पाद बेचने की स्वतंत्रता। बाहर जाने वाली सब्जी की टैक्स जांच से मुक्ति।
- भूमि अधिग्रहण पर न्यूनतम 5 लाख रुपये प्रति एकड़ मुआवजा।
- कृषि आर्थिक सर्वेक्षण प्रस्तुत करने वाला मध्यप्रदेश पहला राज्य।
- खेती को लाभ का व्यवसाय बनाने एवं समन्वित विकास के लिए मध्यप्रदेश में 'कृषि केबिनेट' का गठन। कृषि केबिनेट के फैसलों को मंत्री परिषद के फैसलों का दर्जा। समिति के फैसलों पर आदेश सीधे जारी करने की व्यवस्था।
- किसानों को स्थाई विद्युत पम्प कनेक्शन के लिए अनुदान योजना में संशोधन। अब प्राक्कलन की सीमा एक लाख रुपये से बढ़कर डेढ़ लाख रुपये।
- सोलह प्रतिशत पर मिलने वाला सहकारी ऋण अब किसानों को महज एक प्रतिशत ब्याज दर पर। 1273 करोड़ रुपये से बढ़कर अब वितरण लक्ष्य हुआ 6500 करोड़ रुपये। सरकार के इस निर्णय से प्रदेश के एक करोड़ से अधिक किसान लाभान्वित।
- किसानों के बैंक खातों में अनुदान बोनस तथा अन्य राहत राशि सीधे जमा कराने वाला मध्यप्रदेश पहला राज्य।
- गेहूं के समर्थन मूल्य पर 100 रुपये प्रति क्विंटल की दर से 500 करोड़ रुपये का बोनस देने वाला मध्यप्रदेश अग्रणी राज्य।
- राज्य में जैविक कृषि नीति निर्धारित। नीति का उद्देश्य मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार, कृषि लागत में कमी तथा खेती को लाभकारी बनाना।
- किसान कॉल सेंटर के माध्यम से 4 लाख किसानों की समस्याओं का समाधान।
- प्रदेश में मुख्यमंत्री बाल हृदय उपचार योजना प्रारंभ। अब 15 वर्ष तक के बच्चों के हृदय रोग का इलाज सरकार की जिम्मेदारी।
- विकलांगों की शारीरिक और मानसिक पीड़ा को दूर करता स्पर्श अभियान।
- परिवार कल्याण कार्यक्रम में मध्यप्रदेश को उल्लेखनीय सफलता। साढ़े छह लाख लोगों ने अपनाया परिवार नियोजन। चार संभाग और 27 जिलों में शत-प्रतिशत लक्ष्य पूर्ति।
- राज्य के प्रमुख शहरों को जोड़ने के लिये पर्यटन विकास निगम द्वारा वायु सेवा।
- पिछले वर्ष के मुकाबले आठ सौ प्रतिशत से ज्यादा विदेशी निवेश।
- प्रदेश में 5 अक्टूबर से बेटी बचाओ अभियान आरंभ।
- लाड़ली लक्ष्मी योजना में करीब आठ लाख पच्चीस हजार से अधिक कन्याएं लाभान्वित।
- 15 लाख छात्राओं को मिली साइकिलें।
- मुख्यमंत्री कन्यादान योजना में लगभग डेढ़ लाख कन्याओं के विवाह सम्पन्न।
- एम.पी. ऑनलाइन पोर्टल सेवा का लाभ 28 लाख से अधिक नागरिकों को मिला।
- अनुसूचित जनजाति, विशेष पिछड़ी जनजाति, अनुसूचित जाति तथा विमुक्त जाति के छात्रावासों, आश्रमों में रहने वाले छात्र-छात्राओं की शिष्यवृत्ति की दरें प्रत्येक वर्ष में माह मार्च के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के आधार पर निर्धारित करने का निर्णय। अब छात्रों को 500 रुपये से बढ़ाकर 675 रुपये प्रतिमाह एवं छात्राओं को 525 रुपये से बढ़ाकर 700 रुपये प्रतिमाह शिष्यवृत्ति देने का निर्णय।

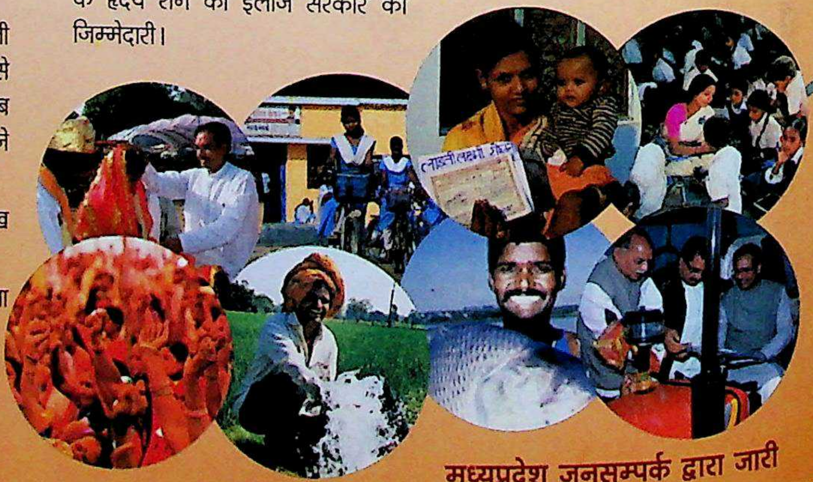

आवकल्पन : म.प्र. माध्यम/2011

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-१७ अंक-३ ❖ पृष्ठ ६८ | आश्विन-कार्तिक, संवत्-२०६८ | अक्तूबर २०११

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

परामर्शदाता (मानद)

ब्रजेंद्र त्रिपाठी

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ २०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ २००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ २५०

विदेश में

एक अंक—तीन यू.एस. डॉलर (US$3)

वार्षिक—पैंतीस यू.एस. डॉलर (US$35)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय

दिल्ली में बम-विस्फोट, अन्ना हजारे का अनशन'' ... ४

प्रतिस्मृति

दीपावली : सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतिमा पर्व / *हजारी प्रसाद द्विवेदी* ... ९

कहानी

काशीवास / *विद्या विंदु सिंह* ... १२

पिता-पुत्र / *रामदेव शुक्ल* ... २०

कुरुक्षेत्र / *चंद्रमोहन दिनेश* ... ४८

आलेख

विश्व में लक्ष्मी देदीप्यमान रही है / *बनवारी लाल ऊमर वैश्य* ... १०

गणेश का लोक-स्वीकृत स्वरूप / *प्रकाश परिमल* ... २४

ललित-निबंध

शब्द-शब्द झरते अर्थ / *श्रीराम परिहार* ... १६

व्यंग्य

दीवाली, चुनाव और आर्यपुत्र / *पूरन सरमा* ... २२

गजेंद्र मोक्ष-२१वीं सदी / *ज्ञानेंद्र नाथ बरतरिया* ... ५२

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

पिया का घर / *मानेश्वर मनुज* ... २७

संस्मरण

नाटक बन गया तमाशा / *कुँअर बेचैन* ... ३०

राम झरोखे बैठ के

अन्ना और टोपी-क्रांति / *गोपाल चतुर्वेदी* ... ३२

उपन्यास-अंश

सीढ़ियाँ / *शैलेश मटियानी* ... ३६

नवांकुर

एक रहस्य / *अविनाश भारती* ... ४६

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

सुखद अंत / *मार्गरेट ऐटवुड* ... ४२

भाषा-प्रयोग

'य' और 'व्' के अनेक रूप / *रमेश चंद्र महरोत्रा* ... ५५

लोक-साहित्य

बुंदेली लोकगीतों में काव्य-तत्त्व / *गायत्री वाजपेयी* ... ५६

अंततः

नर्मदा के अनथक यात्री : अमृतलाल वेगड़ / *ब्रजेंद्र त्रिपाठी* ... ६५

कविता

कुँवर जावेद ... १९

नाथूराम शर्मा ... २३

दिविक रमेश ... ३५

एम.डी. मिश्रा 'आनंद' ... ४४

देवेंद्र आर्य ... ४५

ओंकार प्रसाद भारद्वाज ... ५४

वर्ग पहेली ... ५९

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ... ६०

साहित्यिक गतिविधियाँ ... ६२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

दिल्ली में बम विस्फोट, अन्ना हजारे का अनशन और जन-भावना, राष्ट्रीय एकता परिषद् की बैठक, राष्ट्रीय भाषा-प्रचार सभा, वर्धा

दिल्ली उच्च न्यायालय के फाटक नं. ५, जहाँ से पास लेकर मुवक्किल आदि प्रवेश करते हैं, ७ सितंबर को वहाँ हुए बम विस्फोट की घटना ने दिल्ली के हृदय को आहत कर दिया। दिल्ली देश की राजधानी है। इस घटना से स्वभावतः पूरे देश में सनसनी फैल गई और आतंकवाद पर काबू न पाने की वजह से सरकार की हर ओर से कड़ी आलोचना होने लगी। खेद की बात यह है कि उच्च न्यायालय पर मई के महीने में भी एक हादसा हुआ था। उस समय बम शक्तिशाली नहीं था और जान-माल की हानि से बच गए। यह गृह मंत्रालय के लिए चेतावनी थी, पर सरकार चेती नहीं। इस बार का विस्फोट बहुत शक्तिशाली था। ग्यारह लोग घटना स्थल पर मारे गए तथा तीन ने बाद में अस्पताल में दम तोड़ दिया। कुछ की हालत अभी भी गंभीर बनी हुई है। करीबन ५० लोग गंभीर रूप से घायल हुए थे, जिनका इलाज चल रहा है। दुर्घटना के समय का दृश्य और अस्पतालों की अफरा-तफरी की दुःखदायी तसवीरें समाचार-पत्रों में छपीं और टी.वी. के माध्यम से दुनिया भर के लोगों ने देखीं।

इस विषय में कुछ कहना अनावश्यक है, पर जनता के क्षोभ का कुछ एहसास सरकार को हुआ, जब कांग्रेस के महासचिव राहुल गांधी घायलों को देखने गए राम मनोहर लोहिया अस्पताल गए तो उनके विरुद्ध नारेबाजी की गई। प्रधानमंत्री के वहाँ जाने से भी जनता खुश नहीं थी। वी.वी.आई.पी. लोगों के वहाँ जाने से उनके सुरक्षा तंत्र के कारण न केवल जनता को कठिनाई होती है, उनकी देखभाल में चिकित्सकों का ध्यान भी बँटता है। यह थोथी रस्म अदायगी समाप्त होनी चाहिए और अगर हमदर्दी दिखाने जाना है तो फिर आम आदमी की तरह जाएँ। ऐसे अवसरों पर सुरक्षा के साथ जाना पीड़ितों और उनके परिजनों का मखौल ही है। जो बयानबाजी गृहमंत्री और प्रधानमंत्री द्वारा हुई वही पुरानी घिसी-पिटी बातें—हम आतंकवाद से दबेंगे नहीं, दोषियों को सजा दी जाएगी। खुफिया तंत्र व पुलिस को और मजबूत बनाएँगे। संसद् में गृहमंत्री ने कहा कि दिल्ली पुलिस को आतंकी हमले की सूचना जुलाई में दे दी गई थी, पर दिल्ली के उपराज्यपाल ने इसे नकार दिया और कहा कि सूचना जनरल थी और उसके आधार पर कोई विशेष कारवाई संभव नहीं हो सकती थी। दिल्ली की मुख्यमंत्री ने पुराना रोना फिर से रोया कि दिल्ली राज्य के अंतर्गत पुलिस और कानून व्यवस्था है ही नहीं, वह तो गृह मंत्रालय के अधीन है और अलग-अलग एजेंसियों में तालमेल की कमी है, फिर आखिर दायित्व किसका है? सब जानते हैं कि देश की राजधानी में सुरक्षा की जिम्मेदारी पुलिस और केंद्रीय सरकार की है। जब कुछ और पुराने हादसों के बारे में, जहाँ अभी तक सुराग नहीं मिले हैं, फिर जिम्मेदारी गृहमंत्री और राज्य सरकारों पर टालने की कोशिश की। जनता इतनी नासमझ नहीं है। सरकार की पूरी अक्षमता स्पष्ट हो गई।

मई के हादसे के बाद उच्च न्यायालय की सुरक्षा को दृढ़ करने के बारे में कुछ फैसले हुए थे, उन पर इन तीन महीनों में कारवाई नहीं हो पाई। सी.सी.टी.वी. लगाई जानी थी, वह भी नहीं हुआ। नतीजा ७ सितंबर की तबाही। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और उनके कुछ सहयोगी घटनास्थल पर गए। दिल्ली उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और अन्य न्यायाधीशों से सुरक्षा के बारे में बातचीत की। बार एसोसिएशन ने भी अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। सर्वोच्च न्यायालय की सुरक्षा के प्रति लापरवाही के चीफ जस्टिस के रोष प्रकट करने के बाद प्रधानमंत्री ने गृहमंत्री और विधिमंत्री को न्यायालयों की सुरक्षा के मामले पर बातचीत करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से मिलने के आदेश दिए। कई आतंकी दलों ने हादसे की जिम्मेदारी लेने और वाहवाही लूटने की कोशिश की है। देश के विभिन्न क्षेत्रों और नए-पुराने आतंकवादी संगठनों से तार जुड़े बताए जाते हैं, पर खोजबीन और खुफिया तंत्र किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुँच पाए हैं; पर कुछ बातें सामने आ रही हैं। आतंकवादी खतरों के प्रति मौखिक आश्वासनों के बाद भी राजतंत्र गंभीर नहीं मालूम देता है। क्या वोट बैंक की राजनीति इसका कारण है? कांग्रेस के एक अन्य महामंत्री दिग्विजय के बयानों और कार्यों से, बटाला हाउस से लेकर आजमगढ़ के दौरे से यह झलकता है। गृहमंत्री भी समय-समय पर कुछ हिंदू सिरफिरों की कुछ गलत करवाइयों के आधार पर जनता को भ्रमित और गुमराह करने के लिए 'भगवा आतंकवाद' का मंत्र पढ़ देते हैं। भगवा तो आदिकाल से देश में त्याग और बलिदान का प्रतीक रहा है, फिर भी यदि कोई सचमुच दोषी हैं, उन्हें शीघ्र-से-शीघ्र सजा दिलाएँ। किसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतराज हो सकता है, पर जो आतंकवादी नेटवर्क पाकिस्तानी आई.एस.आई. और कुछ आंतरिक उग्रपंथियों के कारण देश में फैला है, उसकी अवहेलना तो न करें, राजनीतिक लाभ की उम्मीद में। प्राथमिकता कार्यकलाप में दिखनी चाहिए। दूसरे जो निर्णय आप लेते हैं, वह शीघ्र और समुचित रूप से कार्यान्वित हो रहा है, यह तो देखने का कष्ट करें। सुशासन की यह एक बाध्यता है। जिन कारणों से या जिन अधिकारियों के कारण शिथिलता हो रही है। यह स्थिति ईश्वर-प्रदत्त नहीं है, उन्हें दूर करना सरकार का कर्तव्य है। इसी प्रकार जो अधिकारी शिथिलता के लिए जिम्मेदार हैं, उन्हें सख्त सबक मिलना चाहिए। हमारे न्यायालय और विशेष रूप से उच्च न्यायालय व सर्वोच्च न्यायालय हमारी सार्वभौमिकता के परिचायक हैं, उसी प्रकार जैसे संसद् और राष्ट्रपति भवन। यहाँ आतंकवादियों को भी न्याय मिलता है हमारे कानूनों और संविधान की मर्यादा के अंदर। अतएव कभी-कभी मालूम पड़ता है कि दिल्ली उच्च न्यायालय पर आतंकी हमला सोची-समझी नीति को संकेतिक करता है। अतएव सरकार को पूरे देश के भविष्य के लिए विशेष सावधानी रखने की विशेष आवश्यकता है। खुफिया तंत्र जब कोई खोज करता है तब पता चलता है कि गुवाहाटी से मुंबई, अहमदाबाद तथा कश्मीर से कन्याकुमारी तक इसके तार जुड़े हुए हैं। आजकल जो जाँच हो रही है, उसमें भी यही कहा जा रहा है। जरूरी है यह नेटवर्क टूटे, तभी हम सुरक्षा से रह सकते हैं। आतंकियों को ऐसा सबक मिलना चाहिए, जैसा अमेरिका कर सका।

☐

११/९ को अमेरिका में हुए हादसे के इस वर्ष दसवाँ साल था। अमेरिका ने बड़ी संजीदगी के साथ शोक दिवस मनाया। सब धमकियों के बावजूद अल कायदा कुछ नहीं कर सका; चूँकि वहाँ उन्होंने चुस्त व्यवस्था स्थापित कर ली है। हम पसोपेश में पड़े रहते हैं। इसी जुलाई के मुंबई कांड के बाद देश को आशा थी कि अब सरकार आवश्यक इंतजाम आतंकवादियों को रोकने और निपटने के लिए कर लेगी, किंतु उसमें विलंब हो रहा है।

☐

अन्ना हजारे का जन लोकपाल का जो अनशन और आंदोलन था, वह सरकार से एक प्रकार के तथाकथित समझौते और संसद् के प्रस्ताव के बाद स्थगित हो गया। उसको समाप्त नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि संसद् में क्या होता है, बहुत कुछ उस पर निर्भर करेगा। इसके अलावा जो मुख्य मुद्दा भ्रष्टाचार का है, उसमें तो कोई कमी नजर नहीं आ रही है। आगे और नए-नए प्रकरण आ रहे हैं। पहले भी और आज भी, तरह-तरह से प्रश्न उठाया जाता है कि जन लोकपाल कोई ब्रह्मास्त्र नहीं है कि एकदम भ्रष्टाचार खत्म हो जाएगा। यह सही है, पर लोकपाल की माँग पिछले ४२ साल से चल रही है। करीब ८ विधेयक समय-समय पर आए, लेकिन पारित नहीं हो सके। जनसाधारण का विश्वास दृढ़ होता गया कि राजनीतिक वर्ग की उसमें कोई दिलचस्पी नहीं है। केवल यह दिखावे का खेल चल रहा है। इसी जन-अवसाद के कारण अन्ना के अनशन को इतना समर्थन प्राप्त हुआ। लोकपाल या ओम्बड्समैन की अवधारणा स्वराज-प्राप्ति के बाद कुछ यूरोपीय देशों के अनुभव के आधार पर आई, क्योंकि लोगों को यह लगने लगा कि अपने ही साथी राज्य चला रहे हैं; जो जनता द्वारा चुने गए हैं, किंतु जनता के अभाव-अभियोग पर शासन का ध्यान नहीं जाता है और उनको दूर करने का कोई रास्ता नहीं है बिना घूस दिए। अतएव भ्रष्टाचार पनप रहा है। आशा पैदा हुई कि शायद लोकपाल से राहत मिले। सब जानते हैं कि वह जादू की छड़ी नहीं है, रामबाण नहीं है; पर यह बात बार-बार रटकर उसके महत्त्व को कम नहीं किया जा सकता है। अपेक्षा है कि उच्च स्तर पर राजनीति और प्रशासन दोनों के लोकपाल द्वारा कुछ नकेल लगेगी। यही वजह है कि राजनेता दुहाई लोकपाल की देते हैं, पर बिल के किसी प्रारूप को इतने दिन पारित नहीं होने दिया। जन लोकपाल की खामियाँ बताकर सरकार के कुछ लोग टाल-मटोल के मूड में हैं, पर अन्ना के अनशन में कुछ फाँस है, अतएव बेचैन हैं। भ्रष्टाचार के बहुत से पक्ष हैं। काला धन भी भ्रष्टाचार एक पहलू है। उसके रावण से अधिक शीश हैं। राजनीतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार एवं परिवर्तन करने होंगे। चुनाव प्रणाली, न्याय प्रणाली में बदलाव लाना होगा। लोकपाल एक प्रतीक बन गया है भ्रष्टाचार मिटाने के संकल्प था। जन-आकांक्षा को हेय भावना से देखने की चेष्टा मत करिए। खेद है कि बहुत से बुद्धिवादी भी राजनेताओं के कुचक्र में फँस गए हैं और लेखों द्वारा इसी प्रकार का प्रचार करते हैं। हम पहले भी कह चुके हैं कि हम अन्ना की टीम से हर बात में सहमत नहीं हैं। जन लोकपाल बिल में भी कुछ दिक्कतें हैं। लोकपाल प्रभावी और सक्षम होना चाहिए, पर उसके निर्माण में हमें संवैधानिक मान्यताओं को ध्यान में रखना होगा। टीम की हर राय या विचार ब्रह्म-वाक्य नहीं हो सकता। लोकपाल व्यावहारिक होना चाहिए। हमारा देश विशाल और विविधताओं से भरा है। उन सबको हमें देखना होगा। लोकपाल ऐसा लचीला नहीं होना चाहिए कि कुछ समय के बाद वह डायनासोर प्रजाति की तरह लुप्त हो जाए। लोकतंत्र विचार-विमर्श और समझौते की भावना से चलता है। उदाहरण के लिए, यदि न्यायपालिका स्टैंडर्स और जवाबदेही बिल के प्रारूप में और स्थायी समिति की रिपोर्ट में कुछ कमियाँ हैं तो उसको अपने वैकल्पिक सुझाव के रूप में कानूनी प्रारूप दें, ताकि उसे संसद् सुधार सके, उसके लिए जनमत आज तैयार है। यह न करके अपने वादे से मुकरकर जनलोकपाल समर्थक फिर माँग करने लगें कि न्यायपालिका को लोकपाल के अंदर लाओ। तो यह सही नहीं होगा। यही दृष्टिकोण, जो विचार-विमर्श स्थायी समिति में लोकपाल विधेयक के संबंध में हो रहा है, वहाँ तर्कपूर्वक रखना चाहिए। धैर्य नहीं खोना चाहिए। जो संवैधानिक प्रक्रियाएँ हैं, वे पूरी हो जानी चाहिए। बिल के बारे में अंतिम निर्णय तो संसद् में होगा। सरकार और सभी राजनीतिक दलों ने जो प्रस्ताव पारित किया, उसका आदर नेकनीयती से होना चाहिए। यह सर्वविदित है कि स्थायी समिति की रिपोर्ट कभी सरकार के लिए वेद वाक्य नहीं रही है। कुछ बातें सरकार मानती है, बहुत सी बातें नहीं मानती है। सरकार को जनभावनाओं और अपने प्रस्ताव का, जिसकी प्रतिलिपि अपने एक मंत्री के हाथ अन्ना को भेजी, उनकी अनदेखी करना खतरनाक होगा। कुछ राजनीतिक समीक्षकों ने संदेह प्रकट किया है, क्योंकि कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लचीली तकनीकी शब्दावली संसद् के प्रस्ताव में, जिसे प्रणव मुखर्जी ने सरकार की ओर से रखा था उसके आधार पर सरकार स्थायी समिति की रिपोर्ट के बाद बच निकलने की कोशिश करेगी। हम उसे सही नहीं मानते। किसी विधेयक को बनाने के समय उस प्रकार की शब्दावली का उपयोग किया जाता है, ताकि प्रस्तावित कानून के मुख्य उद्देश्य को प्राप्त करने में सुविधा हो, उसे बचाव के रास्ते के रूप में लेना भारी भूल होगी। सरकार को भी इसे हार या जीत के रूप में नहीं देखना चाहिए। प्रधानमंत्री और सरकार को शायद अपने प्रारंभिक कार्यकलापों में इसका एहसास हो चुका है। कुछ भ्रम पैदा हुआ, जब राहुल गांधी ने अपने एक लिखित भाषण में यकायक कुछ लोकतांत्रिक परंपराओं व आस्थाओं की चर्चा की और कहा कि लोकपाल को संवैधानिक दर्जा दिया जाए। उनका संवैधानिक दर्जा देने का सुझाव कोई नया नहीं है। पहले भी उसका जिक्र हो चुका है। वैसे संवैधानिक और संसद् के एक्ट द्वारा स्थापित संस्था में कोई विशेष भेद नहीं होता है, यदि सरकार का दिल से संस्था का आदर करती है। लोगों को ताज्जुब हुआ कि यह सुझाव महासचिव होने के नाते पहले ही प्रधानमंत्री को क्यों नहीं दिया, ताकि सरकारी बिल में उसको शामिल कर लिया जाता? पर देश में आम लोगों का ज्यादातर खयाल यह बना कि सुझाव इस समय समस्या को सुलझाने की नीयत से नहीं था, बल्कि इसके नाते विलंब करने का था, कुछ और समय तक लोकपाल विधेयक को टालने का था। संवैधानिक परिवर्तन की प्रक्रिया लंबी और कठिन होती है। इसमें कांग्रेस पार्टी के अंदर की खींचतान भी परिलक्षित होती है। हम तो यह मानकर ही चलते हैं कि इस मामले में सरकार आवश्यक लचीलापन और दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति दिखलाएगी।

एक व्यर्थ का विवाद चला और चल रहा है कि कानून सड़क और रामलीला मैदान में नहीं बन सकता है। यह सही है, यह वैधानिक प्रक्रिया है। पर सड़क और मैदान के लोग सांसदों को चुनते हैं। वे कुछ कहते हैं और सुझाव देते हैं तो उसको चुनौती के तौर पर क्यों देखा जाए और उसको संसद् के कार्य में हस्तक्षेप क्यों माना जाए? उसको आए सुझाव के रूप में ले सकते हैं ओ· ईमानदारी से विचार करेंगे तो सड़क और मैदानवालों को आश्वस्त कर सकते हैं। गतिशील और सजीव लोकतंत्र की जब हम डींग हाँकते हैं तो उसका मंतव्य यही है। उसमें हवा की दिशा के आकलन और तदनुकूल करने की नीति-निर्धारण क्षमता होती है। दूसरा निरर्थक विवाद है इस दावे का कि संसद् सर्वोच्च है। एक साधारण विद्यार्थी भी जानता है कि हमारे यहाँ सर्वोच्च केवल संविधान है। प्रभुसत्ता उसमें निहित है। विधायिका, संसद्, न्यायपालिका और कार्यपालिका अपने-अपने क्षेत्रों में संविधान-सम्मत हैं, सर्वोच्च हैं। संविधान की व्याख्या का अधिकार न्यायपालिका को है। संसद् संविधान में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं कर सकती है। वह ब्रिटिश संसद् की तरह नहीं है। हमारा संविधान हमें नहीं भूलना चाहिए। चेक्स और बैलेंसेज संतुलन का है। इसीलिए उसमें व्यवस्था की दृष्टि से संतुलन है और परिवर्तन की संभावना के कारण स्थायित्व है। हम गर्व से कहते हैं, जब आसपास के देशों में राज्य शासन डोल गए, भारत में संवैधानिक प्रजातंत्र कायम है। अतएव हमारे आज के राजनेताओं को आत्ममंथन और वैयक्तिक संतुलन की सतत आवश्यकता है।

भारतीय संविधान के प्रारंभ में कहा गया है कि हम भारत के निवासी हम अपने को यह संविधान प्रदान करते हैं। तात्पर्य यह है कि उसका स्रोत भारत की जनता स्वयं है। १५ अगस्त, १९४७ को ब्रिटेन से सत्ता भले ही स्थानांतरित हुई हो, किंतु जनता ने संविधान को अपनी चयनित संविधान सभा द्वारा बनाया है। लिखित संविधान में कोई प्रावधान नहीं है। इसीलिए 'वी, द पीपुल' का महत्त्व है। कुछ लोग खिल्ली उड़ाने की कोशिश करते हैं कि कहीं दस-बीस हजार लोग एकत्रित हो जाएँ और दबाव डालने लगें तो क्या होगा। यहाँ संख्या महत्त्वपूर्ण नहीं है, महत्व है उनकी माँग के औचित्य का और उसके पीछे की भावनाओं और अपेक्षाओं का, जिन्हें स्वातंत्र्य संग्राम और संविधान ने संचारित किया तथा हर आम चुनाव के आश्वासनों ने जिन्हें आगे बढ़ाया। जनता की कामना स्वच्छ एवं सक्षम सुशासन की है, वैसे तो कुछ लोग यह कहते हैं कि भारत का संविधान भी तो बड़ी सीमित वोट देनेवालों के बूते पर बना। उस समय 'रेस्ट्रिकटेड फ्रैंचाइज' थी और एक वर्ग विशेष के लोगों ने उसे बनाया। वह भद्र या अभिजात वर्ग का संविधान है। पर आज जनसाधारण उसको नकारना नहीं चाहता बल्कि चाहता है कि सही मायनों में संविधान के अनुसार पूरी राज्य व्यवस्था चले। जो कदम सरकार अन्ना के दबाव में उठा रही है, काश स्वत: पहले ही उठा लिया होता तो कोई उथल-पुथल नहीं होती। राजनेताओं और जनसाधारण के बीच अविश्वास की खाई गहरी व चौड़ी हो गई है और उसको पाटना आवश्यक है। हम सहभागी लोकतंत्र की बात करते हैं, पर जनसाधारण के लिए वह केवल मौखिक विलास अथवा 'लफ्फाजी' है। वह अनुभव करता है राजनेताओं के व्यवहार को देखकर कि उसे धोखा दिया जा रहा है। वे स्वयं एक शोषण व्यवस्था के सृजक और लाभ उठानेवाले हैं। अतएव यह भी आक्षेप लगाना कि लोकतंत्रात्मक राजनीति और लोकतांत्रिक प्रणाली को अन्ना के कारण आए जन-उभार ने तार-तार कर दिया है, जनता की आँखों में वे हीन समझे जा रहे हैं, यह गलत है। दूरदृष्टि से हम देखें तो वह प्रजातंत्र के भविष्य के लिए एक खतरा है। भ्रष्ट राजनीतिक आचरण ही आज प्रजातंत्र के भविष्य के लिए सबसे बड़ा खतरा है। राजनीति में अपना हित ही हो, यह केवल इसलिए नहीं है। विधायकों और सांसदों तथा राजनेताओं की गरिमा उनके आचरण पर निर्भर होती है। एक मछली पूरे तालाब को गंदा करती है। जो सांसद भले और अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं, उनके साथियों की कालिख उन पर भी पड़ जाती है, यह दुःख का कारण है। अन्ना टीम तथा रामलीला मैदान में आए कुछ और व्यक्तियों ने अपशब्द इस्तेमाल किए, कुछ अभद्र व्यवहार किया, उसकी हम तीव्र भर्त्सना करते हैं। जनसमूह के उन्माद में तो और अधिक संतुलन और सतर्कता की आवश्यकता होती है। सांसदों के विशेषाधिकार के प्रश्न उठाए गए हैं। यह केवल विवाद को ही आगे बढ़ाएगा। अच्छा होता, यदि सांसदों की गरिमा की दृष्टि से नोटिस आदि जारी किए जाते। कुछ विवादास्पद प्रकरणों की अनदेखी करना ही सार्थक बुद्धिमानी होती है। हमें भी विशेषाधिकार समिति के सदस्य होने का अवसर मिला है। हमारे वरिष्ठ सहयोगी सदैव प्रयास करते थे कि किसी विवाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को तूल न दिया जाए, वही उपयुक्त है। पर यह अपनी सोच पर निर्भर करता है। सरकार और सरकारी पक्ष के मित्रों ने वैसे भी अन्ना के इस अभियान के विषय में बहुत सी भूलें कीं, जिनके बारे में उन्हें स्वयं पश्चात्ताप है। जो व्यक्तिगत आरोप अन्ना पर लगाए, उन्हें वापस लेना पड़ा। पर भी कुछ लोग, जो सत्तारूढ़ दल के बड़े पदाधिकारी माने जाते हैं, वे गाहे-बगाहे भी कुछ-न-कुछ कीचड़ उछालने से बाज नहीं आते और फिर मुकर भी जाते हैं। अन्ना के समर्थकों के पास पैसा कहाँ से आ रहा है और कौन उनकी मदद कर रहे हैं, ये सवाल उठाए जा रहे हैं। समुचित उत्तर मिलने पर चुप भी हो जाते हैं। इस विषय में तो सरकार को सदैव ही चौकन्ना रहना चाहिए। किंतु अमेरिका और सी.आई.ए. अन्ना के अभियान के पीछे हैं, यह जब एक पदाधिकारी ने कहा तो वह कथन जग-हँसाई का कारण बन गया। अमेरिकी अधिकारी ने तो नकारा ही, सरकार के अमेरिका से अच्छे संबंध बनाने के प्रयास तो जनता के सामने हैं। आणविक अनुबंध और उसके पारित करने की कोशिश के पीछे कैश फॉर वोट वाला मामला लोग भूले नहीं हैं। सी.आई.ए. से खुफिया तंत्र के संबंध स्वाभाविक हैं और अब तो हाई कोर्ट के सामने ७ सितंबर के आतंकी विस्फोट में भी अखबारों के अनुसार सी.आई.ए. की सहायता अपराधियों को खोजने में ली जा रही है। कुछ मामलों में मुँह खोलने के पहले कुछ सूझ-बूझ का इस्तेमाल आवश्यक है।

अन्ना ने जन लोकपाल आंदोलन को अभियान की संज्ञा दी है। उसको आंदोलन नहीं कहा है। यह इस कारण कि उसके पीछे कोई निश्चित विचारधारा नहीं है, कोई आइडियोलॉजी नहीं है। आगे की क्या कल्पना है, उसके बारे में कुछ स्पष्टता नहीं है। वैसे अन्ना स्वयं कहते हैं, वह गांधीजी नहीं हैं। वह जयप्रकाश भी नहीं हैं। वह सीधे-सादे आदमी हैं, जिन्होंने जागृति और सामाजिक सुधार का वातावरण अपने गाँव में पैदा किया। वह एक मुद्दा लेकर चले जन लोकपाल का, उनके अभियान में भाग लेनेवालों में बहुतों को उसके बारे में कोई विशेष जानकारी नहीं थी, पर लोग जुड़ते गए उनकी सादगी और त्याग की भावना के कारण। देश में व्याप्त है कदाचार और भ्रष्टाचार के उन्मूलन के प्रयास के लिए अन्ना हजारे आज एक पर्याय बन गए है। इसी आकर्षण ने उनके अभियान को देशव्यापी बना दिया। उसके महत्त्व को कम करने की सरकारी पक्ष ने तरह-तरह से कोशिशें कीं। सिब्बल ने तो शुरू में ही उनके फंडिंग का सवाल उठाया। यह कहा जा रहा है कि अनशन भावनात्मक अनुचित दबाव है, गांधीजी सत्याग्रह अपनों के खिलाफ नहीं करते, उसका औचित्य विदेशी शासन में था। यह सब आलोचक भुलाने की कोशिश करते हैं कि सत्याग्रह वे आवश्यकता या प्रासंगिकता मानते, जहाँ वे समझते कोई कार्य न्याय के विपरीत हो रहा है। भारत सरकार के पाकिस्तान सरकार को ५० करोड़ रुपए न देने के निर्णय को उन्होंने अनुचित माना और अपनों के खिलाफ ही अनशन किया। आपातकाल के पहले तीन दिन के मोरारजी के अनशन के बाद इंदिरा गांधी ने गुजरात की सरकार को बरखास्त कर दिया था। यह सरकार का दायित्व है कि वह जनभावनाओं को भाँपती रहे और सही तौर पर आकलन कर उसको दिशा प्रदान करे। पर यह तो सही गति और नीयत के बगैर नहीं किया जा सकता है। यह तभी संभव है, जब सरकार के प्रति वितृष्णा के स्थान पर जनता में विश्वास का रुख हो।

मीडिया की भूमिका की भी विशद चर्चा हो रही है। कुछ लोग और सरकार मीडिया पर तरह-तरह के दोषारोपण कर रहे हैं। मीडिया ने सब दिखाया, जो हो रहा था। हो सकता है कि मीडिया कर्मियों को भी जन-भावनाओं से सहानुभूति रही हो, पर यह कहना कि मीडिया सरकार का पक्ष ठीक से नहीं रख रहा था, सही नहीं है। बहुत से एंकर नए हैं। अनुभव के अभाव में कुछ इधर-उधर की बात कह जाते हैं। ऐसा हम देखते हैं, कभी-कभी वे बचकाने प्रश्न किसी भी आपराधिक घटना के तुरंत बाद करने लगते हैं, यह दूसरी बात है। सरकार को अपना दृष्टिकोण रखने का पूरा मौका अधिकतर मिलता रहा है। यह दूसरी बात है कि विश्वासहीनता के कारण जनसाधारण ने ही सरकारी पक्ष या दृष्टिकोण को अनदेखा कर दिया हो। उसके लिए मीडिया को जिम्मेदार ठहराना न्यायोचित नहीं होगा। यदि अभियान चलता रहता है, उसमें निरंतरता है तो मीडिया उसको दिखाएगा ही और अपनी टिप्पणी भी करेगा। निष्पक्षता, निडरता और संतुलन की बाध्यताओं की ओर मीडिया को भी ध्यान रखना जरूरी है; किंतु कुछ बुद्धिवादियों और संसद् के सदस्यों की मीडिया द्वारा खिल्ली उड़ाने की प्रवृत्ति से भी सहमत नहीं हो सकते हैं।

अन्ना की टीम आगे के कार्यक्रम के बारे में परामर्श करने गई उनके गाँव और उसके बारे में कुछ जानकारी आई है, पर जब तक संपूर्ण रूपरेखा न आ जाए और कार्यान्वयन क्या रूप लेगा, उसका पूरा पता न लगे, तब तक प्रतीक्षा करना ही उचित है। दूसरे, जन लोकपाल विधेयक पर स्थायी समिति ने विचार-विमर्श प्रारंभ कर दिया है। क्या नतीजा निकलकर आता है, उसका इंतजार भी जरूरी है। भूमि अधिग्रहण बिल पर भी संबंधित समिति ने विचार करना शुरू कर दिया है। यह भी किसानों के असंतोष का एक बड़ा कारण है, इसमें भ्रष्टाचार बड़े पैमाने पर व्याप्त है। जयराम रमेश का दावा अपने विधेयक के बारे में बहुत बड़ा है। उनका कहना है कि वह समावेशी विधेयक है। जिनकी भूमि ग्रहण की जाएगी, उनके पुनर्स्थापन का प्रावधान है। पर बहुत शंकाएँ भी व्यक्त की गई हैं। एक बात विचित्र सी लगी कि विधेयक पेश करते हुए उन्होंने कांग्रेस के महामंत्री राहुल गांधी का काफी गुणगान किया और उनको इसका श्रेय दिया। वे भूल गए कि इसके पीछे किसानों का संघर्ष है और समाजशास्त्री बहुत अरसे से नए कानून की बात कर रहे हैं; पर हमारे मंत्री भी चाटुकारिता की परंपरा से अपने को अलग करने में अक्षम पाते हैं, यह कैसी विडंबना है!

☐

दिल्ली उच्च न्यायालय के पास आतंकवादी विस्फोट के उपरांत १० सितंबर को प्रधानमंत्री ने राष्ट्रीय एकता परिषद् की बैठक आमंत्रित की। इसमें यू.पी.ए. की अध्यक्षा सोनिया गांधी की बहुचर्चित राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् (एन.ए.सी.) द्वारा तैयार किया गया सांप्रदायिक हिंसा लक्षित निरोधक विधेयक रखा गया तो उसका हर ओर जबरदस्त विरोध हुआ। वैसे इसके हानिकारक परिणामों के विषय में पहले भी समाचारों में चर्चा हो चुकी है। प्रतिपक्ष की नेता सुषमा स्वराज के अनुसार, यह बहुसंख्य और अल्पसंख्यकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बीच की खाई को और चौड़ा करेगा। यह विभेद करनेवाला बिल है, जो नागरिकों को मेजॉरिटी के रूप में बाँटता है। पर्यवेक्षकों का कहना है कि अल्पसंख्यकों में यद्यपि जनजातियों और अनुसूचित जातियों को शामिल किया है, पर बिल का असली मकसद मुसलमानों और ईसाइयों का तुष्टीकरण है, जिनके बारे में कहा जाता है कि उनमें भय व्याप्त है कि उन्हें व्यवस्था से न्याय नहीं मिलता। सरकारी तंत्र ज्यादती करता है। यह विधेयक भेदभाव के आधार पर है, बहुसंख्यक आक्रामक हैं, यह मानकर बनाया गया है।

जनजातियों और अनुसूचित जातियों को तो बिल की असली मंशा छिपाने के लिए ढाल बनाया गया है। इसके अतिरिक्त विल में प्रस्तावित है, उस पर व्यर्थ में बहुत धन का अपव्यय होगा। भाजपा और राजग शासित प्रदेशों मध्य प्रदेश, कर्नाटक, छत्तीसगढ़, हिमाचल, उत्तराखंड ने उसका कड़ा विरोध किया। बिहार, पंजाब और गुजरात का यह भी कहना था कि विधेयक संघीय ढाँचे के ऊपर प्रहार कर रहा है और राज्यों के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप है। इसमें गुजरात, बिहार, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, पंजाब और पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री नहीं आए। तमिलनाडु का कोई प्रतिनिधि नहीं था। ओड़िसा के मुख्यमंत्री नवीन पटनायक ने कहा कि कई प्रावधान राज्यों की स्वायत्तता के लिए घातक हैं। ममता ने कई आपत्तियाँ उठाईं। यहाँ तक कि आंध्र के मुख्यमंत्री ने भी कहा कि ऐसे मामलों में पहले राज्य सरकारों की राय लेनी चाहिए। करीब-करीब सभी के ऐसे ही एतराज थे। सिवाय लालू प्रसाद के किसी अन्य दल का विधेयक को समर्थन प्राप्त नहीं हुआ। समाजवादी पार्टी का कोई प्रतिनिधि नहीं आया। प्रधानमंत्री को कहना पड़ा कि सरकार इस विषय पर ऐसा बिल ही लाएगी, जो संघीय ढाँचे को नुकसान नहीं पहुँचाएगा। यह बैठक तीन साल के बाद बुलाई गई। अब प्रधानमंत्री ने कहा है कि हर साल बुलाई जाएगी, इसलिए कुछ का कहना है कि जनता का ध्यान भ्रष्टाचार से हटाने के लिए ही इस प्रकार का विधेयक सांप्रदायिकता को रोकने के नाम पर लाया गया। बहुत से कानूनवेत्ताओं और कई मुसलिम बुद्धिवादियों ने विचार प्रकट किए हैं कि इस विधेयक की आवश्यकता नहीं है। मौजूदा कानून पर्याप्त हैं। उनका पालन दृढ़ता और निष्पक्षता से होना चाहिए। यह देखना सरकार का कर्तव्य है। क्या गारंटी है कि एक नया बिल सांप्रदायिकता की रोकथाम कर ही लेगा? यदि शासन-तंत्र में कोई कमी है तो उसको प्रशिक्षण और अच्छी निगरानी द्वारा दूर करना चाहिए। पृथकतावादी भावनाओं और शक्तियों को बढ़ावा देनेवाला विधेयक भविष्य के लिए हानिकारक है और यह विवादों को आगे बढ़ाएगा। आशा है, इस मामले में सरकार ठंडे दिमाग से राजनीतिक एजेंडे से ऊपर उठकर पुन: विचार करेगी।

□

हमारा पिछले दिनों नागपुर जाना हुआ। 'नवभारत टाइम्स' के प्रसिद्ध संपादक और विचारक स्व. राजेंद्र माथुर की स्मृति में भाषण देना था। आयोजकों ने विषय निर्धारित किया था—'भ्रष्टाचार के विविध पक्ष और नैतिकता'। जाते समय सोचा, एक दिन वर्धा रुक जाऊँ और सेवाग्राम में गांधीजी की संस्थाओं को भी देखूँ तथा विनोबाजी के आश्रम पौनार में जाऊँ। एक दिन इस प्रकार व्यतीत हुआ व बहुत कुछ सोचने और समझने को मिला।

गांधीजी द्वारा स्थापित राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के विषय में थोड़ी चर्चा करना चाहूँगा। सुधी पाठक उसके कार्यकलापों और प्रकाशनों के बारे में भली-भाँति परिचित हैं। गांधीजी हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार तो चाहते ही थे, ताकि देश एक भाषाई सूत्र में बँधे। साथ-साथ वे यह भी चाहते थे कि देश की क्षेत्रीय भाषाएँ भी विकसित हों और हिंदी तथा उनको समीप लाया जाए, आदान-प्रदान को बढ़ाया जाए। इससे हमारी राष्ट्रीय एकता और मजबूत होगी। उस आदर्श को सामने रखते हुए समिति ने कुछ छोटी पुस्तकें बहुत कम मूल्य पर प्रकाशित की हैं, ताकि उनके द्वारा हिंदी भाषा-भाषी अन्य भाषाओं को सुगमता से समझ सकें। हमें उसका लाभ उठाना चाहिए। वे अन्य भाषाओं से सेतुबंध का काम करेंगी। तभी हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं की समवेत रूप से प्रगति हो सकेगी। समिति की स्थापना १९३६ में हुई। हमने आज तक किसी भी संस्था के आदि संस्थापकों में इतने आदरणीय और प्रतिष्ठित नाम नहीं देखे। उनके संस्थापकों में थे—महात्मा गांधी, पं. जवाहरलाल नेहरू, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, (नेताजी) श्री सुभाषचंद्र बोस, श्री जमनालाल बजाज, बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन, काका कालेलकर, श्री माखनलाल चतुर्वेदी; जहाँ तक स्मरण है, मौलाना आजाद भी थे। संस्था के पास काफी जमीन है। तरह-तरह के कार्यक्रम वहाँ हो रहे हैं। वे कुछ परीक्षाएँ भी देश और विदेश में आयोजित करते हैं। पर आर्थिक साधन बहुत सीमित हैं। महाराष्ट्र सरकार कुछ वित्तीय सहायता नियमित रूप से करती है। संस्था का एक विशद पुस्तकालय है। हिंदी, मराठी, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं की अच्छी पुस्तकें हैं। काफी समय वहाँ लगाया। पुराने पत्र-पत्रिकाएँ भी काफी हैं; पर उनके रखने के लिए जो नए कमरे और अलमारियाँ चाहिए, उनका अभाव है। जो कमरे हैं, वे भी पुराने हो गए हैं। एक नवीन भवन पुस्तकालय के लिए होना चाहिए। ७०-८० वर्ष का ग्रंथों का संकलन है। बहुत शोध की सामग्री वहाँ उपलब्ध है। दुर्लभ पुस्तकें हैं, जो आसानी से आज मिलती नहीं हैं। पुराने प्रकाशक समाप्त हो गए हैं, फिर उन किताबें कौन छापेगा। पता चला, आज भी शोधार्थी अनेक विद्यालयों से वहाँ आते रहते हैं। भारत सरकार ने वर्धा में जो हिंदी विश्वविद्यालय स्थापित किया है, वहाँ के विद्वान् और शोध करनेवाले छात्र उसका पूरा उपयोग करते हैं। यदि दुर्लभ पुस्तकों का रख-रखाव आधुनिक तकनीकी का लाभ उठाते हुए नहीं किया गया तो एक अमूल्य दुर्लभ ग्रंथों का संकलन नष्ट हो सकता है। एक नए भवन, अतिरिक्त स्टाफ तथा अन्य आधुनिक सुविधाओं एवं साधनों के लिए मानव संसाधन मंत्रालय और सांस्कृतिक मंत्रालय सहायता कर सकते हैं। दोनों मंत्रालयों के मंत्रियों और अधिकारियों से निवेदन है कि इस ओर वे शीघ्र कुछ कारवाई करें। अन्य राज्य सरकारों को भी, अन्य दानदाताओं तथा करपोरेट वर्ग को भी इस ओर ध्यान देना चाहिए, ताकि योजनाबद्ध इस ग्रंथालय का संरक्षण और संवर्धन हो सके। यह हमारा पुनीत दायित्व है। माँ सरस्वती के भंडार का संरक्षण और नवीनीकरण करना गांधीजी तथा हमारे अन्य राष्ट्र-पुरुषों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपावली : सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतिमा पर्व

● हजारी प्रसाद द्विवेदी

दीपावली इस साल भी आ गई। हर साल ही आती है। न जाने किस भले आदमी के मन में, किस शुभ मुहूर्त में दीपकों के उत्सव की बात आई थी। पंडितों ने इस पर्व का इतिहास खोजने का प्रयत्न किया है। भक्तों का विश्वास कुछ और है, पंडितों के अनुसंधान कुछ और, मगर उत्सव है पुराना। बुद्धदेव के जीवनकाल में यह उत्तर भारत में अवश्य मनाया जाता था और सबूत मिला है कि गुप्तकाल में भी मनाया जाता था। मतलब यह है कि कम-से-कम ढाई-तीन हजार वर्षों के मानव-चित्त के उमंग और उल्लास की कहानी इस पर्व के साथ जुड़ी है। इतना क्या कम है? दो सौ पीढ़ियों तक जो पर्व मनुष्य के चित्त को आनंद से उद्वेलित कर सका है, यह क्या मामूली पर्व है? राज्यों और राजवंशों के उत्थान-पतन होते रहे, बड़े-बड़े धर्म-संप्रदाय उठते-गिरते रहे, चंचला लक्ष्मी का प्रसाद न जाने कितने लोगों को प्राप्त हुआ और कितने उससे वंचित हो गए, पर दीपावली का उत्सव नहीं रुका। साधारणतः यह विश्वास किया जाता है कि यह लक्ष्मी-पूजा का दिन है। बंगाल में दूसरी परंपरा है। वहाँ इस तिथि को कालीजी की पूजा होती है। लक्ष्मी-पूजा वहाँ आश्विन मास की पूर्णिमा के दिन होती है। उसे 'कौजागर पूर्णिमा' कहते हैं। पर पूजा लक्ष्मी की हो या काली की, दीपावली सर्वत्र जगमगा उठती है। देवी-देवता और उनकी पूजी गौण है, मनुष्य-चित्त का उल्लास प्रधान और उत्सव यह उल्लास का ही है।

वैसे यह पर्व इतने दिनों तक जीता रहा, निश्चय ही दीर्घ इतिहास में ऐसे अवसर आए होंगे, जब शक्तिशाली समझे जानेवाले लोगों को यह उत्सव पसंद नहीं आया होगा। ऐसे अवसरों पर इस उत्सव को बंद कर देने की आज्ञाएँ भी निकली होंगी। 'शकुंतला' नाटक की गवाही के आधार पर कहा जा सकता है कि शक्तिशाली नरपतियों का जब मन उदास हुआ करता था तो वे ऐसे परंपरा प्रचलित उत्सवों को रोक देते थे। राजा दुष्यंत प्रबल प्रतापी राजा थे। प्रिया-वियोग से उनका मन दुःखी हुआ था, तब वसंतोत्सव मनाया जाना बंद कर दिया गया था। आतंक ऐसा कि आम-जैसा अनायास खिल उठनेवाला मौजी वृक्ष भी आधी बौर तक खिलकर रुक गया। किसी को शंका हुई कि शायद कामदेव जैसे महाप्रतापशाली देवता ने भी चकित होकर अध-खिंचे धनुष को समेट लिया हो। 'मुद्राराक्षस' की गवाही पर कहा जा सकता है कि चंद्रगुप्त ने भी कौमुदी-महोत्सव रोक दिया था। शक्तिशाली राजाओं की कुंचित भृकुटियों का शिकार कभी-न-कभी इस उत्सव को भी होना पड़ा होगा, पर हुआ नहीं। मनुष्य की सम्मिलित सामाजिक मंगलेच्छा को दबाना क्या संभव है? दीवाली का उत्सव हर साल यह संदेश दुहरा जाता है—राज्य बदल जाएँगे, राजमुकुट पुराने हो जाएँगे, मठ ढह जाएँगे, संप्रदाय नष्ट हो जाएँगे—बची रहेगी मनुष्य की सामूहिक मंगलेच्छा।

आज से हजारों वर्ष पहले मनुष्य ने निश्चय किया था कि वह दरिद्रता की अवस्था में नहीं रहेगा, वह सामाजिक रूप में समृद्ध रहेगा। एक व्यक्ति नहीं, एक परिवार नहीं, एक जाति भी नहीं, बल्कि समूचा मानव-समाज समृद्धि चाहता है, अदारिद्र्य चाहता है, अमंगल का अंत चाहता है, उल्लास और उमंग चाहता है। दीपावली का उत्सव उसी सामाजिक मंगलेच्छा का दृश्यमान मूर्तरूप है। समूचा समाज आज दरिद्रता के अभिशाप से मुक्ति चाहता है, अभाव के शिकंजे से छूटना चाहता है। दीवाली उसके इस संकल्प की जलती हुई दीपशिखा है। राजवंश आए और गए, बड़े-बड़े समृद्धिशाली नगर बने और बिगड़े, किंतु मनुष्य की वह चिरप्रार्थित आकांक्षा पूरी नहीं हुई। आज भी वह लक्ष्मीजी की पूजा कर रहा है, परंतु पूजा करता है दरिद्रता की पीठ पर बैठकर! आज भी वह महाकालिका की पूजा करता है, आतंक और भय से कंपित हृदय लेकर! कब यह पूजा सफल होगी? कब महामाया का वह प्रसन्न-मुख प्रकट होगा, जिसे देखकर मनुष्य अभाव की मार से बच सकेगा? कब उनका वह रुद्ररूप दिखाई देगा, जिससे वह भय और आतंक को ध्वस्त होते देखेगा? अभी तक तो ऐसा नहीं हो सका है। महामाया की चिन्मय लीला अभी दुर्भाग्य के विकट अट्टहासों से बाधाग्रस्त है। क्यों ऐसा है? क्या कभी मनुष्य की स्वाभाविक मंगलेच्छा पूरी होगी?

चारों ओर जब अभाव का करुण हाहाकार सुनाई दे रहा है, दीपावली अपना मंगल-संदेश लेकर आई है। कई हजार वर्ष पहले मनुष्य ने सामूहिक रूप से समृद्ध होने का संकल्प किया था। वह संकल्प आज भी जी रहा है। क्यों न मनुष्य अब इच्छा के बाद प्रयत्न शुरू करे? सामाजिक मंगलेच्छा को आज तक कोई नहीं दबा सका; वह न मरी, न बूढ़ी हुई; जबकि न जाने कितनी व्यक्तिगत आकांक्षाएँ मरकर भूत हो गईं, कितने व्यक्तिगत प्रयत्न हमेशा के लिए समाप्त हो गए। दीवाली यह संदेश लेकर आ रही है कि व्यक्ति-मनुष्य की इच्छा भी नश्वर है, प्रयत्न भी नश्वर है; परंतु सामाजिक मनुष्य की इच्छा भी अमर है और प्रयत्न भी अमर होगा। अब व्यक्तिगत प्रयत्नों का जमाना लद गया। उसकी पूरी परीक्षा हो चुकी। अब सामाजिक मनुष्य की मंगलेच्छा जिएगी और सामाजिक मनुष्य को सब प्रकार कि अभावों और बंधनों से मुक्त करने की साधना ही जिएगी।

(कुटज से साभार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

विश्व में लक्ष्मी देदीप्यमान रही है

● बनवारी लाल ऊमर वैश्य

वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक लक्ष्मी पूजा का क्रमिक विकास रहा है। ऋग्वेद के श्री सूक्त से लक्ष्मी पूजा की परंपरा आरंभ होती है। यहाँ वैदिकी लक्ष्मी विश्व के देशों में कई रंग-रूप और नाम से प्रचलित हो गई। वैदिकी लक्ष्मी खूब सज-धजकर हाथी, घोड़े, रथ के बीच में होकर चला करती थी। आज भी लोक-परंपरा में विवाह के समय लोग कन्या सरीखी लक्ष्मी के स्वागत में हाथी, घोड़े वाहन का प्रयोग करते हैं।

'अश्व पूर्णां रथ मध्यां हस्तिनाद प्रमोदिनीम्।'

यूनान में अश्वमुखी लक्ष्मी नाइट की पूजा ओलंपिक महोत्सव पर हुआ करती थी। नाइट का मुख घोड़े के समान और शेष शरीर का भाग नारी के समान होता था। पुराणों के अनुसार, लक्ष्मी का जन्म क्षीर सागर से हुआ था। यूनानी मिथक में वीनस समुद्र के फेन से हुई थी। लक्ष्मी धन-धान्य, ऐश्वर्य, उद्योग-वाणिज्य और संपन्नता की अधिष्ठात्री है। वह सुख-शांति और सुखमय दांपत्य जीवन की देवी मानी जाती है। गृहे-गृहे गृहलक्ष्मी का उद्घोष होता है। 'जय लक्ष्मी सी उदित हुई' का परिदृश्य उत्पन्न हो जाता है। सर्वप्रथम राजा मंगल ने लक्ष्मी पूजा का शुभारंभ किया था।

ज्योतिर्लक्ष्मी

सिंधु सभ्यता के उत्खनन में ज्योतिर्लक्ष्मी की मूर्ति मिली थी, जिसे दीप लक्ष्मी कहा जाता है। दीपावली की रात्रि में नारियाँ स्वयं ज्योतिर्लक्ष्मी बनकर भवन, आँगन, मंदिर, कूप, नदी, सरोवर आदि स्थानों में दीप जलाकर 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की कल्पना को साकार करती है। वैसे भी विश्व की नारियाँ विष्णुप्रिया लक्ष्मी की कला मानी जाती हैं। आज भी वे लक्ष्मी की भाँति आभूषण पहनती हैं और लाल रंग की चुनरी-साड़ी पहनकर विष्णुप्रिया बन जाती हैं। लाल कमल लक्ष्मी का प्रिय है—

'नमः कमल वासिन्या नाराण्यै नमो नमः।
कृष्णप्रियायै सततं महालक्ष्मयै नमो नमः॥'

लक्ष्मी अन्नपूर्णा

'अन्नै वै प्राणः'—अन्न ही प्राण है। विश्व खाद्यान्न से ही जीवित है। अन्नपूर्णा लक्ष्मी विश्व का भरण-पोषण करती हैं। पश्चिम बंगाल में इन्हें लक्खी माँ यानी लक्ष्मी माता कहा जाता है। ये धान की अधिष्ठात्री हैं। कार्तिक मास में घरों में धान की फसल आने लगती है। गाँवों में लक्ष्मी माता नवान से धान की पूजा होती है। सीरिन रोम की अन्नपूर्णा देवी है। आधुनिक नारियाँ अन्नपूर्णा का साक्षात् रूप हैं। विवाह मंडप में नववधू पर धान की खील अर्पित की जाती है। सुसराल आने पर यही नववधू अन्नपूर्णा पार्वती बनकर रसोईघर का संचालन कर परिवार को भरपेट भोजन कराती है। लोक परंपरा में उन्हें रसोईघर की लक्ष्मी कहा जाता है। पश्चिमी संस्कृति के चलते अब रसोईघर की कमान नौकरानी के हाथों में आ गई है। वे 'किचन क्वीन' बन बैठी हैं। वाराणसी स्थित अन्नपूर्णा देवी के मंदिर में धान बिखरा रहता है। देवी धन-धान्य की दात्री हैं।

गृहलक्ष्मी

आज भी देश में गृहलक्ष्मी की मान्यता है। 'गृहे-गृहे लक्ष्मी' का बोलबाला है। वैदिक काल में उन्हें गृहराज्ञी, यानी 'घर की रानी' का सम्मान मिला था। लोकोक्ति है—'बिनु घरनी, घर भूत का डेरा', यानी जिन घरों में गृहिणी नहीं होती, उन घरों में भूत डेरा डाल देते हैं। ऐसी स्थिति में गृहलक्ष्मी का गृहागमन शुभ माना जाता है। विवाह धर्म और रीति बन जाता है। नारी-पुरुष बंधन के सूत्र में बँधकर विष्णु-लक्ष्मी हो जाते हैं। गृहलक्ष्मी पाठशाला की स्वाहा है। वह एक पवित्र अग्नि है, जो रोम की 'अग्नि लक्ष्मी' बेस्ता की तरह यज्ञ वैदिका में निरंतर देदीप्यमान है। आज आधुनिकता ने गृहलक्ष्मी के स्वरूप को विकृत किया है। अब वे रात्रि के समय विष्णु-लक्ष्मी की जगह मियाँ-बीबी बनकर बच्चों सहित खाना खाने के लिए होटलों-रेस्तराँ में जाती हैं। इंद्र ने लक्ष्मी की पूजा गृहलक्ष्मी के रूप में इस प्रकार की थी—

'गृहलक्ष्मीश्च गृहिणां गेहे च गृह देवतां।'

क्षीरदा

लक्ष्मी क्षीरसागर में निवास करती हैं, इसलिए वे 'क्षीरदा' हैं। 'क्षीर' का अर्थ 'दूध' होता है, जिस प्रकार लक्ष्मी रूपा नारियाँ अपने बच्चों को स्तनपान के जरिए दूध पिलाकर उन्हें निरोगी और दीर्घायु बनाती हैं, ठीक उसी प्रकार आदि गौ सुरभिलक्ष्मी जन-जन को दूध प्रदान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करती है। आधुनिकता के चलते अब लक्ष्मी अंशभूता नारियाँ अपने बच्चों को स्तनपान न कराकर उन्हें 'बेबी पाउडर' पिलाकर उनकी दीर्घायु होने की कामना करने लगी हैं; जबकि विश्व स्वास्थ्य संगठन ने माता के दूध को अचूक और अमोघ दवा बताया है। देश में गोपालन के जरिए दूध-दही की नदियाँ बहती थीं। गाएँ 'क्षीरदा' और 'क्षीर भवानी' कहलाती थीं। गोपाष्टमी के दिन सुरभि लक्ष्मी की प्रतीक 'गाय' का पूजनोत्सव मनाया जाता है। देश में गो-वध के चलते लक्ष्मी सुरभि की संतानें कम होती जा रही हैं। जिनसे दूध-उत्पादन में न्यूनता आई है। जल के मिश्रण से दूध की गुणवत्ता पर प्रश्नचिह्न लग गए हैं। गाँवों में गोधन की महिमा का गान होता था। दूध उत्पादन के कारण डेनमार्क आज संपन्न देश है। इंद्र ने सुरभि लक्ष्मी की पूजा 'क्षीरदा' (दूध) और 'धनद' (धन) के रूप में कर देश में डेयरी उद्योग के विकास के लिए संदेश दिया है। गोबर से बिजली उत्पादन होता है। गोबर लक्ष्मी की महिमा अपार है। वह कृषि की ऊर्जा है—

'सुरभि: सागरे जाता दक्षिण यज्ञ कामिनी।
यथा माता स्तनान्धानां शिशुनां शैशवे सदा।
तथा त्वं सर्वदा माता सर्वेषां सर्व रूपतः॥
नमो देव्यै महादेव्यै सुरभ्यै चं नमां नमः।
क्षीरदायै धनदायै, बुद्धिदायै नमो नमः।

स्वर्गलक्ष्मी

विष्णुप्रिया लक्ष्मी बैकुंठ में रहती हैं। वहीं महालक्ष्मी लक्ष्मी के रूप में क्षीर सागर में रहती हैं। पुराणों के अनुसार लक्ष्मी समुद्र की पुत्री है। यूरोप की नीरिड और ओसियाड समुद्र की क्षीरदा परी लक्ष्मी हैं। यूनानी मिथक के अनुसार हेरा आकाश देवी है। जुपिटर इंद्र है। इंद्र की पत्नी शची स्वर्ग की लक्ष्मी है। हेरा मयूर के संग रहती है, ताकि धरती पर हरियाली बनी रहे। हेरा को जूनो कहा जाता है, जो ग्राम लक्ष्मी है।

'बैकुण्ठे या महालक्ष्मीर्या लक्ष्मी: क्षीर सागरे।
स्वर्ग लक्ष्मीरिन्द्र गेहे राजलक्ष्मीर्नृपालये।

पुराण कहता है—'इंद्र के भवन में स्वर्ग लक्ष्मी और राजभवन में लक्ष्मी 'राजलक्ष्मी' कहलाती है।

नागलक्ष्मी

अतल, वितल, सुतल, महातल, तलातल, रसातल और पाताल में नागलक्ष्मी निवास करती हैं। इन्हें 'पाताल लक्ष्मी' कहा जाता है। ये रत्नों और मणियों के आभूषणों से सुसज्जित होकर महलों में नृत्य और संगीत का आयोजन करती हैं। इन पातालों में हेमवती नदी बहती है, जिनके सिकता कणों में स्वर्ण पाए जाते हैं। इस प्रकार रत्न, मणि, स्वर्ण के अलंकारों से विभूषित होकर नाग कन्याएँ सदा दीपावली मनाती हैं।

अलक्ष्मी

अलक्ष्मी और लक्ष्मी दोनों सगी बहिनें हैं। दोनों का जन्म समुद्र से हुआ था। अलक्ष्मी को दरिद्र भी कहा जाता है, जो अशांत, कलहप्रिय और नास्तिकों के परिवार में निवास करती हैं। लक्ष्मी धार्मिक, आस्तिक, परोपकारी और सात्त्विक विचार वालों के संग रहती है। काला बाजारी घूस, घोटाला, भ्रष्टाचार और शोषण से अर्जित धन को 'अलक्ष्मी' कहते हैं। आज देश में अलक्ष्मी की चमक-दमक बढ़ती जा रही है। अवैध धन से भवन बनते जा रहे हैं। भारत का कालाधन विदेशी बैंकों की तिजोरी में बंद है। इनके रहते देश में भुखमरी, बेरोजगारी और गरीबी है। ऐसी अलक्ष्मी उसी प्रकार नष्ट हो जाती है, जिस प्रकार वंदना नामक लता जिस वृक्ष पर चढ़ जाती है, वह वृक्ष सूख जाता है। परिश्रम से अर्जित धन को सात्त्विक धन कहते हैं। यही विशुद्ध धन लक्ष्मी है। इनके बदौलत देश-विदेशों में अनेक कुबेर हैं, जिनके धन से समाज-सेवा का उपक्रम संचालित है।

शुभ लक्ष्मी

लक्ष्मी पूजन से ऐश्वर्य, पुत्र, कीर्ति, धन आदि की प्राप्ति होती है। ऐसी शुभ लक्ष्मी की पूजा सर्वप्रथम नारायण ने बैकुंठ में की थी। द्वितीय बार ब्रह्मा और तृतीय बार शंकर ने शुभ महालक्ष्मी की पूजा की थी। इसी क्रम में विष्णु ने क्षीर सागर में, मनु ने पृथ्वी पर और नाग-गंधर्वों ने पाताल में जाकर शुभ लक्ष्मी की उपासना की थी। इस परंपरा में उद्योगपति उद्योग के विकास के लिए धनलक्ष्मी की पूजा करते हैं। कहा गया है 'उद्योगे वसति लक्ष्मी'। आज भी दीपावली के दिन उद्योगपति सोने, चाँदी, हीरे, मोती की धनलक्ष्मी के रूप में पूजा करते हैं। ब्रह्मांड में शुभ लक्ष्मी विराजमान रहती हैं। वे सब की झोली में वैभव और संपदा डाल देती हैं। वे नारियों की भाग्यश्री करती हैं। यह विश्व लक्ष्मीमय है। पृथ्वी की सारी नारियों में देवी लक्ष्मी के रूप में स्थित हो जाती है या 'देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मी रूपेण संस्थिता'। देवी पुराण इसकी घोषणा करती है। लक्ष्मी ने ही जनक के घर सीता के रूप में जन्म लिया था। इस प्रकार नारियों में लक्ष्मीत्व की झलक दिखती है।

'लक्ष्मीश्चापि समुद्भूव क्षितौ परमसुन्दरी।
स्थित्वा जनकराज्य गेहे कन्यास्वरूपिया।'

आज की नारियाँ उस लक्ष्मी की अंशभूता के रूप में जीवंत हैं। वे जीवन के सभी क्षेत्रों में बढ़ रही हैं। वे बुद्धि में सरस्वती शुभ लक्षणों से युक्त लक्ष्मी और पराक्रम के क्षेत्र में दुर्गा हैं। समय आने पर वे दो भुजा से अष्टभुजा वाली हो जाती हैं। शुभदा लक्ष्मी के अनेक रूप-रंग और गुण हैं।

वैदिकी लक्ष्मी

'हिरण्यवर्णां हरिणीं स्वर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्यमयी लक्ष्मीं जातवेदोमावह।'

लक्ष्मी सोने के रंग की है। वह सोने-चाँदी के हार पहनती है। वह चंद्रमुखी है। वह दारिद्र्यहारिणी है। अग्नि देवता मेरे लिए उस लक्ष्मी का आवाहन करें। वैदिकी लक्ष्मी के कारण देश 'सोने की चिड़िया' कहा जाता था। देश धन-धान्य से समृद्ध था। इस प्रकार विश्व में लक्ष्मी देदीप्यमान रही है।

डंकीन गंज, मिरजापुर-२३१००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

काशीवास

● विद्या विंदु सिंह

जन्म : २ जुलाई, १९४५ को गाम जैतपुर, सोनावाँ, फैजाबाद में।

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी., बी.एड., डी.लिट.।

कृतियाँ : कुल ६८ कृतियाँ, जिनमें छह बाल कहानी संग्रह, आठ कविता संग्रह, उन्नीस कृतियाँ लोकसाहित्य पर, पाँच नाटक, आठ बाल साहित्य (नवसाक्षर), तीन लघु उपन्यास, व्याकरण पुस्तकें, आठ संपादित ग्रंथ तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं एवं ग्रंथों में २००० से अधिक रचनाएँ प्रकाशित एवं संकलित।

सम्मान-पुरस्कार : 'सुभद्राकुमारी चौहान स्वर्ण पदक', 'साहित्य महोपाध्याय', 'साहित्यश्री', 'राष्ट्रभाषा रत्न', 'महादेवी वर्मा सम्मान', 'जायसी सम्मान', 'विश्व भारती सम्मान', 'हिंदी गरिमा सम्मान' सहित दर्जनों पुरस्कारों से सम्मानित।

वृंदा के सामने बरतनों का ढेर लगा था। उसके हाथ बरतन मल रहे थे, पर मन था कि विगत की ओर भागता चला जा रहा था।

आज किसी भाग्यवान की पुण्यतिथि थी। पूरे वृद्धाश्रम में सबको भोजन और वस्त्र बाँटा जा रहा था। वह पुण्यात्मा निश्चय ही तृप्ति का अनुभव कर रही होगी। पत्नी, बेटे और बहुएँ मनुहार करके भोजन परस रहे थे। तरह-तरह के पकवान थे—फल, मिठाइयाँ, वस्त्र सभी कुछ। वृंदा को इस आश्रम में आए या यों कहिए कि लाए गए एक वर्ष से ऊपर हो रहा था। वह सड़क के किनारे अचेतावस्था में पड़ी थी। किसी भले मानस की गाड़ी उधर से निकली। उसने अपनी बोतल से पानी छिड़का, चेत आने पर पानी पिलाया, थरमस से चाय पिलाई और उसका घर-ठिकाना पूछा था।

वह क्या बताती? कैसे बताती कि वह तीन देवरों की भाभी है, दो पुत्रों की माँ है और केवल एक व्यक्ति के जाने से अनाथ हो गई है।

जब ब्याहकर आई तो तीनों देवर छोटे-छोटे थे। सास को लकवा मार गया था। उनकी सेवा, ससुर और देवरों की देखभाल अपने अनभ्यस्त हाथों से उसने सँभाल ली थी। विवाह के बाद के छह वर्ष तो ऐसे बीत गए, जैसे अस्पताल की नर्स हो। सास बोल नहीं सकती थीं, उनकी आँखों के इशारे से हर बात वृंदा समझ लेती।

ससुरजी एक दिन खलिहान से लौटे तो तेज बुखार से उनका शरीर तप रहा था। बाहर जबरदस्त लू थी। आते ही पानी माँगा। वृंदा ने कहा, 'दादा! धूप से आए हैं, थोड़ा समथाय लीजिए। हाथ-मुँह धोकर कुछ खाकर तब पानी पीएँ।' पर वे प्यास से छटपटा रहे थे। लोटा भर पानी गटागट पी गए। पानी पीते ही जोर की उबकाई आई और सारा पानी उलट दिया।

वृंदा घबरा गई। तीनों देवर स्कूल गए हुए थे। पति माँ की दवा लेने कस्बे में गए थे। किसी तरह उन्हें पकड़कर बिस्तर पर लिटाया। इलायची मुँह में डाली और भागती हुई पड़ोस में गई। किसी के घर में कोई पुरुष नहीं था।

उसने स्वयं सहारा देकर उन्हें बैलगाड़ी में बिठाया, बैलों को नाधकर चल पड़ी कस्बे के डॉक्टर को दिखाने।

सासजी के पास पड़ोस की एक लड़की को बैठा गई थी। उनका खाना-पानी सबकुछ उसे समझा गई थी।

एक घंटे में बैलगाड़ी डॉक्टर के यहाँ पहुँची। उसने पति के बारे में डॉक्टर से पूछा तो उन्होंने बताया कि वह दवा लेकर अभी-अभी जा चुके हैं।

सुमेर साइकिल से आए थे। पगडंडी के छोटे रास्ते से चले गए थे। इसीलिए रास्ते में भेंट नहीं हुई।

डॉक्टर ने सुई लगाई और ड्रिप चढ़ा दी थी। बताया, 'इन्हें आज रात भर यहीं रखना पड़ेगा।' वृंदा की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे। हाँ, इतनी तसल्ली जरूर थी कि सुमेर घर पहुँचकर माँ को देख लेंगे।

डॉक्टर के बताए अनुसार वह शाम तक बर्फ की थैली ससुर के माथे पर रखती बैठी रह गई थी।

सुमेर माँ की दवा लेकर लौट रहे थे। आधे रास्ते में थे, तभी साइकिल की चेन टूट गई। साइकिल तेज थी। सुमेर खुद को सँभाल नहीं सके और गिर पड़े। सिर के पीछे चोट लगी, ब्रेक का रॉड टूटकर-छटककर उनकी आँख के पास लग गया। खून गिरने लगा। वह समझ नहीं पा रहे थे कि खून आँखों से गिर रहा है कि भौंह की चोट से, पर खून भर जाने से आँख से कुछ भी नहीं दिख रहा था। जेठ की दुपहरिया गनगना रही थी। एक हाथ से आँख दबाए दूसरी से किसी तरह देखते वह आगे बढ़ रहे थे। सिर के पीछे गुम्मा निकल आया था। घर जाएँ कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वापस डॉक्टर के यहाँ, कुछ समझ में नहीं आ रहा था, फिर घर की ओर स्वतः पाँव बढ़ने लगे। कोई साथ होगा तो ठीक रहेगा। वहाँ से घर कस्बे की अपेक्षा अधिक निकट था। साइकिल छोड़कर जाने पर फिर मिलेगी नहीं, उसकी भी चिंता थी, ले जाने लायक हालत नहीं थी। कुछ कदम चलकर पेड़ के नीचे बैठ गए। आस-पास कहीं पानी भी नहीं था। पीने के साथ घाव धोने के लिए भी पानी की जरूरत थी।

बगल में ही नहर थी, पर सूखी पड़ी थी। हताश वह सोच रहे थे। गाँव की जिंदगी भी कितनी कठिन है।

सुमेर का गमछा खून से तर हो गया था। अब उसी से आँख दबाए-दबाए खून का बहना रुक गया था, पर आँखों में चुभन बढ़ गई थी। घर की चिंता अलग सता रही थी। माँ की दवा का समय हो गया था। वृंदा परेशान होगी। बाबू को खलिहान से छुट्टी देनी थी। बिना नहाए-धोए कुछ खाते-पीते नहीं। सोच में डूबे वह दर्द के बावजूद सो गया।

स्कूल से घर लौट रहे उसके छोटे भाई ने साइकिल खड़ी करके पूछा, 'अरे भइया! क्या हो गया आपको?' गमछा खून से सना देखकर वह घबरा गया कि भाई को गहरी चोट लगी है।

तुरंत उन्हें साइकिल पर बैठाकर घर की ओर भागा। घर पहुँचकर पानी से हाथ-मुँह, घाव धुलाकर पानी पिलाया और लिटा दिया।

अब सुमेर कुछ बात करने की स्थिति में हुआ तो उसने पूछा, 'तुम्हारी भौजी कहाँ है?'

विजय बोला, 'भइया! मैं तो आपको और भौजी को ढूँढ़ने ही निकला था। स्कूल से आया तो पता चला कि बाबू की तबीयत बहुत खराब हो गई थी। बिट्टू को माई के पास बैठाकर भौजी बैलगाड़ी पर लादकर खुद ही हाँककर कस्बा ले गईं। हम लोग तो यही समझे कि वहाँ भौजी आपको मिल गई होंगी, पर भइया आपकी साइकिल कहाँ है? आप वहाँ जमीन पर पड़े मिले, कुछ बोल भी नहीं पा रहे थे।'

अब सुमेर को होश आया। बोले, 'साइकिल टूट गई, वहीं पड़ी है। तुम मुझे अपनी साइकिल से लेकर चलो। बाबू को लेकर उसी डॉक्टर के यहाँ गई होगी तुम्हारी भौजी। वह बेचारी समझ रही होगी कि मैं वहाँ मिल जाऊँगा, पर मैं तो छोटे रास्ते से मेंड़-मेंड़ निकल आया था।''

विजय चाहता था कि भाई को भी डॉक्टर को दिखा दे, पर धूप में डबल सवारी और घबराहट, ऊपर से लू भरी धूप में आने से एकदम पस्त हो गया था। छोटे दोनों भाई एक तो छोटे थे, दूसरे माँ के पास भी रहना जरूरी था। भइया की साइकिल भी लानी थी।

वह बिट्टू से बोला था, 'दीदी! आप अपने घर से किसी को हमारे साथ जाने को बोल दीजिए। भइया की साइकिल रास्ते से उठाकर लानी है, नहीं तो कोई उठा ले जाएगा।'

उसे मालूम था कि साइकिल खो गई तो भइया को बहुत दुख होगा। अपनी पढ़ाई के साथ-साथ ट्यूशन पढ़ाकर उन्होंने साइकिल खरीदी थी।

बिट्टू के दोनों भाई खबर सुनते ही अपनी साइकिल लेकर आ गए। सब लोग साथ ही चले। रास्ते में साइकिल पड़ी थी। बिट्टू के छोटे भाई को साइकिल लेकर वापस घर भेज दिया गया।

डॉक्टर के यहाँ सब लोग पहुँचे तो बाहर बैलगाड़ी देखकर तसल्ली हुई। पुराने सधे बैल थे। वृंदा ने जुआ खोलकर पेड़ से बाँध दिया था। बैल भी वहीं बैठे थे। वे भी भूखे-प्यासे बेहाल थे।

सबने पिता की हालत में सुधार देखा तो संतोष हुआ।

सुमेर को भी डॉक्टर ने इंजेक्शन लगाया, घाव साफ कर के टाँके लगाकर पट्टी बाँधी। भौंह के ऊपर गहरा घाव था। आँख बच गई थी। पीछे गुम्मे में भी दवा लगाकर पट्टी बाँध दी।

विजय ने बैलगाड़ी में लटकी बालटी में हैंडपंप से पानी भरकर बैलों को पिलाया।

डॉक्टर ने वृंदा की प्रशंसा करते हुए कहा कि इन्होंने बहुत हिम्मत का काम किया। खुद बैलगाड़ी हाँककर लाईं। समय पर इलाज हो गया तो आपके पिता की जान बच गई। इन्हें डिहाइड्रेशन हो गया था। सुमेर से डॉक्टर बोले, 'तुमको भी आराम की जरूरत है। अब आप लोग जा सकते हैं।' वृंदा ने डॉक्टर से हाथ जोड़कर कहा, 'आप तो हमारे लिए ईश्वर का रूप हैं। हम आपका ऋण कभी नहीं अदा कर पाएँगे।'

डॉक्टर ने वृंदा की प्रशंसा करते हुए कहा कि इन्होंने बहुत हिम्मत का काम किया। खुद बैलगाड़ी हाँककर लाईं। समय पर इलाज हो गया तो आपके पिता की जान बच गई। इन्हें डिहाइड्रेशन हो गया था।

सुमेर से डॉक्टर बोले, 'तुमको भी आराम की जरूरत है। अब आप लोग जा सकते हैं।'

वृंदा ने डॉक्टर से हाथ जोड़कर कहा, 'आप तो हमारे लिए ईश्वर का रूप हैं। हम आपका ऋण कभी नहीं अदा कर पाएँगे।'

सुमेर ने डॉक्टर से दवा आदि का खर्च पूछा, पर इस समय उनका हाथ खाली थी। डॉक्टर ने कहा, 'आपकी पत्नी ने पैसे दे दिए हैं। आप परसों आकर अपनी पट्टी बदलवा लीजिएगा और पिताजी का हाल बताकर दवा ले जाइएगा।'

सब लोग बैलगाड़ी में सवार हो गए। रास्ते में गाड़ी रोककर बैलों को घास का गट्ठर खरीदकर खिलाया गया।

सुमेर अभी तक समझ नहीं पा रहा था कि वृंदा के पास पैसे कहाँ से आए? जरूर किसी से उधार लेकर आई होगी।

पर वृंदा ने बताया, 'जब कहीं से भी उसे सगुन या उपहार में जो रुपया मिलता था, वह सब बचाकर रखती थी। आज वही काम आए।'

पूरे परिवार की श्रद्धा वृंदा पर बढ़ गई थी। पूरा गाँव उसके व्यवहार की सराहना करता था।

सास अपनी अशक्त जिंदगी से ऊब चुकी थी। बहू की सेवा से संतुष्ट थी, पर लगता था कि मेरे कारण इसे बहुत कष्ट है। अब वह अपनी मुक्ति की प्रार्थना करने लगी थीं। ससुर बहुत सीधे थे। पति भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पिता की अनुकृति थे। एक तरह से घर का पूरा संचालन वृंदा के हाथ में था।

भौतिक दृष्टि से परिवार बहुत संपन्न नहीं था, पर घर में सुख-शांति थी, आपसी प्रेम था। वृंदा उस घर की परिधि में सुखी थी और स्वयं को भाग्यशाली मानती थी।

एक दिन सास ने इशारे से पूरे परिवार को पास बुलाया। वृंदा उनका हाथ थामे बैठी थी। सासजी ने बड़े प्रयास से कुछ कहना चाहा। वृंदा समझ गई, माँ कह रही थीं, 'अब तुम्हीं सबकी माँ हो, तुम्हीं को सँभालना है।'

और माँजी ने आँखें मूँद ली थीं।

वृंदा सचमुच ससुर, पति और तीनों देवरों की माँ बन गई थी।

फिर साल भीतर ही जुड़वाँ बेटों की माँ बनी तो माँ की ममता की साकार विग्रह बन गई। ससुरजी जुड़वाँ पोतों के जन्म से निहाल हो उठे।

'भाई, बेटे और पोतों के कंधे पर हुलसता हुआ जाऊँगा।'

उनका कथन सच हो गया। साल भीतर ही वे भी चले गए।

इतनी बड़ी गृहस्थी के साथ दो-दो बच्चों को गर्भ में, फिर बाहर आने पर सँभालना; वह भी बहुत अच्छे ढंग से सँभालना, कर्मठता का अनन्य उदाहरण बन गया। लोग अपनी बहू-बेटियों के सामने उसका आदर्श प्रस्तुत करते।

और यही उदाहरण प्रस्तुत होना वृंदा के जीवन में विष का बीज बो गया।

वृंदा की देवरानियाँ आईं, माँ बनकर वृंदा ने उनकी सौरी सँभाली, बच्चों को सँभाला। बच्चे अपनी माँ से अधिक बड़ी अम्मा की सेवा पाते रहे, पर देवरानियों के मन में काँटा कसकता रहा। 'हमारे बच्चे हमसे अधिक बड़ी अम्मा को मानते हैं।'

फिर एक ही मंडप में, एक ही दिन दो सगी बहनों से अपने जुड़वाँ बेटों का विवाह किया वृंदा और सुमेर ने।

बड़ी बहन, जो बड़ी बहू बनी, अत्यंत सुशील और सौम्य थी और छोटी एकदम विपरीत। जुड़वाँ भाइयों में बड़ा तो क्रोधी निकला और छोटा अत्यंत सहनशील-विवेकी।

यह कैसा संयोग था! वृंदा को अपने छोटे बेटे पर तरस आता। उसका ममतालु मन उसके लिए हुमक-हुमक उठता।

छोटे बेटे पर स्वाभाविक था, वह अधिक ध्यान देने लगीं।

उसकी पत्नी अपने में ही मगन रहती थी। उसे पति की भूख-प्यास की चिंता ही नहीं रहती थी।

माँ यदि उसके लिए कुछ करे तो बड़े बेटे को भी पक्षपात लगे और

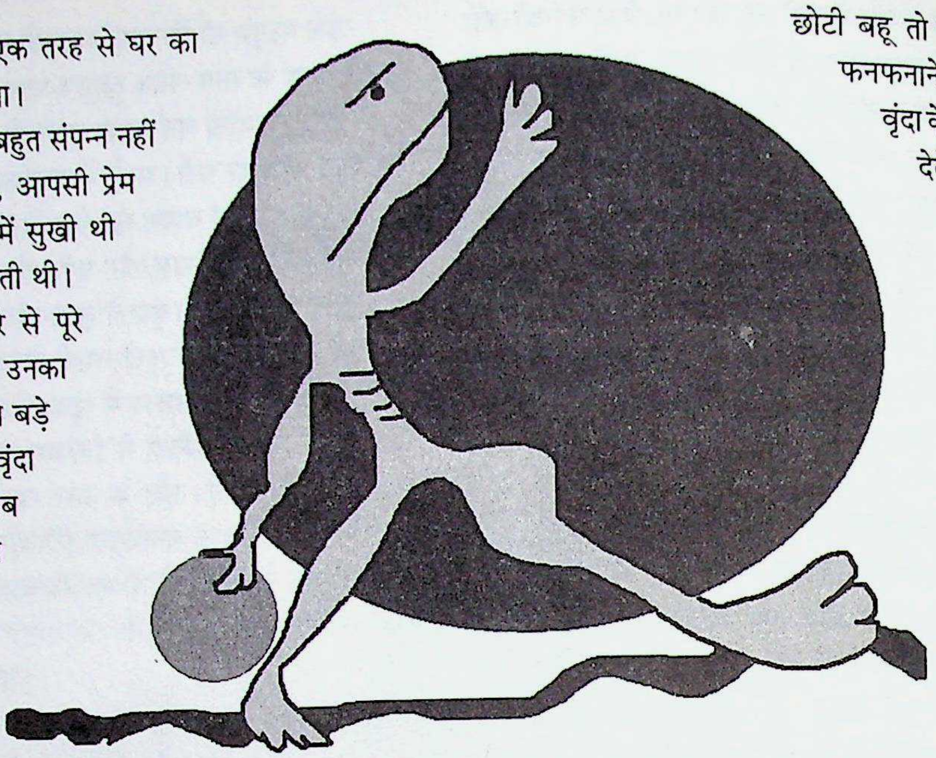

छोटी बहू तो जैसे बिच्छू सी डंक उठाए फनफनाने लगे। उसके शब्दों के डंक वृंदा के मन की शिरा-शिरा झनझना देते; पर वह मौन रहती, ताकि घर में शांति बनी रहे। किंतु उसके मौन को उसकी कमजोरी समझकर वह और बदतमीज होती जा रही थी।

वृंदा ने समझाने के अंदाज में कुछ कहने की कोशिश कभी की भी तो इसलिए, क्योंकि वह इसे अपना समझती। 'गाँव की निरक्षर अनपढ़ औरत मेरी जैसी ग्रेजुएट को सिखाने चली हैं, हूहँ।'

उसका यह 'हूहँ' कितना कड़ुवा होता कि वृंदा का मन दुबारा उसे समझाने का हुआ ही नहीं।

सुमेर तीनों भाइयों और दोनों बेटों के साथ जी-जान से खेती में जुटे रहते थे।

कुछ जमीन सड़क के किनारे खरीद भी ली। वहाँ छोटा बाजार बनने लगा था। इसलिए एक लाइन से दो दुकानें बनवा लीं। कुछ व्यापार भी साथ होगा तो आर्थिक प्रगति होगी। दो छोटे प्लॉट भी खेती पर लोन लेकर खरीद लिये।

बड़ा बेटा मेडिकल का विद्यार्थी था। यहाँ डिस्पेंसरी खोल सकता है। छोटा कंपटीशन की तैयारी कर रहा था। कुशाग्र बुद्धि का था। प्रशासनिक सेवा में आना उसका सपना था। सुमेर भाइयों के बच्चों को भी उनकी रुचि के अनुसार पढ़ने का पूरा अवसर दे रहे थे। पति-पत्नी दोनों ने परिवार को एक माला में जोड़ रखा था।

पर नियति कोई और खेल रच रही थी। सुमेर को जब से सिर में चोट लगी थी, उसे कभी-कभी चक्कर आ जाता था और सिर में तेज दर्द भी होता था, पर वह मेहनत-मशक्कत वाला आदमी कभी इन सब बातों की परवाह नहीं करता था। वृंदा के बार-बार कहने पर भी वह डॉक्टर को दिखाने नहीं गया।

एक दिन सड़क के किनारे कमरा बनवा रहा सुमेर सिर थामकर बैठ गया। वृंदा ने पानी पिलाया, हाथ-मुख धुलाया, पंखी झलने लगी; पर सुमेर दर्द से बेचैन था।

बड़ा बेटा घर आया था। दौड़कर उसे बुलाया। वह चिंतित हो उठा। माँ से बोला, 'माँ! पिताजी को शहर ले जाकर दिखाना होगा।'

वृंदा ने कहा, 'आज ही चलो बेटा!'

और शहर जाकर चेकअप हुआ। डॉक्टर ने रिपोर्ट देखकर पूछा, 'क्या इन्हें कभी सिर में चोट लगी थी?' वृंदा ने 'हाँ' कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेटा गुस्साते हुए बोला, 'माँ! तुमने कभी बताया ही नहीं कि उनहें कभी सिर में चोट लगी थी।'

वृंदा उसके क्रोध से सहम जाती थी। धीरे से बोली, 'कभी इन्होंने किसी तकलीफ की शिकायत नहीं की।'

डॉक्टर ने कहा, 'इन्हें ब्रेन ट्यूमर है। ऑपरेशन करना पड़ेगा।'

वृंदा पर तो जैसे पहाड़ ही टूट पड़ा। अपनी सारी जमा पूँजी खर्च करके अपने सुहाग को बचाने की उसने प्राण-प्रण से कोशिश की। रात-दिन सेवा की, पर ईश्वर को तो उसे दुख की और गहरी आँच में तपाना था।

तीन वर्षों की अनवरत कोशिश, वृंदा की तपस्या सबकुछ को व्यर्थ सिद्ध कर दिया उसके दुर्भाग्य ने।

लोग कहते, 'वृंदा जैसी भली औरत की भगवान् जरूर सुनेंगे।

पर ऐसा नहीं हुआ, लेकिन वृंदा भगवान् को दोष नहीं देती। अपने कर्म को दोष देकर उसने ईश्वर का दिया वैधव्य-दुःख स्वीकार कर लिया। वह तो पति, सास-ससुर सबकी जिम्मेदारी को अपने में केंद्रित करके अपना कर्तव्य निभाती जा रही थी।

पर पति के जाते ही दुनिया कितनी बदल गई कि उसकी आस्था ही टूटने लगी।

देवरों ने पत्नियों के प्रभाव में आकर बँटवारा करा लिया। सुमेर के इलाज के लिए वृंदा ने एक प्लॉट बेच दिया था। उसकी एवज में देवरानियों ने सुमेर के हिस्से की उतनी जमीन को बँटवारे में शामिल करा लिया।

वृंदा टूटती चली गई, इसलिए नहीं कि उसकी संपत्ति कम हुई, बल्कि अपनी ममता की निरर्थकता पर। जब कगार टूटने लगते हैं तो नदी का बहाव यह नहीं देखता कि कहाँ-कहाँ से कितना टूट रहा है। उसका तो काम होता है तोड़ना, ढहाना और बहा ले जाना।

वृंदा तन-मन-धन तीनों से टूट चली थी। ऊपर से परिवार की अशांति ने रही-सही कसर पूरी कर दी। छोटा बेटा पत्नी के कलहपूर्ण आचरण से गुमसुम होता जा रहा था, उसके मन की एकाग्रता भंग होती जा रही थी। वह हताश होता जा रहा था।

वृंदा का मन घर-गृहस्थी से पूरी तरह उचट गया था। सबकी घर-गृहस्थी सँभल गई थी। केवल उसके छोटे बेटे का भविष्य अनिश्चित था। उसके मोह में बँधी वृंदा अपनी अवहेलना, अपमान, अभाव सब कुछ झेलती जा रही थी।

लेकिन उस दिन ऐसा कुछ हुआ कि वृंदा सह नहीं सकी।

छोटी बहू के शब्द उसके कानों में आज भी गरम शीशा डालते रहते हैं, 'यह राँड़ न मरेगी, न मेरे घर में कुछ शुभ होगा। मेरी कोख न हरी होगी, न इनको नौकरी मिलेगी, जब तक इस मनहूस का साया इस घर पर रहेगा।'

'दुनिया की बेवाएँ काशीवास को जाती हैं, पर इसे तो ऐशो-आराम चाहिए। वहाँ चार बार खाने को कहाँ मिलेगा?'

ये सारी बातें वृंदा को सुनाकर कही गई थीं। वह तमाम ऊहापोहों में तीन दिन, तीन रातें उस घर में पड़ी रही। अन्न का एक दाना मुख में डालने की इच्छा न हुई, न किसी ने आकर पूछा।

क्षोभ से मन विह्वल था। पूरा जीवन जिनके लिए होम कर दिया, रात को रात, दिन को दिन नहीं समझा, वही भरा पूरा परिवार है; पर किसी को मेरी सुधि लेने की चिंता नहीं।

बड़ा बेटा परीक्षा देने गया था।

बड़ी बहू मायके में थी, अपनी बीमार माँ की तीमारदारी में। मन हुआ कि बड़ी बहू से अपनी व्यथा बताऊँ, पर वह माँ की बीमारी से स्वयं ही परेशान थी। अपनी छोटी बेटी की करतूत से बीमार माँ भी और व्यथित होगी। इसलिए चुप रह गई।

देवरानियों ने अलग होने के बाद आँगन में दीवारें खड़ी कर ली थीं। ये दीवारें पारदर्शी नहीं थीं। न मन ही पारदर्शी रह गए थे।

वृंदा ने मन में संकल्प ले लिया था—'सच! मुझे अब काशीवास करना ही चाहिए। कब तक ढोती रहूँगी सबकी चिंताओं का भार। अब सब सक्षम हैं। जो नहीं है, उसका मैं ही क्या कर लूँगी? अब तो मेरे पास शरीर के सिवाय कुछ भी नहीं रह गया है।'

वह निकली तो थी काशी जाने के लिए, पर मूर्च्छित होकर कहाँ गिर गई और कौन उसे यहाँ पहुँचा गया, उसका नाम-पता क्या था—वह नहीं जानती, पर उसे उसका रोम-रोम आशीषें देता है।

उसने किसी को अभी तक अपना पता-ठिकाना नहीं बताया था। आश्रम की अधीक्षिका ने बहुत पूछा, 'आप कहीं जाना चाहती हैं, किसी को संदेश देना चाहती हों तो बता दें।'

पर उसने मना कर दिया था। हाँ, इतनी प्रार्थना जरूर की थी कि जब तक मेरे शरीर में सामर्थ्य है, मैं कुछ काम करके यहाँ रहना चाहती हूँ। अपना नाम पूछे जाने पर उसने बताया था—'सेवा'।

सेवा वृद्धाश्रम में बरतन धोती थी, रसोई का काम करती थी, बदले में दो वक्त का भोजन पाती थी और अपनी इच्छानुसार आश्रम भर में घूमकर सबका सुख-दुख जान सकती थी, मदद कर सकती थी। लगा कि प्रभु ने मेरे लिए काशीवास इसी रूप में सुनिश्चित किया है।

सेवा-सेवा नाम की पुकार हो रही थी। उसके लिए भी खाने का पैकेट, कपड़े का पैकेट देने के लिए दिवंगत आत्मा की पुत्रवधू खड़ी थी।

वह हाथ धोकर वहाँ पहुँची।

उस भद्र महिला ने बड़े आदर से उसे भोजन, वस्त्र देकर प्रणाम किया। 'सेवा' ने उसे सादर स्वीकार कर लिया, पर 'वृंदा' को याद था कि आज मेरे पति की पुण्यतिथि है। वह आश्रम के बाहर निकली।

एक विक्षिप्त सी स्त्री जूठे पैकेटों में से जूठन बीनकर खा रही थी। वृंदा ने उसे सहारा देकर उठाया, ले जाकर पानी से नहलाया, उसके चिरकुट कपड़े उतारकर आज मिली हुई नई साड़ी, पेटीकोट, ब्लाउज उसे पहनाया और खाने का पैकेट खोलकर उसके सामने रख दिया। वह दोनों हाथों से खाती हुई खिलखिला रही थी।

वृंदा को संतोष हुआ। अपने पति की पुण्यतिथि पर मैंने भी तर्पण किया है। मेरा काशीवास पूरा हो गया। उसने उस दिन उपवास करके अपार शांति का अनुभव किया।

श्रीवत्स, ४५ गोखले विहार,
लखनऊ-२२६००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द-शब्द झरते अर्थ

● श्रीराम परिहार

जन्म : १६ जनवरी, १९५२ को ग्राम फेफरिया, खंडवा (म.प्र.) में।
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पी-एच.डी.।
कृतित्व : आठ ललित निबंध संग्रह, एक नवगीत, एक संत-साहित्य आदि पुस्तकें प्रकाशित तथा पत्रिका 'अक्षत' का संपादन।
सम्मान-पुरस्कार : 'बागीश्वरी पुरस्कार', 'सृजन सम्मान', 'श्रेष्ठ कला आचार्य सम्मान', 'निर्मल पुरस्कार', 'राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान', 'ईसुरी पुरस्कार', 'दुष्यंत कुमार राष्ट्रीय अलंकरण' सहित अनेक सम्मान प्राप्त।

पुस्तकें सच्ची मित्र हैं। पुस्तकें ज्ञानराशि की धरोहर हैं। पुस्तकें अनुभव की अकूत संपदा की धारक हैं। पुस्तकें शब्द-शब्द में संस्कृति और घटना में इतिहास-पुराण का जीवन-बोध लिये हैं। पुस्तकें मनुष्य की विकास-यात्रा का शब्दांकन हैं। पुस्तकें मूक होकर भी बहुत कुछ बोलती हैं। पुस्तकें वाणी को विलास और विचार को विकास देती हैं। पुस्तकें ज्ञान-साधना की फसल हैं। पुस्तकें मनुष्य की मानसिक भूख की तृप्ति हैं। पुस्तकें पृथ्वी पर ज्ञान का शब्द-रूप आकार हैं।

जब हमने शैशव में आँखें खोली थीं, शेष सृष्टि से हमारा परिचय वाचिक और लिखित पद्धति के पठन-पाठन के माध्यम से ही हुआ था। हमने पुस्तकों के पृष्ठों पर देखते हुए कल्पना की आँखों से हिमालय के हिममंडित शिखरों का सौंदर्य निहार लिया था। समुद्र की अतल गहराई और असीम विस्तार को भाँप लिया था। हमने यह भी जाना कि विद्या मुक्त करती है जड़ता से। यह भी समझा कि ज्ञान मुक्त करता है कर्मपाश से। यह पाया कि अपने ही भीतर अविचल, अस्थिर, सुस्मित कोई बैठा है। कौन है वह? उसे जानने की एक अंत:साधना प्रारंभ हुई और जानते-जानते, स्वयं को समझते-समझते पूरी सृष्टि का रहस्य हथेली पर रखे आँवले की तरह समझ गए।

क्या थे वे लोग? कैसे थे वे पुरखे? कैसे धुनी थे वे अपनी धुन के? कैसे गुणी थे वे अपने गुणों से आपूरित? थे तो वे भी पंच भौतिक तत्त्वों से सृजित। पर अपनी खोज में अपना ही कैसा निस्सीम विस्तार किया कि देश-काल सब ज्ञान के क्षीरसागर में डूब गए और शेष रह गया परम तत्त्व। परम ज्ञान। परमप्रकृति और उसका अनुलोम-विलोम। पठन-पाठन की स्रोतस्विनी का ऐसा प्रवाह कि उसमें जिसने डुबकी लगाई, मनीषी होकर निखर आया।

राष्ट्रनिर्माण का प्रथम सोपान है चरित्रनिर्माण। 'कोई राष्ट्र समृद्ध है' से आज तात्पर्य उसकी वैज्ञानिक और भौतिक प्रगति से है। यह अर्थ अधूरा है। यह दृष्टि ही खंडित है। समृद्धि यदि आंतरिक नहीं है, तो वह अधूरी है। साहित्य-कलाओं के बिना यदि जीवन की पूर्णता और चेतना की चमक पाई जा सकती थी, तो अरस्तू जैसा पश्चिम का भरतमुनि अपने 'पॉलिटिक्स' और 'पोइटिक्स' में अनुकरण से विरेचन और त्रासदी की चर्चा करते समय काव्य-कला को 'जीवन का पुनर्सृजन' नहीं कहता। पठन-पाठन भी प्रकारांतर से जीवन का पुनर्सृजन करता है। वह ज्ञान-चक्षु खोलता है। वह आभ्यंतर को झंकृत करता है। सोए को जगाता है। वह करुणा की प्यास जगाता है। वह बार-बार कहता है कि जीवन यदि सौभाग्य है, तो उसमें करुणा का विस्तार और चेतना का संस्कार परम उपलब्धि है। इसलिए उठो-जागो और अपने लक्ष्य को प्राप्त करो। फ्रांसिस बेकन ने अपने पके अनुभव से कहा, 'Reading make a full man, conference a ready man, and writing an exact man.' पठन एक पूर्ण मनुष्य बनाता है, विमर्श एक तत्पर मनुष्य बनाता है और लेखन एक सटीक मनुष्य बनाता है। पूर्णत्व की अवधारणा मनुष्य को कर्म और संस्कार दोनों ही ध्रुवों की संपन्न धवलता देती है। अधूरापन न ज्ञान का ठीक होता है और न ही जीवन का। जीवन की रिक्तता के भराव में इन्हें पुस्तकों से निकले शब्द-शब्द झरते अर्थ कांतासम्मित बोलते हैं। इन्हें थोड़ा समझ के साथ बैठकर सुनो तो।

हम नहीं कह सकते कबीर जैसे चित्र में दिखाए जा रहे हैं, वास्तविक जीवन में भी कबीर की देह वैसी ही रही हो। तुलसीदास का संतत्व और साधुता उनके कवित्व से मिलकर पाठक के मन पर एक छवि गढ़ते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब सारे लोग, मजदूर से लेकर किसान तक, व्यापारी से लेकर नेता तक और चपरासी से लेकर अधिकारी तक बिना श्रम के रातोरात मालामाल हो जाना चाहते हैं। खेती किसान के पुरुषार्थ को अन्न-संपन्नता के रूप में सम्मानित करती थी। अब खेती व्यापारियों-उद्योगपतियों के व्यापार का आकर्षण हो गई है। वह खरीदी-बिक्री का खेल हो गई है। जमीनों के भाव आसमान छू गए और सड़कों के किनारों की कोई जमीन किसान के पास नहीं बची है। भूमि के व्यापार ने कृषि भूमि को लील लिया है। नगरों और महानगरों में भू-माफिया सरकार को ठेंगा दिखा रहे हैं। न्याय पर उन्हें पूरा भरोसा हो गया है कि चाहे कोई भी कुछ कर ले, न्याय उन्हीं के पक्ष में होगा। सब बिना श्रम किए कुबेर का पद और वैभव पाना चाह रहे हैं।

जैसे चित्रकार तीसरे सत्य के रूप में अपनी ओर से बहुत कुछ मिलाकर प्रस्तुत करता है। सूर को उनके दिव्य सूरदासत्व के साथ किसने देखा? देखा भी हो तो वह छवि पीढ़ी-दर-पीढ़ी वाचिक परंपरा के साथ उनकी चित्र-छवि में कितना अंतर भर चुकी है। प्रत्येक समझदार पाठक पुस्तक के पीछे बैठे हुए कवि-लेखक को भी पढ़ता है। उसकी रचना-सत्त्व से उसके व्यक्ति-सत्य का अनुमान कर अपनी ओर से छवि-अर्थ का निर्माण करता है। जिस तरह एक सच्चा पाठक दो शब्दों या दो वाक्यों या दो पंक्तियों के बीच अर्थ को खोजता और भरता है; उसी तरह आस्थावान पाठक रचना और कवि के बीच में से कवि-व्यक्तित्व को खोजकर, गढ़कर अपने मानस में उसकी छवि निर्मित करता है। कवि शब्द-शब्द में बोलता है। कवि अर्थ-अर्थ में स्वयं को ही खोलता है। कवि रचना की संपूर्णता में अपने व्यक्तित्व को तौलता भी है। भारतीय पाठकीय दृष्टि ने रचना और रचनाकार को समान और सम-सात्त्विक धरातल पर आसीन पाया है। कथनी-करनी की एकरूपता सदैव मानक बनी रही है। हरबर्ट रीड का कथन याद आता है—'पुस्तक पढ़ते समय पुस्तक के पीछे बैठे आदमी को भी पढ़ना चाहिए। प्रत्येक पुस्तक के पीछे उसका कवि या लेखक बैठा रहता है।'

एक अच्छी पुस्तक पढ़ना और एक श्रेष्ठ रचना लिखना समान है। बल्कि परस्पर पूरक है। अच्छी पुस्तक का पाठ रचनात्मक वृत्तिवाले व्यक्ति के भीतर सर्जन की उर्वर शक्ति की समेट करता है। अच्छी पुस्तक प्रकृति-प्रदत्त प्रतिभा को नहरबद्ध भी करती है। नदी के उद्दाम वेग को बाँध से रोककर नहरों में मोड़ा जाता है, जिससे सूखी धरती का चेहरा खिलता है और खेत हँसने-गाने लगते हैं, उसी तरह सर्जन की उदात्त और श्रेष्यकर स्थिति की अंत:प्रेरणा भी कोई अच्छी किताब बन सकती है। किताब अनुभवों की गाड़ी है, जिसमें विचार के बैल जुते होते हैं। सृष्टि में जिसने और जैसे जीव हैं, किताब ने अपने सुई-धागे में सबको गाँठकर, सीकर गुदड़ी बनाई है, जिसे ओढ़ना-बिछाना सुखकर और स्वास्थ्यवर्धक है। कितनी भटकी जिंदगियों को अपेक्षित राह और व्याकुल आत्माओं को अभीप्सित ठौर पुस्तक की कोई पंक्ति, कोई कथा, कोई चरित्र, कोई शब्द दिखाता रहा है। पुस्तकें मनुष्य की ज्ञान-यात्रा की साक्षी, सहयात्री और प्रवक्ता हैं। इनसे प्रेरणा-विभूषित जीवन सबसे अलग, सबसे न्यारा, सबसे प्यारा और सबसे विशिष्ट लगता है। यदि ऐसा मानें—कि अच्छे संस्कार, अच्छी संगत, अच्छी पुस्तकें पढ़ने का सुयोग भी नियति के इशारे से ही प्राप्त होता है, तो भाग्यवादी होने का खतरा है। पर भाग्य तो होता है। उसे कर्म से प्रभावित और बहुत कुछ परिवर्तित किया जा सकता है। आवश्यकता यह है कि वह कर्म पुण्यमय हो। सदेच्छा-वेष्टित हो। उस कर्म में पूजाभाव का अनुष्ठान हो। महाकवि भारवि ने चिंतन-समझ के उच्चाकाश में बैठकर कहा—

विविक्तवर्णा भरणा सुखश्रुति:, प्रसादयन्ति हृदयन्यपि द्विवाम्।
प्रवर्ततेनकृतपुण्यकर्मणाम्, प्रसन्न गम्भीर पदा सरस्वती॥
(किरातार्जुनीयम्)

विविध वर्णों से अलंकृत, सुनने में सुखप्रद, यहाँ तक कि शत्रु के भी हृदय को प्रसन्नता से आप्लावित कर देनेवाली, प्रसन्न एवं गंभीर पदों से अलंकृत वाणी बिना पुण्य-कर्म के प्राप्त नहीं होती।

आज कर्म-संस्कृति का अभाव हो चला है। बिना कर्म किए ही व्यक्ति सबकुछ पा लेना चाहता है। पहले बाजार में बैठकर भी पुरुषार्थ करना पड़ता था, तब अर्थ-संपन्नता आती थी। वह अर्थ-संपन्नता अनुभव और कर्मनिष्ठा के साथ होती थी। अब सारे लोग, मजदूर से लेकर किसान तक, व्यापारी से लेकर नेता तक और चपरासी से लेकर अधिकारी तक बिना श्रम के रातोरात मालामाल हो जाना चाहते हैं। खेती किसान के पुरुषार्थ को अन्न-संपन्नता के रूप में सम्मानित करती थी। अब खेती व्यापारियों-उद्योगपतियों के व्यापार का आकर्षण हो गई है। वह खरीदी-बिक्री का खेल हो गई है। जमीनों के भाव आसमान छू गए और सड़कों के किनारों की कोई जमीन किसान के पास नहीं बची है। भूमि के व्यापार ने कृषि भूमि को लील लिया है। नगरों और महानगरों में भू-माफिया सरकार को ठेंगा दिखा रहे हैं। न्याय पर उन्हें पूरा भरोसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गया है कि चाहे कोई भी कुछ कर ले, न्याय उन्हीं के पक्ष में होगा। सब बिना श्रम किए कुबेर का पद और वैभव पाना चाह रहे हैं। तब ऐसे कलिकाल में पुस्तकों से माथापच्ची कर अपने भोगप्रिय जीवन को पसीने से तरबतर कौन करना चाहेगा? पर क्या पसीने के गीलेपन के बिना देह-राग गाया जा सकता है? यह देह साधना के धाम और मोक्ष के द्वार तक ले जानेवाली है।

कर्म का पाठ सृष्टि के आदि-बिंदु पर मनुष्य को उसकी जैविक-प्रकृति ने पढ़ाया। फिर माँ ने पढ़ाया। पिता ने उस पाठ को कर्म की पंक्तियों में फसल-फसल उगाया। गुरु ने पढ़ाया। गुरु ने सबद के गुह्य से अर्थ के प्रकाश में कर्म के ताप की उज्ज्वल धरती के दर्शन कराए। एक पुस्तक ग्रंथ बनती है। ग्रंथ के रूप में वह जीवन को गाते हुए जीवन में कर्म का आवाहन करती है। वह 'गीता' बन जाती है। उस आवाहन में कर्म के साथ ज्ञान, भक्ति, योग के अनंत अंतरपाठ और पुनर्पाठ चले आते हैं। जीवन का 'मोल' और सृष्टि-व्यापार का 'निमित्त' फलित और अर्थायित हो उठता है। पार्थ जीवन-रथ पर सवार होकर कर्मक्षेत्र के साथ धर्मक्षेत्र को भी सृजन, प्रवाह और अविराम जीवन-प्रक्रिया का अर्थ-संकल्प देने में सक्षम हो जाते हैं। कर्म का पाठ कितना अमित-तोष उपजाता है, जिसमें सारी इच्छाएँ अनिर्वाच्य-विश्राम पाती हैं। मेरे युग के पार्थ को कर्म की गीता किस तरह पढ़ाई जाए? जबकि कर्म का पारायण और पुस्तक का पाठ उतना ही अनिवार्य है, जितना जीवन को सँभालकर जीना।

मनुष्य के पास पुस्तकों के रूप में सभ्यता और संस्कृति का पाठ सुपाठ है। एक समय था कि पठन-पाठन से मनुष्य का नाभि-नाल संबंध था। मनुष्य को प्राकृत से सुसंस्कृत बनाने में पठन-पाठन का आधार-मूल था। यह पठन-पाठन वाचिक और अध्ययन-अध्यापन दोनों से जुड़ा था। आज भी है, लेकिन उद्देश्य बदल गए हैं? पठन-पाठन का आधार लेकर जो संस्कार और जीवनानुभव हमारे पूर्वजों ने प्राप्त कर पीढ़ियों की अमराइयों के रूप में सींचा, वे आज सूख चली हैं। आज पठन-पाठन मतलब पूरता रह गया है। सब और सारी क्रियाओं-कर्मों के बीच अर्थ आ धमका है। विद्यार्थी सिर्फ उतना ही पढ़ना चाहता है, जितने से वह परीक्षा पास हो सके। पढ़ने का संबंध रोजगार मात्र से जुड़ गया है। रोजगार या नौकरी प्राप्त होते ही पठन-पाठन पीछे, बहुत पीछे छूट जाता है। इसीलिए हमारे घरों में फालतू चीजें अधिक हैं। पुस्तकों के लिए तो स्थान है नहीं, है तो अत्यल्प।

पठन-पाठन से दूर होकर हम क्या बनेंगे और कहाँ पहुँचेंगे? जिस पीढ़ी को पठन-पाठन में अपने किशोर-युवा जीवन का सर्वोत्तम लगाना चाहिए, वह हाथ में बातपेटी (मोबाईल), कान में फूहड़ संगीत के तार और पाँवों के नीचे मोटरसाइकिल दबाकर बेतहाशा और बेमतलब सड़कों पर दौड़ रही है। कैसे युग में हम और हमारी संतान जा रही है कि हमारी जातीय स्मृतियाँ, परंपराएँ, सामाजिकताएँ, संबंधों की ऊष्माएँ और भावों की पावनताएँ हमसे विदा हो रही हैं। नालंदा और तक्षशिला जैसे वाचनालयों की न रक्षा कर सके और न ही उनके सरीखा दूसरा बना पाए। पुस्तकें घर से बिदा हुईं और अब तो अच्छी पुस्तकें बड़े पुस्तकालयों में भी मिलना दुर्लभ हैं, क्योंकि उन्हें पढ़ने से किसी को सरोकार नहीं रह गया है।

अति प्रदर्शनप्रियता ठीक नहीं होती। यह एक अंतहीन घुप्प सुरंग है, जिसमें लक्ष्यहीनता के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं लगता है। यह कैसा आत्मघाती नशा है कि पूरी नई पीढ़ी फैशन के पीछे पागल है और उस पागलपन की आँच में तथाकथित पढ़े-लिखे एलिट वर्ग के अधेड़ बूढ़े लोग भी पिघल रहे हैं। यह कैसी पीढ़ी और कैसा युग है कि जिसने अपने महाविद्यालयीन जीवनकाल में 'गोदान' नहीं पढ़ा, 'गुनाहों का देवता' नहीं पढ़ा, और अपने समग्र जीवन के अशेष होते क्षणों तक भी 'रामचरितमानस', 'गीतगोविंद', 'कामायनी', 'कनुप्रिया', 'अंधायुग', 'मैला आँचल', 'उर्वशी' नहीं देख-पढ़ पाए। अपने परंपरा-बोध को समझना तो दूर, उसके प्रति सम्मान प्रकट करने भर की चुटकी भर आस्था भी जिसके पास नहीं बच पाई है। संगीत को आत्मा के द्वारा ईश्वर की प्रार्थना कहा गया है। नृत्य को आंगिक चेष्टाओं की सात्त्विकता के माध्यम से ईश्वर की आराधना माना गया है। यह कौन सा कानफाड़ू संगीत और कमरतोड़ू नृत्य है, जो जीवन में कामेच्छाएं जगाकर विचलन पैदा करता है। ये बेसुध लोग और बेसुध क्रियाएं किस तरह का व्यक्ति, समाज और राष्ट्र बना सकेंगी? कुछ नहीं कर सकते।

पठन-पाठन से दूर होते हम और हमारी लाख टके की जिंदगी बिन मोल बिकने के बाजार में प्रस्तुत है। परिणामतः एक कामचलाऊ भाषा हमारे पास रह गई है। हमारी भाषा से मुहावरे, कहावतें और लोकोक्तियाँ गायब होती जा रही हैं। भाषा का संस्कार एक तरह से हमारे व्यक्तित्व का भी संस्कार करता है। पठन-पाठन से दूर होते जाने के कारण भाषा का संस्कार भी हमारे पास नहीं आ पा रहा है। भाषा केवल वर्णों का समुच्चय और शब्दों-पदों की रचना मात्र नहीं है, वह संस्कृति की संवाहक और संस्कृति की आख्यायिका भी है। पठन-पाठन से जुड़कर ही हम मानव-विकास की सुसंस्कृत परंपरा का विकास कर सकेंगे।

हे मेरे समय देवता! अपने अंतरिक्ष के शून्य में और हवाओं के स्पर्श में मेरे युग के पार्थ के लिए नया किंतु अनुकूल बसंत ज्योतिए। पाँत-पाँत, शब्द-शब्द के झरते संदर्भों में नव-जीवन के नए अर्थ भरिए।

इति शुभम्!

आजाद नगर
खंडवा-४५०००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्तक

● कुँवर जावेद

लेखक परिचय

शिक्षा : बी.ए., एल-एल.बी., एम.ए. (उर्दू साहित्य), बी.जे.(एम.सी.) (गोल्ड मैडलिस्ट), एम.जे.(एम.सी.)।

सम्मान-पुरस्कार : छोटी-बड़ी दर्जनों सामाजिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित एवं अनेक जगह नागरिक अभिनंदन।

विगत सत्ताईस वर्षों से वसुधैव कुटुम्बकम् तथा भाईचारे की खुशबू अपने लेखन, काव्यपाठ व सेमिनारों के माध्यम से देश-विदेश में फैलाने का काम।

: एक :

निहत्थे लोग भी जंगल में शाम करते हैं,
तो गाय-बैल के घर शेर काम करते हैं।
हमारे देश की संस्कृति को पढ़े तो कोई,
कि मोर साँपों को झुककर सलाम करते हैं।

: दो :

गिजाएँ खाते हैं यह ए.सी. होटलों में और,
सड़क पै भूखे की नंगे की बात करते हैं।
मजाक देखिए इससे ज्यादा क्या होगा,
दुरंगे लोग तिरंगे की बात करते हैं।

: तीन :

कागजी फूलों में खुशबू तो नहीं होती है,
इत्र उन पर भी छिड़क दो तो महक जाते हैं।
तुम अगर कीमती हीरा हो तो रातों में मिलो,
धूप में काँच के टुकड़े भी चमक जाते हैं।

: चार :

वह लोग साहिबे कुरआन हो नहीं सकते,
किसी भी धर्म की पहचान हो नहीं सकते।
जो उग्रवाद को यारो जिहाद कहते हैं,
वह और कुछ हों मुसलमान हो नहीं सकते।

: पाँच :

जिंदगी की यह कहानी नहीं बदल सकती,
इक कहानी है यह सच्ची नहीं बदल सकती।
वास्ता धर्म का अब मुझको न दो ऐ यारो,
मैं बदल सकता हूँ मिट्टी नहीं बदल सकती।

: छह :

यह सच है दोस्तो सरकारी जिम्मेदारियाँ सब,
निभाई जाती नहीं हैं बताई जाती हैं।
हमारे देश में यह होता आया है यारो,
सजाएँ दी नहीं जाती, सुनाई जाती हैं।

: सात :

किसी के जाने से किस्से नहीं बदल जाते,
तो सूर्य ढलने से साये नहीं बदल जाते।
सुनो तो मिट्टी की खुशबुएँ कह रही हैं कुछ,
जगह बदलने से पुरखे नहीं बदल जाते।

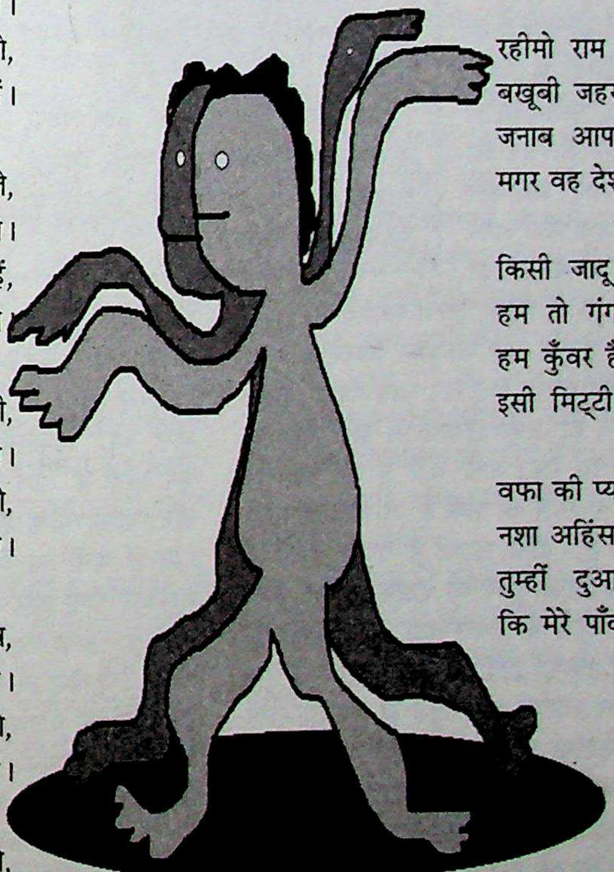

: आठ :

हमारे देश की कश्ती के माझियों को कुँवर,
भँवर तो मिलते हैं साहिल कभी नहीं मिलते।
किसी भी जाँच की तह में उतरके भी इनको,
सुराग मिलते हैं कातिल कभी नहीं मिलते।

: नौ :

वफा की प्यार की सरगम नहीं समझता है,
किसी भी देश का परचम नहीं समझता है।
है कौन हिंदू मुसलमान कौन, सिख है क्या,
यह हम समझते हैं यह बम नहीं समझता है।

: दस :

रहीमो राम को रावन को भी समझता है,
बखूबी जहर को चंदन को भी समझता है।
जनाब आपका जावेद है तो मुसलिम ही,
मगर वह देश की धड़कन को भी समझता है।

: ग्यारह :

किसी जादू किसी मंतर से नहीं आए हैं,
हम तो गंगा हैं समंदर से नहीं आए हैं।
हम कुँवर हैं कोई जावेद हैं जो भी लेकिन,
इसी मिट्टी के हैं बाहर से नहीं आए हैं।

: बारह :

वफा की प्यार की माला बिखर न पाए कभी,
नशा अहिंसा का चढ़कर उतर न पाए कभी।
तुम्हीं दुआएँ दो आशीर्वाद दो मुझको,
कि मेरे पाँव से चींटी भी मर न पाए कभी।

पो.बॉ. ३२, जी.पी.ओ.
नयपुरा, कोटा-३२४००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

पिता-पुत्र

● रामदेव शुक्ल

जन्म : ५ जनवरी, १९३८ को शाहपुर, कुशीनगर में।

शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.; तिब्बती भाषा में डिप्लोमा।

कृतित्व : पाँच कहानी-संग्रह, दस उपन्यास, नौ संपादित पुस्तकें। अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में स्तंभ-लेखन एवं रचनाएँ प्रकाशित।

सम्मान : तिब्बती भाषा स्वर्ण पदक, गोरखपुर विश्वविद्यालय स्वर्ण पदक, 'कथाश्री सम्मान', 'भारतेंदु सम्मान' तथा भोजपुरी का सर्वश्रेष्ठ 'सेतु सम्मान'।

पार्क का फाटक तो बंद है। रोज इस समय तक खुल जाता था। आज देर क्यों हो रही है? तभी शर्माजी का खयाल दूसरी ओर चला गया। फाटक खुलते ही उसमें घुसने के लिए उनसे भी पहले आ जानेवाले लोग भी नहीं दिख रहे। उन्हें क्या हो गया? कहाँ रह गए सब-के-सब! अचरज में भरे शर्माजी का ध्यान इस बात की ओर गया कि अभी सूर्योदय के लक्षण भी नहीं दिखाई दे रहे हैं, तो क्या वे समय से पहले ही आ गए? घड़ी देखने की कोशिश की तो कलाई सूनी। अपनी बेसुधी पर हैरान रह गए। हैरानी में कल शाम की घटना ऐसे कौंध गई, जैसे भादों की घटा में बिजली कौंध जाती है। आसमान की पूरब दिशा से लगा, अभी सूर्योदय में देर है।

शर्माजी रेलवे की पैंतीस वर्ष की नौकरी के बाद रिटायर होकर अपने सहकर्मियों से मिली मर्मस्पर्शी विदाई के नशे में झूमते, फूलमाला से लदे, हाथ में ऑफिस से मिली गहरे नीले रंग की फाइल को छाती के पास रखे घर आए। साइकिल से न आने की बात गब्बूलाल ने एक दिन पहले ही बता दी थी। कहा था, 'रिक्शे पर बैठकर आ जाइएगा। शाम को मैं अपने स्कूटर से घर पहुँचा दूँगा।' शर्माजी के घर के बाहर स्कूटर रोककर गब्बूलाल ने उनका हाथ पकड़कर उतरने में मदद की। शर्माजी कहना चाह रहे थे कि ठहरो, एक कप चाय पीकर जाना। मुँह से बात निकलती, उससे पहले ही अपने दरवाजे पर दोनों बेटों को साथ-साथ खड़ा देखकर चकित रह गए। दोनों बेटों में हर बात पर अनबन रहती है। दोनों की उम्र में दो साल का फर्क है, लेकिन कदकाठी एक ही है। कई लोग पूछ बैठते हैं, 'दोनों जुड़वाँ हैं क्या?' दोनों में बाहर-भीतर सबकुछ एक जैसा है। एक-दूसरे को देखकर गुर्राना दोनों की पहली पसंद। शर्मा और उनकी पत्नी की सबसे बड़ी तमन्ना यही रही है कि दोनों बेटे किसी बात पर तो एकमत होते। अचानक दोनों को एक साथ, एक ही मुद्रा में खड़ा देखकर शर्माजी इतने खुश हो गए कि उन्हें यह भी याद नहीं रह गया कि गब्बूलाल कब उन्हें नमस्ते करके स्कूटर स्टार्ट करके लौट गया। एक बार अपनी आँखों देख रहे दृश्य को बुद्धि से प्रमाणित करने के बाद वे आगे बढ़े। बेटों के चेहरे एक जैसे। उनकी आँखों के भाव एक जैसे। खड़े होने का ढब एक जैसा। इस अनूठी एकता पर रीझकर शर्माजी उनकी ओर बढ़े। दो कदम के फासले को दोनों बेटों ने एक ही कदम में पार कर लिया। दोनों के हाथ पिता के हाथ की फाइल के लिए साथ-साथ बढ़े। शर्माजी ने फाइल पर अपनी पकड़ ढीली कर दी। दोनों बेटे उसे एक साथ खोलने की कोशिश करने लगे। शर्माजी ने दोनों के कंधों पर हाथ रखा और भीतर की ओर चलने लगे। दोनों ने एक साथ कहा, 'यहीं बैठते हैं,' और देहरी पर बैठ गए। फाइल खुल गई। रेलवे में लंबी अवधि की सेवा के लिए प्रशंसा का पत्र था। शर्माजी को लगा, दोनों बेटे उसे पढ़ेंगे। उसे एक ओर रखकर दोनों ने एक दूसरा कागज उठाया। उस पर पी.एफ. का हिसाब था। सरसरी निगाह उस पर डालकर दोनों ने उसे भी नीचे सरका दिया। फाइल खुली थी। उसमें और कोई कागज था नहीं। झुँझलाहट दोनों की आँखों में उभरी और सवाल बनकर फूट पड़ी, 'चेक कहाँ है?' शर्माजी ने फाइल अपने हाथ में ले ली। उसमें अंदर की ओर बने पॉकेट के भीतर हाथ डालकर चेक निकाल लिया। उनके हाथ से चेक झपटने के लिए बढ़े हाथों से ऊपर अपना हाथ उठाकर शर्माजी बोले, 'दोनों खींचोगे तो फट जाएगा। मैं दिखा देता हूँ। यह देखो, बाईस लाख का चेक है। कल बैंक में जमा करूँगा। मिल बैठकर सोचा जाएगा कि आगे तुम दोनों के लिए कौन सा बिजनेस किया जा सकता है।' उनकी बात पूरी होते ही दोनों एक साथ बोल पड़े, 'बिजनेस-फिजनेस की ऐसी की तैसी। आप कल दस बजे हम लोगों के साथ बैंक चलेंगे, वहीं रुपए निकालेंगे और हम लोगों के नाम ग्यारह ग्यारह लाख जमा कर देंगे।' शर्माजी की निगाह दोनों के पीछे हाथ में पानी का गिलास लेकर खड़ी उनकी माँ से मिल गई। करुण मुसकान दोनों ओर झलक उठी। बेटों का निर्णय सर आँखों पर। माँ के बोल थे, 'ठीक कह रहे हो तुम लोग। ऐसा ही होगा। कल समय से तैयार होकर इन्हें बैंक ले जाना।' जब तक जगी रहीं, पत्नी हर तरह से पति को राहत देने की कोशिश करती रही। आधी रात को थककर सो गईं। शर्माजी की जबान ही नहीं, समग्र चेतना ही बंद हो गई थी। पल भर भी पलकें बंद न हुईं। अपनी समझ से उठने का समय जानकर शर्माजी नित्य-कर्म संपन्न करके टहलने निकल पड़े थे।

'ऐसे क्यों खड़े हैं शर्माजी? कुछ खो गया है क्या?' अपने कंधे पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मीय स्पर्श के साथ शर्माजी के कान में श्रीधर के प्रश्न बज उठे। अर्धचेतन अवस्था में उनके मुँह से जबाव निकला। 'खो गया है, जीने का अर्थ हो गया है।' श्रीधर कुछ समझ नहीं पाए। अचकचाकर पूछ लिया, 'कोई खास बात? क्या हो गया? भाभी ठीक तो हैं न?'

आधा घंटा लग गया शर्माजी को पिछली शाम की कथा सुनाने में।

श्रीधर कुछ बोलें, उससे पहले ही अमरनाथ बोल पड़े, 'अब आप क्या करेंगे श्रीमान शर्माजी?' शर्माजी और श्रीधर को पता ही नहीं चला, कब उन दोनों के अभिन्न मित्र अमरनाथ आ गए थे। उन्होंने पूरी कथा सुन ली थी। अमरनाथ ने बारी-बारी से दोनों वृद्धों की आँखों में झाँककर देखा। बेंच पर अपने बैठने की जगह बनाते हुए अमरनाथ ने कहा, 'मेरे पास दो मॉडल हैं। इसी शहर के हैं। इसी साल के हैं। दोनों सामने हाजिर करता हूँ। कौन सा मॉडल पसंद आता है, ग्राहक की मरजी।' अमरनाथ नाटकीय अंदाज में मुसकराए।

राजा बाबू शौकीन आदमी ठहरे। बँगले के दो मुख्य द्वार थे। एक के पास भीतर खूब पड़ा गैरेज बनवाया था। उसकी छत पर ड्राइवर के रहने के लिए दो कमरों के सुंदर फ्लैट बनवा दिए थे। उसमें सारी मध्यवर्गीय सुविधाएँ जुटा दी गई थीं। ड्राइवर उसमें अकेले रहता था। उसका परिवार गाँव में था। एक दिन तीनों बेटों की ओर से पापा को प्रस्ताव मिला, 'गैरेजवाले फ्लैट में ए.सी. लगवा लिया जाए। वह सब तरह से आरामदेह हो जाएगा।'

पहला मॉडल मेरे पड़ोस का है। इकलौते पुत्र को अपनी औकात से बाहर जाकर पोसते पिता को उसे पढ़ाने-लिखाने में सफलता नहीं मिली। बाप के पैसों से शर्ट-पैंट की तरह डिग्रियाँ खरीदता वह एम.ए. हो गया। उसी की पसंद और फरमाइश पर शादी भी हो गई। पिता भी बन गया। जीविका के विषय में सोचने की जरूरत थी ही नहीं। बाप की कमाई के अपने ठाट होते हैं। पी.एफ. की रकम बैंक में जमा होकर मासिक आय अर्थात् पेंशन में जुटकर लगभग पिछले वेतन के बराबर धन देने लगी। एक दिन पुत्र ने पिता के सामने बेलौस प्रस्ताव रख दिया, 'मैं आपका इकलौता पुत्र ठहरा। आपके बाद इस सारी जायदाद पर मेरा ही अधिकार होगा। मुझे धनवान देखकर आप कितने खुश होते, अगर ऐसा आपके जीवन-काल में हो जाता। मरने के बाद यह खुशी आपको नहीं मिल सकती। मैं चाहता हूँ कि जीते जी पूरी जायदाद की रजिस्ट्री मेरे नाम करके आप वह खुशी हासिल कर लें।' पिता ने अगले दिन अपनी सारी जायदाद पुत्र के नाम कर दी। स्वयं पत्नी के साथ गाँव में दलित बच्चों के लिए स्कूल खोल दिया। दोनों का बुढ़ापा चैन से कट रहा है। कहकर अमरनाथ ने अपने दोनों हाथ फैला दिए। 'एक मॉडल यह रहा।' उन्होंने आगे कहा, 'दूसरा कुछ ज्यादा मसालेदार है।'

अपने ही शहर के सबसे महँगे इलाके का मॉडल है। करोड़ों की संपत्ति ईमानदारी और मेहनत के बल पर अर्जित करनेवाले राजा बाबू के तीन बेटे उन्हीं के समान प्रतापी हुए। एक आई.ए.एस., एक चार्टर्ड एकाउंटेंट और एक धनकुबेर डॉक्टर। राजा बाबू की पत्नी उनसे पहले ही स्वर्ग सिधार गईं। राजा बाबू पत्नी के बाद उन पर खर्च होनेवाला धन गरीबों पर खर्च करने लगे। उनके ठाटबाट में कोई कमी न थी। दो बेटे इसी शहर में उन्हीं के साथ सपरिवार रहकर अपना वैभव बढ़ा रहे थे। आई.ए.एस. साहब एकाकी वृद्ध पिता के बुढ़ापे की बात पर इसी शहर में डेपुटेशन पर आ गए। उनको सरकारी बँगला मिल गया। तीनों बेटे बहुत व्यस्त। जब कभी मिलते, एक-दूसरे से कहते, 'पापा को किसी तरह की तकलीफ नहीं होनी चाहिए।' सहमति में सबके सिर हिलते।

राजा बाबू शौकीन आदमी ठहरे। बँगले के दो मुख्य द्वार थे। एक के पास भीतर खूब पड़ा गैरेज बनवाया था। उसकी छत पर ड्राइवर के रहने के लिए दो कमरों के सुंदर फ्लैट बनवा दिए थे। उसमें सारी मध्यवर्गीय सुविधाएँ जुटा दी गई थीं। ड्राइवर उसमें अकेले रहता था। उसका परिवार गाँव में था। एक दिन तीनों बेटों की ओर से पापा को प्रस्ताव मिला, 'गैरेजवाले फ्लैट में ए.सी. लगवा लिया जाए। वह सब तरह से आरामदेह हो जाएगा।' राजा बाबू खुश होकर बोले, 'तब क्या होगा?' प्रस्ताव आगे बढ़ा, 'आपको अकेले रहना है। उसी में शिफ्ट हो जाइए।' राजा बाबू खुश होकर बोले, 'तब क्या होगा?' प्रस्ताव और आगे बढ़ा, 'बँगले को एक विदेशी बैंक एक लाख रुपए महीने किराए पर लेना चाहता है।' राजा बाबू चहक उठे, 'वह कौन सा बैंक है?' बैंक का नाम बता दिया गया।

अगले हफ्ते राजा बाबू ने रात के भोजन के बाद तीनों बेटों को एक-एक लिफाफा पकड़ाया। बोले, 'तुम लोग मशीन बनकर रुपए कमा रहे हो। कभी आराम नहीं करते। इन लिफाफों में तुम सबके हवाई जहाज के टिकट हैं। खर्च के लिए बैंक ड्राफ्ट भी है। सपरिवार एक हफ्ते के लिए गोवा चले जाओ। मौजमस्ती करके आओ। इस बीच गैरेजवाले फ्लैट में ए.सी. लग जाएगा। मैं भी शिफ्ट हो जाऊँगा। बँगला खाली हो जाएगा।'

गोवा में मस्ती करने के बाद तीनों परिवार लौटे। बँगले के गैरेज वाले फ्लैट में ए.सी. लग गया था। बँगले के बाहर दोनों गेट में ताले लगे थे। नया गेटमैन अदब से खड़ा हो गया। सलाम ठोंककर उसने तीनों को एक-एक लिफाफा पकड़ा दिया। दो में किराए के फ्लैट की चाभियाँ थीं। आई.ए.एस. वाले लिफाफे में छोटा पत्र था। लिखा था—'अपने भाइयों से कह देना, उनके नए फ्लैट में गृहस्थी का पूरा सामान कायदे से लगा दिया गया है। खाने-पीने का सारा सामान भी रखवा दिया गया है। चाभियाँ लेकर अपने-अपने फ्लैट में चले जाएँ। तुम्हारे पास सरकारी बँगला है ही। गैरेज के ऊपरवाले फ्लैट में ए.सी. लग गया है। आखिर ड्राइवर भी आदमी है। मैं लंबी यात्रा पर हूँ। बँगले के गेट तभी खुलेंगे, जब मैं लौटूँगा। —पापा'

अमरनाथ ने मुगलिया सलाम बजाते हुए शर्माजी और श्रीधर से कहा, 'दोनों में से जो मॉडल पसंद आए, ग्राहक की मरजी।'

तीन वृद्ध नई खिली धूप में खुलकर हँस रहे थे, उज्ज्वल धवल हँसी।

शीतलसुयश
राप्ती चौक, आरोग्य मंदिर,
गोरखपुर-२७३००३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

दीवाली, चुनाव और आर्यपुत्र

● पूरन सरमा

भारतीय आर्यपुत्र को इतना बेखबर सोते हुए मैंने पहली बार देखा था। जाकर जगाया और कहा, "अमा यार, क्या घोड़े बेचकर सोए हो?"

करवट बदलकर आँखें मूँदे ही आर्यपुत्र ने कहा, "नहीं, गधे बेचकर।"

"गधे?"

"हाँ गधे, घोड़े बेचने में बहुत ठगा दिया गुरु, अब तो उल्लू बनाने में फायदा है। गधे बने रहो और गधा बनाते रहो, जीवन की तमाम जटिलताएँ हल हो जाती हैं।" यह कहते हुए आर्यपुत्र उठ खड़ा हुआ।

मैंने पूछा, "यार, हमें भी तो बताओ। आखिर तुमने यह बाजी कैसे मारी। जबकि अन्य भारतीय आर्यपुत्र चारों खाने चित्त पड़े हैं। तुमने यह हँसी कैसे प्राप्त कर ली।"

"तुम्हें तो पता है, दीवाली आ गई है।"

"मैं यही तो तुम्हें बताने आया था कि मिठाई के दाम आसमान छू रहे हैं।"

"इस बार मिठाई से मुक्ति मिल गई।"

"वह कैसे?"

"वह ऐसे कि डॉक्टर को पटाकर बीबी को मधुमेह बता दिया और हिदायत दिलवा दी कि यदि उसने मीठा खाया तो उसकी जीवनलीला बीसवीं शताब्दी के पूरा होने से पहले ही खत्म हो जाएगी। वह पूरी सहम गई है और कह रही है कि इस जहर को तो मैं अपने बच्चों को भी नहीं खाने दूँगी।"

"लेकिन आर्यपुत्र, तुम साड़ी से कैसे बचाओगे अपने आपको? यह जगह-जगह जो 'सेल' लग रही है, इनसे तो मेरी आँखों में नींद आने का नाम ही नहीं ले रही।"

"उसका काम हो गया शर्मा।"

"हो गया, यानी पत्नी को तुमने नई साड़ी लाकर दे दी है। उस दिव्यास्त्र का नाम बताओ, जिससे तुम साड़ी मार लाए।"

"मेरा दिव्यास्त्र मेरा बोनस है। उसने इस बार मेरी लाज बचा दी, वरना साड़ी के मामले में पिट जाता। तुम अब यह कहोगे कि बच्चों को पटाखे लाए या नहीं, तो उसके बारे में बता दूँ कि वह भी ले आया हूँ।"

पड़ोसी रामरतन ने इस बार पटाखे की दुकान लगाई है, वह उधार देने को राजी हो गया और तुम तो जानते हो कि मैं 'ऋणे कृत्वा-घृतम् पिवेत' वाली विचारधारा का समर्थक हूँ।" आर्यपुत्र ने मूँछों पर हाथ फेरा तो मैंने सीना थामकर कहा, "हाय बलिहारी जाऊँ तुम पर भारतीय आर्यपुत्र, उस मुए रामरतन से हमको भी तो उधार पटाखे दिलाओ। वह मरदुआ डूबना ही चाहता है तो और दो पत्थर बाँध दो उसके, ताकि ऊपर ही न आए।"

भारतीय आर्यपुत्र ने चालाकी से कहा, "शर्मा, कुछ कह नहीं सकता, माल बिकने को था, रामरतन ने तो दुकान बाप के दबाव में लगाई थी। अत: वह तो माल उधारी पर उठाकर दीवाली का मजा लेना चाहता था। शाम को बात कर बताऊँगा।"

मैंने कहा, "मारो गोली रामरतन को, परंतु भारतीय आर्यपुत्र, ज्यादा मत फूलो। मैं चाहूँ तो तुम्हारी खुशियों पर अभी एक पल में पानी फेर दूँ।"

आर्यपुत्र ने कहा, "इस दीवाली पर तो कोई माई का लाल मुझे खुश होने से नहीं रोक सकता।"

"यदि मैंने तुम्हारे चेहरे की रंगत उड़ा दी तो चाय पिलानी पड़ेगी।"

"अमा यार, क्यों तीस रुपए किलो की चीनी का सत्यानाश करते हो। अभी तो और भी मेहमान आएँगे। इस बार उन्हें मिठाई के स्थान पर चाय तो पी लेने दो।"

जन्म : १४ मार्च, १९५४, सिकंदरा, दौसा (राजस्थान)।

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा।

प्रकाशन : चौदह व्यंग्य-संग्रह, एक उपन्यास 'समय का सच' एवं बाल साहित्य की करीब बीस पुस्तकों का प्रकाशन।

सम्मान-पुरस्कार : राजस्थान साहित्य अकादमी के 'कन्हैयालाल सहल पुरस्कार' के साथ-साथ अनेक बार पुरस्कृत-सम्मानित।

संप्रति : राजस्थान विश्वविद्यालय में सेवारत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''देख लो, यदि चाय पिलाओ तो अभी तुम्हारे आनन पर हवाई जहाज उड़ा दूँ। डरते क्यों हो यार, शर्त में कोई तुम्हारी लाई नई साड़ी तो माँग नहीं रहा।'' मैंने कहा।

भारतीय आर्यपुत्र ने चाय की 'हाँ' भरी तो मैंने कहा, ''हे आर्यपुत्र, इतना मत इतराओ, तुम्हारे अफसर ने चुनाव में तुम्हारी ड्यूटी लगा दी है।''

इतना सुनना था कि आर्यपुत्र के हाथों के तोते उड़ गए, चेहरे का रंग फीका पड़ गया। कातर दृष्टि से मुझे देखकर दबी आवाज में भारतीय आर्यपुत्र मात खाए खिलाड़ी के अंदाज में बोला, ''चुनाव में ड्यूटी!''

''हाँ-हाँ'''चुनाव में ड्यूटी। तुम्हें तो याद होगा, गत आम चुनाव में तुम एक गाँव में पिटते-पिटते बच गए थे। तुम्हें तो यह भी याद होगा कि लौटते समय चुनाव के सामान का ट्रक रास्ते में खराब हो गया था और तुम सारी रात खुले में पड़े ठंड में कुल्फी की तरह जम गए थे तथा घर आकर बिस्तर में ऐसे गिरे थे कि टायफायड पूरे डेढ़ माह में ठीक हुआ था। कहो कैसी रही?'' मैंने कहा।

''शर्मा, तुम मुझे बचाओ। मेरी खुशियों पर पानी फिर गया है। मैं नरक में जाने को तैयार हूँ, लेकिन चुनाव में हरगिज नहीं जाऊँगा। तुम अप्रोच लड़ाकर ड्यूटी कैंसिल करवाओ, शर्मा। यह विपदा कहाँ से आ गिरी है?''

मैं बोला, ''हे आर्यपुत्र! विपदाएँ कहकर नहीं आतीं। तुमने रामरतन से पटाखे उधार दिलाने में चालाकी बरती तो मैंने भी ब्रह्मास्त्र मार दिया।''

''मेरे हनुमान मुझे संजीवनी लाकर दो, वरना छटपटाकर ये प्राण देह का पिंजरा छोड़कर उड़ जाएँगे।' आर्यपुत्र की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई थी। सन्निपात के रोगी की तरह अचेतनावस्था को प्राप्त हो गया था।

मैंने स्थिति को बेकाबू होता देखकर दाँव फेंका, ''बोलो, रामरतन से पटाखे उधार दिलवाओ तो ड्यूटी को निरस्त कराने की कार्यवाही शुरू कर दूँ''

जैसे मछली को पानी मिल गया है, वह प्राणवान होकर बोला, ''शर्मा, तुम मेरे लाए तमाम पटाखे ले जाओ। उधार नहीं, एक पैसा भी मत देना, परंतु चुनाव की ड्यूटी तुम्हें कैंसिल करानी होगी।''

''यह मेरे बाएँ हाथ का खेल है। तुम पटाखों का थैला लाओ।''

भारतीय आर्यपुत्र लड़खड़ाते कदमों से निकलकर भागा और थैला उठा लाया। मैंने कहा, ''अपने बच्चों को क्या जवाब दोगे?''

''मैं रामरतन से उधार ले आऊँगा।'' आर्यपुत्र ने कहा।

मैं बोला, ''यह हुई न बात।'' यह कहकर मैं घर लौट आया। परंतु अब चिंता में हूँ कि 'दीवाली बाद आर्यपुत्र की चुनाव में लगी ड्यूटी को कैसे कैंसिल कराऊँगा? खैर, देखेंगे—अभी दीवाली तो निपटे।'

सा/अ

१२४/६१-६२, अग्रवाल फार्म,
मानसरोवर,
जयपुर-३०२०२०

एक दीप ऐसा जलाओ

कविता

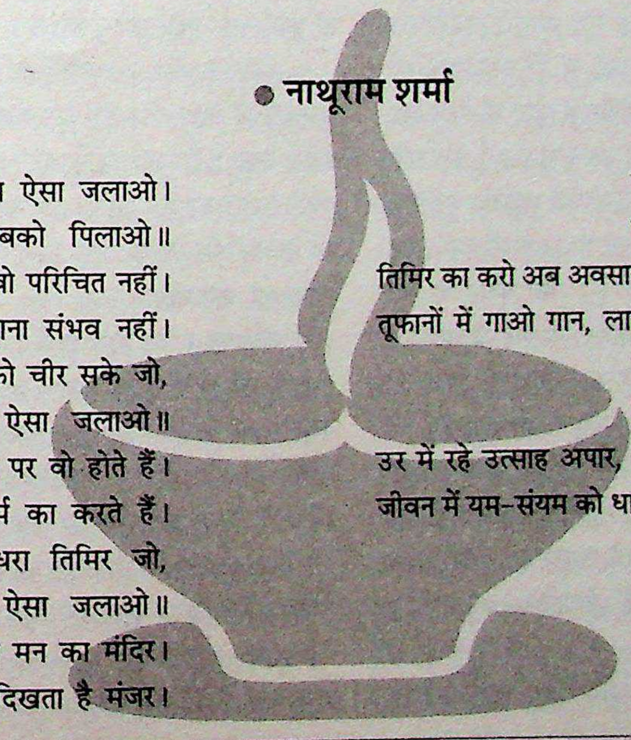

● नाथूराम शर्मा

जलें दीप असंख्य जिससे, एक दीप ऐसा जलाओ।
हलाहल स्वयं, पय प्यार का सबको पिलाओ॥
भटके हैं राह दी से अपने, लक्ष्य से वो परिचित नहीं।
हाथ को हाथ सूझे नहीं, कदम बढ़ाना संभव नहीं।
गहन तम को चीर सके जो,
एक दीप ऐसा जलाओ॥
जलते शलभ हैं दीपों पर, बलि प्यार पर वो होते हैं।
उत्सर्ग प्राण का करते जो, दमन दर्प का करते हैं।
हर सके धरा तिमिर जो,
एक दीप ऐसा जलाओ॥
आदर्शों की भूमि बंजर, धूल-धूसरित मन का मंदिर।
बिखरे हैं सब अंजर-पंजर, भयावह दिखता है मंजर।
संकल्पों की शलाका से,
एक दीप ऐसा जलाओ॥
तिमिर का करो अब अवसान, करो चूर उसका अभिमान।
तूफानों में गाओ गान, लाने को जग में स्वर्ण विहान।
जलती रहे ज्योति से ज्योति,
एक दीप ऐसा जलाओ॥
उर में रहे उत्साह अपार, संकल्प दीयों की हो कतार।
जीवन में यम-संयम को धार, निष्ठा का हो सुदृढ़ विचार।
तम से प्रकाश की ओर बढ़ें,
एक दीप ऐसा जलाओ॥

सा/अ

१४५८, ध्यानचंद कॉलोनी
सीपरी बाजार, झाँसी-२८४००३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

गणेश का लोक-स्वीकृत स्वरूप

● प्रकाश परिमल

गजाननं भूत गणादि सेवितं कपित्थ जम्बू फल चारु भक्षणम्।
उमासुतं शोक विनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वर पादपंङ्कजम्॥

सब देवी देवताओं के आदिपूज्य, पृथ्वी, अंतरिक्ष एवं समस्त ब्रह्मांड के गण-वैभव के अध्यक्ष विनायक गणपति के वरदायक मंगलमय स्वरूप से कौन परिचित नहीं है। ऋद्धि-सिद्धि जिनके पसवाड़े में हाथ बाँधे चँवर डुलाती खड़ी हैं, अनंत ब्रह्मांड की कल्पना की तरह, जिनकी काया (शरीर) हमारे जगत् और अखिल भुवन को नादरूप 'ॐ' के स्वरूप में अपने में समाहित किए कण-कण में प्राणरूप से प्रतिष्ठित, मोदकप्रिय (लड्डू-प्रेमी) विद्या के सागर, बुद्धि के दाता भगवान् गणेश का स्मरण कर हम उनकी वंदना करते हैं।

लोक में गणपति की उत्पत्ति की जो कथाएँ-आख्यान प्रचलित हैं, उनमें सबसे अधिक जानी-पहचानी कथा इस प्रकार है—

एक बार की बात है कि भगवती पार्वती (उमा) अपने सदा-सर्वदा के क्षेत्र गौरीकुंड में स्नान कर रही थीं, वहीं कुछ दूरी पर कुछ पर्वतांचल के बालकगण खेल खेल रहे थे। उन्हीं बालकों में से एक गण को पुकारकर देवी पार्वती ने बुलाया और उसे कहा कि मैं कुंड में स्नान कर रही हूँ, अस्तु किसी भी व्यक्ति को जब तक में स्नान करती हूँ, तब तक इस ओर न आने देना। माता पार्वती की बात को आदेश मानकर वह गण खेल छोड़कर, उस क्षेत्र के एक मात्र उपत्यका द्वार पर खड़ा हो गया। यह उस समय की बात है, जब पार्वती के कोई पुत्र नहीं हुआ था—न कार्तिकेय न स्कंद, भगवान् शंकर भी कहीं बाहर गए हुए थे; लेकिन होनीवश यह हुआ कि एकाएक भगवान् शंकर उस क्षेत्र की तरफ आ निकले और उपत्यका द्वार से भीतर जाने लगे, परंतु उनके आश्चर्य की सीमा न रही, जब उन्होंने देखा कि एक अबोध, नन्हा सा बालक उन्हें द्वार के भीतर जाने से रोक रहा है। अपने सहज, स्नेहशील स्वभाव से जब उन्होंने बालक से पूछा कि 'तुम कौन हो?' तो उसने कहा, 'मैं माता पार्वती का पुत्र हूँ और वे भीतर स्नान कर रही हैं। किसी को भी अंदर न आने देने का उन्होंने मुझे आदेश दिया है।'

भगवान् शिव ने कहा, 'उन्होंने ठीक ही किया है, परंतु मैं शिव उनका पति हूँ, इसलिए तुम मेरा मार्ग छोड़ दो।'

बालगण ने कहा, 'मैं माता की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता, चाहे इसके लिए मुझे अपनी जान भी क्यों न गँवानी पड़े।'

भगवान् शिव के कई तरह से समझाने पर भी बालक ने अपना हठ न छोड़ा तो करुणा की मूर्ति को क्रोध हो आया। उन्होंने अपना त्रिशूल उठाया और बालगण का शिरोच्छेद कर डाला।

उसी बीच माता पार्वती स्नान कर बाहर आ रही थीं, लेकिन वे कुछ बोलतीं, इससे पहले ही अनर्थ हो चुका था। जिसे पुत्र मानकर उन्होंने रक्षा के लिए तैनात किया, उसे इस प्रकार अपने ही पति के हाथों मारे जाने पर वे विलाप करने लगीं।

भगवान् शंकर पार्वती के विलाप से विचलित हो गए; उन्होंने उन्हें दिलासा देते हुए कहा, 'यदि तुम्हें यह गण इतना ही प्रिय है तो मैं इसे अभी जीवित किए देता हूँ, परंतु मेरे त्रिशूल के प्रहार से उसका सर तो सैकड़ों-हजारों योजन दूर जा गिरा है, अब इसकी वय का ही कोई अन्य शीर्ष इसे प्रदान कर मैं इसकी प्राण प्रतिष्ठा करूँगा।'

ऐसा कहकर वे पर्वतांचल में गए, एक बालक-गज का शीर्ष काटकर ले आए और उसे मृत गण के धड़ पर अवस्थित कर दिया। इस प्रकार सारा शरीर बालक का होते हुए भी गणेश भगवान् का शीर्ष (सिर) हाथी (गज) का है। इसी प्रकार नाम गजानन पड़ा। (इसी कथा में, अपने घर के आगे मिट्टी का एक लौंदा उठाकर उसे बालक प्रहरी बना देने का प्रसंग भी आता है।)

गजानन गणेश शिव पार्वती के वास्तविक पुत्र नहीं थे। इसी कारण उन्हें पुराणों में 'द्वैमातुर' कहकर संबोधित किया गया है। अर्थात् पहले बालगण के रूप में वे जिस पर्वत क्षेत्र की माता के बालक रहे होंगे, लेकिन पार्वती द्वारा उन्हें अपना पुत्र मानकर उसे प्रहरी के रूप में बिठलाना और फिर शिव द्वारा मार दिए जाने पर उसे हठपूर्वक जीवनदान दिलवाना, तथा गजानन रूप में प्रतिष्ठित करवाना तथा फिर उन्हें अपने सभी पुत्रों से अधिक स्नेह देना, गणेश को शिव परिवार का अभिन्न अंग बना देता है।

शिव-पार्वती द्वारा अपने इस निर्मित पुत्र पर अत्यधिक स्नेह प्रदर्शित करने संबंधी भी एक लोक कथा है, जो इस प्रकार है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिव पार्वती के पास एक बार स्कंद कार्तिकेय यह शिकायत लेकर पहुँचे—'हे माता, आपका उदर पुत्र न होते हुए भी गणेश को ही आप अधिक क्यों चाहते हैं?' तो शिव-पार्वती यह उत्तर देते हैं कि हम उसे अधिक स्नेह इसलिए करते हैं कि वह वास्तव में हमारे स्नेह के योग्य है। वह अधिक बुद्धिमान और चतुर है। यदि तुम्हें विश्वास न हो तो स्वयं इसका परीक्षण करके देख लो।

स्कंद कार्तिकेय ने कहा, 'हम यह शर्त रख लेते हैं कि जो सारे भुवनों की यात्रा करके सबसे पहले आपके पास लौट आएगा, वही बुद्धिमान व चतुर माना जाए।'

विद्या वारिधि बुद्धि विधाता, स्थूलकाय गणेश ने जब यह शर्त स्वीकार कर ली तो स्कंद कार्तिकेय को बड़ी प्रसन्नता हुई। स्कंद और कार्तिकेय अलग-अलग दिशाओं में निकल पड़े, लेकिन गणेश कहीं न गए। जब उन्हें यह अनुमान हो गया कि स्कंद कार्तिकेय लौट सकते हैं, तब चुपचाप वे अपने माता-पिता शिव पार्वती के पास गए और जहाँ वे बैठे थे, उनके चारों ओर की सात परिक्रमा करके चुपचाप अपने कक्ष में आ गए। कई दिनों बाद जब स्कंद कार्तिकेय लौटकर आए तो उन्होंने देखा कि गणेश शिव-पार्वती की गोद में बैठे माँ-बाप के वात्सल्य का आनंद ले रहे हैं। उन्होंने कहा, 'हमें मालूम है, यह मोटा तोंदू कहीं न गया होगा। हम अखिल भुवन की परिक्रमा करके लौटे हैं और यह आपकी गोद में मुँह छुपाए बैठा है। माता-पिताश्री बताइए, हममें से बुद्धिबल में कौन बड़ा है?' सबके अंतर्यामी भगवान् आशुतोष बोले, 'ठीक है, तुमने सारे भुवनों की यात्रा की है, परंतु जब इसने शर्त स्वीकार की थी तो इससे तो पूछना चाहिए कि वह इस यात्रा पर गया क्यों नहीं? अच्छा वत्स गणेश, तुम्हीं बताओ, तुम क्यों नहीं गए?' गणेश ने तुरंत उत्तर दिया, इस समस्त चराचर जगत्, तीनों लोक और अखिल भुवनों में हे मेरे माता-पिता, आपसे बड़ा कोई नहीं है। आप अनंत हैं, अनादि हैं। इन दोनों ने तो केवल सारे भुवनों की भौतिक यात्रा एक बार की है, परंतु मैंने तो आप दोनों की सात बार परिक्रमा करके, सात बार अनादि-अनंत क्षेत्रों तक की यात्रा कर डाली।'

गणेश के इस उत्तर से न केवल स्कंद कार्तिकेय अवाक् रह गए, अपितु शिव-पार्वती ने भी उनकी बुद्धिमत्ता की श्रेष्ठता स्वीकार की।

गणेश की तो चतुराई की दो कथाएँ महाभारत के समय की भी मिलती हैं। एक उस वक्त की, जब त्रिकालदर्शी भगवान् वेदव्यास ने भागवत जैसे विशाल ग्रंथ की रचना का बीड़ा उठाया तो उनके सामने यह समस्या आ खड़ी हुई कि इसे लिपिबद्ध कौन कर सकेगा। इसके लिए वे प्रजापति ब्रह्मा के पास गए और उनके समक्ष अपनी कठिनाई रख दी। ब्रह्माजी ने तत्काल देवादिदेव गणेश का नाम सुझाया। महर्षि देवव्यास जब शीघ्रलिपिक गणेश के पास गए तो गणेशजी ने उनके सामने एक शर्त रख दी, 'मैं आपके द्वारा लिखवाई जानेवाली श्रीमदभागवत लिख तो दूँगा, परंतु मेरे पास इतना वक्त नहीं है कि आप अभी थोड़ा लिखवा दें, फिर कुछ वक्त या दिनों के लिए रुककर फिर मुझे बुलावा दें और डिक्टेशन दें। इसलिए मेरी शर्त है कि यदि आप बिना रुके लगातार मुझे डिक्टेशन दे सकें तब तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।'

त्रिकालदर्शी महर्षि वेदव्यास भी कम नहीं थे, उन्होंने कहा, 'मुझे आपकी यह शर्त स्वीकार है, परंतु इसके लिए मेरी भी एक शर्त है कि मैं भगवत तत्त्व के लिए कुछ गूढ़ रहस्यमय बातें आपको लिखवा दूँ, ताकि पूरा अर्थ समझे बिना आप यह काम छोड़कर नहीं उठेंगे।'

अब इस शर्त का मजा यह था कि वेदव्यास यदाकदा अत्यंत गूढ़ तत्त्व की बातें लिखवा देते और जब तक गणेश उनका भावार्थ समझने के लिए रुकते तब तक श्रीमदभगवत कथा का नया आख्यान वे अपने मानस में संचित कर लिखवाने के लिए तत्पर हो जाते। इस प्रकार देवादिदेव गणेश और महर्षि वेदव्यास के सहयोग से श्रीमद् भागवत की रचना संभव हुई, जो संसार का सबसे प्राचीन लिपिबद्ध ग्रंथ है, इसका सांस्कृतिक प्रमाण प्रस्तुत करता है। महाभारत की दूसरी कथा उस प्रसंग की है, जब महाभारत के युद्ध के बाद सब देवताओं को मनाने और उनकी पूजा-अर्चना करके भगवान् गणेश की पूजा न करने की भारी भूल पांडवों ने कर दी।

अब जब भगवान् कृष्ण अर्जुन का रथ कुरुक्षेत्र में लेकर जाने लगे तब उन्होंने पाया कि सारी धरती ऐसे खोखली हो गई है मानो चूहों ने उसे खोद-खोदकर बिल बना दिए हों। अर्जुन को यह भेद जब समझ में नहीं आया तो उसने श्रीकृष्ण से पूछा, 'प्रभो! यह क्या माया है, अपना रथ तो जमीन में धँसा चला जा रहा है' श्रीकृष्ण ने कहा, 'आज हम हमेशा की तरह आदिदेव भगवान् श्रीगणेश की अर्चना करना भूल गए हैं, अस्तु अब तुम सब लोग यहीं भगवान् श्रीगणेश का स्मरण करो, तभी कल्याण संभव है।' अर्जुन समेत सभी पांडवों ने वहीं गणपति का क्षमापूर्वक स्मरण किया, तब विघ्नेश्वर गणेश ने यह बाधा स्वतः दूर कर दी।

अब इस शर्त का मजा यह था कि वेदव्यास यदाकदा अत्यंत गूढ़ तत्त्व की बातें लिखवा देते और जब तक गणेश उनका भावार्थ समझने के लिए रुकते तब तक श्रीमदभगवत कथा का नया आख्यान वे अपने मानस में संचित कर लिखवाने के लिए तत्पर हो जाते। इस प्रकार देवादिदेव गणेश और महर्षि वेदव्यास के सहयोग से श्रीमद् भागवत की रचना संभव हुई, जो संसार का सबसे प्राचीन लिपिबद्ध ग्रंथ है, इसका सांस्कृतिक प्रमाण प्रस्तुत करता है। महाभारत की दूसरी कथा उस प्रसंग की है, जब महाभारत के युद्ध के बाद सब देवताओं को मनाने और उनकी पूजा-अर्चना करके भगवान् गणेश की पूजा न करने की भारी भूल पांडवों ने कर दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये सब कथाएँ तो गणपति के लोकप्रिय स्वरूप पर आधारित हैं, लेकिन यह गणपति तत्त्व आखिर है क्या? वेदों और पुराणों में इसका इतना महत्त्व आखिर क्यों है कि उसे ब्रह्मा-विष्णु-महेश जैसे त्रिदेव से भी पहले पूजे जाने का हमारा हिंदू संस्कृति में विधान हुआ। और सब देवताओं से विचित्र, लंबा पेट और हाथी का शीश और सूँड़ लिये तथा सवारी के लिए लघुकाय मूषक (चूहा) का उनका यह चुनाव किस गूढ़ तत्त्वों की ओर इंगित करते हैं। इन पर प्रश्नों का समाधान हम खोजने की कोशिश करेंगे तथा यह समझने की कोशिश भी करेंगे कि गणेश का वेदों में स्वरूप क्या है।

'गण' जनता-जनार्दन की एक बड़ी व्यापक राजनीतिक और सामाजिक रूप में गठित एक क्षेत्रीय इकाई है। जो इस प्रकार की अलग इकाइयों का अधिपति होगा, उसे ही गणपति या गणेश की संज्ञा से विभूषित किया जा सकेगा, परंतु जो इस प्रकार के विशाल गणतंत्रों का अधिपति होगा, आखिरकार वह कोई साधारण व्यक्ति तो नहीं हो सकता? उसमें कुछ ऐसी विशेषताएँ होनी चाहिए, जो इन गणों के नायक होने के योग्य करार दे सकें। अस्तु। इसके लिए गणेश का या गणपति का एक लौकिक स्वरूप कालांतर में बना और हमारे संस्कारों ने उसे स्वीकार कर लिया।

गणपति विशालकाय होना चाहिए—लोकतांत्रिक गणतंत्र के हजारों-लाखों नहीं बल्कि करोड़ो जनों का प्रतिनिधित्त्व और नेतृत्व करने की क्षमता रखनेवाला, किसी संकीर्ण क्षेत्र तक सीमित न रहने वाला तथा लोकप्रियता में देशकाल की सीमाओं को लाँघ जानेवाला महान् व्यक्ति होना चाहिए, वही तो वास्तव में हमारे विशाल लोकतांत्रिक गणतंत्र का अधिपति होगा। इस कारण गणपति को विशाल आकार का माना गया। उसका शीर्ष हाथी का रखा गया। हाथी प्राणिमात्र में सबसे विशाल प्राणी है। उसी का प्रतीक है गणेश का हाथी शीर्ष (गजानन)। अब जो गणपति यूथपति है, उसे यह भी चाहिए कि वह गरीब, अमीर, ऊँचे-नीचे का भेदभाव त्यागकर सबकी पुकार सुनने की क्षमता रखता हो, इसीलिए हाथी जैसे बड़े कान उनके स्वरूप में स्थित किए गए हैं। 'लंबोदर' का अर्थ है कि गणनायक में यह क्षमता भी होनी चाहिए कि वह सुने सबकी, परंतु तत्काल आक्रोश न करे। क्रोध और आवेश में न आकर सभी की कही हुई अच्छी-बुरी बातों को अपने बड़े पेट में पचा जाने की क्षमता रखता हो।

लंबी सूँड़ से तात्पर्य है कि देश के शीर्षस्थ नेता की यह क्षमता होनी चाहिए कि दूर-दूर तक जो षड्यंत्र रचे जा रहे हों, जो अनिष्टकारी संभावनाएँ या खतरे आ रहे हों, उनकी गंध उसे सबसे पहले हो। उसका खुफिया तंत्र इतना कुशल हो कि एक कोने से दूसरे कोने तक होनेवाली सभी घटनाओं की पूरी जानकारी उसके पास होनी चाहिए और उनको अपनी प्राण शक्ति से पहचानने की उसकी क्षमता होनी चाहिए।

इतना बड़ा गणनायक और उसकी सवारी वाहन इतना छोटा चूहा? यह क्या बात हुई। पर नहीं, जो गणनायक होने का श्रेय प्राप्त करता है, वह इतना विनम्र और साधारण होना चाहिए कि अपने वाहन के लिए उसे मोटरगाड़ी, हवाईजहाज, हेलीकॉप्टर आदि नहीं, छोटे से छोटा वाहन स्वीकार करना चाहिए, तभी वह जन-जन तक पहुँच रख सकेगा, उनकी आवाज को सुनकर उनके दुःख-दर्द को दूर कर सकेगा। इसी कारण इतने विशाल गजानन की सवारी के लिए चूहे को रखा गया है। जिसका संपर्क सदा जमीन से रहता है। तो यह है संक्षेप में हमारे संस्कृति के नायक गणेश का लोकस्वीकृत स्वरूप।

२०२, पद्मावती कॉलोनी,
गली नं. ४, किंग्स रोड, निर्माण नगर,
जयपुर-३०२०१९

इस अंक के चित्रकार

किशोर श्रीवास्तव

जन्म : पूर्वी चंपारन में।

शिक्षा : संपादन कला विशारद, एम.ए., एल-एल.बी., पी.जी.जे.एम.सी. संगीत (गायन/वादन) में कनिष्ठ डिप्लोमा।

प्रकाशन : 'अभागा राजकुमार' *(बाल उपन्यास)*, 'अच्छी सेहत के नुस्खे', 'पक्षियों के सुंदर घर', 'पक्षियों की एकता एवं रिश्तों की डोर', 'अपना घर' *(बाल कहानी संग्रह)*; 'खरी-खरी' *(लघु रचना-संग्रह)*, 'कटाक्ष' *(लघुकथा संग्रह)*, 'आप बीती, जग बीती' *(व्यंग्य संग्रह)*।

अवैतनिक रूप से 'हम सब साथ-साथ' द्विमासिक पत्रिका के कार्यकारी संपादक। पत्र-पत्रिकाओं में लेखादि प्रकाशित, आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं चैनलों पर कार्यक्रम प्रसारित।

पुरस्कार-सम्मान : 'राष्ट्र गौरव पुरस्कार', 'राष्ट्रीय प्रतिभा सम्मान', 'महाराज कृष्ण जैन सम्मान', 'राष्ट्रीय एकता सम्मान', 'भाषा रत्न' आदि अनेक पुरस्कार-सम्मान प्राप्त।

संप्रति : नई दिल्ली स्थित केंद्र सरकार के एक कार्यालय में सहायक निदेशक।

संपर्क : 'हम सब साथ साथ' पत्रिका, ९१६-बाबा फरीदपुरी, पश्चिमी पटेल नगर, नई दिल्ली-११०००८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिया का घर

● मानेश्वर मनुज

जन्म : ०५ जनवरी, १९५८।

कृतित्व : नयनाभिराम ललित निबंध संग्रह, 'संबंध' *(कहानी संग्रह)*, 'कि' *(कविता संग्रह)* तथा मैथिली एवं अन्य भाषाओं से अनुवाद मैथिली पत्रिका 'वैदेही' में प्रकाशित।

संप्रति : कई वर्षों तक भारतीय नौसेना में रहे, अब भारतीय रेल में कार्यरत।

ओखली में धान पर जब मूसल की चोट पड़ी तो आवाज हुई—धम्म। एक चोट में ही भूना हुआ सारा धान पसर गया। आवाज सुनकर ही कई दिनों का भूखा रामे लहलहा उठा। मूसल के साथ ही दो-एक दाने निकल आए थे, वह देखने लगा।

वंशी ने उसके आँगन के द्वार पर आकर बड़े गौर से उसकी ओर देखा और फिर आगे बढ़ गया। वह काफी गुस्से में था और लाल होकर अगले द्वार रतीश भाई के यहाँ जा रहा था।

रतीश भाई के घर के पास जाकर एकाएक वह आगे की ओर बढ़ा और जोर-जोर से बोल उठा, ''रतीश भाई! रामे ने कोई अच्छा काम नहीं किया है, मेरे 'कोन्हा' खेत की सारी फसल बरबाद कर सारे शीश निकालकर ले आया है।''

उस समय वंशी क्या रतीश भाई भी पत्नी से बातें करते रामे पर उसी तरह आक्रोश बरसा रहे थे, जिस तरह वंशी।

रतीश भाई ने कहा, ''मुझे क्यों कहने आए हो? वह कौन लगता है मेरा? जाओ उसी से कहो।''

दोनों के आक्रोश इस तरह एक जगह पर आकर मिले, जैसे दो दिशाओं से दो तीर खुद ही टकरा गए हों।

क्षण भर एक-दूसरे को गरम मिजाज से देखा। रतीश भाई का साला सुरेंद्र चुपचाप खड़ा था। उसने बहन से कहा, ''बहन, यह तो बहुत बड़ी बात है। महेश बाबू के घर की ये हालत?''

महेश बाबू की शान-शौकत से कौन परिचित नहीं। वे कभी भी चाय-पान या भोजन अकेले नहीं करते थे। महेश बाबू और रतीश भाई का तब संयुक्त परिवार था।

रामे आक्रोश का शिकार व्यर्थ ही बन गया था। जब वह अपने खेत से आ रहा था, गलती से रास्ते में 'कोन्हा' खेत की बगल में उसे वंशी मिल गया था। निश्चय ही वंशी के खेत की फसल किसी ने बरबाद की थी।

उसे मालूम था कि गलती कोई भी करे, अपराधी वह ही माना जाएगा। उसके बुरे दिन चल रहे थे। इसीलिए रामे सबकुछ सुन रहा था।

सुरेंद्र ने रामे की बहन शीला को बुलाकर लाने के लिए मनीष को भेजा। मनीष बोला, ''थोड़ा चलना शीला दीदी, मामा बुला रहे हैं।''

शीला ने सोचा, भाई का साला, इसका मानी हँसी और मजाक की फुलझरियाँ। मजाक करने के लिए ही बुलाते होंगे। प्रतिदिन वे कोई नया मजाक ढूँढ़ निकालते हैं।

शीला ने माँ से पूछा, ''माँ, जाती हूँ?''

माँ ने कहा, ''जाओ, हम उनसे अलग हैं, रिश्तेदारों से नहीं। रिश्तेदार तो बँटे नहीं हैं। पर्व-त्योहार तथा खुशी की वेला में वे हमें अलग कर देते हैं, किंतु क्या हम रिश्तेदारों से भी अलग हो जाएँगे। रिश्तेदार तो उनका भी है और अपना भी।''

शीला रतीश भाई के आँगन में आ गई।

सुरेंद्र पहले से ही कर्कश बाणों के साथ तैयार था। उसने कहा, ''देखिए शीलाजी, हमें कभी अपने परिवार की प्रतिष्ठा को ताक पर नहीं रख देना चाहिए। पुरखों ने इसे बहुत परिश्रम से हासिल किया है।''

अकस्मात् सुरेंद्र के मुँह से ये बातें सुनकर वह आश्चर्यचकित रह गई।

सुरेंद्र ने फिर कहा, ''आपके भाई रामे वंशी के खेत से धान के शीश निकालकर ले आए हैं। वे शिकायत कर गए हैं।''

शीला ने कहा, ''उसकी दुर्गति लिखी है।'' वह वहाँ से छटपटाती हुई घर आई। तब तक चूड़ा तैयार था।

शीला ने क्रोध से कहा, ''माँ, बेटा नाक-कान कटवाकर छोड़ देगा। वंशी के खेत से धान के शीश निकालकर ये 'चूड़ा' कुटवा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर जाना अच्छा है इस जिंदगी से।''

माँ ने गुस्से से लाल होकर डलिया के साथ ही सारा चूड़ा फेंक दिया।

प्रतिपल गिनते हुए और आशा की लड़ी को टूटते हुए देखकर रामे अचेत हो गिर पड़ा।

भूख का अर्थ होता है मृत्यु। रामे पिछले चौबीस घंटों से मृत्यु के साथ लड़ाई कर रहा था और उसके प्राण उस समय दलिया में थे।

कुछ समय के बाद उसे होश आया। उसने कहा, ''मैं अपने ही चानन झा वाले खेत से धान के शीश निकालकर लाया था। मैं जानता हूँ कि सबों की उँगली मुझ पर ही क्यों उठती है, क्योंकि मैं निर्धन हूँ।''

रामे ने कहा, ''भाभी, पढ़-लिखकर नौकरी पा जाने से क्या मैं उस जिंदगी को भूल सकता हूँ। मैं गरीब के दुःख-दर्द को समझता हूँ। उस पर मलहम मैं नहीं लगाऊँगा तो कौन लगाएगा? मैं गरीब की ही बेटी से शादी करूँगा। मुझे किसी के खानदान का लोभ नहीं है। खानदानी वही कहलाते हैं, जिनके पास खानदानी पैसे हों। गरीब की बेटी से बढ़कर कोई सौम्य, शांत और सरल हो ही नहीं सकती।''

रामे की बातें सुनकर दोनों पश्चात्ताप करने लगीं।

शीला ने कहा, ''पता नहीं इसके भाग्य में क्या लिखा है। अभी यह मात्र दस साल का है। पिताजी मर गए और सारा दुःख इसी के लिए छोड़ गए। कभी बाढ़ तो कभी सूखा। दो-दो बार फसल लगाने के बाद भी सारी फसल बाढ़ में चली गई। गरीब क्या करे?''

माँ ने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा, ''आज से यदि कोई तेरी शिकायत करेगा तो मैं बिलकुल ध्यान नहीं दूँगी।''

आदमी गरीब हो या अमीर, समय तो आगे बढ़ता ही है। जंगल में कोई भी पेड़-पौधों में पानी नहीं देता किंतु फूल और फल तो लगते ही हैं। रामे भी जंगल के गुलाब की तरह बी.ए. पास कर गया।

शीला की शादी हो गई। गरीब की बेटी की शादी तय करने में कोई परेशानी नहीं होती, क्योंकि उसके लिए भूख, दरिद्र और कलह से भरे सारे गरीबों के घर के द्वार खुले रहते हैं।

रामे अपनी बहन की स्थिति देखकर बहुत दुःखी रहता था और अपने घर वह किसी गरीब की लड़की को ही लाना चाहता था। किंतु रामे को तो पढ़ाई के बाद नौकरी भी मिल गई। अब कहाँ उसे कोई गरीब माननेवाला था।

एक दिन पड़ोस की भाभी बोली, ''पढ़-लिख लिये हैं, किसी गुणवती और खानदानी लड़की से शादी कीजिए। जिसका कभी पेट भी न भरा हो, वो कहाँ सीखेगी बुद्धि, व्यवहार और पढ़ाई-लिखाई। आपकी शादी की बात जाने-माने परिवार के लोग कर रहे हैं।''

रामे ने कहा, ''भाभी, पढ़-लिखकर नौकरी पा जाने से क्या मैं उस जिंदगी को भूल सकता हूँ। मैं गरीब के दुःख-दर्द को समझता हूँ। उस पर मलहम मैं नहीं लगाऊँगा तो कौन लगाएगा? मैं गरीब की ही बेटी से शादी करूँगा। मुझे किसी के खानदान का लोभ नहीं है। खानदानी वही कहलाते हैं, जिनके पास खानदानी पैसे हों। गरीब की बेटी से बढ़कर कोई सौम्य, शांत और सरल हो ही नहीं सकती।''

बहुत दिनों तक इस तरह की बातें चलती रहीं। बहुत सारे लोग अपने-अपने प्रस्ताव लेकर आए किंतु किसी गरीब ने उसके यहाँ आने का साहस नहीं किया। गरीब का अर्थ वह अपनी पुरानी परिस्थिति से लगाता था।

अंततः रामे स्वयं झुक गया।

उसके भाई ने भी कहा, ''भैया, गरीब और अमीर का न तो कोई आदि है और न अंत, हम तो उन्हीं को जानते हैं जो हमारे दरवाजे आते हैं।''

रामे की शादी रेखा से हो गई।

रामे रेखा को अपने अतीत की सारी व्यथा-कथा सुनाया करता था और रेखा एक द्वंद्व पर आ गिरी थी। वह एक ओर माँ को देखती थी और दूसरी ओर पति को।

माँ को किसी चीज की आवश्यकता नहीं थी, किंतु उन्हें जिस चीज की आवश्यकता थी, रेखा के सिवाय दूसरा कोई जानता भी नहीं था।

रामे सोनापुर में रेखा के साथ रहता था और एक-एक पैसा सँभालकर काम में लाता था। अपने खर्च से जो बचते थे, हर एक महीना जल्दी ही घर भेज देता था। छोटा भाई सोनू कॉलेज में पढ़ता था। माँ के दिन अच्छे कट रहे थे।

पति-पत्नी दोनों छुट्टी में घर आए। रेखा ससुराल से अपने मायके के लिए तैयारियाँ करने लगी।

नए कपड़े पहनकर रेखा ने पति से कहा, ''मुझे क्या दे रहे हैं? जैसे आप परदेश से अपने गाँव आए वैसे ही मैं भी तो परदेश से मायके जा रही हूँ।''

जेब से बीस रुपए निकालकर रामे ने कहा, ''यह लो, रसगुल्ले खरीद लेना।''

रेखा ने क्षण भर एकटक उसकी ओर देखा और फिर रुपए लेकर रिक्शे पर बैठ गई।

मायके पहुँचकर माँ से बातें शुरू हो गईं। माँ ने कहा, ''देखो न, किसुन गुस्से से घर छोड़कर भाग गया है। भाई और भाभी का विचार था कि किसुन मुजफ्फरपुर छोड़कर नजदीक के नए कॉलेज में दाखिला ले ले और प्रतिदिन घर से ही आया-जाया करे।''

किसुन के लिए घर भर में उदासी फैली हुई थी। भाभी अपनी बातों पर अड़ी हुई थी।

कुछ सोच-समझकर रामे ने किसुन के नाम दो सौ रुपए भेज दिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

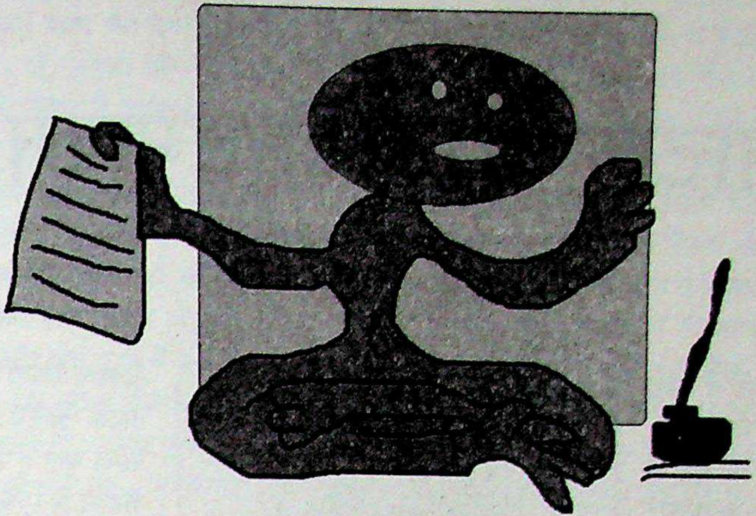

रामे के इस कार्य की बड़ी प्रशंसा हुई।

सास ने कहा, ''बेटी रेखा ने ही दामादजी को सब कुछ कहा होगा, इसीलिए उन्होंने रुपए भेजे होंगे।''

वापस नौकरी पर लौटते समय दोनों वहाँ पहुँचे जहाँ साला और सलहज रहते थे। बहुत कहा-सुनी हुई, लेकिन उन दोनों ने रामे की एक नहीं सुनी।

साला बोला, ''मैं अनुशासनहीनता बरदाश्त नहीं कर सकता। एक तो उसने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया और फिर शहर के दो कौड़ी के आदमी के घर जाकर ट्यूशन पढ़ाता है मेरी नाक कटवाने के लिए।''

रामे ने कहा, ''ऐसा तो नहीं है कि उसने आपकी बातें नहीं मानीं तो आपका और उनका संबंध ही टूट गया। किसी भी शिखर पर पहुँचकर भी कुछ निष्कर्ष तो निकालना ही होगा।''

पीछे से सलहज बोल उठी, ''मैंने निष्कर्ष निकाल लिया है। उनकी शादी हो जाएगी और जब घर-गृहस्थी का भार पड़ेगा तो सबकुछ समझ में आ जाएगा।''

अंततः कोई निष्कर्ष नहीं निकल सका। रामे वहाँ से चला गया।

वह अपने काम में इस तरह व्यस्त हो चुका था कि कहीं कोई पत्र भी नहीं लिख पा रहा था। रेखा भी सोच में पड़कर नहीं लिख पा रही थी।

उधर गाँव में मजदूर और मकान के काम की देख-रेख से रेखा की माँ को एक पल भी फुरसत नहीं, फिर भी हर पल वे रेखा की चिट्ठी की प्रतीक्षा किया करती थीं। पूरे इलाके में सबसे अच्छा मकान उन्हीं का बन रहा था।

कई दिनों तक प्रतीक्षा करने के बाद उसने कहा, ''कितनी कठोर हो गई लड़की! अब तक पहुँचनामा भी नहीं दिया है।''

नौकरानी उनके सिर से जू निकालने लगी।

बहुत दिनों के बाद रेखा पत्र लिखने के लिए तैयार हुई। समाचार-पत्र से पता चला था—देहात की तरफ तूफान आया था। जान-माल की काफी हानि हुई। किंतु उसके लिखने से पूर्व पोस्टमैन दो पत्र लेकर आ गया। एक पत्र मायके से था और दूसरा ससुराल से। रेखा ने पहला पत्र खोला। लिखा था—

'बेटा,

कई दिनों तक लगातार बारिश होती रही। घर के टाट गिर गए। उसके बाद ऐसा तूफान आया कि छप्पर भी उड़ गया। घर में गुदड़ी भी नहीं रह सकी। वह डाकू तूफान था, जो सबकुछ लेकर चला गया।

सोनू का पत्र आया था। लिखता है कि हर महीने रुपए मिल जाते हैं। जब-जब वह लिखता है, मेरा दिल प्रसन्न हो जाता है। वह खूब मन लगाकर पढ़ता है।

तुम्हारी माँ।'

दूसरी चिट्ठी रेखा के ही नाम थी—

'बेटी,

मेरा कोई वश नहीं चलता। किसुन का कोई सहारा नहीं। मैं जानती हूँ कि मेरे पास सबकुछ है किंतु किसुन को देखनेवाला कोई भी नहीं है।

मकान दो-तीन महीनों में तैयार हो जाएगा।

तुम्हारी माँ।

रेखा दोनों ही पत्र पढ़कर विचार के अथाह सागर में डूब गई और जब रामे आया तब उसे उसका पत्र थमा दिया।

रामे पत्र पढ़कर निःशब्द हो गया। उसकी कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे और क्या न करे। गाँव से सारे रुपए खर्च करके आ गया था।

पति का मुँह देखकर रेखा की आँखें भी आँसुओं से भर गई और वह भी किंकर्तव्यविमूढ़ खड़ी रही।

बहुद देर की चुप्पी के बाद उसने पति से कहा—

''मुझे घर जाने दीजिए।''

''किसके घर?''

''आपके घर।''

''वहाँ जाकर तुम कहाँ रहोगी? वहाँ अब कोई घर नहीं है।''

रेखा ने कहा, ''आपका घर तो वहीं है। तूफान में तो सिर्फ टाट और छप्पर ही उड़े हैं, माँ तो है। आपके जिस घर की सुरक्षा में माँ वहाँ बैठी है, वह घर इतना छोटा नहीं है कि मैं उसमें रह ही नहीं सकती। मुझे तो अपने पिया का घर बहुत ही मजबूत दिखाई देता है, जिसके गिरने की कोई संभावना ही नहीं है। माँ की ममता और सम्मान जो उस घर में है, वैसा किसी महल में भी नहीं। आप पैसे की चिंता न कीजिए। मैं खाली हाथ भी वहाँ अवश्य जाऊँगी।''

और रेखा उसी समय गाड़ी पकड़ घर की ओर चल पड़ी।

म.नं. ३९-९, रेल-कॉलोनी,
दहिसर (ईस्ट)
मुंबई-६८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्मरण

नाटक बन गया तमाशा

● कुँअर बेचैन

जन्म : १ जुलाई, १९४२ को मुरादाबाद जिले के उमरी गाँव में।
शिक्षा : एम.कॉम. और एम.ए. (हिंदी)।
प्रकाशन : गीत-गजल तथा अन्य विधाओं की ३२ पुस्तकें प्रकाशित एवं सात सी.डी. तथा कैसेट्स प्रसारित।
सम्मान : राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैलसिंह तथा डॉ. शंकरदयाल शर्माजी द्वारा सम्मानित, 'साहित्यभूषण', 'हिंदी गौरव सम्मान', देश-विदेश की अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

बात बहुत पुरानी है। शायद मैं कक्षा नौ का छात्र था। यानी सन् १९५५ की बात है। दिन दशहरे की छुट्टियों के थे। उन दिनों दशहरे के त्योहार पर चंदौसी शहर रामलीलाओं और नाटकों को बहुत ही महत्त्व देता था। लोग बताते हैं कि अब भी इस मौके पर शहर में वैसा ही उत्साह रहता है। गली-गली में अब भी रंगमंच सज जाते हैं। जिन दिनों की बात मैं कर रहा हूँ, उन दिनों हमारे शहर के सीता आश्रम और पक्का बाग नामक दो स्थानों पर दशहरे का मेला लगता था और दोनों में ही स्पर्धा का भाव रहता था। एक से बढ़कर एक नाटक खेले जाते थे। बड़े-बड़े कंपटीशन भी हुआ करते थे। पूरे भारत से अनेक रंगकर्मी अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने चंदौसी आते थे। चंदौसी शहर में भी कुछ ऐसे रंगकर्मी थे, जिनकी ख्याति बहुत दूर तक थी। इन सभी रंगकर्मियों ने मिलकर एक नाट्य संस्था भी बनाई थी, जिसने पूरे भारत में जा-जाकर और अपने सामाजिक तथा ऐतिहासिक नाटकों का मंचन करके अनेक पुरस्कार जीते थे। मुझे जिन नाट्यकर्मियों के नाम याद आ रहे हैं, उनमें हास्य अभिनेता रंगीलाजी का नाम प्रमुख है, जो उन दिनों की फिल्मों के प्रसिद्ध हास्य अभिनेता जानी वॉकर के मिनी संस्करण कहलाए जाते थे। उनके अभिनय को देखकर पेट में बल पड़ जाते थे। किस्सी नाम के गायक और गीत लेखक भी थे, जिनके गीतों की एक अलग ही पहचान और छटा थी।

मेरा आशय यह है कि इन्हीं दिनों हमारे स्कूल की भी कई दिनों की छुट्टियाँ हो जाती थीं और हमारी रातें नाटकों को देखने में निकल जाती थीं। 'हमारी' शब्द का इस्तेमाल मैंने इसलिए किया है, क्योंकि नाटकों के दर्शकों में मेरे साथ-साथ मेरा दोस्त विजेंद्र भी शामिल था। हम दोनों ही बचपन के दोस्त रहे, इसलिए हम लोग साथ-साथ जाते और एक हलकी सी चादर भी साथ ले जाते थे। अगर जगह ठीक से नहीं मिल पाती थी तो कहीं भी इस चादर को बिछाकर बैठ जाते थे और सर्दी लगी तो दोनों मित्र ओढ़ लेते थे। यह क्रम कम-से-कम चार-पाँच दिनों तक तो चलता ही था।

इन नाटकों को देखने का हम पर ऐसा रंग चढ़ा कि हमने भी निश्चय किया कि अपने मोहल्ले में हम भी एक नाटक खेलेंगे। आपकी सूचना के लिए मैं यह पहले बता हूँ कि मेरा दोस्त विजेंद्र स्कूल में भी नाटकों में एक्टिंग कर चुका था, इसलिए उसका कॉन्फिडेंस मुझसे कुछ ज्यादा ही बढ़ा-चढ़ा था। मैं कविता की तुकबंदी करने लगा था और अपनी टूटी-फूटी कहानियों को टॉलस्टाय और प्रेमचंद की कहानियों से किसी भी हालत में कम नहीं समझता था। मैंने नौवीं कक्षा में ही एक नाटक भी लिखा। नाम था 'रूखी रोटी'। बस इसी नाटक को खेलने का संकल्प हम दोनों मित्रों ने कर लिया। हमारे मोहल्ले में ही एक मोहन नाम का लड़का रहता था, वह बाँसुरी बहुत अच्छी बजाता था। हमने संगीत का काम उसके हवाले किया। नाटक को लिखनेवाला मैं, नाटक के लिए गीत लिखनेवाला और गायक भी मैं, नाटक का डायरेक्टर मैं, नाटक में एक अभिनेता के रूप में भी मैं था। यानी कि नाटक में हर जगह मैं ही मैं था। साफ है, इस नाटक की सारी जिम्मेदारी मुझ पर ही थी। नाटक खेलने के लिए तख्त, पर्दे, सुतली, बाँस आदि सभी चीजें इकट्ठी करने में बड़ी ही मेहनत करनी पड़ी। सामान लादकर लाने में मेरे एक और मित्र, जिसका नाम नवल था बड़ा सहयोग दिया। वह भुर्जी का काम करता था, उस पर एक ठेला था, इसी ठेले पर तख्त आदि लादकर मैं और वो ठेला चलाते हुए अपने मुहल्ले तक लाए थे। मैंने अपने इस नाटक में उसे भी एक छोटा सा रोल दे दिया था।

नाटक का मंचन करने के एक पहलू पर तो उत्साह-उत्साह में हमारा ध्यान ही नहीं गया था, वह पहलू था धन का। नाटक खेलने का संकल्प तो ले लिया किंतु इस कार्य को संपन्न करने के लिए पैसे की भी जरूरत होती है, इस पर तो सोचा ही नहीं था। मैं और विजेंद्र दोनों ही इस दृष्टि से गंगू तेली से भी कोई नीची श्रेणी होती हो तो उसी श्रेणी के थे। अब समझ में नहीं आ रहा था कि इस समस्या का हल कैसे निकाला जाए। आखिर एक युक्ति समझ में आई कि मुहल्ले के कुछ संपन्न लोगों से थोड़े पैसे माँग लिये जाएँ। सो हमने यही किया। कई घरों में पैसे माँगने गए। उन दिनों एक-दो रुपए की भी बड़ी 'वैल्यू' थी। लोगों ने हमारे उत्साह को देखकर किसी ने एक, किसी ने दो रुपए का नोट प्रदान किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तरह से शायद बीस रुपए इकट्‌ठे हो गए। इन रुपयों से हमने नाटक में इस्तेमाल होनेवाली कई चीजें बाजार से खरीदीं। कुछ चीजें किराए पर ले आए। मतलब यह है कि हमारा काम बन गया। उन दिनों चंदौसी शहर में घरों में बिजली नहीं थी। हाँ, सड़कों और गलियों में थी और आज की तरह मिनट में आना और मिनट में जानेवाला क्रम उसका नहीं था। वह आती थी तो विश्वसनीय प्रेमिका की तरह साथ भी रहती थी। सो वह हमारे बहुत काम आई। हमें अपना नाटक गली में ही तो खेलना था, सो खंबे पर बैठे हुए बिजली के बल्ब ने हमें बड़ा सहारा दिया। एक-दो गैस की लालटेनें भी अपना सहयोग देती रहीं।

अब वह दिन भी आया जिस दिन नाटक खेला जाना था। हमने समय रखा रात के आठ बजे का और प्रभु कृपा से वह नौ बजे प्रारंभ भी हो गया। मुहल्ले के मर्द-औरतें और बच्चे मिलाकर कुल साठ-सत्तर लोग तो दर्शक के रूप में उपस्थित थे ही। नाटक शुरू हुआ। यह बात मैं पहले ही बता चुका हूँ कि नाटक का नाम था—'रूखी रोटी'। परदा अभी पड़ा हुआ था और परदे के पीछे से अर्थात् पार्श्वगीत और 'थीम सोंग' के गायक के रूप में मैंने गाना शुरू किया—'ये कथा है रूखी रोटी की, ना तो मछली ना बोटी की। ये कथा है रूखी रोटी की।' और आगे मैंने उस गीत में क्या लिखा था, यह आज याद करने पर भी याद नहीं आ रहा। हाँ, इतना जरूर याद है कि उन दिनों कुछ फिल्मों में ज्यादातर गीत 'थीम सोंग' के रूप में रहते थे और जो उस समय पार्श्वसंगीत के रूप में प्रस्तुत किए जाते थे, जब परदे पर फिल्म-ऐक्टरों और अभिनेत्रियों के नाम दिखाए जाते थे। यह अधिकतर उन फिल्मों में ज्यादा होता था, जो 'जैमिनी थिएटर' की होती थीं। जैसे 'दीया और तूफान' फिल्म में एक गीत था—'यह कहानी है दीये की और तूफान की'। मैंने भी अपने नाटक में इस 'थीम सोंग' का आइडिया यहीं से लिया था। मगर मैं गीतकार प्रदीपजी की तरह कोई बड़ा कवि तो था नहीं, जो सुंदर गीत लिख पाता। मैंने तो तुकबंदी ही की थी। आज जब सोचता हूँ तो खुद भी हँसी आती है। ये भी कोई गीत हुआ—'ये कथा है रूखी रोटी की। ना मछली की ना बोटी की।' अब आप ही बताइए कि थीम सोंग के मुखड़े की पंक्तियों में ही मछली और मीट की 'बोटियों' का जिक्र आएगा तो शाकाहारी दर्शकों का जी नहीं मिचलाएगा क्या? मगर हम तो साहब अपने आप को ना तो फिल्मी गीतकार प्रदीपजी और भरत व्यास या अन्य किसी से कम समझ रहे थे और गाने में न मुहम्मद रफी साहब से। हम तो बस गाते जा रहे थे। क्योंकि मैं परदे के पीछे से गा रहा था, इसलिए दर्शकों की प्रतिक्रिया देखने का सौभाग्य प्राप्त नहीं कर पा रहा था। लेकिन यह अच्छा ही हुआ कि मैं परदे के पीछे था वरना न जाने क्या होता! क्योंकि जो दर्शक थे उनमें से नब्बे फीसदी लोग शाकाहारी ही थे, मगर मेरी इस लाजवाब कविता को सुनकर मेरे संदर्भ में जरूर मांसाहारी हो जाते और मुझे खा जाते। लेकिन मैं आज इस संस्मरण को लिखते हुए अच्छी तरह महसूस कर रहा हूँ कि इस गीत को सुनकर सामने के दर्शकों का जरूर मुँह बिगड़ा होगा। न जाने क्या-क्या भाव-अनुभाव बने होंगे। हो सकता है कि कुछ को ऐसा लगा हो जैसे मछली उनके मुँह में ही चली गई। कुछ 'बोटी' शब्द को सुनते ही नाली की तरफ भागे होंगे। खासकर पंडित कल्लू शर्मा का तो यह हाल हुआ ही होगा, क्योंकि वह तो मीट और मछली के नाम से ही बहुत चिढ़ते थे। सभी को अलग तरह का गुस्सा आया होगा, नाक-मुँह सिकोड़ा होगा और वे उठकर भी चले गए होंगे। मगर हम तो अपनी ही धुन में गाए चले जा रहे थे—'ये कथा है रूखी रोटी की। ना मछली की ना बोटी की।'

खैर, जैसे-तैसे यह गीत समाप्त हुआ और परदा खुला। नाटक प्रारंभ हुआ। एक-दो दृश्य अच्छे निकल गए। फिर एक दृश्य ऐसा आया, जिसमें मैं एक सेठ बना था और मेरा दोस्त विजेंद्र मेरा एक गरीब नौकर। मैं मोटी तोंदवाला एक निर्मम सेठ था, जो अपने नौकरों को बहुत दुखी रखता था। उन्हें मारता-पीटता भी था। उन्हें ठीक से खाने को भी नहीं देता था। विजेंद्र मुझ सेठ का ऐसा ही सताया हुआ नौकर था। वह स्टेज पर फटे-पुराने कपड़ों में मेरे सामने हाथ जोड़े खड़ा था। गिड़गिड़ा रहा था। मैं कुरसी पर बैठा हुआ मूँछों पर ताव दे रहा था। उसे खूब डाँट रहा था। मैं क्योंकि मोटे सेठ की भूमिका में था, इसलिए मेरी तोंद मेज पर रखी हुई थी। मैंने मोटा पेट दिखाने के लिए अपनी कमीज के नीचे बहुत सारे छोटे-छोटे कपड़े ठूँस रखे थे और कपड़ों को ठीक से सँभले रहने के लिए मैंने कपड़ों की सीमा जहाँ समाप्त हो रही थी, वहीं एक रस्सी बाँध रखी थी। कपड़े इतने सारे थे कि मेरा पेट मेज पर रखा हुआ था और मैं कुरसी पर बैठा था। मैं अपने आपको ऐसे हिलाता था कि मेरी तोंद भी मेज पर इधर-से-उधर हिलती थी। दर्शक मेरे इस रूप का खूब आनंद ले रहे थे। खूब हँस भी रहे थे। यही मेरा उद्देश्य भी था। लोग हँसते थे तो मुझे भी मजा आता था। मैं अपने पेट को जो कि तोंद बन चुका था, उसे भी हिलाता जा रहा था और विजेंद्र जो कि मेरा नौकर बना था, उसे भी खूब खरी-खोटी भी सुना रहा था। इसी दृश्य में आगे जो होना था, वह यह था कि मुझे उठकर अपने नौकर को बेंत से पीटना था और पीटना भी खूब था। सो साहब, हुआ यह कि मैं अपनी कुरसी से उठा, मैंने बेंत को हाथ में लिया और विजेंद्र को पीटने लगा। अभी दो-एक बेंत ही उसकी पीठ पर रसीद किए थे कि अचानक मेरी तोंद कमीज से निकलकर मेज पर आ गिरी। हुआ यह कि जो पतली रस्सी तोंद में भरे कपड़ों को रोकने के लिए बाँधी गई थी, वह टूट गई और तोंद में भरे कपड़े नीचे आ गिरे। मैं उस समय कोई कोमेडियन के रोल में तो था नहीं, एक सेठ के रोल में था। किंतु स्टेज पर तो उस समय मैं हास्य का पात्र बन गया। जितने भी दर्शक थे, वे ठहाका मारकर हँसे और मैं अपनी तोंद के कपड़ों को सँभालने और बटोरने में लग गया। मैं खुद भी भीतर-भीतर शर्मिंदा हो रहा था। और कर भी क्या सकता था। वह तो अच्छा हुआ कि जो व्यक्ति परदे को खींचने के काम पर था, उसने यह सब देखकर परदा खींच दिया और फिर यह परदा खुला नहीं। नाटक एक तमाशा बन गया और यहीं समाप्त हो गया।

जब नाटक ही समाप्त हो गया तो मैं ही यहाँ क्या कर रहा हूँ। चलिए मैं भी अपनी बात यहीं समाप्त करके अपनी लेखनी को रोकता हूँ और यह कहते हुए विदा लेता हूँ—ये कथा है रूखी रोटी की।

अब मुझे इन पंक्तियों को सुनाने में कोई सांस्कृतिक डर नहीं है, क्योंकि सन् १९५५ और अब में ५५ साल का अंतर हो गया है और अब तो इतना धार्मिक तथा सांस्कृतिक बदलाव आ चुका है कि पंडित कल्लू शर्माजी के बेटे और नाती-पोते भी मांसाहारी हो चुके होंगे।

२ एफ-५१, नेहरूनगर,
गाजियाबाद-२०१००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम झरोखे बैठ के

अन्ना और टोपी-क्रांति

● गोपाल चतुर्वेदी

देश के औपचारिक इतिहास में आजादी के बाद, यदि किसी का योगदान है, तो जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गांधी, संजयजी, राजीवजी, सोनियाजी और राहुलजी वगैरह का है। इस बीच में पटेल, कृपलानी, पंत, लोहिया, आजाद, अंबेडकर, जय प्रकाश वगैरह जैसे 'सीमित प्रभाव और संकुचित नजरिए' के नेता भी कभी अँधेरे में जुगनुओं की तरह टिमटिमाए, पर इन तवारीखी ज्योति-पुंजों के समक्ष उनकी एक न चली! जब सत्ता का सूरज उगता है, तो जनसेवकों जैसे दीयों का अस्तित्व खुद-बखुद मिट जाता है।

सूरज से आँख मिलाने की मूर्खता सिर्फ कुछ सिरफिरे ही करते हैं। यह भी सच है कि ऐसे मुँहजोर हर युग में और हर मुल्क में उतने ही लाजमी हैं जितने खेतों में खर-पतवार, बड़ी खरीदों में पैसे का शिष्टाचार या फिर बाजारू जीवन के आधुनिक वैलेंटाइन, मदर्स, फादर्स डे जैसे त्योहार। इनका मुकाबला हमारे पारंपरिक उत्सव क्या खा-खिलाकर करेंगे? यों दिवाली लोकप्रिय है। उसमें काला धन फूँककर, सौदागर, पूँजीपति, पैसा-पशु कुरसी पूजते हैं, उसे भेंट-गिफ्ट से लादकर और आपस में रोशनी के प्रदर्शन की प्रतियोगिता सजाकर। ऐसे नुमाइशी उजियार पर उन्हें अपना एकाधिकार साबित करना है और साथ ही यह भी कि उसके नीचे का अँधेरा सामान्य आदमी के लिए आरक्षित है। अपना प्रायोजित प्रकाश और आम इनसान के जीवन में अभावों के अंधकार की तुलना ही उनका पैसा-वसूल आनंद है।

लोहिया, जयप्रकाश आदि स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेनेवाले गांधी के संपर्क में आए नेता थे। उनकी सेवा, त्याग और बौद्धिकता का कद था। दोनों का व्यक्तित्व चमत्कारी था। इसके विपरीत अन्ना हजारे, विशुद्ध गाँव के हैं। गनीमत है कि कांग्रेस के शहरी, प्रबुद्ध और सभ्य प्रवक्ता ने उन्हें सिर्फ 'तुम सिर से पाँव तक भ्रष्टाचार में डूबे' ही कहा, 'अनपढ़, गँवई, गँवार' कहने से चूक गया। ऐसे आदर्श संस्कारियों की कांग्रेस में न कमी थी, न है। न किसी विश्वविद्यालय की डिग्री, न डॉक्टरेट, न किसी प्रकार की बौद्धिक विशिष्टता, न मार्क्स-लेनिन का अध्ययन, न किसी प्रकार की विचारधारा से जुड़ाव। कुल जमा दर्जा सात तक पढ़ाई। फौज में बहैसियत ड्राइवर की नौकरी और पाँच सेवा-पदक कमाकर सवैच्छिक सेवा-निवृत्ति। बाद में पुणे से साठ किलोमीटर दूर रालेगण सिद्धी नामक गाँव का कायाकलप। आज स्कूल, कॉलेज, अस्पताल सब वहाँ हैं। अपनी निस्स्वार्थ ग्रामसेवा के दौरान उन्होंने निचले स्तर के पटवारी, तहसीलदार, बाबू के भ्रष्टाचार को करीब से देखा है। सब जानते हैं। हर पंचवर्षीय योजना के साथ करप्शन का भी नियोजित विकास हुआ है। अहिंसा, सेवा और सादा जीवन तथा अनशन में वह गांधी के अनुयायी हैं। यह दीगर है कि भारतीयों द्वारा चलाई जा रही जनतांत्रिक व्यवस्था में अपनी बात के आग्रह को सत्याग्रह नहीं कहकर, अनशन द्वारा माँगें मनवाने को, कुछ लोग हठयोग क़ा दुराग्रह भी मानते हैं।

अन्ना को सालता है कि कभी गंगोतरी से जीवनदायिनी गंगा प्रवाहित होती थी। आज ऊपर से नीचे तक उसके स्थान पर करप्शन की गटर है। सड़क से लेकर संसद् तक और बिजली-पानी से लेकर निजी कॉलोनी तक सब जगह सरकार का दखल है। हमें याद है, एक बाबू के पास हम पहुँचे तो उसकी बाँछें खिल गईं। 'अब बचके कहाँ जाओगे बच्चू' के खयाल में वह ऐसा मगन था कि उसने कैंटीन में हमें चाय पिलाई। इस उम्मीद के साथ कि वह एक चाय के बदले हमसे लगातार 'हाय, हाय' करवाएगा। हुआ भी यही। अब तक वह हमसे पूरी कैंटीन खा चुका है। काम का कल, अभी तक नहीं आया है। इस भ्रष्टाचार के गटर-जल से सबको आचमन करना ही करना। सरकार और भ्रष्टातुर कर्मचारियों ने कायदे-कानून ही ऐसे बनाए हैं कि जिस सहकारी संस्था ने उससे धेला तक नहीं लिया है, वहाँ भी उसका वर्चस्व कायम रहे। बाबू-बड़े बाबू करप्शन के कारनामों में ऐसे दक्ष हैं कि जब तक ऊपर से हुकुम न आए या नीचे से कोई अंटी ढीली न करे, हर कागज अनिर्णय के अरण्य में पड़ा रहता है।

अपन मानते हैं कि बड़े-से-बड़े और छोटे-से-छोटे तक के भ्रष्टाचार से हर आम ही नहीं, खास आदमी भी चीं बोल चुका है। यदि ऐसा नहीं होता तो अन्ना के जन-लोकपाल के समर्थन में ऐसा जन-समर्थन कैसे उभरता? कुछ चंद अपवादों को छोड़कर, आज के तथाकथित जनसेवक निजी स्वार्थ के नाकारा पुतले हैं। उनके खिलाफ व्यापक मौन जनाक्रोश को अन्ना ने स्वर दिया है। सब जानते हैं। न अन्ना करिश्माई व्यक्तित्व के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकार सरकार है। मंत्री मंत्री है। वह इतने साजिशों के आदी हैं कि उन्हें खालिस जन-समर्थन में साजिश की बू आती है। कुछ गड़बड़ है। इसके पीछे देश के दुश्मन तो नहीं हैं? यह किस कारपोरेट हाउस की हरकत है? तभी सरकारी बुद्धि का बल्ब जलता है। जरूर, इसमें संघ का हाथ है। पूरा खेल उनका है। भाजपाई हैं अन्ना के आंदोलन के पीछे। पुलिस के जासूसों को क्या खबर होगी? उन्हें क्या पता? षड्यंत्रों में माहिर हैं भाजपाई। अयोध्या में बाबरी गिरवा दी, अब सरकार गिरवाने में लगे हैं। चुनावों में मुँह के बल गिरकर भी होश नहीं आया। अब अन्ना को भाऊ नहीं, भागीदार बना रहे हैं, अपनी गैर-प्रजातांत्रिक वारदातों का।

धनी हैं, न उनमें भाषण का हुनर है। उनके आकर्षण और लोकप्रियता का इकलौता कारण भारतीय जनमानस में करप्शन, अकड़फूँ, कपट और कुटिलता से उपजा कलह है।

सरकारी करप्शन तो ऐसा व्यापक है कि चाहे 'टू-जी' हो, या फिर गाँवों के बेरोजगारों की खैरात का मनरेगा, सब जगह धन की धाँधली है। कागज में बने स्कूल, पुल, सड़क, गरीबों के आवास, नाली, खड़ंजा सब पहली बारिश में ऐसे धुलते हैं कि उनका नामोनिशान तक नहीं बचता है। नियुक्ति सिपाही की हो या सफाई-कर्मी की, सबकी नियत 'रेट' है। जाहिर है कि सबसे अधिक त्रस्त इस व्यवस्था से गरीब हैं। खेत और घर के गहने-जेवर बेचकर उसने सिपहिये की मलाईदार सत्ता पाई है। अब उसे अपना मूल धन ब्याज के साथ पटरीवालों, टुच्चे गिरहकटों या पान-सिगरेट के खोखेवालों से वसूलना ही वसूलना। उसके लिए यह इनसाफ का तकाजा है, भुक्तभोगियों के लिए सरकार का दंड।

जनतंत्र का कड़आ सच है कि चुनाव का खर्चा सुरसा का मुँह हो गया है। पंचायत, मेयर, कारपोरेटर, विधायक या सांसद, सब धन के बल पर ही जन-सेवा की सनद पाते हैं। सामाजिक विद्वेष, जात-पाँत के जहर और भेदभाव को स्थायी बनाने और टिकाए रखने में इन सियासी दाँव-बाजों की प्रमुख भूमिका है। शिक्षा के शहरों में प्रचलन से जात का जोर कम होते-होते समाप्त होने के कगार पर था। गाँवों को निरक्षर रखने में हमारे इन महान् नीति निर्धारक नेताओं का निजी स्वार्थ है। जात के जहर से जनतंत्र और विकास दोनों भुगतते हैं। जीत के कॉकटेल में दौलत, दारू, और जात के तीन प्रमुख तत्त्व हैं। कोई सोचे। देश के विकास और सामाजिक-सुधार की जगह, भ्रष्टाचार की तरक्की में हमारे काबिले-तारीफ जननायकों का कितना महान् योगदान है! आलम यह है कि जब ये मुँह से सदाचार के आदर्श उगलते हैं, तब भी अंदर-ही-अंदर ऐसे भ्रष्टाचार के सपने सँजोते हैं। इनके विपरीत अन्ना गाँव के मानुस हैं। वह गाँव के मंदिर के एक कमरे में टूटी-फूटी मेज, कुरसी और चारपाई के जरिये गुजारा करते हैं। न उनके साथ सायरन बजाती गाड़ी चलती है, न सिक्योरिटी। उनका विश्वास गांधी के सादा जीवन में है। वह अपनी धुन के पक्के हैं। अहिंसक हैं। भ्रष्टाचार उन्हें बरदाश्त नहीं है। महाराष्ट्र में वह कई भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन चला चुके हैं। उनकी विश्वसनीयता है। सरकार या उसके मंत्रियों की कैसे हो? सरकार पहले से मान-मनौवल करती है, बात बनी तो ठीक वरना उसका चरित्र-हनन। फिर भी छवि पर आँच न आए तो उसका बर्बर दमन। कोई याद करे! बाबा रामदेव के समर्थक कैसे भूलेंगे, रामलीला मैदान पर सोते लोगों पर पुलिस का बहशीपन। बाबा ने दाढ़ी-मूँछ के साथ महिला का भेस धरकर भागने का प्रयास किया और धरे गए। पर बाबा-पलायन से प्रजातांत्रिक पुलिस का जुल्म--अत्याचार का कीर्तिमान कम नहीं होता है। बाबा योगगुरु हैं, व्यापारी हैं, महत्त्वाकांक्षी हैं! न गांधी के चेले हैं, न अन्ना के समान सिर्फ एक समाजसेवक।

स्वयंसिद्ध है कि सरकार नजीरों पर चलती है। 'प्रिसीडेंट' से हँकती है। ऐसा नहीं कि उसके ढेरों मंत्री अक्ल से कोरे हैं। पर वह अपनी बुद्धि को जाया क्यों करें? गाँठ की अक्ल तो हाई कमान को पटाने, घर भरने, जनता को उल्लू बनाने जैसे निजी कामों के लिए सुरक्षित हैं। फिर एक बाबा का दिमाग तो दमन से ठिकाने आ गया तो दूसरे संत पर भी बेंत-डंडे का प्रयोग क्यों न किया जाए। एक बार इसने तिहाड़ का तीरथ किया तो अनशन-वनशन सब भूलेगा। देखें, कब तक जन लोकपाल का ढिंढोरा पीटता है? जनता भी जान जाएगी कि इसके पास जाना खतरे से खाली नहीं है। लात-जूते से अच्छे-अच्छों की क्रांति के भूत भागते हैं। यह जो जनता है, जन-लोकपाल की फिक्र करेगी कि अपनी दाल-रोटी की।

यों भी सियासी नेताओं का अनुभव भाड़े की भीड़ का है। जब वास्तविक भीड़ जुटती है तो उन्हें विश्वास नहीं होता है। पहले वह संदेह करते हैं। पुलिस-आई.बी. के जासूसों से खोज-खबर लेते हैं। फिर उनके हाथ-पाँव फूलते हैं। वाकई इतनी जनता इस बुढ़ऊ के साथ है? लोग हैं कि खुद-बखुद आए जा रहे हैं। न उन्हें ढोने को ट्रक हैं, न खिलाने को आलू-पूड़ी, न देने को दिहाड़ी! अब क्या करें? इसे तिहाड़ से निकालो और वापस गाँव भेजो। गांधी का चेला कौन कम है? उसका अनशन जेल के अंदर चालू है। बाहर भीड़ बढ़ती आ रही है। गजब है अन्ना का नैतिक प्रभाव। भीड़ है, हिंसा नहीं है। नारे हैं, पर सिर्फ भारत माता की जय और वंदेमातरम् के। हतप्रभ सरकार घुटने टेक देती है। अब रामलीला मैदान में अनशन-लीला की अनुमति है, बिना शर्त।

सरकार सरकार है। मंत्री मंत्री है। वह इतने साजिशों के आदी हैं कि उन्हें खालिस जन-समर्थन में साजिश की बू आती है। कुछ गड़बड़ है। इसके पीछे देश के दुश्मन तो नहीं हैं? यह किस कारपोरेट हाउस की हरकत है? तभी सरकारी बुद्धि का बल्ब जलता है। जरूर, इसमें संघ का हाथ है। पूरा खेल उनका है। भाजपाई हैं अन्ना के आंदोलन के पीछे। पुलिस के जासूसों को क्या खबर होगी? उन्हें क्या पता? षड्यंत्रों में माहिर हैं भाजपाई। अयोध्या में बाबरी गिरवा दी, अब सरकार गिरवाने में लगे हैं। चुनावों में मुँह के बल गिरकर भी होश नहीं आया। अब अन्ना को भाऊ नहीं, भागीदार बना रहे हैं, अपनी गैर-प्रजातांत्रिक वारदातों का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक और मंत्री हैं। उनका खयाल है कि उधर ऊपरवाले ने सारी अक्ल बस उन्हें बख्शी है। लिहाजा जनता हो या उनके संगी-साथी, सब दिमाग से पैदल हैं। अभी भी मौका है। ऐसे पुलिसिया हथकंडे अपनाएँगे इस 'ए-कंपनी' के खिलाफ कि सब ठंडे पड़ें। क्यों न प्रचारित किया जाए कि इस आंदोलन से अल्पसंख्यक और दलित खफा हैं? यह सारा मध्यवर्गीय शहरियों का बखेड़ा है। शोर है। यह जो टी.वी. है, यह बढ़ा-चढ़ाकर भ्रामक आँकड़े दे रहा है। दस-बारह को हजारों बता रहा है। सब कैमरे की चतुराई है। हमें मीडिया पर अंकुश लगाना है।

इसे अन्ना का ही योगदान कहेंगे कि उन्होंने सरकार के प्रशासनिक दीवालियापन की सार्वजनिक कलई खोल दी है। इस आंदोलन से यह भी साबित हो गया है कि सरकार जनता की आवाज सुनने के नाम पर झाँसा देती है। उसे अपनी आलोचना कतई बरदाश्त नहीं है। मिल-बैठ के, पारस्परिक सहमति से निर्णय का महज वह नाटक करती है।

उसमें चतुर और शातिर वकील हैं। वाक्-चातुर्य कोर्ट की बहसों में उपयोगी है, ईमानदार पारदर्शी फैसलों में नहीं। ऊपर से लेकर नीचे तक के भ्रष्टाचार को रोकना त्वरित विकास की आवश्यक शर्त है। पर हर सत्ता दल की प्राथमिकता चुनावी जीत है। इसके लिए उसे अल्पसंख्यक और दलित वोट बैंक बनाने हैं। हर वर्ग को रिझाना है। वह वोट जुगाड़े धन-प्रलोभन से कि भ्रष्टाचार के विरुद्ध एक्शन लेकर अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारे! वह कोई कालिदास हैं? इन सियासी सियारों को अन्ना 'लबाड़' लोगों की भीड़ कहते हैं। बड़ा प्रभावी और ताकतवर शब्द है 'लबाड़'। हम इतना जानते हैं कि जनता की अदालत में एक न एक दिन ऐसे लबाड़ शर्तिया कबाड़ बनेंगे। एक और प्यारे शब्द का योगदान है अन्ना का। वह है 'खोडसाल'। इसका भी हमें कोई हिंदी पर्याय नजर नहीं आता है। घोटाले तक तो ठीक है। सब सरकार की घोटाला और गोलमाल दक्षता से परिचित हैं। पर 'खोडसाल' क्या बला है? अन्ना का कहना है कि उनकी गिरफ्तारी के पीछे वास्तविक 'खोडसाल' के जिम्मेदार गृहमंत्री हैं। ऐसे नए जोरदार शब्दों की सौगात के लिए हम अन्नाजी के आभारी हैं।

अन्ना के आंदोलन के समर्थन में युवाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया है। हमें लगता है कि यह हर स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार के विरुद्ध प्रतिक्रिया है। जन-लोकपाल करप्शन के विरुद्ध सिर्फ एक पहल है। प्रतीक है। पहला कदम है। इससे सरकारी तंत्र की धमनियों में खून की तरह दौड़ने वाले भ्रष्टाचार का जड़ से उन्मूलन शायद ही मुमकिन है। नौसिखिया भ्रष्टाचारी इसमें फँसेंगे, दंडित होंगे, पर लबाड़ करप्ट कौन जाने यहाँ भी बच निकलें! आज व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन की दरकार है। किसमें यह साहस है? कानून में घूस देने और लेनेवाला दोनों गुनहगार हैं। पर इसे सहनेवाला? वह भी तो दोषी है वरना सरकार की नाक के नीचे, उसके मंत्रियों द्वारा करोड़ों का खेल कैसे खेला जाता, बिना किसी मिलीभगत और बिना किसी रोक-टोक के!

कुछ इसे केवल मध्यवर्गीय विद्रोह मानते हैं। वह विद्वान् हैं। ज्ञानी हैं। हमसे बहुत अधिक जानते हैं। पर क्या यह सच है? आज गाँवों में भी शहरीकरण का असर है। जमीन के जबरन अधिग्रहण की आवाज अन्ना के आंदोलन से और मुखर है। ऐसे भी अन्ना गाँवों के अपने हैं। इस देश की असलियत है। जहाँ चुनाव है, वहाँ भ्रष्टाचार है। नरेगा की राशि का दुरुपयोग है। पंच-सरपंच के निजी विकास की शिकायत है। सार्वजनिक फंड हड़पे जा रहे हैं। भ्रष्टाचार आज ऐसा जख्म, है, जो हर घर, गाँव, चौपाल में रिस रहा है। यह अन्ना का कमाल है कि अब देश का हर आदमी इस दर्द की दवा पाने को बेचैन है।

इन हालात में क्या अन्ना देश का आदर्श बनेंगे? क्या उनकी सादगी और सिद्धांतों का अनुकरण होगा? हमें शक है। गांधी को तो कांग्रेसी तक आदर्श नहीं मानते हैं। अन्ना तो उस ऑरिजनल की केवल आधी-अधूरी नकल हैं। हम बेहद सुविधापरस्त लोग हैं। करोड़ों देवी-देवताओं को पचा चुके हैं अबतक। एक-दो ही क्यों, हजारों अन्ना को भाव-भक्ति से हजम कर लेंगे। अन्ना की जीवन-शैली कौन अपनाएगा भला? एक अदद चारपाई, मेज-कुरसी, न फ्रिज, न ए.सी., न सोफा, न कालीन, न नौकर, न कुक, न कार, न कोठी! यह जिंदगी है कि कंबख्ती। इसी के लिए खून-पसीना एक करते हैं क्या लोग? घूस लेना-देना बंद कर दें, यही क्या कम है!

कल ही हमारे दोस्त अन्ना-असर से लबालब एक सरकारी दफ्तर में अपने ड्राइविंग लाइसेंस को 'रिन्यू' करवाने गए थे। बाहर खड़े संबद्ध दलालों ने उन्हे घेर लिया। मोल-तोल, सौदेबाजी और मिन्नत-मनौवल के बाद, प्रतियोगी माहौल की वजह से, सौदा डेढ़ सौ रुपए में पटा। उन्होंने सहायक आर.टी.ओ. का रुख किया। एक घंटे इंतजार करवाकर अफसर ने दर्शन दिए। "मुझे अपने ड्राइविंग लाइसेंस का नवीनीकरण कराना है। यह अरजी है, पुराने लाइसैंस के [illegible]। बाहर दल्ले इसके लिए डेढ़ सौ रुपए की घूस माँग रहे हैं।"

"बड़ा गलत है," कहकर अफसर ने मुस्की छाँटी। अरजी पर चिड़िया बनाई और बोला, "काउंटर पर मुरारी बाबू को दे दीजिए।"

वह क्यू में लगे। बाबू मिलनसार था। अरजी पर सिगनेचर देखकर उसने उन्हे अंदर बुलाया—"देखिए सर! आप गलतफहमी न पालें। कुल जमा सौ का पत्ता निकालिए, कल लाइसेंस ले जाइए, वरना अरजी ही नहीं, मूल लाइसेंस भी खोने का खतरा है।"

मित्र कुछ खीज गए थे, इस लंबी व्यर्थ की बहस-तकरार के बाद उन्होंने जेब से अन्ना कैप निकाली और उसे दिखाई। "भैयाजी, सौ का पत्ता दो, सिर्फ टोपी से काम नहीं चलेगा। यों बुरी नहीं है, घर में पोंछे के काम आएगी।"

मित्र बताते हैं कि झक मारकर वह सुविधा शुल्क और टोपी दोनों जमा करके लाइसेंस ले आए हैं।

ईमानदारी अब सिर्फ एक पोंछा है। वह करप्शन का फर्श चमकाता है। टेबल-टॉप साफ रखता है और क्लीन छवि बनाता है। जीवन में उस का यही उपयोग है। अब न कोई टोपी लगाता है और न ईमानदारी बरतता है। अन्ना और उनकी टोपी दोनों अपवाद हैं। इतना ही क्या कम है कि टोपी अब दिखने लगी है। क्या पता, कभी उसके दिन भी फिरें! पूरे मुल्क को इस तवारीखी टोपी-इनकलाब का इंतजार है।

९/५ राणा प्रताप मार्ग,
लखनऊ-२२६००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन कविताएँ

● दिविक रमेश

शर्म खाऊँ तो क्यों?

जब वे पूरी तरह
नोंचने-खसोटने पर
उतारू हो गए
तो मैंने खुद को
पूरा नंगा हो लेने दिया
अब
चाहे मैं कायर हुआ
चाहे संत
या फिर कहो वक्त का मारा हुआ ही
पर सच यह है
मैं नंगा हूँ
और उनकी वजह से हूँ
अब वही बताएँ
गलत व्यवस्था के चंगुल में फँसी
नंगी भूखी बिलबिलाती
खराब होती प्रजा की तरह मैं
अपने बेबस हालात पर
शर्म खाऊँ तो क्यों
किस खुशी के लिए ढकूँ
अपनी हथेलियों से
अपना नंगापन
केवल उनकी शान के लिए?
या फिर
वतन की आन के लिए? □

जन्म : १९४६, गाँव किराड़ी, दिल्ली।
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पी-एच.डी. (दिल्ली विश्वविद्यालय)।
पुरस्कार-सम्मान : 'गिरिजाकुमार माथुर स्मृति पुरस्कार', 'सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार', 'साहित्यिक कृति पुरस्कार', 'साहित्यकार सम्मान', 'राष्ट्रीय बाल-साहित्य पुरस्कार' के अलावा दर्जनों सम्मान।
प्रकाशन : पाँच कविता संग्रह, एक काव्य नाटक, चार आलोचन-शोध, पच्चीस बाल साहित्य की पुस्तकें, बाल नाटक, देशी तथा विदेशी भाषाओं की अनेक कविताएँ अनूदित। कुछ रचनाएँ पाठ्यक्रमों में निर्धारित।
संप्रति : प्राचार्य, मोतीलाल नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

आगमन

बहुत दूर के हिस्से में पड़ा वह
भाप की तरह उड़ा चला आता है सागर तक
सागर के माथे की लकीरें
हर बार लगी हैं उसे
अपना नसीब
कहीं कुछ नहीं रह जाता अनचीन्हा
एक खरा अपनापन
हो लेता है साथ-साथ।
समुद्री हवा
कितनी बेझिझक है, थोड़ी बेशर्म भी
सचमुच कितनी अपनी!
एक-एक लहर
किसी पवित्र हँसी की तरह
भीतर तक मल देती है
कितने-कितने अदृश्य रंग। □

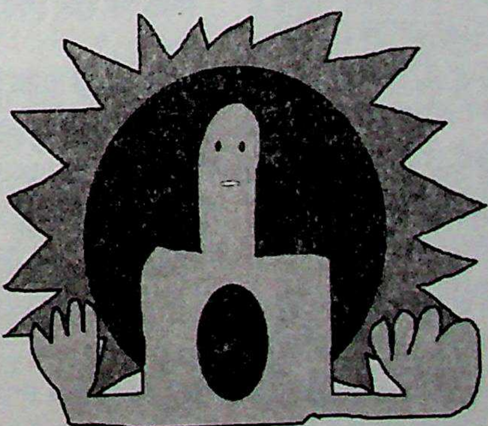

अपने को जोड़ते हुए तुझसे

परात में
ओसन कर रखे आटे-सी
आस है तू भरी-पूरी।
पेट की एक बेसब्र बाट है
खुशबू है
चूल्हे पर चढ़ी
उफान ले रही दाल की।
स्वाद है
अलौकिक
अनिर्वचनीय।
तेरी पुरानी कहानियों में
आज भी खेल रहे हैं हम
लुक्का-छिप्पी।
हम अलग तो नहीं हैं न तुझसे
माँ?

बी-२९५, सेक्टर-२०
नोएडा-२०१३०१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारावाहिक उपन्यास-१०

सीढ़ियाँ

● शैलेश मटियानी

श्री शैलेश मटियानी हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार थे, उनका जन्म १४ अक्तूबर, १९३१ को अल्मोड़ा जनपद के बाड़ेछीना गाँव में हुआ। उनकी शिक्षा हाई स्कूल तक हो पाई, परंतु हिंदी साहित्य में उनका अनन्य योगदान है। उनके तीस कहानी संग्रह, इकतीस उपन्यास तथा नौ अपूर्ण उपन्यास, तीन संस्मरण पुस्तकें, निबंधात्मक एवं वैचारिक विषयों पर बारह पुस्तकें, लोक-साहित्य पर दस पुस्तकें, बाल साहित्य की पंद्रह पुस्तकें प्रकाशित हैं। उन्होंने 'विकल्प' एवं 'जनपक्ष' पत्रिकाओं का संपादन किया। उनकी अनेक कृतियाँ पुरस्कृत हुईं तथा 'फनीश्वर नाथ रेणु पुरस्कार', 'साधना पुरस्कार', उ.प्र. हिंदी संस्थान का 'लोहिया सम्मान', केंद्रीय हिंदी निदेशालय का 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' सहित उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। उनका महाप्रयाण २४ अप्रैल, २००१ को दिल्ली में हुआ।

"बाँसुरी का छोड़, इसके हाथ के दो लंबे हाथों का रंग भी देख जाती तो बहुत होता।···यह देख तो, जरा सी बात पर कैसा छोकरियों सा मुँह बना लेता है।" माँ ने प्यार से हाथ फेरा तो सुनीत ने मुँह फेर लिया।

माँ कहते हुए बाहर निकल गई कि 'द्वारिका, जरा इसे समझा दिया कर बेटे, कि मेरे जीते जी चाहे रात-दिन बाँसुरी बजाता रहे, मगर लावारिसों की तरह रोकर मेरा कलेजा न चीरे। इसके पिता ठीक ही कहते थे कि जमुना जब तक इसकी आँखें न खुल जाएँ, सीढ़ियों की तरफ को मत निकलने देना। मगर मुझसे सँभलता नहीं है।'

द्वारिका फिर दरवाजा बंद कर आया। बोला, "यार जिस आदमी को ऐसी देवी सरीखी माँ मिली हुई हो, उसको तेरी तरह झाँड़ औरतों का जैसा भेष बनाकर खिड़की की छड़ों पर सिर टिकाकर क्लारिनों के कुल्लों की आवाज सुनते रहने की जगह डूब मरना चाहिए। अगर इस पनाले पर से तू प्रिंसिपल भटनागर की लौंडिया को मुसकराते हुए देखना चाहता है तो फिर एक दिन वही आएगा, जो हेडमास्टर माताराम की लड़की की शादी के दिन आया था। और उल्लू यों जब प्यार से मुँह पर हाथ फेर रही थी तो तूने मुँह क्यों फेर लिया?"

सुनील कहना चाहता था—'यार, जब माँ दया की भावना से मेरे मुँह पर हाथ फेरती है, तो मुझे लगता है, अनाथालय का मैनेजर गुप्ता हाथ फेर रहा है।'

द्वारिका ही बोला, "देख डियर, तेरी चुप्पी के दर्द को बहुत बेहतर समझता हूँ। और तू यों समझ कि जब मैं तुझे लताड़ रहा हूँ कि ससुरे, लगातार दस साल से जब खुद इसी शहर में झख मार रहा है और अब गेट कीपरी करके होटल वाले का बिल चुकाता है तो दूसरों को उपदेश क्या देता है? मगर दोस्त म्यूनिस्पैलिटी की क्लर्की छोड़ करके यहां गेटकीपरी मैंने पकड़ी है तो कुछ सीखा भी है। एक तो यह साला लगता रहता है कि जब तक अपुन को टिकट नहीं दिखाए, कोई ससुरा सिनेमाहॉल के दरवाजे के अंदर घुस नहीं सकता, इसमें भी बड़ा आनंद है। दूसरे, बचपन से ही बीच में घुसकर मेला देखने की आदत पड़ी हुई है। टिकट लेते फाड़ते हुए देवानंद स्टाइल का मजा भी ले लेते हैं। और फिर बेंच पर पोस्टर बिछाकर यह सोचते हैं कि प्यारे द्वारिका, इस चक्कर में तुम मारे जाओगे कि क्लर्की करना नहीं चाहोगे और अफसरी की औकात नहीं है।···मगर डियर, इसी कालीचरण बर्मन के बेटों को सन् छियालिस तक मैने पाँच आने वाला टिकट लेने के लिए पसीने से तर होता हुआ भी देखा है और आज जुम्मा-जुम्मा सन् बावन में शुगर मिल चलाते हुए भी देख रहा हूँ।···और सुना है, मानसरोवर को खरीदने के चक्कर में भी है। तो यों समझ कि खेल सिर्फ कुदरत का ही नहीं होता, कुछ अपनी करनी का भी होता है।"

सुनील ऊब रहा था। कहाँ वह यह सोच रहा था कि 'थोड़ी देर प्रियंवदा की चर्चा रहेगी और फिर अपनी हाजा लिखी हुई गजल सुनाएगा। उसके बाद शारदा बाबू के कला मंदिर में चला जाएगा। द्वारिका हमेशा ही बातून रहा है, यह सुनील जानता है, मगर अनुभव उसके गहरे हैं, निष्कर्षों पर वह बहुत जल्दी पहुँच जाता है, यह खूबी भी उसमें है। कल तक सुनील सिर्फ प्रियंवदा के मुसकराने के प्रति जिज्ञासा करने तक पहुँच पाया था और द्वारिका ने उसे मिनटों में आने वाले निष्कर्षों तक पहुँचाकर छोड़ दिया है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्यों बोर हो गया है क्या? अभी शेरो-शायरी की बात शुरू कर दूँ तो तू फिर यों चालू हो जाएगा कि मेरा बोल ही बंद कर देगा। मगर आज तू जरा मेरी बात को ध्यान से सुन ले। यह तो तू मानेगा या नहीं कि तेरी आत्मा लड़कियों के प्यार के लिए बहुत तड़पती है? मगर माई डियर फ्रेंड, प्यार करने वाले के पास सिर्फ दिल में ही नहीं, घर में भी जगह होनी चाहिए। तेरा घर एक बार जो लड़की देख लेगी, वह तोताराम के कैंटीन की बेंच पर बैठकर मुझसे बातें करना ज्यादा पसंद करेगी। और देख, आजकल की लड़कियाँ खालिश फिल्मी टाइप होती हैं, तो परदे पर गरीब हीरो की जुदाई में आँसू बहाने के लिए हजारों-लाखों रुपयों की रकम ऐंठती हैं। अपने जोन तू रोज साफ टी-शर्ट पहनकर निकलता है, मगर लड़कियाँ जान जाती हैं कि लगातार हफ्ते-हफ्ते तक डिजाइन एक ही रहता है।"

"मगर तू आज ये सब लीडरी क्यों झाड़ रहा है? तू मुझसे कहना क्या चाहता है कि मैं भी तेरे साथ गेट-कीपरी करने लगूँ। और तू ही कौन सूट पहने फिरता है।"

"मैं तो कल से नगवा कुरता पहनने की स्कीम बना रहा हूँ, और मेरे साथ तू भी बंगाली कुरता पहनना शुरू कर दे और चौड़ी मोरी का पहन पायजामा और कोल्हापुरी चप्पल। बुरा मत मानना, शक्ल में तू दिलरुबा जरूर है और अपने लायक संगीत शायरी का गुण भी तुझमें कम नहीं है, मगर पहनावे से तू कलाकर की जगह दीवाना ज्यादा लगता है। टी-शर्ट में तू ठीक वैसा ही दिखाई देता है, जैसा सूट-टाई पहना देने पर पार्वती नंदन चेयरमैन लगेगा। देख, नक्शेबाजी की भी एक अपनी अलग फकत होती है। तू अभी तक कलाकार बनने में जोर लगाता रहा है, और मजनू दिखाई देने लग गया है, मगर मजनू कभी सफल नहीं होता गुरु। आर्टिस्ट होने का हुनर एक अलग चीज होता है और वह संगीताचार्य बृजनारायण पुरोहित में है। बेटों को तानपूरा पकड़ने की भी तो तमीज नहीं, मगर खोले हुए हैं संगीत विद्यालय। तुम्हारे उस्ताद शारदाबाबू गुरु उदयशंकर के शगिर्द रह चुके हैं, मगर अभी धूल फाँक रहे हैं। हालाँकि अब उस शख्स में मुझे नक्शेबाजी दिखाई देने लग गई है। जब से अपनी चचेरी बहनजी का डाइवोर्स कराकर उसने आश्रम चालू कर दिया है, उसके चेहरे पर रौनक दिखाई देने लग गई है। हालाँकि दक्षिण होटल वालों का उधार अभी तक महीनों तक चलता रहता है। कल रात सुना है, बाबू चंद्रिकाप्रसाद वहाँ रिहर्सल देखने पहुँचे हुए थे।"

"हाँ, हाँ, वह तो मेरे सामने ही आए थे।"

"अरे, तो तू क्यों बताने लगा। मुझे इन बातों की इंपोरेटेंस क्या पता है? यहाँ तो मानसरोवर के गेट पर बैठे-बैठे सारे शहर की पॉलिटिक्स पर नजर रखते हैं। और पहलू लिखकर मुझसे आज जान ले कि जब-तब असली चीज की जगह सिर्फ रिहर्सल ही दिखाने के चक्कर में तेरा उस्ताद रहेगा, बिरजू पुरोहित के सामने खड़ा नहीं हो सकता। द्वारिका कहता रहा—इसी मोहल्ले में बेटा पार्वतीनंदन की हवेली भी तो है?"

"वो जो तिरंगा झंडा फहराता दिखाई दे रहा है।

"हैं, एक दर्जन लठैत तो मेरे बेटे के यहाँ हमेशा मुस्तैद रहते हैं और आज जो तुम इस चूतिये को ट्रांसपोर्ट कंपनी का मालिक बना हुआ देख रहे हो, सो यह तिरंगे झंडे की नहीं, बल्कि डंडों की बदौलत बना हुआ है। सन् चौवालीस में इसने पूरे अट्ठाईस कांग्रेसी विक्टोरिया ग्राउंड में ही लंबे करवा दिए थे, मगर दूरबीन बेटे की इतनी तगड़ी है कि बाबू कामतानाथ को पुलिस वालों से भी बचा के अपने घर उड़ा ले गया था। और तैंतालीस में हो गए बाबू कामतानाथ मिनिस्टर, तो अब जो नेता पार्वतीनंदन का नक्शा है, वह देख ही रहे हो। यह गुर सीखना बहुत जरूरी है प्यारे कि डंडा भी लीडर को बचाकर ही चलाना चाहिए।"

"यार, तू तो जैसे इन लोगों की डायरी तैयार करके रखे हुए है। तू किसी पोलिटिक्स पार्टी-वार्टी, में भरती हो जाए तो ज्यादा ठीक रहेगा।" अब की बार सुनील थोड़ा सा मुसकरा दिया।

"मुझे घुसने कौन देगा? अब तो जेल जा करके नेता बनने का वक्त भी चला गया। मुझे तो यही पछतावा है कि जो उम्र मेरी आज बीस वर्ष की हो गई, सन् 42 में हो गई होती, तो अभी तक कुछ-न-कुछ हो चुका होता। अब ज्यादा-से-ज्यादा किसी एम.एल.ए., एम.पी. का बनाया जा सकता हूँ। मगर एक चीज है प्यारे, कल ऐसा हो गया, साली वह पोस्टर फिराने वाला नहीं आया तो दोपहर को मैं ही चला गया था। अब जो मालरोड के किनारे खड़ा-खड़ा होकर भोंपू में कहना शुरू किया है कि आज शाम के साढ़े छह बजे से व रात को साढ़े नौ बजे तक, मानसरोवर सिनेमा में मशहूर कलाकार तो घरों की खिड़कियों पर लोगों के, खास करके जवान और कम उम्र छोकरों के चेहरे ऐसे इकट्ठे हो गए जैसे तालाब में चावल डालने से मछलियाँ इकट्ठा होती हैं। अब मेरी समझ में आ गया है डियर, कि जिंदगी में सबसे पहले आँसू भोंपू इस्तेमाल करना सीखना चाहिए। आज तुझे-मुझे जितने बड़े-बड़े नेता-मिनिस्टर दिखाई दे रहे हैं, वे सब भोंपू वादन के ही उस्ताद रहे हैं, बाँसुरी वादन के नहीं।"

सुनील के कंधे थपथपाते हुए द्वारिका बड़ी देर तक हँसता रहा। सुनील अब तक संतुलित हो चुका था। दूसरे वह यह जानता था कि द्वारिका उसका शुभचिंतक है। हालाँकि उसे यह लग रहा था कि द्वारिका इसी प्रकार भाषण देता रहा तो उसे गजल सुनाने का समय नहीं मिलेगा। और तब तक प्रियंवदा को भी खिड़की पर दिखाई देना बंद हो जाएगा।

हँसी थमते ही द्वारिका फिर गंभीर हो गया था— "दोस्त, सरदार भगत सिंह बिना यह भोंपू बजाए ही सीधे फाँसी के तख्ते पर लटक गया कि मैं हिंदुस्तान की आजादी के लिए फाँसी के तख्ते पर झूल सकता हूँ। आज कहाँ है उसका पता-ठिकाना? अरे ऐसे ही और सैकड़ों-हजारों होंगे, जो देश की खातिर बिना भोंपू बजाए ही बलिदान हो गए होंगे" और आज पढ़ने-सुनने में आता है कि बहुतों के बीबी-बच्चे, बहन-भाई दो रोटियों को मोहताज फिर रहे हैं। यही नहीं, कोई एक क्रांतिकारी और है, जिसने तीस साल जेलों में बिता दिए और अब गाँव में मजदूरी करता फिरता है। किसलिए? इसलिए, माई डियर फ्रेंड कि ऐसे लोगों को भोंपू बजाना और बजवाना नहीं आता। और एक बाबू कालीचरण वर्मन एम.एल.सी. हैं, नेता कामतानाथ भूतपूर्व गृहमंत्री और वर्तमान इन्फॉर्मेशन मिनिस्टर हैं— यहीं के कवि विक्टोरिया मैदान में यह भोंपू लगवा-लगवाकर चिल्लाया करते थे। सवा साल की जेल कई जगह काटी, साढ़े सात दिन की फलां जगह, तीन महीने की फलां जेलों में और सात दिनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उपवास, साबरमती में नौकरी की, तीन दिन का नैनी में···और यह, तो कुछ भी नहीं, वक्त पड़ने पर हम देश के लिए फाँसी के तख्तों पर झूलने को भी तैयार हैं। और प्यारे भाई, हजारों लोग इन्हें यों हर मास भाषण में फाँसी के तख्तों पर झूलता हुआ देखते थे, उन्हीं को अपने गले का हार बना सकते थे। सक्सेसफुल अपनी जिंदगी में वही कामतानाथ शुक्ला हो सकते थे डियर, जिनमें पेट की खराबी को राष्ट्रीय उपवास के रूप में इस्तेमाल कर सकने की बुद्धि थी।''

ऐसा ही, अब नेता बनने के लिए यह जरूरी हो गया है कि बाबू द्वारिकाप्रसाद को यह पता हो कि एम.पी. भरोसेलाल की बहन अन्नपूर्णा बहनजी के यहाँ भाई लोग क्या-क्या करते हैं, चेयरमैन पार्वतीनंदन म्यूनिस्पैलिटी के तंगे दामों का सीमेंट कैसे लाला भैरोंलाल रणछोड़दास के थ्रू ब्लैक मार्क्रेटिंग कराते हैं और तुम्हारे उस्ताद शारदा गुरु के बैकुंठप्रसाद माहेश्वरी जैसे हनुमान भक्त दमड़ी चूस बनिए को अपना मकान फ्री क्यों दे रखा है और नए एम.एल.ए. और भूतपूर्व चेयरमैन तथा हमेशा के लकड़ी के ठेकेदार बाबू चंद्रिकाप्रसाद को रिहर्सल में क्या-क्या दिखलाया गया और विद्यामार्तंड बाबू मातृकाप्रसाद भटनागर नर्मदाशरण डिग्री कॉलेज की नई बनाई जाने वाली बिल्डिंगों के ठेके देने के लिए कितना कमीशन लेते हैं और उनकी सुपुत्री मिस प्रियंवदा भटनागर···खैर, तुम फिर भड़क जाओगे।

''मगर यार, बुद्धि तो तुझमें भी कुछ कम नहीं दिखाई दे रही है।''

''अभी तूने कहाँ देखी है। इस साल तक मैंने भी इस शहर में चने ही नहीं भूने हैं। यार, अभी इतना मसाला इकट्ठा नहीं हुआ है और अभी मेरा वक्त भी नहीं आया है कि मैं तुझे दिखा सकूँ कि 'हिम्मते मरदा, मददे खुदा', जो कहा है झूठ नहीं कहा, मगर शक्ल-अक्ले मरदां की भी मैं जरूर मानता हूँ। इधर एक लंबे अरसे से मुझे यही तलाश है कि वह जादू कौन सा है, पर चूतिये परसराम को चेयरमैन पार्वतीनंदन बना देता है और चूतियानंदन से पाँच आने का टिकट खरीदकर अंदर घुसने वाले लौंडे सिनेमा-ऑनर बने हुए खड़े दिखाई देते हैं। मगर एक चीज तो तलाशनी ही है कि नेता बनने से पहले ज्योतिषी बनना जरूरी है।''

''आज तेरा दिमाग कुछ खराब नजर आ रहा है।''

''खराब नहीं खरा कह। पहले बात सुन। यों समझते कि यह विक्टोरिया ग्राउंड, यानी आजाद मैदान में खड़ा होने से पहले की रिहर्सल मैं तेरे सामने कर रहा हूँ। ज्योतिषी नए शहर में पहुँचने वाला वही कामयाब होता है, जो पहले कम-से-कम बीस-तीस घरों के बारे में पूरी हिस्ट्री हासिल कर लेने की कला में माहिर हो कि कितने बच्चे हैं, कितनी औरतें हैं, कितने मर गए, कितने जिंदा हैं और कब कौन-कौन सी खास घटनाएँ उनके यहाँ हुई हैं। ऐसा ही, अब नेता बनने के लिए यह जरूरी हो गया है कि बाबू द्वारिकाप्रसाद को यह पता हो कि एम.पी. भरोसेलाल की बहन अन्नपूर्णा बहनजी के यहाँ भाई लोग क्या-क्या करते हैं, चेयरमैन पार्वतीनंदन म्यूनिस्पैलिटी के तंगे दामों का सीमेंट कैसे लाला भैरोंलाल रणछोड़दास के थ्रू ब्लैक मार्क्रेटिंग कराते हैं और तुम्हारे उस्ताद शारदा गुरु के बैकुंठप्रसाद माहेश्वरी जैसे हनुमान भक्त दमड़ी चूस बनिए को अपना मकान फ्री क्यों दे रखा है और नए एम.एल.ए. और भूतपूर्व चेयरमैन तथा हमेशा के लकड़ी के ठेकेदार बाबू चंद्रिकाप्रसाद को रिहर्सल में क्या-क्या दिखलाया गया और विद्यामार्तंड बाबू मातृकाप्रसाद भटनागर नर्मदाशरण डिग्री कॉलेज की नई बनाई जाने वाली बिल्डिंगों के ठेके देने के लिए कितना कमीशन लेते हैं और उनकी सुपुत्री मिस प्रियंवदा भटनागर···खैर, तुम फिर भड़क जाओगे। कहने का मतलब यह है प्यारे, कि गेटकीपरी की ड्यूटी में बाबू द्वारिकाप्रसाद दिन भर फ्री रहते हैं और उनका यह सारा फालतू फंड डायरी-कीपिंग में जाता है।'' कहते-कहते द्वारिका ने पैंट के पीछे की जेब से एक नोटबुक निकाल ली। ''यह मंथली रिपोर्ट है—अदरवाइज रिपोर्ट की फाइल अलग तैयार करनी पड़ती है। तेरी भी पूरी हिस्ट्री अपने पास है दोस्त, मगर अनरिटन है।''

''भला अनरिटन क्यों?''

''फेल्योरर्स का नाम मैं अपनी फाइल में नहीं रखता हूँ डियर, मेरे यहाँ सारे उन लोगों के नाम दर्ज हैं, जो घूरे में से घूर पर पहुँचे हैं। तू तो वर्षों से सिर्फ बाँसुरी बजाता और मुहब्बत करता चला जा रहा है, मगर दोनों में फेल्योर है। क्यों नीमदान दिखाई दे रही है क्या खिड़की पर?''

''नहीं इस समय तो···?''

''तो फिर ऊपर माथे पर वे आँखें क्यों चढ़ा रहा है? अच्छा, अब तू यह बता कि तू अपनी जिंदगी और मुहब्बत दोनो में सक्सेजसफुल होना चाहता है या नहीं। याद रख, जो जिंदगी में सफल नहीं होता, उसकी मुहब्बत में कामयाबी क्राइटेरिया भी मजनू पैटर्न होता है।···और अगर तू सफल होना चाहता है, कुछ अपनी माँ के आँसुओं का भी तुझे खयाल है, तो अब जरा अपने को बदल डाल। यों लंबे-लंबे बाल रख लेने, मुहब्बत के नशे में डूबी हुई सी आँखें कर लेने और बाँसुरी बजाते, गजल गा देने से ही कोई लड़की फिदा नहीं हो सकती। आजकल की लड़कियों का तो खड़ा खेल फर्रुखाबादी होता है। तू समझता होगा कि जो तू हर समय मुहब्बत के लिए जान तक दे देने वाले प्रेमी प्राणी का सा हुलिया बनाए रहता है, उसके लिए तुझ पर लड़कियाँ फिदा हो सकती हैं, मगर माई डियर फ्रेंड, हकीकत इसके बिलकुल दूसरी है। इस बात को लड़कियाँ बहुत बेहतर जानती हैं कि जो प्यार में जान देने को तैयार रहता है, वह कभी-कभी जान लेने और मुसीबत में फँसाने पर भी उतारू हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह तो बलिदानी जोड़ा अपना रिकॉर्ड कायम कर गया था कि प्रेमी ने पहले प्रेमिका को और फिर अपने को गोली मार ली थी। उससे इस शहर की लड़कियों ने बहुत बड़ा सबक सीखा होगा।…और हेडमास्टर माताराम की लड़की की शादी के दिन तू जैसे उसकी डोली से चिपट-लिपटकर रोने लगा था, सो क्या सिर्फ दूलहा ही यों सोचने लगा होगा कि तू सगा भाई तो नहीं है। अरे यार, डोली के अंदर बैठी वह भी अपनी किस्मत को रो रही होगी कि किस दीवाने को मुँह लगा लिया, अब कहीं ऐन सुहागरात के वक्त यह न पूछ लिया जाए कि वह तुम्हारी डोली से लिपट-लिपटकर रोनेवाला कौन था? देख डियर, जिस तरह की मुहब्बत के ख्वाब तू देखता है, उसे करने वाली लड़की लाखों में एक पैदा होती है और ऐसी बावफा मुहब्बत के सिलसिले में आदमी को सिर्फ अपनी माँ की मुहब्बत पर सब्र करना चाहिए। बाकी की ज्यादातर लड़कियाँ आजकल वक्त गुजारू होती हैं। शादी करती हैं अपना फ्यूचर देखकर और मुहब्बत करती हैं लड़के का फीचर देखकर। सीधा सौदा मुलतानी यह रहता है कि शादी होने तक तुम हमारा जी बहलाओ, हम तुम्हारे आँसू पोंछ दिया करें। परसों ही तो मैंने हेडमास्टर मोतीराम की लड़की को अपने असली हीरो के साथ सिनेमा देखने आया हुआ देखा था, तुझसे अब भी कभी बातचीत करती है?''

''नहीं यार, पिछले हफ्ते दिखाई पड़ी थी, शारदा गुरु के ऊलन स्टोर में, तो मुँह फेरकर खड़ी हो गई।''

''अरे, तो भी गनीमत है कि कम-से-कम पहचानने से इनकार तो नहीं किया।'' द्वारिका हँस पड़ा, फिर सिगरेट के बाकी बचे ठूँठ को हथेली पर चूरता हुआ बोला, ''तू अगर यही ढर्रा कायम लिये रहा तो प्यारे एक दिन तुझे मिस भटनागर की जगह अपनी मकान मलकिन मुसकराती दिखाई देगी तेरे हाल पर। तुझे पता है, मिस भटनागर के चक्कर में फँसे कैसे पैसे वाले घरों के लड़के रहते हैं? नहीं ना? ये मुझसे पूछ। इस शहर की किसकी बेटी, किसकी बहन और किसकी जोरू छोड़कर, किसकी माँ तक किसके साथ सिनेमा देखने आती है, यह मुझसे पूछ लिया कर, और तब आगे की उम्मीद किया कर। मगर यह भी बिलकुल नामुमकिन नहीं है कि मिस भटनागर तुझसे हकीकत में मुहब्बत करने लगे।''

द्वारिका शरारतपूर्वक मुसकरा दिया, सुनील को शर्म भी हो आई और सुख भी मिला। वह द्वारिका से कहना चाहता था—'यार, इस हकीकत को तो मैं भी जानता हूँ कि मुझ फटीचर का साथ देना कोई लड़की पसंद नहीं करेगी, मगर सिर्फ सोच-सोचकर भी संबंध बनाए रखना कितना अच्छा लगता है।'

द्वारिका ही बोला, ''इन लड़कियों में शौक बहुत गहरा होता है, इन्हें पालतू जानवरों और आर्टिस्टों के सिरों पर हाथ फेरना बड़ा अच्छा लगता है। मिस भटनागर बछड़े के आगे घास डालते हुए भी वैसे ही मुसकराती होगी, जैसे तेरी जुल्फें, नौ शेरखाँ को देख-देखकर। और जैसे घराने की वह लड़की है, उसे भी तलाश होगी किसी ऐसे प्रेमी-प्राणी की, जिसे वह किसी मूर्ति या तसवीर की तरह छाती से लगाकर वो सारी बातें कर सके, जिनको अपने पति देवता से इसलिए नहीं कहा जा सकता कि मीरा को मरे हुए सैकड़ों वर्ष बीत चुके हैं। अगर कोई लड़की अपने पति से यह कहे कि तुम्हारी आँखों के सरोवर में कमल की तरह डूब जाने को जी करता है, तो देवता समझ जाए कि यह कमल का फूल न मालूम कितनी-कितनी आँखों के सरोवर में डूबकर यहाँ तक पहुँचा है। उम्र का यही दौर लड़कियों का ऐसा होता है, जब वह बेवकूफ बनाने के चक्कर में रहती हैं, क्योंकि इस उम्र में इन लोगों को बार-बार अपनी खूबसूरती और परसनैलिटी को आजमाने का जी करता है। मगर यह दूसरों के सिर्फ मीडियम बनाने के सारे काम, माई डियर फ्रेंड, हमेशा अपनी जान को बचाकर ही किए जाते हैं। नेता लोग भी अपनी काबलियत को आजमाने के लिए खुद को नहीं, बल्कि जनता को दाँव पर लगाते रहते हैं।''

''यार द्वारिका भाई! मैं नहीं समझता था, तू इतना विद्वान् भी है। असल में यार, मेरे अंदर एक तो दब्बूपना और शर्म बहुत है, दूसरे मैं हमेशा अपने को अनाथ और निकम्मा महसूस करता रहता हूँ…और निकम्मों को शायद मुहब्बत की तलाश सबसे ज्यादा रहती है। साली दो-दो बार ठोकरें खाकर भी आँखें नहीं खुली हैं। कभी-कभी तो सुसाइड कर लेने को जी चाहता है।''

''खैर, गनीमत यह है कि अभी तक सिर्फ जी ही चाहता है, मगर यही हालत रही तो एक दिन दिमाग भी यही सलाह देने लगेगा। खैर, छोड़, मैंने ही कौन सा कद्दू में तीर मार लिया है आज तक? मगर देख, जिंदगी में सिर्फ कैलकुलेटिव नेचर का आदमी ही कामयाब हो सकता है। तू कभी इस बात का हिसाब रखता है कि मिस भटनागर ठीक किस समय खिड़की पर आती है, कितनी देर तक ठहरती है और मुसकराने के पहले इधर-उधर कहीं देखती है, या नहीं? अब मुझे देख, मैंने हिसाब लगा लिया है कि अगर जिंदगी में मनचाही कामयाबी पाने के नुस्खे पर अमल करने की मेरी रफ्तार दस कदम सालाना है, तो जो कामयाबी का घोड़ा पॉलटिक्स के रेसकोर्स में सौंवे कदम पर खड़ा है, वहाँ तक पहुँचने में ही मुझे दस साल लग जाएँगे, तब कहीं दौड़ में शामिल होने का मौका हासिल होगा। तेरी उम्र इस वक्त क्या है?''

''सत्ताईसवाँ होगा शायद?''

''तो यूँ समझ ले कि तुझे रियल आर्टिस्ट बनने का आनंद सैंतालीसवें साल हासिल होगा और मुझे बयालीसवें साल में नेता बनने का चांस मिलेगा।''

इस बार सुनील हँस दिया—''आज तू फिर वैसी ही बातें कर रहा है, जैसे बंबई जाने से पहले किया करता था कि मुझे एक्स्ट्रा से असिस्टेंट कैमरामैन, फिर असिस्टेंट डायरेक्टर और आखिर में फुल फ्लेजेड डायरेक्टर बनने में दस साल और तुझे एक्स्ट्रा से साइड हीरो या एक्स्ट्रा आर्टिस्ट से प्लेबैक सिंगर और फिर म्यूजिक-डायरेक्टर बनने में दस साल लगेंगे। कामयाबी का तेरा नुस्खा दस साल का होता है।''

(क्रमशः)

प्रस्तुति : श्री राकेश मटियानी
२६१-ए, मोतीलाल नेहरू नगर,
कर्नलगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

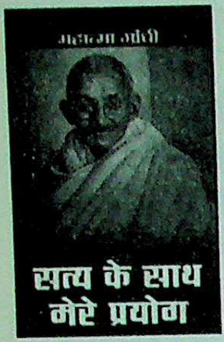

प्रभात प्रकाशन

ISO 9001 : 2008 प्रकाशक

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002

☎ 011-23289777 (7 लाइंस)

इ-मेल : prabhat1@vsnl.com ● prabhatbooks@gmail.com

अक्तूबर 2011 के नए प्रकाशन

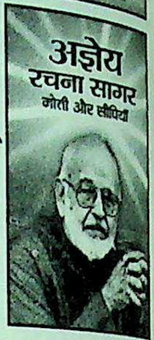

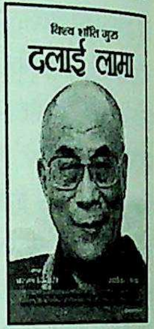

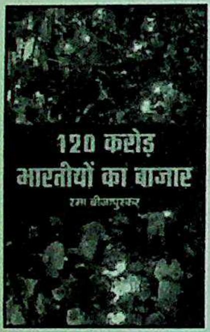

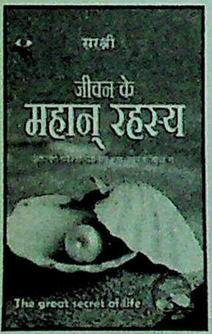

- महात्मा गांधी
  - **ग्राम स्वराज्य** — 250.00
  - **सत्य के साथ मेरे प्रयोग** — 250.00
- डॉ. राजेंद्र प्रसाद
  - **चंपारन में महात्मा गांधी** — 500.00
- ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
  - **जीवन वृक्ष** — 200.00
- स.ही. वात्स्यायन अज्ञेय
  - **अज्ञेय : रचना सागर** — 700.00
- एन.के. सिंह
  - **विवेक की सीमा : राजनीति और परिवर्तन** — 400.00
- मयंक छाया
  - **विश्व शांति गुरु दलाई लामा** — 400.00
- अशोक राज
  - **योग गुरु स्वामी रामदेव** — 250.00
- सं. उमा विष्णु
  - **गौरवशाली भारत** — 500.00
- जॉन एम. हंट्समैन
  - **विजेता धोखा नहीं देते** — 300.00
- आर. गोपालकृष्णन
  - **मैनेजर नहीं, Smart मैनेजर बनें** — 350.00
- रमा बीजापुरकर
  - **120 करोड़ भारतीयों का बाजार** — 350.00
- रश्मि बंसल
  - **Zero To हीरो** — 400.00
- वी. रघुनाथन
  - **छोटे कदम, लंबी दौड़** — 200.00
- मॉर्गन विट्ज़ेल
  - **TATA एक कॉरपोरेट ब्रांड का विकास** — 400.00
- सं. सुशील कपूर
  - **विश्व के महान् भाषण** — 350.00
- सी.के. प्रहलाद
  - **गरीबी हटाएँ, मुनाफा कमाएँ** — 500.00
- विक्रम अकुला
  - **माइक्रोफायनेंसिंग से गरीबी हटाएँ** — 200.00
- रोहिणी नीलकेनी
  - **स्टिल बॉर्न** — 300.00
- जूल्स वर्न
  - **80 दिन में दुनिया की सैर** — 175.00
- नोरेनहा/सुजाता अग्रवाल
  - **नैनो कार की कहानी** — 200.00
- आचार्य महाप्रज्ञ
  - **जो सहता है वही रहता है** — 250.00
- विनीत नायर
  - **पहले कर्मचारी फिर ग्राहक** — 250.00
- सरश्री
  - **जीवन के महान् रहस्य** — 150.00
- नितिन गडकरी
  - **विकास के पथ** — 700.00
- गौरव बंसल
  - **डर के आगे जीत है** — 175.00
- सं. देवेंद्र स्वरूप/यादवराव देशमुख
  - **राष्ट्र ऋषि नानाजी** — 200.00
- शांता कुमार
  - **भ्रष्टाचार का कड़वा सच** — 300.00
- मुश्ताक शेख
  - **कहानी शाहरुख खान की** — 400.00
- शशांक जौहरी
  - **सुपर स्पीड कंप्यूटर कोर्स** — 500.00
- रश्मीत कौर
  - **सुपर स्पीड इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स** — 500.00
- सं. बदरीनाथ कपूर
  - **पॉकेट अंग्रेजी-हिंदी कोश** — 75.00
  - **पॉकेट हिंदी-अंग्रेजी कोश** — 75.00
- जय शंकर मिश्र
  - **24×7 आनंद ही आनंद** — 250.00
- महेश शर्मा
  - **शिक्षा का अधिकार (RTE)** — 200.00
- ममता महरोत्रा
  - **महिला अधिकार बनाम मानव अधिकार** — 200.00
- शिवगोपाल मिश्र
  - **आपदा प्रबंधन** — 300.00
- अनुपम मिश्र
  - **आज भी खरे हैं तालाब** — 150.00
- डॉ. प्रफुल्ल विजयकर
  - **Predictive होम्योपैथी** — 200.00
- प्रेमपाल शर्मा
  - **घर का डॉक्टर** — 200.00
- विनोद मल्होत्रा
  - **गीता में मैनेजमेंट सूत्र** — 250.00
- अजय कुमार उपाध्याय
  - **हिंद स्वराज की अनंत यात्रा** — 250.00
- शंभू रतन अवस्थी
  - **नवीकरणीय ऊर्जा** — 250.00
- ममता झा
  - **चार्ली चैप्लिन** — 200.00
- रस्किन बॉण्ड
  - **साहसिक कहानियाँ** — 200.00
  - **भारत के बच्चे** — 175.00
- मनु शर्मा
  - **द्रौपदी की आत्मकथा** — 175.00
- शंकर
  - **विवेकानंद की आत्मकथा** — 500.00
- रमेश पोखरियाल 'निशंक'
  - **प्रतिज्ञा** — 200.00
- ईशान महेश
  - **मुझे कृष्ण चाहिए** — 200.00
- शुभांगी भडभडे
  - **योगीराज ज्ञानेश्वर** — 400.00
- अशोक गुजराती
  - **व्यंग्य के रंग** — 200.00
- शिव शर्मा
  - **दुम की दरकार** — 200.00
- हरि जोशी
  - **नेता निर्माण उद्योग** — 200.00
- विजय कुमार
  - **कुरसी तू बड़भागिनी** — 175.00
- दिनकर जोशी
  - **चक्र से चरखे तक** — 250.00
  - **रामायण के पात्र** — 225.00
- सूर्यबाला
  - **कात्यायनी संवाद** — 175.00
- ऋता शुक्ल
  - **मृत्युगंध-जीवनगंध** — 200.00

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

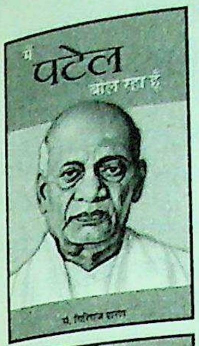

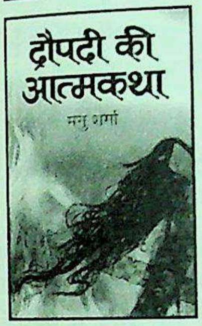

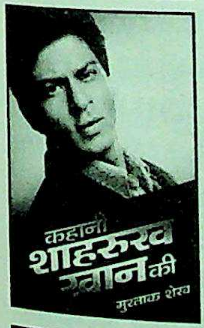

- सं. अरुणा सीतेश
  बयार''उस पार से 250.00
- मंजु मधुकर
  चंपई मन 200.00
- वीरबाला वर्मा
  बस इतनी सी रोशनी 175.00
- सुचित्रा भट्टाचार्य
  अंधकार बेला 250.00
- पूर्णिमा केडिया 'अन्नपूर्णा'
  सीढ़ियाँ 225.00
- महेश शर्मा
  साफ हाथ, स्वस्थ जीवन 125.00
- राजेंद्र मोहन भटनागर
  आज का ताजा खबर 200.00
- हरदर्शन सहगल
  तीसरी कहानी 200.00
- ओ हेनरी
  ओ. हेनरी की लोकप्रिय कहानियाँ 200.00
- सिरिल मैथ्यू
  इनसानियत की वापसी 200.00
- रोशन प्रेमयोगी
  एक डॉक्टरनी का जिंदगीनामा 300.00
- सुरेश कांटक
  सूरज उगने से पहले 175.00
- रत्नेश्वर
  लेफ्टिनेंट हडसन 150.00
- राजेश कुमार
  पाँच नुक्कड़ नाटक 200.00
  भ्रष्टाचार का अचार 200.00
- अरुण तिवारी
  सुकरात 150.00
- तेजेन कुमार बासु
  सी.वी. रमन 150.00
- बेंजामिन फ्रैंकलिन
  बेंजामिन फ्रैंकलिन की आत्मकथा 150.00
- दिनकर
  मार्टिन लूथर किंग 200.00
- रामप्रसाद बिस्मिल
  आत्मकथा 150.00
- दिलीप कुलकर्णी
  जगदीशचंद्र बसु 200.00
- प्रेमचंद्र स्वर्णकार
  संक्रामक बीमारियों से कैसे बचें 250.00
- रुडयार्ड किपलिंग
  जंगल बुक 200.00
- हेलन कीलर
  मेरा जीवन 150.00
- मायाराम 'पतंग'
  विद्यालय उत्सव 200.00
  चुने हुए विद्यालय गीत 250.00
  श्रेष्ठ स्कूली गीत 250.00
- डी.डी. शर्मा
  गणित में पाएँ 100/100 150.00
- डॉ. निलय खरे/श्यामसुंदर शर्मा
  आर्कटिक : मध्य रात्रि के सूर्य का क्षेत्र 300.00
- दाजी पणशीकर
  रामायण के 51 प्रेरक प्रसंग 250.00
- सं. गिरिराज शरण
  मैं विवेकानंद बोल रहा हूँ 200.00
  मैं लाजपतराय बोल रहा हूँ 200.00
  मैं अरविंद बोल रहा हूँ 200.00
  मैं सावरकर बोल रहा हूँ 200.00
  मैं गांधी बोल रहा हूँ 200.00
  मैं सुभाष बोल रहा हूँ 200.00
  मैं नेहरू बोल रहा हूँ 200.00
  मैं पटेल बोल रहा हूँ 200.00
  मैं तिलकबोल रहा हूँ 200.00
- सं. प्रशांत गुप्ता
  मैं कलाम बोल रहा हूँ 200.00

- सं. जयश्री
  मैं राधाकृष्णन बोल रहा हूँ 200.00
- सं. अनिल कुमार
  मैं भगतसिंह बोल रहा हूँ 200.00
- विवेक आनंद
  शतरंज खेलना सीखें 200.00
- भवानीलाल भारतीय
  बॉलीवुडनामा 300.00
- कमोडोर विजय शंकर बबेले
  पति-पत्नी और नौसेना 250.00
- सं. वाग्देव
  सूर पदावली 200.00
  रहीम दोहावली 200.00
- सं. राघव 'रघु'
  रसखान रत्नावली 200.00
  तुलसी दोहावली 200.00
- सं. नीलोत्पल
  मीरा पदावली 200.00
  कबीर दोहावली 200.00
- अनीश भसीन
  1000 बिहार प्रश्नोत्तरी 200.00
  जानिए मानव अधिकारों को 300.00
- संजय कुमार द्विवेदी
  1000 झारखंड प्रश्नोत्तरी 200.00
  1000 उत्तर प्रदेश प्रश्नोत्तरी 200.00
  1000 भारत ज्ञान प्रश्नोत्तरी 200.00
- राजेंद्र प्रसाद सिंह
  1000 महापुरुष प्रश्नोत्तरी 200.00
- बृजकिशोर प्रसाद सिंह
  1000 हिंदी वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तरी 200.00
- आशारानी व्होरा
  भारत की प्रथम महिलाएँ 250.00
- प्रमोद कुमार अग्रवाल
  जागो, ग्राहक जागो 150.00
- रवि चतुर्वेदी
  क्रिकेट की रोचक बातें 250.00
- मुकेश नादान
  सिंहासन बत्तीसी 175.00
- स्वप्नदर्शी
  अरेबियन नाइट्स की कहानियाँ 175.00
- वैभव विप्लव
  हातिमताई की तिलिस्मी कहानियाँ 175.00
- श्रुति
  शौर्य और बलिदान की कहानियाँ 175.00
- विभोर कुमार
  रोमांचकारी कहानियाँ 175.00
- जॉन विल्सन
  बाइबिल की कहानियाँ 175.00
- सत्य प्रकाश द्विवेदी
  संपूर्ण पंचांग ज्ञान 250.00
- आनंद आदीश
  आँखिन देखी, अंतर लेखी 150.00
  राष्ट्रमंत्र के हे उद्गाता! 125.00
- सं. श्रीकांत
  पीर मुहम्मद मूनिस : कलम का सत्याग्रही 200.00
- अनिल प्रकाश
  समय के सरोकार 200.00
- बाल्मीकि महतो
  अठारहवीं सदी का बिहार 150.00
- पवन
  कार्टूनों की दुनिया 175.00
- सुरेश प्रसाद
  मदांतकी 175.00
- जगदीश ममगाँई
  लोकशिल्पी दिल्ली नगर निगम 400.00
- रमाशंकर शर्मा
  स्मृति पंख 250.00
- डॉ. चंदर सोनाने
  पर्वतों का अंत:संगीत 250.00

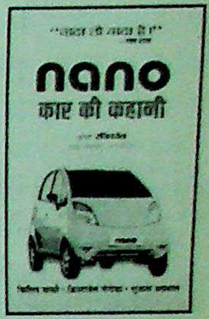

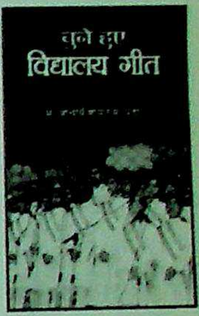

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखद अंत

मूल : मार्गरेट ऐटवुड

अनुवाद : सुशांत सुप्रिय

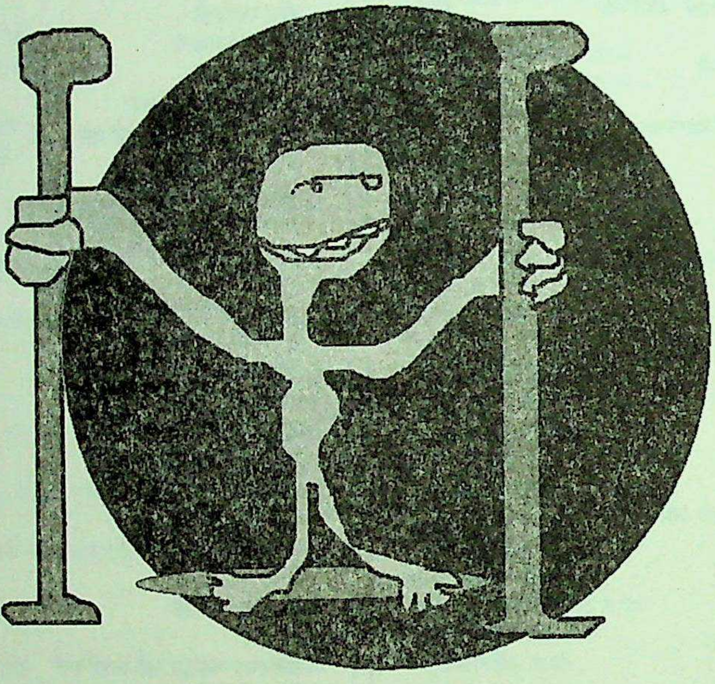

जॉन और मैरी को एक-दूसरे से प्यार हो जाता है और वे शादी कर लेते हैं। वे दोनों अच्छी और ऊँची नौकरियों में हैं, जो उन्हें प्रेरक और चुनौतीपूर्ण लगती हैं। वे एक बड़ा और प्यारा सा मकान खरीद लेते हैं। बाजार में मकानों की कीमत बढ़ जाती है। अंत में, साथ रहते हुए जब वे इसके लिए तैयार होते हैं तो उनके दो बच्चे होते हैं, जिनके प्रति वे बेहद समर्पित हैं। बच्चों का भविष्य उज्ज्वल रहता है। जॉन और मैरी का यौन-जीवन भी प्रेरक और चुनौतीपूर्ण रहता है। उनके कई अच्छे मित्र होते हैं। वे सब मौज-मस्ती भरी छुट्टियाँ बिताने एक साथ बाहर घूमने जाते हैं। फिर वे सेवानिवृत्त होते हैं। उन दोनों के कई शौक होते हैं, जो उन्हें प्रेरक और चुनौतीपूर्ण लगते हैं। और अंत में उनकी मृत्यु हो जाती है। कहानी यहीं खत्म हो जाती है।

□

मैरी को जॉन से प्यार हो जाता है, लेकिन जॉन मैरी से प्यार नहीं करता है। वह मैरी के शरीर का इस्तेमाल केवल स्वार्थपूर्ति, भोग-विलास तथा ओछे अहं की तुष्टि के लिए करता है। वह उससे मिलने उसके मकान पर हफ्ते में दो बार आता है। मैरी उसके लिए रात का खाना बनाती है। लेकिन आप पाएँगे कि जॉन उसे रात का खाना खिलाने के लिए कहीं बाहर ले जाने के योग्य भी नहीं समझता है। जब वह खाना खा लेता है, उसके बाद वह मैरी की देह को भोगता है और फिर वह सो जाता है। उधर मैरी सारे बरतन धोती है, ताकि जॉन गंदे बरतनों को देखकर यह न सोचे कि वह घर को गंदा रखती है। इसके बाद वह अपने होंठों पर लिपस्टिक लगाती है, ताकि जब जॉन उठे तो मैरी उसे सुंदर लगे। लेकिन जब जॉन सोकर उठता है तो वह मैरी की ओर देखता भी नहीं, बल्कि वह अपनी जुराब, अपनी निक्कर-पतलून, अपनी कमीज़-टाई और अपने जूते पहनने में व्यस्त हो जाता है। उसने इन चीजों को जिस क्रम में उतारा था, उसके उलटे क्रम में वह इन्हें पहनता जाता है। वह कभी मैरी के कपड़े नहीं उतारता, वह स्वयं इन्हें उतार लेती है। वह ऐसा अभिनय करती है, जैसे वह यह सब करने के लिए बेताब हो। वह यह सब इसलिए नहीं करती, क्योंकि उसे काम-क्रीड़ा अच्छी लगती है। दरअसल, सच्चाई इसके विपरीत है। असल में मैरी चाहती है कि जॉन को ऐसा लगे कि उसे यह सब करने में मजा आता है। वह सोचती है कि यदि वे दोनों अकसर ऐसा करेंगे तो जॉन को वह अच्छी लगने लगेगी। फिर जॉन इस काम के लिए उस पर निर्भर हो जाएगा और तब वे दोनों शादी कर लेंगे। लेकिन जॉन बिना किसी अभिवादन के दरवाजे से बाहर चला जाता है। तीन दिन बाद वह शाम छह बजे दोबारा मैरी के मकान पर आता है और फिर वे दोनों देह से खेलने की क्रिया को वैसे ही दोहराते हैं।

मैरी अवसाद-ग्रस्त हो जाती है। रोने से उसके चेहरे का हुलिया बिगड़ जाता है। सभी यह बात जानते हैं। मैरी स्वयं भी यह जानती है, लेकिन वह रोती रहती है, चुप नहीं हो पाती। उसके दफ्तर में लोगों को यह बात पता चलती है। मैरी की महिला-मित्र उससे कहती है कि जॉन इनसान नहीं, चूहा है, सूअर है, कुत्ता है। वह मैरी के लायक नहीं। लेकिन मैरी उनकी बातों पर यकीन नहीं करती। वह सोचती है कि जॉन के भीतर एक और जॉन है, जो बहुत अच्छा है। यदि पहलेवाले जॉन को जोर से दबाया गया तो वह दूसरा जॉन उसके भीतर से इस तरह बाहर आ जाएगा, जैसे कोये में से तितली बाहर आ जाती है, जैसे बक्से के बटन को दबाने पर उसमें से चमड़े का कोट पहने हुए सैनिक का खिलौना बाहर आ जाता है, जैसे आलूबुखारे में से गुठली बाहर आ जाती है।

एक शाम जॉन खाने के बेस्वाद होने के बारे में शिकायत करता है। इससे पहले उसने कभी खाने की आलोचना नहीं की। मैरी इससे आहत हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैरी के मित्र उसे बताते हैं कि उन्होंने जॉन को रेस्त्राँ में मैज नाम की किसी युवती के साथ देखा है। मैज भी मैरी को आहत नहीं कर पाती; जो बात वाकई उसका दिल तोड़ देती है, वह है रेस्त्राँ। जॉन मैरी को खाना खिलाने के लिए कभी किसी रेस्त्राँ में नहीं ले गया। मैरी बहुत सारी नींद की गोलियाँ और एस्प्रिन इकट्ठा करती है और फिर वह उन सारी गोलियों को आधी बोतल सफेद शराब के साथ निगल जाती है। वह व्हिस्की का सहारा नहीं लेती—आप इसी तथ्य से इस बात का अंदाजा लगा सकते हैं कि वह किस तरह की स्त्री थी। वह जॉन के लिए एक रुक्का छोड़ जाती है। वह उम्मीद करती है कि जॉन उसे इस हालत में देख लेगा और उसे समय रहते अस्पताल ले जाएगा। उसे लगता है कि जॉन बाद में अपने किए पर पछताएगा और फिर वे दोनों शादी कर लेंगे, किंतु ऐसा नहीं होता है और मैरी की मौत हो जाती है।

जॉन मैज से ब्याह कर लेता है और फिर हर चीज वैसे ही चलती है जैसी कि कहानी के पूर्व में दिखाई गई है।

□

अधेड़ उम्र के जॉन को मैरी से प्यार हो जाता है। मैरी केवल बाईस वर्ष की है। मैरी को जॉन से सहानुभूति होती है, क्योंकि वह अपने बालों के झड़ने से चिंतित रहता है। हालाँकि मैरी उससे प्यार नहीं करती, फिर भी वह जॉन के साथ अपनी रातें बिताती है। वह अपने दफ्तर में जॉन से मिली थी। मैरी जेम्स नाम के व्यक्ति से प्रेम करती है। जेम्स की उम्र भी बाईस साल की है, लेकिन वह अभी गृहस्थी के बंधन में पड़ना नहीं चाहता।

इसके विपरीत जॉन बहुत पहले ही बस चुका था; यही बात उसे सताती रहती है। जॉन के पास एक स्थायी और प्रतिष्ठित नौकरी है और वह अपने कार्य-क्षेत्र में प्रगति कर रहा है। लेकिन मैरी उससे प्रभावित नहीं है। वह जेम्स से प्रभावित है, जिसके पास एक मोटरसाइकिल और संगीत के रेकार्ड्स का शानदार संग्रह है। लेकिन जेम्स अकसर अपनी मोटरसाइकिल पर शहर से बाहर घूमने निकल जाता है, क्योंकि वह अभी बंधनों से आजाद है। लड़कियों के लिए आजादी का वही मतलब नहीं होता। इसलिए मैरी बृहस्पतिवार की शामें जॉन के साथ बिताती है। जॉन को केवल बृहस्पतिवार की शाम को ही फुरसत मिलती है।

जॉन मैज नाम की महिला से विवाहित है और उनके दो बच्चे हैं। उनके पास एक शानदार मकान है, जिसे उन्होंने मकानों की कीमत बढ़ जाने से ठीक पहले खरीदा था। उनके कई शौक हैं, जो उन्हें तब प्रेरक और चुनौतीपूर्ण लगते हैं जब उनके पास समय होता है। जॉन अकसर मैरी को बताता है कि वह जॉन के लिए कितनी महत्त्वपूर्ण है, लेकिन वह अपनी पत्नी को नहीं छोड़ सकता, क्योंकि किसी रिश्ते के प्रति वचनबद्धता आखिर वचनबद्धता है। वह इसके बारे में जरूरत से ज्यादा सफाई देता है और मैरी को यह उबाऊ लगता है। लेकिन ज्यादा उम्र के पुरुष अपने अनुभव की वजह से आपको अधिक संतुष्ट कर सकते हैं। इसलिए कुल मिलाकर मैरी का समय अच्छा ही बीतता है।

एक दिन जेम्स अपनी मोटरसाइकिल पर फर्राटे से आता है। उसके पास कैलिफोर्निया में बनी जल्दी नशा देनेवाली देसी दारू होती है। वह दारू जेम्स और मैरी को इतनी चढ़ जाती है जितना आप सोच भी नहीं सकते। नशे की हालत में वे दोनों हमबिस्तर हो जाते हैं। सब कुछ तरल सा, पनीला सा लगने लगता है, लेकिन तभी वहाँ जॉन आ पहुँचता है, जिसके पास हमेशा मैरी के मकान की एक चाबी रहती है। वह उन दोनों को आपस में लिपटकर बुत बने हुए देख लेता है। हालाँकि वह उनसे जलने की स्थिति में मुश्किल से ही है, क्योंकि वह पहले से ही शादी शुदा है—मैज उसकी पत्नी है। किंतु इसके बावजूद, उन दोनों को उस अंतरंग स्थिति में देखकर वह अवसाद में डूब जाता है। अब वह अधेड़ है और दो साल बीतते-बीतते वह अंडे जैसा गंजा हो जाएगा। वह यह सब नहीं सह पाता। यह कहकर वह एक छोटी बंदूक खरीदता है कि उसे निशाना लगाने के अभ्यास के लिए इसकी आवश्यकता है। यह कथानक का कमजोर हिस्सा है, लेकिन इससे हम बाद में निपट सकते हैं। फिर जॉन जेम्स और मैरी को मार डालता है और इसके बाद अपनी जान भी ले लेता है।

मातम की उपयुक्त अवधि के बाद मैज फ्रेड नाम के एक हमदर्द और समझदार आदमी से शादी कर लेती है। इसके बाद सबकुछ वैसा ही होता है जैसा शुरू में दिखाया गया है—केवल पात्रों के नाम बदल जाते हैं।

□

फ्रेड और मैज के बीच कोई समस्या नहीं आती। वे बेहद अच्छी तरह एक-दूसरे के साथ समय गुजारते हैं और छोटी-मोटी मुश्किलें आ भी जाती हैं तो वे उन्हें आसानी से हल कर लेते हैं। लेकिन उनका मोहक मकान समुद्र-तट के किनारे है और एक दिन एक विशालकाय ज्वारीय लहर उस मकान तक पहुँच जाती है। उस इलाके के मकानों की कीमत गिर जाती है। बाकी की कथा इस बारे में है कि वह दैत्याकार लहर किस वजह से आई और वे लोग उससे कैसे बच पाए। वे लोग तो इससे बच जाते हैं, लेकिन हजारों दूसरे लोग डूब जाते हैं। फ्रेड और मैज नेक हैं और खुशकिस्मत भी। अंत में ऊँची जगह पर पहुँचकर वे एक-दूसरे से आलिंगनबद्ध हो जाते हैं—भीगे और सिहरते हुए किंतु आभारी भी। इसके बाद सबकुछ शुरू के जैसा ही होता है।

□

जी हाँ, किंतु फ्रेड को हृदय-रोग होता है। बाकी की कथा इस बारे में है कि वे दोनों तब तक कितने दयालु और समझदार होते हैं जब तक फ्रेड की मृत्यु नहीं हो जाती। इसके बाद शुरू से अंत तक मैज खुद को धर्मार्थ कार्यों के लिए समर्पित कर देती है। यदि आप चाहें तो इसे 'मैज', 'कैंसर' और 'कसूरवार और परेशान' आदि कह सकते हैं।

□

यदि आपको यह सब ज्यादा ही मध्यवर्गीय लगता है तो आप जॉन को एक क्रांतिकारी तथा मैरी को एक जवाबी-मुखबिर बना दें और देखें कि ऐसा करके आप कितनी दूर जा पाएँगे। याद रखिए, यह कनाडा है। इस सबके बावजूद आपकी परिणति कहानी के प्रथम भाग पर ही जाकर होगी, हालाँकि इसके बीच में आपको शायद वासनामय संबंधों की एक कामुक, गुल-गपाड़े वाली विस्तृत कथा मिल जाए, जो हमारे समय का एक तरह का इतिहास होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको इस तथ्य का सामना करना ही होगा कि अंत में आप किसी भी तरह से तराशकर देखें, वे एक जैसे होते हैं। किसी अन्य प्रकार के अंत को देखकर छलावे में न आएँ—वे सभी झूठे होते हैं। या तो वे जानबूझकर झूठे बनाए गए होते हैं, जिनका दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य धोखा देना होता है या यदि वे अशिष्ट अति-भावुकता से प्रेरित नहीं होते तो महज अत्यधिक आशावादिता से अभिप्रेरित होते हैं। एकमात्र प्रामाणिक अंत वह है जो यहाँ दिया जा रहा है :

जॉन और मैरी मर जाते हैं। जॉन और मैरी मर जाते हैं। जॉन और मैरी मर जाते हैं।

अंत तो ऐसे ही होते हैं। शुरुआत हमेशा ज्यादा मजा देती है। लेकिन सच्चे पारखी बीच के हिस्से के कद्रदान माने जाते हैं, क्योंकि इस हिस्से के बारे में कुछ भी कर पाना बेहद कठिन है।

कथानक के बारे में जो भी बातें कही जा सकती हैं, वे ये ही हैं, हालाँकि ये सब भी महज एक चीज के बाद दूसरी चीज की आवृत्ति ही हैं—एक क्या और एक और क्या और फिर एक और क्या।

अब कैसे और क्यों का प्रयोग करके देखिए।

५१७४, श्यामलाल बिल्डिंग,
बसंत रोड, पहाड़गंज,
नई दिल्ली-११००५५

कविता

दो कविताएँ

● एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

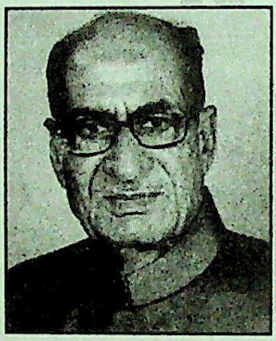

जन्म : ६ मई, १९३६ को आनंद भवन, पृथ्वीपुर, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.) में।

शिक्षा : स्नातक।

प्रकाशन : 'मोक्ष की राह', 'बदरीनाथ सहित शिवलोक की यात्रा', 'मैं कौन हूँ' (*काव्य संग्रह*), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (*कहानी संग्रह*) एवं राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टी.वी. पर कार्यक्रमों का प्रसारण।

सम्मान : म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल द्वारा सम्मानित।

संप्रति : म.प्र. शासन में नायब तहसीलदार के पद से सेवानिवृत्त के बाद स्वतंत्र लेखन।

दीवाली राम के घर आने की रात है

दीवाली राम के घर आने की रात है
धन की देवी लक्ष्मी को मनाने की रात है
घर-घर में प्रकाश जगमगाए
रोशनी तम मिटाए पथ का
भूले-भटकों को राह दिखाने की बात है।

मर्यादा अनुशासन के साथ
चौदह वर्ष का वनवास
बिताने की बात है
नीति और न्याय की प्रतिष्ठा
दुष्ट और दानवों की हत्या
तम को मिटाने-भगाने की रात है।

दीवाली राम के घर आने की रात है॥

साफ और सफाई
घर के और मन के हर कोने से
कूड़ा और कुविचार हटाने की बात है।

सौहार्द-प्रेम के दीपक जलाने की रात है।

दीवाली राम के घर आने की रात है॥

दीपक शरीर हमारा
जोति प्राणों का प्रतिबिंब है
काल के क्रूर झोंकों से
दीप-लौ को बचाने की बात है।
दीवाली राम के घर आने की रात है॥
घर-घर में प्रेम-दीप जलाना
अंतर्मन का तम-ईर्ष्या-द्वेष
ज्ञान के दीप-प्रकाश से मिटाने की बात है
जगमग-जगमग शुभ दीवाली
वैभव की देवी लक्ष्मी को मनाने की रात है।
दीवाली राम के घर आने की रात है॥

दीप जलाएँ

चलो चलें अपनी कुटिया में
माटी के सब दीप जलाएँ
दीवाली का शुभ अवसर है
सब मिलकर त्योहार मनाएँ।

महँगी हो गई बहुत मिठाई
मिश्री-लाई घर में लाएँ,
बढ़े चलें हम राह प्रगति
दुनिया के संग कदम मिलाएँ।

दुश्मन बैठे घात लगाए
फूँक मारकर ज्योति बुझा दें,
मिल-जुलकर नाकाम इरादे
उनको नानी याद दिला दें।

गौतम बुद्ध महात्मा गांधी
जैसा सबको पाठ पढ़ाएँ,
राम-कृष्ण की इस धरती पर
खुशबू भाईचारे की महकाएँ,

चलो चलें अपनी कुटिया में
माटी के सब दीप जलाएँ।

मिश्रा मार्केट, मेन रोड पृथ्वीपुर
जिला-टीकमगढ़-४६२३३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता और दोहे

● देवेंद्र आर्य

सृजन गीत मन से गाने दो

कल सोचूँगा कहीं बैठकर
दुख से अनुबंधों की गाथा
अभी स्वाति लेकर मेघों से
सृजन गीत मन से गाने दो।

वंदनवार टाँक आँखों में
मैंने किया सुबह का वंदन,
खुशबू के आँगन में सौ-सौ
रोप दिए सुख के अभिनंदन।
कल देखूँगा उदित भोर में
चिड़ियों के कलरव की बाधा
अभी किरण में इंद्रधनुष की
रंग-छटा मन से छाने दो
सृजन-गीत मन से गाने दो।

कुछ उदास पलकों के सपने
टूटें नहीं खुली आँखों में,
बाँहों में नभ को भरने की,
ललक न छूटे क्षत पाँखों में।
कल पूछूँगा शरद-चाँदनी
रातों में सुख की परिभाषा
अभी सभी के लिए चाँद से
नेह-सुधा मन से लाने दो
सृजन-गीत मन से गाने दो।

अंग-अंग चहके फागुन सा
वासंती मनुहार सजाए,
हर धड़कन में राधा नाचे
रास-रास कान्हा हो जाए।
कल हो जाए आज, आज पल
पढ़ लूँ खुले नयन की भाषा

जन्म : ११ मार्च, १९३७ को लखीमपुर खीरी (उ.प्र.) में।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी. (हिंदी)।
कृतित्व : पाँच दोहा सतसई संग्रह, नौ कविता संग्रह, एक मुक्तक संग्रह, छह बाल साहित्य, एक आलोचना ग्रंथ, तीन संपादित पुस्तकें एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कविता गीत/नवनीत, दोहे, समीक्षा आदि प्रकाशित।
पुरस्कार-सम्मान : 'अखिल भारतीय सूर पुरस्कार', 'भवानी प्रसाद मिश्र पुरस्कार', 'राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार', 'कविवर हरि नारायण व्यास हिंदी काव्य पुरस्कार', 'निराला स्मृति सम्मान'।

अभी अमित रस की गागर को
मग्न-मग्न मन से लाने दो
सृजन-गीत मन से गाने दो।

दोहे

बचपन छूटा तो लगा, सुख भी गया विदेश।
फूल छोड़ ज्यों आ गए, नागफनी के देश॥
डूब स्वार्थ में कंठ तक, पर जगहित की बात।
वे करते हैं रोज ही, सच पर सौ आघात॥
सदाचरण से हीन पर, सच के पहरेदार।
यहीं रुकी है देश की, उन्नति की जलधार॥
कठिन अगन, कैसे सहूँ, यह विरहा का भार।
तपा जेठ बरसा रहा, सूरज भी अंगार॥
हहर-छहर गाती फिरे, हवा अनल के गीत।
सलिल भरे घन भी छिपे, होकर ज्यों भयभीत॥
चमक-दमक धन से भरे, जहाँ-तहाँ बाजार।
लिए लकुटिया सोचता, कबिरा सार-असार॥
बचपन चुका कि रह गए, खेल-खिलौने भार।
उमग भरी वह जिंदगी, यहाँ गई सब हार॥
काशी मगहर सब हुए, बड़े-बड़े बाजार।
अब कबिरा इस तट रहें, या जाएँ उस पार॥
धन-यौवन का मान क्या, हम सब निर्बल दीन।
काल-पखेरू खा रहा, एक-एक कण बीन॥
घाटी वन चलते रहे, छाले सहकर पाँव।
भरी गृहस्थी को मिले, दो रोटी, कुछ छाँव॥
चढ़ पेडों की फुनगियाँ, सूरज उतरा झील।
थककर बैठा पथिक ज्यों चलकर मीलों मील॥
सिंधु अँजुरी से पिएँ, कर आपद अनुबंध।
साँस-साँस में भर चलें, जीवन की सौगंध॥
करें आचमन जहर का, अमृत की ले प्यास।
बिना दर्द किसको मिला, जीवन का उल्लास॥
ओढ़ आवरण धुंध का, कँप-कँप करता रूप।
मफलर बाँधे मेघ का, सूरज बैठा धूप॥
कहाँ जुड़ेगा टूटकर, मन-दर्पण का रूप।
यह बाजार, इसमें नहीं, संवेदन की धूप॥

वाणीसदन, बी-९८, सूर्यनगर,
गाजियाबाद-२०१०११
(उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक रहस्य

● अविनाश भारती

भारतीय ग्रंथों में यह पढ़ा है, अपने पूर्वजों से सुना है कि आत्माएँ अनश्वर हैं। वे कभी नहीं मरती हैं।

बचपन में दादी-नानी की कहानियों में प्रेतात्माओं का जिक्र अकसर हुआ करता था। फलतः आत्माओं से संबंधित बातों व विचारों में मेरा स्वाभाविक रुझान था। मैं आत्माओं से संबंधित गुत्थियों को सुलझाना चाहता था। विज्ञान का छात्र होने के नाते मैं अपनी किशोरावस्था से ही प्रेतात्माओं की पृष्ठभूमि में छिपे वैज्ञानिक कारणों से लोगों को अवगत कराना चाहता था।

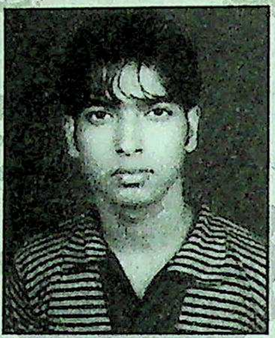

जन्म : ८ जनवरी, १९९५।
शिक्षा : कक्षा दशम् (अध्ययनरत)।
कृतित्व : पढ़ाई के साथ-साथ कहानी, कविता आदि के लेखन में रुचि।

आज मैं मुजफ्फरपुर के जवाहर नवोदय विद्यालय का छात्र हूँ तथा गरमी की छुट्टी मनाने के लिए शहर के ही एक पुस्तकालय में अपनी पसंद की पुस्तक ढूँढ़ रहा हूँ। प्राचीन पुस्तकों में दिलचस्पी होने के कारण मैंने पुस्तकालय की अनुपयोगी घोषित पुस्तकों पर एक नजर डाली और उसमें से एक पुस्तक उठाई तो पाया कि वह पुस्तक जिसका शीर्षक 'एक रहस्य' है, मेरे लिए बिलकुल उपयुक्त है। मैंने पुस्तक को पूरी दिलचस्पी के साथ पढ़ा और दुनिया में छिपे एक रहस्य को जाना। यह रहस्य भारत के नागालैंड राज्य के डूंगरू नामक कबीले से संबंधित था।

मैंने इस रहस्य को जानने के लिए नागालैंड जाने की सोची। मैंने अगले ही दिन नागालैंड में रह रहे बिहारी मित्र 'अमर' को फोन पर अपने आगमन की बात बताई; मेरा मित्र प्रफुल्लित हो उठा। मैंने जून २०१० को रात्रि १० बजे पटना से नागालैंड के लिए ट्रेन पकड़ी और दो दिन की यात्रा समाप्त होने पर मैं नागालैंड के रेलवे स्टेशन पर सकुशल खड़ा था, जहाँ मेरा मित्र पहले से ही मेरा इंतजार कर रहा था। उसने बड़ी ही गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया। हम दोनों ने जमकर मौज-मस्ती की। वह मुझे अपने फ्लैट में ले गया। पूरा दिन मौज-मस्ती में ही बीता और रात्रि के समय खाना खाकर चैन की नींद सो गए।

सुबह होने पर रामू (फ्लैट में रहनेवाला कबिलाई नौकर) मेरे लिए चाय लेकर आया। चाय पीने के दौरान मैंने रामू से उसका पता-ठिकाना पूछा तो उसने स्वयं को डूंगरू कबीले का सदस्य बताया। मैं खुशी से उछल पड़ा और पूछा, "तब तो तुम दिव्य मणि के बारे में जानते ही होगे!" वह एकाएक चौंक पड़ा और पागलों की भाँति बड़बड़ाने लगा, "दिव्य मणि! साहब यह तो वही मणि है, जिस पर प्रेतात्माओं का राज है, और इतिहास गवाह है कि आज तक जिसने भी इस मणि को प्राप्त करने की कोशिश की, वह जिंदा नहीं बचा। हाँ, जिस भाग्यशाली को यह मणि मिलेगी, वह अजर-अमर बन जाएगा। परंतु साहब! यह आपने कहाँ सुना?"

मैं गंभीरता से रामू की बातें सुन रहा था। अब मैं यह समझ चुका था कि मैंने मणि के विषय में जो कुछ भी पढ़ा है, रामू उन सारी बातों को जानता है। मणि से संबंधित इन किंवदंतियों को मैं झुठलाना चाहता था, उसे विज्ञान की कसौटी पर परखना चाहता था। मेरी जगह कोई दूसरा अंधविश्वासी व्यक्ति होता तो शायद मेरी तरह इस गुत्थी को सुलझाने की जुर्रत नहीं करता। रामू की बातों को सुनकर मेरा आत्मविश्वास और बढ़ गया। मैंने मणि को प्राप्त कर उससे संबंधित झूठी अवधारणा का पर्दाफाश करने की ठान ली। अभी मैं इस विषय पर सोच ही रहा था कि अंदर से अमर ने मुझे आवाज दी। उसने मुझे जल्दी तैयार होने के लिए कहा। मेरे पूछने पर कहा कि हम नाश्ते के बाद नागालैंड के पर्यटक स्थलों को देखने चलेंगे। मैंने अमर को अपनी मौन स्वीकृति दे दी। हमने उस दिन भी मौज-मस्ती की। अमर के साथ इस तरह कई सुखद दिन बीतते गए। इस बीच मेरा उसके प्रति लगाव पहले की अपेक्षा काफी बढ़ गया था। हमारा पारस्परिक प्रेम अद्वितीय था। रामू यह देख कभी-कभी कहा करता था, "साहब, मैंने ऐसी दोस्ती आज तक नहीं देखी। आप दोनों की दोस्ती आगे चलकर सभी के लिए एक मिसाल बनेगी। पिछले जन्म में आप दोनों निश्चय ही सगे भाई रहे होंगे। ईश्वर आपकी जोड़ी सलामत रखे।"

नागालैंड में रहते हुए इन पंद्रह दिनों में मैंने रामू से डूंगरू कबीले के, मणि के विषय में काफी जानकारियाँ एकत्रित कर लीं।

जुलाई की अमावस की एक रात को मैं अमर को बिना कुछ बताए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर अमर मायूस हो उठा। उसने कहा, ''मित्र! मैं भला तुम्हारी कामयाबी से क्यों जलूँगा? मैं तो तुम्हें सच्चाई बताने आया था, परंतु इस सच्चाई को बताने के बाद अमर तुम हमसे कभी नहीं मिल पाएगा। सुनना चाहते हो तो सुनो—इस मणि में प्रेतात्माओं का निवास है, जिसने भी इसे हासिल करने की कोशिश की, वह स्वयं प्रेत बन गया। मित्र! मैंने भी इसे हासिल करने की कोशिश की थी। तुम देखो, मैं इनसान नहीं बल्कि आज एक प्रेतात्मा हूँ।'' इतना कहते ही अमर गायब हो गया।

रामू के साथ डूंगरू कबीले की तरफ चल पड़ा। मैंने अमर को इस विषय में इसलिए नहीं बताया, क्योंकि मुझे इस बात का डर था कि अमर मुझे ऐसा करने से रोक न दे। टॉर्च की रोशनी के सहारे मैं रामू का अनुकरण करता हुआ आगे बढ़ता जा रहा था। जंगली इलाका होने के कारण जानवरों की भयानक आवाजों का गूँजना स्वाभाविक था। चूँकि रामू कबीले का निवासी था और साथ ही वह उनका सामना करना भी जानता था। मैं दृढ़ता से आगे बढ़ रहा था। लगभग तीन मील की दूरी तय करने के बाद एकाएक रामू के बढ़ते कदम रुक गए। उसने कहा, ''साहब! मैं इसके आगे नहीं जा सकता। यहाँ से आगे कदम-कदम पर खतरे हैं। कबीले के महान् तांत्रिकों के अनुसार इसके आगे दिव्यमणि की रक्षक प्रेतात्माओं की दुनिया शुरू होती है, जहाँ से जिंदा लौटना असंभव है। साहब, मेरी मानें तो वापस लौट चलिए, वरना अमर साहब मुझे जिंदा नहीं छोड़ेंगे।''

मेरा मन वापस लौटने को नहीं कर रहा था। मैं दिव्यमणि से संबंधित अवधारणाओं को गलत साबित करना चाहता था। मंजिल करीब होने से मेरा आत्मविश्वास और बढ़ गया था; मैं रामू की बातों को अनसुना कर आगे बढ़ने लगा। कुछ ही क्षणों में मेरे कदम प्रेतात्माओं की सीमा में प्रवेश कर चुके थे। मुझे किसी भी प्रकार का डर नहीं लग रहा था, मेरे अंदर का आत्मविश्वास दोगुना हो गया था। कुछ दूर चलने पर मुझे विकराल पर्वत नजर आ ही गया, जिसकी किसी एक गुफा में दिव्यमणि होने की संभावना थी। मैंने अपनी सुविधा के लिए अपने बैग से 'एक रहस्य' पुस्तक से फाड़े गए पन्ने को निकाला, जिस पर दिव्यमणि तक पहुँचने के रास्ते का विवरण था। मैं इसकी सहायता से आगे बढ़ने लगा। एकाएक मुझे दर्दनाक चीखें सुनाई पड़ने लगीं। चट्टानों की आकृतियाँ प्रेतों जैसी प्रतीत होने लगीं। भयंकर आँधी शुरू हो गई। कुत्ते के रोने के आवाज सुनाई देने लगी। पूरे वातावरण में फैली मनहूसियत किसी शवयात्रा के समान प्रतीत होने लगी। मेरा आत्मविश्वास डोल पड़ा, हाथ-पैर काँपने लगे, मेरी चेतना गुम होने लगी। मैंने यह सोचकर कि ये परिवर्तन प्राकृतिक हैं, अपने आप को सँभाला और आगे बढ़ता गया। कुछ ही दूरी पर मुझे एक गुफा से प्रकाश आता हुआ प्रतीत हुआ। मैं उसी तरफ बढ़ने लगा। मेरे कदम ज्यों-ज्यों आगे बढ़ रहे थे त्यों-त्यों प्रकृति का प्रकोप भी बढ़ता जा रहा था। गुफा के करीब पहुँचते ही एकाएक प्रेतात्माओं की जैसी चमगादड़ों की भीड़ ने मेरे ऊपर आक्रमण कर दिया। वे रक्तपिपासु चमगादड़ मेरे बदन का सारा खून पीने को उतावले थे। मेरी जीवनलीला तो वहीं समाप्त हो गई होती, अगर मैंने समय से पूर्व मशाल नहीं जलाई होती। खैर, किसी तरह मेरा चमगादड़ों से पीछा छूटा। मैं आत्मविश्वास से गुफा में घुसा। मेरे सामने वही दिव्यमणि थी, जिसका विवरण मैंने पुस्तक में पढ़ा था और रामू से सुना था। मैं प्रसन्न हो गया। मणि मेरे हाथ से दूर नहीं था। मैंने वर्षों से चली आ रही किंवदंती को झूठा साबित कर दिया था। मैंने मणि को प्राप्त करने के लिए हाथ बढ़ाया, सहसा मुझे झटका सा लगा। शायद किसी ने मेरे कंधे पर हाथ रखा था। मैंने पलटकर देखा तो आश्चर्यचकित रह गया। मेरे सामने और कोई नहीं, मेरा परममित्र अमर था। मैंने प्रसन्नतापूर्वक उससे चहककर कहा, ''अमर! देखो, मैंने वर्षों से चली आ रही किंवदंती को झूठा साबित कर दिया है। इस मणि की रक्षक कोई प्रेतात्मा नहीं है, सब अफवाह है। विज्ञान के अनुसार आत्माएँ नहीं होती हैं और मैंने इसे साबित कर दिया।'' इस पर अमर ने झल्लाते हुए कहा, ''अविनाश! तुम मुझसे बिना पूछे यहाँ क्यों आए? शायद तुम्हें पता नहीं कि यहाँ निवास करनेवाली प्रेतात्माएँ मणि को स्पर्श करनेवाले को जिंदा नहीं छोड़तीं। मणि का स्पर्श मौत को दावत देने के बराबर है। लौट चलो यहाँ से!''

अमर के इस प्रत्युत्तर से मैं भौंचक रह गया। जो मित्र मेरे साथ हमेशा प्रेमपूर्ण व्यवहार रखता था, अचानक उसे क्या हो गया है? मैंने कोई बड़ी भूल तो नहीं कर दी? मैंने भी आवेश में आकर उससे कहा, ''तुम मुझे मणि प्राप्त करने से क्यों रोक रहे हो? क्या तुम मेरी सफलता से जलते हो? मेरी जगह यदि तुम मणि प्राप्त कर यश कमाना चाहते हो तो साफ-साफ क्यों नहीं कहते?''

इस पर अमर मायूस हो उठा। उसने कहा, ''मित्र! मैं भला तुम्हारी कामयाबी से क्यों जलूँगा? मैं तो तुम्हें सच्चाई बताने आया था, परंतु इस सच्चाई को बताने के बाद अमर तुम हमसे कभी नहीं मिल पाएगा। सुनना चाहते हो तो सुनो—इस मणि में प्रेतात्माओं का निवास है, जिसने भी इसे हासिल करने की कोशिश की, वह स्वयं प्रेत बन गया। मित्र! मैंने भी इसे हासिल करने की कोशिश की थी। तुम देखो, मैं इनसान नहीं बल्कि आज एक प्रेतात्मा हूँ।'' इतना कहते ही अमर गायब हो गया।

अमर के शरीर को गायब होते देख मेरी चेतना गुम हो गई और मैं बेहोश हो गया। जब मेरी आँखें खुलीं तो मैंने स्वयं को अस्पताल में पाया।

आज मुझे इस बात का दुःख नहीं है कि मैं विज्ञान को सही साबित नहीं कर पाया, बल्कि मुझे इस बात का अपार दुख है कि मैंने अपने मित्र अमर को हमेशा-हमेशा के लिए खो दिया।

गाँव पो. : साहेबगंज,
जि. मुजफ्फरपुर-८४३१२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुरुक्षेत्र

● चंद्रमोहन दिनेश

जन्म : १९४४, बदायूँ (उ.प्र.)

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पी-एच.डी.।

कृतियाँ : 'साहित्य का धूमकेतु : भुवनेश्वर' *(संपादित)*, 'एकदा विकास खंडे' *(कहानी संग्रह)*, 'मछली दीदी, सुनो! सुनो!' *(बालगीत संग्रह)*, 'मास्टर फिदा हुसैन', 'नरसी', 'काकोरी शहीद अशफाक उल्ला खाँ' *(जीवनी)*, बयान एक दिन के बादशाह का *(व्यंग्य संग्रह)*। लगभग आधा दर्जन पत्र-पत्रिकाओं का संपादन। गत ५० वर्षों से छायांकन, चित्रांकन तथा रंगमंच के क्षेत्र में भी सक्रिय भागीदारी। कई रचनाओं का अनेक अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद।

सम्मान : 'भुवनेश्वर साहित्य-सम्मान', 'अखिल भारतीय अंबिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार', 'विद्या-वाचस्पति' की मानद उपाधि।

संप्रति : स्वतंत्र लेखन।

कैंट एरिया के साफ-सुथरे, अनुशासित इलाके में बिछी इस सर्पीली सड़क के पश्चिम में मुख्य मार्ग से एक पगडंडी फूटी है, जो रेंगती हुई कुछ दूर जाकर पेड़ों के झुरमुट में खो गई है। दूर से उजाड़ और सुनसान लगने वाला यह झुरमुट दरअसल एक सरकारी दफ्तर है, लेकिन तद्सूचक कोई बोर्ड न मुख्य मार्ग पर लगा है, न ऑफिस की इमारत के पास ही। सच तो यह है कि यह इमारत अंग्रेजों के जमाने का फूस बँगला था, जो आजादी के बाद शहर के किसी व्यापारी ने औने-पौने दामों में खरीदकर इसे सरकारी दफ्तर के लिए मासिक किराए पर उठा रखा था।

दफ्तर महत्त्वपूर्ण था। जिले में खाद्य व रसद आपूर्ति यहीं से होती थी। दिन भर लोगों की आवाजाही, गहमागहमी और साइकिलों, मोटर-साइकिलों आदि की आमद-रफ्त इस तथ्य को रेखांकित करती थी कि यह दफ्तर महत्त्वपूर्ण है और यहाँ लक्ष्मी साक्षात् वास करती है। लक्ष्मी का आसन कमल है और कमल कीचड़ में ही खिलता है, इसलिए कीचड़, गंदगी और देखने में वितृष्णा पैदा करने वाला माहौल बनाए रखने की हर मुमकिन कोशिश की जाती थी। किंवदंती है कि बनिया कभी अपनी फड़ पर झाड़ू नहीं लगाता अन्यथा लक्ष्मी रुष्ट हो जाती है, इसी किंवदंती के मद्देनजर यहाँ सफाई करने का जोखिम तभी उठाया जाता, जब दफ्तर का कभी मुआयना आदि होता, अन्यथा कमरों में मकड़जाल फैला रहता है, दीवारें पान की पीक से रँगी रहती हैं, पान-मसाले और गुटखों की पन्नियाँ, सिगरेट की खाली डिब्बियाँ, बीड़ी के टोटे लोगों की आवाजाही से हर पल रुँदते रहते थे।

सुबह के दस बज चुके थे। नवंबर की गुनगुनी धूप झुरमुटों से छनकर लॉन में बिखर चुकी थी। दफ्तर का दरबार धीरे-धीरे सजने लगा था। नित्य की भाँति आज भी बाबू लोग अस्त्रों-शस्त्रों से लैस होकर आज के दिन की अच्छी शुरुआत की कामना कर रहे थे। बाबू शिवकिशोर, जो राशनकार्डों के नियंता थे, पान की जुगाली करते आज के अखबार में अपना राशिफल बाँच रहे थे। राशन की दुकानों के सर्वेसर्वा संजीव बाबू ने जिले के राशन की दुकानों की जन्म-पत्रियाँ खोल ली थीं। कोटा रिलीज करनेवाले बाबू सत्यनारायण उर्फ सत्तन बाबू ने रजिस्टर खोल लिया था कि आज राशन किन-किन दुकानों को देना है। इससे पहले उन्होंने मेज की दराज खोलकर उसमें लक्ष्मी-गणेश वाले चाँदी के सिक्के को छूकर माथे से लगाया—महालक्ष्मी नमस्तुभ्यम् सुरेश्वरी, हरिप्रिये नमस्तुभ्यम्, दयानिधौ। माँ, आज विशेष कृपा कीजिए, बड़ी कड़की चल रही है। डिस्पेचर बाबू विजय मिश्रा, जो ऑफिस में सीनियर होते हुए भी अपने काले कारनामों के कारण डिस्पेचर जैसी मामूली कुरसी पर बिठाए गए थे, अन्यमनस्क भाव से ऑफिस के मुख्य द्वार पर नजर गड़ाए थे।

तीर-कमान सध चुके थे, लेकिन लक्ष्य अभी प्रकट नहीं हुए थे। दफ्तर का एकमात्र चपरासी बाबूराम बाहर बरामदे में बैठा लॉन की गंदगी को घूर रहा था। उसकी कार्यशैली कुछ अलग किस्म की थी। दिन भर ऑफिस में सबके लिए चाय, समोसा, मिठाई और नमकीन लाना और उसमें खुद को भी शामिल रखना उसका नियम था। कभी-कभी वह लोगों की समस्याओं का समाधान कर सौ-पचास रुपए झटक लेता था, चाय-पानी अलग से। वह दिन भर ऑफिस और सड़क के पचासियों चक्कर लगाता, जैसे मछुआरा जाल फेंकता है। उसके जाल में कभी बड़ी-बड़ी अन्यथा छोटी-छोटी मछलियाँ तो फँस ही जाती थीं, जिससे उसका दिन भर का खाने-पीने का कोटा और शाम को एक देशी अद्धे का जुगाड़ हो जाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घंटे भर बाद, जब आसमान खुल चुका था और धूप अचानक छिटककर लॉन में आ गिरी थी, एक कोटेदार सुभाषचंद्र मोटर साइकिल से धड़धड़ाता गेट से घुसा।

निर्जीव से बैठे बाबूराम की बाँछें खिल गईं 'आया साला, एक तो आया। धन्य हो प्रभो!' वह लपककर लॉन में आया और कोटेदार की मोटर साइकिल थाम ली, ''नमस्ते हुजूर! अरे इसे छोड़िए, हम खड़ी कर देंगे। हम तो जनमे ही हैं आप की सेवा के लिए। मौसम ने सब गड़बड़ कर दिया। आप भीतर चलिए। आपके कागज हमने कल ही तैयार कर दिए थे। साहब रात दस बजे तक जाने कौन सी मीटिंग के स्टेटमेंट तैयार करते रहे और किसी फाइल की तरफ देखा तक नहीं, लेकिन आपका काम रुक जाए तो बाबूराम की जिंदगी पर लानत है। उनके उठते-उठते भी हमने आपकी फाइल निकालकर उनके सामने फैला ही दी। वे घुन्नाकर हमें देखने लगे—'यह क्या है? नहीं, हम कोई फाइल नहीं देखेंगे। कल मीटिंग के बाद रखना। उन्होंने फाइल समेटकर नीचे फर्श पर फेंक दी। सर, हमें गुस्सा तो बहुत आया, लेकिन फिर बड़ी खुशामद की कि इस एक ही फाइल को कर दीजिए। कोटेदार भले आदमी हैं। सारी सरकारी अलाएँ-बलाएँ अपने सिर ले लेते हैं। इनकी फाइल तो कर ही दीजिए। तब बड़ा कुनमुना कर दस्तखत किए। क्या करें सरकार, ऐसे दो कौड़ी के अफसर अब आने लगे हैं कि नौकरी करने का मन नहीं करता।''

''अरे सत्तन बाबू, हमने तो यह देखा है कि जो जितना सख्त बनकर आता है, वह भीतर से उतना ही घाघ निकलता है। पिछले साहब की याद नहीं? आते ही आगी मूतने लगा था। सारा जिला हिलाकर रख दिया। ऐसा तांडव मचाया कि सब सीधे चरणों में आकर गिर पड़े—त्राहि माम्! त्राहि माम्! फिर क्या हुआ? किश्त का रेट दुगना कर दिया। मरता क्या न करता। सब देने लगे।''

कोटेदार ने होंठ तिरछे कर मुसकान का छोटा टुकड़ा फेंका और पचास का नोट बाबूराम को थमा दिया।

''सरकार, आपने आज हमारी बोहनी की है।'' बाबूराम ने श्रद्धा से पचास का नोट माथे से लगाया, ''अब अंदर जाइए और पचास के बदले पचास हजार कमाइए।''

सत्यनारायण उर्फ सत्तन बाबू ने कोटेदार को अपनी ओर आते देखा तो फाइलों पर ऐसे झुक गए, जैसे अब कभी सिर ऊपर नहीं उठाएँगे। उनकी निगाह बेशक फाइल पर थी, लेकिन कनखियाँ कोटेदार के कदमों की दिशा भाँप रही थीं।

कोटेदार उनकी मेज के सामने आकर खड़ा हो गया और शालीनता से नमस्कार कहा। सत्तन बाबू ने बिना सिर उठाए ही जवाब में सिर तो हिलाया, लेकिन दृष्टि अभी भी फाइल से चिपकी थी।

कोटेदार धीरे से कुरसी खिसकाकर बैठ गया। सत्तन बाबू डूबे रहे। कुछ देर बाद उन्होंने बिना कोटेदार की तरफ देखे मेज की दराज खोली और उसे खुला ही छोड़कर उठकर चल दिए।

कोटेदार पुराना खिलाड़ी था। वह धीरे से दराज के पास आकर खड़ा हो गया। दराज में चाँदी का लक्ष्मी-गणेश वाला सिक्का चमक रहा था। उसने सबकी नजर बचाकर जेब से एक गड्डी निकालकर दराज में सरका दी और दराज बंद कर यथास्थान आकर बैठ गया।

सत्तन बाबू लौट आए और कोटेदार की तरफ देखे बगैर फिर फाइल पलटने लगे। कनखियों से देखा, मेज की दराज, जिसे वे खुला छोड़ गए थे, अब बंद थी। फिर भी कलम ढूँढ़ने के बहने उन्होंने धीरे से दराज खोली, फिर बंद कर दी। फिर वे कोटेदार से मुखातिब हुए, ''अरे सुभाषजी, आप? कब आए? माफ करना भाई, मैं काम की वजह से आपको देख नहीं सका। क्या करें, अब नौकरी भारी पड़ने लगी है। दम मारने की फुरसत नहीं मिलती और सुनाइए, क्या हाल है? धंधा कैसा चल रहा है?''

सुभाषचंद्र कोटेदार सत्तन बाबू की कुटिलता पर मुसकराए, ''धंधा तो धंधा है बाबूजी। कभी चोखा, कभी मंदा। आप लोगों की कृपा रहती है, इसलिए गाड़ी खिंच रही है।''

''वैसे आपकी शिकायतें बहुत मिल रहीं हैं। परसों नगर विधायक भी साहब से आपकी शिकायत कर रहे थे। कभी-कभी कोटा बाँट भी दिया कीजिए। हम कहाँ तक आपको बचाते रहेंगे। जाँच होनेवाली है आपकी। आप तो दाल में नमक के बजाय नमक में दाल डालकर खाने लगे हैं। अबकी इंस्पेक्टर वर्मा बड़ा सख्त आया है। जेल पहले भिजवाता है, जाँच बाद में करता है।''

''अरे सत्तन बाबू, हमने तो यह देखा है कि जो जितना सख्त बनकर आता है, वह भीतर से उतना ही घाघ निकलता है। पिछले साहब की याद नहीं? आते ही आगी मूतने लगा था। सारा जिला हिलाकर रख दिया। ऐसा तांडव मचाया कि सब सीधे चरणों में आकर गिर पड़े—त्राहि माम्! त्राहि माम्! फिर क्या हुआ? किश्त का रेट दुगना कर दिया। मरता क्या न करता। सब देने लगे।''

''अब यह इंस्पेक्टर आपकी खाल खींचेगा।'' सत्तन बाबू ने कुछ इस अंदाज में कहा कि सुभाषचंद्र भीतर तक दहल गए।

''अब हमारे तो संकटमोचन आप ही हैं।'' सुभाषचंद्र ने अपनी सारी चिंताओं का गट्ठर सत्तन बाबू पर लाद दिया और सामने पड़ी फाइल खींचकर उसमें कुछ नोट और सरका दिए।

सत्तन बाबू ने उधर उड़ती नजर डाली और बोले, ''देखो भाई, सेवा स्वीकार करने में हमें कोई परहेज नहीं है। आप जितनी कहें, हमें स्वीकार है। लेकिन हम भी कागजों के गुलाम हैं। जिंदा मक्खी कोई नहीं निगल सकता। आप दुकान का रिकॉर्ड चाक-चौबंद रखिए। एरिया के लोगों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझा दीजिए कि उनसे पूछा जाए तो उन्हें क्या कहना है। स्टॉक सही होना चाहिए। फर्जी कार्ड एक भी न दिखे। अगर दिख गया तो रिकॉर्ड सील और आप जेल में। तब हम भी कुछ नहीं कर पाएँगे।'' सुभाषचंद्र चिंताकुल हो गए। लगता है सत्तन बाबू ने फाइल में रखे रुपए ठीक से देखे नहीं, हजार-हजार के दस नोट हैं। शायद सौ-सौ के समझ रहे हों। इसलिए फाइल की तरफ इशारा करते हुए बोले, ''सेवा कर तो दी है। देख लीजिए। काम के मुकाबले कहीं ज्यादा हैं। अब आप जानिए। मेरा बाल बाँका नहीं होना चाहिए।''

''क्या मतलब? यहाँ ठेकेदारी नहीं होती। सेवा कर रहे हो तो अपने स्वार्थ के लिए। लेकिन जैसा बताया, वैसा न किया तो हम क्या हथेली लगा देंगे?''

''अब आप हथेली लगाएँ या हाथ। हमने सेवा कर दी। सुभाषचंद्र ने हाथ झाड़ लिये। ये साला खाएगा तो बच के कहाँ जाएगा? यहीं ऑफिस में नंगा कर दूँगा। रुपये थामने के लिए कितनी जल्दी मुँह फैला देंगे। काम करते वक्त नियम-कानून सिखाने लगते हैं। नियम से ही चलना हो तो गड्डियाँ क्या फ्री में आती हैं? तेल निकलेगा तो तिलों में से ही।

''आज के दिन की शुरुआत अच्छी रही।'' सत्तन बाबू पुलक से भर गए। पुलकित होने का एक कारण और भी था। इंस्पेक्टर वर्मा अब सीधे उनके निशाने पर आ गया था। इसी वर्मा ने एक डील में अपनी ईमानदारी घुसेड़कर उसका बीस हजार का नुकसान करा दिया था। रुपए लेकर लौटाना उसके उसूलों के खिलाफ था, लेकिन इधर यह वर्मा और उधर शातिर पार्टी। रुपए लौटाने में ही भलाई थी। लेकिन उसने तभी यह शपथ ली थी कि इस वर्मा को ट्रैप न कराया तो मैं भी सत्यनारायण नहीं।

वर्मा यानी अवधेश प्रसाद वर्मा, वरिष्ठ पूर्ति निरीक्षक। पचास के पेटे का यह इंस्पेक्टर अपनी सख्ती और ईमानदारी के लिए पूरे विभाग में मशहूर था। उसके सेवाकाल में जाने कितने भ्रष्ट कर्मचारी चोट खा चुके थे, कितनों को प्रतिकूल प्रविष्टि मिल चुकी थी, कितनों के प्रमोशन खटाई में पड़ चुके थे। वह धूल का ऐसा कण था, जो आँख में पड़कर कंकड़ बन जाता था। कोटेदार तो उसकी परछाईं से दूर भागते थे। इसी दफ्तर के कई लोग उससे चुटहिल हो चुके थे। बड़े साहब के न होने पर वही दफ्तर का अफसर होता था। तब दफ्तर वाले पीठ पीछे उसकी तरफ इशारा करते हुए फुसफुसाते, 'एक तो भूत और हाथ में भाला।'

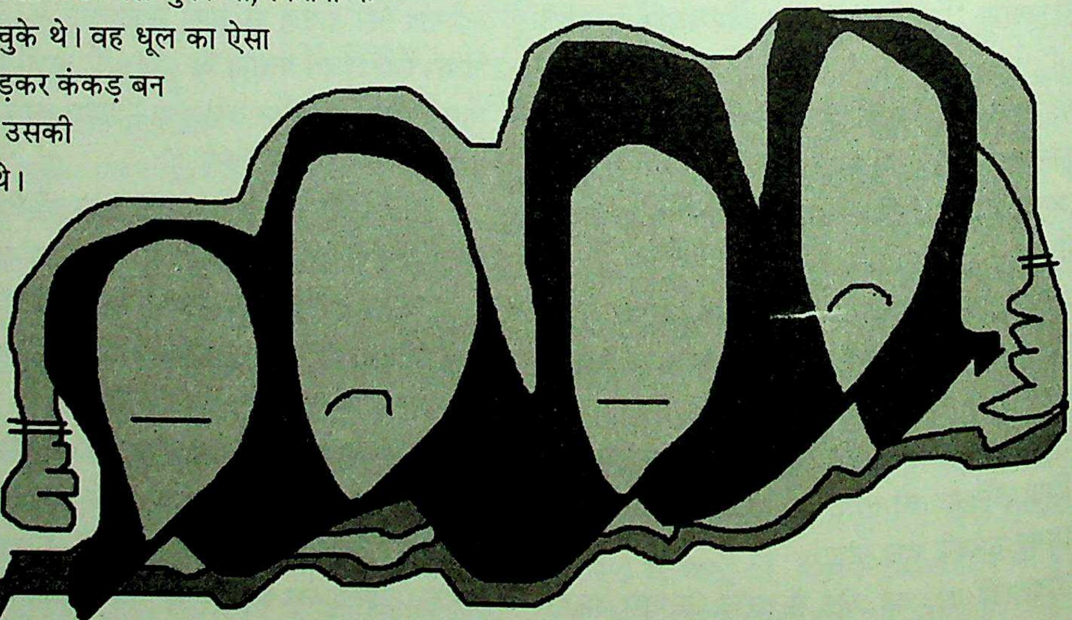

''यार, इस वर्मा का इलाज जल्दी करना पड़ेगा। सारा धंधा-पानी चौपट हो रहा है। सूखी तनखा में कैसे गुजारा हो?'' दफ्तर के कुछ लोग पतीली में खौलते पानी की तरह बड़बड़ाते। कुछ ने उसे नीचा दिखाने के लिए उसकी सार्वजनिक छवि को मिट्टी में मिलाने का संकल्प ले लिया। सत्तन बाबू भी उन्हीं में से एक थे।

कोटेदार सुभाषचंद्र को इस्तेमाल किया जा सकता है।

अगले सप्ताह वर्मा ने अचानक राशन की सत्रह दुकानों का निरीक्षण कर लिया। उसमें सुभाषचंद्र की दुकान भी थी।

''यह तो गया।'' सत्तन बाबू सुभाषचंद्र की दुकान का निरीक्षण-टीम पढ़ने लगे। टीप में इतनी कमियाँ दर्ज की गई थीं कि उसकी दुकान का निरस्तीकरण तो निश्चित था, कोटेदार के खिलाफ कठोर कार्यवाही की भी गुंजाइश थी।

शाम को उन्होंने तीन-चार कोटेदारों को अपने घर पर बुला लिया।

वर्मा की निरीक्षण-टीप जब अफसर की मेज पर पहुँची तो उसके होश उड़ गए, ''नाक के नीचे इतनी भयंकर गड़बड़ियाँ? शहर का यह हाल है तो गाँवों में तो खुली लूट चल रही होगी। ये बातें ऊपर तक पहुँची तो पूरा दफ्तर तो क्या हम खुद भी लपेटे में आ जाएँगे। हर कोटेदार के पीछे नेता है, राजनीति है। पता नहीं किस-किस के किस-किस से लिंक होंगे। मीडिया वालों ने सूँघ भी लिया तो कल के अखबारों में इस भ्रष्टाचार की धारावाहिक किश्तें छपना शुरू। इस फाइल पर सोच-समझकर कार्यवाही करनी होगी।''

दफ्तरों के लिए प्राय: वक्त कोई मायने नहीं रखता। एक हफ्ते का काम एक घंटे में और एक घंटे का काम एक हफ्ते में होने जैसी चमत्कारी घटनाएँ इन्हीं स्थानों पर संभव होती हैं। एक-दो महीने तो यहाँ पलक झपकते ही गुजर जाते हैं।

इस प्रकरण को भी लोग भूल जाते, अगर एक सुबह कोटेदार सुभाषचंद्र अपने अन्य साथी कोटेदार के साथ अफसर के केबिन में खड़ा न होता। खिड़की की झिरी से कान सटाए सत्तन बाबू भी छुपकर खड़े थे।

सुभाषचंद्र को अंग्रेजी नहीं आती थी, लेकिन किन्ही खास मौकों पर वह अंग्रेजी के भी चालू शब्द जरूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेल देता था। इस समय वह अपनी इसी खिचड़ी भाषा में बोल रहा था, ''आपको डिस्टर्ब करने के लिए सॉरी सर। बट मैटर सीरियस। हमारा शोषण हो रहा है। हम तो बिजनेस मैन। समाज-सेवा, देश-सेवा के लिए हमने अपनी जमा-पूँजी दाँव पर लगा दी। काहे कि सरकार प्लान सफल हो। गरीबों को सस्ता गल्ला, दाना-पानी। हमें तो कुछ बचता भी नहीं हुजूर। बल्कि ढुलाई-भाड़ा हम अपनी जेब से भरते हैं। काहे से कि हम समाजसेवी हैं। सोशल वर्कर, नॉट बिजनेस मैन। सेवक। आपके निरीक्षक महोदय श्री वर्माजी ने हमें घर बुलवाया और कहा, नहीं··· कहा नहीं 'थ्रेट' किया कि उन्हें कोटेदारों से पचास-पचास हजार चाहिए, हर महीने। ऐसी नाजायज डिमांड? हमने साफ मना कर दिया। काहे से कि यह गलत परंपरा हम नहीं डालेंगे। चाहे कुछ हो जाए।''

सुभाषचंद्र अपना फिचकुर पोंछने के लिए जैसे ही रुके, कोटेदार पं. रामलोटन ने बात का सिरा लपककर पकड़ लिया,''महोदय, एक-डेढ माह पहले इन्हीं वर्माजी ने हम सबकी दुकानों पर बिना बताए छापा मार दिया। दुकान के सारे फाइल-रजिस्टर यहाँ तक कि तराजू-बाट तक उठा लाए। फिर घर बैठकर उसमें जो चाहा, जैसा चाहा, लिखा-पढ़ा, काट-पीट की और जो भी किया हो, हमें क्या पता। लेकिन फिर हम लोगों के खिलाफ झूठी शिकायत शिरीमानजी को भेज दी, फिर हमें खबर भिजवाई कि अपनी बरबादी से बचना चाहते हो तो हमारी बात मानो।''

अफसर, जो अब तक बाएँ हाथ की एक उँगली पर अपनी ठोड़ी टिकाए थक चुका था, सीधा होकर बैठ गया, ''फिर? आप लोगों ने क्या किया? बात मानी?''

''मरता क्या न करता। नो स्पेस टु इस्केप।'' सुभाषचंद्र ने बात की लगाम फिर से थाम ली, ''जल में रहकर मगरमच्छ से बैर तो नहीं कर सकते न? अभी पचास हजार की गड्डी उन्हें थमाकर आए हैं। आए तो सोचा महोदय को भी परनाम करते चलें। फाइल तो अपाके पास ही आएगी न?''

अफसर चौंका,''क्या? अभी? अभी देकर आए हैं?''

''अभी सरकार, बिलकुल अभी। बैंक की सिली हुई पूरी गड्डी है। दाहिनी दराज में रखी है, आप सरकार खुद चलकर देख लें।''

अफसर सन्नाटे में आ गया, 'क्या बक रहे हैं ये लोग? वर्मा और पचास हजार? इंपॉसिबल। कहीं जरूर कुछ गड़बड़ है। फाइल वह सबमिट कर चुका है। अब वह रुपए क्यों माँगेगा? रिपोर्ट देने के बाद उसे अब आगे ही प्रोसीड करना होगा।'

''जल्दी चलिए सर, वरना वर्माजी रुपए इधर-उधर कर देंगे।''

भारी कदमों से अफसर उठा। भीड़ पीछे थी। सत्तन बाबू भी लपककर साथ हो लिये।

वर्माजी सीट पर नहीं थे।

''अरे! कहाँ गए? अभी तो यहीं थे। देखा सर, रुपए ठिकाने से रखने के लिए खिसक लिए हैं।'' पं. रामलोटन आगे बढ़ आए। तभी वर्माजी रूमाल से हाथ पोंछते हुए टॉयलेट से बाहर आते दिखे।

अपनी मेज के पास अफसर और कोटदार की भीड़ देखकर चौंककर पूछा, ''क्या हुआ सर? आप यहाँ? मुझे बुला भेजा होता।''

अफसर का स्वर धारदार था और चेहरा भावशून्य, ''वर्माजी, दराज खोलिए।''

''अभी लीजिए सर।'' वर्मा ने बढ़कर दराज खोल दी। अखबार के नीचे से पाँच सौ की गड्डी झाँक रही थी।

''यह रही सर! पचास हजार की गड्डी। फर्जी मुआयना करके हमसे वसूले हैं, फाइल दबाने के लिए।''

कोटेदार सुभाषचंद्र सबको कुहनी से धकेलता आगे बढ़ आया।

वर्माजी की आँखें फटी की फटी रह गईं, पल भर में उन्हें अपनी सारी निष्ठा, ईमानदारी की धज्जियाँ उड़ती दिखाई पड़ीं। सारा दफ्तर वहीं इकट्ठा हो गया था। वर्माजी के जबड़े कसे हुए थे और आँखों से चिंगारियाँ छिटक रही थीं। उनका चेहरा जिबह होनेवाले मेमने जैसा हो गया था। फिर उनका शरीर थरथराने लगा। उनकी चिंगारियाँ बरसाती निगाहें सुभाषचंद्र कोटेदार की आँखों से निष्कंप मिली हुई थीं। दफ्तर में सन्नाटा खिंच गया।

तभी वर्मा का दायाँ हाथ अचानक हवा में लहराया और तड़ाक से सुभाषचंद्र के गाल पर पड़ा। वह लड़खड़ाया, फिर भीड़ पर गिरता हुआ जमीन पर जा टकराया।

''रोकिए सर, इन्हें रोकिए। यह इसे मार डालेंगे। एक तो रिश्वत माँगी, ऊपर से हाथ छोड़ दिया। सर, पुलिस बुलाइए! रिश्वत और इरादतन, कत्ल।'' पं. रामलोटन थर-थर काँप रहे थे।

पुलिस भी जल्दी आ गई। अफसर के चेहरे पर हल्की सी मुसकान थी। पुलिस सुभाषचंद्र और पं. रामलोटन सहित जो भी हाथ लगा, घसीटकर बाहर ले गई।

जैसे एक तूफान आया और झलक दिखाकर लोप हो गया। वर्माजी के चेहरे पर तनाव बरकरार था और आँखों में आँसू झिलमिला रहे थे। अफसर भीड़ के बीच में खड़ा था। वह कुछ पल स्टाफ के चेहरे पढ़ता रहा, फिर बोला, ''शेमफुल! एक्सट्रीमली शेमफुल। मुझे शंका थी कि किसी दिन वर्माजी के साथ ऐसा हो सकता है। इस पूरे गेम में जो लोग शामिल हैं, वे सामने खड़े हैं, हमारे ही ऑफिस के लोग, जिनके नाम पुलिस को अब वह कोटेदार बताएगा। वे भी भुगतेंगे। मैं इस ऑफिस में चल रही साजिशों की बदबू महसूस कर रहा था। अपने ही एक साथी, ईमानदार और निष्ठावान अफसर के साथ ऑफिसवालों ने ही बाहरवालों के साथ मिलकर घिनौनी हरकत की। छिह!''

स्टाफ में कुछ चेहरों पर हवाइयाँ उड़ रही थीं, लेकिन कुछ के चेहरों पर संतोष और आश्वस्ति के भाव थे। अफसर ने पास में सिर झुकाए खड़े वर्माजी के कंधे पर हाथ रखा और हलके से थपथपाकर कहा, ''रिलैक्स।''

मोहन विला,
रोशनगंज, शाहजहाँपुर-२४२००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

गजेंद्र मोक्ष-२१वीं सदी

● ज्ञानेंद्र नाथ बरतरिया

यह कहानी आप सभी ने सुनी होगी कि आँखों पर पट्टी बाँधे, या जन्मजात-कर्मजात अंधों के झुंड ने एक हाथी को टटोल-टटोलकर उसका रूप वर्णन किस प्रकार किया था। किसी के मुताबिक वह रस्सी जैसा था, तो किसी के मुताबिक सूप जैसा। किसी को खंभे जैसा लगा, तो किसी को अजगर जैसा।

दरअसल यह कहानी पुरानी है। इतनी पुरानी कि आप विश्वास ही नहीं कर सकते। इसे ऐसे समझिए कि ये कहानी इतनी पुरानी है कि उस जमाने तक न तो मीडिया मैनेजमेंट का आविष्कार हुआ था, न फाइनेंस एडवाइजर्स हुआ करते थे और न कोई ईवेंट मैनेजमेंट और डेमोक्रेसी नाम की चीज थी। और तो और, मॉल्स वगैरह भी नहीं होते थे। जाहिर तौर पर, ज्यादातर लोग अनपढ़, मूर्ख और पिछड़े वगैरह थे।

खैर, समय के साथ विकास हुआ, और समाज में लोकतंत्र आया। यह पता नहीं चला है कि अंधों और हाथी की मुठभेड़ के समय कौन सा तंत्र था, लेकिन लोकतंत्र, चूँकि बाद में आया था, इसलिए वह तो वहाँ नहीं था।

लोकतंत्र ने आते ही समझ लिया था कि किसी भी और तंत्र की तरह, लोकतंत्र की सफलता के लिए भी जरूरी है कि हाथी हाथी ही रहे और उसका अध्ययन-अवलोकन करनेवाले अंधे ही रहें। लिहाजा आनन-फानन में हाथी-अंधा समागम को राष्ट्रीय संस्कृति का हिस्सा घोषित कर दिया गया और इसका प्रशिक्षण स्कूल स्तर पर ही शुरू कर दिया गया। लोकतंत्र फलता-फूलता रहा, संस्कृति पल्लवित होती रही और साथ-साथ हाथी और अंधे भी खूब फले फूले।

इन लोगों के अनपढ़, मूर्ख और पिछड़े वगैरह होने का पता तब चला, जब मीडिया मैनेजमेंट, फाइनेंस एडवाइजर्स और ईवेंट मैनेजमेंट का आविष्कार हुआ। सबसे पहली गड़बड़ी मीडियावालों ने कर दी। किसी खोजी पत्रकार ने विचार व्यक्त कर दिया कि जब हाथी का अवलोकन अंधों द्वारा ही किया जाना है, तो फिर असली हाथी की जरूरत ही क्या है? लोग-बाग यूँ ही रट-रटाकर कर अपनी-अपनी व्याख्या दे सकते हैं। नाहक करोड़ों रुपए हाथी पर खर्च किए जा रहे हैं। खबर मीडिया में छपी और ऑडिटर्स ने तुरंत छापनेवाले पत्रकारों से बात करके, उनकी रिपोर्ट के आधार पर, करोड़ों का चूना लगने की रिपोर्ट पेश कर दी। रटी-रटाई व्याख्यावाला फॉर्मूला लोकतांत्रिक स्थिरता के लिए भी अत्यंत स्वास्थ्यवर्धक माना गया। खबर उठानेवाला खोजी पत्रकार राज्यसभा की शोभा बढ़ाने लगा और मुख्य उप मुख्य सलाहकार के पद को प्राप्त हुआ। सरकार ने ऑडिटर्स की रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया। विद्वत् संसद् में विपक्ष ने मानव संसाधन विकास से प्रश्न किया गया कि भई, मानव संसाधन के साथ ये हाथियों का मुफ्त विकास क्यों किया जा रहा है? मानव संसाधन विकास को सिलेबस में बदलाव करने का आश्वासन घटनास्थल पर ही देना पड़ गया। मामला फिर भी तूल पकड़ता गया और आखिरकार हाथियों को टटोले जाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। लोकतंत्र खुश हुआ। लगे हाथों विश्व बैंक ने भी हाथी उन्मूलन योजना के लिए दस अरब डॉलर की सहायता घोषित कर दी। कम्युनिस्टों का कहना था कि हालाँकि वो पहले ही हाथी को वर्ग शत्रु घोषित करने की माँग कर चुके थे लेकिन अब से वे हाथी टटोलने का समर्थन किया करेंगे। क्योंकि अब उन्हें पता चल गया है कि इससे हाथियों के गरीब मालिकों का हित जुड़ा है और चुनाँचे सरकार को हाथी टटोलने पर सब्सिडी देनी चाहिए। हाथी को वर्ग शत्रु घोषित करने की माँग को उन्होंने ऐतिहासिक भूल करार दे दिया।

हाय री किस्मत! आर्थिक उदारीकरण शुरू हो गया। इंटरनेट भी आ गया और इसी के साथ अनुशासनहीनता बढ़ने लगी। लोग रटा-रटाया जवाब देने के बजाय यह तक कहने की हिमाकत करने लगे कि चूँकि उन्होंने हाथी देखा नहीं है, इसलिए वे नहीं कह सकते कि ये हाथी कैसा दिखता है। आर्थिक उदारीकरण का इस राजनैतिक अनुशासनहीनता से संबंध भी हाथी से होकर जाता था। दरअसल, आर्थिक उदारीकरण का अपना अनुशासन होता है। जैसे चंद पैसों पर खुश होने वाले को भी आर्थिक उदारीकरण में करोड़ों-करोड़ में भी खालीपन महसूस करना पड़ता है। जैसे आर्थिक उदारीकरण के राज में विपक्ष में बैठने की अनुमति किसी को नहीं थी। जो भी होती थी सिर्फ सत्ता होती थी। लिहाजा विपक्ष के/की नेता का पद खत्म कर दिया गया था और उसके स्थान पर 'विपक्षी मामलों के/की राज्यमंत्री' का नया पद सृजित किया गया था। बाद में, व्यापक लोकतंत्र के हित में, सत्ता को भी समाप्त कर दिया गया और सिर्फ पैसे को सर्वशक्तिमान और संप्रभु करार दे दिया गया। इसी तरह आर्थिक उदारीकरण का एक सख्त नियम यह था कि किसी भी व्यक्ति को, चाहे वह मतदाता या रिश्तेदार ही क्यों न हो, एक खरीदार-बेचदार के अलावा कभी कुछ न समझा जाए। पार्टियों के अंदर का अनुशासन भी इस पद्धति पर आधारित था। हालाँकि कुछ सिरफिरे इतिहासकार इसे पुरानी लगान प्रणाली का ही नया रूप मानते थे।

बहरहाल, इस इंटरनेटबाजी ने अंधत्व की परिभाषा को बुरी तरह प्रभावित किया। अच्छा अंधा (और विद्वान्) वही माना जाता था, जो हाथी की बताई गई परिभाषा को याद रखे और उसे ख़ुद टटोलने की जिद न करे। लेकिन जिद होने लगी और लघुशंकाओं की अभिव्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

> **बहरहाल, इस इंटरनेटबाजी ने अंधत्व की परिभाषा को बुरी तरह प्रभावित किया। अच्छा अंधा (और विद्वान्) वही माना जाता था, जो हाथी की बताई गई परिभाषा को याद रखे और उसे खुद टटोलने की जिद न करे। लेकिन ज़िद होने लगी और लघुशंकाओं की अभिव्यक्ति पी.आई.एल. और आर.टी.आई. के स्तरों तक जा पहुँची। देश की एकता अखंडता को खतरा पैदा होने लगा। धर्मनिरपेक्षता वगैरह की दुहाइयाँ भी नाकाम होने लगीं। विद्वत् सलाहकार परिषद् का आपात सत्र बुलाया गया। दुनिया भर के बड़े-बड़े विद्वान् इसमें शामिल हुए।**

पी.आई.एल. और आर.टी.आई. के स्तरों तक जा पहुँची। देश की एकता अखंडता को खतरा पैदा होने लगा। धर्मनिरपेक्षता वगैरह की दुहाइयाँ भी नाकाम होने लगीं। विद्वत् सलाहकार परिषद् का आपात सत्र बुलाया गया। दुनिया भर के बड़े-बड़े विद्वान् इसमें शामिल हुए।

एक प्रश्न 'हाथी की परिभाषा के परंपरागत कन्फ्यूजन को लेकर अब कन्फ्यूजन होने लगा है। सरकार बताए, वह क्या कर रही है?'

एक सुपरिभाषित उत्तर—'हाथी की परिभाषा को लेकर किसी कन्फ्यूजन की कोई गुंजाइश नहीं है।'

एक परिमार्जित सुपरिभाषित उत्तर—'देश विरोधी ताकतें हाथी की परिभाषा को लेकर कंफ्यूजन पैदा करने की कोशिश कर रही हैं। इस देश का बच्चा-बच्चा हजारों साल से हाथी की परिभाषा अच्छी तरह जानता है।'

दूसरा परिमार्जित सुपरिभाषित उत्तर—'हाथी की परिभाषा को लेकर कोई कन्फ्यूजन है। आप सभी जानते हैं कि खुद विश्व बैंक ने हाथी उन्मूलन के लिए ऋण दिया है और आज ही उसने अगले पल्स हाथी कार्यक्रम के लिए फिर बीस अरब डॉलर का आश्वासन दिया है। अब विश्व बैंक से बड़ा विद्वान तो विपक्ष नहीं है न। इस देश में सच्चा कोई भी नहीं है। सब बकवास कर रहे हैं।'

तीसरा परिमार्जित सुपरिभाषित उत्तर—'हाथी की परिभाषा को लेकर कन्फ्यूजन है, लेकिन वह कन्फ्यूजन हमने पैदा नहीं किया है। सरकार के पास इस बारे में छिपाने के लिए कुछ नहीं है और इस कारण किसी तरह की जाँच की कोई जरूरत नहीं है।'

चौथा पुनर्परिमार्जित सुपरिभाषित उत्तर—'हाथी की परिभाषा के कन्फ्यूजन की जाँच करवाने से गलत संदेश जाएगा और देश में विदेशी निवेश प्रभावित होगा।'

सबकुछ इसी तरह अच्छा भला चल रहा था, जब कभी कंफ्यूजन की दिशा कन्फ्यूज होती थी, किसी-न-किसी ढंग से उसे सही दिशा में ला दिया जाता था। लेकिन कुछ-न-कुछ अपशकुन होते रहते थे। घोर अनुशासनहीनता थी। मौसम का चक्र भी थोड़ा बदलता सा लग रहा था। जैसे कि कभी सेंसेक्स अवांछित ढंग से बैठ जाता था, तो कभी अवांछित ढंग से उठ जाता था। जैसे कभी पुलिसवाले बड़े लोगों का चालान काट देते थे, तो कभी बड़े लोगों को सचमुच सजा हो जाती थी। पूछने पर मैनेजर खीसें निपोरकर कहता था—'क्या बताएँ, पोलिटिकल मजबूरी है।' पैसे का अपमान होने लगा था। लोग पैसा ले लेते थे, फिर भी बलि का बकरा बना देते थे। हर बार वही पोलिटिकल मजबूरी की दुहाई-हुहाई। दरअसल, अचानक एक दिन किसी ने याद दिलाया था—चुनाव आनेवाले हैं।

बहुत हो गया। पैसे ने पोलिटिकल मजबूरी को सीधे निपट लेने की धमकी दी। मामला तूल पकड़ता गया। विश्व बैंक से लेकर विदेशी निवेश तक, सबने चेताया—ये अच्छी बात नहीं है। पर्यावरण वालों ने एक दिन सीधे हवाई फायर कर दिया, कहा—यह टकराव ऐसे ही चलता रहा, तो इससे हाथी भटक जाएँगे। कंट्रोल करना मुश्किल हो जाएगा।

'कंट्रोल करना मुश्किल' यह किसी नई फिल्म के गाने की लाइनें थीं। पता नहीं पर्यावरणवालों ने यह जुमला फिल्म से चुराया था या फिल्म वालों ने पर्यावरणवालों से। बहरहाल, नौबत क्लाइमैक्स के आसपास की थी। टकराव टालना जरूरी था।

शीर्ष-विद्वत्-शीर्ष सलाहकार, शीर्ष परिषद् उर्फ कोर ग्रुप की मीटिंग हुई।

पहला सुझाव आया कि क्यों न चुनावों को ही टरका दिया जाए। कोर ग्रुप ने ऐसा विचार रखने वाले शीर्ष विद्वान् सलाहकार को, उसके वर्ल्ड बैंक सर्टिफाइड होने के बावजूद विपक्ष शासित राज्य का राज्यपाल बना दिया।

बेचारा! बहुत चीखा-चिल्लाया, लेकिन आर्थिक उदारीकरण के नियम बहुत निर्मम होते हैं।

मीटिंग चलती रही। कई महीनों तक रात-दिन। किसी फाइव स्टार में कोई प्रेसिडेंट सुइट महीनों तक खाली नहीं मिला।

मीटिंग के मिनट्स के कुछ खास अंश—

'हाथी की परिभाषा को लेकर सभी प्रचलित कंफ्यूजनों का जनमत संग्रह करवा लिया जाए। फिर इसे ही चुनाव का नाम दे देंगे।'

'सारे कंफ्यूजनों का जनमत संग्रह जाति आधारित करवा दिया जाए। हर जाति अपने अपने ढंग से कंफ्यूज हो, और अपने-अपने कन्फ्यूजन को संविधान में शामिल करवाने के लिए आंदोलन, रेल रोको, पटरी उखाड़ो वगैरह करे। दो-चार बाबे-बूबे भूख हड़ताल करें। भूख हड़तालों को के.एफ.सी. वगैरह से स्पांसर करवा दिया जाए और जमकर कास्ट बेस्ड कंफ्यूजन हो जाए। इससे चुनाव मैनेज करने में आसानी रहेगी।'

इसे ही चुनाव का नाम दे देंगे—'इस राय पर आम सहमति होते ही राज्यपाल बने सलाहकार को फिर सलाहकार बना दिया गया। उसने आते ही कहा—'सत्य की सदैव विजय होती है।'

लेकिन पैसा अड़ गया। यहाँ माल भी गया, जान भी जा रही है और आपको चुनाव की पड़ी है। मैं सारी पोल-पट्टी खोल दूँगा। यहाँ के मीडिया में न सही, जमानत पर छूटते ही विदेश में जाकर बोलूँगा। फिर कर लेना चुनाव मैनेज?

विश्व बैंक ने चेताया, हमने पहले ही कहा था—बात आउट ऑफ कंट्रोल हो जाएगी।

एकमत से राय बनी। सबसे पहले कंट्रोल जरूरी है। पूर्व राज्यपाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने जुगत भिड़ाई। जाँच एजेंसी को निर्देश हुआ कि एक-एक केस में आरोपी के खिलाफ दो-दो हजार गवाह पेश किए जाएँ। न सुनवाई खत्म होगी, न सजा हो सकेगी। पब्लिक से भी सीना ठोंक कर कह सकेंगे, हमने बहुत सख्त काररवाई की है। इस प्वॉइंट पर राजामंदी हो गई।

एक सलाहकार को विपक्ष, पैसा, मीडिया वगैरह के मैनेजमेंट को सख्त करने की जिम्मेदारी सौंपी गई।

एक भारी चूक हो गई। बदकिस्मती से उदारीकरण और हाथी उन्मूलन कार्यक्रम एक साथ शुरू हो गए थे और किसी ने गौर नहीं किया कि यह कितनी बड़ी भूल थी। इसकी वजह से लोग उस फंड को भी वो ही वाला फंड समझ बैठे और किसी ने एक भी हाथी का उन्मूलन नहीं किया। जंगलों में हाथियों की भीड़ बढ़ती गई। उधर जंगलों का उदारीकरण होता गया जंगल के हाथी एक दिन परेशान होकर शहर की तरफ आ गए। और वो ऐन चुनाव के दिन थे। दिन भी नहीं महीने थे, क्योंकि चुनाव पूरे 112 चरणों में होना था।

कोर ग्रुप की इमरजेंसी मीटिंग। इन हाथियों का क्या किया जाए ?

विकट प्रश्न।

एक सुझाव—"मीडिया से कहलवा दिया जाए कि ये हाथी नहीं एड्स फैलाने वाले मच्छर हैं और जो इन्हें देखेगा-छूएगा, उसे एड्स हो जाएगा।"

दूसरा सुझाव—"हाथियों को कोर्ट से स्टे ऑर्डर दिलवा दिया जाए।"

तीसरा सुझाव—"हाथियों के साथ समझौता किया जाए। भई, तुम अपना राज करो, हमें अपना करने दो।"

चौथा सुझाव—"हाथियों को आतंकवादी करार देकर नाटो को बुला लिया जाए।"

इमरजेंसी मीटिंग चलती रही। एक गुप्त फैसले पर पहुँचकर खत्म हुई।

चुनाव परिणाम घोषित किए गए। हाथी के बारे में सिर्फ मुक्त विचार रखने वालों ने गठबंधन बना लिया। उसके पास दो तिहाई बहुमत था। सरकार बनाने का न्योता मिला। हाथी को मोक्ष की प्राप्ति हुई।

३१ ए, पॉकेट ६, मयूर विहार फेज-१,
दिल्ली-११००९१

कविता

दीपोत्सव

● ओंकार प्रसाद भारद्वाज

दीपोत्सव प्रतीक है विजय का
धर्म की अधर्म पर,
सत्य की असत्य पर,
अंधकार से उजाले की ओर
चलने का,
रखने का मान
प्राणपण से उन मर्यादाओं का,
जो सदियों से देती रही हैं
सद्भावना एवं सद्विवेक,
उन वचनों को निभाने का,
जिनसे सभ्यताएँ प्रसूत होती हैं।
हमें याद दिलाता है दीपावली
जब मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम
लौट आए थे आयोध्या में
लंका विजय के बाद।
दीपपर्व याद दिलाता है
उन शक्तियों की
जो सर्व-संपन्न समर्थ
होने के बाद भी, घूमती रहीं
यायावर, समाज स्थापना हेतु
भय विनाश हेतु, इस कौने से
उस कौने तक।

दीपावली हमारे लिए
नव उत्सव लाया है,
जिसके प्रकाश में हम
सार्वभौमिक समाज में
सद्भाव एकसूत्र स्थापित कर सकें
पूर्ण सामर्थ्य से फैलाएँ
सत्य का प्रकाश जन-जन में।
दीपावली को भारतीय मूल्यों की
स्थापना का दिन बनाएँ
दूर-दराज विदेशी सभ्यताओं के
पुजारियों के हृदय में
भारतीयता का दीप जलाएँ,
जलाएँ प्रेम-पगी अगरबत्तियाँ
जिससे फैले वसुधैव कुटुम्बकम् की
भीनी-भीनी सुगंध।

ई ३/६२, शिवराम पार्क
नांगलोई, नई दिल्ली-११००४१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'य्' और 'व्' के अनेक रूप

● रमेश चंद्र महरोत्रा

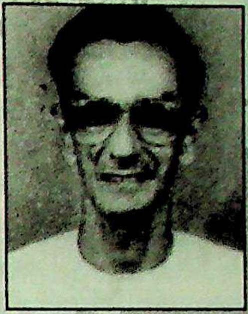

जन्म : १७ अगस्त, १९३४ को मुरादाबाद (उ.प्र.) में।

शिक्षा : एम.ए., एम.लिट्., पी-एच.डी.।

कृतित्व : हिंदी ध्वनिकी और ध्वनिकी, भाषेषणा, हिंदी में अशुद्धियाँ, हिंदी का नवीनतम बीज-व्याकरण, मानक हिंदी का व्यवहारपरक व्याकरण, मानक हिंदी के शुद्ध प्रयोग (चार खंड), भाषिकी के दस लेख, छत्तीसगढ़ी : परिचय और प्रतिमान, छत्तीसगढ़ी मुहावरे और लोकोक्तियाँ, छत्तीसगढ़ी-शब्दकोश, छत्तीसगढ़ी-मुहावरा कोश, छत्तीसगढ़ी-लेखन का मानकीकरण, तमिल भाषा का इतिहास *(अनुवाद)*, आड़ी-टेढ़ी बात, लवशाला, अच्छा बनने की चाह (दो खंड), सुख की राहें, सफलता के रहस्य इत्यादि कुल ४८ पुस्तकें। कुल १५४ पत्र-पत्रिकाओं-संकलनों में लगभग १९०० लेख प्रकाशित।

सम्मान : शब्द-सम्राट्, लिंग्विस्टिक सोसाइटी ऑफ इंडिया : सील ऑफ ऑनर, विद्यासागर (मानद डी.लिट्.), छत्तीसगढ़ विभूति-अलंकरण सहित कुल १७ सम्मान प्राप्त।

निम्नलिखित स्थितियों में 'य' अर्धस्वरात्मक या व्यंजनात्मक है। लिखा हुआ 'य' उच्चारण में कहीं 'य' और कहीं 'य्' रहता है, जैसे 'यहाँ' में यह 'य' है और 'अंत्य' में यह 'य्' है। इसके प्रयोग की विविध स्थितियाँ इस प्रकार हैं—

प्रारंभ में स्वर के पूर्व, उदाहरणार्थ 'याद' में;
आरंभिक व्यंजन के बाद, उदाहरणार्थ 'त्याग' में;
द्वित्व व्यंजन के बाद, उदाहरणार्थ 'कृत्य' में;
दो भिन्न व्यंजनों के बाद, उदाहरणार्थ 'अंत्य' में;
दो स्वरों के बीच में, उदाहरणार्थ 'आया' में।

(दो स्वरों के बीच के लिखित 'य' के उच्चारण से संबंधित एक विशेष परिवर्तन यहाँ उल्लेखनीय है। 'कायर' का 'य' यों तो दो स्वरों 'आ' और 'अ' के बीच में स्थित है, लेकिन इस 'य' का 'अ' उच्चारण से गिर चला है, जिससे 'य्' अनाक्षरिक स्वर-रूप में परिणत होकर पूर्ववर्ती 'आ' के साथ संध्यक्षर का अंश बन जाता है। फलत: 'कायर' का उच्चारण 'काय्र्' हो जाता है। 'अ' की मात्रा का उच्चारण वैसे भी कई स्थितियों में नहीं होता, जैसे 'कमनीय' में 'म' और 'य' के 'अ' का।)

अवरोही चलस्वर या संध्यक्षर का अग्र अनाक्षरिक अंश आक्षरिक स्वर के बाद प्रयुक्त होता है और आक्षरिक स्वर की जिह्वा-ऊँचाई के अनुसार जिह्वा-ऊँचाई ग्रहण करता है। उदाहरण के लिए, 'कमनीय' और 'राजसूय' में य्-स्वनिम के स्वनिक रूप 'ई' और 'ऊ' की जिह्वा-ऊँचाईवाले हैं, 'तिय' में य्-स्वनिम का स्वनिक रूप 'इ' की जिह्वा-ऊँचाईवाला है, 'पेय' और 'तोय' में य्-स्वनिम के स्वनिक रूप 'ए' और 'ओ' की जिह्वा-ऊँचाईवाले हैं एवं 'गाय' में य्-स्वनिम रूप मूल स्वर 'ऐ' की जिह्वा-ऊँचाईवाला है।

व्-स्वनिम का दंतोष्ठ्य संघर्षहीन प्रवाही व्यंजन सदस्य निम्नलिखित स्थितियों में उदाहरण सहित द्रष्टव्य है (यथास्थान 'अ' की लिखित मात्रा के उच्चारण-लोप के साथ)—

प्रारंभ में स्वर के पूर्व, उदाहरणार्थ 'वहाँ' में;
प्रारंभ में व्यंजन के पूर्व, उदाहरणार्थ 'व्यास' में;
अंत में स्वर के बाद, उदाहरणार्थ 'नव' में;
अंत में व्यंजन के बाद, उदाहरणार्थ 'सर्व' में;
दो स्वरों के बीच में, उदाहरणार्थ 'आवास' में;
मध्य में स्वर-व्यंजन के बीच में, उदाहरणार्थ 'अवकाश' में;
मध्य में व्यंजन-स्वर के बीच में, उदाहरणार्थ 'अथवा' में।

व्-स्वनिम का द्वयोष्ठ्य अर्धस्वरात्मक व्यंजन सदस्य आगामी उदाहरणों में देखिए—

आरंभिक व्यंजन के बाद, उदाहरणार्थ 'स्वाद' में;
द्वित्व व्यंजन और स्वर के बीच में, उदाहरणार्थ 'सात्त्विक' में;
दो व्यंजनों और व्यंजन के बीच में, उदाहरणार्थ 'सांत्वना' में;
द्वित्व व्यंजन के बाद अंत में, उदाहरणार्थ 'द्वित्व' में।

अवरोही चलस्वर या संध्यक्षर के पश्च गोलित अर्धविवृत अनाक्षरिक अंश का स्वनिमिक रूप व् देखिए—

व्यंजन के बाद शब्दांत के 'आव' में, उदाहरणार्थ 'घाव' में;
व्यंजन के बाद व्यंजन के पूर्व 'आव' में, उदाहरणार्थ 'फावड़ा' में।

हिंदी में य् और व् के कितने भी भिन्न-भिन्न ध्वनिकीय (उच्चारण गत) रूप विद्यमान हैं (परिपूरक वितरण और मुक्त भेद से बँधे हुए), एक मातृभाषी इन रूपों को ध्वनिमीय (मानसिक) दृष्टि से मिला-मिलाकर अर्थभेदक (व्यतिरेकी) आधार पर केवल दो इकाइयाँ मानता है।

क्रांति नगर,
बिलासपुर-४९५००४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुंदेली लोकगीतों में काव्य-तत्त्व

● गायत्री वाजपेयी

काव्य तत्त्व से अभिप्राय है वे अवयव, जिनसे काव्य का स्वरूप संघटित होता है। काव्य के दो पक्ष स्वीकार किए गए हैं—एक अंतरंग और दूसरा बहिरंग। अंतरंग पक्ष के अंतर्गत समस्त भाव एवं मनोविकार आदि आते हैं तथा बहिरंग पक्ष में रीति, गुण, अलंकार एवं छंद विधान आदि आते हैं। इन दोनों के ही मणिकांचन संयोग से काव्य का विधान होता है। यद्यपि लोकगीतों में रस, अलंकार, छंद विधान, भाव, तुक आदि काव्य के दशांगों की विद्यमानता अनिवार्य नहीं है; परंतु इसका यह तात्पर्य भी नहीं है कि लोकगीतों में काव्य के ये आवश्यक तत्त्व होते ही नहीं हैं, बल्कि इस दृष्टिकोण से लोकगीतों का भंडार अधिक समृद्ध है, तथापि ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि लोकगीत लोकमानस के उन्मुक्त हृदय और अबाधित कंठ से नि:सृत स्वाभाविक, अकृत्रिम एवं अविरल भाव रसधारा है, जिसके प्रवाह में लोक रचनाकार न तो एकांत भाव में लीन होता है और न ही किसी विषय पर अपने को केंद्रित करता है, वरन् वह तो अवसर प्राप्त होते ही स्वाभाविक गति से गीतों का सृजन करता है। यही कारण है कि लोकगीतों में जहाँ कहीं भी रस, अलंकारादि का विधान प्राप्त होता है, वह सहज व स्वाभाविक ही होता है। उसमें किसी प्रकार की कृत्रिमता व बनावट का स्थान नहीं होता।

बुंदेलखंड अंचल में गाए जाने वाले मांगलिक गीतों में रस, अलंकार व लय आदि का सुंदर सामंजस्य हुआ है। एक गीत दृष्टव्य है, जिसमें अनुप्रास एवं पुनरुक्ति अलंकार की सुंदर योजना हुई है—

‘अँगना जियरिया लहर लहर होवे,
कौना के अँगना जियरिया लहर लहर होवे।
महर महर आवे बास तो नींद नई आइयो,
कौना की नार गरभ से मधुरियन पग धरै रे।
ललन कहै होरल होरल कहै।’

श्लेषालंकार का एक सुंदर उदाहरण इस बधाई गीत में दृष्टव्य है—

‘आज दिन सोने के महाराज,
सोने के सब दिन सोने की रात।
सोने के दियल जले सब रात।’

यहाँ सोने शब्द में दो अर्थ निहित हैं—शुभ और स्वर्ण। लोकगीतों में शब्दालंकारों के साथ-साथ अर्थालंकारों का भी सुंदर प्रयोग हुआ है। उपमा का मनोरम सौंदर्य लोकगीतों में स्थान-स्थान पर बिखरा हुआ है। लोकगीतों में प्रयुक्त उपमाएँ कवि परंपरा में प्रचलित उपमाओं से सर्वथा

जन्म : ०७ जुलाई, १९६३ को छतरपुर (म.प्र.) में।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.।
लेखन : लोक साहित्य एवं लोक परंपराओं पर अनेक शोधात्मक आलेख, निबंध आदि देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशित। आकाशवाणी, छतरपुर से वार्त्ताएँ एवं रेडियो रूपक आदि का प्रसारण।
संप्रति : सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, शासस्वशासी महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)।

भिन्न, परंतु अपने आप में अनुपम व सर्वथा मौलिक हैं। नि:संदेह लोक गीतकार की चिर नवीन उपमाएँ उसकी अनूठी प्रतिभा से प्रसूत हैं, जो अत्यंत ही आकर्षक हैं—

‘मोरी बेला चमेली सी नार।
मोरी बेला चमेली सी नार।
जच्चा को परदे में राखियो।’

यहाँ नव प्रसूता की उपमा बेला-चमेली से की जा रही है। उपमा एवं रूपक अलंकार का एक सुंदर उदाहरण दर्शनीय है—

‘हमें तुम नीके लाला निसदिन दरसन दैयो।
श्याम और अति जोत मनोहर पलक ओट न भइयो। हमें...
चंदबदन सुख सदन दिखाकर तन मन तपन बुझैयो। हमें...
जो मन मीन दरस रस भोगी हरदम पान करैयो। हमें...’

रूपक अलंकार की सुंदर अवतारणा लोकगीत की इन पंक्तियों में हुई है—

‘घर होती आदर कर लेती घर होती।
शांति सिंघासन क्रांति सिंघासन।
मन मंदिर में बिठा लेती घर होती।
नैना धार नीर की छारी।
प्रेम के जल से भर लेती घर होती।
फुलका सत्य धरम के चावल।
दया की दार परस, देती घर होती।
धरम को दूध सुयस को बूरो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करम के बरा बना लेती घर होती।
मखन सुमाटी कुमारी की कौदी।
ज्ञान की अग्नि तपा देती, घर होती।
निर्मल घर परसती यही विध।
सुकृति को पान खबा देती घर होती।'

उदाहरण अलंकार का भी सुंदर प्रयोग लोकगीतों में प्राप्त होता है। एक बुंदेली लोकगीत में उदाहरण अलंकार का चित्र दृष्टव्य है—

'सदा न तुरैया अरे फूलै नै सदा रे सावन होय।
सदा न राजा अरे रन जूझे सदा न जीवे कोय।
भाई कलेवा कर दये पिता भरा दई रहवाट
वीरन गेवड़े लो पहुँचा गए लो स्वामी को सौंपे सवार।'

संदेह अलंकार की सुंदर योजना इस देवीगीत में हुई है—

'माई के दुआरे इक बाँझ पुकारे।
अँसुअन भीजे रंग सारी हो माय।
हँस-हँस पूछे देवी जालपा
कैसी तिरिया बिसूरे हो माय।
कै तोरी सास ननद झकझारी
कै तोरे मायके दूर हो माय।'

निदर्शना अलंकार का अत्यंत सुंदर निरूपण इन पंक्तियों में हुआ है—

'आग लगी दरयाव में धुआँ न परगट होय।
के दिल जाने आपनो के जा पर बीती होय।
काऊ की लगन कोऊ का जाने।'

लोकगीतों में सर्वत्र रस की सरिता हिलोरें लेती हुई दृष्टिगत होती है। यदि यह कहा जाए कि रस ही लोकगीतों की आत्मा है तो अत्युक्ति न होगी। बुंदेली लोकगीतों में विविध रसों का सुंदर परिपाक हुआ है। समस्त रसों में शृंगार एवं करुण रस की धारा प्रधान है। प्रेम एवं वियोग के कोमल भावों से आप्लावित शृंगार रस लोकगीतों की भावनाओं से पूरित नायिकाओं के जीवन के विविध सत्यों का उद्घाटन करता हुआ दृष्टिगत होता है तथा करुणा का अथाह स्रोत उन सत्यों को सजीवता का रस देकर पोषित करता हुआ दिखाई देता है। रस राज शृंगार के दोनों पक्ष संयोग एवं वियोग की सुंदर अभिव्यंजना बुंदेली लोकगीतों में हुई है। नायक-नायिका का परस्पर मिलन संयोग की सार्थकता को परिपूर्ण करता है। इस लोकगीत में संयोग शृंगार का माधुर्य, उमंग और उल्लास रंजित चित्र दृष्टव्य है। यथा—

'रसिया होली में मोसे खेलो न छल को खेल।
आज अचानक घूँघट खोलत बोलत रस भरे बोल।
अबकी बेर पकर जो पाऊँ करिहों मन की मैल।
राम प्रिया पिया कनक भवन में तुम्हें दिखाऊँ खेल।'

विरह लोकगीतों का प्राणतत्त्व है। अधिकांश गीतों में वियोग विदग्धा नायिकाओं की पीड़ाकुल अंतर्भावनाओं का मार्मिक चित्रांकन उपलब्ध होता

लोकगीतों में सर्वत्र रस की सरिता हिलोरें लेती हुई दृष्टिगत होती है। यदि यह कहा जाए कि रस ही लोकगीतों की आत्मा है तो अत्युक्ति न होगी। बुंदेली लोकगीतों में विविध रसों का सुंदर परिपाक हुआ है। समस्त रसों में शृंगार एवं करुण रस की धारा प्रधान है। प्रेम एवं वियोग के कोमल भावों से आप्लावित शृंगार रस लोकगीतों की भावनाओं से पूरित नायिकाओं के जीवन के विविध सत्यों का उद्घाटन करता हुआ दृष्टिगत होता है तथा करुणा का अथाह स्रोत उन सत्यों को सजीवता का रस देकर पोषित करता हुआ दिखाई देता है। रस राज शृंगार के दोनों पक्ष संयोग एवं वियोग की सुंदर अभिव्यंजना बुंदेली लोकगीतों में हुई है। नायक-नायिका का परस्पर मिलन संयोग की सार्थकता को परिपूर्ण करता है।

है। बुंदेली लोकगीतों में ऐसे गीत बहुतायत में मिलते हैं, जिन्हें सुनकर हृदय सागर हिलोरें लेने लगता है। विप्रलंभ शृंगार की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं, जिसमें वियोगिनी नायिका के विरह विदग्ध हृदय को कोयल की कूक अत्यंत व्यक्ति कर रही है। गीत में आलंबन प्रवासी नायक और आश्रय विरहिणी नायिका है। बादल, बिजली, वर्षा, कोयल की कूक आदि उद्दीपन विभाव है। नायिका के हृदय की लालसा व मन मारकर बैठे रहना आदि अनुभाव हैं और विषाद, उत्कंठ आदि संचारी भाव हैं।

'कूक कूक मोरे जिया खों काय जराउत मोर।
पिया बिछोह सो मोरे जिया में बैसई उठत हिलौर। कूक····
पुरवैया की बैर बेरई, छाई घटा घनघोर।
भयो सबई विद उलटौ विधाता की खों दइये खोरि। कूक·····'

लोकगीतों में हास्य का विशेष स्थान है। जन्म, विवाह एवं खेल आदि हर्षपूर्ण अवसरों पर अनेक प्रकार के मनोरंजक कार्यक्रम आयोजित होते हैं, जिसमें हास्य उल्लास के गीत गाए जाते हैं। बुंदेली लोकगीतों में हास्य रस प्रधान लोकगीतों का प्राचुर्य है। एक गीत दृष्टव्य है, जिसमें हास्य रस की उद्भुति हुई है—

'मन कौ एकऊ में आओ,
मन को एकऊ में आओ।
बड़ी-बड़ी मूछों के आए,
बड़ी-बड़ी नाकों के आए, मन को··
बड़ी-बड़ी आँखों के आए,
बड़े-बड़े कानों के आए। मन को··

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े-बड़े हाथों के आए,
बड़े-बड़े दाँतों के आए। मन को...'

लोकगीतों में करुण रस की मार्मिक व्यंजना प्राप्त होती है। सामान्य स्त्री-पुरुष अपने दुःख की अतल गहराइयों को स्वर और लय में बाँधकर हृदय को हलका कर लेते हैं। जिस पीड़ा के भार को वे ढो नहीं पाते, वही पीड़ा स्वरों में व्यक्त हो उनके जीवन का सबल बनती है। बुंदेली लोकगीतों में करुण रस की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है—

'मन धीर धरत नइया गुइयां बिटिया भई पराई।
सात घाट की मड़िया पूजी जब हमने जा पाई।
हाड़-मांस में नौ महिना लो राखो इन्हें छिपाई।
सरदी जूड़ा कबऊँ भयो जब रो-रो नदी बहाई।
वे बेटी प्राणों से प्यारी हो गई आज पराई।
ये बाबुल महलों में रोवे सई नई जात जुदाई।
जा बेटा हम याद रखेंगे तेरी सब चतुराई।
बेटा ये तुम भूल न जइयो अपनी बूढ़ी माई।'

लोकगीतों में वीर रस की अत्यधिक सुंदर व्यंजना प्राप्त होती है। इस बुंदेली लोकगीत में वीर रस का सुंदर परिपाक दृष्टव्य है—

'धन्य-धन्य झाँसी की धरती,
धन्य-धन्य वह पानी।
धन्य दुर्ग जिसमें दुर्गासम,
प्रगटी लक्ष्मी रानी।
जिसने भारत के कण-कण में,
जीवन-ज्योति जगाई।
करने को स्वतंत्र भारत,
रण भेरी प्रथम बजाई।'

शम स्थायीभाव का आस्वादन शांत रस है। इस रस का उद्रेक उत्तम प्रकृति के व्यक्तियों में होता है। लोकगीतों में शांत रस की प्रबल धारा प्रवाहित होती है। जीवन और जगत के कठिन संतापों से संत्रस्त होकर सामान्य जन का मन असीम सत्ता की ओर आकृष्ट हो उठता है। संसार की असारता और क्षण-भंगुरता से निर्लिप्त होकर वह विराग के सोपानों पर चढ़ता हुआ ऊर्ध्वमुखी होता जाता है। मन की यह विरागमयी स्थिति लोकगीतों में स्थान-स्थान पर मुखरित होती है—

'पाकर मानुस के तन को भज ले रघुराई।
जासे गति बनजाए तेरी कोई काम न आई।
जे सब स्वारथ के अपने दारा सुत भाई।
अंत समय सब पड़ा रहै कोई संग न जाई।
शेष सुरेश महेश सदा हरि को यश गाई।
वेदहु जासु के भेद को तौ कबहूं नहि पाई।
जानै जबै जिह नाम लियौतिह कीन सहाई।
लोकन लोकन छाय रही जिनकी प्रभुताई।
नीति कहौ सदा ग्रंथन की सुन चित्त लगाई।
सार मुरारि को ध्यान जो है झूँठी दुनियाई।
जो अजहुँ हरि नाम जपै तेरी होय भलाई।
वंश गुपाल गुपाल प्रभु सबको सुखदाई।'

लोकगीतों में वात्सल्य रस की सुष्ठु योजना हुई है। जन्म संस्कार संबंधी गीतों में वात्सल्य रस की अनुपम घटा बिखरी हुई है। एक सोहर गीत दृष्टव्य है, जिसमें वात्सल्य रस की सरस धारा प्रवाहित हो रही है—

झुलायो माई श्याम परे पलना
झुलायो माई श्याम परे पलना
जो मोरे ललना को पलना झुलावे
तीये गड़ा देऊँ कंकना।
काऊ गुजरिया की नजर लगी है
सो रोवत है ललना
राई नोन उतारे जसोदा
खुसी भये लला। झुलायो माई...'

लोकगीतों में ओज, प्रसाद एवं माधुर्य गुण का विधान भी सर्वत्र दिखाई पड़ता है। प्रसाद गुणयुक्त एक गीत दृष्टव्य है—

'गाड़ी बारे मसक दे बैल अबे पुरवइया के बदरा आए।
कौन बदरिया उनैई रसिया कौना बरस गए मेघ। अबे...
अगम के बदरा उनए पच्छम बरस गए मेघ। अबे...
घुंघटा बदरिया उनई रसिया गलियन बरस गए मेघ। अबे...'

लोकगीतों में भाव व्यंजना एवं छंदों के सामंजस्य का प्रयास भी दिखाई देता है। यद्यपि लोकगीतों में छंद शास्त्र के नियमों का कड़ाई से पालन नहीं होता है। किसी पंक्ति में कम तो किसी पंक्ति में मात्राओं एवं वर्णों की संख्या ज्यादा हो जाती है। तथ्यों के भाव प्रकाशन में लोककवि लघु एवं दीर्घ मात्राओं का भी ध्यान नहीं रखता। परंतु लोकगीतों के छंद मुख्य रूप से ताल एवं लय में आबद्ध रहते हैं। ग्राम्य महिलाएँ स्वरों के आरोह-अवरोह द्वारा विशेष प्रकार की लय का निर्माण करके लोकगीतों को इस ढंग से गाती है कि वहाँ कहीं भी गति भंग या गति अवरोध दिखाई नहीं देता। लोकगीतों की रचना अधिकतर वर्णवत चंद्र प्रभाकर, सरसी, चुलि, पाला, गिरधारी आदि छंदों में होती है। एक विवाह गीत दृष्टव्य है, जिसकी रचना वर्णवत चंद्र प्रभाकर छंद में हुई है—

'कच्ची ईंट बाबुल देहरी न धरियो
बिटिया न दइयो परदेश मोरे लाल
द्वारे की इटिया खिसक जैहे बाबुल
बिटिया बिसूरे परदेश मोरे लाल।'

इस प्रकार छंद विधान भाव योजना एवं अन्य काव्य तत्त्वों को दृष्टि में रखते हुए यह नहीं कहा जा सकता कि लोक काव्य या लोकगीत इस दृष्टि से अपेक्षाकृत कम समृद्धशाली हैं। हाँ, यह बात अवश्य है कि लोकगीतों में प्रबलता भाव और अनुभूतियों की ही होती है। काव्य शास्त्रीय नियमों की नहीं।

श्रीकृपानिकेत, हायर सेकेंडरी स्कूल
नं. १ के पीछे
आदर्श नगर,
छतरपुर-४७१००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग पहेली (७३)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ अक्तूबर, २०११ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते दिसंबर २०११ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली–२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (७१) का हल

१ स्व	र्ग	२ वा	३ स	■	४ अ	५ सं	ग	६ त
यं	■	७ प	त्र	८ का	रि	ता	■	क
९ व	१० य	स	■	ज	■	११ न	१२ क	ली
१३ र	म	■	१४ ज	ल	१५ सा	■	१६ सा	फ
■	१७ का	ली	न	■	१८ बु	रा	ई	■
१९ जी	त	■	२० क	२१ पो	त	■	२२ खा	२३ स
२४ भ	र	२५ ता	■	ख	■	२६ ज	ना	जा
र	■	२७ क	द	र	२८ दा	न	■	ती
२९ ना	मां	त	र	■	३० म	न	नी	य

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **सुश्री अनुपमा वर्मा**
द्वारा—श्री छाजूराम नोइड़िया
मु.+पो. : करोता, तह. नारनौल
जिला-महेंद्रगढ़-१२३००१

२. **सुश्री कमला सेन**
सी-१०२, शिवकृष्ण वंदन
अपार्टमेंट
फ्रेंडस कॉलोनी के पास
कोटला रोड,
नागपुर-४४००१३

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई!

वर्ग-पहेली ७१ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री माणक तुलसीराम गौड़ (रायगढ़), सुधा जौहरी, उमा शर्मा, (जयपुर), मोहन उपाध्याय (अजमेर), शिवानंद सिंह 'सहयात्री' (मेरठ), फकीरचंद दुल (कैथल), दिनकर सहल, कुसुम गोयनका, निर्मला गुजराती (दिल्ली), विमला शर्मा (हमीरपुर), जयश्री पाठक, ऋतंवरा पाठक (झाबुआ), अर्चना श्रीवास्तव (खरगौन), प्रेमकुमार साहू (छिंदवाड़ा), देवकीनंदन कांडपाल (अल्मोड़ा), पी. शंकरन नंबूनिरि (पालक्काड)।

बाएँ से दाएँ—

१. कामयाबी (४)
४. असावधानी (५)
७. असावधानी (५)
९. धूर्तता (३)
११. मुलायम (३)
१३. मेढक की बोली (२)
१४. शरण (३)
१६. बुनना (२)
१७. रोटी सेंकने की भट्ठी (३)
१८. तकलीफ (३)
१९. चिट्ठी (२)
२०. तमन्ना (३)
२२. सुध-बुध (२)
२४. निराश (३)
२६. मोटे कपड़े की दीवार (३)
२७. हिमायत (५)
३०. कोमलता (४)
३१. छोटा न्यायाधीश (४)

ऊपर से नीचे—

१. पास (४)
२. माथा (३)
३. गरमी (२)
४. वायु (२)
५. बारीक (३)
६. क्रीड़ायुक्त (४)
८. कृति (३)
१०. गुलामी (५)
१२. चल पड़ना (३, २)
१४. परीक्षापत्र (३)
१५. जीवन (३)
१९. वाकफियत (४)
२१. शपथ (३)
२३. एक प्रसिद्ध खेल (४)
२५. सौ का समूह (३)
२६. नजदीक (३)
२८. तल्लीन (२)
२९. सेवक (२)

वर्ग पहेली (७३)

१		२	३	■	४	५		६
	■	७		८			■	
९	१०		■		■	११	१२	
१३		■	१४		१५	■	१६	
■	१७			■	१८			■
१९		■	२०	२१		■	२२	२३
२४		२५	■		■	२६		
	■	२७	२८		२९		■	
३०				■	३१			

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

....

....

वर्ग पहेली (७२) का हल अगले अंक में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक पठनीय नहीं बल्कि संग्रहणीय भी है। इतनी उत्कृष्ट सामग्री एक साथ उपलब्ध होना बहुत बड़ी बात है। मगर पत्रिका आसानी से किताबों की दुकानों पर उपलब्ध नहीं होती, यह हमारे क्षेत्र के साहित्यकारों की शिकायत है। 'पाती अन्ना के नाम' व्यंग्य बहुत अच्छा लगा। मैं लेखक आलोकेश्वर चबडाल को बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ।

—विनोद कुमार तिवारी, फारबिसगंज (बिहार)

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक मिला। संपादकीय ने जन आक्रोश को शब्द दिए हैं। रहबान अली राकेश की कहानी 'कठपुतली' में जहन के खौफ के कारण टोने-टोटकों में उलझती मानसिकता का सशक्त चित्रण है। रतिलाल शाहीन का विश्वंभर अरुणजी पर लेख सहज प्रवाह व आत्मीयता से भरपूर है। महेंद्र राजा जैन का लोकगीत छप्पन भोगों का आस्वाद जगाने तथा मुँह में पानी भर आने का पर्याय लगता है। कविताएँ सभी अच्छी लगीं, पर संदीप नैयरजी की कविता बचपन की तरह मधुर, निश्छल, स्वप्नों को थामे, बादल पर तैरती-सी बहुत ही सुंदर रचना है। उन्हें हार्दिक बधाई व शुभकामनाएँ। पत्रिका निरंतर प्रगति करती रहे।

—माला श्रीवास्तव, श्रीकालाहस्ति (आंध्र प्रदेश)

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक बहुत ही स्पृहणीय लगा। संपादकीय बड़ा मर्मांतक है। प्रतिस्मृति में 'दुखिया' तथा आलेख में स्वामी विवेकानंद को बाल्मीकि प्रसाद सिंह के द्वारा याद किया जाना अच्छा लगा। कहानी में अरुण अभिषेक, महेंद्र प्रजापति हमें बहुत भाए। रूपा सिंह को कविताओं के बहाने याद किया जाना प्रीतिकर लगा। इनकी कविताएँ मर्मस्पर्शी हैं। गोपाल चतुर्वेदी पूर्ववत् छाए रहे। गोविंद सेन, विश्वंभर अरुण, हर्षनंदिनी भाटिया की रचनाएँ स्तरीय लगीं। लोकगीतों की परंपरा में महेंद्र राजा जैन ने गुणकारी अर्थ दिए हैं। संदीप नैयर, रवींद्र स्वप्निल प्रजापति की कविताएँ प्यारी लगीं। पत्रिका-परिवार शुभकामनाएँ स्वीकार करे।

—जनार्दन मिश्र, आरा (बिहार)

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक मिला। सभी प्रकाशित व्यंग्य एवं आलेख बहुत श्रेष्ठ हैं। संपादकीय में सटीक विचार व्यक्त हुए हैं कि व्यवस्था बदलेगी तो सबकुछ सुधर जाएगा, लेकिन व्यवस्था में परिवर्तन होना चाहिए। संपूर्ण पत्रिका परिवार को हार्दिक बधाई।

—अजय चतुर्वेदी 'कक्का', सोनभद्र (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक पढ़कर सुखद अनुभूति हुई। संपादकीय जनभावनाओं की उदात्त संचेतना से आपूरित है। रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' की कविताओं में क्रांतिदर्शिता का समावेश है। अवधेश नारायण मिश्र का आलेख चिंतापरक है। कुल मिलाकर अंक अच्छा है।

—डॉ. राजेश कुमार,
अलीगढ़ (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक पठनीय तथा संचनीय है। विदुषी महादेवी का आलेख बेहद पसंद आया। हिंदी हमारी अभिव्यक्ति है, 'भारतीय' शब्द की पहचान है और हमारे आत्मसम्मान का दस्तावेज है। लेखक प्रशांत कुमार सिन्हा की कहानी 'आप लौट आओ अंकल' दिल को छू गई। सकारात्मक सोच से उत्प्रेरित कवि अमरनाथ 'अमर' की कविता 'बरसात' भाव-विभोर कर गई। यह अंक अन्ना के बारे में प्रत्यक्ष न सही, पर परोक्ष अन्नागिरी दिखाने में समर्थ रहा।

—रजनी सिंह, डिबाई (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का विशेषांक के रूप में माह अगस्त का अंक प्राप्त हुआ। इसमें प्रकाशित सामग्री ज्ञानवर्धक के साथ-साथ पढ़ने योग्य है। आशा है, पत्रिका आगे भी प्राप्त होती रहेगी।

—प्रभात झा, भोपाल (म.प्र.)

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक मिला। इसके सभी अंक पठनीय, रोचक और ज्ञानवर्धक होते हैं। पत्रिका की अपनी एक विशेषता यह भी है कि देशव्यापी 'साहित्यिक गतिविधियों' के अंतर्गत हिंदी-विषयक कार्यक्रमों की लाभप्रद जानकारी उपलब्ध कराई जाती है। श्रीनारायण चतुर्वेदी, रामदरश मिश्र, अशोक चक्रधर, नरेंद्र कोहली, प्रेम जनमेजय, कृश्न चंदर, बजेंद्र त्रिपाठी आदि की रचनाएँ हृदय को छूती हैं। सादिकजी ने शिक्षाविद् होते हुए आज के शिक्षक पर जो छींटाकशी की है, वह हकीकत है। 'हिंदी व्यंग्य के पदचिह्न' लेख महत्त्वपूर्ण जानकारी देने वाला है। संपादकीय विविधायामी है, जिसमें रोचक विषयों पर अच्छी चर्चा है।

—डॉ. निजामुद्दीन, श्रीनगर (कश्मीर)

साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक 'साहित्य अमृत' का अगस्त माह का व्यंग्य विशेषांक प्राप्त हुआ। संपादकीय 'भ्रष्टाचार और महँगाई की सुरसा' ने लोगों में अलख जगाने के साथ-ही-साथ वर्तमान परिवेश का जो काल्पनिक चित्र उकेरा है, वह पठनीय है। पत्रिका साहित्य-उपवन में अनूठे ढंग से अपनी उपस्थिति दर्ज कराती है।

—अमित श्रीवास्तव, वाराणसी (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक प्राप्त हुआ। श्री शिवकुमार गोयल की प्रस्तुति 'बिना पिए ही नशा' पढ़ी। बहुत बड़ी बात को अर्थगर्भित शब्दों में बहुत ही खूबी से समझाया गया है। इस सिलसिले में मैं चार पंक्तियाँ पेश करना चाहता हूँ :

हिंदी का प्रसारक 'साहित्य अमृत' जब आया दफ्तर
प्रफुल्लित हुआ मन पन्नों को देख और पढ़कर
हर बार मिलता है नया कुछ पढ़ना व सीखना
अच्छा लगता है बहुत, वर्ग पहेली सुलझाना।

हम आशा करते हैं कि इसी प्रकार हर बार कुछ नया पढ़ने को मिलता रहेगा। पत्रिका परिवार को बधाई और शुभकामनाएँ।

—आरती सुभेदार, बेलगाम

'साहित्य अमृत' के अगस्त विशेषांक का संपादकीय प्रमुखता से तीन विषयों पर केंद्रित रहा : स्वाधीनता दिवस, भ्रष्टाचार, महँगाई व मुंबई बम विस्फोट—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीनों जनमानस को उद्वेलित करने वाले हैं। सभी व्यंग्य दिल को गुदगुदाते प्रतीत होते हैं। साथ में महर्षि अरविंद घोष के विषय में क्रांति से अध्यात्म तक का आशारानी व्होरा का लेख जानकारी- परक एवं तथ्यपरक रहा। कविताएँ विशेषकर रामदरश मिश्र, गोपाल सिंह नेपाली, साथ में चातक, हसन, प्रेमी और सादिक की सारी कविताएँ तुकांत हैं। लय-तान में पढ़ी जा सकती हैं। कुल मिलाकर पूरा अंक उत्कृष्ट बन पड़ा है।

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक मिला। संपादकीय में अन्ना की आँधी व हिंदी का मुद्दा इन दो शीर्षक पर चर्चा की गई है। राष्ट्रभाषा पर स्व. पं. दामोदर सातवलेकर का लेख सामयिक व ज्ञानवर्द्धक है। इस बार ऋता शुक्ल की पाँच कविताएँ प्रकाशित की हैं, जो छंदबद्ध लय के हिसाब से अति सुंदर हैं, इसके लिए उनको बधाई देता हूँ। कहानियों में 'आप लौट आओ अंकल' व 'शुवहा' अच्छी बन पड़ी हैं। व्यंग्य 'क्या सच और क्या झूठ' बहुत अच्छा है। अन्य लेख सदैव की भाँति अच्छे बन पड़े हैं।

—नाथूराम शर्मा, झाँसी (उ.प्र.)

सितंबर अंक में दो स्थानों पर ऐसी भूल है, जिनका परिमार्जन करना आवश्यक है। पृष्ठ ३० पर दूसरे स्तंभ के तीसरे पैरा में यह लिखा है 'आजादी के बाद संविधान सभा द्वारा राष्ट्रभाषा के लिए मतदान हुआ और एकमत से हिंदी भाषा की जीत हुई।' यह कथन मिथ्या है। संविधान सभा में किसी भी विषय पर मत विभाजन नहीं हुआ। हिंदी को राजभाषा के रूप में सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया। जिन्हें संदेह हो वे Constituent Assembly Debates Vol. 9, P. 1490-91 देख लें। इस लेख से जो भ्रम फैलेगा, उसका निवारण होना चाहिए। पृष्ठ ३० पर पहले स्तंभ में पहले पैरा में यह कहा गया है कि 'केवल गफ्फार खान हिंदुस्तानी में बोले। वास्तव में पहले ही दिन श्री रघुनाथ विष्णु धुलेकर ने हिंदी में अपना वक्तव्य दिया था। आगे भी श्री पुरुषोत्तम दास टंडन, सेठ गोविंददास, श्री अलगूराय शास्त्री, श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि अनेक सदस्य हिंदी में बोलते रहे।

—ब्रजकिशोर शर्मा, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक ज्ञानवर्द्धक है। विभिन्न विषयों पर चुटीली व्यंग्य सामग्री प्रस्तुत की गई। संपादकीय ने सामयिक समस्याओं की ओर हमारा ध्यानाकर्षण किया। आशा है, भविष्य में भी इसी तरह के विभिन्न विषयों पर विशेषांक प्रकाशित होते रहेंगे।

—रामकिशन पंवार, हनुमानगढ़ (राज.)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक पढ़ा। मन को अपार तृप्ति मिली। 'साहित्य का विश्व परिपार्श्व' स्तंभ में कहानी 'बुलबुल और गुलाब' बहुत-बहुत अच्छी लगी। प्रशांत कुमार सिन्हा की कहानी 'आप लौट आओ अंकल' भी अत्यंत सराहनीय है। रत्नेशजी का आलेख पत्रिका के संस्थापक मिश्रजी के बारे में मीठी-मीठी गुदगुदी पैदा करता है। त्रिपाठीजी का आलेख 'आज की हिंदी कविता' पठनीय व विचारणीय है। संपूर्ण अंक अत्यंत रोचक है।

—विकास कौशिक, अलीगढ़ (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक पढ़ा। लगभग सभी रचनाएँ बहुत उत्कृष्ट हैं। डॉ. सादिक की गजलें पढ़कर अच्छा लगा। रवि शर्मा 'मधुप' का व्यंग्य 'पी.एम. हाउस से बुलावा' विशेषकर अच्छा लगा। सूर्य कुमार पांडेय का व्यंग्य 'वे वंदनीय हैं' भी बहुत सराहनीय है। आलोक पुराणिक का 'अपार कनफ्यूजन है', अरविंद तिवारी 'दाल-भाजी लोन स्कीम' तथा प्रेम जनमेजय का 'लो फिर'' आदि व्यंग्य पठनीय व विचारणीय हैं। 'गिरगिट' कहानी भी अच्छी लगी। संपादकीय तो समसामयिक है ही।

—राज कौशिक, अलीगढ़ (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' अगस्त का व्यंग्य विशेषांक बड़ा ही महत्त्वपुर्ण लगा। श्रीनारायण चतुर्वेदी का 'राजभवन की सिगरेटदानी', अशोक चक्रधर का 'भ्रष्टाचार पावन-पवित्र सांस्कृतिक विरासत', प्रेम जनमेजय का 'लो फिर''', 'हिंदी व्यंग्य के पदचिह्न', 'जामुन का पेड़', सूर्यबाला का 'दूसरे पैर का जूता : तीसरी परंपरा का खौफ', एम.डी. मिश्रा का 'चोर का जूता', कमलकिशोर गोयनका का 'शरद जोशी का व्यंग्य कर्म', गोपाल चतुर्वेदी का 'ईश्वर मेढकेश्वर और बिल्डर', ब्रजेंद्र त्रिपाठी का 'साहित्य और वैश्वीकरण', नरेंद्र कोहली का 'सुरक्षा की चिंता', प्रवीण कुमार थपलियाल का 'संशोधन आयोग', ममता मेहता का 'वाह री दाल' तथा रामदरश मिश्र व सादिक की रचनाएँ भी अच्छी लगीं। संपादकीय पढ़कर अच्छा लगा। सार्थक व्यंग्य समाज को नई दिशा प्रदान करता है। व्यक्ति और समाज में सुधार की गुंजाइश तलाशता है व्यंग्य। इस संग्रहणीय अंक के लिए आपका साधुवाद।

—नंद किशोर तिवारी, वाराणसी (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' के सितंबर अंक में संपादकीय हिंदी भाषियों के लिए अमृत तुल्य है। इस अंक में 'आज की हिंदी कविता' तथा अमरजी की रचना हृदयग्राही हैं। साहित्यिक गतिविधियों की सूचना के साथ-साथ उनके चित्र भी दें तो बहुत अच्छा लगेगा। एक शानदार अंक के लिए संपादक मंडल को हार्दिक बधाई।

—राधाकांत भारती, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक मिला। 'साहित्य का विश्व' परिपार्श्व में 'बुलबुल और गुलाब' कहानी बेहद पसंद आई। ऋता शुक्ल की कविताएँ बेहद अच्छी हैं। महादेवी वर्मा का 'महिलाएँ पुरुषों की चिंता छोड़ दें' पूर्ण रूप से यथार्थ है, अगर हर महिला स्वयं को पहले इनसान समझे और फिर बाद में कोई और भूमिका निभाए तो आज औरत की स्थिति स्वयं सुधर जाएगी। उसे किसी के मार्गदर्शन की कोई आवश्यकता नहीं होगी। कुल मिलाकर यह अंक श्रेयस्कर लगा।

—स्वाति ग्रोवर, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का व्यंग्य विशेषांक मिला। सभी व्यंग्य बेहद अच्छे लगे। पर महीप सिंह, गिरीश पंकज, अजय अनुरागी, राजेंद्र त्यागी, अशोक चक्रधर और प्रेम जनमेजय एवं एम.डी. मिश्रा के व्यंग्य बेहद पसंद आए। अगस्त अंक में देशभक्ति के लेखों का अभाव लगा। रामदरश मिश्र और सादिक की गजल पसंद आईं। संपूर्ण संपादक मंडल को बधाई। आशा है आगे भी इसी तरह के श्रेष्ठ अंक मिलते रहेंगे।

—नवनीत शर्मा, फरीदाबाद

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक गतिविधियाँ

मॉरीशस में हिंदी पुस्तक मेला संपन्न

हिंदी सप्ताह के अवसर पर १२ सितंबर से मॉरीशस की प्रसिद्ध संस्था हिंदी संगठन व भारत के प्रतिष्ठित प्रकाशन संस्थान प्रभात प्रकाशन के तत्त्वावधान में हिंदी पुस्तक मेले का आयोजन किया गया। गुडलैंड्स के सोशल वेलफेयर सेंटर में मॉरीशस के कला-संस्कृति मंत्री मान. श्री मुकेश्वर चुन्नी ने पुस्तक मेले का शुभारंभ किया, स्वास्थ्य मंत्री मान. श्री लोमेश बंधू ने अपने विचार व्यक्त किए। सभी वक्ताओं का मत था कि मॉरीशस में हिंदी फल-फूल रही है और यहाँ प्राइमरी व सेकेंडरी कक्षाओं के विद्यार्थियों में हिंदी के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करने के लिए ऐसे हिंदी पुस्तक मेले आयोजित करने से यह वातावरण और बेहतर होगा। इस अवसर पर विश्व हिंदी सचिवालय के उप-महासचिव श्री गुलशन सुखलाल, हिंदी संगठन के प्रधान श्री राजनरैन गति व अन्य पदाधिकारी, मॉरीशस के प्रसिद्ध लेखक सर्वश्री राजेंद्र अरुण, प्रह्लाद रामशरण, गिरधारी गुरुजी, प्रभात प्रकाशन के प्रभात कुमार भी उपस्थित थे। पुस्तक मेले में बड़ी संख्या में भारत के प्रसिद्ध साहित्यकारों की श्रेष्ठ रचनाएँ, कोश, चित्रित बाल पुस्तकें प्रदर्शित की गईं।

१२-१३ सितंबर में गुडलैंड्स के बाद १४-१५ को यह मेला फ्लैक में लगा, १५ को क्यूरोपिप के मॉरीशस बॉयज कॉलेज में व समापन १६ को बोनाकई के श्री गयानाथ मंदिर में संपन्न हुआ। पुस्तक मेले के दौरान बड़ी संख्या में न केवल छात्र, अध्यापक आए बल्कि आमजन ने भी अपनी रुचि की पुस्तकें देखीं और क्रय कीं। समापन समारोह में मॉरीशस सरकार के उप-प्रधानमंत्री मान. श्री अनिल बेचू, मान. श्री मुकेश्वर चुन्नी, भारतीय उच्चायोग के द्वितीय सचिव श्री मीमांसक, हिंदी संगठन की संरक्षिका श्रीमती पद्मा घरभरन, राजनरैन गति, प्रख्यात लेखक श्री अभिमन्यु अनत आदि ने सबको संबोधित किय। हिंदी संगठन के कोषाध्यक्ष श्री गिरधारी गुरुजी ने धन्यवाद ज्ञापित किया। संचालन हिंदी संगठन की मंत्री श्रीमती अंजू घरभरन ने किया। □

'रू-बरू' कृति लोकार्पित

३० अगस्त को दिल्ली के प्रगति मैदान में १७वें दिल्ली पुस्तक मेले में पाकिस्तान तथा पाक अधिकृत कश्मीर की आंतरिक स्थिति पर प्रकाश डालने वाली पुस्तक 'रू-बरू' का विमोचन वरिष्ठ पत्रकार श्री राम बहादुर राय द्वारा किया गया। इस अवसर पर पुस्तक के प्रकाशक श्री नरेंद्र वर्मा और सहारा न्यूज ब्यूरो के प्रमुख श्री मनोज दुबे भी उपस्थित थे। □

'सीढ़ियाँ' पुस्तक लोकार्पित

३० अगस्त को राँची विश्वविद्यालय के केंद्रीय पुस्तकालय के सभागार में साहित्यिक संस्था 'सुरभि' द्वारा आयोजित कार्यक्रम में डॉ. पूर्णिमा केडिया 'अन्नपूर्णा' के कहानी संकलन 'सीढ़ियाँ' का लोकार्पण कथाकार एवं 'हंस' के कार्यकारी संपादक श्री संजीव ने किया। संचालन डॉ. अनिता रश्मि ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन डॉ. ममता अग्रवाल ने किया। सर्वश्री रविभूषण, मनमोहन पाठक, रणेंद्र, पंकज मित्र, शंभुनाथ आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम में सर्वश्री बी.पी. केसरी, विद्याभूषण, माया प्रसाद, कमल बोस, मिथलेश, जंग बहादुर पांडेय, महुआ माझी उपस्थित थे। □

म.प्र. संस्कृति परिषद् के पुरस्कार घोषित

३० अगस्त को भोपाल के भारत भवन सभागार में मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद् की साहित्य अकादमी का वर्ष २००८ का 'अखिल भारतीय भवानी प्रसाद मिश्र पुरस्कार' वरिष्ठ हिंदी कवि श्री उद्भ्रांत को उनकी कविता 'अनाद्यसूक्त' के लिए प्रदान किया गया। इसके अतिरिक्त निबंध संग्रह 'विवेचना के सुर' के लिए प्रो. शरद नारायण खरे को 'माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार', कहानी 'एक अचानक शाम' के लिए श्री मनमोहन सरल को 'मुक्तिबोध पुरस्कार', उपन्यास 'काहे री नलिनी' के लिए सुश्री उषा यादव को 'वीरसिंह देव पुरस्कार' और आलोचना पुस्तक 'गांधी : पत्रकारिता के प्रतिमान' के लिए डॉ. कमलकिशोर गोयनका को 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। पुरस्कार-स्वरूप नारियल, शॉल, सम्मान-पत्र तथा ५१ हजार रुपए की राशि म.प्र. के संस्कृति मंत्री श्री लक्ष्मीकांत शर्मा द्वारा प्रदान की गई। □

जन्मदिन मनाया गया

२१ अगस्त को अलीगढ़ में हिंदी के प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ. राकेश गुप्त का जन्मदिन सासनी गेट स्थित सर्वोदय नगर में उनके कनिष्ठ पुत्र श्री अभयकुमार गुप्त के आवास पर गण्यमान्य साहित्य-प्रेमियों की उपस्थिति में मनाया गया। अध्यक्षता डॉ. गोपालबाबू शर्मा ने की तथा संचालन डॉ. वेदप्रकाश 'अमिताभ' ने किया। इस अवसर पर श्री अशोक 'अंजुम' ने 'अभिनव प्रयास' के 'डॉ. राकेश गुप्त स्मृति विशेषांक' की प्रति शिक्षक-विधायक श्री जगवीर किशोर जैन को भेंट की तथा उनसे पत्रिका के नए अंक का लोकार्पण करवाया। सर्वश्री सुरेश कुमार, राजीव कुमार, रमेश राज, जयश्री गुप्त, जगत भूषण, मुरारीलाल शर्मा, सुबोध मिश्र, राकेश रावत, भगत सिंह, अमीचंद वार्ष्णेय, शंभुदयाल रावत, जगवीर किशोर जैन आदि ने डॉ. राकेश गुप्त को अपनी भावांजलि प्रस्तुत की। धन्यवाद-ज्ञापन श्री अभयकुमार गुप्त ने किया। □

'चित्रकला-संगम सम्मान' प्रदत्त

गत दिनों दिल्ली में कला संस्था चित्र-कला-संगत द्वारा वार्षिक चित्र-कला-संगम सम्मान २००९-२०१० हेतु विभिन्न विधाओं के लिए सर्वश्री हीरालाल बाछोतिया (साहित्य), सुनीति रावत (कविता), आरुषि मुद्गल (नृत्य), सविता नाग (चित्रकला), निशा त्रिवेदी (नाट्य), जसदेव सिंह (साहित्य लेखन, खेल), सुधा रघुरामन (गायन), वी.आर.पी. केशव (कार्टून), देवतोष सेनगुप्ता (फोटोग्राफी) को पुरस्कार-स्वरूप २१ हजार रुपयों का क्रॉस चेक और प्रशस्ति-पत्र प्रदान किए गए। □

कवि सम्मेलन आयोजित

१४ अगस्त को लखनऊ राजभवन के गांधी सभागार में उ.प्र. भाषा संस्थान एवं संस्कृति विभाग के तत्त्वावधान में स्वाधीनता संग्राम की ६४वीं वर्षगाँठ पर कवि-सम्मेलन का आयोजन किया गया। अध्यक्षता पद्म विभूषण श्री गोपालदास नीरज ने तथा संचालन नवगीतकार श्री श्रीकृष्ण तिवारी ने किया। सुप्रसिद्ध कवियों सर्वश्री बेकल उत्साही, शेरजंग गर्ग, कुँअर बेचैन, विजय किशोर मानव तथा विश्वनाथ सचदेव ने काव्य-पाठ किया। कवियों का स्वागत महामहिम राज्यपाल श्री बी.एल. जोशी ने किया। □

साहित्यिक गोष्ठी आयोजित

गत दिनों बिहार में इंद्रधनुष साहित्य परिषद्, फारबिसगंज के तत्त्वावधान में तथा कर्नल अजित दत्त की अध्यक्षता में तीन महान् दिवंगत साहित्यकारों की स्मृति में साहित्यिक गोष्ठी का आयोजन किया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्यक्रम में श्री मोहन लाल मेहता ने एक भजन गाया तथा श्री रणविजय यादव ने स्वरचित कविता का पाठ किया, श्री उमाकांत दास ने हरि शंकर परसाई की व्यंग्य-कथा 'भोलाराम का जीवन' का पाठ किया तथा सर्वश्री कर्नल दत्त, परमेश्वर प्रसाद साह, सुरेंद्र प्रसाद मंडल, हर्ष ना. दास ने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की जीवनी एवं उनकी रचनाओं पर चर्चा की। संयोजन एवं संचालन श्री विनोद कुमार तिवारी ने किया। □

१८वीं पावस व्याख्यानमाला संपन्न

२९ से ३१ जुलाई को भोपाल के हिंदी भवन में मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति और हिंदी भवन न्यास के वैचारिक अनुष्ठानों के क्रम में वर्ष २०११-१२ की तीन दिवसीय १८वीं पावस व्याख्यानमाला का आयोजन किया गया। इस अवसर पर १७वीं पावस व्याख्यानमाला में पठित आलेखों पर एकाग्र 'संवाद और हस्तक्षेप' दस्तावेज तथा वरिष्ठ लेखक श्री चंद्रप्रकाश जायसवाल के उपन्यास 'सूत्रधार' का लोकार्पण मुख्य अतिथि डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय और अध्यक्ष श्री अच्युतानंद मिश्र ने संयुक्त रूप से किया। उद्घाटन सत्र का विषय था 'व्याख्यान और विमर्श', जिसकी अध्यक्षता श्री अच्युतानंद मिश्र ने की, कार्यक्रम पर प्रकाश डाला प्रो. दवे ने। व्याख्यान और विमर्श के प्रथम सत्र का विषय था—'इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में हिंदी साहित्य की संभावनाएँ'। साहित्यालोचक डॉ. विजयबहादुर सिंह ने अध्यक्षता की। साहित्यकार प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल मुख्य वक्ता थे। द्वितीय विमर्श सत्र में 'भारतीय व्याख्यान और हिंदी उपन्यास' विषय पर आयोजित था। इसकी अध्यक्षता वरिष्ठ साहित्यकार श्री गिरिराज किशोर ने की। अतिथि वक्ता डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय, डॉ. नरेंद्र कोहली और श्री गिरिराज किशोर ने प्रेमचंद के चित्र पर माल्यार्पण कर श्रद्धांजलि अर्पित की। तीसरे दिन के सत्र का विषय था—'ज्ञान विषयों की हिंदी में स्थिति और संभावनाएँ'। अध्यक्षता कुलपति डॉ. ब्रजकिशोर कुठियाला ने की। प्रख्यात समाज-विज्ञानी डॉ. योगेश अटल ने मुख्य वक्ता के रूप में विमर्श में भाग लिया। अंतिम समापन सत्र का विषय 'अंग्रेजी का वर्चस्व : एक भाषीयता का खतरा' था। अतिथि विद्वानों ने एक स्वर में कहा कि देश में सरकार के संरक्षण में अंग्रेजी का वर्चस्व शिक्षा, प्रशासन और अन्य आर्थिक क्षेत्रों में तेजी से बढ़ रहा है। अध्यक्षीय उद्बोधन श्री अनंतराम त्रिपाठी ने किया। तीन दिन के इस वैचारिक अनुष्ठान के समापन के अवसर पर म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के मंत्री संचालक श्री कैलाशचंद्र पंत ने सभी का आभार व्यक्त किया। □

सम्मान समारोह आयोजित

२५ अगस्त को दिल्ली के इंडिया हैबिटेट सेंटर के स्टीन सभागार में साहित्यिक संस्था 'परंपरा' द्वारा वर्ष २०११ के लिए आयोजित सम्मान समारोह में श्री उदय प्रताप सिंह को हिंदी की वाचिक और लिखित कविता में योगदान के लिए 'परंपरा विशिष्ट ऋतुराज सम्मान', श्री जितेंद्र श्रीवास्तव को उनके संग्रह 'असुंदर सुंदर' और सुश्री अलका सिन्हा को उनके संग्रह 'तेरी रोशनाई होना चाहती हूँ' के लिए 'परंपरा ऋतुराज सम्मान' से सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि पूर्व केंद्रीय मंत्री श्री वसंत साठे थे। इस अवसर पर प्रो. गंगा प्रसाद विमल द्वारा संपादित वरिष्ठ कवि श्री अजित कुमार की रचनाओं के संचयन का लोकार्पण किया गया तथा श्री राजनारायण बिसारिया को जीवन के ८२ वसंत पूरे करने पर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर आयोजित कवि-गोष्ठी में अतिथि कवियों सर्वश्री गोपाल दास नीरज, मुनव्वर राणा और विष्णु सक्सेना ने अपनी कविताएँ सुनाईं। संचालन श्री लक्ष्मी शंकर वाजपेयी ने तथा स्वागत 'परंपरा' के संस्थापक संरक्षक श्री काशीनाथ मेमानी और उनकी पत्नी श्रीमती किरण मेमानी ने किया। कार्यक्रम में अनेक रचनाकार और साहित्य-प्रेमी उपस्थित थे। □

अवनीश सिंह को 'कविता कोश सम्मान'

७ अगस्त को जयपुर के जवाहर कला केंद्र के कृष्णायन सभागार में आयोजित कार्यक्रम में हिंदी कविता की सबसे बड़ी वेबसाइट 'कविता कोश' के ५ वर्ष व्यतीत होने पर वेबसाइट की ओर से मुरादाबाद के युवा गीत कवि श्री अवनीश सिंह चौहान को 'प्रथम कविता कोश अंतरराष्ट्रीय सम्मान-२०११' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप उन्हें प्रतीक-चिह्न, मानपत्र, शॉल, श्रीफल, नारियल तथा ५,००० रुपए की नकद राशि प्रदान की गई। अध्यक्षता प्रसिद्ध आलोचक श्री विजेंद्र ने की। मुख्य अतिथि श्री मोहन श्रोत्रिय एवं विशिष्ट अतिथि श्री नंद भारद्वाज थे। कार्यक्रम में सर्वश्री ललित कुमार, आदिल रशीद, रामेश्वर कांबोज 'हिमांशु', नरेश अवस्थी, बल्ली सिंह 'चीमा', बनज कुमार 'बनज', मीठेश निर्मोही आदि अनेक साहित्यकार उपस्थित थे। □

अंतरराष्ट्रीय हिंदी सेमिनार संपन्न

९ से १३ अगस्त तक कुरुक्षेत्र में भारतीय विद्या संस्थान (इंस्टीट्यूट ऑफ इंडियन नॉलेज) ट्रिनिडाड एंड टुबैगो (वेस्टइंडीज) द्वारा प्रवासी विश्वकवि प्रो. हरिशंकर आदेश के ७५वें अमृतोत्सव पर अंतरराष्ट्रीय हिंदी सेमिनार का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के डॉ. बाबूराम को 'अंतरराष्ट्रीय ट्रिनिडाड हिंदी शिखर सम्मान' से सम्मानित किया गया तथा उन्हें भारतीय विद्या संस्थान की त्रैमासिक पत्रिका 'ज्योति' और ट्रिनिडाड हिंदी समिति के परामर्श-मंडल का तीन वर्ष के लिए सदस्य मनोनीत किया गया। सेमिनार में विश्व के कई देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। □

हिंदी पखवाड़ा आयोजित

१ से १५ सितंबर तक धौलाना, गाजियाबाद में एन.टी.पी.सी. के दादरी पावर स्टेशन में आयोजित हिंदी पखवाड़े का शुभारंभ महाप्रबंधक श्री पी.आर. डाहाके ने किया। श्री उज्ज्वल बनर्जी ने हिंदी के महत्त्व पर प्रकाश डाला। श्री प्रभात राम ने आभार व्यक्त किया। प्रबंधक श्री अतरसिंह गौतम ने पखवाड़े के दौरान कर्मचारियों, स्कूली बच्चों एवं महिलाओं के लिए आयोजित होनेवाले कार्यक्रमों की जानकारी देते हुए सभी का स्वागत किया। इस अवसर पर विभागाध्यक्षों सहित बड़ी संख्या में कर्मचारियों ने भाग लिया। □

हिंदी दिवस मनाया गया

१४ सितंबर को दिल्ली में हिंदी दिवस के अवसर पर विभिन्न कार्यक्रम तथा विचार-गोष्ठी आयोजित की गईं, साथ ही हिंदी पखवाड़े के तहत हिंदी में काम करनेवाले कर्मचारियों को सम्मानित किया गया। सीमा सुरक्षा बल द्वारा आयोजित समारोह में हिंदी पखवाड़े के तहत आयोजित विभिन्न हिंदी प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान पाने वाले कर्मचारियों को सुरक्षा बल के महानिदेशक श्री रमन श्रीवास्तव ने नकद पुरस्कार देकर सम्मानित किया। सीमांत मुख्यालय शिलांग, सी.एस.डब्ल्यू.टी. इंदौर एवं सीमा सुरक्षा बल के वायु खंड को हिंदी में बेहतर कार्य करने हेतु राजभाषा शील्ड प्रदान किया गया। डॉ. स्वाति तिवारी को उनकी कृति 'अकेले होते लोग' के लिए के.जी. बालाकृष्णन द्वारा सम्मान-स्वरूप प्रशस्ति-पत्र, शॉल और ४० हजार रुपए नकद प्रदान किए गए।

दिल्ली नगर निगम द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में दिल्ली की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापौर प्रो. रजनी अब्बी ने 'निगम आलोक' पत्रिका का लोकार्पण किया। अध्यक्षता हिंदी समिति की अध्यक्ष श्रीमती नीलम बुद्धिराजा ने की। स्थायी समिति के अध्यक्ष श्री योगेंद्र चांदोलिया, विपक्ष के नेता श्री जयकिशन शर्मा ने अपने विचार रखे।

कालिंदी कॉलेज में हिंदी दिवस के अवसर पर 'युवाओं में गांधी की प्रासंगिकता' विषय पर चर्चा आयोजित की गई। दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. दिनेश सिंह ने महात्मा गांधी से जुड़ी जानकारियों से छात्रों को अवगत कराया। कॉलेज की एक छात्रा ने 'गांधी क्या तुम जिंदा हो?' विषय पर बोलते हुए २१वीं सदी में गांधी और उनके सिद्धांतों पर प्रकाश डाला। कुलपति सहित सर्वश्री बी.पी. साहू, आशुम गुप्ता, प्राचार्य अनुला मौर्य ने प्रस्तुति की सराहना की। □

अंडमान-निकोबार में हिंदी दिवस का आयोजन

१४ सितंबर को अंडमान-निकोबार द्वीप समूह में डाक सेवा कार्यालय में हिंदी दिवस का आयोजन किया गया। श्री कृष्ण कुमार यादव ने माँ सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण और दीप प्रज्वलित कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया। कार्यक्रम में सर्वश्री दीनबंधु मित्र, पी.बी. अखिलंदम, अमियभूषण मजूमदार, राजेंद्र सिंह बेदी, महाश्वेता देवी, शम्सुररहमान फारूकी, कृष्ण बिहारी नूर आदि उपस्थित थे। सर्वश्री ए.के. प्रशांत, कृष्ण कुमार यादव तथा किशोर वर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। □

'आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार' प्रदत्त

२५ अगस्त को भोपाल के भारत भवन में मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद् की साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष २००८ की श्रेष्ठ कृतियों पर पुरस्कार समारोह का आयोजन किया गया। श्री कमल किशोर गोयनका को 'गांधी : पत्रकारिता के प्रतिमान' पुस्तक हेतु 'अखिल भारतीय आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार' स्वरूप ५१ हजार रुपए का चेक, नारियल, शॉल, प्रतीक चिह्न भेंट किए गए। सर्वश्री उद्भ्रांत, शरद नारायण खरे, मनमोहन सरल, उषा यादव को भी उनकी श्रेष्ठ कृतियों के लिए पुरस्कृत किया गया। अध्यक्षता श्री नरेंद्र कोहली ने की तथा मुख्य अतिथि थे राज्य के संस्कृति मंत्री श्री लक्ष्मीकांत शर्मा। समारोह में अनेक लेखक-साहित्यकार उपस्थित थे। □

सम्मान समारोह संपन्न

१७ अगस्त को दिल्ली के आजाद भवन में अखिल भारतीय भाषा साहित्य सम्मेलन और भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा आयोजित 'साहित्य शिरोमणि पं. दामोदर दास चतुर्वेदी स्मृति सम्मान-२०११' समारोह का उद्घाटन श्री सत्यव्रत चतुर्वेदी ने किया। मुख्य अतिथि श्री शशि शेखर तथा विशिष्ट अतिथि श्री रमाकांत गोस्वामी थे। कार्यक्रम का संचालन श्री सुरेश नीरव ने किया। समारोह में सर्वश्री रवींद्र श्रीवास्तव परिचयदास, सतपाल, सुभाष राय, राकेश पांडेय, यशवंत सिंह, देवकी नंदन शुक्ल, गजे सिंह त्यागी, रजनी सिंह, दया निर्दोषी, जयवीर मलिक, अशोक रिछारिया, हीरालाल पांडेय, कँवलजीत सहरावत, शिवानी कश्यप, अनिता सेतिया, गंगेश गुंजन और अजय गुप्ता को अंगवस्त्रम्, प्रतीक चिह्न, प्रशस्ति-पत्र और श्रीफल भेंट कर सम्मानित किया गया। □

अर्चना रेचूरी को स्पंदन चित्रकला पुरस्कार

गत दिनों भोपाल में ललित कलाओं के लिए समर्पित संस्था 'स्पंदन' का 'स्पंदन चित्रकला पुरस्कार-२०११' युवा चित्रकार सुश्री अर्चना रेचूरी को दिया जाएगा। पुरस्कार-स्वरूप ११ हजार रुपए, शॉल, स्मृति-चिह्न आदि दिसंबर में भोपाल में आयोजित पुरस्कार समारोह में दिए जाएँगे। □

कहानी पाठ संपन्न

२७ अगस्त को भोपाल के स्वराज भवन में 'स्पंदन' द्वारा आयोजित कथा पाठ में सुप्रसिद्ध कथाकार श्री राजेंद्र दानी ने अपनी कहानी 'मेमोरी फुल' का पाठ किया। संयोजक कथाकार सुश्री उर्मिला शिरीष ने श्री राजेंद्र दानी का परिचय देते हुए कार्यक्रम का संचालन किया। अध्यक्ष डॉ. शिरीष शर्मा ने अतिथियों का स्वागत किया। कार्यक्रम में सर्वश्री मुकेश वर्मा, विजय बहादुर सिंह, रमेश दवे, राजेश जोशी, राजेंद्र शर्मा, स्वाति तिवारी, अलख नंदन, अजीत हर्षे, नरेंद्र जैन, पंकज राग, वंदना राग, महेंद्र गगन, हरि भटनागर सहित अनेक साहित्य-प्रेमी, श्रोता तथा संस्कृतिकर्मी उपस्थित थे। □

'प्रांतीय महिला सम्मेलन-२०११' संपन्न

विगत दिनों फिरोजाबाद में भारत विकास परिषद्, ब्रज प्रदेश द्वारा 'प्रांतीय महिला सम्मेलन-२०११' का आयोजन रामचंद्र पालीवाल ऑडीटोरियम में किया गया। अध्यक्षता डॉ. शन्नो रानी ने की। मुख्य अतिथि श्रीमती किरण बजाज तथा डॉ. दिव्या लहरी ने श्रीमती डॉ. रजनी सिंह को 'उत्कृष्ट महिला सम्मान' स्वरूप श्रीफल, प्रशस्ति-पत्र, शॉल, प्रतीक चिह्न और बैग देकर सम्मानित किया। इस अवसर पर प्रबुद्ध वक्ताओं ने 'सशक्त महिला-सशक्त समाज' विषय पर तथा डॉ. शिवानी चतुर्वेदी एवं डॉ. पूनम बजाज ने 'नारी विमर्श' पर अपने विचार प्रस्तुत किए। संचालन डॉ. रश्मि जैन ने किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

सनातन धर्म मंडल शिक्षा समिति, ग्वालियर द्वारा 'चक्रधर सम्मान-२०११' हेतु २००५-१० में प्रकाशित 'यात्रा साहित्य' आधारित पुस्तकें आमंत्रित हैं। सम्मान-स्वरूप अंगवस्त्र तथा २१ हजार रुपए की नकद राशि भेंट की जाएगी। प्रकाशित पुस्तकों की २ प्रतियाँ १५ अक्तूबर तक सचिव, सनातन धर्म मंडल शिक्षा समिति, ज्ञान मंदिर, धर्म मंदिर मार्ग, ग्वालियर-४७४००१ पर भेजें।

***

पूर्वोत्तर हिंदी अकादमी, शिलांग द्वारा 'डॉ. महाराज कृष्ण जैन स्मृति सम्मान-२०११' हेतु हिंदी लेखक किसी भी विधा में प्रकाशित पुस्तक की एक प्रति, पाँच फुटकर रचनाओं की प्रतिलिपि, साहित्य योगदान का विस्तृत विवरण पत्रिका के संदर्भ, विवरण एवं पंजीकरण शुल्क १०० रुपए के मनीऑर्डर के साथ रजिस्टर्ड पोस्ट द्वारा ३१ दिसंबर तक सचिव, पूर्वोत्तर हिंदी अकादमी, रेडियो कॉलोनी, पो. रिंजा, शिलांग-७९३००६ (मेघालय) पर भेजें।

***

धरोहर स्मृति न्यास, बिजनौर द्वारा विभिन्न विधाओं के लिए वर्ष २०१२ हेतु नामित पुरस्कारों की स्थापना की गई है। साहित्य के क्षेत्र में दिए जानेवाले पुरस्कार हेतु २००३-२००६ तक प्रकाशित पुस्तकों की तीन प्रतियाँ, मानव सेवा पुरस्कार तथा सांप्रदायिक सद्भावना पुरस्कार हेतु मानव सेवा संबंधी कार्यों का विस्तृत विवरण एवं श्रीमती कांता 'निशा' नारी प्रेरणा पुरस्कार के लिए लेखन क्षेत्र में जुड़ी मातृशक्ति, वर्ष २००३-२००६ तक प्रकाशित साहित्य में से कहानी संग्रह की तीन प्रतियाँ आमंत्रित हैं। समस्त प्रविष्टियाँ ३० अक्तूबर तक धरोहर स्मृति न्यास, ४१७-रामबाग कॉलोनी, सिविल लाइंस, बिजनौर-२४६७११ (उ.प्र.) पर भेज सकते हैं। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर्मदा के अनथक यात्री : अमृतलाल वेगड़

● ब्रजेंद्र त्रिपाठी

अमृतलाल वेगड़ संभवतः देश के ऐसे प्रथम चित्रकार हैं, जिन्होंने नर्मदा की पूरी परिक्रमा के दौरान बनाए गए अपने चित्रों की कई एकल प्रदर्शनियाँ आयोजित की हैं। नदी के साथ-साथ की गई यात्रा में उन्होंने नर्मदा की अनंत छवियों को देखा है और उसे कैनवास पर उकेरा है। इस यात्रा को कैनवास पर उतारने के साथ-साथ उसे उन्होंने शब्दों में भी आकार दिया है, जिसका प्रतिफल हैं—तीन यात्रा-वृत्तांत, जो यात्रा-वृत्तांत के क्षेत्र में मील के पत्थर माने जाते हैं।

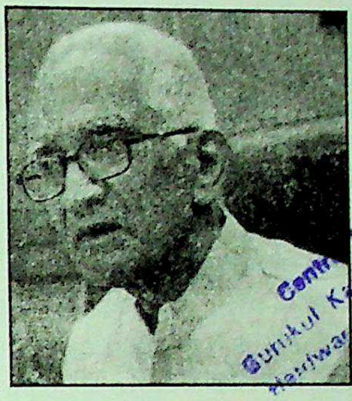

अमृतलाल वेगड़ का जन्म १९२८ में जबलपुर, म.प्र. में हुआ। सागर विश्वविद्यालय से बी.ए. करने के बाद वे विश्वभारती चले गए और १९४८ से १९५३ तक शांतिनिकेतन में कला का अध्ययन किया। १९५३ से १९८८ तक वे जबलपुर के आर्ट कॉलेज में चित्रकला के प्राध्यापक रहे। उन्होंने कई एकल प्रदर्शनियाँ आयोजित की हैं। इसी वर्ष उनकी एक एकल प्रदर्शनी भारत भवन, भोपाल में आयोजित की गई, जिसमें उनके कोलाज, चित्रकृतियाँ, रेखाचित्र प्रदर्शित किए गए। इसका शीर्षक था—परकम्मा। वस्तुतः उनकी कलाकृतियाँ नर्मदा नदी के किनारे-किनारे की गई यात्रा की छवियों पर ही केंद्रित हैं। नर्मदा नदी को लेकर बनाए गए पेपर कोलाज और रेखाचित्र कलाप्रेमियों के लिए बहुमूल्य धरोहर की तरह हैं। चित्रकला के लिए उन्हें मध्य प्रदेश शासन के संस्कृति विभाग द्वारा शिखर सम्मान से विभूषित किया गया।

अमृतलाल वेगड़ एक तरह से नर्मदा के पर्याय बन चुके हैं। उन्हें नर्मदा से अलग करके देखना संभव ही नहीं है। उनकी कला और लेखन का मूल आधार नर्मदा ही है। नर्मदा के इस प्रेम के पीछे उनके पिता रहे हैं, जो प्रकृति-प्रेमी और घुमक्कड़ थे; लेकिन सौंदर्य को देखने की दृष्टि उन्हें आचार्य नंदलाल बसु से मिली। यदि उनके जीवन में शांतिनिकेतन न होता तो संभवतः नर्मदा परिक्रमा भी संभव न होती।

वेगड़जी ने नर्मदा पदयात्राएँ १९७७ में शुरू कीं और १९९९ में पूरी परिक्रमा कर ली। यह यात्रा एक साथ नहीं, कई खंडों में हुई। इस पूरी परिक्रमा का वृत्तांत हिंदी की उनकी दो पुस्तकों में है—'सौंदर्य की नदी नर्मदा' और 'अमृतस्य नर्मदा'। २००२ में ७५वें वर्ष में प्रवेश करते ही वेगड़जी दोबारा नर्मदा पदयात्रा पर निकल पड़े। नर्मदा के साथ-साथ नर्मदा की सहायक नदियों—बुढ़नेर, बंजर और शक्कर की पदयात्राएँ कीं। इन यात्राओं में पत्नी श्रीमती कांता भी साथ चलीं। विवाह की ५०वीं वर्षगाँठ के आसपास वेगड़ दंपति द्वारा शुरू की गई और २००९ तक चली दस यात्राओं का वृत्तांत है—'तीरे-तीरे नर्मदा'। ये तीनों पुस्तकें वेगड़जी की प्रस्थानत्रयी हैं।

वेगड़जी गुजराती और हिंदी, दोनों भाषाओं में लिखते हैं। गुजराती में प्रकाशित कृतियाँ हैं—'परिक्रमा नर्मदा मैयानी', 'सौंदर्यनी नदी नर्मदा', 'स्मृतिओनु शांतिनिकेतन', 'नदिया गहरी नाव पुरानी', 'सरोवर छली पड़्या'। उनकी कृतियाँ मराठी, बांग्ला और अंग्रेजी अनुवाद में प्रकाशित हैं। दोनों ही भाषाओं में रचित कृतियों के लिए उन्हें पुरस्कृत किया गया है। हिंदी पुस्तकें मध्य प्रदेश शासन के संस्कृति विभाग द्वारा 'शरद जोशी राष्ट्रीय पुरस्कार' से सम्मानित हैं। केंद्र सरकार द्वारा उन्हें महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' से विभूषित किया गया। गुजराती कृति 'सौंदर्यनी नदी नर्मदा', 'साहित्य अकादेमी' पुरस्कार से सम्मानित है। गुजरात साहित्य अकादेमी से वे दो बार सम्मानित हुए तथा अकादेमी का 'साहित्य गौरव पुरस्कार' भी उन्हें मिला है।

Central Library Gurukul Kangri University Haridwar

वेगड़जी ने पहली पदयात्रा १९७७ में की और अंतिम २००९ में। इन ३३ वर्षों के दौरान उन्होंने ४००० कि.मी. से अधिक की पदयात्रा की। प्रथम यात्रा के समय उनकी उम्र ५० की थी और अंतिम यात्रा के समय ८२ वर्ष की। इन पदयात्राओं के वृत्तांत को जिन तीन पुस्तकों में आपने समेटा है, वे अब यात्रा साहित्य में 'क्लासिक' का दर्जा हासिल कर चुकी हैं।

'अमृतस्य नदी' की प्रस्तावना में निर्मल वर्मा ने लिखा है, ''याद नहीं आता, कौन मुझे यह छोटी सी, दुबली-पतली किताब दे गया था, जिसके पन्नों पर कहीं-कहीं रेखाचित्र भी थे, किंतु जो चीज आज भी याद रह गई है, वह था पुस्तक का प्रांजल, विनोदभरा स्वच्छ, प्रवाह में बहता गद्य, मानो जिस नदी का जादू भरा विवरण उसमें था, स्वयं उसका स्पर्श लेखक की कलम को एक अजीब सी प्रभुता प्रदान कर गया हो। वेगड़जी से गहरी ईर्ष्या होती है कि उन्होंने एक नदी की यात्रा में भारत की कितनी छवियाँ, दृश्य, लोग—एक समूची संस्कृति की रासलीला का अमृत रस छक लिया है।''' वेगड़जी की नर्मदा यात्रा सिर्फ एक नदी की परिक्रमा नहीं है, वह एक पुरातन संस्कृति की अटलता को उसकी सतत प्रवाहमयता में 'आँकने का आँखों देखा वृत्तांत' भी है।''

रमेशचंद्र शाह ने 'सौंदर्य की नदी नर्मदा' की प्रस्तावना में लिखा है—''ऐसा दुर्लभ और मणिकांचन संयोग भी कब और कहाँ जुटता है कि एक ही लेखक में भरा-पूरा आदर्श बोध भी हो और यथातथ्य यथार्थ-बोध भी, उसमें प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करने की, तन्मय होने की प्रतिभा भी हो और सटीक-सजीव वर्णन सामर्थ्य भी। ऐसा लेखक, जो भाषा के साथ उतना ही सहज और निश्छल हो, जितना जनजीवन के साथ। जिसमें करुणा के साथ हास्योद्रेक क्षमता हो और श्रद्धा के साथ तटस्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्धिक विश्लेषण वृत्ति भी, और ऐसा सुयोग भला कब-कब सधता है कि जीवन लीला और प्रकृति सौंदर्य के विस्तार और वैविध्य को आप शब्दों के साथ-साथ रेखाओं भी बोलते सुन सकें।''

वेगड़जी के यात्रा-वृत्तांत मैं पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ता रहा था और उनकी प्रस्तुति-शैली से, शब्दों में जीवंत बिंब खड़ा कर देने की उनकी क्षमता से बराबर प्रभावित होता रहा। इन यात्रा संस्मरणों को पढ़ते समय यह लगता है जैसे कि हम भी उस यात्रा में उनके साथ-साथ चल रहे हैं। यह किसी भी लेखक की बहुत बड़ी सफलता है कि वह अपनी रचनात्मकता के प्रवाह में पाठकों को भी बहाता चले। उनके चित्र भी उनके यात्रा वृत्तांतों के प्रतिपूरक हैं। उनके एकाधिक चित्रों को 'साहित्य अमृत' के 'आवरण' पर भी देने का सुयोग मुझे मिला है। वेगड़जी से इस सिलसिले में फोन पर एकाध बार बात भी हुई थी, लेकिन उनसे प्रत्यक्ष भेंट इस वर्ष जनवरी में वाराणसी में हुई, जहाँ पंडित विद्यानिवास मिश्र को केंद्र में रखकर विद्याश्री न्यास की ओर से एक त्रिदिवसीय आयोजन था और इस समारोह में उन्हें न्यास की ओर से 'पंडित विद्यानिवास मिश्र स्मृति सम्मान' से विभूषित किया गया। इस अवसर पर उन्होंने अपना स्वीकृति वक्तव्य प्रस्तुत किया था और तब लगा था कि उनके लिखित शब्दों में ही नहीं, उनकी वाणी में भी उतना ही रस है। ऐसा कम होता है कि कोई व्यक्ति जितना अच्छा रचनाकार हो, उतना ही अच्छा वक्ता भी हो, लेकिन वेगड़जी एक साथ एक उत्कृष्ट चित्रकार, एक अंतर्दृष्टि संपन्न रचनाकार और एक कुशल वक्ता भी हैं और उन्हें सुनते समय समय मानो ठहर जाता है। नर्मदा की यात्रा ने उन्हें भारतीय जनजीवन को गहराई से समझने की दृष्टि दी है और अनुभव संपन्न बनाया है।

वाराणसी में वेगड़जी से हुई भेंट के दौरान ही मैंने उनसे निवेदन किया था कि हम आपका एक व्याख्यान आपकी नर्मदा परिक्रमा को लेकर साहित्य अकादेमी, दिल्ली में रखना चाहेंगे। उन्होंने यह प्रस्ताव स्वीकार किया और कहा कि वे जरूर आएँगे और अपनी नर्मदा परिक्रमा तथा शांतिनिकेतन प्रवास के संस्मरण सुनाएँगे। उन्होंने कहा कि वे मुझे नर्मदा यात्रा की अपनी तीनों पुस्तकें देना चाहते हैं, लेकिन वे जो दो-एक प्रतियाँ लाए थे, किसी को भेंट कर चुके हैं। अत: वे जबलपुर पहुँचकर तीनों पुस्तकों का सेट मुझे भेज देंगे। उन्होंने अपना वादा निभाया और पंद्रह दिनों के भीतर ही मुझे डाक से पुस्तकें मिल गईं।

इन पुस्तकों से गुजरना पवित्र नर्मदा में डुबकी लगाना है। यह पुस्तकत्रयी एक जादुई चमत्कार की सृष्टि करती चलती है, पाठक के रूप में हम अपने आपको वेगड़जी के सहयात्री के रूप में महसूस करते हैं और नर्मदा का अतुल सौंदर्य हमारे सामने एक नए रूप में उद्घाटित होने लगता है। प्रकृति उनके यहाँ अत्यंत आत्मीय रूप में सामने आती है। वेगड़जी ने 'तीरे-तीरे नर्मदा' की भूमिका में लिखा है—''पता नहीं कब और किसने नर्मदा की पहली परिक्रमा की और एक परंपरा का सूत्रपात किया। इस प्रकार परिक्रमा अस्तित्व में आई और आज भी चल रही है। इसका अर्थ यह हुआ कि समाज को इसकी आवश्यकता है। वह निरर्थक नहीं है। निरर्थकता सदियों तक जारी नहीं रह सकती।'' यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है, जिसकी ओर वेगड़जी ने इंगित किया है। वे मानते हैं कि परिक्रमा, तीर्थाटन तथा पर्यटन से हम अपने देश से जुड़ते हैं। प्रकृति-प्रेम देशप्रेम की पहली सीढ़ी है और यह प्रकृति प्रेम वेगड़जी में भरपूर है। नर्मदा की यात्रा करते हुए उन्होंने प्रकृति के विपुल सौंदर्य को तो देखा ही है, लोक जीवन के बहुत से रोचक आख्यानों को भी उजागर किया है।

अभी जब वेगड़जी साहित्य अकादेमी के आमंत्रण पर दिल्ली आए तो उन्होंने किसी सिद्धहस्त कथावाचक जैसी रोचक शैली में अपनी नर्मदा परिक्रमा और शांतिनिकेतन प्रवास के कई रोचक और मार्मिक संस्मरण सुनाए। उन्होंने बताया कि जब वे अपनी पढ़ाई पूरी कर शांतिनिकेतन से चलने लगे तो अपने गुरु आचार्य नंदलाल बसु का आशीर्वाद लेने गए। चरण-स्पर्श करके बैठे तो उन्होंने कहा, 'बेटा, जीवन में सफल मत होना। अपना जीवन सार्थक करना।' उन्होंने सौंदर्य को देखने की दृष्टि दी, प्रकृति के प्रति विस्मय का भाव जगाया और परिक्रमा के लिए पाथेय भी उन्हीं से मिला। उनकी वह बात मैंने अपने सीने पर लिख ली। नर्मदा को समझने-समझाने की मैंने ईमानदार कोशिश की है और मेरी कामना है कि अपना सर्वस्व दूसरों पर लुटाती ऐसी ही कोई नदी हमारे अंत: में बह सके, तो नष्ट होती हमारी सभ्यता शायद बच सके। नगरों में सभ्यता तो है, लेकिन संस्कृति हमारे गाँवों और गरीबों में ही थोड़ी-बहुत बची रह गई है।

वेगड़जी ने अपनी नर्मदा परिक्रमा के कुछ अत्यंत मार्मिक संस्मरण सुनाए। उन्होंने बताया कि अपनी यात्रा के दौरान वे एक बैगा परिवार के यहाँ शाम को पहुँचे। उन्होंने देखा कि वहाँ एक छोटा बच्चा लगातार रोए जा रहा है। उन्होंने पूछा, 'बच्चा रो क्यों रहा है?' परिवार के मुखिया ने उत्तर दिया, 'भूखा है।' उन्होंने कहा कि इसे खाने के लिए कुछ क्यों नहीं देते। उन्होंने अपने थैले से कुछ खाद्य पदार्थ निकालकर बच्चे को देना चाहा तो मुखिया ने उन्हें सख्ती से रोक दिया और कहा, 'आज तो आप इसे खाने के लिए कुछ दे रहे हैं। कल से कौन देगा? इसे तो भूखे रहना सीखना होगा।' उनकी टिप्पणी थी कि ६५ वर्षों की आजादी के बाद हमें विरासत में ऐसा भारत मिला है, जहाँ अब भी बहुत से बच्चों तक को रोटी नसीब नहीं है। उनका यह संस्मरण सचमुच ही हृदयद्रावक था। ऐसे ही उन्होंने एक और गरीब परिवार की कथा सुनाई, जहाँ एक साथ नौ अपरिचित व्यक्ति परिक्रमा करते हुए देर रात को पहुँचे और गृहिणी ने बिना माथे पर एक शिकन लाए, सबके लिए भोजन तैयार किया। उन्होंने सवाल किया कि क्या शहरों में किसी परिवार में ऐसा संभव है?

अपनी वार्त्ता के अंत में उन्होंने कहा कि 'अगर सौ या दो सौ साल बाद किसी को एक दंपती नर्मदा में परिक्रमा करता दिखाई दे, पति के हाथ में झाड़ू हो और पत्नी के हाथ में टोकरी व खुरपी, पति घाटों की सफाई करता हो और पत्नी कचरे को ले जाकर दूर फेंकती हो तो समझ लीजिए कि वे हमीं हैं—कांता और हम।'

वेगड़जी कहते हैं कि कोई वादक बजाने से पहले जैसे देर तक अपने साज का सुर मिलाता है, उसी प्रकार इस जन्म में तो हम नर्मदा परिक्रमा का सुर ही मिलाते रहे। परिक्रमा तो अगले जन्म से करेंगे।

आज के दौर में जब नदियों पर बड़े-बड़े बाँध बनाए जा रहे हैं, प्रदूषण बढ़ता जा रहा है, आगे चलकर नदियों को बचा पाना भी संभव होगा या नहीं, निश्चित तौर पर कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन वेगड़जी अगले जन्म में भी परकम्मावासी रहेंगे, ऐसा उनका विश्वास है। शायद उनके जैसे लोगों की अटल आस्था ही हमारी इन पवित्र, पुण्य सलिला नदियों को बचा सकें और इनका प्रवाह निरंतर बना रहे।

१०१, अर्श कॉम्प्लेक्स, सेक्टर अल्फा-१,
ग्रेटर नोएडा-२०१३०८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृजन स्मरण

अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाने ही होंगे।
तोड़ने होंगे ही मठ और गढ़ सब।

गजानन माधव 'मुक्तिबोध'
(1917 - 1964)

दिल्ली सरकार
दिल्ली टीम - सब की सरकार

सूचना एवं प्रचार निदेशालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेषण की तिथि—पूर्व माह की २५-२६ • पंजीयन संख्या ६२११२/९...
पी डी आर संख्या डी एल (सी)-०१/१२७३/०९-११
यू.(सी) २२२/२००९-११
पी.एस.ओ. नई दिल्ली अग्रिम शुल्क के बिना प्रेषण की अनुमति

शीतकाले भवेत उष्णौ । उष्णकाले शीतलम् ।।

खादी वस्त्रम्

चरखा और खादी प्राचीन दर्शन का प्रतीक है-सादा जीवन उच्च विचार। खादी, संपूर्ण युग में बेरोज़गारी और अर्ध-बेरोज़गारों को आवश्यक जीवन साधन प्रदान करता रहा एवं जनसाधरण को आरामदायक, एवं पर्यावरण के अनुकूल कपड़े प्रदान करता रहा हैं।

एक में दो लाभ प्रदान करने वाला वस्त्र, जैसे ग्रीष्म में शीतलता एवं शीत ऋतु में गर्मी। खादी युवा और फैशनपरक व्यक्तित्व की पसंद बन गयी हैं। अब यह सादा दिखाई देने वाला कपड़ा गरीबों तक ही सीमित नहीं है। खादी वस्त्र मनोहारी, आरामदायक है एवं शीतलता प्रदान करने वाला है, साथ में शुध्दता और शान्ति का प्रतीक हैं। खादी के साथ 115 ग्रामोद्योग सम्मिलित हैं।

पर्यावरण के अनुकूल खादी और ग्रामाद्योगी उत्पाद ही खरीदें।

अपने नजदीकी खादी भवन/भंडार में अवश्य पधारें।

खादी और ग्रामोद्योग आयोग

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय, भारत सरकार
ग्रामोदय, 3, इर्ला रोड, विले पार्ले (प.), मुंबई- 400 056
दूरभाष : 022- 2671 4320/ 2671 6323 वेबसाईट: www.kvic.org.in

"हम भारत में रोजगार सृजन करते है तथा समृद्धी बुनते है"

KVIC

खादी
Khadi India

KVIC ARTWORK/11-12/cal

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल्य : बीस रुपए

साहित्य अमृत

नवंबर २०११ • साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक • मासिक

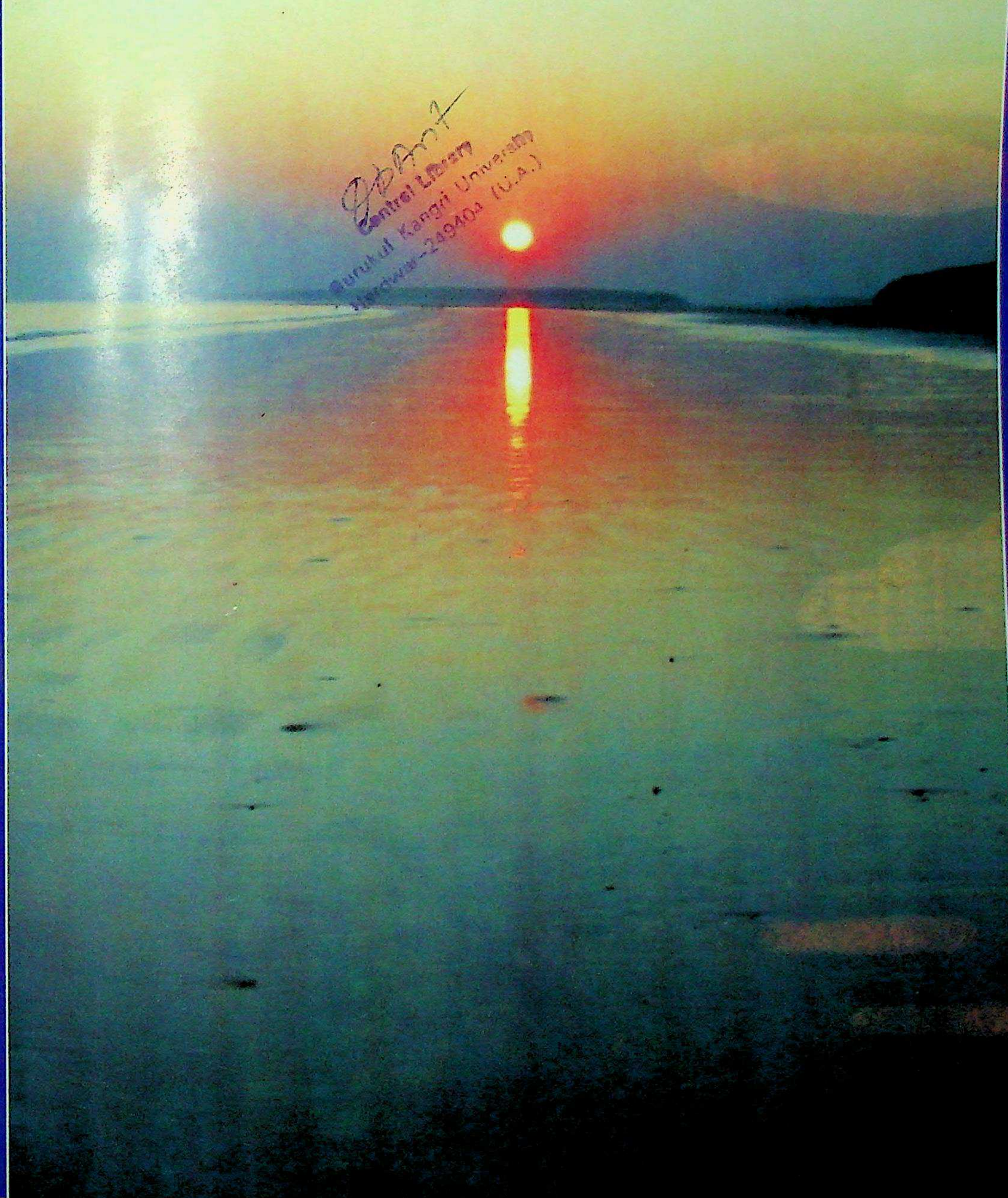

Central Library
Gurukul Kangri University
Haridwar-249404 (U.A.)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुशासन और भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन की दिशा में उठे कदम

- प्रदेश के सभी मंत्रीगण, आई.ए.एस. व आई.पी.एस. अधिकारी आगामी 15 अक्टूबर, 2011 तक अपनी सम्पत्ति की घोषणा करेंगे।
- प्रदेश में लोकायुक्त को और अधिक प्रभावी बनाया जायेगा। मुख्यमंत्री को भी लोकायुक्त के दायरे में लाया जायेगा।
- प्रदेश में लोक सेवा अधिकार व्यवस्था लागू की जायेगी।
- प्रदेश में बेनामी सम्पत्ति को जब्त कर जनहित में उसका उपयोग किया जायेगा।
- इस दिशा में पहल करते हुए सुराज, भ्रष्टाचार उन्मूलन एवं जनसेवा के नाम से अलग विभाग बनाया गया।

सूचना एवं लोक संपर्क विभाग, उत्तराखण्ड

Design by : Leo Advertising

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-१७ अंक-४ ❖ पृष्ठ ६८ कार्तिक-मार्गशीर्ष, संवत्-२०६८ नवंबर २०११

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर

परामर्शदाता (मानद)
ब्रजेंद्र त्रिपाठी

कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क
एक अंक—₹ २०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ २००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ २५०
विदेश में
एक अंक—तीन यू.एस. डॉलर (US$3)
वार्षिक—पैंतीस यू.एस. डॉलर (US$35)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

Central Library Gurukul Kangri University Haridwar-249404 (U.A.)

इस अंक में

संपादकीय
नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना ... ४

प्रतिस्मृति
कानों में कँगना / *स्व. राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह* ९

कहानी
नीम का वो पेड़ / *कैलाश पचोरी* १२
निरता / *नंद किशोर कौशिक* ३६
वही तो! / *मंजुरानी जैन* ४९

आलेख
बिन बुलाए मेहमान / *लाला लाजपत राय* १६
लोक में बाल साहित्य / *श्रीप्रसाद* २६
...जो जन जननी मुक्ति हित / *रुद्रदत्त चतुर्वेदी* ४४

स्मरण
कालजयी उपन्यासों के रचयिता देवकीनंदन खत्री / *ध्रुव कुमार* २०

व्यंग्य
कबीर : एक नूतन चिंतन / *शशिकांत सिंह 'शशि'* २२

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
चार कविताएँ / *सस्मिता मिश्र* ३०

राम झरोखे बैठ के
संकट में स्वर्ग / *गोपाल चतुर्वेदी* ३२

यात्रा-वृत्तांत
गढ़वाल के चारों धाम की यात्रा / *रामनारायण सिंह 'मधुर'* ४०

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
कारीगरी / *जॉन गाल्सवर्दी* ४६

लोक-साहित्य
कन्नौजी लोक-संस्कृति और लोकगीत / *कृष्ण कांत दुवे* ५३

अंततः
मैथिलीशरण गुप्त का साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय प्रदेय / *ब्रजेंद्र त्रिपाठी* ६४

कविता
स्नेहमयी चौधरी १५
नंददुलारे वाजपेयी १९
भगवानदीन 'दीन' १९
कुसुमवीर सिंह ३५
अशोक अंजुम ५२
नवनीत गांधी ५६

वर्ग पहेली ५७
पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ५८
साहित्यिक गतिविधियाँ ५९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

संपादकीय

नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना, २-जी स्पेक्ट्रम घोटाला और सरकार, सूचना अधिकार अधिनियम में संशोधन का प्रयास, विचार व्यक्त करने के अधिकार पर आक्रमण, जयंती मनाने की नीति में भेदभाव क्यों?

कुछ दिनों पहले एक अंग्रेजी समाचार-पत्र में पढ़ने को मिला कि बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार पूर्व राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलाम से मिले, क्योंकि डॉ. कलाम ने नालंदा विश्वविद्यालय से अपने को संबंधित करने के अपने पूर्व निर्णय को बदल दिया। नीतीश कुमार उनसे अनुरोध करने आए थे कि वे अपने निर्णय पर पुनर्विचार करें। सुना जा रहा था कि डॉ. कलाम को 'विजिटर' का ओहदा स्वीकार कराने की कशमकश थी। काफी प्रयास के बाद भी नीतीश कुमार डॉ. कलाम को मनाने में असफल रहे। वैसे अभी यह विश्वविद्यालय जमीनी हकीकत नहीं है, कागजों में ही है। विश्वविद्यालय के शुरू होने के पहले ही डॉ. कलाम के त्यागपत्र देने से कुछ विस्मय हुआ। अपने नए निर्णय और उस पर नीतीश कुमार के आग्रह पर भी अडिग रहने के कारणों पर किसी ओर से कोई जानकारी नहीं प्राप्त हुई। उत्सुकता हुई कि जिस आधुनिक नालंदा विश्वविद्यालय की पुनर्स्थापना की परियोजना से देश में एक उत्साह की लहर दौड़ गई, आखिर उसमें कहाँ तक प्रगति हुई? यह जानने की इच्छा हुई कि भारतीय इतिहास में नालंदा एक प्रख्यात अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय के स्तर का शिक्षा केंद्र और उसके अनुरूप जो विश्वविद्यालय बनने जा रहा है, उस दिशा में क्या प्रगति हुई है। खासकर इस कारण भी कि दिल्ली में सार्क के अंतर्गत जो दक्षिण एशियाई विश्वविद्यालय निर्मित करने का निश्चय हुआ, उसमें सब कठिनाइयों के होते हुए भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है। कुछ विधाओं या शैक्षणिक अनुशासनों में अध्ययन और अध्यापन तथा शोध प्रारंभ हो रहा है।

आधुनिक नालंदा विश्वविद्यालय की परिकल्पना दक्षिण एशिया के देशों, जैसे चीन, जापान, ऑस्ट्रेलिया, कोरिया और थाईलैंड आदि करीब १६ देशों ने प्रस्तावित की थी। भारत सरकार ने इसमें पहल की, जो सर्वथा उचित था। भगवान् बुद्ध की शिक्षा और ज्ञान भारत से ही अन्य देशों में गया। नालंदा विश्वविद्यालय की एक वृहद रूपरेखा और उसको साकार करने का एक नक्शा प्रस्तावित करने के लिए एक 'मेंटर ग्रुप' मार्गदर्शक एक विद्वान् अंतरराष्ट्रीय प्रख्यात अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन की अध्यक्षता में नियुक्त हुआ था। उससे अपेक्षा नौ महीनों में अपनी रिपोर्ट देने की थी। पर अभी तक रिपोर्ट नहीं आई है। इसी बीच यह सुना जाता है कि चीन ने एक अलग बुद्धिस्ट यूनिवर्सिटी की रूपरेखा बनाई है, जिसके लुंबिनी (नेपाल) में स्थापित होने की संभावना है। वैसे मेंटर ग्रुप की बैठक सिंगापुर, टोक्यो, न्यूयॉर्क, नई दिल्ली और गया में हो चुकी है। बैठकों पर २ करोड़ से अधिक खर्च हो चुका है। कानूनी जामा पहनाने के लिए संसद् ने कानून पारित किया और उसकी विधिवत् घोषणा सरकारी गजट में २२ सितंबर, २०१० को हो गई। अगर नालंदा विश्वविद्यालय को नवजात शिशु कहें भी तो वह पैदा होते ही विवादों में घिर गया है। यह परिचायक है सरकार के काम करने के ढंग और वाहवाही लूटने की प्रवृत्ति का, पारदर्शिता को बराये ताक पर रखकर। एक प्रश्न के उत्तर में विदेश राज्यमंत्री डॉ. अहमद ने राज्यसभा में कहा कि विश्वविद्यालय का अभी कोई कुलपति नियुक्त नहीं किया गया है, किंतु विदेश मंत्रालय के संयुक्त सचिव ने एक सूचना अधिकार के अंतर्गत प्रश्न के उत्तर में बताया कि मेंटर ग्रुप की सिफारिश पर डॉ. गोपा सबरवाल को विधिवत् विदेश मंत्रालय के सचिव के हस्ताक्षर से नियुक्त कर दिया गया है। ध्यान देने की बात है कि राष्ट्रपति ने नालंदा यूनिवर्सिटी के कानून को स्वीकृति २१ सितंबर को दी और यह नियुक्ति ९ सितंबर को ही कर दी गई। दरअसल, कानून लागू होने की तारीख २५ नवंबर, २०१० है। यही नहीं, डॉ. गोपा सबरवाल रीडर अथवा एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर लेडी श्रीराम कॉलेज में रही हैं। केवल एक प्रत्याशी की सिफारिश की गई, जब ऐसे पदों के लिए रिवाज और नियम हमेशा कम-से-कम तीन लोगों के पैनल का है। वैसे भी, विश्वविद्यालय आयोग के अनुसार कम-से-कम दस वर्ष प्रोफेसर रहने के बाद कोई प्रोफेसर उपकुलपति के पद पर नियुक्ति हो सकता है। अन्य योग्यताओं को ध्यान में रखते हुए वैसे भी कुलपति की नियुक्ति का अधिकार कानून में राष्ट्रपति या उनके द्वारा नियुक्त विजिटर को है। डॉ. सबरवाल की तनख्वाह ५ लाख रुपए से कुछ अधिक नियत की गई है, जो जे.एन.यू. या दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति से कहीं अधिक है। वे केवल एसोसिएट प्रोफेसर यानी रीडर के पद पर थीं। पूरी तरह से यू.जी.सी. के सब मानकों को दरकिनार कर दिया गया है। चयन प्रक्रिया में पारदर्शिता का कोई स्थान नहीं था। डॉ. सबरवाल के क्या सुर्खाब के पर लगे हुए है और क्या विशिष्ट योग्यताएँ और अनुभव उनके हैं, जिसके आधार पर उनको मेंटर ग्रुप ने चुना। ऐसी पारदर्शिता है, हमारे महत्त्वपूर्ण शिक्षा सुझाव प्रक्रिया की।

हर प्रकार नियमों की अनदेखी कर कुलपति ने दिल्ली विश्वविद्यालय की एक और एसोसिएट प्रोफेसर (रीडर) डॉ. रंजना शर्मा को प्रतिनियुक्ति (डेपुटेशन) पर विशेष अधिकारी ओ.एस.डी. नियुक्त किया ३.३० लाख

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिमाह पर, जो देश के सभी कुलपतियों की तनख्वाह से ज्यादा है। इस प्रकार की आपाधापी क्यों? मेंटर ग्रुप ने सिंगापुर की अपनी पहली बैठक में एक परामर्श समिति बनाई थी, जिसके १९ सदस्य हैं। भारत से इसमें डॉ. उपिंदर सिंह, प्रोफेसर इतिहास विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, जो प्रधानमंत्री की सुपुत्री हैं और उन्हीं के विभाग की डॉ. नयनजोत लाहिड़ी को भारत से नामित किया गया है। शिक्षा क्षेत्र में खानापूर्ति हो रही है और यह सब आपसी मित्रता का खेल है। डॉ. सबरवाल का स्पष्टीकरण यही है कि नालंदा विश्वविद्यालय का कानून यू.जी.सी. से अलग है और उनकी योग्यता को आँककर ही मेंटर ग्रुप ने उनकी नियुक्ति की होगी। अब वे अमेरिका कुछ और संस्थान देखने के लिए जाने वाली है। नए अनुभव नालंदा विश्वविद्यालय के काम आएँगे।

बिहार सरकार ने ४४६ एकड़ भूमि पुराने नालंदा विश्वविद्यालय के प्रांगण के समीप ही उपलब्ध करा दी है। डॉ. कलाम जब २००६ में राष्ट्रपति की हैसियत से बिहार के दौरे पर गए थे, अत्यंत उत्साह से नए अंतरराष्ट्रीय शिक्षा केंद्र या विश्वविद्यालय की बात उठाई थी और पुरजोर सिफारिश की थी। उसी उत्साह से मुख्यमंत्री नीतीश कुमार पूरा सहयोग दे रहे हैं। डॉ. कलाम के मन में नए विश्वविद्यालय की तसवीर क्या है, उसको भी उन्होंने बताया था कि वहाँ प्राचीनता और आधुनिकता का सम्मिलन हो। आज के विज्ञान, तकनीकी के साथ-साथ अध्यात्म और दर्शन आदि का भी अध्ययन, अध्यापन और शोध होना चाहिए। भगवान् बुद्ध और उनके द्वारा प्रसारित शिक्षा का पर्यवेक्षण तो ध्यान में रखना ही होगा, यदि विश्वविख्यात पूर्व नालंदा की थाती को हम आज सजीव बनाना चाहते हैं। प्रश्न उठ रहे हैं कि जिन लोगों को दायित्व दिया गया है, उनका इस दिशा में कितना ज्ञान है, कितनी क्षमता है।

जब कोई महान् योजना प्रारंभ होती है तो उसका मुख्य कार्यालय वहीं कहीं आसपास होता है, चाहे कितनी भी असुविधाएँ हों। एक छोटा कार्यालय दिल्ली में रख सकते थे, यदि मंत्रालय से कुछ मंत्रणा अकसर करनी है। वैसे इन सब कठिनाइयों का निराकरण बिहार के मुख्यमंत्री स्वयं ही कर सकते या अपने संबंधों से ही उनका निराकरण करा देते। जो कानून पास हुआ है, उसके अनुसार भी मुख्यालय नालंदा में होना चाहिए। पर कुलपति महोदया ने उसके लिए दिल्ली के आर.के. पुरम में एक इमारत करीबन २.५ लाख रुपए महीने किराए पर जनवरी २०११ से ले ली है, जहाँ से वह और उनकी सहयोगी नालंदा विश्वविद्यालय का कामकाज देख रहे हैं। एक और तमाशा है कि विदेश मंत्रालय के अंतर्गत यह विश्वविद्यालय है। वैसे भारत सरकार के जो कामकाज के नियम हैं, उसके अनुसार विदेश मंत्रालय अधिकृत नहीं है विश्वविद्यालय चलाने के लिए। यह तब संभव है, यदि इस विषय में अन्य देशों से कोई समझौता हुआ है। नालंदा विश्वविद्यालय के बारे में अभी तक कोई इस प्रकार का समझौता नहीं हुआ है, जैसा कि दक्षिण एशियाई विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए हुआ। वैसे भी नालंदा विश्वविद्यालय का सामंजस्य और समन्वय मानव संसाधन मंत्रालय और संस्कृति मंत्रालय से अत्यावश्यक है। मंत्रालय की स्थायी समिति की रिपोर्ट के अनुसार, जब नालंदा विश्वविद्यालय की परियोजना पर वर्ष २००७ में विचार हुआ था तो करीब १,००५ करोड़ रुपए के व्यय का अनुमान था। अब उसके कहीं अधिक होने की संभावना है। दिक्कत यही है कि बिना गहराई में जाए हम वाहवाही लूटना चाहते हैं। इसी कारण एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण उद्देश्य प्रश्नों के घेरे में आ गया है। विवाद और दोषारोपण नालंदा विश्वविद्यालय को और भी पीछे ढकेल देंगे। यह चिंता का विषय है।

□

घोटालों का चक्रव्यूह सरकार को मुक्ति देता नहीं दिखाई दे रहा है। चाहे वह कॉमनवेल्थ खेलों का हो या आदर्श हाउसिंग अथवा २-जी। नए-नए मामले भी सामने आ रहे हैं, जैसे पेट्रोलियम मंत्रालय का तेल संभावनाओं की खोज में रिलायंस से हुए अनुबंध या एयर इंडिया द्वारा हवाई जहाजों की खरीद-फरोख्त, अच्छी आमदनी देनेवाले हवाई रास्तों को निजी अथवा विदेशी कंपनियों के लिए छोड़ देना, एयर इंडिया का बढ़ता हुआ घाटा, जिसके लिए सरकार द्वारा वित्तीय सहायता। क्या वस्तुस्थिति है और कौन इसके लिए उत्तरदायी है? पर यहाँ हम केवल २-जी घोटाले में जो नए गुल खिल रहे हैं, उनकी थोड़ी सी चर्चा करना चाहेंगे। जो भी मामला हो, जब अदालत में जाता है तो सरकार की गड़बड़ी और हड़बड़ी दोनों उजागर होती हैं। क्या कहें और क्या न कहें, सरकार की समझ में नहीं आ रहा है। अलग-अलग संस्थाएँ अलग-अलग बयान एक ही विषय पर देती हैं, जिससे जनता में भ्रम और फैलता है तथा सर्वोच्च न्यायालय को भी खरी-खोटी सुनानी पड़ती है और बगलें झाँकने के अलावा कोई और रास्ता नहीं सूझता। २-जी घोटाले में सरकार की ओर के वकील चाहते थे कि सर्वोच्च न्यायालय सी.बी.आई. की मॉनिटरिंग या सीधी देखभाल समाप्त कर दे। सरकार और न्यायपालिका के अधिकार सीमाओं की ओर ध्यान दिलाने के लिए लक्ष्मण-रेखा की आवश्यकता पर भी बल दिया गया। एक न्यायाधीश ने याद दिलाया कि यदि सीता लक्ष्मण-रेखा का उल्लंघन न करतीं तो रावण नहीं मारा जाता। पूरे प्रकरण के संदर्भ में इस ताने के भावार्थ को आसानी से समझा जा सकता है। पिछले दिनों जो तथाकथित रस्साकशी गृहमंत्री चिदंबरम और वित्तमंत्री प्रणव मुखर्जी के बीच हो रही थी, उसको सबने टी.वी. चैनलों में देखा और पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ा। यू.पी.ए. के अध्यक्ष के आदेश से जिस प्रकार उस प्रकरण का समापन हुआ और जिस रूप में हुआ, वह भी सबने देखा। पर प्रणव मुखर्जी ने स्पष्ट कर दिया कि जो २-जी के बारे में विशद टिप्पणी बनाई गई थी, जो पी.एम.ओ. की पहल लिए थी, उसमें तत्कालीन कैबिनेट सचिव ने भी सुझाव दिए थे और वह केवल वित्त मंत्रालय की टिप्पणी नहीं थी। उस दस्तावेज से तात्पर्य यही निकलता है कि सभी की सम्मिलित जिम्मेदारी उस टिप्पणी के संबंध में है, केवल उनके मंत्रालय की ही नहीं। जो वस्तुस्थिति उसमें वर्णित है, उसके मतलब तो अदालतें और जन-साधारण निकालेंगे। यह दस्तावेज भी सूचना अधिकार के अंतर्गत उपलब्ध हुआ। वैसे कानून मंत्री सलमान खुर्शीद ने इसको ऑफिस मेमोरेंडम केवल एक कनिष्ठ अधिकारी द्वारा ऑफिस का नोट है, यह कहकर उसकी गंभीरता को कम करने की कोशिश की है, पर वह सरकारी मेमोरेंडम अधिकृत है, इस बात को झुठलाया नहीं जा सकता है। वैसे डॉ. सुब्रमण्यम स्वामी की चिदंबरम के खिलाफ जाँच कराने की याचिका सर्वोच्च न्यायालय सुन रहा है। उसके निर्णय का इंतजार है। डॉ. स्वामी ने और भी दस्तावेज पेश किए हैं, नए तथ्य सामने आ रहे हैं, जिनसे यह कयास समाचार पर्यवेक्षकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का है कि चिदंबरम भी पूरे मामले में राजा की तरह कठिनाई में पड़ सकते हैं। हम दस्तावेजों के विवेचन में अभी नहीं जाना चाहते हैं। इतना कहना पर्याप्त है कि जो नए दस्तावेज सामने आए हैं, उनके आधार पर एक प्रसिद्ध अंग्रेजी साप्ताहिक ने अपने १७ अक्तूबर के अंक में गृहमंत्री चिदंबरम के लिए पाँच प्रश्न या मुद्दे स्पष्टीकरण देने के लिए प्रस्तुत किए हैं। अपने पूरे विश्लेषण से यह भी निष्कर्ष पत्रिका ने निकाले हैं कि इस घोटाले का मामला चिदंबरम तक ही नहीं समाप्त होता है, वह आगे भी जाता है। प्रधानमंत्री के गठबंधन का धर्म या उसकी बाध्यताओं वाला तर्क विधिवेत्ताओं के गले नहीं उतरता है। संविधान ने तो संयुक्त उत्तरदायित्व ही निर्देशित किया है।

जमानत के अनुरोध की याचिका, जबकि सर्वोच्च न्यायालय २-जी मामले में गिरफ्तार आरोपियों को सुन रहा है, उसी समय विधिमंत्री सलमान खुर्शीद का बयान एक अंग्रेजी दैनिक पत्र में आया कि सब संबंधित संस्थाओं को देश की राजनीतिक अर्थव्यवस्था को समझना चाहिए, यदि हम कॉरपोरेट के अधिकारियों को जेल भेजते रहेंगे तो देश के विकास के लिए निवेश कौन करेगा। जो संदर्भ आज देश के सामने प्रमुखता से है, उसके कारण सलमान खुर्शीद के बयान ने सबको चौंका दिया। यह एक प्रकार से सर्वोच्च न्यायालय को अपरोक्ष रूप में प्रभावित करने वाला बयान है। क्या मंत्री कहना चाहते हैं कि न्यायपालिका देश की आर्थिक व्यवस्था से अपरिचित है। जेल तो केवल न्यायपालिका ही भेज सकती है। पुलिस कानून के अनुसार कभी हिरासत में संदिग्ध व्यक्ति को जरूर ले सकती है, पर उसे भी अदालत के सामने २४ घंटे के बाद पेश करना होता है। तो क्या सर्वोच्च न्यायालय कुछ बड़े उद्योगपतियों एवं उच्च अधिकारियों की जमानत नामंजूर कर देश की विकास-गति को अवरुद्ध कर रही है। न्यायाधीशों ने भी अपनी नाराजगी जाहिर की, आखिर उस बयान की मंशा क्या है। न्यायाधीशों ने सी.बी.आई. को भी आड़े हाथों लिया कि अभी तक जाँच पूरी नहीं कर पाए है, सात महीने से आरोपी जेल में है तो क्यों नहीं उनको छोड़ दिया जाए। बयान की सर्वोच्च न्यायालय के दो पूर्व मुख्य न्यायाधीशों ने काफी भर्त्सना की, अन्य विधिवेत्ताओं और पत्र-पत्रिकाओं में आलोचनाएँ हुईं और हो रही हैं। एक सरकारी वकील ने जजों का ध्यान फौजदारी कानून पर पेश की गई जस्टिस मलिमठ की रिपोर्ट का जमानत देने के मामले में सुझावों का ज़िक्र किया तो अदालत ने पूछा कि क्या सरकार ने उसे स्वीकार कर लिया है। वकील निरुत्तर हो गए, क्योंकि रिपोर्ट तो सरकार के ठंडे बस्ते में अभी तक पड़ी है। हर तरफ से आलोचनाओं की बौछार को देखते हुए मंत्री महोदय ने पैंतरा बदला और कहा कि उन्होंने जो कहा, वह किसी विशेष मुकदमे के मद्देनजर नहीं कहा। वह एक सामान्य स्वतःस्फूर्त या सवाल के जवाब में उत्तर दिया था। उनके लिए न्यायपालिका सदैव सम्मानित है। उन्होंने जो कहा, वह गलत समझा गया। पर लोग मंत्री की लीपापोती से संतुष्ट नहीं हैं। यह हम समझते हैं कि सोच-समझकर दिया हुआ बयान है और उद्योगपति या बड़े अधिकारियों की गिरफ्तारी को निवेश तथा आर्थिक विकास से जोड़ दिया गया। उनके बयान से तो यही मतलब निकलता है कि बेईमानी की भी अनदेखी की जाए, जैसा दुर्भाग्य से अभी तक होता रहा है यदि निवेश का प्रश्न हो। रूल ऑफ लॉ या कानून के अनुसार, संविधान की कार्यवाही का यह बयान धज्जियाँ उड़ाता है। कानून सब पर बराबर उसी प्रकार से लागू होना चाहिए, संवैधानिक मान्यता यही है, चाहे कोई व्यक्ति हैसियतदार हो अथवा न हो। अपराधी के रूप में दोनों बराबर हैं। जनवरी के पहले पत्र के बाद पुनः हाल ही देश के विख्यात नागरिकों के एक ग्रुप ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखा है, जिसमें निवेश के लिए स्वच्छ वातावरण बनाने की बात, सुधार के अगले आवश्यक कदम उठाने, सरकार के पारदर्शिता से कार्य करने और जो दूषित संबंध और साझेदारी बेईमान कॉरपोरेट सेक्टर, नौकरशाही और राजनेताओं से देश में हो गई है उसको समाप्त किए जाने की सिफारिश की गई है। तभी सरकार की विश्वसनीयता बढ़ेगी और द्रुतगति से निवेश होगा। यह पत्र सभी राष्ट्रीय अखबारों में छपा है। सलमान खुर्शीद खुद कॉरपोरेट मामलों के मंत्री रह चुके एक अच्छे कानूनदां और सफल एडवोकेट कहे जाते हैं और आज देश के विधि मंत्री हैं। यह विडंबना ही है कि वे इस प्रकार के विचार प्रकट करें, जिसमें वे कानून की अवहेलना करनेवालों को विकास और आर्थिक निवेश के नाम पर एक प्रकार से संरक्षण की गंध आए। क्या यह एक गलत संदेश सर्वसाधारण के लिए नहीं है?

□

प्रशांत भूषण पर १२ अक्तूबर को तीसरे पहर सर्वोच्च न्यायालय के उनके अपने चैंबर में घुसकर कुछ लोगों ने हमला किया और मारपीट की। कुछ परचे भी उन लोगों ने बाँटे। बताया गया है कि ये लोग तथाकथित राम सेना और भगतसिंह क्रांति सेना के सदस्य हैं। आक्रमण करनेवालों में एक व्यक्ति पकड़ा गया और दूसरे भाग गए। उनमें से दो को पुलिस ने बाद में गिरफ्तार किया और वे जमानत पर हैं। दूसरे दिन अदालत के बाहर प्रशांत भूषण और अन्ना हजारे के समर्थकों तथा राम सेना एवं भगतसिंह क्रांतिकारी दल के समर्थकों में झगड़े हुए। बताया गया चूँकि सेना समर्थक ज्यादा तादाद में थे, वे प्रशांत भूषण के समर्थकों पर उस मुठभेड़ में हावी रहे और कुछ को बुरी तरह पीटा और उन्हें चोट आई है। दिल्ली पुलिस जाँच-पड़ताल कर रही है। प्रशांत भूषण के ऊपर आक्रमण को हम असहनीय कहेंगे? हम इन पूरी घटनाओं की भी भर्त्सना करते हैं और चाहते हैं कि आरोपियों को सख्त सजा दी जाए, ताकि इस तरह की हरकत करने की वे फिर हिम्मत न करें। पुलिस को दूसरे दिन अधिक सतर्क रहना चाहिए था। हम पहले भी किताबों को जब्त करने या फाड़ने, जलाने, बैठकों में जाकर हस्तक्षेप करने, मारपीट करने, तसवीरों आदि के प्रदर्शनियों को तहस-नहस करने की कोशिश की सख्त आलोचना करते रहे हैं। प्रजातंत्र में मत-विरोध के कारण हिंसा का सहारा लेना और कानून हाथ में लेना सर्वथा वर्जित है।

प्रशांत भूषण जाने-माने सामाजिक सक्रिय कार्यकर्ता और एडवोकेट हैं। उन्होंने सूचना के अधिकार और जनहित याचिकाओं द्वारा समाज और देश के हित में प्रशंसनीय कार्य किए हैं। पिछले दिनों अन्ना आंदोलन में भी उन्होंने एक उल्लेखनीय भूमिका निभाई थी। वे अपने विचारों या सिद्धांतों पर दृढ़ रहते हैं। उनके ऊपर हमले का कारण बताया गया कि उन्होंने जम्मू व कश्मीर से सेना वापस बुलाने और कश्मीर में जनमत-संग्रह कराने की बात कही। कुछ और लोगों ने पहले भी इस प्रकार अपने मत प्रकट किए है और आज भी करते हैं। उससे हमारा सबका सहमत होना जरूरी नहीं है। हम इस प्रकार की विचार धारा के विरोधी हैं, पर हर व्यक्ति को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शांतिपूर्ण ढंग से अपने विचार प्रकट करने का अधिकार है। तर्क का उत्तर तर्क से दिया जाना चाहिए, मारपीट के द्वारा नहीं। सभी विचारशील व्यक्तियों ने और करीब-करीब सभी राजनीतिक दलों ने प्रशांत भूषण के साथ किए गए दुर्व्यवहार की कड़ी निंदा की है। सरकार को ऐसी हरकत करनेवालों के खिलाफ शीघ्र ही सख्त-से-सख्त कदम उठाने चाहिए। हम एक जागरूक प्रजातंत्र हैं और हमारा व्यवहार उसके अनुसार होना चाहिए। इधर हमारे सर्वोच्च न्यायालय ने एक संवैधानिक प्रणाली का एक शानदार उदाहरण पेश किया है। कसाब, जो २६/११ मुंबई कांड का एकमात्र बचा हुआ अभियुक्त है, उसके लिए एक वकील की व्यवस्था की, जो उसके बचाव पक्षको उचित ढंग से अदालत में रख सके। भारत में 'रूल ऑफ लॉ' अथवा कानून का राज्य है, यह दुनिया देख सकेगी। वैसे कसाब की हत्यारी भूमिका को विश्व देख चुका है। सर्वोच्च न्यायालय के कदम से बहुत लोग इसको व्यर्थ की देरी समझे। पर सर्वोच्च न्यायालय के इस कदम से प्रजातंत्र की न्याय प्रणाली और प्रजातंत्र की साख और विश्वसनीयता ही बढ़ेगी।

इस संदर्भ में हम याद दिलाना चाहेंगे कि पिछले दिनों अहमदिया या कादियानी कहे जानेवाले मुसलमानों ने कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में अनेक स्थानों से छपी कुरान की पुस्तकों की एक प्रदर्शनी आयोजित की। पाकिस्तान में अहमदियों को इसलाम से बहिष्कृत किया है, भारत ने नहीं, क्योंकि यहाँ विचारों की स्वतंत्रता है। वहाँ उनको मुसलमान नहीं मानते। वजाहत हबीवुल्ला, जो अल्संख्यक आयोग के इस समय अध्यक्ष हैं, नुमाइश देखने गए और कहा कि उन्हें उससे कोई एतराज नहीं है। पर इमाम बुखारी के नेतृत्व में वहाँ भीड़ गई, उन्हें डराया-धमकाया तथा आयोजकों को तीन दिन चलनेवाली कुरान शरीफ के विभिन्न प्रकाशनों और संस्कारों की नुमाइश दूसरे दिन ही पुलिस के कहने-सुनने से बंद करनी पड़ी। पुलिस ने इमाम बुखारी और उसके गुर्गों पर कार्यवाही न कर आयोजकों पर जोर डाला। यह अनुचित था। ऐसा ही व्यवहार जाती मसजिद के पास रहनेवाली एक महिला मुसलिम एक्टिविस्ट के साथ हुआ है, चूँकि वहाँ जो अतिक्रमण हो रहे और हुए हैं, उनका एक नागरिक की तरह वह विरोध कर रही है। उसके घर और परिजनों पर हमला हो चुका है। हमले को बुखारी का संरक्षण प्राप्त बताया जाता है। पुलिस को ऐसे मामलों में निडर और निष्पक्षता से आचरण करना चाहिए और उन सब असामाजिक तत्त्वों के खिलाफ कार्यवाही करनी चाहिए। इमाम बुखारी कानून के ऊपर नहीं है। पर पुलिस की निष्क्रियता पहले उनके पिता के समय थी और वही शिथिलता अभी भी दिखाई पड़ती है। खैर, हम पुनः यह कहना चाहेंगे कि प्रशांत भूषण के प्रकरण में दिल्ली पुलिस अपराधी तत्त्वों के विरुद्ध शीघ्रता और प्रभावी ढंग से कार्यवाही करेगी, ऐसी हम अपेक्षा और आशा करते हैं। अन्य इसी प्रकार अन्य कट्टरपंथी जो ज्यादातियाँ करते है उनपर भी सरकार ध्यान देगी।

☐

यू.पी.ए. सरकार हमेशा इस बात का श्रेय लेती है और स्मरण दिलाती है कि सूचना का अधिकार कानून पारित करवाकर उसने जनता को शक्तिवान बनाया है। उसका यह भी कहना है कि एन.डी.ए. के समय एक कानून पास हुआ, राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत हुआ, पर वह लागू नहीं हुआ। यह सही है। तत्कालीन एन.डी.ए. सरकार कानून को और अधिक प्रभावी बनाने के पसोपेश में या अन्य कारणों से तुरंत लागू नहीं कर सकी, इसकी जानकारी नहीं है। किंतु आज स्थिति यह है कि सूचना अधिकार के प्रयोग से कोई भी नागरिक अपने व्यक्तिगत मामलों में और सार्वजनिक हित के विषयों के बारे में जानकारी हासिल कर लेता है, जिसको सरकारी तंत्र छिपाना चाहता है। इस कानून से सर्वसाधारण को काफी राहत मिली है। नौकरशाही भी कुछ अधिक चैतन्य दिखती है, क्योंकि कानून में दंड का प्रावधान है। पारदर्शिता के कारण प्रशासन के अधिक सक्षम और उत्तरदायी होने की संभावनाएँ बढ़ी हैं। लेकिन देखा गया कि सरकार में कानून के लागू होने के कुछ समय बाद से ही कुलबुलाहट शुरू हो गई और कुछ कानूनी परिवर्तनों को लाने की कोशिश प्रारंभ की गई; पर जनता, समाचार जगत और सामाजिक कार्यकर्ताओं के विरोध के कारण सरकार ने अपने कदम पीछे कर लिये और उन परिवर्तनों का इरादा छोड़ दिया। एक-आध संशोधन हो गए और उनका कोई संगठित विरोध नहीं हुआ। उस समय जोर संशोधनों के लिए नहीं, संभवतः नौकरशाही को अपने बचाव के लिए था। पर अब हालात कुछ बदल से गए हैं। जब से सूचना अधिकार नियम के द्वारा कुछ जानकारियाँ घोटालों के मामले में सामने आईं, जिनके राजनीतिक पहलू हैं तो सरकार के राजनेता सहम गए। विशेषतया जब से पी.एम.ओ. से वे दस्तावेज अथवा ऑफिस मेमोरैंडम आर.टी.आई. के द्वारा जनता की जानकारी में आए, जिनसे मंत्रियों की आपस की खींचातानी का पता चला और जिन दस्तावेजों से २-जी घोटाले के कुछ नए पत्ते खुलने की संभावना है, सरकार अधिक सशंकित और चिंतित है। राजनेताओं की कारगुजारियाँ जब उजागर होने लगीं तो कानून में संशोधन के लिए राजनीतिक दबाव मुखरित होने लगा। विस्मयजनक यह है कि इसकी बात सर्वप्रथम पूर्व कानून मंत्री डॉ. मोइली ने चलाई। अब वे कॉरपोरेट एफेयर्स मिनिस्टर और कंपनी विभाग के मंत्री हैं। वे दूसरे प्रशासनिक सुधार कमीशन के अध्यक्ष रहे हैं और प्रशासन जवाबदेही व पारदर्शिता के पक्षधर रहे हैं। यह अब उन्होंने अखबारवालों से एक साक्षात्कार में कहा कि सूचना अधिकार का कुछ लोग दुरुपयोग करते हैं और इसके स्कोप के बारे में राष्ट्रीय बहस होनी चाहिए। असली मंशा यही कि इस तरह कानून में तब्दीली हो जाए कि कहने को कानून रहे, पर वह निष्प्रभावी और भोथरा बना दिया जाए। कोई सरकारी या राजनीतिक संवेदनशील मामला सरकार की इच्छा के बगैर जनता के संज्ञान में न आ सके, यही असली मंशा है। अगर सचमुच कुछ दुरुपयोग होता है तो सावधानी से उसे कानून के अंतर्गत ही रोका जा सकता है, न कि कानून के मुख्य उद्देश्य को ही भुला दिया जाए। एक अंग्रेजी कहावत है कि गंदे पानी को फेंकने के साथ बच्चे को नहीं फेंका जाता है। इसके बाद इसी बात को दूसरे शब्दों में विधिमंत्री ने दोहराया कि सरकारी कामकाज में अकसर सरकारी कामों के कारण बाधा पड़ती है और उस दृष्टि से पुनर्विचार इस कानून के बारे में होना चाहिए। तो सलमान खुर्शीद ने यह भी कहा कि न्यायपालिका को भी कभी-कभी उससे दिक्कत होती है। वैसे पी.एम.ओ. ने २-जी घोटाले के बाद शुंगलू कमेटी की रिपोर्ट पर पी.एम.ओ. में क्या कार्यवाही हुई, इसके बारे में सूचना देना मना कर दिया। पर कॉमनवेल्थ के घोटाले के बारे में अब कुछ गोपनीय शायद ही रहा है। अन्य घोटालों में आजकल सरकार परेशानी में है और गोपनीयता में ही बचाव संभव है, यह सोचती है। मजे की बात यह है कि सरकार के वरिष्ठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंत्री एंटोनी ने कुछ समय पहले कहा था कि जनता में जागरूकता फैल रही है और सूचना अधिकार का और अधिक इस्तेमाल होगा, इससे प्रजातंत्र मजबूत होगा। नागरिक के कारण सशक्तीकरण का यह कानून एक बड़ा साधन है। यू.पी.ए. अध्यक्ष की राष्ट्रीय परामर्श परिषद् (एन.ए.सी.) के दो सदस्यों ने कानून में किसी संशोधन के इरादे की कड़ी आलोचना की है। उसकी राय के बिना सरकार के लिए कोई परिवर्तन संभव नहीं मालूम होता है, आज जो परिस्थिति सत्ता दल की है। यदि इस प्रकार का कोई प्रयास किया भी जाए तो संपूर्ण देश की जनता को उसका विरोध करना होगा। शायद सरकार को इस मामले को न उठाने की सद्बुद्धि आ जाए। पूर्व चीफ कमिश्नर वजाहत हबीबुल्ला ने भी ऐसे कदम को प्रतिक्रियावादी कहा है। उनका कहना है कि इस कानून से तो सरकार की कार्य-कुशलता में बढ़ोतरी होगी, जनता को संतोष होगा और सरकार में लोगों का विश्वास बढ़ेगा। वास्तव में इस कानून को और अधिक प्रभावी बनाने की ओर सरकार का ध्यान जाना चाहिए। हम समझते हैं कि मंत्रियों के बयान हवा का रुख जानने के लिए दिए गए हैं। वे स्वयं महसूस कर रहे हैं कि जनता का रुख सूचना अधिकार कानून के साथ छेड़छाड़ करने की इजाजत नहीं देगा। उपर्युक्त लिखने के उपरांत मालूम हुआ कि प्रधानमंत्री ने भी एक सूचना अधिकार विषयों के सम्मेलन में अपने मंत्रियों की बात को दोहराया कि आर.टी.आई. की समीक्षा और विचार-विमर्श की आवश्यकता है, क्योंकि अधिकारी अपनी सही राय प्रकट करने से हिचकिचाते हैं और सरकारी कामकाज पर असर पड़ता है। साथ यह भी कहा कि हम अधिनियम कमजोर नहीं करना चाहते हैं। इस पूरे प्रकरण को हम दुर्भाग्यपूर्ण समझते हैं। यह सब घिसी-पिटी पुरानी दलीलें है। संशोधन के सरकारी प्रयास का विरोध होना चाहिए। यह देश को पीछे ले जानेवाला कदम होगा। उसी सम्मेलन में आज के मुख्य सूचना आयुक्त ने केवल कमीशन को वैधानिक दर्जा देने की माँग की, उन्होंने कुछ वित्तीय स्वतंत्रता का प्रश्न उठाया, ताकि बार-बार सरकार का मुँह न देखना पड़े। अभी तक ऐसे महत्त्वपूर्ण संस्थान का अपना भवन भी नहीं है। प्रधानमंत्री को चिंता इन चीजों की करनी चाहिए, पर अब शायद २-जी घोटाले का भूत सरकार के सिर पर चढ़कर बोल रहा है। आवश्यकता नागरिक के सूचना अधिकार को अधिक मजबूत बनाने की है।

सार्वजनिक आलोचना के बावजूद विधि मंत्री सलमान खुर्शीद और कॉरपोरेट कारोबार के मंत्री मोइली बार-बार दोहरा रहे कि हम केवल समीक्षा करना चाहते है सूचना अधिकार अधिनियम की ताकि सरकार और न्यायपालिका के काम में बाधा न पहुँचे। चतुराई से सलमान खुर्शीद ने न्यायपालिका की तथाकथित दिक्कतो का जिक्र किया है। पब्लिक सेक्टर के एक अधिकारी ने तो यहाँ तक कहा कि यदि सूचना अधिकार नियम न होता तो दो प्रतिशत राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ गया होता। कौन सा उनके पास मापदंड है। केवल जवाबदेही से बचने की तिकड़म है। जनता के अधिकारों के विरुद्ध सरकार की यह छिपी चाल के बारे में जनसाधारण में जन चेतना जाग्रत करना होगा।

☐

हम महामना पं. मदनमोहन मालवीय की १५०वीं जयंती के विषय में सरकार का ध्यान पहले दिला चुके हैं, पर पता नहीं लग रहा है कि सरकार की मंशा क्या है। समाचार-पत्रों में पहले यह लिखा गया कि मालवीयजी की जयंती के बारे में सरकार कुछ हिचकिचा रही है, क्योंकि एक वर्ग उनको हिंदूवादी और प्रतिक्रियावादी समझता है। यह केवल ऐसे लोगों की एक दूषित मनोवृत्ति का परिचायक है। मालवीयजी पक्के राष्ट्रवादी थे। उन्हें देश प्रेम के साथ-साथ अपना धर्म और भारतीय संस्कृति प्यारी थी। यह कोई अपराध नहीं। वे जीवन-पर्यंत कांग्रेस में सक्रिय रहे। तीन अवसरों पर वह कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। २४-२५ वर्ष की उम्र में वे कलकत्ता (अब कोलकाता) में १८८६ में कांग्रेस के दूसरे सम्मेलन में सम्मिलित हुए। युवा मालवीयजी के भाषण ने सबको चकित कर दिया और वे एक जननेता के रूप में स्वीकारे गए। उनकी विविध क्षेत्रों की सेवाओं के बारे में यहाँ चर्चा का समय नहीं है। मालवीयजी उदारमना थे। किसी के प्रति उनको लेशमात्र द्वेष नहीं रहा। भेदभाव की भावना उनको छू नहीं सकी। बाद में समाचार मिला कि एक राष्ट्रीय समिति प्रधानमंत्री ने मालवीयजी की १५०वीं जयंती मनाने के लिए डॉ. कर्ण सिंहजी की अध्यक्षता में बना दी है। पर अबतक कोई जानकारी नहीं कि कैसी योजना बनाई गई है, किस प्रकार के कार्यक्रम हैं। क्या मालवीयजी की जयंती बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के परिसर तक सीमित रह जाएगी? सरकार को अपनी नीति स्पष्ट करनी चाहिए। डॉ. कर्ण सिंहजी से इस दिशा में हमें बहुत आशा है। पर सरकार द्वारा जनता को पूर्ण जानकारी तो मिलनी चाहिए। आखिर ऐसा सौतेला व्यवहार क्यों? सांसदों को इसमें रुचि लेनी चाहिए, ताकि सरकार नीति और कार्यक्रमों के विषय में पूर्णतया सूचित करे। किसी ने कहा था कि जिनमें किसी प्रकार भेद, न मोह-ऐसे हैं मदनमोहन मालवीय है। काश आज कुछ नेता और राष्ट्र के कर्णधार मालवीयजी के पदचिह्नों पर चलने वाले होते तो देश की दशा कुछ और ही होती। उनका संपूर्ण जीवन देश और समाज को समर्पित रहा। उनकी अवहेलना एक राष्ट्रीय अपराध है।

अपने इसी स्तंभ में लिखते हुए हमने पूर्व में सरकार और पाठकों का ध्यान दिलाया था कि पं. मोतीलाल नेहरू की भी १५०वीं शताब्दी वर्ष है। मोतीलालजी शताब्दी शान से मनाई गई थी। कुछ ठोस काम हुए थे। अब सरकार ऐसी दूसरी विभूति को भी भूल गई? एक दिन एक समाचार-पत्र में देखा कि संस्कृति मंत्रालय में कुछ चिंता इस विषय में हुई, पर फल क्या निकला, इसकी जानकारी अभी तक नहीं है। सरकार को ये सब सूचनाएँ सार्वजनिक करनी चाहिए। मालवीयजी और मोतीलालजी की १५०वीं जयंती समुचित आदर से पूरे देश में मनाया जाना चाहिए।

हिंदी जगत् ने बाबू देवकीनंदन खत्री को शायद विस्मृत कर गया, जिनकी भी १५०वीं जयंती इस वर्ष है। साहित्य अकादेमी और अन्य हिंदी संस्थाएँ भी देवकीनंदन खत्री की १५०वीं जयंती को अनदेखी करती हैं मालूम होती हैं। उनके लिखित तिलिस्मी चंद्रकांता आदि उपन्यासों को पढ़ने के लिए, यह प्रसिद्ध है कि बहुतों ने हिंदी भाषा सीखी। अपनी श्रद्धा-स्वरूप इस अंक में उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के विषय में एक आलेख प्रस्तुत किया जा रहा। आशा है, हमारे सुधी पाठक उससे लाभान्वित होंगे।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कानों में कँगना

● स्व. राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह

हिंदी कहानी के विकास-क्रम में राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह (१० सितंबर १८९०-२४ मार्च, १९७१) द्वारा लिखित 'कानों में कँगना' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह कहानी १९१० ई. में लिखी गई थी। एक पत्र का उत्तर देते हुए राजा साहब ने लिखा था, "जहाँ तक मुझे याद है, 'कानों में कँगना' शीर्षक कहानी ही मेरी पहली कहानी है, जो १९१० ई. में लिखी गई थी। उस समय मैं आगरा कॉलेज का छात्र था। कॉलेज में कहानी-प्रतियोगिता हुई थी, उसमें यह कहानी सर्वप्रथम आई और पुरस्कृत हुई थी।"

इसका प्रकाशन १९१३ ई. में 'इंदु' पत्रिका में हुआ था।

: एक :

"किरन! तुम्हारे कानों में क्या है?"

उसने कानों से चंचल लट को हटाकर कहा, "कँगना!"

"अरे! कानों में कँगना?" सचमुच दो कंगन कानों को घेरकर बैठे थे।

"हाँ, तब कहाँ पहनूँ?"

किरन अभी भोरी थी। दुनिया में जिसे भोरी कहते हैं, वैसी भोरी नहीं। उसे वन के फूलों का भोलापन समझो। नवीन चमन के फूलों की भृंगी नहीं, विविध खाद या रस से जिनकी जीविका है, निरंतर काट-छाँट से जिनका सौंदर्य है, जो दो घड़ी चंचल चिकने बालों की भूषा है—दो घड़ी तुम्हारे फूलदान की शोभा। वन के फूल ऐसे नहीं। प्रकृति के हाथों से लगे हैं। मेघों की धारा से बढ़े हैं। चटुल दृष्टि इन्हें पाती नहीं। जगत्-वायु इन्हें छूती नहीं। यह सरल सुंदर सौरभमय जीवन है। जब तक जीवित रहें, तब तक चारों तरफ अपने प्राणधन से हरे-भरे रहें; जब समय आया, तब अपनी माँ की गोद में झड़ पड़े।

आकाश स्वच्छ था—नील, उदार, सुंदर। पत्ते शांत थे। संध्या हो चली थी। सुनहरी किरनें सुदूर पर्वत की चूड़ा से देख रही थीं। वह पतली किरन अपनी मृत्यु-शय्या से इस शून्य-निबिड़ कानन में क्या ढूँढ़ रही थी, कौन कहे! किसे एकटक देखती थी, कौन जाने! अपनी लीला-भूमि को स्नेह करना चाहती थी या हमारे बाद वहाँ क्या हो रहा है, इसे जोहती थी—मैं क्या बता सकूँ? जो हो, उसकी उस भृंगी में आकांक्षा अवश्य थी। मैं तो खड़ा-खड़ा उन बड़ी आँखों की किरन लूटता था। आकाश में तारों को देखा या उन जगमग आँखों को देखा, बात एक ही थी। हम दूर के तारों के सुंदर शून्य झिकमिक को बार-बार देखते हैं, लेकिन वह स्पंद-निश्चेष्ट ज्योति सचमुच भावहीन है या आप-ही-आप अपनी अंतर-लहरी से मस्त है, इसे जानना आसान नहीं। हमारी ऐसी आँखें कहाँ कि उनके सहारे उस निगूढ़ अंतर में डूबकर थाह लें!

मैं रसाल की डाली थामकर पास ही खड़ा था। वह बालों को हटाकर कंगन दिखाने की भृंगी में प्राणों में रह-रहकर उठती थी। जब माखन चुरानेवाले ने गोपियों के सिर के मटके को तोड़कर उसके भीतरी किले को तोड़ डाला या नूरजहाँ ने अंचल से कबूतर को उड़ाकर शहंशाह के कठोर हृदय की धज्जियाँ उड़ा दीं, फिर नदी के किनारे बसंत-वल्लभ रसाल-पल्लवों की छाया में बैठी किसी अपरूप बालिका की यह सरल-स्निग्ध भंगिमा एक मानव अंतर पर क्यों न दौड़े!

किरन इन आँखों के सामने प्रतिदिन आती ही जाती थी। कभी आम के टिकोरे से आँचल भर लाती, कभी मौलसिरी के फलों की माला बना लाती, लेकिन कभी भी ऐसी बाल-सुलभ लीला आँखों से होकर हृदय तक नहीं उतरी। आज क्या था, कौन शुभ या अशुभ क्षण था कि अचानक वह बनैली लता मंदारमाला से भी कहीं मनोरम दीख पड़ी। कौन जानता कि चाल से कुचाल जाने में—हाथों के कंगन भूलकर कानों में पहिनने में—इतनी माधुरी है। दो टके के कँगने में इतनी शक्ति है। गोपियों को कभी स्वप्न में भी नहीं झलका था कि बाँस की बाँसुरी में घूँघट खोलकर नचा देनेवाली शक्ति भरी है।

मैंने चटपट उसके कानों से कंगन उतार लिया। फिर धीरे-धीरे उसकी अंगुलियों पर चढ़ाने लगा। न जाने उस घड़ी कैसी खलबली थी, मुँह से अचानक निकल आया—

"किरन! आज की यह घटना मुझे मरते दम तक न भूलेगी। यह भीतर तक पैठ गई है।" उसकी बड़ी-बड़ी आँखें और भी बड़ी हो गईं। मुझे चोट सी लगी। मैं तत्क्षण योगीश्वर की कुटी की तरफ चल दिया। प्राण भी उसी समय नहीं चल दिए, यही विस्मय था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: दो :

एक दिन था कि इसी दुनिया में दुनिया से दूर रहकर लोग दूसरी दुनिया का सुख उठाते थे। हरिचंदन के पल्लवों की छाया भू-लोक पर कहाँ मिले, लेकिन किसी समय हमारे यहाँ भी ऐसे वन थे, जिनके वृक्षों के साये में घड़ी घाम निवारने के लिए स्वर्ग से देवता भी उतर आते थे। जिस पंचवटी का अनंत यौवन देखकर राम की आँखें भी खिल उठी थीं, वहाँ के निवासियों ने कभी अमरतरु के फूलों की माला नहीं चाही, मंदाकिनी के छींटों की शीतलता नहीं ढूँढ़ी। नंदनोपवन का सानी कहीं वन भी था! कल्पवृक्ष की छाया में शांति अवश्य है, लेकिन कदम की छहिया कहाँ मिल सकती? हमारी-तुम्हारी आँखों ने कभी नंदनोत्सव की लीला नहीं देखी, लेकिन इसी भूतल पर एक दिन ऐसा उत्सव हो चुका है, जिसको देख-देखकर प्रकृति तथा रजनी छह महीने तक ठगी रही, शत-शत देवांगनाओं ने पारिजात के फूलों की वर्षा से नंदन-कानन को उजाड़ डाला।

समय ने सबकुछ पलट दिया। अब ऐसे वन नहीं, जहाँ कृष्ण गोलोक से उतरकर दो घड़ी वंशी की टेर दें। ऐसा कुटीर नहीं, जिनके दर्शन से रामचंद्र का भी अंतर प्रसन्न हो, या ऐसे मुनीश नहीं, जो धर्मधुरंधर धर्मराज को भी धर्म में शिक्षा दें। यदि एक-दो भूले-भटके हों भी, तब अभी तक उन पर दुनिया का परदा नहीं उठा। जगन्माया की माया नहीं लगी। लेकिन वे कब तक बचे रहेंगे? लोक अपने यहाँ अलौकिक बातें कब तक होने देगा! भवसागर की जल-तरंगों पर स्थिर होना कब संभव है?

ऋषीकेश के पास एक सुंदर वन है, सुंदर नहीं, अपरूप सुंदर है। वह प्रमोदवन के विलास-निकुंजों जैसा सुंदर नहीं, वरंच चित्रकूट या पंचवटी की महिमा से मंडित है। वहाँ चिकनी चाँदनी में बैठकर कनक-घुँघरू की इच्छा नहीं होती, वरंच प्राणों में एक ऐसी आवेश-धारा उठती है, जो कभी अनंत साधना के कूल पर पहुँचाती है—कभी जीव-जगत् के एक-एक तत्त्व से दौड़कर मिलती है। गंगा की अनंत गरिमा—वन की निबिड़ योग-निद्रा वहीं देख पड़ेगी।

ऋषीकेश के पास एक सुंदर वन है, सुंदर नहीं, अपरूप सुंदर है। वह प्रमोदवन के विलास-निकुंजों जैसा सुंदर नहीं, वरंच चित्रकूट या पंचवटी की महिमा से मंडित है। वहाँ चिकनी चाँदनी में बैठकर कनक-घुँघरू की इच्छा नहीं होती, वरंच प्राणों में एक ऐसी आवेश-धारा उठती है, जो कभी अनंत साधना के कूल पर पहुँचाती है—कभी जीव-जगत् के एक-एक तत्त्व से दौड़कर मिलती है। गंगा की अनंत गरिमा—वन की निबिड़ योग-निद्रा वहीं देख पड़ेगी। कौन कहे, वहाँ जाकर यह चंचल चित्त क्या चाहता है—गंभीर अलौकिक आनंद या शांत सुंदर मरण!

इसी वन में एक कुटी बनाकर योगीश्वर रहते थे। योगीश्वर योगीश्वर ही थे। यद्यपि वह भूतल ही पर रहते थे, तथापि इन्हें इस लोक का जीव कहना यथार्थ नहीं था। उनकी चित्त-वृत्ति सरस्वती के श्रीचरणों में थी या ब्रह्मलोक की अनंत शांति में लिपटी थी। और वह बालिका—स्वर्ग से एक रश्मि उतरकर—उस घने जंगल में उजोला करती फिरती थी। वह लौकिक मायाबद्ध जीवन नहीं था। इसे बंधनरहित बाधाहीन नाचती किरनों की लेखा कहिए, मानो निर्मुक्त चंचल मलय-वायु फूल-फूल पर, डाली-डाली पर डोलती फिरती हो या कोई मूर्तिमान् अमर संगीत बेरोकटोक हवा पर या जल की तरंग-भंग पर नाच रहा हो। मैं ही वहाँ इस लोक का प्रतिनिधि था। मैं ही उन्हें उनकी अलौकिक स्थिति से इस जटिल मर्त्य राज्य में खींच लाता था।

कुछ साल से मैं योगीश्वर के यहाँ आता-जाता था। पिता की आज्ञा थी कि उनके यहाँ जाकर अपने धर्म के सब ग्रंथ पढ़ डालो। योगीश्वर और बाबा लड़कपन के साथी थे। इसीलिए उनकी मुझ पर इतनी दया थी। किरन उनकी लड़की थी। उस कुटीर में एक वही दीपक थी। जिस दिन की घटना मैं लिख आया हूँ, उसी दिन सवेरे मेरे अध्ययन की पूर्णाहुति थी और बाबा के कहने पर एक जोड़ा पीतांबर, पाँच स्वर्णमुद्राएँ तथा किरन के लिए दो कनक-कंगन आचार्य के निकट ले गया था। योगीश्वर ने सब लौटा दिए, केवल कंगन को किरन उठा ले गई।

वह क्या समझकर चुप रह गए। समय का अद्भुत चक्र है। जिस दिन मैंने धर्मग्रंथ से मुँह मोड़ा, उसी दिन कामदेव ने वहाँ जाकर उनकी किताब का पहला सफा उलटा।

दूसरे दिन मैं योगीश्वर से मिलने गया। वह किरन को पास बिठाकर न जाने क्या पढ़ा रहे थे। उनकी आँखें गंभीर थीं! मुझको देखते ही वह उठ पड़े और मेरे कंधों पर हाथ रखकर गद्गद स्वर से बोले, 'नरेंद्र! अब मैं चला, किरन तुम्हारे हवाले है।' यह कहकर किसी की सुकोमल अंगुलियाँ मेरे हाथों में रख दीं। लोचनों के कोनों पर दो बूँदें निकलकर झाँक पड़ीं। मैं सहम उठा। क्या उन पर सब बातें विदित थीं? क्या उनकी तीव्र दृष्टि मेरी अंतर-लहरी तक डूब चुकी थी? वह ठहरे नहीं, तुरंत चल दिए। मैं काँपता रह गया और किरन देखती रह गई!

सन्नाटा छा गया। वन-वायु भी चुप हो चली। हम दोनों भी चुप चल पड़े, किरन मेरे कंधे पर थी। हठात् अंतर से कोई अकड़कर कह उठा, 'हाय नरेंद्र! यह क्या! तुम इस वनफूल को किस चमन में ले चले? इस बंधन-विहीन स्वर्गीय जीवन को किस लोक-जाल में बाँधने चले?'

: तीन :

कंकड़ी जल में जाकर कोई स्थायी विवर नहीं फोड़ सकती। क्षण भर जल का समतल भले ही उलट-पुलट हो, लेकिन इधर-उधर से जल-तरंग दौड़कर उस छिद्र का नाम-निशान भी नहीं रहने देतीं। जगत् की भी यही चाल है। यदि स्वर्ग से देवेंद्र भी आकर इस लोक चलाचल में खड़े हों, फिर संसार देखते-ही-देखते उन्हें अपना बना लेगा। इस काली कोठरी में आकर इसकी कालिमा से बचे रहें, ऐसी शक्ति अब आकाश-कुसुम ही समझो। दो दिन में राम 'हाय जानकी, हाय जानकी!' कहकर वन-वन डोलते फिरे। दो क्षण में यही विश्वामित्र को भी स्वर्ग से घसीट लाया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किरन की भी यही अवस्था हुई। कहाँ प्रकृति की निर्मुक्त गोद, कहाँ जगत् का जटिल बंधन-पाश। कहाँ से कहाँ आ पड़ी! वह अलौकिक भोलापन, वह निसर्ग उच्छ्वास—हाथोहाथ लुट गए। उस वनफूल की विमल कांति लौकिक चमन की मायावी मनोहारिता में परिणत हुई। अब आँखें उठाकर आकाश से नीरव बातचीत करने का अवसर कहाँ से मिले? मलय वायु से मिलकर मलयाचल के फलों की पूछताछ क्योंकर हो?

जब किशोरी नए साँचे में ढलकर उतरी, उसे पहचानना भी कठिन था। वह अब लाल चोली, हरी साड़ी पहनकर, सिर पर सिंदूर रेखा सजती और हाथों में कंगन, कानों की बाली, गले की कंठी तथा कमर की करधनी—दिन-दिन उसके चित्त को नचाए मारती थीं। जब कभी वह सज-धजकर चाँदनी में कोठे पर उठती और वसंतवायु उसके आँचल से मोतियों की लपट लाकर मेरे बरामदे में भर देता, फिर किसी मतवाली माधुरी या तीव्र मदिरा के नशे में मेरा मस्तिष्क घूम जाता और मैं चटपट अपना प्रेम-चीत्कार फूलदार रंगीन चिट्ठी में भरकर जुही के हाथ ऊपर भिजवाता या बाजार से दौड़कर कटकी गहने या विलायती चूड़ी खरीद लाता। लेकिन जो हो—अब भी कभी-कभी उसके प्रफुल्ल बदन पर उस आलोक-आलोक की छटा पूर्वजन्म की सुख-स्मृतिवत् चली आती थी, और आँखें उसी जीवंत सुंदर झिकमिक का नाच दिखाती थीं। जब अंतर प्रसन्न था, फिर बाहरी चेष्टा पर प्रतिबिंब क्यों न पड़े!

यों ही साल-दो साल मुरादाबाद में कट गए। एक दिन मोहन के यहाँ नाच देखने गया—वहीं किन्नरी से आँखें मिलीं, मिलीं क्या, लीन हो गईं। नवीन यौवन, कोकिल कंठ, चतुर चंचल चेष्टा या मायावी चमक—अब चित्त को जलाने के लिए और क्या चाहिए! नरी सचमुच किन्नरी ही थी; नाचनेवाली नहीं, नचानेवाली थी। पहली बार देखकर उसे इस लोक की सुंदरी समझना दुस्तर था। एक लपट जो लगती—किसी नशा सी चढ़ जाती। यारों ने मुझे और भी बढ़ा दिया। आँखें मिलती-मिलती मिल गईं, हृदय को भी साथ-साथ घसीट ले गईं।

फिर क्या था—इतने दिनों की धर्मशिक्षा, शतवत्सर की पूज्य लक्ष्मी, बाप-दादों की कुल-प्रतिष्ठा, पत्नी से पवित्र-प्रेम, एक-एक करके उस प्रदीप्त वासना-कुंड में भस्म होने लगे। अग्नि और भी बढ़ती गई। किन्नरी की चिकनी दृष्टि, चिकनी बातें घी बरसाती रहीं। घर-बार सब जल उठा। मैं भी निरंतर जलने लगा, लेकिन ज्यों जलता गया— जलने की इच्छा जलाती रही।

पाँच महीने कट गए—नशा उतरा नहीं। बनारसी साड़ी, पारसी जैकेट, मोती का हार, कटकी कर्णफूल—सबकुछ लाकर उस मायाकारी के अलक्तक-रंजित चरणों पर रखे। किरन हेमंत की मालती बनी थी, जिस पर एक फूल नहीं, एक पल्लव नहीं। घर की वधू क्या करती? जो अनंत-सूत्र से बँधा था, जो अनंत जीवन का संगी था, वही हाथो-हाथ पराए के हाथ बिक गया—फिर ये तो दो दिन के चकमकी खिलौने थे, इन्हें शरीर बदलते क्या देर लगे! दिन भर बहानों की माला गूँथ-गूँथ किरन के गले में और शाम को मोती की माला उस नाचनेवाली के गले में सशंक निर्लज्ज डाल देना—यही मेरा जीवन-निर्वाह था। एक दिन सारी बातें खुल गईं, किरन पछाड़ खाकर भूमि पर जा पड़ी। उसकी आँखों में आँसू न थे, मेरी आँखों में दया न थी।

बरसात की रात थी। रिमझिम बूँदों की झड़ी थी। चाँदनी मेघों से आँख-मुँदौवल खेल रही थी। बिजली काले कपाट से बार-बार झाँकती थी। किसे चंचला देखती थी तथा बादल किस मरोड़ से रह-रहकर चिल्लाते थे—इन्हें सोचने का मुझे अवसर नहीं था। मैं तो किन्नरी के दरवाजे से हताश लौटा था, आँखों के ऊपर न चाँदनी थी, न बदली थी। त्रिशंकु ने स्वर्ग को जाते-जाते बीच में ही टँगकर किस दु:ख को उठाया—और मैं तो अपने स्वर्ग के दरवाजे पर सिर रखकर निराश लौटा था— मेरी वेदना क्यों न बड़ी हो!

हाय! मेरी अंगुलियों में एक अँगूठी भी रहती तो उसे नजर कर उसके चरणों पर लोटता।

घर पर आते ही जुही को पुकार उठा—"जुही, किरन के पास कुछ भी बचा हो, तब फौरन जाकर माँग लाओ।"

ऊपर से कोई आवाज नहीं आई, केवल सिर के ऊपर से एक काला बादल कालांत चीत्कार से चिल्ला उठा। मेरा मस्तिष्क घूम गया। मैं तत्क्षण कोठे पर दौड़ा।

सब संदूक झाँके, जो कुछ मिला, सब तोड़ डाला, लेकिन मिला कुछ भी नहीं। अलमारी में केवल मकड़े का जाल था, शृंगारबक्स में एक छिपकली बैठी थी। उसी दम किरन पर झपटा।

पास जाते ही सहम गया। वह एक तकिए के सहारे नि:सहाय नि:स्पंद लेटी थी—केवल चाँद ने खिड़की से आकर उसे गोद में ले रखा था और वायु उस शरीर पर जल से भिगोया पंखा झल रही थी। मुख पर एक अपरूप छटा थी, कौन कहे, कहीं जीवन की शेष रश्मि क्षण-भर वहीं अटकी हो। आँखों में एक जीवन-ज्योति थी। शायद प्राण शरीर से निकलकर किसी आसरे से वहाँ पैठ रहा था। मैं फिर पुकार उठा—"किरन, किरन! तुम्हारे पास कोई गहना भी बच रहा है?"

"हाँ!" क्षीण कंठ की काकली थी।

"कहाँ है, अभी देखने दो!"

उसने धीरे से घूँघट सरकाकर कहा, "यही कानों का कँगना!"

सिर तकिए से ढल पड़ा, आँखें भी झिप गईं। वह जीवंत रेखा कहाँ चली गई—क्या इतने ही के लिए अब तक ठहरी थी?

आँखें मुख पर जा पड़ीं—वही कंगन थे। वैसे ही कानों को घेरकर बैठे थे। मेरी स्मृति तड़िद्वेग से नाच उठी। दुष्यंत ने अँगूठी पहचान ली। भूली शकुंतला उस पल याद आ गई, लेकिन दुष्यंत सौभाग्यशाली थे, चक्रवर्ती राजा थे—अपनी प्राणप्रिया को आकाश-पाताल छानकर ढूँढ़ निकाला। मेरी किरन तो इस भूतल पर न थी कि किसी तरह प्राण देकर भी पता पाता। परलोक से ढूँढ़ निकालूँ—ऐसी शक्ति इस दीन-हीन मानव में कहाँ?

चढ़ा नशा उतर गया। सारी बातें सूझ गईं—आँखों पर की पट्टी खुल पड़ी; लेकिन हाय! खुली भी तो उस समय, जब जीवन में केवल अंधकार ही रह गया।

प्रस्तुति : चंद्रप्रकाश आर्य
हिंदी-शोध संस्थान
बी-१४, नई बस्ती, बिजनौर (उ.प्र.)

भूल-सुधार

अक्तूबर अंक में मुद्रित आवरण छायाचित्र डॉ. सुरेश्वर त्रिपाठी द्वारा उपलब्ध कराया गया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

कहानी

नीम का वो पेड़

● कैलाश पचौरी

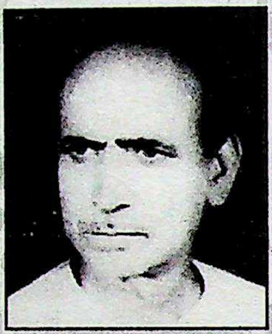

जन्म : २ सितंबर, १९४२ को बैरसिया, जिला भोपाल (म.प्र.) में।

कृतित्व : कविता संग्रह 'सन्नाटे की सुराही में' एवं पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से नियमित प्रसारण।

सम्मान : मध्य प्रदेश लेखक संघ का 'शब्द सारथि सम्मान'।

संप्रति : शिक्षा विभाग से सेवा-निवृत्ति के पश्चात् लेखन कार्य।

'रिटायरमेंट' शब्द ही कुछ अजीब सा कसैला स्वाद लिये हुए है। कुल छह अक्षरों का समुच्चय होने के बावजूद इसकी प्रतिक्रिया अत्यंत गहन-गंभीर तथा व्यापक है। निस्संदेह सर्विस में रहते हुए दिनचर्या का अपना एक रुटीन बन जाता है।

मेरा खयाल है कि अगर रिटायरमेंट का प्रावधान न हो तो कोई रिटायर ही नहीं होना चाहेगा; लोगों का बस चले तो मरते दम तक सर्विस से चिपके रहें। आपको एक दिलचस्प वाकया बतलाऊँ, हमारे यहाँ एक मिस्टर एल.एल. गुप्ता हुआ करते थे। एस.डी.एम. के रीडर थे, अच्छी इनकमवाली पोस्ट थी, लेकिन एक दिन वह कुघड़ी आ पहुँची, जब उन्हें रिटायर होना पड़ा; बड़े बेमन से उन्होंने रिलीविंग लैटर लिया, लेकिन वे बहुत ही घुटी हुई खोपड़ी थे, इतनी आसानी से हार मान लेना उन्होंने सीखा नहीं था। साहब, रिलीव होने के बाद भी वह दफ्तर जाते रहे और शायद आप यकीन न करें। बकायदा पगार भी पाते रहे, लेकिन क्या करें, बेचारे मीडिया की तीखी नजरों से नहीं बच सके। एक घाघा किस्म के पत्रकार कलेक्टर साहब के पास पहुँच डी.बी. स्टार की तर्ज पर सवाल कर डाले—

'मिस्टर एल.एल. गुप्ता रिटायर हो चुके हैं।'

'फिर?'

'वे फिर भी दफ्तर जा रहे हैं और बाकायदा वेतन भी ले रहे हैं।'

'ऐसा कैसे हो सकता है?'

'आप पता कर लीजिए, ऐसा हो रहा है।'

कलेक्टर ने एस.डी.एम. त्रिवेदी को फोन लगाया—'मिस्टर त्रिवेदी, आपने एल.एल. को रिलीव कर दिया न'

'यस सर!'

'मुझे जानकारी हुई है कि वह फिर भी काम कर रहा है।'

'सर मूल निवासी और जाति प्रमाण-पत्र बनाने के लिए हमने उसे डिटेन कर लिया है।'

'नो-नो उसे फौरन हटाइए, वरना आपके अगेंस्ट एक्शन हो जाएगा।'

कलेक्टर के इस सख्त रवैये के बाद ही गुप्ता का हुक्का-पानी बंद किया जा सका।

हमारे शहर में ऐसे कई लोग हैं, जो रिटायरमेंट के बाद लगभग टूट से गए हैं। कुछ जो इस आघात को सहन न कर पाए बहुत जल्द खुदा को प्यारे हो गए; कुछ की मानसिक स्थिति काबू से बाहर हो गई; कुछ लोग इतने निरीह और दयनीय नजर आने लगे मानो इनसे तुच्छ और गया-गुजरा प्राणी इस पृथ्वी पर कोई दूसरा नहीं है।

सेवा-निवृत्त लोगों को अकसर सक्रिय बन जाने की सलाह दी जाती है। कहा जाता है कि वे किसी फोरम या नेटवर्क से जुड़ जाएँ, लेकिन आप तो जानते ही हैं कि छोटे-छोटे कस्बेनुमा शहरों में इस तरह के चांसेज बड़े रेयर हैं। मीडिया तथा उससे जुड़े कई लोग सोशल आस्पेक्ट उभारते जरूर हैं, लेकिन अब हम आपसे क्या कहें, हम तो पैंशनर्स की ऐसी एसोसिएशन तक भी न बना पाए, जो वर्ष में एकाधिक बार कम-से-कम वन-भोज का आयोजन कर पाती।

हमने शहर के रिटायर्ड प्राचार्य श्री सोलंकीजी से इस बाबत चर्चा की तो कहने लगे—'दरअसल आपका आइडिया तो अच्छा है; कुछ लोगों से चर्चा की जा सकती है, लेकिन मैं कह नहीं सकता कि अल्टीमेटली कैसा रिस्पांस मिलेगा?'

ऐसा नहीं है कि हमने सोलंकीजी के अलावा किसी अन्य से संपर्क किया ही नहीं, हम इसके लिए स्पेशली गोस्वामीजी के घर गए, उनसे चर्चा की, उन्होंने इसके दूसरे पहलू पर विचार करते हुए कहा, 'यार, इस कार्यक्रम के लिए आप कम-से-कम सौ रुपए का कंट्रीब्यूशन तो लेंगे। एक पैंशनर इसे बोझ समझेगा और कंट्रीब्यूट करने में आना-कानी करेगा।'

अब इसके बाद तो इस प्रस्ताव को ठंडे बस्ते में जाना ही था। रिटायरमेंट के बाद लोगों को अकसर पद के रुतबे-रुआब और अगर महकमा मलाईदार हुआ तो उफनती हुई आय तथा उससे जुड़े ऐशो-

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इशरत याद आया करते हैं। कुछ ऐसे भी हैं, जो इस शहर को छोड़कर अपने मन चीते स्थान पर सैटल हो गए हैं, उनसे मिल पाना बहुत कुछ समय-संयोग पर ही निर्भर करता है। आप शायद ताज्जुब करें, मुझे इन सबसे अलग हटकर नीम का वो पेड़ याद आता है। जिसकी महकती हुई शीतल छाँह महज एक सपना बनकर रह गई है। संभव है, आप मेरी इस बात को महज भावुकता के रूप में लेकर इसे हवा में उड़ा दें या फिर मेरा मजाक बनाएँ।

सचमुच उत्तरार्ध के इस बीहड़ तिकोननुमा एकांत में कभी-कभी नीम का वो पेड़ मेरी स्मृतियों में कौंध-कौंध जाता है, जैसे मघा नक्षत्र में हहराता हुआ बादल!

माननीय शिक्षा मंत्री के नगरागमन पर स्वागत कार्यक्रम तथा अभिनंदन लेखनादि में श्री विवेकानंद सक्सेना ने खासी दिलचस्पी ली और कार्यक्रम को सफल बनाकर ही दम लिया। इसके बाद आनन-फानन में विवेकानंदजी दसवीं तथा बारहवीं की ओपन परीक्षा के केंद्र संयोजक बना दिए गए। बमुश्किल दो या तीन साल बीते होंगे कि एकाएक भैयाजी भ्रष्टाचार के घेरे में आ गए। लोगों का कहना है कि विवेकानंद ने अनाप-शनाप कमाई की। ऊपरवालों को भी सुँघाई, लेकिन पता नहीं कैसे एकाएक निलंबन के आदेश आ गए, जिन शिक्षा मंत्री महोदय का अभिनंदन पत्र लिखकर मंचीय प्रतिष्ठा अर्जित की, उन्होंने ही कह दिया 'कानून अपना काम करेगा।'

लेकिन जसवंत सिंह का किस्सा बिलकुल अलग रहा। एक बार हमारी शाला में जिला शिक्षा आधिकारी का निरीक्षण हुआ वे दल-बल सहित सुबह-सुबह कक्षाओं में धड़ाधड़ आ धमके। जसवंत सिंह शिक्षक पालक संघ के उपाध्यक्ष के साथ पास ही के एक होटल में चाय पीने चले गए थे, लड़के कक्षा में गदर मचा रहे थे, प्रायः सभी के बस्ते बंद थे, शायद ही कोई इक्का-दुक्का किताब खोलकर बैठा था, पीछे की फट्टियों पर एक-दूसरे को लतियाने या परस्पर गुत्थम-गुत्था होने की क्रियाएँ-प्रतिक्रियाएँ निर्विघ्न संपन्न हो रही थीं।

एक बार हमारी शाला में जिला शिक्षा आधिकारी का निरीक्षण हुआ वे दल-बल सहित सुबह-सुबह कक्षाओं में धड़ाधड़ आ धमके। जसवंत सिंह शिक्षक पालक संघ के उपाध्यक्ष के साथ पास ही के एक होटल में चाय पीने चले गए थे, लड़के कक्षा में गदर मचा रहे थे, प्रायः सभी के बस्ते बंद थे, शायद ही कोई इक्का-दुक्का किताब खोलकर बैठा था, पीछे की फट्टियों पर एक-दूसरे को लतियाने या परस्पर गुत्थम-गुत्था होने की क्रियाएँ-प्रतिक्रियाएँ निर्विघ्न संपन्न हो रही थीं।

अब यह भी कोई कहने की बात है कि जिला शिक्षा अधिकारी के क्रोध का पारा सातवें आसमान पर तो पहुँचना ही था। संबंधित शिक्षक का उस दिन का वेतन कटना तयशुदा था, लेकिन खास बात यह हुई कि तत्काल प्रभाव से जसवंत सिंह का उपायोजन स्थानीय संकुल केंद्र में कर दिया गया।

तीसरे दिन सी.एम. हाउस से एक स्पेशल ऑर्डर रिलीज होता है, जिसके अनुसार उक्त शिक्षक का उपायोजन रद्द किए जाने के साथ ही उस दिन का वेतन काटने संबंधी जिला शिक्षा अधिकारी के आदेश को निरस्त किया जाता है। कैफियत यह दी जाती है कि शिक्षक पालक संघ के उपाध्यक्ष के साथ शाला संबंधी किसी आवश्यक चर्चा में व्यस्त रहने के कारण ही कक्षा में उपस्थित न हो सके। अतः उनके वेतन काटने संबंधी आदेश का कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता।

अब मैं आपको बतलाऊँ, मैंने सिर्फ दो या तीन शालाओं में अपना पूरा सेवा काल निकाल दिया।

उपस्थिति रजिस्टर पर साइन करने के बाद हम लोग वक्त बरबाद किए बिना छात्र उपस्थिति पंजी, शिक्षक डायरी तथा शाला विकास शुल्क का कट्टा लेकर अपनी-अपनी कक्षाओं में पहुँच जाते। पाँच-सात मिनट जनरल नॉलेज की बातों के साथ ही बच्चों की निजी तथा शिक्षण संबंधी समस्याओं पर डिस्कस करने के फौरन बाद ही टीचिंग पर आ जाते।

निस्संदेह छात्रों की भी अपनी कुछ समस्याएँ हुआ करती हैं, जिन्हें नजरअंदाज किया जाना उत्कृष्ट शिक्षण की दृष्टि से घातक सिद्ध हो सकता है। वस्तुतः यह चाइल्ड साइकोलॉजी का विषय है। मसलन, मेरी कक्षा में एक छात्र हुआ करता था राम प्रकाश। पढ़ने-लिखने में एवरेज से कुछ ज्यादा। मुझे लगता, अगर वह परिश्रम करे तो प्रथम श्रेणी में आ सकता है, लेकिन वह हमेशा दो पीरियड निकल जाने के बाद स्कूल पहुँचता। मेरा पीरियड तो वह अकसर मिस कर देता। मैं जब-जब उसके लेट आने को लेकर डाँट-डपट करता, वह सिर झुकाकर खड़ा हो जाता, लेकिन बोलता कुछ नहीं।

एक दिन मैंने अपना तरीका थोड़ा बदला, उसके सर पर हाथ फेरते हुए पूछा, 'राम प्रकाश, तुम हमें सच-सच बतलाओ, आखिर लेट होने का कारण क्या है?'

'सर, मैं सब्जी की टोकरियाँ लेकर सब्जी मंडी जाता हूँ।'

'तुम्हीं क्यूँ जाते हो, क्या तुम्हारे यहाँ और कोई नहीं है?'

'सर, पिताजी कहते हैं, पहले सब्जी मंडी जाओ, वहाँ से लौटने के बाद स्कूल पहुँचो।'

अब पता चला, राम प्रकाश के देरी से आने में उसकी कोई गलती नहीं थी। दरअसल, राम प्रकाश के पिताजी अपने खेते में सब्जियाँ उगाते हैं रोज जितनी भी सब्जी निकलती है, उसकी नीलामी सब्जी मंडी में होती है।

हमने राम प्रकाश के पिताजी को बुलाकर समझाया, हमारे उचित परामर्श का तत्काल प्रभाव हुआ। उन्होंने सब्जी की टोकरियाँ ले जाने के लिए किसी अन्य को पाबंद कर दिया। अब राम प्रकाश समय पर स्कूल आने लगा। इतना ही नहीं, उसकी स्टडी में भी उल्लेखनीय सुधार परिलक्षित हुआ।

हमारे यहाँ पंद्रह अगस्त और छब्बीस जनवरी को ध्वजारोहण के पश्चात् सांस्कृतिक कार्यक्रम होते, इन कार्यक्रमों की तैयारी का जिम्मा पूरी तौर पर मेरे सुपुर्द था, इसकी वजह थी, मेरा साहित्य के साथ-साथ संगीत में भी रुचि रखना।

इन मामलों में हमारा यह अनुभव रहा कि लड़कियाँ लड़कों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुकाबले अधिक परिश्रमी तथा लगनशील होती हैं। उन दिनों कक्षा छठवीं की एक छात्रा थी—अंगूरी कुशवाह, उसे जो भी सिखाया जाता फौरन सीख लेती और हू-ब-हू कॉपी करके बतला देती, फिर उसकी आवाज भी मिठास लिये थी। फलतः हमने उसे चारों राष्ट्रगीतों में मौका दिया। एक लड़की और थी ममता सेन, जो आठवीं कक्षा में पढ़ती थी। जितने भी पेज का मैटर लिखा दो, अगले दिन पूरा याद कर लाती थी और पूरी तरह कॉन्फीडेंट होकर भाषण देती थी। नगरीय भाषण प्रतियोगिता में उसने कई बार प्रथम पुरस्कार प्राप्त कर शाला का नाम ऊँचा किया।

हाँ तो मैं नीम के पेड़ की बात कर रहा था। सी.वी. रमन ने पहली बार यह सिद्ध किया कि पेड़-पौधे भी इस हद तक संवेदनशील होते हैं कि हम कह सकते हैं कि उनमें जान होती है।

लेकिन ओशो का कंसेप्शन इससे भी चार कदम आगे का रहा। उन्होंने कहा, 'पेड-पौधों में भी चेतना होती है, वे भी दोस्ती करते हैं। इतना ही नहीं, वे हमारी मन:स्थिति के अनुरूप स्वयं को रूपांतरित कर.लेने की अद्वितीय क्षमता से संपन्न हैं। बस थोड़े से नियमित अभ्यास की आवश्यकता है। आप पाएँगे कि पेड़ न केवल आपको प्रॉपर रिस्पॉन्स दे रहे हैं बल्कि एक विशेष प्रकार का आत्मीय तादात्म्य भी स्थापित कर रहे हैं।'

मैं सोचता हूँ, जिस तरह लोग कुत्ते, बिल्ली, खरगोश, हिरन आदि से संबंध बना रहे हैं; स्थानीय वन विहार (भोपाल) में जानवरों को गोद ले रहे हैं, इसी तरह क्या पेड़ों से संबंध नहीं बनाए जा सकते; क्या फलदार तथा छायादार पेड़ों को गोद नहीं लिया जा सकता?

वो नीम का पेड़ शाला परिसर में ही अवस्थित था, उसकी फैली-फैली शाखाएँ, हरी-हरी पत्तियाँ, छोटे-छोटे नाजुक फूलों से झरती सुगंध मुझे खासा रोमांचित करती थी।

गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर के शांति निकेतन की परिकल्पना को ध्यान में रखते हुए हमने इसके नीचे क्लास लगाने का निर्णय लिया, मेरा अनुसरण वी.के. ने भी किया, जो अंग्रेजी पढ़ाते थे।

इस पेड़ से लगभग सटा हुआ चार फीट ऊँचा पक्का चबूतरा था, जो इतना लंबा-चौड़ा तो नहीं था कि उस पर तीस-चालीस बच्चे बैठ सकें। अलबत्ता कभी-कभी मैं अपनी कुरसी इसके पूर्वी कोने से टिका देता और जब निगाह सामने उठती तो मुझे खजूर का एक लंबोतरा पेड़ दिखाई देता; लगता जैसे कोई सिद्ध योगी अपनी लंबी-लंबी जटाएँ फैलाकर खड़ा है।

खजूर के पेड़ यदि मेरी चेतना पर अंकित हो चुके हैं तो इसका कारण यह है कि बचपन में हम लोग जब अपनी ननिहाल जाते तो वहाँ दूर-दूर तक खजूर के पेड़ दिखाई देते। बड़ी गूलर आते-आते यह भरोसा पक्का हो जाता कि अब थोड़ी देर बाद नलखेड़ा आने ही वाला है और कोई पंद्रह-बीस मिनट बाद हम नलखेड़े के गैंवड़े (गाँव के करीब) पहुँच जाते। लाल वाई के चबूतरे पर फरफराती हुई लाल-लाल झंडियाँ देखकर हमारे मन में अजीब सा कौतूहल कुलाँचें भर रहा होता—शायद यह एक प्रकार की आश्वस्ति थी, जो गाँव के सन्निकट होने पर अनायास मिलती थी।

हाँ, तो मैं नीम के उस पेड़ के प्रति अपने तीव्रतम लगाव की बात कर रहा था। एक बार अचानक इस पेड़ के कटने की नौबत आ गई। हुआ क्या कि इसकी जड़ें बाउंड्री वॉल को बेदखल करने की कोशिश करते हुए देखी गईं। पता नहीं, किस झक में प्रधानाध्यापक ने इस हरे-भरे पेड़ को कटवाने का निर्णय ले लिया।

हमें उनका यह निर्णय बेहद नागवार गुजरा। एक तरफ हम एच.एम. से सीधे-सीधे बुराई भी नहीं लेना चाहते थे, क्योंकि यह पानी में रहकर मगर से टकरानेवाली बात होती। दूसरे यह भी नहीं चाहते थे कि यह बेश-कीमती और नायाब पेड़, जो हमें ठंडक, सुकून और खुशबू एक साथ देता है, इतनी बेरहमी से काट दिया जाए।

थोड़ा सा दिमाग लगाकर हमने एक पेंच खड़ा किया और शिक्षक पालक संघ के अध्यक्ष से कहलवाया—

'हैड मास्टर साहब, आप यह पेड़ नहीं कटवा सकते।'

'क्यूँ भला? ऐसा क्यूँ?'

'इसके लिए आपको एस.डी.एम. तथा वन विभाग से परमीशन लेना होगी, वरना आप पर धारा ३७९ के अंतर्गत केस दर्ज हो जाएगा।'

शिक्षक पालक संघ के अध्यक्ष का यह डोज काम कर गया, लेकिन मेरे वहाँ से हट जाने के बाद उस मासूम को नहीं बचाया जा सका।

अभी पिछले दिनों जब मैं उधर से गुजरा। मुझे यह देखकर भीषण आघात पहुँचा कि अब वह लंबोतरा पेड़ काट दिया गया है। उसका तना दो भागों में विभाजित होकर धराशायी हो चुका है। लगा जैसे किसी लाश के दो टुकड़े बेहद संगदिली के साथ जमीन पर पटक दिए गए हैं।

ताज्जुब तो इस बात का है कि हैड मास्टर के इस क्रूर कृत्य के विरुद्ध किसी ने चूँ भी नहीं की। पूरा स्टाफ खामोश रहा। संभवतः इस मन:स्थिति से घिरा हुआ कि बिल्ली के गले में घंटी कौन बाँधे?

क्या वाकई लोग इतने लिजलिजे, घटिया और बेदम हो गए हैं कि अपने क्षुद्र स्वार्थों के चलते सही को सही और गलत को गलत कहने का माद्दा खो चुके हैं।

बाउंड्री वॉल उठ चुकी है। स्कूल जैसे किसी किले में तब्दील होकर रह गया है। मैं रह-रहकर सोचता हूँ और हॉट होता हूँ कि अगर जरा सा भी दिमाग लगाया गया होता तो बाउंड्री वॉल भी उठ जाती और नीम का पेड़ भी बचा रहता।

वो पत्तियों की सरसराहट, पेड़ का वो दोस्ताना अखलाक भीतर किन्हीं गहराइयों में कसकने लगता है। पेड़ कट जाने के बाद उत्पन्न सपाट वीरानेपन को देखकर लगता है जैसे कोई राजा सिंहासन पर तो बैठा है, लेकिन उसका ताज छीन लिया गया है—आमीन।

पो+मु.-बैरसिया,
जिला-भोपाल-४६३१०६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ छोटी कविताएँ

● स्नेहमयी चौधरी

ढर्रा

जिंदगी एक ढर्रे पर चलने लगी
पर जीवन उसमें से गायब था
वह भौंचक देखती रही।

सफर

सपने सा कटता है जीवन
सुबह से शाम तक का सफर भी कोई सफर है?

प्रवाह

लेटे-लेटे कोई रचना बनती है भला?
बाहर से अंतर प्रवहमान होता ही नहीं
तो खटती रहो—कुछ नहीं होने का

चिपकन

सीली दीवारें भाँय-भाँय करतीं
दोपहर चिपकी है सीने से।

किसी हाल में

वह बाहर का सन्नाटा नहीं था
भीतर का खालीपन था
जो किसी हाल में भरता नहीं, मरता नहीं।

दहशत

कहीं से अपमानित होकर
कहीं और सुख खोजना यदि मन में न रह जाए
तो अजब खालीपन दहशत से भर देता है
और यह खोखलेपन को उजागर करता है।

आवाज

चाँदनी में पहाड़ खुशनुमा लगते हैं
अँधेरे को उजाला करते हैं
झींगुरों की आवाजें साफ सुनाई देती हैं
अपनी कोई आवाज ही नहीं रह गई है।

मौन के साथी

अँधेरे में पहाड़
ऊपर पेड़ नीचे नहीं, भयावह नहीं लगते
बल्कि मौन के साथी लगते हैं।

मेरा साथी

जहाँ बैठती हूँ एक मित्र का चेहरा खोजती हूँ
जो खो गया है
परेशानी की, निराशा की बात करने पर
वह दिशा मोड़ देता था
जिसे संगीत से, फूलों से प्यार था
जिसे उत्साह, खुशी की बातें भाती थीं
वह नहीं मिलेगा मेरा साथी
पर उसे भुला नहीं पाऊँगी।

क्यों?

छोटी-बड़ी रंग-बिरंगी मछलियाँ पानी में
तैरती हैं लगातार
यह गुण दिया
मुझे दिल क्यों दिया जो
हर समय आगबगूला/आगभगोला
(?) बना रहता है
फटने-फटने को।

आज

आज टी.वी. नहीं खुला, पंखा नहीं चला
नल नहीं बहता रह गया
पहाड़ों से लाए पत्थर, पत्ते, घास-फूस वैसे ही पड़े हैं
एक अखरोट फ्रिज में सूख रहा है
चॉकलेट पड़ी की पड़ी रही, छुई नहीं किसी ने
आज दिन रीता ही रहा
पतंगें उड़ने को व्याकुल अछूती पड़ी रहीं।

तो

जब भाँय-भाँय करता हो घर
तो पढ़कर सो जाओ
पिंडा और ब्रह्मांड की बहस छोड़कर।

चुप्पी

बेहद चुप्पी अपने से भी बात नहीं
चुपचाप चुप चाप क्या होता है?

१६६ वैशाली, पीतमपुरा
दिल्ली-११००३४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिन बुलाए मेहमान

● लाला लाजपतराय

साइमन कमीशन भारत आया था। इसी साइमन कमीशन का लाहौर में विरोध करते हुए २० अक्तूबर, १९२८ को लाला लाजपतराय पर पुलिस ने बेरहमी से लाठियाँ बरसाकर उन्हें बुरी तरह घायल कर दिया था। १७ नवंबर को लालाजी की मृत्यु हो गई थी।

इसी साइमन कमीशन का लालाजी ने लाहौर आने से पूर्व, लाहौर असेंबली में अपने भाषण में तर्कपूर्ण ढंग से विरोध किया था। इस ऐतिहासिक भाषण को 'महारथी' पत्रिका ने उसी वर्ष दिसंबर १९२८ के लाला लाजपतराय स्मृति अंक में प्रकाशित किया था। 'महारथी' के इस अंक को सरकार ने जब्त कर लिया था। यह जब्तशुदा विशेषांक महारथी के संपादक श्री रामचंद्र शर्मा 'महारथी' ने मेरे पिताश्री भक्त रामशरण दासजी को भेंट किया था। उनके संग्रहालय में यह महत्त्वपूर्ण विशेषांक संगृहीत है। उसी में से यह महत्त्वपूर्ण लेख यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

श्रीमान्, मैं बड़े उत्तरदायित्व के भाव से अपना प्रस्ताव उपस्थित करता हूँ। प्रारंभ में ही मैं ऐसा करने के कारण बताता हूँ। सबसे पहला कारण यह है कि सरकार या जनता पर, जिन्होंने इस कमीशन का निर्वाचन किया, मुझे कोई विश्वास नहीं। दूसरा कारण यह है कि मुझे इस कमीशन की योग्यता पर विश्वास नहीं। मैं स्वीकार करता हूँ कि सर जॉन साइमन ब्रिटिश जाति में सबसे योग्य व्यक्ति हैं और मैं उनके साथियों को भी भले विचारोंवाला समझता हूँ, परंतु जिस आधार पर वह निर्वाचित किए गए हैं अर्थात् भारत, भारतीय इतिहास और भारतीय राजनीति का अज्ञान मेरी समझ में इस काम के करने के लिए जो उन्हें सौंपा गया है, यही उनकी सबसे बड़ी अयोग्यता है। भारत की समस्या इतनी विस्तृत और जटिल है कि यदि देवता भी स्वर्ग से उतर आएँ तो वे इतने थोड़े समय में जितना उनके पास है, उसे समझ और सँभाल नहीं सकते। मैं समझता हूँ कि कमीशन की करतूत यही होगी कि वह यहाँ की नौकरशाही की बताई बातें ग्रामोफोन के रिकॉर्ड की तरह भर लेगा और तब इंग्लैंड में दूसरे लोगों की सलाह से अपनी सम्मति दूसरे ग्रामोफोन में भर देगा। इस समय के उनके कार्य करने के ढंग से यही पता चलता है। वे जनता से घबराते हैं और छिपते-फिरते हैं। अत: उनके पथ-प्रदर्शक उनसे जो चाहें करा सकते हैं। तीसरा कारण यह है कि मैं किसी भी कमीशन को भारतीय समस्या हल करने के योग्य नहीं समझता। कोई भी कमीशन जातियों के स्वराज्य पाने की योग्यता जाँचने और अपने हित में चलाने योग्य प्रबंध बताने की क्षमता नहीं रख सकता। भारत की समस्या कमीशनों से हल नहीं होगी। यह तो समझौते के विचार से बैठे हुए इंग्लैंड और भारत के प्रतिनिधियों द्वारा होगी और यह समझौता अंत में पार्लियामेंट स्वीकार कर लेगी।

कहा जाता है कि हम इस बात को नहीं समझते कि पार्लियामेंट ही भारत के भाग्य का आदि से अंत तक निर्णय करनेवाली है। श्रीमान्, उनका निर्णय अंतिम भले ही हो, पर मुख्य नहीं है। हमने कभी नहीं कहा कि हम पार्लियामेंट से यह बलपूर्वक कराना चाहते हैं। आपसदारी के समझौते के भाव से जो निश्चय दोनों देशों के हित में हो और जिसे दोनों पक्ष स्वीकार कर लें, वही हमें अभीष्ट है। ऐसा समझौता स्वत: ही पार्लियामेंट को स्वीकार होगा, क्योंकि पार्लियामेंट तत्कालीन गवर्नमेंट की इच्छा के बिना कुछ नहीं करती।

ये कारण सारांश में बता चुकने के बाद कमीशन की नियुक्ति के संबंध में सेक्रेटरी ऑफ स्टेट द्वारा दी गई युक्तियों को लेता हूँ। उनका कहना है कि इस प्रश्न पर विचार और निश्चय करने का उत्तरदायित्व केवल पार्लियामेंट पर ही है, क्योंकि देश का शासन पार्लियामेंट ने ईस्ट इंडिया कंपनी से लिया, भारत को उपद्रव और उत्पात से बचाया और यदि आज ब्रिटिश लोग भारत से चले जाएँ तो फिर वही खलबली मच जाए। दुर्भाग्यवश खलबली और उत्पात के समझने में सेक्रेटरी ऑफ स्टेट और हममें अंतर है। वह इंग्लैंड का भारत के साथ संबंध महत्त्वपूर्ण और शानदार बताते हैं। ब्रिटिश लोगों की दृष्टि में ऐसा हो सकता है, परंतु भारतीयों की दृष्टि में वह उतना ही निंदनीय और पतित है। मैं यह नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब मैं सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की दूसरी बात को लेता हूँ। वह कहते हैं कि यह कमीशन भारत में 'ज्यूरी' की तरह आ रहा है। 'ज्यूरी' का शब्द ही दो पक्षों का होना बतलाता है। तो हमारा कौन सा पक्ष होगा—प्रतिवादी और अभियुक्त? स्वराज्य के लिए हमारी योग्यता के संबंध में कमीशन जाँच करने आई है। क्या आपने कभी जाँच करनेवाली ऐसी ज्यूरी सुनी है, जिसमें केवल विदेशी ही हों। इंग्लैंड में तो ऐसा सिद्धांत नहीं है। यह ज्यूरी जो हमारी योग्यता की जाँच करने आ रही है, पार्लियामेंट के ब्रिटिश मेंबरों की बनी हुई है। यह तो ज्यूरी भी है और जज भी है। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट ने हमें बताया है कि निर्णय ब्रिटिश पार्लियामेंट करेगी और ये लोग उसी पार्लियामेंट के सदस्य हैं। क्या इंग्लैंड के प्रचलित न्यायालयों में यही नियम है। ज्यूरीवाली बात बकवाद मात्र है।

स्वीकार करता कि इंग्लैंड के साथ संबंध होने से भारत का कोई लाभ हुआ हो। हमारा सबसे बड़ा मतभेद यही है।

फिर वह उपद्रव की बात कहते हैं। इससे बढ़कर क्या उत्पात होगा कि विदेशी लोगों द्वारा तोप के निशाने के बल पर नियम चलाया जाए। किसी भी स्वाभिमानी जाति कि लिए यह अग्राह्य है। इससे बढ़कर और क्या गलत होगा कि जिन लोगों के लिए राज्य बनाए जाते हैं, उन्हीं के भाग्य का निर्णय करने में उनका कोई अधिकार नहीं। कोरी धमकियों से उन्नति नहीं हुआ करती। हम धमकियों से भागनेवाले नहीं हैं। मैं अपने लिए कह सकता हूँ कि ब्रिटिश के चले जाने के बाद यदि कोई उपद्रव खड़ा हो तो मैं उससे नहीं डरता। मैं बुरी-से-बुरी स्थिति के लिए तैयार हूँ। हमारी इस वर्तमान दशा से बढ़कर वह और क्या बुरी होगी? हम रसातल तक पहुँच गए हैं। इससे अधिक और क्या होगा? यदि ब्रिटिश सरकार यह समझती है कि उनके हट जाने से हम आपस में लड़ेंगे-झगड़ेंगे तो मैं उस दशा का भी स्वागत करने के लिए तैयार हूँ, क्योंकि लड़ाई-झगड़े के कुछ वर्ष बाद शांति होगी। तत्पश्चात् हमारी अपनी बनाई हुई गवर्नमेंट होगी। जो बाद में उन्नति कर सकती है। योरोपियन सभासद मुझ पर हँसते हैं। मैं कहता हूँ कि खूब हँसो, क्योंकि तुम ऐसे चित्रकार हो, जो स्वयं अपना चित्र बनाता है। यदि तुम हमारे स्थान पर हो तो हँसने के स्थान पर रोओ। हमें दो वर्ष के लिए इंग्लैंड पर राज्य करने का अवकाश दो। तब हम देखेंगे कि कौन रोता है और कौन हँसता है।

मेरे भाई अहमद ने हिंदू-मुसलिम दंगों की बात उठाई है। क्या इंग्लैंड में दंगे नहीं होते? जब हम जानेंगे कि हमें निश्चय करना है तो हम कुछ-न-कुछ स्थिर कर ही लेंगे। इन दंगों का मूल कारण तीसरे पक्ष की उपस्थिति है। हट जाओ और देखो कि क्या हम लड़ते हैं? यह सबसे सरल परीक्षा है। हाँ, इस प्रकार बकवाद करने से कोई लाभ नहीं।

अब मैं सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की दूसरी बात को लेता हूँ। वह कहते हैं कि यह कमीशन भारत में 'ज्यूरी' की तरह आ रहा है। 'ज्यूरी' का शब्द ही दो पक्षों का होना बतलाता है। तो हमारा कौन सा पक्ष होगा—प्रतिवादी और अभियुक्त? स्वराज्य के लिए हमारी योग्यता के संबंध में कमीशन जाँच करने आई है। क्या आपने कभी जाँच करनेवाली ऐसी ज्यूरी सुनी है, जिसमें केवल विदेशी ही हों। इंग्लैंड में तो ऐसा सिद्धांत नहीं है। यह ज्यूरी जो हमारी योग्यता की जाँच करने आ रही है, पार्लियामेंट के ब्रिटिश मेंबरों की बनी हुई है। यह तो ज्यूरी भी है और जज भी है। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट ने हमें बताया है कि निर्णय ब्रिटिश पार्लियामेंट करेगी और ये लोग उसी पार्लियामेंट के सदस्य हैं। क्या इंग्लैंड के प्रचलित न्यायालयों में यही नियम है। ज्यूरीवाली बात बकवाद मात्र है।

आगे चलकर सेकेटरी ऑफ स्टेट ने बताया है कि यह कमीशन भारत में संवाददाता के तौर पर आ रहा है। ज्यूरी संवाद नहीं देती। वह निर्णय देती है, और आगे चलकर उनका कहना है कि १९१९ के ऐक्ट के अनुसार यह कमीशन भेजा जा रहा है। ऐक्ट में तो पालिमेंटरी कमीशन का विचार मात्र उपस्थित किया गया है। लॉर्ड बर्केनहेड बहुत बुद्धिमान् आदमी हैं। परंतु संसार में उनसे भी अधिक बुद्धिमान् विद्यमान हैं। उन्होंने जो इसके अर्थ लगाए हैं, वह आप ही लोग निश्चय करें कि कहाँ तक सही हैं। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट होने के नाते भले ही उनकी बात को कोई न काटे।

कई युक्तियों में से एक यह युक्ति भी दी गई है कि अछूत जातियों के हित को सामने रखकर ऐसा किया गया है। भला अछूत जातियाँ कितनी पुरानी हैं? ब्रिटिश सरकार को उनके अस्तित्व का कब से पता चला? ऐसा जान पड़ता है कि उनका जन्म सन् १९१७ में हुआ। उसके पूर्व वे मानो थीं ही नहीं। अगस्त १९१७ में भारत को स्वराज्य के लिए तैयार करने की ब्रिटिश नीति की घोषणा की गई थी। एंग्लो-इंडियन समाज ने इसको पसंद नहीं किया। उस समय प्रथम बार १९१७-१८ की एजुकेशनल प्रोग्रेस-रिपोर्ट में अछूत जातियों की चर्चा की गई थी। अंग्रेजी सरकार के लिए उसके पूर्व उनका कोई अस्तित्व था ही नहीं। गवर्नमेंट ने क्या किया? अछूत जातियों की जनगणना कराई, ताकि यह पता चल सके कि शिक्षा में उन्होंने कितनी उन्नति की है और उनके लिए क्या किया जा सकता है। जनसंख्या में तीन करोड़ के लगभग गणना हुई। सन् १९२१ की जनसंख्या में वह सवा-पाँच करोड़ बताई गई। जब कभी पूछा जाता है तो कमिश्नर साढ़े पाँच, छह करोड़ बता देते हैं। इन्हीं बेचारे छह करोड़ की दशा पर हमारी सरकार आँसू बहाती है। ब्रिटिश सरकार ने अपने शासन के गत १५० वर्षों में इन अछूत जातियों के लिए क्या किया है?

मेरे भाई के. अहमद पूछते हैं कि मैंने क्या किया है। मैं २५ वर्ष से भी अधिक से दलित जातियों के उद्धार के लिए परिश्रम कर रहा हूँ। गवर्नमेंट ने इस काम में हर घड़ी बाधा डाली है। हमने सरकार से अछूतों के लिए कुएँ बनाने के लिए कहा, पर मना कर दिया गया। हमने उनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षित बनाने के लिए छात्र-वृत्तियाँ माँगी, हमें कोरा जवाब मिला। पुलिस और फौज में उनको स्थान देने के लिए कहा गया। उत्तर मिला, 'हम नहीं कर सकते। दूसरे हिंदू लोग आपत्ति उठाएँगे।' मैं मिस्टर राजा से, जो स्वयं अछूतों में से हैं, पूछता हूँ कि वे बताएँ कि सरकार ने गत पच्चीस वर्षों में उनके लिए क्या किया? सबसे पहले हमने निस्स्वार्थ भाव से यह कार्य उठाया और गत ५० वर्ष से उनको अपना समझकर, जो कुछ हमसे बन रहा है, हम कर रहे हैं। अछूतोद्धार में मैंने अपना अधिक समय और आय का बड़ा भाग लगाया है। मैं पूछता हूँ कि सरकार ने और इन दूसरे सरकारी लोगों ने जो इतनी बड़ी बात कहते हैं, उनके लिए क्या किया है। उन्होंने इनके उद्धार के लिए कोई धन-राशि स्वीकार नहीं की और न ही प्रचार-कार्य के लिए इन्होंने कुछ किया है। मैं इस संबंध में अधिक नहीं कहना चाहता।

नवाब अब्बुल कयूम साहब पूछते हैं कि ये अछूत जातियाँ किसने बनाईं? श्रीमान् अछूत जातियों का तो एक बड़ा लंबा इतिहास है। क्या मैं पूछ सकता हूँ कि इंग्लैंड की श्रमजीवी जातियाँ किसने बनाईं? यूनाइटेड स्टेट्स के हब्शी किसने बनाए? दक्षिण अफ्रीका में गुलाम किसने बनाए, जिनको यूरोपियन लोगों ने धन कमाने के लिए पशुओं से भी गया-बीता समझ रखा है?

मेरे मित्र मि. गोस्वामी ने एक बार जोश में हिंदू सभा के प्रतिनिधित्व की बात को लेकर कुछ कहा था। उसी को लेकर लॉर्ड बर्केनहैड ने 'डूबते को तिनके का सहारा' समझकर उसी बात पर कमीशन बुलाने की एक दृढ़ युक्ति बना ली। यह कितनी नीचता है? हाउस ऑफ कामंस में लेबर मेंबर्स की बातों को यदि हम भी ले लिया करें तो कदाचित् सेक्रेटरी ऑफ स्टेट अथवा महामंत्री पर हमें तनिक भी विश्वास नहीं करना चाहिए। वे लोग इनको झूठे, बेईमान और धोखेबाज बताते हैं।

मैं बताना चाहता हूँ कि क्यों ब्रिटिश सरकार पर जिसने इस कमीशन को निर्वाचित किया है। मैं विश्वास नहीं करता? अगस्त १९१७ में प्रसिद्ध घोषणा के समय मैं यूनाइटेड स्टेट्स में था। मैं मित्र राष्ट्रों की बाहरी और भीतरी नीति से खूब परिचित था। मैं बलपूर्वक कह सकता हूँ कि १९१७ की घोषणा किसी उदारता से अथवा शीघ्रता में नहीं की गई थी। यह तो युद्ध भर के लिए थी। किसी दिए हुए समय के भीतर स्वराज्य पाने की उससे कोई आशा नहीं थी। जिस भले आदमी ने यह घोषणा की थी, उसने तो यह सब नेकनीयती से ही किया था, परंतु उसका मसविदा बनानेवालों ने अपना काम ईमानदारी से नहीं किया। उन्होंने जो कुछ किया, वह अपना काम चलाने के लिए किया। सन् १९१६ में मित्र-राष्ट्र हार रहे थे। मेसोपोटामिया में आपत्ति ही आपत्ति थी। लाख प्रयत्न करने पर भी भारतीय सरकार युद्ध में कोई सहायता न दे सकी। मिस्टर मांटेगू ने हाउस ऑफ कामंस में खुल्लमखुल्ला कह दिया कि सरकार की यह प्रणाली वर्तमान समय के लिए काम की नहीं है। भारतीय योद्धा-जाति होते हुए भी उनकी भक्ति और श्रद्धा से इस प्रणाली के कारण लाभ नहीं उठाया जा सका। यदि हम इस युद्ध में अथवा आगामी युद्धों में भारत की सहायता लेना चाहते हैं तो हमें स्पष्ट बता देना होगा कि देश के शासन में उनका क्या स्थान होगा? और भविष्य में भारत सरकार उनके लिए क्या करना चाहती है? हमें भारतीयों के देशप्रेम से काम लेना चाहिए, जो उनका धर्म बन गया है। तब आप देखेंगे कि हिंदुस्तान आपको युद्ध में सहायता देने के योग्य और तैयार है। मिस्टर लायड जॉर्ज ने उन्हीं दिनों में ग्लास्गो में भाषण दिया था, जिसमें युद्ध के उद्देश्य बतलाए थे। उन्होंने कहा था, "अब हमें सबसे बड़ी और भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृ-भाव व्यक्तियों में नहीं, अपितु छोटी एवं बड़ी बलशाली एवं निर्बल, समृद्ध और साधारण जातियों में—समानता और भ्रातृ-भाव जातियों और व्यक्तियों में—यह चुनौती हमें दी गई है··· इस देश के लोगों से मेरी प्रार्थना है और यदि मेरी प्रार्थना इससे भी परे पहुँच सकती है तो यह है कि हमें अंतरजातीय स्वत्वों और अंतरजातीय न्याय के उच्च आदर्श के लिए युद्ध करते रहना चाहिए, ताकि फिर कभी पाशविक शक्ति न्याय के आसन पर न बैठ सके और न पाशविक बल न्याय करने का ढोंग रच सके।"

सन् १९१६ में युद्ध में मित्र-राष्ट्र हार रहे थे। यूनाइटेड स्टेट्स सम्मिलित नहीं हुआ था और उसके सम्मिलित हुए बिना युद्ध में जीतने की कोई आशा नहीं थी। यूनाइटेड स्टेट्स को सम्मिलित करना चाहते थे और वह सम्मिलित होने को तैयार नहीं था, जब तक कि वहाँ की जनता निश्चित रूप से यह न जान ले कि मित्र-राष्ट्रों के उद्देश्य ऐसे ही पवित्र थे, जैसे कि प्रेसीडेंट विलसन ने उन्हें बताए थे। अमेरिकियों के संतोष के लिए भारत में यह घोषणा की गई थी।

श्रीमान्, जो कुछ उस घोषणा के पश्चात् हुआ है, उससे मेरी बात सिद्ध होती है कि घोषणा नेकनीयती से नहीं की गई। ज्योंही युद्ध की लहर मित्र-राष्ट्रों के पक्ष में होने लगी, यहाँ तक कि युद्ध समाप्त भी नहीं हुआ था, तो भारत सरकार ने क्या किया? लेजिस्लेटिव कौंसिल ने निंदनीय रोलट बिल उपस्थित किए। वे बिल भारतीय जनता पर पूर्ण अविश्वास के आधार पर थे। भारत का प्रत्येक व्यक्ति उनके विरुद्ध था। कौंसिल के सभासदों की इच्छाओं को पद्दलित करते हुए और जन-साधारण की आवाज को ठुकराते हुए भारत सरकार ने बिल को ऐक्ट की शक्ल दे दी।

मैं कहता हूँ, भारत की दशा आज ठीक वैसी ही है, जैसी सुधार दिए जाने के पूर्व थी। निस्संदेह हमें बोलने और अपने विचार सरकार के सामने रखने के कुछ अवसर दिए गए हैं, परंतु हमारी विवशता जैसी की तैसी बनी है।

सरकार के कोई भी वचन हमारी सहायता न करेंगे। हमारी कशमकश का कमीशन के साथ ही अंत नहीं होगा, यह जारी रहेगी। हमारा काम कठिन है, परंतु हम उसे पूरा करेंगे। हम अंग्रेजों से सहायता अथवा दया की इच्छा नहीं रखते। हम अंग्रेजों को यह चेतावनी दे देना चाहते हैं कि हम अपने घर के मालिक बनने के लिए तुल गए हैं और हमें संतुष्ट करने के लिए दिए गए छोटे-छोटे टुकड़ों को हम लेने को तैयार नहीं हैं।

प्रस्तुति : शिवकुमार गोयल
पिलखुआ
गाजियाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता

लालाजी को काव्यमय श्रद्धांजलि

कर्मयोगी लाजपत

● नंददुलारे वाजपेयी

विघ्नों के सर्वोच्च शिखर पर वह करता था अचल-निवास,
उसकी वाणी की निर्झरणी में जीवन था, था उल्लास।
आँखों में उसकी बसता था यह संतापित विश्व विशाल,
मानस में बस प्रतिबिंबित था बंधन हीन व्योम सब काल।
तरुण तपस्वी वह रहता था बंधन उन्मोचन में लीन,
उसने ही स्वच्छंद पवन से सीखा था बनना स्वाधीन।
एक साधना बस उसकी थी कभी न बदला उसका रंग,
उसको क्या विचलित कर पाते भीषणतर द्वंदों के व्यंग।
रही नहीं अब वह स्वरलहरी रहा न वह सुमधुर संगीत,
दुर्गम मग में भ्रांत पथिक को कौन करेगा पुनः अभीत।
कौन हमारे आशा स्वप्नों को विधि सा करके साकार,
चिर आभारी बना सकेगा कौन करेगा यह उपकार।
उस ऋषि ने समाधि ले ली, अब सूना है उसका आवास,
दिनमणि सी उसकी अनिंद्यद्युति किंतु करेगी अमर प्रकाश।

खूने-लाजपत

● भगवानदीन 'दीन'

चढ़ रहा है हर जुबां पर अब जुनूने लाजपत।
क्या कोई तूफान लाएगा ये खूने-लाजपत॥

हो रहे हैं जर्द चेहरे आज क्यों हुक्काम के?
सुर्ख होने चाहिए थे पी के खूने-लाजपत॥

चोट गहरी खाई पर उसने जरा उफ तक न की।
अब मुशर्रह हाल बतलाता है खूने-लाजपत॥

जान क्या शय है भला हुब्बे वतन के सामने।
यह नसीहत दे रहा है हम को खूने-लाजपत॥

इस तरह हुब्बे वतन में मर के जीना सीख लो।
कर रहा है यह मुनादी आज खूने-लाजपत॥

है यकीं अब जल्द ही देखेंगे हम रूये-स्वराज।
कश्कए आजादगां होगा य खूने-लाजपत॥

शाहे-लंका की तरह खूँखार होगी गर पुलिस।
खूने-ऋषि बन जाएगा दम भर में खूने-लाजपत॥

सुर्खरू हिंदोस्तां, इंग्लैंड होगा रू-सियाह।
रंग लाएगा अजब दुनिया में खूने-लाजपत॥

सारी दुनिया भर में रौशन हो गई है बात यह।
बेबहा कुरबानियों में है ये खूने लाजपत॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मरण

कालजयी उपन्यासों के रचयिता देवकीनंदन खत्री

● ध्रुव कुमार

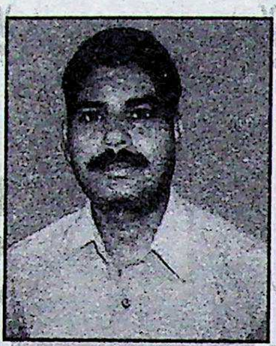

जन्म : 20 दिसंबर, 1965।

शिक्षा : एम.ए., एम.एड., एम.ए.जे.-एम.सी., एम.फिल्. एवं पी-एच.डी.।

प्रकाशन : 'किताबों की दुनिया : पटना पुस्तक मेला', 'जैन धर्म और बिहार', 'बिहार-झारखंड के जैन तीर्थस्थान', 'जैन धर्म के चौबीस तीर्थंकर' के साथ-साथ समाचार-पत्रों में रचनाएँ प्रकाशित।

सम्मान-पुरस्कार : 'कलाश्री सम्मान', 'नवरंग सम्मान', 'रोटरी क्लब पटना सम्मान', 'कलाकक्ष सम्मान', 'भगवान् महावीर शिखर सम्मान'।

बीसवीं सदी के शुरुआती वर्षों में जब देश में साक्षरता दर महज ६.२ प्रतिशत हुआ करती थी, बिहार के मुजफ्फरपुर से एक उपन्यास प्रकाशित हुआ। कुछ ही दिनों में यह उपन्यास इतना लोकप्रिय हो गया कि उसे पढ़ने के लिए बड़ी संख्या में लोगों ने हिंदी सीखी। उस समय के पुराने लोग उर्दू-फारसी और नए जमाने के लोग अंग्रेजी जानते थे। लोग इस उपन्यास को खोज-खोजकर पढ़ते। यह इतना लोकप्रिय हुआ कि इस उपन्यास के लेखक ने इसके कई भाग लिख डाले। ठीक वैसे ही जैसे आज 'हैरी पॉटर' शृंखला के उपन्यास कुछ-कुछ समय के अंतराल के पश्चात् बाजार में आ रहे हैं। फर्क इतना है कि उस समय न तो इतनी उन्नत तकनीक थी और न ही ग्लोबलाइजेशन और मीडिया बूम का दौर, फिर भी यह उपन्यास रहस्य, फंतासी और रोमांच के कारण पाठकों के बीच लोकप्रिय होता चला गया। बीसवीं सदी के शुरुआती वर्षों में धूम मचानेवाले इस हिंदी उपन्यास का नाम है—'चंद्रकांता' और इसके लेखक हैं—देवकीनंदन खत्री। देवकीनंदन खत्री कोई सिद्धहस्त और पेशेवर लेखक-साहित्यकार नहीं थे, लेकिन अपनी कल्पनाओं और अनुभवों के आधार पर तिलिस्म का ऐसा ताना-बाना उन्होंने बुना, जिसमें प्रवेश करने को पाठक व्याकुल हो उठे। इधर देवकीनंदन खत्री की कलम लगातार चलने लगी। पहले 'चंद्रकांता', फिर 'चंद्रकांता संतति' २४ भाग, 'नरेंद्र मोहिनी', 'वीरेंद्र वीर', 'काजल की कोठरी', 'गुप्त गोदना', 'लैला-मजनूँ', 'कुसुम कुमारी', 'भूतनाथ' ६-१५ भाग आदि उपन्यास एक के बाद हिंदी साहित्य की धरोहर बनते गए।

देवकीनंदन खत्री के उपन्यास की लोकप्रियता का एक कारण यह है कि चंद्रकांता शृंखला की रचनाओं में तरह-तरह के यंत्रों की परिकल्पना की गई है, वह लेखक की अपनी उर्वर कल्पना-शक्ति का ही परिणाम है। इनमें कई चीजों का आविष्कार तो उन दिनों हुआ भी नहीं था। तिलिस्मी कल्पना की उड़ान, फंतासी और इस पर से चमत्कारिक भाषा के सहारे किस्सागोई अंदाज। परिणाम यह हुआ कि लोगों ने इन उपन्यासों को हाथो-हाथ लिया। ये किताबें खूब बिकीं। मुजफ्फरपुर, बिहार के नारायण प्रेस और बनारस, उत्तर प्रदेश के लहरी प्रेस से प्रकाशित ये उपन्यास आधुनिक भाषा में बेस्ट सेलर थे। तमाम विरोधों के बावजूद 'चंद्रकांता संतति' हिंदी साहित्य का अनूठा उपन्यास है, जिसका कोई सानी नहीं है।

कहा जाता है कि लोकप्रियता विरोध और विवादों को अपने साथ लेकर आती है और यही हुआ देवकीनंदन खत्री के साथ भी। शायद उनके उपन्यासों की लोकप्रियता और उनकी प्रसिद्धि उन दिनों कुछ लोगों को रास नहीं आ रही थी। उनकी रचनाओं को लेकर पक्ष-विपक्ष में लंबी बहसें चलीं। हिंदी के तमाम लेखक देवकीनंदन खत्री के पक्ष में या विपक्ष में खड़े हो गए। इन सबके बीच सबसे गंभीर आरोप अक्तूबर १९०९ में साहित्यिक पत्रिका 'सरस्वती' में 'हिंदी साहित्य और इसका काम' शीर्षक से लगाया गया। महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादकत्व में प्रकाशित इस साहित्यिक पत्रिका की टिप्पणी में कहा गया कि देवकीनंदन खत्री हिंदी में ऐसा उपन्यास लिखकर हिंदीभाषा की हत्या का पाप कर रहे हैं। यह भाषा का दुरुपयोग और मनुष्य-समाज से भारी शत्रुता का काम है, लेकिन धीरे-धीरे दुनिया ने देवकीनंदन खत्री की प्रतिभा का लोहा माना और उन्हें हिंदी साहित्य में जगह भी मिली। यह एक विचित्र संयोग है कि जिन उपन्यासों की रचना देवकीनंदन खत्री ने वक्त काटने के लिए की, उसे पढ़ने के लिए लोग घंटों बिताने लगे। इन कालजयी उपन्यासों की रचना के पीछे देवकीनंदन खत्री के जीवन से जुड़ी एक रोचक घटना है। इस घटना ने देवकीनंदन के जीवन की दिशा ही बदल दी और उन्हें कालजयी उपन्यासकार तथा अपने जमाने का 'बेस्ट सेलर' लेखक बना डाला। देवकीनंदन खत्री का जीवन भी उनके उपन्यासों की तरह रहस्य, रोमांच और उतार-चढ़ाव से परिपूर्ण था।

उनका जन्म १८ जून, १८६१ को मुजफ्फरपुर, बिहार जिले के पूसा में हुआ था। अब पूसा समस्तीपुर जिले का हिस्सा है। यहाँ उनकी ननिहाल थी। इनके पिता का नाम लाला ईश्वरदास था। ईश्वरदासजी के पूर्वज पंजाब से आकर बनारस में बस गए थे। खत्री परिवार का पुश्तैनी कारोबार हाथी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का हौदा बनाने का था। देवकीनंदन खत्री का लालन-पालन भी अपनी नानी के घर पूसा में हुआ। उन्हें प्रारंभिक शिक्षा उर्दू-फारसी में मिली। बचपन से ही उन्हें जादू-तिलिस्म के किस्से-कहानियाँ पढ़ने में बड़ा मजा आता था। सैर-सपाटे के शौकीन देवकीनंदन को महफिलों में उठने-बैठने और उसे आयोजित करने में खूब मन लगता था। उनका मन तंत्र-मंत्र में भी रमता था। वे देवी के परम भक्त थे । कारोबार के सिलसिले में उनका संबंध राजघरानों से बनने लगा। इसी क्रम में टिकारी राज, गया के महाराज से उनकी घनिष्ठता हो गई। इस घनिष्ठता का लाभ यह मिला कि टिकारी राज के चकिया, नौगढ़ और चुनारगढ़ आदि जंगलों के ठेके मिल गए। वे अपने स्वभाव के कारण इन जंगलों में खूब घूमते थे। शायद घने जंगलों का रहस्य-रोमांच उन्हें अपनी ओर खींचता था। वे अपनी मित्र मंडली के साथ, जिसमें कवि, फकीर, औलिया, तांत्रिक और रियासतों के राजा-राजकुमार शामिल थे, अकसर जंगलों में कई-कई सप्ताह तक प्रवास करते। ऐसे ही किसी प्रवास के दौरान उनके मित्र कवि और तांत्रिक पं. रामानंद ने देवकीनंदन खत्री की बंदूक से एक शेर का शिकार कर लिया। उन दिनों शेर का शिकार सिर्फ राजा के अधिकार क्षेत्र में था। वखजत क्षेत्र में शिकार करने के कारण टिकारी के महाराज नाराज हो गए। नाराजगी इतनी बढ़ी कि उन्होंने देवकीनंदन से सारे ठेके छीन लिये। जब ठेके छीन गए तो शान-शौकत पर भी उसका असर पड़ा। परिणाम यह हुआ कि दोस्त भी बिछड़ने लगे—कुछ राजकोष के डर से और कुछ देवकीनंदन की मुफलिसी के कारण। अब वह अकेले जंगलों में भटकने लगे। उनके लिए समय गुजारना मुश्किल होने लगा। उन्हीं दिनों उन्होंने चुनारगढ़ में 'चंद्रकांता' की रचना की। रुपए-पैसों की कमी न थी, सो चंद्रकांता को मुजफ्फरपुर के नारायण प्रेस में छपवाया। लोगों ने इस उपन्यास को पसंद किया। इससे उनका उत्साह बढ़ा। दोस्तों की सलाह पर 'चंद्रकांता' की अगली कड़ी 'चंद्रकांता संतति' लिखी।

चंद्रकांता संतति की लोकप्रियता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि इस उपन्यास के दो-चार नहीं, कुल २४ भाग लिखे गए। इसी तरह उनके एक और उपन्यास 'भूतनाथ' के छह भाग लिखे गए। शुरू में देवकीनंदन खत्री ने चंद्रकांता के अलावा 'नरेंद्र मोहिन', 'वीरेंद्र वीर' और 'प्रवीण पथिक' उपन्यासों को नारायण प्रेस में छपवाया, लेकिन किताबों की डिमांड इतनी अधिक हुई और इतने संस्करण छपे कि उन्होंने बनारस में एक प्रिंटिंग प्रेस ही लगवा ली। इस प्रेस का नाम 'लहरी प्रेस' रखा गया। बाद के दिनों में उनके सभी उपन्यासों का प्रकाशन और पुन:प्रकाशन इसी 'लहरी प्रेस' से हुआ। देवकीनंदन खत्री 'उपन्यास लहरी' नाम से एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया करते थे। इसी पत्रिका में उन्होंने १८९४ से १९०५ ई. तक लगभग नौ वर्षों तक चंद्रकांता संतति के २४ भागों, यानी लगभग दो हजार पृष्ठों का प्रकाशन शृंखलाबद्ध तरीके से किया। यह हिंदी के पाठकों के लिए सार्थक उपहार था, जिसे हासिल करने के लिए लाखों लोगों ने हिंदी सीखी। इसी तरह २१ भागों में विभक्त 'भूतनाथ' उपन्यास देवकीनंदन खत्री के निधन के बाद भी उनके बेटे द्वारा लिखा जाता रहा। वस्तुत: देवकीनंदन खत्री इस उपन्यास के प्रारंभिक छह भाग ही लिख पाए थे कि १९१३ में ५२ वर्ष की अवस्था में उनका असामयिक निधन हो गया, लेकिन इसकी लोकप्रियता और पाठकों की माँग पर उनके पुत्र ने एक नहीं, बल्कि १५ भाग लिखे। प्रथम छह भाग का प्रकाशन देवकीनंदन खत्री के जीवन काल में १९०७ से १९१२ के मध्य में हुआ, जबकि शेष १५ भाग १९१५ से १९२५ के बीच प्रकाशित हुआ। 'भूतनाथ' की कहानी भी 'चंद्रकांता' और 'चंद्रकांता संतति' की तरह कौतूहल, षड्यंत्रों और जटिल कथा सूत्रों के सहारे आगे बढ़ती है। एक लिहाज से 'भूतनाथ' भी 'चंद्रकांता संतति' का परिशिष्ट भाग प्रतीत होता है। अलबत्ता 'भूतनाथ' में पात्रों का मानसिक तनाव और अंतर्द्वंद्व ज्यादा दिखाई पड़ता है। इस लिहाज से देवकीनंदन खत्री की इस कृति को मनोवैज्ञानिक उपन्यास की श्रेणी में जगह दी गई है। १९०२ में प्रकाशित 'काजल की कोठरी' उपन्यास का रहस्य और रोमांच भी पाठकों के सिर चढ़कर बोलता है।

देवकीनंदन खत्री के उपन्यास का रचनाकाल भारतीय समाज के लिए एक गहरे संक्रमण का काल रहा। पुरानी धार्मिक और सामाजिक मान्यताएँ टूट रही थीं, लेकिन उनके सत्पात्र विवेक और सद्प्रवृत्तियों से परिचालित हैं तथा स्त्री की कायिक पावनता के सनातन हिंदू आदर्शों की प्राणपण से रक्षा करते हैं। एक तरफ तिलिस्म और अय्यारी उपन्यासों को रोचक बनाने में सफल हैं, वहीं कथानक को भौगोलिक विस्तार और बिखरे सूत्रों की जटिलता पाठकों को रोमांचित करती है। उनके उपन्यासों को पढ़ते हुए पाठक स्वयं को तिलिस्म-ऐय्यारी की सुनहरी एवं कौतूहल भरी दुनिया में पाते हैं। उनके उपन्यासों की सफलता की सबसे बड़ी वजह यही थी कि खत्रीजी अपने पाठकों से जीवंत और आत्मीय संपर्क स्थापित करने में सफल हुए थे। शायद वह अपने युग के पहले लेखक थे, जिन्होंने यह सफलता हासिल की थी। बालकृष्ण भट्ट, राधाकृष्ण दास और भारतेंदु युगीन लेखकों के सुधारवादी सामाजिक उपन्यासों से इतर 'चंद्रकांता' हिंदी उपन्यास जगत् में एक नए तेवर के साथ सामने आया था। वस्तुतः यह एक प्रेम कथा है, जिसमें नौगढ़ के राजा सुरेंद्र सिंह के पुत्र राजकुमार विरेंद्रसिंह एवं विजयगढ़ के राजा जयसिह की पुत्री राजकुमारी चंद्रकांता के एक-दूसरे पर मर-मिटने और शत्रुओं से टकराने, उनपर विजय पाने की विस्तृत कहानी है। लेकिन यह हिंदी साहित्य और हिंदी जगत् के लिए घनघोर आश्चर्य का विषय है कि आखिर क्यों कालजयी उपन्यासों के रचयिता और अपने समय के दुनिया के 'बेस्ट सेलर' लेखक को भुला दिया गया। वर्ष २०११ न सिर्फ बँगला के महान् लेखक-साहित्यकार रवींद्रनाथ ठाकुर का १५०वीं जयंती वर्ष है, बल्कि यह वर्ष देवकीनंदन खत्री का भी १५०वीं जयंती वर्ष है, किंतु अफसोस। हिंदी जगत् ने इसकी सुध नहीं ली। खेमों और वर्गों में बँटे हिंदी के रचनाकारों ने उन्हें भुला दिया। यहाँ तक कि हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाओं ने भी उन्हें किसी बहाने स्मरण करना उचित नहीं समझा। क्या देवकीनंदन खत्री इसलिए भुला दिए जाएँगे कि उन्होंने साहित्य में किसी खेमे, गुट या वाद के बजाय सिर्फ और सिर्फ पाठकों का ध्यान रखा? क्या वे इसलिए भुला दिए जाएँगे कि उन्होंने अपने समकालीन साहित्य के मठाधीशों की अधीनता स्वीकार करने के बजाय, स्थापित धारा का अनुकरण करने के बजाय अपनी अलग राह पकड़ी, जो सीधे पाठकों के हृदय तक जाती थी। हिंदी के लिए इससे बड़ा दुर्भाग्य क्या होगा कि आज हमें जिन पर गर्व होना चाहिए, उन्हें भुलाया जा रहा है।

पीढी लेन, महेंद्रू
पटना-८०००६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

कबीर : एक नूतन चिंतन

● शशिकांत सिंह 'शशि'

प्रकाशन : 'समरथ को नहिं दोष' *(व्यंग्य-संग्रह)*, 'ऊधो दिन चुनाव के आए' *(व्यंग्य-काव्य)* एवं पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य लेख प्रकाशित।

सम्मान-पुरस्कार : क्षितिज (त्रैमासिक पत्रिका) द्वारा 'हरिशंकर परसाई सम्मान', काशी हिंदू विश्वविद्यालय द्वारा 'बेस्ट स्क्रिप्ट राइटर अवार्ड'।

संप्रति : परास्नातक शिक्षक एवं 'प्रलाप' व्यंग्य पत्रिका के संपादक।

आधुनिक शोधों-प्रतिशोधों के उपरांत कबीर साहब के बारे में कुछ नूतन तथ्य सामने आए हैं। इन तथ्यों के आधार पर इस बात का खुलासा होता है कि कबीर कवि क्यों हो गए? अपने फलते-फूलते बुनकरी को किनारे करके किन परिस्थितियों में कविता करने लगे। कौन सा गम है जो बार-बार फूटकर उनकी कविताओं में आता है? उन्होंने कविताई करते-करते संत होने का निर्णय क्यों लिया? संत हुए तो इतने अक्खड़-फक्कड़ कैसे हो गए? शब्दों को दरेरा क्यों देने लगे? क्या आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के रूप में कबीर का ही दूसरा जन्म है? शोध के सारे निष्कर्ष प्रति-शोध पर आधारित हैं।

यह तो सर्वमान्य तथ्य है कि कबीर साहब का जन्म हुआ था और उनके माँ-बाप भी थे। इस पर भी विद्वानों में मतैक्य है कि उनका जन्म भारत में ही हुआ था। यह भी निर्विवाद तथ्य है कि उनकी कविताएँ भारतीय भाषाओं में ही हैं। उनकी कविताओं के आधार पर जो बातें सामने आती हैं, वे ये हैं कि कबीर साहब की किसी माया देवी से अनबन थी। अब वे मायादेवी उनकी कौन थीं। इस पर विद्वान् मौन हैं। कविताओं में बार-बार माया को कोसना तथा उलटा-सीधा कहना, गाली-गलौज करना यह सिद्ध करता है कि कहीं-न-कहीं माया के प्रति कबीर साहब के मन में तीव्र घृणा के भाव हैं। ऐसी घृणा केवल प्रेम के उपरांत ही उत्पन्न होती है। अत: हो सकता है कि माया रानी उनकी प्रेमिका रही हों। भक्ति काल में कवि बिलकुल ही हृदयहीन होते हों, ऐसी बात भी नहीं है। तुलसीदासजी रत्ना के पीछे भरी यमुना पार कर गए थे। सूरदासजी के बारे में भी विद्वान् लोग प्रेमकथाएँ कहते रहते हैं। उनकी आँखें भी कहते हैं, प्रेम की बलिवेदी पर ही चढ़ी थीं। विद्यापति के बारे में भी हमारे एक विद्वान् आलोचक कहते हैं कि 'राधा', जिनके प्रेम का वर्णन उनकी कविताओं में है, वे उनकी अपनी राधा अधिक हैं, कृष्ण की कम। संभव है, ऐसे ही किसी नाजुक मौके पर कबीर साहब को भी ज्ञान प्राप्त हुआ हो कि समय नहीं गँवाना चाहिए। प्रेम ही संसार का सार है, अत: यथाशीघ्र प्रेम कर डालना चाहिए। विद्वान् होने के लिए पोथियों की नहीं, प्रेम की जरूरत है। इतिहास गवाह है, पहले लोगों को ज्ञान प्राप्त हो जाया करते थे। बंदा पीपल के नीचे दस-बारह साल बैठा और उसे ज्ञान प्राप्त हो गया कि संसार मिथ्या है। कबीर साहब को प्रेम के बारे में इस किस्म का ज्ञान प्राप्त हो गया होगा। उन्होंने लिखा भी है कि—

पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय॥

प्रेम के बारे में ऐसे महान् विचार तो आज के बालकों में छठे साल में ही उत्पन्न हो जाते हैं, उसके बाद से ही वे प्रेम प्रयास करने लगते हैं। कबीर साहब को जब प्रेम की सार्थकता समझ में आ गई तो उनकी समझ में यह भी आ गया कि जीवन में वक्त की अत्यंत कमी है। कल किए जानेवाले सारे कामों को आज कर डालना चाहिए। क्या पता कब प्रलय हो जाए। उन दिनों प्रलय वगैरह हो जाया करते थे।

पुन: एक बार ये बात विद्वानों के सामने आ जाती है कि माया रानी कौन थीं? उनके पिता कौन थे? किस जाति या धर्म के थे? उनकी कबीर के साथ पहली मुलाकात कहाँ और किन हालातों में हुई? कबीर साहब की कविताओं के अध्ययन-अनुशीलन के पश्चात् ये बात सामने आती है कि माया देवी के जाति-धर्म का पता किसी को नहीं है। तो, जिस प्रकार हम कबीर के बारे में अटकलों के आधार पर ही काम चलाते हैं, उसी प्रकार माया रानी के बारे में भी कुछ अटकल सेट कर लेते हैं। हो सकता है कि बाद में यही प्रमाण का रूप ले ले। संभव है कि माया रानी कबीर साहब के पड़ोस में रहती हों और उनके पिता पंडित हों। पंडित होने के कारण वे कबीर से माया की शादी नहीं करना चाहते हों। उनके जाति-धर्म के बारे में पूछते हों। अब कबीर क्या बताते? जो बात आज तक आलोचकों को भी पता नहीं, उस जमाने में कबीर कहाँ से जान जाते? वे बेचारे तो आज तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'खाला का घर' बार-बार कबीर की कविताओं में आता है। शायद उनकी खाला उन्हें बहुत प्यार करती थीं। माया रानी के कारण ही उन्हें खाला के घर से भी निकलना पड़ा हो। माँ-बाप की अनुपस्थिति में हो सकता है कि वे खाला के घर रहने चले गए हों। कहानी में सस्पेंस तब आता है जब माया रानी की शादी तय हो जाती है। कविताओं का अध्ययन-अनुशीलन करने के बाद ये बात सामने आती है कि मायारानी की शादी जिस आदमी से तय हुई थी, उनका नाम हरि था। हो सकता है कि माया रानी ने ही कबीर को बताया हो—

अपने माता-पिता के बारे में आलोचकों से पूछते ही रहते हैं। इन्हीं कठिनाइयों से गुजरकर उनकी समझ में ये बात आ गई कि—

कबीरा यह घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै हाथि करि, सो पैसे घर माहिं॥

'खाला का घर' बार-बार कबीर की कविताओं में आता है। शायद उनकी खाला उन्हें बहुत प्यार करती थीं। माया रानी के कारण ही उन्हें खाला के घर से भी निकलना पड़ा हो। माँ-बाप की अनुपस्थिति में हो सकता है कि वे खाला के घर रहने चले गए हों। कहानी में सस्पेंस तब आता है जब माया रानी की शादी तय हो जाती है। कविताओं का अध्ययन-अनुशीलन करने के बाद ये बात सामने आती है कि मायारानी की शादी जिस आदमी से तय हुई थी, उनका नाम हरि था। हो सकता है कि माया रानी ने ही कबीर को बताया हो—

हरि मेरे पियु मैं हरि की बहुरिया।

हरि बाबू काम-धाम क्या करते थे, ये तो पता नहीं चलता। हाँ, कबीर का हरि से शायद कोई झगड़ा-फसाद भी हुआ था। खून-खराबे तक की नौबत आ गई थी। कबीर लिखते हैं—

हरि मरिहैं तो हमहुँ मरिहैं
हरि न मरिहैं तो हम काहे मरिहैं।

इतने झगड़े-फसादों के बाद भी जब माया रानी का पिता अपनी कट्टरता का त्याग नहीं करता है तो कबीर को जाति-पाँति से सख्त एलर्जी हो जाती है। वे कट्टरता के खिलाफ हो जाते हैं। एक बात तो साफ-साफ कहते हैं। हो सकता है कि पंडितजी के सामने ही कह दिया हो कि माला फेरने से कुछ नहीं होगा। यह तो एक प्रकार का ढोंग है। पाथर को पूजने से यदि भगवान् मिले तो मैं पहाड़ को पूजने के लिए तैयार हूँ। मूर्ति तो कुछ खाती नहीं, बस पंडित लड्डू लपेटकर चल देते हैं।

माला तो कर में फिरै, जीभ फिरैं मुख माहिं।
मनवा तो चहुँ दिसी फिरै, यह तो सुमिरन नाहिं॥

कबीर क्रांतिकारी आदमी थे। उन्हें ज्ञान नहीं था कि धर्म-कर्म पर ऐसी बातें कहना सामाजिक शिष्टाचार के खिलाफ माना जाता है। राजनीतिक स्थायित्व के विरुद्ध माना जाता है। समझदार लोग इन चीजों की चर्चा नहीं करते। बहुत हुआ तो बंद कमरे में विमर्श कर लिया। खुलकर ऐसी बातें कहने से समाज की शांति भंग होती है। समाज की शांति बड़ी चीज होती है। आज भी देखिए, जो लोग धर्म के नाम पर दुकान चला रहे हैं वे लोग भी शिष्टाचार का दामन नहीं छोड़ते। दंगे, आतंकवाद जो भी संपादित करना हो, चुपके से करते हैं। आमने-सामने आकर नहीं बोलते। कबीर को समझानेवाला तो कोई था नहीं। एक साहब साधो थे वे भी लगता है कि उन्हें कुछ ज्ञान नहीं देते। तभी तो एक बार कबीर ने साफ-साफ ऐलान कर दिया—

प्रेम गली अति साँकरी ता में दुइ न समाय।
जो हरि है तो मैं नहीं, जो मैं हूँ हरि नाय॥

माया देवी के पूज्य पिता अत्यंत कुपित हुए। आज का सभ्य समाज होता तो ऑनर किलिंग हो जाती। जाति और कुछ कराए या न कराए, खून-खराबा तो करा ही सकती है। जाति के नाम पर तो प्रेम के खिलाफ हमेशा फतवे जारी होते रहते हैं। कबीर और पंडितजी में शायद अच्छी-खासी गाली-गलौज हो गई। पंडितजी ने चीखकर कहा—

'कबीरा कुत्ता राम का।'

कबीर तो थे ही क्रांतिकारी स्वभाव के कवि। उन्होंने भी पीठ नहीं दिखाई। मैदान से भागनेवालों में से नहीं थे। गाली देने की विधा में कोई अलग से दीक्षित तो होना नहीं पड़ता। यह तो एक स्वाभाविक गुण है, जो प्रत्येक आदमी में जन्म से ही रहता है। कबीर तो फिर भी गाँव में पले-बढ़े थे। इस विधा पर खासी पकड़ रखते थे। उन्होंने भी चीखकर कह दिया—

जो बाभन तू बाभनी जाया, आन राह से क्यों नहीं आया।

आधुनिक चिंतन बताता है कि कबीर जो जाति-विरोधी हो गए इसके पीछे इन घटनाओं का भी स्पष्ट रूप से प्रभाव पड़ा होगा। किशोरावस्था का गलियारा पार करके कबीर अब जवानी के राजमार्ग पर आ गए थे। प्रेम की पीड़ा कम होने का नाम नहीं ले रही थी। माया देवी के डंक का जहर अभी कम नहीं हुआ था। हम देखते हैं कि कबीर की कविताओं में बार-बार नारी के प्रति जो द्रोह की भावना दिखती है, उसके पीछे कबीर साहब का यही टूटा हुआ दिल है। गालिब साहब की तरह अगर कबीर के घर की तलाशी ली जाती तो हो सकता है हसीनों के खतूत और तसवीर-ए-बूताँ निकलते। कबीर का दर्द देखिए—

नारी की झाँई पड़े अंधे होत भुजंग
कबीरा उनकी क्या गति नित नारी के संग॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाद की कविताओं में कबीर की यह पीड़ा फूट-फूटकर निकलती है। माया देवी को कोसते-कोसते उनका जीवन बीता। यह भी हो सकता है कि माया देवी की शादी मगहर में हुई हो, क्योंकि कबीर अपने अंतिम समय में मगहर चले गए थे। लेकिन इसके पीछे कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता। जब तक कोई प्रमाण नहीं मिलता तब तक किसी निष्कर्ष पर पहुँचना जल्दबाजी होगी। ये बात तो निर्विवाद रूप से सभी विद्वान् मानते हैं कि माया के प्रति कबीर साहब बड़े कठोर शब्दों का प्रयोग करते रहे हैं—'माया महाठगिनी मैं जानी'। अब कबीर घनानंद तो थे नहीं कि अपनी सुजान के प्रति हमेशा कोमलकांत पदावली का ही प्रयोग करें। सुजान चाहे दरबार में नाचें या किसी मंदिर में पूजा करे, प्रेमी घनानंद की सेहत पर कोई फर्क नहीं पड़ता। कभी भी प्रेम में गाली-गलौज पर नहीं उतरे। बस हाय-हाय करते और कविताएँ लिखते रहे। युग का अंतर भी एक बड़ी बात है। भक्तिकाल का कवि अगर प्रेम भी करता तो ऐलानिया तौर पर कह नहीं सकता था। अपनी राधा को मोहन की राधा में ही ढूँढ़ कर कविताएँ रचकर खुश हो सकता था। अपने विद्यापति क्या सचमुच कान्हा की राधा के लिए ही इतने मधुर गीत लिखे। कदंब के पेड़ के नीचे राधा रानी खड़ी हैं और कृष्ण यमुना के किनारे वंशी बजा रहे हैं। कभी कुंजों में तो कभी कछारों में विद्यापति की राधा हर जगह मिलती है। मिलन-ही-मिलन है, विरह नाममात्र का। सूरदास की राधा बेचारी रोती बिसुरती रह गई। मिलन थोड़ा सा और विरह की भयानक आग। कभी मधुवन को कोस रही हैं तो कभी भ्रमर को। कभी कुबरा को गालियाँ दे रही हैं तो कभी अपनी किस्मत को रो रही हैं। सूरदास बेचारे थे तो नेत्रहीन, किसी राधा ने इनको मिलने नहीं दिया होगा। बस इन्होंने भी राधा को कृष्ण से मिलने नहीं दिया। भक्तिकाल के विपरीत रीतिकाल के कवि काफी 'बोल्ड' और 'मॉड' हैं। उन्हें पता है कि प्रेम के अतिरिक्त जगत् में जो कुछ है वह खार है। अपनी राधा को कृष्ण के बहाने जा पकड़ते हैं और फिर मत पूछिए। किसी ईमानदार कवि ने तो स्वीकार किया है—

आगे के सुकवि रीझिहें तो कविताई न तो
राधा कान्ह सुमिरन के बहानो है

अंत में, कबीर साहब अपने को खुश करने के लिए लिखते हैं—

कबिरा माया पापिनी, फंदा ले बैठी हाटि।
सब जग तो फंदो पड़ा, गया कबीरा काटि॥

अपने मन को समझाने के लिए इससे अच्छा क्या कह सकते थे। मन को समझाने के लिए कुछ-न-कुछ खयाल तो पालना ही पड़ता है। अपने गालिब साहब कितने खयाल पालते थे। एक-एक ख्वाहिश पर दम निकलता था, फिर भी कुछ नामाकूल ख्वाहिशें बच ही जाती थीं। दम ही बाकी नहीं रहता था। प्रेम की इस पीड़ा ने कबीर को संत बना दिया और उसके बाद की कविताएँ कुछ उलटी-सीधी होने लगीं। आम आदमी का कवि ऐसी कविताएँ लिखने लगा कि समझने के लिए लियोनार्दो द विंची का दिमाग चाहिए। आखिन की देखी लिखनेवाला कवि इंगला, पिंगला, सुषुम्ना, ताना, भरनी इत्यादि की कठिन कविताएँ लिखने लगा। मुक्तिबोध तो फिर

उनकी कविताओं में जो भयानकता है वह हमारी नासमझी का परिणाम है। बहरहाल उनकी कविताएँ जब लोगों की समझ से बिलकुल ही बाहर जाने लगीं तो लोगों ने उनको रामानंदजी के पास जाने की सलाह दी। रामानंदजी को कविताओं की भयानकता का अंदाजा था, इसलिए वे मिलते ही नहीं थे। एक दिन सुबह स्नान करने के लिए गंगा में गए। कबीर साहब पहले से ही घात लगाकर बैठे थे। अपनी कविताओं के साथ उन पर हमला कर दिया। रामानंदजी ने नुस्खे के तौर पर कोई दीया कबीर को पकड़ा दिया।

भी कुछ कसरतों के बाद समझ में आ जाते हैं कि रक्तस्नात पुरुष कौन है। ब्रह्मराक्षस कौन है। पर कबीर पकड़ से बाहर होते चले जा रहे थे। भटकने की लत भी बाद में पड़ गई। कंबल का धंधा करने की फुरसत ही नहीं मिल रही थी। वाराणसी से मथुरा, द्वारका, हरिद्वार सब जगह गए। पंजाब वगैरह की भी यात्रा की, क्योंकि उनकी कविताओं में पंजाबी के शब्द भी इफरात से पाए जाते हैं। भटकने का प्रमाण उनकी कुछ कविताओं में भी मिलता है—

मन मथुरा तन द्वारिका काया कासी जान।

यही दौर था जब कबीर, उलटबासियाँ लिखने लगते हैं। कवि जब प्रेमी हो और प्रेम में ठुकरा दिया जाए, कितना खतरनाक हो सकता है, इस बात की खबर उनकी इन कविताओं से लगती है।

बैल बियाय, गाय भई बाँझ।

बैल बच्चे दे रहे हैं और गाय बाँझिन हो गई हैं। आ रही है न दया। और देखिए, हद है।

बिन मुख खाइ, चरन बिनु चाले
बिनु जिभ्या गुन गावै।

'बरसै कंबल भीजे पानी' जैसी महान् रचनाएँ भी कबीर साहब से ही निकली हुई हैं। इसमें कुछ भी आश्चर्य की बात नहीं। एक और महान् आत्मा हो गए—बाबा गोरखनाथ। उन्होंने भी उलटे-सीधे दोहे खूब कहे, लेकिन उन पर प्रेम का आरोप नहीं लगाया जा सकता। बेचारे तो योगी थे। उन्होंने तो मच्छंदर नाथ के बहकावे में आकर उलटी-सीधी बातें कहीं। यही बात कबीर साहब पर लागू नहीं होती। उन्होंने तो स्वयं घोषणा की थी कि—'सब कहते उरझावन हारि, मैं कहता सुरझाई रे। सुरझाकर कहने का वायदा करके भी उन्होंने इतने खतरनाक दोहे क्यों कहे, ये बात जब आलोचक नहीं समझ पाए तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन समझेगा ? विद्वान् कभी एकमत पर नहीं पहुँच सकते, इस बात पर भी नहीं पहुँचे। शोधों के बाद जो प्रतिशोध किए गए उससे ये बात सामने आती है कि उनकी कविताओं में जो भयानकता है वह हमारी नासमझी का परिणाम है। बहरहाल उनकी कविताएँ जब लोगों की समझ से बिलकुल ही बाहर जाने लगीं तो लोगों ने उनको रामानंदजी के पास जाने की सलाह दी। रामानंदजी को कविताओं की भयानकता का अंदाजा था, इसलिए वे मिलते ही नहीं थे। एक दिन सुबह स्नान करने के लिए गंगा में गए। कबीर साहब पहले से ही घात लगाकर बैठे थे। अपनी कविताओं के साथ उन पर हमला कर दिया। रामानंदजी ने नुस्खे के तौर पर कोई दीया कबीर को पकड़ा दिया, जैसाकि कबीर की कविताओं के अध्ययन अनुशीलन से ज्ञात होता है। दीये का जलाना-बुझाना इतना आसान था भी नहीं। घासलेट उस जमाने में भी इतनी सस्ती नहीं रही होगी। बेशक अकबर का राज्य था, मगर उस बेचारे को रहीम, तानसेन, अबुल फजल जैसे कवियों ने इतनी कविताएँ सुनाई थीं कि सोचने-समझने की स्थिति में नहीं था। मंत्री था बीरबल तो वह लतीफे सुनाकर अमन-चैन का ऐलान कर दिया करता था। अकबर खुश तो सब खुश। घासलेट जुटाने में ही कबीर इतने परेशान हुए कि माया का दर्द जाता रहा। इसके अलावा रामानंदजी ने कौन-कौन से नुस्खे आजमाए ये तो पता नहीं, लेकिन कविताओं के अध्ययन और अनुशीलन से ज्ञात होता है कि एक राम-नाम का नुस्खा उन्होंने अवश्य दिया। यही नुस्खा कबीर के काम आ गया। उन्होंने अपने मन और तन की पीड़ा के लिए निश्चय किया कि—

यह तन जालौ मसि करौं, लिखौं राम के नाऊँ।
लेखनी करौं करंक की लिखी लिखी राम पठाऊँ॥

राम के नाम उन्होंने कितने खतों-खुतबात लिखे ये तो पता नहीं, पर बाद की कविताओं में कबीर फिर से रंग में लौट आए। साधारण भाषा में असाधारण भाव की कविताएँ करने लगे। रामनाम का मंत्र उनके काम आ गया। काम तो आज भी आ जाता है, मगर काम अलग है। अब वे पूरी तरह से कवि हो गए। कविताएँ भी सुंदर-सुंदर लिखीं। रस-अलंकार आदि दृष्टिकोणों से उनकी कविताएँ अच्छी होने लगीं। भाव-सौंदर्य और अर्थ-सौंदर्य दोनों निखरकर सामने आए। एक कविता देखिए—

चकवा बिछुड़ी रैन की, आइ मिली परभाति।
जो जन बिछुड़ि राम से, ते दिन मिले न राति॥

अब कबीर अमरत्व चाहते थे। उनकी इच्छा थी कि खूब छपें। लोग बाग पढ़ें और उनको एक महान् कवि के रूप में जानें; मगर समीक्षकों से उनकी बनती नहीं थी। समीक्षक और आलोचक उस जमाने में भी जाति और जमात के अनुसार ही मौलिक चिंतन करते थे। कबीर पर आरोप लगाए गए कि उनकी कविताओं में नारे के अलावा कुछ भी नहीं है। शास्त्रीयता के आधार पर उनकी कविताओं को खारिज कर दिया गया। ज्यादा-से-ज्यादा उन्हें भक्त मान लिया गया। कुछ दरियादिल लोग उन्हें संत कवि कहने लगे। मतलब यह कि संत पहले, कवि बाद में। यह बात कबीर के कवि को कचोटती जरूर थी। जमाना भी इतना एडवांस नहीं था कि छद्म नाम से अपनी ही किसी कविता की आलोचना की जाए या किसी महान् आलोचक के पाँव पकड़कर अपने नाम का सर्टीफिकेट ले लिया जाए। अपनी जाति का कोई समीक्षक-आलोचक मिल जाए तो उससे अपनी कविताओं का लोकार्पण करवाकर स्थापित हो जाया जाए। यही कुंठा कबीर को खाए जा रही थी। इसी ऊहापोह में एक बार मगहर में उनकी आत्मा शरीर से कूच कर गई। कूच करने के पहले आत्मा को काफी कष्ट हुआ। ऐसा लगता है, शायद उनकी हालत गालिब जैसी हो गई हो, क्योंकि दोनों की कलम ऐसी ही गवाही देती है। कबीर कहते हैं—

साईं इतना दीजिए जामैं कुटुंब समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ साधु न भूखा जाय॥

गालिब ने फरमाया—

नाकर्दा गुनाहों की भी हसरत की मिले दाद
या रब अगर उन कर्दा गुनाहों की सजा है।

ये दोनों ही क्यों, कलम के सच्चे सिपाहियों का अंत ऐसा ही होता है ? तुलसी को देखिए, अंतिम समय में बीमारियों ने तो हमला किया ही, साहित्यकारों ने भी कम नहीं सताया। रामजी के यहाँ अर्जी भेजनी पड़ी तुलसी को। मुक्तिबोध को अंतिम समय में बेबसी और भय को झेलना पड़ा और अस्पताल में अंतिम साँस ली। निराला का दिमागी संतुलन खो गया। बहरहाल कबीर साहब तो थे ही जूझनेवाले जीव, हजारों ख्वाहिशें लिये कूच कर गए।

कुंठित और दमित इच्छाएँ आदमी का पीछा नहीं छोड़तीं। ऐसा माना जा सकता है कि कबीर इस धरती पर दुबारा अपनी कविताओं के कारण पैदा हो गए। इस बार पढ़े और जमकर पढ़े। शांति निकेतन जैसी संस्था में पढ़ाए भी। नाम भी खूब कमाया। तब अपनी पुरानी इच्छा पूरी की। अपने ही नाम से एक किताब छपवाई—'कबीर'। उन्होंने अपने ही तरह एक और भटके गुमनाम कवि की आत्मकथा भी लिखी—'बाणभट्ट की आत्मकथा'। इस जन्म में उन्हें लोग आचार्य कहने पर बाध्य हो गए। पूरा नाम था—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी। उन्होंने कोशिश की तो उनकी कोशिशें रंग लाईं। उनके नाम का सिक्का चल पड़ा। जो लोग कबीर के नाम पर नाक-भौं सिकोड़ते थे, वे लोग कबीर की माला हाथ में लेकर निकल पड़े। प्रगतिशीलता के ब्रांड बन गए कबीर। अब उनकी कविताओं में शास्त्रीयता भी दिखने लगी। काश ! हर अच्छे कवि का पुनर्जन्म हो, ताकि वह कम-से-कम अपने को समीक्षकीय अवहेलना से बचा सके। जनहित में जारी यह मौलिक चिंतन आशा है, विद्वत् वर्ग को पसंद आएगा। यह नितांत नूतन चिंतन है, जिसके बाद मैं आशा करता हूँ कि मेरा नाम भी बड़े आलोचकों में शामिल कर लिया जाएगा, क्योंकि मेरे निष्कर्ष भी शोधों और प्रतिशोधों के आधार पर ही निश्चित किए गए हैं। प्रति-शोध के बाद ही मौलिक मान्यताएँ निकलकर सामने आती हैं।

जवाहर नवोदय विद्यालय,
शंकरनगर, नांदेड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

लोक में बाल साहित्य

● श्रीप्रसाद

जन्म : ५ जनवरी, १९३२।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी.।
पाँच दशक से अधिक समय से बाल साहित्य की सभी विधाओं में सृजन। पचास से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। 'मेरा साथी घोड़ा' को केंद्र का और 'आ री कोयल' को उ.प्र. का सर्वोच्च पुरस्कार। स्वीडिश भाषा के विश्व बालकाव्य संग्रह में भारत से प्रतिनिधित्व। उ.प्र. हिंदी संस्थान द्वारा 'बाल साहित्य भारती' सम्मान और हि.सा. सम्मेलन, इलाहाबाद से 'साहित्य महोपाध्याय' की मानद उपाधि प्राप्त। अन्य अनेक सम्मान और पुरस्कार।

बाल साहित्य का एक रूप लोक बाल साहित्य है। आधुनिक बाल साहित्य को 'नागर' या 'नगरीय बाल साहित्य' कहा जा सकता है, जबकि परंपरा से प्राप्त लोक में प्रचलित बाल साहित्य 'लोक बाल साहित्य' है। 'लोक' संस्कृत का शब्द है, जिसका तात्पर्य है, 'समाज या संसार।' लोक का ही अपभ्रंश 'लोग' है, पर साहित्य के संदर्भ में लोक 'फोक' का अर्थवाची है। इस प्रकार लोक साहित्य अंग्रेजी का फोक लिटरेचर है। यह साहित्य एक परंपरा के रूप में है। इसका कोई व्यक्ति विशेष सर्जक नहीं है, बल्कि यह समूह सृजित साहित्य है। विशिष्ट या शास्त्रीय साहित्य से यह भिन्न है। शास्त्रीय रूप में लोक उस समाज को कहा गया है, जो गाँवों, वनांचलों या शहर से असंपृक्त क्षेत्रों में निवास करता है, जो शिक्षा विहीन है और जो अधिकांशत: आदिम रीति-रिवाजों का निर्वाह करता रहा है। प्रकृति की गोद में पला यह समाज अत्यंत संवेदनशील रहा है। पशु, पक्षी, पेड़-पौधे, पहाड़, नदियाँ, हवा, सूरज, चाँद और तारे इसके उपादान हैं। इसी परिवेश में जीवन बिताते हुए इस समाज ने जो साहित्य सृजित किया, उसे लोक साहित्य कहा गया। इस साहित्य का उद्देश्य लोकरंजन है, ज्ञान-समृद्धि भी और मानवीय मूल्यों का अनुसरण भी। बड़ों के लोक साहित्य के समानांतर बाल लोक साहित्य का भी यही उद्देश्य होता है। एक सीमा में बड़ों के साहित्य से इसका साम्य भी है और पार्थक्य भी। विधाओं के रूप में साम्य है, जबकि बोध स्तर पर पार्थक्य है।

लोक में निहित बाल साहित्य गद्य विधाओं में भी है और पद्य या काव्य विधाओं में भी। बाल लोक कथाएँ, बाल लोक नाट्य तथा बच्चों की खेल कथाएँ इस साहित्य के गद्य रूप हैं तथा लोरी, पहेली, खेल गीत, उत्सव गीत और ऊलजलूल गीत पद्य या काव्य विधाएँ हैं। यह साहित्य बच्चों के मनोरंजन का मुख्य अंग रहा है। आज आधुनिक बाल साहित्य प्रभूत मात्रा में उपलब्ध है, पर इसके सृजन की प्रेरणा का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत लोक का बाल साहित्य भी रहा है। लोक बाल साहित्य की श्रवणीयता देखकर ही कालांतर में परिनिष्ठित या नवीन बाल साहित्य सृजित हुआ।

गद्य बाल साहित्य में लोक कथाओं का प्रमुख स्थान है। ये बाल लोक कथाएँ हिंदी की बोलियों—ब्रज, अवधी, भोजपुरी तथा बुंदेलखंडी आदि में हैं। 'एक था राजा' या 'एक समय की बात है' से आरंभ होकर कथाएँ आगे बढ़ती हैं और सुखद अंत में इनकी परिणति होती है।

लोक कथाओं के रूप में यह साहित्य विश्व की सभी विकसित और अविकसित भाषाओं में है। अविकसित भाषाओं में परिनिष्ठित बाल साहित्य भले ही न हो, पर लोक साहित्य अवश्य होगा। पूरे विश्व के बालक एक हैं और सबने एक ही शैली में बाल साहित्य का आस्वादन किया है अर्थात् दादी, नानी और माँ आदि बड़े-बूढ़ों के सान्निध्य में यह साहित्य बालकों को प्राप्त होता रहा है। रात होते ही बालक बड़े-बूढ़ों की गोद में बैठकर कहानी सुनाने का आग्रह करते रहे हैं। कहानी का अनुश्रवण आरंभ होता है। श्रोता बीच-बीच में हुंकारा भरता रहता है, जिससे सुनानेवाले को यह बोध होता रहे कि श्रोता सजग है। धीरे-धीरे इसने किस्सागोई का रूप ले लिया और कुछ पुरुषों या स्त्रियों ने कथा सुनाने की कला ही विकसित कर ली। ऐसे किस्सागो नाटकीय रूप में स्वरों के उतार-चढ़ाव के साथ रात-रात भर कथाएँ सुनाने लगे। वे कहानी के गेय अंश को मार्मिक रूप से गाते भी। लोक गायकों या लोक रंगकर्मियों की ही भाँति उन्हें भी ख्याति मिली। ऐसे किस्सागो भारत या रूस आदि देशों में आज भी हैं। जर्मनी के ग्रिमबंधुओं (विलहेल्म ग्रिम तथा जैकब ग्रिम) ने ऐसी ही एक जर्मन महिला से लोक कथाएँ सुनकर उनका संकलन किया था। वह महिला दरजी का काम करती थी और केवल बच्चों को कहानियाँ सुनाती थी। जब उसने ग्रिम बंधुओं को कहानियाँ सुनाईं तो श्रोता और किस्सागो के बीच एक परदा पड़ा रहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक की कहानियाँ सुनानेवाले प्राय: साधारण लोग ही रहे हैं—किसान, नाई, धोबी या दरजी आदि। आधुनिक युग में यह कला क्षीण हो रही है। आज पारंपरिक और आधुनिक कथा साहित्य अलग-अलग मोड़ों पर खड़े हैं। दोनों का सरोकार मानवीय संवेदनाओं से ही है, पर पारंपरिक कथाएँ आधुनिक कहानियों के विरोध में प्रतीत होती हैं। पारंपरिक कथाओं ने जो पठनीयता पैदा की है, वह आधुनिक कहानियों से भिन्न है। आधुनिक बाल कहानियों की अपनी विशिष्टता है, पर परंपरानुयायी नए साहित्य से दूर ही रहता है। वह पुराने कथा-रस को ही महत्त्व देता है। कहानी का संपूर्ण परिवेश गाँव, प्रकृति, पशु-पक्षी आदि का होता है, जबकि आधुनिक कहानी बाल केंद्रित होती है, जिसमें बच्चे का सुख-दु:ख, समस्याएँ, महत्त्वाकांक्षाएँ, समाज और परिवार से जुड़ाव प्रमुख हैं। पुरानी कहानी भावात्मक अधिक होती है और आधुनिक कहानी चिंतन प्रधान।

लोक कथाएँ प्राचीन संस्कृति की वाहक होती हैं। यह तत्त्व लोक बाल काव्य में भी है। ग्रिमबंधुओं ने जर्मन संस्कृति के अध्ययन के लिए ही लोक कथाओं का संग्रह किया था, पर ये लोक कथाएँ कालांतर में बाल साहित्य की धरोहर सिद्ध हुईं। लोक कथाओं पर आधुनिक नाटक, बैले, कठपुतली नाटक, ओपेरा और कविताएँ भी रची गईं। 'अंधेर नगरी' (भारतेंदु हरिश्चंद्र), 'चरनदास चोर' (हबीब तनवीर), 'जादू की छड़ी' (लक्ष्मीनारायण लाल), 'मटर का दाना' (श्रीप्रसाद), मराठी नाटक 'शेप्टीचा शाप'—(सई परांजपे) 'जादूचा शंख' (सई परांजपे), बँगला

लोक की कहानियाँ सुनानेवाले प्राय: साधारण लोग ही रहे हैं—किसान, नाई, धोबी या दरजी आदि। आधुनिक युग में यह कला क्षीण हो रही है। आज पारंपरिक और आधुनिक कथा साहित्य अलग-अलग मोड़ों पर खड़े हैं। दोनों का सरोकार मानवीय संवेदनाओं से ही है, पर पारंपरिक कथाएँ आधुनिक कहानियों के विरोध में प्रतीत होती हैं। पारंपरिक कथाओं ने जो पठनीयता पैदा की है, वह आधुनिक कहानियों से भिन्न है। आधुनिक बाल कहानियों की अपनी विशिष्टता है, पर परंपरानुयायी नए साहित्य से दूर ही रहता है। वह पुराने कथा-रस को ही महत्त्व देता है। कहानी का संपूर्ण परिवेश गाँव, प्रकृति, पशु-पक्षी आदि का होता है, जबकि आधुनिक कहानी बाल केंद्रित होती है, जिसमें बच्चे का सुख-दु:ख, समस्याएँ, महत्त्वाकांक्षाएँ, समाज और परिवार से जुड़ाव प्रमुख हैं। पुरानी कहानी भावात्मक अधिक होती है और आधुनिक कहानी चिंतन प्रधान।

के बाल नाटक 'ब्राह्मन आर ब्राह्मनी' (प्रदीपकुमार राय), 'शियाल पंडितेर पाठशाला' (प्रदीपकुमार राय) तथा अंग्रेजी में अनूदित प्रसिद्ध रूसी काव्य नाटक 'ए लिटिल हाउस स्टुड ऑन ए हिल' (सेमुअल मारशाक) लोककथा पर ही आधारित हैं।

निरंकारदेव सेवक और सोहनलाल द्विवेदी ने लोक कथाओं के पद्य रूपांतर प्रस्तुत किए हैं। रूसी पद्य कथा 'मछुआरा और सुनहरी मछली' (पुश्किन) लोक कथा पर ही आधारित है। यह मूलत: भारतीय लोक कथा है। लोक कथाओं का उत्स भारत को ही माना गया है। ग्रिमबंधुओं या ईसप की लोक कथाओं में भारतीय लोक कथाएँ भी हैं। ये लोक कथाएँ पंचतंत्र, हितोपदेश और कथा सरित्सागर से आई हैं, जबकि अनेक मौलिक हैं। बँगला में इन्हें 'रूपकथा' कहा गया है।

बँगला में 'दादीमार झुली' नाम से ये कथाएँ संकलित हुई हैं। रवींद्रनाथ टैगोर लोक बाल साहित्य से बहुत प्रभावित थे। 'दादीमार झुली' के एक संग्रह की भूमिका में उन्होंने लिखा था, "हमारे देश की लोक कथाएँ कई युगों से बंगाली बालकों के चित्तक्षेत्र के ऊपर ही अशांत रूप से बहते हुए चली आ रही हैं। इनका स्रोत समस्त बंगाल के मातृस्नेह में है।" (लोक: भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर, पृ. ३२०-२१)

लोक कथा के राजकुमार को शिकार खेलने के लिए पूरब, पश्चिम और उत्तर दिशा में तो जाने को कहा जाता है, पर दक्षिण दिशा में नहीं। राजकुमार दक्षिण में ही जाता है, कठिनाइयों का सामना करता है और क्रूर राक्षस का वध करता है। संघर्ष से लड़ना सिखाना ही साहित्य का उद्देश्य है।

लोक की बाल कथाओं की भाँति बालोपयोगी लोककाव्य भी महत्त्वपूर्ण है। यह काव्य बच्चे के जन्म से ही लोरी के रूप में शुरू हो जाता है। बँगला और अंग्रेजी (लल्लाबी) में भी यह साहित्य है। लोरियाँ बाल परिवेश की होती हैं, सांगीतिक होती हैं और अर्थ का भार इनमें नहीं होता। शब्दों की पुनरावृत्ति प्राय: होती है। प्रसिद्ध लोरी है—'चंदा मामा आरे आवा/बारे आवा/नदिया किनारे आवा/दूध भात लेहले आवा/बचवा के मुँहवा में घुटुर।' लोरी बालक का प्रथम काव्य है।

बच्चे के बड़े होने के साथ बाल लोक काव्य भी परिवर्तित हो जाते हैं। थोड़ा बड़े होने पर वयोवृद्ध बच्चे को घुटने पर रखकर खिलाते हैं और गाते हैं—'थापक थोला/ दही मटोला/गुड़ कौ भेला/ मेरी तेरी छाक आई/ बार बाँटि खाई/नई भीति उठी उठी/पुरानी भीति गिरी गिरी।' अंतिम पंक्तियों में बच्चे को ऊपर ले जाते हैं और फिर झटके से नीचे लाते हैं। नई भीति (दीवाल) बाल पीढ़ी है, जो अस्तित्व में आ रही है और पुरानी भीति वयोवृद्धों की पीढ़ी है।

कुछ समय के अनंतर बच्चे खेलों में रुचि लेने लगते हैं। बच्चों के खेलगीत भी सभी बोलियों में हैं। अवधी का एक खेलगीत है—

'खंतमंत इक कउड़ी पावा
कउड़ी लइ मैं गंग बहावा
गंगा मइया बारू दीन
बारू लइ मैं भुजवा क दीन
भुजवा हमक लावा दीन…।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरा गीत लोक परिवेश को समेटता हुआ आगे बढ़ता है। शास्त्रीय रूप में यह क्रमसंवृद्ध (पोइट्री ऑफ ग्रोथ) कविता है।

अंग्रेजी का प्रसिद्ध खेलगीत है—'रिंग रिंग रोजेज/ पॉकेट फुल ऑफ पोजेज/ हुश, बुश/ वी ऑल फॉल डाउन।' यह गीत ऑस्ट्रेलिया, इंग्लैंड, अमेरिका, कनाडा और न्यूजीलैंड आदि अनेक देशों में प्रचलित है और सर्वत्र पाठ भिन्नता है।

पहेलियाँ लोक बोली का प्रमुख अंग हैं, जो बच्चों में प्रचलित रही हैं। संभवत: इस पहेली साहित्य से अमीर खुसरो भी प्रभावित थे। तभी उन्होंने खड़ी बोली में रोचक पहेलियाँ लिखीं। 'एक थाल मोती से भरा' उनकी प्रसिद्ध पहेली है। यह हिंदी का बुद्धिवर्धक काव्य है। पहेली का छंद प्राय: बहुत छोटा होता है—'श्यामबरन मुख उज्जर कित्ते? रावन सीस मदोदरि जित्ते/ हनुमान पिता करि लैहों/ तब राम पिता करि दैहों।' पहेली उर्द के संबंध में है। क्रेता पूछता है, 'श्यामबरन मुख उज्जर अर्थात् रुपए में कितने सेर है?' विक्रेता कहता है, 'रावण और मंदोदरी के सिर अर्थात् रुपए में ग्यारह सेर।' क्रेता फिर कहता है, 'हनुमान पिता अर्थात् पवन या पछोर कर लूँगा।' तब विक्रेता राम पिता अर्थात् दशरथ या रुपए में दस सेर देने की बात कहता है। पौराणिक प्रसंग पर पहेली अतीत गाथा का भी स्मरण करा देती है। खड़ी बोली में भी बच्चों के लिए रोचक पहेलियाँ लिखी गई हैं। अंग्रेजी का 'हंप्टी-डंप्टी' पहेली गीत ही है, जो 'अंडे' से संबद्ध है। बँगला भाषा में भी पहेलियाँ रची गई हैं। ईश्वरचंद्र विद्यासागर विषयक पहेली का आरंभ इस प्रकार है—'प्रथम अक्षर आधे विकाले, सकाले नाइ/ द्वितीय पुकुर नाइ उद्याने तारे पाई…' (पहला अक्षर 'बिकाल' अर्थात् तीसरा पहर में है, द्वितीय अक्षर उद्यान में है, पुकुर या तालाब में नहीं है। अंतत: विद्यासागर शब्द स्पष्ट हो जाता है।

ऊलजलूल (नॉनसेंस) बालगीतों की परंपरा तो लोक बोलियों में विशेष रूप से पाई जाती है। इसका कारण है, ऐसे गीतों का अनुरंजनकारी तत्त्व। ये गीत बच्चों को हँसाए बिना नहीं रहते। ब्रज बोली में निहित टेसू बाल उत्सव के सभी गीत ऊलजलूल ही हैं। अंग्रेजी में नॉनसेंस पोइट्री के रूप में इसका अस्तित्व है और बँगला में 'आबोल-ताबोल' के रूप में एडवर्ड लीयर ने केवल ऊलजलूल बालकाव्य ही रचा है और बँगला में सुकुमार राय 'आबोल-ताबोल' के अद्वितीय रचनाकार हैं। बोलियों के ऊलजलूल गीतों का उद्देश्य किसी प्रकार का संदेश देना नहीं है, केवल मनोरंजन है। ब्रज का एक गीत है—

'इमली की जड़ में ते निकरी पतंग
नौ सौ मोती नौ सौ रंग
एक रंग की लई कमान…।'

सुकुमार राय अपने गीतों के लिए 'नाई को माने नाई को सूर' (न कोई तात्पर्य है और न कोई स्वर) संज्ञा देते हैं। हिंदी खड़ी बोली में भी प्रभूत ऊलजलूल गीत रचे गए—

'एक पान का पत्ता/ जा पहुँचा कलकत्ता' (सूर्यकुमार पांडेय) आदि।

बालकों का लोक काव्य फूलों की तरह कोमल है और तितलियों की तरह रंगीन। शास्त्रीय रूप में इसका छंद भले ही सुगठित नहीं है, पर इसमें संगीत की भरपूर गहराई है। अक्कड़-बक्कड़, धम्मक-धम्मक, हल्लर-हल्लर, बंबक बो आदि ध्वनियाँ इस काव्य में अनुरणन का संचार करती हैं—'धम्मक धम्मक धम/ शेर गरजता गधा न डरता/ चरता घास नरम…।' अंग्रेजी की 'हे डिडिल डिडिल, दी कैट ऐंड दी फिडिल/ दी काउ जंप्ड ओवर दी मून…' या बँगला की 'आल्तोपाटी लाल दो पाटी/ तबला डुगिर माथाय चाँटी/ पाहाड़ देशेर रंगीन माटी/(टापुर टुपुर-मोहित घोष, पृ. 36) में यह अनुरणन है।

लोक में प्रवहमान बाल साहित्य की सुनियोजित धारा है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह अत्यंत मूल्यवान् साहित्य है। विशिष्ट बाल साहित्य के रूप में आज इसके अध्ययन और संकलन की अपेक्षा है। यह साहित्य हमें आदिम और पुराकालीन जीवन के उल्लास से जोड़ता है। (सा.अ.)

ब्रजभूमि, एन ९/८७, डी ७७
जानकीनगर, बजरडीहा,
वाराणसी-२२११०९

इस अंक के चित्रकार

सिद्धेश्वर

२० जून, १९५९ को जनमे श्री सिद्धेश्वर कला में स्नातक हैं। दो कृतियाँ 'बूँद-बूँद सागर' (लघुकथा संग्रह) तथा 'इतिहास झूठ बोलता है' (कविता संग्रह) प्रकाशित हो चुकी हैं। दोनों कृतियाँ बिहार सरकार द्वारा 'रेणु पुरस्कार', भारत सरकार द्वारा 'मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार' एवं साहित्यकार संसद् द्वारा 'अज्ञेय शिखर सम्मान' से सम्मानित।

अब तक एक हजार से अधिक रेखाचित्र और पेंटिंग्स लघु पत्रिका एवं राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों में प्रकाशित। कई चित्र और पेंटिंग्स विभिन्न संस्थानों द्वारा पुरस्कृत। हिंदी निकेतन (लखनऊ) द्वारा 'आधुनिक' चित्र पर प्रथम पुरस्कार, 'नंदन' चित्र प्रतियोगिता में दो चित्र (पेंटिंग्स) प्रथम पुरस्कार से सम्मानित एवं पुरस्कृत। तीन सौ से अधिक पत्र-पत्रिकाओं में रेखाचित्र एवं पेंटिंग्स प्रकाशित। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन (पटना) से रचनाओं का प्रसारण।

संपर्क : अवसर प्रकाशन, पोस्ट बॉक्स नं. २०५,
करबिगहिया, पटना-८०००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

16 वर्षों से निरंतर प्रकाशित

साहित्य अमृत

(मासिक)

साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक

स्वयं पढ़ें, औरों को भी पढ़ाएँ।

संस्थापक संपादक	संपादक	पूर्व संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र	त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी	स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

विशेषांकों की अनूठी शृंखला की एक और महत्त्वपूर्ण कड़ी

साहित्य अमृत

का

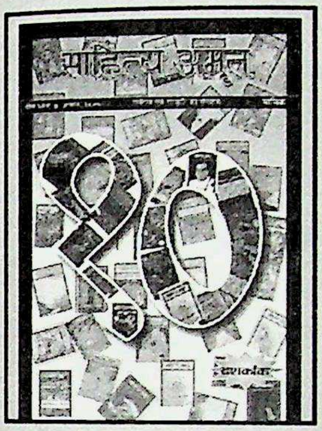

200वाँ अंक

कथा विशेषांक

फरवरी 2012 में प्रकाश्य

फरवरी 2012 में **साहित्य अमृत** अपना 200वाँ अंक प्रकाशित करने जा रहा है। किसी भी साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका के लिए लगातार, ठीक समय से 200 अंकों का प्रकाशन गर्व का विषय हो सकता है। निश्चय ही इसके पीछे जहाँ पत्रिका के संपादन एवं प्रबंधन से जुड़े हुए व्यक्तियों का श्रम एवं अध्यवसाय है, वहीं इसका श्रेय हमारे सुधी लेखकों एवं पाठकों को भी है। हम उनके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

हमारी योजना **साहित्य अमृत** के फरवरी 2012 में प्रकाश्य 200वें अंक को '**कथा विशेषांक**' के रूप प्रकाशित करने की है। इस संग्रहणीय अंक में अपनी कहानी 15 दिसंबर, 2011 तक विचारार्थ भेज सकते हैं।

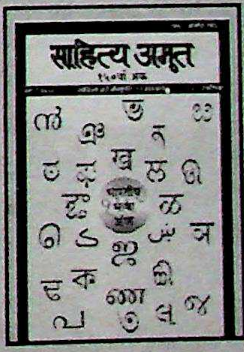

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित कराएँ।

4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002 • फोन : 23289777 • e-mail: sahityaamrit@gmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार कविताएँ

मूल : सस्मिता मिश्र
अनुवाद : देवेंद्र शुक्ल

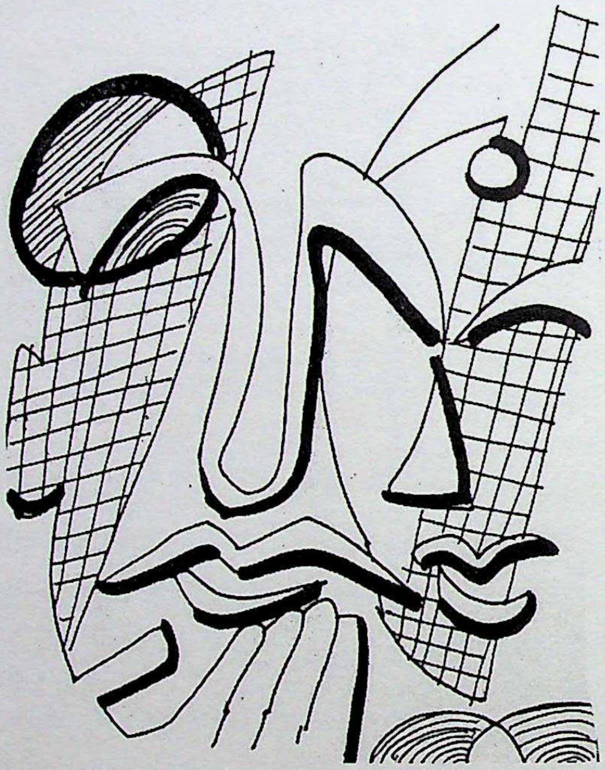

यह गली

हमारी
यह गली
जहाँ हम
जीते हैं, मरते हैं,
सहजीवन में
बँधते हैं,
हमारी आत्मा का संभार
वहन करती है,
यह गली
हमारी गली।
एक विकल्प भी,
बचता है
आप के लिए
शायद एक ही आकाश
साझे में है,
हमारे लिए।
जा सकते हैं
जहाँ चाहें आप।
हम एक ही हैं,
बँधी है हमारी नियति
साथ-साथ
भूले हुए से हम
भरमे से
कुछ खोए से
नियति-बंधन के
गिरवी हैं, बंधक हैं।
तुम : मनमौजी
और घुमंतू प्रेमी!
हिरनी की आँखें,
घूमती हैं, फिरती हैं,
और लौट आती हैं
उसी गली में,
(जब मौत आती है)
मरने के लिए
जहाँ हम सभी
हो जाते हैं निःशेष।

□

वह साँवला लड़का

यह चिड़िया,
है बटोरती संगीत
हवाओं से।
लोरी सुनाती है,
ऊँघते हुए
सूरज को।
वह साँवला-सलोना लड़का
अपने स्वभाव से
हमें धकियाता है,
जगाता है
और बड़ी ही धूमधाम करता है
खिलंदड़ी है।
वह आता है,
अपनी अनोखी
त्रिभंगी चाल से।
बाहर, शरद की अंतिम आभा को
अपनी ही मुट्ठी में भरने के लिए।
खिड़कियों से,
फूलदार परदों के पीछे से
एक और संसार भी देख रहा है,
पर्युत्सुक तुम्हें,
ओ साँवले-सलोने बालक!
शायद अपनी पूर्वाशा में
अपने अनुभव संसार को,
तुम तक पहुँचाने की
कोशिश भी करता है
छू लेने के लिए
तुम्हारे हृदय की
उमंग को।
पर हाय!
वहाँ भी निराशा।
पर तुम्हारी राह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है सुदूर की
आत्मन् की,
आत्म-जगत् की।
वे बहुत दूर हैं,
अपनी गलियों में,
अपने-अपने दरवाजों में
बंद।
तभी फिर वही
दस्तक—
वही खिलंदड़ी भाव
धूमधाम—
और आघात
ओ साँवरे सलोने
घनश्याम!
नहीं जानी तुमने ऊँचाइयाँ,
नहीं पहचाने कोई भी तटबंध,
अथवा पुलिन!
नहीं देखा कोई भी,
बंजर भाव,
जहाँ सूरज भी
अपनी गहरी नींद में है
और बचा रहता है
घोर अंधकार।
पागल कर देनेवाले
शोर से
बहुत दूर।
पर तुम तो जानते हो
पेड़ों के इर्दगिर्द
कोई पौधे
क्यों नहीं उगते?
और कैसे कलियाँ
सँभालती हैं
सहती हैं इन्हें
चारों ऋतुओं में
तुम ठीक जानते हो।
लहरों का आस्फालन
क्यों होता है?
क्यों उमंगित होती हैं आशाएँ?
छाया देनेवाले आसमान के नीचे।
यहाँ विश्वास है मुझे,
मानती हूँ यहाँ मैं।
सूरज तुम्हारा है और चाँद भी,
धरती और सितारों के बीच की
और बाहर की भी,
सारी चीजें तुम्हारी हैं,
सारी कायनात भी।
सिवाय मेरी नन्ही-सी आत्मा के।

□

एक अजनबी नदी

जंगल के भीतर
कहीं बहुत गहरे रहती है,
एक अजनबी नदी।
घूमती ही रहती
जो गोल-गोल,
पर जाती ही नहीं,
कभी भी समंदर तक,
उसे जहाँ जाना चाहिए।
आती है जब बारिश,
और लाती है अपने साथ बुलावा,
दूर-दूर भूमि प्रांतर से।
तब अपनी ही,
गहरी व्यथा काटती है,
अपनी ही बाँहों को अपने को ही
हजार-हजार धाराओं में।

पर नीचे समंदर की ओर
नहीं करती रुख वह कभी भी।
सुरमई आँखोंवाला
चरवाहा गोपाल,
जानता है व्यथा-कथा उसकी।
पर वह नहीं कहता किसी से भी,
क्योंकि जो वह,
कहती है चुपके से,
उसी से अपनी गोपन बात।
यह नदी,
मैं जो बताती हूँ, जानी-मानी,
सौंदर्य की छविधारा है निश्छल,
एक सुंदरता है।
नील पद्मराग मणियों से,
जड़ी हुई,
सतत प्रवहमान रजत-धारा है।
एक काँपती हुई,
वन-लता है।
जो बाँधती है,
आपके ही पैरों को
कभी न मुक्त करने के लिए।
गुपचुप नीरव,
अपराह्न वेला में,
जब केवल पत्तियाँ सरसराती हैं,
वह गाती है,
एक अवसाद भरा गीत
और चाँदनी रातों में,
जब वह मायाविनी अश्विनी
उतरती है नीचे उसमें,
एक डुबकी के लिए,
क्रीड़ा भाव में खेलने के लिए,
वह नदी अपने उछाह में,
निर्बंध उमगती है।
करते हैं सब प्यार उसे,
पर नहीं जानता कोई भी
उसकी व्यथा-कथा।
यह तो निश्चित ही है,
गोल-गोल अपनी ही गति में
घूमती है चक्राकार,
पर रुख नहीं करती,
कभी भी समंदर की तरफ।

□

आदमी और कुत्ते (ओह! लीबिया)

लड़ते हैं आदमी
कुत्तों से
और कुत्ते
आदमी से,
डरते हैं आदमी
कुत्तों से,
कुत्ते, किसी से भी नहीं।
गलियाँ हैं कुत्तों के लिए,
महल और राजसिंहासन हैं,
कुत्तों के लिए,
कुत्ते ही सब पर
करते हैं शासन,
और आदमी कहीं नहीं।
कुत्ते पहरे पर,
आदमी सोते हैं
एक गहरी नींद।

पेकिंग विश्वविद्यालय,
बीजिंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकट में स्वर्ग

● गोपाल चतुर्वेदी

संकट की कोई भौगोलिक सीमा नहीं है। धरती पर ही नहीं, आकाश क्या, पाताल में भी संकट संभव है। अभी तक हमें मुगालता था कि भारतवासी ही मूल्य वृद्धि, भ्रष्टाचार, निकम्मी सरकार, संवेदनहीन प्रशासन, चरमराती कानून-व्यवस्था, आर्थिक असमानता, सामाजिक भेदभाव से त्रस्त हैं। अखबार में अमेरिका ही क्यों, दुनिया में मंदी की खबर है। हमारी नजर में सरकार इसके लिए भी गुनहगार है। आलम यह है कि सिर में दर्द हो तब भी हम सरकार को कोसते हैं। कभी शादी में मुफ्त का माल समझकर पेट को म्युनिसपैलिटी के कूड़ेदान सा भर लिया और फिर पिराया तो मिलावट को दोष देने लगे—''वह तो लड़कीवालों ने इसरार किया तो खाना पड़ा वरना घर के बाहर तो हम खाते ही नहीं हैं। कौन नहीं जानता कि आजकल कैटरिंग के इंतजाम में सिर्फ घटिया सामान ही बनता है।''

कमजोरी अपनी, तिस पर मुँहजोरी! अपन भी यही करते हैं। खुद की खामी के लिए जिम्मेदारी कहीं और मढ़ना मानवीय चरित्र का आभूषण है। अपनी कामचोरी के लिए एक बार सुपरवाइजर ने हमें डाँट दिया था। तब से हम दुनिया भर में उसे गाली दे रहे हैं। इरादा यूनियन को पटाकर उसके घेराव का है। वहाँ भी कामचोरों की भरमार है। देखें, इस छोटे से कर्मचारी-कल्याण के काम को वह तैयार होते हैं कि नहीं।

हम ऐसे दार्शनिक प्रश्नों से पत्नी की झाड़ खाकर ही जूझते हैं। कोई बात सी बात होती तब भी बात थी। अपना अपराध इतना था कि हम महँगी कीमत चुकाकर जो आलू लाए थे, उनमें से कुछ काने-कतरे ही नहीं, सड़े भी थे। ''भगवान् ने जो दीदे दिए हैं, उनसे कुछ और क्यों देखो, वह तो सिर्फ दूसरों की बीवियाँ ताकने के लिए हैं। अब हम इन सड़े आलुओं का क्या करें?'' उन्होंने हमारी खबर ली। तब से हम दुनिया के चिंतन में खोए हैं। अकसर ऐसा होता है। जनसेवक कमीशन खाकर ईमानदारी के गुण गाते हैं, हम सड़ी सब्जी लाकर संसार का सोचते हैं। इतने में 'नारायण, नारायण' की आवाज से हम चौंके।

देखा तो एक अजब किस्म का प्राणी सामने खड़ा था। उसके हाथ में कोई बाजे जैसा हथियार था और कपड़ों के नाम पर एक धोती। सिर के ऊपर छत्ते की शक्ल का बालों का जूड़ा और पैरों में खड़ाऊँ। बहुधा बाबा रामदेव की यही धजा है, बाजे को छोड़कर। हमें शक हुआ कि अचानक अवतरित हुआ यह अजूबा या तो कोई योगाचार्य है या फिर भेस बदलकर पधारा कोई ठग। ऐसे भी 'नारायण' का पारायण इधर साधू-संत भी सिर्फ नगद-नारायण के चक्कर में ही करते हैं। ठगों का कोई भरोसा नहीं है। मंत्री, अफसर, बाबू, व्यापारी, बाबा, संत, परीक्षक, निरीक्षक वह कुछ भी बनकर ठगी में समर्थ हैं। सफेदपोश ठगों का ठिकाना नहीं है कि कब क्या कहकर या करकर ठग लें, यह धोती धारी जाने क्या कहर ढाए।

उस अजूबे ने फिर 'नारायण-नारायण' की हुँकार भरी। हम अनिश्चय की स्थिति में खड़े थे। हमारे पुत्र पप्पू ने आते ही आज की शिशु-पीढ़ी की फुरती दिखाई—''यहाँ कोई नारायण-वारायण नहीं रहता है, आप उन्हें कहीं और तलाशें।'' वह अजूबा वहीं जमा रहा। इतना ही नहीं, वह हमें देखकर मुसकराया और बोला, ''वत्स! हम नारद हैं।'' हमें तत्काल ध्यान आया कि यह तो हर भगवान् के मुँह लगे नारद मुनि हैं। हमने उनसे बैठने को कहा। जिज्ञासु पप्पू कहाँ चुप रहनेवाले थे! उन्होंने हमसे सवाल उछाला, ''नारद कौन?'' उन्होंने नारद का नाम नहीं सुना था। स्वाभाविक भी है। अंग्रेजी कॉमिक पढ़नेवाली पौध नारद से कैसे परिचित होगी? इतना ही नहीं, उसने तो दादी-नानी से न पौराणिक कहानियाँ सुनी हैं, न परी-कथाएँ। यही क्या कम है कि वह मोहनदास करमचंद गांधी को इंदिरा गांधी का पिता नहीं बताती है। पुत्र की आवाज सुनकर उनकी माँ, हमारी पत्नी भी किचन से पधारी। उन्होंने पुत्र को डपटा—''बड़ों की बात में टाँग नहीं अड़ाते हैं! जाओ, अपना होम-वर्क करो।''

उन्हें भी आश्चर्य हुआ। यह आकाश में विचरण करने वाला देवता अचानक धरती पर, वह भी हमारे घर में कैसे अवतरित हो गया? शहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जो नामी-गिरामी साधू-संत, प्रवचनकर्ता भी तशरीफ लाते हैं, वह भी किसी ऐसे नत्थू-खैरे के यहाँ झाँकते तक नहीं हैं। फिर यह आकाशीय हस्ती कैसे यहाँ प्रगट हो गई? हम इसी उधेड़ बुन में थे कि पत्नी अंदर से दौड़कर इस अति महत्त्वपूर्ण अतिथि के लिए पानी और पिछले मंगल को हनुमानजी पर चढ़े प्रसाद की बूँदी लाई। यह मेहमान तो 'देवो भव' न होकर, खुद देवता ही है। हमें कुछ और सूझा तो हम सम्मान जताने नारदजी के चरणों में बैठ गए। बस भाव-विह्वल होकर उनके चरण पकड़ने की कसर थी। पत्नी अधिकतर भारतीय महिलाओं के समान धार्मिक प्रवृत्ति की हैं। उन्होंने ही संवाद की शुरुआत की—''कैसे आना हुआ, प्रभु?''

हम श्रद्धा विनत मौन बैठे रहे। नारदजी ने कुछ भी बोलने से पहले 'नारायण-नारायण' का उच्चार किया। हमें लगा कि 'नारायण-नारायण' इन का तकिया-कलाम है। हर वाक्य के साथ इस गाली का प्रयोग करते हैं, कुछ 'समझे' या 'यू.सी.' का। उससे तो यह हर हाल में बेहतर है। अपनी-अपनी स्टाइल है। उससे क्या शिकायत! 'बस, यों ही बहुत दिनों

पत्नी ने नारदजी से गद्‌गद स्वर में कहा, ''शब्दों की सामर्थ्य नहीं है कि आपके प्रति हमारी कृतज्ञता व्यक्त कर सकें। कैसे बताएँ कि हम आपके आगमन के लिए कितने आभारी हैं!'' नारदजी किंचित् मुसकराए, उनके भक्ति भाव से, फिर बोले, ''बेटी! तुम ने यह नहीं बताया कि भारत की दशा-दिशा क्या है? सामान्य लोग खुश हैं कि नहीं?''

से इधर चक्कर नहीं लगाया था, सोचा कि धरती का हाल-चाल लेते चलें।'' नारदजी ने पत्नी को उत्तर दिया। हमें उनके जवाब से थोड़ी आश्वस्ति हुई। देव-भाषा संस्कृत है। गनीमत है कि उन्होंने उसका प्रयोग नहीं किया वरना अपने पल्ले क्या पड़ता? ऐसे कभी-कभी हमें डर लगता है। लोगों को आजकल अधकचरी अंग्रेजी आती है और आधी-अधूरी अपनी मातृभाषा। इसी अंग्रेजी ज्ञान के सहारे वह स्वयं को तुर्रम खाँ समझते हैं। धीरे-धीरे हम भाषा-हीनों का देश बनते जा रहे हैं। जहाँ अटके वहाँ गाली, या और कोई तकिया कलाम तो है ही अपनी बात कहने को।

पत्नी ने नारदजी से गद्‌गद स्वर में कहा, ''शब्दों की सामर्थ्य नहीं है कि आपके प्रति हमारी कृतज्ञता व्यक्त कर सकें। कैसे बताएँ कि हम आपके आगमन के लिए कितने आभारी हैं!'' नारदजी किंचित् मुसकराए, उनके भक्ति भाव से, फिर बोले, ''बेटी! तुम ने यह नहीं बताया कि भारत की दशा-दिशा क्या है? सामान्य लोग खुश हैं कि नहीं?''

पत्नी नपी-तुली बात करती हैं, हमारे अलावा सब से। फिर नारद तो देवता हैं। उन्होने नारद को कतई तथ्यात्मक स्थिति बताई—''प्रभु, भारत की दशा-दिशा से तो हम परिचित नहीं हैं। हम अपना जानते हैं, हमारी बड़ी दुर्दशा है।''

नारदजी ने उत्सुकता प्रकट की—''वह कैसे?''

हमें आभास हुआ कि हमारी प्राणप्रिया को इसी की प्रतीक्षा थी। उनका शिकायतों का बाँध टूट गया। असंतोष की नदी बह निकली। उन्होंने कहना शुरू किया, ''एक हो तो बताएँ। हमारे ऐसों के लिए हर कदम पर कठिनाई है। कभी सब्जी की कीमत बढ़ती है, कभी अनाज की। कभी दूध महँगा होता है तो कभी दाल। महँगाई के जंगल में आग लगी है, उस पर सरकार ने पेट्रोल भी छिड़क दिया है। अब बाजार में उँगलियों पर गिने जानी वाली ही कुछ चीजें हैं, जिनका मूल्य थोड़ा स्थिर है। तेल से लेकर तवा तक तरक्की पर हैं।'' पत्नी के इस धाराप्रवाह भाषण पर नारदजी ने विराम लगाया—''यह तो बहुत चिंताजनक और दुखदायी स्थिति है। वत्स! अगर मध्यम वर्ग इस प्रकार प्रताड़ित है तो निर्धनों का क्या होगा!'' इतना सुनकर हम में भी साहस का संचार हुआ। कहीं नारदजी को यह शक न हो कि इस घर के नियोजित परिवार में नारी और उसका पुत्र तो ठीक-ठाक हैं, पर गृहसेवक यानी पति के गले का ध्वनि-यंत्र कुछ गड़बड़ है। उससे श्वास की तो है, स्वर की निकासी नहीं है। हम ने चरणों से ऊपर निहारकर निवेदन किया—''प्रभु! वर्तमान में सबकुछ राम भरोसे है। न बाहर सुरक्षित है आदमी, न घर में। कब नगर-बस का मदमत्त साँड़ कुचल दे या वरदीवाला धर दबोचे, कोई भरोसा नहीं है। प्रभु! आप तो सर्व-व्यापी हैं। आपको तो शर्तिया सूचना होगी कि आज के चोरों का स्तर कितना गिर गया है। पतन की पराकाष्ठा है कि वह दिन-दिहाड़े किसी भी घर में घुसते हैं और फ्रिज में रखी बासी दाल, तरकारी यहाँ तक कि ब्रेड-बटर तक साफ कर जाते हैं। पत्नी स्कूल में पढ़ाने जाती है, पप्पू पढ़ने और हम दफ्तर में मक्खी मारने। घर में ताला बंद रहता है। जैसे पुलिस का डर सिर्फ शरीफों को है, वैसे ही तालों से सुरक्षा बोध भी केवल घरवालों को। पेशेवर चोरों के लिए चाहे ताला अलीगढ़ी हो या नवताल का, उसे खोलना बाएँ हाथ का खेल है। जब मन करता है, टहल आते हैं। तीन बार यह दुखद दुर्घटना हमारे साथ घट चुकी है। गनीमत है कि घर में सोना, पैसा वगैरह-वगैरह नहीं रहता है, रहे भी कैसे, खास है भी नहीं! पुलिस है कि रिपोर्ट तक लिखने से कतराती है। दारोगाजी कहते हैं, कोई भूखा होगा। बड़ा पुण्य का काम है, किसी का पेट भरना। ऐसे भी वह डकैती, अपहरण, हत्या जैसे मामलों में उलझे हैं। फुरसत किसे है कि ब्रैड-मक्खन की चोरी को तवज्जो दे।''

नारदजी ने हमारी त्रासद गाथा सुनकर सहानुभूति में सिर हिलाया, नारायण-नारायण का तकिया कलाम दोहराया और बोले, ''बड़ी विषम परिस्थिति है, वत्स! कहीं अंदर हमारे अंतर में भी यही संशय रह-रहकर उभर रहा था कि कभी देव भूमि रही भारत के हालात संतोषजनक नहीं हैं, तभी तो स्वर्ग में'' कहते-कहते वह रुक गए। हमें लगा कि जरूर कोई राज की बात है। स्वर्ग की पोल-पट्टी नारद मुनि हमसे क्यों खोलेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह दीगर है कि ब्रह्मा-विष्णु के बीच इधर-उधर की करें या फिर शंकर के कान भरें!

हमने सुना है कि महिलाओं के पेट में बात पचती नहीं है। सिर्फ इतना ही नहीं, अधसुनी बात को पूरा सुनने की जिज्ञासा तो जानलेवा हो जाती है। नारदजी चुप हुए और उन्होने पुनः 'नारायण-नारायण' का जाप किया। पत्नी ने आव देखा न ताव, नारदजी के फलाहार के लिए किचन से पप्पू के लिए रखा इकलौता केला और एकमात्र बचा संतरा लेकर प्रकट हुई। उन्होंने नारदजी से निवेदन किया—''प्रभु! आपने पधारकर हमें अनुगृहीत किया है। अब कुछ जूठन डालकर घर को पवित्र भी कर दीजिए।''

नारदजी ने केले-संतरे को देखा और वातावरण में 'नारायण-नारायण' की गुहार गूँज उठी। उनके चेहरे का उल्लसित भाव यकायक तिरोहित हो गया। संसार में किस्म-किस्म के लोग हैं। कुछ हैं, जो कुछ जानते हैं तो उसे अंतर के लॉकर में दफन कर देते हैं। मजाल है कि मन की बात कभी जुबान तक आए। कुछ और हैं, जो हर गोपनीय तथ्य को उजागर करे बिना चैन नहीं पाते हैं। ऐसे सज्जन पुरुष या नारी इस नश्वर जगत् की निधि हैं। इन्हीं के सौजन्य और कृपा से टी.वी. में कभी-कभार वास्तविक 'ब्रेकिंग न्यूज' नजर आती है तो कभी अखबार में। यह न हो तो रोजी, रोटी या प्रतियोगिता भरे नश्वर जीवन में कुछ भी रुचिकर न रहे।

हमें यकीन है, ब्रह्मा ने इनसानी नमूने देवताओं की अनुकृति में ही गढ़े हैं। इसीलिए आध्यात्मिक गुरुज्ञान बाँटते हैं कि हर मानव में देवत्व का अंश है। नारदजी तो साक्षात् देवताओं के घुमंतू राजदूत हैं। आकाश के आधिकारिक प्रतिनिधि हैं। पत्नी ने संतरा छीलकर और उसकी फाँक का कवर उतारकर नारदजी को ससम्मान पेश किया। नारदजी इस सादर पेशकश से प्रभावित ही नहीं, प्रसन्न भी हुए। जब यह सत्कार प्रक्रिया समापन की ओर बढ़ी तो उन्होंने भोलेपन से जानना चाहा, ''प्रभु! आप क्या कहते-कहते रुक गए थे। हम आपको आश्वस्त करते हैं कि आप जो भी बताएँगे, वह इस कमरे के बाहर नहीं जाएगा!'' हम जीवनसंगिनी की तकनीक से वाकिफ हैं। वह याचक भाव से दूसरे से गोपनीयता की शर्त पर हर राज उगलवा लेती हैं और फिर अपनी जानकारी का ढिंढ़ोरा पीटती हैं। कैलाश बाजपेयीजी यों ही बड़े कवि नहीं कहलाते हैं। उन्होंने मानव अंतर्मन की भावनाओं को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। तभी तो वह कहते हैं—

'एक औरत ने दूसरी
से कहा,
दूसरी ने तीसरी से,…और
शहर में हैजा फैल गया!'

ये पंक्तियाँ हम अपनी कमजोर स्मृति के आधार पर उद्धरित कर रहे हैं, कवि से भूल-चूक की प्रार्थना के साथ। यों प्रोफेसर कवि हों या आलोचक, उनकी याददाश्त गजब की होती है। हम तो निरे बाबू के बाबू हैं। बाबुओं की सिफत भूलने की है। उनकी उम्र पहले कागज कारे करने और फिर इन काली करतूतों को भुलाने में बीतती है।

नारदजी जैसे बोलने को अधीरता से प्रतीक्षारत थे। उन्होने 'नारायण-नारायण' कहकर जो लंबा बयान दिया, उस का सारांश प्रस्तुत है। पत्नी और हम उनसे चर्चा के लिए व्यग्र थे, पर शायद आकाश में उनका कोई महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम या भेंट-मुलाकात थी, अपना रोना रोकर वह आनन-फानन अंतर्ध्यान हो गए।

उन्होंने सूचित किया कि उन्हें भारत-दुर्दशा का आभास था। बस वह अपने अनुमान को नक्की करने हमारे घर पधारे थे। ''वत्स! तुमसे बात कर हमें विश्वास हो गया कि तुम्हारे नेता और नौकरशाह इतने योग्य और पराक्रमी हैं कि किसी भी स्वर्ग को नरक बना दें। सब धरती पर घपले, घोटाले, व्यभिचार, मिथ्याचार, और हर प्रकार का दुराचार कर सीधे नरक जाते हैं। यमदूतों को भी भ्रष्ट करने पर यह उन्हें हर तरह का लालच-प्रलोभन देते हैं। हर धरती-गमन के बाद हमें मंत्र-पाठ से यमदूतों का शुद्धीकरण करना पड़ता है। तुम्हारे नेता और नौकरशाहों को सिद्धि है कि वह जिसे स्पर्श करें, उसमें कालिख पोत दें। वह धन को छूते हैं तो उसे काला करते हैं। मन तो उन का आबनूस है ही। न उनके वचन का भरोसा है, न आचरण का।

''नरक में इन की आबादी बढ़ती ही जा रही है। वत्स, तुम्हें कदापि ज्ञान नहीं है कि नरक और स्वर्ग के बीच एक काल्पनिक सीमा-रेखा है। ब्रह्मा की बनाई अलिखित संहिता के अनुपालन में कोई इसका अतिक्रमण नहीं करता है। पर तुम्हारे नेता और नौकरशाह तो हर कायदे-कानून को तोड़ने के आदी हैं। वास्तविकता है कि नियम ही तोड़ने की नहीं, इन्हें संस्था, वचन, वायदे, नैतिकता, जीवन-मूल्य सबकुछ तोड़ने की लत है। इन्हें तोड़कर ही यह सफल होते हैं। इन्हे भ्रांति है कि अजर-अमर हैं, ये। परिणामस्वरूप, सामान्य भोजन के स्थान पर सोने की ईंट खाते हैं और नोटों से भरे सूटकेस चबाते हैं।

''ऐसे लतियल नरक जाकर भी अपनी हरकतों से कैसे बाज आएँ? स्वर्गवासियों का भोजन फलाहार है। वहाँ सदाबहार फलों के पेड़ हैं, जो पूरे वर्ष फलों से लदे रहते हैं। अधिकतर उन्हीं का उपयोग होता है। भजन, मनन-चिंतन में समय कटता है। नेता-नौकरशाहों ने मिलकर नरक के प्रशासन की नाक में दम कर रखा है। जिन्होंने हमेशा प्रजातांत्रिक आदर्शों को धता बताया, वह नरक में उसी की दुहाई देते हैं। वह भूलते हैं कि यह भारत नहीं नरक है। यहाँ नागरिक नहीं, सिर्फ पापी और अपराधी हैं। ये नागरिक हैं ही नहीं तो इनके अधिकार कैसे! उनकी अभी भी लूट की हवस है और इस लक्ष्य की आपूर्ति में उनके लिए प्रजातंत्र एक कारगर साधन है।

''हम धरती पर यह देखने आए थे कि इन्होंने वहाँ क्या झंडे गाड़े हैं। तुम्हारी चर्चा से पता लगा कि इन्होंने ही सम्मिलित प्रयास से भारत को पतन के गर्त में ढकेला है। उसे नारकीय स्थिति में पहुँचा दिया है। अब इनका निशाना स्वर्ग है। ये नरक से आते हैं और फलों के उद्यान में लूट-पाट मचाते हैं। कुछ ने तो इंद्र के आसव-भंडार पर धावा बोलकर उसे गटागट पी लिया!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मजबूरी में हमें सीमा पर देवताओं को नियत करना पड़ा है कि घुस-पैठ रुके! इंद्र ने खीजकर अपने सोमरस-केंद्र के सामने ऐरावत को नियुक्त कर दिया है कि धरती के धूर्त वहाँ धमाल न मचा सकें!''

फिर नारद एक पल साँस लेने को रुके उन्होंने जल की इच्छा प्रकट की। हमारी पत्नी के पैर में जैसे पंख लग गए। वह दौड़कर स्टील के पात्र में जल लाई—''प्रभु क्या बताएँ! हमारे यहाँ चाँदी का कोई पात्र नहीं है! बस ऐसे ही छह गिलास हैं। उनमें एक में संपूर्ण भक्ति और श्रद्धा से जल आपको समर्पित है।''

नारद ने 'नारायण-नारायण' बुदबुदाकर जल ग्रहण किया और जब उसी गिलास को कुरसी के सामने की मेज पर रखा तो वह स्टील से चाँदी में परिवर्तित हो चुका था। वह फिर ज्ञान-दान की मुहिम में लग लिये—''जाने तुम जानते हो कि नहीं, वत्स! पहले सिर्फ एक मृत्युलोक था। जैसे भारत में अंग्रेजों के शासन काल के दौरान जेलों में राजनैतिक और ग्रेजुएट बंदियों के लिए अधिक सुविधा प्राप्त श्रेणी का प्रबंध था, उसी प्रकार मृत्युलोक में अपराधियों-पापियों के लिए अलग और पुण्यात्माओं के हेतु अधिक सुखदायक और सुविधाजनक व्यवस्था थी। भारत में आजादी के बाद जब राजनीति का अपराधीकरण हो गया और तथाकथित नेता तथा नौकरशाह सफेदपोश डकैतों की पाँत में सम्मलित हो गए तो जमीन पर जेल बदले और मृत्युलोक के अधिष्ठाता यमराज की संस्तुति पर नरक और स्वर्ग की स्थापना करनी पड़ी। तुम्हें अचरज होगा, इसमें भी तुम्हारे नेता और नौकरशाहों की ही प्रमुख भूमिका है।''

नारदजी चलते-चलते यह सूचित करने से भी नहीं चूके कि यमराज गंभीरता से विचार कर रहे हैं इन शरारती तत्त्वों के आकाश से पाताल में स्थानांतरण का। जब तक ये रहेंगे, नरक सार्वजनिक शौचालय से भी ज्यादा गँधाता है। एक बार तो यमराज ने इनको गंगा के नीचे बसाने का निश्चय लगभग कर ही लिया था। हमने उन्हें रोका। गंगा का जल कभी शुद्ध और निर्मल था। अब प्रदूषित है। यह विष के पर्याय, नदी के नीचे भी रहे तो जल को जहर बनाएँगे। अनाचार हो या भ्रष्टाचार, रेडियो ऐक्टिव तरंगों सा दूर तक फैलता है।

गनीमत है कि इतने में अपनी आँख खुल गई। नारद गायब थे और स्टील के गिलास की चाँदी भी। हमें चाँदी गँवाने का आज भी दुख है। नारद तो घुमंतू हैं। गए तो गए, पर चाँदी की सौगात क्यों ले गए! हमें विश्वास है, अगर सपने सच हों तो देश में कोई भी गरीब न रहे!

९/५ राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

कविता

सुर्खियों में

● कुसुमवीर सिंह

मुझे अच्छा लगता है
सुबह-सुबह
हरी घास पर टहलना
और शबनमी बूँदों का
मेरे पाँवों को सहलाना

भाती है मुझे
ठंडी हवाओं के झोंकों में
पेड़ों की शाखो पर
पत्तों का
रह-रहकर मचल जाना

लेकिन गरम चाय की
प्याली के साथ
अखबार की सुर्खियों में
जब पढ़ती हूँ,
बलात्कार, डकैती
अपहरण और मार-काट,
तब सिहर उठता है मन

काँप जाती है रूह
कि आज
फिर किसी
वृद्धा को पाकर अकेले
किसी कसाई ने
उसका हलक दबाया होगा!

सुबह की सुहानी
शीतल सुवासित मलय
अब गरम हो चुकी है
अखबार के सुर्ख स्याह
पन्नों की धूप से,
रेशमी घास के
शबनमी मोती भी
अब सूख चुके हैं,
और रीत चुके हैं
भावों के अप्लव

दूर कहीं
कोमल, निश्छल शाखें
ताक रही हैं
पेड़ों को,
और पूछ रही हैं,
कब ये आदमी
इनसान बनेगा?

क्या इसीलिए ईश्वर ने
इनसान को
धरती पर भेजा था
कि वह
जर, जोरू और जमीं के लिए
कत्लेआम करे
और बहाए खून
माँओं, बहनों और बच्चों का
जिनका दोष सिर्फ यह है
कि वे निर्दोष हैं।

१८८८, सेक्टर-३७
नोएडा-२०१३०३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

निरता

● नंद किशोर कौशिक

रामचरित मानस का पाठ करने के बाद निरता पुजारिन अपने पुण्य कृत्य में लग चुकी थी। यह धर्मकार्य उसके लिए चौदह वर्ष पुराना हो गया था। इस समय वह प्याऊ का काम करती थी। इस काम से पहले निरता के जीवन की एक करुण कथा है। वह अधेड़ उम्र में ही विधवा हो गई थी। अपनी ही बस्ती के कुछ लोगों की सहानुभूति के कारण उसने अपने इस गाँव को कभी छोड़ने का मन नहीं बनाया था। वह गाँव के कुछ संपन्न घरों में ही टहल-चाकरी करने लगी थी। उसके विधवा होने पर भी सभी निरता के मान-सम्मान का पूरा ध्यान रखते थे। उस पुजारिन की एकमात्र संतान गुड़िया रमा, वह भी पिता की मृत्यु के कुछ समय बाद ही भगवान् को प्यारी हो गई थी। निरता घर, परिवार और संतान सभी से वंचित होकर अकेली थी। बस्ती के लोग उसकी विपन्न दशा से, अकेलेपन से उबारने का प्रयत्न करते रहते थे। वह जीवन का सार निरर्थक समझकर व्यथित मन से जीवन को ठेल रही थी। दुविधाओं के चलते भी वह धार्मिक प्रवृत्ति की साध्वी नारी थी। भजन, पूजा तो वह करती ही थी, कुछ पढ़ी-लिखी होने के कारण रामचरितमानस का पाठ भी नित्य उच्च स्वर में गा-गाकर करती थी।

वैधव्य जीवन काटना एक कठिन साधना से कम नहीं होता है। आरोप, दोष, लांछन सभी कुछ इसी अवस्था में लगने को आतुर रहते हैं, फिर भी सुव्यवहारिणी स्त्री इस असाध्य जीवन को निष्कलंक साध ही लेती है। निरता अपनी अच्छी आदतों के कारण बस्ती के लिए भली थी, लेकिन जब से ठाकुर हरनारायण सिंह के साथ बुरा हो गया था, तब से वह उस घर में ज्यादा आना-जाना रखती थी। जो हृदय-विदारक दृश्य निरता ने अपनी आँखों से देखा था, वह उस विधवा के दुःखी मन को और भी विपन्न-विक्षिप्त कर गया था। ठकुराइन प्रसव पीड़ा में अस्पताल पहुँचाई गई, ऑपरेशन से एक बच्ची को जन्म दिया था, लेकिन उसके बाद से ही वह पीली पड़ने लगी थी। ऐसी स्थिति में निरता ने ठकुराइन का साथ नहीं छोड़ा था। यहाँ तक कि जब उनको खून की जरूरत पड़ी तो दैवयोग से निरता का ही खून मिल गया था। उसने ठकुराइन को खून भी दिया था। सब संबंधी और स्वयं ठाकुर साहब निरता को देवी का स्वरूप बताकर उसका गुणगान करने लगे थे, किंतु भरसक कोशिशों के बाद भी ठकुराइन इस दुनिया को छोड़कर चली गईं और छोड़ गईं फूल सी नन्ही बालिका को। शोकाकुल परिजन ठाकुर को थामे बैठे थे। सभी लोग सांत्वना दे रहे थे। ठाकुर नन्ही बच्ची की ओर हाथ करके दुःखी होकर रो पड़े, 'माँ''' छोड़ गई! अब इसे कौन सँभालेगा? ईश्वर को भी दया नहीं आई।' निरता पुजारिन यह सब देख रही थी। ठाकुर साहब को हिम्मत बँधाते हुए, लेकिन रोती हुई बोली, 'ठाकुर साहब, बच्ची की चिंता मत करो, इसे मैं पालूँगी।' उसी समय बच्ची को आँचल में चिपका लिया। क्रंदन करते सभी लोग अस्पताल से ठकुराइन के शव को लेकर चले आए थे। ऐसी स्थिति में ठाकुर साहब को निरता ने बहुत बड़ी हिम्मत दी। ठाकुर साहब के एक बेटा भी था। चौदह-पंद्रह वर्ष का किशोर, मोनू! धीरे-धीरे स्थिति सामान्य होती गई। निरता ने अपने प्यार-दुलार से सबके मन को मोह लिया था। धन से प्रेम को खरीदा नहीं जा सकता और बच्चा पालना ममतामयी हृदया का ही काम होता है। निरता अपने वैधव्य को ध्यान में रखकर सामाजिक सीमाओं में बँधकर घर में बच्चों को सँभालने लगी। वह दिन-रात नन्ही बच्ची को कलेजे से चिपकाए रखती थी। दिन भर ठाकुर की हवेली में ही नौकर-नौकरानियों के मध्य रहकर काम-धंधा करके दिन पूरा कर देती, लेकिन रात के समय वह अपनी झोंपड़ी में ही चली जाती थी। बच्ची उसके साथ ही रहती। इस बालिका को हवेली से बाहर ले जाने पर भी ठाकुर को कोई परहेज न था। गाँववाले भी निरता के इस धर्म-कार्य से प्रसन्न थे, क्योंकि यह परहित धर्म ही तो था। जब बालिका का नामकरण हुआ तो नाम चाहे कुछ भी निकला हो, किंतु पुजारिन के कहे अनुसार नन्ही गुड़िया को सब लोग 'रमा' कहने लगे थे। रमा नाम से निरता को आत्मतृप्ति मिलती थी, उसका विश्वास था कि यह मेरी रमा ही मिल गई है, जिसके सहारे अब उसका जीवन सार्थक

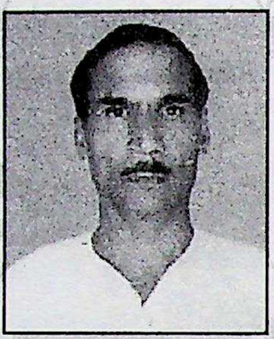

जन्म : १५ मार्च, १९६१ को पिसावा (अलीगढ़) में।
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), बी.एड.।
प्रकाशन : पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ आदि प्रकाशित।
संप्रति : स्वतंत्र लेखन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सकता है। वह इसे संस्कार ही मानती थी। निरता और घरों में नहीं जाती थी, अब उसे रमा से ही फुरसत नहीं मिलती थी।

पुजारिन हँसी-खुशी रमा के सहारे उम्र के बाकी दिनों को काट रही थी। उसने रमा के लालन-पालन के बदले कुछ भी नहीं लिया था। हाँ, भोजन जैसी प्राथमिक जरूरतें तो हवेली से ही पूरी होती थीं। ठाकुर निरता के व्यवहार से कृतज्ञ नजर आते थे। वह मन में विचार करते कि यदि निरता न होती तो मेरा जीवन नरक बन जाता। वह कभी-कभी इस अहसान को चुकाने के विचार से मन को व्यर्थ ही बोझिल कर लेते थे। निरता के मन में न कोई अहसान था, न धन का लालच। समय की गाड़ी लुढ़कती गई। रमा छह वर्ष की हो गई, बड़ा भाई मोनू इक्कीस का हो गया था। दसवीं कराते ही ठाकुर साहब ने अपने बेटे की शादी कर डाली। घर की परिस्थितियाँ ही शीघ्रता को बाध्य कर रही थीं। घर में नववधू आई—नाम था निर्मला। हवेली में रौनक लौटी, खुशियों ने विगत पर परदा ढाँप दिया। नव आगंतुक ने हवेली के नए जीवन का आविर्भाव किया। ठाकुर को महान् सुख का आभास हुआ। निरता मारे खुशी के टिक नहीं रही थी। सिंधु उर्मियों की भाँति चंचल थी, किंतु महीने-बीस दिन में ही नववधु निरता के लिए भारी पड़ी। नाम की निर्मला जरूर थी, पर मन में बड़ा मैल था, तेज-तर्रार किसी बडे घर की जिद्दी स्वभाव की लाड़ली बेटी, खुशामदीद सेविकाओं के हाथों पाली-पोसी। आते ही मालकिन का ओहदा सँभाल बैठी। निरता का थोड़ा भी दखल क्यों स्वीकार करती! एक दिन उसने निरता को ऐसी झाड़ लगाई कि हवेली के सभी लोग सुनकर दाँतों तले अंगुली दबा गए। कह दिया, 'ऐसी नौकरानी सिरचढ़ी होती हैं, अपनी औकात भूलकर उलटा आदेश देती हैं, अपनी बैठने की जगह बैठती नहीं हैं। निडर और निर्भय होकर सीधा नाम लेती हैं, बहूजी! मालकिन-ठकुराइन! कहना तो भाड़ में गया—बदतमीज, राँड़, कुलक्षिनी। सुबह-सुबह सूरत दिखाती है। लड़की पाली है तो मजदूरी नहीं ली होगी। आया है, आया की तरह रहना ही नहीं चाहती। पिताजी भी जाने क्यों कुछ नहीं कहते? सिर पर चढ़ा रखा है। मुझसे नहीं देखा जाता।' निर्मला की कटु वाणी से निरता का हृदय फटने लगा। इस दुर्व्यवहार ने माँ और बेटी का रिश्ता सदा के लिए उसी क्षण खत्म कर दिया, 'मैं इस देहली पर अब कभी न चढ़ूँगी।' वह हवेली छोड़ चली आई। ठाकुर ने सबकुछ सुना। वह पुत्रवधू के आगे विवश हो गए। वह व्यवहार-कुशल व्यक्ति थे, ज्यादा पचड़ा मोल नहीं ले पाए। पुत्र को भी पत्नी का व्यवहार अच्छा नहीं लगा, लेकिन पत्नी के तेवर देख मृगनयनी की हाँ में हाँ मिला दी और पिता में ही दोष टटोलने लगा।

घर से उपजी बात समाज में आशंका में बदलते देर नहीं लेती, लेकिन ठाकुर तो भले थे। अन्य लोगों ने जलती अँगीठी मानकर बीच में पड़कर बात को सिर पर रखना नहीं चाहा। रमा बच्ची थी, चाहकर भी कुछ न कह पाई। भाभी की भय भंगिमा से डर गई। इस करुण और घृणित कथा के उपरांत निरता पुजारिन प्याऊ पर काम करने लगी थी। वह जगह गाँव से हटकर एक कोस की दूरी पर थी, जहाँ अन्य दो गाँवों के रास्ते आकर मिलते हैं। वह उसी चौराहे पर थी, यहाँ पर एक पुरानी धर्मशाला और एक मंदिर गाँव के ही किसी सेठ ने बनवाए होंगे। अब ग्राम पंचायत ने यह सब निरता को जीवन-पर्यंत अधिकारिणी बनाकर दे दी थी और पंचायत ने विधवा पेंशन जैसी सुविधा भी दिलवा दी थी। प्याऊवाली जगह पर कुछ पेड़ों का झुरमुट होने के कारण वह स्थान आश्रम कहलाता था। निरता के आश्रम की बगीची में कुछ फलदार पेड़ भी थे, जिन्हें एक माली आधे का साझीदार रहकर देखभाल करता था। आज भी आश्रम के पेड़ों का रख-रखाव कराकर निरता अपनी खोई हुई रमा को याद कर लेती थी। गए-गुजरे दिनों को वह भुला नहीं पाती, बीते दिनों के पन्ने उलटने लगती तो भाव-विभोर होकर आँखें गीली हो जाती। लोग समझाते—'अम्मा, मन छोटा मत करो, जो हुआ सो हुआ, अब आँखें और खो बैठोगी।' यद्यपि उसने पहली रमा का तो कुछ नहीं देखा था। दूसरी रमा की वेदना उसे सालती रहती थी। वह राहगीरों को पानी पिलाकर तृप्ति करती थी, चाहे वह अपने जीवन में अतृप्त थी। ठाकुर के घर से वह तिरस्कृत होकर आई थी, तब से उसे यही बात सताती रही कि मुझे नेकी के बदले बदी क्यों मिली? सबकुछ जानकर ठाकुर साहब मूक क्यों हो गए?

सहसा प्याऊ के बराबर में एक कार आकर रुकी। लॉरी में तीन प्राणी थे। वह गाँव के किसी संबंधी की होगी। पति-पत्नी के अलावा, जो साधारण सी ड्रेस पहने था, वह उनका नौकर था, गाड़ी रुकते ही उसने अगला दरवाजा खोला, फिर विदेशी नस्ल के कुत्ते को गोद में लिया और उसके बालों को सहलाने लगा। मैम ने गाड़ी से उतरते ही छत्तीस तरह का मुँह बिचकाकर माथे पर सलवटें डालकर व एक भृकुटि को चढ़ाकर कहा, "उफ! कितनी गरमी है, गाड़ी में ए.सी. की वजह से कुछ पता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही नहीं चलता है। बुढ़िया, पानी पिलाओ।'' मैम की वाणी में दर्प था, ''आओ बेटी, पानी पीओ।'' पुजारिन ने लोटे से पानी पिलाने को हाथ बढ़ाए, मैम ने अंजलि बनाकर पानी पिया, कुछ पानी कपड़ों पर भी गया। ''ऐ बुढ़िया, कोई गिलास-विलास रखा करो। बड़ी डिफीकल्टी हुई है। छोटा-बड़ा हर वर्ग का आदमी आ सकता है, पानी पी सकता है, जरा ध्यान रखा करो।'' उस गरिमामयी ने वर्ग की व्याख्या से अपनी हैसियत समझा दी।

''सोचूँगी बेटी, सच कह रही हो।'' निरता ने अपनी आदत के अनुसार सहमति जताई। फिर उस बलकटी औरत ने अपने नौकर को इशारा किया—''रामदीन! गाड़ी से एक खाली बोतल लाओ और साहब को पानी पिलाओ। एकदम कोल्ड वाटर है।''

''आई हैव नो डिजायर, जल्दी करो! मुझे प्यास नहीं है।''

साहब बीवी से भी नकचढ़े निकले। रामदीन ने बात समझकर बोतल जहाँ से उठाई, वहीं रख दी।

निरता पुजारिन उत्सुकतावश पूछ ही बैठी, ''बेटी, तुम कहाँ से आई हो और कहाँ जा रही हो? क्या यह तुम्हारे पतिदेव हैं?''

''क्यों, पानी के बदले पूरा एड्रैस देना पड़ेगा? जाने से पहले कुछ देकर ही जाएँगे। मुफ्त में पानी पीकर नहीं जाएँगे। घबराओ मत।'' कहकर वह लड़कीनुमा औरत हँस दी।

''लेने-देने की बात करके मुझे ओछी मत बनाओ बेटी, मैं तो धर्म के नाम पर बैठी हूँ, मुझे पैसा लेकर क्या करना है, मेरे न कोई आगे, न पीछे।'' निरता ने उस मदांध को समझाने की कोशिश की।

वह बोली, ''मैं ठाकुर हरनारायण सिंह की बेटी हूँ रमा। दूर की नहीं हूँ और यह मेरे हसबैंड हैं, जो पुलिस विभाग में इंस्पेक्टर हैं। गाँव आई हूँ।'' रमा ने अपनी गुबार भरी शैली में बुढ़िया की जिज्ञासा की संतुष्टि की।

निरता पुजारिन 'रमा' नाम सुनकर लड़की की ओर आपा खोकर दौड़ी। वह मान-सम्मान, उम्र-वय, प्रण-प्रतिज्ञा, ऊँच-नीच, आगे-पीछे की सब बातों को भूलकर लड़की से जा लिपटी। उसे वर्षों से बिछुड़ी हुई अपनी बेटी मिल गई थी। ''बेटी, मैं हूँ अभागी निरता! तेरी माँ, मुझे पहचानती नहीं हो! मैंने तुम्हें बचपन में पाला था।'' कहते-कहते बूढ़ी आँखों से ममता रस बरस पड़ा।

''चल हट, पागल हो गई है, लिपट क्यों रही है, नाटक क्यों करती है, माँगना है तो दूर से बात कर, बनी है माँ।'' लड़की ने माँ की ममता पर कुठार चला दिया था। पुजारिन का भावावेशी उद्वेलन लड़की ने अभिनय से ज्यादा कुछ नहीं माना। अब निरता अपने ऊपर नियंत्रण न रख सकी। बिफर पड़ी, ''बेटी! तू बड़े दरोगाजी के लिए ब्याही है। कैसे भाग्य मेरे, मेरी बेटी आज रानी बनी है, मैं दोनों पर वारी जाऊँ, हजार वर्ष जीओ, कैसी बनी है हंसों जैसी जोड़ी, आज ठकुराइन होती तो तुम दोनों को देखकर फूली नहीं समाती··· पर मुझे यही दुःख है, मैं तेरे ब्याह में नहीं बुलाई गई।'' निरता गंभीर होकर रोने लगी।

पुजारिन के इस रोने-धोने से रमा अब ऊब चुकी थी। वह उससे पीछा छुड़ाना चाह रही थी। पचास रुपए निरता की ओर फेंकते हुए बोली, ''ले अब तो खुश हो जा। चलो साहब!'' अपने साहब को इशारा किया, ''यह तो इन भिखारियों के माँगने-खाने के ढोंग होते हैं। ठीक है, बचपन में मेरी आया रही होगी, इसे पिताजी ने क्या कुछ नहीं दिया होगा। गड़े मुरदे उखाड़ती है। कौन मरा कौन जिंदा रहा? माँ तो नहीं देखी, पर भाभी ने तो बेटी की तरह ही पाला है मुझे। मूड खराब कर दिया बुढ़िया ने।'' एक ही उसाँस में रमा ने सारी बातें कह डालीं, क्योंकि भाभी के आचरण का पूरा असर था, ''चलो साहब, गाड़ी स्टार्ट करो। रामदीन, रॉकी को सँभाल।'' रामदीन कुत्ता लेकर कार में पीछे बैठ गया था। तभी पुजारिन ने पचास के नोट को रमा के ऊपर फेंककर कहा, ''ले जा इन्हें धन कुबेरनी, पैसे के आगे मेरे करे-धरे को भूल रही है। जा तुझसे कभी न बोलूँगी।'' बुढ़िया मन मारकर रह गई। कार गाँव की ओर दौड़ गई।

□

ठाकुर साहब अपनी बेटी की सुख-समृद्धि से सुखी थे। रमा को उन्होंने दूसरे दिन विदा किया। दामाद का भी पूरा मान-सम्मान रखा। जब तक कार आँखों से ओझल नहीं हुई, वह अपलक कार को निहारते रहे। निरता की याद आ गई। घर के अन्य लोग भी साथ खड़े थे। सभी के मन थोड़े मलिन हो गए थे, क्योंकि विदाई के समय अकसर ऐसा ही होता

सहसा प्याऊ के बराबर में एक कार आकर रुकी। लॉरी में तीन प्राणी थे। वह गाँव के किसी संबंधी की होगी। पति-पत्नी के अलावा, जो साधारण सी ड्रेस पहने था, वह उनका नौकर था, गाड़ी रुकते ही उसने अगला दरवाजा खोला, फिर विदेशी नस्ल के कुत्ते को गोद में लिया और उसके बालों को सहलाने लगा। मैम ने गाड़ी से उतरते ही छत्तीस तरह का मुँह बिचकाकर माथे पर सलवटें डालकर व एक भृकुटि को चढ़ाकर कहा, ''उफ! कितनी गरमी है, गाड़ी में ए.सी. की वजह से कुछ पता ही नहीं चलता है। बुढ़िया, पानी पिलाओ।'' मैम की वाणी में दर्प था, ''आओ बेटी, पानी पीओ।'' पुजारिन ने लोटे से पानी पिलाने को हाथ बढ़ाए, मैम ने अंजलि बनाकर पानी पिया, कुछ पानी कपड़ों पर भी गया। ''ऐ बुढ़िया, कोई गिलास-विलास रखा करो। बड़ी डिफीकल्टी हुई है। छोटा-बड़ा हर वर्ग का आदमी आ सकता है, पानी पी सकता है, जरा ध्यान रखा करो।'' उस गरिमामयी ने वर्ग की व्याख्या से अपनी हैसियत समझा दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। करीब आधे घंटे बाद ठाकुर साहब को एक दुःखद सूचना मिली कि बड़ी सड़क पर अभी-अभी रमा का एक्सीडेंट हो गया है। भगदड़ मच गई। ठाकुर खबर सुनते ही कान मूँदकर गिर पड़े। आनन-फानन में ठाकुर परिवार सहित पूरा गाँव घटना स्थल पर जा पहुँचा। रमा और उसके पति की हालत अति गंभीर थी। कुत्ता और रामदीन को कुछ चोट आई थी। सभी को अस्पताल में भरती कर दिया गया। निरता साहस करके घटनास्थल तक पहुँची थी। तब तक वहाँ से सब लोग जा चुके थे। वह सामर्थ्यहीन संकोचवश, आगे न जाकर आश्रम पर ही लौट आई। मन में कुढ़ती रह गई।

ईश्वर की कृपा से अस्पताल से सभी स्वस्थ होकर लौटे और कुछ दिनों में ही यथास्थिति में आ गए। पैसे के बल पर मौत से बाजी मार ली। उनके जीवन में पहले जैसी चमक-चमक लौट आई। हलकी-फुलकी दिक्कतों के चलते दिन विलासतापूर्ण ढंग से व्यतीत होने लगे, लेकिन रमा कभी-कभार अपनी पसलियों में थोड़ी चुभन महसूस करती थी। दवाइयाँ चलती रहीं, फिर भी वह कसक पूरी तरह से गई नहीं, बल्कि बढ़ती गई। रमा के पति इंस्पेक्टर साहब की चिंता बढ़ी तो अस्पताल में रमा को फिर भरती करा दिया। इससे पहले उन्होंने छोटे-बड़े तंत्र-मंत्र, झाड़-फूँक सभी तरह का इलाज करा लिया था, किंतु बीमारी का पार नहीं पाया था। अब उनका मनोबल भी गिरने लगा था। मन क्लेश के कारण किंकर्तव्यविमूढ़ सा हो गया था। हालाँकि वह महीने में लाखों कमाते थे और पैसे की रौ में हर काम संभव मानते, लेकिन आज पैसा भी काम नहीं आ रहा था। जब डॉक्टर ने उन्हें धीरे से कान में बताया तो वह ठगे से खड़े रह गए। रमा के दोनों गुरदे खराब हो गए थे। इंस्पेक्टर साहब संबंधियों से किडनी जैसे दुर्लभ अंग की याचना करने लगे, लेकिन इस काम के लिए सभी मुँह मोड़ गए, लोग पैसे की बात कहकर उनका ध्यान बँटाते। इंस्पेक्टर को अमेरिका जैसे देश के नए-नए आविष्कारों का ध्यान दिलाते, लेकिन किडनी कोई न दे सका। ठाकुर साहब को रमा का अंत समय देखकर रमा की माँ की याद आ गई और व्याकुल होकर निरता के आश्रम की सीध लगा ली। वह सोचते थे कि मेरी बेटी के अंत समय में माँ का दुलार तो निरता ही दे सकती है। वह आश्रम पर पहुँचकर करुण भाव से बोले, ''पुजारिन, जो पाली थी, अब नहीं रहेगी। बेटी को अंत समय में माँ गोदी में ले ले तो मेरा भी जीवन सफल हो जाए। तुम्हारी बेटी मर रही है। मैंने तुम्हें जीवन भर अनदेखा किया। तुम्हारी उपेक्षा मेरी मजबूरी थी। चलो अपनी बेटी को एक नजर देख लो।'' निरता ने ठाकुर की बात सुनी तो वह व्याकुल हो उठी और कार की ओर ठाकुर के आगे-आगे चल दी। दोनों महानगर के उसी अस्पताल में पहुँच गए, जहाँ रमा जीवन की अंतिम साँसों से जूझ रही थी। अस्पताल में रमा की भाभी-भैया सहित सभी संबंधी थके-हारे से इधर-उधर बैठे थे। निरता रमा के पास पहुँची। रमा आँखें तो खोलती थी, लेकिन बोलती नहीं थी। माँ ने बेटी को देखा तो फूट-फूटकर रो पड़ी। निरता बोली, ''मुझे डॉक्टर साहब से मिला दो।'' सभी अवाक् निरता की ओर देखने लगे। उसकी अधीरता को देखकर डॉक्टर को मिन्नत करके रमा के कमरे में बुलाया। निरता बोली, ''डॉक्टर साहब, मैं रमा की माँ हूँ, बेटी के जीवन के लिए मैं क्या कुछ नहीं कर सकती हूँ। गुरदे की बात है तो गुरदा मैं दूँगी और मेरा खून भी मिलेगा। आप समझदार लोग ही कहते हैं कि माँ का बेटी से खून मिल जाता है। कैसे भी हो, मेरी बेटी को बचाओ।''

निरता की बात में आत्मविश्वास था और एक अविचलता थी। बुढ़िया की बात सुनकर डॉक्टर साहब के चेहरे पर प्रसन्नता के भाव उभर आए। सभी लोग निरता की बात सुनकर दंग रह गए और उसकी ममता भरी अज्ञानता पर भी तरस खाने लगे। ''भला इस उम्र में किडनी देना कैसे संभव हो सकता है।'' लेकिन डॉक्टर ने अविलंब बात का सारा खंडन वहीं कर दिया, ''आप भूल में हैं, अगर अम्मा किडनी दे रही हैं तो दे सकती हैं, बशर्ते किडनी सही हालत में होनी चाहिए। उम्र सत्तर तक भी चल सकती है। अगर ब्लड का संयोग मिल जाए तो मरीज जीवन पा सकता है।'' निर्मला एक ओर खड़ी निरता माँ की ममता को देखकर झुक गई और उसके पैरों में गिर पड़ी। इंस्पेक्टर भी बुढ़िया के प्रति श्रद्धावनत हो गए और जीवन की गहन अनुभूतियों में उतरने-चढ़ने लगे। मोनू अपने पिता से लिपटकर रोने लगा। डॉक्टर को निरता में ठकुराइन दिखाई दे रही थीं।

निरता तमाम आवश्यक कागजी कार्यवाही पूरी हुई और सारे परीक्षण सफल हुए। वह प्रसन्न मन से एक दिन ऑपरेशन थियेटर में प्रविष्ट हो गई। भगवान् की सुदृष्टि से ऑपरेशन सफल हुआ। निरता के निस्स्वार्थ वात्सल्य ने रमा को नई जिंदगी दे दी थी। अब रमा और निरता, दोनों ही अस्पताल से घर आ चुकी थीं। घर में दोनों की चारपाइयाँ बराबर में थीं। रमा ने अपनी उपेक्षित माँ को देखा, फिर उस किडनी पर हाथ फेरा, जो माँ के उदर से निकालकर उसे जिंदगी देकर ममत्व का एक ऐसा उदाहरण बन रही थी, जो शायद उसकी अपनी माँ भी पूरा नहीं कर सकती। वह माँ के बहुत नजदीक जाना चाह रही थी, और चाह रही थी माँ से लिपटकर पीछे की सारी गलतियों को दरकिनार कर माँ को प्रेम और श्रद्धा के हृदय मंदिर में बैठाकर पूजा करना।

भाभी खिसियाकर माँ के चरण दबाने बैठ गई थी। इंस्पेक्टर जो रमा के पति थे, उस वृद्धा में देवी का साक्षात्कार कर रहे थे। तभी अचानक निरता सहारे से उठ बैठी और अपनी रमा से बोली, ''बेटी, मैं अपनी एक इच्छा तुम्हारे सामने रखना चाहती हूँ। मुझे तुमसे एक चीज की जरूरत है, वह मुझे दोगी तो मेरा जीवन धन्य हो जाएगा।'' सभी निरता पुजारिन की बात सुनकर हतप्रभ रह गए। ठाकुर हरनारायण ने कहा, ''निरता, तुम आज जो कुछ भी माँगोगी, मैं रमा से वही दिलाऊँगा।'' निरता रमा की ओर देखकर बोली, ''मुझे माँ कह दो!'' रमा ने 'माँ' कहकर निरता की ओर हाथ फैला दिए। ठाकुर की डबडबाई आँखों से आँसू लुढ़क गए, आज तक उन्हें निरता के उदार हृदय की थाह न लग सकी थी।

गाँव+पो.-पिसावा, तहसील, गभाना
जिला-अलीगढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यात्रा-वृत्तांत

गढ़वाल के चारों धाम की यात्रा

● रामनारायण सिंह 'मधुर'

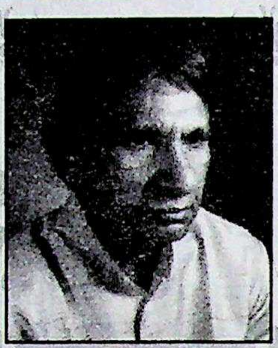

जन्म : १५ जनवरी, १९३७ को।
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), पी-एच.डी.।
रुचि : अध्ययन, लेखन, भ्रमण।
कृतित्व : अब तक व्यंग्य की छह पुस्तकें, समीक्षा की तीन तथा साहित्य-संस्कृति, इतिहास संदर्भ में पाँच पुस्तकें, एक उपन्यास एवं एक कहानी-संग्रह प्रकाशित। राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में सतत लेखन। आकाशवाणी व दूरदर्शन से रचनाओं का प्रसारण।

कई वर्षों से इच्छा थी उत्तराखंड के गढ़वाल में जाकर चारों धाम—यमुनोतरी, गंगोतरी, केदारनाथ एवं बदरीनाथ—के दर्शन-पूजन एवं परिभ्रमण की। पर संयोग नहीं बन पा रहा था। यह संयोग बना १० जून, २००४ को, जब शासकीय कन्या महाविद्यालय के ग्रंथपाल पं. मुरारी मिश्र साथ चलने के लिए तैयार हुए। रेलवे का सरर्कुलर टिकट भी मिल गया। आगरा, मथुरा घूमते हुए जब हम पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन पहुँचे तो शाम ढल चुकी थी। पता चला, रात ९ बजे हरिद्वार के लिए ट्रेन मिलेगी। स्टेशन के समीप एक रेस्तराँ में हलका जलपान कर जब हम प्लेटफार्म पर पहुँचे तो हरिद्वार के लिए गाड़ी प्लेटफार्म पर आ चुकी थी। एक डिब्बे में जगह भी मिल गई। सुबह होते-होते हम हरिद्वार पहुँच गए। एक सुंदर धर्मशाला में सौ रुपए में कमरा मिल गया। स्नान-ध्यान-भोजन के बाद हम सो गए। शाम चार बजे हरिद्वार घूमने निकले। कनखल में दक्ष प्रजापति का दर्शन किया। यह मंदिर गंगा किनारे स्थित है। दक्ष का धड़ तो मनुष्य का है, पर सिर बकरे का। पौराणिक कथा के अनुसार यज्ञ में जब दक्ष प्रजापति ने भगवान शंकर का भाग नहीं रखा तो सती ने यज्ञकुंड में कूदकर अपने को जला डाला। क्रुद्ध शंकर भगवान ने उनका सिर काट डाला, पर सती की माता के अनुरोध से उनके धड़ पर बकरे का सिर लगाकर पुनः जीवित कर दिया। आचार्य श्रीराम का शांतिकुंज, मनसा देवी, चंडी देवी आदि का दर्शन करते हुए हम हर की पैड़ी पहुँचे और गंगा माता की आरती में सम्मिलित हुए।

दूसरे दिन पता चला कि गढ़वाल के एक सिंह साहब टैक्सी चलाते हैं और यात्रियों को चारों धाम की यात्रा पर ले जाते हैं। संयोग से उनसे भेंट भी हो गई। एक नेपाली परिवार उसमें सवार था। हम भी उसमें आसीन हो गए। वह टाटा सूमो थी और सिंहजी की ही थी। सिंह ने अपना नाम बताया था, जो अब विस्मृत हो चुका है।

लगभग ग्यारह बजे दिन में हमारी 'सूमो' हरिद्वार से चली। रास्ते में सर्वप्रथम ऋषिकेश आया, निश्चित हुआ लौटती बार ऋषिकेश घूमा जाएगा। फिर आया नरेंद्र नगर। टिहरी के राजा नरेंद्र ने इस नगर को बसाया था। उनके भव्य राजप्रासादों पर दृष्टिपात करते हुए हम आगे बढ़े। श्री सिंह ने बताया कि राजा नरेंद्र बहुत अत्याचारी था। रहा होगा, हमारे पास उसका इतिहास खँगालने का न तो समय था और न इच्छा।

मैंने श्री सिंह से पूछा, "पहले कहाँ चलना चाहिए?" उन्होंने कहा, "चलना तो साहब पहले यमुनोतरी, गंगोतरी, केदारनाथ फिर बदरीनाथ का है।"

"फिर यमुनोतरी ही चलो भाई।" मैंने कहा।

नरेंद्रनगर से ४६ कि.मी. चलने पर सूमो चंबा पहुँची। मैंने कहीं पढ़ा था—चंबा एक अचंभा। चंबा का मौसम सदैव सुहाना रहता है। हरी-भरी पहाड़ियाँ और दूर तक देखें तो बर्फीले दृश्य।

चंबा से टिहरी २१ कि.मी. दूर है। दो सौ नब्बे ईस्वी में महाराज सुदर्शन शाह ने इसे बसाया था। यहाँ भिलंगना तथा भागीरथी के संगम पर एक विशाल बाँध बनाया जा रहा है। इस बाँध के निर्माण से पुरानी टिहरी डूब गई है। नई टिहरी बाँध से दूर बसाई जा रही है। इससे गंगा का निर्मल अजस्र प्रवाह भी अवरुद्ध हो गया है। प्रवाह को अबाध बनाए रखने के लिए आंदोलन चलाए जा रहे हैं। गंगा-प्रदूषण का एक कारण यह भी है। लाखों-करोड़ों की तरण-तारिणी, जीवनदायिनी गंगा को मुक्त करो भाई।

टिहरी से धरासू और फिर स्याना चट्टी। यहाँ पहुँचते-पहुँचते रात हो गई। ठहरने के लिए एक कमरा दिखाया गया, पर वह बदबू एवं सीलन से भरा था। बगल में घना जंगल एवं यमुना नदी का किनारा था। हमें बगल के अतिथिगृह में कमरा मिल गया। खाना भी अच्छा था। ठंड बहुत थी। गरम रजाई ने गरमी पहुँचाई तो हम नींद के आगोश में चले गए। सुबह उठने की इच्छा नहीं हो रही थी। पर टैक्सीवाले सिंह के शोर मचाने पर उठना पड़ा। तैयार हुए और कुछ ही देर में हनुमानचट्टी पहुँच गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हनुमानचट्टी से १३ कि.मी. पैदल चलकर यमुनोतरी पहुँचना था। रास्ते में बारिश से बचाव के लिए बरसाती और पहाड़ी पर चलने हेतु नुकीला डंडा लेकर हम चल पड़े। वैसे घोड़े और डांडीवाले यात्रियों से किराया लेकर उन्हें पहुँचा देते हैं; पर हमने पैदल ही यमुनोतरी जाना पसंद किया। जगह-जगह चाय-दूध-जल की व्यवस्था है। ७ कि.मी. चढ़ाई के बाद एक स्वस्थ-सुंदर युवक ने चाय की दुकान लगा रखी थी। हम वहीं चट्टानों पर बैठ गए। २५-३० मीटर नीचे यमुना नदी बह रही थी। ऊपर ऊँचे पहाड़ और जंगल। हम विमुग्ध हो यह सब देख ही रहे थे कि मुरारी मिश्र के हाथ से टकराकर बगल में रखी दूध की लुटिया ढलक पड़ी, दूध बगर गया। लड़के ने चिल्लाकर कहा, "अब मैं क्या करूँगा, चाय कैसे बनेगी, आज की कमाई चली गई। आप लोग सौ रुपए दीजिए।" लुटिया में दूध अधिक नहीं था, मुश्किल से पाव भर रहा होगा। मैंने कहा, "भाई, जानकर तो नहीं किया गया।" पचास रुपए देकर उससे पिंड छुड़ाया।

कुछ और ऊपर जाकर हमने चाय पी। यमुना नदी के समानांतर पर्वतों को काटकर सीढ़ियाँ बना ली गई हैं, अत: यात्रियों को अधिक कष्ट नहीं होता। चलते-रुकते चढ़ाई चढ़ते आखिर यमुनोतरी पहुँच ही गए।

यमुनोतरी यमुना नदी का उद्‌गम स्थल है, जो १०८०० फीट की ऊँचाई पर स्थित है। तप्त कुंड में यात्री स्नान कर यमुना-मंदिर में यमुना देवी, जो कच्छप पर आसीन हैं, का दर्शन करते हैं। मंदिर ऊँचे स्थान पर है। नीचे यमुना की शीतल धारा प्रवहमान है। यमुनोतरी में शीतल हवा चल रही थी, अत: ठंड भी खूब थी। ऊँचे पहाड़ों पर बर्फ की चादर बिछी थी। यमुनोतरी का दृश्य अच्छा लगा।

चढ़ाई उतरकर जब हम हनुमानचट्टी पहुँचे, संध्या के पंख पसर चुके थे। एक होटल के ऊपरी कक्ष में जगह मिली। वहीं खाना खाकर रजाई में दुबक गए। प्रात: अरुणिम आभा के फैलते ही जाग गए। नीचे झाँककर देखा—यमुना नदी मंथर गति से प्रवाहित थी। सामने घना जंगल, चिड़ियों का समूह गान, सब सुंदर-ही-सुंदर।

अब हम गंगोतरी की यात्रा पर चल पड़े। पक्की सड़क अच्छी स्थिति में थी। अपनी सूमो सनसनाती दौड़ रही थी। एक जगह पहाड़ी से झरना झर रहा था। झरने के सामने झोंपड़ी थी और वहाँ मिट्टी के घड़े में जल रखा था, शायद यात्रियों को पीने के लिए। झोंपड़ी के बगल में एक बड़ा पिंजड़ा रखा था। ज्ञात हुआ, यह बाघ पकड़ने के लिए वन-कर्मियों ने रखा था। पहाड़ी के ऊपर गाँव बसे थे और गाँव वाले एक रास्ते से सड़क पर आ रहे थे। एक नेपाली ने झरने में स्नान किया। उस स्थान पर थोड़ा विश्राम कर हम पुन: धरासू आ गए।

धरासू से उत्तरकाशी २६ कि.मी. दूर है। उत्तरकाशी १०-१२ हजार आबादीवाला आधुनिक ढंग का सुंदर नगर है। उत्तरकाशी इसी नाम के जिले का केंद्र है। गंगातट पर बसे इस नगर में अनेक धर्मशालाएँ, होटल एवं मंदिर हैं। सर्वाधिक सुंदर नाथजी का मंदिर है।

सामने ही भागीरथी का विशाल मंदिर है, जिसमें मगर पर विराजमान गंगा की दिव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है। यमुना, सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती, अन्नपूर्णा की भी मूर्तियाँ हैं। मंदिर के सामने तपस्यारत भगीरथ की प्रतिमा है। पूजा के सारे सामान सोने के हैं। हमने गंगाजी का पूजन किया, भगीरथ की प्रतिमा को प्रणाम किया। गंगा के उस पार संतों का एक पावन आश्रम जंगल के मध्य दिखाई पड़ रहा था। चतुर्दिकक् प्रकृति का श्री सौंदर्य बिखरा पड़ा था। देवदार के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष हवा में लहरा रहे थे।

गंगोतरी जानेवाली सड़क गंगा के किनारे ही होकर चलती है। मेनारी, भटवाड़ी होते हुए हम गंगनानी पहुँचे। यहाँ सेब के बड़े-बड़े बगीचे हैं। उस समय पेड़ सेब के फलों से लदे पड़े थे। इच्छा हुई, बगीचे में घुसकर सेब खाएँ, पर दूसरों के बगीचे में कैसे घुसें। हम गंगनानी में बहुत देर तक गंगा और उसके आसपास का खूबसूरत नजारा देखते रहे। वहीं चाय और नाश्ता किया। फिर सुक्खी, झाला, हरावल होते हुए लंका नामक स्थान पर पहुँचे। लंका से दो कि.मी. नीचे उतर और फिर इतना ही ऊपर चढ़ाई चढ़कर भैरों घाटी पहुँचते हैं। यहीं पर जाह्नवी और भागीरथी का संगम है। भैरों घाटी अति भयावनी है। घाटी में झाँके तो गए। सड़क भी सँकरी है। भैरों घाटी में भैरों का मंदिर है, जो द्वारपाल की तरह यहाँ मौजूद हैं। भैरों घाटी से गंगोतरी सन्निकट है। साँझ ढलते-ढलते हमारी सूमो गंगोतरी जा पहुँची। बस, टैक्सी-कार भागीरथ के इधर ही, नगर के बाहर रुक जाती हैं। गंगोतरी की ऊँचाई ३१४० मीटर है। भागीरथी का पुल पार कर हमने नदी के किनारे अवस्थित एक होटल में शरण ली। कमरा गरम था, फिर भी सिहरन हो रही थी। सुबह फारिग होने के लिए नदी के किनारे बने शौचालय में जाकर बैठा, पर लगता था शौचालय थरथरा रहा है। वस्तुत: अति तीव्रधारा के कारण भागीरथी के किनारे की जमीन काँपती ही है। बिना शौच किए उठ गया। मिश्रजी ने कहा, "बगल के शौचालय में जाइए।" किसी तरह फारिग हुआ। दंतमंजन के बाद हम गंगा (गंगोतरी में गंगा को भागीरथी कहते हैं) स्नान के लिए गए। किसी की क्या मजाल कि भागीरथी में उतरकर नहाए। हमने लोटा जल में डाला। धारा इतनी तेज थी कि कसकर न पकड़े रहते तो लोटा ही बह जाता। किसी तरह स्नान संपन्न हुआ।

सामने ही भागीरथी का विशाल मंदिर है, जिसमें मगर पर विराजमान गंगा की दिव्य मूर्ति प्रतिष्ठित है। यमुना, सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती, अन्नपूर्णा की भी मूर्तियाँ हैं। मंदिर के सामने तपस्यारत भगीरथ की प्रतिमा है। पूजा के सारे सामान सोने के हैं। हमने गंगाजी का पूजन किया, भगीरथ की प्रतिमा को प्रणाम किया। गंगा के उस पार संतों का एक पावन आश्रम जंगल के मध्य दिखाई पड़ रहा था। चतुर्दिकक् प्रकृति का श्री सौंदर्य बिखरा पड़ा था। देवदार के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष हवा में लहरा रहे थे।

गंगोतरी से कुछ नीचे केदार गंगा और भागीरथी का संगम है, वहाँ से एक फलांग नीचे अत्यधिक ऊँचाई से गंगा शिवलिंग पर गिरती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

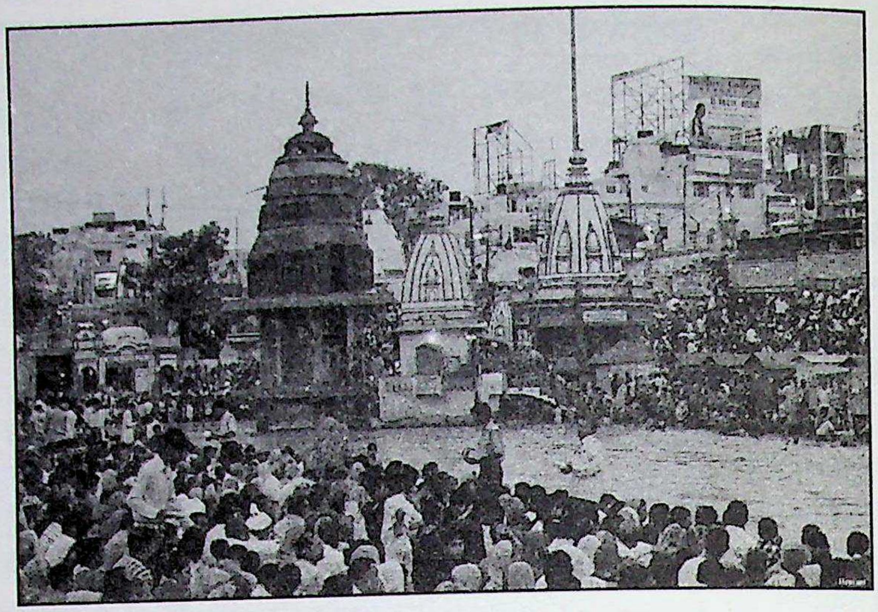

है। समीप गौरी कुंड है, जहाँ रुकने की अच्छी व्यवस्था है।

गंगोतरी से चढ़ाई चढ़कर १८ कि.मी. चलने के बाद गंगा का उद्गम गोमुख है, जहाँ से पतली सी धार निकलती है। १८ कि.मी. का पैदल मार्ग बहुत कठिन नहीं है। रास्ते में भोजवासा, चीड़वासा तथा गढ़वाल वन मंडल के पर्यटक निवास हैं। भोज के वृक्ष तो शायद ही मिलें, चीड़ के पेड़ मिल जाते हैं। चाय-नाश्ता, भोजन भी मिल जाता है। पर 'जहँ-जहँ पाँव पड़े संतन के तहँ-तहँ बंटाधार' वाली कहावत यहाँ सिद्ध होती है। जहाँ-तहाँ प्लास्टिक की थैलियाँ और गंदगी बिखरी पड़ी है। वन श्री का तो पता नहीं। 'ग्लोबल वार्मिंग' की वजह से गंगा का ग्लेशियर तेजी से पिघल रहा है। भगवान्, हमारी गंगा को बचाए रखना।

दो दिन बाद हमने केदारनाथ की राह पकड़ी। गंगोतरी से रुद्रप्रयाग पहुँचे। रुद्रप्रयाग में मंदाकिनी और अलकनंदा का संगम है। बहुत रमणीक स्थान है। यहाँ से मंदाकिनी नदी के किनार से मार्ग तिलवाड़ा घाटी पहुँचता है। दस कि.मी. चढ़ाई चढ़ने के बाद अगस्त मुनि आता है। कहते हैं, मंदाकिनी किनारे इस रम्य स्थान में अगस्त मुनि ने तपस्या की थी। आगे कुंड होते हुए गुप्तकाशी फिर सोनप्रयाग आता है। यहाँ गंगा और मंदाकिनी का संगम है। सोनप्रयाग से त्रियुगी नारायण चार कि.मी. है। यहाँ नारायण का प्राचीन मंदिर है। अब सड़क मार्ग ६ कि.मी. नीचे उतरकर सोमद्वार तक आता है। पाँच कि.मी. और चलने पर गौरीकुंड। यहाँ सड़क समाप्त हो जाती है और यात्रियों को पैदल या घोड़े या डांडी द्वारा केदारनाथ जाना पड़ता है, जो गौरीकुंड से १५ कि.मी. दूर है।

एक होटल में कमरा मिल गया। अँधेरा पसर चुका था, थकावट थी। खाना खाकर हम सो गए। सुबह मैंने नीचे झाँककर देखा—ऊँचे पर्वत से मंदाकिनी नीचे उतर रही थी। नित्य क्रिया से निपटकर हम गरमकुंड में नहाने चले गए। वहीं मिश्राजी ने घोड़ोंवाले से बात कर ली। मैंने कभी घोड़े की सवारी की ही नहीं थी। किसी तरह घोड़े पर सवार हुआ। घोड़े के साथ चलनेवाला लड़का बड़ा चिबिल्ला था। केदारनाथ जाने के लिए पहाड़ों को काटकर सीढ़ियाँ बना ली गई हैं। दोपहर होते-होते हम केदारनाथ पहुँच ही गए। मंदिर ११७८५ फीट की ऊँचाई पर है। पहाड़ियों पर श्वेत बर्फ की चादर सी बिछी थी। इस प्राचीन मंदिर का निर्माण पांडवों ने कराया था, मंदिर बहुत ही भव्य और शानदार है। द्वार पर दोनों तरफ द्वारपाल हैं। कहते हैं कि पांडव लोग गोत्र-वध का पाप छुड़ाने हेतु केदार तीर्थ में आए, तब भगवान शंकर भैंसे का रूप धर भागने लगे। पांडवों की स्तुति एवं आराधना से प्रसन्न हो शिव पिछड़े धड़ से यहाँ स्थित हो गए।

मंदिर के ऊपर बीस द्वार की चट्टी है। सबसे ऊपर सुनहला कलश है। मंदिर के मध्य में केदारनाथजी की स्वयंभू मूर्ति है, उसी में भैंसे के पिछले धड़ की आकृति है। मंदिर के आगे जगमोहन के चारों ओर द्रौपदी सहित पाँचों पांडवों की मूर्तियाँ हैं। इसके बीच में पीतल का छोटा नंदी और बाहर दक्षिण की ओर बड़ा नंदी निर्मित है। केदारनाथ जी पंचमुखी श्रृंगार मूर्ति है, जो सदैव वस्त्राभूषणों से अलंकृत रहती है। इसकी गणना द्वादश ज्योतिर्लिंगों में की जाती है।

मंदिर के बगल में आदिजगद्गुरु भगवान् शंकराचार्य की समाधि है। शंकराचार्य की मूर्ति भी स्थापित है। मंदिर के पीछे अमृत तथा रेतस कुंड हैं। पहाड़ी के मध्य भाग में मुकुंद भैरव है, जहाँ से हिमालय का अति मनोहर दृश्य दिखाई देता है। पास ही बर्फानी जल की झील है, यहीं मंदाकिनी नदी का उद्गम है। थोड़ा नीचे उतरने पर मधु गंगा और उसके बाद क्षीर गंगा मंदाकिनी की धारा में अपने को समाहित कर देती है।

दर्शनार्थियों की भीड़ में घुसकर हमने प्रभु का दर्शन किया और बाहर निकले। एक दुकान में सब्जी-पूड़ी का नाश्ता किया और घोड़े पर सवार हो गौरीकुंड की ओर चले। उतराई कठिन थी, जरा भी इधर-उधर हुए कि हजारों फीट नीचे मंदाकिनी में जा गिरे। पर घोड़े अभ्यस्त होते हैं। बहुत मजबूत कद-काठी के पहाड़ी जवान वृद्धों को डांडी पर बिठाकर चढ़ते-उतरते हैं।

जिस घोड़े पर मैं सवार था, उसे छोड़कर लड़का इधर-उधर भाग कर साथी के साथ मजाक करता तो घोड़े का पिछला हिस्सा ऊपर और सिर नीचे कर सीढ़ियों पर खड़ा हो जाता। बहुत भय लगा। मैंने हारकर घोड़े से उतर पैदल ही गौरीकुंड तक का रास्ता तय किया। प्यास से गला सूख रहा था, होटल पहुँचकर कमरे में निढाल बिस्तर पर गिर पड़ा।

प्रातःकाल पाँच बजे ही सूमो के ड्राइवर एवं मालिक शोर मचाने लगे, "आप सब जल्दी तैयार हो जाएँ, बदरीनाथ के लिए।" निश्चय हुआ—देवप्रयाग होते हुए चला जाए।

देवप्रयाग अलकनंदा और भागीरथी के संगम पर बसा है। यहाँ श्यामवर्ण की श्रीरघुनाथजी की विशाल दर्शनीय मूर्ति है। बाबा काली कमलीवाले की धर्मशाला है। देवप्रयाग से पैंतीस कि.मी. चलने पर श्रीनगर आता है। श्रीनगर सर्वसुविधा सुलभ नगर है। श्रीनगर से पुनः रुद्रप्रयाग आते हैं और वहाँ से चोपता, फिर मंडल चट्टी होते हुए गोपेश्वर। गोपेश्वर चमोली जिले का एक मुख्य नगर है। गोपेश्वर में एक शिव मंदिर है, जिसमें अष्ट धातु का फरसा रखा है, जो आकर्षण का केंद्र है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोपेश्वर से चमोली पहुँचते हैं। यह जिले का मुख्य केंद्र भी है। चमोली से बिहारी, गंगा, पीपल कोठी, गरुड गंगा, टंबनी, हेलुंग आदि स्थानों से होते हुए सूमो जोशी मठ पहुँची।

जोशीमठ आदिगुरु शंकराचार्यजी के चार मठों में एक है। शीतकाल में बदरीनाथजी की चल मूर्ति यहाँ लाकर पूजित होती है। यहाँ छोटा सा बाजार है। अन्य सारी सुविधाएँ भी सुलभ हैं। ६ कि.मी. नीचे उतर धौलीगंगा का पुल पार कर विष्णुप्रयाग में प्रवेश होता है।

विष्णुप्रयाग अलकनंदा एवं धौलीगंगा के संगम पर बसा है। यहाँ दाएँ एवं बाएँ स्थित पर्वत को नर और नारायण कहा जाता है। संगम का स्थान सीढ़ियों से युक्त है, पर इतना अधिक नीचे है कि डर लगता है। धौली गंगा का प्रवाह प्रचंड है, लोटे से ही स्नान कर सकते हैं। विष्णुप्रयाग से गोविंदघाट, चट्टी एवं देवदर्शनी होते हुए बदरीनाथ पहुँचते हैं।

शाम हो चली थी, हवा बर्फीली और तेज थी। एक संस्कृत पाठशाला में जगह मिली। सबेरे बदरीनाथ मंदिर के पास तप्त कुंड में स्नान कर दर्शनार्थियों की लंबी कतार में लग गए। मंदिर के ऊपर से उद्घोषित हो रहा था—बोलो बदरीनारायण-नारायण-नारायण। दर्शनार्थी भी स्वर में स्वर मिला रहे थे। दो घंटे बाद मंदिर में प्रवेश मिला। बाहर से ही भगवान बदरीनाथ का दर्शन-पूजन कर, मंदिर की चतुदिक् परिक्रमा कर हम बाहर निकले।

कहते हैं बदरीनाथजी की मूर्ति पौराणिक काल की है, जिसकी पूजा नारदजी करते थे। बौद्धों ने उसे अलकनंदा में डाल दिया था। आठवीं शताब्दी में आदि शंकराचार्य ने नदी से निकालकर इसे पुन: प्रतिष्ठापित किया। तब से बदरीनाथजी की पूजा का कार्य दक्षिण भारत के नंबूदरी ब्राह्मण ही करते हैं, जिन्हें रावल कहा जाता है। वर्तमान मंदिर का निर्माण पंद्रहवीं शताब्दी में गढ़वाल नरेश ने कराया था। मंदिर के ऊपर स्वर्ण कलश या छत्र इंदौर की महारानी अहिल्याबाई होल्कर ने चढ़ाया था। यहाँ पके चावल का प्रसाद वितरित किया जाता है।

इस विशाल मंदिर में बदरी भगवान श्यामल स्वरूप में वस्त्राभूषण एवं मुकुट से सुशोभित हैं। ललाट में हीरा जड़ा है। दाहिने कुबेर एवं गणेश तथा बाएँ लक्ष्मी-नारायण विराजमान हैं। बदरीपुरी अलकनंदा के दाहिने तट पर बसी है। अलकनंदा ऊपर से हिमालय की चोटियों से गिरती है। बर्फीली ठंडी जलधारा रजतपत्र की तरह चमकती है और ऊपर उत्तर की ओर बढ़ने पर भारत का अंतिम गाँव 'माना' गाँव है। पर्वतों पर चमकती श्वेत बर्फ दूर से ही दिखाई पड़ती है।

हमारी यात्रा सुखद रही। रास्ते में देवदार, चीड़, बुरांस के लंबे-लंबे झाड़ एवं पहाड़ों पर ढालू क्षेत्र में धान के लहलहाते खेत, झरते झरने, सुरम्य हरी-भरी घाटियाँ, कलरव करती चिड़ियाँ सब मनमोहक। इधर भोजन में चावल और आलू की प्रधानता रहती है। हमारे साथ के नेपाली यात्री जहाँ-जहाँ भी गए, पितरों का तर्पण किया। उनकी एक बात अजीब सी लगती थी। जहाँ कहीं उन्हें मूली दिखाई पड़ती थी, वे मूला-मूला चिल्लाकर गाड़ी रुकवाते और मूलियों पर टूट पड़ते। पहली बार ऐसे 'मूली-प्रेमी' देखने में आए।

हरिद्वार आकर हमारी यात्रा समाप्त हुई। देवभूमि को प्रणाम!

२१, मानस नगर, दुर्गाकुंड,
वाराणसी-२२१००५ (उ.प्र.)

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

...जो जन जननी मुक्ति हित

● रुद्रदत्त चतुर्वेदी

प्रकृति या परमात्मा ने मनुष्य को सुखी जीवन जीने के लिए दो सुंदर उपहार प्रदान किए हैं—स्वप्न और कल्पना। दोनों ही विचार सुखदायी होते हैं। हजारों वर्षों से युद्ध होते आ रहे हैं, परंतु हम शांति की कल्पना करते हैं। देश रसातल में जा रहा है, परंतु हमारे पूर्व राष्ट्रपति और हम २०२० की प्रगति की मनोहारी कल्पना बनाए बैठे हैं, किंतु इन सपनों को साकार और कल्पना को आकार देने के लिए एक अत्यावश्यक गुण चाहिए, जो है चरित्र। चरित्र कैसा हो—इसके लिए चाहिए आदर्श। और आदर्श पुरुषों की खोज होती है आर्षग्रंथों में, चाहे वे किसी भी धर्म से जुड़े हों।

जन्म : १५ अक्तूबर, १९४३, फिरोजाबाद (उ.प्र.)।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी. (मनोविज्ञान)।
लेखन : पूर्व सहायक संपादक 'चाणक्य विचार' मासिक पत्रिका; विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लगभग ४० लेख प्रकाशित।
संप्रति : अवकाश प्राप्त प्राचार्य, राजकीय उच्च शिक्षा, उत्तर प्रदेश।

भारतीय संस्कृति, जनमानस में दो प्रमुख आर्षग्रंथ हैं—रामायण और महाभारत। जहाँ रामायण के नायक भगवान् राम हमारे पुरुषोत्तम हैं, वहीं महाभारत के शिखर पुरुष भगवान् कृष्ण हमारे सम्मुख पूर्ण पुरुष, सोलह कलावतार के रूप में सामने आते हैं। चूँकि आदर्श की गंगा यथा राजा तथा प्रजा से चलती है अतः हमारी दृष्टि एक ऐसे पुरोधा भगवान् कृष्ण पर जाती है, जो मनुष्य रूप में केवल गीता के उपदेष्टा ही नहीं, अंतर्यामी ईश्वर भी हैं, जो ज्ञान और योग के प्रवक्ता के रूप में प्रकट होते हैं, परंतु वे उस कार्य-जगत् के संचालक भी हैं, जिनसे और जिनके लिए मानवजाति संघर्ष कर रही है। वे एक चतुर राजनीतिज्ञ भी हैं। स्वातंत्र्योत्तर भारत में चाणक्य के नाम से विख्यात पंडित द्वारिका प्रसाद मिश्र अपने महाकाव्य 'कृष्णायन' में उनके व्यक्तित्व को नए रूप में प्रारंभ करते हैं—

'जन्मेऊ बंदी धाम, जो जन जननी मुक्ति हित'

और आज आवश्यकता है, उसी रूप के जानने की, क्योंकि वर्तमान में राजनीतिक नेतृत्व राष्ट्रहित-रक्षण और संवर्धन की अपेक्षा सत्तामुखापेक्षी होता जा रहा है। हमारी वर्तमान शिक्षा पाश्चात्य विद्वानों से प्रारंभ होती है और कूटनीतिज्ञों में 'मैक्यावली' का नाम बड़ी प्रमुखता से लिया जाता है, लेकिन वही पाश्चात्य विद्वान् 'कौटिल्य के अर्थशास्त्र' का लोहा मानते हैं। कौटिल्य दैत्यगुरु शुक्राचार्य को अपना पथ-प्रदर्शक मानते हैं। आचार्य शुक्र अपने 'नीतिसार' में श्रीकृष्ण के संबंध में लिखते हैं—

'नू कूटनीतिर्भवत श्रीकृष्ण सदृशो नृपः'

जिन परिस्थितियों में श्रीकृष्ण का जन्म और लालन-पालन हुआ, वे उनकी अनुभवी कूटनीतिक दृष्टि के लिए पृष्ठभूमि रही। बचपन से ही उन्होंने जाना कि जरासंध के भय के कारण उग्रसेन (कृष्ण के नाना) के नेतृत्व में यादव बड़ी संख्या मे मथुरा से पलायन कर सौराष्ट्र की नगरी द्वारावती में जाकर बस गए थे। दूसरी बार कंस के अत्याचारों से ऊबकर मथुरा यादवों द्वारा खाली की गई।

अतः कृष्ण-लीला का प्रारंभ मथुरा से ही होता है, जहाँ वह कंस द्वारा भेजी गई पूतना, बकासुर आदि का वध करते हैं। वे यमुना-जल को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए काली नाग को नाथते हैं। इंद्र के प्रकोप से इस क्षेत्र को बचाने के लिए गोवर्धन पर्वत को उँगली पर उठाते हैं। जन सहयोग प्राप्त करने में प्रवीण भगवान् कृष्ण के नेतृत्व के विषय में सावन-भादों में गोवर्धन पर्व पर लोकगीत की पंक्ति—'तनिक तनिक भैया दी जो रे सहारो' इस बात का प्रतीक है कि वर्षा और बाढ़ से रक्षा के लिए यह प्रयास समवेत रूप से कराया गया था। यही सामूहिक नेतृत्व कंस वध में सहायक हुआ था। साथ ही कंस के अनन्य सहयोगी जरासंध का पांडवों से युक्ति पूर्वक वध कराकर मथुरा को हमेशा के लिए संकट मुक्त कराया। जरासंध का साथी कालयवन भी एक विदेशी आक्रांता था, जिसका यथार्थ नाम यह नहीं था। काल यवन अर्थात् विनाश की दृष्टि करनेवाला कोई यवन यानी विदेशी। यह १७ बार भारत पर आक्रमण कर चुका था, परंतु भारतीय गणों में एकता के अभाव के कारण प्रत्येक बार धन लूटकर ले जाता था। पुराणों में कथा आती है कि मुचकुंद नामक तपस्वी ने साधना से ब्रह्माजी प्रसन्न कर अनंत निद्रा का वरदान और विघ्न पहुँचाने वाले को भस्म करने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरदान प्राप्त किया था। राजनीति के पुरोधा श्रीकृष्ण ने जब यह जाना तो उन्होंने कालयवन को युद्ध के लिए ललकार घनघोर युद्ध किया, फिर दिखावे के रूप में पराजित होकर भागे (इसी कारण उनका एक नाम रणछोड़ भी है) और उस गुफा में घुस गए जहाँ मुचकुंद सो रहे थे। अपना पीतांबर उन्हें ओढ़ा दिया और गुफा में छिप गए। क्रोध में सुलगता कालयवन गुफा में घुसा और पीतवस्त्र ओढ़े सोते हुए व्यक्ति को श्रीकृष्ण जानकर पद-प्रहार किया। मुचकुंद ने नेत्र खोले और कालयवन भस्म हो गया। इस प्रकार श्रीकृष्ण के कूट-युद्ध से पश्चिमी भारत एक आततायी से मुक्त हुआ। बात एक दो की कहाँ थी। उस काल में संपूर्ण भारतीय राजनीति वैर-विरोध और फूट से ग्रस्त थी। शासक अनाचारी थे, जनहित उपेक्षित थे। अपने झूठे अहंकार और मर्यादा से ग्रसित शासकों के लिए युद्ध एवं भोग-विलास के अतिरिक्त अन्य कोई लक्ष्य नहीं रह गया था। जो थोड़े-बहुत सुशासक थे, वे राजमहल के षड्यंत्रों, कुचक्रों और एक-दूसरे को नीचा दिखाने में जुटे हुए थे। मथुरा से मुक्त कृष्ण ने एक ओर पश्चिम में द्वारिका देखी तो पूर्व में प्रागज्योतिषपुर (आसाम) के राजा नरकासुर तथा अनेक राजाओं का वध करके सहस्रों राजकुमारियों को बंधन मुक्त कराया। चेदि देश (वर्तमान बुंदेलखंड का पूर्वी भाग) में शिशुपाल तथा पौंड्रक और शाल्व अपना-अपना राग अलाप रहे थे। स्वयं श्रीकृष्ण के कुल यदुवंश में भी फूट और दुराचार घर कर गया। वर्ण व्यवस्था भी विकृत हो गई थी। राजा और प्रजा मर्यादाहीन हो चुके थे। धृतराष्ट्र पुत्र मोह में अंधे थे तो अर्धांगिनी गांधारी ने पति-मोह में आँखों पर पट्टी बाँध रखी थी। अर्थात् पांडु की मृत्यु के बाद एकमेव प्रभावशाली कुरुराज्य भी विघटन की ओर अग्रसर था। ऐसे में श्रीकृष्ण ने इस राज्य की सुदृढ़ता पर अपना ध्यान केंद्रित किया। कुरुराज्य में उभरते दुर्योधन (दुर् + योधन अर्थात् लड़ाई के निकृष्ट तरीके) और दु:शासन (अर्थात् शासन सत्ता का दुरुपयोग और दोषपूर्ण नीतियाँ), शकुनि की धूर्तताएँ, कपट और षड्यंत्र, इस राज्य का विघटन करने में लगे हुए थे। कर्ण जैसे महारथी और निष्ठावान् उपेक्षा, अपमान और अवहेलना के कारण दुश्चक्र में फँस गए थे। पांडव युधिष्ठिर की अति सहजता और भीरू व्यक्तित्व के कारण वन-वन भटक रहे थे। विघटन के कगार पर खड़े ऐसे राजपरिवार की ओर श्रीकृष्ण की दृष्टि गई, क्योंकि पांडव पुत्र उनकी बुआ कुंती के पुत्र थे। महाभारत रोकने के लिए उन्होंने हर संभव प्रयास किया। धृतराष्ट्र को राजसभा में समझाते हुए वे कहते हैं—

> 'कुरुणां पाण्डवानश्च शम: स्यादिति भारत
> अप्रणाशेन वीराणामेतद्याचितुभागत:।'

अर्थात् कौरव और पांडवों के बीच शांति स्थापित हो जाए, वीरों के प्राण न जाएँ, मैं यही प्रार्थना करने आया हूँ। वे दुर्योधन से भी कहते हैं—'शमेशर्म भवेत्तात' अर्थात् हे तात! शांति से ही तुम्हारा और विश्व का कल्याण संभव है। असफल होने पर ही उन्होंने युद्ध को अंतिम विकल्प मानकर, स्वयं अपने द्वारा समाप्त किए जाने के उपरांत, बचे हुए अत्याचारियों को महाभारत के युद्ध में खींच लिया। अपने स्वयं के वंश में फूट और दुराचार को देखते हुए अपनी यादव सेना को कौरवों की ओर रखा। शेष यादवों के मतभेद मिटाने के प्रयास में असफल होने पर उन्हें प्रभास क्षेत्र में ले जाकर समाप्त किया। महाभारत और वर्तमान स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भारतीय राजनीति क्रमश: गुलामी और पराभव की ओर इसलिए उन्मुख होती है, क्योंकि हमने मायावियों से मायापूर्वक छल और कूटयुद्ध का सहारा लिये बिना सीधे लड़ाइयाँ लड़ी हैं।

श्रीकृष्ण के संपूर्ण राजनैतिक कार्यों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—

१. जन संगठन एवं क्रांति द्वारा पुराने अत्याचारी शासकों का अंत (जैसे कंस, कालयवन, जरासंध और इंद्र)।
२. पूर्व शासक के उत्तराधिकारियों को ही सिंहासन पर आसीन कर अपना पक्ष प्रबलीकरण और सुव्यवस्था की स्थापना (जैसे शिशुपाल, जरासंध और नरकासुर)।

परिस्थिति का शीघ्र आकलन श्रीकृष्ण की सबसे बड़ी विशेषता थी, साथ ही उसके निराकरण की विधि और माध्यम की पहचान भी। यद्यपि वे महाभारत में स्वयं नहीं लड़े, परंतु वाक्‌शक्ति से हताश अर्जुन में प्रेरणा का संचार तथा भीष्म, द्रोण, कर्ण और जयद्रथ का वध उनकी बुद्धि-कौशल के प्रमाण हैं। वीर बभ्रुवाहन (टेसू) तथा अपलोचन का युद्ध से पूर्व वध उनकी कूटनीति थी।

उनका संपूर्ण जीवन कर्म प्रधान रहा। वे 'योग: कर्मसु कौशल' के प्रतीक थे। गुरुकुल जाने से पूर्व वे कंस और उसके साथियों का वध कर गए थे तथा गोवर्धन पर्वत की स्थापना कर इंद्र के प्रकोप से ब्रज क्षेत्र तथा गोपालकों को मुक्त कर गए थे। विद्याकाल में ज्ञानार्जन तथा योग की उच्चतम साधना की। तदुपरांत भारत के पश्चिम क्षेत्र द्वारिका को सुदृढ़ किया। महाभारत और उसके बाद युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ भारत के बिखरे गणराज्यों को भारत का एकीकृत रूप प्रदान करना था। इस क्षेत्र में, वर्तमान में सरदार बल्लभ भाई पटेल की उनसे तुलना की जा सकती है।

एक स्थान पर कृष्ण स्वयं कहते हैं कि मैं जानता हूँ कि युद्ध कभी अंतिम सत्य नहीं होता। इससे न समस्याएँ सुलझ सकती हैं, न प्रश्न हल होते हैं, परंतु मैंने युद्धाग्नि प्रज्वलित की। किसलिए? क्या दुर्योधन और दु:शासन को द्रौपदी के चीरहरण के नैतिक पतन पर दंड देने के लिए? क्या शकुनि मामा की कपटपूर्ण राजनीति का सदा के लिए उन्मूलन करने के लिए? क्या भीष्म और द्रोण की तटस्थता का मुँह खोलने के लिए? क्या धृतराष्ट्र की अंधी आँखें खोलने के लिए? क्या अपमान से पथच्युत कर्ण को सुमार्ग दिखाने के लिए?

यदि केवल यही मेरा उद्देश्य होता तो मेरा कार्य सरल था। मेरे सामने प्रश्न था—राष्ट्र की एकता, अखंडता और सांस्कृतिक रक्षा का। नैतिक मूल्यों के उत्थान का, धर्म की स्थापना का, सत्पुरुषों की रक्षा का और दुष्कर्मियों को समाज के समक्ष दंडित करने का। दूसरे शब्दों में न बदलने वाले सत्य और प्रकाशमय अमर चैतन्य की रक्षा का।

प्रोफेसर कॉलोनी,
गोरखपुर-२७३००९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारीगरी

मूल : **जॉन गाल्सवर्दी**
अनुवाद : **भवानीलाल भारतीय**

अपनी युवावस्था से ही मैं उसे जानता था। वह मेरे पापा के जूते बनाया करता था। उसकी जूतों की दुकान लंदन के वेस्ट एंड की एक गली में थी, जहाँ वह अपने भाई के साथ काम करता था। उस दुकान की मुख्य विशेषता यह थी कि उसमें तड़क-भड़क नहीं थी। उसके साइन बोर्ड पर यह भी नहीं लिखा था कि 'यहाँ इंगलैंड के राज-परिवार के जूते बनाए जाते हैं', उस पर केवल यही लिखा था—'गैसलर ब्रदर्स।' गैसलर ब्रदर्स जूते तभी बनाते थे, जब उन्हें ऑर्डर मिलता। ऑर्डर से बनाए जूतों के बचे रहने का तो कोई सवाल ही नहीं था, क्योंकि यह बात कल्पना से परे थी कि गैसलर का बनाया जूता पाँव में फिट न उतरे। इस दुकान के शो-केस में सजे ये जूते बेहद खूबसूरत थे। सच तो यह है कि ऐसे जूते बनाना उसी के बस का था। जब चौदह वर्ष की आयु में पहली बार मैं उसकी दुकान पर गया था, तभी गैसलर तथा उसके भाई की आन-बान की अमिट छाप मेरे मन पर पड़ गई थी।

यह बात कुछ साल बाद की है। मेरा जवानी का जिस्म था और अपने मजबूत पैर उसे दिखाते हुए मैंने संकोचपूर्वक उससे कहा था, 'क्यों मिस्टर गैसलर, ऐसे सख्त पैर का जूता बनाना मुश्किल नहीं होगा?' उसने अपनी जर्मन लहजे की अंग्रेजी में उत्तर दिया था, 'यह सख्ट टो नहीं है बाबू।' ऐसा कहते समय खिजाब से रँगी उसकी लाल दाढ़ी से मुसकान फूट पड़ी थी। उसका बड़ा भाई भी शक्ल-सूरत में उससे इतना मिलता-जुलता था कि दोनों की पृथकता का पता ही नहीं चलता, जब तक वह यह नहीं कहता कि 'हम भाई से पूछेगा।' इससे मुझे पता लग जाता था कि वह अपने बड़े भाई की बात कर रहा है।

आयु बढ़ने के साथ जूते का आकार भी बढ़ने लगता है। साथ ही मोची का बिल भी, किंतु गैसलर की दुकान अपवाद थी। उसे कीमत वसूलने की कोई जल्दी नहीं रहती थी। उसकी दुकान पर बार-बार जाना भी संभव नहीं था। उसका बनाया जूता 'उफ'! वर्षों तक तो टस से मस नहीं होता था। पता नहीं, किस अमरता की बूटी को रगड़कर वह जूता बनाता था। उसकी दुकान में कोई ऐसे ही नहीं घुसता था, जैसे मामूली तौर पर हम दुकानदार पर अहसान जताते हुए घुस जाते हैं। उसकी दुकान पर जाना तो मानो गिरजे की सीढ़ी पर पाँव रखना था। जब कभी उस दुकान में जाकर पूछता, 'क्या हाल-चाल हैं, मिस्टर गैसलर, क्या मेरे लिए रूसी चमड़े का जूता बना सकोगे?' बिना उत्तर दिए वह चमड़े का एक टुकड़ा लिये हुआ आता और उस पर नजर गड़ाए उसी जर्मन लहजे में कहता—'किटना खूबसूरट है।' फिर पूछता, 'कब चाहटा है टुम?' मैं कहता, 'अगले पखवाड़े में देने से चलेगा।' यदि वह न होकर उसका भाई हुआ तो वह कहता, 'हम भाई से पूछकर बटाएगा।' तब मैं 'धन्यवाद, गुड बाई' कहकर चल देता।

मैं उस दिन को कभी नहीं भूलूँगा, जब मुझे उसे एक दिन उलाहना देने का अवसर मिल गया था। मैंने कहा था, 'जानते हो मि. गैसलर, यह जूता जो सवेरे घूमने के लिए बनाया था, चटख गया है।' यह सुनकर थोड़ी देर के लिए वह अवाक् रह गया। कुछ देर बाद बोला, 'चटखना टो नहीं चाहिए था।' मेरा उत्तर था, 'लेकिन यह तो चटख गया।' यह कहने के साथ मुझे यह अफसोस भी हुआ कि मैंने यह सब कहकर उसका व्यर्थ में दिल दुखा दिया। 'तो उसे वापस कर दो'। वह बोला, 'हम फिर डेखेगा। बाट यह है कि कुछ जूटे पैडा ही खराब होते हैं। अगर टुम्हारा जूटा हमारे से ठीक नहीं होगा टो हम उसका सब डाम वापस कर डेगा।'

एक बार की बात है, मुझे एक नया जूता जल्दी चाहिए था। इसलिए मैंने एक बड़ी दुकान से खरीद लिया और उसे पहनकर अनजाने में गैसलर की दुकान पर चला गया। उसने मेरे जूते का ऑर्डर तो ले लिया, लेकिन नमूने के लिए कोई चमड़ा नहीं दिखाया, जैसा वह सदा करता था। उसकी आँखें फैक्टरी में बने इन जूतों पर गड़ी थीं। आखिर जब उससे रहा नहीं गया तो बोल पड़ा, 'यह जूटा टो हमने नहीं बनाया है।' उसके स्वर में न तो क्रोध, न कृपा, न वेदना; किंतु एक मूक प्रताड़ना थी। आखिर तब उससे रहा नहीं गया और वह बोला, 'यह बड़ी दुकानवाला अपनी इज्जट का खयाल नहीं करटा, बिलकुल रद्डी।'

अब उसकी घुटन बाँध तोड़कर फूट पड़ी। पहली बार उसने अपने मुँह से जूतों के व्यापार की खराब हालत और मुसीबतों के बारे में विस्तार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से बताया। उसका कहना था, 'वह बड़ा-बड़ा कंपनी विज्ञापन से पैडा करता है। अपने माल की अच्छाई या मेहनट से नहीं। इसी का नटीजा है कि अब हमारे पास काम बिलकुल नहीं है और दिन पर दिन कम होटा जा रहा है।' गैसलर ने ऑर्डर के मुताबिक जूते तैयार कर दिए। बहुत चलने-फिरने पर भी ये घिसे ही नहीं। उफ, ये जूते तो पहले वाले जूतों से भी अधिक चले, दो बरस तक मुझे जूते बनवाने के लिए वेस्ट एंड के उस जर्मन मोची के पास जाना ही नहीं पड़ा।

लेकिन एक दिन जब मैं उधर गया तो उसकी दो दुकानों में से एक पर किसी दूसरे का साइन बोर्ड लगा था। थी तो यह भी जूतों की दुकान और साइन बोर्ड पर भी अंकित था—'यहाँ राजवंश के जूते बनाए जाते हैं।' परंतु इस दुकान के शो-केस में पूर्ववत् जूतों की दो जोड़ियाँ नहीं थीं। उधर गैसलर की दुकान अधिक अँधेरी, छोटी तथा खाई की भाँति लगने लगी थी। वहाँ पड़ी काठ की कुरसी पर मैं जाकर बैठ गया, किंतु पहले के अनुभव के विपरीत अधिक देर से एक शक्ल को ऊपर से झाँका और फिर स्लीपरों की खटखट की आवाज के साथ गैसलर मेरे पास आ खड़ा हुआ। जंग लगी नीली कमानी के चश्मे से मुझे घूरते हुए बोला, 'मिस्टर··· (मेरा नाम लिया) है न!' मैंने हिचकिचाते हुए कहा, 'हाँ, मैं ही हूँ, पर मिस्टर गैसलर, आपके बनाए जूते तो तोड़े भी नहीं टूटते। देखो, अभी तो इनकी सूरत भी नहीं बिगड़ी है।' मैंने अपना पैर आगे बढ़ा दिया। उसने हामी भरी, मगर कहा, 'पर लोग तो अच्छा जूटा नहीं चाहटा है।' उसकी उदास नजर से बचने के लिए मैंने कह दिया, 'लेकिन तुमने उपनी दुकान का क्या हाल कर डाला है?' उसने शांति से उत्तर दिया, 'बहुत खर्च होटा था।' उसके यह पूछने पर कि क्या मुझे जूता चाहिए, मैंने तत्काल तीन जोड़ी जूतों का ऑर्डर दे दिया, हालाँकि मुझे जरूरत सिर्फ दो जोड़ी की थी।

उसने कहानी जारी रखी—'डॉक्टर कहता था कि घुल-घुलकर मर गए और आज देखिए, वे तब भी काम करते थे। दुकान चलाते थे और काम का यह हाल था कि सारा काम अकेले ही करते थे। किसी को जूते में हाथ तक नहीं लगाने देते थे। एक ऑर्डर को पूरा करने में ही इतना वक्त लगा देते थे कि बेचारा ग्राहक ऊब जाता था। इस तरह उनके सब ग्राहक टूट गए और फिर भी वे दिन-रात काम में खटते रहते। 'मैं कह सकता हूँ कि लंदन शहर में उनसे अच्छा जूता बनानेवाला कोई नहीं था, लेकिन कंपीटीशन भी तो जबरदस्त है। वे अपने माल और क्वालिटी की कभी एडवरटाइज नहीं करते थे। सबसे बढ़िया चमड़ा लगाते और सारा काम खुद करते। इसी का यह नतीजा है। इससे अधिक दुखद बात और क्या हो सकती थी।'

गैसलर भाइयों में अद्भुत समानता थी। उस दिन दुकान में उसका बड़ा भाई ही था, मैंने पूछ लिया, 'कहो मि. गैसलर! अच्छे तो हो?' 'हाँ, अच्छा टो हूँ, पर हमारा बड़ा भाई मर गया।' और तब मैंने समझा कि अरे, यह तो वह नहीं है। इससे पहले मैंने उसे अपने भाई के बारे में कुछ कहते नहीं सुना था। मुझे उसके भाई की मौत की सूचना से धक्का लगा और कहा, 'उफ, बड़े दुःख की बात है।'

उसने हामी भरते हुए कहा, 'वह बहुट अच्छा आडमी था, बहुत बढ़िया जूटा बनाटा था, पर मर गया।' उसकी मौत का कारण बताते हुए उसने कहा, 'वह दूसरी दुकान के खोने का सडमा नहीं सह सका।' मैंने उसके दुःख से द्रवित होकर कई जूतों के ऑर्डर दे दिए। इतने अच्छे जूते उसने कभी नहीं बनाए थे। कई वर्षों तक चले, फिर मैं लंदन से बाहर चला गया। काफी समय बाहर रहकर जब लौटा तो सबसे पहले मैं जिसकी दुकान पर गया, वह गैसलर की ही थी, किंतु अब उसे पचहत्तर बरस के बूढ़े के रूप में पाया। विदीर्ण, क्लांत और प्रकंपित। इस बार तो उसने मुझे भी नहीं पहचाना। मैंने अपने पहने जूते उसे दिखलाए और उसकी कारीगरी की प्रशंसा करते हुए कहा, 'ये जूते मैं सफर में बराबर पहनता रहा, मगर ये अभी आधे भी नहीं घिसे हैं।'

इस बीच गैसलर ने मुझे अपनी दुःख-गाथा सुनाते हुए कहा, 'क्या हमने टुमको बटलाया था कि हमारा भाई मर गया?' उसका शरीर कंकाल मात्र रह गया था। उसे देखकर वेदना हुई और मैं नए जूतों का ऑर्डर देकर वहाँ से चला आया। एक दिन जब नए बने जूतों का पार्सल आया तो मैंने अपने पहने रूसी चमड़े के जूते उतार दिए और नए बने जूतों को एक कतार में रख दिया। एक-एक कर उन्हें पहनना शुरू किया। एक जोड़े में जूतों का बिल रखा हुआ था। इनकी कीमत उतनी ही थी, जितनी सामान्यतया वह लेता था, परंतु इस बार उसने कुल रकम फौरन माँगी थी। यह मेरे लिए आश्चर्य की बात थी, क्योंकि इससे पहले तो वह तीन महीने से पहले बिल भेजता ही नहीं था। मैंने तत्काल एक चैक काटा और समीप के लैटर बॉक्स में डाल आया।

एक सप्ताह बाद जब मैं वेस्टएंड की उस गली से जा रहा था, मैंने सोचा मि. गैसलर से कह दूँ कि इस बार उनके बनाए जूते सबसे बढ़िया रहे, लेकिन जब मैं उसकी दुकान पर पहुँचा तो देखा कि वहाँ से उसके नाम का साइन बोर्ड गायब है, लेकिन शो-केस में वही जनानी जोड़ी, पेटेंट लेदर के पंप शू तथा काले राइडिंग बूट यथावत् रखे हैं। मैं एकदम चिंतित हो उठा और दुकान के भीतर गया। देखा कि दो दुकानों को मिलाकर एक बड़ी दुकान का रूप दे दिया गया है और उसमें एक नौजवान अंग्रेज मौजूद है।

'मि. गैसलर हैं।?' मैंने पूछा। उसने विचित्र विनयशीलता से मुझे देखा और बोला, 'नहीं जनाब, लेकिन मैं आपकी खिदमत में हाजिर हूँ। आज्ञा कीजिए। यह दुकान हमने पूरी ले ली है। आपने हमारा नाम पहले बराबर वाली दुकान पर देखा होगा। हम लंदन के बड़े-बड़े रईस लोगों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए जूते बनाते हैं।'

'हाँ-हाँ, ठीक है।' मैंने कहा, 'मगर मि. गैसलर कहाँ हैं?'

'ओह,' उसने जवाब दिया, 'वे तो मर गए।'

'मर गए? लेकिन अभी पिछले बुध को ही उन्होंने मेरे पास ये नए जूते बनाकर भेजे थे।'

'हाय' उसने कहा, 'बड़ी दर्दनाक कहानी है। बेचारे भूखों मर गए।'

'हे भगवान्।' मेरे मुँह से निकला।

उसने कहानी जारी रखी—'डॉक्टर कहता था कि घुल-घुलकर मर गए और आज देखिए, वे तब भी काम करते थे। दुकान चलाते थे और काम का यह हाल था कि सारा काम अकेले ही करते थे। किसी को जूते में हाथ तक नहीं लगाने देते थे। एक ऑर्डर को पूरा करने में ही इतना वक्त लगा देते थे कि बेचारा ग्राहक ऊब जाता था। इस तरह उनके सब ग्राहक टूट गए और फिर भी वे दिन-रात काम में खटते रहते।

'मैं कह सकता हूँ कि लंदन शहर में उनसे अच्छा जूता बनानेवाला कोई नहीं था, लेकिन कंपीटीशन भी तो जबरदस्त है। वे अपने माल और क्वालिटी की कभी एडवरटाइज नहीं करते थे। सबसे बढ़िया चमड़ा लगाते और सारा काम खुद करते। इसी का यह नतीजा है। इससे अधिक दुखद बात और क्या हो सकती थी।'

'लेकिन भूखों मर गए।' मैंने चकित होकर कहा। उत्तर में उसने कहा, 'यह बात आपको शायरी लग सकती है, लेकिन मैं खुद भी जानता हूँ कि वे आखिर दम तक अपने जूतों से ही चिपटे रहे। रात-दिन काम और काम। मैंने उन्हें कभी वक्त पर खाते नहीं देखा, सोते नहीं देखा। समय ऐसा आया कि उनके घर में एक पैसा (पेनी) तक नहीं रहा। वे इतने बरस तक जिंदा कैसे रहे, यही ताज्जुब की बात है। पर जनाब, आदमी वे एक ही थे। उनकी सानी का जूता बनानेवाला दूसरा कारीगर लंदन में नहीं था। उनकी कारीगरी निराली थी।'

'हाँ', मैंने भारी मन से कहा, 'वह बहुत बढ़िया जूता बनाते थे।' इतना कहकर मैं फौरन मुड़ा और दुकान से बाहर चला आया, क्योंकि मैं अपने आँसू उस नौजवान को नहीं दिखाना चाहता था।

३/५ शंकर कॉलोनी,
श्रीगंगानगर
(राज.)

श्री वै भूमा तद् अमृतम्

साहित्य अमृत

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के
पत्रांक ११०१४/८/९६-रा.भा. (प) द्वारा
केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/
सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/स्वायत्त निकायों/संस्थाओं आदि के लिए

एक विशिष्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका के रुप में अनुशंसित एवं अनुमोदित।

एक प्रति का शुल्क : बीस रुपए

एक वर्ष का शुल्क : दो सौ पचास रुपए

शुल्क मनीऑर्डर अथवा बैंक-ड्राफ्ट द्वारा 'साहित्य अमृत' के नाम
४/१९ आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२ के पते पर भेजा जा सकता है।

राजभाषा हिंदी तथा सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए संस्थाओं का सहयोग अपेक्षित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही तो!

● मंजुरानी जैन

मैं अपनी टेबल पर रखा काम तेजी से निपटाने में लगी हुई थी। काम था कि खत्म होने का नाम न ले रहा था और खामख्वाह मुझे विचलित कर रहा था।

मेरे ऑफिस के पीछेवाली बगिया में एक आम का घना पेड़ था। शाम के साढ़े छह बजते ही वहाँ चिड़ियों के चहचहाने की आवाज आने लगती और मैं भी रोज की तरह घर लौटने की तैयारी में लग जाती। आज जब मैं अपनी मेजें ठीक करवा रही थी, तो घर में पड़े बहुत से काम मुझे याद आने लगे थे। सुबह में बाई से काम करवाने का समय ही कब होता था। मैंने पर्स उठाने को हाथ बढ़ाया ही था कि सामने से एक आकृति का अपनी ओर बढ़ने का एहसास हुआ। देखा तो एक व्यक्ति बड़ी बेतकल्लुफी के साथ मेरे कैबिन का दरवाजा खोलकर अंदर घुसने की तैयारी में था। मैं कुछ कहती, इससे पहले ही जनाब जल्दी से मेरे सामनेवाली कुरसी पर आकर बैठ गए। मैंने ध्यान से उसकी ओर देखा तो लगा, शायद उसे कहीं देखा है।

जन्म : ७ जनवरी को मेरठ शहर में।

शिक्षा : हिंदी साहित्य में स्नातकोत्तर। इसके पश्चात् लाइब्रेरी साइंस में भी स्नातकोत्तर डिग्री।

कई वर्षों तक मुंबई विश्वविद्यालय में चीफ लाइब्रेरियन के पद पर कार्य।

प्रकाशन : पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित एवं दिल्ली पाठ्यक्रम के रैपिड रीडर में सम्मिलित।

वह मुसकरा रहा था, उसने अपनी गरदन को गोल-गोल घुमाकर पूछा, ''पहचान लिया?''

मैं उसे पहचानने की कोशिश कर रही थी। ''हाँ, शक्ल तो थोड़ी जानी-पहचानी लग रही है, पर पूरी तरह पहचान नहीं कर पाई।'' मैंने उत्तर दिया।

''हाँ, धीरेन तो याद है न!'' उसने मेरे एक पूर्व सहकर्मी का नाम लेते हुए पूछा।

मुझे याद आया कि धीरेन उसे एक-दो बार अपने साथ ऑफिस में लाया था। उसने उसका परिचय अपने एक घनिष्ठ मित्र के रूप में कराया था। 'इला दी! सुमेर से मिलिए, यह मेरे बचपन का दोस्त है। वैसे तो मेरे और भी दो साथी हैं, पर यह अलग ही है। बहुत बड़ा बिजनेसमैन बन गया है। पर मुझे नहीं भूला। हम अकसर मिलते रहते हैं...खूब घूमते हैं, जमकर बातें करते हैं।'

उसका वह दोस्त जैसे 'हाँ' कहते हुए अपनी गरदन हिला रहा था।

'धीरेन, अच्छे दोस्त ऐसे ही होते हैं। आशा है, मुझे भी तुम कभी नहीं भूलोगे।'

वह हँसकर बोला था, 'सुमेर, पता है, इला दी खाना बहुत बढ़िया बनाती हैं, विशेष रूप से काबुली चना!...ऐसे चने मैंने कहीं नहीं खाए। आपको तो कभी नहीं भूलूँगा।' फिर बोला, 'अच्छा दी! कल एक जनवरी है और हम चारों दोस्तों का झुंड पूरी रात मरीन लाइंस पर घूमेगा और मस्ती करेगा। अपना पुराणपंथी बॉस तो कल की छुट्टी देगा नहीं, और न ही लेने देगा। इसलिए आपको बता रहा हूँ, मैं कल नहीं आऊँगा। जरा सँभाल लेना!'

उसका पूरा व्यक्तित्व मेरी नजरों के सामने आईने की तरह घूम गया। उसके उस अभिन्न मित्र ने मेज पर ठक-ठक करके मेरा ध्यान अपनी ओर खींचा। वह सामने बैठा उत्सुकता से मेरी ओर ताक रहा था। पता नहीं ऐसा क्या था, जो वह मुझसे इस तरह अकेले, वह भी शाम के समय यों ही आ धमका था?

मैंने पूछा, ''आज अकेले? धीरेन नहीं आया साथ? कैसा है वो?''

''इतने दिन आपसे वह मिला ही नहीं?'' उसने आश्चर्य से पूछा।

''बीच में यदा-कदा मिलता था। चार एक साल पहले अपनी बहन के साथ मेरे बर्थ-डे पर आया था। मैंने ही उसे बुलाया था। पता चला था उसकी तबीयत ठीक नहीं थी। बड़ा कमजोर हो गया था। बाद में किसी दिन मेरी डायरी, जिसमें उसका पता और फोन नंबर था, रास्ते में कहीं निकल गई थी। कॉण्टेक्ट ही नहीं रहा। उसने भी कभी फोन नहीं किया। उसने यह भी कहा था कि वह अपने छोटे भाई के पास कुछ समय के लिए कलकत्ता जा रहा था...बाद में मेरा भी मिलना नहीं हुआ। सोचा कि कहीं बाहर चला गया होगा। यहाँ ऑफिस में था तो सब ठीक ही था।''

उसकी आँखों में एक चमक थी। मुझे लगा उससे संबंधित कोई अच्छी सूचना देने आया होगा। उसका पक्का दोस्त जो ठहरा। टेबल के उस पार से वह आगे की ओर झुककर कुछ खुफिया अंदाज में बोला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''आपको पता नहीं? वह एक महीने पहले चल बसा।''

''क्या? क्या कह रहे हो?'' मैं अवाक् रह गई, विश्वास नहीं हुआ। मैं लगातार उसकी ओर देखती रही।

''हाँ, ठीक ही कह रहा हूँ। आपको बताने आया था, उसे एड्स हो गया था, सबसे कहता था, उसे टी.बी. हो गई है।'' उसने एक ही झटके में सब कैसे कह दिया? उसके चेहरे पर साफ झलक रहा था कि कहीं-न-कहीं अंदर से वह अपने को उससे कहीं ऊँचे धरातल पर महसूस करने का सुख प्राप्त कर रहा था।

''तो? आपने इतनी दूर आकर यह बताना इतना जरूरी समझा?'' धीरेन जैसे जीवंत व्यक्तित्व का ऐसा अंत? विश्वास नहीं हुआ। काश! उसकी मृत्यु एक रहस्य ही बनी रहती। पर ऐसा दोस्त? सुनकर बड़ा धक्का सा लगा। मुझे एक अनजाने से दुख ने घेर लिया।

□

धीरेन जैसे मेरे सामने आकर खड़ा हो गया था। पहली बार जब वह मुझ से मिला था। 'एक्सक्यूज मी, मैम!'

आँख उठाकर देखा तो पाया एक नौजवान लड़का मेरे सामने खड़ा मुसकरा रहा था। बोला, 'जी मैम, एक इन्फॉरमेशन दे सकेंगी?'

'देखिए, आप गलत जगह पर आ गए हैं, इंक्वायरी डेस्क वहाँ··· उस तरफ है।' मैंने बाहर दाहिनी ओर इशारा करते हुए कहा।

'पर माफ कीजिएगा, उस तरफ एक मिस चारू बैठी हैं, उन्होंने कहा, आपके पास कोई भी जानकारी मिल सकती है?' उसने मुझे बताया।

मैंने आश्चर्य जताते हुए कहा था, 'पर उसे तो मैं अच्छी तरह से जानती हूँ, बड़ी गंभीर लड़की है, मेरी अच्छी फ्रैंड है। ऐसे काम टालने की आदत नहीं है उसे।'

'मैं जरा हँसने के मूड में था, आपसे मिलने का मन हुआ, इसलिए खुद ही चला आया।' वह हँसा। इससे पहले कि मैं रिएक्ट करती, बोला, 'मीट मी, आय एम धीरेन, धीरेन वर्मा! ए मैनेजमेंट ट्रेनी, अभी आज ही ज्वॉइन किया है।' बस! उसी दिन से वह बातूनी लड़का हमारे फ्रेंड सर्कल का मेंबर बन गया था। मेरी सहेली चारू अपने फियांसी के साथ अकसर कभी चौपाटी, कभी मरीन-ड्राइव तो कभी गेटवे ऑफ इंडिया जैसी जगहों पर बिंदास घूमती थी, बिना रोक-टोक। धीरेन ने उसके फियांसी से भी अच्छी दोस्ती गाँठ ली थी। वह भी कभी-कभी समय मिलने पर सैर के लिए निकल जाता। उसे भेल जैसे जंक फूड खाने में बड़ा मजा आता था और टी.वी. स्टेशन के सामने पाव-भाजी के स्टॉल उसे बहुत पसंद थे। कभी-कभी मुझसे कहता, 'चलो दी, आप जिंदगी में क्या कभी मजे नहीं करना चाहतीं, जुहू पर संडे को घूमने चलेंगे। जीजू को भी साथ ले आना। पिकनिक मनाएँगे।'

'नहीं बाबा! संडे को तो बड़े काम निपटाने होते हैं। नो वे! और क्यों, क्या संडे के दिन भी तुम घर पर नहीं रहना चाहते?' मैंने जैसे उसके कान पकड़े।

'ओ दी! घर में? हमारे यहाँ तो सबका रोमिंग डे संडे होता है। और घर का खाना? बचपन से वही तो खाता आया हूँ। अब नहीं। भाई बहरीन में है, बहन अपनी दुनिया में मस्त! इसलिए मैं भी अपनी जिंदगी अपनी तरह से बिताना चाहता हूँ। एक चॉल के मौहल से दूर।'

उसकी बातों से पता चला कि वह एक लोअर-मिडल क्लास घर में पला-बढ़ा है। पढ़ने-लिखने में घर में वही एक तीव्र बुद्धि लड़का था। पढ़ाई में कम समय लगाकर भी वह बड़े आराम से सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ता चला गया था। दोनों भाई-बहन साधारण सी नौकरी कर रहे थे। यह अलग बात थी कि भाई बहरीन में था।

एक दिन वह हमारे ही ऑफिस में मैनेजर के पद पर नियुक्त कर लिया गया था। वर्ष पर वर्ष बीतते चले गए। काफी सीनियर हो गया था। हम जन्मदिन की पार्टी जरूर साथ में करते थे। उसकी पार्टी बड़े होटलों में ही होती थी। मेरे घर का हाइ-फाइ माहौल उसे बेहद भाता था। कभी-कभी लंच साथ हो जाता था। मेरे बनाए काबुली चने और दही-बड़े उसे बहुत पसंद थे। एक बार तो मैंने विशेष रूप से उसके कहने पर एक बड़े से स्टील के डब्बे में चने बनाकर उसे इस शर्त पर दिए थे कि संडे के दिन परिवार के लोगों के साथ ही लंच करेगा। उसने ऐसा किया भी, पर वह डब्बा वापस नहीं आया। वह उसे हमेश लाना भूल जाता और फिर बाद में उसको अमेरिका जाने का चांस मिला। वह चला गया। कुछ समय तक कॉण्टैक्ट रहा और न जाने कैसे टूट भी गया। उसकी याद आती थी, पर समय के साथ दोस्ती की भी नींव कमजोर पड़ जाती है। सब अपनी इस बेहद भागती-दौड़ती कठिन जिंदगी की नाव खेने में व्यस्त हो जाते हैं।

मुझे याद है, दो साल पहले जब मुझे अचानक अपने किसी मित्र के साथ मरीन ड्राइव पर मिला था तो काफी कमजोर लग रहा था। उसने मुझसे कहा था, 'दी! आपकी बहुत याद आती थी, पर तबीयत ठीक नहीं थी और इस स्थिति में आपसे मिल नहीं पाया।'

'हाँ, पर अमेरिका से कब आए, कहाँ खो गए थे?' मेरे मुँह से अचानक ही निकल गया।

वह हँस पड़ा था। टालते हुए बोला, 'अब बस, धमक ही पड़ूँगा आपके यहाँ एक दिन। बताइए कब आऊँ?'

अमित, मेरे पति मेरे साथ थे, बोले, 'आ जाना यार, इस रविवार को, इनफैक्ट मम्मी को भी ले आना! अमेरिका के कुछ किस्से भी सुनेंगे।'

'सच! थैंक्स सर! मैं जरूर आऊँगा और दी, खाना रेडी रखना।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहीं खड़े-खड़े सब तय हो गया। कुछ और बातें हुईं और हम अपनी-अपनी राह चल पड़े।

रविवार भी आ गया। मैंने उस दिन उसकी पसंद का ही खाना बनाया। साढ़े बारह बजे दरवाजे की घंटी बजी। इस बार जब पहली बार वह अपनी बहन के साथ आया तो एक सुखद सा अहसास हुआ था। मेरे घर के सदस्यों से वह इतना कैसे जुड़ गया था? दोनों आकर बैठे तो मैंने नोट किया कि उसने एक स्टील का बड़ा सा और नया डिब्बा सोफे के बराबर में रखा।

मैंने पूछा, 'यह क्या?'

'सॉरी दी! इतने दिन बाद आपका डिब्बा वापस कर रहा हूँ। मेरे सिर पर चढ़ा पड़ा था यह।' उसने बताया।

'लेकिन मैंने तो तुमसे कहा था कि इतनी छोटी सी चीज है, उसे भूल जाओ। पर मुझे तो यह नया और उससे बहुत बड़ा लग रहा है। मैं इसे वापस नहीं लूँगी। झगड़ा हो जाएगा इस बात पर।'

'अरे दी, आपको पता है, हमारे यहाँ रहकर यह तंदुरुस्त हो गया है। इसीलिए इस पर चमक भी आ गई है।' इस कमजोरी की हालत में भी वह मजाक करना नहीं भूला था।

मैंने उससे आग्रह किया था कि वह आराम करे तो जल्द ही भला-चंगा हो जाएगा। वह चुप था। बहुत कम खा पाया था। हाथ धोने के लिए खड़ा हुआ तो हिल गया था। मन को उस समय भी बड़ा कष्ट हुआ था।

'सॉरी दी! इतने दिन बाद आपका डिब्बा वापस कर रहा हूँ। मेरे सिर पर चढ़ा पड़ा था यह।' उसने बताया। 'लेकिन मैंने तो तुमसे कहा था कि इतनी छोटी सी चीज है, उसे भूल जाओ। पर मुझे तो यह नया और उससे बहुत बड़ा लग रहा है। मैं इसे वापस नहीं लूँगी। झगड़ा हो जाएगा इस बात पर।' 'अरे दी, आपको पता है, हमारे यहाँ रहकर यह तंदुरुस्त हो गया है। इसीलिए इस पर चमक भी आ गई है।' इस कमजोरी की हालत में भी वह मजाक करना नहीं भूला था।

☐

मैंने उसके उस दोस्त से कहा, "वह तो तुम्हारा खास दोस्त था न।"

"हाँ, इसलिए तो! मैं उससे हमेशा कहता था कि उसे जहाँ घूमने चलना हो चले। मैं उसे कार में ले जाता था, खूब घुमाया उसे…पूना तक भी ले गया था, बाद में अपनी गाड़ी अच्छी तरह से धुलवा जरूर लेता था।" वह बता रहा था।

अफसोस के साथ मैंने कहा, "कितनी मेहनत से उसने इतनी डिग्रियाँ हासिल की थीं और अब एकदम!…विश्वास नहीं होता।"

"बताओ! क्या फायदा इतना सब पढ़ने-लिखने से? देखो, मैं भले ही बारहवीं पास न कर पाया था, पर आज मेरे पास गाड़ी है, तीन बैडरूम-हॉल का बड़ा घर है, मेरा परिवार है और सभी सुख-सुविधाएँ हैं। कल ही मेरा बेटा पाँच हजार के जूते खरीद लाया, बताओ क्या नहीं है मेरे पास?" उसने गर्व के साथ बताया।

मुझसे रहा नहीं गया। मैंने कहा, "इन सब बातों का उसकी मृत्यु से क्या वास्ता?"

"वास्ता क्यों नहीं? इतना पढ़ा-लिखा आदमी? देखो उसे यह भी पता न चल सका कि जिनके साथ उसने विदेश में दोस्ती गाँठी थी। वे कैसे थे। …मैं तो बाबा, अपनी गृहस्थी में व्यस्त हूँ, कितना अच्छा बिजनेस चल रहा है मेरा।"

मैं उठकर खड़ी हो गई। आँसू थम नहीं रहे थे। बिना उससे कुछ कहे बाथरूम में फ्रैश होने के लिए चली गई। वह मेरी टेबल के पास बैठा रहा। मैं वापस अपनी कुरसी पर आकर बैठ गई। वह बेचैन नजरों से मुझे देखता रहा। मैंने भी प्रश्न भरी निगाहों से उसे घूरकर जो देखा तो वह परेशान सा हो उठा। मैंने कहा, "अब आपका काम तो हो गया। काफी देर हो गई है। मुझे भी घर जाना है।"

फिर भी वह ढीठ आदमी, जिसे धीरेन बचपन का अपना लँगोटिया यार कहता था, अपनी जगह से हिलने का नाम नहीं ले रहा था। मरणोपरांत उसके बारे में सबकुछ बताकर उसे खास मजा आ रहा था। मैंने कड़ी आवाज में उससे कहा, "फिलहाल मैं बहुत बिजी हूँ। किसी काम से जल्दी घर जाना है।"

"ठीक है, मैं भी चल ही रहा हूँ, बस चारूजी का भी पता चल जाता तो मुझे खुशी होती। वह आजकल कहाँ हैं? उनको भी सब बताना चाहता हूँ। उनका फोन नंबर है तो बता देंगी?"

"नहीं, मुझे पता नहीं चारू आजकल कहाँ शिफ्ट हो गई है, उसने भी यह ऑफिस छोड़ दिया था। उसके हजबैंड का मुंबई ट्रांसफर हो गया था। बहुत समय से मिली नहीं पता नहीं, कहाँ रहती है।" मैंने उसे नहीं बताया कि वह कहाँ रहती है।

उसने धृष्टता के साथ पूछा, "अरे, इतनी फास्ट फ्रैंड का भी पता नहीं? अच्छा, उनका फोन नंबर?"

"वह भी नहीं है मेरे पास।" मैंने विमुखता के साथ उत्तर दिया।

"कमाल है, ऐसी दोस्त भी क्या दोस्त! धीरेन ने अपने छोटे से जीवन काल में अनेक दोस्त बनाए, पर दोस्त कैसा हो, इसकी पहचान उसे नहीं थी।" उसने दूसरा वार किया

मैं बुरी तरह से चिढ़ चुकी थी, "हाँ वही तो। नजर आ रहा है मुझे! आप प्लीज जा सकते हैं।" मैं गुस्से और दुख से काँप रही थी। मन अवसाद से भरा था। घड़ी में समय देखा तो साढ़े सात बज चुके थे। मैंने अपना बैग उठाकर कंधे पर डाला। धुँधली आँखें उठाकर सामने देखा तो पाया, धीरेन का वह पक्का दोस्त न जाने कहाँ गायब हो चुका था।

१०, नरूला बिल्डिंग,
२१वाँ रास्ता
चैंबूर,
मुंबई-४०००७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता

गीत और दोहे

● अशोक अंजुम

मेरे प्यारे वतन

मेरे प्यारे वतन, मेरे प्यारे वतन
कर न गीले नयन, कर न गीले नयन!

मानता हूँ कि चारों तरफ है धुआँ
चल रही नफरतों की घनी आँधियाँ
इनसाँ-इनसाँ में बढ़ने लगीं दूरियाँ
प्रेम-सद्भाव की डूबती कश्तियाँ
घिर रहा है अँधेरा तो मत हो दुःखी
आस-विश्वास के फिर खिलेंगे सुमन!
मेरे प्यारे वतन…

स्वार्थ के हर तरफ जाल ही जाल हैं
लय से भटके हुए सारे सुर-ताल हैं
रंग इनसानियत के भी बदहाल हैं,
मूल्य सब आस्थाओं के कंगाल हैं
जल्द ही ये मिटेंगे अँधेरे सभी
ये मिटेगा निराशा का वातावरण!
मेरे प्यारे वतन…

धुंध छाने न देंगे ये सौगंध है
लड़खड़ाने न देंगे ये सौगंध है
शान जाने न देंगे ये सौगंध है
आँच आने न देंगे ये सौगंध है
दीप बुझने न देंगे तेरी आन के
आँधियाँ चाहे कर लें करोड़ों जतन!
मेरे प्यारे वतन, मेरे प्यारे वतन!
□

जन्म : १५ दिसंबर, १९६६ को।
शिक्षा : बी.एस-सी., एम.ए. (अर्थशास्त्र), बी.एड.।
कृतित्व : चार हास्य-व्यंग्य संग्रह, पाँच गजल संग्रह, 'एक नदी प्यासी' गीत संग्रह; हास्य-व्यंग्य एवं गजल, कविता, दोहा, लघुकथा, गीत आदि विधाओं पर सत्ताईस पुस्तकें संपादित।
सम्मान-पुरस्कार : छोटे-बड़े दर्जनों पुरस्कारों से सम्मानित।
'प्रयास' पत्रिका के संपादक, विभिन्न मंचों, संगठनों, समितियों के अध्यक्ष, सचिव आदि रहे।

उन शहीदों को नमन

जान देकर देश पर जो काम अपना कर गए
वे अमर हैं युग-युगों तक मत कहो कि मर गए
दुश्मनों के दल के दल जिनके आगे डर गए
पीठ दिखलाई नहीं यूँ कट भले ही सर गए
याद रखेगा सदा संसार जिनका बाँकपन
उन शहीदों को नमन
सौ-सौ नमन! सौ-सौ नमन!

जो वतन की धूल को माथे लगाकर चल दिए
सरफरोशी के नए नगमे सुनाकर चल दिए
अपने आगे पर्वतों के सर उठाकर चल दिए
जिनकी हुंकारों से काँपी ये धरा, सारा गगन
उन शहीदों को नमन
सौ-सौ नमन! सौ-सौ नमन!

वे न होते तो हमारा नाम भी होता कहाँ?
वे न होते तो हमें कब मानता सारा जहाँ?
वे न होते तो भँवर में डूब जातीं कश्तियाँ,
वे न होते तो सुलझतीं किस तरह से गुत्थियाँ?
वे न होते तो अँधेरों का न हो पाता पतन
उन शहीदों को नमन
सौ-सौ नमन! सौ-सौ नमन!
□

पानी के दोहे

हुई प्यास से अधमरी, काला पड़ा शरीर।
दिल्ली के दरबार में, नदिया माँगें नीर॥

लिये होंठ सूखे, समय पूछे यही सवाल।
किधर गया, कल था यहाँ पानीवाला ताल॥

सार्वजनिक नल बंद हैं, प्याऊ हैं लाचार।
लगे हुए हैं हर तरफ, पानी के बाजार॥

किस विकास के खुल गए, यारो आज किवाड़।
डरे-डरे हतप्रभ खड़े, जंगल, नदी, पहाड़॥

हरी-भरी रचना सभी, ठहर, समझ पढ़, देख।
कितने पानीदार हैं, पानी के आलेख॥

नदिया चली पहाड़ से, मन में ले उल्लास।
जब आई मैदान में, पग-पग पसरी प्यास॥

६९५, ट्रक गेट, कासिमपुर पावर हाउस
अलीगढ़-२०२१२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नौजी लोक-संस्कृति और लोकगीत

● कृष्ण कांत दुवे

कन्नौजी लोक-संस्कृति और लोकगीतों का दायरा कन्नौजी बोली की तरह अत्यंत व्यापक है। कन्नौज, फर्रुखाबाद, बरेली, बदायूँ, शाहजहाँपुर, हरदोई और पीलीभीत जिलों के अलावा कानपुर देहात तथा इटावा जिले में भी कन्नौजी का वर्चस्व है। पूर्वी सीमा पर 'अवधी' और पश्चिमी सीमा पर 'ब्रज' का संपर्क होने के कारण कन्नौजी की शब्दावली इन दोनों बोलियों से प्रभावित हो जाती है। एक बात और है कि यहाँ लोक-संस्कृति एवं लोकगीतों में अवधी व ब्रज की झलक प्रतिबिंबित होती है। इसका कारण है—श्रीराम व श्रीकृष्ण से जुड़े प्रसंगों का अनुसरण करना। 'कन्नौज' शब्द 'कान्यकुब्ज' का परिष्कृत रूप है। प्राचीन काल में इसे कुशस्थली, गधिपुरी, कान्यकुब्जपुर, कुसुमपुर, शाहाबाद, जाफराबाद, कनऊज आदि नामों से पुकारा जाता था। 'आल्हा' में इसको 'कनऊज' से ही संबोधित किया गया। यहाँ के सामान्य जन के द्वारा आज भी इसे कनऊज कहा जाता है।

जन्म : १ मार्च, १९७६।

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), वाचस्पति, पी-एच.डी.।

सम्मान : 'डॉ. रामकुमार वर्मा जनमशताब्दी सम्मान', 'पं. सुमित्रा नंदन पंत स्मृति में 'युगवाणी सम्मान', 'साहित्यामृत सम्मान', 'सम्मान उपाधि', 'साहित्य शिरोमणि उपाधि'।

संप्रति : प्रवक्ता, हिंदी विभाग, पं. सुंदरलाल मेमोरियल परास्नातक महाविद्यालय, कन्नौज।

सातवीं शताब्दी के जननायक कान्यकुब्जाधिपति सकल उत्तरापथ-नाथम्, धर्मपरायण दानवीर सम्राट् हर्षवर्धन व महाराजा जयचंद की राजधानी होने के कारण भारतीय इतिहास में कन्नौज का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कन्नौज की गौरव-गाथा प्राक्-ऐतिहासिक काल तक जाती है। रामायण और महाभारत में इसका उल्लेख 'कान्यकुब्ज' और 'महोदय' के नाम से कई बार आया है। एक जनश्रुति और है कि राजा ब्रह्मदत्त की सौ कन्याओं में से निन्यानबे कन्याएँ कुबड़ी होने के कारण भी इसका नाम कान्यकुब्ज पड़ा। सातवीं सदी में चीनीयात्री ह्वेनसांग ने कन्नौज के विशालतम परिदृश्य और मनोरम सौंदर्य पर लिखा—"नगर लगभग पाँच मील लंबा और डेढ़ मील चौड़ा है। नगर के सौंदर्य और संपन्नता का अनुमान उसके विशाल प्रासादों, रमणीय उद्यानों, स्वच्छ जल के तालाबों, सुदूर देशों से प्राप्त वस्तुओं से सजे संग्रहालयों से किया जा सकता है।" किंतु आज एक छोटे से कस्बे और मिट्टी के ढेर में तब्दील है। इसी ढेर में सम्राट् हर्ष और महाप्रतापी जयचंद का किला भी दफन है। जब भी यहाँ देशी-विदेशी सैलानी आते हैं तब हमें बड़े गर्व के साथ, पर अफसोस भरे शब्दों में कहते हैं, 'जी हाँ, यही है उत्तर-मध्यकाल में साम्राज्य की धुरी रहे इस शहर के सत्ता प्रतीक और संस्कृति का शिखर, जो अब सिर्फ मिट्टी का टीला है, वह भी कुछ दिन बाद अतिक्रमण का शिकार हो मकानों में तब्दील हो जाएगा।'

भला हो पुरातत्त्व संग्रहालय का, जिसने कुछ अवशेष, जो उस समय की सत्ता और कला संस्कृति की पहचान देती मूर्तियाँ सुरक्षित रखी हैं। जिनको देखकर वर्तमान और भावी पीढ़ी गौरव महसूस करेगी। एक सिक्के की छाप और कुछ मूर्तियों को छोड़कर कुछ भी ऐसा नहीं बचा, जो उत्तर भारत के सबसे प्रभावशाली व शक्तिसंपन्न सम्राट् की शक्ति का शिलालेख बन सके। फिर भी ऐसा बहुत कुछ है, जिस पर गर्व किया जा सकता है। नौवीं सदी की सप्तमातृका, जो १९८३ में वॉशिंगटन नेशनल म्यूजियम की प्रदर्शनी में भेजी गई और इसी समय की यक्षमूर्ति, जिसे १९७९ में न्यूयॉर्क में एक प्रदर्शनी में प्रदर्शित किया गया। कुषाण काल की अर्द्धनारीश्वर की प्रतिमा तो अपने आप में अद्वितीय है।

यह वही कन्नौज है, जहाँ का सम्राट् हर्षवर्धन हर साल माघ महीने में संगम (इलाहाबाद) पर अपना वैभव दीन-दुखियों व कल्पवासियों को दान के रूप में भेंट कर देता था। सम्राट् हर्ष प्रतिवर्ष कन्नौज से प्रयाग तक दानोत्सव यात्रा ले जाया करता था। उसके साथ ही उसकी यह परंपरा भी चली गई, किंतु १० फरवरी, २००२ को पुनः प्रसिद्ध कवि सुशील राकेश के नेतृत्व में दानोत्सव यात्रा प्रारंभ हुई। सम्राट् हर्ष की यादें बनी रहें और कन्नौज का वर्चस्व संगम पर भी दिखाई पड़े, इस उद्देश्य से 'दान महोत्सव' स्मृति समारोह समिति प्रत्येक वर्ष वसंत-पंचमी के दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नौज से प्रयाग तक सैकड़ों लोगों के साथ अन्न, वस्त्र और पात्र लेकर अनंत श्री विभूषित ज्योतिषपीठाधीश्वर जगद्‌गुरु शंकराचार्य श्री वासुदेवा नंदजी महाराज के आश्रम अलोपीबाग में पहुँच, संगम पर प्रतिष्ठित विशालकाय मूर्ति तक हर्ष ज्योति यात्रा निकाली जाती है और वहीं विभिन्न वस्तुओं का दान भी किया जाता है। आज आम आदमी में यदि कन्नौज सम्राट् के प्रति कोई सद्‌भावना या यादें बची हैं तो सिर्फ दानोत्सव यात्रा के रूप में।

पूरी भारतीय संस्कारों की परंपरा का निर्वाहन कन्नौजी लोकगीतों में समावेशित है। जन्म से लेकर मृत्यु तक भारतीय मानव जीवन में जितने भी संस्कार होते हैं, उन सबसे संबंधित लोकगीत यहाँ मिलते हैं। यह बात अलग है कि पश्चिमी संस्कृति से भरे स्वरूप के आगे हम इन्हें विस्मृत करने लगे, फिर भी गाँव की गलियों, झोंपड़ियों, मंदिरों और शिवालयों में अकसर सुनने को मिल जाते हैं।

ऋग्वेद में 'लोक' शब्द का प्रयोग 'देहि लोकम' के अर्थ में हुआ। वैदिककाल में लोक का सामान्य अर्थ स्थान से रहा है। इस समय में स्वर्गलोक, नरकलोक व पाताललोक का अधिक उल्लेख मिलता है। इन शब्दों के अलावा वेदों में 'लोक' का संदर्भ आम आदमी से भी जोड़ा गया। संस्कृत साहित्य या वैदिककाल के साहित्य में 'लोक' शब्द जर्मन में 'वोक' और 'फोक' शब्द अंग्रेजी में 'फोल्क' बन गया। अंग्रेजी के फोल्क लोर और फोक म्यूजिक लोक संगीत जैसे लोकगीत के समानार्थक शब्द बने। शब्द की व्याख्या करते हुए डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा—"लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम ही नहीं है बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई समस्त जनता है, जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं।" डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने लोक को कल्याणमय बताते हुए लिखा—"लोक हमारे जीवन का समुद्र है। उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। वह राष्ट्र का अमर स्वरूप है। कृत्स्न ज्ञान और संपूर्ण अध्ययन में सब शास्त्रों का पर्यवसान है। अर्वाचीन में मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति है। लोक की धात्री सर्वभूतरता पृथ्वी और लोक का व्यक्त रूप मानव, यही हमारे नए जीवन का अध्यात्म शास्त्र है। इसका कल्याण हमारी मुक्ति का द्वार और निर्माण का नवीन रूप है। लोक, पृथ्वी और लोक, पृथ्वी और मानव इन त्रिलोकों में जीवन का कल्याणात्मक रूप है।"

लोक संस्कृति और ग्रामगीतों को विशाल सभ्यता का उद्‌घाटन करनेवाली शक्ति के रूप में डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने मानते हुए लिखा—"ग्राम गीत का समस्त महत्त्व उनके काव्य सौंदर्य तक ही सीमित नहीं है, इनका एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य है। एक विशाल सभ्यता का उद्‌घाटन, जो अब तक या तो विस्मृति के गर्भ में डूबी हुई है या गलत समझ ली गई है।"

कन्नौजी लोक संस्कृति का गीतात्मक रूप प्रमुख रूप से संस्कार गीत, ऋतुगीत, जातिगीत, क्रीड़ागीत, श्रमगीत और देशभक्ति गीत के भव्य मनोरम रूपों में देखा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में जन्म संस्कार को सभी संस्कारों में से प्रमुख माना जाता है। प्रसव से पूर्व की घटनाएँ भी सोहर गीत में गाई जाती हैं, जिनमें शृंगार का अद्‌भुत चित्रण मिलता है—

'संवरा सोवे अटरिया, मैं कौन विधि जाऊँ रे!
सासु ननद, मोरी नान्हें कई वैरनि
आँगन पलंग बिछावै, मैं कौन विधि जाऊँ रे!
सँवरा सोवै अटरिया...
जेठ-जिठानी मोर नान्हें कई वैरनि
सोवैं दिया जराई। मैं कौन विधि जाऊँ रे!

जन्म संस्कार के बाद, दूसरा सबसे बड़ा संस्कार अन्नप्राशन आता है। जिसे 'पसनी' भी कहा जाता है। इसमें पाँच माह बाद बच्चे को अन्न चखाया जाता है। बच्चे के बाबा या दादी उसे रबे का हलवा खिलाते हैं। इस उत्सव में भी 'सोहर' और 'सरिया' गाने का प्रचलन है—

'आजु मोरे लीपन, पोतन और अन्नप्राशन रे!
सासु अरगन नेवते परगन, नेहर सासुर और अजियाउर
और ननियाउर रे।'

तीन संस्कार ऐसे होते हैं, जिनमें एक ही जैसे गीत गाए जाते हैं। पहला—जन्म, दूसरा—अन्नप्राशन और तीसरा—मुंडन संस्कार। बच्चे की आयु के तीसरे वर्ष में मुंडन संस्कार संपन्न होता है।

कन्नौज कान्यकुब्ज ब्राह्मणों का सबसे बड़ा क्षेत्र है। यहाँ पांडित्य प्रदर्शन सबसे अधिक देखने को मिलता है।

ब्राह्मणों का गण और उनकी विशुद्धता इस बात का प्रमाण देती है कि यहाँ यज्ञपवीत (जनेऊ) संस्कार का विशेष महत्त्व है। ब्रह्मचारी को पलाश की लकड़ी का दंड, मूँज की मेखला, बल्कल का कौपीन और मृगछाला धारण कराई जाती है। कच्चे धागे का जनेऊ भी धारण कराया जाता है। उसके ब्रह्मचर्य रूप में विधापार्जन जाने के समय माताएँ जो गीत गाती हैं, उसमें अनेक चेतावनियाँ दी जाती हैं—

'करुऊ माया मेरी सतुआ और दस लड़ुआ
काशी-बनारस जाऊँ वेद पढ़ आऊँ
काशी लऊ जयौ महादुख पइअऊ
धरही अंजुल (बाबा) विद्या माँ वेद पढ़ लीजऊ।'

विवाह एक पवित्र और धार्मिक सामाजिक संस्कार होने के साथ-साथ गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने का सबसे श्रेष्ठ द्वार माना जाता है। विवाह के लिए मुहूर्त निकाला जाता है और फिर मंडप निर्माण, कलश स्थापना, हवन पूजन पूरे वैदिक परंपरा से संपन्न होता है। बारात की निकासी से लेकर वधू की अगवानी तक अनेक लोकाचार निभाए जाते हैं। उसी लोकाचार में लगुन या तिलक आता है। इस अवसर पर कन्नौजी लोकगीत में एक खास 'लगुन गीत' गाया जाता है—

'लगुन आई हरे-हरे, लगुन आई मेरे अँगना
रघुनंदन फूले न समाइ।
बाबा सज गए, दादी सज गई, सज गओ सब परिवार
मेरे रघुनंदन ऐसे सज गए जैसे श्रीभगवान
लगुन आई हरे-हरे, लगुन आई मेरे अँगना।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाह मंडप में वर और वधू अग्नि को साक्षी मानकर एक-दूसरे के साथ सात फेरे लेते हैं और उम्र भर इस बंधन को निभाने का संकल्प लेते हैं। इस पवित्र रिश्ते के जुड़ने पर जो गीत गाया जाता है, वह देखते ही बनता है—

'पहली भावर होइ कि धीय बापइ की
दूसरी भावर होई कि धीय बापइ की
तीसरी भावर होई कि धीय बापइ की
चौथी भावर होई कि धीय बापइ की⋯।'

इन प्रमुख संस्कारों से संबंधित लोकगीतों के अलावा यहाँ कुछ ऋतुगीतों को भी गाने का प्रचलन है। फाग, चैता, सावन, मल्हार और बारहमासा गीत अब आधुनिकता के आवेग में विलुप्त से हो गए।

यहाँ की होली पर अवधी और ब्रज दोनों का प्रभाव देखने को मिलता है। बसंत-पंचमी के दिन से ही होली पर्व की शुरुआत हो जाती है। वैसे भी प्रेम, स्नेह और भाईचारे को जीवित रखने में होली के रंग का बड़ा महत्त्व है। न जाति, न धर्म, न अमीरी-गरीबी कुछ भी नहीं चलता। चलता तो सिर्फ मेल-मिलाप है। कन्नौजी लोकगीतों में जो होली गीत गाया जाता है, यथा—

'होली खेल रहे नंदलाल
मथुरा की कुंज गलिन मा
गोकुल की गलिन-गलिन मा
होली खेल रहे नंदलाल।'

वैशाख और ज्येष्ठ माह की तपिश का अंत आसमान में काले-काले बादलों का उमड़ना और उन्हीं के साथ नन्हीं-नन्हीं बूँदों का बरसना, वर्षा ऋतु के आने का संकेत मिलता है। वर्षा ऋतु में सावन का महीना सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। सावन में ही रक्षाबंधन पर्व भी आता है। कच्चे धागे की राखी को बाँध एक बहन अपने भाई से अपनी रक्षा का संकल्प माँगती है। इस महीने में झूला झूलने की लालसा सबको होती है। एक किशोरी झूले पर पैंग बढ़ाने की जिद करती हुई माँ से कहती है—

'नन्नी-नन्नी बुँदियन में मेह (बादल) बरषै,
सब सखी झुलुआ को जाए
कहो तो माया मेरी हमंहु तो जाए।'

क्रीड़ागीतों का कन्नौजी लोक संस्कृति में महत्त्वपूर्ण स्थान है। गुड़िया, टेसू, झिंझिया और फुलेरा खेल यहाँ के लोगों के लिए विशेष आकर्षण का केंद्र हैं। गाँवों में आज भी ये खेल खेले जाते हैं। गुड्डा-गुड़िया का खेल लड़कियाँ बड़े स्नेह व भाव से खेला करती हैं। इनका ब्याह भी रचाती और इस अवसर पर एक-दूसरे को आमंत्रण देती हुई कहतीं—

'आबऊ सखी मिलि खेलऊ गुड्डा-गुड़िया को खेल
गुड्डा संग रचाबई गुड़िया को ब्याह।'

कन्नौजी लोक संस्कृति में टेसू खेल भी कम आकर्षक नहीं है। इससे संदर्भित जो गीत गाया जाता है, वह भी व्यंग्य शैली में ही देखा जा सकता है—

'टेसू अगर करै, टेसू बगर करै
टेसू गइया लच पैदरिया (घुँगरू) टेसू लैकै टरै।'

संस्कार, ऋतु और खेलगीतों के अतिरिक्त जाति गीतों का भी बोलबाला रहा, पर संकीर्ण जातिगत मानसिकता ने इन गीतों का गला घोंट दिया। जाति गीतों में—धोबी गीत, चमार गीत, तेली गीत, अहीर व कहारा गीत प्रमुख रूप से गाए जाते थे।

लोक गीतों की प्रासंगिकता पर ही पं. रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा—"ग्रामगीत प्रकृति के उद्‌गार हैं, इनमें अलंकार नहीं, केवल रस हैं, छंद नहीं, केवल लय है, लालित्य नहीं, केवल माधुर्य है। ग्रामीण मनुष्य के स्त्री-पुरुष के मध्य में हृदय नामक आसन पर बैठकर प्रकृति गान करती है, प्रकृति के वे ही गान ग्रामगीत हैं।"

कन्नौजी परिक्षेत्र गंगा और जमुना कहीं-कहीं काली नदी व ईशन नदी के मध्य में बसा है। इसलिए यहाँ गंगा की पूजा-अर्चना का विशेष महत्त्व है। इसके अलावा फूलमती देवी, काली देवी, सिंहवाहिनी, क्षेमकली, अन्नपूर्णा देवी, शीतला देवी, गोवर्धनी देवी, बाबा जगेश्वरम् आदि मंदिरों का विशेष महत्त्व है। प्रदेश के अन्य क्षेत्रों से लोग आते हैं। मन्नतें पूरी होने पर विविध उत्सव आदि का आयोजन करते हैं। इस अवसर पर देवी गीत व भगवान् शंकर से जुड़े गीत गाए जाते हैं—

'सिंह पर सवार हो गई महारानी
सिंह पर सवार मइया बांगों गई महारानी।'

पर्व विशेष पर गंगास्नान करने के लिए हजारों श्रद्धालु गंगा के विभिन्न घाटों पर जाते हैं। महिलाएँ सामूहिक रूप से गंगा की पूजा आरती करतीं, जीवन के दुख और पापों के नष्ट करने की प्रार्थना के गीत गाती हैं—

'मइया मेरी मन्नत पूरी करिअऊ
तऊ हम तुमकऊ पहिनाऊनी पहनइवो।'

इन लोकगीतों का न तो कोई संग्रह है, न ही कोई प्रकाशन। यहाँ की चलती-फिरती जनता ही इनकी सजीवता की प्रतीक है। कुछ एक लोग इसके गौरवमयी संस्कृति और ऐतिहासिक अस्तित्व को बचाने का प्रयास अवश्य कर रहे हैं। इसी संदर्भ में छायावादी कवयित्री महादेवीजी की स्मृति में मेहदीघाट को 'महादेवी घाट' के नाम से स्थापित किया गया। 'पंत शताब्दी समारोह', पं. इलाचंद्र जोशी शताब्दी समारोह और एकांकी सम्राट् डॉ. रामकुमार वर्मा शताब्दी समारोह के आयोजन इसी कड़ी में देखे जा सकते हैं। सा अ

ग्राम-सराय, पो-सौंसरापुर
जिला-कन्नौज-२०९७३३
(उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता

दो कविताएँ

● नवनीत गांधी

गठरी

जीते हैं इस पार
मगर मंजिल है उस पार
गठरी में निश्चित लम्हे भर
भेज दिया इस संसार।
जीतें है इस पार, मगर...

मंद-मंद मुस्काया वह चतुर ऊपर बैठ
"देखूँ भैया, क्या करते हो इस बार?
समझ पाओगे क्या मेरा खेल?
या यूँ ही लौट आओगे, फिर सब कुछ हार?"
जीतें है इस पार, मगर...

इस पार पहुँचकर आँखे खुलती
और खुल जाती यह गठरी
पल-पल लम्हे खर्च होते
लेकिन गठरी न होती खाली
उठाकर भर लेते, हम राह में रंजिशें हजार।
जीतें हैं इस पार, मगर...

भरते कभी अपनापन; कभी दोस्ती; कभी प्यार
उतना ही लौटने में, चूक जाते लेकिन
गठरी और भारी होती रहती
इकट्ठा यूँ ही करते हम तोहफे अपार।
जीते हैं इस पार, मगर...
एक पूरा जीवन जीकर
हिसाब बराबर कर जाना है उस पार
ज्यादा जो ले गए या केवल लुटा ही आए तो
फिर आना होगा इस पार,
समझने जीवन का सार।
जीते हैं इस पार, मगर...
कैसे होगी तेरी गठरी खाली
जो तू जिया मन को मार
हसरतों को जो तू दे-दे उड़ान
और समनों को आकार
तो न रह जाएगा तेरा खुद पर भी कोई उधार।
जीतें हैं इस पार, मगर...

कई जन्म ले लिए; अब तो हम हो गए बेजार
इस बार किया है इंतजाम पक्का
जितना जितनों से लिया, उतना ही है दिया
न बने यूँ ही दिलदार, न ही रहे कर्जदार।
जीतें हैं इस पार, मगर...

इस बार तो हम हैं तैयार
ऐसे बंधन बांधे भक्ति के
कि छूट गए आसक्ति के।
इस बार समह जी होंगी पलकें बंध
और मुट्ठी खुल जाएगी
जब पहुँचेंगे उसके द्वार।

जीते हैं इस पार
मगर मंजिल है बस पार।

क्या आपको तना है?

लोग-बिरादर भिन्न-भिन्न
आप कौन टाइप हैं?
वह गिने-चुने कुछ जो रहते मस्त हैं
या फिर एक बीच बहुमत जो तनाव-ग्रस्त है?

जो मिलता, कहता: 'बहुत टेंशन है!'
चार दिशाओं में
भागते पीड़ित जन
ढूँढने निकले नुस्खे
कैसे मुक्त हो तनाव से मन?

पढ़े-लिखों का पहला पड़ाव
होता मनोवैज्ञानिक के द्वार
अनेकों सवालों की वहाँ होती बौछार
फिर टेस्ट कई और
छ: गोलियाँ दिन में छ: बार!
मन सुन्न हो जाता उन्हें खाकर
नींद आती गहरी
सिर्फ एहसास बोझिल होते
बरकरार रहती दिल की पीर
हाथ आती एक और गुलामी; एक और जंजीर।

कुछ हैं भागते श्री स्वामीजी के द्वार
सर पर रखते वह अपना हाथ
होता उन्हें तुरंत ही सत्य ज्ञात।
फिर कहीं से निकलती एक अंगूठी
कभी ताबीज
और उस पर, मंत्र कई।
जरूरी और एक बात बताते
कहते फोटो को मेरी रखो सिरहाने
चढाओ दिल खोल के नोटों के हार
और खुलेंगे फिर तनाव से
मुक्ति के द्वार।

कहीं आप वह टाइप तो नहीं
जो तनाव में खूब खाते
और खूब पीते; मदहोश रहते
या फिर वह जो हैं बोलते ही चले जाते
या जो एक असीम चुप्पी में खोए रहते?
निजी हैं यह अपने तरीके
निजी अपने हथियार।

कुछ में होती हिम्मत गजब की
वीर पुरुष ऐसे, करते कोशिश
कि बस! 'अब तो मरेंगे'
जानते हुए कि बच गए तो
शेष दिन जेल में कटेंगे।
लगता उन्हें कि नहीं पर्याय कोई और
सांसों के साथ लेकिन तनाव कहाँ रुकता है
लौट आता वह जो अपने हिस्से का होता है।
पहिया घूमता है
फिर एक बचपन आता, जो मस्त नहीं
तनाव ग्रस्त होता है।

आप कौन टाइप हैं?
भागते आप किस दिशा?
एक पड़ाव; एक द्वार अभी और है
खुलता जो भीतर की ओर है।
सारे प्रश्न मिट जाते जहाँ
जरा सा टटोलो तो भीतर कभी
वहीं मिलते हैं तनाव के हल सभी।

बी-१०३, प्रणय लीला अपार्टमेंट,
परिमल नगर, गोरेगाँव वेस्ट,
मुंबई-४०००६२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग पहेली (७४)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० नवंबर, २०११ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते जनवरी २०१२ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली–२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (७२) का हल

१ आ	२ वा	३ ग	म	४ न		५ ला	प	६ ता
७ रा	ह	त		८ नि	९ क	ट		क
१० थ	न		११ श	हा	ब		१२ ख	त
नी		१३ आ	कु	ल		१४ ब	या	
१५ य	१६ हू	दि	न		१७ ज	हा	ल	१८ त
	१९ ब	भ		२० चु	ना	व		मा
२१ ल	हू		२२ रा	प	ना		२३ क	श
म		२४ ब	गी	चा		२५ श	रा	बी
२६ हा	द	सा		२७ प	रि	व	ह	न

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री जसवंत सिंह चौहान**
ग्रा.+पो. : डाबड़ी,
तह.-भादरा
जिला-हनुमानगढ़-३३५५०३

२. **श्री पलाश शर्मा**
८, परमधाम सोसाइटी
बोपल
अहमदाबाद-३८००५८

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली ७२ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री ब्रह्मानंद खिच्ची, लक्ष्मी देवी, विजयपाल मेहलंगिया, सी.आर. नाटडिया (महेंद्रगढ़), प्रमीला पांडिया (फरीदाबाद), फकीरचंद बुल (कैथल), कृष्ण कुमार 'अजनबी' (रायपुर), बिहारी दुबे (पन्ना), मंजू, कृष्ण कुमार चौबे (नागपुर), माणक तुलसीराम गौड़ (रायगढ़), सुमन आर राजपूत, शालिग्राम एस. तिवारी (मुंबई), आशिष सुरेश पाटील (सांगली), आरती शै सुभेदार (बेलगाम), शोभा दानी (नोएडा), पी. शंकरन नंबूनिरि (पालक्कड), सुधा जौहरी, उमा शर्मा (जयपुर), कमलकिशोर पंवार (हनुमानगढ़), योगेंद्र वर्मा 'व्योम' (मुरादाबाद), अर्चना श्रीवास्तव (खरगौन), प्रभुदयाल हंस (पलवल), मोहन उपाध्याय (अजमेर), पवन पखरोलवी (हमीरपुर), कुसुम गोयनका, विजय कुमार, निर्मला गुजराती, जगदेश्वरी रावत, बी.डी. बजाज, दिनकर सहल (दिल्ली), अभिषेक श्रीवास्तव (अलीगढ़), शिवानंद सिंह 'सहयोगी' (मेरठ), राजा चौरसिया (कटनी), प्रेमकुमार साहू (छिंदवाड़ा), प्रेरणा आर्या (जींद), अशोक श्रीवास्तव (श्रीकालाहस्ति)।

वर्ग पहेली (७४)

बाएँ से दाएँ—

१. आस-पास (४)
३. विविधता (४)
६. कल्पना करने वाला (३)
७. वह काम जिसमें केवल बाहरी बनावट हो (५)
१०. चलने का भाव (३)
११. गंदगी (२)
१२. बहुत ही कोमल हृदय वाला (४)
१४. ब्रह्मा के कलहप्रिय पुत्र (३)
१६. बंदर (३)
१९. सभी (४)
२१. वध किया हुआ (२)
२३. तप के योग्य (३)
२४. कमल के समान सुंदर हाथ (५)
२६. व्यर्थ बकने वाला (३)
२८. वह जमीन जिस पर चलने से पैर धँस जाता हो (४)
२९. गृहस्थी (४)

ऊपर से नीचे—

१. दोषारोपण (४)
२. एक विदेशी वाद्य यंत्र (३)
३. थोड़ी मात्रा में (२)
४. अच्छे चाल-चलन वाला (५)
५. सितारों का झुंड (४)
६. कृपालु (३)
८. अपने स्थान से हटना (३)
९. विष्णु (४)
१३. सूर्य (४)
१५. वह सिद्धांत जिसके अनुसार अव्यक्त को लक्ष्य बनाकर उसके प्रति विरह आदि के भाव व्यक्त करते हैं (५)
१७. करुणा (३)
१८. फूट (४)
२०. अकेला (३)
२२. एक धारदार हथियार (४)
२५. शरीर का मध्य भाग (३)
२७. चलने का ढंग (२)

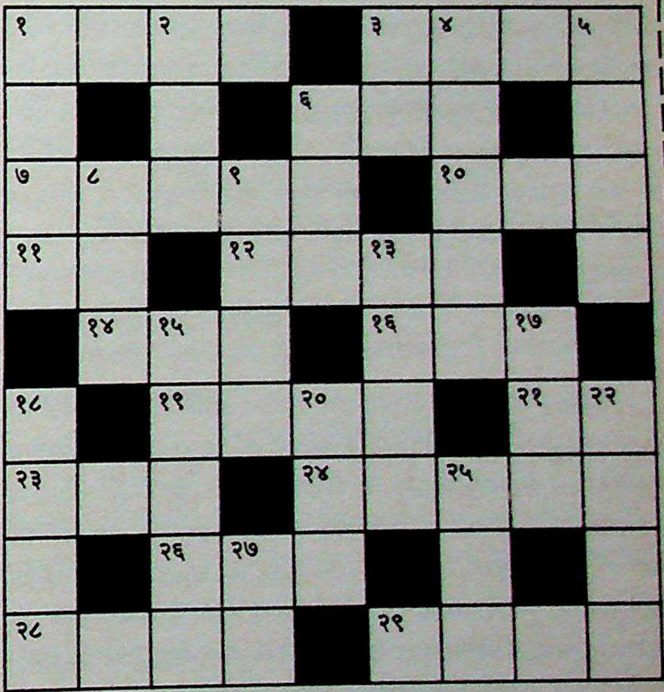

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

वर्ग पहेली (७३) का हल अगले अंक में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक साहित्य एवं संस्कृति के साथ भाषा का संवाहक भी रहा। संपादकीय में हिंदी के प्रयोग, शब्दों के स्तर, वाक्य संरचना और व्याकरण के प्रति सचेत होने की जरूरत पर जो जोर दिया गया है, वह प्रत्येक भाषा के अस्तित्व, उसकी गरिमा तथा भाषा में लिखित उच्च साहित्य की गौरवशाली परंपरा के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

—डॉ. प्रमिला मजेजी, कोरबा (छत्तीसगढ़)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक मिला। इस अंक की कहानियों और लेखों ने प्रभावित किया। 'आप लौट आओ अंकल' और 'शुबहा' बहुत पसंद आईं। ये दोनों कहानियाँ दिल को छूती हैं और वास्तविकता के करीब लगती हैं। 'राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रभाषा हिंदी' में सुधाकर उपाध्याय ने हिंदी भाषा की अस्मिता पर सटीक लिखा है। मृदुला सिन्हा की प्रस्तुति महादेवी वर्मा का लेख 'महिलाएँ पुरुषों की चिंता छोड़ दें' अच्छी है। लेखिका का यह कथन बिलकुल सटीक है कि नारी अबला नहीं सबला है।

—डॉ. प्रभात कुमार, मधुबनी (बिहार)

'साहित्य अमृत' अक्तूबर अंक अति महत्त्वपूर्ण समाचारों से सुसज्जित लगा। संपादकीय की महत्त्वपूर्ण तथा कर्तव्य निभाती भाषा बहुत अच्छी लगी। मनभावन सुझावों के लिए साधुवाद स्वीकारें। ज्ञानेंद नाथ बरतरिया का 'गजेंद्र मोक्ष-२२वीं सदी' व्यंग्य एकदम सटीक और समीचीन है। गायत्री वाजपेयी का बुंदेली लोकगीतों में काव्यत्व अच्छा लगा और हजारी प्रसाद द्विवेदी का 'दीपावली : सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतिमा पर्व' तथा चंद्रमोहन दिनेश की कहानी रोचक लगी। 'नवांकुर' में अविनाश भारती की रोमांच कथा सचमुच रोमांच और नाम सार्थक 'एक रहस्य' रहस्यात्मक लगी।

—रजनी सिंह, डिबाई (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक मिला। आपने स्व. डॉ. मिश्र की संकल्पना को उन्हीं की भाववीथियों के अनुरूप अधिक मनोरंजक व लोकप्रिय बनाकर अपनी नवोन्मेषी लेखनी का परिचय दिया है। आशा है, भविष्य में भी किन्हीं अछूते विषयों पर विशेषांक प्रकाशित करने की आपकी यह विचार-यात्रा जारी रहेगी। लघु-कथा, बाल साहित्य, अनुवाद तथा पत्रकारिता आदि के अन्य युगीन संदर्भों पर भी विशेष सामग्री से सँजोए जाने की कार्ययोजना बलवती होगी, ऐसा विश्वास है। संपादक मंडल को साधुवाद।

—डॉ. दिनेश चंद्र चमोला, देहरादून (उत्तराखंड)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय पढ़कर अच्छा लगा। श्रीराम परिहार का ललित निबंध 'शब्द-शब्द झरते अर्थ' पढ़ने लायक हैं। कुँवर जावेद के मुक्तक पसंद आए। रामदेव शुक्ल की कहानी 'पिता-पुत्र' बढ़िया है। दिविक रमेश तथा ओंकार भारद्वाज की कविताएँ पढ़कर प्रसन्नता हुई। प्रकाश परिमल का आलेख 'गणेश का लोक-स्वीकृत स्वरूप' गणेश के बारे में जानकारी देने वाला है। सभी रचनाओं के साथ-साथ दिए गए रेखाचित्र पत्रिका को पठनीयता प्रदान करते हैं। संपादक मंडल को बधाई।

—अमित कुमार लाडी, फरीदकोट (पंजाब)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक मिला। संपादकीय के अंतर्गत ज्वलंत समस्याओं पर विचार किया गया है। सभी लेख, कहानियाँ, लोक साहित्य, कविताएँ उच्चकोटि की हैं। श्री शैलश मटियानी का उपन्यास अंश (दसवाँ) पाठकों की प्रतीक्षा को अवश्य संतुष्ट करेगा।

—भगवती प्रसाद मिश्र, श्रीनाथद्वारा

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक प्राप्त हुआ। कुछ लेख वास्तव में बहुत अच्छे हैं। श्रीनारायण चतुर्वेदीजी, अशोक चक्रधर, नरेंद्र कोहली, महीप सिंह, सूर्यबाला आदि के व्यंग्य बहुत पसंद आए। संपादक मंडल को बधाई। आशा है, भविष्य में भी ऐसे ही लेख पढ़ने को मिलते रहेंगे।

अक्तूबर अंक को भले ही दीपावली अंक घोषित नहीं किया, लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से अपने इसे दीपावली विशेषांक ही बना दिया है। सभी रचनाएँ गरिमापूर्ण हैं। नए रचनाकार अविनाश भंडारी ने भी निराश नहीं किया। उनकी लेखकीय प्रतिभा, उनकी परिपक्वता सिद्ध करेगी। कविता समृद्ध है, विशेषकर दीवाली के परिप्रेक्ष्य में पूरा अंक आपने पूरे मनोयोग से संपादित किया है।

—डॉ. चंद्रमोहन दिनेश, शाहजहाँपुर

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक मिला। यहाँ इतना भर कहना है कि पत्रिका राष्ट्रभाषा हिंदी की व्यापक प्रचार-प्रसारक है। पत्रिका में लेखों का चयन अच्छा है, वहीं संपादकीय इसके सोने पर सुहागे का काम कर रहा है।

—सुशील बुड़ाकोटी, हिसार (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक प्राप्त हुआ। रामदेव शुक्ल की कहानी 'पिता-पुत्र', गोपाल चतुर्वेदी का लेख 'अन्ना और टोपी क्रांति', चंद्र मोहन दिनेश की कहानी 'कुरुक्षेत्र' एवं ओंकार प्रसाद भारद्वाज की कविता 'दीपोत्सव' बहुत अच्छी लगी।

—विनोद कुमार तिवारी, फारबिसगंज (बिहार)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक मिला। संपादकीय विचारणीय लगा। प्रतिस्मृति में हजारी प्रसाद द्विवेदीजी का आलेख पसंद आया। कहानियाँ काशीवास, 'पिता-पुत्र', 'कुरुक्षेत्र' बेहद पसंद आईं। अन्य आलेख भी बेहद पसंद आए। कवि कुँवर बैचेनजी का संस्मरण 'नाटक बन गया तमाशा' दिल को छू गया। नवांकुर में कथा रहस्य बेहद अच्छी लगी। अन्य कविताएँ भी बेहद पसंद आईं।

—उमेशचंद्र सिरसवारी, भीमनगर (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'विकास के पथ…' कृति लोकार्पित

८ अक्तूबर को प्रभात प्रकाशन द्वारा दिल्ली के सीरीफोर्ट ऑडिटोरियम में भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री नितिन गडकरी कृत 'विकास के पथ…' पुस्तक का लोकार्पण समारोह आयोजित किया गया। लोकार्पण आर्ट ऑफ लिविंग के संस्थापक आध्यात्मिक गुरू पूज्य श्रीश्री रविशंकर ने किया व अध्यक्षता पूर्व उप-प्रधानमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणीजी ने की। मुख्य अतिथि रा.स्व.संघ के सह सरकार्यवाह श्री सुरेश सोनी तथा वरिष्ठ संपादक श्री एम.जे. अकबर थे। मान्य अतिथियों ने दीप प्रज्वलित कर सरस्वती प्रतिमा पर माल्यार्पण किया। प्रभात प्रकाशन के श्री प्रभात कुमार व डॉ. पीयूष कुमार ने मंचस्थ अभ्यागतों का स्वागत किया। पुस्तक का लोकार्पण प.पू. श्रीश्री रविशंकरजी ने पहले रिमोट के जरिए किया, फिर मुद्रित प्रति का लोकार्पण संपन्न हुआ। इस अवसर पर श्रीश्री रविशंकरजी ने कहा, ''मैं भ्रष्टाचार और आतंकवाद के खिलाफ लोगों के दिलों में आग लगाना चाहता हूँ।'' उन्होंने नेताओं को जनता और राष्ट्र की भलाई के बारे में पहले सोचने का संदेश देते हुए कहा कि विकास और सकारात्मक सोच के जरिए राजनेता जनता में अपनी स्वच्छ छवि बना सकते हैं। पुस्तक के संपादक श्री रवींद्र दाणी का स्वागत श्रीश्री रविशंकरजी द्वारा किया गया।

संघ के सह-सरकार्यवाह श्री सुरेश सोनी ने कहा कि श्री गडकरी सामाजिक परिवर्तन के लिए राजनीति कर रहे हैं। यही सही अवधारणा है। वरिष्ठ पत्रकार श्री एम.जे. अकबर ने कहा कि राजनीति विकास की होनी चाहिए, जज्बातों की नहीं। दु:ख की बात है कि देश में पिछले सौ सालों से जज्बात की ही राजनीति हुई है, परिणामस्वरूप पाकिस्तान बना।

इस अवसर पर पुस्तक के लेखक श्री नितिन गडकरी ने कहा, ''मैं हमेशा से ही विकास की राजनीति का पक्षधर रहा हूँ और राजनीति को समाज-परिवर्तन का एक माध्यम मानता हूँ।''

अध्यक्षीय उद्‌बोधन में वरिष्ठ भाजपा नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी ने कहा कि भ्रष्टाचार के आरोपों के चलते राजनेताओं की छवि खराब हुई है। पिछले दो सालों से एक के बाद एक घोटाले सामने आए हैं और सिर्फ भ्रष्टाचार पर चर्चा हो रही है। भ्रष्टाचार ने आप आदमी का रवैया नेताओं के प्रति तिरस्कारपूर्ण बना दिया है।

अंत में श्री प्रभात कुमार ने सभी अभ्यागतों के प्रति आभार व्यक्त किया। सुश्री अदिति शर्मा द्वारा प्रस्तुत वंदे मातरम् के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ। इस भव्य समारोह में बड़ी संख्या में सामाजिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों के अग्रणी महानुभाव, साहित्यकार-पत्रकार, साहित्य-प्रेमी एवं प्रबुद्धजन उपस्थित थे। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों हिंदी भवन में शब्द सेतु, नव उन्नयन एवं दिल्ली हिंदी सम्मेलन के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित समारोह में 'कल्पांत' के 'पुष्प-मधुप' दंपती विशेषांक का लोकार्पण किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. नरेंद्र मोहन थे। संचालन कथाकार सुश्री सविता चड्ढा ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन गीतकार एवं कवयित्री श्रीमती इंदिरा मोहन ने किया। सम्मेलन के अध्यक्ष श्री महेश चंद शर्मा, नव उन्नयन के अध्यक्ष डॉ. शरतचंद्र टंडन, 'कल्पांत' के संपादक श्री मुरारी लाल त्यागी, इस विशेषांक के अतिथि संपादक डॉ. हरीश नवल व डॉ. कमल किशोर गोयनका ने अपने विचार रखे। इस अवसर पर सर्वश्री बालस्वरूप राही दंपती, गुलाब खंडेलवाल दंपती, वीरेंद्र कुमार, बी.डी. बजाज, हरिसिंह पाल, रेणु चौहान, रेखा चंदौला, दीप्ति सिन्हा, प्रीति प्रकाश, प्रभाकिरण जैन, राजकुमारी शर्मा, महेंद्र शर्मा, शंभु शिखर, सुनहरी लाल वर्मा 'तुरंत', सुमित प्रताप सिंह, कौशलेंद्र प्रपन्न, हर्षवर्धन आर्य, ए. कीर्तिवर्धन, किशोर श्रीवास्तव, रामगोपाल वर्मा, हरीश अरोड़ा, ऋतुरंजन, विनोद शर्मा, राजेंद्र सहगल, ईश्वर चंद भारद्वाज, प्रवीण उपाध्याय सहित अनेक साहित्य-प्रेमी उपस्थित थे। □

काव्य संग्रह 'संघर्ष बस संघर्ष' विमोचित

विगत दिनों अमृतसर के विरसा विहार में डॉ. शुभदर्शन के काव्य संग्रह 'संघर्ष, बस संघर्ष' का विमोचन विख्यात आलोचक डॉ. रमेश कुंतल मेघ व कवि डॉ. बलदेव वंशी द्वारा किया गया। पंजाबी-हिंदी काव्य गोष्ठी में सर्वश्री संतोष सिंह शहयार, बलविंदर अत्री, राज शर्मा, रमेश बाबू, अतुला भास्कर, हरकंवल कोरपाल आदि अतिथि काव्यकारों ने अपनी रचनाएँ सुनाईं। समारोह में सर्वश्री विनोद तनेजा, सुधा जतिंदर, के.के. बडियाल, विनोद कुमार, नीलम जुल्का, अरुणा शर्मा, रमन मरवाहा, देवीदास, विद्या सागर, बलदेव लूथरा, किरण, रिंपल, आर.एस. चंदेल, मधु जेतली, मुकेश अग्रवाल, ज्योति बाला, इकबाल सिंह शैरी, अरुण महाजन, सत्यवीर चौधरी, परमजीत सिंह, सुधीर शर्मा, मनोज बांसल, संजय धानुका, गोपाल चौधरी, संजय बेरी आदि उपस्थित थे। संचालन डॉ. हुकुम चंद राजपाल तथा श्री परमिंदरजीत ने किया। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

२५ सितंबर को लखनऊ में सिटी मोंटेसरी स्कूल के सभागार में ज्ञान प्रसार संस्थान द्वारा सुश्री नीरजा द्विवेदी के संस्मरण 'स्मृति मंजूषा' एवं श्री महेश चंद्र द्विवेदी के उपन्यास 'भीगे पंख' का लोकार्पण किया गया। श्री के. विक्रम राव ने अध्यक्षता की। इस अवसर पर सुश्री नीरजा द्विवेदी ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की। □

तीन पुस्तकें विमोचित

२० सितंबर को लखनऊ में राजभाषा सप्ताह समारोह के अवसर पर श्री संजीव जायसवाल 'संजय' की नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'चंदा गिनती भूल गया' के तेलुगु और अंग्रेजी संस्करण तथा 'शेर बिल्ली बन गया' एवं 'जंगल का राजा' का विमोचन आर.डी.एस.ओ. (रेल मंत्रालय) के महानिदेशक श्री वी. रामचंद्रन ने किया। □

'मनमीत' पत्रिका लोकार्पित

२६ सितंबर को सिलचर के गांधी भवन में बराक हिंदी साहित्य समिति द्वारा आयोजित समारोह में 'मनमीत' पत्रिका के प्रवेशांक का लोकार्पण समिति के अध्यक्ष श्री महावीर जैन, क्रीड़ा राज्यमंत्री श्री अजीत सिंह, सहायक आयुक्त श्री जे.एम. रावत, डी.आई.जी. श्री वाजिद अली, सर्वश्री शुभदा पांडेय 'लाला', प्रेमराज ग्वाला, सुराना तथा बाबुल नारायण कानू ने संयुक्त रूप से किया। इस अवसर पर कवि सम्मेलन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का भी आयोजन किया गया तथा श्री मनोहर बायम एवं सुश्री शुभदा पांडेय को उनके साहित्यिक-सामाजिक उपलब्धियों हेतु सम्मानित किया गया। समारोह में सर्वश्री सुरेश द्विवेदी, डागा, मीरा सिंह, बाबुल कहार, पुरकायस्थ, चंचला नोनिया, राजेश सिंह, जानकी चौहान, भोला यादव, कुंजबिहारी ग्वाला, अजय सिंह, चितरंजन भारती, अरविंद शर्मा, रवि नोनिया, मदन सिंहल, जालान, गुलशन मोगा आदि उपस्थित थे। □

'चेतना के स्वर' पुस्तक लोकार्पित

२७ सितंबर को जयपुर के हंस विहार मंदिर के प्रांगण में श्री ताराचंद आहूजा द्वारा रचित पुस्तक 'चेतना के स्वर' का लोकार्पण मुख्य अतिथि श्री बनवारी लाल टिबड़ेवाल द्वारा किया गया। सर्वश्री शैलजा अरोड़ा, मुकुट लाल थानवी तथा बनवारी लाल टिबड़ेवाल ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री राजेंद्र कुमार अग्रवाल ने किया। इस अवसर पर अनेक साहित्य-प्रेमी, विद्वत् जन उपस्थित थे। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों मुंबई में साहित्यिक पत्रिका 'अनुष्का' के चौथे अंक का लोकार्पण लक्षचंडी हाइट्स के सभागार में किया गया। वरिष्ठ कथाकार डॉ. सूर्यबाला, श्री नंदकिशोर नौटियाल एवं डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. माहेश्वर तिवारी ने अपनी रचनाओं का पाठ किया। विशिष्ट अतिथि के रूप में सर्वश्री प्रेम शुक्ल, नंदलाल पाठक, ब्रह्मशंकर व्यास, पंडित किरण मिश्र, सुभाष काबरा आदि उपस्थित थे। दूसरे सत्र में आयोजित कवि सम्मेलन में अनेक कवियों ने काव्य-पाठ किया। संचालन श्री आलोक भट्टाचार्य ने किया। □

'ग्रह-नक्षत्रों द्वारा भाग्य निर्माण' पुस्तक लोकार्पित

८ सितंबर को दिल्ली के इंडिया हैबीटेट सेंटर के सभागार में डायमंड पॉकेट बुक्स तथा इंस्टीट्यूट ऑफ पामिस्ट्री द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित समारोह में श्री दयानंद वर्मा की पुस्तक 'ग्रह-नक्षत्रों द्वारा भाग्य निर्माण' का लोकार्पण पूर्व केंद्रीय मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी ने किया। अध्यक्षता डॉ. वेदप्रताप वैदिक ने की। इस अवसर पर सर्वश्री मुरली मनोहर जोशी, दयानंद वर्मा, निशा घई, अशोक चक्रधर, सुभाष लखोटिया, वीरेंद्र सक्सेना तथा वेदप्रताप वैदिक ने अपने विचार प्रस्तुत किए। □

'कथा साहित्य में विकलांग विमर्श' कृति विमोचित

विगत दिनों बिलासपुर में अखिल भारतीय विकलांग चेतना परिषद् द्वारा प्रकाशित एवं डॉ. विनय कुमार पाठक द्वारा संपादित ग्रंथ 'कथा साहित्य में विकलांग-विमर्श' का विमोचन किया गया। मुख्य अतिथि श्रीमती मृदुला सिन्हा तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. ए.एस. झाड़गाँवकर एवं श्री आई.एन. सिंह थे। अध्यक्षता श्री वीरेंद्र पांडेय ने की। संचालन श्री राजेंद्र अग्रवाल 'राजू' ने तथा आभार श्री मदन मोहन अग्रवाल ने व्यक्त किया। समारोह में अनेक साहित्यकार तथा समाजवादी उपस्थित थे। □

संगोष्ठी एवं लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों बिहार के आरा जिले में स्थित वीर कुँअर सिंह विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग और एन.बी.टी. के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित समारोह में एन.बी.टी. द्वारा प्रकाशित श्री संतोष साहनी कृत 'एक थी चिड़िया', सुश्री नासिरा शर्मा कृत 'दर्द का रिश्ता व अन्य कहानियाँ', श्री गोविंद मिश्र कृत 'ठाकुर साहब का व्रत', श्री भगवंत रसूलपुरी कृत 'हरदीप और उसकी अंधविश्वासी माँ', श्री लाल सिंह कृत 'नुस्खा', श्री प्रेम गोरखी कृत 'आ गई दूसरी सिमरन', श्री रामदास चौधरी कृत 'विज्ञान का क्रमिक विकास वैश्विक परिप्रेक्ष्य में', सुश्री उषाकिरण खान कृत 'प्रभावती', श्री चंडी प्रसाद भट्ट कृत 'पर्वत-पर्वत बस्ती-बस्ती' तथा श्री मिथिलेश्वर कृत 'कहाँ तक कहें युगों की बात' का लोकार्पण किया गया। सर्वश्री ललित किशोर मंडोरा, दीनानाथ मिश्रा, उषाकिरण खान, संतोष श्रेयांस, कृष्ण कुमार, नीरज सिंह, अयोध्या प्रसाद उपाध्याय, रवींद्रनाथ राय आदि ने अपने विचार प्रस्तुत किए। श्री दिवाकर पांडेय ने 'पुस्तकगीत' कविता का पाठ किया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के शोधार्थी, पत्रकार व स्थानीय गण्यमान्य जन उपस्थित थे। □

'यशोधरा' का विमोचन संपन्न

विगत दिनों धार में भोज शोध संस्थान द्वारा निमाड़ के प्रतिनिधि कवियों के काव्य-संग्रह 'यशधारा' का विमोचन किया गया। मुख्य अतिथि श्री प्रभु जोशी तथा विशिष्ट अतिथि श्री अजीज अंसारी एवं डॉ. छाया गोयल थे। अध्यक्षता डॉ. लता चौहान ने की। अतिथियों का स्वागत सर्वश्री अनिता मुकाती, मनीषा खेड़ेकर, राधाकृष्ण बावनिया, कृष्णकुमार दुबे, नवीन माथुर पंचोली, जयेष राठौर तथा वीरेंद्र चौखारे ने किया। श्री शरद जोशी ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की, श्री जिनेश्वरदास जैन ने स्वागत उद्बोधन दिया, श्री अशोक तिवारी ने अतिथियों का परिचय कराया तथा श्री निसार अहमद ने आभार व्यक्त किया। संचालन डॉ. श्रीकांत द्विवेदी ने किया। अंत में श्री दीपेंद्र शर्मा ने अतिथिजनों को शॉल, श्रीफल एवं प्रतीक चिह्न देकर सम्मान किया। इस अवसर पर श्री अजीज अंसारी की पुस्तक 'पाँव तले आसमान' का विमोचन भी अतिथियों द्वारा किया गया। □

हिंदी दिवस समारोह संपन्न

१८ सितंबर को कोलकाता में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय के तत्त्वावधान में आयोजित हिंदी दिवस समारोह में डॉ. महेंद्र सिंह एवं डॉ. कृपाशंकर चौबे ने अपने विचार प्रस्तुत किए। विशिष्ट अतिथि डॉ. कृष्णबिहारी मिश्र थे। संचालन डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी तथा धन्यवाद-ज्ञापन श्री जुगलकिशोर जैथलिया ने किया। सुपरिचित गायक श्री ओम प्रकाश मिश्र ने गजलें प्रस्तुत कीं। प्रारंभ में कुमारी सुप्रिया बैद ने स्व. गोपालसिंह नेपाली द्वारा रचित 'हिंदी है भारत की बोली, तो अपने आप पनपने दो' का पाठ किया एवं डॉ. तारा दूगड़ ने हिंदी की कविताएँ सुनाईं। सर्वश्री कालीप्रसाद जायसवाल, बंशीधर शर्मा, योगेंद्र शुक्ल 'सुमन' एवं नंदलाल रोशन ने अतिथियों का माल्यार्पण कर स्वागत किया। कार्यक्रम में गण्यमान्य कवि, साहित्यकार, प्राध्यापक, साहित्य-प्रेमी एवं समाजसेवी उपस्थित थे। □

हिंदी पखवाड़ा व सम्मान समारोह आयोजित

१४-२८ सितंबर तक दिल्ली में डॉ. हेम भटनागर की अध्यक्षता में 'संस्कार' साहित्यिक संस्था द्वारा कई स्थानों पर हिंदी दिवस मनाया गया। १४ सितंबर को स्वास्थ्य विहार क्लब में आयोजित कवि गोष्ठी के मुख्य अतिथि डॉ. शेरजंग गर्ग थे। १८ सितंबर को चित्र विहार में पुस्तक व चित्र प्रदर्शनी का उद्घाटन तथा सुश्री मधुलिका अग्रवाल की पुस्तक 'महक का मोगरा' का लोकार्पण किया गया। २१ सितंबर को इंदिरापुरम् में 'साहित्यकार नमस्कार!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्यक्रम आयोजित किया गया। २५ सितंबर को चित्र विहार में 'हिंदी की उन्नति का अर्थ' विषय पर आयोजित परिचर्चा में मुख्य अतिथि श्री अतुल प्रभाकर ने श्रीमती सुधा शेष को 'संगच्छध्वं सम्मान', डॉ. कौशल्या गुप्ता, डॉ. सुभद्रा तथा श्री जनक वैद को 'विशिष्ट प्रतिभा सम्मान' प्रदान किए। संचालन सुश्री मीना जैन व धन्यवाद-ज्ञापन सुश्री कुंकुम जोशी ने किया। ☐

पुण्य तिथि पर कार्यक्रम आयोजित

८ सितंबर को जबलपुर में डॉ. (कु.) चित्रा चतुर्वेदी 'कार्तिका' साहित्यिक-सांस्कृतिक न्यास तथा महाकौशल महाविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में स्व. डॉ. चित्रा चतुर्वेदी 'कार्तिका' की द्वितीय पुण्यतिथि पर आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि श्री महामंडलेश्वर श्यामदास तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. अमृतलाल वेगड़ एवं श्री राजेंद्र तिवारी थे। अध्यक्षता प्रो. कृष्णकांत चतुर्वेदी ने की। दीप-प्रज्वलन, माल्यार्पण के उपरांत न्यास के महासचिव डॉ. हेरंब चतुर्वेदी ने डॉ. चित्रा के जीवन पर प्रकाश डाला एवं डॉ. नवीन चतुर्वेदी ने 'कार्तिका' की कृति 'तनया' पर आलेख पढ़ा। कार्यक्रम में अनेक बुद्धिजीवी, साहित्यकार, कलाकार, शिक्षक, अधिवक्ता आदि उपस्थित थे। ☐

काका कालेलकर की जयंती मनाई गई

विगत दिनों दिल्ली के राष्ट्रीय बाल भवन में चित्र-कला-संगम द्वारा आचार्य काकासाहेब कालेलकर की १५०वीं जयंती के अवसर पर उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक विशाल फोटो प्रदर्शनी लगाई गई, जिसमें काकासाहेब के बाल्यकाल से उनके कर्मठ जीवन की झाँकी प्रस्तुत की गई तथा उनके द्वारा लिखे गए नाटक 'दो आम का मंचन' को अभिज्ञान नाट्य एसोसिएशन के सहयोग से निर्देशक श्री लोकेंद्र त्रिवेदी तथा निशा त्रिवेदी द्वारा मंचित किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन सुलभ इंटरनेशनल के संस्थापक पद्मभूषण डॉ. बिंदेश्वर पाठक ने किया। इस अवसर पर सर्वश्री कासुबेन, ब्रजेश प्रसाद, मधु पंत तथा वीरेंद्र प्रभाकर उपस्थित थे। ☐

विष्णु प्रभाकर जयंती मनाई गई

१० सितंबर को विष्णु प्रभाकर जन्मशती के अवसर पर दिल्ली के हिंदी भवन में विष्णु प्रभाकर जन्मशती समिति, विष्णु प्रभाकर प्रतिष्ठान एवं हिंदी भवन द्वारा संयुक्त रूप से श्री विष्णु प्रभाकर की पाँच प्रसिद्ध कहानियों 'धरती अब भी घूम रही है', 'डायन', 'कितने जेबकतरे', 'दूधवाले का बेटा' तथा 'मिडिल स्कूल का हैडमास्टर' का श्री सुरेंद्र शर्मा के नाट्य निर्देशन में 'रंग सप्तक' द्वारा नाट्य मंचन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री रत्नाकर पांडेय, राम बहादुर राय, नारायण सिंह, दया प्रकाश सिन्हा, गोविंद व्यास, अतुल प्रभाकर, हरीश नवल, अनिल जोशी, महेश चंदर, प्रदीप पंत, प्रेम प्रकाश, संदीप, विष्णु प्रभाकरजी की बेटियाँ अनिता एवं अर्चना सहित अनेक साहित्यकार नाट्य-प्रेमी उपस्थित थे। ☐

स्थापना समारोह एवं कवि सम्मेलन आयोजित

विगत दिनों झारखंड में धनबाद जिला हिंदी साहित्य विकास परिषद् का ३२वाँ स्थापना समारोह स्थानीय इंडस्ट्रीज एंड कॉमर्स एसोसिएशन के सभागार में संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि श्री मदन कश्यप थे। इस अवसर पर डॉ. अशोक प्रियदर्शी तथा डॉ. नरेश अग्रवाल को 'हिंदी सेवी सम्मान' से सम्मानित किया गया। कार्यक्रम के अंत में श्री श्रीराम दूबे की अध्यक्षता में आयोजित कवि सम्मेलन में सर्वश्री मदन कश्यप, अनवर शमीम, दिलीप चंचल, कमलेश द्विवेदी, मनजीत सिंह, नरेश अग्रवाल, कुमार ब्रजेंद्र आदि कवियों ने काव्य-पाठ किया। ☐

हिंदी-गोष्ठी संपन्न

१५ सितंबर को फूलचंद बागला महाविद्यालय, हाथरस में हिंदी भाषा की वैज्ञानिकता पर आधारित 'हिंदी की उदात्त संचेतना' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। विषय प्रवर्तन डॉ. राजेश कुमार ने किया। सर्वश्री देवदत्त सिंह, धर्मेंद्र कुमार सिंह, महेंद्रपाल सिंह, रजनीश, गोविंद कुमार उपाध्याय आदि ने पुष्ट तर्कों के आधार पर हिंदी भाषा की वैज्ञानिक समालोचना की। ☐

अभिनंदन समारोह संपन्न

विगत दिनों फारबिसगंज में डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की पुस्तक 'इग्नाइटेड माइंडस' के मैथिली अनुवाद 'प्रज्वलित प्रज्ञा' हेतु केरल में साहित्य अकादेमी सम्मान-२०१० से पुरस्कृत प्रो. (डॉ.) नित्यानंद लाल दास का अभिनंदन इंद्रधनुष साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में स्थानीय साहित्यकारों एवं साहित्य-प्रेमियों द्वारा किया गया। अध्यक्षता प्रो. कमला प्र. बेखबर ने की। मुख्य अतिथि कर्नल अजित दत्त सहित सर्वश्री बेखबर, राम प्र. साहा, मोती लाल शर्मा, अर्जुन प्र. सिंह, परमेश्वर प्र. साह, उमाकांत दास, मांगन मिश्र 'मार्तंड', अनुज प्रभात तथा हेमंत यादव 'शशि' ने उन्हें बधाई दी। कार्यक्रम का संयोजन एवं संचालन श्री विनोद कुमार तिवारी और श्री मनोज कुमार तिवारी ने किया। ☐

जन्मदिवस मनाया गया

विगत दिनों दिल्ली के आजाद भवन में नारायणी साहित्य अकादमी एवं भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रो. नामवर सिंह का ८६वाँ जन्मदिवस मनाया गया। मुख्य अतिथि दिल्ली सरकार की भाषा मंत्री प्रो. किरण वालिया थीं। मुख्य वक्ताओं में सर्वश्री अशोक चक्रधर, रवींद्र श्रीवास्तव, जी.आर. सैयद, शंभुनाथ तिवारी तथा संध्या सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। दूसरे सत्र में आयोजित कवि सम्मेलन में सर्वश्री नरेश कुमार नाज, योगेंद्र शर्मा, मनोज कुमार मनोज, सुरेंद्र सार्थक, देवदत्त शर्मा, ओम तिवारी, ताज अकबर तथा विशाखा सिंह ने अपनी कविताओं का काव्य-पाठ किया। डॉ. पुष्पा सिंह विसेन ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की। मंच संचालन श्री मो. इलियास सैफी एवं श्री सुमित भार्गव ने संयुक्त रूप से किया। प्रो. नामवर सिंहजी ने अपना आशीर्वचन दिया। अध्यक्षता डॉ. पुष्पा सिंह विसेन ने की। समारोह में सर्वश्री सुरेंद्र शर्मा, दिविक रमेश, रमा पांडे, योगेश भार्गव, दिलीप त्रिपाठी आदि उपस्थित थे। ☐

साहित्यिक संगोष्ठी आयोजित

१४ सितंबर को महिला महाविद्यालय, झारसुगुड़ा में श्री बिस्वाल की अध्यक्षता में साहित्यिक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। आरंभ दीप ज्योति मंत्रपाठ से हुआ, तत्पश्चात 'साहित्य अमृत' में प्रकाशित आलेख 'हिंदी और कंप्यूटर क्रांति' का पाठ किया गया। छात्राओं ने मॉरीशस एवं फीजी के कवियों की डॉ. विमलेश द्वारा अनुवादित कविताओं 'मेरी हिंदी भाषा' एवं 'हिंदी का बिरवा' का पाठ किया। हिंदी सम्मान के विद्यार्थियों ने श्री भवानीप्रसाद मिश्र की 'फुर-फुर उड़े फुहार' तथा सुश्री भारती की 'सृजन की थकन भूल जा देवता' कविता का पाठ किया। ☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों भोपाल के भारत भवन में मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद् द्वारा वर्ष २००८ की श्रेष्ठ कृतियों हेतु पुरस्कार समारोह का आयोजन किया गया। डॉ. कमल किशोर गोयनका को उनकी पुस्तक 'गांधी : पत्रकारिता के प्रतिमान' हेतु 'अखिल भारतीय आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार' स्वरूप ५१,००० रुपए का चैक, नारियल, शॉल, प्रतीक चिह्न प्रदान किए गए। अखिल भारतीय पुरस्कारों में सर्वश्री उद्‍भ्रांत, शरदनारायण खरे, मनमोहन सरल, उषा यादव को भी उनकी श्रेष्ठ कृतियों हेतु पुरस्कृत किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. नरेंद्र कोहली ने की तथा मुख्य अतिथि म.प्र. के कला-संस्कृति मंत्री श्री लक्ष्मीकांत शर्मा थे। □

डॉ. विनय कुमार पाठक सम्मानित

विगत दिनों बिलासपुर में छत्तीसगढ़ साहित्य सृजन समिति द्वारा आयोजित साहित्यिक समारोह में समीक्षक एवं भाषाविद् डॉ. विनय कुमार पाठक को उनके साहित्यिक अवदान हेतु 'डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप शॉल, अभिनंदन पत्र, स्मृति-चिह्न दिया गया। इस अवसर पर सर्वश्री लीलाराम भोजवानी, सुरेंद्र दुबे सहित अनेक साहित्यकार एवं बुद्धिजीवी उपस्थित थे। □

'मुक्त होती औरत' पर परिचर्चा संपन्न

विगत दिनों मध्य प्रदेश में म.प्र. प्रगतिशील लेख संघ, इकाई शिवपुरी द्वारा कथाकार तथा पत्रकार श्री प्रमोद भार्गव के कहानी संग्रह 'मुक्त होती औरत' पर परिचर्चा-गोष्ठी आयोजित की गई। गोष्ठी में सर्वश्री महेश कटारे, विजयबहादुर सिंह, वैभव सिंह, पद्मा शर्मा, जाहिद खान, ए. असफल, परशुराम शुक्ल विरही तथा पुनीत कुमार आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. पुनीत कुमार ने तथा आभार श्री प्रमोद भार्गव ने व्यक्त किया। □

श्री रमेशचंद्र पंत सम्मानित

३ सितंबर को महाराष्ट्र के चंदरपुर में आयोजित सम्मान समारोह में डॉ. बानो सरताज द्वारा अपनी माँ की स्मृति में अखिल भारतीय स्तर पर उत्तम कृति हेतु श्री रमेशचंद्र पंत को उनकी कृति 'बालमन की प्रतिनिधि कहानियाँ' हेतु 'बाल साहित्य पुरस्कार-२०११' से सम्मानित किया गया। पुरस्कार-स्वरूप उन्हें ५,००० रुपए नकद, शॉल, श्रीफल एवं स्मृति-चिह्न प्रदान किया गया। इस अवसर पर डॉ. बानो सरताज द्वारा चंद्रपुर में 'हिंदी साहित्य मंच' का गठन भी किया गया। □

'हिंदी लाओ : देश बचाओ' समारोह संपन्न

१३-१५ सितंबर तक वाराणसी में साहित्य मंडल के प्रेक्षागृह में हिंदी साहित्य सम्मेलन एवं साहित्य-मंडल के संयुक्त तत्त्वावधान में तीन दिवसीय 'हिंदी लाओ : देश बचाओ' समारोह का आयोजन किया गया। 'हिंदी दिवस समारोह' की अध्यक्षता श्री भगवती प्रसाद ने की तथा संचालन डॉ. कमलेश थापक ने किया। इसके अंतर्गत 'हिंदी ने क्या खोया, क्या पाया' विषय पर चर्चा की गई। १४ सितंबर को 'खुला अधिवेशन एवं सम्मान समारोह' में हिंदी साहित्य के उन्नायकों को सम्मान-स्वरूप सम्मेलन की मानद उपाधि प्रदान की गई तथा रात्रि के सत्र में साहित्य-मंडल द्वारा विभिन्न पत्रिकाओं के संपादकों को 'संपादक रत्न' से सम्मानित किया गया। १५ सितंबर को 'हिंदी उपनिषद्' कार्यक्रम में देश के अनेक हिंदी विद्वानों ने हिंदी पर अपने विचार प्रस्तुत किए तथा १८ प्रमुख हिंदी सेवियों को 'हिंदी भाषा भूषण' की मानद उपाधि प्रदान की गई। अंतिम सत्र में डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी को 'हिंदी प्रचारक शताब्दी सम्मान-२०११', श्री डी.के. सचदेवा को 'श्रीमती सरस्वती सिंह सम्मान', डॉ. भगवतीशरण मिश्र को 'श्री मनोहर कोठारी स्मृति सम्मान', श्री शंकर रघुनाथ पुणतांबेकर को 'श्री शिवकुमार शास्त्री स्मृति सम्मान' तथा डॉ. राजेंद्र मोहन भटनागर को 'श्री मोतीलाल राठी स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप ११,००० रुपए की राशि भेंट की गई। अंत में साहित्य-मंडल की पत्रिका 'हरसिंगार' के १०वें अंक 'हिंदी लाओ : देश बचाओ' का लोकार्पण किया गया। श्री भगवतीप्रसाद ने आभार व्यक्त किया। □

अर्जुन सिंह रावत सम्मानित

विगत दिनों दिल्ली में हिंदी दिवस पर राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग द्वारा वर्ष २००८-०९ के द्विवार्षिक सृजनात्मक लेखन पुरस्कार योजना के अंतर्गत युवा साहित्यकार श्री अर्जुन सिंह रावत को उनके उपन्यास 'बटमार' हेतु तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप श्री के.जी. बालाकृष्णन ने श्री अर्जुन सिंह रावत को ३०,००० रुपए नकद, सम्मान-पत्र तथा अंग-वस्त्र भेंट किए। समारोह में सर्वश्री प्रदीप वेदवाल, वीना रावत, संध्या नौटियाल, रमेशचंद्र घिल्डियाल, सतेंद्र प्रयासी, पी.एस. नेगी 'केदारखंडी', सुरेश तिवारी, जी.एस. कड़ाकोटि, के.एस. रावत, श्रवण कुमार रावत, चंदोलाजी आदि उपस्थित थे। □

मातेश्वर तिवारी को 'विष्णु प्रभाकर स्मृति सम्मान'

१३ सितंबर को बरेली में मानव सेवा क्लब द्वारा श्री विष्णु प्रभाकर की जन्मशती के अवसर पर श्री मातेश्वर तिवारी को विष्णु प्रभाकर स्मृति सम्मान से सम्मानित किया गया। अध्यक्षता श्री अतुल कुमार ने की। बरेली एवं मुरादाबाद के अनेक साहित्यकारों एवं साहित्य-प्रेमियों की उपस्थिति में श्री तिवारी सहित अनेक कवियों ने काव्य-पाठ किया। □

'साहित्य मंच' कार्यक्रम संपन्न

२ सितंबर को दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित 'साहित्य मंच' कार्यक्रम में श्री अमृतलाल वेगड़ ने 'मेरी नर्मदा परिक्रमा' पर व्याख्यान दिया। कार्यक्रम में उनकी पत्नी श्रीमती कांता, शिल्पकार मीठाराम धर्माणी तथा नर्मदा परिक्रमा में उनके साथ पदयात्रा करनेवाले श्री अनुपम मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सर्वश्री ओम थानवी, अनुपम मिश्र, कृष्णदत्त पालीवाल, प्रभाकर श्रोत्रिय, सुनीता जैन, वीरेंद्र कुमार बरनवाल, रणजीत साहा, रीतारानी पालीवाल सहित अनेक गण्यमान्य श्रोता उपस्थित थे। संचालन और धन्यवाद-ज्ञापन अकादेमी के उपसचिव श्री ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने किया। □

श्री वीरेंद्र कुमार शुक्ल की जयंती मनाई गई

२५ अगस्त को दिल्ली में रजा फाउंडेशन और साहित्य अकादेमी द्वारा श्री विनोद कुमार शुक्ल के ७५ वर्ष पूर्ण करने पर कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम में सर्वश्री नामवर सिंह, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, पुरुषोत्तम अग्रवाल तथा अशोक वाजपेयी ने शुक्लजी के जीवन पर प्रकाश डाला। दूसरे सत्र में साहित्य अकादेमी के 'कवि-संधि' कार्यक्रम में श्री विनोद कुमार शुक्ल का एकल कविता-पाठ संपन्न हुआ। संचालन अकादेमी के उपसचिव श्री ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने किया। इस अवसर पर सर्वश्री मंगलेश डबराल, लीलाधर मंडलोई, प्रयाग शुक्ल, इब्बार रब्बी, कमलेश, नीलाभ, नंद भारद्वाज, मदन कश्यप, विष्णु नागर, कृष्ण कल्पित, कमल कुमार, अशोक माहेश्वरी, वीरेंद्र कुमार बरनवाल, अच्युतानंद मिश्र, राहुल देव, विजय शंकर आदि महत्त्वपूर्ण लेखक उपस्थित थे। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुभाषी रचना पाठ आयोजित

२७-२८ अगस्त तक हरिद्वार के पार्क ग्रैंड होटल में साहित्य अकादेमी, दिल्ली द्वारा आयोजित 'बहुभाषी रचना पाठ' कार्यक्रम का उद्घाटन प्रो. केदारनाथ सिंह ने किया। मुख्य अतिथि सुश्री वीणा गुप्ता, प्रो. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी तथा श्री माधव कौशिक ने अपने विचार व्यक्त किए। स्वागत भाषण और संचालन अकादेमी के उपसचिव श्री ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन सुश्री मंजुला राना ने किया। □

युवा कथाकारों का कहानी-पाठ संपन्न

१९ अगस्त को दिल्ली में साहित्य अकादेमी के 'मुलाकात' कार्यक्रम में युवा कथाकारों श्री अजय नावरिया ने अपनी कहानी 'असली बात' और सुश्री मनीषा कुलश्रेष्ठ ने अपनी कहानी 'केयर ऑफ स्वात घाटी' का पाठ किया। रचनापाठ के अंत में उपस्थित लेखकों, पत्रकारों, आलोचकों ने कहानियों पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ कीं। सर्वश्री सुशील सिद्धार्थ, ज्योतिष जोशी, नंद भारद्वाज, कमल कुमार, वीरेंद्र सक्सेना और के.के. कठेरिया ने अपने विचार प्रस्तुत किए। संचालन और धन्यवाद-ज्ञापन अकादेमी के उपसचिव श्री ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने किया। □

केंद्रीय हिंदी संस्थान के पुरस्कार घोषित

१३ अक्तूबर को दिल्ली में केंद्रीय हिंदी संस्थान द्वारा वर्ष २००८-०९ हेतु हिंदी के प्रचार-प्रसार, प्रशिक्षण, पत्रकारिता आदि के क्षेत्र में दिए जानेवाले पुरस्कारों की घोषणा की गई। 'गंगा शंकर सिंह पुरस्कार' सर्वश्री गिरीश कर्नाड, माधुरी छेडा, बल्ली सिंह चीमा, वाई लक्ष्मी प्रसाद, मधुर भंडारकर, दामोदर खडसे और चमनलाल सप्रू को; 'गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार' सर्वश्री पंकज चौधरी, विनोद अग्निहोत्री, ब्रजमोहन बख्शी तथा बलराम को; 'आत्माराम पुरस्कार' सर्वश्री यशपाल, मो. खलील, सुभाष लखेड़ा व नरेंद्र सहगल को; 'सुब्रह्मण्यम भारती पुरस्कार' सर्वश्री नंद किशोर आचार्य, विजय बहादुर सिंह, अजित कुमार, गोपाल चतुर्वेदी को; 'महापंडित राहुल सांस्कृत्यायन पुरस्कार' सर्वश्री गोल राय, विमलेश कांति वर्मा, हरिमोहन, विक्रम सिंह को; 'डॉ. जॉर्ज ग्रियर्सन पुरस्कार' श्री हरमन वैन ऑलफन तथा श्री ली जंग को तथा 'पद्मभूषण डॉ. मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार' सुश्री पूर्णिमा बर्मन व श्री सुरेंद्र गंभीर को दिया जाएगा। पुरस्कार-स्वरूप एक लाख रुपए की राशि राष्ट्रपति भवन में आयोजित समारोह में दी जाएगी। □

'आनंद सागर स्मृति कथाक्रम सम्मान' घोषित

१४ अक्तूबर को दिल्ली में कथाक्रम समिति ने श्रीलाल शुक्ल की अध्यक्षता में वर्ष २०११ का 'आनंद सागर स्मृति कथाक्रम सम्मान' कथाकार श्री स्वयंप्रकाश को देने की घोषणा की गई। सम्मान-स्वरूप १५ हजार रुपए की राशि, सम्मान-चिह्न तथा सम्मान-पत्र नवंबर में लखनऊ में होनेवाले कथाक्रम-२०११ सम्मान समारोह में दिया जाएगा। □

'स्पंदन' के पुरस्कार घोषित

विगत दिनों भोपाल में ललित कलाओं के लिए समर्पित स्पंदन संस्थान द्वारा स्थापित पुरस्कारों की शृंखला में 'स्पंदन शिखर सम्मान' श्री कामतानाथ को, 'स्पंदन साहित्यिक पत्रकारिता पुरस्कार' श्री अखिलेश को, 'स्पंदन कृति पुरस्कार' श्री योगेंद्र आहूजा को, 'स्पंदन आलोचना पुरस्कार' श्री ज्योतिष जोशी को तथा 'स्पंदन कृति पुरस्कार' श्री आर. चेतनक्रांति को दिसंबर में भारत भवन में आयोजित सम्मान समारोह में दिया जाएगा। सम्मान-स्वरूप ग्यारह हजार रुपए की राशि, शॉल, श्रीफल एवं स्मृति-चिह्न दिए जाएँगे। □

'ज्ञानपीठ पुरस्कार' घोषित

विगत दिनों भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा अपने ४५वें ज्ञानपीठ पुरस्कार के तहत सुप्रसिद्ध कथाकार श्री अमरकांत और श्रीलाल शुक्ल को पाँच-पाँच लाख रुपए की राशि प्रदान की जाएगी तथा ४६वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार कन्नड़ के प्रख्यात रचनाकार श्री चंद्रशेखर कंबर को समर्पित किया जाएगा। □

श्री टॉमस ट्रांसट्रोमर को साहित्य का नोबल पुरस्कार

६ अक्तूबर को स्कॉटहोम में स्वीडिश अकादेमी द्वारा स्वीडन के कवि श्री टॉमस ट्रांसट्रोमर को साहित्य के लिए वर्ष २०११ के 'नोबल पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। पुरस्कार-स्वरूप उन्हें १५ लाख अमेरिकी डॉलर की राशि भेंट की गई। □

साहित्यिक क्षति

डॉ. बि. रामसंजीवय्या नहीं रहे

११ सितंबर को मैसूर हिंदी प्रचार परिषद् के प्रधान सचिव डॉ. बि. रामसंजीवय्याजी का निधन हो गया। १९५५ से वे परिषद् से जुड़े, ३७ वर्षों तक परिषद् के प्रधान सचिव पद की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारियों का निर्वाह किया, परिषद् को आत्मनिर्भर बनाया, गतिमान बनाया। पिछले ४० वर्षों में परिषद् द्वारा करीब १६ लाख अहिंदी भाषी विद्यार्थियों ने उनके प्रयत्न से हिंदी सीखी। करीब ४ लाख कन्नडेतर विद्यार्थियों ने कन्नड़ सीखी। उनका जन्म ५ जून, १९३१ को कर्नाटक राज्य के तुमकूर जिला के गाँव गोविंदनायकन-पाल्या में उनके नाना के घर हुआ। १९७७ में बंगलौर विश्वविद्यालय से हिंदी विषय में एम.ए. तथा १९९७ में हिंदी में शोध कार्य प्रारंभ किया। उनकी अद्वितीय हिंदी सेवाओं के लिए बिहार सरकार ने पच्चीस हजार की नकद राशि से तथा उ.प्र. सरकार ने पं. हरिदत्त शर्मा पुरस्कार से सम्मानित किया। उनके दो पुत्र तथा दो पुत्रियाँ हैं, जो हिंदी भाषा के लिए समर्पित हैं। □

अर्थशास्त्री श्री विष्णुदत्त नागर नहीं रहे

९ अक्तूबर को जाने-माने अर्थशास्त्री और स्तंभकार श्री विष्णुदत्त नागरजी का दिल का दौरा पड़ने के कारण निधन हो गया। वे ८२ वर्ष के थे। उनका जन्म १६ दिसंबर, १९३० को मध्य प्रदेश के गुना जिले के चांचोड़ा में हुआ था। उज्जैन के विक्रम विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र विभाग की स्थापना में उनकी अहम भूमिका रही। वे इंदौर के देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के प्रभारी कुलपति और अर्थशास्त्र विभाग के प्रमुख भी रहे। राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में इनके सैकड़ों आलेख प्रकाशित हुए हैं। □

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैथिलीशरण गुप्त का साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय प्रदेय

● ब्रजेंद्र त्रिपाठी

महादेवी वर्मा ने राष्ट्रकवि मैथिलीशराण गुप्त के बारे में लिखा है—''राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त हमारे पुनर्जागरण के एक कवि थे। इस युग को उन्होंने बनाया, हमें कविता करना सिखाया और वास्तव में हम कौन थे, क्या थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे, उन्होंने ही कहा। शायद ऐसा कोई कवि नहीं है, जिसने इतने लोगों को एक साथ बाँधा। अगर हमारा इतिहास खो जाए तो भी हम उनकी रचनाओं में उस इतिहास को पा लेंगे। फिर दूसरी सांस्कृतिक क्रांति शायद उस समय कठिन थी। ब्रजभाषा कविता की भाषा थी। हम सबने उसी में लिखा था, जब तक 'भारत भारती' हमें नहीं मिली और जब हम जागे, तब 'भारत भारती' हमारे हाथ में थी। जब हम स्वतंत्रता के संग्राम में चले तो 'भारत भारती' हमारे साथ थी और कुछ नहीं था। हममें से कोई ऐसा नहीं है, जिसने 'भारत भारती' नहीं पढ़ा, उसे अपने पास नहीं रखा।''

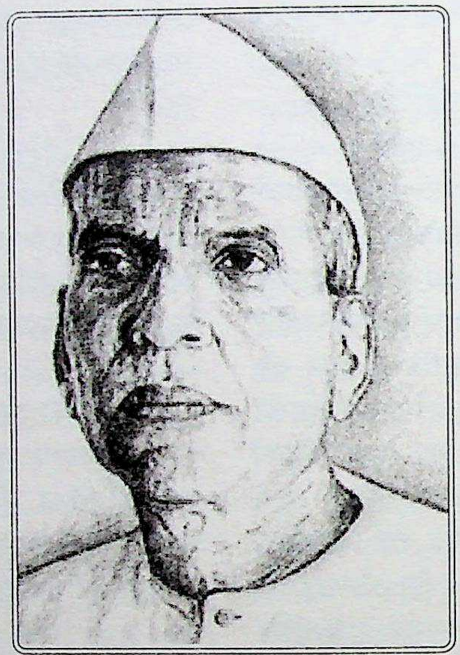

जिस दौर में गुप्तजी ने काव्य-रचना आरंभ की, उस समय काव्यभाषा और खड़ी बोली को लेकर द्वंद्व की स्थिति थी। हालाँकि भारतेंदु हरिश्चंद्र के समय में ही खड़ी बोली में कविता रचने के प्रयास होने लगे थे, फिर भी ऐसी स्थिति नहीं बन पा रही थी कि गद्य और पद्य की भाषा समान हो। भारतेंदु के निधन के बाद जब १९०३ में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी 'सरस्वती' के संपादक बने, तो खड़ी बोली में काव्य-रचना का सिलसिला तेज हुआ। उस समय भी ब्रजभाषा की कोमलकांत पदावली का वर्चस्व था; लेकिन महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रभाव में गुप्तजी ने खड़ी बोली में काव्य-रचना शुरू की। इस बात का श्रेय गुप्तजी को ही जाता है कि हिंदी काव्य-रचना के क्षेत्र में उन्होंने ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली को स्थापित किया। इस कार्य को संपादित करने में उन्हें समय लगा, खुद उनकी आरंभिक रचनाएँ देखें तो हम उसमें भाषा संबंधी कई तरह की समस्याएँ पाएँगे, लेकिन शीघ्र ही उन्होंने युगीन संवदेना के अनुरूप काव्य भाषा अर्जित कर ली और इस प्रकार खड़ी बोली को काव्य भाषा के रूप में विकसित करने का ऐतिहासिक कार्य किया। डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय ने लिखा है—''काव्य भाषा के रूप में खड़ी बोली के निर्माण और विकास में मैथिलीशरण गुप्त ने एक मजदूर से लगाकर कुशल कारीगर तक की भूमिका निभाई। उन्होंने कच्चा माल ढोया और अंततः एक कँगूरा और मेहराबदार इमारत बनाकर अगली पीढ़ी को सौंपी। *(अतीत का हंस : मैथिलीशरण गुप्त)*।

इस प्रकार हम पाते हैं कि ब्रजभाषा के मध्यकालीन रूढ़ रूप से मुक्त कर हिंदी कविता को बोलचाल के सहज रूप खड़ी बोली तक पहुँचाने में जिस व्यक्ति की सबसे बड़ी भूमिका रही, वे निःसंदेह मैथिलीशरण गुप्त थे। उनके पहले श्रीधर पाठक ने यह काम किया अपनी अनूदित कृति 'एकांतवासी योगी' के माध्यम से जिसे आधुनिक खड़ी कविता का पहला लैंडमार्क कहा गया है। उनके पश्चात् आचार्य द्विवेदी और गुप्तजी इस खड़ी बोली काव्यधारा को नया रूप देते हैं। डॉ. सी.एल. प्रभात ने ठीक ही लिखा है—''एक तरह से द्विवेदीयुगीन कविता का इतिहास गुप्तजी की उँगली पकड़कर छायावाद के द्वार तक आया। छायावादी कविता ने सूक्ष्म सौंदर्यबोध के अनुरूप जो बिंब और सांकेतिकता प्रधान भाषा विकसित की, वह द्विवेदीपूर्व युग की साधना के बिना संभव न थी, और उसके सर्जनात्मक सूत्रधार गुप्तजी थे, जो विनम्रतापूर्वक दो दशक तक उसका नेतृत्व करते रहे तथा आगे जब युगीन रचनात्मकता का नेतृत्व नहीं सँभाल सके, तो उसी विनम्र भाव से उसके साथ चलने लगे। द्विवेदीजी तो सन् १९२० के बाद समकालीन युग के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीछे रह गए, पर गुप्तजी ने यथासंभव युग की चेतना का साथ नहीं छोड़ा। वे समय के साथ चलती समसामयिकता के साथ रहे। राम से लेकर मार्क्स तक की उनकी काव्ययात्रा इसका प्रमाण है।''

गुप्तजी को बीसवीं सदी के उत्तर भारत की साहित्यिक और सांस्कृतिक चेतना का अग्रदूत कहा जा सकता है। उनकी काव्यकृतियों के माध्यम से भारतीय जन का व्यापक साहित्यिक और सांस्कृतिक उद्‌बोधन संभव हुआ। भारत के राष्ट्रीय आंदोलन में जिन भारतीय रचनाकारों की प्रमुख भूमिका रही, उनमें रवींद्रनाथ ठाकुर, सुब्रह्मण्यम भारती और मैथिलीशरण गुप्त के नाम प्रमुख हैं। गुप्तजी का संबोधन क्षेत्र व्यापक था और उन्होंने लगभग आधी सदी तक अपनी कृतियों के माध्यम से जन-जागरण का काम किया। उन्होंने अपनी काव्य-रचना का शुभारंभ भारत के अतीत के गौरव गान से किया। वह जिस दौर में थे, वह 'भारत दुर्दशा' का काल था, जिसकी झलक भारतेंदु हरिश्चंद्र से लेकर उस युग के तमाम कवियों में दिखाई पड़ती है। अतीत गौरव गान के पीछे एक उद्‌बोधन की प्रेरणा तो होती ही है कि यदि हमने अपने अतीत को सुधारने की कोशिश न की तो हमारा हश्र क्या होगा। इसी अतीत गौरव के बल पर कवि भविष्य का स्थायी उच्च भवन खड़ा करता है। मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत भारती' के माध्यम से यही कार्य किया और जीवन भर इसी काम में लगे रहे।

गुप्तजी ने जिस युग में जन्म लिया, उस समय सदियों से विदेशी शासन की शृंखला में जकड़ा यह राष्ट्र अपनी अस्मिता, अपनी पहचान के लिए आकुल-व्याकुल होने लगा था। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन राजनीतिक आंदोलन के साथ-साथ आध्यात्मिक आंदोलन भी था, जिसके केंद्र में बुद्धिजीवी, चिंतक, पत्रकार, सामाजिक कार्यकर्ता और सांस्कृतिक पुनर्जागरण से प्रभावित लोग थे। बंगाल में जहाँ राजा राममोहन राय इसकी अलख जगा रहे थे, वहाँ देश के पश्चिमी हिस्से में महर्षि दयानंद। इस जागरण की मूल प्रेरणा के केंद्र में पौराणिक आख्यान थे। इस जागरण का नेतृत्व शुरुआती दौर में भारतेंदु एवं उनके मंडल ने किया। वे लोग संस्कारों से हिंदू थे, लेकिन विचारों में अत्यंत उदार और कर्मकांडों तथा बाह्य आडंबरों का विरोध करनेवाले। भारतेंदु युगीन यह चिंतन-परंपरा मैथिलीशरण गुप्त के लेखन में भी परिलक्षित होती है। ठाकुर प्रसाद सिंह लिखते हैं—''स्वदेशी, नई शिक्षा और वैचारिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण देश के जागरण के मंत्र बनते जा रहे थे, तभी मैथिलीशरणजी ने लिखना शुरू किया। ब्रजभाषा कविता के दबावों के बीच ताल-मेल बिठाते हुए उन्होंने एक वैचारिक भूमि बनाई। 'भारत भारती' का विशाल भवन इसी धरातल पर निर्मित हुआ, जिसमें उन्होंने लिखा—

है आज पश्चिम में प्रभा जो पूर्व से ही है गई
हरते अँधेरा यदि न हम, होती न खोज नई-नई।
इस बात की साक्षी प्रकृति भी है, अभी तक सब कहीं
होता प्रभाकर पूर्व से ही उदित, पश्चिम से नहीं।

'भारत भारती' हमारे हाथों में आज भले ही एक ठंडा दस्तावेज लगे, लेकिन वह कभी नवजागरण की गीता की तरह इस देश के कोने-कोने में पहुँच गई थी और हजारों लाखों लोगों ने उसे कंठस्थ कर लिया था।''

इसमें संदेह की कोई बात नहीं कि 'भारत-भारती' से कविता के क्षेत्र में एक नए युग का सूत्रपात होता है।

अगर हम द्विवेदी युगीन साहित्यिक प्रवृत्तियों से गुजरते हुए गुप्तजी के साथ छायावाद तक आएँ तो पाएँगे कि उनके काव्य का आस्वाद और विवेचन-विश्लेषण हमें अपने साथ प्राचीन इतिहास-पुराण की तरफ ले जाएगा, लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि अतीत में जाकर भी वे अतीतोपजीवी कवि नहीं हैं। चेतना के स्तर पर वे आधुनिक संवेदना के रचनाकार हैं। तथ्य यह है कि भारत का नवजागरण पश्चिम से आयातित होकर नहीं आया था, बल्कि युगीन परिस्थितियों के मध्य वह यहीं जनमा था और उसने अपनी साहित्यिक-सांस्कृतिक परंपरा को पहचाना था। इसी परंपरा को

गुप्तजी को बीसवीं सदी के उत्तर भारत की साहित्यिक और सांस्कृतिक चेतना का अग्रदूत कहा जा सकता है। उनकी काव्यकृतियों के माध्यम से भारतीय जन का व्यापक साहित्यिक और सांस्कृतिक उद्‌बोधन संभव हुआ। भारत के राष्ट्रीय आंदोलन में जिन भारतीय रचनाकारों की प्रमुख भूमिका रही, उनमें रवींद्रनाथ ठाकुर, सुब्रह्मण्यम भारती और मैथिलीशरण गुप्त के नाम प्रमुख हैं। गुप्तजी का संबोधन क्षेत्र व्यापक था और उन्होंने लगभग आधी सदी तक अपनी कृतियों के माध्यम से जन-जागरण का काम किया। उन्होंने अपनी काव्य-रचना का शुभारंभ भारत के अतीत के गौरव गान से किया। वह जिस दौर में थे, वह 'भारत दुर्दशा' का काल था, जिसकी झलक भारतेंदु हरिश्चंद्र से लेकर उस युग के तमाम कवियों में दिखाई पड़ती है। अतीत गौरव गान के पीछे एक उद्‌बोधन की प्रेरणा तो होती ही है कि यदि हमने अपने अतीत को सुधारने की कोशिश न की तो हमारा हश्र क्या होगा। इसी अतीत गौरव के बल पर कवि भविष्य का स्थायी उच्च भवन खड़ा करता है। मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत भारती' के माध्यम से यही कार्य किया और जीवन भर इसी काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मसात् कर तिलक ने 'गीता रहस्य' लिखा और इसी वैष्णव परंपरा के भीतर से गांधीजी का प्रादुर्भाव हुआ। रामकाव्य की इसी परंपरा के मानववादी मूल्यों की प्रतिष्ठा मैथिलीशरण गुप्त ने 'पंचवटी' और 'साकेत' जैसी काव्य-कृतियों में की। 'महाभारत' में पहली बार भारत राष्ट्र की परिकल्पना मिलती है, जो आगे चलकर हमारे साहित्य को एक प्रेरक आधार देती है। गुप्तजी इस तथ्य को शास्त्र धर्म-परंपरा के बराबर रखकर 'जयद्रथ वध' तथ 'जयभारत' जैसी कृतियों में एक नया अर्थसंदर्भ देते हैं।

मैथिलीशरण गुप्त को 'राष्ट्रकवि' कहा जाता है। यह उपाधि उन्हें महात्मा गांधी ने दी थी। गुप्तजी की राष्ट्रीय चेतना का विकास धीरे-धीरे होता है और बाद में उसके आरंभिक सीमित आशय में हम गुणात्मक परिवर्तन होता देख सकते हैं। उनकी राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में उनकी स्वयं की वैष्णव भावना के साथ, भारतीय नवजागरण और गांधी युग की भी अपनी विशिष्ट भूमिका है।

गुप्तजी प्रारंभ से ही इस बात को लेकर सोच-विचार में रहे कि नवजागरण का काव्य किस ढंग का हो'? सन् १९१४ में सरस्वती में प्रकाशित अपने लेख 'हिंदी कविता किस ढंग की हो?' में वे लिखते हैं—''हिंदी की प्राचीन कविता में नूपुरों का रव ही अधिक सुन पड़ता है, और तरह की ध्वनियाँ कम सुनाई देती हैं। उनमें आवेग हो सकता है, पर संयम नहीं। असंयम अवश्य है। ऊपर से वह मधुर अवश्य हुई, पर उसमें भीतर-ही-भीतर एक ऐसी चीज है, जो हृदय को अवश कर देती है। उससे हमारी नाड़ियों में जीवनी-शक्ति नहीं दौड़ती। हाँ, रक्त संचालन का वेग वह अवश्य बढ़ा देती है। शब्द संबंधिनी विभूति उसमें अवश्य है, पर उन भावों की सहानुभूति विरल है। लोकानुभूति तो और भी विरल है।''

स्पष्ट है कि गुप्तजी काव्य में लोकानुभूति के पक्षधर थे। वे उस काव्य के आग्रही थे, जिसमें सर्वसाधारण की व्यथा-कथा हो और यह कथ्यगत स्पष्टता के साथ हो। गुप्तजी में कथारस की पहचान बहुत गहरी थी तथा वे पाठकों को रिझाने की कला जानते थे। 'भारत भारती' और 'साकेत' ने हिंदी में जितने पाठक बनाए, उतने पाठक आधुनिक कविता के बहुत कम कवि बना सके हैं। गुप्तजी की क्षमता हमें इस रूप में भी दिखाई पड़ती है कि उन्होंने ऐतिहासिक-पौराणिक पात्रों को एक नया व्यक्तित्व प्रदान किया है, जिनमें हम वर्तमान युग की छायाओं को प्रतिबिंबित होता देख सकते हैं। उर्मिला, कैकेयी, सीता, यशोधरा, विष्णुप्रिया, रत्नावली आदि ऐसे ही पात्र हैं। गुप्तजी का संस्कृति और इतिहास-बोध अपने समकालीन रचनाकारों में सबसे प्रखर है। आधुनिक हिंदी कविता के संस्कारक और निर्माता के रूप में मैथिलीशरण गुप्त का ऐतिहासिक महत्त्व है।

मैथिलीशरण गुप्त को 'राष्ट्रकवि' कहा जाता है। यह उपाधि उन्हें महात्मा गांधी ने दी थी। गुप्तजी की राष्ट्रीय चेतना का विकास धीरे-धीरे होता है और बाद में उसके आरंभिक सीमित आशय में हम गुणात्मक परिवर्तन होता देख सकते हैं। उनकी राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में उनकी स्वयं की वैष्णव भावना के साथ, भारतीय नवजागरण और गांधीयुग की भी अपनी विशिष्ट भूमिका है।

मैथिलीशरण गुप्त की राष्ट्रीय चेतना पर प्रकाश डालते हुए डॉ. प्रेमशंकर लिखते हैं—''मैथिलीशरण की राष्ट्रीय चेतना वस्तुपरक है और वह अपने समय-समाज को देखती-समझती है, पर उसकी गहराई में जाकर मूल कारणों की तलाश के लिए जैसे उस समय के भारतीय समाज को अवकाश ही नहीं है, क्योंकि आजादी का प्रश्न सामने है। समाज में जिन मूल्यों की स्थापना कवि के रूप में वे करना चाहते हैं, उनका स्वरूप भावात्मक, आदर्शपरक है, पर पूरी तरह ईमानदार। यही बिंदु उन्हें इस अर्थ में आज भी प्रासंगिक बनाता है, क्योंकि समाज में प्रश्न अपनी जगह मौजूद है। उनका लक्ष्य है भारतीय समाज का राजनीतिक जागरण; पर वे जानते हैं कि इसी के साथ समाज-सुधार की प्रक्रिया भी चलनी चाहिए। राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में वे परंपरा के जीवंत तत्त्वों का आग्रह करते हैं, पर रूढ़ियों का विरोध भी। नारी के प्रति एक उदात्त भाव उनके काव्य का विशिष्ट पक्ष है और ये नारियाँ अपने गुण समुच्चय में गरिमामयी हैं। गुप्तजी भारतीय नारी को समाज की आधारभूमि के रूप में स्वीकार करते हैं ओर उसे गार्हस्थ्य जीवन का शृंगार मानते हैं। मैथिलीशरण की राष्ट्रीय चेतना को गांधीयुग के संदर्भ में रखकर देखने से उसके मानवतावादी पक्ष को भी सही ढंग से समझा जा सकता है, जिसमें एक सर्वोदयी सदाशयी दृष्टि मौजूद है।''

मैथिलीशरण गुप्त जिस युग में पैदा हुए, वह ब्रिटिश शासन की निरंकुश सत्ता का युग था, उस युग में उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से देश को जाग्रत् करने का महत् कार्य किया। वे सही मायने में राष्ट्रीय कवि थे, जिसने अपनी रचनाओं के माध्यम से सोते हुए देश को जाग्रत् किया तथा उसे कर्म में संलग्न होने, पराधीनता की शृंखलाओं को तोड़ने, अपने स्वाभिमान को उद्दीप्त करने, अपनी बुद्धि और शक्ति पर विश्वास करने तथा देश को प्रगति-पथ पर अग्रसर करने की प्रेरणा दी। भारतीय जनजीवन को यह उनका सबसे बड़ा प्रदेय है। निज भाषा और देशप्रेम का जो जज्बा उनके काव्य में उभरकर आता है, उसके प्रभाव से बच पाना संभव नहीं है। उनकी कविता ने परवर्ती युग में लेखकों को बहुत प्रभावित किया है। गुप्तजी 'हेमंत' से लेकर 'अब वे वासर बीत गए' के बीच अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रीय भावधारा का प्रतिनिधित्व करते रहे। उनका अधिकतर काव्य आज भी उपयोगी और प्रासंगिक है, क्योंकि वह देशप्रेम की भावना से परिपूर्ण है।

१०१, अर्श कॉम्प्लेक्स
सेक्टर अल्फा-१
ग्रेटर नोएडा-२०१३०१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृजन स्मरण

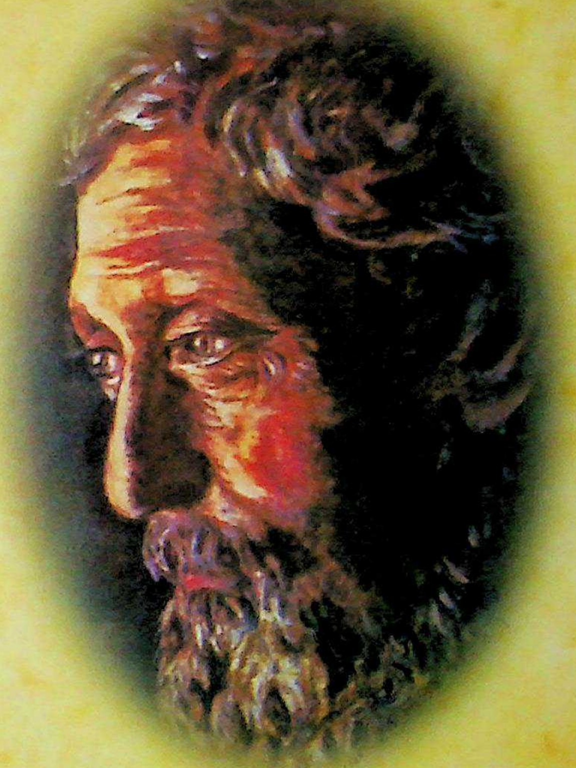

वह हँसी बहुत कुछ कहती थी
फिर भी अपने में रहती थी
सबकी सुनती थी, सहती थी
देती थी सबको दाँव, बंधु

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

(1899 - 1961)

दिल्ली सरकार

सूचना एवं प्रचार निदेशालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेषण की तिथि—पूर्व माह की २५-२६ • पंजीयन संख्या
पी डी आर संख्या डी एल (सी)-०१/१२७३/०९-११
यू.(सी) २२२/२००९-११
पी.एस.ओ. नई दिल्ली अग्रिम शुल्क के बिना प्रेषण की अनुमति

मध्यप्रदेश लोक सेवा गारंटी कानून

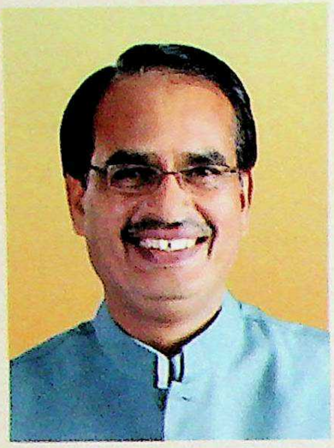

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री

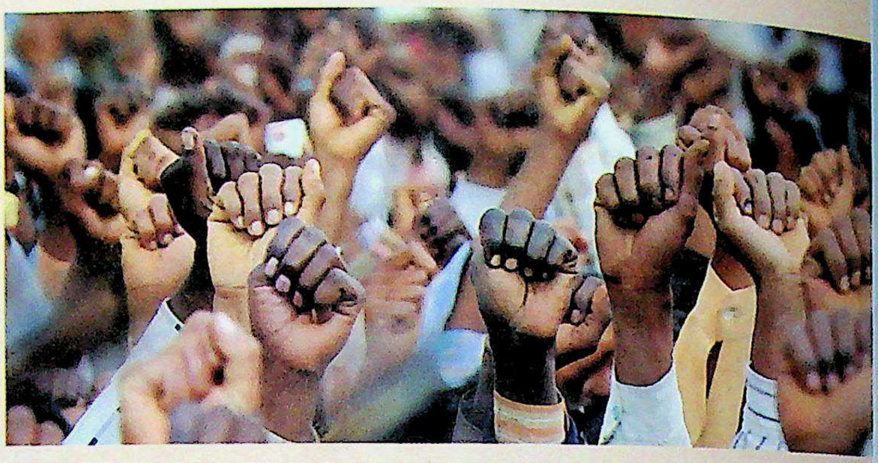

जानें अपने हक़,
मांगें अपने हक़

बृजेन्द्र प्रताप सिंह
राज्यमंत्री,
लोक सेवा प्रबंधन विभाग

नागरिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए कटिबद्ध मध्यप्रदेश सरकार

5 दिन में खसरे की नकल मिलना।

7 दिन में स्थानीय निवासी का प्रमाण पत्र मिलना।

7 दिन में हैंडपंप का सुधार होना।

11 दिन में नया बिजली कनेक्शन प्राप्त करना।

15 दिन में भू-अधिकार पुस्तिका मिलना।

30 दिन में प्रसूति योजना का लाभ प्राप्त करना।

30 दिन में नल का कनेक्शन मिलना।

30 दिन में नया राशन कार्ड बनना।

60 दिन में सामाजिक सुरक्षा पेंशन मिलना।

जनसंपर्क मध्यप्रदेश द्वारा जारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल्य : बीस रुपए

साहित्य अमृत

दिसंबर २०११ • साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक • मासिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

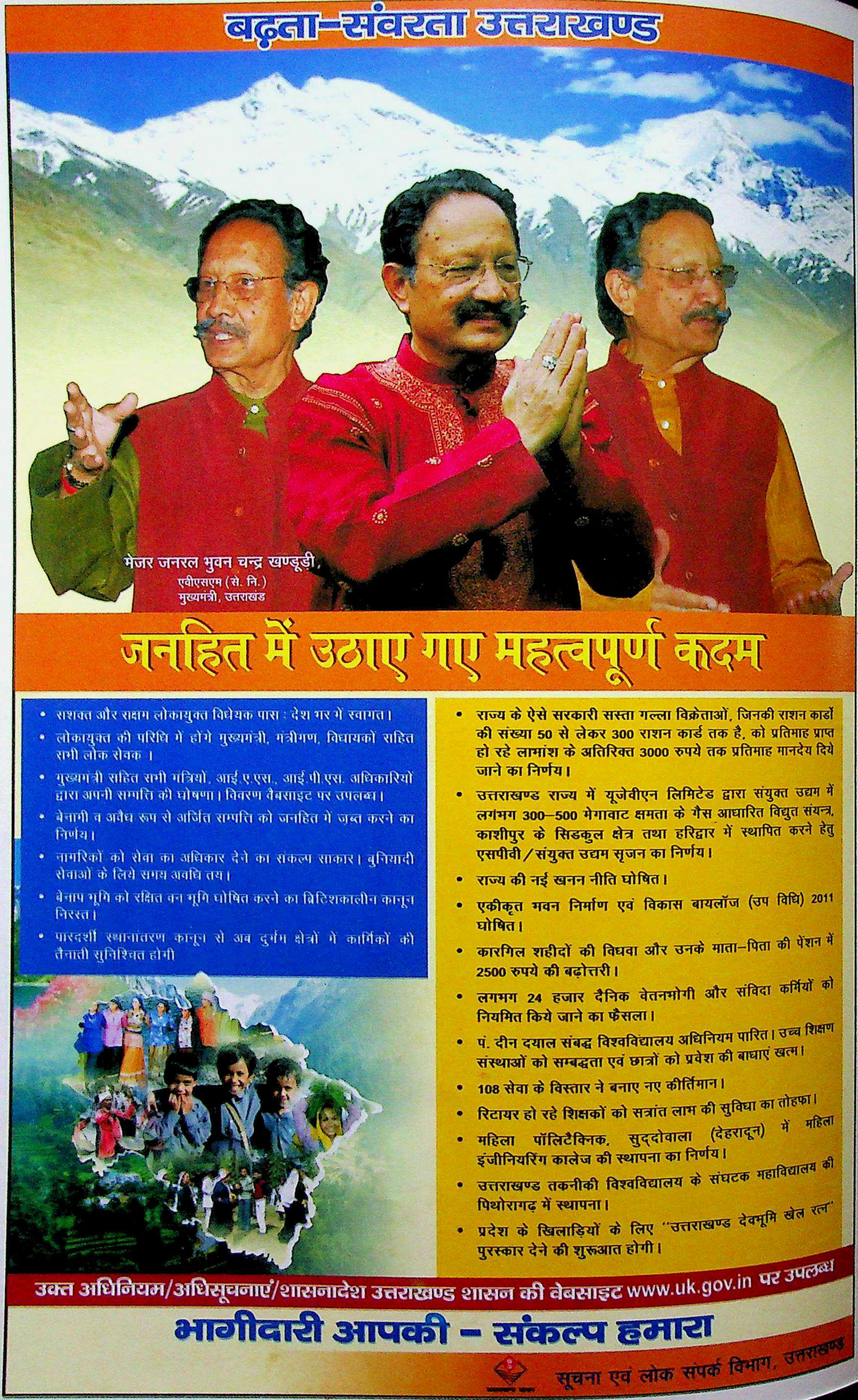

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य अमृत
मासिक

वर्ष-१७ अंक-५ ❖ पृष्ठ ६८ मार्गशीर्ष-पौष, संवत्-२०६८ दिसंबर २०११

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर

परामर्शदाता (मानद)
ब्रजेंद्र त्रिपाठी

कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क
एक अंक —₹ २०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ २००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ २५०
विदेश में
एक अंक—तीन यू.एस. डॉलर (US$3)
वार्षिक—पैंतीस यू.एस. डॉलर (US$35)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय
भारत-पाक-चीन संबंध ४

प्रतिस्मृति
अगली शताब्दी का शहर / *स्व. श्रीलाल शुक्ल* ८

कहानी
जिसकी लाठी उसकी भैंस / *एम.डी. मिश्रा 'आनंद'* ११
मुक्ति / *अर्चना चतुर्वेदी* ३२
एक रोटी जली हुई / *महेंद्र दवेसर 'दीपक'* ५०

आलेख
अज्ञेय : भारतीय आधुनिकता का संदर्भ / *कृष्णदत्त पालीवाल* १४
प्रवासी भारतीय : इतिहास के आईने में / *हेरंब चतुर्वेदी* २६

स्मरण
श्रीलालजी : यादें ही यादें / *गोपाल चतुर्वेदी* २०
मुश्किल है उनपर लिखना / *रंजन कुमार सिंह* २८

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
तीन कविताएँ / *ना. मोगसाले* २५

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
तीन कविताएँ / *रायनर मारिआ रिल्के* ३१

राम झरोखे बैठ के
देश में नए पूजाघर / *गोपाल चतुर्वेदी* ३८

संस्मरण
श्रीलाल शुक्ल, रागदरबारी और मैं / *हरीश नवल* ४०

व्यंग्य
हे राम! / *के.एल. गर्ग* ४४

यात्रा-वृत्तांत
तुम नहीं दिखे नगाधिराज / *नर्मदा प्रसाद उपाध्याय* ४६

लोक-साहित्य
बाजरा कहे मैं बड़ा अलबेला / *हर्षनंदिनी भाटिया* ५५

अंततः
नेपाली, काशी और काशीबहादुर श्रेष्ठ / *ब्रजेंद्र त्रिपाठी* ६५

कविता
सीताराम गुप्ता १०
नलिन तिवारी १३
वर्तिका नंदा ३७
राकेश भ्रमर ४३
डालचंद शर्मा ५९

वर्ग पहेली ५७
पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ५८
साहित्यिक गतिविधियाँ ५९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

भारत-पाक-चीन संबंध, म्याँमार में बदलाव की हवा, फॉर्मूला वन तमाशा, सी.ए.जी. पर दोषारोपण और दिवंगत डॉ. हरगोविंद खुराना

सार्क देशों के सम्मेलन के उपरांत मालदीव से लौटते हुए प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने विमान में पत्रकारों से बात करते हुए पाकिस्तान के प्रधानमंत्री गिलानी को 'शांति-पुरुष' की संज्ञा दी। विदेश मंत्री ने भी कहा कि भारत और पाकिस्तान के बीच विश्वसनीयता का वातावरण बढ़ रहा है। बाद में प्रधानमंत्री ने यह भी कहा कि उनके इस आकलन का ठोस आधार है, वे ऐसे ही विश्वास नहीं कर रहे हैं। अगर पाकिस्तान के रुख में वास्तव में बदलाव आ रहा है तो भारतवासियों को अत्यंत प्रसन्नता होगी। वे तो पाकिस्तान से शांतिपूर्ण संबंध चाहते ही हैं, ताकि दोनों देश अपनी-अपनी जनता की आर्थिक समस्याओं के निदान में अपनी शक्ति का उपयोग कर सकें। पर हमें इसके आसार दिखाई नहीं देते हैं। मुंबई के २६/११ हादसे के जख्म वैसे-के-वैसे ही हैं। भारत ने जितने भी पुख्ता सबूत संभव हो सकते हैं, पाकिस्तान को भेजे, पर पाकिस्तान ने, जो इस हादसे के सरगना हैं, उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की है। वे खुलेआम घूम रहे हैं। हमारे गृह मंत्रालय का ही कहना है कि उग्रवादियों के ४० प्रशिक्षण केंद्र पाकिस्तान की सीमा पर सक्रिय हैं। जम्मू व कश्मीर और भारत के अन्य क्षेत्रों में आतंकवादी घुसपैठियों की कोशिशों के बारे में रक्षा मंत्रालय के अलग-अलग स्तर के अधिकारी देश को सचेत करते रहते हैं। पाकिस्तान के आंतरिक मंत्री ने कह दिया कि मुंबई कांड के दोषी कसाब को तुरंत फाँसी दे देनी चाहिए; और यह सुनकर हम खुश हो जाते हैं। पर भारत में तो संविधान की मान्यता है। उसी के कारण हमारे सर्वोच्च न्यायालय ने स्वयं उसके बचाव पक्ष को सुनने का पूरा प्रबंध किया है, जैसा कि इस स्तंभ में पिछले माह जिक्र किया गया था। पिछले दिनों अमेरिका और पाकिस्तान के उच्च राजनेताओं तथा सैन्य अधिकारियों के बीच बहुत विवाद हुआ। अमेरिका के जॉइंट चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ एडमिरल मिरेल मुलेन ने आई.एस.आई. की आतंकवाद को बढ़ावा देने और तालिबान की मदद करने के बारे में कटु आलोचना की। उन्होंने हक्कानी समूह के आतंकवादियों के खिलाफ कार्यवाही न करने के लिए पाकिस्तान और आई.एस.आई. को दोषी ठहराया। यहाँ तक कहा कि अफगानिस्तान में अमेरिकी संस्थानों पर आतंकवादी आक्रमण कर रहे हैं, उसमें भी आई.एस.आई. की शह है। मुलेन के अलावा अमेरिका की विदेश मंत्री हिलेरी क्लिंटन ने भी आतंकवादियों के सभी संगठनों, तालिबान आदि के खिलाफ प्रभावी कार्यवाही शीघ्र करने की चेतावनी दी। आशंका हुई कि अमेरिका और पाकिस्तान में युद्ध न छिड़ जाए। पाकिस्तानी सेनाध्यक्ष ने अमेरिका को चेतावनी दी कि बिन लादेन जैसी कार्यवाही फिर से की तो अमेरिका को गंभीर परिणाम भुगतने पड़ेंगे। पाकिस्तान की पार्लियामेंट का एक इमरजेंसी सेशन बुलाया गया, पाकिस्तान के सैन्य अधिकारियों ने सांसदों को पाकिस्तान की सुरक्षा की स्थिति से अवगत कराया। हमें इस सबके विवरण में विस्तार से जाने की आवश्यकता नहीं है। असल में अमेरिका की सैनिक और आर्थिक मदद ने ही पाकिस्तान को इतना मजबूत और ढीठ बना दिया, क्योंकि अफगानिस्तान सेनियर सैन्य प्रभाव को अमेरिका समाप्त करना चाहता है और पाकिस्तान की सेना तथा आई.एस.आई. ने इसमें मदद करने के बहाने से अपना उल्लू सीधा किया। कुछ दिनों में ही स्पष्ट हो गया कि यह तनातनी नूरा कुश्ती मात्र है। हिलेरी क्लिंटन इसलामाबाद आईं और कहा कि पाकिस्तान हमारा पुराना मित्र है। पाकिस्तान ने भी आतंकवादियों के खिलाफ अभियान को और तेज करने का निश्चय दुहराया। लेकिन उन दिनों अनेक अमेरिकी अधिकारियों ने पाकिस्तान और आई.एस.आई. के बारे में कहा कि उस पर पूरा भरोसा नहीं किया जा सकता है। किंतु पाकिस्तान से दोस्ती अमेरिका की मध्य एशिया की कूटनीति और राजनीति का हिस्सा है।

खैर, जो भी हो, अगर अमेरिका पाकिस्तान को भरोसेमंद नहीं मानता है तो हम कैसे विश्वास कर सकते हैं, अतः जमीनी सच्चाई कुछ और है! सब जानते हैं कि पाकिस्तान की चुनी हुई सरकार पर सेना और सेना का चुनिंदा अंग आई.एस.आई. हावी है। पत्रकारों ने प्रधानमंत्री से पूछा कि भारत से अच्छे संबंध बढ़ाने की पाकिस्तान के प्रधानमंत्री गिलानी से आपकी जो बातचीत हुई, क्या उसमें सेना की भी सहमति है? प्रधानमंत्री ने अपने उत्तर में कहा कि मुझे ऐसा एहसास है। काश, यह सब सही निकले। लोगों का कयास तो यह है कि उमर, जो तालिबानों का शातिर सरगना है, बिन लादेन की तरह अमेरिकी हवाई आक्रमणों से बचने के लिए वह भी पाकिस्तान में ही छिपा हुआ है। कैसे विश्वास करें कि पाकिस्तानी सरकार को इसका पता नहीं है। भारत और पाकिस्तान की ओर से जो प्रेस को बताया गया, उसमें भी काफी फर्क है। पाकिस्तान कश्मीर को अपना कोर मुद्दा बताता है। हमारे विदेश सचिव ने भारत के दृष्टिकोण से गोल-मोल बातें बता दीं। दोनों प्रधानमंत्रियों की सोच कहाँ तक समान भाव की ही है, यह तो आनेवाला समय ही बताएगा। हम शर्मअल शेख के संयुक्त वक्तव्य की तरह भुलावे में न आए, यह ध्यान देना आवश्यक है। पाकिस्तान चीन से दो न्यूक्लियर रिएक्टर लेने का प्रयास कर रहा है। ईरान के आणविक बम बनाने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोशिशों के बारे में जो समाचार आए हैं, उसमें भी पाकिस्तान ने छिपा-छिपी मदद की है। दोस्ती के लिए भारत के हाथ सदैव खुले ही रहे हैं। हमारे व्यापारिक और आर्थिक संबंधों में क्या वांछित परिवर्तन होते हैं, संभवतः उससे कुछ आगाज मालूम हो, कुछ संकेत मिलें।

पाकिस्तान और भारत के संबंधों में चीन की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। चीन पिछले दिनों से बराबर कुछ-न-कुछ धमकी देता ही रहा है। चीनी वायु सेना और पैदल सैनिकों द्वारा सीमाओं का अतिक्रमण होता ही रहता है। वैसे सीमा संबंधी विवाद को सुलझाने और आपसी विश्वास बढ़ाने के लिए बातचीत होती रहती है। शीघ्र ही चीन के प्रतिनिधि भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार से बातचीत करने आने वाले हैं। अंतरराष्ट्रीय मामलों में जहाँ कहीं भारत का कोई हित हुआ, चीन उसमें रोड़ा अटकाता रहता है। वायुसेना और थलसेना अध्यक्ष, दोनों ने अलग तरीके से कई बार चीन के खतरे की ओर ध्यान दिलाया है। सेना के कमांडो की कॉन्फ्रेंस में सेना प्रमुख ने पिछले दिनों राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए बाहरी खतरों की चर्चा की। रक्षामंत्री प्रायः कभी साक्षात्कारों में, कभी औपचारिक बैठकों या गोष्ठियों में इस मुद्दे की अहमियत को बताते हैं और क्या कदम उठा रहे हैं, उसकी चर्चा भी करते हैं। थलसेना और वायुसेना की शक्ति के तुलनात्मक अध्ययन करनेवाले भारत को चीन से काफी पीछे बताते हैं। भारत सरकार के एक निर्णय की खबर कि करीब एक लाख सैनिकों की भरती होगी और उन्हें उत्तरी सीमा पर नियुक्त किया जाएगा, यह केवल सीमा की सुरक्षा की दृष्टि से है। पर चीन इसे आक्रमणकारी कदम मानता है। चीन के एक अखबार ने लिखा कि चीन को घेरने की कोशिश का दिल्ली सरकार को दुष्परिणाम भोगना पड़ सकता है। आसियान की बाली की बैठक इसी महीने नवंबर में, जहाँ प्रधानमंत्री गए हैं, उनकी मुलाकात चीन के प्रधानमंत्री वेन जियावो से हुई। डॉ. मनमोहन सिंह ने चीनी प्रधानमंत्री से कहा कि साउथ चाइना सी में भारत केवल व्यापारिक, आर्थिक हित की दृष्टि से ही वियतनाम से हुए तेल की खोज के समझौते पर कार्य कर रहा। उन्होंने आश्वस्त किया कि इसमें भारत का कोई सामरिक दृष्टिकोण नहीं है। जियावो ने कहा कि हमें हाथ मिलाकर काम करना चाहिए और हम अच्छे-से-अच्छे संबंध बनाएँगे। चीन क्षेत्रीय संतुलन के प्रति बहुत सतर्क है। न तो भारत वह संतुलन बिगाड़ना चाहता है और न ही भारत चीन को घेरने की कोई कोशिश कर रहा है। फिर भी भ्रांति बनी हुई है। एशिया में सुरक्षा का वातावरण बना रहे। भारत तो चीन और अन्य पड़ोसी देशों से शांतिपूर्ण संबंध ही रखना चाहता है। वह हमारे आर्थिक विकास के लिए भी जरूरी है। वास्तविकता यह है कि चीन भारत को हर दिशा से घेर रहा है। हम इसकी चर्चा इस स्तंभ में कर चुके हैं। पाकिस्तान, नेपाल, म्याँमार, श्रीलंका आदि में उसकी गतिविधियाँ और कार्यक्रम इस बात के प्रमाण हैं। कहीं १९६२ जैसी स्थिति न बन जाए। गृहमंत्री सरदार पटेल ने प्रधानमंत्री नेहरू को जो चेतावनी दी थी, उसकी अनदेखी करने की देश को बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। यह आवश्यक है कि सरकार विरोधी दलों को पूरी स्थिति के बारे में विश्वास में ले। सुरक्षा की दृष्टि से सरकार जो तैयारियाँ कर रही है, वे जारी रहनी चाहिए। उनको और अधिक मजबूत बनाना चाहिए। उनकी गति में भी तीव्रता आनी चाहिए। देश की सुरक्षा का सवाल किसी दल का प्रश्न नहीं है। उसमें सबका सहयोग अपेक्षित है। राजनीतिक विवादों में फँस जाने के कारण सुरक्षा मामले पर आवश्यक ध्यान न रहे, यह अवांछनीय है। इसलिए बिना किसी प्रकार के पैनिक के प्रतिपक्ष और विरोधी दलों से विचार विमर्श करना चाहिए, ताकि वे भी समस्या की गंभीरता और सच्चाई को भलीभाँति समझ सकें। इससे देश की जनता भी आश्वस्त होगी।

□

पिछले वर्षों में म्याँमार (बर्मा) में सैनिक तानाशाही ही रही है। अंतरराष्ट्रीय दबाव के कारण ७ नवंबर, २०१० में जो चुनाव हुए, उससे न म्याँमार निवासियों को, न अन्य प्रजातंत्रात्मक देशों को बहुत आशा थी। कहा गया था कि चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष होंगे। पर मिलिट्री जुंटा का दबाव बना रहा। आंग सान सू की पार्टी ने चुनाव में हिस्सा नहीं लिया। वे स्वयं तो नजरबंद थीं। उनको जब नोबेल शांति पुरस्कार मिला, इजाजत न मिलने के कारण उसे लेने के लिए भी न जा सकीं। वे स्वयं करीब २० वर्ष से अधिक समय तक मिलिट्री जुंटा के शासन में नजरबंद रहीं। नेहरू शांति पुरस्कार भी उन्हें मिला, पर वे स्वयं उपस्थित न हो सकीं। चुनाव के समय जुंटा ने कहा था कि वह सिविलियन सत्ता लाना चाहते हैं। मिलिट्री जुंटा का अपने ढंग से शासन १९६२ में प्रारंभ हुआ था। चुनाव में फौजियों की पार्टी ही सत्ता में आई, पर वे अब फौजी ड्रेस में नहीं थे। धीरे-धीरे नए शासन के रुख और कार्य-शैली में परिवर्तन महसूस होने लगा। रिहाई के बाद सू की मुलाकात पहले एक मंत्री से हुई। वे प्रेसीडेंट थेन सेन के निमंत्रण पर उनसे मिलने गईं। लंबी मुलाकात के उपरांत सू की ने कहा था कि बातचीत अच्छी रही और सौहार्दपूर्ण वातावरण में हुई। जनता को कुछ बदलाव का अहसास होने लगा। जो सेंसरशिप थी, उसमें ढील दी गई। मजदूर संघटनों को फिर कानूनी इजाजत मिली। विश्वविद्यालयों आदि में जो दमन शुरू हुआ था, वह भी बंद हुआ। दो मुद्दे सू की राय में काफी अहम हैं—एक स्वतंत्र न्यायपालिका की स्थापना, ताकि सच्चे अर्थों में कहा जा सके कि राजतंत्र कानून के अनुसार शासन कर रहा है। एक और मामला है, वह है म्याँमार में जो अल्पमत के, छोटे जातीय समुदाय हैं, उनके साथ व्यवहार, उनका स्थान और अधिकार किस प्रकार के होंगे, वह भी स्पष्ट होना चाहिए। एक और समस्या है राजनीतिक कैदियों की रिहाई की। पिछले महीने अक्तूबर में ६,३५९ कैदी रिहा किए गए थे। पर अभी और भी बहुत से लोग जेलों में हैं। म्याँमार के मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष का एक खुला पत्र सरकारी अखबारों में प्रकाशित हुआ है कि उदारता दिखाते हुए शासन अन्य राजनीतिक कैदियों को रिहा करे अथवा उनको दूर-दराज की जेलों से लाकर ऐसी जेलों में रखा जाए, ताकि उनके परिजन आसानी से उन तक पहुँच और मिल सकें। लोगों में आशा बँधी है कि और भी राजनीतिक कैदी जरूर छोड़े जाएँगे। अखबारों में भी ऐसी अटकलें चल रही हैं। एक खबर यह भी छपी है कि सू की के कुछ अनुयायी उनको स्वयं चुनाव में भाग लेने के लिए कह रहे हैं। पहले चुनाव में सू की की पार्टी ने बहुमत प्राप्त किया था, पर फौजी जुंटा ने शक्ति का हस्तांतरण नहीं किया और उनको गिरफ्तार कर लिया था। ७ नवंबर, २०११ के चुनाव के बाद ही उनकी रिहाई हुई। वे म्याँमार के स्वतंत्रता संग्राम के पुरोधा आंग सेन की पुत्री हैं। आंग सेन और उनके सहयोगियों की हत्या आंग सेन के एक राजनीतिक विरोधी के षड्यंत्र-स्वरूप हुई थी, जब उनकी बैठक चल रही थी। शांति स्थापना के उपरांत आंग सेन को स्वतंत्र बर्मा के नए राष्ट्र के जनक के रूप में याद किया जाता है। सू की भारत में अपनी माँ के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ रहीं, जो दिल्ली में अपने देश की राजदूत थीं। यहीं उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई। वे शिमला में इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडी की फेलो भी रहीं। उन्होंने अपने पिता का एक छोटा सा जीवन-चरित्र लिखा। शिमला में उन्होंने शोध कर एक मोनोग्राफ तैयार किया, जिसमें विदेशी शासन के समय बर्मा और भारत के बौद्धिक संबंधों का अच्छा विवेचन है। उनके कुछ और लेखों का संकलन 'फ्रीडम फ्रॉम फीयर' अथवा 'भय से स्वतंत्रता' के रूप में सर्वप्रथम प्रकाशित हुआ। उनकी निडरता और अपने देश के प्रजातंत्रात्मक शासन की प्रतिबद्धता का पता इस बात से चलता है कि जब उनके पति प्रो. माइकेल एरिस का देहांत हुआ, सू की उनके अंतिम संस्कार में शामिल नहीं हो सकीं। जुंटा ने उनको अपने देश में भी कुछ क्षेत्रों के अलावा कहीं भी नहीं जाने की मनाही कर रखी थी, किंतु उस अवसर पर इंग्लैंड जाने की इजाजत दी थी और कहा था कि वे वापस भी आ सकती हैं। उनके पति भूटान के इतिहास और भूटान बुद्धिज्म के अंतरराष्ट्रीय ख्याति के विद्वान् थे। अब उनपर अपने देश अथवा बाहर जाने पर प्रतिबंध नहीं है, वे केवल कभी-कभी अपने देश में यात्रा करती हैं, बाहर कहीं जाने को तैयार नहीं हैं। उनके संबंध या जीवनी रूप में कई किताबें लिखी गई हैं। व्यक्तिगत साहस के कारण उन्हें 'लौह महिला' की संज्ञा दी गई है। इस वर्ष उनके ऊपर एक पुस्तक 'द लेडी एंड द पीकाक' के नाम से आई है, जो अत्यंत रोचक है। उनके साहसी जीवन-वृत्तांत का सहानुभूतिपूर्ण, किंतु सच्चा दिग्दर्शन है।

म्यॉंमार की सीमा भारत से मिलती है। दोनों देशों के बहुत पुराने संबंध हैं, अच्छे भी और बुरे भी। मणिपुर राज्य में जाकर एहसास होता है कि कैसे सीमावर्ती गाँवों के लोग दैनिक जीवन की आवश्यकताओं के लिए इधर-उधर आते रहते हैं। सुरक्षा और व्यापार, दोनों की दृष्टि से म्यॉंमार हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है। फौजी तानाशाही होने के उपरांत भी भारत ने निरंतर कोशिश की कि म्यॉंमार के राजतंत्र से संबंध मधुर बने रहें। पर प्रजातंत्र के आदर्शों की सदैव दुहाई देने के कारण भारत की आलोचना देश में और देश के बाहर भी हुई कि उसने सू की के पक्ष में आवाज नहीं उठाई। अब धीरे-धीरे बर्फ पिघल रही है। फौजी शासन नागरिक शासन में बदलता दिख रहा है। हालाँकि गति बहुत धीमी है, पर आशा बँध रही है कि म्यॉंमार का सत्तारूढ़ दल जनमत का आदर करेगा। सू की की जनप्रियता और जो फौजी अभी तक सत्ता में हैं, उनके रुख में भी बदलाव इस बात का परिचायक है। भारत में बहुत से बर्मीज शरणार्थी अभी भी हैं। सुरक्षा की भावना से वे भी अपने देश में जाना चाहेंगे। यहाँ भी उनके सामने जीवन-यापन की कठिनाइयाँ हैं। जॉर्ज फर्नांडीज जब स्वस्थ थे, एक संगठन बनाकर उनकी यथाशक्ति सहायता करते रहते थे, क्योंकि प्रश्न मानवाधिकार का है। वहाँ की प्रशासनिक व्यवस्था को म्यॉंमार की आंतरिक समस्या कहकर हम अपना बचाव करते रहे हैं। चीन म्यॉंमार में निरंतर अपने पैर पसार रहा है। एक अच्छी बात यह हुई है कि जनता के विरोध का आदर करते हुए बिजली उत्पादन के कुछ प्रोजेक्ट, जो चीन द्वारा बनाए जा रहे थे, उनपर रोक लगा दी है। इसका तात्पर्य यह है कि जनता की भावनाओं के अनुसार म्यॉंमार संभवत: अपनी नीतियों की दिशा निर्देशित करना चाहता है। यदि ऐसा है तो यह न केवल भारत और म्यॉंमार के हित में है, वरन् एक और देश में शांतिपूर्ण ढंग से प्रजातंत्र की जीत होगी। एक और शुभ संकेत इस दिशा में है। २००२ में यूनेस्को द्वारा शांति और सहिष्णुता बढ़ाने के प्रयास के लिए मदनजीत सिंह सहिष्णुता पुरस्कार के लिए सू की का चुनाव किया गया था। पर वे उसको स्वीकार न कर सकीं। अब यंगून (पुराना नाम रंगून) से १६ नवंबर, २०११ को, जो यूनेस्को का सहिष्णुता दिवस कहा जाता है, सू की को एक वीडियो कॉन्फ्रेंस के द्वारा पुरस्कार का चेक दिया गया। अब सरकार द्वारा कोई रोक नहीं है। इस अवसर पर २०११ के पुरस्कार विजेताओं के नाम भी घोषित हुए। पुरस्कार अमेरिकी डॉलर १,००,००० का है। यूनेस्को ने यह भी घोषित किया कि एक विशेष आदर के रूप में यूनेस्को के मुख्य केंद्र पेरिस में जब ९ दिसंबर, २०१२ के पुरस्कार सम्मान दिए जाएँगे, तब सू की का एक संदेश प्रसारित किया जाएगा। यह भी शुभ संकेत है कि म्यॉंमार सामान्य स्थिति की ओर बढ़ रहा है, इससे प्रजातंत्रात्मक मूल्यों का महत्त्व बढ़ेगा।

□

दो दिन का तमाशा 'फॉर्मूला वन' देश ने देखा। यह विशेष प्रकार की बनाई हुई कारों की रेस थी कि कौन कार सबसे तेज जाती है। कार इंडिया टीम का मतलब यह नहीं है कि हिंदुस्तान की बनी कार ही इसमें भाग ले रही थी। अधिकतर ये टीमें मोटर बनानेवाली कंपनियों की होती हैं। यहाँ मोटर ट्रैक जे.पी. ग्रुप का था। मलैया और सहारा ने भागीदारी के लिए अपनी टीम फोर्स इंडिया बनाई थी। फॉर्मूला वन को ग्रांड प्रिक्स भी कहते हैं। खेल या स्पोर्ट के नाम पर इसकी व्यवस्था की गई। यह केवल पैसेवालों के चोंचले हैं। जिसमें साधारण जनता की भागीदारी ही न हो सके, वह किस प्रकार का खेल है। वह केवल कुछ लोगों का मनोरंचन मात्र है। जैसे क्रिकेट का खेल अब खेल नहीं रहा, पैसा बनाने का धंधा हो गया है, उसी का एक बहु विकृत रूप यह रेस है। दर्शकों में उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री, कुछ राजनेता, फिल्म स्टार और क्रिकेटर थे। मुंबई तथा कुछ अन्य स्थानों से आनेवाले रईसजादे, फिल्म स्टार और क्रिकेटर अपने-अपने निजी हवाई जहाजों से दिल्ली के हवाई अड्डे पर उतरे, टी.वी. और अखबारों में इसके प्रचार के लिए कितने करोड़ रुपए खर्च किए गए, कहा नहीं जा सकता। करोड़ों रुपए व्यवस्था करनेवालों ने बनाए। इसका ब्योरा तो आयकर विभाग ही बता सकेगा, यदि वह ईमानदारी से मामले की जाँच करेगा। दूसरे देशों में, जहाँ फॉर्मूला वन आयोजित किया जाता है, व्यवस्था ऐसी होती है कि लोगों का रोमांचक मनोरंजन हो जाए। यह फायदे के लिए नहीं होता है। कोई देश इसके लिए टैक्स में छूट नहीं देता है। हमारे यहाँ सरकार ने टैक्स में छूट दी। शायद इस विषय में जनहित याचिका भी दायर हो चुकी है। पुलिस और यातायात की व्यवस्था का सारा खर्च वास्तव में आयोजकों से वसूल किया जाना चाहिए। इंतजाम में २-४ करोड़ का खर्चा जनता के धन का भी हुआ होगा। तमाशे के समाप्त होने पर प्रचार शुरू किया गया कि इससे देश की नाक ऊँची हुई है, हम भी ऐसे तमाशे, खेल हम नहीं कहेंगे, भारत भी आयोजित करने की क्षमता रखता है। यह सब ऐसे अवसर पर हो रहा था, जब देश में योजना आयोग के हलफनामे पर विवाद चल रहा था कि आज की बढ़ती कीमतों में शहर में ३२ रुपए और गाँव में २५ रुपए में व्यक्ति जीवन-यापन कर सकता है। गंभीर आलोचना के साथ योजना आयोग को सिर छिपाना मुश्किल हो रहा था। उसने अपना शपथ-पत्र बदला। यही नहीं, टी.वी. पर उसी समय तसवीरें दिखाई जा रही थीं और खबर छप रही थीं—पूर्वी उत्तर प्रदेश में अस्पतालों की दयनीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हालात की, उ.प्र., महाराष्ट्र और देश के अनेक भागों में बच्चों और महिलाओं के कुपोषण से मरने की। यह दुःखद कहानी हर साल की है, यह त्रासदी मात्र इस वर्ष की नहीं है। उसी समय ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट के आधार पर बताया जा रहा था कि हम पाकिस्तान, श्रीलंका और अफ्रीका के कई देशों से नीचे हैं। क्या यह शर्म की बात नहीं? फॉर्मूला वन का तमाशा क्या हमारी मानवीय संवेदनहीनता का परिचायक नहीं है? क्या इस तमाशे से करोड़ों बनानेवाले समाज-हित के कुछ कार्य, जैसे प्राथमिक शिक्षा या स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए नहीं कर सकते। हमारे संविधान की प्रस्तावना देश को सोशलिस्ट बताती है। हम कल्याणकारी राज्य की दुहाई देते हैं। यह एक विडंबना है। यह है इनक्रेडिबल इंडिया!

□

२जी स्पैक्ट्रम और कॉमनवेल्थ खेलों के घोटाले के बाद देश में जो हलचल हुई, विशेषतया अन्ना हजारे के आंदोलन के बाद, उससे सरकार और संसद् तथा राजनेताओं का पूरा वर्ग कुछ सचेत हो गया है। प्रधानमंत्री ने कहा है कि वे प्रभावी लोकपाल बिल इस माह प्रारंभ होनेवाले शीतकाल के सत्र में अवश्य पेश करेंगे और उसको पारित कराने का प्रयास करेंगे। स्थायी समिति की रिपोर्ट भी इस विषय में शीघ्र ही सरकार के पास पहुँचने वाली है। कमेटी की रिपोर्ट के बारे में कुछ समाचार प्रकाशित भी हुए हैं; पर भ्रष्टाचार और काले धन के बारे में तो जब लोकपाल बिल पेश हो जाए और न्यायपालिका में भ्रष्टाचार के निदान के लिए क्या कार्यवाही संसद् कर रही है, तब ही पता लगेगा। इस विषय से संबंधित अन्य मामलों में सरकार के इरादों का स्पष्टीकरण हो और लोकपाल बिल की रूपरेखा सामने आए, तभी कुछ विवेचन उचित होगा। पर कुछ और बातें सामने आ रही हैं। सरकार, विशेषतया सत्तारूढ़ दल के लोग तरह-तरह से अन्ना हजारे के आंदोलन को लोगों की आँखों में नीचा दिखलाने की निरंतर कोशिश कर रहे हैं। कुछ लोग खुली आलोचना करते हैं, कुछ जरा दबी जबान से। आंदोलन से जुड़े लोगों पर उँगली उठाने से भ्रष्टाचार का मुद्दा समाप्त होनेवाला नहीं है। अगर अन्ना के लोग गलती कर रहे हैं, तो उनके विरुद्ध उचित कार्यवाही हो। पर कम-से-कम सरकार के लोगों में नागरिकों के प्रति मजा चखाने की या बदला लेने की दूषित भावना नहीं होनी चाहिए। दूसरी ओर एक कोशिश यह भी हो रही है कि संवैधानिक संस्था नियंत्रक एवं महालेखाकार अथवा सी.ए.जी की प्रतिष्ठा को किसी प्रकार चोट पहुँचाई जाए। बयानबाजी हो रही है, ऐसी कुछ कोशिशें वर्षों पहले भी हो चुकी हैं, पर सफलता नहीं मिली। अब भी वह मिलनेवाली नहीं है। खेद यह है कि इसके लिए अब पी.ए.सी. का इस्तेमाल किया जा रहा है। सी.ए.जी. द्वारा जो मुद्दे रिपोर्ट में उठाए जाते हैं, उसके स्पष्टीकरण के लिए वे कमेटी में आमंत्रित किए जाते हैं। अध्यक्ष के समीप बैठते हैं और अध्यक्ष की आज्ञा से, यदि आवश्यक हो तो प्रश्न मंत्रालय के प्रतिनिधियों से पूछते हैं, ताकि सदस्यों को वस्तुस्थिति की सही जानकारी हो सके। सी.ए.जी. सच्चाई जानने के लिए पी.ए.सी. के सहायक होते हैं। वे उसके मातहत नहीं हैं। अबकी बार सी.ए.जी. को एक गवाह के रूप में बुलाया गया, मानो उन्होंने २जी स्पैक्ट्रम घोटाले पर रिपोर्ट देकर कोई अपराध किया है। इसमें जिस शालीनता की अपेक्षा थी, उसका अभाव था। ऐसा क्यों है? पी.ए.सी. रिपोर्ट पर अपनी राय देती है। पी.ए.सी. का भी राजनीतीकरण कर दिया गया है। आक्षेप लगाए जा रहे हैं कि सी.ए.जी. ने जान-बूझकर, शायद निजी कारणों से रिपोर्ट बनाई है। उनकी नीयत में खोट है, इस तरह की हास्यास्पद बातें कही जा रही हैं। यदि उन्होंने जान-बूझकर कोई गलती की है तो उसका समाधान संविधान में है, आप उन पर महाभियोग चला सकते हैं। पर न उसके लिए कोई कारण है, न तर्क है और न साहस है। सी.ए.जी. की मखौल उड़ाने या अनुचित आक्षेप लगाने की मंशा कुछ और ही है। कुछ सदस्य चाहते हैं कि एक रिपोर्ट पर सी.ए.जी. की नीयत पर प्रश्न उठाए, ताकि ऐसा वातावरण बन जाए कि लगे उनकी अन्य रिपोर्ट भी अविश्वसनीय है। धूल उछालने की भरपूर कोशिश हो रही है। अभी पी.ए.सी. में सी.ए.जी. की २जी स्पैक्ट्रम रिपोर्ट पर चर्चा है, फिर कॉमनवेल्थ की रिपोर्ट और उसके बाद पेट्रोलियम मंत्रालय के कृष्णा वेसिन की रिपोर्ट पर चर्चा होनी है। कोशिश है कि शकाएँ उठाकर सभी अन्य रिपोर्टों को अभी से नकार दिया जाए कि वे चर्चा के योग्य नहीं हैं, जिससे ये मामले दब जाएँ। पर अब जनता की जागरूकता के कारण यह संभव नहीं है। कुछ लोगों को डर है कि २जी स्पैक्ट्रम के घोटाले में अन्य लोगों के अलावा एक मंत्री भी जेल में है, कहीं ऐसा अन्य मामलों में भी न हो। मजे की बात यह है कि सी.ए.जी. की नियमित रिपोर्ट के अलावा प्रधानमंत्री ने मामले की गंभीरता को देखते हुए एक निवर्तमान सी.ए.जी. को कॉमनवेल्थ खेलों के घोटाले के कुछ पक्षों की जाँच के लिए नियुक्त किया। श्री शुंगलू की रिपोर्टें सरकार के पास हैं, अखबारों में उन पर बहुत चर्चा हुई, क्योंकि उन्होंने कुछ मामलों में कई उच्च पदाधिकारियों को उत्तरदायी माना है। अतएव इन रिपोर्टों पर अब परदा डालना आसान नहीं है। एक अंग्रेजी पत्रिका 'ओपिन' ने पूरा एक लेख लिखा है कि दिल्ली की मुख्यमंत्री के खिलाफ अभी तक कार्यवाही क्यों नहीं हो रही है। इसी पत्रिका ने सबसे पहले राडिया टेप्स को छापा, जिससे पता चला कि कैसे बिचौलिए या लॉबीइस्ट सरकार की नीतियों और निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। यही नहीं, इसमें जाने-माने पत्रकारों, उच्च अधिकारियों, राजनेताओं आदि की क्या भूमिका हो सकती है, इसका भी पर्दाफाश हो गया। अब राडिया ने तो घोषणा कर दी है कि उसने अपनी लॉबीइंग की कंपनी अपने स्वास्थ्य व अन्य कारणों से बंद कर दी है। इससे पब्लिक ओपीनियन के असर का पता चलता है। यह भी मालूम होता है कि देश में जन-शक्ति प्रखर हो रही है और हमारे राजतंत्र को पारदर्शिता की दिशा में बढ़ने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है।

□

भारतीय मूल के प्रसिद्ध गणितज्ञ डॉ. हरगोविंद खुराना का हाल ही में देहांत हो गया। जब उन्हें उनके शोध के लिए नोबेल पुरस्कार मिला, तब हम भारतीयों ने बड़ा गर्व महसूस किया। वे बहुत दिनों तक सुर्खियों में रहे। हालाँकि वे तब तक अमेरिकी नागरिक बन गए थे। खेद का विषय है कि उनके देहांत का समाचार दो-चार अखबारों में ही और वह भी पाँचवें-छठे पृष्ठ पर दिया गया। उनकी उपलब्धियों की कोई चर्चा नहीं की गई। इस दुखद समाचार को कोई महत्त्व ही नहीं मिला। काश! हम देश के सपूतों का सही ढंग से स्मरण करना सीखें, क्योंकि वे आगे आनेवाली पीढ़ियों के प्रेरणा-स्रोत हैं। दिवंगत आत्मा के प्रति 'साहित्य अमृत' परिवार का श्रद्धापूर्वक नमन।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगली शताब्दी का शहर

स्व. श्रीलाल शुक्ल

काफी उखाड़-पछाड़ के बाद वे अपने राज्य के मुख्यमंत्री बने। पर वे उसे जनादेश कहते थे। दो-चार दिन उन्हें सबकुछ अटपटा सा जान पड़ा। पर जल्दी ही समझ में आ गया कि यह खेल भी बिलकुल कबड्डी जैसा है, जिसे वे बहुत सालों तक खेल चुके हैं। 'डू डू डू डू' करते हुए आप दूसरों के पाले में अचानक कूद पड़ें तो घबराकर वे खुद पीछे हटने लगेंगे। बस इतना देखना है कि कोई आपको छू न पाए। और साँस बरकरार।

गलियों की कचरा संस्कृति में पककर उन्होंने इतना तो सीख ही लिया था कि चाहे जैसा काम हो, उसे पूरा करके वे सही-सलामत निकल आएँगे। उनकी वजह से दूसरों की साँस भले उखड़ जाए, उनकी बरकरार रहेगी। कुछ ही दिनों में उन्हें इस खेल में मजा आने लगा। वे कितने गँवार थे, अपने को उससे ज्यादा दिखने लगे। बातचीत भाँय-भाँय शैली में करने लगे। प्रेस ने, जिसे अब न जाने क्यों मीडिया कहा जाने लगा है, उन्हें तेज-तर्रार बताना शुरू कर दिया। उनकी भाँय-भाँय को विकास की आतुरता का नाम दे दिया।

इसी आतुरता में, यानी एक दिन अपनी भाँय-भाँय शैली के विशिष्ट प्रदर्शन के दौरान उन्होंने ऐलान किया—हमें एक आदर्श नगर बनाना है। यह एशिया की सबसे बड़ी आवासीय कॉलोनी होगी। यह अभी तक अमेरिका ही में चलता था। वहाँ कहते थे—यह रही संसार की सबसे ऊँची इमारत, यह संसार का सबसे बड़ा जलप्रपात। हमारे यहाँ संसार की जगह पर एशिया है—जैसे बंबई में यह एशिया की सबसे बड़ी झोंपड़पट्टी, बंबई से दिल्ली तक यह रहा एशिया का सबसे बड़ा शेयर घोटाला, या अब यह एशिया की सबसे बड़ी आवासीय कॉलोनी की परियोजना।

अब परियोजनाओं का जन्म बाद में होता है, नामकरण पहले। इसलिए उन्होंने अपने आवास विभाग में सबसे बड़े अफसर को बुलाकर पूछा। जवाब किसी भी अफसर के लिए उतना ही आसान है जितना अमिताभ के बाद बच्चन या महात्मा के बाद गांधी लगाना। यह और बात है कि जहाँ तक नई सरकार में परियोजनाओं के नामकरण का सवाल है, महात्मा गांधी के दिन लद गए हैं। सारी परियोजनाएँ अब घूम-फिरकर एक ही खानदान के तीन-चार नामों के गुबार में पटखनी खाकर चित पड़ी हैं। सो इस अफसर ने भी उसी खानदान के एक लगभग नाबालिग नाम का सहारा लिया और इनाम में मुख्यमंत्री की भाँय-भाँय शैली का एक नया प्रदर्शन देखा। उसे बताया गया कि कॉलोनी का नाम 'विष्णु भगवान नगर' होगा।

सुनते ही कई चापलूस, जो बुद्धिजीवी नहीं थे, मुख्यमंत्री की भगवद्-भक्ति पर मुग्ध होकर मूर्च्छित हो गए। जो बुद्धिजीवी थे, और इस कारण धर्म को संस्कृति कहने के आदी थे, मुख्यमंत्री के संस्कृति-प्रेम पर पागल हो गए। यह पता बाद में चला कि ये विष्णु भगवान क्षीरसागरवाले नहीं हैं, विष्णु भगवान मुख्यमंत्री के बाप का नाम है। तब सभी चापलूस एक साथ 'वाह-वाह' करने लगे। कहा भी है, पिता धर्म है, पिता कर्म है, पिता ही परमपद है…।

देखते-देखते ऊँचे अफसरों की एक समिति बना दी गई—विष्णु भगवान नगर परियोजना समिति। उनका काम था परियोजना की पूरी योजना बनाना, नए शहर के लिए जगह का चुनाव करना, फिर उस जगह पर दो साल में नया शहर बना देना। पर सबसे बड़ा काम था बिल्ली के गले में घंटी बाँधना, यानी कॉलोनी के लिए रुपए की व्यवस्था करना। पर यही काम सबसे ज्यादा आसान साबित हुआ, क्योंकि सरकारी परियोजनाओं के लिए उधार पर रुपया समेटना ही सबसे आसान काम है। और फिर इस समिति में एक ऐसा भी अफसर था, जिसकी एक टाँग कई सालों से यहाँ थी और दूसरी टाँग वाशिंगटन में। और दोनों के बीच विश्व बैंक था।

कभी विष्णु भगवान के अवतार श्रीकृष्ण ने पश्चिम समुद्र में द्वारकापुरी का निर्माण कराया था। (आज कराते तो उसका नाम वसुदेवपुरम् होता)। उसके लिए कृष्ण ने विश्वकर्मा को पूरा-पूरा, यानी 'टर्न की बेसिस' पर निर्माण का ठेका दिया था। जमीन के लिए उन्होंने समुद्र को हुक्म दिया था कि सिकुड़कर वह बारह योजन यानी एक सौ चौवन किलोमीटर जमीन छोड़ दे। रुपए के लिए तब विश्व बैंक नहीं था; पर कुबेर थे। उनके निधिपति शख को बुलाकार मनमानी रकम ली गई थी। यहाँ तक कि मरुत् देवता से कहा गया था कि अमरावती से इंद्र के सभा-भवन को, जिसका कि नाम सुधर्मा था, उड़ा लाओ और द्वारका में स्थापित कर दो। यह कथा द्वापर युग की है, पर साबित करती है कि बिना हर्रा और फिटकरी, बड़े-बड़े शहर बसा डालने की तरकीब हमें प्राचीन काल से आती है। अब तक हम समुद्र से ही नहीं, समुद्र पार के लोगों से भी मनमानी रकम खींचने में सिद्धहस्त हो गए हैं।

भगवान विष्णु नगर परियोजना का नामकरण हो जाने के बाद अखबारों में इस विराट् आयोजन पर ऐसा मीडिया-विस्फोट हुआ कि कुछ दिनों तक जनता चकाचौंध बनी रही और मुख्यमंत्री की तसवीर में उनके बाप की और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाप की तसवीर में मुख्यमंत्री की झिलमिल आभा देखती रही। उधर परियोजना समिति ने नए शहर के लिए जगह ढूँढ़नी शुरू कर दी। चूँकि हर परियोजना को राजधानी में घुसेड़ने की कोशिश की जाती है, इसलिए समिति ने पहले राजधानी से सटे हुए एक लंबे-चौड़े क्षेत्र का मुआयना किया। तभी मुख्यमंत्री ने उन्हें बताया—विष्णु भगवान नगर वहीं बनेगा जहाँ विष्णु भगवान का जन्म हुआ था। समिति का काम आसान हो गया। वह मुख्यमंत्री के पैतृक गाँव के दौरे पर निकल पड़ी। इत्तफाकन गाँव से मिला लंबा-चौड़ा बंजर क्षेत्र समिति को दिख गया।

पहले सदस्य ने कहा, ''यह बंजर हमारे नए नगर के लिए सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होता है।'' ('सर्वथा उपयुक्त प्रतीत' कहकर उसने अपने सहकर्मियों को गौर से देखा, पर इस खँटी सरकारी हिंदी का उन पर कोई खास असर नहीं दिखा।) ''किसी भी सरकारी आवासीय योजना की पहली शर्त है कि वह 'कहीं नहीं' लगाई जाए। यह बंजर इस शर्त को बखूबी पूरा करता है।''

''पर इस बंजर में एक भी पेड़ नहीं है,'' दूसरे सदस्य ने एतराज किया।

पहला सदस्य बोला, ''कोई फर्क नहीं पड़ता। हम परियोजना स्थल पर वृक्षारोपण का कार्यक्रम चलाएँगे ही।''

''नहीं-नहीं, मेरा एतराज कुछ और है। हर नई आवासीय योजना में हमें कुछ पुराने बाग-बगीचे उजाड़ने चाहिए। चाहिए कि नहीं? उसके बाद नए पेड़ तो लगाने ही हैं। परंतु पहले उजाड़ने के लिए पुराने बाग-बगीचे यहाँ कहाँ हैं?''

समिति के अध्यक्ष ने गंभीरता से सिर हिलाया, कहा, ''यह तो है। परियोजना का शुभारंभ कैसे होगा?'' बड़ा सोच-विचार हुआ। तब तीसरे सदस्य ने कहा, ''यह जमीन कितने किसानों की है?''

''यही तो अच्छाई है,'' पहले सदस्य ने कहा, ''यह जमीन किसानों की नहीं, गाँव-सभा की है।''

तीसरे ने उसे हैरत से देखा, ''इसे आप अच्छाई कहते हैं?''

पहले सदस्य की समझ में कुछ नहीं आया। उसे घुग्घू की तरह ताकते देखकर तीसरे सदस्य ने समझाया, ''भाई, इस कॉलोनी में कम-से-कम पचास हजार लोग आकर रहेंगे, उसके लिए क्या हम पाँच सौ किसानों को भी तबाह नहीं करेंगे?'' उसने अध्यक्ष से कहा, ''महोदय, मैं ऐसे स्थल के कतई खिलाफ हूँ, जिसे अर्जित करने के लिए एक भी किसान को बेदखल न किया जा रहा हो।''

अध्यक्ष बोले, ''मैं आपसे पूर्णतः सहमत हूँ।''

□

अब बस अड्डे, स्कूल, पार्क, अस्पताल, बाजारों आदि की स्थापना के बारे में शुरुआती बातें शुरू हुईं, किसी ने पुलिस थानों और चौकियों की भी बात उठाई। तभी एक सदस्य ने कहा, ''और माफिया के लिए क्या किया जाएगा?''

''माफिया? क्या मतलब?'' दूसरे सदस्य ने पूछा। पहले सदस्य ने कहा, ''हम इतना बड़ा शहर बसाने जा रहे हैं। छोटे-मोटे चोर-उचक्के तो अपने आप निकल आएँगे, पर जब तक दो-चार बड़े माफिया सरदारों और उनके गिरोहों को कुछ मूलभूत सुविधाएँ न दी जाएँ, वे अपने आप थोड़े ही आएँगे!''

अध्यक्ष ने मुसकराते हुए कहा, ''उसकी फिक्र छोड़िए। जिनके पिता के नाम पर यह शहर बसाया जा रहा है, आप उन्हें क्यों भूल रहे हैं?''

यह एक सुनियोजित परियोजना थी; इसलिए उसके विभिन्न मुद्दों पर सदस्यगण अब अललटप बातें करने लगे थे। एक ने कहा, ''पहले हम लोग जानवरों के बारे में क्यों न सोच लें!''

अध्यक्ष बोले, ''मुझे याद पड़ता है कि मैंने इस गाँव में कुछ भैंसे देखी थीं। इसका सर्वे करा लें। आसपास के गाँवों में, जो इसी शहर के पेटे में आ जाएँगे, कितनी भैंसे होंगी?''

''जी नहीं, हरगिज नहीं,'' पहले सदस्य ने कुछ ऐसे तीखेपन से कहा, जैसे उनकी इज़्ज़त को चुनौती दी गई हो, ''यह नए शहर की अस्मिता का प्रश्न है। सड़क पर मंथर गति से चलती हुई भैंसों के हुजूम जब तक सारा ट्रैफिक न रोक लें, किसी अच्छे भारतीय शहर की अस्मिता कैसे स्थापित होगी?''

दूसरा सदस्य बोला, ''काफी बड़ी तादाद होगी। पर मैं कहता हूँ, क्या आवारा कुत्तों से काम नहीं चल सकता?''

''जी नहीं, हरगिज नहीं,'' पहले सदस्य ने कुछ ऐसे तीखेपन से कहा, जैसे उनकी इज्जत को चुनौती दी गई हो, ''यह नए शहर की अस्मिता का प्रश्न है। सड़क पर मंथर गति से चलती हुई भैंसों के हुजूम जब तक सारा ट्रैफिक न रोक लें, किसी अच्छे भारतीय शहर की अस्मिता कैसे स्थापित होगी?''

जवाब किसी ने नहीं दिया। एक बुजुर्गवार मत्थे पर शिकन डाले, आँखें दबाकर किसी प्रश्न पर गहराई से सोच रहे थे। सहसा वे जोर से बोले, ''और सूअर?''

अध्यक्ष महोदय अचकचा गए, बोले, ''सूअर? कैसे सूअर?''

उस सदस्य ने कहा, ''हर नई आवासीय योजना में सड़कों पर घूमने के लिए, खुले फाटक से मकानों के अंदर घुसने के लिए, नालियों में लोटने के लिए सूअर चाहिए कि नहीं? इंसिफिलाइटिस फैलाने के लिए कोई इंतजाम सोचा है?''

एक सदस्य ने सहमति में सिर हिलाया, कहा, ''हाँ, सूअरों का होना तो लाजमी है। मैं भी एक नई आवासीय कॉलोनी में रहता हूँ। वहाँ अभी बहुत से मकान नहीं बने हैं, सड़कें भी अधूरी हैं। पर सूअर पहले ही आ गए। कोई कह रहा था कि वहाँ आदमियों और सूअरों का अनुपात एक और तीन का है।''

अध्यक्ष सोचते रहे; फिर बोले, ''इस नए शहर में हम लोग भी तो बँगले बनवाएँगे। हममें से कई लोग रिटायर होकर वहाँ रहेंगे भी। इससे क्या समस्या का कुछ समाधान नहीं निकलेगा?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता

बुद्ध

● सीताराम गुप्ता

जन्म : कार्तिक शुक्ल दशमी, संवत् २०११ को गाँव नांगल ठाकरान (दिल्ली) में।

शिक्षा : फारसी तथा अरबी का सामान्य अध्ययन।

प्रकाशन : 'मानसयात्रा' *(यात्रा वृत्तांत)*, 'मन द्वारा उपचार' एवं समकालीन उर्दू तथा हिंदी की साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में भाषा विषयक लेख, व्यंग्य, कथा-साहित्य तथा कविताएँ नियमित रूप से प्रकाशित।

'नवभारत टाइम्स' में कल्पवृक्ष/ आनंद योग के अंतर्गत निरंतर नियमित लेखन।

योग, विपश्यना, रेकी, क्रियायोग, योगनिद्रा, हिप्नोटिज्म, हिप्नोथेरैपी आदि ध्यान पद्धतियों का प्रशिक्षण तथा कार्यशालाओं का आयोजन।

जिसे तुम चूर-चूर कर रहे हो
बारूद की चिनगारियों से
वे बुद्ध नहीं हैं
ये पत्थर के हाथ-पैर
पूरा जिस्म और दूसरे अवयव भी
कभी बुद्ध नहीं हो सकते
जिसे तुमने, मैंने और सभी ने
बुद्ध कहा
वो गौतम भी नहीं रहा
तो फिर ये बेजान पत्थर की मूर्तियाँ
न भी रहें तो क्या?
लेकिन बुद्ध तो रहेगा
गौतम से पहले
और भी न जाने कितने बुद्ध हुए
न जाने कितने
आगे भी होंगे!
अरे बुद्ध!
होना कोई हिंदू-मुसलमान
सिख या क्रिस्तान होना थोड़े ही है
हाँ, हिंदू, मुसलमान, जैन, बौद्ध
या अन्य कोई भी हो
बुद्ध हो सकता है
आप, मैं या अन्य कोई भी
लेकिन वो नहीं
जिसे ये पता नहीं कि बुद्ध
पत्थर में नहीं
लकड़ी और धातु में नहीं बुद्ध
बुद्ध बारूद में नहीं
बारूद के धुएँ में नहीं
बुद्ध तो है वहाँ
नहीं है जहाँ राग-द्वेष का धुआँ
बुद्ध है वहाँ
केवल समता है जहाँ
हिंसा-प्रतिहिंसा व अहंकार नहीं है बुद्ध

यदि तुम देख सको तो
दिखाई देगा तुम्हें बुद्ध वहाँ
जहाँ प्यार है, करुणा है, मैत्री है, क्षमा है
अभाव है क्रोध का, हिंसा का
घृणा का साम्राज्य नहीं है जहाँ
अरे! सभी पत्थरों के टुकड़े
बुद्ध प्रतिमाएँ ही तो हैं
कंचनजंगा भी बुद्ध है

एवरेस्ट भी बुद्ध है
तुम शायद देख नहीं पा रहे हो
अपने सामने उपस्थित
विश्व की सर्वाधिक उत्तुंग बुद्ध प्रतिमा को
जिसकी ऊँचाई है ८,८४८ मीटर

बुद्ध तो हाड़-मांस का बना शरीर भी नहीं
बुद्ध है इस स्थूल काया में व्याप्त सूक्ष्म मन की
सकारात्मक सोच में व्याप्त
प्रतिमा तो प्रस्तर है बुद्ध के अभाव में
बुद्ध होने का अर्थ ही होता है
मूर्ति बनने और बनाने की स्थितियों को
कर देना समाप्त
मूर्ति जड़ता है
शाश्वत परिवर्तन से तादात्म्य स्थापित करना
जड़ता को अलविदा कहना है बुद्ध होना
गौतम ने तो नहीं कहा था—
बनाओ मेरी मूर्तियाँ
अपितु मना किया था
ये तुम ही थे कि अपने को रोक न सके;
क्योंकि तुम चाहते थे
कि बुद्ध आप्लावित करें
न केवल
तुम्हारे चित्त और ज़ेहन को
अपितु छा जाए गौतम भी दिलो-दिमाग पर
ताकि मार्ग में मुक्ति के जब भी
बाधा कोई आए
मार्ग प्रशस्त कर सके तुम्हारा
मूर्ति गौतम की
कर सके प्रेरित तुम्हें
अहिंसा, करुणा, मैत्री तथा प्रेम का संदेश
निरंतर
प्रवहमान रहे शिराओं में तुम्हारी
यह स्वाभाविक था
सकारात्मक था
क्योंकि लगता था तुम्हें कि
बिना गौतम के 'बुद्ध' को सँभाल न पाओगे
बिना शरीर के मन कहाँ? कैसा चित्त? कैसी
आत्मा?
वो स्वयं को जोड़ना था
अब तोड़ना है
अस्वाभाविक है
तुम गौतम को नहीं गिरा रहे हो
बुद्ध को नकार रहे हो
ये पत्थर की मूर्तियाँ
तोड़ डालते तो कोई बात न थी
तुम तो अहिंसा, करुणा, मैत्री और प्रेम से
स्वयं को कर रहे हो शून्य
शून्य का कोई मूल्य नहीं
मूल्यविहीनता तो कोई धर्म नहीं
खैर! प्रतिमाएँ खंड-खंड कर
देकर गौतम को गालियाँ भी
कर सको चित्त को अपने निर्मल अगर
तो भी अच्छा होगा
निर्मल होगा चित्त तो बनने से बुद्ध
कौन रोक सकेगा तुम्हें?
गौतम बुद्ध ही नहीं
गौतम की ध्वस्त प्रतिमाएँ भी
कल्याण ही करेंगी तुम्हारा
ध्वस्त प्रतिमाओं के प्रत्येक खंड से
गौतम पुनः दोहराएँगे—
भवतु सब्ब मंगलं
भवतु सब्ब मंगलं
भवतु सब्ब मंगलं

ए.डी.-१०६-सी, पीतमपुरा,
दिल्ली-११००३४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

जिसकी लाठी उसकी भैंस

● एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

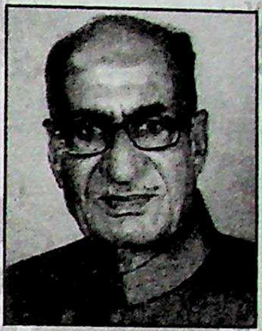

जन्म : ६ मई, १९३६ को आनंद भवन, मुख्य मार्ग पृथ्वीपुर, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.) में।

शिक्षा : स्नातक।

प्रकाशन : 'मोक्ष की राह', 'बद्रीनाथ सहित शिवलोक की यात्रा', 'मैं कौन हूँ' (*काव्य संग्रह*), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (*कहानी संग्रह*) एवं राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टी.वी. पर निरंतर कार्यक्रमों का प्रसारण।

सम्मान : म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल द्वारा सम्मानित।

संप्रति : म.प्र. शासन में नायब तहसीलदार के पद से सेवानिवृत्त।

प्रियव्रत शर्मा राजनीति शास्त्र के व्याख्याता थे। आज अपनी बारहवीं कक्षा के छात्रों को प्रजातंत्र विषय पर व्याख्यान में बता रहे थे कि प्रजातंत्र सभी शासनों से अच्छी प्रणाली है। हमारा देश संसार का सबसे बड़ा प्रजातंत्र है। सभी नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा के लिए हमारा संविधान बना है। सभी नागरिकों को अपनी संपत्ति की रक्षा का अधिकार है। भाषण देने, बोलने और न्याय पाने के लिए समान अधिकार प्राप्त हैं। सभी छात्र मग्न होकर सुन रहे थे।

शाम को शर्माजी अपने निवास पर आए, चाय पीकर बैठे थे। कुछ थकान सी महसूस कर रहे थे कि टेलीफोन की घंटी बजी। रिसीवर उठाया तो ससुराल से फोन था—'चंदन का जन्मदिन है, आप सब लोग आ जाएँ, कुछ धार्मिक आयोजन है। इसलिए दो-तीन दिन का समय लेकर आना है।' चंदन उनकी पत्नी के भाई का पुत्र यानी भतीजा था, जो बड़ी मिन्नतों के पश्चात् तीन पुत्रियों के बाद पैदा हुआ था। तभी उनकी पत्नी स्मृति और बेटा-बेटी भी वहाँ आ गए। माँ स्मृति ने बच्चों से कहा, ''चलो बच्चो, मामाजी के यहाँ चलना है। कल रविवार है। सोमवार के अवकाश के लिए अपने स्कूल में आवेदन किसी साथी के हाथ भिजवा देना।'' और खुशी-खुशी चलने की तैयारी होने लगी।

दूसरे दिन प्रातः ही सब लोग प्रस्थान कर गए। ससुराल में जन्मदिन मनाया और दो-तीन दिन रहने के पश्चात् अपने घर लौट आए। मकान का ताला खोला। साफ-सफाई कर इधर-उधर बिखरे समाचार-पत्र एकत्र किए। प्रियव्रत शर्मा अखबार पढ़ने लगे। पत्नी ने पिछवाड़े का दरवाजा खोला तो वह देखकर अचंभित रह गई। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि यह क्या हो रहा है? पिछवाड़े के हिस्से में गौशाला बनाने के लिए जो भूमि छोड़ी गई थी, वह कँटीले तारों की बाड़ लगाकर घिरी थी। किंतु बाड़ को उखाड़कर उस भूमि पर नींव खोदकर दीवारें खड़ी की जा रही थीं और दीवारें तीन-चार फीट की बन भी गई थीं।

स्मृति दौड़ी-दौड़ी आई और हाँफती हुई शर्माजी के सामने खड़ी हो गई। शर्माजी ने पत्नी को घबराया हुआ देखकर पूछा, ''क्या बात है, तुम घबराई क्यों हो? सब ठीक तो है?'' स्मृति ने कहा, ''अरे नहीं, ठीक नहीं है, आप बाहर चलकर तो देखिए। पिछवाड़े में जो गौशाला की जमीन छोड़ी थी, उसमें कोई मकान बना रहा है।'' सुनकर शर्माजी के होश उड़ गए और बोले, ''ऐसा कैसे हो सकता है?'' बाहर जाकर देखा तो आठ-दस मजदूर, दो मिस्त्री जल्दी-जल्दी दीवार बना रहे थे। अपनी भूमि पर अतिक्रमण देखकर क्रोध से शर्माजी का बदन काँपने लगा। वह जोर से चिल्लाए, ''बंद करो काम! यह जमीन मेरी है, तुम लोग किसके कहने पर यह मकान बना रहे हो?'' मजदूरों ने काम रोक दिया। उनमें से एक मिस्त्री बोला, ''मास्टर साहब, हम तो मजदूर हैं, हमें क्या पता कि जमीन आपकी है। हम लोग तो बहादुर पहलवान के कहने पर काम कर रहे हैं।'' बहादुर का नाम सुनकर शर्माजी की घिग्गी बँध गई। हिम्मत जुटाकर बोले, ''बहादुर की नहीं है यह जमीन! इसकी बेच रजिस्ट्री मेरे पास है। यह मेरी जमीन है, मैं नहीं करने दूँगा काम, बंद करो यह सब।'' काम बंद कर दिया गया और एक मजदूर दौड़ा। उसने जाकर बहादुर को सब बात बताई। शाम भी होने वाली थी। उसने कहा, ''ठीक है, अभी काम बंद कर दो।'' सब मजदूर और मिस्त्री काम बंद कर अपने घरों को चले गए।

बहादुर पहलवान का जैसा नाम था वैसा ही काम भी था। वह बहुत बड़ा ठेकेदार था। आस-पास शराब के ठेके चलते थे। निर्माण कार्य भी ठेके पर कराया करता था। अपराधी किस्म का व्यक्ति जो ठहरा। दो-चार मुस्टंडे हथियार लेकर उसके आगे-पीछे चलते थे। बड़े राजनेताओं का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके यहाँ आना-जाना था। शासकीय अधिकारियों की डिनर पार्टियों में अंग्रेजी शराब की पेटियाँ उसके यहाँ से भेजी जाती थीं। क्षेत्र के नेता उसके ही बल पर बड़े-बड़े चुनाव जीतते थे। एम.पी., एम.एल.ए. और मंत्री, सभी का आना-जाना उसके यहाँ लगा रहता था। सोच-विचार में डूबे हुए शर्माजी रात्रि में बेचैन रहे, उन्हें नींद नहीं आई। पत्नी चाहती थी कि घर में एक गाय पाली जाए। गाय पालना धर्म तो है ही, साथ में घर का शुद्ध दूध और घी भी मिलेगा। सारे सपने अब रेत के महल की तरह बिखरते लग रहे थे।

इसी उधेड़-बुन और विकलता में शर्माजी की रात्रि निकल गई। जैसे लेटे थे वैसे ही प्रातः उठ गए। स्नान-ध्यान कर बाहर निकले, पिछवाड़ेवाला दरवाजा खोला तो देखा कि मिस्त्री और मजदूर आ गए हैं और उसके पीछे से बहादुर सिंह पायजामा, लंबा सा कुरता, रेशमी जाकेट और गले में गमछा डाले, मुसकराता हुआ दोनों हाथ जोड़कर बोला, ''पाँय लागों पंडितजी! आपने कल हमारा काम नहीं होने दिया, काम रुकवा दिया था। दो हजार का नुकसान करा ही दिया। आखिर गरीब मजदूरों को तो पूरी मजदूरी ही देना पड़ेगी; लेकिन कोई बात नहीं, आप हमारे पड़ोसी हैं। मकान की दीवार से ही दीवार सटी है। बस इतना टुकड़ा वीरान पड़ा था सो मैंने सोचा कि क्यों न इसका उपयोग कर लिया जाए। इसमें आपको क्या आपत्ति है, यह बात मेरी समझ में नहीं आ रही है। अब आप ही बता दीजिए।'' क्रोध से शर्माजी के होंठ काँप रहे थे, किंतु स्थिति को भाँपकर धैर्य के साथ कहा, ''यह मेरी जमीन है। इस पर निर्माण क्यों कर रहे हैं? आपका तो यहाँ कुछ भी नहीं है। मैंने यह जगह गौशाला के लिए छोड़ रखी थी।''

''कोई बात नहीं गौशाला ही बनवा रहा हूँ। मेरी भैंस के लिए जगह नहीं थी, सो आपकी गाय जहाँ रहनी थी, अब वहाँ मेरी भैंस रहेगी। हाँ, अगर आपकी ही जमीन है तो इसकी कीमत भी हम देने को तैयार हैं। बोलो, क्या लेना है? बताओ कीमत?''

शर्माजी जोर से चिल्लाए, ''क्या तेरे लिए खरीदी थी मैंने यह जमीन?'' गुस्से में तमतमाए शर्माजी का पूरा शरीर थर-थर काँप रहा था। पड़ोस के लोग हल्ला-गुल्ला सुनकर इकट्ठे हो गए। सब जानते थे कि शर्माजी की जमीन पर बहादुर ने अतिक्रमण कर लिया है, किंतु डर से कोई कुछ नहीं बोला।

शर्माजी सभी के चेहरों को निहार रहे थे कि कोई तो न्याय की बात कहे, लेकिन किसी ने कुछ नहीं कहा। कोई एक शब्द भी उनके समर्थन में नहीं बोला। शर्माजी का साहस टूटता जा रहा था, लेकिन उन्होंने हिम्मत जुटाकर कहा, ''देख बहादुर, कानून भी कोई चीज है। जब ऊँट पहाड़ के नीचे आता है, तब उसे अपनी ऊँचाई छोटी लगने लगती है। अभी जाकर थाने में रपट लिखवाता हूँ, अरे, कोई तो सुनेगा! तेरा निर्माण बंद करवाकर रहूँगा, हटवा दूँगा इन दीवारों को।''

शर्माजी सभी के चेहरों को निहार रहे थे कि कोई तो न्याय की बात कहे, लेकिन किसी ने कुछ नहीं कहा। कोई एक शब्द भी उनके समर्थन में नहीं बोला। शर्माजी का साहस टूटता जा रहा था, लेकिन उन्होंने हिम्मत जुटाकर कहा, ''देख बहादुर, कानून भी कोई चीज है। जब ऊँट पहाड़ के नीचे आता है, तब उसे अपनी ऊँचाई छोटी लगने लगती है। अभी जाकर थाने में रपट लिखवाता हूँ, अरे, कोई तो सुनेगा! तेरा निर्माण बंद करवाकर रहूँगा, हटवा दूँगा इन दीवारों को।''

''देख पंडित, ज्यादा अकड़ दिखाने की जरूरत नहीं है। कर ले रिपोर्ट। लिखा-पढ़ी से मेरा कुछ बिगड़नेवाला नहीं। रही बात सुनवाई की, तो होगी, जरूर होगी। यहाँ पर सुनवाई ही तो होती है। कोई कुछ नहीं करता। देखते नहीं, राजनेता और अधिकारी कितने शिविर जन-सुनवाई के लिए लगाते हैं। आज तक किसी समस्या का निवारण हुआ है क्या? बस सुनवाई भर होती है, सो तेरी भी हो जाएगी। उससे मुझे क्या फर्क पड़ने वाला है और रहा थाना, सो कर दे रिपोर्ट। देख, तेरे ही ऊपर केस दर्ज हो जाएँगे। अरे, यहाँ तेरी जमीन है ही नहीं, यह तो सरकारी है। सरकार से हम निपट लेंगे। थाने और तहसील के हथकंडे तूने देखे नहीं हैं। भू-स्वामी की जमीन को सरकारी बना दें और सरकारी को भू-स्वामी की। कपड़े के नक्शे को थोड़ा सा खींच दें तो दस कड़ी का अंतर आ जाता है नाप में। थाने के फंडे तो और नुकीले हैं पंडित।

''और हाँ, अगर तू थाना-तहसील गया तो एक पैसा तुझे जमीन का नहीं दूँगा। अभी तो मैं उसकी कीमत भी देने को तैयार हूँ।''

शर्माजी ने कहा, ''मुझे नहीं चाहिए तेरा पैसा। बस मेरी जमीन लौटा दे।''

''तो जा चला जा कोर्ट-कचहरी। जो जी में आए कर ले, तुझे छूट दे रखी है मैंने।'' बहादुर बिगड़ा।

गाँव-पड़ोस के लोग सब समझ रहे थे कि बहादुर ने शर्माजी की जमीन हड़प ली है, लेकिन कोई भी कुछ कहने को तैयार ही नहीं था। सभी लोग बहादुर से डरते थे।

शर्माजी ने विद्यालय में अगले शनिवार तक की छुट्टी का आवेदन भेज दिया और बहादुर से दो-दो हाथ करने के इरादे से तैयारी कर ली। उन्होंने थाने के लिए प्रस्थान किया। वहाँ पर थाना प्रभारी को अपनी दुःख भरी कहानी सुनाई तो उसने बहादुर को फोन लगाया। काफी देर तक बहादुर से फोन पर चर्चा होती रही, बाद में थानेदार ने कहा, ''पंडितजी, आप एक आवेदन लिखकर दे दीजिए, ताकि स्थल पर जाँच कराने के बाद ही एफ.आई.आर. दर्ज कराई जाए।''

शर्माजी ने आवेदन लिखकर दे दिया तो तुरंत मौकास्थल पर जाँच करने के लिए प्रधान आरक्षक की ड्यूटी लगा दी गई। घटनास्थल की जाँच रिपोर्ट आने पर दूसरे दिन शर्माजी की एफ.आई.आर. दर्ज की गई। पुलिस द्वारा जाँच रिपोर्ट दूसरे पक्ष की तरफ से भी रिपोर्ट [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को शामिल कर मामला तैयार किया गया। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा १०७-११६ के अनुसार शांति भंग होने की आशंका से इस्तगासा दोनों पक्षकारों को आरोपी बना करके एस.डी.एम. के न्यायालय में प्रस्तुत किया गया। इस्तगासा में बहादुर का कहीं कोई नाम नहीं था। उसके नौकर द्वारा निर्माण कराया जाना दिखाया गया था। इसलिए पक्षकार शर्माजी और बहादुर के गुर्गे बन गए थे। अब दोनों पक्षकारों को शांति बनाए रखने के लिए अनुबंध भरवाए गए, मुचलके और जमानतदार भी। जमानतदार न होने पर जेल वारंट।

शर्माजी के होश ठिकाने आ गए थे। ऐसा कानून तो उन्हें पता ही नहीं था, जिसकी गिरफ्त में वह आ चुके थे। अब शर्माजी के जेल जाने की तैयारी हो रही थी। एक अपरिचित व्यक्ति ने आकर जमानत की अरजी प्रस्तुत कर कहा, ''मैं प्रियव्रत शर्मा की जमानत देता हूँ।'' उसकी जमानत स्वीकार कर ली गई।

शर्माजी ने कहा, ''मैं आपको तो जानता भी नहीं हूँ। आप मेरी जमानत क्यों दे रहे हैं?''

जमानतदार ने कहा, ''शर्माजी, आपकी जमानत देने के लिए मुझे बहादुर सिंह ने भेजा है।'' अब शर्माजी हारे हुए जुआरी की भाँति लौटकर घर आ गए थे।

अगले दिन से शर्माजी के पास गाँव-पड़ोस के लोग आने लगे थे और कह रहे थे, ''शर्माजी, यह तो सभी लोग जानते हैं कि जमीन आपकी है और जबरदस्ती बहादुर ने हड़प है, लेकिन अब भी सँभल जाओ तो हितकर रहेगा। वह आपका ट्रांसफर भी कहीं बहुत दूर करवा देगा। झगड़ा-मारपीट भी करवा सकता है। कोई झूठा केस आप पर लदवा सकता है और जमीन तो आपको वापस मिलनी नहीं है, न ही वह उसकी कीमत देनेवाला है। भलाई तो इसी में है कि आप उससे राजीनामा कर लें, और यह बात हम लोग आपकी भलाई के लिए ही कह रहे हैं।''

बस ऐसे ही शनिवार बीत गया और शर्माजी अपनी असहाय स्थिति पर सोचते रहे कि मेरी अपनी भूमि पर अतिक्रमण कर हड़प ली गई है और मैं ही अब राजीनामा कर लूँ कि मुझे कोई परेशानी नहीं है। मैं सहमत हो जाऊँ, यह कैसा न्याय है? इसी उधेड़बुन में अवकाश का पूरा समय व्यतीत हो गया।

अगले दिन वह उदास मन से अपने विद्यालय पहुँचे। उन्हें बारहवीं कक्षा के छात्रों को प्रजातंत्र की विशेषताओं पर व्याख्यान देना था। शर्माजी कक्षा में आकर शांत बैठ गए। उनका मन कुछ भी पढ़ाने का नहीं हो रहा था। एक छात्र ने खड़े होकर पूछा, ''सर, प्रजातंत्र की विशेषताएँ क्या हैं?'' शर्माजी ने कहा, ''विशेषताएँ नहीं विशेषता।''

''हाँ सर, बताइए।'' सब छात्र बोल उठे।

शर्माजी ने कहा, ''जिसकी लाठी उसकी भैंस,'' इतना वह कहकर कक्षा से बाहर चले गए।

मिश्रा मार्केट, मेन रोड पृथ्वीपुर
जिला-टीकमगढ़-४७२३३६

कविता

महाभारत एक खोज

• नलिन तिवारी

तोड़ ट्रैफिक के चक्रव्यूह को
प्राणों को धर वेदी पर
नित करता है सड़क पार
अभिमन्यु—धीर, वीर और दक्ष।

घूमकर देखो कभी
सरकारी दफ्तर के गलियारों में
एक समूचा इंद्रप्रस्थ सा
प्रस्तुत करता प्रत्येक कक्ष।

पढ़ा नहीं पाला कभी दानवीर का
इन स्टेशन के भिखमंगों से
वरना कुंडल-कवच के साथ-साथ
खो देता अपने कर्ण-वक्ष।

खिंचते ही रहते हैं चीर यहाँ
रोज असंख्य द्रौपदियों के
बसों, ट्रेनों फुटपाथों पर
विवश पितामह के समक्ष।

रण में दोनों ओर खड़ी
दुर्योधन की सेना है
क्या करोगे कृष्ण आज
लोगे तुम किसका पक्ष?

लोकतंत्र है यहाँ, यहाँ के सौ करोड़ सम्राट् हैं
एक-दो नहीं यहाँ पर, सौ करोड़ धृतराष्ट्र हैं
गली-गली में है कुरुक्षेत्र
लाक्षागृह हर एक इमारत है
जीवन में मची हुई रोज यहाँ
एक नई महाभारत है।
कोई कौरव-पांडव का खेल नहीं
यह आधुनिक भारत है।

एच १-५०३, जसमिनियम,
मगरपट्टा, हड़पसर,
पुणे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलेख

अज्ञेय : भारतीय आधुनिकता का संदर्भ

● कृष्णदत्त पालीवाल

नवंबर २०१० की बात है। एक दिन मेरे मित्र कविवर सौमित्र मोहन घर आए। बातचीत के दौरान उन्होंने मुझसे कहा कि 'आधुनिकता' पश्चिमी अवधारणा है, यह तो आप मानते हैं। यह जानते हुए भी कि आधुनिकता पश्चिमी अवधारणा है, अपने लेखों में भारतीय आधुनिकता की बात कहते थकते नहीं हैं। आप भारतीयता और उसके साथ आधुनिकता को मिलाकर एक अजीब तरह की स्थिति पैदा कर रहे हैं। सोचिए न, अज्ञेय की भारतीय आधुनिकता? कैसा लगता है, यह अवधारणात्मक गठबंधन। क्या यह गठबंधन आपको बेमेल नहीं लगता है? कविवर ने सहसा मुझे बीच संवाद में हतप्रभ कर दिया। उठते-उठते जाते समय यह भी कहा कि आप ऐसी गड़बड़ियाँ प्रायः करते हैं। मैं मानता हूँ, उनका बाण मुझे लग गया। अचानक याद आया कि 'भारतीय आधुनिकता' पद का प्रयोग तो अज्ञेय, रघुवीर सहाय और रमेश चंद्र शाह धड़ल्ले से करते रहे हैं। अज्ञेयजी पर जब 'पूर्वग्रह' का अंक निकला था तो रघुवीर सहाय और रमेश चंद्र शाह दोनों ने 'भारतीय आधुनिकता' शीर्षक से निबंध लिखे हैं। मेरी स्मृति ने मेरा साथ दिया—माँ सरस्वती की कृपा, वरना आज तो उत्तर-आधुनिकतावाद के समय में स्मृति-भ्रंश की आँधी चल रही है। 'हमारी-स्मृति' पर हर ओर से आक्रमण हो रहा है, ताकि हमें कुछ भी याद न रहे। अज्ञेयजी ने 'स्मृति के परिदृश्य' शीर्षक से साहित्य अकादेमी, दिल्ली के दो व्याख्यानों में 'स्मृति' पर होनेवाले हमले को लेकर गहरी चिंता व्यक्त की है।

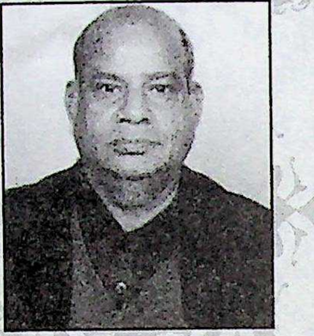
सुपरिचित आलोचक; प्रोफेसर, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय।

यह प्रश्न कई बार कई कोणों से उठाया जाता रहा है कि भारतीय आधुनिकता जैसी कोई चीज है क्या? है तो क्या है वह? कुछ लोग कहते हैं, हम भारतीय पुराने मूल्यों से जकड़कर जीते हैं। दूसरी तरह के अन्य लोग कहते हैं कि हम भारतीयों ने निरंतर प्रश्नाकुल होकर हर तरह के चिंतन पर प्रश्न उठाए हैं और अस्वीकार का साहस ही हमारी शक्ति रही है। इसलिए हम सच्ची विवेक बुद्धि से आधुनिकता में जीने वाले लोग हैं। व्यवस्था में निरंतर बदलाव के लिए प्राण जोखिम में डालकर हमने आवाज उठाई है। इधर आधुनिकता का भारतीय रूप नवीन राजनीतिक तथा नैतिक मूल्य चेतना से उपजा है, जिसका संदर्भ हमारे इतिहास, भूगोल, कला-साहित्य की समझ से है। पराधीनता के विरुद्ध मुक्ति संग्राम की चेतना हमारी इस अर्थ में निष्पन्न आधुनिकता है। सर्जनात्मक दृष्टि से संपन्न जीवन-दृष्टि के लिए रूढ़ियों, बद्धताओं, जड़ताओं, पतनशील मनोवृत्तियों, जकड़ी प्रवृत्तियों का हमने खुलकर निषेध किया है। जड़ताओं पर आक्रमण आधुनिकता का लक्षण हमारे बदलाव के लिए निरंतर प्रस्तुत भारतीयता में रहा है। वैदिक संस्कृति के विरुद्ध गौतम बुद्ध की विचार-क्रांति का बीज भाव आधुनिकता नहीं है क्या? निषेध आधुनिकता की ऐसी कृति रही है कि नकारात्मक मूल्य, अलोकतंत्रीय व्यवस्था, अरचनात्मक चिंतन, यथास्थिति का विरोध; हमारी आधुनिकता की मौलिकता कही जा सकती है। मानव-पात्र के कल्याण के लिए निरंतर खोज, त्याग, तप, चिंतन, विराग आधुनिकता से जुड़ी समाज के उत्कर्ष की चिंता है। इस चिंता के कारण ही मानव के पूल अधिकारों के लिए संघर्ष आधुनिक दृष्टि है और बदलाव को स्वीकार करनेवाली मानसिकता। प्रकृति को दुहना, प्रकृति को दासी बनाना, प्रकृति के स्वामी बनने की आकांक्षा पश्चिम के वैज्ञानिक विकास का एक दुःखता-करकता इतिहास हम भारतीयों के लिए रहा है। प्रकृति-विरोधी दुहनेवाली 'विकास' और 'प्रगति' की अवधारणा शोषक और अनैतिक है। इसी अनैतिक आकांक्षा में 'गुलामी' का मूल भाव निहित है।

भारत में पश्चिमी आधुनिकता का विरोध विचारक अरविंद के चिंतन में प्रथम बार मिलता है। अरविंद ने समझ की पूरी जिम्मदारी से घोषित किया कि पश्चिमी चिंतन से उपजी आधुनिकता की अवधारणा सबसे संहारक है। उसके पीछे भारत चला तो भारत अपना सबकुछ मूल्यवान् खो बैठेगा। भारत की संस्कृति, सभ्यता, साहित्य, दर्शन के मूल्यवान् को बचाना है तो हमें पश्चिम की आधुनिकता से बचना होगा। भारत में आधुनिकता की पहली समझ का रंग उभरा विवेकानंद में, लेकिन भारतीय आधुनिकता की अपनी समझ परंपराओं से उपजी समझ संपूर्ण स्वाधीनता की समझ के साथ आई। इस स्वाधीन चिंतन का विवेक वयस्क विस्तार डॉ. राममनोहर लोहिया, नरेंद्रदेव और जयप्रकाश नारायण ने किया। जवाहरलाल नेहरू के चिंतन पर पश्चिमी आधुनिकता का जादू तगड़ा था। फलतः वह भारतीय चिंतन स्त्रोतों के साथ न्याय करने में भटक गए और देश को भटका दिया। वह गांधी की भाषा नहीं बोले, माउंटबेटन की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा बोले, इसलिए भारत के विविध सर्जनात्मक आयाम ही धूल में ध्वस्त हो गए। भारत में तोड़नेवाली, अलगाव पैदा करनेवाली, व्यक्तिवादी घातक आधुनिकता ने बौद्धिकता के नाम पर, विज्ञान और वैज्ञानिक चिंतन के नाम पर पैर जमा लिये। हुआ यह कि हमने पराधीनता के कलंक को कलंक न मानकर उसे गौरव माना और पश्चिमी आधुनिकता के अंधानुकरण में लग गए। नतीजा यह हुआ कि हम आत्माधिकार के शिकार हो गए। धर्म, दर्शन, कला और साहित्य सभी क्षेत्रों में हमारा विश्वास डगमगा गया। इतिहास, भूगोल, संस्कृति पिछड़ेपन के कारण उपेक्षित होते गए और उपेक्षा का मंत्र पश्चिमवाद ने पढ़ा। साम्राज्यवादी लूटतंत्र पर आधारित शक्तियों के पास अपना स्वत्व भूले भारत को तोड़नेवाले फॉर्मूले थे। भारतेंदु बाबू 'स्वत्व निज भारत गहे' तथा मैथिलीशरण गुप्त 'भारत-भारती' में गौरव-गीत गाकर ही चुकते रहे। साहित्य, कला और दर्शन के क्षेत्र में भारतीय स्वाधीनता की कल्पना ही धूमाकुलित हो गई। अंततः विजय भारतीय संस्कारों, मूल्यों, चिंतन परंपराओं की नहीं हुई, उस पश्चिमी आधुनिकता की हुई, जिससे अरबिंद, गांधी, लोहिया बचने का संदेश देते थे। आज तो कभी-कभार गांधी, लोहिया, जयप्रकाश नारायण का नामजप रह गया है। बाकी उनका बचा ही क्या है? व्यतीत इतिहास की 'स्मृति' बची है बस!

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय के संस्कारों में भारत का स्वाधीनता आंदोलन, भारत का सांस्कृतिक नवजागरण रचा-बसा हुआ था। वह तिलक की क्रांतिकारी विचारधारा के प्रभाव में आए। फिर क्रांतिकारी आंदोलनों से चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, माखनलाल चतुर्वेदी के चिंतन से जुड़े और जेल-जीवन की यातनाएँ भोगीं। अज्ञेय में भारत से ब्रिटिश साम्राज्यवाद को खदेड़ देने का संकल्प स्थायी भाव बनता गया। वह क्रांतिकारी-देशभक्त और संपूर्ण स्वाधीनता के लिए संघर्ष करनेवाले साहित्य-संस्कृति नायक बने। उनके उपन्यास 'शेखर एक जीवनी' ने सच्चे मन से स्वाधीनता के नए आयाम प्रस्तुत किए। कविता में 'भग्नदूत', 'इत्यलम्', 'हरी घास पर क्षण भर' से यही मनोभूमिका अंतर्ध्वनित होती है। मानव को तोड़नेवाली, मानव को मानव से अलग करनेवाली मानसिक दासता का अज्ञेय ने विरोध किया और मानव अस्मिता, मानव की गरिमा, मानव के स्वाधीन चिंतन की महिमा को मूल्य माना। अज्ञेय के लिए आधुनिकता मानव को दमन, शोषण, अन्याय, अनैतिक कर्म से बचानेवाली आधुनिक दृष्टि है। अज्ञेय में निरंतर अपने को संस्कारित करनेवाली, माँजनेवाली दृष्टि ही आधुनिकता है। मूल बात यह है कि आधुनिकता पर प्रथम बार आधुनिक हिंदी साहित्य में बहस उठानेवाले, आधुनिकता की अवधारणा को वहाँ के केंद्र में लानेवाले अज्ञेय भारतीय सभ्यता का संकट पहचानते हैं और पश्चिमी आधुनिकता की सभी परिभाषाओं को अस्वीकार करते हुए अपनी मौलिक परिभाषा प्रस्तुत करते हैं। अज्ञेय के लिए आधुनिकता मानव-दासता के प्रति चलनेवाली सतत प्रक्रिया है। यह आधुनिकता नई पीढ़ियों को साथ लेकर चलने का नाम है। इस दृष्टि से हर समाज की अपनी मूल्य-दृष्टि, संस्कार दृष्टि की आधुनिकता होती है। इसलिए आधुनिक और 'आधुनिकता' का ठेका पश्चिमवाद-विज्ञानवाद, भूमंडलीकरणवाद, उत्तर-औद्योगिक पश्चिमी समाज, मीडिया क्रांति को नहीं दिया जा सकता; क्योंकि हर देश और समाज संस्कृति की आधुनिकता उसके इतिहास, भूगोल से निर्धारित होती है। एक स्वाधीन समाज में स्वाधीन मनुष्य का निर्माण और उसकी स्वाधीनता की रक्षा ही आधुनिकता कही जा सकती है। इस आधुनिकता में परंपरा की खोज को अज्ञेयजी अनिवार्य मानते हैं। इस रहस्य के सच से जिनका साक्षात्कार नहीं हुआ है वे तो अज्ञेय को भारत की परंपरा में 'आउटसाइडर' मानते हैं। अज्ञेय अपनी भारतीयता और भारतीय परंपराओं में ऐसे 'इनसाइडर' हैं कि मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद और सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की याद दिलाते हैं। दासबुद्धि से उपजी मूल्यमूढ़ आधुनिकता की पहचानें तो अज्ञेय के सृजन और चिंतन में पहचानें ही नहीं हैं।

हमने भारतीय लोकतंत्र में समाजवाद का जाप करनेवाली तानाशाही को आपातकाल-१९७५ में देखा है। इस आपातकाल का अज्ञेय ने विरोध किया। वह उस समय लोकनायक जयप्रकाश नारायण के साथ खुलकर थे। उनका उड़ चल हारिल अनथक पंखों की चोटों से पराधीनता के आकाश को ढहा रहा था। हिंदी के बहुत से चतुर सुजान आलोचक उस समय भी अज्ञेय पर पीछे लौटने का आरोप लगाने में चूक नहीं रहे थे, जबकि एक लंबी लड़ाई लड़ने के साथ अज्ञेय ने सत्तर में पुनर्वास नहीं किया। आपातकाल में वह 'नवभारत टाइम्स' के संपादक बनाए गए लेकिन अखबार ने सत्ता की दलाली नहीं की। कठिन समय में अखबार का स्वाभिमान बेचा नहीं। पश्चिमी मार्क्सवादी आधुनिकता के पैमानों से जो अज्ञेय के चिंतन को जाप रहे थे, उन्हें उस समय भी अज्ञेय रीतिवादी, कलावादी और व्यक्तिवादी अमेरिकी दलाल लग रहे थे। वामपंथियों की एक अच्छी-खासी टीम अज्ञेय को धिक्कारने में अपने को प्रसन्न-प्रगतिशील पा रही थी। जबकि इस समय और इससे आगे उन्हें पश्चिमी प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण के विनाश की चिंता सता रही थी।

अज्ञेय का सबसे बड़ा योगदान यह है कि वह हमें भारतीय विद्या (शास्त्र) और लोक दोनों से सजग बौद्धिक विवेक के साथ स्वाधीनता का अर्थ समझाते हैं। वे मानते हैं कि भारतीय परंपरा में 'इंटलेक्यचुअल' शब्द परिचय के प्रभाव से आया है और साहित्य में 'बुद्धिजीवी' कोई अच्छा नाम नहीं है। साधारणतया सभी पढ़े-लिखे 'बुद्धिजीवी' मान लिए जाते हैं। अन्यथा इंटेलेक्चुअल उसी को मानना चाहिए, जो सत्ता-प्रतिष्ठानों की दलाली से अलग रहकर जीवन के बुनियादी प्रश्नों पर स्वतंत्र ढंग से सोचता हो। जो शुद्ध विवेक वयस्कता पर आश्रित हो। भारत की स्वाधीनता की लड़ाई में जिन बुद्धिजीवियों ने भूमिका निभाई, वह इस कारण कि वे सक्रिय बुद्धिजीवी स्वार्थबुद्धि से ऊपर उठकर जोखिम उठाने को तैयार थे। स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद यह भूमिका ही नगण्य होती गई। बुद्धिजीवी लोकतंत्र का स्वतंत्र और जोखिम उठानेवाली शक्ति-पुरुष नहीं रहा। वह दल-विशेष का भोंपू बन गया। फलतः बुद्धिजीवी की क्रांति ही 'भ्रांति' का पर्याय बनती गई। आज का खतरनाक सामाजिक मूल्य है—'सब चलता है' इससे नैतिक मूल्यों का संकट पैदा हुआ। अज्ञेयजी ने माना है कि यह निःसंदेह एक बड़ा सांस्कृतिक संकट है, क्योंकि जो संस्कृति नैतिक मूल्यों पर आधारित नहीं होती, वह संस्कृति भी नहीं रहती। पश्चिमी आधुनिकता की प्रगति और विकास के नारे ने 'संस्कृति' की इस पूरी अवधारणा को ही उलझाकर भटका दिया है। हमने भौतिक संस्कृति को ही आधुनिकता का आधार मान लिया। अगर हम इसी आधार को मानते रहे तो पश्चिम के पिछलग्गू बनकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही रह जाएँगे। अंग्रेजी में चिंतन-अनुचिंतन का नतीजा होगा मौलिक चिंतन की संभावना से दूरी।

आपातकाल में अज्ञेयजी ने एक लेख लिखा—'जप की दहाड़।' इस लेख में कहा कि मौन की अभिव्यक्ति का एक साधन काव्य और विशेषकर रचनात्मक साहित्य में मानता हूँ। सविनय-अवज्ञा आंदोलन के युग में मौन समर्थ साधन था। किंतु आपातकाल में जो एक सन्नाटा सा साहित्यिक और पत्रकारी प्रकाशन में छाया और फिर सेंसर हटते ही अनेक प्रकार की चर्चाएँ होने लगीं। यह सूचियाँ बनने लगीं कि आपातकाल में किसने क्या किया? आपातकाल में प्रजातंत्र का लोप। लोकतंत्रात्मक-स्वाधीनता का एक महत्त्वपूर्ण अंग है कि हम सक्रिय राजनीतिक कर्मी न होने पर भी स्वतंत्र हैं। जनसाधारण के साधारणत्व की महिमा इसी में है, लेकिन राजनीतिक दंड तो 'स्वाधीनता' का गला दबाता है। जनसाधारण ने आपातकाल के बाद चुनाव हुए तो 'साधारण मतदाता ने अपने मतदान से अत्याचारी को हटाया और आजादी की पुनः प्रतिष्ठा की।' आपातकाल के मौन का या चुप का एक अर्थ था—और उसके बाद के चुप का भी एक अर्थ था। 'मौनं सम्मति लक्षणम्' को मानें तो भारत की बौद्धिक परंपरा पश्चिम की बौद्धिक परंपरा से भिन्न रही और यह भेद उपेक्षणीय नहीं है। चुप रहनेवाले साधारण जन ने अपना वोट आजादी के पक्ष में दिया। अज्ञेयजी ने लिखा है—'ऐसे मौके होते हैं जब चुप भी एक दहाड़ होती है और अधिनायक अगर उसे सुन सकता है तो उसी से उसकी नींद हराम हो जाती है। चुप की यह दहाड़ लोकतंत्र में ही नहीं, साधारणजन और मानव-मात्र में हमारी श्रद्धा का आधार है।' *(केंद्र और परिधि, पृ. २७)*

आपातकाल में अज्ञेयजी ने एक लेख लिखा—'जप की दहाड़।' इस लेख में कहा कि मौन की अभिव्यक्ति का एक साधन काव्य और विशेषकर रचनात्मक साहित्य में मानता हूँ। सविनय-अवज्ञा आंदोलन के युग में मौन समर्थ साधन था। किंतु आपातकाल में जो एक सन्नाटा सा साहित्यिक और पत्रकारी प्रकाशन में छाया और फिर सेंसर हटते ही अनेक प्रकार की चर्चाएँ होने लगीं। यह सूचियाँ बनने लगीं कि आपातकाल में किसने क्या किया? आपातकाल में प्रजातंत्र का लोप। लोकतंत्रात्मक-स्वाधीनता का एक महत्त्वपूर्ण अंग है कि हम सक्रिय राजनीतिक कर्मी न होने पर भी स्वतंत्र हैं। जनसाधारण के साधारणत्व की महिमा इसी में है, लेकिन राजनीतिक दंड तो 'स्वाधीनता' का गला दबाता है। जनसाधारण ने आपातकाल के बाद चुनाव हुए तो 'साधारण मतदाता ने अपने मतदान से अत्याचारी को हटाया और आजादी की पुनः प्रतिष्ठा की।'

आजादी से भी मोहभंग होता है। अंग्रेजी शासन से आजाद होकर भी हम आजाद समाज की स्थापना नहीं कर सके। इस मोहभंग से आक्रोश पैदा हुआ। हमने जाना कि वह आजादी नहीं मिली जो हमें चाहिए थी। आजादी के नाम पर धोखा हुआ है। इस धोखे से उदासीनता पनपी और साहित्य में अर्थहीनता का दर्शन। आजादी की पहली पीढ़ी असंतोष की पीढ़ी। पूरा युवा समाज क्रोध से उबल उठा। यह ध्यान देने की बात है कि आजादी का मूल्य रूप में अर्थ है—निरंतर जागरूकता। अज्ञेयजी ने इस आजादी के बाद के छल पर एक विवेक-संपन्न भारतीय की तरह लिखा,—'मुझे शिक्षा मिली, शिक्षा का आधार है—भाषा; पर भाषा मुझे नहीं मिली। लोग भाषा सीखकर एक भाषा में वाक् सिद्ध होते हैं। मैं कम-से-कम दो भाषाओं में गूँगा हूँ, जिस समय मैं अपनी सहज बोली में सोचना सीख रहा था, जिस समय मुझे गर्व होता कि मैं अपने को पहचानता हूँ, अपना निर्माता बल्कि अपना रचयिता हूँ, उस समय मैं गर्व कर रहा था कि मैं परायी लादी ओढ़ और ढो सकता हूँ, मैं अपना अनुवादक हूँ। यों शिक्षा मुझे मिली, लेकिन बे-पेंदी की।' *(वही, पृ. ३३)* 'मुझे सभी कुछ मिला, पर सब बेपेंदी का। शिक्षा मिली पर उसकी नींव भाषा नहीं मिली; आजादी मिली, लेकिन उसकी नींव आत्मगौरव नहीं मिला; राष्ट्रीयता मिली, लेकिन उसकी नींव अपनी ऐतिहासिक पहचान नहीं मिली।' इस तरह हमारी 'भारतीयता' के साथ दगा किया गया। सत्ता-सरकार ने अपने सामाजिक दायित्वों को पूरा नहीं किया। इसलिए 'भारतीयता' का संवेदन रचनात्मकता और स्वतंत्रता के साथ निष्पत्ति' पाने में असमर्थ रहा। साहित्य-संवेदन का विस्तार और परिष्कार परंपरा की सर्जनात्मकता से होता है। 'अपने-अपने अजनबी' के एक पात्र के सामने मृत्यु थी—पर वह निर्भय थी, क्योंकि वह एक काल में नहीं जीती थी। समूचे काल और काल-प्रवाह में जीती थी। इसलिए उसके पास स्मृति है, इतिहास है और जीवन से अर्थ पाने की आकांक्षा है। कहते हैं कि अज्ञेय ने इस उपन्यास को तीन-चार दिन में लिख दिया—लिपिक बुलाकर यहाँ सृजन-प्रेरणा का प्रवाह अपनी निरंतरता में 'अनंत' का स्पर्श करता है।

अज्ञेय ने 'सर्जना के क्षण' की भूमिका में ध्यान दिलाया है कि भारत की वाचन-श्रवण परंपरा को पश्चिमवाद ने निगल लिया। कविता की छपाई ने यह बदल दिया। प्रत्यक्ष श्रोता का स्थान अप्रत्यक्ष पाठक (और लेखक) ने ले लिया: सुननेवाले समाज के बदले पढ़नेवाली पब्लिक आ गई, प्रत्यक्ष संवाद के बदले परोक्ष प्रभाव महत्त्वपूर्ण हो गया। मेरा बाल्यकाल इसी संक्रमण का काल था। मेरे गुरु स्थानीय स्व. मैथिलीशरण गुप्त वाचिक परंपरा के अंतिम महाकवि थे। उनका शिष्य, जब मैं लिखने लगा तो नई रचना स्थिति के तर्क को पूरी तरह स्वीकार करके, और यह जान-मान करके कि नई रचना-स्थिति को, नई संप्रेषण स्थिति के नियामक प्रभाव को पूरी तरह स्वीकार करके ही 'आधुनिक' कवि हुआ जा सकता है, फिर वह आधुनिकता चाहे जितनी कठिनाइयाँ अपने स्वीकार के साथ लाए।

'जो कवि अपने को आधुनिक कहते हैं या मनवाना चाहते हैं, उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए पारंपरिक एक अवहेलना सूचक विशेषण होता है, मेरे लिए वैसा कदापि नहीं है।' आधुनिकता इसी अर्थ में संस्कारवान् होने की प्रक्रिया है कि वह परंपरा के भीतर से ही फूटती-पनपती और पुष्ट होती है। एकाएक परंपरा को अस्वीकृत करके आधुनिक होने का प्रयास अज्ञेय ने कभी किया। किया होता तो उनका संबंध जयशंकर प्रसाद से न होता। प्रसादजी से अज्ञेय का बहुत गहरा रिश्ता है। इस रिश्ते को कई भारतीय संदर्भों में जानने-समझने की जरूरत है। आलोचक कवि विजयदेव नारायण साहीजी ने 'लघुमानव के बहाने हिंदी कविता पर एक बहस' में प्रसाद अज्ञेय रिश्ते को समझाते हुए कहा, 'अज्ञेय को प्राय: 'आउटसाइडर' समझा जाता है, जबकि सच यह है कि दुनिया के किसी कवि के अगर अज्ञेय नजदीक हैं तो जयशंकर प्रसाद के। वे दोनों एक ही सिमिट्री के दो व्यक्तित्व हैं।

साहित्य में हमारी चिंता हमारी अपनी परंपरा को लेकर होनी चाहिए। लेकिन पश्चिमवाद के चक्कर में पड़कर उसकी चिंता हमने नहीं की। हम तो पश्चिम के विज्ञानवाद, तर्क-भौतिकतावाद, बौद्धिकतावाद की चर्चा में गर्क रहे। यह भूलकर कि संपूर्ण स्वाधीनता राजनीतिक स्वाधीनता से बड़ी चीज है। इसलिए भारतीय आधुनिकता के नाम पर हमारे ही बुद्धिजीवी चौंकते हैं और बेचैन होकर प्रश्न पूछते हैं कि भारतीय आधुनिकता जैसी कोई अवधारणा अपने यहाँ है क्या? उनकी निगाह में 'भारतीयता' और 'आधुनिकता' दो परस्पर-विरोधी बेमेल अवधारणा हैं। हमारी 'भारतीयता' में विवेकानंद, गांधी, नेहरू, लोहिया, जयप्रकाश नारायण और अंबेडकर भी 'आधुनिकता' में कितना समाते हैं, क्योंकि ये सभी या तो अपनी परंपराओं का पुन:भाष्य करते हैं या परंपराओं के प्रति विद्रोह। कभी-कभार भयंकर अस्वीकार का भाव। प्रश्न उठता है कि यह अस्वीकार का साहस ही तो 'भारतीय आधुनिकता' नहीं है? यह अस्वीकार का साहस हमारी पूरी चिंतन परंपरा में है। यह साहस गांधी, लोहिया में है, निराला, अज्ञेय में है। आलोचक प्रवर रामस्वरूप चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक 'अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या' कवि आलोचक रमेश चंद्र शाह ने 'अज्ञेय : वागर्थ का वैभव' तथा कवि-चिंतक नंदकिशोर आचार्य ने 'अज्ञेयजी की काव्य तितीर्षा' पुस्तक में यह प्रश्न उठाया है कि अज्ञेय की आधुनिकता का अर्थ क्या है? अज्ञेय की आधुनिकता संबंधी दृष्टि में निर्वैयक्तिकता और स्वाधीन व्यक्तित्व का चिंतन केंद्र में रहा है। अपने विशद के प्रति मुक्त-हृदय से आत्मदान, आत्म उन्मोचन और आत्म समर्पण। यह आत्मदान तो भारतीय संस्कृति का मूलाधार है, जिसमें मानव की सर्जनशीलता का रहस्य छिपा है। आधुनिकतावादी आंदोलन का मानववादी दृष्टिकोण व्यक्तिवाद में सिकुड़ गया था और यथार्थ विश्वयुद्ध की पीड़ा कराह से यातना में बदली दिखाई देती थी। इसलिए निर्मल वर्मा ने 'मानववाद की छलनाएँ' जैसा सुविचारित सप्रमाण लिखकर बताया कि पश्चिम के आधुनिक मानववाद के भीतर दमन-चक्र का क्रूर इतिहास लिखा गया। उस इतिहास का एक दरवाजा हिरोशिमा-नागासाकी की ओर खुलता है, जिसका संकेत अज्ञेय ने 'हिरोशिमा' शीर्षक अपनी कविता में दिया है। पश्चिमी मानववाद की आड़ में किया जानेवाला अपार मानव संहार एक अलग तरह की दास्तान कहता है। इस दास्तान में रेडिकल ह्यूमेनिज्म के लिए जगह कहाँ है?

अज्ञेय का परंपरा-चिंतन टी.एस. इलियट के परंपरा-चिंतन से पर्याप्त भिन्न है। इलियट से प्रभावित अज्ञेय अवश्य हैं, किंतु उनकी अनुकृति नहीं हैं। अज्ञेय के लिए परंपरा 'कोई ऐसी पोटली बाँधकर अलग रखी हुई चीज नहीं है, जिसे वह उठाकर सिर पर लाद ले और चल निकले।' उन्होंने कहा कि परंपरा का कवि के लिए कोई अर्थ नहीं है। जब तक वह उसे ठोक-बजाकर, तोड़-मरोड़कर, देखकर आत्मसात् नहीं कर लेता; जब तक वह एक इतना गहरा संस्कार नहीं बन जाती कि उसका चेष्टापूर्वक ध्यान रखकर उसका निर्वाह करना अनावश्यक न हो जाए। अगर कवि की आत्माभिव्यक्ति एक संस्कार विशेष के वेष्टन में ही सहज सामने आती है, तभी वह संस्कार देनेवाली परंपरा कवि की परंपरा है, नहीं तो वह इतिहास है, शास्त्र है, ज्ञान भंडार है, जिससे अपरिचित भी रहा जा सकता है।' *(दूसरा सप्तक— भूमिका)* अज्ञेय ने 'नदी के द्वीप' शीर्षक कविता में परंपरा को 'माँ है वह' कहा है, ऐसी माँ, जो हमें संस्कार देती है, माँजती है। कहना होगा कि अज्ञेय के सृजन-चिंतन में 'संस्कार' एक स्थायीभाव की तरह बार-बार सामने आता है। 'आत्मनेपद' में अज्ञेय ने घोषित तौर पर कहा कि 'संस्कारवान् होने की क्रिया को ही मैं आधुनिकता मानता हूँ।' अज्ञेय ने 'आधुनिकता : संवेदन और संप्रेषण' में यह स्वीकार किया कि 'सच बात यह है कि आधुनिकता क्या है, मैं नहीं जानता। मुझे इस बात की कभी चिंता नहीं हुई कि मैं आधुनिक हो ही जाऊँ या यह पड़ताल करूँ कि मैं आधुनिक हूँ या नहीं हूँ। लेकिन देश-विदेश में परंपरा और आधुनिकता को लेकर जोरदार बहसें हुई हैं। अज्ञेय ने उन्हें भीतर बाहर से समझने की कोशिश में कभी ढील नहीं आने दी। यह भी माना कि काल के साथ आधुनिकता का संबंध गहरा है। या यों कहें कि आधुनिकता काल के साथ एक नए प्रकार का संबंध है। इस दृष्टि से आधुनिकता मूलत: एक नए ढंग का काल-बोध है। नए काल-बोध पर आधारित संवेदन को आधुनिकता के केंद्र में रखना अनिवार्य है, क्योंकि संवेदन का परंपरा या परंपराओं से गहरा संबंध होता है। आधुनिकता एक दृष्टि है और संवेदन.का संस्कार। अत: आधुनिकीकरण, शहरीकरण, यांत्रिकीकरण, पश्चिमीकरण को आधुनिकता का पर्याय मानने की भूल हमें नहीं करनी चाहिए। साहित्य और कला नए संवेदन के साथ नए संप्रेषण को, वस्तु के बदले हुए पदार्थ को, संप्रेषण की बदली परिस्थितियों को सामने लाते हैं। इस तरह आधुनिकता की समस्या बदले संदर्भ की समस्या बन जाती है। रचना या कलाकृति 'नए समय' को स्थापित करती है—उस समय से उत्पन्न चुनौतियों को पहचाने बिना हम साहित्य कलाओं के नए परिवर्तनों को नहीं पहचान सकते हैं। उस बदलाव के कारणों को ठीक से न पहचान पाने पर हमारी आलोचना उथली-सपाट तथा बहुत हद तक अर्थहीन हो जाती है। यह हम सभी का अनुभव है कि विज्ञान की प्रगति ने काल की नई अवधारणा दी है। नया काल-बोध दिया है। नई जिज्ञासाओं के कारण प्रश्नाकुलता आधुनिक-बोध का एक लक्षण ही बन गया है। विज्ञान ने बताया है कि दिक्काल का एक सातत्य है, इसलिए एक के बिना दूसरे की पहचान नहीं हो सकती, फिर यह भी विज्ञान ने बताया कि काल अप्रमेय और अनिर्णीत है—इस प्रकार काल के साथ दिक् भी अनिश्चित हो गया। इसी अनिश्चय के द्वीप पर हम जीते हैं। यही हमारी आधुनिकता है। कभी समाज स्थिर था, आज समाज स्थिर नहीं है। चीजों के साथ हमारे रिश्ते बदले हैं—अस्मिता बोध बदला है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यंत्र विकास और मीडिया क्रांति ने एक नया ग्लोबल वर्ल्ड हमें दिया है। आधुनिकता का बदला हुआ काल-बोध और महत्त्वपूर्ण समस्याएँ आख्यान साहित्य या कथा साहित्य में सामने आया है। मानस का विखंडन, अमूर्तन, खंडित बिंब, अतियथार्थ, हाइपररियलिटी, यथार्थ के नाम पर छल, मिथक, फंतासी, ताल-लय की तनावपूर्ण टकराहट बहुत कुछ सामने आया है। कला के रूपाकार का प्रश्न भी आधुनिकता से जुड़ा हुआ सुलगता प्रश्न है। आज भी हमारे औपनिवेशिक मानस को पश्चिमवाद दूषित-प्रदूषित करता है। अज्ञेयजी ठीक कहते हैं कि आधुनिकता है तो संवेदन का एक नया आयाम है। काल के साथ एक नया संबंध है, निरा ऐतिहासिक संबंध नहीं, एक आनुभविक और आस्तित्विक संबंध। हम कह सकते हैं कि हिंदी के पास आधुनिकता का संस्कार है। इसी संस्कार से वह सदैव देश के संस्कारों परिवर्तनों को दिशा-दृष्टि देती रही है। गद्य हो या पद्य 'इशारे जिंदगी के' समझते हुए हिंदी समाज संस्कारों की रंगीन पट्टियों को चुनौती देता रहा है। अज्ञेय ने—

संवेदना ने ही विलग कर दी
हमारी अनुभूति हम से
यह जो लीक हमको मिली थी
अंधी गली थी।

इस ललकार को सुननेवाली संवेदना में आस्था का स्वर कम नहीं हुआ है—

बढ़े चाहे बोझ जितना,
शास्त्र का
इतिहास का
रूढ़ि के विन्यास का या सूक्त का
कम नहीं ललकार होती जिंदगी की
मोड़ अभी और भी है
कौन उसकी ओट, देखो झाँकता है।

कवि का मन संस्कार और संवेदना दोनों पारस्परिक मेल का आकांक्षी है। संवेदना विहीन संस्कार यथास्थितिवाद में बदल जाता है। यही कवि कर्म का अवसान है। संस्कारित करनेवाली परंपरा का अर्थ है—सातत्य और परिवर्तन। अज्ञेय संस्कार और संवेदना, भारतीयता और आधुनिकता के द्वंद्वात्मक रिश्तों को कभी विस्मृत नहीं करते। तभी तो वह संस्कार और संवेदना के बीच सेतु, आस्था, भक्ति, गीत, यातना और साधना है। आज का जीवन विवेक क्रियाशील बौद्धिकता का सहयोगी है, जिसमें धर्म और कृति दोनों का सामंजस्य है। भारत ने एलीटिस्ट 'इलियट' का पीछा नहीं किया और डी.एच. लॉरेंस के प्रेम-दर्शन का पाठ करने के बाद भी नई राह निकाली। यह नई राह 'नदी के द्वीप' उपन्यास की कथ्यात्मक संवेदना में दिखाई देती है, जहाँ रेखा भुवन को नया जीवन संदेश गौरा के साथ जीने का देती है। अज्ञेय ने 'त्रिशंकु' के निबंध 'संस्कृति और परिस्थिति' में डी.एच. लॉरेंस को हर हिचकी के साथ याद किया है। क्यों? इसलिए कि लॉरेंस यूरोप के सांस्कृतिक संकट की गंभीरता से व्याख्या कर रहे थे। उनका यह कहना कि 'नया इंगलैंड पुराने इंग्लैंड को मिटा रहा है और जो नैरंतर्य है, वह ऑर्गेनिक नहीं, यांत्रिक है।' अज्ञेय को पोढ़ा अनुभव है कि ऑर्गेनिक नैरंतर्य ही संस्कार और संवेदना की रगड़ से संस्कारवान होने की प्रक्रिया है। उन्होंने यह विचार प्रस्तुत किया है कि 'स्वस्थ संस्कृति में हम नागरिक को स्वतंत्र छोड़कर आशा कर सकते हैं कि उसकी परिस्थिति से ही उसकी संस्कृति उत्पन्न और नियमित होगी। किंतु आज हम यदि जीवन के गौरव की रक्षा करना चाहते हैं तो हमें परखने और मुकाबला करने की शक्ति को संगठित करना होगा, हमें एक आयोजक राष्ट्र का निर्माण करना होगा। अज्ञेय के इस कथन पर आलोचक रमेश चंद्र शाह ने 'भारतीय आधुनिकता' शीर्षक अपने निबंध में कहा है कि आलोचक राष्ट्र के निर्माण की यह संकल्पना अज्ञेय की भारतीय आधुनिकता का पहला पड़ाव है।' क्योंकि संस्कृति अतीत, वर्तमान, भविष्य तीनों की त्रिवेणी धारा है और बिना गहरी और विस्तृत अनुभूति के संस्कृति नहीं है। यह अलग बात है कि आज संस्कृति सर्वाधिक विवादास्पद अवधारणा है और एक बड़ा बौद्धिकों का समूह संस्कृति की अवधारणा को लेकर बिदकता है, लेकिन अज्ञेय भारतीय संस्कृति पर स्थिर मन से सोचते हैं और टी.एस. इलियट के लेख का 'रूढ़ि और मौलिकता' नाम से भावानुवाद करते हैं तथा इलियट के दृष्टिकोण से अपने दृष्टिकोण को अलग कर लेते हैं। अज्ञेय इस अनुवाद में कभी 'रस' पर निगाह केंद्रित करते हैं, कभी 'आत्मदान' पर और निर्वैयक्तिकता सिद्धांत को भारतीय साधारणीकरण सिद्धांत में शरण देकर आत्मसुख पाते हैं। भारतीय काव्यशास्त्र की पुनःर्रचना में सृजन प्रक्रिया का निर्वैयक्तिकतावादी सिद्धांत एक नया आलोक पा जाता है। आज अज्ञेय के आलोचना सिद्धांतों को विचार के केंद्र में लाने पर हम पाते हैं कि वह पश्चिम से प्रभावित तो हैं, किंतु नकलची नहीं। भारतीय काव्य सिद्धांतों की नवीन व्याख्या में उनका मन जीवन भर रमता रहा है। इसलिए इस क्षेत्र में अज्ञेय को लेकर भारी अनुसंधान की आवश्यकता है। अज्ञेय की भारतीय आधुनिकता उनके कविकर्म के साथ आलोचना कर्म में बड़ा खजाना है।

अज्ञेयजी के सृजन और चिंतन की आधुनिकता इस गहन अर्थ में भारतीयता का पर्याय है कि वह भारतीयता पर, कदम-कदम पर तर्क करती है। प्रश्नचिह्न लगाती है और नचिकेता-भाव से जूझती है। अपने प्रसिद्ध निबंध 'भारतीयता' में अज्ञेय ने गहन विचार विश्लेषण के बाद माना है कि भारत की आत्मा सनातन है। भारतीयता केवल भौगोलिक परिवृत्ति की छाप नहीं, एक विशिष्ट आध्यात्मिक गुण है। जो भारतीय को सारे संसार से पृथक् करता है। भारतीयता मानवीयता का निचोड़ है, उसकी हृदय मणि है, उसका शिरसावतंस है। उसके नाक का बेसर है।' *(आत्मपरक, पृ. ८४)* और अज्ञेय स्वयं को भारतीयता के नाक का बेसर मानने में गौरव का अनुभव करते हैं। वह प्रश्न पूछते हैं कि 'भारतीयता आखिर है क्या? भारत की आत्मा का वैशिष्ट्य किस में? तो वे अचकचा जाएँगे। फिर खिसियानी सी हँसी हँस देंगे।' हमें लज्जित होने की नहीं, सांस्कृतिक-ऐतिहासिक परंपराओं को परखने की जरूरत है। सांस्कृतिक परंपराओं में हमारा जातिगत सामूहिक मन मौजूद है, जो हजारों वर्षों में निर्मित हुआ है। हमें परंपरा को कसौटी पर कसकर कामना होगा, 'क्योंकि ऐतिहासिक परंपरा कोई पोटली बाँधकर रखा हुआ पाथेय नहीं है, जिसे उठाकर हम चल निकलें। वह रस है, जिसे हम बूँद-बूँद अपने में संचय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हैं या नहीं करते, कोरे रह जाते हैं।' (*वही, पृ. ८५*) भारतीय मानस प्राकृत जन-मानस है, जिसमें काल-प्रवाह के अनंत भाव की भावना है।'आज बहुधा भारतीय संस्कृति के जड़तत्त्वों को ही भारतीयता माना जाता है। कुछ लोग भारतीयता के समर्थन के नाम पर निरी जड़ता का समर्थन करते हैं। कुछ दूसरे जड़ता के विरोध के नाम पर संस्कृति से ही इनकार करना चाहते हैं।' इस स्थिती में हमें चाहिए कि हम बेलाग, सचेत, स्वाधीन जिज्ञासा से आगे देखें।

अज्ञेय यह ध्यान दिलाना नहीं भूलते हैं कि पश्चिम से हम प्रभावित ही नहीं हुए, हमने पश्चिम को प्रभावित भी किया है। आधुनिक होने का अर्थ परिचय की नकल नहीं है। उनका आग्रह है कि बदलती नई स्थिति-परिस्थिति में हम बदलें—जड़ता छोड़कर संस्कारी बनें, क्योंकि विश्व के किसी धर्म ने मानव को उतनी स्वाधीनता प्रदान नहीं की है, जितनी कि भारतीय धर्म ने। भारतीय धर्म हमें मुक्त करता है। धर्म और भारतीय स्वाधीनता एक-दूसरे के पर्याय हैं, जिसे सेकुलरवाद के अंधे प्रतिमान से समझना ही गलत है। हमारा 'धर्म' कहीं भी पश्चिम के रिलीजन का पर्याय नहीं है जैसा कि भ्रष्ट-अनुवाद से समझाया गया है। भ्रष्ट अनुवाद के कारण ही भारतीय धर्म की भारतीय आधुनिकता को नई पीढ़ी समझने में असमर्थ रही है। हम धर्म-चिंतन में पश्चिमवाद के पाप-बोध के चक्कर में नहीं पड़े। हमने तो प्रकृति के सहभाव के साथ आचरण की पवित्र नैतिकता का जीवन मूल्य स्वीकार किया है। नैतिकता ही अज्ञेय के लिए आधुनिकता की मूल समस्या रही है। अद्‌भुत बात यह है कि जयशंकर प्रसाद की तरह अज्ञेय भी सृजन और चिंतन में दर्शन से कन्नी नहीं काटते। बल्कि काव्यत्व में चाहे 'असाध्य वीणा' जैसी लंबी-कलात्मक कविता ही क्यों न हो, दर्शन को जज्ब किए रहते हैं। विजयदेव नारायण साही ने अज्ञेय के अंतरंग को टटोलकर कहा है, 'अज्ञेय ने दर्शन को अनुभूति में घुलने की राह निकाली।' अज्ञेय के लिए सनातन काल ऋत, तप, निष्ठा, राग और आवर्तीकाल की वह चेतना है, जिसे पश्चिम का आधुनिकतावादी मसीही दर्शन समझने में असमर्थ है। पश्चिमी आधुनिकता के पीछे पागल लोग आधुनिकता को नवीनता मानते हैं। और अज्ञान वश अज्ञेय को आधुनिकतावाद का हिंदी में पैगंबर मानकार खुश हो जाते हैं, जबकि अज्ञेय आधुनिकतावाद के चक्रव्यूह से बाहर काल का डमरूनमाद सुननेवाले संस्कारी, आधुनिकता के सर्जक और चिंतक हैं। कुछ प्रगतिवादियों ने मुक्तिबोध का गुण कीर्तन करने का और अज्ञेय को गरियाने का धंधा चला रखा है। उन्हें अज्ञेय के न तो जटिल संकल्प का ज्ञान है, न अज्ञेय की भारतीयता का। हिंदी आलोचना का एक रूढ़ि अज्ञेय को रहस्यवादी नवरहस्यवादी सिद्ध करने की भी रही है। अज्ञेय के बौद्धिक विद्रोह ने परंपरा द्रोही भारत द्रोही होने का मुखौटा नहीं लगाया और कहा कि मेरा रहस्यवाद ईश्वरवाद नहीं है—

मैं भी एक प्रवाह में हूँ
लेकिन मेरा रहस्यवाद ईश्वर की ओर उन्मुख नहीं है।
मैं इस असीम शक्ति से संबंध जोड़ना चाहता हूँ।
अभिभूत होना चाहता हूँ
जो मेरे भीतर है।

यह कविता अज्ञेय की काव्य-यात्रा में (१९३७) के आस-पास रची गई थी और इस चिंतन की असीम शक्ति ने 'असाध्य वीणा' में कहा कि जो महामौन सब में गाता है, वह विराट् ही प्रकृति लय का राग दीप्त विश्व है। अज्ञेय की बौद्धिक प्रश्नाकुलता में 'उस ज्योति से अभिषिक्त' होने की नकार नहीं है—उसके प्रति एक अटूट आस्था है। चक्रांत शिला और सागर मुद्रा की कविताओं का काव्यानुभव साक्षी है—अज्ञेय एक साधक की तरह शब्द ब्रह्म की ओर बढ़े हैं। 'शब्द' के समाज, काल और संप्रेषण पर कवि अज्ञेय ने पूरा जीवन समर्पित कर दिया है। 'शब्द और सत्य' कविता में कहा भी 'भर विस्फोटक इन्हें उड़ा दूँ। दोनों जो हैं—बंधु, सखा, चिर सहचर मेरे।' शब्द ही स्मृति है परंपरा है, पुरखा है, ब्रह्मा है—

तू काव्य
सदा वेंटित यथार्थ
चिर-तनित
भारहीन, गुरु
अव्यय

शब्द में समाया 'आत्म' ही आत्मसंभवा अभिव्यक्ति है, जिसमें रस सिद्ध कवि अपने को गाता है, पाता है। अपने को पहले खाली करता है, फिर भरता है। मुक्तिबोध की कविता बातूनी कविता है, जबकि अज्ञेय की कविता मौन में अर्थ-व्यंजना।

एक चिकना मौन
जिसमें मुखर तपती वासनाएँ—
दाह खोती
लीन होती हैं।

यह 'मौन' अनेकार्थक पाठ है, जिसे 'क्लोज रीडिंग' से समझने की जरूरत है। ध्यान रहे, अज्ञेय काव्य की अर्थ मीमांसा में इस मौन की बहुत बड़ी भूमिका है। इसमें दिक् और काल का अनंत आत्म-विस्तार है और आतंक मुक्ति का प्रियंवद आश्वासन। 'नर जिसकी अनझिप आँखों में नारायण की व्यथा भरी है' कविता में कहनेवाले अज्ञेय भारतीय तीर्थयात्राओं, भावयात्राओं में अपनी संस्कृति के स्रोत ही खेलते रहे। 'जन जनक-जानकी' की भावयात्रा के बाद 'भागवत भूमि यात्रा' को निकलना तथा उसके बाद गंगा, जमुना, नर्मदा के स्रोतों तक पहुँचने की आकांक्षा रखना। अपनी संस्कृति की स्मृति को जगाना ही था। इन भावयात्राओं के कारण विष्णुकांत शास्त्री जैसे भागवत लोग अज्ञेय के सृजन चिंतन में 'भक्ति' भाव को पाने लगे थे और स्वयं अज्ञेयजी का भीतरी अहसास था कि विराट् का संस्पर्श उन्हें भक्ति की ओर ले जा रहा है। उन्होंने पाया कि भक्ति में जड़ताओं को तोड़ने की मूल्य-दृष्टि है। पश्चिमी संस्कृति के आक्रमण से बहुत कुछ नष्ट हो गया है, लेकिन भक्ति की सर्जनात्मकता तो जैसे-तैसे बची है। लेकिन भारतीय आधुनिकता की मूल्य दृष्टि में मूल्यों की अर्थवत्ता की अनवरत खोज की प्रक्रिया है। यह खोज ही भारतीय आधुनिकता की मूल्य दृष्टि है।

ए-१०२/३, एस.एफ.एस. फ्लैट्स,
साकेत, नई दिल्ली-११००१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मरण

श्रीलालजी : यादें ही यादें

● गोपाल चतुर्वेदी

श्री लालजी से मेरी पहली भेंट पत्रकार और कवि स्व. सुरेंद्र चतुर्वेदी के माध्यम से हुई थी। वाकया 'रागदरबारी' के प्रकाशन के पहले का है। मेरी पहली नियुक्ति थी गोरखपुर में, जो तब पूर्वोत्तर रेलवे का मुख्यालय था। आज भी है। मैं लखनऊ आया था एक बैठक में। सुरेंद्र भाई के शब्दों में तब लखनऊ एक शहर था, इतना मैला-कुचैला न था, चंद्रभानु गुप्त का थैला न था। इसमें गुप्तजी की जगह किसी भी नेता का नाम जोड़ा जा सकता है। लखनऊ की गंदगी, भीड़ भरे अव्यवस्थित ट्रैफिक और जान हथेली पर रखकर रिक्शा-स्कूटर चलानेवालों को इससे कोई फर्क नहीं पड़ना है। वह रामभरोसे तब भी अपनी मंजिल की ओर चलते रहते थे और आज भी। कभी तोंद फुलाए कानून व्यवस्था का वर्दीधारी प्रतिनिधि उन्हें अपने बेंत से हाँकता है, कभी गाली से।

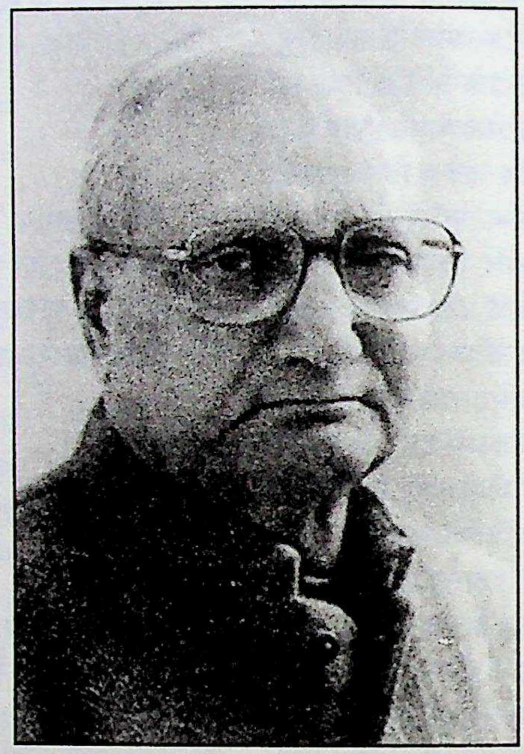

मैं रिक्शे से आ रहा था पूर्वोत्तर रेल के लखनऊ मंडल के दफ्तर, जो हजरतगंज के कॉफी-हाउस से सौ-सवा सौ मीटर पर स्थित है। तब सरकारी दफ्तरों ने कारों और काहिली में आज जैसी तरक्की नहीं की थी। कॉफी-हाउस के सामने सुरेंद्र भाई खड़े थे। उन्होंने आवाज दी। रिक्शा रुका। मुझसे बोले कि 'इसे विदा करो और मेरे साथ चलो, आज बड़ा खास दिन है।' मैंने मीटिंग का हवाला दिया तो उन्होंने तरकीब सुझाई कि 'फोन कर दो, दोपहर के बाद कर लेना मीटिंग।'

मेरे मन में भी जिज्ञासा थी कि आज कौन सा खास दिन है सुरेंद्रजी के जीवन का? वह मुझे कॉफी-हाउस के अंदर ले गए, जहाँ ठाकुर भाई (स्व. श्री ठाकुर प्रसाद सिंह) और 'ब्लिट्ज' के श्री बिशन कपूर आदि एक मेज पर मौजूद थे, जिसका अता-पता अंदर प्रवेश करते ही उन्मुक्त ठहाकों से लग जाता था। तब वह इस कॉफी-हाउस का शायद स्वर्ण युग था। लखनऊ के सारे प्रबुद्ध जन, लेखक, पत्रकारों का मिलन-स्थल था कॉफी-हाउस। ठाकुर भाई और बिशनजी से दुआ-सलाम के बाद मैंने फिर सुरेंद्रजी से खास दिन का राज जानना चाहा। वह मुसकराते रहे और राज बयाँ किया ठाकुर भाई ने कि आज सुरेंद्र ने अपनी खटारा हेरल्ड बेच दी है। कैश इनके कोट की जेब में है और अभी यह घर नहीं जा पाए हैं कि भाभी इनकी खाना-तलाशी लें और उसे जब्त कर लें। रुपए के आने और कार के जाने को सेलेब्रेट करना है। खास दिन है कि नहीं? सुरेंद्र भाई के जीवन में हर क्षण एक उत्सव था, दोस्त का आना हो या कार का जाना, नहीं तो फिर सियासत की उठा-पटक।

उसी दिन दोपहर को जब सुरेंद्रजी ने अपना मुख्यालय कॉफी-हाउस से अवध जिमखाना शिफ्ट किया तो श्रीलालजी से अपनी पहली मुलाकात हुई। हम लोग रात तक साथ थे। मेरी मीटिंग उस दिन न होनी थी, न हो पाई। श्रीलालजी के संसर्ग में समय कैसे बीता, पता ही न चला।

पहली बार 'राग दरबारी' का जिक्र मैंने श्रीलालजी से वहीं सुना। तब वह सरकारी भूलभुलैया से निकलने को छटपटा रही थी। सब को चिंता थी कि कब वह अनुमति पाकर सरकारी कारा से मुक्ति पाएगी। हममें किसी को अनुमान न था कि एक बार सरकार के चंगुल से छूटी तो मुक्ति पाकर छपते ही यह रचना लोकप्रियता और श्रेष्ठता का इतिहास रचेगी।

उल्लेखनीय तथ्य है कि तब तक श्रीलालजी बड़े लेखक बन चुके थे, इस अर्थ में कि उनके दो व्यंग्य संकलन 'अंगद का पाँव', 'यहाँ से वहाँ' और दो उपन्यास 'सूनी घाटी का सूरज' एवं 'अज्ञातवास' प्रकाशित हो चुके थे तथा 'राग दरबारी' लिखा जा चुका था।

उनमें सहज अपनापन, स्नेह और विनम्रता का स्वाभाविक पुट किसी को भी आकर्षित करता। मौन मुद्रा में पतलून, बुश्शर्ट में सजे श्रीलालजी सूझबूझवाले व अफसर लगते और बोलना शुरू करते तो एक पढ़े-लिखे बौद्धिक इनसान। सुरेंद्र भाई ने कविताओं का जिक्र छेड़ा तो श्रीलालजी ने प्रयाग विश्वविद्यालय के अपने 'प्रयाण गीत' का जिक्र, जो 'धर्मयुग' में छप चुका था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छात्रावासों के बाथरूम में पानी आना, न आना; कम आना, कभी-कभी उसका पूरा अभाव एक ऐसी कष्टप्रद स्थिति है जिससे होस्टल में रहनेवाले सब छात्र दो चार हुए हैं। उस स्थिति का वर्णन श्रीलालजी के ही शब्दों में—

''बूँद-बूँद से घंटे भर में बालटी भरती थी और चौथाई मिनट में रीती हो जाती थी। गुसलखाने के आगे 'क्यू' लगता था, पर 'क्यू' का कोई नियम जरूरी न था। नहानेवालों की भीड़ में दंगे की स्थिति पैदा हो जाती थी। इसी स्थिति ने कुछ नेता पैदा किए। नेताओं ने नहाने की व्यवस्था में सुधार करना चाहा। तब तक हम सीख गए थे कि किसी भी सुधार के लिए धुआँधार आंदोलन करना ही एकमात्र तरीका है। हम आंदोलन पर उतर आए।

''उस जुलूस के प्रयाण गीत की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

हम बिना बाथरूम के मर जाएँगे।
नाम दुनिया में अपना भी कर जाएँगे।
यह न पूछो कि मरकर किधर जाएँगे,
होगा पानी जिधर, बस उधर जाएँगे।
यह हमारा वतन भी अरब हो गया,
आज हम भी खलीफा के घर जाएँगे!''

श्रीलालजी इसको अपनी पहली व्यंग्य रचना मानते हैं। इलाहाबाद के 'अरबिस्तान' से तौलिया, बाल्टी, लोटे के साथ छात्रों का जत्था निकल पड़ा कुलपति के निवास की ओर। उसे 'खलीफा का घर' कहना भविष्य के व्यंग्य की संभावनाओं को इंगित करता है। इतना ही नहीं, उनके रचना-कर्म का रूमानी भ्रमजाल को तोड़कर यथार्थ की तलाश की संभावनाएँ भी इसमें निहित हैं। इससे उनकी व्यंग्य की अवधारणा भी स्पष्ट है। 'अज्ञेय : कुछ रंग, कुछ राग में' वह लिखते हैं—''व्यंग्य लेखन वस्तुतः एक सुशिक्षित मस्तिष्क की देन है।'' उपरोक्त प्रयाण गीत का 'अरब' और 'खलीफा' महज इस ओर इशारा भर है।

श्रीलालजी का एक व्यंग्य लेख 'अगली शताब्दी का शहर' का व्यंग्य यथार्थपरक है। यह एक निर्मम उदाहरण है कि वह अफसरी और अफसरों की सूझबूझ व कल्पना के कितने कायल हैं। नए शहर के निर्माण, उसे बसाने और पहचान देने की चर्चा चल रही है अफसरों में। एक अधिकारी चिंतित है। छोटे-मोटे चोर-उचक्के तो हर शहर में आ ही जाते हैं, पर उन्हें फिक्र माफिया की है। जब तक माफिया का आगमन न होगा, शहर बड़ा कैसे बनेगा! जरूरत माफिया को मूलभूत सुविधाएँ देने की है। अध्यक्ष ने इसकी चिंता छोड़ने को कहा, क्योंकि मुख्यमंत्री के पिता के नाम पर यह नया शहर बसाया जा रहा था और माफिया को प्रेरित करने को शहर का नामकरण ही काफी है। एक अन्य सदस्य ने सुझाया कि पहले जानवरों के बारे में क्यों न सोच लिया जाए। गाय-भैंस से चर्चा सुअर पर आ गई। उसके संवाद ज्ञानवर्धक हैं—

उस सदस्य ने कहा, ''हर नई आवासीय योजना में सड़कों पर घूमने के लिए, खुले फाटक से मकानों के अंदर घुसने के लिए, नालियों में लोटने के लिए सूअर चाहिए कि नहीं? इंसिफिलाइटिस फैलाने के लिए कोई इंतजाम सोचा है?''

एक सदस्य ने सहमति में सिर हिलाया, कहा, ''हाँ, सूअरों का होना तो लाजिमी है। मैं भी एक नई आवासीय कॉलोनी में रहता हूँ। वहाँ अभी बहुत से मकान नहीं बने हैं, सड़कें भी अधूरी हैं। पर सूअर पहले ही आ गए। कोई कह रहा था कि वहाँ आदमियों और सूअरों का अनुपात एक और तीन का है।''

अध्यक्ष सोचते रहे; फिर बोले, ''इस नए शहर में हम लोग भी तो बँगले बनवाएँगे। हममें से कई लोग रिटायर होकर वहाँ रहेंगे भी। इससे क्या समस्या का कुछ समाधान नहीं निकलेगा?''

श्रीलालजी के लेखन का वास्ता यथार्थ और उसके माध्यम से मनुष्य से है। जैसा वह स्वयं कहते हैं—

''कथालेखन में मैं जीवन के कुछ मूलभूत नैतिक मूल्यों से प्रतिबद्ध होते हुए भी यथार्थ के प्रति बहुत आकृष्ट हूँ। पर यथार्थ की यह धारणा इकहरी नहीं है, वह बहुस्तरीय है और उसके सभी स्तर—आध्यात्मिक, आभ्यंतरिक, भौतिक आदि—जटिल रूप से अंतर्गुंफित हैं।

मेरे सामने यही जटिल, क्षत-विक्षत, कभी उन्नत शिर, कभी अधोगत, कभी उल्लसित, कभी विखंडित मनुष्य है—यही मनुष्य, जो सबकुछ के बावजूद मेरे लिए सृष्टि का केंद्रबिंदु है, जिससे श्रेष्ठतर कोई नहीं है।''

वैचारिक प्रतिबद्धता कभी-कभी लेखन के विस्तृत दायरे को सीमित करती है। इस लिहाज से भी श्रीलालजी विरल हैं। उनकी मित्रता-घनिष्ठता परिमल के लेखकों से, नामवरजी से, विद्यानिवासजी से और कई अन्य बड़े लेखकों से रही, पर उनका लेखन हर प्रकार के प्रभाव से मुक्त और आजाद। कतई जल के कमल जैसा। उनकी प्रतिबद्धता न मार्क्सवाद से है न और किसी वाद से, बस वह श्रेष्ठ लेखन के प्रति प्रतिबद्ध रहे हैं। उनके अपने कथन के अनुसार, ''सड़क के कुछ कदम पर बाईं ओर खड़ा हूँ।''

उनका हर उपन्यास 'सूनी घाटी का सूरज' से लेकर 'राग-विराग' तक उनके उपरोक्त कथन का साक्षी है।

सरकारी अधिकारी होने के कारण ही श्रीलालजी सरकारी तंत्र की वैसी खबर ले पाए जैसी 'राग दरबारी' में उपलब्ध है। राग दरबारी की सरकारी अनुमति का पहले उल्लेख किया गया है। इसे श्रीलालजी ने कलमबद्ध भी किया है। उनके ही शब्दों में—''जिस नौकरशाही पर मैंने 'राग दरबारी' में इतनी प्रतिभा बरबाद की है, वही नौकरशाही प्रकाशन के पहले 'राग दरबारी' को ही बरबाद करने पर तुल गई। मेरी हैसियत एक सत्रह साल पुराने सरकारी नौकर की थी और अचानक सरकार ने 'राग दरबारी' की पांडुलिपि मँगाकर देखना चाहा। मैंने भी सोचा, जो होना हो पहले ही हो ले। पर हुआ यह कि कुछ भी नहीं हुआ। यानी सरकार पांडुलिपि लेकर चुपचाप बैठ गई। मैं 'राग दरबारी' के लँगड़ की तरह दफ्तरों और अफसरों के चक्कर काटता रहा। हारकर सोचा, नौकरी छोड़ दूँ। अज्ञेयजी ने मदद की। एक बड़े अखबारी प्रतिष्ठान में मेरी दूसरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नौकरी पक्की कर दी। तब कुछ तामझाम के साथ नौकरी छोड़ने के इरादे से मैंने एक लंबा पत्र राज्य सरकार के चीफ सेक्रेटरी को लिखा। खत तीखा और चटपटा था; उम्मीद थी कि उस पर कोई खबर बनेगी। पर पता चला कि अंत में चीफ सेक्रेटरी न्याय के पक्ष में, यानी मेरे पक्ष में आ गए हैं। आठ-दस दिन में ही इस उपन्यास के प्रकाशन की मुझे सहमति मिल गई और मैं देश के महान् पत्रकारों की कतार में शामिल होते-होते रह गया।''

मेरे मन में लखनऊ आने का आकर्षण और बढ़ गया श्रीलालजी से भेंट की अपेक्षा में। मुझे एक घटना का स्मरण है, जिसका मैं स्वयं साक्षी हूँ। हमारे एक भारतीय पुलिस सेवा के मित्र की शादी थी, जो लखनऊ से ही संपन्न होनी थी। माउंट आबू के प्रशिक्षण की सजा हम लोगों ने साथ-साथ ही भोगी थी। स्वाभाविक है कि मैं गोरखपुर से उनके जीवन के इस निर्णायक मोड़ में भाग लेने लखनऊ आता। दिन में उनसे भेंट हुई और इस निश्चय के साथ हम विदा हुए कि शाम को बारात में साथ रहेंगे। यह भी तय हुआ कि उत्सव के इस आनंद को बढ़ने के लिए कुछ गला भी तर होगा।

वह तय समय पर अवध जिमखाना आए। वहाँ सुरेंद्र भाई और श्रीलालजी ने उनका स्वागत किया। हम लोगों ने उनकी शादी के अतिरिक्त दुनिया भर की चर्चा की। जाने कब यह महफिल क्लब से कार्ल्टन होटल के हरे-भरे लॉन में आ जमी। परिचित आते-जाते रहे। किसी को ध्यान न आया कि अवसर विवाह का है। बारात का दूल्हा हमारे साथ है और अपने कुँवारेपन का अंतिम जश्न मना रहा है। वह तो गनीमत हुई कि उनके आई.पी.एस. छोटे भाई ने अपने पेशेवर प्रशिक्षण का सही व उचित प्रयोग किया और बड़े को हेरते-खोजते कार्ल्टन होटल तक आ पहुँचे, वरना वर की तो होती ही, उसके दोस्तों की भी खासी बदनामी होती। हमें यकीन है, न भाभी माफ करतीं, न घर में घुसने देतीं। हमें स्मरण है, सब वर को एक और पैग के लिए रोक रहे थे। सिर्फ श्रीलालजी ने समझदारी का सुझाव दिया था—'जाने भी दो। आज इसकी शादी है! और अब यह उसके लिए पूरी तरह तैयार है।'

श्रीलालजी जब भी करते हैं, समझदारी की ही बात करते हैं। उन्हें ढोंग, पाखंड से चिढ़ है। उनका पूरा लेखन इस मूल तथ्य का साक्षी है। सृजनात्मक स्तर पर यह उनके लेखन की बड़ी ताकत है।

'राग दरबारी' की प्रसिद्धि और लोकप्रियता का कारण उसका विलक्षण गद्य तथा आजाद भारत के गाँव का यथार्थपरक विस्तृत वर्णन है। इसमें गाँव की प्रचलित रूमानी छवि की झलक तक नहीं है। राग दरबारी की सफलता के मूल में उसके पात्र, विषयवस्तु नामवरजी के शब्दों में 'वक्र और बाँकी' भाषा है। श्रीलालजी गहराई से बारीकियों में जाते हैं। नामवरजी ने राग दरबारी से जो उद्धरण दिया है, वह पढ़ने से ताल्लुक रखता है—

''सब वर्गों की हँसी और ठहाके अलग-अलग होते हैं। कॉफी-हाउस में बैठे हुए साहित्यकारों का ठहाका कई जगहों से निकलता है, वह किसी के पेट की गहराई से निकलता है, किसी के गले से, किसी के मुँह से और उनमें से एकाध ऐसे भी रह जाते हैं, जो सिर्फ सोचते हैं कि ठहाका लगाया क्यों गया है? डिनर के बाद कॉफी पीते हुए, छके हुए अफसरों का ठहाका दूसरी किस्म का होता है। वह ज्यादा पेट की बड़ी ही अंदरूनी गहराई से निकलता है। उस ठहाके के घनत्व का उनकी साधारण हँसी के साथ वही अनुपात बैठता है, जो उनकी आमदनी का उनकी तनख्वाह से होता है। राजनीतिज्ञों का ठहाका सिर्फ मुँह के खोखल से निकलता है और उसके दो ही आयाम होते हैं, उसमें प्रायः गहराई नहीं होती। व्यापारियों का ठहाका होता ही नहीं है और अगर होता भी है तो ऐसे सूक्ष्म और सांकेतिक रूप में कि पता लग जाता है, ये इनकम टैक्स के डर से अपने ठहाके का स्टॉक बाहर नहीं निकालना चाहते। इन नौजवानों ने जो ठहाका लगाया था वह सबसे अलग था। यह शोहदों का ठहाका था, जो आदमी के गले से निकलता है, पर जान पड़ता है, मुर्गों, गीदड़ों और घोड़ों के गले से निकलता है।''

'राग-विराग' में नागरिक और फौजी

''सब वर्गों की हँसी और ठहाके अलग-अलग होते हैं। कॉफी-हाउस में बैठे हुए साहित्यकारों का ठहाका कई जगहों से निकलता है, वह किसी के पेट की गहराई से निकलता है, किसी के गले से, किसी के मुँह से और उनमें से एकाध ऐसे भी रह जाते हैं, जो सिर्फ सोचते हैं कि ठहाका लगाया क्यों गया है? डिनर के बाद कॉफी पीते हुए, छके हुए अफसरों का ठहाका दूसरी किस्म का होता है। वह ज्यादा पेट की बड़ी ही अंदरूनी गहराई से निकलता है। उस ठहाके के घनत्व का उनकी साधारण हँसी के साथ वही अनुपात बैठता है, जो उनकी आमदनी का उनकी तनख्वाह से होता है। राजनीतिज्ञों का ठहाका सिर्फ मुँह के खोखल से निकलता है और उसके दो ही आयाम होते हैं, उसमें प्रायः गहराई नहीं होती। व्यापारियों का ठहाका होता ही नहीं है और अगर होता भी है तो ऐसे सूक्ष्म और सांकेतिक रूप में कि पता लग जाता है, ये इनकम टैक्स के डर से अपने ठहाके का स्टॉक बाहर नहीं निकालना चाहते। इन नौजवानों ने जो ठहाका लगाया था। यह था वह सबसे अलग था, जो आदमी शोहदों का ठहाका था, जो आदमी के गले से निकलता है, पर जान पड़ता है, मुर्गों, गीदड़ों और घोड़ों के गले से निकलता है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इलाके के वर्णन से उपन्यास प्रारंभ होता है। शक्तिशाली ऐसी प्रवाहमयी भाषा का प्रभावी नमूना है यह—

''देश के हर बड़े शहर की तरह इस शहर में भी फौजी और नागरिक इलाके का सांस्कृतिक बँटवारा गहरी लाल लकीर की तरह दूर से दिखता है। इधर के शहरी बाजार में कई फुटपाथी मंदिर और मठिया, बेतरतीब खड़ी गाड़ियाँ, दुपहिए, भिखमंगे, खूबसूरत लड़कियाँ, लाउडस्पीकरों पर बजते हुए फोश गाने, उनसे भी ज्यादा फोश फिल्मी पोस्टर, बदरंग पर कभी शानदार रहीं डेढ़ सदी पुरानी इमारतें, उनसे सटा अधभूखी बुढ़ियों के बीच यौन दर्प से तना बिलकुल सीधे आसमान को बेधता हुआ कोई बहुखंडी भवन, निरर्थक लोगों की निरर्थक भीड़, जो सबकुछ के बावजूद कहीं किसी सार्थकता की तलाश में है।

''दूसरी और शांत सीधी सड़कें, उनके किनारे चिकनी घनी छाँववाले ऊँचे पेड़ों की कतारें, कुछ सवारियों और लोगों के बावजूद सड़कों की चिरंतन वीरानगी, कुछ दफ्तर जिनके खुले और बंद रहने का बाहर से पता नहीं चलता, सड़कों के किनारे लंबे-चौड़े आहातों में दूर-दूर बसे बँगले, जिनके लंबे मेहराबदार बरामदे और उनके पीछे बहुत ऊँची छतवाले कमरे अंग्रेजी राज की यादों में खोए हुए हैं।''

यह विषय के अनुरूप भाषा का चामत्कारिक वैविध्य उनके व्यंग्य, उपन्यास और आलोचना हर जगह मौजूद है। मैं बंधु सुशील सिद्धार्थ के मत का कायल हूँ, जब वह लिखते हैं—

''जो उन्होंने लिखा, उसने हिंदी के रचनात्मक गद्य को दो युगों में बाँट दिया—(१) श्रीलाल शुक्ल से पहले का हिंदी गद्य और (२) श्रीलाल शुक्ल के बाद का हिंदी गद्य। उनके बाद के लेखकों में जाने कितनों पर उनकी छाप है। अष्ट छाप नहीं, स्पष्ट छाप। फिर भी 'कहते हैं कि गालिब का है अंदाजे बयाँ और।' ऐसा महान् रचनाकार, जिस पर हिंदी को गर्व है।''

'राग दरबारी' की अपार और व्यापक प्रसिद्धि और सफलता ने जहाँ पैंतालीस वर्ष की अपेक्षाकृत अल्पायु में साहित्य अकादमी के सम्मान का हकदार बनवाया, वहीं उनके लेखन के साथ अन्याय भी किया। राग दरबारी के 'ब्रांड' की कई अन्य लेखक नकल कर चुके हैं, पर मूल को छूना तो दूर उसके पास तक भी नहीं पहुँच पाए हैं। जब कि राग दरबारी ब्रांड के निर्माता ने फिर उसके उत्पादन की कोशिश तक नहीं की। किसी भी रचना के विषय में उसके लेखक का मत आलोचकों से अधिक महत्त्व रखता है। राग दरबारी के बारे में श्रीलालजी उसमें व्यंग्य के आधिक्य को स्वीकार करते हैं और ऐसा क्यों है, यह भी रेखांकित करते हैं—

''दूसरी बात 'हास्य-व्यंग्य की अति' से संबंधित है। अगर 'राग दरबारी, परिहासात्मक अवज्ञा, व्यंग्य या 'हाई कॉमेडी' के मूड में लिख गया है तो यह बात गाँवों के उस मूड से मेल खाती है जहाँ विपत्तियों और संघर्षों के बावजूद लोग हर छोटी-छोटी बात से अपने को खुश रखने की कोशिश करते हैं। गाँव का आदमी अगर सफेद कॉलरवाले शहरी की तरह आत्मदया और कुंठा का शिकार हो जाए और उसे अपने व्यवहारों में भी दिखाने लगे तो जीवित रहना उसके लिए दुष्कर हो जाएगा और गाँव सामूहिक आत्महंताओं के केंद्र हो जाएँगे। विपत्तियों और संघर्षों को झेलने में नियतिवाद ही उनका एकमात्र शास्त्र नहीं है, जीवन के प्रति उनमें एक खुली हुई दृष्टि भी है, जो उतने ही कारगर एक-दूसरे अस्त्र की सृष्टि करती है, जिसका नाम परिहास-बोध है।

इतना निर्विवाद है कि श्रीलालजी एक श्रेष्ठ साहित्यकार, मनीषी, विचारक और इनसान थे, जिन्होंने अपने को कभी लेखन में तो नहीं ही दोहराया, पर उदारता के साथ स्नेह और आत्मीयता को खूब लुटाया और दोहराया, जिन्होंने निजी जीवन में कभी दोहरे मापदंडों का प्रयोग नहीं किया। साहित्य में उनका अतुलनीय योगदान न भुलाया जा सकता है न मित्रों-परिचितों से उनका सौम्य निश्छल व्यवहार और बहुआयामी व्यक्तित्व, जिसमें अध्ययनशीलता, साहित्य, संस्कृति, संगीत और स्नेह के रंग रह-रहकर झलकते थे।

ऐसा नहीं है कि श्रीलालजी ने व्यंग्य लिखा ही नहीं है। लिखा है, बखूबी लिखा है। पहले साहित्य के प्रोफेसर-आलोचकों ने व्यंग्य की परसाई, जोशी, त्यागी त्रयी को मान्यता दी और 'राग दरबारी' के बाद आज हम सब व्यंग्यकार उन्हें जबरन अपनी जमात में खींचने पर उतारू हैं। श्री परसाई, जोशी और त्यागी ने व्यंग्य निबंध लिखे हैं और व्यंग्य कॉलम भी। परसाईजी कहानियाँ और एक अदद उपन्यास 'रानी नागफनी की कहानी' (१९६१) के रचनाकार भी हैं। जो बहुतायत से लिखा गया है और लोकप्रिय हुआ है, वह फुटकर व्यंग्य कॉलमों के माध्यम से रचा गया व्यंग्य है। श्रीलालजी के संदर्भ में अरुण प्रकाश का मत भी कुछ ऐसा ही है—

''व्यंग्य कोई विधा न थी, टोन था। हिंदी में वह अधिकांशत: निबंधों में प्रकट हुआ। कुछ कहानियाँ भी उस टोन में लिखी गई, रघुवीर सहाय जैसों ने कविता में भी इसका उपयोग किया। श्रीलालजी इसे उपन्यास में भी घसीट ले गए। इस टोन का रचनात्मक प्रयोग क्लासिक स्तर तक पहुँचाया।

''श्रीलालजी उपन्यासकार ही हैं। 'राग दरबारी' का जो टोन है, भाषा है, वह 'सीमाएँ टूटती हैं, 'आदमी का जहर', 'मकान', 'पहला पड़ाव' या 'बिस्रामपुर का संत' में कहाँ हैं? कुछ व्यंग्यात्मक निबंधों और 'राग दरबारी' में व्यंग्य-टोन की प्रमुखता के कारण उसे व्यंग्य उपन्यास जैसी संज्ञा देना हिंदी आलोचना की भेड़ियाधसान प्रकृति का ही नमूना है।''

मुझे कभी-कभी लगता है कि सरकार अपने कर्मचारियों-अधिकारियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की रचनात्मक प्रतिभा को प्रस्फुटित होने और फलने-फूलने का पूरा अवसर देती है। तभी श्रीलालजी, डॉ. जगन्नाथ प्रसाद दास तथा अशोक वाजपेयी भारतीय साहित्य में महत्त्वपूर्ण योगदान देने में समर्थ रहे हैं। इनमें भी श्रीलालजी का अवदान अधिक उल्लेखनीय है, इस अर्थ में कि उन्होंने व्यवस्था में रहकर भी उसकी खामियाँ दिखाने का जोखिम लगातार उठाया। मैं उनके शासकीय जीवन से परिचित नहीं हूँ, पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि वह शर्तिया एक अत्यंत सक्षम और कार्यकुशल अधिकारी रहे होंगे, जो स्पष्टवादिता के वाबजूद भारतीय प्रशासनिक सेवा में पदोन्नति के योग्य पाए गए।

'मकान' का लेखन भी सरकारी कृपा का प्रतिफल है। कानुपर से लखनऊ नियुक्ति पर श्रीलालजी खासे वक्त बिना मकान और काम के रहे। दोपहर में क्या करते? एक होटल के लॉन में खाते-पीते समय गुजरता और उसी की स्टेशनरी पर इस उपन्यास का प्रारंभ भी हो गया।

जहाँ तक मेरा अनुभव है, शासकीय काम में मंत्रालय भले बदलते रहते हैं, पर कार्य की एकरसता और दोहराव में अंतर नहीं आता है। सरकारी सेवा का एक सकारात्मक पक्ष भी है। इस में सेवारत व्यक्ति श्रीलालजी जैसा संवेदनशील है तो उसका साबका अनाथ रामदास से भी पड़ता है, (सूनी घाटी का सूरज), कुँवर जयंती प्रसाद सिंह (विश्रामपुर के संत), राग दरबारी के लंगड़ से भी और 'पहला पड़ाव' के जमींदार परमात्मा से भी। इनसानों और अनुभवों की अर्जित अपार पूँजी की निधि उसके पास रहती है। श्रीलालजी ने अपने लेखन में इसका बहुत सार्थक और जीवंत-प्रयोग किया है। उन्होंने नौ उपन्यास लिखे हैं, यदि गब्बर सिंह और उसके साथी जैसे बाल उपन्यास को शामिल कर लें तो दस। पर उन्होंने कहीं अपने को दोहराया नहीं है। कौन जाने, इसके पीछे सरकारी काम के दोहराव की बोरियत ही जिम्मेदार हो!

यों श्रीलालजी अपनी ओर से कम ही साहित्य की चर्चा शुरू करते, यदि कोई दूसरा शुरुआत करे तो वह उसे हिंदी ही नहीं, विश्व साहित्य का संदर्भ देकर, अपना पक्ष रखने में समर्थ थे। उनका पढ़ने का माद्दा गजब का था। शुरुआती दौर में श्रीलालजी से मैंने अपने अंग्रेजी साहित्य का ज्ञान झाड़ने का प्रयास किया था। अब जो जिसे आता है, वह उसी की बात करता है। कुछ ही समय बाद हम अंग्रेजी साहित्य में प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए. करने की सारी हेकड़ी भूल गए। श्रीलालजी ने चाँसर से लेकर इलियट तक की कविताओं और हक्स्ले, बर्ट्रेंड रसेल की वैचारिक अवधारणाओं की चर्चा कर हमें चित्त कर दिया। मुझे तो उनकी पढ़ने, उसे याद रखने और समझने की क्षमता पर सुखद आश्चर्य होता है। श्रीलालजी में ज्ञान-बटोरने और संचित करने की अद्भुत क्षमता थी, जैसी आज के अधिकारियों में धन-संचय की होती है। श्रीलालजी ज्ञान-संचय को ही अपना धन मानते हैं। मेरी श्रीलालजी के छोटे दामाद सुनील से हार्दिक हमदर्दी है, जो खौफजदा रहे कि उनके जर्मनी में रहने और थोड़ी बहुत जर्मन जानने के कारण कहीं श्रीलालजी मूल जर्मन में ग्युंटर ग्रास पढ़ा कि नहीं और यद्रि पढ़ा तो, उनके लेखन के बारे में चर्चा न छेड़ दें।

श्रीलालजी की पीढ़ी के कई नामचीन व्यक्ति हैं। श्रीलालजी ने एक बार यों ही हँसते-हँसते मुझे बताया था कि वह पंडितजी याने विद्यानिवास मिश्र से चौदह दिन बड़े हैं। नामवरजी हों या स्व. विष्णु प्रभाकरजी अथवा दिवंगत विष्णुकांत शास्त्रीजी, इन सबमें एक समानता है। गजब की पढ़ाकू और अध्ययनशील पीढ़ी रही है यह। विदेशी-भारतीय-हर प्रकार साहित्य पढा है इसने। इतना ही नहीं, उसे गुना भी है और अपनी वैचारिक कसौटी पर कसा भी है। इसके साथ ही, इन सबकी स्मरण-शक्ति ऐसी विलक्षण कि सब कुछ याद रहे। शायद यही एक कारण है, इनके प्रचुर साहित्य सृजन का।

श्रीलालजी की अपनी मान्यता है कि उनके लिए 'व्यंग्य शैली के स्तर पर भंगिमा भर है तथा कथ्य के स्तर पर सामाजिक आलोचना की एक प्रविधि।'

अपनी-अपनी व्यंग्य की अवधारणा है। स्वतंत्रता के बाद से जो व्यंग्य लिखा गया है, उसकी गुणवत्ता और तादाद इतनी है कि उसे सिर्फ शैली कहकर खारिज नहीं किया जा सकता है। यह भी सच है कि श्रीलालजी ने 'राग दरबारी' में जिस निरंतरता और निमग्नता से व्यंग्य का प्रयोग किया है, वह उसके पहले कभी नहीं हुआ है। इस कालजयी कृति की लोकप्रियता सार्थक व्यंग्य की शक्ति का प्रमाण है। जरूरी नहीं है कि हर रचनाकार उपन्यास लिखने की सामर्थ्य रखता हो। यदि परसाई, शरद जोशी, रवींद्रनाथ त्यागी, शंकर पुणतांबेकर और बहुत से लेखक चार-पाँच पृष्ठों में अपनी बात कहने में समर्थ हैं तो इसमें गलत क्या है?

इतना निर्विवाद है कि श्रीलालजी एक श्रेष्ठ साहित्यकार, मनीषी, विचारक और इनसान थे, जिन्होंने अपने को कभी लेखन में तो नहीं ही दोहराया, पर उदारता के साथ स्नेह और आत्मीयता को खूब लुटाया और दोहराया, जिन्होंने निजी जीवन में कभी दोहरे मापदंडों का प्रयोग नहीं किया। साहित्य में उनका अतुलनीय योगदान न भुलाया जा सकता है न मित्रों-परिचितों से उनका सौम्य निश्छल व्यवहार और बहुआयामी व्यक्तित्व, जिसमें अध्ययनशीलता, साहित्य, संस्कृति, संगीत और स्नेह के रंग रह-रहकर झलकते थे।

श्रीलालजी उन अनूठे व्यक्तियों में हैं, जो आज हर क्षेत्र में सर्वत्र प्रचलित कथनी और करनी के अंतर से कतई मुक्त थे। उनमें न अफसर की हेकड़ी थी न किसी बड़े साहित्यकार होने का दर्प। उनका व्यवहार घर के उस बुजुर्ग का व्यवहार था, जो परिवार की कुशल-क्षेम के बारे में चिंतित है और मेहमान की खातिर में ध्यानमग्न। उनमें किसी को भी अपने सहज स्वाभाविक स्नेह में बाँधने की सामर्थ्य थी। ऐसे स्नेहशील बुजुर्ग का अभाव किसे न खलेगा? इतना अवश्य है कि उनके लेखन और अपनेपन की यादों का साथ भी एक बड़ा सहारा है!

९/५ राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन कविताएँ

मूल : ना. मोगसाले
अनुवाद : डी.एन. श्रीनाथ

मेरी कविताएँ

मेरी कविताएँ गांधीजी के जैसी
कहा एक कवि ने
मेरी तो गुलाबी फूल के जैसे
खिलती हैं अपने आप
कहा दूसरे ने
कविताओं के लिए कोई-कोई उपमा देते
आए हैं यहाँ, लोग भी और कवि लोग भी
मैं ही
अपनी कविता ऐसी ही है, यह तुलना
करने में असमर्थ क्योंकि
अब मैं एक नाटक कंपनी का अतिथि नट हूँ
इसलिए रोज शाम उसका रिहर्सल
चलता ही रहा है
रंग प्रयोग कब होगा, आप पूछ सकते हैं
अभी दिन का निश्चय नहीं हुआ है,
कहते आए हैं प्रबंधक
इस उलझन में फँस गया मैं
रोज नाटक का रिहर्सल करके
आकर घर
पत्नी से प्यास के लिए पानी,
भूख के लिए खाना माँगते
या अन्य पति-पत्नी के समान लड़ाई,
सरस बातों में लग जाऊँ तो
वह भी नाटक में रिहर्सल के समान
ही लगता है!
और मैं बातें कैसी भी करूँ तो वह
बड़ा ही नाटकीय है, कहती है पत्नी
लग जाने से हट जाना ज्यादा
मुश्किल है, यह इधर लग रहा है
जो वाणी नहीं कहती, उसे मौन रूप से कहना
मेरी कविताओं में मात्र
बातें करनी हैं तो बस कविताओं से!
इसलिए किसी भी तुलना के लिए मेरी कविताएँ
नहीं लगतीं उचित
तो भी मेरे जैसा ही है, यह तुलना हो
जाती है—
यह शक हो रहा है
इसलिए कहता हूँ मैं
सचमुच हमें मानव सहज रूप से बातें
करने के लिए (साहित्य का माध्यम न हो तो)
आता है?
इसलिए मेरी
कविता! जाओ—
आदमी की बोली बन जाओ
कहता हूँ, ठीक है न?

□

मोर मोर ही!

कैसे अंदर खींच लिया इस मोर के
वर्ण वैभव को
अपने अंदर मेरे ये नयन
हे भगवान्
मोर को देखकर मेरे नयन भी
मानो मोर ही हुआ है!

भूल गए हो शायद तुम्हारे ही से
सृष्टि किया गया इस मोर के सौंदर्य को
या
मेरे नयनों में नयन मिलाकर तुम देखोगे तो
यह तुम्हारा ही दिया हुआ आँखें नहीं हैं
यह सोचकर हो जाओगे विस्मित!

□

उसे थी आशा

उसे थी आशा
बड़ा शहर होना है उसे
नहीं हुई
किसी शहर में
कदम बनी किसी के!
उसे थी आशा
गरजता सागर बनूँ
नहीं हुई
एक तालाब के पास किसी के
उठाकर फेंकी हुई गगरी के
पानी ही होकर रही!
उसे थी आशा
बड़ा पेड़ बनूँ सड़क के किनारे का
नहीं हुई
स्वदेश त्याग आनेवाले पक्षियों को
बैठने का कुछ देर
सूखी डाल होकर ही चल बसी!

फिर भी
था उसके कदमों में
शहर का आत्मविश्वास
था उसके अस्तित्व में
पानी के मूल का निर्विकार
था उसके सपनों में
सूखी डाल का यौवन!
फिर भी वह
फिर भी वह
एक बार भी मेरे सपने में
नहीं आई, चली गई
और चली गई!

सा/अ

नवनीत
द्वितीय क्रॉस, अन्नाजी रॉय लेआउट,
I-स्टेज, विनोबानगर
शिवामोग्गा-५७७२०४ (कर्नाटक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवासी भारतीय : इतिहास के आईने में

● हेरंब चतुर्वेदी

वास्तव में भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की स्थापना के साथ ही भारतीयों के समाजार्थिक एवं राजनीतिक शोषण की मासिक प्रक्रिया भी प्रारंभ हो गई। इसी से संबद्ध है, आधुनिक युग के प्रवासी भारतीयों की समस्या। अठारहवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में यह क्रम शुरू हुआ, जब से भारतीय श्रमिकों को 'इंडेंचर्ड (इन्डेंचर्ड) लेबर' या 'शर्तबंदी श्रमिक' के रूप में सूरीनाम, मॉरीशस, फिजी इत्यादि देशों के गन्ने, कोका, फलों व मसालों के प्लांटेशन पर श्रम करने को बाध्य किया गया।

नेपोलियन के पतन के उपरांत, जब यूरोप के मानचित्र के पुनर्निर्माण एवं फ्रांसीसी क्रांति से उथल-पुथल को निष्प्रभावी करने के लिए वियना में १८१५ में यूरोपीय सम्मेलन का आयोजन हुआ, तब औपनिवेशिक साम्राज्यवाद के आसमान में ब्रिटेन का वर्चस्व एवं प्रभुत्व स्थापित हो गया और उपनिवेशों के साथ मनमानी करने की परिस्थितियाँ निर्मित हो गई थीं, किंतु १८१५ के वियना सम्मेलन में दास-प्रथा को प्रतिबंधित करने से लेकर १८२० का ट्रापाडु सम्मेलन में यह प्रभावी हो गया। अतः शोषण के तंत्र पर आधारित औपनिवेशिक साम्राज्यवाद ने 'सामाजिक डार्विनवाद' (सोशल डार्विनिज्म) का नारा दिया और नस्लीय श्रेष्ठता के सिद्धांत के आधार पर मनमानी का एक औचित्य तलाश डाला। अब अफ्रीका के दासों के स्थान पर (जो दास-व्यापार अब प्रतिबंधित हो गया था) भारत के ये 'शर्तबंदी' या 'इंडेंचर्ड' श्रमिक ही उनकी भरपाई करने लगे।

एक आँकड़े के अनुसार उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक से प्रथम विश्वयुद्ध के मध्य की अवधि में लगभग सवा करोड़ 'शर्तबंदी' श्रमिक तो सिर्फ पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार से भेड़-बकरियों की भाँति ट्रकों में ठूँसकर कलकत्ता डिपो ले जाए गए, जहाँ से वे इन देशों को रवाना किए गए थे। हमें स्मरण रहे कि इस दौर में ईस्ट इंडिया कंपनी का साम्राज्य इसी इलाके में सुदृढ़ था। १७६५ ई. की इलाहाबाद संधि द्वारा मुगल बादशाह से कंपनी ने बिहार, बंगाल एवं उड़ीसा की 'दीवानी' प्राप्त कर ली थी, अतः इस कार्यक्रम को अमलीजामा पहनाया जा सका। भेड़-बकरियों की ही भाँति पानी के जहाजों से 'डेक' के नीचे बने 'गोदाम' में ये 'अमानवीय' वातावरण में जाते हुए हजारों की संख्या में काल के गाल में समा जाते थे।

आधुनिक शोध ने स्थापित कर दिया है कि १८५७ की क्रांति के परिणामस्वरूप 'सुसंस्कृत' ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने प्रतिशोधात्मक कारवाई को जब गति प्रदान की तो इस प्रक्रिया में एक जबरदस्त गति आई- शर्तबंदी श्रमिकों का भारत से बाहर जाना, जो अब तक एक 'रिसाव' या 'ट्रिकिल' के रूप में ही था, उसने एक बाढ़ का रूप धारण कर लिया। यही नहीं, 'भारतीय राष्ट्रीय जागरण' की अभिव्यक्ति जब १८८५ ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के रूप में हुई तो उसी समय से इन 'भारतीय शर्तबंदी श्रमिकों' की दुर्दशा पर भी ध्यान दिया जाने लगा था। इसी प्रकार बर्मा को भारतीय प्रांत बनाए जाने का विरोध भी कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन में हुआ था।

इन 'प्रवासी भारतीयों' के विषय में वास्तविक जानकारी देकर उथल-पुथल पैदा करनेवाले हिंदीभाषी क्षेत्र के दो व्यक्तियों के नाम बहुत महत्त्वपूर्ण हैं—एक, पंडित तोताराम सनाढ्य, जो फिजी द्वीप में २१ वर्ष 'शर्तबंदी' की गुलामी से मुक्त होकर १९१४ ई. में भारतवर्ष लौटे थे और दूसरे थे, बनारसीदास चतुर्वेदी, जिन्होंने उनके इन इक्कीस वर्षों के अमानवीय त्रास को अभिव्यक्ति प्रदान की थी प्रसिद्ध कृति 'फिजी में मेरे २१ वर्ष'; उसका प्रकाशन जब १९१४ में हुआ तब भारतीय भाषाओं के साथ-साथ, आंग्ल-भाषा के समाचार-पत्रों में भी एक तहलका सा मच गया था। देखते-देखते इस कृति के तीन संस्करण प्रकाशित हो गए, बँगला एवं मराठी में इसके अनुवाद हुए, जबकि गुजराती भाषा में इसके चार पृथक् व स्वतंत्र अनुवाद हुए थे। आंग्ल भाषा में इसका अनुवाद दीनबंधु सी.एफ. एंड्रूज ने करवाया। वे इस अनुवाद को अपने साथ फिजी ले गए, जहाँ उसने लोकप्रियता के उस शिखर को छुआ, जहाँ वह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पढ़ी गई!

जैसा कि तय था, इस पुस्तक एवं उसके अनुवादों को भारत एवं फिजी दोनों देशों की ब्रिटिश सरकारों ने जब्त कर लिया, किंतु इसके प्रभाव के चलते, लोकप्रिय पत्रिकाओं, यथा 'विशाल भारत', 'मर्यादा', 'जीवन-साहित्य', 'चाँद', 'नवचेतना' (गुजराती) आदि ने भी अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रवासी' विशेषांक प्रकाशित किए। 'प्रवासी' समस्या के पूर्ण अध्ययन हेतु पहले डॉ. मणिलाल एवं उसके बाद दीनबंधु एंड्रूज को फिजी भेजा गया।

हमें याद रखना चाहिए कि प्रवासी भारतीयों के कष्टों, उन पर थोपे गए प्रतिबंधों तथा नस्लीय भेदभावों के विरुद्ध ही मोहनदास करमचंदजी गांधी ने आवाज बुलंद करके दक्षिण अफ्रीका में 'सत्याग्रह' का प्रयोग किया था। इस 'प्रवासी' की लड़ाई में गांधीजी का साथ दिया था, प्रो. हेनरी पोलक ने। १९२१ ई. में कांग्रेस ने भारतीयों के हितों को 'बलाए-ताक' रखकर, अंग्रेजों द्वारा अपने साम्राज्यीय हितों की रक्षा करने व सिद्ध करने हेतु उनकी तीव्र भर्त्सना की थी। यही नहीं, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के तीन क्रमिक अधिवेशनों में प्रवासी भारतीयों के विषय पर चिंतन के उपरांत इस विषय पर प्रस्ताव भी पारित किए। अतः गुवाहाटी (१९२६); मद्रास (१९२७) एवं कलकत्ता (१९२८) के ये अधिवेशन इस दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण हैं।

इसी के बाद अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी (ए.आई.सी.सी.) ने पं. जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक 'विदेश प्रकोष्ठ' गठित कर दिया, जिसके सचिव थे, डॉ. राम मनोहर लोहिया। इस प्रकोष्ठ की सक्रियता को गति १९३६ से मिली, जब पं. नेहरू एक बार पुनः कांग्रेस के अध्यक्ष बने। इसी क्रम में १९२४ ई. में कांग्रेस ने श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को पूर्वी अफ्रीका के 'प्रवासी भारतीयों' की स्थिति देखने-समझने हेतु कीनिया, युगांडा, रॉजानिया एवं जंजीबार भेजा था।

इसी के बाद अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी (ए.आई.सी.सी.) ने पं. जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक 'विदेश प्रकोष्ठ' गठित कर दिया, जिसके सचिव थे, डॉ. राम मनोहर लोहिया। इस प्रकोष्ठ की सक्रियता को गति १९३६ से मिली, जब पं. नेहरू एक बार पुनः कांग्रेस के अध्यक्ष बने। इसी क्रम में १९२४ ई. में कांग्रेस ने श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को पूर्वी अफ्रीका के 'प्रवासी भारतीयों' की स्थिति देखने-समझने हेतु कीनिया, युगांडा, रॉजानिया एवं जंजीबार भेजा था। इन्होंने प्रवासियों की वास्तविकता के साथ-साथ आंग्ल औपनिवेशिक-साम्राज्यवाद की विकृतियों को भी उद्घाटित किया। कैसे इस प्रकरण पर इतनी चेतना हो गई थी कि जागृति ने उद्वेग का रूप धारण करके आंग्ल-सत्ता पर जन-भावना का इतना दबाव बना दिया कि १९१४ से १९१६ के मध्य अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुर्खियाँ रंग लाईं। आंतरिक एवं अंतरराष्ट्रीय दबावों के चलते, अंग्रेज हुक्मरानों को 'गिरमिटिया' या 'शर्तबंदी' या 'इंडेंचर्ड' प्रथा के अंतर्गत भारतीय श्रमिकों की भरती १९१६ ई. में बंद करने का निर्णय भारी मन से लेने को बाध्य होना पड़ा।

भारत आजाद हुआ, विभाजन की त्रासदी के बाद की समस्याओं के समक्ष प्रवासी भारतीयों की समस्या अपने सबसे ज्वलंत रूप में सीलोन (श्रीलंका) में तमिल समस्या के रूप में उपस्थित हुई। १९६४ के शास्त्री-श्रीभावो समझौते एवं १९७४ के समझौते के बाद भी १९८० के दशक में जैसे इसका ज्वालामुखी फटा कि आई.पी.के.एफ. से वह और भी उलझ गया। अतः नई सहस्राब्दी में जब हमारे गणतंत्र ने आधी सदी का सफर तय कर लिया था, तब २००२ ई. में श्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार में यह क्रम शुरू हुआ, जिसने स्वतंत्रता-पूर्व की इस पहल को एक मूर्त एवं सार्थक रूप प्रदान कर दिया।

इस प्रकार 'प्रवासी भारतीय मंत्रालय' नामक एक पृथक् विभाग का गठन प्रवासियों को जोड़ने एवं उनकी समस्याओं से रू-ब-रू होने की दिशा में एक ठोस एवं सकारात्मक कदम था। इसके तहत भारत सरकार ने 'पर्सन ऑफ इंडियन ऑरिजिन' (पी.आई.ओ.) कार्ड बनाने का निर्णय लिया और प्रवासी भारतीयों को अपने (पैतृक) मातृदेश भारत से प्रत्यक्ष एवं सक्रिय रूप से संबद्ध करने हेतु एक उच्च-स्तरीय समिति भी गठित की गई। इसके तीन सुझाव थे—प्रथम, 'प्रवासी दिवस' मनाना; द्वितीय, 'प्रवासी सम्मान प्रदान करना'; एवं तृतीय, 'पी.आई.ओ. कार्ड की फीस को कम एवं व्यावहारिक बनाना!'

चूँकि गांधीजी ९ जनवरी, १९१५ ई. को दक्षिण अफ्रीका के दीर्घ प्रवास एवं प्रवासी भारतीयों के अधिकारों के लिए संघर्ष करके लौटे थे और भारत का इतिहास भी सदैव के लिए परिवर्तित कर दिया था। अतः इसी प्रतीकात्मक तिथि को ही 'प्रवासी दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया।

वस्तुतः 'वैश्वीकरण', 'उदारीकरण', भूमंडलीकरण' ने भी इस आंदोलन को गति एवं बल प्रदान किया। दूरियाँ घटने लगीं—प्रवासी भारतीयों एवं भारत सरकार के मध्य और सरकार में लाल फीताशाही का असर कम करने के ठोस उपाय—कदम उठाए जाने लगे थे। साथ ही सोवियत संघ के पतन के उपरांत 'शीत युद्ध' का वातावरण समाप्त हो गया। यही नहीं 'सूचना क्रांति' ने 'वैश्विक ग्राम' की अवधारणा को बल प्रदान करके इस क्षेत्र में भारतीयों की क्षमता एवं योग्यता को जिस प्रकार स्वीकार की एवं उसकी प्रशंसा प्रारंभ की, उससे प्रवासी भारतीयों की एक उज्ज्वल छवि विश्व-स्तर पर स्थायी होने लगी थी! वे स्वीकृत ही नहीं; प्रतिष्ठित ही नहीं, नई विश्व-व्यवस्था के विकास के अपरिहार्य पहियों के रूप में स्थापित हो रहे थे—भारत की अस्मिता एवं प्रतिष्ठा के मूर्त रूप हो गए थे। अतः यह कदम स्वाभाविक ही नहीं, अपरिहार्य है!

सा.अ.

८/५ ए, बैंक रोड,
इलाहाबाद-२११००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुश्किल है उनपर लिखना

● रंजन कुमार सिंह

कितना कठिन होता है अपने किसी प्रिय के बारे में लिखना, और वह प्रिय व्यक्ति यदि पिता हो तो कठिनाई और बढ़ जाती है। वह पिता यदि स्व. डॉ. शंकर दयाल सिंह हों तो कठिनाई कितनी ज्यादा होगी, यह समझना किसी दूसरे के लिए शायद संभव ही न हो। तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. शंकर दयाल शर्माजी से लेकर कवि सत्यनारायणजी तक ने, जिन्हें अपनी लेखनी का विषय बनाया हो, तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री पी.वी. नरसिंह राव से लेकर, ड्राइवर विनोद तक की आँखें जिनके लिए नम हो गई हों, उनके व्यक्तित्व की उद्दात्तता को सहजता से समझा जा सकता है। इनमें से हर किसी के पास उनसे जुड़े अनेकानेक संस्मरण थे और सँजोए रखने के लिए अनेकानेक आत्मीय क्षण।

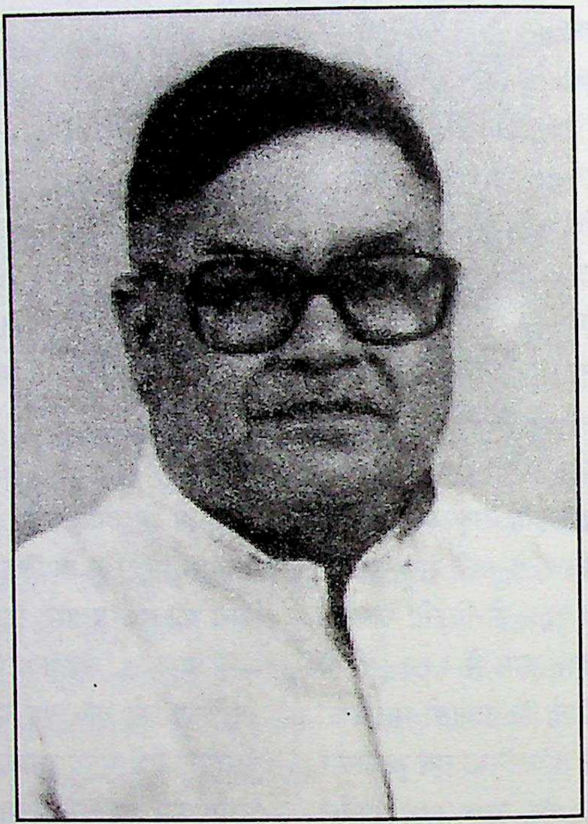

आश्चर्य होता है यह देखकर कि उनके देहावसान के सोलह साल बाद भी ऐसे लोगों की कमी नहीं, जो खुद को उनका सबसे करीबी होने का गौरव मानते हैं। मैं तो उनका पुत्र ही हूँ, मगर हिंदुस्तान (मुजफ्फरपुर) के संजय कुमार का अधिकार उन पर कम तो नहीं था? दिल्ली के हिमांशु जोशीजी हों या फिर पटना के श्रीश्री सत्यनारायणजी, भदोई के श्री अनिल सिंह हों या कोडरमा के श्री शकूर अहमद, इतने वर्षों बाद भी कौन उन्हें अपनी स्मृतियों से अलग कर पाया है?

इससे पहले भी मैंने अनेक बार उनके बारे में लिखने के लिए कलम उठाई, पर आँखें पनीली हो गईं और कागज धुँधले। एक बार फिर से हिम्मत जुटाकर, उन तमाम स्मृतियों को सँजोने की कोशिश कर रहा हूँ, तो यादों का सैलाब सा उमड़ पड़ा है। इन्हें समेट लेना, सँजो लेना क्या आसान होगा? हाँ, अब स्वयं को इतना संयत जरूर पा रहा हूँ कि कुछ हद तक असंपृक्त रहकर इस संपृक्तता को शब्दबद्ध कर सकूँ।

२३ नवंबर, १९९५। मैं और पिताजी दिल्ली से सवार हुए पटना राजधानी में। ट्रेन में जब भोजन के बाद आइसक्रीम परोसी गई तो उन्होंने अपने हिस्से की आइसक्रीम भी मुझे दे दी। सभी जानते थे कि आइसक्रीम उन्हें कितनी प्रिय थी। डॉ. कर्ण सिंहजी आज भी याद करते हैं कि जब कभी उन्हें भोजन पर बुलाते तो महारानी साहिबा खासतौर से उनके लिए आईसक्रीम जरूर रखती थीं और यहाँ वह अपने हिस्से की आइसक्रीम मेरे लिए छोड़ रहे थे। मना करने पर भी उनके हिस्से की आइसक्रीम मुझे ही खानी पड़ी। पता नहीं, यह खान-पान में परहेज के कारण था या फिर प्रिय लगनेवाली तमाम चीजों से वह खुद को काटने लगे थे? इससे पहले भी एक अन्य मौके पर मैंने यह गौर किया था। दो-चार दिन पहले ही मैं उनके साथ भोजन पर श्री श्यामसुंदरजी के यहाँ गया था। भोजन से पहले वहाँ सूखे मेवे परोसे गए। काजू उन्हें प्रिय था, पर वहाँ उन्होंने उसे हाथ भी नहीं लगाया।

अकसर अपनी प्रिय वस्तु के प्रति हमारा लगाव इतना गहरा होता है कि हम उसे अपने से अलग ही नहीं कर पाते। खान-पान की बात रहने दें तो दो चीजें उन्हें बेहद पसंद थीं—कलम और किताब, और इन्हीं दोनों चीजों को उन्होंने सबसे अधिक बाँटा। उनके चले जाने के बाद मुझे अनेक लोगों ने बताया कि उनकी दी हुई कलम उन्होंने सँभालकर रखी है। कलम का शौक उन्हें इतना था कि कहीं भी जाते तो अपने लिए कोई-न-कोई कलम जरूर लाते और देने का हौसला इतना था कि उसे बिना कुछ आगे-पीछे सोचे किसी की भी जेब में सहजता से खोंस देते थे। जहाँ तक किताब की बात है, उनका पुस्तकालय बेजोड़ था। उसमें मेरे दादाजी की धरोहर भी जुड़ी हुई थी। एक से एक अमूल्य पुस्तकें। लेखकों के मूल हस्ताक्षर के साथ। अपने बारे में कहते थे, मेरा तो जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी-कभी लगता है कि उन्हें अपने जाने का अहसास होने लगा था, तभी तो गुप्ताजी से लेकर निर्मलजी तक, हर किसी को उन्होंने अपनी तसवीर यह कहकर दी थी कि जाने कब काम आ जाए। औरंगाबाद के विकास में अपने संसदीय कोष का पैसा देते तो हँसते हुए कहते, 'यह मत समझिए कि मैं लोकसभा का उम्मीदवार होऊँगा, इसलिए यह दे रहा हूँ। मैं तो परलोकसभा का उम्मीदवार हूँ।' सोचकर आश्चर्य होता कि यदि उन्हें अपने चले जाने का इतना ही अहसास था तो फिर अंतिम साँस तक वह खुश कैसे रह पाए थे? क्या कोई आदमी ऐसा कर सकता है भला? दरअसल, वे आत्मसंतोष से इतने भरे-पूरे थे कि किसी कमी का कभी उन्हें अहसास ही नहीं होता था। न जमीन-जायदाद से मोह और न रुपए-पैसों का लालच।

भी पुस्तकें हैं, जीवनयापन भी पुस्तकें, प्रकाशक वह, लेखक वह, पाठक वह।' उनके कमरे में बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—'पुस्तकें खरीदकर पढ़ें, माँगकर नहीं, पर सच यह था कि किसी को माँगने की जरूरत भी नहीं होती थी। कोई माँगे, इसके पहले ही उसकी मुराद पूरी हो जाती। अपनी लिखी पुस्तकें तो वह किसी को भेंट में देकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते ही थे, अंत में तो उन्होंने अपनी समूची लाइब्रेरी ही वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय को दान में दे दी।

सांसद वह थे तो चढ़ावे भी आते ही रहते थे, पर भेंट में दी हुई किसी भी चीज को जस-का-तस दूसरे के हाथों में सौंप देना केवल उनके ही वश में था—भेंट का लेबल तक उतारे बिना। ऐसे ही किसी ने अपना पैकेट खोलकर देखा तो उसमें चाँदी का टी-सेट था। अचकचाकर उन्होंने कहा, 'भाई साहब, आप चाहें तो इसे रख लें। शायद आपको भी नहीं पता होगा कि इसमें क्या है?' पिताजी ने सहजता से कहा, 'मैं किसी चीज और रिश्ते को तौलता हूँ तो हर बार रिश्ते का पलड़ा ही मुझे भारी लगता है। यह चीज अब आपकी है, मेरी नहीं। मेरी होने को रहती तो मैं उसे खोल न लेता?' और उन्होंने अपनी यह आदत कभी नहीं बदली। यह जानते हुए भी कि इनमें कीमती सामान हो सकता है।

कभी-कभी लगता है कि उन्हें अपने जाने का अहसास होने लगा था, तभी तो गुप्ताजी से लेकर निर्मलजी तक, हर किसी को उन्होंने अपनी तसवीर यह कहकर दी थी कि जाने कब काम आ जाए। औरंगाबाद के विकास में अपने संसदीय कोष का पैसा देते तो हँसते हुए कहते, 'यह मत समझिए कि मैं लोकसभा का उम्मीदवार होऊँगा, इसलिए यह दे रहा हूँ। मैं तो परलोकसभा का उम्मीदवार हूँ।' सोचकर आश्चर्य होता कि यदि उन्हें अपने चले जाने का इतना ही अहसास था तो फिर अंतिम साँस तक वह खुश कैसे रह पाए थे? क्या कोई आदमी ऐसा कर सकता है भला? दरअसल, वे आत्मसंतोष से इतने भरे-पूरे थे कि किसी कमी का कभी उन्हें अहसास ही नहीं होता था। न जमीन-जायदाद से मोह और न रुपए-पैसों का लालच। एक सार्थक जीवन जी पाने का गहरा अहसास उनके भीतर था। कभी किसी से उनकी बक-झक हुई हो, पता नहीं। कभी किसी को उन्होंने रुलाया-सताया हो, याद नहीं। कभी किसी का तिरस्कार-अपमान उन्होंने किया हो, मालूम नहीं। जो उनके संपर्क में आया, उसे प्यार और अपनापन ही दिया। जिससे मिला, उसे भी और जिससे नहीं मिला, उसे भी। लिया कम, दिया ज्यादा। सामाजिक जीवन में रहते हुए ऐसा कम ही लोग कर पाते हैं। नाम से ही वे शंकर नहीं थे, बल्कि स्वभाव से भी वे औघड़ थे।

एक बात बचपन की जो भूलती नहीं है—१९७२ में अनेक राज्यों में विधानसभा के चुनाव होने थे। कांग्रेस की केंद्रीय चुनाव समिति के वह सदस्य थे। हरियाणा और हिमाचल प्रदेश के प्रभारी। टिकट के बँटवारे से लेकर उन राज्यों में सरकार के बनने तक हमारे घर में भारी चहल-पहल रही। जब सरकार बन गई तो हरियाणा के बंसीलालजी तथा हिमाचल के डॉ. परमार ने उन्हें सपरिवार आने का न्योता दिया। हम अपनी गाड़ी से इन राज्यों में पहुँचे तो हमारे लिए वहाँ राजकीय सम्मान की व्यवस्था थी। इस सम्मान से ही वह इतने पुलकित थे कि पूछिए मत! आज सोचता हूँ तो लगता है कि अगर कोई टिकट बाँट रहा हो तो वह रातो रात करोड़पति हो जाता है और जो उसके ही बनाए गए उम्मीदवारों की सरकार बन जाए, फिर तो मामला अरबों में चला जाता है। सिर्फ अपने सम्मान पर खुश रहना, कितनों के लिए संभव रह पाता है? लेकिन वह उन थोड़े लोगों में थे, जिनके लिए परिवेश का सुख ही बड़ा था। सम्मान की नजरों से देखा जाना उन्हें ज्यादा पसंद था, बनिस्बत पुरस्कार पाने के। तभी तो उनके गृह जिला औरंगाबाद में जब उनका नागरिक अभिनंदन किया गया तो उनकी खुशी का पारावार न था, लगा कि उन्होंने भारत रत्न पा लिया हो। हालाँकि यह भी विचित्र है, जिनकी सिफारिश और प्रयासों से अनेकों को पद्मश्री से लेकर पद्मभूषण मिला, उनको राष्ट्रीय स्तर पर अलंकृत करने की बात किसी ने भी नहीं सोची। अगर वह अपने लिए लड़ते तो यह कोई कठिन कार्य नहीं होता, पर राजनीति में रहकर भी वह राजनीति से परे थे और यही बात उन्हें बहुतों से अलग कर देती थी।

बहरहाल, ट्रेन जब सुबह-सुबह पटना पहुँची तो स्टेशन पर रूडी मिल गए। रूडी मेरे और छोटे भाई राजेश के मित्र हैं, पर पीढ़ियों के अंतर को पाटकर किसी को अपना लेना पिताजी के लिए आसान बात थी। अपनापन और आदेश के मिले-जुले स्वर में उन्होंने रूडी से कहा, 'घर चलो, सुबह की चाय तुम्हारे साथ पिऊँगा।'

रूडी ने भी अपनी गाड़ी हमारे पीछे लगा दी। घर पहुँच कर चाय की चुस्कियों के साथ अन्य बातों के अलावा पिताजी ने उसके आगे की राजनीति की बाबत जानना चाहा। विधायक रहते हुए भी रूडी को विधानसभा का टिकट नहीं मिला था, इसलिए स्वाभाविक तौर पर वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ हताशं थे और अपने राजनैतिक भविष्य को लेकर आशंकित भी। पिताजी ने उन्हें हिम्मत बँधाई और कहा कि लोकसभा की तैयारी करो। संसद् का गोल गुंबद तुम्हारा इंतजार कर रहा है। उनकी यह बात सच साबित हुई, पर रूडी की पीठ थपथपाकर उन्हें शाबाशी देने के लिए पिताजी नहीं रहे थे।

मुझे आज भी याद है, २४ नवंबर, १९९५ की सुबह; पिताजी कामता सदन के बरामदे में बैठे कुछ काम कर रहे थे, जब मैंने उनके पाँव छूकर उनसे विदा ली। अपने साले रजत की शादी में मुझे राँची जाना था, जबकि उसी दिन पिताजी को बिहार इंडस्ट्रीज एसोसिएशन द्वारा आयोजित संगोष्ठी में बिहार के आर्थिक हालात के विषय पर बोलना था और फिर रात में ही अपने अगले कार्यक्रम के लिए टूंडला के लिए निकल जाना था। २७ दिसंबर से संसद् का शीतकालीन सत्र आरंभ होने को था। अतः टूंडला के बाद उन्हें वापस दिल्ली पहुँचना था। अब लगता है, माँ से अंतिम बार मिलने के लिए ही वह एक दिन के लिए पटना आ पहुँचे थे। बिहार इंडस्ट्रीज एसोसिएशन का कार्यक्रम तो सिर्फ बहाना बन गया था।

बारात की सभी गाड़ियाँ राँची से रवाना हो गईं, पर मेरे श्वसुरजी ने मुझे रोक लिया। सबों को विदा कर चुकने के बाद वह मेरे पास आए। पिताजी के निधन का समाचार उन्होंने मुझे किन शब्दों में दिया, यह तो याद नहीं, पर इतना जरूर लगता है कि पिताजी के नामोल्लेख के साथ मैं मुसकराया था। शायद उन शब्दों का अर्थ मैं पकड़ ही नहीं पाया। कल ही तो साथ-साथ हम दोनों पटना पहुँचे थे। न तो मैंने कभी उन्हें बीमार देखा, ना ही कभी उन्हें अस्पताल ले जाने की जरूरत पड़ी। मैं ही क्यों, जिसने भी यह खबर सुनी, उसमें से शायद ही किसी को विश्वास हुआ होगा अपने कानों पर। हँसता, मुसकराता, ठहाके लगाता हुआ कोई आदमी क्या भला यूँ ही चला जाता है? आज अपने आसपास जब अनेक लोगों को रोते-कराहते अपनी मौत का इंतजार करते पाता हूँ तो लगता है, पिताजी ने अपनी राजसी मौत का वरण खुद आप ही किया था। वही तो कहा करते थे—

रहिए जहाँ में जब तलक, इंसाँ की शान से
वरना कफन उठाइए, उठिए जहान से।

जिस शान से वह हमारे बीच रहे, उसी शान से वह हमसे विदा भी हो गए। पर तब इस वरना''' का वक्त अभी कहाँ आया था? उनके निधन के बाद जब मैं श्री विश्वनाथ प्रताप सिंहजी से मिलने गया तो अन्य उद्गार के अलावा उन्होंने हमसे कहा, 'अभी तो शंकर दयालजी के सबसे स्वर्णिम दिन बाकी थे। राजनीति के दलदल में रहकर भी वह न सिर्फ बेदाग थे, बल्कि दल के सीखचों से परे हर दिल अजीज भी थे। उनकी निष्कलुषता और लोकप्रियता उन्हें सर्वोच्च पदों के लिए सर्वमान्यता दिलानेवाली थी, पर विधि को यह मंजूर नहीं हुआ।'

दुख तो होता ही है हमारे समाज पर, हमारी संस्कृति पर भागवद्-गीता के उपदेशों का असर चाहे कितना ही गहरा क्यों न हो, किसी स्वजन के बिछुड़ने का गम तो होता ही है। और वह स्वजन यदि पिता हो तो दुख का पहाड़ ही टूट पड़ता है। काश! २६ नवंबर की वह निष्ठुर सुबह कभी आई ही न होती!

४०२, त्रिशूल अपार्टमेंट,
वैशाली, गाजियाबाद (उ.प्र.)

साहित्य अमृत

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के
पत्रांक ११०१४/८/९६-रा.भा. (प) द्वारा
केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/
सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/स्वायत्त निकायों/संस्थाओं आदि के लिए
एक विशिष्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका के रूप में अनुशंसित एवं अनुमोदित।

एक प्रति का शुल्क : बीस रुपए
एक वर्ष का शुल्क : दो सौ पचास रुपए

शुल्क मनीऑर्डर अथवा बैंक-ड्राफ्ट द्वारा 'साहित्य अमृत' के नाम
४/१९ आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२ के पते पर भेजा जा सकता है।

राजभाषा हिंदी तथा सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए
संस्थाओं का सहयोग अपेक्षित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन कविताएँ

मूल : रायनर मारिआ रिल्के
अनुवाद : शारदा कपूर

दृष्टा

मैं देखता हूँ
तूफान से घिरे पेड़ों को,
जो अनमने हुए दिनों में
लगाते हैं थपेड़े
मेरी डरी हुई खिड़कियों को।
और सुनता हूँ
दूर दिशाओं को कहते
ऐसी बातें,
जिन्हें मैं अकेला
सह नहीं सकता।
बढ़ रहा है तूफान
एक परिवर्तक
स्थान और समय को चीरता
आयुहीन लगता है सब।
संपूर्ण दृश्य
जैसे एक कविता—
गंभीर, प्रभावशाली, अमर
कितना सूक्ष्म है वह
जिसके गिर्द लिपटे हैं हम।
और कितना महान् वह
जो लिपटा है हमारे गिर्द—
छोड़ दीं हमने ये बातें
और स्वयं को
होने दिया मजबूर
उस तूफान से
जिसने पटक दिया है हमें
दूर, अनाम।
जो हम जीतते हैं
वह है लघु
और सफलता बनाती है हमें
और भी छोटा।
वह अमर और असाधारण
जिसे बदला, मोड़ा नहीं जा सकता हमसे
वह देव है, जो हुआ है प्रकट
धार्मिक ग्रंथों में (in old Testament)
उसके विपरीत
जब क्षण-भंगुरों, साधारणों को
होती है इच्छा
युद्ध में स्वयं को
फौलादी दिखने की
वह उन्हें
अपनी अंगुलियों के नीचे
ऐसे करता है महसूस
जैसे किसी गहरे साज
की धीमी बजनेवाली कमजोर तारें। □

शिकायत

हृदय!
किससे करना चाहते हो
शिकायत?
तुम्हारा संघर्षमय मार्ग तो
जो गुजरता है
उन पेचीदा लोगों के मध्य से
जिन्हें समझना है कठिन—
रहा है
हमेशा ही उपेक्षित
और असफल
क्योंकि वह अपने अंदर
लिये है निश्चित दिशा,
जो गुमराहों को देती है इशारा
आनेवाले भविष्य का।
पहले तुम
करते थे शिकायत
जब खुशियों के पेड़ से
टूट पड़ता था
एक बेर भी पकने से पहले।
अब लेकिन
टूट रहा है तूफान में
खुशियों का समूचा पेड़ ही।
पर इस सब में
भलाई तो यह है
कि मेरे अदृश्य जगत् में
तूने मुझे
पहले कभी न दिखने वाले
देवताओं से
कराई है पहचान। □

अंतिम खंड

मृत्यु महान् है
हम हैं उसके
हँसते हुए मुखड़े।
जब हम
जीवन के मध्य
समझते हैं
स्वयं को कुछ,
वह करती है हिम्मत
रोने की
हमारे अंदर ही बैठी।

८१, हौजखास अपार्टमेंट्स,
नई दिल्ली-११००१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्ति

● अर्चना चतुर्वेदी

माँ के रोने की आवाज जैसे कहीं दूर से आ रही है। दादी हमेशा की तरह जोर-जोर से चिल्ला रहीं हैं, 'हे भगवान्, क्या हालत कर दीनी है मेरी छोरी की, सत्यानास है जाय इनको।'

मैं चाहकर भी बोल नहीं पा रही। आवाज गले से बाहर नहीं निकल रही। मैंने हिलने की कोशिश की, लेकिन उफ! मेरे घावों में टीस सी उठी और अर्धबेहोशी की हालत में मुझे महसूस हो रहा है कि मैं अस्पताल के बिस्तर पर हूँ। मेरे तन और मन दोनों ही घायल हैं। आह! मेरी आवाज निकल गई, बहुत दर्द हो रहा है, तभी डॉक्टर मेरे पास आई। मैंने हलकी सी आँख खोलकर देखा। डॉक्टर ने शायद सबको बाहर जाने के लिए कहा था। वे सब बाहर जा रहे थे। वे मेरी माँ की उम्र की थीं। सबके बाहर जाते ही मेरे सिर पर प्यार से हाथ फेरकर कहा, "बेटी किसने की तुम्हारी ये हालत, बताओ बेटी, कौन जिम्मेदार है तुम्हारी इस हालत का? तुम जब पूरी तरह से बताने की स्थिति में होगी, तभी बाहर खड़ी पुलिस तुम्हारा बयान लेगी। तुम अपने गुनहगारों को सजा जरूर दिलवाना।" मैं रोने लगी, "नहीं डॉक्टर, अभी नहीं, मुझे बहुत दर्द है।" उन्हें मैं क्या बताती, खुद समझ नहीं पा रही थी कि मेरी इस हालत का जिम्मेदार कौन है? डॉक्टर बोलीं, "कोई बात नहीं बेटी, तुम अभी कुछ नहीं बताना चाहती तो मैं तुमसे जबरदस्ती नही करूँगी, लेकिन तुमसे इतना जरूर कहूँगी कि बताने से तुम्हारे दिल का दर्द कुछ कम जरूर हो जाएगा। मैं तुम्हें दवा दे देती हूँ, जिससे तुम्हारे घावों का दर्द कम हो जाएगा।"

डॉक्टर ने मुझे दवा दी, जिससे मुझे घावों का दर्द महसूस न हो, लेकिन मन के घावों का क्या करूँ, जो मुझे बचपन से ही दिए जा रहे हैं। डॉक्टर चली गई, मैंने फिर आँखें बंद कर लीं। मैं किसी से बात करना नहीं चाहती थी। इसी हालत में मैं न जाने कब अतीत के गलियारों में होती हुई बचपन के उन दिनों में पहुँच गई, जहाँ बहुत सी बातें मेरी समझ के बाहर थीं और उस सबकी वजह, जिसने मुझे आज अस्पताल के बिस्तर पर पहुँचा दिया।

जन्म : ३१ दिसंबर, १९७३ को मथुरा (उ.प्र.) में।

शिक्षा : पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा।

कृतित्व : कुछ अखबार और पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित।

संप्रति : स्वतंत्र लेखिका।

कितना शौक था मुझे वॉलीबाल खेलने का। मैं स्कूल की टीम में खेलना चाहती थी। हमेशा पढ़ने में भी अव्वल रहती थी, लेकिन मुझे अपनी किसी उपलब्धि पर कभी शाबाशी नहीं मिली; लेकिन कारण, मेरा बालपन कभी समझ नहीं पाता था।

उस दिन माँ कितनी नाराज हुई थीं, मेरे कानों में माँ की वह आवाज ऐसे गूँज रही है मानो अभी की बात हो। 'नाक कटवाएगी तू छोरी, लोगों को पता लगेगा तो कितनी बदनामी होगी। छोरी होकर ये खेलकूद; और तेरे पापा को पता चलेगा तो तेरे साथ-साथ मुझे भी मार डालेंगे।' माँ अंदर कोठरी में ले जाकर मुझे डाँट रही थीं, जिससे दादी को पता न लगे, वरना वह तो चिल्ला-चिल्लाकर सारा घर सिर पर उठा लेतीं।

मेरा बालमन तब यह समझ ही नहीं पा रहा था कि आखिर मैंने ऐसा कौन सा अपराध किया है, जिसकी वजह से माँ इतनी नाराज और डरी हुई है। मैं तो सिर्फ अपने स्कूल की वॉलीबाल टीम के साथ दूसरे स्कूल में खेलने ही तो गई थी, वह भी इसी शहर में।

जब मैं पिछली बार अपनी सबसे पक्की सहेली रीना की बहन की शादी में जाना चाहती थी, तब भी माँ ऐसे ही नाराज हुई थीं और मुझे जाने नहीं दिया था। 'क्यों करती है माँ मेरे साथ ये सब, मेरी समझ में कुछ भी तो नहीं आता।'

पापा भी हमेशा कहते, 'छोरी, तू सिर्फ पढ़ने में ध्यान लगा, इधर-उधर की दोस्ती में समय खराब मत कर।' पापा को कम-से-कम मेरा पढ़ना-लिखना तो पसंद था। उन दिनों मैं आठवीं कक्षा में पढ़ती थी। हमारा घर छोटा था, इसलिए हम भाई-बहन अकसर छत पर खेलते। भाई तो अपने दोस्तों के घर भी चला जाता, लेकिन मुझे तो पड़ोस के घर में भी जाने नहीं दिया जाता।

मेरी सहेलियाँ कितना बुलाती थीं। यदि कभी माँ भेज भी देती तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

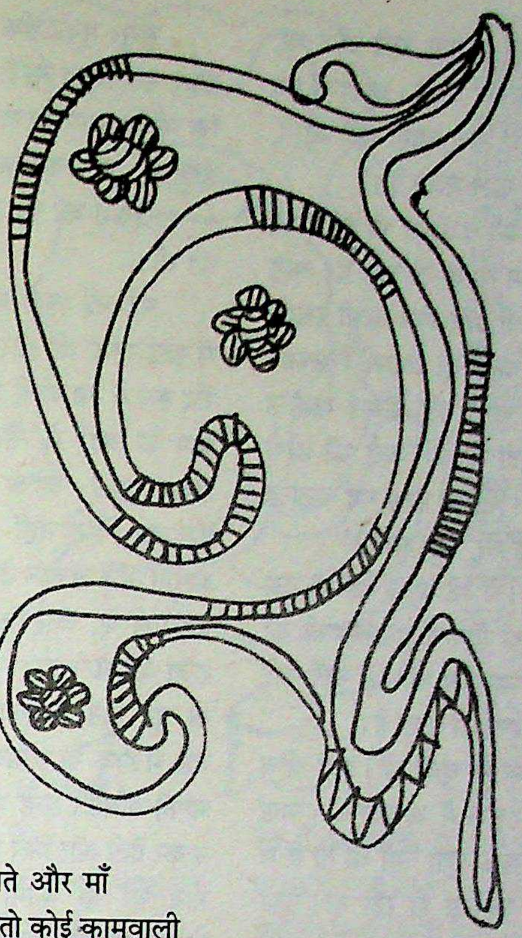

दादी सारा घर सर पर उठा लेतीं, वह तो जैसे मौका ढूँढ़ती थीं मुझे डाँटने का और मेरे बहाने माँ को भी। वे माँ पर जब-तब चिल्लातीं, 'ऐ शीला बहु, छोरी को कछु लच्छन सिखा, सबरे दिन घोड़ी जैसी कूदती फिरै है, जहाँ-वहाँ, जाए घर कौ कछु काम सिखा सीनो-पिरोनो सिखा, पराए घर जानो है जाके जेई लच्छन रहे तो नाक कटवावेगी जायकें।' और यदि माँ कह देतीं, 'माँजी, अभी तो बिन्नो छोटी है, सीख लेगी और फिर ये पढ़ाई भी तो करती है।' बस! तब तो दादी का पारा और चढ़ जाता। कहतीं 'बहू, बहुत जुबान चल रही है तेरी, इसके बराबर की थी, मैं जब ब्याहकर आई थी, पूरी गृहस्थी का काम करती थी।' दादी फिर बहुत देर तक बड़बड़ाती रहतीं। माँ बेचारी चुप हो जातीं। तब मेरी समझ में यह बिलकुल नहीं आता था कि दादी मुझसे इतनी नाराज क्यों रहती हैं? अनेक सवाल मेरे मन में तूफान की तरह उठते।

रात को हम सबके बिस्तर जमीन पर लगते और माँ बेचारी, दिन भर काम करके बहुत थक जातीं, तब तो कोई कामवाली भी नहीं होती थी। माँ बरतन, झाड़ू-पोंछा सब खुद ही करती थीं, मैं माँ के पैर दबाना चाहती तो माँ कहती, 'रहने दे बेटी, छोरियों से पैर नहीं दबवाते। आ जा लेट जा, मेरे पास।' जब मैं माँ के साथ बिस्तर पर लेटती तो माँ से सवाल करती, 'माँ, दादी हमेशा मुझसे नाराज क्यों रहती हैं। आप भी मुझे कहीं जाने नहीं देतीं।

भैया को तो कोई कुछ नहीं कहता, वह भी तो दोस्तों के घर जाता है। वह तो दूसरे शहर पिकनिक पर भी गया था, तब भी आपने मुझे नहीं भेजा।' और माँ मुझे झिड़क देतीं, 'वह छोरा है, तू छोरी है तू उसकी बराबरी न कर सके, फिर तुझे पराए घर भी तो जाना है, कोई ऊँच-नीच हो गई तो?' लेकिन कैसी ऊँच-नीच माँ? मैं पूछती तो माँ मुझे डाँट देतीं, 'कितना बोलती है री छोरी तू, सो जा अब चुपचाप, दिन भर काम करके मेरा बदन थक गया है। अब तू मेरा माथा मत दुखा।' माँ तो सो जातीं, लेकिन मेरे सवाल वहीं खड़े रहते, जिनके जवाब मेरी समझ में कभी नहीं आते थे। जैसे ये घर मेरा घर क्यों नहीं है। वह पराया घर कौन सा है, जहाँ मुझे जाना है और क्यों, यह सब सोचते-सोचते मैं भी सो जाती और अगली सुबह फिर से भूल जाती वे सब बातें।

कभी-कभी माँ मुझे प्यार से समझाती, 'बेटी, हर लड़की को एक दिन अपनी ससुराल जाना होता है और वही उसका असली घर होता है।'

'लेकिन माँ ये घर मेरा नहीं है क्या?' मैं पूछती तो माँ चुप हो जातीं। शायद मेरे इस सवाल का जबाव उनके पास भी नहीं था कि लड़की का घर कौन सा होता है?

इतवार के दिन भैया देर तक सोता। मैं भी सोना चाहती थी, लेकिन माँ मुझे सुबह-सुबह ही उठा देतीं। 'माँ, सोने दो ना, मेरी भी तो छुट्टी है, भैया भी तो सो रहा है।' लेकिन माँ कुछ कह पातीं, उससे पहले दादी चिल्लातीं, 'सासरे जाकर यही लच्छन दिखाएगी छोरी! बहू-बेटियाँ मरदों के उठने से पहले उठकर अपनी नित्य क्रिया से निबट लेती हैं और घर के काम-काज में लग जाती हैं। 'दादी और न चिल्लाएँ, इस डर से मैं फटाफट उठ जाती और घर के काम-काज में माँ का हाथ बँटाती। जैसे-जैसे मैं बड़ी हो रही थी, वैसे ही सब लोगों की टोका-टाकी भी शायद मेरी तरह ही बड़ी हो रही थी।

कभी दरवाजे पर खड़ी होकर, अपने घर के सामनेवाले घर में रह रही अपनी हमउम्र गुडडो से बात करती तो भी दादी नाराज हो जातीं।

छत पर पढ़ने बैठो तो माँ चिल्लातीं, 'छोरी नीचे आ।' गरमियों में छत पर शाम को हवा कितनी अच्छी लगती, लेकिन माँ कहती, 'कोई साथ जाए तभी जाना अकेले छत पर मत बैठा कर।'

जिन लड़कों के साथ बचपन से खेल रही थी, उनसे अब बात भी कर लेती तो घर में तूफान आ जाता, 'हे भगवान्! ये छोरी बदनाम हो गई तो कहीं मुँह दिखाने लायक नही रहेंगे।' दादी चिल्लातीं। तब मेरी समझ में ये बात नहीं आती थीं कि बबलू, सोनू, बंटी के साथ तो मैं छुटपन से खेल रही हूँ। हम एक ही कक्षा में हैं, उनसे पढ़ाई के विषय में ही तो बात कर रही थी, फिर बदनाम कैसे हो जाऊँगी, लेकिन कारण पूछने पर डाँट के सिवा कुछ नहीं मिलता था।

मुझे आज भी याद है माँ स्कूल से आते ही मेरे बैग की तलाशी लेतीं। कही जाना हो तो माँ के साथ ही जाती। माँ की नजरें मेरे चेहरे पर ही होतीं, ऐसा लगता मानो कुछ तलाश रही हैं कि मैं रास्ते में किसी को देख तो नहीं रही और यदि कभी महीने के एक-दो दिन ऊपर हो जाते तो माँ बार-बार प्रश्न करतीं कि मैं महीने से क्यों नहीं बैठी। मुझ पर हमेशा शक सा करतीं थी, परेशान हो जाती थी। मैं समझ नहीं पाती थी कि इस सबका क्या मतलब है? माँ ऐसा क्यों करती हैं?

मैं अकसर अकेले में खूब रोती। आखिर, मैं वह सब क्यों नही कर सकती जो मेरा दिल करना चाहता है, जिसमें मुझे खुशी मिलती है।

ट्यूशन पढ़ने जाती तो छोटे भाई बॉडीगार्ड बनकर जाते। सचमुच बहुत बुरा लगता था। अब समझ में आता है कि छोटे शहर में, जहाँ सारा समाज एक ही जगह रहता हो तो सबकी नजरें एक-दूसरे पर रहती हैं, वहाँ बेटी को इज्जत के साथ अपने घर से विदा करना एक बड़ी जिम्मेदारी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं पढ़ने में अच्छी थी, इसलिए पापा का झुकाव मेरी ओर था, लेकिन दादी बाबा और माँ तीनों ही पुराने खयालात के थे। बारहवीं की परीक्षा देते ही दादी ने फरमान सुना दिया, 'छोरी अब आगे नहीं पढ़ेगी, अच्छा सा छोरा देखकर इसी साल इसके हाथ पीले करने हैं।'

पापा ने विरोध किया, दादी को समझाने की कोशिश भी की, 'माँ, छोरी का पढ़ने में मन लग रहा है, कम-से-कम बी.ए. तो करा दें। आड़े वक्त में छोरी अपने पैरों पर तो खड़ी हो सकेगी और फिर अभी इसकी उम्र भी कम है।' दादी कुछ जवाब देतीं उससे पहले ही दादाजी चिल्लाने लगे, 'पढ़ा-लिखाकर मास्टरनी बनावेगो का छोरी को, कमाई खावेगा छोरी की, थू-थू करवावेगा हम पर।' फिर दादी बोलीं, 'काहे की छोटी उमर, अबकी पूरे सतरह साल की है जाएगी। तिरिया तेरह मर्द अठारह होवे। जाकी उमर में तेरी बोहरिया माँ बन गई थी, भूल गयौ?'

पापा बेचारे क्या करते, चुप रह गए थे। मैं भी बहुत रोई थी उस दिन। माँ ने मुझे प्यार से समझाया, 'बेटी, एक दिन तो हर लड़की को ससुराल जाना पड़ता है। छोरियाँ तो राजा-महाराजा की भी नहीं रहीं मायके में। लड़कियों का असली घर तो ससुराल ही होता है।'

मेरे लिए लड़कों की खोज जोरों से शुरू हो चुकी थी। इसी बीच मेरा बारहवीं का नतीजा आ गया था। मैं पूरे स्कूल में अव्वल थी। पापा बहुत खुश हुए थे, खुश तो माँ भी थीं। यदि कोई खुश नहीं था तो वे मैं थी, क्योंकि मुझे अपने सपनों के टूटने का आभास हो रहा था। उसी साल मेरी शादी हो गई और मैं ससुराल आ गई। मेरा ससुराल बड़े शहर में है। अपना घर, अपना शहर छोड़कर इस उम्मीद, इस सपने के साथ कि ये तो मेरा घर होगा, आराम से आगे की पढ़ाई पूरी करूँगी, हर वह ख्वाहिश पूरी करूँगी, जो मायके में पूरी नहीं हुई।

कितना बड़ा और कितना सुंदर घर था। घर में आधुनिक सुख-सुविधा की हर एक चीज थी। जो चीजें मैंने अपने मायके में नहीं देखी थीं—रंगीन टी.वी., फ्रीज, गाड़ी। मैं मन-ही-मन अपने भाग्य पर खुश थी। सास-ससुर, ननद, देवर का भरा-पूरा प्यार भरा परिवार। सब मुझे बहुत प्यार करते और पति तो मानो देवता हैं। सुमित उम्र में मुझसे आठ साल बड़े थे, बहुत ही समझदार और मृदुभाषी; कितना खयाल रखते थे मेरा।

सच कितनी खुश थी मैं अपने ससुराल में। मायके को तो जैसे भूल ही गई थी। जब पहली बार मायके गई और माँ को ससुराल के बारे में बताया तो वह बहुत खुश हुई थीं। अब तो दादी भी बड़े प्यार से बात कर रही थीं मुझसे। मेरे गहने-कपड़े बड़े चाव से देख-देखकर खुश हो रहीं थीं।

फिर कुछ ही दिनों में ये आकर मुझे ले गए। मैं ससुराल आकर बहुत खुश थी। धीरे-धीरे मैंने घर का काम-काज सँभाल लिया।

मेरी खुशी ज्यादा दिन नहीं रह पाई। सबके चेहरों पर नकाब थे और वे दो महीनों में ही उतरने लगे। सबके असली चेहरे नजर आने लगे, जो देवर इतना प्यारा और इज्जत देनेवाला लगा, वह तो बहुत ही बदतमीज और मुँहफट निकला। ननद एक नंबर की चुगलखोर, बद्दिमाग थी और इनकी भी गुरु थी। सास—उनकी जुबान बहुत ही कड़वी थी। ससुर मूकदर्शक थे और सास के हुक्म के गुलाम, बस! किसी के चेहरे पर नकाब नहीं था तो वह थे मेरे पति, लेकिन वह इतने सीधे थे कि माँ के सामने जुबान नहीं खुलती। मुझे प्यार तो बहुत करते, मेरे साथ होनेवाले अत्याचार का विरोध करने की हिम्मत उनमें नहीं थी।

नौकरों की छुट्टी कर दी गई थी। फ्री की नौकरानी जो घर में आ गई थी।

नई-नई शादी थी। रात की नींद पूरी नहीं होती थी। पति के प्यार में खोई रहती थी और सुबह उठने में जरा सी देर हो जाती तो सास अपने रौद्र रूप में आ जाती और चिल्लातीं, 'यही लच्छन सिखाए हैं तेरी माँ ने। बाप के यहाँ से नौकर लेकर आती, दहेज तो ढंग का दिया नहीं तेरे बाप ने और लच्छन देखो महारानी के, जैसे किसी राजा की बेटी हो।' वह तो पूरे दिन चिल्लातीं, यदि मैं हाथ-पैर जोड़कर, माफी माँगकर उन्हें शांत न कर देती और फिर सारे दिन घर के कामों में पिसती, कैसे भी वह शांत रहें, यही सोचती मैं। ऐसे ही एक दिन खाने में नमक थोड़ा ज्यादा हो गया। सास ने गुस्से में थाली मेरे मुँह पर फेंककर मारी। सब्जी मेरी आँख में चली गई। मैं दर्द से तड़पती रही, लेकिन किसी को मुझ पर दया नहीं आई। शाम को जब मेरे पति सुमित ऑफिस से आए तो डॉक्टर के यहाँ लेकर गए।

मेरे ससुरालवालों की माँग दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही थी। गालियों के साथ-साथ अब हाथ भी उठने लगा था। ननद और देवर भी उन्हीं का साथ देते। मेरे पति दिन भर ऑफिस में होते और घर में मुझ पर तरह-तरह के जुल्म ढाए जाते। रात को इनकी बाँहों में मेरा दर्द कम जरूर हो जाता। सुमित बेचारे मेरी हालत पर खुद रोते और कहते, 'सौम्या, तुम्हारी ये हालत मुझसे देखी नहीं जाती, लेकिन मैं माँ से कुछ कह भी नहीं सकता। वह

मेरे ससुरालवालों की माँग दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही थी। गालियों के साथ-साथ अब हाथ भी उठने लगा था। ननद और देवर भी उन्हीं का साथ देते। मेरे पति दिन भर ऑफिस में होते और घर में मुझ पर तरह-तरह के जुल्म ढाए जाते। रात को इनकी बाँहों में मेरा दर्द कम जरूर हो जाता। सुमित बेचारे मेरी हालत पर खुद रोते और कहते, 'सौम्या, तुम्हारी ये हालत मुझसे देखी नहीं जाती, लेकिन मैं माँ से कुछ कह भी नहीं सकता। वह हमें घर से निकाल देंगी और मेरी तनख्वाह अभी इतनी नहीं है कि हम कहीं अलग घर लेकर रह सकें। मैं नई नौकरी तलाश रहा हूँ, जैसे ही अच्छी नौकरी मिलेगी, हम चलकर अलग रहेंगे। बस कुछ दिन और सह लो।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमें घर से निकाल देंगी और मेरी तनख्वाह अभी इतनी नहीं है कि हम कहीं अलग घर लेकर रह सकें। मैं नई नौकरी तलाश रहा हूँ, जैसे ही अच्छी नौकरी मिलेगी, हम चलकर अलग रहेंगे। बस कुछ दिन और सह लो।' मैं अकसर दिन में होनेवाले जुल्मों के बारे में सुमित से भी नहीं कहती, जिससे वह दुखी न हों। लेकिन कभी-कभी मैं इतनी दुखी हो जाती कि मैं सोचती, यहाँ से भागकर अपने मम्मी-पापा के पास पहुँच जाऊँ, लेकिन विदाई के वक्त कही गई माँ की बातें याद कर मेरे कदम रुक जाते। माँ ने कहा था, 'बेटी अब ससुराल ही तेरा घर है। कभी लड़कर या बिना बुलाए मायके मत आना। जब हम बुलाएँ तभी आना।'

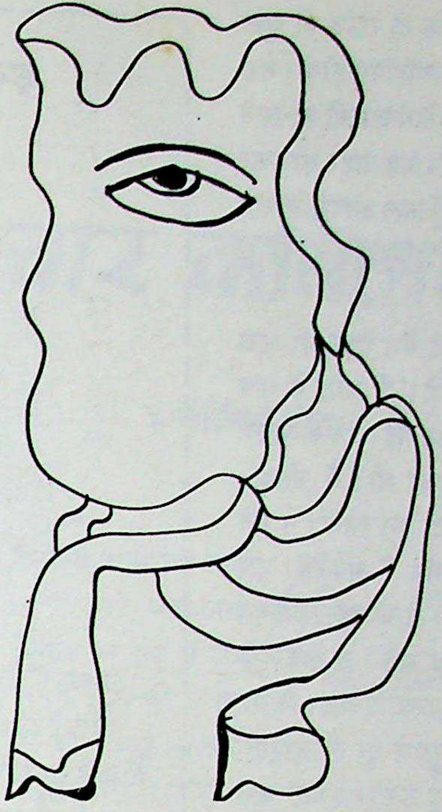

मैं इसी उम्मीद में सबकुछ सहन कर रही थी कि कभी तो ये लोग पिघलेंगे। यही सब झेलते-झेलते एक साल से ऊपर हो चुका था। मैंने और सुमित ने निर्णय किया था कि जब तक हम इस घर में है, तब तक हम बच्चा नहीं करेंगे। सुमित तो मुझे आगे पढ़ाना भी चाहते थे, लेकिन हालात हमारा साथ नहीं दे रहे थे।

अब तो मेरी सास को एक बहाना और मिल गया था मुझे कष्ट देने का। वह कहतीं, 'इसके साथ की ब्याही आई छोरियों की गोद में छोरा-छोरी खेल रहे हैं और एक इसे देखो, अभी तक कुछ न जना। नाश जाए इसके माँ-बाप का, एक तो दान-दहेज न दिया, ऊपर ये बाँझ और भेड़ दीनी है। थोड़े दिन और देख रई हूँ, नहीं तो मैं तो अपने छोरा कौ दूसरौ ब्याह कर दऊँगी।' और एक दिन तो वे मुझे चेकअप के लिए डॉक्टर के पास ले गईं। जब उन्हें पता लगा कि हम अपनी मरजी से बच्चा पैदा नही कर रहे हैं, तब उन्होंने सारा घर सर पर उठा लिया। हारकर हमें हथियार डालने पड़े। मुझे लग रहा था शायद बच्चे के आने पर इन सबका सुलूक मेरे प्रति बदल जाएगा।

जल्द ही में गर्भवती हो गई। इस खुशखबरी से घर का माहौल सचमुच बदल गया था। मैं भी खुश थी। आजकल सब मेरा खयाल रख रहे थे। मुझे लगा कि अब मेरे दुखों का अंत हो गया है। देखते-देखते तीन महीने बीत चुके थे। एक दिन सुबह जैसे ही मेरे पति ऑफिस गए तो सास बड़े प्यार से बोलीं, 'बेटी, आज तू नाश्ता मत करना, हम डॉक्टर के यहाँ चल रहे हैं तेरा अल्ट्रासाउंड करवाने। उससे पता लग जाएगा कि बच्चा ठीक से बढ़ रहा है कि नहीं।' मैं तैयार होकर उनके साथ चली गई। मेरी जाँच हुई। उसके बाद मुझे बाहर भेजकर मेरी सास और डॉक्टर में जाने क्या बात हुई। थोड़ी देर में सास ने बताया कि बच्चा थोड़ा कमजोर लग रहा है, आज तुम्हें एडमिट करेंगे कुछ और टेस्ट करने के लिए। जब मुझे होश आया तो मेरे पास नर्स के अलावा कोई नहीं था। मैंने नर्स से पूछा, 'सिस्टर, मेरी सास कहाँ है?' उसने जो जबाब दिया, उसे सुनकर मैं सन्न रह गई थी। उसने कहा, 'वो तो तुम्हारा अबोर्शन करवाकर कब की चली गईं।'

'लेकिन वो तो मेरे बच्चे को लेकर इतनी चिंतित थी। बच्चा थोड़ा कमजोर ही तो था।' 'फिर अबोर्शन क्यों?' मेरे पूछने पर नर्स ने बताया कि मेरी सोनोग्राफी करवाई गई थी। मेरे गर्भ में बेटी थी इसलिए। 'क्या तुम्हें नहीं बताया गया था ये सब, और तुम्हारी सास बोल कर गई थी कि आपको लेने आपके पति आएँगे शाम को।' नर्स तो चली गई। मैं फूट-फूटकर रो पड़ी। शाम को सुमित आए तो वह भी बहुत उदास हुए। मैं उनसे लिपटकर रोती जा रही थी और उनसे पूछ रही थी कि मेरे साथ ये सब क्यों किया? मुझे तकलीफ देकर उन लोगों का पेट नहीं भरा, जो मेरी बच्ची को दुनिया में आने से पहले ही मार दिया। मेरे तन और मन दोनों ही लहूलुहान हो चुके थे। मैं वह चिड़िया थी, जिसके पंख काट दिए गए हों। ये मुझे जैसे-तैसे घर लेकर गए। मैं एक जिंदा लाश बनकर रह गई थी। जब इन्होंने अपनी माँ से कहा कि उन्होंने मेरे साथ ऐसे क्यों किया? तो माँजी ने बड़ी ही बेशर्मी से जवाब दिया, मुझे पोता चाहिए था। 'लेकिन माँ, एक बार मुझसे पूछ तो लेतीं' जब इन्होंने कहा तो माँजी चिल्लाने लगीं, 'तेरे ही भले के लिए किया है ये सब और तू क्या मेरा बाप लग रहा है, जिससे पूछकर सब कुछ करूँ' और पता नहीं क्या-क्या चिल्लाती रहीं। उन्हें अपने किए पर जरा भी अफसोस नहीं था। सुमित ने अब डिसाइड किया कि हम जल्द ही ये घर छोड़ देंगे, लेकिन भगवान् को शायद कुछ और ही मंजूर था। अभी इस सबको कुछ ही दिन हुऐ थे। हम चुपचाप अपने रहने का ठिकाना ढूँढ़ ही रहे थे कि एक दिन इनके ऑफिस में कुछ परेशानी हुई और सुमित की नौकरी चली गई।

अब तो सास को एक और मौका मिल गया मुझे तकलीफ देने का। मुझ पर दबाव बनाया जाने लगा कि मैं अपने पापा से पैसे माँगूँ सुमित का बिजनेस शुरू करने के लिए। मैंने उन लोगों को बहुत समझाया कि मेरे पापा इतना पैसा कहाँ से लाएँगे, पहले भी तो कई बार वे दे चुके हैं। लेकिन किसी ने मेरी एक न सुनी। सुमित ने भी अपने माँ-बाप को समझाने का भरसक प्रयास किया। उन्होंने कहा कि उन्हें जल्द ही दूसरी नौकरी मिल जाएगी, लेकिन माँ पर तो भूत सवार था। हारकर मैंने पापा को फोन किया और जवाब वही था, जिसकी मुझे उम्मीद थी। पापा ने इतने पैसों का इंतजाम न कर पाने की असमर्थता व्यक्त की। आखिर क्या करते वह बेचारे, इतनी कम तनख्वाह थी और इतनी सारी जिम्मेदारियाँ, जो थीं उनके ऊपर। लेकिन सास को ये नागवार लगा और उन्होंने तरह-तरह से मुझे प्रताड़ित करना शुरू कर दिया। मुझे अकसर भूखा रखा जाता। सारे घर का काम करके यदि थककर लेटना चाहती तो गालियाँ दी जातीं। पति विरोध करते तो सास-ससुर, देवर उन पर भी हावी हो जाते। मैं दिन पर दिन कमजोर हो रही थी। सुमित बेचारे नौकरी पाने के लिए दर-ब-दर भटक रहे थे, लेकिन कल रात सुमित कितने खुश थे, मुझसे बोले, 'सौम्या, हमारे दुखों का अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंत आ गया है। ये नौकरी मुझे ही मिलेगी। इंटरव्यू के दो राउंड हो चुके हैं, कल ऑफर लैटर मिल जाएगा और अगले हफ्ते ज्वॉइनिंग होगी। मेरा एक दोस्त वहाँ काम करता है, उसने बताया, ये कंपनी कर्मचारियों को रहने के लिए क्वार्टर भी देती है। जल्द ही हम यह घर और यह शहर छोड़कर चले जाएँगे। मेरे एक जोड़ी कपड़े बैग में डाल देना। मैं कल आगरा जा रहा हूँ। रात तक या परसों सुबह तक आ जाऊँगा।' मैं भी बहुत खुश हुई थी ये सब सुनकर।

आज सुबह सुमित के जाने के थोड़ी देर बाद मेरा देवर मेरे पास आया और बोला, 'भाभी मेरे लिए थोड़ी चाय बना दो।' मैं रसोई में चाय बना ही रही थी, तभी सास और ननद भी रसोई में आ गईं। मैंने अचानक आहट सुनी, पीछे मुड़कर देखा तो ससुर और देवर भी। मैं चीखी-चिल्लाई, मेरे ऊपर कैरोसिन डालकर आग लगा दी उन लोगों ने मैंने लाख कोशिश की भागने की, लेकिन वे चार थे और मैं अकेली। मुझे बचानेवाला मेरी चीख सुननेवाला वहाँ कोई नहीं था। टी.वी. फुल वोल्यूम में चल रहा था, जिससे मेरी आवाज बाहर न जा सके। वे सब मुझे जलता छोड़कर रसोई से बाहर चले गए, रसोई का दरवाजा बाहर से बंद कर दिया था। सास बोल रही थी, 'मेरे बेटे को मुझसे दूर ले जाएगी' और पता नहीं क्या-क्या गालियाँ दे रही थीं। शायद उन्होंने हमारी बातें सुनी थीं। मैं छटपटा रही थी, मेरा पूरा बदन जल रहा था। अचानक मेरे दिमाग ने काम किया और मैंने रसोई में भरे रखे पानी का बरतन अपने ऊपर उड़ेल दिया, तभी सास चिल्लाई, 'अरे ये हरामजादी पानी डालकर आग बुझा रही है। रोको, नहीं तो बच जाएगी।' वे सब जैसे ही दरवाजा खोलकर अंदर आने लगे, मुझमें उस समय जैसे बचने की चाहत पैदा हो चुकी थी। मैं अपनी पूरी ताकत बटोरकर बाहर की तरफ भागी। वे लोग कुछ कर पाते या समझ पाते, तब तक मैं मुख्य दरवाजा खोलकर बाहर सड़क पर 'बचाओ-बचाओ' चिल्लाने लगी। मेरे कपड़े लगभग जल चुके थे। में अर्धनग्न अवस्था में बाहर ही गिर पड़ी, सारे पडोसी इकट्ठा हो चुके थे। सास-ससुर की हिम्मत नहीं थी बाहर आने की। वे इस सबके लिए तैयार जो नहीं थे। जब होश आया तो खुद को अस्पताल में पाया। पड़ोसियों ने ही मेरे मम्मी-पापा को सूचना दे दी थी। सास-ससुर भी अस्पताल पहुँचकर रोने का नाटक कर रहे थे और मेरे जलने की मनगढ़ंत कहानियाँ सुना रहे थे। डॉक्टर ने मम्मी-पापा को बताया कि मैं ८० प्रतिशत जल चुकी थी। अचानक मेरी सास की आवाज मेरे कानों में पड़ी, वह शायद मेरी माँ से बात कर रही थी। उन्हें लग रहा था, मैं बेहोश हूँ, उनकी आवाज ने मुझे फिर वर्तमान में पहुँचा दिया। वह कह रही थी, 'बहनजी, अपनी बेटी को समझाइए, पुलिस को कोई उलटी-सीधी गवाही न दे। इसको रहना तो हमारे साथ ही है।' उनका ये स्वार्थीपन देखकर मुझे घिन आ रही थी और जीने की इच्छा भी खत्म हो चली थी। मैंने अपनी आँखें खोलीं तो पापा को सामने पाया। मुझे होश में आया देखकर पापा फूट-फूटकर रो पड़े और बोले, 'बेटी, मुझे माफ कर दे। मेरी वजह से तेरी ये हालत हो गई है। दादी भी रो रही थी, 'हे भगवान्! हमें माफ कर दे। हम अपनी छोरी के ब्याह की जल्दी ना करते तो छोरी की ये हालत ना होती।' माँ का भी रो-रोकर बुरा हाल था। मैंने माँ और दादी से कहा, 'माँ मैं अब समझ गई हूँ कि बेटी का कोई घर नहीं होता। वह तो मायके में भी परायी होती है और ससुराल में भी। दादी, मैं समझ गई, मैं क्यों आप लोगों पर बोझ थी।' मैंने हाथ जोड़कर माँ से कहा, 'माँ धन्यवाद! आपने कम-से-कम मुझे जन्म तो दिया। मैं तो अपनी बिटिया को इस दुनिया में ला भी न सकी। मुझे नहीं जीना इस दुनिया में, जहाँ एक औरत दूसरी औरत का दर्द कम नहीं करती बल्कि वह ही उसकी सबसे बड़ी दुश्मन बन जाती है। नहीं जीना चाहती इस स्वार्थी दुनिया में। डॉक्टर साहब, मुझे मार डालिए।' मैं चीखे जा रही थी। डॉक्टर मुझे शांत करने की कोशिश कर रहे थे। मैं फूट-फूटकर रो रही थी।

और मैं शांत हो गई। शांत हमेशा के लिए। उसी वक्त सुमित आगरे से वापिस पहुँचे थे। माँ जोर से चीखी 'बिन्नो···।' सुमित भी मुझसे लिपटकर रो पड़े—'सौम्या, मुझसे एक बार बात तो कर लो; मेरा इंतजार तो करतीं।' मैं भी उनसे बात करना चाहती थी, लेकिन··· लेकिन में तो अब निर्जीव हो चुकी थी। मेरे पति, माँ, दादी, पापा सब मेरे निर्जीव शरीर से लिपटकर रो रहे थे।

पर मैं··· मैं तो मुक्त हो चुकी हूँ, हर दर्द, हर तकलीफ से!

बी-४५, प्रथम तल,
सेक्टर-२३, नोएडा

इस अंक की चित्रकार

पन्ने कुँवर बच्छावत

जन्म : २१ अप्रैल, १९४२ को बीकानेर में।

पिछले बीस वर्षों से चित्रकारी कर रही हैं, चित्रकारी इनका शौक है। इनके विषय अत्यंत सरल एवं भारतीय देवी-देवताओं पर आधारित होते हैं। देश-विदेश की विभिन्न कला-दीर्घाओं में अपनी पेंटिंग्स की प्रदर्शनी लगा चुकी हैं।

संपर्क : २०, बालमुकुंद मक्कर रोड,
कोलकाता-७०००७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार कविताएँ

● वर्तिका नंदा

दुआ-सलाम

कुछ शहर कभी नहीं सोते
जैसे कुछ जिंदगियाँ कभी सोती नहीं
जैसे सड़कें जागती हैं तमाम ऊँघती हुई रातों में भी

कुछ सपने भी कभी सोते नहीं
ये चलते हैं
अपने बनाए पैरों से
बिना घुँघरूओं के छनकते हैं वे
भरते हैं कितने ही आँगन

कुछ सुबहें भी कभी अंत नहीं होतीं
आंतरिक सुख के खिले फूलदान में
मुरझाती नहीं वहाँ कोई किरण

इतनी जिंदा सच्चाइयों के बीच
खुद को पाना जिंदा, अंकुरित, सलामत
कोई मजाक है क्या?

□

सफर में धूप तो होगी, चल सको तो चलो

एकला कोई नहीं चलता
साथ चलते हैं अपने हिस्से के पत्थर
किसी और के दिए पठार
नमक के टीले जिम्मेदारी से लदे जिद्दी पहाड़
दुखों के गट्ठर

कभी-कभी होता ऐसा भी है
साथ चल पड़ते हैं मीठे कुछ खयाल
किसी के होंठों से फूटती महकती हँसी
सरकती युवा हवा
बारीक लकीर सी कोई खुशी
ये सब बातें हैं, कभी भी चले जाते हैं
ठिकाना कभी तय नहीं
खानाबदोशी, बदहवासी, उखड़े कदम
लेकिन इन सब में टिकी रहती है
पैरों के नीचे की जमीन
सर का टुकड़ा आसमान
उखड़ी-सँभली साँसें
और एक अदद दिल

एकता—कहाँ, कौन, कैसे?

□

सुर

कोई सुर अंदर ही बजता है कई बार
दीवार से टकराता है
बेसुरा नहीं होता फिर भी

कितनी ही बार छलकता है जमीन पर
पर फैलता नहीं

नदी में फेंक डालने की साजिश भी तो हुई
इस सुर के साथ बार-बार
सुर बदला नहीं

सुर में सुख है
सुख में आशा
आशा में साँस का एक अंश
इतना अंश काफी है
मेरे लिए, मेरे अपनों के लिए, तुम्हारे लिए
पूरे के पूरे जमाने के लिए
पर इस सुर को
कभी सहलाया भी है?
सुर में भी जान है
क्यों भूलते हो बार-बार।

□

चौरासी हजार योनियों के बीच

सहम-सहमकर जीते-जीते
अब जाने का समय आ गया।

डर रहा हमेशा
समय पर कामों के बोझ को निपटा न पाने का
या किसी रिश्ते के उघड़
या बिखर जाने का।

उम्र की सुरंग हमेशा लंबी लगी—डरों के बीच।

थके शरीर पर
यौवन कभी आया ही नहीं
पैदाइश बुढ़ापे के पालने में ही हुई थी जैसे।

डर में निकली साँसें बर्फ थीं
मन निष्क्रिय
पर ताज्जुब
मौत ने जैसे सोख लिया सारा ही डर।

सुरंग के अखिरी हिस्से से
छनकर आती है रोशनी यह
शरीर छूटेगा यहाँ
आत्मा उगेगी फिर कभी
तब तक
कम-से-कम, तब तक
डर तो नहीं होगा न!

सा अ

पत्रकारिता विभाग
लेडी श्रीराम कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय
नई दिल्ली-११००७०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम झरोखे बैठ के

देश में नए पूजाघर

● गोपाल चतुर्वेदी

अपन उस पीढ़ी के हैं, जो बुजुर्गों की सलाह मानती है। हमारे पिताजी का निर्देश था कि जीवन में रुटीन का बड़ा महत्त्व है। नतीजतन, उनका शुरुआती प्रयास हमारा नियमित अभ्यास बन गया। अब अपनी दिनचर्या तो है सुबह छः बजे उठना, घूमने जाना, पत्नी और पप्पू को उनके आलस के लिए टोकना, नियत दो टोस्ट के नाश्ते के बाद रोटी-सब्जी का टिफिन लेकर दफ्तर प्रस्थान। लोग बताते हैं कि हमारे जाने से घर में तूफान के बाद की शांति छा जाती है। आज अपने तक यह पल्ले नहीं पड़ा है कि हम ऐसे किस ऊधम के जनक हैं? नियमित दिनचर्या क्या कोई पाप है? हमें बताया गया था कि यह जीवन में कामयाबी के लिए जरूरी है। जरूर सच होगी यह सीख। हमने छोटे बाबू से शुरू किया था और आज भी छोटे बाबू हैं।

हमें यह पता करने का मौका नहीं मिला है कि बड़े और सफल महानुभाव कोई रुटीन अपनाते हैं या नहीं! वह क्या जुगत भिड़ाते हैं अपनी कामयाबी के लिए! दरअसल, ऐसे तीसमारखाँ हमें कभी घास ही नहीं डालते हैं कि हम उनसे ऐसे निजी और अहम सवाल पूछ भी सकें। हमने तो दफ्तर और उसके बाहर एक ही नजारा देखा है। सुना है कि अपने कमरे के अंदर जो साहब सबको सिर्फ झाड़ पिलाते हैं, वही बाहर किसी विदाई या अन्य समारोह में केवल खीसें निपोरते हैं। देश के नेता, टी.वी. पर इसी मनोरंजक मुद्रा के शिकार हैं। उनकी दाँत दिखाने की अनवरत हरकत से भ्रम होता कि अदृश्य उँगलियाँ इन्हें अगल-बगल गुदगुदा रही हैं। अब यह राज कैसे किसी को बताएँ! लिहाजा, मजबूरन मुँह बाएँ खड़े या बैठे हैं।

बुजुर्गों ने एक और नसीहत दी है। किसी काम का प्रारंभ करो तो उसमें दृढ़ निश्चय और लगन से लगे रहो। हम अपनी मुहिम में चालू रहे। हमने अखबारों में पढ़ा है कि मुल्क की सादी पुलिस संदेह के पात्र इनसानों का गुपचुप पीछा करती है। इस तरकीब से वह उनकी अगली वारदात की जानकारी और पिछली के प्रमाण तक पा जाती है। हमने सोचा कि क्यों न हम उन्हीं की समय-सिद्ध तकनीक अपनाएँ। अकसर बड़े हाकिम कार से दुलकर पधारते और जाने कब घर या मीटिंग के लिए फुर्र हो जाते हैं, हमें सुराग ही नहीं मिलता है। खोज-तलाश के बाद हमें इस प्रकार का एक युवा उम्मीदवार मिला है। वह अपने से आठ-दस साल छोटा है और प्रमोशन की छलाँग लगा चुका है। उसकी अदा दूसरों से जुदा है। उसके हाथ सार्वजनिक रूप से जुड़े रहते हैं, जैसा कि अकसर नेताओं की आदत है। उसके ओठ, दाएँ-बाएँ खिंचे रहते हैं। मुगालता हो कि वह मुसकरा रहा है। वह मुसकान थी या चेहरे की बनावट की विकृति, यह सवाल आज भी अपने लिए अनुत्तरित है।

उसकी सवारी भी हमारी तरह स्कूटर है। महानगर के ट्रैफिक में चलने तक की गुंजाइश नहीं है। स्कूटर से फुर्र कोई कैसे हो? हमने एक शाम अपना स्कूटर उसके पीछे लगा दिया। खबर तो मिले कि इसके इष्ट कौन हैं। कैसे इतनी शीघ्रता से तरक्की हासिल की। काम हम करते रहे हैं, नाम इसका आगे आता रहा है। सब का दस्तूर है, किसी प्रभु की आराधना का। अपने आराध्य हनुमानजी हैं। हर मंगल को हम उन्हें सुख-समृद्धि, प्रमोशन की कभी ग्यारह, कभी इक्कीस रुपए की टुच्ची, नन्ही घूस चढ़ाते हैं। वक्त बदला है। हर दायरे में सुविधा-शुल्क की राशि आनन-फानन बढ़ी है। कौन कहे, प्रसाद की दर में इजाफा हुआ हो वरना बजरंगबली तो संकट-मोचन हैं। अब तक तो हमारा संकट हर चुके होते। हमें डर है। कोई उनका भी सहायक है। वही चढ़ावे के अनुपात में अर्जियाँ उन तक पहुँचाता होगा। करोड़ों की भीड़ में अपनी बारी आए तो कैसे आए? उन की छँटाई में शर्तिया चढ़ावे का छुट्टा अपने आड़े आ जाता है।

उस युवा का पीछा करते-करते मन में कौंधा कि आज तो मंगल है। क्या यह भी संकट-मोचन का भक्त है? क्या इसने कोई विशेष मंदिर चुना है? कई बार ऐसा होता भी है। जब आवास का पता इनसानों की हैसियत, मान, मर्यादा, हेकड़ी का मानक है तो स्थान देवता की सिद्धि का क्यों न माना जाए! कहीं इसने ऐसा ही सिद्ध मंदिर तो नहीं पकड़ा हुआ है, जो यह फर्राटे से उसी तरफ बढ़ा चला जा रहा है। हमारे मोहल्ले के हनुमानजी कब के निकल चुके थे, एक-दो मंदिर और भी। पर इस बंदे का सफर जारी है। हम भी, बिना पेट्रोल और समय की परवाह किए इसके पीछे लगे रहे।

हमें आभास हुआ कि अपन एक अच्छे पिछलग्गू हैं। अगर सिर पर हैलमेट हो तो हर स्कूटर-सवार एक सा नजर आता है, कतई दीवाल की छिपकली या फर्श की चींटी सा। न शक्ल का फर्क, न उम्र का अंतर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी भी स्कूटर सवार का कोई-न-कोई नाम होगा। पर यहाँ तो सब आदमी हैं, चींटी या छिपकली के समान। देखनेवाला कहाँ जानता है, किसी चींटी या छिपकली का नाम। कोई पत्नी भी खड़ी है और शौहर सामने से गुजरे, तब भी वह उसे न पहचाने। हैलमेट दिल फेंक पतियों के लिए एक नायाब तोहफा है। वह घर के सामने से अपनी महिला मित्र को ले उड़े बेखौफ, इस विश्वास के साथ कि रत्ती भर खतरा नहीं है। उन्होंने हैलमेट की नकाब जो ओढ़ी हुई है। कौन उनके इस रक्षा कवच को भेद सकता है? हम इसी विश्वास की प्रेरणा से निडर बढ़ते रहे। कौन कह सकता है कि असलियत में हम दब्बू और डरपोक किस्म के इनसान हैं!

आधा घंटे के मुसल्सल सफर के बाद उसकी मंजिल आ ही गई। हमारी भी। हम उससे थोड़ी दूर पर रुक गए। हम लोग उस सड़क पर थे जहाँ कि कई फॉर्म-हाउस स्थित हैं। बाहर एक विशाल लोहे का फाटक था। उसके पास संतरी का खोखा। उसे संतरी ने देखा। सलाम ठोंका। हमें लगा कि पुरानी दोस्ती है। हमने हिम्मत की। जब युवा के लिए लोहे का फाटक खुला और वह अंदर दाखिल हो गया तो हम भी गार्ड के पास पहुँचे। उसने हमारा नख-शिख निरीक्षण किया, बोला, 'आप कौन?' अपनी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। कैसे बताते कि हम युवा के पिछलग्गू हैं। टोह लेते-लेते यहाँ तक आए हैं। उलटे हमने उससे सवाल दागा—"यहाँ कौन सी हस्ती रहती है?" वह समझ गया कि यह कोई अपरिचित है। पहली बार इधर आ भटका है। उसने फिर दोहराया—"आप कौन?" इस बार हमने अपना न बता के मिनिस्ट्री का नाम बताया। उसे सूचित किया कि हम भी वहीं के हैं जहाँ का अभी दाखिल होनेवाला युवा।

इस परिचय से संतरी कुछ हड़का। बोला, "वह साहब तो पिछले तीन साल से आ रहा है। रोज तकरीबन इसी वक्त आता है।" हम अपनी तलाश में लगे रहे—"आपने बताया नहीं कि यहाँ रहता कौन है?" उसने थोड़ी चुप्पी के बाद कहा, "यहाँ कोई नहीं रहता है। सब अपनी ड्यूटी के हिसाब से आते-जाते हैं। हम भी अंदर तक नहीं गए हैं। पर जानकार बताते हैं कि अंदर एक नई स्टाइल का मंदिर है। ऐरे-गैरों को वहाँ प्रवेश नहीं है। सिर्फ उस जवान ऐसे चुनिंदा भक्त ही आते हैं।"

हमने मंदिर जाकर पूजा की इच्छा बनाई। उसने सवाल किया, "आपके पास मंदिर का पास है? हो तो हमें दिखाइए और शौक से अंदर जाइए।"

अपन चक्कर में पड़ गए। यह पास-वास क्या बला है? हनुमानजी के मंदिर में तो प्रसाद तक ऐच्छिक है। इच्छा हो तो ले जाइए वरना नहीं। पहली बार जीवन में ऐसा हुआ कि हमने हिम्मत न हारी। मैदान में डटे रहे। हमने जानना चाहा—"पास कहाँ बनते हैं?" वह चुप्पी साध गया। उसे लगा कि यह शर्तिया कोई घुसपैठिया है। हमने फिर गुजारिश की। वह कुछ पसीजा—"देखिए पास कहाँ बनते हैं, हमें भी पता नहीं है। यहाँ सिर्फ नियमित भक्त आते हैं। आप जैसा अनजान भक्त पहली बार पधारा है।"

वहाँ बैठे सज्जन ने आव देखा न ताव। हमसे पास लेकर कंप्यूटर पर नंबर टाइप किया—"अब क्या चाहिए? सिद्धेश्वरी देवी ने प्रमोशन तो करवा दिया। क्या तबादला चाहते हो? कैश-काउंटर पर पाँच लाख जमा करो। इच्छित तीन स्थानों के नाम लिखो। एक माह में मनोकामना पूरी होगी।"

हमें निराशा तो हुई, पर इससे हुज्जत करना बेसूद था। हम चुपचाप वापस जाने की तैयारी में पहचान गँवाने को हैलमेट की नकाब लगाने लगे। इतने में हमारा परिचित भक्त बाहर निकला। उसने गॉर्ड को टिप दी। हम पेड़ के पीछे शरण लिये थे। उसकी जेब से पर्स निकालने की प्रक्रिया में एक प्लास्टिक के कवर में रखा कागज जमीन पर टपक पड़ा था। गॉर्ड फिर अपने सैंट्री-पोस्ट में अंतर्धान हो लिया। युवा भी स्कूटर पर सवार होकर सिधार गया। हमारा स्कूटर वहीं खड़ा था। हम भी टहलते हुए वहाँ पहुँचे। झुककर हमने कागज उठाकर जेब के सेफ में रखा। किक मारकर स्कूटर पर बैठे। थोड़ी दूर पर स्ट्रीट-लाइट के नीचे रुके।

कागज निकालकर उसे पढ़ा। उसके ऊपर लिखा था—'सिद्धेश्वरी देवी।' उसके सामने नंबर पड़ा था, 'तीन हजार एक।' नीचे युवा का नाम था और अधिकृत प्रवेश की मोहर लगी थी। रहस्य जानने की उत्सुकता के मारे अपना पेट पिराने लगा। हमें कोई जल्दी न थी। हमने देखा कि नए आ रहे हैं और पुराने संतरी जा रहे हैं। हममें साहस का संचार हुआ। अब मंदिर-गमन का रास्ता साफ है। हम भी तो देखें कि आखिर यह कौन सी नई देवी और मंदिर है? यों हिंदुस्तान में हर तीन-चार आदमी पर औसतन एक देवी या देवता है, पर सबके मंदिर तो बने नहीं हैं। यह क्या कोई इच्छा-सिद्धि की देवी हैं, जो माँगने पर वर दे दें? अपने प्रमोशन का भी डौल लगे। एक बार जाकर परखने में क्या बुराई है!

हम लोहे के दरवाजे की ओर बढ़े। पहचान छिपाने को हम हेलमेट का नकाब ओढ़े रहे।

पास देखकर आसानी से लौह-कपाट खुल गए। अंदर बगीचे के बीचोबीच एक रास्ता था। उसके बाद एक सजा-धजा प्रतीक्षा कक्ष था। वहाँ बैठे सज्जन ने आव देखा न ताव। हमसे पास लेकर कंप्यूटर पर नंबर टाइप किया—"अब क्या चाहिए? सिद्धेश्वरी देवी ने प्रमोशन तो करवा दिया। क्या तबादला चाहते हो? कैश-काउंटर पर पाँच लाख जमा करो। इच्छित तीन स्थानों के नाम लिखो। एक माह में मनोकामना पूरी होगी।"

"प्रमोशन का कितना चढ़ावा है?" हमने जानना चाहा, उसने बताया—"दस लाख।" हम उलटे पाँव लौट आए। अपनी अक्ल में आ गया। यह सिद्धेश्वरी का नहीं, भ्रष्टेश्वरी देवी का पूजाघर है। यह आजाद भारत की सबसे नई और शक्तिशाली देवी है। इसके करोड़ों अनुयायी हैं। हर क्षेत्र में इसकी तूती बोलती है। इलेक्शन से लेकर रेल तक के टिकट इसकी मुट्ठी में हैं। सही चढ़ावा हो तो हर गलत मनोकामना पूरी करना इसके बाएँ हाथ का खेल है। हम घर के रास्ते भर दस लाख जुटाने की जुगाड़ का सोचते रहे। हमें यकीन हो गया। मजबूरी का नाम ईमानदारी है, वरना हम भी भ्रष्टेश्वरी देवी के भक्त होते। वह तो गनीमत है, गंजे को भगवान् ने धन के नाखून नहीं बख्शे हैं!

९/५ राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीलाल शुक्ल, रागदरबारी और मैं

● हरीश नवल

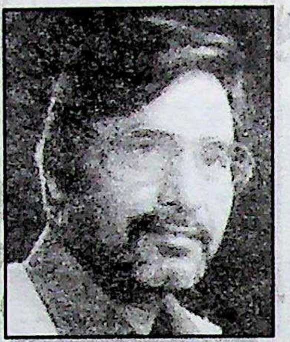

प्रख्यात व्यंग्यकार हरीश नवल को सन् १९८७ में 'बागपत के खरबूजे' पर युवा ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ था। अब तक छह व्यंग्य संकलन, तीन आलोचनात्मक पुस्तकें, नौ संपादित ग्रंथ और बावन ग्रंथों में सहयोगी रचनाकार के रूप में रचनाएँ प्रकाशित। एक हजार से अधिक रचनाएँ देश-विदेश के प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

तेरह राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित। अनेक व्यंग्य अंग्रेजी, बल्गारियन, मराठी, उर्दू, बँगला, पंजाबी और गुजराती में भी अनूदित।

'रागदरबारी' १९६८ में प्रकाशित हुआ। दो वर्ष बाद साहित्य अकादेमी का ठप्पा इस पर लगा, चिंतकों का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ। यद्यपि कुछ वर्ष लगे, पर श्रीलाल शुक्ल साहित्य की मुख्यधारा के राजपथ पर जा लगे। वे मुख्यधारा के जनपथ पर तो वर्षों से थे ही। 'सूनी घाटी का सूरज' लगभग सूना था, पर 'अंगद का पाँव' व्यंग्यकार शुक्ल का पाँव बन गया था, जो भारी पड़ने लगा था। मेरा साबका उसी पाँव से पड़ा था। अद्भुत रचनाशिल्प और सार्थक व्यंग्य का निर्देशन हुआ था। मुझे शुक्लजी का यह व्यंग्य संग्रह १९६८-६९ में उपलब्ध हुआ था, जब व्यंग्य के खड़े पानी के तालाब में मैं उसकी गहराई का अंदाजा लगाना शुरू कर चुका था—यह जाने बिना लिख रहा था कि सार्थक व्यंग्य होता क्या है। व्यंग्य और हास्य के फर्क को मैं महसूस तो कर रहा था। पर गूढ़त्व की प्राप्ति नहीं हो पाई थी। (हुई तो आज तक भी नहीं है, पर सत्य की खोज निरंतर जारी है)। ऐसे में मिरांडा हाउस की कहानी प्रतियोगिता में पुरस्कृत होने पर 'अंगद का पाँव' प्राप्त होना मेरी उपलब्धि ही थी। हरिशंकर परसाई मेरे पसंदीदा व्यंग्यकारों में थे, उनकी कथ्यात्मकता मुझे भाती थी, मैं उन्हें निरंतर पढ़ता रहा था। शरद जोशी की 'नई दुनिया' मुझे नए संकेत देती थी और 'धर्मयुग' के पृष्ठों पर रवींद्रनाथ त्यागी से मैं अकसर मिल लेता था। श्रीलाल शुक्ल का लेखन तनिक भिन्न प्रतीत हुआ था, मैं रमने की प्रक्रिया संपन्न कर रहा था कि तभी 'रागदरबारी' की महत् चर्चा का माहौल भट्ठी बनने लगा। लोकप्रियता का आलम यह था कि कतिपय विद्वान् इस ग्रंथ को संगीत अकादमी की बजाय साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत किए जाने की बुनियादी बहस में शामिल हो रहे थे। पढ़ें या न पढ़ें, पर आम पाठक विशेष पाठक निर्मित होने हेतु 'रागदरबारी' की प्रशंसा में लीन होने लगे थे। सन् १९७१ में मैं दिल्ली विश्वविद्यालय में शिवाजी कॉलेज में प्राध्यापक नियुक्त हुआ और पुस्तकालय की खरीद के लिए आए हिंदी पुस्तकों के बंडल में एक पुस्तक विक्रेता से मैंने हर तरह से भारी-भरकम इस उपन्यास को खरीद लिया। उस दिन घर लौटते हुए मेरी जावा मोटरसाइकिल को कर्मपुरा से शाहदरा पहुँचने में मानो कई युग लग गए। मैं जल्द-से-जल्द 'रागदरबारी' का वाचन कर मित्रों में अपने को जागरूक व चेतन पाठक सिद्ध करना चाहता था।

'रागदरबारी' ने मुझे झिंझोड़ दिया। मेरे रचनाकार के मन पर बरसों बाद वही असर हुआ, बल्कि अधिक तीखा असर हुआ, जो बेढब बनारसी के उपन्यास 'लेफ्टिनेंट पिगसन की डायरी' पढ़ने पर हुआ था। दोनों उपन्यासों के मध्यकाल में कृश्नचंदर कृत 'एक गधे की आत्मकथा' ने भी मुझे शैलीगत प्रयोग सुझाए थे। 'रागदरबारी' तो रागदरबारी है, जैसे कि 'ब्लैक इज ब्लैक' होता है, बल्कि कई बार वर्षों के अंतराल से पढ़ने पर आज भी यही वाक्य मानो पिघलता है, आफ्टर ऑल रागदरबारी इज 'रागदरबारी'।

मैं कभी सोच ही नहीं सकता था कि 'सत्य' की तुलना कभी कोई मनीषी 'ट्रक' से भी कर सकता है। मैं सकते में पड़ गया था, जब मैं पढ़ गया था''' 'जैसे कि सत्य के होते हैं, इस ट्रक के भी कई पहलू थे''' ' इब्तिदा ऐसी है तो अंजाम कैसा होगा, मैंने सोचा था और बार-बार हैरान, परेशान और मुग्ध हुआ था, बल्कि मैं भी रंगनाथ हो गया था। घरघराकर चलते हुए ट्रक में सफर कर रहे शिरिमानजी रंगनाथ की तरह!

रंगनाथ उन दिनों घास खोद रहा था, जिसे श्रीलालजी ने अंग्रेजी में रिसर्च बताया था। क्या वाजिब इत्तेफाक और साम्य था कि रंगनाथ ने भी पारसाल एम.ए. किया था और मैंने भी (१९७०)। रंगनाथ ने रिसर्च शुरू की थी और मैंने भी। मैं दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.लिट्. की रिसर्च डिग्री हेतु मोहन राकेश के नाटकों पर काम कर रहा था। बहुत दुबला-पतला था, कुरता भी पहनता था और झोला कंधे से लटकाने के फैशन में सम्मिलित था, फर्क यह था कि पाजामा के स्थान पर फीकी नीली जीन्स होती थी। मेरा साम्य 'रागदरबारी' के रंगनाथ से हो रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिवपालगंज की यात्रा केवल रंगनाथ की ही नहीं थी, मेरी भी थी। मेरे जैसे हजारों-हजार पाठकों की थी, जो भ्रष्टाचार के गर्त में क्रमशः गिरते स्वतंत्र भारत के कर्णधारों को देख रहे थे। याद है मुझे, डॉ. कन्हैयालाल नंदन ने कहा था, 'शिवपाल गंज तुम्हारा कॉलेज है, तुम्हारा शहर है, हमारा हिंदुस्तान है।'

नवीन उपमान हम डॉ. नगेंद्र के विद्यार्थी कविता में खोजते थे, हमारे दूसरे श्रद्धेय महान् अध्यापक डॉ. विजयेंद्र स्नातक ने हमें गद्य में भी उपमान-खोज पर लगाया था। गद्य मुझे अपने ज्यादा करीब लगता था। मैंने और मेरे एक अभिन्न मित्र 'एक और रंगनाथ' कृष्ण लाल ने 'रागदरबारी' में उपमानों की खोज कर उनके अपने-अपने अर्थ देने शुरू कर दिए थे। एक उपमान गजब था, गजब है, संभवतः इस व्यवस्था में गजब ही रहेगा, वह था शिक्षा-पद्धति पर। मैं और कृष्णलाल नए-नए प्राध्यापक थे, रिसर्च में अस्त-व्यस्त थे, उपमान कभी भूला नहीं—बेहद काम आया। उसका प्रयोग हमने गांधी अनुयायी की भाँति किया, "वर्तमान शिक्षा-पद्धति रास्ते में पड़ी हुई कुतिया है, जिसे कोई भी लात मार सकता है।"

"...शाम की हवा किसी गभर्वती की तरह अलसाई हुई सी चल रही थी।" हम श्रीलाल शुक्ल के 'कीन ऑब्जर्वेशन' पर फिदा हो गए थे। किसी-किसी शाम की हवा मुझे भी ऐसी लगने लगी थी।

ऐसे ही हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में कई वर्षों तक एक उत्तर हमें सारगर्भित सिद्ध करता रहा। मसलन दादाजी ने पूछा, "हरीश तेरा कमरा कितना बिखरा रहता है, तू काम कैसे करता है? करता भी है कि नहीं?"

मैं श्रीलाल शुक्ल हो गया और उत्तर दिया, "बहुत करता हूँ, पर इतना काम है कि सारा काम ठप्प पड़ा है।"

साम्यवाद, गाँव-शहर का रिश्ता, जनता जनार्दन, नेतागिरी, सहकारिता, मैथेमेटिक्स, भाषा, हिंदुस्तानी की नीयत, सिम्बालिक मॉडर्नाइजेशन, धर्म की लड़ाई, वास्तविक द्रव्य, डार्विन सिद्धांत, यूनियनबाजी, विरोधी से व्यवहार, सिनेमा का असर, वीर्य्य का महत्त्व, हिंदी सिनेमा के गाने, नशीले पदार्थ, गुप्त साहित्य, पीढ़ी-संघर्ष, विदेश-प्रभाव, खेती पर लेक्चर, विज्ञापनबाजी, अंग्रेजी का जादू, सरकारी अनुदान, प्यार की फिलॉसफी, गुटबंदी, वेदांत-समीक्षा, इनसानियत का अर्थ, गांधीगिरी का सच, गाँव चुनाव की राजनीति, पद की मर्यादा के असली मायने और भी न जाने क्या-क्या समाजशास्त्रीय सूत्र व व्याख्याएँ श्रीलालजी ने की हैं, जिनका हिंदी साहित्य में कोई सानी नहीं है।

'रागदरबारी' एक ऐसे समाज की व्याख्या करता है, जिसे केवल बेहद प्रैक्टिकल लोग ही चला सकते हैं। गद्दीनशीं सनीचर जैसे लोग ही

साम्यवाद, गाँव-शहर का रिश्ता, जनता जनार्दन, नेतागिरी, सहकारिता, मैथेमेटिक्स, भाषा, हिंदुस्तानी की नीयत, सिम्बालिक मॉडर्नाइजेशन, धर्म की लड़ाई, वास्तविक द्रव्य, डार्विन सिद्धांत, यूनियनबाजी, विरोधी से व्यवहार, सिनेमा का असर, वीर्य्य का महत्त्व, हिंदी सिनेमा के गाने, नशीले पदार्थ, गुप्त साहित्य, पीढ़ी-संघर्ष, विदेश-प्रभाव, खेती पर लेक्चर, विज्ञापनबाजी, अंग्रेजी का जादू, सरकारी अनुदान, प्यार की फिलॉसफी, गुटबंदी, वेदांत-समीक्षा, इनसानियत का अर्थ, गांधीगिरी का सच, गाँव चुनाव की राजनीति, पद की मर्यादा के असली मायने और भी न जाने क्या-क्या समाजशास्त्रीय सूत्र व व्याख्याएँ श्रीलालजी ने की हैं, जिनका हिंदी साहित्य में कोई सानी नहीं है।

होंगे। वैदजी की पॉलिटिक्स के आयाम आँखें खोलते हैं। शिवपालगंज का समाज सच में एक घटना प्रधान समाज है। घटनाएँ एक के बाद एक उभरती चलती हैं। कहीं कोई निष्कर्ष नहीं है, कहीं अंत नहीं है। घटनाएँ विकसित नहीं होती हैं, यह उपन्यास की विशिष्टता है। कोई भी घटना जन्म लेते ही विनाश की ओर अग्रसित होती है।

इस उपन्यास में विकास तो दिखाई देता है, पर प्रगति नहीं दिखती। बौद्धिक समाज की शानदार स्कैनिंग 'रागदरबारी' में है। पात्रों की संरचना कमाल है। रंगनाथ के पास वैद्यजी थे। मेरे घर में मेरे दादा थे, वे भी वैद्य थे। वे भी आयुर्वेदिक और यूनानी नुस्खे बताते थे, पर वे वैद्यजी की भाँति काँइयाँ नहीं थे—मैं उन्हें 'रागदरबारी' के अंश सुनाता था, कभी वे हँसते और कभी गंभीर हो जाते थे और कहते थे 'कभी इनसे मिलाना।'

मैं तो उनसे बहुत वर्षों तक मिला ही नहीं था। हाँ, संपर्क साधन जरूर गंभीर बने थे। सन् १९८६ या ८७ के आरंभ की बात है कि एक दिन मुझे विख्यात मीडियाकर्मी श्री मार्क टूली का फोन आया कि उनकी एक मित्र सुश्री गिलियन राइट मुझसे मिलना चाहती हैं। मैंने आश्चर्य मे मिलने का मकसद पूछा, पता चला कि गिलियन 'रागदरबारी' का अंग्रेजी में—पेंगुइन बुक्स के लिए अनुवाद कर रही हैं, उसी सिलसिले में मिलना था।

मैं रोमांचित था। इन बरसों में मेरे नाम के आगे भी 'व्यंग्यकार' विशेषण जुड़ने लगा था। 'धर्मयुग', 'सरिता', 'सा. हिंदुस्तान', 'कादंबिनी' आदि में व्यंग्य रचनाएँ छपने लगी थीं। मैं और प्रेम जनमेजय व्यंग्य को एक स्वतंत्र विधा करार करने के युद्ध में जुटे थे। संभवतः इसी कारण गिलियन राइट को मुझसे मिलना था। मैं उनके समक्ष खुद को राइट ही सिद्ध करना चाहता था, रॉन्ग नहीं।

निश्चित दिन व समय पर गिलियन राइट मेरे घर आईं और मुझसे 'रागदरबारी' के अनुवाद के विषय में सहयोग और राय माँगी। उन्हें बहुत से ऐसे संदर्भों के सही रूपांतर चाहिए थे, जो अंग्रेजी में नहीं होते। उन्होंने जो सूची दी, उनमें से कुछ मुझे ध्यान हैं। 'शिकायती किताब के कथा-साहित्य में योगदान', 'बाँछें खिल गईं, जहाँ कहीं भी जिस्म में होती हों', 'भूदानी-झोला', 'तुक का आदमी', 'वायु का सेवन और मल-मूत्र का विसर्जन वह भी लगे हाथ', 'लँगोट बंद नंग-धड़ंग', 'आवाज की ऊँचाई से गालियों का महत्त्व', 'धक्कापेल से चलती चाचा की चक्की', 'दो पैसे की किफायत पर मुँह मारना', 'टिप्पस से कुछ बनवाना', 'स्थानीय गुंडागिरी के किसी भी स्टैंडर्ड से होनहार', 'बकरी की लेंडी', 'मुरगी बनकर प्रणाम करना', 'गंजहों के चोंचले', 'लारी-लप्पा', 'अंड-वृद्धि', 'फुट्टफैरी',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सुबुक-सुबुकवादी उपन्यास', 'कृपा की बल्ली लगाना', 'टिल्ल-टिल्ल', 'कौड़िल्ला छाप न्याय', 'मामला चुरैंट होगा', 'चुगद' आदि-आदि।

मैं पता नहीं राइट रहा या रॉन्ग, पर पेंगुइन का वह रूपांतर काफी बिका। 'रागदरबारी' की अंतरराष्ट्रीय ख्याति का एक आधार वह भी बना। अनुवाद के समय रूप्पन बाबू, बद्री पहलवान, दूरबीन सिंह, वैदजी जोगनाथ, रामाधीन, भीखम खेड़वी, लंगड़, बेला, पं. राधेलाल आदि पात्रों के नामों और चरित्रों पर भी लंबी चर्चा हुई थी।

३१ अक्तूबर, १९८७ को मेरी व्यंग्य संकलन की पांडुलिपि 'बागपत के खरबूजे' नाम से भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा लोकार्पित हुई थी। मुझे युवा ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया जाना था। निर्णायकों में शरद जोशी और श्रीलाल शुक्ल जैसे बड़े व्यंग्यकार सम्मिलित थे। मैं अपने दादा पं. त्रिलोक नाथ आजम का हाथ पकड़े इंडिया इंटरनेशनल सेंटर के सभागार की ओर बढ़ रहा था। मेरे ९२ वर्षीय दादाजी मेरे सहारे से आगे चल रहे थे, अचानक कुछ पत्रकार साक्षात्कार के लिए आ गए और दादाजी का हाथ मुझसे छूटने लगा। तभी एक कसरती से शरीरवाले प्रौढ़ व्यक्ति ने दादाजी का हाथ थामा और मुझे कहा कि मैं साक्षात्कार निपटाकर भीतर आ जाऊँ। वे मेरे दादा को ठीक से बिठा देंगे।

मैं सभागार में पहुँचा, देखा कि वह शालीन प्रौढ़ व्यक्ति मेरे दादा के साथ बैठे उन्हें पानी का गिलास दे रहे थे। मुझे देखते ही उठ खड़े हुए और हलका सा झुककर बोले, ''बधाई हो, आज तो आपका ही दिन है।'' मैंने बधाई स्वीकार करते हुए धन्यवाद किया और पूछ लिया, ''आप यहीं होते हैं, इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में?'' ''जी नहीं, कभी-कभी आता हूँ। मैं लखनऊ में होता हूँ। सरकारी मुलाजिम हूँ। मेरा नाम श्रीलाल शुक्ल है, हरीश नवलजी।''

मैं इतनी बड़ी शख्सियत के आगे और बौना हो उठा। मैंने एक महान् कृतित्ववाले साहित्यकार का विराट् व्यक्तित्व भी देख लिया था। एक सच्चे और अच्छे मानव को पा लिया था। मेरे झुके हाथों को उनके श्रीचरणों ने अत्यंत संकोच के साथ ग्रहण किया था। वे मेरे निर्णायक थे और मैं उनके प्रति नतमस्तक था। वे उस समय मुझे मनुष्यत्व के विजेता लगे थे।

फिर उसके बाद? फिर तो उनसे मिलने, पत्रादि लिखने, फोनादि का क्रम चलता रहा। सन् १९९१ से लखनऊ में आयोजित होनेवाली 'माध्यम' की गोष्ठियों में अनूप श्रीवास्तव के माध्यम से अकसर मिलना होता रहा। हर बार उनसे कुछ सीखने को मिला। सन् १९९९ में उनके साथ इंग्लैंड जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। लंदन में आयोजित विश्व हिंदी सम्मेलन में वे दिल्ली एयरपोर्ट से डॉ. नामवर सिंह के साथ-साथ थे। लंदन प्रवास में उन्हें और निकट से देखा और समझा। लंदन में प्रेम जनमेजय भी शामिल हुए थे—वे ट्रिनिडाड से आए थे, जहाँ वे राजनयिक तथा प्रोफेसर के समवेत रूपों में भारत सरकार के अधिकारी थे। उन दिनों किन्हीं मेहरबानियों के कारण मेरी और प्रेम की जोड़ी टूट रही थी, जिस पर आदरणीय श्रीलाल दुखी थे। उन्होंने हम दोनों को बोध कराया था। मुझे कहा था, 'प्रेम को कभी छोड़ना नहीं, बहुत प्यारा इनसान है। ऐसे दो समानधर्मियों की दोस्ती तुम्हारी विधा के लिए भी जरूरी है।'

मैंने तब उनका कद और अधिक ऊँचा पाया था। मैं और प्रेम फिर एक हैं—'ठीक पहले जैसे थे' की तर्ज पर, जिसकी चाह शुक्लजी को थी।

उनके व्यक्तित्व के अनेकानेक रूप भी मैंने देखे हैं। उन्हें लखनऊ के सबसे बड़े अफसर 'नगर प्रमुख' के रूप में कर्मठ देखा। उन्हें एक आदर्श पिता की भाँति देखा। वे एक आदर्श पति रहे। आदरणीया भाभीजी के बाद वे कितने अकेले हो गए, उस वेदना को देखा। उनके संगीतकार पक्ष को देखा, उनके धार्मिक अनुष्ठानों को परखा। उनका मित्र और अभिभावक रूप भी देखा। वे हर रूप में अप्रतिम हैं। एक परफेक्शनिस्ट हैं वे। भाषा, शैली, प्रयोग और परंपरा के नववाहक हैं। उनके व्यंग्य सामाजिक सरोकारों से ओत-प्रोत व्यंग्य हैं। वे सार्थक व्यंग्य को प्रश्रय और पल्लवित करनेवाले बड़े रचनाकार हैं। 'गोदान' के बाद ग्राम चेतना पर लिखा गया 'रागदरबारी' सबसे उत्कृष्ट उपन्यास है, जो प्राय: सभी भारतीय भाषाओं में रूपांतरित होकर यशस्वी हुआ है।

एक रिश्ता लगे हाथ उनके साथ का अपना और बता दूँ। मसूरी के मेरे अभिन्न मित्र स्वर्गीय अशोक कुमार, श्रीलाल शुक्लजी की बेटी-दामाद के समधी थे। बारात में जब मैं अशोकजी के साथ सबसे आगे चलकर अपने स्वागतार्थ वधू पक्ष के यहाँ पहुँचा तो पाया कि वधू पक्ष से अभ्यर्थना के लिए सबसे आगे माला लिये वधू के नाना श्रीलालजी हैं। हम दोनों का भरत-मिलाप सबसे पहले हुआ और उन शुक्लजी ने मुझे कहा, 'आज से तो हम समधी भी हैं', उन्होंने इस घटना के कुछ माह पूर्व मेरी बेटी की शादी का निमंत्रण पाकर पत्र लिखा था, 'मैं तो आपको अभी तक नई पीढ़ी में ही गिनने का आदी था, यह सुखद विस्मय कि विवाहिता कन्याओं के पिताओं के क्लब में (जिसमें मैं तीस वर्ष पहले प्रविष्ट हुआ था।) आप भी शामिल होने जा रहे हैं, मेरे लिए अत्यंत आकर्षक हैं।'

मेरे लिए ऐसे विराट् व्यक्तित्व और कृतित्व के धनी श्री श्रीलाल शुक्ल से आत्मीय और प्रेरक सामीप्य पाना अत्यंत आकर्षक है। उनकी बातें मेरी यादें हैं। उनका कृतिकार मेरा प्रेरक है। मेरा ही क्यों, मेरी व अगली दोनों पीढ़ियों को वे प्रेरणा देते रहे हैं।

वे आत्मिक और बौद्धिक दोनों धरातलों पर ऊँचे रहे। वे कीचड़ में कमल की भाँति खिले और खिलना सिखाते रहे। ज्ञान चतुर्वेदी, प्रेम जनमेजय और भी न जाने कितने उनके निकट के, उनके बाद की पीढ़ी के पास उनके दिए मंत्र हैं, जो सदैव दिशा देते हैं। जब-जब किसी सनीचर के गाली-गलौज नई ऊँचाई छूते हैं और मुझ जैसे रंगनाथ में रँगे मनुष्य को उकसाते हैं और उसे पलायन-संगीत की धुन में बाँधते हैं, तब-तब 'रागदरबारी' का राग मेरे विराग को श्रीलालजी के शब्दों में यूँ मथता है, ''तुम मँझोली हैसियत के मनुष्य हो और कीचड़ में फँस गए हो। तुम्हारे चारों ओर कीचड़-ही-कीचड़ है। कीचड़ की चापलूसी मत करो। इस मुगालते में न रहो कि कीचड़ से कमल पैदा होता है। कीचड़ से कीचड़ ही पनपता है। वही फैलता है, वही उछलता है। कीचड़ से बचो।''

और मैं प्राय: कीचड़ से बच निकलता हूँ तो केवल स्वर्गीय श्रद्धेय श्रीलाल शुक्ल और 'रागदरबारी' की वजह से। वे जहाँ कहीं भी होंगे, मुझे ऐसे ही बचाते रहेंगे। उनकी स्मृति को वंदन! आमीन।

१५ सी, विश्वविद्यालय मार्ग,
दिल्ली-११०००७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

चाँद, मत रोओ अभी

● राकेश भ्रमर

जन्म : ०१ जनवरी, १९५६ को रायबरेली (उ.प्र.) में।

शिक्षा : इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राचीन इतिहास में एम.ए.।

प्रकाशन : 'हवाओं के शहर में', *(गजल संग्रह)*, 'उस गली में' *(उपन्यास)*, 'अब और नहीं' *(कहानी संग्रह)* एवं हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक कहानियाँ, कविताएँ, गजलें, लेख आदि प्रकाशित। दूरदर्शन लखनऊ तथा आकाशवाणी रामपुर और मुंबई से रचनाओं का प्रसारण। 'प्रज्ञा' मासिक पत्रिका का संपादन।

संप्रति : केंद्र सरकार में अधिकारी।

चाँद!
मत रोओ अभी तुम
कुछ नहीं हमने किया है
तुम अभी भी पूर्ण हो
संपूर्ण हो!
दिखती हमें तेरी कलाएँ
रूप की सजती विधाएँ
तुम अभी तक बच रहे हो
क्योंकि पृथ्वी से अलग हो
और संचित कर न पाए
तुम कभी भी वायु-पानी
हम खड़े तल पर तुम्हारे
पर नहीं हैं घर बसाए
मिल गया गर वायु-पानी
तो यहीं पर हम बसेंगे
साँप सा तुमको डसेंगे।

नाश करके हम धरा का
सोचते हैं—
अब बसेंगे चाँद पर हम
ढूँढ़ते हैं वायुमंडल
और पानी हम वहाँ पर
तोड़ते हैं चाँद का तल
क्या पता कुछ तो मिलेगा—
था प्रचुरतम पास अपने
वायुमंडल और पानी
खूब मिलता था धरा पर
पर उसी से आज वंचित हो गए हैं,
प्यास थी अपनी असीमित
और हमने भूख से
ज्यादा ही खाया
आज अपनी लोभ-लिप्सा
से प्रकृति का दिल दुखाया

गरम है वातावरण तो
रो रहा पर्यावरण है
बर्फ के टीले नहीं हैं
खूब है पानी समंदर में
मगर पीते नहीं हैं।
हम स्वयं की आग में ही
जल रहे हैं
और बसने के लिए
अब चंद्रमा पर
निज धरा से ही
पलायन कर रहे हैं।

चाँद!
क्या तुम बच सकोगे?
इस धरा का वायुमंडल
तो न बच पाया
कहाँ तुम बच सकोगे?
टेकते हैं पग जहाँ पर
हम उसे ही लील जाते
बस मनाओ सूर्य से तुम
सोख ले पानी तुम्हारा
वायु हो गर तो उसे
वह गरम कर दे
ताकि हम टिक भी न पाएँ
और तुम अक्षुण्ण ऐसे ही हमेशा
दूर से दिखते रहो हमको
तुम्हारे रूप की तुलना करें
जब सुंदरी कोई दिखे
हम कह सकें
वाह! देखो—
चाँद निकला है धरा पर!
टिमटिमाते हों नखत नभ पर
जुड़ा जाएँ हमारे चक्षु
हँसते-मुसकराते देखकर उनको।

२४, जगदीशपुरम्, लखनऊ मार्ग,
निकट त्रिपुला चौराहा, रायबरेली-२२९३१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

हे राम!

● के.एल. गर्ग

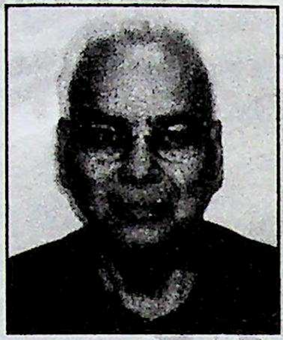

जन्म : १३ अप्रैल, १९४३ धूरी (पंजाब)।
शिक्षा : एम.ए. (हिंदी, अंग्रेजी)।
व्यवसाय : सेवा निवृत्त प्रिंसिपल।
प्रकाशन : 'परिधि में नाचता आदमी', 'कापरेड गिद्ध', 'पुल की धारा' *(उपन्यास)* 'टुटते हुए संस्कार' (कहानी-संग्रह), 'बूट और आदमी' *(व्यंग्य-संग्रह)* तथा पंजाबी में ५० से अधिक पुस्तकें प्रकाशित 'दैनिक अजीत' पंजाबी से पिछले पाँच वर्ष से चल रहा व्यंग्य-काव्य 'गर्गवाणी'।

महात्माजी के पर्सनल सचिव ने प्रेस को बयान दिया है—'महात्माजी की छाती में तीन गोलियाँ लगीं तो उन्होंने 'हे राम' नहीं कहा था।'

सचिव साहेब चश्मदीद गवाह थे। शायद ठीक ही बोलते होंगे। चुनाव के बाद लला भैया, एकदम बंदे से मंत्री कहलाने लग जाते हैं।

'कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, भानुमति ने कुनबा जोड़ा।' सभी मंत्री दल-बल के साथ नंगे पाँव, गले में पल्लू और अँखियों में अपार श्रद्धा लेकर बापू की समाधि पर पधारकर, सीस झुकाते हुए कहते हैं—

'बापू इस दफा तेरी सच्ची सौगंध खाकर कहते हैं कि भ्रष्टाचार न करेंगे, न किसी को करने देंगे। रिश्वत न लेंगे, न देंगे। देश के हित और कल्याण की खातिर सर तोड़ मेहनत करेंगे। तेरे इस देश को नमूने का देश बनाकर ही साँस लेंगे। जनता जनार्दन की सेवा करेंगे।' इतना कहते-कहते सारी टोली की साँस फूल गई।

समाधि के गिर्द फैले सन्नाटे में से केवल एक ही आवाज सुनाई दी थी, 'हे राम!'

कीचड़ सने नेताओं ने यह आवाज नहीं सुनी। आत्महीन नेताओं के पास यह आवाज नहीं पहुँच पाती। हाँ, अलबत्ता राजघाट के माली इस आवाज को सुनकर सकते में आए सर पीट रहे थे।

समाधि से लौटकर नेतागण विदेशी सूटों से लैस होकर सदन में लगी महात्माजी की तसवीर के समक्ष खड़े होकर धड़ल्ले से अंग्रेजी में भाषण झाड़ते हैं। अंग्रेजी में ही बहस करते हैं। अंग्रेजी में लड़ते, हँसते, रोते और हाथ मिलाते हैं। हाथापाई करते हैं तो सदन में लगी महात्माजी की तसवीर में से आवाज आती है, 'हे राम!'

''दलितों पर अत्याचार! उनके घर, झोंपड़ियों जला दी गईं। उनकी औरतों से बलात्कार किए गए। उन्हें बेगार के लिए मजबूर किया जाता है। अछूत कहा जाता है, माना जाता है। कुओं से पानी नहीं लेने दिया जाता। मंदिरों में एंटर नहीं होने दिया जाता। पूजा तो बहुत दूर की बात है।''

दलित रामसुख यह खबर समाचार-पत्र में रो-रोकर पढ़ता है, तो वायुमंडल में एक ही आवाज गूँजती है, 'हे राम!'

महात्मा जीवन भर गाते-गाते भजन किया करते थे—

'रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीता राम।
ईश्वर अल्ला तेरो नाम, सबको सनमति दे भगवान्।'

ईश्वरवालों ने अल्ला का घर ढाह दिया। ईंट से ईंट बजाकर रख दी। अल्ला के घर पर ईश्वर का झंडा फहरा दिया है। जीत के जश्न मनाए गए हैं। डंडे-लाठियाँ हवा में लहराए गए हैं। हम साए अम्मा जाए, रुलाए गए तो अल्ला के ढह गए घर से आवाज आई, 'हे राम!'

रामभक्तों ने यह आवाज न सुननी थी, न ही सुनी। सुन सकते तो भी नहीं सुननी थी। लोकतंत्र में ऐसे मंत्र सुनने के लिए नहीं होते, केवल रटने के लिए होते हैं।

महात्मा-भक्तों पर भ्रष्टाचार के केस चल रहे हैं। केंद्रीय जाँच कमेटी की ओर से उनके घरों में छापे मारे जा रहे हैं। करोड़ों रुपए के गहने, नगदी, साड़ियाँ, एफ.डी. और विदेशी बैंकों की पास-बुकें पकड़ी जाती हैं। पत्रकार टिप्पणी करते हैं—

''अभी तो केवल भनकड़ ही पकड़ी गई है, बहुत कुछ और बाहर आना बाकी है, खिड़की खुल रही है, भृकुटि सिकुड़ रही है, यह अंदर की बात है भैया।''

नेताजी को किसी ने पूछा, ''आजकल क्या व्यस्तता है? देश के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए क्या कर रहे हो?''

''पेशियाँ भुगत रहे हैं। जमानतों के लिए अरजियाँ दे रहे हैं। सबूतों को खुर्द-बुर्द कर रहे हैं।''

''देश के लिए क्या कर रहे हो?''

किसी ने फिर से पूछा तो रोने जैसी सूरत बनाकर कहने लगे—''इधर से टेम मिले तो देश के लिए कुछ करें। देश के लिए कुछ किया है, तभी तो इन सियापों में फँसे हुए हैं। शरीर चाहे मर जाए, पर हमारी देशभक्ति नहीं मरनी चाहिए।''

नेताजी जेल में बैठे, जेल-अधिकारियों को कोसते हुए मर्सिया गाते हैं—

''ईश्वर अल्ला तेरो नाम, सी.बी.आई. को सनमति दे भगवान्।''

समाचार-पत्र में एक सरकारी नोट पढ़ने को मिलता है—''शराब के ठेकों की नीलामी से इस वर्ष सरकार को अधिक आय होने की उम्मीद। शराबबंदी खत्म करने का ऐलान। सरकार गाँव-गाँव, शहर, नगर शराब के नए ठेके खोलेगी। ठेकों से प्राप्त होनेवाली आय को देश की शिक्षा पद्धति की तरक्की के लिए खर्च करेगी। देश में शराब की नदियाँ बहा दी जाएँगी। कभी यहाँ दूध की नदियाँ बहा करती थीं। पंजाब प्रांत शराब का छठा दरिया कहलाएगा।''

भजन गाते-गाते नेताजी की आवाज फटने लगती है तो जेल के एक कोने से आवाज आती है, 'हे राम!'

समाचार-पत्र में एक सरकारी नोट पढ़ने को मिलता है—''शराब के ठेकों की नीलामी से इस वर्ष सरकार को अधिक आय होने की उम्मीद। शराबबंदी खत्म करने का ऐलान। सरकार गाँव-गाँव, शहर, नगर शराब के नए ठेके खोलेगी। ठेकों से प्राप्त होनेवाली आय को देश की शिक्षा पद्धति की तरक्की के लिए खर्च करेगी। देश में शराब की नदियाँ बहा दी जाएँगी। कभी यहाँ दूध की नदियाँ बहा करती थीं। पंजाब प्रांत शराब का छठा दरिया कहलाएगा।''

शराब के प्रति सरकार के उत्साह को सुनकर बस यही आवाज आती है, 'हे राम!'

पर यह आवाज शराबियों की चकड़चौंध, कातिलों की भगदड़ और दलितों की सिसकियों में किसी को सुनाई नहीं पड़ती।

शायद किसी जागते जमीरवाले प्राणी को सुनाई भी देती हो, पर ऐसा जीव लोकतंत्र के जंगल में से कब का लुप्त हो चुका है।

महात्मा का प्रेस-सचिव ठीक ही कहता होगा—''महात्मा की छाती में तीन गोलियाँ लगते वक्त महात्मा ने 'हे राम' नहीं कहा होगा।''

स्ट्रीट-९, न्यू टाउन,
समीप डी.एन. मॉडल स्कूल,
मोंगा-१४२००१ (पंजाब)

नजर का फेर

आमतौर पर किसी दृष्टिहीन व्यक्ति से मिलने पर आपको लगता है कि एक एचआर मैनेजर के तौर पर आप उसके साथ ज्यादा कुछ नहीं कर सकते या अपने उत्पादक व्यवसाय के लिए इसका इस्तेमाल नहीं कर सकते। वैसे भारत में दुनिया के किसी भी हिस्से से ज्यादा दृष्टिहीन बसते हैं। एक चौंकानेवाला तथ्य यह भी है कि देश में ऐसे लोगों की संख्या भी काफी ज्यादा है, जिन्होंने जन्म के बाद अपनी आँखों की रोशनी खो दी। इसका मतलब है कि जन्म के समय उनकी आँखें बिलकुल ठीक थीं।

सथियाक्मेह जयम चैरिटेबल ट्रस्ट चेन्नई स्थित एक संस्थान इन दृष्टिबाधित लोगों के लिए रोजगार का एक बेहतरीन जरिया लेकर आया। उसने अपने मसाज पार्लर में इन्हीं लोगों को नियुक्त किया है। मैं हाल ही में चेन्नई के केंद्र में स्थित केके नगर के इस मसाज पार्लर में गया, क्योंकि मुझे कुछ लोगों ने बताया था कि इस पार्लर में मसाज करनेवाले सभी शख्स दृष्टिहीन हैं।

वैसे यह वैज्ञानिक प्रमाण कि दृष्टिहीन लोगों में किसी चीज को छूकर महसूस करने की जबरदस्त क्षमता होती है। वे रुपए-पैसे को छूकर ही पहचानते हैं और बता सकते हैं कि नोट 500 का है या 100-50 का। यही वजह है, जो उन्हें बेहतरीन मसाजर बनाती है।

इस ट्रस्ट द्वारा प्रशिक्षित छह दृष्टिहीन व्यक्तियों का पहला बैच इस पार्लर को चला रहा है और उन्हें एक बार की मसाज के लिए 75 रुपए मिलते हैं। वे आठ से दस घंटे की शिफ्ट के बाद रोज तकरीबन 450 रुपए घर ले जाते हैं। यद्यपि जिन गलत बातों के लिए मसाज पार्लर पिछले दिनों सुर्खियाँ बनते रहे हैं, उससे इस पेशे की प्रतिष्ठा पर नकारात्मक असर पड़ा है। लेकिन दृष्टिहीनों का यह मसाज सेंटर शहर में धीरे-धीरे लोकप्रिय हो रहा है।

फंडा यह है कि यदि आप ध्यान और पूरी गंभीरता से सोच-विचारकर सही व्यक्ति को सही काम पर लगाएँ तो किसी भी संगठन में आप बेहतर एचआर मैनेजर बन सकते हैं।

लेखक श्री एन. रघुरामन की सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'जीवन जीने के फंडे' से साभार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम नहीं दिखे नगाधिराज

● नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

हाल ही में मसूरी से लौटा हूँ। उत्तरांचल सपत्नीक गया तो इस आशा से था कि बदरी, केदार, यमनोतरी, गंगोतरी हो आऊँगा, लेकिन भारी वर्षा और पहाड़ों की टूटन ने रास्ता रोक लिया और देहरादून से मसूरी जाना हो गया। मसूरी में बताया गया कि मसूरी की उच्चतम उत्पत्यका से हिमाच्छादित नगाधिराज के दर्शन हो सकते हैं और यदि वहाँ से नहीं हुए तो पास ही में धनोल्टी है। वहाँ से तो पर्वतराज की बर्फीली चोटियाँ आसानी से दिखाई पड़ जाएँगी।

हिमालय हमारे संस्कारों की आधारभूमि है और उच्चतम शिखर भी। उसकी छवि काल के तमाम आरोहों और अवरोहों के बीच पीढ़ी-दर-पीढ़ी हमारे मन और मानस में विद्यमान रहती आई है, फिर चाहे इस छवि को हमारे माता-पिता ने गंगा का स्मरण करते, तीर्थों की महिमा का बखान करते या ऊँचाई का अर्थ समझाते हमारे बालमन में रोप दिया हो या जब हम बड़े हुए तो कालिदास से लेकर दिनकर तक ने इसका गौरवगान करते हमें अभिभूत कर दिया हो। इसलिए हिमालय हमारे लिए, हमारी अस्मिता से कुछ इस तरह जुड़ गया कि हरेक आँख की आकांक्षा बनी रही कि वह अपने इस अक्षुण्ण हिमपति को एक बार निहार ले।

ये आँखें भी क्या हैं? आकुलता, अधीरता और अनंत आशाओं की जननी; अतृप्ति की अवतार और अखंड आस्था के जल को अपने में समेट लेने वाले ऐसे घट, जो कभी रीतते नहीं। इन्हीं आँखों को लिये हम उसकी तलहटी में दौड़ते रहे और उन आँखों को याद करते रहे, जो इस उत्तुंग हिमाकार को निहारती रही होंगी। याद आए कालिदास, जिन्होंने हिमालय को इस देश की पहचान के रूप में स्थापित किया—

अस्युत्तरस्यां दिशि देवात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वा परौ तोयनिधी नगाध्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥

(उत्तर दिशा में देवता स्वरूप हिमालय नामक पर्वतों का राजा पूर्व और पश्चिम के समुद्रों में प्रविष्ट होकर पृथ्वी के मानदंड की तरह विद्यमान है।)

और याद आए दिनकर, जिनकी पंक्तियों ने सदैव हर भारतीय को अपना वक्ष उन्नत बनाए रखने की प्रेरणा दी तथा हिमालय को इस देश के पौरुष और गौरव के अखंड प्रतिमान के रूप में स्थापित कर दिया—

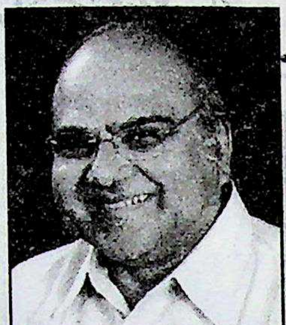

जन्म : ३० जनवरी, १९५२ को हरदा (म.प्र.) में।

शिक्षा : इतिहास विषय में प्रथम श्रेणी में स्नातकोत्तर (भोपाल विश्वविद्यालय)।

लगभग पच्चीस वर्षों से लेखन के क्षेत्र में सक्रिय। अब तक आठ ललित-निबंध संग्रह, दो संपादित ग्रंथ व 'भारतीय चित्रांकन परंपरा' पुस्तक प्रकाशित।

पुरस्कार : मध्य प्रदेश साहित्य परिषद् द्वारा 'मुकुटधर पांडेय पुरस्कार' तथा मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'वागीश्वरी पुरस्कार' से पुरस्कृत।

मेरे नगपति! मेरे विशाल!
साकार, दिव्य, गौरव विराट,
पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल!
मेरी जननी के हिमकिरीट
मेरे भारत के दिव्य भाल!
मेरे नगपति! मेरे विशाल!

हम हिमालय के दर्शन के लिए भटकते उसके इसी अतीत और इसी काव्य में डूबते-उतराते रहे, लेकिन नगपति नहीं दिखाई दिए। वे छुप गए धुंध में, जहाँ दृष्टिपात करते वहीं सिवाय सफेद धुंध के कुछ नहीं दिखाई देता। वाहन चालक से कहते कि दिखाओ हिमालय को और वह हमें ऊँचाइयों पर ले जाता, हमसे यह भी कहता कि हम हिमालय की पहाड़ियों में ही हैं और जहाँ घूम रहे हैं, वह उस हिमालय से भी पुराना है, जिसे हम देखना चाहते हैं। लेकिन मन नहीं मानता था। हम तो उस नगपति को निहारना चाहते थे, जिसके हिमाच्छादित शिखरों और लंबी फैली उपत्यकाएँ हमारी बंद आँखों में जीवंत बसी थीं, लेकिन नगाधिराज नहीं दिखाई दिए।

हम अंततः अपनी धरती पर लौट आए, सोच लिया कि हमारे लिए नगाधिराज खुली आँखों के पर्वतराज नहीं हैं, वे केवल हमारी बंद आँखों की धरोहर हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौटकर सोचने लगा, तुम क्यों नहीं दिखे नगाधिराज?

क्या इसलिए कि इस युग में तुम हमारे जैसों की पहुँच से बाहर बने रहना चाहते हो, ताकि धरती पुत्र यह कह न सके कि उन्होंने भी ऊँचाई देखी है।

क्या इसलिए कि तुम अपनी ऊँचाई के गौरव को इसी तरह जताना चाहते हो और यह संदेश देना चाहते हो कि ऊँचाई ऊँचाई होती है और हर निचाई को यह सच मालूम होना चाहिए कि उसके पास आँखें भले हों, लेकिन उनसे निहारने के अधिकार सीमित हैं?

क्या इसलिए कि आज के जमाने की रीत अपनाते हुए तुम भी यह मान बैठे कि तुम्हें निहारने का अधिकार सिर्फ ऊँचों को है, ऐसे ऊँचों को, जो जाने कितने असंख्य कंधों पर चढ़कर ऊँचे बने हुए हैं।

क्या इसलिए कि तुम दिख जाओगे तो तुम्हें देखकर वे लोग अपने आप को पवित्र मानने लगेंगे, जिससे तुम्हें पवित्र मान लेने से कहीं तुम्हारा तथाकथित स्वाभिमान घट जाएगा?

क्या इसलिए कि शिखर कभी चाहते नहीं कि उन्हें निहारकर उन तक पहुँचने की आकांक्षा पाल ले या कोई भूमिपुत्र यह संकल्प न ले ले कि वह भी अपने धरातल से उठकर तुम तक पहुँच सकता है?

क्या इसलिए कि तुम तेनसिंह और हिलेरी जैसे जीवट पौरुष की पदचापों से सदैव भयभीत रहते हो?

क्या इसलिए कि तुम चाहते हो कि विसंगतियों से भरपूर यह धरती ही हमारी नियती बनी रहे और हमारे कदम उस स्वर्ग की ओर न जा पाएँ, जिसके रास्ते तुम्हारे शिखरों से होकर जाते हैं और जिसे तुमने कुछ चुनिंदा लोगों के लिए आरक्षित कर रखा है?

और क्या इसलिए कि नगपति कहीं हमारी आहट से तुम्हारे कठोर हृदय पर जमी बर्फ न पिघलने लगे, जिसे देखकर तुम्हारे कोमल होने का भ्रम आज तक हमें होता आया है?

यही सब विचार करते मुझे यह लगता रहा है कि शायद इसीलिए तुम नहीं दिखे नगपति।

मेरा यह सोचना वाजिब है, क्योंकि मैंने जिस समय में जन्म लिया है। वह यही सब सोचने को विवश करता है और मुझे ही क्यों, मेरे अपने समय के बुजुर्गों को भी यही विचार करने पर मजबूर करता रहा कि नगाधिराज कहीं अखंड चिर समाधि में तो नहीं बैठे?

कहीं वे महाशून्य में किसी जटिल समस्या का निदान तो नहीं खोज रहे?

> कैसी अखंड यह चिर समाधि?
> यतिवर! कैसा यह अमर ध्यान?
> तू महाशून्य में खोज रहा
> किस जटिल समस्या का निदान?
> उलझन का कैसा विषम जाल?
> मेरे नगपति! मेरे विशाल!

अपने बुजुर्गों की तुलना में मेरी सोच ज्यादा तिक्त है, कटु है। शायद इसलिए कि इस देश में ज्यों-ज्यों समय आगे बढ़ता गया, दरारें भी बढ़ती गई हैं, हर पीढ़ी के लिए रास्ते और दुर्गम तथा संघर्ष और विकट होते चले गए हैं। दरार, दुर्गमपथ और संघर्ष अभिव्यक्ति को तरल नहीं बनाते बल्कि इनके कारण पानी पत्थर हो जाता है, इसलिए नगाधिराज मेरी इस अभिव्यक्ति को कहीं मेरी कुंठा मत समझ लेना। यह मेरी सहज स्वाभाविक वाणी है, जिसे मैं कभी-कभी अपनी कविता भी कह लिया करता हूँ।

मुझे यह भी लगता है दक्षनिकेत कि तुम शायद दिनकर के उस आह्वान से भरे वाणी निनाद को अनसुना करने का यत्न कर रहे होगे, जो उन्होंने तुम्हें जगाने के लिए किया था और अपनी तंद्रा में डूबे तुमने इस ओर ध्यान ही नहीं दिया कि कुछ उत्सुक आँखें तुम्हें उस धुंध के बीच भी खोज रही हैं, जो तुमने अपने आस-पास इसलिए लपेट रखी हैं, ताकि तुम्हें कोई इस तंद्रा से उठा न सके। मेरी आँखें तुम्हें भले न देख पाई हों, लेकिन मेरे कानों में दिनकर का यह आह्वान सदैव गूँजता रहता है—

> तू तरुण देश से पूछ अरे,
> गूँजा कैसा यह ध्वंस राग?
> अंबुधि-अंतस्तल-बीच छिपी
> यह सुलग रही है कौन आग?
> प्राची के प्रांगण-बीच देख,
> जल रहा स्वर्ण-युग अग्नि ज्वाल,
> तू सिंहनाद कर जाग तपी!
> मेरे नगपति! मेरे विशाल!

गिरिराज, तुम मेरी वाणी ध्यान से सुनो, क्योंकि तुम भले दिखाई नहीं दिए, लेकिन मैं तुम्हें वह सबकुछ तो सुनाऊँगा ही, जो मेरे मन में है। यह सुनाना मेरी विवशता भी है। विवशता इसलिए कि यदि तुम दिखाई दे जाते तो मन की बर्फ आँखों के मार्फत पिघलकर तुम्हारे चरणों में बिछ जाती और ओठों को खुलने के लिए कोई अवसर नहीं मिलता, लेकिन तुमने यह बर्फ पिघलने ही नहीं दी। जमी हुई बर्फ का मौन बड़ा कठोर होता है।

गिरिवर, तुम्हें शायद यह मेरी अभिव्यक्ति, प्रार्थना या अभ्यर्थना नहीं लग रही होगी, क्योंकि यह एक ऐसे भक्त का स्वर है, जो काँटों से भरपूर लंबे पथ को पार कर जिस मंदिर में दर्शन करने आया, उस मंदिर के कपाट उसे बंद मिले और उसकी प्रतीक्षा भी व्यर्थ गई। वैसे मेरे पूर्वजों ने तुम्हारे बहुत स्तुति-गान किए हैं, हर युग में और इतने कि उनकी गिनती करना मेरे लिए संभव नहीं है। ये प्रार्थनाएँ, स्तुतियाँ और आराधनाएँ मुझे अभिभूत तो करती हैं, लेकिन कुछ देर के लिए, और फिर मैं तुम्हारे स्वप्निल अस्तित्व का स्मरण कर अपनी धरती पर लौट आता हूँ। मुझे बार-बार लगता है कि तुम्हारे चुंबकीय अस्तित्व ने मेरे पूर्वजों की हर पीढ़ी को अपने मोहपाश में बाँधा है। फिर वे पूर्वज चाहे अनास्थावादी राहुल सांकृत्यायन रहे हों या आस्था से भरपूर हजारीप्रसाद द्विवेदी। इनमें से एक ने अपने पगों से तुम्हारे अधिकांश रास्तों पर चलकर विद्या के अथाह भंडार को ढोया और फिर उसे पूरे विश्व के सामने अपनी पूरी आभा के साथ प्रस्तुत कर दिया तथा दूसरे ने तुम्हारे पूरे इतिहास को खोजा और फिर उसके बहुआयामी स्वरूप को हमारे सामने जब रखा तब हम जान पाए कि तुम्हारी वास्तविक व्यंजना क्या है। आचार्य द्विवेदी ने लिखा कि हिमालय शिव-पार्वती की विहार-भूमि है, नर-नारायण की तपोभूमि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, यक्ष-किन्नर-गंधर्व-विद्याधरों का निवास है। सहस्र-सहस्र ऋषि-मुनियों की आश्रम-भूमि है, गंगा-यमुना-ब्रह्मपुत्र-सिंधु-सरस्वती की उद्‌गम भूमि है। हिमालय की दो कन्याएँ पार्वती और गंगा हैं और गंगा की सात धाराएँ तीन पश्चिम की ओर, तीन पूर्व की ओर और एक मध्य-देश को पवित्र और समृद्ध बनाती हैं। गंगा वस्तुतः भारत की सभी नदियों का नाम है। मध्य-देश की गंगा वह मूल स्रोत है, जो भगीरथ राजा की अक्लांत तपस्या से धरती पर उतरा है। पार्वती और गंगा हमारे अस्तित्व का ही मेरुदंड है। हमारे भीतर और बाहर जो कुछ उत्तम है, जो कुछ सुंदर है, जो कुछ पवित्र है; उसको प्रतीक-रूप में पार्वती और गंगा व्यक्त करती हैं। द्विवेदीजी ने वैदेही सीता को भी हिमालय से जुड़ना बताया है।

वे कहते हैं, 'यदि एक बार भारतवर्ष के रक्षात्मक साहित्य से उन उपकरणों को हटा दीजिए, जो इस देवतात्मा नगाधिराज के प्रसाद के रूप में हमें प्राप्त है और देखिए कि वह कितना अकिंचन हो जाता है। आपको ऐसा करते समय हिमालय-दुहिता पार्वती को खो देना पड़ेगा। जो भारतीय नारी का आदर्श है, सतीत्व की मर्यादा है, तपस्या का मूर्तिमान विग्रह है और पातिव्रत की विजय ध्वजा है। आपको गंगा को, यमुना को, सरयू को, ब्रह्मपुत्र को और न जाने कितनी नदियों को भुला देना पड़ेगा, जो हमारे जीवन को सरस, पवित्र और आनंदोल्लसित कर रही हैं; अन्य गंधर्व, यक्ष, किन्नर, सिद्ध, विद्याधर और देवयोनि-जात विचित्र रसपोषक तत्त्वों से वंचित रह जाएँगे, जो हमारे कवियों और कथाकारों को सरस अभिप्रायों को सुलभ किया करते हैं और उचित अवसरों पर विचित्र उपादानों से साहित्य और शिल्प को समृद्ध करते रहते हैं। तब आपके हाथों में रसहीन, वैचित्र्य-वंचित एक ऐसा मरूकांतार रह जाएगा, जहाँ मानसरोवर की धवल तरंगों में विलास करनेवाले स्वर्ण कमलों के कषाय अंकुर को कुतरने वाले राजहंस लापता हैं; कलक्रेंकार से वर्षा-काल को कोलाहल-मुखर करने वाले क्रौंच-युगलों का अभाव है; आसिंजित-नूपुर वाम चरणों के आघात के शौकीन झबरीले स्तबकोंवाले अशोक पुष्प का चिह्न नहीं है और वे सैकड़ों महर्षि-रत्न गायब हैं, जो अलंकरण को बहुमूल्य और प्रकरण को अमूल्य बना देते हैं। हिमालय के प्रसाद से वंचित भारतीय साहित्य में काम्यक वन नहीं होगा, कनकपुरी गायब हो जाएगी, कैलास और कामाख्या-पीठ निकल जाएँगे, कदली वन लुप्त हो जाएगा, सौंदर्य, शालीनता और सौकुमार्य के केंद्र तिरोहित हो जाएँगे। जिन तत्त्वों ने हमारे साहित्य को अपूर्व रस-सामग्री से मंडित किया है और हमारे चित्त को अनजाने उल्लास से अकारण कंपित, आलोड़ित बनाया है; वे हिमालय की कृपा से ही प्राप्त हैं। उनके अभाव में साहित्य नीरस हो जाएगा, शिल्प वीरान हो जाएगा, ललित कलाएँ विकलांग बन जाएँगी।

आपको गंगा को, यमुना को, सरयू को, ब्रह्मपुत्र को और न जाने कितनी नदियों को भुला देना पड़ेगा, जो हमारे जीवन को सरस, पवित्र और आनंदोल्लसित कर रही हैं; अन्य गंधर्व, यक्ष, किन्नर, सिद्ध, विद्याधर और देवयोनि-जात विचित्र रसपोषक तत्त्वों से वंचित रह जाएँगे, जो हमारे कवियों और कथाकारों को सरस अभिप्रायों को सुलभ किया करते हैं और उचित अवसरों पर विचित्र उपादानों से साहित्य और शिल्प को समृद्ध करते रहते हैं। तब आपके हाथों में रसहीन, वैचित्र्य-वंचित एक ऐसा मरुकांतार रह जाएगा, जहाँ मानसरोवर की धवल तरंगों में विलास करनेवाले स्वर्ण कमलों के कषाय अंकुर को कुतरने वाले राजहंस लापता हैं; कलक्रेंकार से वर्षा-काल को कोलाहल-मुखर करने वाले क्रौंच-युगलों का अभाव है।

हिमालय केवल पृथ्वी का मानदंड ही नहीं है, वह हमारी अनादिकाल से चली आती हुई सांस्कृतिक परंपरा की उत्स भूमि है। भारतवर्ष का जो कुछ श्रेष्ठ है, महान् है, गौरवास्पद है, उसका आश्रय है। हिमालय-हीन भारतवर्ष उसी प्रकार हो जाएगा, जैसे मस्तिष्कहीन मनुष्य। हिमालय हमारा अविच्छेद्य अंग है, ऐसा अंग जो हमारी समस्त सत्ता का भंडार संचित रखे हुए है।

हिमालय है, सदा रहेगा, हमारा रहेगा; क्योंकि वह है, इसलिए हम हैं, हमारी देवतात्मा संस्कृति है!

मैं आचार्य श्री के द्वारा की गई नगपति की इस आराधना से अभिभूत तो हूँ, सहमत भी हूँ कि हिमालय के कारण हम हैं, हमारी देवतात्मा संस्कृति है, लेकिन नगपति के न दिखने से जो व्याकुलता मन में भर आई, उसे मैं रोपूँ कैसे? मैं तो चाहता हूँ कि गिरिराज एक बार अपना मौन त्यागें और आज के उस समय पर भी विश्वास करें, जहाँ कहीं-न-कहीं तप आज भी मौजूद है—

ले अँगड़ाई हिल उठे धरा
कर निज विराट् स्वर में निनाद।
तू शैलीराट हुंकार भरे
फट जाए कुहा, भागे प्रमाद
तू मौन त्याग, कर सिंहनाद
रे तपी आज तप का न काल
नवयुग-शंखध्वनि जगा रही
तू जाग, जाग मेरे विशाल!
मेरे नगपति! मेरे विशाल!

मेरा तुमसे केवल इतना अनुरोध है कि अब तुम सफेद धुंध में लिपटे हुए मत रहना, भविष्य में जब कभी तुम्हारे आश्रय में आऊँ तो जरूर दिखाई दे जाना, यह कहने का मुझे अवसर मत देना कि तुम फिर नहीं दिखे नगाधिराज! (सा॰अ॰)

डी-३३, चार इमली,
भोपाल (म.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरी भारत माँ का छप्पर

● डालचंद शर्मा

जन्म : ५ जुलाई, १९४२, ग्राम व पो.-सावोता, तहसील-जेवर, जिला गौतमबुद्ध नगर (उ.प्र.)।

शिक्षा : साहित्यशास्त्री, साहित्याचार्य, साहित्यरत्न, एम.ए. (हिंदी), बी.एड., एम.फिल.।

कृतित्व : साहित्यिक शैक्षिक संस्थाओं की पत्रिकाओं का संपादन। साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में लेख व कविताएँ प्रकाशित।

संप्रति : सेवानिवृत्त के बाद स्वतंत्र लेखन।

क्या देख रहा यों घूर-घूर, हो रहा स्वत: यह चूर-चूर;
तेरे सिर ऊपर का छप्पर, तेरी भारत-भू का छप्पर।
तेरी भारत माँ का छप्पर ॥ १ ॥

छोड़ो इसको, निकलो-भागो, सोते से उठकर के जागो,
बनने से पहले प्रलयस्थल, भ्रम था, समझे थे शरणस्थल।
इसका बड़ेहरा एक, रख सका न अपनी टेक;
दिखता है कुछ यह लटर-पटर, खा रही इसे है किटर-किटर॥
तेरी भारत माँ का छप्पर ॥ २ ॥

यहाँ दोष नहीं कुछ फूँसों का, फूँसों में बैठी घूसों का,
कुछ रहस्य नहीं तुम जान सके, है खेद नहीं पहचान सके।
खा गईं इसे ये कुतर-कुतर, यों बिखर रहा यह छितर-छितर;
वे जानेवाली निकर-निकर, तुम भी हो जाओ तितर-बितर॥
तेरे सिर ऊपर का छप्पर ॥ ३ ॥

नहीं जान सके बुननेवाले, गुननेवाले, चुननेवाले,
मिथ्या भ्रम में जीनेवाले, नीचे रहकर सोनेवाले।
अंधेर नगरी चौपट राजा, जिसका दाँव लगे सब खा जा;
नहीं देख सकी प्रज्ञा उर्वर, यह था बड़ेहरा अति जर्जर॥
तेरे सिर ऊपर का छप्पर ॥ ४ ॥

अतरी-चतरी, निखरी-सुथरी, सब टेक बनीं पतरी-पतरी,
तंग-बंधन शिथिल पड़े इसके, बँधने से पहले ही खिसके।
गौरी-गोरी, रामा-गौरी, इसको झाँक रहीं चोरी-चोरी;
सदाचरण के झंझा में, बिखरे इसकी पोरी-पोरी॥
यह राम आसरे का छप्पर, यह रामभरोसे का छप्पर॥ ५ ॥

घुन लेकर पैदा हुआ स्वयं, जिस पर आलिंगनबद्ध अहं,
दीमक ने अब पकड़ा इसको, पकड़ा क्या अब जकड़ा इसको।
यह मायावी माया दीमक, इसे लुभा लिया जैसे कीचक;
अब मोक्ष कहाँ अब कहाँ मुक्ति, विक्षोभ जहाँ वहाँ है शक्ति।
हो गया अत: जर्जर छप्पर ॥ ६ ॥

यह मायावी माया क्या है? पापिन काली छाया क्या है?
यह रहस्य नहीं है जटिल-कठिन, कह गए कबीर यह महाठगिनि।
सद्ग्रंथों-संतों ने माना, इसने सब जग विभ्रम में साना;
ज्ञानी समझे, ज्ञानी निबरे, मायावश मिथ्या सच चमके॥
मायावश हुआ यह दुर्बल छप्पर ॥ ७ ॥

जब हुई धर्म की यों हानी, पथभ्रष्ट हुए पद अभिमानी,
आ पहुँची विपदा अनजानी, नहीं जिनका कोई है सानी।
कोई सत्यवीर और कर्मवीर, धर धर्म-ध्वजा बनकर प्रवीर;
प्रगटे भारत भूभागे परकाजे, यों काटे भवबंधन बहुसाजे॥
करे नष्ट-भ्रष्ट तम का छप्पर॥ ८ ॥

म.नं. १४६, सेक्टर-२२ अ,
गुड़गाँव (हरियाणा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

एक रोटी जली हुई

महेंद्र दवेसर 'दीपक'

दरवाजे खुलते हैं, बंद हो जाते हैं। जो दरवाजे भीतर से पीठ पीछे बंद कर दिए जाते हैं और बाहर से खुल नहीं सकते तो कैसा लगता है? मनीष धवन के साथ क्रिसमस की पूर्व रात्रि को यही तो हुआ था। सालों से लंदन में क्रिसमस के दिन बर्फ नहीं पड़ी थी। इस बार व्हाइट क्रिसमस की उम्मीद थी। कड़ाके की सर्दी थी। हालाँकि उसने गरम कपड़े पहने हुए थे, सिर पर फ्लैपदार टोपा था, गले में मफलर था और हाथों में दस्ताने, फिर भी वह ठंड में ठिठुर रहा था। रात के दो बजे थे और लंदन की सुनसान सड़क पर वह अपना ट्रॉली सूटकेस घसीटता चला जा रहा था। सूटकेस में उसके गिने-चुने कपड़े थे। वह सड़क पर अकेला था, किंतु उसे लगता था कि सूटकेस के साथ उसका अतीत भी साथ-साथ घिसटता चला आ रहा है।

बहुत भारी था वह दिन, जो गुजर गया। बहुत सवेरे से ही क्लेयर के साथ झगड़ा शुरू हो गया था। दिन भर शब्दों का घात-प्रतिघात चलता रहा था और स्थिति बेकाबू हो गई।

जन्म : १४ दिसंबर, १९२९, नई दिल्ली।

शिक्षा : एफ.एस-सी., बी.ए., एम.ए.।

भारतीय विदेश मंत्रालय की विदेश सेवा में चयन; जकार्ता, इंडोनेशिया में भारतीय दूतावास में नियुक्ति। भारत सरकार के संभरण मंत्रालय में नियुक्ति। १९७१ में भारतीय हाई कमीशन लंदन में नियुक्ति। १९७१ से लंदन में निवास। १९९२ में नौकरी से अवकाश-ग्रहण।

कृतित्व : कहानी संग्रह 'पहले कहा होता', 'बुझे दीये की आरती' प्रकाशित। प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित।

वह बाथरूम में थी, जब तीन वर्ष की जैन्नी का नैपी मल-मूत्र से भर गया। अंदर से हुक्म हुआ, 'मैं नहा रही हूँ। तुम ही उसका नैपी बदल दो।'

तब मनीष सोचने लगा, 'यह भी कोई कामों में काम हुआ? जैन्नी का नैप्पी वह बदल दे? वह जो देश भर की सुप्रसिद्ध सॉलिसिटर्स की कंपनी 'मनीष एंड टेलर' का सीनियर पार्टनर है? नो वे!'

और फिर एक ऐसी आग लगी, जो दिन भर बढ़ती गई।

जैन्नी जनमी तो भली-चंगी थी। बिलकुल माँ जैसी सुंदर, सुनहरी केश, बड़ी-बड़ी नीली आँखें, तीखे नयन-नक्श। अभी साल भर की भी नहीं हुई थी कि एक भयानक रोग का शिकार हो गई। जान तो बच गई, पर दिमाग नहीं रहा। वह अस्पताल से एक जीवित गठरी बनी घर लौट आई। डॉक्टरों ने फतवा सुना दिया कि उसके लिए चौबीसों घंटे एक परिचारक, एक अटेंडेंट का होना जरूरी है।

क्लेयर पर वज्रपात हो गया। जैन्नी का एक बड़ा भाई भी है, छह वर्ष का जैकब। वह कैसे सँभालेगी इन दोनों बच्चों को?

बेटी का रोग बना माँ का दर्द, किंतु इन बच्चों का पिता डेविड जेंकिंज क्या परिवार की पीड़ा का भागीदार बन सका? उसकी तो जैसे लॉटरी लग गई। वह एक कंपनी में मामूली क्लर्क था। नालायक इतना कि बारह वर्ष की नौकरी के बाद भी उसे कोई प्रमोशन नहीं मिला। कंपनी में छँटनी हो रही थी, किंतु अपनी सीनियरिटी के कारण वह सुरक्षित था। वह अपनी चाल चल गया। बेटी के रोग और उसके लिए परिचायक की आवश्यकता एक तगड़ा बहाना था। इस तरह से एक अच्छी रकम का हैंड-शेक पाकर वह नौकरी से मुक्त हो गया। अब वह घर में ही पड़ा रहता और सरकार की ओर से अटेंडेंस अलाउंस भी पाने लगा।

क्लेयर मनीष की सेक्रेटरी थी। ज्योंही वह काम से घर लौटती, डेविड पब के लिए तैयार बैठा होता, 'डार्लिंग, मैं दिन भर बच्चों के साथ लगा रहा हूँ। मुझे भी तो थोड़ा-बहुत विश्राम चाहिए।'

और उसका यह थोड़ा-बहुत विश्राम देर रात तक चला करता। वह पब में ही कुछ खा लेता और घर में बच्चों के साथ बैठी क्लेयर सोचा करती कि ऑफिस में वह भी तो अंडों पर नहीं बैठी होती, वह भी तो दिन भर मेहनत करके घर लौटती है। उसे कब आराम मिलेगा?

एक रात वह नशे में धुत्त घर पहुँचा तो ध्यान आया कि घर की चाबी तो वह बाहर ही कहीं गिरा आया था। क्लेयर गहरी नींद सो रही थी। बाहर से बज रही घंटी उसने सुनी नहीं, डेविड देर तक चिल्लाता, दरवाजा पीटता रहा। कोई घंटा भर बाद जब दरवाजा खुला तो डेविड के जो हाथ दरवाजा पीट रहे थे, क्लेयर को पीटने में लग गए।

रोती, सुबकती क्लेयर रात भर तकिया भिगोती रही। तड़के सवेरे वह उठ खड़ी हुई। डेविड अभी नशे में बेहोश पड़ा हुआ था। अपना और बच्चों का जो भी कुछ वह समेट सकती थी समेटा, और अपनी देह पर पति के जब्र की दस्तकारी चोटों के नीले-लाल निशान लेकर वह अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मायके पहुँच गई और माँ से लिपटकर रो पड़ी—'मैं उस जानवर के साथ एक पल और नहीं रहूँगी।'

क्लेयर के माता-पिता रेचल और पीटर स्मिथ दोनों रिटायर्ड हैं और पेंशन पर हैं। आराम से बुढ़ापा बीत रहा था। बेटी और नाती, नातिन की मुसीबत उनकी भी मुसीबत बन गई। उन्हें बच्चों को सँभालना पड़ा।

एक अप्सरा सी सुंदर है क्लेयर! उसके सौंदर्य में और भी निखार आ जाता है, जब वह अपने मेकअप और पूरी साज-सज्जा के साथ ऑफिस पहुँचती है। आज उसके रूप की साज-सज्जा है, उसकी चोटों के लाल-नीले निशान! वही लेकर वह अपने बॉस के सामने उपस्थित हुई। ऑफिस में हंगामा मच गया। मनीष सब काम-धंधा छोड़कर क्लेयर को हस्पताल ले गया। वहाँ से उसकी चोटों के फोटोग्राफ और रिपोर्ट लेकर वे दोनों पुलिस स्टेशन पहुँचे। काररवाई तो होनी ही थी। डेविड हथकड़ियों में थाने पहुँचा दिया गया और उस पर शुरू हुए दो मुकदमे। एक तो पत्नी पर जानलेवा हिंसक प्रहार का और दूसरा पत्नी द्वारा तलाक का।

इंग्लैंड की कोर्ट-कचहरियों में न्याय मिलने में अनुचित देर नहीं लगती। डेविड को दो साल की जेल हो गई और क्लेयर को पति से तलाक भी मिल गया। जैन्नी के परिचायक का जो अलाउंस डेव्रिड को मिलता था, वह क्लेयर की मम्मी रेचल को मिलने लगा, क्योंकि जब वह ऑफिस में होती, दोनों बच्चे अपने नाना-नानी के पास रहते।

क्लेयर को तलाक क्या मिला—एक रिश्ता टूटा, एक दूसरा रिश्ता बन गया। वही पुराना किस्सा! एक तरफ दौलत और दूसरी तरफ हुस्न। दौलत मनीष की, हुस्न क्लेयर का। कौन शिकार, कौन शिकारी? दोनों मन-ही-मन अपने को शिकारी समझते। मगर शिकार हुए वे दोनों!

मनीष सड़क पर अपने ट्रॉली सूटकेस के साथ अपना अतीत घसीटता चला जा रहा था और सोचता जा रहा था, क्यों और कैसे वह जिंदगी के इस मरहले पर पहुँच गया?

एक दिन क्लेयर ने बेमतलब पूछ लिया था, 'मिसेज धवन से कब मिलवा रहे हो?'

'मिसेज धवन? पहले वाली या अब वाली?'

'तुमने दो शादियाँ की थीं?'

'नहीं। शादी एक और बीवियाँ दो!'

'यह कैसे हो गया?'

तब मनीष ने दराज में से शोभा की दो तसवीरें निकालकर दिखलाईं। एक में था उसका मधुरिम आकर्षक, सुंदर जवान मुखड़ा और दूसरी में उसका अधजला चेहरा तथा एक आँख बंद! उसने बतलाया कि शोभा के ऑफिस में आग लग गई थी। उस दुर्घटना में उसका चेहरा जल गया और एक आँख जाती रही। वे तसवीरें दिखाते समय मनीष की आँखें भर आई थीं। क्लेयर ने आगे बढ़कर उसकी आँखें पोंछ डालीं और आवेग में आकर मनीष ने उसके होंठ चूम लिये। इसके बाद तो चुंबनों के बहाने बनते गए और वे एक-दूसरे के करीब और करीब होते गए।

फिर वे तीन खतरनाक-घातक शब्द उसके मुँह से निकल गए, आई लव यू! क्लेयर के प्रत्युत्तर में शामिल था एक चौथा घातक शब्द, 'आई लव यू टू!'

दोनों बने एक-दूसरे के शिकार, शिकारी भी!

मनीष ने क्लेयर को यह नहीं बतलाया कि आग की उस दुर्घटना के बाद शोभा की कंपनी ने उसका मुफ्त इलाज भी करवाया था और उसे मुआवजे में चालीस हजार पाउंड भी दिए थे, जो पति-पत्नी के साझे खाते में गए थे और उसने शोभा को फुसलाकर अपने अलग खाते में डलवा लिए थे। बहाना बनाया कि धंधे में प्रगति के लिए इस पैसे से वह अपनी कंपनी का एक बढ़िया सा रिसेप्शन रूम तैयार करवाएगा और एक अच्छी सी रिसेप्शनिस्ट भी नियुक्त करेगा। भोली और निष्ठावान शोभा तुरंत मान गई। 'बैंक में पड़ा पैसा किस काम का? तुम्हारी कंपनी में लगेगा तो कुछ फायदा ही होगा।'

शोभा ने पैसा खोया और पति भी! जो लड़की नियुक्त हुई, वह कंपनी की रिसेप्शनिस्ट नहीं थी। वह थी मनीष की नई सेक्रेटरी क्लेयर! वही क्लेयर, जिसने सर्दी के इस पहर में आज उसे सड़क पर फेंक दिया है।

स्वयं मनीष ने अपनी पत्नी और ससुराल के अहसानों का क्या बदला दिया था? वह भारत में एक साधारण वकील था और उसे शोभा के साथ विवाह के लिए इंग्लैंड बुलाया गया था। यहाँ उसे नौकरी मिली बस-कंडक्टर की! मनीष के स्वर्गीय ससुर स्वयं एक जाने-माने रिटायर्ड वकील थे। वे कैसे बरदाश्त कर लेते कि उनका दामाद—उनकी इकलौती बेटी का पति—एक बस-कंडक्टर की मामूली नौकरी करे? शोभा को दहेज में एक मकान तो वे दे ही चुके थे, अब उन्होंने इंग्लैंड में मनीष की वकालत की शिक्षा का बीड़ा भी स्वीकार किया और उसे उसके पैरों पर खड़ा किया।

अस्पताल से लौट आई शोभा। चेहरे पर अग्नि का भद्दा, अमिट लेप और एक चिराग गुल! वही हुआ, जो हुआ करता है—मनीष की विरक्ति, पति-पत्नी के बीच बढ़ती हुई दूरी और दूरी के साथ बहाने! बहाने काम के आधिक्य के या दफ्तर में हुई पार्टियों के, जो कभी थी ही नहीं। वह तो अपना अधिक-से-अधिक समय क्लेयर के साथ बिताना चाहता था। जब चोरी पकड़ी गई तो शुरू हुई बेवफाई के साथ बेहयाई। मनीष ने घर आना ही छोड़ दिया।

कोई बच्ची नहीं थी शोभा। वह भी जानती थी कि उसके साथ क्या हो रहा था, फिर भी बार-बार धोखा खाने को मन करता! बाहर सड़क पर निकलना तो शोभा को अच्छा नहीं लगता था। वह अपना जला चेहरा छुपाती परदों की ओट से पति के इंतजार में सड़क पर आँख टिकाए रहती, सपनों में भी उसी की आहटें सुनती और रातों में उठ-उठकर घर के दरवाजे की ओर भागती। कई बार आधी रात में वीर और विजय ने माँ को उसके बेडरूम तक पहुँचाया। एक रात उसकी रोती, सुबकती आवाज सुनकर दोनों बेटे शोभा के बेडरूम में चले आए। वह बिलख उठी किसी तरह से, कहीं से अपने डैडी को ढूँढ़कर लाओ।

तब विजय को कहना पड़ा, 'कोई तीन साल का बच्चा माँ-बाप से बिछुड़ जाए तो उसे ढूँढ़ा जा सकता है। एक पचास वर्ष का आदमी जान-बूझकर घर न आना चाहे तो क्या हो सकता है? डैडी को घर का रास्ता मालूम है, जब चाहें लौट आएँ।'

छोटा भाई वीर कुछ ज्यादा ही तेज मिजाज है। वह भड़क उठा, 'डैडी? कौन डैडी? मैं उस बेवफा को अपना डैडी कैसे मान लूँ?'

वह माँ से बोला, 'कैसा है यह आपका पति? आप चेहरा जला बैठीं, एक आँख खो बैठीं! घर के लिए, परिवार के लिए। बदले में आपको मिला क्या? कलेजे पर पत्थर रख लो, भूल जाओ उस बेवफा को। काँच के टुकड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को हीरा समझ बैठी थीं आप! खो गया, सो खो गया!'

माँ की हालत देखकर एक दिन विजय ने पिता को फोन किया, 'डैडी, हमसे क्या भूल हो गई? आप कई दिनों से घर नहीं आए।'

'नहीं बेटा, तुम्हारी कोई भूल नहीं। मैं अब भी तुम दोनों भाइयों से बहुत प्यार करता हूँ। तुम अपनी लॉ की परीक्षा पास करके मेरी कंपनी में शामिल हो जाओ और वहीं से अपना कॅरियर शुरू करो। तुम्हारे छोटे भाई वीर की मेडिकल कॉलेज की पढ़ाई की आर्थिक जिम्मेदारी भी मुझ पर रहेगी। तुम दोनों अब बड़े हो गए हो, शोभा को सँभाल सकते हो।'

'वीर की पढ़ाई की आप चिंता न करें। नानाजी हमारे लिए बहुत छोड़ गए हैं। बस आप घर आ जाइए।'

'सॉरी बेटा! मैं जली हुई रोटी नहीं खा सकता।'

ऊपर बेडरूम के फोन से शोभा ने भी पति की बात सुन ली थी। दुर्घटना वाले दिन अधूरा रह गया उसका दहन आज पूरा हुआ! आज महसूस हुआ कि वह किसी की पत्नी, जीवन-संगिनी नहीं है। वह एक खाद्य पदार्थ है; चबाई-खाई जाने वाली चीज! अब वह उस योग्य भी नहीं रही वह, एक जली हुई रोटी!

शोभा फूट-फूटकर रोने लगी।

वह काँच का टुकड़ा सचमुच पूरी तरह से क्लेयर के हुस्न में खो चुका था, किंतु हुस्न को शीशे में उतारने के लिए दौलत को कई खेल खेलने पड़ते हैं। क्लेयर को पार्टियों में अपने साथ देखने के लिए वह उसे महँगे-से-महँगे कपड़े, जेवर खरीदकर देता, क्योंकि अब वह उसी के साथ अपना भविष्य देखता था।

इंग्लैंड में कानूनन तीन साल से पुरानी हर कार को सरकार द्वारा अधिकृत गैराजों में प्रतिवर्ष टेस्ट किया जाता है, ताकि कोई खतरनाक गाड़ी सड़क पर मौजूद न रहे। इसलिए मनीष ने क्लेयर के लड़के को एक नई बी.एम.डब्ल्यू. ले दी। तलाक के बाद कोर्ट ने मेमसाहिबा को डेविड का फ्लैट प्रदान किया था। हमारे वकील साहिब ने उसे ढाई लाख पाउंड में बिकवा दिया और अपनी ओर से दो लाख पाउंड और डालकर एक शानदार फ्लैट खरीदवा दिया। कार और फ्लैट क्लेयर के नाम रजिस्टर करवाए गए।

दौलत से हुई खरीदारी—हुस्न की, इश्क की!

फिर एक दिन वह भी आया, जब क्लेयर ने मनीष का परिचय अपने माता-पिता रेचल और पीटर स्मिथ तथा बेटे जैकब से करवाया। जैक ने मम्मी के बॉय फ्रेंड के साथ हाथ मिलाया और स्कूल-होमवर्क के बहाने भीतर चला गया। तब जैन्नी के बारे में कहा गया कि वह बीमार रहती है, आराम से सो रही है। मनीष ने न तो जैन्नी को देखा, न उसकी सही स्थिति ही जान सका।

रेचल और पीटर को मनीष अच्छा लगा था, किंतु उन्हें इन दोनों के बीच उम्र का फर्क खटक गया। रेचल ने बेटी को समझाने की कोशिश की तो क्लेयर बेझिझक कह गई, 'मम्मी, मेरे कपड़े, गहने, कार और फ्लैट को देखो। मुझे दो बच्चों की तलाकशुदा औरत को इतना सुख और वैभव कौन दे सकता है? उम्र के फर्क का क्या हमारे देश में आदमी की औसत उम्र ८० वर्ष के आसपास है। भगवान् मनीष को सौ साल की उम्र दे। हम दोनों का भविष्य उज्ज्वल होगा।'

उन्होंने भी समझ लिया कि क्लेयर बच्ची नहीं है। अपना भला-बुरा जानती है।

विजय लॉ की परीक्षा पास कर गया। मनीष ने उसे अपनी कंपनी में शामिल करने का प्रस्ताव क्लेयर के आगे रखा तो उसे बुरा लगा। यों महसूस हुआ कि कोई बाहर का चोर उसके घर-परिवार में, उसके इस नए रिश्ते में सेंध लगा रहा है। उसका बिगड़ा, सिकुड़ा, विचलित चेहरा देखकर मनीष को कहना पड़ा, 'घबराती क्यों हो डार्लिंग? मेरे लिए जैसे मेरे विजय और वीर, वैसे ही हैं तुम्हारे जैक और जैन्नी। हम इन चारों में कोई भेदभाव नहीं रखेंगे।'

क्लेयर इस आश्वासन से संतुष्ट तो हुई, मगर फिर भी कह गई, 'तुम यह पागलपन न कर बैठना। वह मुझ में देखेगा अपनी माँ की सौत! आपस में नफरत बढ़ेगी और कंपनी के काम का जो नुकसान होगा, वह अलग। तुम ऐसा करो, उसे एक अलग कंपनी खोल दो और शुरू-शुरू में हमारी कंपनी का कुछ बिजनेस उसे देते रहना।'

बहुत उचित था यह समझौता! एक व्यावसायिक मीटिंग में मिले दोनों बाप-बेटा। मीटिंग के बाद मनीष अपना यह निर्णय विजय को सुनाकर पछताया।

'वकील साहिब, मुझे नहीं चाहिए आपकी मेहरबानियाँ! इनसाफ और जुल्म के बीच के अंतर को समझते हैं आप? कोर्ट-कचहरियों में आप दुनिया को इनसाफ दिलवाएँ और घर में अपनी पत्नी पर जुल्म करें? आपका क्या अधिकार है कि आप इस पेशे में रहें। जी तो करता है कि मैं ही आपको कोर्ट में घसीटकर तमाशा देखूँ, लेकिन नहीं चाहता कि मम्मी किसी कचहरी में पेश हों। आप मेरे साए से भी बचकर रहिए।'

चोट खाया अपना उतरा हुआ चेहरा लिये वकील साहिब वहाँ से तुरंत हट गए, लेकिन उन्हें अभी अपने छोटे बेटे के सामने भी जलील होना था।

एक दिन अचानक मनीष को मार्क्स एंड स्पेंसर में वीर मिल गया। खरीदे हुए कपड़ों का बिल देने के लिए वह कतार में उसके पीछे आ खड़ा हुआ। तब मनीष ने सोचा, कम-से-कम अपने छोटे बेटे को खुश कर दे। उसने कैशियर को समझा दिया कि उसके ठीक पीछे खड़े उसके बेटे के पैसे भी वह उसी के कार्ड में डाल दे।

वीर ने जिद की कि वह अपने हिस्से के पैसे खुद देगा, तब मनीष ने उसे अपनी भाषा में कहा, 'बाप हूँ तुम्हारा, अब भी अपने दोनों बेटों से वैसा ही प्यार करता हूँ।'

कैशियर ने वीर के हिस्से के पैसे भी मनीष के कार्ड में डाल दिए। वीर दुकान में कोई झगड़ा नहीं करना चाहता था, बाहर आते ही बाप से उलझ पड़ा—

'बेटों से प्यार और माँ से नफरत! क्या अठारह वर्ष का बेटा वकील बाप को समझाएगा कि प्यार, मुहब्बत टुकड़ों में नहीं हुआ करते? यह कानून की किताब नहीं है कि यहाँ फलाँ धारा की फलाँ उपधारा ही लागू हो सकती है, दूसरी कोई नहीं!'

मनीष ने कभी सोचा न था कि वीर इतना जुबाँदराज होगा। बेटा कहता रहा, बाप सुनता रहा—'मम्मी का चेहरा जल गया, एक आँख जाती रही। आपकी तो दोनों आँखें सही सलामत हैं। आपकी दो आँखों से अपनी पत्नी न देखी गई, पर उन आँखों को हमारी माँ भी न दिखाई दी। आपको हमारी माँ स्वीकार नहीं तो मैं आपको अपना पिता कैसे मान लूँ? आपने मेरा बिल चुका दिया। कल आपके ऑफिस में चेक पहुँच जाएगा।'

वीर चला गया। शर्मिंदा हुआ। मनीष गरदन झुकाए सड़क देखता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा! अगले दिन डाक द्वारा उसके ऑफिस में ३५० पाउंड का चेक पहुँच गया।

मनीष के दुखड़े अब शुरू हुए थे। अभी तो उसे और भी बहुत कुछ देखना था।

जेल में पड़ा डेविड मनीष को ही अपनी मुसीबतों का जिम्मेदार समझता था। अब उसकी प्रतिशोध की बारी थी। तलाक के समय कोर्ट ने शर्त रखी कि क्लेयर प्रति सप्ताह जैकब को उसके पिता से मिलवाएगी। उसने यह काम जैकब के नाना को सौंप दिया। डेविड उसे समझाता कि 'उसका और जैन्नी का पिता वही है और उसकी मम्मी का यह नया बॉय फ्रेंड एक बाहर का आदमी है और सबका दुश्मन! उसी के कारण उसे जेल हुई और वह अपने परिवार से अलग हो गया।'

जैकब के नाना भी वहीं होते। उन्होंने लाख टोका, 'तुम इस भोले, नादान के दिमाग में यह क्या जहर भर रहे हो?'

'तो यह है मेरे अहसानों का बदला! जमीन से आसमान पर बिठाया तुम्हें। तुम्हारे ये गहने, कपड़े, यह कार, सब मेरे दिए हुए हैं। तुम्हारे इस फ्लैट में भी मेरा हिस्सा है।'

'सब अपनी हवस के लिए। तुम्हारी हवस मुझ पर अहसान नहीं हो सकती। अपनी मुँहजली मॉन्स्टर से छुटकारा चाहिए था तुम्हें। एक दूसरी औरत चाहिए थी, वह कोई भी हो सकती थी। मैं बदनसीब तुम्हारे सामने थी और शिकार हो गई।'

'यों तो मैं जाऊँगा नहीं। मेरी कार मुझे लौटा दो और फ्लैट में मेरे हिस्से के पैसे दे दो। फ्लैट और कार मेरे हैं, मेरे नाम रजिस्टर्ड हैं।'

'वकील हो, मुकदमा करके देख लो। कपड़ों में एक लो-नेक ब्लाउज और स्कर्ट दे सकती हूँ। कभी बाजार में पहन के निकलना, अच्छे लगोगे!'

'मिस्टर स्मिथ, बाप-बेटे के बीच आनेवाले आप कौन हैं? कोर्ट की पाबंदी आप लोगों पर है। मुझ पर कोई पाबंदी नहीं कि मैं अपने बेटे से क्या कहूँ, क्या न कहूँ। जहर मिला है मुझे, वही बाँट रहा हूँ।'

पिता द्वारा भरा हुआ जहर जैकब पर असर कर गया। वह मनीष से सख्त नफरत करने लगा।

कई महीनों से क्लेयर के माता पिता, रेचल और पीटर ने सोच रखा था कि अपने विवाह की चालीसवीं वर्षगाँठ वे क्रिसमस के दिनों में स्पेन में बिताएँगे। हवाई टिकट आ चुके थे, होटल बुक हो चुका था। तीन हफ्तों के लिए वे जैकब और जैन्नी को क्लेयर के हवाले कर गए।

जैकब और जैन्नी मम्मी के फ्लैट में आ गए। तब मनीष ने देखी आराम से सो रही जैन्नी की सही हालत और तभी सामने आई जैकब की सारी बदतमीजियाँ।

क्लेयर जैकब को प्यार से कभी जेजे, कभी जैक कहकर बुलाती, किंतु जब मनीष उसे इसी तरह से पुकारता तो वह अकड़कर कहता, 'माई नेम इज जैकब जेकिंज, नॉट जैक।' अगर भूले से मनीष ने उससे एक गिलास पानी माँग लिया तो वह अंग्रेजी के तीन अक्षर झाड़ देता— 'डू इट योरसेल्फ अपना काम स्वयं करो।'

क्लेयर ने बेटे को समझाया भी कि तुम मनीष को अपने पिता की तरह समझो और उसकी इज्जत करना सीखो तो वह माँ को भी साफ कह देता, 'नो, नैवर! माई फादर इज मिस्टर डेविड जेकिंज! नो वन कैन टेक हिज प्लेस।'

बीस दिन तो क्या चार ही दिन में छटाँक भर के इस छोकरे ने मनीष की जिंदगी दूभर कर दी।

क्लेयर के फ्लैट में जैन्नी के लिए विशेष प्रबंध किए गए। उसकी सुरक्षा के लिए उसकी खटिया के इर्द-गिर्द जंगला लगाया गया। उसके पुराने झुनझुने उसके सिर के ऊपर टाँगे गए, खटिया की बगल में एक तिपाई पर बीमारी से पहले की उसकी हँसती हुई तसवीर रखी गई। जैन्नी के सिर के सामने वाली दीवार पर उसका एक रंगीन पोर्ट्रट टाँगा गया, किसी तरह से लड़की के दिमाग के बंद कपाट फिर से खुल जाएँ, इसलिए!

खटिया के सिरहाने दूसरी तरफ एक साइड-टेबल पर उसकी रोजमर्रा की दूसरी आवश्यकताएँ, उसकी दवाइयाँ, उसके नैप्पी का बंडल, नैप्पी बदलने के लिए महीन रबड़ के दस्तानों का पैकेट। हर बार नैप्पी बदलते समय नए दस्तानों की जरूरत पड़ती थी। झुनझुनों और तसवीरों के सुझाव मनीष ही के थे और नैप्पी तथा दस्तानों के पैकेट की भी उसे पूरी जानकारी थी।

क्लेयर बाथरूम से निकली और जैन्नी को देखकर बरस पड़ी।

'कैसे इनसान हो तुम? लड़की मल-मूत्र में पड़ी रही और तुमसे उसका नैप्पी भी न बदला गया!'

'मुझसे नहीं सँभलती तुम्हारी यह लड़की!'

क्लेयर जैन्नी का नैप्पी बदलती हुई बड़बड़ाती रही—'तुम तो कहते थे कि विजय, वीर, जैक और जैन्नी के बीच कोई भेदभाव नहीं होगा। अब यह मेरा, तुम्हारा कहाँ से आ गया?'

'तब मैंने जेक और जैन्नी को नहीं देखा था। जैकब जैसा बदतमीज लड़का तो दुनिया में नहीं होगा और बेचारी जैन्नी जैसी हुई, न हुई!'

मनीष का यह वाक्य क्लेयर के अंतर को छलनी कर गया।

'जैक अभी छोटा है, सुधर जाएगा! मगर जैन्नी के लिए ऐसी बात करते तुम्हें शर्म नहीं आई? उसकी तसवीरें देखी हैं तुमने? हँसती, खेलती बच्ची थी वह! एक हादसे का शिकार हो गई, ठीक तुम्हारी शोभा की तरह। तुम तो अपनी एक आँख वाली मुँहजली मॉन्स्टर को छोड़ आए। मैं जैन्नी की माँ हूँ, कहाँ फेंक दूँ उसे? क्या उसका गला घोंट दूँ?'

शोभा के प्रति द्वेष में कहे गए क्लेयर के ये घिनौने शब्द एक आँख वाली मुँहजली, मॉन्स्टर मनीष को बहुत बुरे लगे। अपनी पत्नी से अलगाव में वह बेचारी बिलकुल निर्दोष थी और अपराधी सरासर वही था। निरुत्तर हुआ वह बगलें झाँकता रहा। क्लेयर रोती हुई वहाँ से उठी और दूसरे कमरे में बंद हो गई।

उस दिन दोपहर का भोजन नहीं हुआ। जैक ने बिस्कुटों का डिब्बा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाली करके काम चला लिया। मनीष ने व्हिस्की की बोतल खोल ली। उसकी शराब हो चुकी तो वह चुपचाप बाहर निकल गया। बंद होते दरवाजे की खटाक जैक ने सुनकर अनसुनी कर दी। वह अपने क्रिसमस के खिलौनों में मस्त देखता रहा।

उधर अपने कमरे में निढाल क्लेयर नहीं जानती, कब उसकी आँख लग गई। शायद कोई बुरा सपना देखा होगा। वह हड़बड़ाकर उठी तो देखा, अँधेरा हो चुका था। तब ध्यान आया कि दोपहर का खाना तो हुआ नहीं। जैकब भूखा होगा। जैन्नी को दवाई देनी थी, उसे दूध पिलाना था।

'सॉरी, बेटा! मुझे नींद आ गई थी। तुमने कुछ खाया कि नहीं। मैंने बिस्कुट खा लिये थे और वह विलेन मनीष कहाँ है?'

'वह ड्रिंक कर रहा था। फिर उठकर मालूम नहीं कहाँ गया।'

क्लेयर ने जैन्नी को दूध पिलाया, उसे दवाई दी। तभी दरवाजे की घंटी बजी। जैकब ने दरवाजा खोला। सामने मनीष खड़ा था।

क्लेयर ने पूछा, 'कहाँ थे तुम? तुम तो अंदर कमरे में बंद हो गई थीं। पेट तो भरना था कि नहीं? खैर, अच्छा तंदूरी लंच हो गया। जैक को भी साथ ले जाते तो क्या बिगड़ जाता? बेचारे को बिस्कुट खाने पड़े।'

चोरी पकड़ी जाने के बाद चोर जैसी हालत थी मनीष की! वह केवल सॉरी कह सका। लंबे समय तक दोनों के बीच मौन छाया रहा। आखिर मनीष ने चुप्पी तोड़ी, 'भूल जाओ सुबह की बातें। जैन्नी ठीक होती तो कहीं अच्छी सी जगह डिनर करते। आज रात डिनर में क्या होगा?'

क्लेयर सुबह से सुलग रही थी। जैकब के प्रति मनीष के व्यवहार ने आग में तेल का काम किया। वह भड़क उठी—

'तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं! बहुत हो लिया। मेरी-तुम्हारी अब और नहीं निभेगी। तुम हमारी जान छोड़ो और चले जाओ।'

'क्या कह रही हो तुम?'

साफ शब्दों में, गेटआउट!'

और क्लेयर ने मनीष का सामान उसके ट्रॉली सूटकेस में भरना शुरू कर दिया। मनीष बड़बड़ाता रहा—'तो यह है मेरे अहसानों का बदला! जमीन से आसमान पर बिठाया तुम्हें। तुम्हारे ये गहने, कपड़े, यह कार, सब मेरे दिए हुए हैं। तुम्हारे इस फ्लैट में भी मेरा हिस्सा है।'

'सब अपनी हवस के लिए। तुम्हारी हवस मुझ पर अहसान नहीं हो सकती। अपनी मुँहजली मॉन्स्टर से छुटकारा चाहिए था तुम्हें। एक दूसरी औरत चाहिए थी, वह कोई भी हो सकती थी। मैं बदनसीब तुम्हारे सामने थी और शिकार हो गई!'

'यों तो मैं जाऊँगा नहीं। मेरी कार मुझे लौटा दो और फ्लैट में मेरे हिस्से के पैसे दे दो। फ्लैट और कार मेरे हैं, मेरे नाम रजिस्टर्ड हैं।'

'वकील हो, मुकदमा करके देख लो। कपड़ों में एक लो-नेक ब्लाउज और स्कर्ट दे सकती हूँ। कभी बाजार में पहन के निकलना, अच्छे लगोगे!'

सोफे पर पसरा मनीष टस-से-मस नहीं हुआ। उसने सपने में भी नहीं सोचा होगा कि एक ही दिन में उसके साथ यह सब हो जाएगा।

क्लेयर अपना काम करती रही।

'तुम्हारा जो भी सामान इस ट्रॉली सूटकेस में समा सकता था, मैंने रख दिया है। बाकी जो भी बचा हो, बाद में मँगवा लेना।'

मनीष अब भी सोफे पर जमा रहा। क्लेयर चिल्लाई, मैं एक पल को भी तुम्हारा मुँह नहीं देखना चाहती। तुम निकलते हो या मैं पुलिस बुलाऊँ?'

मनीष को पुलिस से क्या डर? उसे डर था मीडिया का! सोसाइटी में उसका नाम है, स्टेटस है। उसके जीवन की यह वीभत्स झाँकी टी.वी. पर दिखाई जाएगी, रेडियो पर, अखबारों में चर्चा होगी और वह हार गया, गिड़गिड़ाता हुआ सा बोला, 'आधी रात हो चली है। आज तो बर्फ भी पड़ेगी। बिना बुकिंग के क्रिसमस की इस रात खुदा मिल सकता है, होटल में कमरा नहीं मिल सकता। मैं कल तड़के, सवेरे निकल जाऊँगा। मौसम पर मेरा कोई कंट्रोल नहीं और मेरा कोई होटल भी नहीं। सुबह तक शायद तुम्हें मुझ पर तरस आने लगे।'

'तुम्हें जाना होगा, आज और अभी!'

मनीष बाहर आ गया। सुनसान सड़क और तीरों सी चुभती ठंडी हवा। खाली टैक्सी तो कोई थी नहीं। जो भी थीं, सब भरी हुई। बीच-बीच में कुछ लोगों की कारें गुजर जातीं। गाते-बजाते नौजवान, लड़के-लड़कियों से ठसाठस भरी हुई। इस मौसम में पैदल चल रहे अकेले यात्री पर उनकी नजर पड़ती। फिर जब वे उसे चिढ़ाते हुए कार का शीशा खिसकाकर उसे 'मैरी क्रिसमस' कहते तो उसे आग लग जाती। देश भर में खुशियाँ मनाई जा रही थीं। घरों, दुकानों के बाहर जगमगाती बत्तियाँ, सड़कों पर रोशनी के महराब, पेड़ों पर रंग-बिरंगे बल्बों की सजावट, उसे लगता सभी उसका मजाक उड़ा रहे थे। अब तो बर्फ भी पड़नी शुरू हो गई थी और उसका घर अभी भी कोई डेढ़ मील दूर था।

बर्फबारी तेज हो गई थी, घरों की छतों पर, पेड़ों पर, सड़कों पर सफेद परत चढ़ने लगी थी और सुनसान रात का वह अकेला राही आखिर घर पहुँच ही गया। यही थी उसकी मंजिल, उसके अतीत और वर्तमान का संगम!

विजय और वीर घर से बाहर किसी क्रिसमस पार्टी में थे। शोभा घर में अकेली थी। मनीष ने घर की घंटी बजाई, 'आती हूँ, बाबा! नालायकों से कई बार कहा है कि कार की चाबी के गुच्छे में घर की चाबी भी रख लो, पर इन पर कोई असर हो, तब न?'

एक साथ घर की कई बत्तियाँ जलीं। शोभा के बेडरूम की, सीढ़ियों की, हॉल की और बाहर दरवाजे के ऊपर की। दरवाजे में एक स्पाइ-होल भी हो रखा है। काँच के टुकड़ों का एक नन्हा सा झरोखा, जिसमें भीतर से बाहर के आगंतुक की पहचान तो हो सकती है, किंतु बाहरवाला भीतर नहीं देख सकता। इस प्रक्रिया के लिए शोभा की एक आँख बहुत है!

शोभा की एक अकेली आँख ने आगंतुक को पहचान लिया और नहीं भी! एक बार की जली हुई रोटी फिर से अनजली कैसे हो जाए? दिल के तवे से सड़ा-सड़ा सा धुआँ अब भी उठता है और उस बेचारी आँख को चुभता रहता है। वह धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़ गई। सभी बत्तियाँ फिर से गुल हो गईं।

बाहर बर्फ गिरती रही!

Purley Downs Road,
Xouth Croydon,
Surrey, CR2 ORB

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाजरा कहे मैं बड़ा अलबेला

● हर्षनंदिनी भाटिया

शीतकाल में कठोर सर्दी से बचाव के लिए एक ओर गरम व ऊनी कपड़े बाह्य शरीर को ढकने में सहायक होते हैं तो आंतरिक रूप से ऊर्जा उत्पन्न करनेवाले गरम भोज्य पदार्थ भी उपयोगी होते हैं। ब्रजमंडल में अनेक प्रकार के व्यंजन सर्दी का शमन करने हेतु तैयार किए जाते हैं। मेवा, मेवा के लड्डू, केसर-बादाम-काजू की बरफी तथा अन्य प्रकार के पाग तो संपन्न घरानों में बनाए जाते हैं, किंतु उत्तर भारत के बड़े भाग में मध्यम व निर्धन वर्ग में तिल व गुड़ से बने हुए लड्डू अधिक ऊर्जा प्रदान करते हैं। किसान परिवार के भोजन में 'बाजरा' का प्रयोग किया जाता है। बाजरे के विभिन्न पदार्थ घर-घर में बनाकर बड़े प्रेम से खाकर सभी हर्षित होते हैं। ब्रज एवं हरियाणा की संस्कृति में बाजरे का अधिक महत्त्व है। लोकजीवन से संबंधित गीत भी प्रचलित हैं। लोकगीत प्रचलित होने के कारण 'बाजरे' का महत्त्व स्वयंसिद्ध हो जाता है।

ब्रज व हरियाणा के लोकगीतों में बाजरे से संबंधित अनेक लोकगीत गाए जाते हैं। यद्यपि यहाँ अनेक प्रकार के अनाजों का उपयोग किया जाता है, परंतु बाजरे की छिपी हुई पौष्टिकता निराली है। बाजरा सर्दी को दूर तो करता ही है, वरन् बल भी प्रदान करता है। अतएव शक्तिवर्द्धक है। बाजरा स्वयं अपनी उपयोगिता दरशाता है—

'बाजरा कहे मैं बड़ा अलबेला,
दो मुशल्ल ते लड़ूँ अकेला।
जो तेरी नाजो खीचड़ी खाय,
फूल काय कोठी है जाय॥'

यह उल्लेखनीय है कि बाजरा बहुत छोटा, गोल और चिकना होता है। छोटा होने पर भी शक्तिप्रद है। बाजरे को कूट-छानकर खिचड़ी बनाई जाती है। यह अधिक स्वादिष्ट लगती है। दूध में डालकर खीर बनाने पर अधिक प्रिय प्रतीत होती है, साथ ही बलवर्द्धक भी होती है। किंतु बाजरे को कूटने का कार्य कठिन है, क्योंकि छोटा होने के कारण ऊखल से निकल-निकलकर भागता है। यह छोटा सा बाजरा बड़ा नटखट है। इसका चित्रण लोकगीतों में मिलता है—

जन्म : २८ जून, १९३२।
शिक्षा : एम.ए., पी-एच.डी. (हिंदी)।
कृतित्व : लगभग नौ पुस्तकें लोक-साहित्य एवं विभिन्न विषयों पर प्रकाशित।
सम्मान-पुरस्कार : 'सरस्वती', 'साहित्य रत्न', 'अखिल भारतीय संस्कृति पुरस्कार', 'ब्रजविभूति', 'ब्रजविभूषण', 'विद्याश्री', 'साहित्य मार्तंड' सहित अनेक पुरस्कार एवं सम्मानों से सम्मानित।
स्मृतिशेष : ८ जून, २०११।

'आध पाव बाजरा कुट्टण बैठी,
उछल-उछल घर भरियो शैतान बाजरा।
आध पाव बाजरा पकावन बैठी,
खदक-खदक हँड़िया भरियो शैतान बाजरा॥'

यही गीत ब्रज प्रदेश में एक अन्य रूप में गाया जाता है। ब्रजनारी अपने पति से बाजरे के नटखटपन होने के बारे में कहती है—

'जिया का जंजाल मुआ बाजरा लायो।
जब बाजरे को कूटन बैठी,
बाजरा उड़ि-उड़ि जाए मुआ बाजरा। राम कसम बाजरा।'

वस्तुत: भारत के शहरवासी मध्यम व निर्धन परिवार में बाजरे का प्रयोग होता है, किंतु ग्रामवासी प्रत्येक ऋतु में बाजरे के विभिन्न स्वादिष्ट व्यंजन बनाने-खाने में रुचि लेते हैं। ग्रीष्म ऋतु में बाजरा रात्रि में भिगो देने पर प्रात: भोजन के लिए प्रयुक्त हो जाता है। बाजरा कुठलों में भरकर रखने पर कीड़ा नहीं लगता।

बाजरे के गुणों को पहचानकर इसकी लोकप्रियता में वृद्धि हो जाती है। स्वास्थ्यवर्द्धक होने के साथ ही ऊष्मा प्रदान करना इसका विशेष गुण है। बाजरा विभिन्न प्रकार से प्रयोग कर नवीन स्वादिष्ट व्यंजन प्रस्तुत करनेवाला अनुपम अन्न है। ग्रामवासी रुचिपूर्वक बाजरे का उपभोग कर पूर्णरस से लाभान्वित होते हैं।

बाजरे की रोटी और बथुए के साग का अभिन्न संबंध है तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक घी व गुड़ से बाजरे की रोटी बड़े चाव से खाते हैं। रोटी के महीन टुकड़ों में गुड़ व घी मिलाकर चूरमे के लड्डू अधिक स्वादिष्ट प्रतीत होते हैं। गीत में भी उल्लेख किया है—

'बाजरे की रोटी पोई रे हालड़ा बथुए का राँधा रे साग।'

रोटी बनाने के लिए आटा गूँधते समय लोच पैदा करके और हथेली के हलके दबाव से रोटी बनाई जाती है। यह बेलन से नहीं बनती। राजस्थान में मुख्य भोजन के रूप में दूध, घी, दही, मट्ठा, रोटी एवं चूरमा प्रयुक्त किया जाता है। ग्रीष्मकाल में भी यह भोजन उनको स्वस्थ रखने में सहायक होता है। बाजरे की रबड़ी भी गरमी में बड़े चाव से खाते हैं, जो शरीर को ठंडक पहुँचाती है। बाजरे का आटा, दो समय की खट्टी छाछ में नमक डालकर हँड़िया में पकाकर चाशनी जैसी बन जाने पर प्रातः अल्पाहार के रूप में लेकर कार्य करने जाते हैं, फिर बारंबार उन्हें कुछ खाने की आवश्यकता नहीं रहती। बाजरे का मीठा व नमकीन दलिया भी स्वादिष्ट बनता है। इसे दूध या दही से खाते हैं।

बाजरे की मीठी व नमकीन टिकिया भी बनाई जाती हैं। तिल डालने पर कुरकुरी और रुचिकर प्रतीत होती हैं। पूरियाँ भी तलते हैं। उबालने पर बाजरा फूलकर दुगुना हो जाता है। दूध-चीनी के साथ विशेष पर्वों पर भी बाकली के रूप में प्रयोग किया जाता है। बाकली जन्मदिन अथवा विवाहोत्सव पर बनाकर बाँटी जाती है।

हरियाणवी दंपती बाजरा और ज्वार की फसल आने पर हर्षित होते हैं। नारी की दृष्टि आभूषणों की ओर रहती है। प्रसन्नचित्त हो वह कहती है—

'नौ मन बीघे नीमजा गोरी घणा बाजरा दस मण बीघे जुआर।
अपणौ घड़ाले रे हलिड़ा गोखरू मेरी भँवर की नाथ॥'

कानों में धारण करनेवाला आभूषण अधिक प्रिय प्रतीत होता है। गीत में नायिका की अलंकारप्रियता दर्शनीय है—

'म्हारी मीठी लागै खीचड़ी, म्हारी चोखी लागै दाल,
छलायो छाड्यो बाजरो, म्हे दली ए मूँगा की दाल।
खदबद सीझै बाजरो, कोई लथपथ सीझै दाल।
दूध खीचड़ी खावा बैठ्यो, कोई तरसै म्हारी जाउ॥'

श्रम की सद्यः फल-प्राप्ति की सार्थकता का प्रतीक दिग्दर्शित है। ब्रज प्रदेश की ब्रजनारी की अभिलाषा रहती है कि अनाज फसल कटने के पश्चात् अधिक मात्रा में आए, तो घर भर जाए—

'कबहूँ न बोयौ ज्वार बाजरौ कबऊँ न लाए लड़ा भरिकैं।
बाजरा अबके लाए लड़ा भरि कैं।'

अतः बाजरा जनसाधारण को जीवनदान प्रदान कर महत्त्वपूर्ण बन जाता है।

'नंदन' भारती नगर
मैरिस रोड, अलीगढ़

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग पहेली (७५)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० नवंबर, २०११ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते जनवरी २०१२ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (७३) का हल

१ स	फ	२ ल	३ ता	■	४ ह	५ म	जो	६ ली
नि	■	७ ला	प	८ र	वा	ही	■	ला
९ क	१० प	ट	■	च	■	११ न	१२ र	म
१३ ट	र	■	१४ प	ना	१५ ह	■	१६ वा	य
■	१७ त	दू	र	■	१८ या	त	ना	■
१९ प	त्र	■	२० चा	२१ ह	त	■	२२ हो	२३ श
२४ ह	ता	२५ श	■	ल	■	२६ क	ना	त
चा	■	२७ त	२८ र	फ	२९ दा	गी	■	रं
३० न	जा	क	त	■	३१ स	ब	ज	ज

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री राधेश्याम सोनी**
१६२, बाबा सावन सिंह नगर
ब्यास, अमृतसर-१४३२०१

२. **श्री नसीम जी**
(मैनेजर, को-ऑपरेटिव बैंक, भटौलियाँ)
ग्राम : भटौलियाँ
थाना : बैरगनियाँ
जिला : सीतामढ़ी (बिहार)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई!

वर्ग-पहेली ७१ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री फकीरचंद दुल (कैथल), अनु संधु (फरीदाबाद), विजयपाल सेहलंगिया, लक्ष्मी ब्रह्मा, सी.आर. नाहड़िया (महेंद्रगढ़), मानक तुलसीराम गौड़ (रायगढ़), प्रेम कुमार साहु (छिंदवाड़ा), बबन झा, बलभद्र प्रसाद, बच्चा दुबे, सुधीर दुबे, कमलेश झा, डॉ. कृष्णा साह, नवल साह, राजेंद्र राम, महेश महतो, राजेश महतो (बैरगनियाँ), राजेश्वर प्रसाद मिश्रा (जबलपुर), रेनू अग्रवाल (जयपुर), कुसुम गोयनका (दिल्ली), पवन पखरोलबी (हमीरपुर), देवकीनंदन कांडपाल (अल्मोड़ा)।

बाएँ से दाएँ—

१. धूर्त (४)
५. काजी (२)
६. श्री रामचंद्रजी के परदादा (२)
७. हस्तक्षेप (३)
८. वर्षाकाल (४)
१०. ठाठ-बाट (२)
१२. बिचौलिया (३)
१४. हवा (३)
१६. दूसरे को लज्जित करना (४)
१८. पृथ्वी (२)
२०. जमाया हुआ ऊनी कपड़ा (३)
२२. दगाबाज (३)
२३. रिश्ता (२)
२५. टीसना (४)
२७. मजबूर (३)
२८. चैत की फसल का एक प्रसिद्ध अन्न (२)
२९. पॉकिट (२)
३०. अड़ना (४)

ऊपर से नीचे—

१. शोभा की अत्यधिक वृद्धि करना (२, २, ३)
२. छोटा (२)
३. विष (२)
४. मर्यादा-रहित (५)
५. समारोह (३)
८. शक्तिशाली (४)
९. पति की माता (२)
११. तीखे व्यंग्य सुनाना (२, २, ३)
१३. शर्म (२)
१५. घुँघरू का धीमा शब्द होना (४)
१७. नवजात शिशु के नाम रखने की रस्म (५)
१९. विलुप्त (२)
२१. सेवक (२)
२४. पोखर (३)
२६. लेखनी (३)
२८. अस्थिर (२)

वर्ग पहेली (७५)

१	२		३	■	४	■	५	
६		■		■	७			■
	■	८		९		■	१०	११
१२	१३		■	१४		१५	■	
१६			१७	■	१८		१९	
	■	२०		२१	■	२२		
२३	२४	■	२५		२६		■	
■	२७			■		■	२८	
२९		■		■	३०			

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

....

....

वर्ग पहेली (७४) का हल अगले अंक में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक मिला। विद्या विंदु सिंह की कहानी 'काशीवास' आज के परिवारों पर सटीक रेखांकन करती है। आज समाज से मानवता लुप्त होती जा रही है। रामदेव शुक्ल की कहानी 'पिता-पुत्र' भी बेहद पसंद आई। लेखकों के पते के साथ-साथ अब मोबाइल नं. देना भी शुरू किया जाए, ताकि लेखकों को प्रतिक्रिया-स्वरूप तुरंत धन्यवाद दिया जा सके।

—सफल सिंह पटेल, सिंगरौली (म.प्र.)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक प्राप्त हुआ। राष्ट्रभाषा हिंदी पर कई महत्त्वपूर्ण आलेख हैं, जो पठनीय व ज्ञानवर्द्धक हैं। शैलेश मटियानी का उपन्यास 'सीढ़ियाँ' पढ़ने में अच्छा लगता है। महादेवी वर्मा की जो चिंता नारियों के लिए तीस साल पहले थी, वह आज भी प्रासंगिक है। इंग्लैंड की कहानी अच्छी लगी।

—राजेंद्र राज, लक्खीसराय (बिहार)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक मिला। पत्रिका का मुख पृष्ठ अत्यंत आकर्षक है। स्व. हजारी प्रसाद द्विवेदी के लेख ने दीवाली में चार चाँद लगा दिए। कहानियाँ सभी अच्छी बन पड़ी हैं। प्रकाश परिमलजी ने गणेशजी का भरपूर परिचय कराया है। श्रीराम परिहार का ललित निबंध उत्तम कोटि का है। मैथिली भाषा की कहानी 'पिया का घर' मन को भा गई। गोपाल चतुर्वेदी के लेख कुंठित एवं नीरस ही होते हैं, उनमें चुटलीपन नदारद है। भाषा-प्रयोग अत्यंत उपयोगी स्तंभ है। गायत्री वाजपेयी ने बुंदेली लोकगीतों का अच्छा समाँ बाँधा है। एम.डी. मिश्रा की कविताएँ अत्यंत प्रासंगिक एवं सार्थक लगीं। ओंकार प्रसाद भारद्वाज के दीपोत्सव से दीवाली प्रकाशमय हो गई। कुल-मिलाकर संपूर्ण अंक संग्रहणीय बन पड़ा है। दीपावली की शुभकामनाएँ।

—भूपसिंह, हरिद्वार (उत्तराखंड)

'साहित्य अमृत' के नवंबर अंक में प्रकाशित लेख 'कबीर : एक नूतन चिंतन' बहुत अच्छा लगा। लेखक श्री शशिकांत सिंह 'शशि' ने लगता है कबीर पर गहन अध्ययन व शोध किया है। लेखक ने अपने लेख में शब्दों का चयन व विषय की प्रासंगिकता के अनुरूप दोहों को शुमार करके लेख को अत्यंत आकर्षक और उपयोगी बना दिया है। लेखक के इस उत्तम प्रयास के लिए उनको कोटि-कोटि बधाई।

—के.एल. चांडक, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक प्राप्त हुआ। आलेख 'बिन बुलाए मेहमान', 'लोक में बाल-साहित्य', '…जो जन जननी मुक्ति हित' बहुत पसंद आए। व्यंग्य 'कबीर : एक नूतन चिंतन' लेखक की एक अच्छी कोशिश है कुछ नयापन लाने की। मगर मेरा मानना है कि कबीर जो भी कहते थे, उनकी कथनी में तर्क होता था। वह केवल कवि नहीं अपितु गुरु थे, जो आत्मा को परमात्मा तक पहुँचने का रास्ता बताते रहे। इसलिए उनके दोहे पर किसी तरह का व्यंग्य करना खटकता है। कहानी 'निरता' बहुत अच्छी लगी। इस बार की कविताएँ कुछ खास नहीं रहीं। मगर अशोक अंजुम की कविताएँ बेहद पसंद आईं। श्रेष्ठ संपादन के लिए पत्रिका-परिवार को बधाई।

—डॉ. रामप्रकाश राय, गुड़गाँव (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक मिला। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त पर ब्रजेंद्र त्रिपाठी का आलेख, अशोक अंजुम की कविताएँ, श्रीप्रसाद का 'लोक में बाल-साहित्य' आलेख, शशिकांत सिंह 'शशि' का 'कबीर : एक नूतन चिंतन' व्यंग्य आलेख, स्नेहमयी चौधरी की 'कुछ छोटी कविताएँ' तथा नंद किशोर कौशिक की 'निरता' एवं श्री कैलाश तिवारी की कहानी 'नीम का वो पेड़' भी बहुत अच्छी हैं। सभी रचनाएँ प्रशंसनीय हैं।

—विनोद कुमार तिवारी, अररिया (बिहार)

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक पढ़कर अच्छा लगा। लोक साहित्य में 'कन्नौजी लोक-संस्कृति और लोकगीत' अच्छे लगे। कहानी 'नीम का वो पेड़', 'निरता', 'वही तो' मनोरंजक बन पड़ी हैं। मगर कविताओं में अशोक अंजुम, नवनीत गांधी, कुसुमवीर सिंह, नंददुलारे वाजपेयी की कविताएँ दिल को छू गईं। प्रतिस्मृति 'कानों में कँगना' बेहद अच्छी रचना है। पाठकों की प्रतिक्रियाएँ और गतिविधियाँ पढ़कर संपादक मंडल को धन्यवाद किए बिना नहीं रहा जाता। श्रेष्ठ पत्रिका के लिए साधुवाद।

—प्रो. रामदेव शुक्ल, भागलपुर (बिहार)

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक आकर्षक कलेवर एवं विविध सामग्री लिये प्राप्त हुआ। संपादकीय संचेतना युक्त सामयिक गतिविधियों व समस्याओं पर आधारित प्रशंसनीय रहा। प्रत्येक अंक नित नवीन विविध विषय-वस्तु प्रकाशित करता है, जो मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धक रहती है। कालजयी उपन्यासकार देवकीनंदन खत्री पर ध्रुवकुमार का संस्मरण रोचक लगा। कहानी 'निरता', 'वही तो!' बेहद पसंद आईं कहानी लेखकों को धन्यवाद। सभी कविताएँ अच्छी लगीं।

—रामकिशन पंवार, हनुमानगढ़ (राज.)

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक मिला। प्रतिस्मृति में स्व. राजाजी की कहानी 'कानों में कँगना' अत्यंत मार्मिक है। कहानियों में 'निरता' समाज के लिए आदर्श एवं प्रेरणादायी लगी। लाला लाजपत राय का आलेख ऐतिहासिक एवं भारतीयता से भरा है। श्रीप्रसादजी ने लोक में बाल-साहित्य का अच्छा ब्योरा दिया है। कालजयी लेखक देवकीनंदन खत्री को स्मरण कर ध्रुवकुमार ने हम सब पाठकों पर उपकार किया है। गोपाल 'कबीर : एक नूतन चिंतन' आज भी उतना ही प्रासंगिक है। 'मधुरजी' चतुर्वेदी वरिष्ठ व्यंग्यकार हैं, मगर उनके व्यंग्य इतने धारदार नहीं। 'मधुरजी' ने हम सब पाठकों को भी गढ़वाल के चारों धामों की यात्रा बखूबी करा दी है। साधूवाद। अंग्रेजी कहानी 'कारीगरी' बेमिसाल है। कविताओं में अशोक अंजुम की कविताएँ अच्छी लगीं। नंददुलारे वाजपेयी की श्रद्धांजलि-स्वरूप कविता लालाजी के व्यक्तित्व का दिग्दर्शन कराती है। एक अच्छे अंक के लिए हार्दिक बधाई।

—ओंकार प्रसाद भारद्वाज, एटा (उ.प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक गतिविधियाँ

'आकाश तक बबूल' काव्य-संग्रह लोकार्पित

विगत दिनों भोपाल में म.प्र. हिंदी साहित्य सम्मेलन के सभागार में करवट कला परिषद् एवं आदिशक्ति साहित्य कला परिषद् के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित कार्यक्रम में कवि एवं गीतकार श्री ओंकार दुबे 'सुमन' के सद्यःप्रकाशित काव्य-संग्रह 'आकाश तक बबूल' का लोकार्पण किया गया। मुख्य अतिथि म.प्र. शासन के वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी श्री समीर कुमार खरे थे तथा अध्यक्षता वरिष्ठ गीतकार डॉ. हुकुम पाल सिंह 'विकल' ने की। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री बी.एस. भाटी तथा श्री चंद्रेश ठाकरे उपस्थित थे। कृति पर सर्वश्री युगेश शर्मा, खलील कुरैशी, अहद प्रकाश एवं मोहन सिंह ठाकुर ने समीक्षात्मक आलेख पढ़े। श्री ओंकार दुबे 'सुमन' ने कृति में से कुछ चुनिंदा रचनाओं का पाठ किया। कार्यक्रम में 'निर्दलीय' के संपादक श्री कैलाश आदमी सहित अनेक साहित्यकार उपस्थित थे। संचालन श्री घनश्याम मैथिल 'अमृत' ने किया व आभार डॉ. बाबू राव गुजरे ने व्यक्त किया। □

लोकार्पण संपन्न

२० सितंबर को पालक्काड़ में हिंदी साहित्य संगम तथा सरकारी विक्टोरिया कॉलेज के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित हिंदी साहित्य संगम की ३०वीं वर्षगाँठ के अवसर पर 'संग्रथन' पत्रिका के मुख्य संपादक डॉ. वी.वी. विश्वम ने 'संगम स्मारिका-२०११' का लोकार्पण किया। अध्यक्षता डॉ. पी.के. वेणु ने की। इस अवसर पर आयोजित साहित्यिक गोष्ठी की अध्यक्षता श्री रवि नायर ने, उद्घाटन प्रो. टी.के. प्रभाकरन तथा संचालन डॉ. वी.वी. विश्वम ने किया। सर्वश्री वी. जया, सी. सोमसुंदरन, पी.एन. जयरामन, एम.के. कृष्णन तथा के. गंगाधरन ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री एन. सोमसुंदरन ने कृतज्ञता प्रकट की। □

लोकार्पण संपन्न

१६ नवंबर को पटना के बी.आई.ए. हॉल में श्रीमती रेणु कुमारी कुशवाहा की सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'गांधी दर्शन के ५ सूत्र' का लोकार्पण वरिष्ठ पत्रकार श्री कुलदीप नैयर के कर-कमलों से संपन्न हुआ। अध्यक्षता बिहार विधानसभा के अध्यक्ष मान. श्री उदय नारायण चौधरी ने की तथा मुख्य अतिथि डॉ. रजी अहमद, श्री त्रिपुरारी शरण एवं फादर फिलिप मंथरा थे। इस अवसर पर मंत्री, नेतागण तथा प्रबुद्ध लेखक व पत्रकार उपस्थित थे। □

'व्यथा-कथा एक नायिका की' कृति लोकार्पित

१८-२५ सितंबर को पन्ना के डाइट सभागार में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा हिंदी पखवाड़े के अंतर्गत जिला स्तरीय शालेय साहित्यिक प्रतियोगिताओं के दौरान श्रीमती राधा जनार्दन के खंडकाव्य 'व्यथा-कथा एक नायिका की' का लोकार्पण महापौर श्रीमती शारदा पाठक ने किया। मुख्य अतिथि डॉ. सुरेश पराग थे। सर्वश्री राधा जनार्दन, अंबिका प्रसाद खरे, लक्ष्मी नारायण चिरौलिया, सुरेश पराग एवं शारदा पाठक ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर नगर के प्रबुद्ध नागरिक, स्कूलों के प्रतिभागी छात्र, उनके शिक्षक एवं अभिभावकगण उपस्थित थे। □

'श्री आडवाणी : व्यक्ति और विचार' लोकार्पित

८ नवंबर को दिल्ली में पूर्व उप-प्रधानमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी के ८५वें जन्मदिवस पर स्वदेश पत्र समूह द्वारा प्रकाशित 'श्री आडवाणी : व्यक्ति और विचार' ग्रंथ का लोकार्पण लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष श्रीमती सुषमा स्वराज, राज्यसभा में नेता प्रतिपक्ष श्री अरुण जेटली, पूर्व भाजपा अध्यक्ष श्री राजनाथ सिंह, म.प्र. के मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान, छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह, झारखंड के मुख्यमंत्री श्री अर्जुन मुंडा द्वारा सामूहिक रूप से किया गया। 'स्वदेश' के प्रधान संपादक श्री राजेंद्र शर्मा ने सभी आगतों का स्वागत किया। संचालन 'पाञ्चजन्य' के संपादक श्री बलदेव भाई शर्मा ने किया। ८१६ पृष्ठों के इस बृहद् ग्रंथ में श्री आडवाणी के व्यक्तित्व पर प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों तथा समाज के प्रमुख व्यक्तियों के विचार, आडवाणीजी के विचार, उनके ब्लॉग और उनकी आत्मकथा 'मेरा देश, मेरा जीवन' के प्रमुख अंश संकलित हैं। □

'ऑलराउंड' के कविता विशेषांक का विमोचन

१७ अक्तूबर को फरीदकोट में हिंदी पत्रिका 'ऑलराउंड' के श्री अमित कुमार लाडी की ५० कविताओं पर आधारित कविता विशेषांक का विमोचन डोडां स्ट्रीट स्थित पत्रिका कार्यालय में से.नि. हैड टीचर श्रीमती संतोष कुमारी ने किया। □

'सातवीं औरत का घर' कृति लोकार्पित

१७ अक्तूबर को दिल्ली के साहित्य अकादेमी के सभागार में कथाकार श्री नीला प्रसाद के प्रथम कहानी संग्रह 'सातवीं औरत का घर' का लोकार्पण सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री राजेंद्र यादव ने किया। अध्यक्षता श्री नामवर सिंह ने की। इस अवसर पर सर्वश्री अनुज, दिनेश कुमार, भगवानदास मोरवाल, साधना अग्रवाल, भारत यायावर, भारत भारद्वाज, गंगाप्रसाद विमल, नीला प्रसाद, राजेंद्र यादव तथा नामवर सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। □

'मुक्त छंद और हिंदी कविता' पर गोष्ठी संपन्न

विगत दिनों अलीगढ़ में शिव-शक्ति सेवा आश्रम द्वारा 'मुक्त छंद और हिंदी-कविता' विषय पर आयोजित गोष्ठी में वरिष्ठ हिंदी प्राध्यापक डॉ. राजेश कुमार ने समारोह की अध्यक्षता की तथा कवि श्री त्रिलोचन की कविता 'चंपा' का पाठ किया। इस अवसर पर सर्वश्री ज्ञानेंद्र माहेश्वरी, सुभाषचंद्र शर्मा, रचना शर्मा, गिरीश उपाध्याय, गोविंद कुमार, सुंदर सिंह आदि उपस्थित थे। □

संगोष्ठी संपन्न

२८ अक्तूबर को डिबाई में 'अनंत साहित्यिक-सांस्कृतिक' संस्था द्वारा महाकवि श्री नाथूराम शंकर शर्मा 'शंकर' की काव्य-चेतना पर आयोजित संगोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. राजेश कुमार ने की। इस अवसर पर डॉ. ज्ञानेंद्र माहेश्वरी ने 'शंकर' जी की कई कविताओं का सस्वर पाठ किया तथा सुश्री नेहा भारद्वाज ने उनकी काव्य-चेतना का उदात्त-बोध विश्लेषित किया। संगोष्ठी में सर्वश्री वेद जैसवाल, मनोज पालीवाल, कुलदीप कुमार, ओमवीर सिंह, पंकज शर्मा, बुनियाद अली, रामबहादुर, गोपाल शर्मा आदि उपस्थित थे। □

काव्य-गोष्ठी आयोजित

३१ अक्तूबर को भीलवाड़ा में साहित्यिक उन्नयन को समर्पित संस्था सामयिकी द्वारा यूनेस्को कार्यालय में दीपावली स्नेहमिलन समारोह तथा काव्य-गोष्ठी का शुभारंभ मुख्य अतिथि श्री जगदीश मूंदड़ा, सामयिकी के नियामक श्री बंशीलाल पारस तथा विशिष्ट अतिथि श्री दिनेश जैन ने माँ सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण कर किया। अध्यक्षता श्री श्यामसुंदर सुमन ने की तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. जमनालाल बाहेती तथा डॉ. महावीर बैरागी थे। इस अवसर पर त्रैमासिक 'शब्द सामयिकी' के दीपावली विशेषांक का लोकार्पण अतिथियों द्वारा किया गया। सामयिकी महिला मंच की अध्यक्ष सुश्री सरोजनी सरोज द्वारा संचालित काव्य-गोष्ठी का प्रारंभ डॉ. महावीर बैरागी की सरस्वती वंदना से हुआ। सर्वश्री मनोहरलाल व्यास, कृष्णा माहेश्वरी, रामस्वरूप लढ़ा, गुलाबचंद मीरचंदानी, बंशीलाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारस, श्यामसुंदर सुमन, दिव्या ओबेराय, रतनकुमार चटुल, प्रवीण शर्मा, सरोजिनी शर्मा, युधिष्ठिर जोशी, जमनालाल बाहेती ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। श्री श्यामसुंदर सुमन ने आभार व्यक्त किया। □

स्वर्ण जयंती समारोह संपन्न

विगत दिनों बीकानेर में राष्ट्रभाषा हिंदी प्रचार समिति द्वारा आयोजित दो दिवसीय स्वर्ण जयंती समारोह के मुख्य अतिथि पर्यटन, कला एवं संस्कृति राज्यमंत्री श्री राजेंद्रसिंह गुढ़ा थे तथा अध्यक्षता राजस्थान प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष श्री वेद व्यास ने की। प्रचार समिति के अध्यक्ष व वरिष्ठ साहित्यकार श्री श्याम महर्षि ने संस्था की स्थापना से लेकर ५० वर्षों की विकास-यात्रा का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया। सर्वश्री मदन केवलिया, नंद भारद्वाज, रमाकांत शर्मा, नीलप्रभा भारद्वाज, भैरूंलाल गर्ग, श्रीकिशन दाधीच को 'साहित्य मार्तंड' तथा प्रो. भँवर भादानी को 'इतिहासश्री' की उपाधि से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर प्रकाशित स्मारिका 'स्वर्ण आभा' व सहयोगी संस्था मरुभूमि शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'जूनी ख्यात' के नए अंक का लोकार्पण मंचासीन अतिथियों द्वारा किया गया तथा समिति की विकास यात्रा पर केंद्रित 'युगपक्ष', 'सूरतगढ़ टाइम्स', 'बीकानेर एक्सप्रेस' के विशेषांकों का विमोचन भी किया गया। अपराह्न में 'सूचना क्रांति व आज का जीवन परिदृश्य' विषयक संगोष्ठी की अध्यक्षता श्री रणवीरसिंह ने की, मुख्य अतिथि श्री नंद भारद्वाज थे। समापन पर अतिथियों एवं सहभागी कवियों को सर्वश्री श्याम महर्षि, बजरंग शर्मा, रवि पुरोहित ने स्मृति-चिह्न तथा शॉल ओढ़ाकर सम्मानित किया।

समारोह के दूसरे दिन के प्रथम सत्र में 'साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं का सामाजिक विकास' विषयक गोष्ठी की अध्यक्षता प्रो. रमाकांत ने की, संचालन श्री सत्यदीप ने किया। □

जयंती मनाई गई

७ नवंबर को फारबिसगंज में इंद्रधनुष साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में संस्कृत के प्रकांड विद्वान् महाकवि कालिदास और भवभूति की जयंती मनाई गई। अध्यक्षता कर्नल श्री अजित दत्त ने की। डॉ. मोतीलाल शर्मा एवं श्री मांगन मिश्र 'मार्तंड' ने कालिदास की रचनाओं पर प्रकाश डाला तथा सर्वश्री महेंद्रनाथ झा, प्रणय प्रसून एवं विनोद कुमार तिवारी ने भवभूति के विषय में अपने विचार प्रस्तुत किए। संयोजन श्री मनोज तिवारी एवं संचालन श्री विनोद कुमार तिवारी ने किया। □

हिंदी सम्मान दिवस मनाया गया

१ अक्तूबर को वाराणसी के श्रीकाशी गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय में विश्व शांति सद्भाव संस्थान, जीवन दीप पब्लिक स्कूल, शांति सद्भावना मंच, मानव प्रगति सेवा संस्थान एवं गंगा साहित्य संस्था के संयुक्त तत्त्वावधान में २९वाँ हिंदी सम्मान दिवस समारोह, डॉ. बनवारी सिंह का ७१वाँ जन्मोत्सव एवं उनकी नवीन कृति 'मेरे मालिक : मेरी माँ' का लोकार्पण प्रो. श्रद्धानंद के मुख्य आतिथ्य, सर्वश्री गणेश दत्त दुबे, केशरी नारायण त्रिपाठी, मोहन लाल कुशवाहा, सुजीत कुमार मौर्या के विशिष्ट आतिथ्य तथा डॉ. उमेश चंद्र शर्मा के सफल संचालन में संपन्न हुआ। डॉ. पृथ्वीश नाग ने डॉ. बनवारी सिंह को माल्यार्पण तथा कलम भेंट कर जन्मोत्सव की बधाई दी। सर्वश्री केशरी नारायण त्रिपाठी, सुजीत कुमार मौर्या, उमेश चंद्र वर्मा, रमेश चंद्र, मोहन लाल कुशवाहा, अशोक सिंह, पवन कुमार शास्त्री, भोलानाथ तिवारी, राजकुमारी साहा, प्रीतपाल सिंह, मनिंदर सिंह आदि ने काव्य-गोष्ठी में भाग लिया। इस अवसर पर प्रो. राधेश्याम दुबे को 'हिंदी रत्न', डॉ. अजय कुमार पांडेय को 'विज्ञान रत्न', डॉ. लक्ष्मी शंकर यादव को 'जगदीश सारस्वत सम्मान', श्री गंगा सहाय पांडेय को 'समाज रत्न', श्री अतुल कुमार वैष्णव व मु. सलीम सुहरवर्दी को 'अज्ञेय सारस्वत सम्मान' से सम्मानित किया गया। धन्यवाद-ज्ञापन श्री सुजीत कुमार मौर्या ने किया। □

डॉ. भैरूँलाल गर्ग को 'हिंदीरत्न सम्मान'

१० अक्तूबर को राष्ट्रीय हिंदी परिषद् द्वारा चैंबर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज भवन, मेरठ में आयोजित राष्ट्रीय समारोह में हिंदी दिवस पखवाड़े के अंतर्गत वरिष्ठ साहित्यकार एवं 'बालवाटिका' के संपादक डॉ. भैरूँलाल गर्ग को 'हिंदीरत्न सम्मान' प्रदान किया गया। सर्वश्री रत्नाकर पांडेय, बालशौरि रेड्डी, मित्रेशकुमार गुप्त सहित मंचस्थ अतिथियों ने डॉ. गर्ग को सम्मान स्वरूप प्रशस्ति-पत्र, शॉल, स्मृतिचिह्न तथा इक्कीस सौ रुपए की नकद राशि भेंट की गई। इस अवसर पर हिंदी व हिंदीतर प्रदेशों के २० हिंदीसेवियों को भी हिंदी भूषण एवं हिंदी सम्मान से सम्मानित किया गया। □

'माँ लक्ष्मीदेवी दीपशिखा सम्मान-२०११' प्रदत्त

१३ अक्तूबर को हरिद्वार में दीपशिखा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मंच ज्ञानोदय अकादमी द्वारा वरिष्ठ कवि एवं कहानीकार श्री के.एल. दीवान का ७७वाँ जन्मदिवस लिटिल एंजिल्स स्कूल के सभागार में मनाया गया। इस अवसर पर सर्वश्री मीरा भारद्वाज, सूर्यकांत श्रीवास्तव, सुशील कुमार त्यागी 'अमित', के.एल. दीवान तथा मुख्य अतिथि श्री दिनेश शर्मा 'दिनेश' ने संयुक्त रूप से डॉ. संजय कुमार त्यागी और श्री बृजेंद्र हर्ष को माला, दुशाला, पीतवस्त्र तथा साहित्य भेंट कर 'माँ लक्ष्मीदेवी दीपशिखा सम्मान-२०११' से सम्मानित किया। श्री के.एल. दीवान को उनके जन्मदिवस के अवसर पर हिंदी साहित्य सभा का विशेष सम्मान डॉ. शाम सुंदर 'साँवरिया' द्वारा भेंट किया गया। संयोजन डॉ. सुशील कुमार त्यागी 'अमित' ने किया। □

डॉ. नगेंद्र स्मृति साहित्यिक गोष्ठी संपन्न

११ नवंबर को दिल्ली में सांध्यकालीन हिंदी संस्थान द्वारा 'भारतीय बहु भाषिकता और अनुवाद' विषयक डॉ. नगेंद्र स्मृति साहित्यिक संगोष्ठी में सर्वश्री के.के. गोस्वामी, रणजीत साहा, गंगाप्रसाद विमल, जयनारायण कौशिक, सुरेंद्र सैनी, पी.सी. टंडन, सी.ई. जीनी तथा रवींद्र सेठ ने अपने विचार प्रस्तुत किए। □

डॉ. टी. रविंद्रन पुरस्कृत

८ नवंबर को बेंगलुरु में डॉ. टी. रविंद्रन को 'आधुनिक हिंदी काव्य में दलित वर्ग' समीक्षा शोध प्रबंध हेतु हिंदी साहित्य परिषद् के 'सी.एल. प्रभात शोध समीक्षा पुरस्कार २०१०-११' गुजरात की राज्यपाल महामहिम डॉ. कमला बेनीवाल द्वारा प्रदान किया गया। पुरस्कार-स्वरूप उन्हें पुरस्कार राशि तथा ताम्रपत्र भेंट किया गया। □

'राहुल सांकृत्यायन पर्यटन पुरस्कार' प्रदत्त

५ अक्तूबर को पटना में बिहार के युवा पत्रकार श्री सुबोध कुमार नंदन को उनकी कृति 'बिहार के पर्यटन स्थल और सांस्कृतिक धरोहर' को पर्यटन मंत्रालय द्वारा 'राहुल सांकृत्यायन पर्यटन पुरस्कार योजना (२००९-१०) के अंतर्गत प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया। □

देना बैंक में हिंदी माह संपन्न

१० अक्तूबर को मुंबई में देना बैंक के प्रधान कार्यालय में आयोजित कवि सम्मेलन तथा पुरस्कार वितरण समारोह की अध्यक्षता श्री अशोक कुमार दत्त ने की। इस अवसर पर आयोजित हास्य कवि सम्मेलन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसिद्ध हास्य कवि एवं टी.वी. कलाकार डॉ. मुकेश गौतम, श्री श्याम कुमार श्याम तथा देना बैंक के कैप्टन मिलन टंडन ने अपनी कविताओं का पाठ किया। समारोह में हिंदी माह के दौरान 'समाचार खोज प्रतियोगिता', 'सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता', 'चित्रकथा प्रतियोगिता' तथा 'हिंदी टाइपिंग प्रतियोगिता' के विजेताओं को सर्वश्री अशोक कुमार दत्त, तिलक राज चावला, मुकेश गौतम तथा श्याम कुमार 'श्याम' ने पुरस्कार प्रदान किए। संचालन डॉ. मनोरमा मिश्र ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन श्री देवेंद्र सिंह रावत ने किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों भोपाल के रवींद्र भवन में पं. दीनदयाल उपाध्याय जयंती के अवसर पर मध्य प्रदेश भाजपा सांस्कृतिक प्रकोष्ठ द्वारा साहित्यकार एवं राष्ट्रवादी चिंतक डॉ. देवेंद्र दीपक को 'पं. दीनदयाल उपाध्याय साहित्य सम्मान-२०११' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप शॉल, श्रीफल, मानपत्र तथा ११,००० रुपए की राशि भेंट की गई। इस अवसर पर स्वदेश पत्र समूह के संपादक श्री प्रमोद भारद्वाज को 'पत्रकार सम्मान-२०११' से सम्मानित किया गया। समारोह में रवींद्रनाथ टैगोर की कहानी का मंचन किया गया। मुख्य अतिथि श्री कैलाश जोशी थे तथा अध्यक्षता श्री बृजकिशोर कुठियाला ने की। संचालन श्री राजेश भदौरिया ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन श्री आलोक तोमर ने किया। □

म.प्र. अखिल भारतीय चिकित्सा सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों उज्जैन के आस्था गार्डन में 'चिकित्सा संसार' पत्रिका के संपादक श्री अशोक खंडेलवाल द्वारा आयोजित म.प्र. अखिल भारतीय चिकित्सा सम्मान समारोह में डॉ. प्रेमचंद्र स्वर्णकार को उनके चिकित्सा संबंधी लेखन हेतु 'एक्सीलेंस सर्विस अवार्ड-२०११' डॉ. योगेश सरीन द्वारा प्रदान किया गया। इस अवसर पर मनोरंजक कार्यक्रमों का आयोजन भी किया गया, जिसमें फिल्म अभिनेत्री सुश्री अमिता नागिया, लाफ्टर विनर श्री सुरेश अलबेला आदि टी.वी. कलाकार उपस्थित थे। □

सम्मान समारोह संपन्न

१३ अक्तूबर को बीकानेर में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् द्वारा कहानीकार डॉ. सावित्री जगदीश चौरसिया को 'स्व. पं. हीरालाल शुक्ल रामेश्वरी देवी सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर प्रकाशित स्मारिका 'हमारा दृष्टिकोण' का संपादकीय वाचन प्रांतीय उपाध्यक्ष श्री रमेश कुमार शर्मा ने किया तथा साहित्यकार डॉ. मदन केवलिया को 'प्रांतीय सम्मान' से सम्मानित किया गया। 'सावित्री जगदीश का कथा-साहित्य' विषयक संगोष्ठी की अध्यक्षता कथाकार डॉ. शीला व्यास ने की। मुख्य अतिथि डॉ. सावित्री जगदीश थीं। □

सम्मान समारोह एवं संगोष्ठी आयोजित

१७ अक्तूबर को मुरादाबाद में साहित्यिक संस्था 'अक्षरा' द्वारा मानसरोवर कन्या इंटर कॉलेज के सभागार में आयोजित सम्मान समारोह एवं विचार संगोष्ठी में डॉ. ओम प्रकाश सिंह को उनके नवगीत के प्रति समर्पण तथा साहित्य साधना हेतु मानपत्र, अंगवस्त्र, प्रतीक-चिह्न एवं श्रीफल भेंट कर 'अक्षरा श्रेष्ठ काव्य सृजन सम्मान-२०११' से सम्मानित किया गया। प्रसिद्ध जनकवि बाबा नागार्जुन एवं यशस्वी गीतकार श्री गोपाल सिंह नेपाली के जन्मशताब्दी वर्ष के अवसर पर उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर केंद्रित विचार संगोष्ठी का शुभारंभ माँ सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण एवं दीप प्रज्वलन से हुआ। अध्यक्षता श्री माहेश्वर तिवारी ने की। मुख्य अतिथि श्री ब्रजभूषण सिंह गौतम 'अनुराग' तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. महेश दिवाकर एवं श्री रामलाल अंजाना थे। इस अवसर पर सर्वश्री योगेंद्र वर्मा 'व्योम', अवनीश सिंह चौहान, अशोक विश्नोई आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री योगेंद्र वर्मा 'व्योम' ने किया तथा श्री मनोज वर्मा 'मनु' ने आभार व्यक्त किया। □

डॉ. ज्ञानेंद्र माहेश्वरी सम्मानित

विगत दिनों छत्तीसगढ़ में न्यू ऋतंभरा साहित्यिक मंच-कुम्हारी (दुर्ग) द्वारा वरिष्ठ कवि एवं साहित्याचार्य डॉ. ज्ञानेंद्र माहेश्वरी को हिंदी साहित्य में सृजनात्मक-रचनात्मक योगदान एवं काव्य-रचना क्षेत्र में उल्लेखनीय अवदान हेतु 'न्यू ऋतंभरा कबीर सम्मान एवं साहित्य अलंकरण-२०११' से सम्मानित किया गया। □

वाल्मीकि जयंती तथा कौमुदी महोत्सव आयोजित

विगत दिनों बिहार में अखिल भारतीय साहित्य परिषद्, बीरपुर द्वारा स्थानीय सरस्वती शिशु मंदिर के प्रांगण में आयोजित आदिकवि वाल्मीकि जयंती तथा कौमुदी महोत्सव की अध्यक्षता श्री देवनारायण खेखाड़ ने की। समारोह का उद्घाटन श्री सुखदेव नारायण ने दीप प्रज्वलन करके किया। मुख्य वक्ता डॉ. भुवनेश्वर प्र. गुरुमैता थे। □

'सर्वोदय साहित्य हिंदी-सेवी सम्मान' प्रदत्त

२८ सितंबर को दिल्ली में सर्वोदय साहित्य मंडल द्वारा आयोजित हिंदी पखवाड़े का समापन समारोह पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह 'शशि' की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। इस अवसर पर विशिष्ट हिंदी-सेवियों सर्वश्री चंद्रपाल सिंह, उदय शंकर अवस्थी, बी.डी. सिन्हा, ए.एस. त्रिवेदी, अरविंद कुमार सिंह, कृष्ण गोपाल अग्रवाल, नरेश कुमार गुप्ता, माया गुप्ता, दीपक अग्रवाल, सुखपाल गुप्ता तथा मृदुला भटनागर को डॉ. श्याम सिंह 'शशि' ने 'सर्वोदय साहित्य हिंदी-सेवी सम्मान' से सम्मानित किया। संस्था के प्रबंध निदेशक श्री मदन 'विरक्त' ने मंडल की प्रगति पर विस्तार से प्रकाश डाला तथा सभी सम्मानित हिंदी-सेवियों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की। □

'साहित्यकार सम्मान समारोह-२०११' संपन्न

१६ अक्तूबर को मुरादाबाद में अखिल भारतीय साहित्य कला मंच द्वारा आयोजित समारोह में मुख्य अतिथि डॉ. चमनलाल सप्रू, अध्यक्ष डॉ. रत्नाकर पांडेय, विशिष्ट अतिथि सर्वश्री बालशौरि रेड्डी, कमलकिशोर गोयनका, टी.जी. प्रभाशंकर प्रेमी तथा रामप्रकाश सक्सेना द्वारा माँ सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण किया गया। प्रारंभ में डॉ. रत्नाकर पांडेय और डॉ. चमनलाल सप्रू द्वारा डॉ. शमा परवीन की शोधकृति 'बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध की हिंदी कहानी की शिल्प संरचना का तुलनात्मक अध्ययन', डॉ. महेशराम आर्य की शोधकृति 'गौतमबुद्ध के चरितकाव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन' और डॉ. मंजू सिंह की शोधकृति 'गीतकार मधुकर गौड़ : व्यक्तित्व और साहित्य' तथा 'उत्तर प्रदेश के साहित्यकार' का लोकार्पण किया गया। तत्पश्चात् साहित्य सृजन हेतु सर्वश्री आरिफ नजीर, नवीनचंद्र लोहानी, बालशौरि रेड्डी, मीना सोनी, रत्नाकर पांडेय, बलदेव वंशी, ओमीश परूथी, मोहन सपरा, कमलकिशोर गोयनका, विद्याबिंदु सिंह, चमनलाल सप्रू, टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी', मिलनरानी जमातिया, सीमा देव वर्मा, राजकुमार सचान 'होरी', दिवाकर दिनेश गौड़, ओम जोशी, एम.पी. 'कमल', शिवशंकर यजुर्वेदी, राजेंद्र सोनवणे 'अक्षत', ज्ञानेश दत्त 'हरित', मीना नकवी तथा मनु स्वामी को विविध सम्मानों से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप उन्हें शॉल, प्रतीक-चिह्न, सम्मान-पत्र और नकद राशि भेंट की गई।

इस अवसर पर सर्वश्री रत्नाकर पांडेय, चमनलाल सप्रू, बालशौरि रेड्डी, कमलकिशोर गोयनका तथा टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी' ने विभिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयों पर अपने विचार प्रस्तुत किए। संचालन डॉ. रामगोपाल भारतीय तथा डॉ. अंबरीष कुमार गर्ग ने किया। डॉ. महेश 'दिवाकर' ने आभार व्यक्त किया। एक कवि गोष्ठी का भी आयोजन किया गया। □

डॉ. राज बुद्धिराजा 'स्वयंसिद्धा सम्मान' से सम्मानित

२३ अक्तूबर को भोपाल में प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. राज बुद्धिराजा को हिंदी की दीर्घकालीन सेवा हेतु ओजस्विनी अलंकरण 'स्वयंसिद्धा' सम्मान-स्वरूप एक पौधा, नारियल, शॉल, प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक चिह्न तथा ११,००० रुपए की राशि भेंट की गई। उन्हें यह सम्मान लेखकों, साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों की उपस्थिति में प्रदान किया गया। □

डॉ. सियाराम तिवारी सम्मानित

१५ अक्तूबर को लखनऊ में आयोजित भारतीय हिंदी परिषद् के ३९वें अधिवेशन के अवसर पर हिंदी के प्रसिद्ध विद्वान् और विश्वभारती के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. सियाराम तिवारी को सम्मानित किया गया। अध्यक्षता लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. मनोज कुमार मिश्र ने की। □

कवि सम्मेलन आयोजित

२१ अक्तूबर को लखनऊ में दलित साहित्य परिषद् द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन की अध्यक्षता डॉ. टी.पी. राही ने की। मुख्य अतिथि डॉ. सुरेश उजाला तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. राम स्वरूप संखवार थे। समारोह में सर्वश्री राम स्वरूप संखवार, सोहनलाल 'सुबुद्ध', सुरेश उजाला, एस.के. पंजम तथा टी.पी. राही ने अपनी कविताएँ प्रस्तुत कीं। संचालन डॉ. सुरेश उजाला ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन श्री सोहनलाल 'सुबुद्ध' ने किया। □

वनमाली पीठ द्वारा 'रचना प्रसंग' आयोजित

विगत दिनों भोपाल में वनमाली सृजन पीठ द्वारा आयोजित दो दिवसीय 'रचना प्रसंग' कार्यक्रम में युवा कवि श्री वसंत सकरगाए के कविता-संग्रह 'निगहबानी में फूल' का लोकार्पण प्रख्यात कवि और कला चिंतक श्री नरेश सक्सेना ने किया। सर्वश्री राजेश जोशी, संतोष चौबे तथा प्रदीप जिलवाने ने अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम के दूसरे सत्र में कवि श्री नरेश सक्सेना ने अपनी एक दर्जन रचनाएँ प्रस्तुत कीं। अध्यक्षता श्री संतोष चौबे ने की। □

काका हाथरसी पुरस्कार समारोह संपन्न

१२ नवंबर को दिल्ली के हिंदी भवन में ३६वाँ काका हाथरसी पुरस्कार समारोह संपन्न हुआ। रायपुर के हास्य-व्यंग्य कवि डॉ. सुरेंद्र दुबे को केंद्रीय युवा एवं खेल मंत्री श्री अजय माकन द्वारा शॉल, श्रीफल, अभिनंदन-पत्र और 'हास्य-रत्न' की उपाधि तथा काका हाथरसी ट्रस्ट की ओर से एक लाख रुपए का चैक प्रदान किया गया। इस अवसर पर डॉ. सुरेंद्र दुबे की पुस्तक 'सवाल-ही-सवाल हैं' तथा डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल द्वारा संपादित 'शोध-दिशा' के काका हाथरसी विशेषांक का लोकार्पण सर्वश्री सुधीश पचौरी, अशोक चक्रधर तथा अशोक गर्ग की उपस्थिति में किया गया। तत्पश्चात् आयोजित काव्य-गोष्ठी में सर्वश्री उदयप्रताप सिंह, गोविंद व्यास, सुरेश उपाध्याय, पवन दीक्षित, जैनेंद्र कर्दम, रणजीत चौहान, सतपाल आदि कवियों ने काव्य-पाठ किया तथा काकाजी से संबंधित संस्मरण सुनाए। धन्यवाद-ज्ञापन श्री नरेंद्र वर्मा ने किया। □

१९वाँ अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन संपन्न

८-९ अक्तूबर को आगरा में 'राष्ट्रभाषा स्वाभिमान न्यास' एवं 'यू.एस.एम.' पत्रिका द्वारा भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, सुलभ इंटरनेशनल, नेशनल बुक ट्रस्ट, डॉ. रामनर्मदा परशुराम धर्मार्थ सेवा सदन तथा श्री हरप्रसाद भार्गव व्यवहार संस्थान के सहयोग से दो दिवसीय '१९वाँ अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन' तथा '१३वाँ अ.भा. राजभाषा सम्मान समारोह' आयोजित किया गया। सम्मेलन के पहले दिन 'नेशनल बुक ट्रस्ट' द्वारा 'हिंदी साहित्य और आज का समाज' विषय पर विचार-गोष्ठी हुई, जिसमें मुख्य अतिथि पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह 'शशि', अध्यक्ष डॉ. चंद्रप्रकाश त्रिपाठी, विशिष्ट अतिथि डॉ. लाल बहादुर सिंह चौहान, डॉ. महेश भार्गव और स्वागताध्यक्ष डॉ. रामअवतार शर्मा मंचासीन रहे। इस सत्र के प्रमुख वक्ता थे सर्वश्री मुरलीधर पांडेय, एस.टी. मेरवाडे, नेहपाल सिंह वर्मा, शिवप्रसाद भारती, राजेंद्र मिलन तथा कुसुमलता सिंह। इस अवसर पर नेशनल बुक ट्रस्ट की दो पुस्तकों 'औषधीय पौधे' तथा 'भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में क्रांतिकारियों का योगदान' का लोकार्पण किया गया। संचालन श्री पंकज चतुर्वेदी ने किया। इसके बाद श्री मथुरा प्रसाद पांडेय को 'राजभाषा रत्न सम्मान' तथा सर्वश्री सुधीर कुमार दास, संजीव कुमार गोयल, कुसुम मीरचंदानी, श्याम नारायण सिंह, रणधीर प्रसाद श्रीवास्तव, प्रेम बहादुर व महेंद्र कुमार सिंह को 'राजभाषा गौरव सम्मान' से सम्मानित किया गया।

सम्मेलन के दूसरे दिन के प्रारंभिक सत्र में 'सांस्कृतिक कार्यक्रम' में सेंट एंड्रूज स्कूल के बच्चों द्वारा मनोहारी नृत्य नाटिका प्रस्तुत की गई। इसके पश्चात् विचार गोष्ठी में 'हिंदी साहित्य और आज का समाज' विषय पर विद्वानों व शोधार्थियों ने अपने आलेख व विचार प्रस्तुत किए। अध्यक्षता डॉ. शहाबुद्दीन नियाज मुहम्मद शेख ने की। सर्वश्री प्रदीप दीक्षित, राजकुमार सचान 'होरी', शरदनारायण खरे, रामशरण गोयल, दिनेश दत्त शर्मा 'वत्स' आदि विशिष्ट वक्ता थे। संचालन डॉ. हरिसिंह पाल ने किया। अंतिम सत्र में श्रीमती निशिगंधा कृत 'सोंधी मिट्टी', श्री प्रकाश लखानी कृत 'ओम दर्शन', श्री श्यामसुंदर शर्मा कृत 'बीच बाजार में आत्मबोध' तथा 'यू.एस.एम.' पत्रिका के 'आगरा महानगर विशेषांक' का लोकार्पण मंचासीन सर्वश्री रत्नाकर पांडेय, नारायण कुमार, राजकुमार सचान 'होरी', रामअवतार शर्मा तथा महेश भार्गव ने किया। इसके उपरांत देश भर से चयनित ८० विद्वानों को विभिन्न नामित सम्मानों से सम्मानित किया गया। संचालन मुख्य संयोजक श्री उमाशंकर मिश्र ने किया। □

दो दिवसीय अंतरराष्ट्रीय समारोह आयोजित

२२-२३ अक्तूबर को इलाहाबाद में प्रसिद्ध शायर फैज अहमद फैज की जन्मशती के अवसर पर महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय तथा प्रगतिशील लेखक संघ के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित दो दिवसीय अंतरराष्ट्रीय समारोह में भारत, पाकिस्तान तथा जर्मनी के नामित अदीबों ने विमर्श किया। उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता प्रो. नामवर सिंह ने तथा संचालन श्री अली जावेद ने किया। स्वागत वक्तव्य श्री विभूति नारायण राय ने दिया। श्री संतोष भदौरिया ने आभार व्यक्त किया। द्वितीय अकादमिक सत्र की अध्यक्षता सुश्री नाहिद किश्वर तथा श्री खगेंद्र ठाकुर ने संयुक्त रूप से की। सर्वश्री रमेश दीक्षित, अविनाश मिश्र, बद्री नारायण, राजेंद्र शर्मा, आरिफ नकवी तथा जफर बख्त ने विचार व्यक्त किए। संचालन प्रो. ए.ए. फातमी तथा श्री जयप्रकाश धूमकेतु ने आभार व्यक्त किया।

समारोह के दूसरे दिन फैज की सुपुत्री सुश्री सलीमा हाशमी व सुश्री शमीम फैजी की संयुक्त अध्यक्षता में 'बोल कि लब आजाद हैं तेरे' पर आधारित अकादमिक सत्र में सर्वश्री शाहिना जिरवी, अबू बकर आजाद तथा अजीजा बानो ने वैचारिक विमर्श किया। संचालन श्री असरार गांधी ने किया। 'सलूक जिससे किया हमने आशिकाना किया' विषय पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...धारित सत्र की अध्यक्षता प्रो. नामवर सिंह ने की। सर्वश्री संजय श्रीवास्तव, अर्जुमंद आरा, सालिहा जरीन, सरवत खान, डी.पी. त्रिपाठी, आरिफ नकवी, विभूति नारायण राय तथा स्टीफन ज्विंग ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर प्रो. एहतेशाम हुसैन और श्री मसीहुज्जमा द्वारा संकलित पुस्तक 'इंतेखाबे जोश' का विमोचन मंचासीन अतिथियों द्वारा किया गया। संचालन श्री ए.ए. फातमी ने किया। श्री पंकज दीक्षित द्वारा पोस्टर प्रदर्शनी लगाई गई। समारोह का समापन फैज एकाग्र पर आयोजित मुशायरे एवं कवि सम्मेलन से हुआ, जिसकी अध्यक्षता सुश्री किश्वर नाहिद ने की। सर्वश्री जेबा अल्वी, यश मालवीय, आरिफ नकवी, सरवत खान, शरीफ इलाहाबादी तथा अख्तर अजीज ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री नंदल हितैशी ने किया तथा धन्यवाद-ज्ञापन श्री संतोष भदौरिया ने किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

साहित्यिक संस्था शब्द प्रवाह साहित्य मंच द्वारा आयोजित 'शब्द प्रवाह साहित्य सम्मान-२०१२' हेतु इच्छुक साहित्यकार वर्ष २००८-२०११ में प्रकाशित अपने कविता संग्रह, व्यंग्य संग्रह एवं लघुकथा संग्रह की ३ प्रतियाँ, ३०० रुपए का मनीऑर्डर, जीवन परिचय, २ रंगीन फोटो दिनांक ३१ जनवरी, २०१२ तक शब्द प्रवाह साहित्य मंच, ए-९९, वी.डी. मार्केट, उज्जैन-४५६००६ पर भेज सकते हैं। □

साहित्यिक सम्मान घोषित

२८ सितंबर को भोपाल में मध्य प्रदेश लेखक संघ द्वारा वर्ष २०११ के विभिन्न नामित सम्मानों हेतु प्राप्त प्रस्तावों पर विचार कर १७ साहित्यकारों को सम्मानित करने की घोषणा की गई। 'अक्षर आदित्य सम्मान' श्रीमती ज्योत्सना मिलन को, 'पुष्कर जोशी साहित्य सम्मान' श्री संतोष परिहार को, 'देवकीनंदन माहेश्वरी-युवा साहित्यकार सम्मान' श्री अरूण अपेक्षित को, 'काशीबाई मेहता लेखिका सम्मान' श्रीमती उषा जायसवाल को, 'कस्तूरीदेवी चतुर्वेदी लोकभाषा सम्मान' श्री कैलाश बिहारी द्विवेदी को, 'माणिक वर्मा व्यंग्य सम्मान' श्री जवाहर चौधरी को, 'चंद्रप्रकाश जायसवाल बाल साहित्य सम्मान' श्रीमती आशा शर्मा को, 'पार्वती देवी मेहता अहिंदी भाषी हिंदी लेखन सम्मान' श्री संतोष पुष्कर को, 'डॉ. संतोष कुमार तिवारी समीक्षा सम्मान' डॉ. कामिनी को, 'डॉ. कमला चौबे स्मृति लेखिका सम्मान' श्रीमती शोभा नामा को, 'हरिओमशरण चौबे स्मृति गीतकार सम्मान' श्री दिवाकर वर्मा को, 'हरीश निगम स्मृति मालवी भाषा सम्मान' श्री बंशीधर बंधु को, 'पंडित ब्रजबल्लभ आचार्य संस्कृतज्ञ सम्मान' प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल को, 'महमूद जकी स्मृति गजल सम्मान' श्री चंद्रभान भारद्वाज को, 'डॉ. बल्लभदास शाह अनुवाद सम्मान' श्रीमती ज्योति बाबूराव कुलकर्णी को, 'सारस्वत सम्मान' डॉ. दीपक को तथा 'अमित रमेश शर्मा मंचीय कवि सम्मान' श्री गेंदालाल मालवीय को दिसंबर २०११ में आयोजित एक समारोह में दिए जाएँगे। □

साहित्य अकादेमी की श्रद्धांजलि सभा

२ नवंबर को दिल्ली में साहित्य अकादेमी के सभागार में हिंदी कथाकार श्रीलाल शुक्ल की स्मृति में साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित श्रद्धांजलि सभा में सर्वश्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, प्रभाकर श्रोत्रिय, विश्वनाथ त्रिपाठी, प्रयाग शुक्ल, मुरली मनोहर प्रसाद सिंह, मंगलेश डबराल, कृष्णदत्त पालीवाल, कैलाश वाजपेयी, इंद्रनाथ चौधरी, उद्भ्रांत, गंगा प्रसाद विमल, सुशील सिद्धार्थ और पद्मा सचदेव ने अपने संस्मरण प्रस्तुत किए। सभा में उनकी दोनों बेटियाँ मधुलिका और सुश्री विनीता, उनके पुत्र और पुत्रवधु सहित सर्वश्री आलोक जैन, रणजीत साह, मदन कश्यप, रामकुमार कृषक, देवेंद्र चौबे, रेखा सिंह, कृष्ण कल्पित तथा पत्रकार, गणमान्य नागरिक और विद्यार्थी उपस्थित थे। अंत में श्री ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने शोक प्रस्ताव पढ़ा और उपस्थित जनों ने एक मिनट का मौन रखा। □

श्री संतोष सुपेकर को 'प्रेमचंद कथा सम्मान'

९ नवंबर को दिल्ली के रेल भवन में रेलवे बोर्ड की ओर से श्री अरविंद कुमार वोहरा ने लघुकथाकार श्री संतोष सुपेकर को उनकी कृति 'बंद आँखों का समाज' हेतु 'प्रेमचंद कथा सम्मान' स्वरूप प्रमाण-पत्र एवं ३३०० रुपए का चैक भेंट कर सम्मानित किया। □

अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित

३-५ अक्तूबर को बेल्जियम के गेंट विश्वविद्यालय के दर्शनशास्त्र विभाग में आयोजित अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी में 'नई कविता का सामाजिक परिप्रेक्ष्य' तथा 'हिंदी उपन्यासों में निहित भारतीयता' विषय पर विचार-विमर्श हुआ। प्रो. रमेशचंद्र शर्मा ऋषिकल्प ने वक्ताओं का स्वागत किया तथा विवेच्य विषयों पर प्रकाश डाला। श्री अशोक वाजपेयी ने इन विषयों पर बीज भाषण दिया। विशेष सत्र में विशेष रूप से आमंत्रित भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के अध्यक्ष डॉ. कर्ण सिंह ने 'हिंदी की नाना छवियाँ' विषय पर व्याख्यान दिया। ४ अक्तूबर को प्रथम सत्र में 'नई कविता के सामाजिक परिप्रेक्ष्य' विषय पर सर्वश्री रमेशचंद्र शर्मा ऋषिकल्प, नंदकिशोर आचार्य, ज्योतिष जोशी, ब्रजेंद्र त्रिपाठी आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय सत्र में 'हिंदी उपन्यास में भारतीयता की अवधारणा' विषय पर चर्चा की गई। विशेष सत्र में 'वैश्विक परिदृश्य में हिंदी' विषय पर श्री विभूति नारायण राय ने अपने विचार व्यक्त किए। ५ अक्तूबर को 'नई कविता में भारतीयता' विषय पर श्री विनोद कुमार मंगलम ने अपने विचार रखे। अंत में वक्ताओं ने श्री रमेशचंद्र शर्मा तथा प्रो. इवा डी. क्लार्क के प्रति आभार व्यक्त किया। □

श्री विष्णु खरे को 'परिवार पुरस्कार'

१२ नवंबर को दिल्ली में मुंबई स्थित कला, संस्कृति और साहित्य की प्रतिनिधि संस्था 'परिवार' की परिवार पुरस्कार चयन समिति द्वारा काव्य साहित्य में रचनात्मक योगदान हेतु इस वर्ष का 'परिवार पुरस्कार' वरिष्ठ कवि श्री विष्णु खरे को देने की घोषणा की है। पुरस्कार-स्वरूप उन्हें एक लाख रुपए की राशि, शॉल, रजत, श्रीफल और स्मृति-चिह्न ६ जनवरी, २०१२ को आयोजित समारोह में मराठी के सुपरिचित कवि श्री चंद्रकांत पाटील द्वारा दिया जाएगा। □

कविता-पाठ कार्यक्रम आयोजित

१० नवंबर को दिल्ली में जन संस्कृति मंच द्वारा कविता पाठ आयोजित किया गया। कार्यक्रम में बांग्ला कवि श्री नबारुण भट्टाचार्य की कविताओं का पाठ किया गया तथा उन्होंने स्वयं बांग्ला में काव्य-पाठ किया। अध्यक्षता श्री त्रिनेत्र जोशी ने की और संचालन श्री अजय सिंह ने किया। कविता पाठ में 'कविता के बारे में कविता', 'यह मृत्यु उपत्यका मेरा देश नहीं', 'मुँह में बादल का रूमाल बाँधे हुए' आदि कविताओं का पाठ किया गया। 'यह मृत्यु उपत्यका' का हिंदी अनुवाद श्री नीलाभ ने किया। □

अज्ञेय जन्मशती मनाई गई

५ नवंबर को जोधपुर में साहित्य अकादेमी द्वारा अज्ञेय जन्मशती के अवसर पर दो दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। उद्घाटन श्री केदारनाथ सिंह ने किया व अध्यक्षता डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने की। श्री नंद किशोर आचार्य ने बीज भाषण दिया तथा श्री ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने संभागियों का स्वागत किया। 'अज्ञेय का काव्य' सत्र की अध्यक्षता डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल ने की। श्री नंद भारद्वाज ने 'सामाजिक सरोकारों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धमक' विषय पर शोध-पत्र प्रस्तुत किया। अज्ञेय के कथा-साहित्य, निबंध तथा यात्रा संस्मरण पर भी सत्र आयोजित किए गए। ☐

'पं. विद्यानिवास मिश्र स्मृति व्याख्यानमाला' संपन्न

१४-१५ नवंबर को बड़ागाँव में 'विद्याश्री न्यास' द्वारा 'हिंदी विभाग, बलदेव पी.जी. कॉलेज' तथा 'हिंदी विभाग, म.गां. काशी विद्यापीठ' के सहयोग से आयोजित वार्षिक कार्यक्रम 'पं. विद्यानिवास मिश्र स्मृति व्याख्यान-माला' में श्री माणिक गोविंद चतुर्वेदी के तीन महत्त्वपूर्ण व्याख्यान हुए। प्राचार्य डॉ. उदयन मिश्र ने स्वागत-संबोधन किया तथा सुश्री सविता श्रीवास्तव द्वारा श्री श्रीनरेश मेहता की कविता 'मंत्रमुग्ध' का पाठ किया गया। श्री चतुर्वेदी ने 'भारतीय भाषा-चिंतन' विषय पर अपने विचार व्यक्त किए। दूसरे सत्र में 'भारत की भाषिक एकता' विषय पर विचार व्यक्त किए गए। अध्यक्षता प्रो. श्रद्धानंद एवं प्रो. सत्यदेव त्रिपाठी ने की। डॉ. दयानिधि मिश्र ने 'विद्याश्री न्यास' का परिचय दिया। संचालन डॉ. प्रकाश उदय ने तथा धन्यवाद-ज्ञापन डॉ. छोटेलाल पॉल ने किया। दूसरे दिन 'भारतीय साहित्य में एकात्मकता' विषय पर व्याख्यान काशी विद्यापीठ के थियेटर कक्ष में संपन्न हुआ, जिसमें प्रो. चतुर्वेदी एवं डॉ. प्रमोद दुबे ने व्याख्यान दिए। अध्यक्षता प्रो. सुरेंद्रप्रताप ने की। कार्यक्रम का आरंभ पं. विद्यानिवास मिश्र एवं सरस्वती के चित्रों पर माल्यार्पण तथा प्रो. श्रद्धानंद के स्वागत-भाषण से हुआ। संचालन डॉ. शिवकुमार मिश्र ने किया तथा डॉ. दयानिधि मिश्र ने आभार व्यक्त किया। ☐

श्रीमती सरिता सिंह को 'वूमन ऑफ द ईयर' अवार्ड

विगत दिनों दिल्ली में सामाजिक-सांस्कृतिक संस्था 'पुष्पा फाउंडेशन' द्वारा बिहार-झारखंड की चर्चित पत्रकार, लेखक और संस्कृतिकर्मी श्रीमती सरिता सिंह को 'वूमन ऑफ द ईयर अवार्ड' से सम्मानित किया गया। पुरस्कार-स्वरूप मिली ५१ हजार रुपए की राशि उन्होंने जमुआ (झारखंड) के नारी विकास मंच को दान कर दी। ☐

'विद्याश्री न्यास' के कार्यक्रम १४ जनवरी को

वाराणसी में स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र की स्मृति में उनके जन्मदिवस पर 'विद्याश्री न्यास' द्वारा भारतीय लेखक शिविर एवं राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन १४-१५ जनवरी, २०१२ को किया जाएगा, जिसमें विभिन्न विषयों पर विचार-गोष्ठी, कवि-गोष्ठी एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाएँगे। इस अवसर पर साहित्य में महत्त्वपूर्ण योगदान हेतु कवियों-लेखकों को सम्मानित भी किया जाएगा। कविता एवं निबंध प्रतियोगिता के लिए प्रतियोगी अपनी मौलिक रचना १० जनवरी तक सचिव, 'विद्याश्री' न्यास, अभिलाषा कॉलोनी, वरुणापुल नदेसर, वाराणसी-२ को भेज सकते हैं। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

'प्रवाह प्रकाशन' द्वारा कविता-संग्रह के प्रकाशनार्थ उन कवियों की कविताएँ आमंत्रित की गई हैं, जिनकी एक भी पुस्तक प्रकाशित नहीं है। रचनाकार अपनी पाँच कविताएँ, संक्षिप्त परिचय, लेखन-विधाएँ, जीवन-दृष्टि, दूरभाष संख्या सहित डॉ. निशा, हिंदी प्रवक्ता, आश्रम हरि मंदिर संस्कृत महाविद्यालय, अमरपुरी, पटौदी, जिला-गुड़गाँव-१२२५०३ पर भेज सकते हैं। ☐

फीजी एवं न्यूजीलैंड में परिचर्चा संपन्न

विगत दिनों फीजी एवं न्यूजीलैंड में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् एवं 'प्रवासी संसार' पत्रिका के संयुक्त तत्त्वावधान में हिंदी विषय पर परिचर्चा का आयोजन किया गया। अध्यक्षता भारत में फीजी के उपायुक्त श्री योगेश जे. कर्ण ने की। मुख्य अतिथि श्री अनवर हलीम तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. रत्नाकर पांडेय, पूर्व केंद्रीय मंत्री श्री अजय सिंह एवं 'हिंदी वाणी' की संयोजिका श्रीमती सुनीता नारायण थे। संचालन श्री राकेश पांडेय ने किया। इस अवसर पर फीजी के राष्ट्रकवि पं. जयंती प्रसाद मिश्र द्वारा संपादित 'व्यक्ति और काव्य' पुस्तक का लोकार्पण भी किया गया। अंत में सभी अतिथियों को 'प्रवासी संसार हिंदी सेवा सम्मान' से सम्मानित किया गया। धन्यवाद-ज्ञापन श्री अजय गुप्ता ने किया। कार्यक्रम में सर्वश्री राकेश बी. दुबे, शरद कुमार, नारायण कुमार, विजय कुमार मल्होत्रा, हरि सिंह पाल, लक्ष्मी शंकर वाजपेयी, कमल किशोर गोयनका, शिव शंकर अवस्थी, सुधेश, वीरेंद्र गोयल, नरेश शांडिल्य, सी.पी. शर्मा सहित अनेक गण्यमान्य विद्वान् एवं हिंदी-सेवी उपस्थित थे। ☐

'हिंद स्वराज की अनंत यात्रा' लोकार्पित

१९ नवंबर को नई दिल्ली के हिंदी भवन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक श्री अजय कुमार उपाध्याय द्वारा लिखित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'हिंद स्वराज की अनंत यात्रा' का लोकार्पण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के निवर्तमान सरसंघचालक मान. कुप्.सी. सुदर्शन के कर-कमलों से संपन्न हुआ। वरिष्ठ पत्रकार श्री जवाहर कौल ने अध्यक्षता की व प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक डॉ. रामजीत सिंह मुख्य वक्ता थे। इस कार्यक्रम का संयोजन प्रज्ञा संस्थान द्वारा किया गया। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में चिंतक-विचारक एवं साहित्य-प्रेमी उपस्थित थे। ☐

साहित्यिक क्षति

डॉ. शीला मिश्र का निधन

२५ जुलाई १९४२ को जनमी डॉ. शीला मिश्र का लखनऊ के मेडिकल कॉलेज में २ अक्तूबर, २०११ को स्वर्गवास हो गया। वह महिला कथाकारों की संस्था 'अभिव्यक्ति' की संस्थापक थीं। उनकी चर्चित कृतियाँ हैं—'पीले गुलाब की हँसी', 'टहनी पर मंगलतारा', 'शून्य की ओर' (*कहानी-संग्रह*); 'अँजुरी भर अंजीर' (*कविता-संग्रह*), 'अवध की पर्व कथाएँ' और सूफी मत एवं धारणाओं पर तीन पुस्तकें तथा कई अन्य ग्रंथ। वह साहित्य अमृत में निरंतर लेखन करती रहीं। ☐

प्रसिद्ध साहित्यकार श्री श्रीलाल शुक्ल नहीं रहे

२८ अक्तूबर को सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री श्रीलाल शुक्ल का लखनऊ में निधन हो गया। उनका जन्म ३१ दिसंबर, १९२५ को अतरौली (लखनऊ जनपद) में हुआ। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि लेकर वे प्रशासनिक सेवा में चले गए। व्यंग्य तथा कथा-क्षेत्र में उन्होंने अपार ख्याति अर्जित की। 'राग दरबारी' इनकी सबसे चर्चित रचना है। इसके अलावा 'सूनी घाटी का सूरज', 'अज्ञातवास', 'बिस्रामपुर का संत', 'सीमाएँ टूटती हैं', 'मकान', 'राग-विराग', 'आदमी का जहर' आदि कृतियाँ प्रमुख हैं। सर्वोच्च ज्ञानपीठ पुरस्कार के अलावा उन्हें साहित्य अकादेमी पुरस्कार, यश भारती पुरस्कार, व्यास सम्मान, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, लोहिया सम्मान, साहित्य भूषण पुरस्कार के साथ-साथ 'पद्मभूषण' से सम्मानित किया गया। १८ अक्तूबर को ही उन्हें उ.प्र. के राज्यपाल द्वारा ४५वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया था। ☐

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेपाली, काशी और काशीबहादुर श्रेष्ठ

● ब्रजेंद्र त्रिपाठी

इसी महीने १२ नवंबर को नेपाली के लब्धप्रतिष्ठ रचनाकार काशीबहादुर श्रेष्ठ की जन्मशतवार्षिकी के अवसर पर नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान एवं काशीबहादुर श्रेष्ठ जन्मशताब्दी समारोह समिति, नेपाल के आमंत्रण पर काठमांडू जाना हुआ। नेपाल की राष्ट्रीय अकादेमी नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान के कुलपति और वरिष्ठ नेपाली लेखक श्री बैरागी काँइला से मिलकर अच्छा लगा। एक कवि के रूप में उनसे थोड़ा-बहुत परिचय उनकी कविताओं के हिंदी अनुवाद के माध्यम से रहा है। प्रज्ञा प्रतिष्ठान में उनसे और प्रतिष्ठान के बहुत से सदस्यों से भेंट हुई। बातचीत में यह पक्ष उभरकर सामने आया कि नेपाल और भारत के मध्य साहित्यिक-सांस्कृतिक संबंध और दृढ़ होने चाहिए जिसके लिए दोनों देशों के सृजनात्मक रचनाकारों के मध्य निरंतर संवाद जरूरी हैं और इसमें दोनों देशों की राष्ट्रीय अकादेमियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

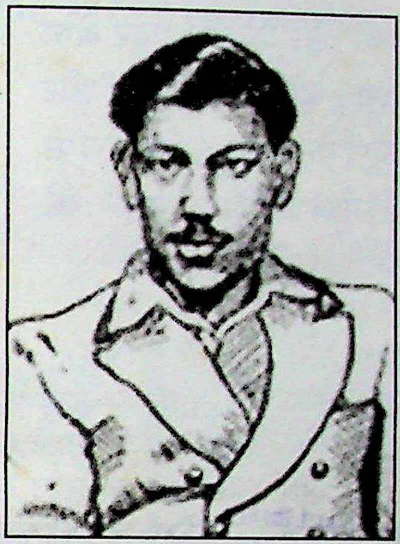

नेपाली भाषा आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में से एक है, जो नेपाल तथा भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाती है, विशेषकर दार्जिलिंग, सिक्किम, असम, मेघालय, हिमाचल तथा उत्तराखंड में। भूटान, उत्तरी म्याँमार तथा हांगकांग में भी नेपालीभाषी लोग हैं। नेपाली भाषा के प्राचीन रूप को 'खस' माना गया है जो देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। आधुनिक आर्य भाषाओं का उद्भव दसवीं सदी से माना जाता है। नेपाली भाषा का सबसे पुराना अभिलेख सन् ८८१ ई. का माना जाता है जो दामुपाल का है और पश्चिमी नेपाल के दुल्लू में स्थित शिला पर उत्कीर्ण है।

भारतीय आर्य भाषाओं के मध्य नेपाली की स्थिति विशिष्ट है। भारत और नेपाल की जो आज की राजनीतिक एवं भौगोलिक स्थिति है, उससे बहुत पहले से नेपाली भाषा भारतीय उपमहाद्वीप में विकसित होती रही। राजनीतिक रूप से दो अलग देश होने के बावजूद दोनों देशों की सीमाएँ एक दूसरे के लिए खुली रही हैं और धर्म, संस्कृति एवं भाषा ऐसे तत्त्व हैं, जो उन्हें एक दूसरे के निकट लाते हैं। दोनों देशों की सीमाएँ खुली होने के कारण लोग बेरोक-टोक दोनों देशों में आते-जाते हैं।

इसी कारण साहित्येतिहासकारों के लिए नेपाल और भारत के नेपाली रचनाकारों को अलग करके देख पाना कठिन रहा है। अगर हम विभिन्न लेखकों द्वारा रचित नेपाली साहित्य के इतिहास पर नजर डालें तो प्रायः उनमें नेपाल और भारत में रचित नेपाली साहित्य की चर्चा साथ-साथ की गई है। यह साहित्य आरंभिक दौर में इस तरह अनुस्यूत था कि उन्हें विलगाकर देख पाना संभव ही नहीं था। बहुत से लेखकों का जन्म तो नेपाल में हुआ, लेकिन उनका अधिकांश जीवन भारत में बीता। इस तरह का एक प्रमुख केंद्र काशी, बनारस या वाराणसी था।

वाराणसी नेपालियों के लिए श्रद्धा का केंद्र रही है और नेपाली भाषा, साहित्य एवं इतिहास के क्षेत्र में इसका विशिष्ट योगदान रहा है। मोतीराम भट्ट ने यहीं रहते हुए नेपाली गद्य का शुभारंभ किया। सन् १८८३ से मोतीराम भट्ट की रचनाकाल प्रारंभ होता है। इनका जन्म तो काठमांडू में हुआ था, लेकिन इनकी शिक्षा-दीक्षा बनारस और कोलकाता में हुई। बनारस को नेपाली साहित्य का केंद्रस्थल बनाने का श्रेय मोतीराम भट्ट को है। नेपाली भाषा के उन्नयन और नेपाली समाज में राष्ट्रीय भावना विकसित करने में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। वे बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति थे। बनारस में उन्होंने भारतेंदु हरिश्चंद्र के समकालीन बाबू रामकृष्ण वर्मा के साथ 'भारत जीवन प्रेस' की स्थापना १८८३ में की। यहीं से नेपाली की पहली पुस्तक 'भानुभक्त रामायण' प्रकाशित हुई। वे नेपाली पुस्तकों के प्रथम प्रकाशक हैं।

भारतेंदु हरिश्चंद्र के साथ मोतीराम भट्ट का अच्छा संपर्क था। भारतेंदु मंडली की तरह ही उन्होंने मोतीराम मंडली की स्थापना की थी। ऐसे लेखकों की लंबी सूची है, जिनकी जन्म भूमि तो नेपाल थी लेकिन जिन्होंने बनारस में रहकर साहित्य सृजन किया। मोतीराम युग (१८८३-१९१९) के ऐसे लेखकों में होमनाथ खतिवड़ा, शिखरनाथ सुवेदी, लक्ष्मीदत्त पंत, गोपीनाथ लोहनी, कुलचंद्र गौतम, कृष्णप्रसाद रेग्मी, शंभुप्रसाद ढुंगेल, चिरंजीवी शर्मा, राम प्रसाद सत्याल आदि शामिल हैं। बनारस को अपनी कर्मस्थली बनानेवाले रचनाकारों में नीलदेव पंत, पद्म प्रसाद भट्टराई सोमनाथ सिग्द्याल, पं. देवीदत्त पराजुली, लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा आदि के नाम लिये जा सकते हैं। इसी क्रम में 'उदय' पत्रिका के संपादक एवं कथाकार काशीबहादुर श्रेष्ठ का भी नाम लिया जा सकता है।

काशीबहादुर श्रेष्ठ (१९११-१९८९) का जन्म १६ सितंबर, १९११ को बनारस में हुआ था। उनके पिता गणेशबहादुर श्रेष्ठ भक्तपुर (नेपाल)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के रहनेवाले थे लेकिन राणा शासन काल के अत्याचारों से तंग होकर वे बनारस आ गए थे। काशी में जन्म लेने के कारण उनका नाम काशीबहादुर पड़ा। गणेशबहादुर एक व्यवसायी थे और उनका भक्तपुर में कपड़े का पैतृक व्यवसाय था। बनारस आकर उन्होंने केशर, जवाहरात आदि का व्यवसाय शुरू किया। काशीबहादुर ने क्वींस कालेज से १०वीं परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होंने ११वीं में प्रवेश तो लिया, लेकिन अपनी पढ़ाई आगे जारी नहीं रख सके। वे व्यापार में अपने पिता का सहयोग करने लगे और उनके साथ भारत के विभिन्न नगरों—बंबई, कलकत्ता तथा दिल्ली की यात्राएँ कीं। इन यात्राओं ने उनमें एक तरह की साहित्यिक चेतना का विकास किया, क्योंकि इस दौरान उन्हें पत्र-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों को पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ।

साहित्यिक पत्रकारिता, लेखन, भाषा संपादन आदि के क्षेत्र में आने के पीछे उनकी पारिवारिक परिस्थितियों का भी हाथ रहा। उनकी माँ का देहांत, जब वे नौ वर्ष के थे तभी हो गया था, २२ साल की उम्र में पिता का भी निधन हो गया। पिता के न रहने पर व्यवसाय की सारी जिम्मेदारी उनके कंधों पर आ गई। उन्हें कलकत्ता और दिल्ली स्थित अपने व्यापारिक केंद्र बंद करने पड़े, बंबई केंद्र पर साझेदार ने अधिकार जमा लिया। इन सब कारणों से उनका व्यवसाय ढीला चलने लगा। काशीबहादुर अब अपने पारिवारिक व्यवसाय से हटकर कुछ करना चाहते थे और उन्होंने नए व्यवसाय के रूप में भाषा-संपादन एवं प्रूफ संशोधन का काम शुरू किया, जिसका विस्तार 'उदय' पत्रिका के संपादक एवं प्रकाशक के रूप में देखने को मिला। 'उदय' को ३० वर्षों तक निकालकर उन्होंने नेपाली साहित्य के इतिहास में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया। 'उदय' की स्थापना उन्होंने १९३७ में की। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि तमाम तरह के अवरोधों के बावजूद वे इसे बराबर निकालते रहे। इस पत्रिका की एकमात्र जिम्मेदारी उन्हीं पर थी और वे इसके पीर, बावर्ची, भिश्ती, खर—सभी थे। इस पत्रिका ने नेपाल तथा नेपाल के बाहर रह रहे नेपालियों को प्रेरित किया। यह नेपाली की सबसे पुरानी पत्रिका है। १९३७ से १९६७ तक काशीबहादुर ने इस पत्रिका का संपादन-प्रकाशन किया। इस पत्रिका का पुनर्प्रकाशन उनके सुपुत्र श्री दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ ने किया और आज भी यह पत्रिका उनके कुशल संपादन में बनारस से निकल रही है।

काशीबहादुर श्रेष्ठ ने पाँच दशक से अधिक समय तक एक सर्जनात्मक लेखक एवं संपादक के रूप में नेपाली की सेवा की। वे एक सजग सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में पुलिस तथा सरकारी अधिकारियों के अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाने में चूकते नहीं थे। वे बहुभाषी थे और नेपाली के अतिरिक्त हिंदी, अंग्रेजी और संस्कृत भी भलीभाँति जानते थे। एक संपादक के रूप में उनका महत्त्वपूर्ण अवदान यह है कि उन्होंने युवा प्रतिभाओं को प्रोत्साहित किया और नए रचनाकारों की पूरी पीढ़ी तैयार की। असम, दार्जिलिंग, सिक्किम, मणिपुर, बर्मा, भूटान, देहरादून, धर्मशाला आदि नेपाली-भाषी क्षेत्रों में इसने नवचेतना जा
करने का काम किया।

'उदय' को सबसे अधिक समय त प्रकाशित होनेवाली नेपाली पत्रिका होने का गौ प्राप्त है। काशीबहादुर श्रेष्ठ के संपादन में इस पहला अंक फरवरी १९३७ में प्रकाशित हु और अंतिम अक्तूबर १९६७ में। प्रारंभ के वर्षों में इसके ९ अंक प्रकाशित हुए। १९३९ इसके संपादन में प्रसिद्ध हिंदी कवि गोपालसि नेपाली ने भी सहयोग किया। नेपालीजी अ काशीबहादुर श्रेष्ठ के मध्य बड़े आत्मीय अ मित्रतापूर्ण के संबंध थे। संयोग से यह वर्ष गोपा सिंह नेपाली की भी जन्मशतवार्षिकी का है।

बीच में 'उदय' का प्रकाशन कई तरह क कठिनाइयों के चलते पाँच वर्ष तक बंद भी रहा ३० वर्षों की अवधि में इसके कुल ८२ अं प्रकाशित हो सके, लेकिन इसने भारत और नेपा दोनों देशों के नेपाली लेखकों के लिए एक सा मंच तैयार किया।

काशीबहादुर श्रेष्ठ के संपादन में इसका पहला अंक फरवरी १९३७ में प्रकाशित हुआ और अंतिम अक्तूबर १९६७ में। प्रारंभ के दो वर्षों में इसके ९ अंक प्रकाशित हुए। १९३९ से इसके संपादन में प्रसिद्ध हिंदी कवि गोपालसिंह नेपाली ने भी सहयोग किया। नेपालीजी और काशीबहादुर श्रेष्ठ के मध्य बड़े आत्मीय और मित्रतापूर्ण के संबंध थे। संयोग से यह वर्ष गोपाल सिंह नेपाली की भी जन्मशतवार्षिकी का है।

131871

Central Library Gurukul Kangri University Haridwar-249404

एक सर्जनात्मक लेखक के रूप में कई कहानियों के अतिरि उन्होंने दो उपन्यास लिखे—'उषा' और 'वचन'। इन उपन्यासों के माध्य से उन्होंने तत्कालीन समाज के यथार्थ और वहाँ व्याप्त बुराइयों औ कुप्रथाओं का वर्णन किया। शुरू में काशीबहादुर श्रेष्ठ हिंदी में लिखा कर थे। गोपालसिंह नेपाली के संपादन में प्रकाशित 'रतलाम टाइम्स' में उनक कई हिंदी कहानियाँ प्रकाशित हुईं। आनंदबहादुर श्रेष्ठ ने उन्हें नेपाली लिखने एवं एक नेपाली पत्रिका के प्रकाशन के लिए प्रेरित किया।

काशीबहादुर श्रेष्ठ ने कुछ निबंध और कविताएँ भी लिखीं। उनके सृजनात्मक लेखन का एक ऐतिहासिक संदर्भ और महत्त्व है, लेकि नेपाली साहित्यिक पत्रकारिता के इतिहास के निर्माण एवं विकास में उनक योगदान अविस्मरणीय है, खासकर अपने समय की नव प्रतिभाओं क पहचानकर उन्हें प्रोत्साहित करने में। 'उदय' के माध्यम से नेपाली साहि की लगभग सभी विधाएँ—चाहे कविता हो, कहानी हो, निबंध हो भाषा, संस्कृति, इतिहास से जुड़े विषय हों—विकसित हुईं।

जन्मशतवार्षिकी के अवसर इस भारतीय-नेपाली रचनाकार एवं पत्रक को हम श्रद्धा से याद करते हैं। वस्तुतः काशीबहादुर श्रेष्ठ भारत और नेपा दोनों देशों की साहित्यिक विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसीलि उनकी जन्मशतवार्षिकी के अवसर पर जहाँ साहित्य अकादेमी ने पिछ माह बनारस में एक द्विदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया, वहीं इ माह नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान ने उनकी स्मृति में १३ नवंबर को एक भ समारोह का आयोजन किया। जन्मशतवार्षिकी के अवसर पर काशीबहा श्रेष्ठ की स्मृति को नमन।

१०१, अर्श कॉम्प्लेक
सेक्टर-अल्फा १, ग्रेटर नोएडा-२०१३
(उ.प्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं पढ़ें, औरों को भी पढ़ाएँ!

साहित्य अमृत

(मासिक)

साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक

16 वर्षों से निरंतर प्रकाशित

संस्थापक संपादक	संपादक	पूर्व संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र	त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी	स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

विशेषांकों की अनूठी शृंखला की एक और महत्त्वपूर्ण कड़ी

साहित्य अमृत का

200वाँ अंक

कथा विशेषांक

मार्च 2012 में प्रकाश्य

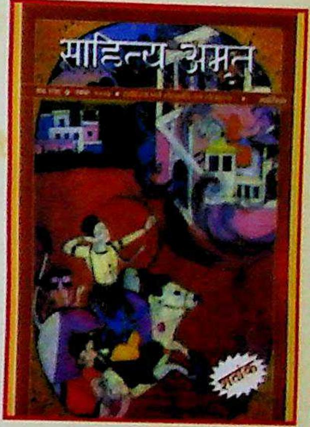

मार्च 2012 में **साहित्य अमृत** अपना 200वाँ अंक प्रकाशित करने जा रहा है। किसी भी साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका के लिए लगातार, ठीक समय से 200 अंकों का प्रकाशन गर्व का विषय हो सकता है। निश्चय ही इसके पीछे जहाँ पत्रिका के संपादन एवं प्रबंधन से जुड़े हुए व्यक्तियों का श्रम एवं अध्यवसाय है, वहीं इसका श्रेय हमारे सुधी लेखकों एवं पाठकों को भी है। हम उनके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। हमारी योजना **साहित्य अमृत** के मार्च 2012 में प्रकाश्य 200वें अंक को '**कथा विशेषांक**' के रूप प्रकाशित करने की है। इस संग्रहणीय अंक में अपनी कहानी विचारार्थ 31 दिसंबर, 2011 तक भेज सकते हैं।

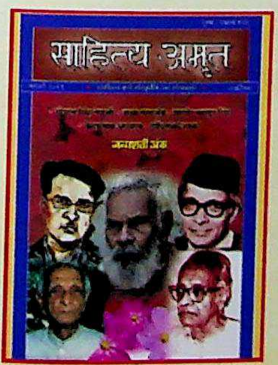

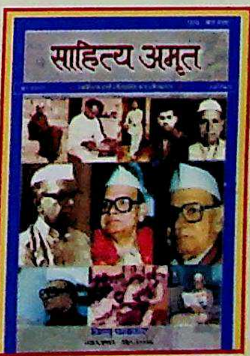

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित कराएँ।

4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002 • फोन : 23289777 • e-mail: sahityaamrit@gmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेषण की तिथि—पूर्व माह की २५-२६ • पंजीयन संख्या
पी डी आर संख्या डी एल (सी)-०१/१२७३/०
यू.(सी) २२२/२००
पी.एस.ओ. नई दिल्ली अग्रिम शुल्क के बिना प्रेषण की

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar